



आर्यमित्र

आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तरप्रदेश का मासाहिक मुख-पत्र

१९५०

संस्थापक

श्रीमान्, शिरामणि प्रसाद

शिवरात्रि का संदेश

(श्री धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड)
गुरुकुल काङ्गड़ी



शिवरात्री सन्देश महान् ।
करो एक ईश्वर का भजन ॥

[१]

जो शङ्कर सुराग्नि का मूल,
जो हरता है मन का शूल ।
उसे भूजना भारी भूल
करो उसकी का नित गणगान ॥

[२]

सर्व व्यापक ता ह नाथ
जो रचना है मयक माथ ।
सब में उसी उसका साथ ।
होगा दुखों का अवनान ॥

[३]

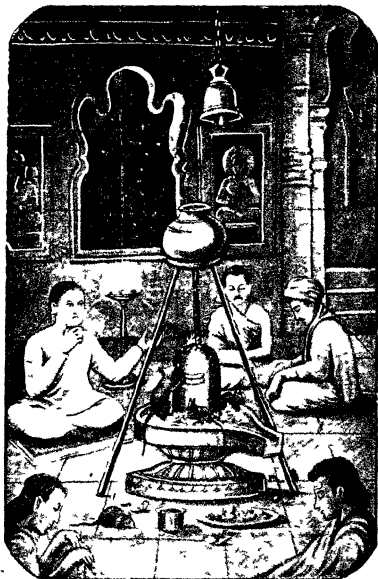
करो मदा उसकी ही पूजा
पूजायोग्य न कोई दूजा ।
सूड़ बही जिस उले न बूझा ।
करो भक्तिरस का नित पान ॥

[४]

जो एक परमेश्वर को छुंए,
जै न अन्तर से जाना जोड़ ।
देता बन्धन उनक तोड़ ।
बड़ शङ्कर आनन्द विधान ॥

[५]

सुनो वेद का यह सन्देश
कैलाशो फिर देश विदेश ।
ध्याओ उसको जो परमेश ।
करो शांति शारवत सुख भान ॥



सब लोग सोते थे एने अवशिष्ट आधीरात की ।

दैवात् तानावार को, सूफी बिलक्षण बात थी ॥

शिवलिंग के जावल चबाकर एक चूहा चल दिया ।

फिर दूमरे ने भी वहाँ आकर, बही करतब किया ।

यह देख कर पूजा पिता से, खोल दी सारी कथा ।

क्यों पूजना शिवलिंग का, समझी गईं धरछी पथा ?

'जो मूर्ति अपना आसु से भी आसु कर सकती नहीं ।

बड़ निन्द शकर हो हमारे दुख भी हर सकती नहीं ।

—डा० हरिश्चन्द्र शर्मा डी०लि०

ऋषि-बोधाङ्क

वर्ष
६२

प्राचीन

अङ्क
८

लखनऊ, रविवार, फाल्गुन २, शक १८८१ फाल्गुन कृष्ण ६ वि० मवन् २०१६
२१ फरवरी १९६० ई० दयानन्दाय १३५, सृष्टि सवन् १९७०-७१ १९६०६०



महर्षि दयानन्द सरस्वती

अमर-ज्योति [प्रथम शास्त्रोक्तिरोजावाद]

टङ्कारा की अमर ज्योति हे तुमको बारम्बार प्रणाम ।
दिव्य दया आनन्द सधन हे तुमको बारम्बार प्रणाम ॥
कल्पन कलश उठा लाये अर्पि बोध सुधा से भरा हुआ ॥
जाहू सा पद छिद्रक दिया यह विश्व बाग था हरा हुआ ॥
खगे कुमने बेल विटपवन वन में भाई लहर जलाम ।
युग निर्माता पुण्य प्रदाता तुमने युग निर्माण किया ॥
दुख दुग्धों के दल को दलकर जगती का कल्याण किया ।
भूतल के सब देव जानते तेरा यजन निरा निष्काम ॥
वे अभिमान समुज्वल शास्त्रो को सम्मान मिला ।
मानवता को त्राण साथ शुभ संस्कृति को स्थान मिला ॥
प्रगति प्राप्त कर प्रेम प्रथा से हुए अलंकृत आठो याम ।
'प्रथम' पिता के अमर तुम अमर तुम्हारी वाणी हैं ॥
हे समाज आलोक अमर जा लोक-लोक कल्याणी हैं ॥
अमर तुम्हारा कीर्ति गान हे उपकारों का पूर्ण विराम ।

वेदोपदेश—

शुद्धा न आपस्तम्बे चरन्तु यो न स्येदुर प्रथे त निद्रधम् ।
पवित्रेण पृथिविं मोत्पुनामि ॥३०॥

(न तन्वे) हमारे शरीर के लिये (शुद्धा) साफ
(आप) पानी (चरन्तु) ऋँ (न य स्येदु)
हमारा जो कफ पसीना आदि है (त) उसे (अप्रिये)
नापसद पर (निद्रधम्) डाल दते हैं । (पृथ्वी) हे
पृथिवि (पवित्रेण) पवित्र—साफ करने के उपकरण—
से (मा उत्पुनामि) मैं अपने को पून करता हूँ ।

बहता रहे सदा पावन जल हम सबके शरीर क हित,
अप्रिय वस्तु डालें हम उसपर जो कि हमारा हो अनहित
रखें पृथ्वी को मार्जनि से स्वच्छ और पावन हम नित ।

यास्ते प्राचीं प्रदिशो या उद ची
यांस्ते भूमे अथराद आश्च परचाव ।
स्योनास्ता मद्या चरते भवन्तु
मा निपपन् भुवने शिश्रियाण ॥ ३१ ॥

(ते या प्रदिश प्राची) तेरी जो दिशायें आगे हैं,
(या उदीची) जो ऊपर हैं (भूमे या ते अथराव)
हे भूमि जो तेरी नाचे है (आश्च परचाव) और जो
पीछे है (ता) वे सब (चरते मद्याम्) विचरने वाले
मेरे लिये (स्योना) सुखदायक (भवन्तु) होवे
(भुवने शिश्रियाण) भुवन पर आश्रित हुआ मैं
(मा निपपम्) गिरू नहीं ।

जहाँ कहीं मैं घूम माता, घर समान हो वे मेरे
नीचे ऊपर पूरब पच्छिम के सम्पूर्ण भुवन तेरे
इस दुनियाँ की सभी वस्तुओं का मैं नित उपभोग करूँ,
किन्तु न नीचे कभी गिरूँ मैं । किन्तु न नीचे कभी गिरूँ ।

सम्पादकीय—

आर्यसमाज की योग-साधना में बाधाएँ



संसार में प्रत्येक कार्य की सफलता के लिए तीन आवश्यक बातें उपेक्षित होती हैं। वे हैं—योग्यता, क्षमता और लगन।

महर्षि दयानन्द जब कर्मक्षेत्र में उतरे तो उन्होंने अपने को योग्यता की कसौटी पर कसा। कार्यारम्भ का साहस किया। पर अपनी कमियों का अनुमान लगा उन्होंने और कठोर साधना की और तब उन्होंने अपने पाखण्ड खंडन रूपी प्रचार रथ को सरपट दौड़ा पाया। कोई उनके मार्ग में बाधक बनने का साहस न कर सका। परिणाम जो हुआ वह इतिहास ने देखा, देश ने देखा और हम आज सुन रहे हैं।

योग्यता के परचाउ उन्होंने शारीरिक आरिभक और जन सम्पर्क सम्बन्धी सार्वजनिक क्षमता का अर्जन किया और अपने लोकोपकार के महान् उद्देश्य की पूर्ति में वे इस लगन के साथ चिपटे कि उन्हें अपने तन बदन की भी सुख न रहे। जब उनसे किसी ने पूछा कि आपको काम-वासना ने कभी नहीं सताया। उत्तर में महर्षि ने कहा “मैं कार्य में इतना व्यस्त रहता हूँ कि मन को उधर जाने का अवसर ही नहीं देता” महर्षि ने जिस दिन से गुरु दीक्षा ली और गुरु चरणों में नतमस्तक हो आशीर्वाद लिया, उस दिन से जब तक जिये अपने लक्ष्य के लिए जिए और वह लक्ष्य था मानव जाति को सत्य का पथ बतलाना और परोपकार में रत रहना।

अपने इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अनथक परिश्रम किया। वे ससारा की बढ़ती धारा को रोक कर उसके प्रवाह को लौटाने के लिये प्रयत्नशील रहे और आज सारा ससार उनकी तपस्या के आगे नतमस्तक है। और उनके उपकारों के गीत गाता है।

उस महान् ऋषि ने मानवता के समुदाय का दायित्व अपने मानस पुत्र आर्यसमाजको सौंपा था। आर्यसमाज का इतिहास इस बात का साक्षी है कि उसने महर्षि निर्दिष्ट कार्यक्रम को पूर्ण करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया, पर आज हमारे जीवन में धकान और मिथ्याभिमान की भावनाएँ व्याप्त हो रही हैं। हमारी इन कम-जोरियों का कारण हमारी अपूर्ण साधना ही है।

हम अपूर्ण योग्यता के साथ आर्यसमाज में प्रवेश करते हैं। हमारे पास जोश अधिक होता है, होश (विचार शक्ति) कम। थोड़े समय में जोश का जलजला ठण्डा पड़ जाता है और हम परस्पर एक दूसरे के दोषों का छिद्रान्वेषण आरम्भ कर देते हैं। आर्यसमाज में आते समय हमारी योग्यता पूर्ण न थी और उसमें आने के बाद हम ने कुछ क्षमता उत्पन्न करने के स्थान पर अपनी शक्ति का उपयोग विघटन की ओर लगाना आरम्भ कर दिया फलतः सघटन बढ़ होने के स्थान पर दुर्बल और शक्तिहीन होने लगता है। लगन का जहाँ तक प्रश्न है वह एक विशेष प्रकार के अवसर पर तो दिखाई पड़ती है। या तो स्थानीय उत्सवों, या प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय सम्मेलनों के अवसरों पर, बाकी समय हम में से अधिकांश समय “कुरसत नहीं” का यहाँना कर अपने लौकिक कार्यों में जुटे रहते हैं। परिणाम यह होता है कि समाज जन सम्पर्क से दूर जा पड़ता है।

आप इस चित्रण को निराशा का चित्रण कह सकते हैं, परन्तु आत्मनिरीक्षण की वेला में हमें वास्तविकता की खोज अवश्य करनी होगी।

योग्यता क्षमता और लगन के अभाव में किसी व्यक्ति की उन्नति असम्भव है। समुदाय की उन्नति का प्रश्न तो उससे भी अधिक कठिन है।

इन तीनों कमियों का परिणाम हमारे सामने है कि आर्यसमाज की योग-साधना अपूर्ण हो रही है। यदि हम चाहते हैं कि महर्षि के अनुयायियों का समुदाय सफलता प्राप्त करे तो हमें अपने जीवनो का आत्म-निरीक्षण करना होगा। व्यक्तिगत ही नहीं समष्टिगत रूप से भी सभी बाधाओं और कमियों को दूर करना होगा।

योग दर्शन के एक सूत्र में योग की सफलता में जो बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं उनका इस प्रकार उल्लेख है।

(१) व्याधि (बीमारी) (२) स्यान [चञ्चलता] (३) सशय (४) प्रमाद (५) आलस्य (६) अचिरति (७) भ्राति-दर्शन [अम] (८) उपलब्ध भूमिकत्व [ठिल मिश्रण होना] (९) अनवस्थितचित्तक [एक सी स्थिति न रहना]

आज सामयिक परिस्थितियों में अपूर्ण योग्यता, अपूर्ण क्षमता और लगन के अभाव में ऊपर के सारे व्यवधान आर्यसमाज की योग साधना में बाधक बन कर आ उपस्थित हुए हैं।

द्वन व्यवधानो का सामाजिक अर्थ में विस्तार से वर्णन करना यहा अपेक्षित है न सम्भव । फिर भी हम उनका संकेत मात्र में उल्लेख कर अपना अभिप्राय स्पष्ट करेंगे ।

व्याधि—आर्यसमाज में जो सदस्य आते है, उनका दृष्टिकोण सुलझा हुआ होने पर भी उनके पारिवारिक संबंध जात विरादरी, धार्मिक सम्प्रदायों से सम्पर्क, राजनैतिक दलों के साथ समीपता आदि ऐसी कठिनाइयों हैं कि वे सदस्यों को आर्यसमाजी मन को दुबिधा में डाले रहती हैं । कोहें भी कार्य करते समय सदस्य आर्यसमाज के दृष्टिकोण को मुख्य न समझ कर अपने सम्पर्क वालों पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा इसे मुख्यता देता है । परिणाम वही है, जो शारीरिक रूप से व्याधिग्रस्त का होता है, चाहते हुए भी कार्य नहीं कर पाता ।

मत्यान—योगी का मन यदि चंचल न हो तो योग सिद्धि उसका स्वयं वरण करेगी । पर चित्त की चंचलता उसे उस सौभाग्य से काफी समय तक वंचित रखती है । इसी प्रकार आर्यसमाज के सदस्यों और सघटन दोनों की मानसिक स्थिति कभी किसी राजनैतिक दल का साथ देने की ओर कभी किसी दल का सहारा लेने को बनी हुई है । आज यह आन्दोलन चलाना ठीक है, कल उसी के सम्बन्ध में विरोध भी गजने लगता है । ससार प्लुता है कि आर्यसमाज का कौन सा पक्ष है अपनी इस चंचलता के कारण राष्ट्रीय आन्दोलन के समय भी हम निश्चित न हो सके, आज हम सर्वे श्री जाला जाजपतराय भाई परमानन्द स्वामी श्रद्धानन्द बिरिसन्न भगतसिंह और अनेकों बलिदानियों को अपने परिवार का अंग बताकर गर्व अनुभव कर लें पर हमारी अस्थिर नीति के कारण वे हमसे जितने सहयोग की आशा करते थे, वे न पा सके । आज भी युवक दल सघटन से उचित और निश्चित नेतृत्व की आकांक्षा रखता है, पर क्या हम दे पा रहे हैं ।

संशय—जैसे किसी व्यक्ति का सशय उसकी सफलता में बाधक होता है, वैसे ही हमारे अधकचरे सदस्यों अपूर्ण योगता के अधिकारियों का दृष्टिकोण सशयारमक बना रहता है । आज सस्थाओं की बाढ़ है, चन्दा जमा किया बहुमत बनाया और अधिकार प्राप्त कर लिया पर

मन का चोर कि आर्यसमाज में रहें या नहीं सदैव छुपा रहता है । ऐसी संशयारमक स्थिति में समाज की गाड़ी कैसे आगे बढ़े, पहले बहुत से लोग विदेशी शासन के कृपापात्र बने रहने के लालच से और आज राजनैतिक पार्टियों द्वारा साम्प्रदायिक सस्था माने जाने के भय से सशयारमा बने रहते हैं । बहुत से मौका पा छोड़ बैठते हैं बहुत से अपना चोर छुपाये रहते हैं । इस सशय स्थिति का परिणाम आर्यसमाज के कार्यक्रम की प्रगति पर पड़ता है ।

प्रमाद—योगी भी यदि अनियमित जीवन रखे तो योग कैसे सफल हो पर आर्य जन चाहते हैं कि बड़े जोर शोर के साथ सभा सम्मेलन हो प्रस्ताव पास हों पर उसके बाद जल्दा विश्राम किया जाय । प्रेरणा के स्थान पर प्रमाद घर कर जाता है, और काम शिथिल पड़ जाता है । प्रस्ताव और निरचय धरे रह जाते हैं ।

अलक्ष्य—यह विघ्न भी इसी प्रकार है । समाज व राष्ट्र की देनन्दिन की समस्याएँ मुह बाये खड़ी रहती हैं । जनता सच्चे नेतृत्व की हमसे आशा रखती है पर हम केवल सभ्या हवन प्रचारोपदेश के आगे नहीं बढ़ना चाहते । ऐसे मौकों पर हमारी शक्तियाँ शिथिल हो जाती हैं और बुद्धि कुच्युत । हम सारी समस्याओं का दायित्व सरकार और राजनैतिक दलों के ऊपर ढाल आराम से मुह ढककर सो जाना चाहते हैं क्या इस श्युरसुर्ग की नीति से हम नेतृत्व क अधिकारी बन सकते हैं । जनता हमें छोड़ दूसरों का पल्ला पकड़ समस्याओं का समाधान क्यों न ढूँढेगी ।

अप्रति (जोखुरता) इसको सामाजिक अर्थों में पदलिप्सा की भावना मान सकते हैं । लोकोपकार के महान् कार्य में पद एक साधारण महत्त्व की चीज है । पर आज हमारे सघटन में पद का महत्त्व बढ़ गया है । और उसके विकार ने आर्यसमाज की तपस्या को भग कर दिया है । क्या इस पदलिप्सा के सर्षर्ष में रत समाज दूसरों को निष्पक्ष रहने का सन्यास धर्म निभा सकता है । आर्यसमाज मानव जाति में सन्यास के गौरव और दायित्व को पूर्ण करने के लिये बनाया गया है ।

अन्ति दर्शन (अम) का आर्यसमाज के पक्ष में यह अर्थ है, कि देश की राजनैतिक सामाजिक परिस्थि-

तियो में हमारे सदस्य और नेतृत्व दोनों भटक जाते हैं। कौन सी बातें देश और जाति के कल्याण के लिये उपयोगी हैं या अनुचित। इन बातों का निर्णय शुद्ध-बुद्धि से करने में हम असमर्थता अनुभव करते हैं। उदाहरणार्थ शिक्षा के क्षेत्र में आज हम अपनी सफलता का ढोख बजाते फिरते हैं, और स्कूलों की संख्या बढ़ाने की दौड़ में अग्रणी बनने रहना चाहते हैं। परन्तु क्या आज की शिक्षा व्यवस्था हमारे दृष्टिकोण के तनिक भी पक्ष में है, क्या उससे देश का चरित्र और इतिहास दूषित नहीं हो रहा। क्या हम अरलीज साहित्य को प्रतिबन्धित और सहशिक्षा को निषिद्ध करने में तत्पर हैं, या सहयोग देकर बढ़ावा दे रहे हैं। उस भ्रम का कौन मूलोच्छेदन कर पा रहा है। आर्यशिक्षा व गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की प्रशंसा के पुत्र बाँधते हम नहीं अघाते। पर जो गुरुकुलत्व की ओर बढ़े उन्हें भी हम अमित हो उस दशा में नहीं रख पा रहे। क्या उस भ्रम का उन्मूलन आर्यसमाज के मस्तिक से हो पायेगा।

उपलब्ध भूमिकत्व-हम समाज और देश की गिनियों में अपने विचारानुसार थोड़ा बहुत भी विकास देखकर आत्म सन्तोष की साँस लेने लगते हैं। पर क्या हम दलितोद्धार, नारी जागरण, संस्कृत समुद्धार, पाखण्ड खण्डन आदि अनेक क्षेत्रों में वास्तविकता का अभाव दृष्टिगोचर होता नहीं देखते। सांस्कृतिक अस्थुस्थान और धर्म निरपेक्षता के नाम पर समाज जिस भौतिक और लौकिक जीवन का उपासक बन रहा है, तब भी हम थोड़े बहुत सफलताओं को अपने परिश्रम का फल बताकर आत्म सन्तोष की साँस ले रहे हैं। इसे आत्म प्रवचना ही कहा जायगा।

अनवस्थित्वचित्तक हम एक काम को हाथ में लेते हैं, और उसे बीच में ही अधूरा छोड़कर दूसरा आन्दोलन या कार्य हाथ में उठा लेते हैं। हमारे मन में स्थिरता और साधना की क्षमता नहीं है, तभी यह हो रहा है। हम मस्याओं पर सस्थाएँ खोलने में गर्व अनुभव करते हैं। हर एक आदमी सघटन और अनुशासन की मर्यादाओं को उपेक्षा कर अपनी टपली धपना

राग बजाता हुआ अथि दयानन्द के नाम की अलग बजाना आरम्भ कर देता है। व्यक्ति स्वातन्त्र्य और सामाजिक परतन्त्रता में सवर्ष चलता है। और दलबन्दी आरम्भ होती है, अनुशासन हारता है। समाज की नैय्या मंभधार में फली रह जाती है।

कहाँ तक खिन्ना जाय हम कृपवन्तो विरवमार्यम का स्वप्न लेते हैं। पर सच पूछा जाय तो अभी हमारे मनो, घरों, परिवारों और व्यवहारों में भी आर्यत्व नहीं आ सका है।

महर्षि दयानन्द ने शिवरात्रि पर आत्मबोध प्राप्त किया। हम सब भी शिवरात्रि पर कर्म बोध का ज्ञान प्राप्त कर सके। और उन्हीं की भाँति योग्यता क्षमता और लगन के साथ ससरोपकार के लक्ष्य की ओर बढ़ सकें। यही उस महामानव के प्रति हम सब की व्यक्तिगत और सामूहिक सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी। ★

महर्षि-लेखनी की प्रेरणा

[ले०--श्रीमती सावित्रीदेवी जी रसोगी साहित्यरत्न, मेरठ]

ले सत्य शक्ति का अवलम्बन, ले तर्कों की तीक्ष्ण कटार। अतुलित मुजबल से, भूषित हो, निर्भय भावोका कर प्रचार। ले शक्ति विजयनी विश्व व्यापिनी, शक्ति सुधा रस प्रेम धार। अरयाचारी मानव गण के, नत मानस में करती सुधार। सद्धर्म भाव का सबल ले, निःदेश जाति का कर विचार। जग के कोने में पहुँचाने, विधवाओं का क्रन्दन पुकार। जननी का सा ले मधुर प्रेम, दलितों को गले लगाने को। बड़ चली लेखनी दयानन्द की, भ्रम का भूत भगाने को ॥

लो उसी लेखनी का सबल, हो वेदों का जग में प्रचार। जो पतित पावनी है देसी, जैसी गंगा की विमल धार। चल श्री टोली टोली बनकर, केसरिया बाना पहन चलो। लो ध्वजा धर्म की धायों में, पथ कटक करते बहन चलो। बन जाओ बन्दा वैरागी, बन जाओ पंडित लेखराम। बन जाओ वीर शिवा जी सम, बन जाओ श्रद्धानन्द महात्। वैदिक सिद्धांत अमर व्यापें, जग से छलछन्द मिटाने को। बड़ चली लेखनी दयानन्द की, भ्रम का भूत भगाने को ॥

गुरु-गौरव

[श्री डल० हरिशङ्कर शरुडलं डी० डलडु]
डुरलडल अरुडं डुरलडलडलडल सडल, उतुतरडुरदेश



सुरलरलषु डेश डहलडल डडलडत,
गुडुरलरत डुरडल गुरलरव शललु ।
अडलत उरुडवल उडुडलतल डगुडु डग डें,
डन गडल डलशुव डैडडड शललु ।

वलडुडलन डलडलकर उदडड डुडल,
अडुडलन डहलतडड डगल डलडल ।
डुु डुडुडड डुडुडु - डलनलडुु डे,
सुुतुे डलनस करुे डगल डलडल ।

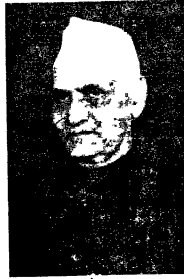
शलशुवरलडुडल, डलनडुु शलशुवरलडुु डुडुडु,
डलड अरुडत-अरुडलु डुरसग डुडल ।
उदडुडल करुडुडु - सनडल डुडु,
तड तुडु डल तुडुडलरल डग डुडल ।

तुड डलल डललडलडलरु, डलगुे
डग उडु सुस डनतल सलरु ।
अडलकर डगुे, डुडुडलडलर डगुे,
डग उडुे डलड डगलडलरु ।

डुडु डगुर डलडन डै, डग डै,
डह डलशुव-वलडुडलस डलनरवर डै ।
डुरडु-डुडुडु डलनरवर डलडन कल,
अरुडललुडुडुडु डै अडल अरुडर डै ।

डह डलनुत डलडडड डुुडुडुडलकतल
अरुडलशुड डुुडुडुडल डडतल डै ।
डलडन डलडकलड करुडुडु सलडन,
डलडन डलडडडतल-डडडतल डै ।

डुुडुडुडु कलडुडु डुुडुडु-सुेडल,
तडु-डुडुडुडु डलडल डलडडडरतल डै ।
सडरुडुडु-डलडुडु उरुडुडु डलरलड,
सुडुडुडुडु उडु अडडरतल डै ।



शुु डुु हरलशङ्कर डुु शरुडलं
सकुरुडु सलडनल नड डुडुडु,
डलडडतल डुरतल कल डलड गडल ।
डुरलडलर, डुरलड, गुरु, डुडुडु डलडुे,
डलडुडुडु डुडुडुडु डन गडल नडल ।
तुड सलडु-सलडनल सलडु डलडुे,
डलल डलडुे डुुश डुरललडन कुुे ।
उस डुरडतसुव कुुे डुरुन कुुे,
डुरलुुुडु-लुुुडु-डलडत डुुे ।
तड-तड कर कडन-सुे कलडल,
उरुडुडुडु, सतुेडु सडुडुडु डुडुडु ।
डन डडतल सुे सडुरडु डुडुडु,
सडु डडुडु डलडनल डुडु डुडुडु ।
डुेडुे कुुे डलशुडत डलकुुे कल,
डलडुडुडु डुर डुर डलसुतलर कलडल ।
सुडु डलडु-डनडल कल डलडुर डें,
नडडुडुडुडु कल सडलर कलडल ।
डुुडुडुडु डुुकर, डुडुडुडुडु-डललडुडु,
सुनसडु अलशलडुडुडुडु-डुरडुडु कलडुे ।
कलडुडुडुडु-डुडु कल डुडुडु डलडुे,
कलडुडुडुडुडु उडुडुडु डलडुे ।

(शुेडु डुगकुुे डुडु डुर)

मस्तिष्क तर्क का प्रेरक है,
 श्रद्धा हृदयों की रानी है ।
 दोनों का शुद्ध समन्वय ही,
 गौरव की अमर कहानी है ।
 सम्मानपूर्ण जीवन जग में,
 अमरत्व गर्वमय गौरव है ।
 अपकीर्ति मृत्यु का रुद्र रूप,
 अभिशाप, पाप, रुज, रौरव है ।
 सद्धर्म उसी का रचक है,
 जो धर्म-कर्म कर जाता है ।
 आदर्श युक्त जीवन-जहाज,
 भवसागर को तर जाता है ।
 मानव-मानव में भेद भाव,
 विष-रूप दुःख का दाता है ।
 सब एक पिता की सन्तति हैं,
 जो त्राता विश्व-विधाता है ।
 गुण-कर्म-कसौटी पर कसकर,
 जो जैसा व्यक्ति उतरता है ।
 वह वैसा ही कर वर्ण प्रदण,
 जीवन-सरिता को तरता है ।
 कर्मों के बन्धन में बंधकर,
 नर-नारी जन्म बिताते हैं ।
 मरने पर निज-निज कर्म रूप,
 फिर जन्म यथाविधि पाते हैं ।
 सर्वज्ञ, स्वयंभू, रूप हीन,
 सच्चिदानन्द परमेश्वर है ।
 वह जन्म-मरण वाधा विमुक्त,
 विभु विश्वनाथ, विश्वम्भर है ।
 अधि धीतराग, तप-तेज पुत्र,
 आलोक अलौकिक दान दिया ।
 सतक समन्वित श्रद्धा दे,
 निगमागम ज्ञान प्रदान किया ।
 दुर्दम्भ - दुर्ग पर बध्न-रूप,
 निर्भय प्रतिवादि भयकर थे ।
 पीडित, प्रताडितो दक्षिणों को,
 तुम दयानन्द शिवशकर थे ।

निस्पृह, निरीह, अविचल, अकाम,
 निस्वार्थ निदर भूवध्यानी थे ।
 बल-ब्रह्मचर्य अक्षय कोष,
 तुम धर्म-जाति-अभिमानो थे ।
 हे आस काम, हे धैर्य धाम,
 अपकारी का उपकार किया ।
 तुमने विष-दाता दानव को,
 कुल्लु दण्ड न दे उपहार दिया ।
 पत्थर ईंटो की वर्षा तुम,
 अति शान्त भाव से सहते थे ।
 सर्वत्र स्वतन्त्र विचरते थे,
 नित निर्भय भाषण करते थे ।
 जनता को अमृत-दान दिया,
 पर स्वयं घोर विष-पान किया ।
 तुम अमर हुए मर कर स्वामी,
 सब जीवो का कल्याण किया ।
 तुम थे 'स्वराज्य' के सूत्रधार,
 'सत्याग्रह' में प्रिय प्राण दिये ।
 तुम मरे धर्म की वेदी पर,
 निज देश जाति के लिए जिये ।
 तुम भारतीय सभ्यता स्रोत,
 सरलक पुण्य पुजारी थे ।
 तुम आर्य सभ्यता सु-प्रतीक,
 आदर्श उच्च अधिकारी थे ।
 तुम भीष्म रूप, तुम भीमनाद,
 तुम ब्रह्म-ज्ञान, गुण आकर थे ।
 तुम परित्राट, वैभव विराट्,
 वर वैदिक धर्म दिवाकर थे ।
 तुमने गुरु चर्यों को छूकर,
 जो असिधारा मत धारा था ।
 जीवों का सुदृढ़ सहारा था ।
 वह जीवन जल्य तुम्हारा था ।
 ओ टकारा की उच्चैः श्योति,
 तू कभी नहीं बुझने वाली ।
 तूक से जगमग यह जगतीतल,
 तुझसे भारत गौरव शाजी ।
 (लेखक की महर्षि महिमा से उद्धृत)

ऋषि की फुलवाड़ी

(ले०- श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा जी एम०एल०सी० प्रधान मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश)

ऋषि दयानन्द का अवतरण ऐसे नैराश्यपूर्ण समय में हुआ था, जबकि भारतवर्ष घोर अन्धकार से आवृत्तादित था। उस समय देश में मन मतान्तरों की आधी चञ्चल रही थी, वेदों का असली स्वरूप बदल दिया गया था। भारतवासियों अपनी सस्कृति से विमुख हो रहे थे। पारचाय वेद-भूया का आधिपत्य हो रहा था। इस देश का उस समय कोई धनी धोरी दिखाई नहीं देता था। विषमता अपनी चरम-सीमा तक पहुँच रही थी। ऊँच नीच का प्रश्न जोरों से चल रहा था। हमारे ही भाई, अलूत कहकर बहिस्कृत किये जा रहे थे। उन्हें विधर्मी अपने में भिलाकर बड़े प्रसन्न हो रहे थे। कौम के जाबो लाल ईसाई और मुसलमान बन रहे थे। छोटी-छोटी बालिकाओं के विवाह करक देश के मनुष्य अपनेको प्रसन्न समझते थे। विधवाओं को पुन विवाह करने का आदेश न था। पुरुष अपने लुह-लुह विवाह कर लेते थे। स्त्रियों और अलूतों को वेद पढ़ने की आज्ञा नहीं थी। अलूतों की तो परछाईं भी सब्खों पर पड़ जाती, तो उन्हें स्नान करना पड़ता। कहीं-कहीं तो ऐसा था कि अगर कोई सबर्ण जा रहा है, और मार्ग में अलूत मिल गया तो वह दूर से आवाज देकर पृथक खड़ा हो जाता था। अज्ञान और अविद्या का चारों ओर तावध हो रहा था। बालक दयानन्द जब सच्चे शिव की शोज में निकले, और मथुरा में गुरु विरजानन्द की सेवा में पहुँचे, तो उन्होंने देश की स्थिति का चित्र गुरु के सामने रखा। विरजानन्द जी शिष्य की विचारधारा समझ गये, और उन्होंने दयानन्द को जब निष्यात बना दिया, तो वहीं उपदेश दिया कि दयानन्द जाओ, तुम देश में फैली हुई अविद्या को मिटाओ, और भारत वासियों को वेद का सच्चा स्वरूप दिखाओ। अज्ञाना-

धकार में कराहते हुए भारतीयों को ज्ञान का प्रकाश प्रदान करो। गुरु की आज्ञा पाकर दयानन्द निकल पड़े, और उन्होंने हरद्वार के कुम्भ पर पाण्डव खडिनी पताका गाढ़ दी। विचार कीजिए उस तेजस्वी महर्षि दयानन्द की दृढ़ता को, लाखों कट्टर पथी साजु सन्यासियों के बीच में कैसी हिम्मत दिखाई, उन्होंने यह विचार नहीं



श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा जी एम०एल० सी०, मन्त्री सभा किया कि वह कट्टर पथी हमारे ऊपर पिल पड़े तो हमारी हडिया भी न बर्चेंगी। बाहरे ऋषि तुम्हारे वीरता का कितना गुण-गान किया जाय। तुम्हारे सामने जो आया, नत-मस्तक हो गया। अपनी मूर्तियों गंगा में बहा दीं। तुम्हारे ज्ञान भावु के सामने कोई न आ सका, तुम्हारे ब्रह्मचर्य के तेज से किसी की हिम्मत नहीं पड़ती थी कि वह तुम्हारे सामने आता। तुम जहाँ-जहाँ गये, तुमसे जो शास्त्रार्थ करने आया, वह तुम्हारा विद्वता के सामने उडर ही न सका। तुमने धोड़े से ही समय में देश में (शेष पृष्ठ ८ काष्ठ १ पर)

दीक्षा महायज्ञ के ब्रह्मापद से श्री आचार्य बृहस्पति जी का संक्षिप्त अभिभाषण

स्थाणुर्यं भारहार किल्लाभूदधीत्य वेदं न विजानाति योदर्थं, येदुर्थं ह्यसकलं भद्रभरजुते नाकमेति ज्ञान धृतपायमा की ध्यास्या करते हुए निरुक्तकार भास्काचार्य ने वेदवाणी क अर्थ को ही उस वेद जता का पुष्प और फल कहा है। और ये पुष्प और फल 'यज्ञ देवते पुष्पफले देवता ध्यात्ते वा' के अनुसार यज्ञ, देवता और अध्यात्मे ही हैं। अर्थात् अध्यात्मतत्त्व तक पहुँचने के लिये देवता मध्यस्थ हैं। जिनके माध्यम से, और सिद्धि से, दूसरे यज्ञ कर्मों के फल स्वरूप मानव को ऐहिक अभ्युदय और निश्चयेस की प्राप्ति रूप आत्मा का कल्याण एव परमात्मा का साक्षात्कार होता है। और इसी में मानव जीवन की चरितार्थता है।

महर्षि दयानन्द स्वयं भी इसी आदर्श के साक्षात् जीवित जाग्रत प्रतीक थे। अन् आह्वये, ऋषि की दीक्षा नगरी मथुरा में आज तारीख २४ दिसम्बर से २७ दिसम्बर २६ तक मनाई जाने वाली 'महर्षि दयानन्द दीक्षा शताब्दी समारोह' के अवसर, उसी महर्षि द्वारा अरुण मन्थन द्वारा वर्ष पूर्व शाहपुरा में प्रख्वलित की हुई यज्ञाग्नि से अग्न्याधान करके, वैदिक मन्त्रों द्वारा 'दीक्षा महायज्ञ' का अनुष्ठान करके अपने में भी उक्त देवताओं को सिद्धि करें—अर्थात् ज्ञान, व्रत, दीक्षा, दक्षिणा श्रद्धा और सत्य आदि दैवी गुणों को धारण करके दैवी सम्पत् के स्वामी बनें।



श्री आचार्य बृहस्पति जी शास्त्री

'सत्य वै देवा, अनृत मनुष्या'

विदुषा मनुचर —

आचार्य बृहस्पति शास्त्री, ब्रह्मा 'दीक्षामहायज्ञ'

(पृष्ठ ७ कालम २ का शेष)

नव-जागृति उत्पन्न कर दी। तुम्हारा ध्यान अपनेदेश में फैली हुई कुरीतियों को दूर करने के लिए गया तो तुम्हारे हृदय में अपने देश को आजाद करने की भी सूझी। तुमने ही सबसे पहले कहा कि—'अपना राज्य विदेशी राज्य से अच्छा होता है' तुमने बताया कि अपने देश का राजा कैसा हो, मन्त्री कैसा हो, सैन्यापति कैसा हो, इनक क्या क्या कर्त्तव्य हो। हे ऋषि तुमने देश की आजादी का जो नुस्खा बताया, उस नुस्खे को महारामा गांधी, जाला लाजपतराय, महारामा श्रद्धानन्द जी आदि नेताओं ने प्रयोग किया, और उसके अनुसार देश आजाद हुआ। तुमने जो कार्य आर्यसमाज को सौंपे, आर्यसमाज, वे उन्हे किया, और अब उन्हीं को

अपनी स्वतन्त्र सरकार ने अपने हाथ में लेकर आर्य समाज का हाथ बटाया है। आज देश में आर्यसमाज की शिक्षा संस्थाओं का जाल बिछा हुआ है। विधवाश्रम, अनाथाश्रम, कन्या विद्यालय, गुरुकुल आदि संस्थाओं के द्वारा देश का महान् कल्याण हुआ है। आज जिधर देखो, उधर ही आर्यसमाज का बोलबाला है। आर्य-समाज की महान् शक्ति का प्रदर्शन अभी मथुरा में विरव ने देखा। अपने नेताओं की आवाज पर, गुरु दयानन्द के नामपर सारे देश का आर्यसमाजी दूट पड़ा। लोग आर्य समाज की शक्ति को देखकर दंग रह गये। हर व्यक्ति यही कहता सुनाई दिया कि ऋषि की फुलवाही फूल रही है। उसके सौरभ से चारा दिशाएँ सुवासित हो रही हैं।



जलता दीपक

(ले. — श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली)

एक जलते दीपक से अनेक दीपक जलाये जा सकते हैं। परन्तु वही दीपक जलाये जा सकेंगे, जिनमें तैल और बत्ती की व्यवस्था होगी। केवल तैल और बत्ती का उपस्थित होना ही पर्याप्त नहीं है। उनमें समन्वय होना चाहिये। यदि तैल अत्यधिक हुआ और बत्ती बहुत छोटी तो दीपक नहीं जलेगा। इसी प्रकार यदि बत्ती बहुत बड़ी और मोटी है, और तैल बहुत थोड़ा है, तो भी दीपक नहीं जलेगा। इस साधारण घटना से हमें यह शिक्षा लेनी है कि यदि किसी महान् पुरुष के जीवन से हमें शिक्षा लेकर अपने जीवन को उज्वल बनाना है, तो हमारे अन्दर ज्ञान और कर्म में समन्वय होना चाहिये। इत्म और अमल दोनों चाहिये। विना ज्ञान के ज्ञान की उपलब्धि नहीं होगी। और विना चरित्र के ज्ञान निष्फल होगा।

महर्षि दयानन्द की बुद्धि बड़ी तीव्र थी। उन्होंने शिव-रात्रि को एक साधारण-सी घटना देखी, और उससे उन्हें बोध प्राप्त हुआ। उनके शिव की पत्थर की मूर्ति से अश्रद्धा और सच्चे शिव की प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा जाग्रत हुई।

जितना बड़ा और महान् बोध हुआ, उतना ही उस बोध के प्रकाश में ऋषि ने पुरुषार्थ और परिश्रम करके सच्चे शिव के स्वरूप को समझा। गंध्या की विधि में अन्त के दो मन्त्र बड़े लाभदायक और महत्त्वपूर्ण हैं। गायत्री मन्त्र बोध का प्रतीक है। बुद्धि की तीव्रता और विशालता के लिये प्रार्थना है। बुद्धि के प्राप्त होते ही एक प्रकार का अहंकार और अभिमान उत्पन्न होता है।

ससार में जितने नास्तिक हुये हैं, वह बहुधा ज्ञानियों में ही हुये हैं, चाहे वे पदार्थ विज्ञान वाले हों, चाहे तत्त्व विज्ञान वाले हों। इसलिये गायत्री में बुद्धि की प्रार्थना



श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट

की और बुद्धि में प्रकाश आया। और अभिमान की भावना से सुरक्षा के लिये समर्पण मन्त्र को अन्त में स्थान दिया गया है। समर्पण मन्त्र को नमस्कार मन्त्र भी कहते हैं। और यह मन्त्र ऐसा सुन्दर है कि इसमें एक बार नहीं ५ बार भिन्न-भिन्न रूप से सच्चे शिव को भिन्न-भिन्न नामों से नमस्कार की गई है। इसका प्रयोजन यह है कि महर्षि दयानन्द नित्यप्रति सायंकाल

और प्रातःकाल ईश्वर उपासना में बैठकर, यह बोध प्राप्त करते थे, कि सच्चे शिव को ज्ञान लिया है, मानलिया है, और पहचान लिया है। प्रत्येक संध्या करने वाले को भी इसी प्रकार से भाव अपने अन्दर रखने आवश्यक है।

ऋषि का समय जीवन बोध और ज्ञान के विस्तार से ओत प्रोत है। मथुरा में गुरु विरजानन्द के चरणों में बैठकर ऋषि ने सच्चे वैदिक धर्म सम्बन्धी बोध को प्राप्त किया, और उस बोध के प्रकाश में, समस्त जीवन वेदों के प्रचार में लगा दिया। शिवरात्रि को महर्षि के अन्दर एक जागृति उत्पन्न हुई, उस जागृति को उत्तेजना गुरु विरजानन्द की दीक्षा से हुई। गुरु विरजानन्द एक महान् जज्ञते हुए दीपक थे। उनसे बहुत शिष्यों ने पढ़ा और ज्ञान प्राप्त किया, परन्तु महर्षि दयानन्द अकेले एक ऐसे शिष्य निकले। जिन्होंने अपने जीवन रूपी दीपक को गुरु विरजानन्द के दीपक से ऐसा प्रश्वलित किया कि जिसके प्रश्वलित हो जाने से सारा से अन्धकार का निराकरण होना सम्भव हो गया।

सम्प्रति विज्ञानी का युग है जिस प्रकार, और जिस विधि से विज्ञानी का उत्पादन और प्रयोग होता है, उससे भी हमें उपयुक्त प्रकार की ही शिक्षा प्राप्त होती है। विज्ञानी के उत्पादन और प्रयोग के निम्नलिखित मुख्य अंग हैं।

(अ) पावर हाउस या उत्पादन केन्द्र।

(ब) उत्पादन केन्द्र से विद्युत पहुँचाने के लिए तार और सन्धे।

(स) जहाँ विद्युत का प्रयोग होना है, वहाँ प्रयोग की व्यवस्था, जिसे फिटिंग कहते हैं।

(द) जिस स्थान पर प्रयोग होना है, उसका उत्पादन केन्द्र से सम्बन्ध या कनेक्शन होना चाहिए।

(र) समय पर प्रयोग के लिये शिक्षा और तत्परता होनी चाहिए। उपर्युक्त विधि से यह बात समझ में आ सकती है, कि विद्युत से प्रयोग की सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए फिटिंग सबसे अधिक अनिवार्य है। जिसमें फिटिंग नहीं होगा, वह विद्युत के उपलब्ध होते हुए भी प्रकाशित न हो सकेगा।

महर्षि ने चार बातों पर बल दिया। शिक्षा, संस्कार, यज्ञ और योग। शिक्षा और संस्कार से फिटिंग होता है, और भावनाएँ मर्यादित होती हैं, और स्वभाव ठीक होता है। योग से ईश्वर रूपी प्रकाश पुत्र से सबंध जुड़ जाता है। और अब शिक्षा, संस्कार और योग से एक व्यक्ति तैयार हो जाता है, तो उसका सारा जीवन यज्ञमय होता है। वह दूसरों के उपकार के लिए अपना सर्वस्व प्रार्थन करने के लिए तैयार रहता है।

ऋषि बोधोत्सव को यदि सफलता पूर्वक मनाना है, तो जलते दीपक और विज्ञानी घर दोनों को अपने सम्मुख रखकर ज्ञान की वृद्धि और कर्म की पवित्रता के लिये उद्यत हो जाना चाहिए। यदि इस प्रकार की भावना आर्य-जगत् के अन्दर नहीं होती तो ऋषि उत्सव मनाना भी एक रूढ़ि और परम्परा का रूप धारण कर लेगा।

पूर्व का न मनाना बड़ा अपराध है। परन्तु उससे भी बड़ा अपराध यह है कि पूर्व आया, मनाया गया, धूम धाम हुई, भजन गाने और उपदेश हुआ, परन्तु इस सब प्रक्रिया का क्रियात्मक जीवन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। महर्षि के जीवन से सबसे बड़ी शिक्षा चरित्र-निर्माण है। विना नैतिक उत्थान के न स्वराज्य से ज्ञान होगा और न अर्थ सचय से। और न सामाजिक दशा परिवर्तन से। सबसे आवश्यक कार्य व्यक्ति का निर्माण है, और व्यक्ति के निर्माण का मुख्य आधार उसकी आत्मिक दशा को सुधारना है। आत्मा का सुधार परमात्मा के सम्पर्क में आकर ही होता है। आत्मा और परमात्मा अत्यन्त निकट हैं। दोनों हृदय-मन्दिर में विराजते हैं। आत्मा जब मन के द्वारा इन्द्रियों के सहारे बाहर के जगत् में उलझ जाता है, तो उसकी दशा चिन्ताजनक हो जाती है। जब वह बाहर के जगत् के प्रपञ्च से बचकर अपने अत्यन्त समीप ईश्वर को जानने और मानने लगता है, इसका ही नाम बोध है, और सच्चा ज्ञान है। यह अभ्यास की चीज है। इस शिक्षा को शिवरात्रि में हम प्रहृष्ट कर लें तो फिर हमारा समस्त जीवन सफल और सुखमय होगा।

आर्यसमाज के सिद्धान्त—

मूल और गौण

(ले०—श्री प० गङ्गाधरदास जी उपाध्याय एम० ए०)

ह्रस्व एक मस्या, सभा या समाज के दो प्रकार के नियम होते हैं। एक मौलिक, दूसरे गौण, गौण को मूल और मूल को गौण समझ लेने से निरन्तर लड़ाई भगड़े हुआ करते हैं। प्रायः कलह की जड़ यही अशिवेक है। मूल का अर्थ तो सभी जानते हैं। मूल वृक्ष का वह भाग है जिस पर समस्त वृक्ष के जीवन का आश्रय है। मूल के सींचने से वृक्ष जीवित रहता है। उसके कटने या सूखने से वृक्षनष्ट हो जाता है। 'गौण' शब्द का अर्थ समझ लेना चाहिये। गौण पाथिनि आकरण के अनुपार 'गुण' का तद्वित रूप है। परन्तु याद रखना चाहिये कि गुण शब्द के भिन्न-भिन्न शाखों में भिन्न भिन्न अर्थ हैं। अष्टाध्यायी में ह्रस्व अकार, ए और ओ को गुण कहा है वैशेषिक में ६ पदार्थों में से एक गुण है जो द्रव्य के आश्रय रहता है। जैसे पृथिवी का गुण गन्ध है और आकाश का शब्द। जब 'गुण' से गौण' तद्वित बनाते हैं तो 'गुण' का यह अर्थ नहीं लेते वहाँ 'गुण' कर्म या यज्ञ शास्त्र का विषय है। वहाँ 'द्रव्य' शब्द का भी भिन्न अर्थ है। यज्ञ के लिए कुछ मुख्य चीजें आवश्यक होती हैं जिनको द्रव्य कहते हैं। कुछ मुख्य तो नहीं हैं परन्तु मुख्य द्रव्यों के सहकारी हैं। उनका नाम गुण है। जैसे घी मुख्य द्रव्य है, परन्तु जिस पात्र में घी रखना जाता है वह गुण है। घी के बिना यज्ञ नहीं हो सकता। परन्तु पात्र पीतल का हो या सोने का या मिट्टी का, यह यज्ञों का दौना मात्र है। यह बात गौण है। गौण में विकल्प हो सकते हैं मुख्य में नहीं। विवाह सहकार में वर-बधु मुख्य या मूल हैं। पुरोहित आदि गौण।

हमने यहाँ 'गौण' शब्द की इतनी व्याख्या इसलिए की है कि हमारे आगे के वक्तव्य में भ्रान्ति न हो।

आर्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द थे। उन्होंने आर्यसमाज के सिद्धान्तों को जानने के लिये हमको तीन चीजें दी हैं। (१) आर्यसमाज के दस नियम, (२) स्वमन्तव्यामन्तव्य (३) सत्यार्थ्यप्रकाश आदि अन्यान्य ग्रन्थ। इनमें देखना यह है कि मुख्य कौन है और गौण कौन। कभी-कभी विरोध का आभास होने लगता है वहाँ अधिक मान्य क्या है यह प्रश्न उठ खड़ा होता है। अतः यह विचार आवश्यक है।

आर्यसमाज का मूल है आर्यसमाज के दस नियम। समाज का सदस्य होने के लिए भी ऋषि ने इन्हीं की स्वीकारी को आवश्यक माना है। इन दस नियमों की बनावट भी कुछ ऐसी है कि आर्यसमाज की विशेषता का ज्ञान हो जाता है। इन नियमों के तीन विभाग हैं, पहले में पहले दो नियम हैं। जो ईश्वर का प्रतिपादन करते हैं। आस्तिक या ईश्वरवादी सस्थायें तो संकटों में हैं। जिन्से आर्यसमाज का मेल नहीं है। ईश्वर के गुणों का विस्तृत वर्णन इसी विशेषता के लिए किया गया है। दूसरे विभाग में तीसरा नियम है। वेद के मानने वाले ग्रन्थ भी हैं। परन्तु आर्यसमाज के वेद की भावना भिन्न है। वेद हर आर्यसमाजी के दैनिक जीवन का अंग है। वह केवल पूजने के योग्य प्राचीन या सतयुग की वस्तु नहीं है। तीसरे विभाग में शेष सात नियम हैं। जिन्से आर्यसमाज की सार्वभौमिकता तथा विरक्त्यापिस्व पर बल दिया गया है। तात्पर्य यह है कि यदि आप हिंदुओं

के समान ईश्वरवादी भी हैं और वेद के मानने वाले भी, परन्तु यदि आप इसका सम्बन्ध मनुष्य मात्र के कल्याण से नहीं जोड़ सकते तो आप आर्यसमाज के वास्तविक अर्थ को नहीं समझे। इस बात को भी अधिक स्पष्ट करने के लिए आर्यसमाज के दस नियमों में इन चीजों का सर्वथा अभाव है — प्रथम स्वामी दयानन्द या किसी अन्य ऋषि, गुरु या सस्थापक का नाम नहीं। सभी ऋषियों की यह विशेषता थी। कि वेदोपदेश करने में वह अपने व्यक्तित्व को सर्वथा अलग रखते हैं। कुरान में बार-बार यह शब्द आता है 'कुल' (अर्थात् ह मुहम्मद तु बता कि ईश्वर ऐसा है इत्यादि)। मुहम्मद और ईसा के व्यक्तित्व का पग-पग पर उल्लेख मिलता है। आर्यसमाज के नियम सोच-विचार कर इस दौर्बल्य से मुक्त हैं। हमारे दूसरे नियमों में देश या काल की धार भी सख्त नहीं है। इसलिये आर्यसमाज एक मूल सिद्धान्त यही दस नियम हैं। इनमें विकल्प नहीं।

दूसरे स्वमतव्यामन्तव्य। यह आर्यसमाज के मुख्य सिद्धान्त नहीं है। इनको सर्वथा गौण मानना पड़ेगा। गौण जोड़े उपकारक तो होती हैं कारक नहीं होती। व्याकरण में आठ कारक माने जाते हैं, परन्तु वस्तुतः कारक तो एक ही है, अर्थात् कर्ता। (स्वतन्त्र कर्ता) अन्य तो उपकारक मात्र हैं। ('उप' उपसर्ग पर विचार कीजिये)। 'राम ने रावण को मारा'। कर्ता राम है। 'मारना' क्रिया का मुख्य भार इसी के ऊपर है। 'धनुष' से मारा' या 'लहका में मारा' यह तृतीया या सप्तमी कारक केवल उपकारक हैं, मारने के अन्य साधन भी हो सकते हैं और अन्य स्थान भी। इसी प्रकार स्वमतव्यामन्तव्य का स्थान भी नियमों की अपेक्षा गौण है। 'नियमों की अपेक्षा' इस वचन को याद रखिये। अन्यथा अज्ञान हो जायगा) ऋषि ने नाम भी बहुत सोच-समझ कर रखा था। न तो इनका नाम 'आर्यसमाज के सिद्धान्त' रक्खा, न वैदिक सिद्धान्त, न आर्यसमाज के नियम। इनमें आर्यसमाज का नाम तक नहीं। न दस नियमों में इनका उल्लेख है। आप पूछेंगे कि स्वमतव्यामन्तव्य है क्या? ऋषिवर से पूछिये। उनका नामकरण

ही अर्थों का पूर्णतया छोटक है। 'स्वमतव्यामन्तव्य' = स्वमतव्यामन्तव्या (इन्द्र समास)। स्वयं स्वमतव्यामन्तव्या = स्वमतव्यामन्तव्या (इन्द्र तत्पुरुष समास)। अर्थात् स्वामी जी महाराज की अपनी निज की, वैयक्तिक मान्यतायें।

आप शायद इस व्याख्या को सुनकर चौंकिंगे कि क्या ऋषि की वैयक्तिक मान्यतायें वैदिक मान्यता में या आर्यसमाज की मान्यतायें नहीं हैं। आप शायद इसमें ऋषि का लाघव या अनादर भी समझें। परन्तु ऐसी आशंका उन्हीं लोगों को हो सकती है जो ऋषि दयानन्द को वैदिक ऋषियों की कोटि में से निकाल कर मुहम्मद, ईसा, नानक, दादू, बुद्ध आदि मतमतान्तरों के प्रवक्तकों की कोटि में घसीटना चाहते हैं। यह ऋषि का गौरव नहीं, लाघव है। 'स्व' शब्द के प्रयोग से ऋषि का तात्पर्य ही यह है कि कोई अंश बन्द करने उनके पीछे न चले। न उनको गीता के कृष्ण के समान ईश्वर का स्थानापन्न समझे न ईश्वर का भेजा हुआ देवदूत। वेद स्वतः प्रमाण हैं। ईश्वरोपदेश स्वतः प्रमाण है न स्वामी दयानन्द न उनक ग्रंथ। वह आर्यसमाज को अपने या अपने नाम के पीछे लगाना नहीं चाहते, न इनकी बुद्धियों पर ताला डालना चाहते हैं। यह काम तो सभी आधुनिक मत प्रवक्तकों ने किया है। ऋषि दयानन्द इस निर्बलता से बहुत ऊंचे थे।

फिर शायद आप पूछें कि 'स्वमतव्यामन्तव्य' लिखने की क्या आवश्यकता थी। यह एक बारीक प्रश्न है। यदि स्वमतव्यामन्तव्य न लिखा जाता तो लोग ऋषि दयानन्द के समस्त ग्रन्थों के आत्मा को न समझ सकते। और वह शायद उन ग्रन्थों में दिये गये मुख्य और गौण में विवेक न कर सकते। स्वमतव्यामन्तव्य उन ग्रन्थों में आये हुए शब्दों की तालिका है। उदाहरण के लिये जहाँ कहीं 'नियोग' शब्द आया हो वहाँ नियोग के वही अर्थ लेने चाहिये जो 'स्वमतव्यामन्तव्य' में दिये हैं। नियोग के अर्थ तो बहुत से हो सकते हैं। और नियोग के नियम भी भिन्न भिन्न स्थितियों में बहुतसे हो सकते हैं। इसी प्रकार 'उपासना' शब्द का ऋषि दयानन्द को एक विशेष अर्थ अभिप्रेत है। उसका अन्यथा अर्थ हो सकता है।

परन्तु ऋषि के ग्रन्थों को समझने के लिये वही अर्थ लेना आवश्यक है। अन्यथा भ्रान्ति होगी। इसी प्रकार 'आय्यावर्त्त'। ऋषि ने अपने ग्रन्थों में जहाँ 'आय्यावर्त्त' शब्द का प्रयोग किया है वह उसी अर्थ में किया है जो 'श्वर्मांतव्य' में दिया है। इस शब्द के अर्थ 'राज-नैतिक' कार्यों से बदल भी सकते हैं। परन्तु ऋषि के ग्रन्थों में वही अर्थ लेना चाहिये।

अब रहे ऋषि के शेष ग्रन्थ। वह एक बहुत बड़ा बन है। उसमें मुख्य, गौण और गौणों में भी तारतम्य के साथ कम गौण और अधिक गौण सभी आ जाते हैं। उसमें अपने अतिरिक्त दूसरे ऋषियों या मान्य पुरुषों के निज मतों के उद्धरण भी हैं। कहीं-कहीं कहानियाँ भी हैं, और कहीं कहीं सुनी-सुनाई और बिना जाँचो हुई बातें भी हैं। जैसे कुछ भारतीय राजों की बशावली या उनके राज काज की अवधि 'कुछ अटकलें भी हैं' जैसे जगन्नाथपुरी के विषय में एक साधु की बताई हुई कुछ बातों पर अटकलें वहाँ स्पष्ट लिखा है कि शायद ऐसा होगा। इन समस्त ग्रन्थों के सभी बचन, सभी शब्द, सभी कथानक, या ग्रन्थ पुस्तकों के दिये हुये सभी प्रमाण न तो ऋषिवर के मतव्य ही थे न इन को आर्यसमाज के सिद्धान्त ही कहा जा सकता है। जो कोई स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों के हर बचन और हर शब्द को तुल्य

प्रामाण्य प्रदान करता है, वह ऋषि के मुख्य अभिप्राय को नहीं समझा। वह ऋषि का वास्तविक आदर भी नहीं करता और आर्यसमाज के लिये उलझनें उत्पन्न कर देता है। याद रखना चाहिये कि शास्त्र से शास्त्रकार बड़ा होता है। शास्त्र शास्त्रकार की भावनाओं का एक स्थूल और सङ्कुचित रूप है। वेद में कहा है "पादोऽस्य विश्वा भूतानि"। मशीन का बनाने वाला मशीन से बहुत ऊँचा है। कालिदास रघुवन्श से बहुत बड़ा था। ऋषि दयानन्द अपने ग्रन्थों से बहुत बड़े थे। उनके मस्तिष्क को समझने के लिये उन सूक्ष्म विचारों की खोज करनी होगी जो उनके ग्रन्थों में समष्टि रूप से श्रोत योग्य हैं। हमारे सामने बहुत-सी शकयें इसलिये उठनी हैं कि हम इन तीन चीजों अर्थात् (१) १० नियम (२) स्वस्मत्त्व्यामन्तव्य (३) और शेष ग्रन्थों के वास्तविक मूल्य का अंकन करने में असमर्थ रहते हैं। और उनको भेदक भित्ति की उपेक्षा कर जाते हैं। यदि हम चाहते हैं कि आर्यसमाज सार्वभौम हो जाय और उसका भविष्य उज्ज्वल हो तो आर्यसमाज को विचार स्वातन्त्र्य का मान करना होगा यदि ऐसा नहीं करेंगे तो साम्प्रदायिकता और पारस्परिक कलह बढ़ेगी। मेरा समझ में मुख्य-गौण विवेक आर्यसमाज के नेताओं के लिये चिन्त्य-तम समस्या है।



ब्रह्म-ज्योति

ज्योति अक्षय्य निरजन की, भरपूर प्रकाश प्रकाश रही है।
दिव्य-घटा निरखी जिसने, उसने दुविधा भ्रम की न गही है ॥
सिद्ध विलोक बखान रहे, सब ने छवि एक अनन्य कही है।
तू कर योग निहार लुका, अब शकर जीवन मुक्त सही है ॥

परमात्मा सर्व-शक्तिमान् है

जिसने सभ लोक रचे सबको, उपजाय, बढाय विनाश करे।
सबका प्रभु, साथ रहै सबके, सबमें भरपूर प्रकाश करे ॥
सब अस्थिर-हरय दुरें दूरसे, सब का सब ठौर विकास करे।
वह शकर मित्र हित सब का, सब दुःख हरे न हताश करे ॥

—महाकवि शकर

‘स्वराज्य’ और ‘सुराज्य’ के द्रष्टा—

स्वामी दयानन्द

(श्री सुरेशचन्द्र वेदालङ्कार एम० ए०, एड० टी०, डी० बी० कालेज, गोरखपुर)

स्वामी दयानन्द के जन्मकाल तक लगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष में अंग्रेजों का शासन स्थापित हो चुका था। जो प्रदेश बचे थे वहाँ भी धीरे-धीरे अंग्रेजों की स्थिति दृढ़ हो रही थी। १८५७ ई० के बाद तो राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तथा धार्मिक सभी दृष्टियों से भारत का पतन हो गया था। राजनैतिक पराजय उतनी भयंकर वस्तु नहीं, जितनी सांस्कृतिक पराजित मनो-वृत्ति और १८५७ से पहले से ही दूरदर्शी अंग्रेजों ने मान-सिक दृष्टि से भी भारतीयों को गुलाम बनाने का कार्य



श्री सुरेशचन्द्र जी वेदालङ्कार

प्रारम्भ कर दिया था। इस वस्तु को देखकर स्वामी दयानन्द जी ने सबसे पहले ‘स्वराज्य’ की आवाज उठाई। उन्होंने सत्यायु-प्रकाश में लिखा “गन्दे से गंदा स्वदेशी राज्य अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य से कहीं अच्छा है”। बात यह है कि गंदा स्वदेशी राज्य चाहे कितनी भी गंदगी फैलाये वह मानसिक सांस्कृतिक एवं सामाजिक

दृष्टि से तो हमें गुलाम नहीं बनायेगा। परन्तु विदेशी राज्य अपनी जड़ों को जमाने के लिए राष्ट्र को भाषा, संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि से गुलाम बनाने का प्रयत्न करेगा, और भारतवर्ष में हो भी यही रहा था। श्रीमती बेसेंट ने १९ वीं सदी के भारत का जो हाल देखा था, वह काफी दर्दनाक था। “लोग आस्तिकता और नास्तिकता के बीच भटक रहे थे। आधिभौतिकता की बाद के मारे राष्ट्र का जीवन विष्टल्लभित हो गया था अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग हक्सले, मिल और स्पेंसर के अनुयायी हो रहे थे। किन्तु अपने साहित्य का उन्हें बिल्कुल ज्ञान न था। वे अपने अतीत से घृणा करते थे अतः भविष्य के विषय में उनका कोई विरवास नहीं था। वे अपने होकर अंग्रेजों के तौर तरीकों की नकल कर रहे थे एवं अपने कला कौशल और शिक्षण का विनाश करके अंग्रेजी असबाबों से अपना घर सजा रहे थे। राष्ट्रिय जोश का उनमें लेश भी नहीं था। राष्ट्रिय जीवन की गति बताने वाली कोई भी क्रिया उनमें दिखाई नहीं देती थी। यह सदिग्ध था कि भारतीय हृदय में कोई धक्कन भी शेष है या नहीं” यह थी भारत की वास्तविक स्थिति।

स्वामी दयानन्द ने इस पतन को देखा। और इसके कार्यों को दूर कर स्वराज्य की स्थापना और सुराज्य का निर्माण भी अपने सामने रखा, और उन्होंने स्वराज्य की स्थापना का भार भी स्वाम जी कृप्य वर्मा को सौंपा। तथा स्वयं रावजूताने के राष्ट्रियों में जाकर स्वतन्त्रता की भावना भरने का प्रयत्न किया। देश के मानसिक पतन को रोकने के लिए उन्होंने राष्ट्रिय शिक्षा की योजना

बनाई और यह कार्य उन्होंने अपने दूसरे शिष्य स्वामी अदानन्द को सौंपा। शिष्या तथा राजनैतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद सबसे अधिक आवश्यक बात यह थी कि जनता में आई आत्म-हीनता की भावना कैसे दूर की जाय, और इसके लिए स्वयं प्रयत्न किया। और इस कार्य को आगे चलाने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की। आप शायद यह लेख पढ़कर यह सोचने लगें कि मैं स्वामी दयानन्द के कार्य-कलाप को एव कार्य-क्षेत्र को संकुचित कर रहा हूँ। पर बात यह नहीं। उनकी विश्व-व्यापिनी दृष्टि ने 'कृषवन्तो विश्वमार्यम्' का उद्देश्य अपने सामने रखा हुआ था। और उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम समय तक उसी के लिए कार्य भी किया। परन्तु उसका प्रारम्भ उन्होंने अपने घर से किया और हसीलिए रूढ़ियों और गतानुगतिका में फसे हुए भारतवासियों की कर्बू निन्दा की। और उन्हें बतलाया कि तुम्हारा धर्म पौराणिक सस्कारों की धूल में छिप गया है। इन सस्कारों की गन्दी पतों को तोड़फेंको। तुम्हारा सच्चा धर्म वैदिक धर्म है। जिसपर आरुढ़ होने से तुम फिर विश्वविजयी हो सकते हो। और यह बात नहीं कि स्वामी जी का प्रभाव न पड़ा हो। आर्यसमाज के प्रभाव में आकर बहुत से हिन्दुओं ने मूर्तिपूजा छोड़ दी, बहुतां ने अपने घरके देवी देवताओं की प्रतिमाओं को तोड़कर बाहर फेंक दिया। आरुढ़ बन्द होगया। अवतारवाद की समाप्ति हुई। अद्भुत पन मिटा। स्वदेशी की भावना आई। स्त्रियों को समानाधिकार और शिष्या मिली, तथा राष्ट्रीय चेतना जाग्रत हुई। हम 'स्वराज्य' की ओर बढ़े। हिंसामक या अहिंसामक राष्ट्रिय-आन्दोलन में प्रत्येक आर्यसमाजो ने अपनी सहानुभूति प्रदर्शित की। और यह अत्युक्ति न होगी कि ६०-६५ प्रतिशत आर्यसमाजियों ने उसमें भाग लिया। स्वामी अदानन्द, लाला लाजपतराय, भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल आदि कितने ही नाम गिनाये जा सकते हैं। इस प्रकार 'स्वराज्य' हुआ। परन्तु 'स्वराज्य' के बाद 'सुराज्य' की आवश्यकता भी स्वामी जी ने अनुभव की थी।

'सुराज्य' के लिए उन्होंने व्यक्तिगत चरित्र की

उन्नति की ओर ध्यान देने और अपने अन्त करण या आत्मा की आवाज के अनुसार चलने को कहा। उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश के ६ वें समुल्लास में आत्मा की आवाज के अनुसार चलने की बात बहुत जोरदार शब्दों में कही है। यह आत्मा की आवाज क्या है? इसे यदि मैं सरल शब्दों में कहूँ तो यह मनुष्य का अपने ऊपर अपना बन्धन है। भारतीयभाषा का शब्द शास्त्र का एक-एक शब्द एक-एक भावना का द्योतक होता है। ११५७ की १५ अगस्त को जब भारत को स्वतन्त्रता मिली। अंग्रेजी पत्रों और व्यक्तियों ने अपने यहाँ से 'इण्डिपेंडेंस' की घोषणा की। परन्तु हिन्दी पत्रों ने तथा भारतीय भाषाओं के पत्रों ने 'स्वतन्त्रता' या 'स्वाधीनता' को सूचना दी। दोनों में अन्तर है। इण्डिपेंडेंस शब्द का अर्थ है 'अनधीनता' अर्थात् किसी के अधीन न रहना। इसका अर्थ स्वाधीनता नहीं। स्वाधीनता का तो अंग्रेजी अनुवाद होगा 'सेल्फ इण्डिपेंडेंस' अब अनधीनता और स्वाधीनता पर विचार कीजिए। जो व्यक्ति 'अनधीन' होगा वह उच्छुल्ल हो जायगा, और वह उस दशामें बेजबंम बिना टिकट की यात्रा अपना धर्म समझेगा, सबकपर, ग्राम-रास्तों पर जनता को सुविधाओं के लिए बनी वस्तुओं को उठाकर अपने घर ले जायगा, सार्वजनिक स्थानों को गन्दा करके रोग फैलाएगा, काम के समय आराम करेगा, अनुचित साधनों से धन कमाकर अपनी भलाई के सामने दूसरों के अनिष्ट की परवाह न करेगा। अनियंत्रण अनुशासनहीनता उसको नहीं। अखरोगी और परिग्रामत अधिकांश व्यक्तियों के ऐसा होने पर देशोद्धार और राष्ट्र निर्माण की योजनाएँ समाप्त हो जायगी। विचारिए आज क्या ऐसा नहीं हो रहा है? बाध बन रहे हैं और बनने से पहले वे टूट जाते हैं, क्यों? दुर्भाग्य बन रही पर नकली पदार्थों की मिजाबट से वे रोगियों के प्राण ले रही हैं, क्यों? ची, दूध, तेज सभी वस्तुओं में मिजाबट है। देश स्वराज्य के बाद तो और भी पतन को जा रहा है यह ऐसा जोगों का अनुमान है। क्यों? क्योंकि हमने स्वराज्य के बाद अनधीनता तो पाई पर स्वाधीनता नहीं। स्वामी जी महाराज ने हसी 'सुराज्य' को खाने के लिए

'आत्मा की आवाज' 'स्व' का बन्धन आवश्यक रखा ।
 ठीक है, आपको चोरी करते हुए, घूस लेते हुए, गन्दगी फैलाते हुए किसी दूसरे ने नहीं देखा, पर परमात्मा तो देख रहा है। उससे बचने का उपाय है, अपनी आत्मा की आवाज सुने, और अनुभव करो कि यह कार्य ठीक नहीं । उस दशा में तुम स्वयं को सुखी और देश को सुराज्य की ओर ले जा सकते हो । इस प्रकार यदि हम राष्ट्र को सुराज्य की ओर ले जाना चाहते हैं, तो स्वामी जी का 'स्वाधीनता' का उपदेश हमें हृदयङ्गम करना होगा । आज भी अन्धीनता के रूप में न सोचकर स्वाधीनता के रूप में हमें सोचना होगा । और अपने पर लगाया हुआ यह आत्मबन्धन राष्ट्र और जाति के लिए तथा विश्व के लिए भी एक मार्ग प्रशस्त करेगा । यही शिवरात्रि का स्वामी जो महाराज का सन्देश है । जो न केवल अर्थिक बल्कि राष्ट्र के लिए सुनने की बात है । आज महान् उपकारक विश्व को आर्य (कुचित अर्थ में नहीं) बनाने के उत्सुक और प्रेरक महर्षि का गुणगान हम किन शब्दों में करे, नहीं समझ पा रहे हैं । सचमुच हे स्वामी ।

सबने देखे विद्वेष गरल, तुने देखा अमृत प्रवाह ।
 सबने बहवानल लिया, लिया तुने कण्ठा सागर अथाह ।
 नर के भीतर की दुनिया में, हे कर्ता अवस्थित देवालय ।
 सदियों में कभी कभी कोई मरमो पाता जिसका परिचय ॥

पूज्य गुरुवर । किना उपकार मानव का तुने किया है ।
 कैसे अद्भुतजलि अर्पित करू । मैं नहीं समझ पाता हूँ ।

तेरा विराट यह रूप, कल्पना पट पर नहीं समाता है ।
 जितना कुछ कहूँ, मगर, कहने को शेष बहुत रह जाता है ।
 जजित मेरे विचार, तिलक माला भी यदि ले आऊँ मैं ।
 किस भाति उठू इतना ऊपर ? मस्तक कैसे छू पाऊँ मैं ।
 शीघ्र तक हाथ न जा सकते, उ गच्छिया न छू सकवी लज्जाट ।
 बामन की पूज, किस प्रकार पहुँचे तुम तक मानव विराट् ।



परमात्मा की महत्ता

हे शकर कृतस्थ अकर्ता, तू भ्रजरामर-सत्ता है ।
 तेरी परम-शुद्ध-सत्ता की, सीमा-रहित-महत्ता है ॥
 जब से और जीव से न्यारा, जिसने तुम्हको जाना है ।
 उस योगीश-महाभागी ने, पकड़ा ठीक ठिकाना है ॥

हे अद्वैत, अनादि, अजन्मा, तू हम सबका स्वामी है ।
 सर्वोधार, विशुद्ध, विधाता-अविचल अन्तर्यामी है ॥
 भक्ति भावना की ध्रुवता से, जो तुम्हको अपनाता है ।
 वह विद्वान्-विवेकी-योगी मनमाना सुख पाता है ॥

हे आनन्द महासुखदाता, तू त्रिभुवन का प्राता है ।
 सुत्तक माता, पिता हमारा, मित्र सहायक भ्राता है ॥
 जो सब छोड़ एक तेरा ही, नाम निरवर लेता है ।
 तू उस प्रेमाधार-पुत्र को, मन्त्र-बोध-बल देता है ॥

मैं समझता था कहीं भी, कुछ पता तेरा नहीं ।
 आज शकर तू मिला तो, अब पता मेरा नहीं ॥
 शकर स्वामी एक है, सेवक जीव अनेक ।
 वे अनेक हैं एक में, वह अनेक में एक ॥

विश्व विज्ञासी-ज्ञज्ञ का, विश्व-रूप सब ठौर ।
 विश्वरूपता से परे, शेष नहीं कुछ और ॥
 होना सम्भव ही नहीं, जिसमें सैक निरेक ।
 जाना उस अद्वैत को, जिसने बिना विवेक ॥

जिसकी सत्ता का कहीं, नादि, न मध्य, न अन्त ।
 योगी हैं उस बुध के, बिरले सन्त महन्त ।
 सर्व शक्ति-सम्पन्न हैं, स्वगत-सच्चिदानन्द ।
 भूले भेद, अमेद में, मान रहे मतमन्द ॥

स्वामी सब ससार का, वह अविनाशी एक ।
 जिसके माया जाल में, उलझे जीव अनेक ॥
 —महाकवि शकर

आज भी यह विचार दृढ़ है कि आर्यसमाज के सांस्कृतिक और सामाजिक ढांचे को तो उद्योग का त्वो सुरक्षित रहने दिया जाये। आर्यसमाजियों को जो इधर रुचि रखते हैं उन्हें सघटित रूप दिया जाये। मेरा अपना विचार है कि यदि मेरठ महासम्मेलन में कोई निर्णयात्मक पग उठा लिया गया होता तो आज आर्यसमाज की युवा शक्ति बिखरती नहीं। परन्तु आज भी अगर एक दृढ़ निर्णय ले लें तो अभी बहुत कुछ नहीं बिगडा है। आर्यसमाज क नेता पंजाब का भापा सत्याग्रह और मथुरा की दयानन्द दीक्षा-शताब्दी देखकर भी यदि आर्यसमाज की शक्ति का अनुमान नहीं लगा पाते तो यह हमारा दुर्भाग्य ही है। मेरठ में राजनीति वाले प्रस्ताव पर एक उपसमिति बना दी गई थी। इस बार मथुरा में भी आर्यसमाज के प्रमुख व्यक्तियों ने फिर इस विषय को राजार्थ सम्मेलन में उठाया। मेरठ से मथुरा तक इतना तो अन्तर हुआ है कि श्री महाशय कृष्ण जी और माननीय धनरामसिंह जी गुप्त तो इन विचारों के हो गये हैं, कि राजनीति में आया जाये। परन्तु रूप उसका क्या हो यह अभी वह नहीं सोच पा रहे हैं।

आर्यसमाज में ऐसा भी कुछ तथ्य है, जो आज भी राजनीति को वाराणसी (वैश्या) या कीचड़ में हाथ डालना यात्रि कहकर दूर रहने का परामर्श देता है परन्तु इनमें तीन प्रकार के व्यक्ति हैं, एक तो वह जिनका मस्तिष्क ही इस दिशा में कभी काम नहीं करता, केवल सिद्धान्तवाद अथवा शास्त्र चर्चा को ही आर्यसमाज समझ बैठे हैं। इस बात को वह भूल जाते हैं “शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्र-चिन्ता प्रवर्तते” अपना राज्य और अपना धर्म इन दोनों का भी अभिन्न सम्बन्ध है। दूसरे फिर आर्यसमाज स्वयं तो एक संगठन ही है कोई धर्म तो है ही नहीं। धर्म के जिस शुद्ध और परिष्कृत रूप को आर्यसमाज के प्रवर्तक ने हमें बताया है, उसमें राजनीति को भी धर्म से अलग नहीं रखा गया। सत्यार्थ प्रकाश के छोटे समुल्लास में महर्षि दयानन्द जी ने जहाँ इसकी चर्चा आरम्भ की है, वहाँ “राजधर्मात् व्याख्यास्याम” ऐसा लिखा है। दूसरे व्यक्ति वह हैं जो सरकारी नौकरी में अथवा सरकारी अधिकारियों के कृपा-पात्र बने रहने

में ही जिनका हित है। तीसरे और भी एक इस विचार के विरोधी हैं। यह वह लोग हैं जिनका इस तरह के कुछ राजनैतिक संगठनों से लगाव है, जो उनके प्रति अपनी चकादारी बनाये रखने के लिए ही यह परामर्श देते हैं कि राजनीति से दूर रहा जाये। दुःख की बात है कि इस समय कांग्रेस से लेकर कम्युनिस्ट तक हमारे इस संगठन में हैं। कुछ प्रत्यक्ष हैं और कुछ अप्रत्यक्ष हैं। अच्छा हो हम इन अप्रत्यक्ष काम करने वाले मित्रों से भी सावधान रहें।

कुछ ऐसे भी आर्य जन हैं जो सचमुच ही बिना किसी अन्य कारण के पवित्र भाव से यह अनुभव करते हैं कि कहीं उधर जाने से हम अपने प्रमुख लक्ष्य से भटक तो नहीं जायेंगे? सम्भव है कि सीमा तक वह ठीक भी सोच रहे हों, परन्तु बड़ी नज़रता से ऐसे महातुभावों से मेरा निवेदन है कि कुछ ऐसे भी समय आते हैं जब थके-बड़े महात्माओं को भी परिस्थितियों ने मार्ग बदलने पर विवश किया है। समर्थ गुरु रामदास को परिस्थितियों ने ही पुकारा था कि किसी सिद्धा जी को पीठ पर हाथ रख कर उसे तैयार करें। बन्दा वैरागी को माला छोड़ कर स्वयं फर्खसियर के आगे तलवार पकड़नी पड़ी थी। और इसी तरह के यह सब कारण थे जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने भारत के प्रथम क्रान्तिकारी श्याम जी कृष्ण वर्मा को लन्दन में छात्रवृत्ति देकर भारतीय स्वाधीनता का शस्त्र फूँकने भेजा था। एक समय ऐसा था जब धर्म के शुद्ध स्वरूप की रक्षा के लिए आर्यसमाज ने शास्त्रार्थ किया। ऐसा भी एक समय आया जब लाठी-गोली और सुरों के भी सामने आर्य नेताओं ने किये। कभी सत्याग्रह युद्ध में भी हम कूदे। समय के अनुसार अपनी रीति-नीति में हम हेरफेर करते रहे हैं। परन्तु आज की परिस्थिति हमें पुकार पुकार कर कह रही है कि हम राजनीति की उपेक्षा न करें। संस्कृति सभ्यता और धर्म को अग्रजों के समव उतना खतरा नहीं था, जितना आज है। धर्म निरपेक्षता के नाम पर जो वातावरण आज चल रहा है उससे साम्यवाद के लिए रास्ता तैयार होता जा रहा है। कभी छोटी और अनेक के लिए हमारे पूर्वज खड़े थे, आज

बहाव में आकर नई पीढ़ी उन्हें वह स्वयं उतरती जा रही है। धर्म का मजाक उड़ाया जाता है उसे विध्वंस युग की बात कह कर अजायब घर की वस्तु बतलाया जाता है। स्कूलों, कालेजों में कहीं नाममात्र को भी थोड़ा धार्मिक क्रम था तो उसे कानून से छुड़ा दिया गया। उधर इस धर्म निरपेक्षता का ज़ाब उठाकर भारत की अराष्ट्रिय प्रवृत्तियाँ फिर पनप रही हैं। पाकिस्तान की तरह विदेशी ईसाई पादरी अरबों रुपया बहाकर फिर से देश को एक नये सक्केट के द्वार पर ले जा रहे हैं। हमारी राष्ट्रिय सरकार धर्म निरपेक्षता के नाम पर यह सब देख रही है। यों भी आज की कांग्रेस जिसकी केन्द्र में श्रीर प्रान्तों में सरकार है, वह गांधी, तिळक और मालवीय जी की कॉंग्रेस नहीं रही। उसमें भी बहुत से कम्युनिस्ट घुस गये हैं। आज के कम्युनिस्टों और कांग्रेस में इतना ही अन्तर है कि वह विदेशी कम्युनिज्म को मानते हैं और इनका स्वदेशी कम्युनिज्म है। कॉंग्रेस के उच्चतम नेता यदि यह सोचते भी हैं कि कभी शासन हमारे हाथ से अग्रर जाये तो फिर यह ही सभाजें। भले ही परिस्थितिबश वह इस बात को न कहते हों परन्तु उनके मन में यह चोर छिपा हुआ है। ऐसी परिस्थितियों में कर्त्तव्य तो हर भारतीय संस्कृति के उपासक का है, कि वह सगठित हों और देश के लिए दलीय भावनाओं से ऊपर उठ कर विचार करें, पर आर्य समाज का दायित्व तो विशेष है। स्वस्थ सगठनों का यह चिह्न भी है, कि वह अपने लक्ष्य को न भूलते हुए समय के साथ अपनी रीति-नीति में परिवर्तन करते रहते हैं। गम्भीरता से इस विषय पर भी आज हम एक बार फिर से सोचें। यह बात दूसरी है कि उसका रूप क्या हो ? सिद्धान्त यदि यह बात सच मान लेते हैं तो रूप अचर्य सोच लिया जायेगा। अमरशहीद स्वा० श्रद्धानन्द जी ने आज से ३० वर्ष पूर्व यह भविष्यवाणी लिखित रूप में की थी, कि एक ऐसा भी समय आयेगा, जब आर्यसमाज को राजनैतिक शुद्धि भी करनी पड़ेगी ? मेरी सम्मति में आज वह समय आ गया है, जब स्वामी जी की उस भविष्यवाणी को सार्थक करने के लिए हम कसर करें। हमारे अधिक से अधिक साथी सतर्कों और

शंकर सर्वधार है

मगल मूळ महेश, दूर अमंगल को करे ।
ब्रह्म विवेक दिनेश, मोह महातम को हरे ॥

शकर स्वामी के सुने, गकर नाम अनेक ।
मुक्य सर्वतोभद्र है, मगलमय भोमेक ॥

मुक्य नाम है ईश का, ओमनुभूत प्रसिद्ध ।
योगी जपते हैं इसे, सुनते हैं सब सिद्ध ॥

ओमघर के अर्थ का, भरले ध्यान पवित्र ।
बोध बना देगा तुम्हे, असृत मित्र का मित्र ॥

शकर सर्वधार है, शकर ही सुख धाम ।
शकर प्यारे मन्त्र हैं, शकर के सब नाम ॥



ब्रह्मचर्य का महत्व

[दोहा]

रहें जन्म से मृत्युको, ब्रह्मचर्य-व्रतधार ।
समभो ऐसे वीर को, पौरुष पुरुषाकार ॥
बाळ ब्रह्मचारी जहाँ, उपजें परमोदार ।
शकर होता है वहाँ, सबका सर्व-सुधार ॥
(स्वामी दयानन्द सरस्वती)

विज्ञान-पाठ, वेद पढ़ो, को पढ़ा गया ।
विद्या-विज्ञान, त्रिंश वरों, का बढ़ा गया ॥
सार असार, पन्थ मर्तों, को हिला गया ।
आनन्द सुखा, सार दया, का पिळा गया ॥
अब कौन दयानन्द, यती के समान है ।
महिमा-अलखद, ब्रह्मचर्य की महान् है ॥

—महाकवि शकर

बचान सभाओं में पहुँचें और मूक एवं त्रसित मानवता का सही प्रतिनिधित्व करें। राजनीति के भ्रमगाम दौड़ते जा रहे घोड़े को समय और विवेक की जगाम लगायें।



दयानन्द विचार दोहन

[ले० श्री प० नरेन्द्र जी हैदराबाद]

शिवरात्रि के पवित्र अवसर पर युग प्रवर्तक महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज क जीवन चरित्र में से उन प्रमुख घटनाओं को जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है, जो कि उनके सारे जीवन की बीती घटनाओं में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन्हीं घटनाओं ने मूल जी को—दयानन्द और दयानन्द को महर्षि के पद पर आसीन किया। सत्य ही है महापुरुष ही ससार की महती घटनाओं के प्रवर्तक होते हैं, जो स्रोत समाज की मूलभाति तक को हिला देते हैं, जो स्रोत समाज के शरीर में नई शक्ति का संचार कर देते हैं। महापुरुष ही ऐसे स्रोतों के उत्पादक होते हैं। महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र रूपी समुद्र से उन उन रत्नों को बीन कर यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है जिसकी आभा और तेज से हम अपने जीवनो को आलोकित कर सकें। और हम इस विचार दोहन में महर्षि क स्पष्ट रूप से दर्शन कर सकेंगे, और यह विचार दोहन सब के लिये लाभकारी होगा।

निर्मयता और सत्य

(१) १८६६ ई० में जब कि स्वामी जी लाहौर उठरे हुये थे, और उन्होंने अपने प्रबल आन्दोलन को चला रखा था तब कारमीर पति महाराज रणवीर सिंह ने प० मनफूल द्वारा स्वामी जी से अनुरोध किया था कि “आप सृतिपूजा के विरोध में कुछ न कहे। यदि आप ऐसा करें तो मैं अपना धनागार आपको समर्पित कर दूंगा।” परन्तु दयानन्द ने इसका क्या उत्तर दिया ? आपने निर्मयता के साथ सत्य के प्रचार से न डिगते हुये प० मनफूल से “कहा मैं वेद प्रतिपादित ग्रन्थ को सन्मुख करूंगा, न कि कारमीरपति को”। महाराजा का

प्रलोभन मुझे अपने सत्य के मार्ग से नहीं हटा सकता। आप ऐसी बात फिर मेरे सामने न कहिये।

(२) १८६१ ई० में जबकि काशी में महाशास्त्रार्थ का आन्दोलन हो रहा था काशी का एक प्रसिद्ध पंडित, एक दिन रात्री के समय दयानन्द क पास आया और उनसे प्रार्थना की कि यदि आप सृतिपूजा का खण्डन न



— श्री प० नरेन्द्र जी —

करें तो काशी की पंडित मण्डली एकत्र हो कर आपके गल में जयमाला पहनायेगी, और आपको हिन्दुओं का अन्यतम अवतार मानलगी। उत्तर में महर्षि ने कहा ‘मैं यह कुछ नहीं चाहता,’ म तो वेद प्रतिपादित सत्य के प्रचार के लिये आया हूँ।

(३) दिल्ली के निक्टवर्ती किसी स्थान के एक सेठ ने स्वामी जी के पास आकर विनयपूर्वक यह प्रार्थना की महाराज मैं यह लाख रुपया आपको भेंट करता हूँ, आप मूर्तिपूजा का लखडन न करें। सेठ के इस अनु रोध को सुनकर स्वामी जी के श्रोत्रो पर मुस्कान-सी आ गई, श्रीर आपने कहा, प्रलोभन मुझे निर्भयता साहस, पराक्रम और सत्यपथ से विचलित नहीं कर सकता। आप यहाँ से चले जाइये।

(४) उवाला प्रसाद नामक एक ब्राह्मण जो फरु-खाबाद का निवासी था। एक दिन एक—वाम मार्गी ब्राह्मण को अपने साथ लाकर स्वामी जी के सम्मुख कुर्सी डालकर बिठा दिया और वह व्यक्ति उन्हें दुर्वचन कहने लगा। जिसका महाराज पर कुछ भी असर न पड़ा। परन्तु उस दुष्ट का दुर्व्यवहार महाराज के भक्तों को असह्य हुआ और उन्होंने उसे खूब पीटा। यह बात महाराज को जब मालूम हुई तो, स्वामी जी ने कहा कि "हम से यदि हाकिम पूछेगा तो हम तो जो सत्य है वही कहेंगे। चाहे वह तुम्हारे अनुकूल हो या प्रतिकूल पड़े। हम इस प्रकार के व्यवहार को उचित नहीं समझते।"

(५) लाजा जगन्नाथ ने एक दिन स्वामी जी से कहा कि आप पर आक्रमण की सम्भावना है, हमलिये अरुणा होगा कि आप विश्रान्त क नीचे के भाग में रहने लगिये वह सुरक्षित है। स्वामी जी ने कहा कि "यहाँ

तो आप मेरी रक्षा कर लिये, परन्तु अन्यत्र कौन करेगा ? मैं ने आज तक अकेले ही अमण किया है। श्रीर आगे भी कहूँगा। कई बार मेरे प्राण हरण की चेष्टा की गई परन्तु सर्व रक्षक परमात्मा ने सर्वत्र मेरी रक्षा की श्रीर भविष्य में भी वही करेगा। सत्य के प्रचार में बाधाएँ आती ही हैं। आप चिन्ता न करें।

(६) महारानी विक्टोरिया के ज्येष्ठ पुत्र एडवर्ड सप्तम भारत वर्ष में अमण करने के लिये आये थे, उस समय भारत के वाइसराय लार्ड नार्थ ब्रुक ने बाबू केशव चन्द्र सेन से कहा कि वे स्वामी जी से मिलना चाहते हैं। स्वामी जी से कहा गया तो उन्होंने कहा कि "लार्ड नार्थ ब्रुक हमारे पास आयेंगे। हम सन्ध्यासी हैं उनसे मिलने नहीं जायेंगे, हमारा द्वार प्रत्येक के लिये खुला है।"

ये श्रीर ऐसी ही निर्भयता, सत्यता और आस्तिकता की घटनाय महर्षि के जीवन में सव्याप्त हैं। शिवरात्रि ने उस महान् आत्मा को शकर के गुणों से युक्त कर दिया। नव निर्माण और अन्याय का प्रतिकार कर वे अपने जीवन को सत्य शिव सुन्दरम के लिये समर्पित कर गये। हम आर्यों पर उनके स्वप्नों की पूति का दायित्व है। शिवरात्रि हमारे लिये बोध और उद्बोधन का सन्देश दे रही है।



❀ कृपा की कामना ❀

अनुकम्पा आनन्द की, जब होगी अनुकूल।

जब ही होंगे जीव के, कष्ट विनष्ट समूल ॥

अज्ञ, अद्वितीय, अखण्ड, अक्षर, अर्यमा अविकार है।

अभिराम, अन्वाहत, अगोचर अग्नि अखिलाधार है।

मनु, मुक्त, मगलमूल, मायिक, मानहीन, महेश है।

करतार तारक है तुही, यह वेद का उपदेश है।

—महाकवि शकर

शिव शंकर-दयानन्द

(ले०—श्री प० वीरसेन जी वेदश्रमी, महारानी रोड, इन्दौर)

वह मूल शंकर था, चैतन्य था, दयानन्द था। सरस्वती था, स्वामी था, सन्यासी था परिणत था। दशदी था, योगी था, योगिराज था तपस्वी था। मनीषी था, अवि था, महर्षि था। ब्रह्मचारी था, ब्रह्मवेत्ता था, ब्रह्मनिष्ठ था, ब्रह्मानन्दो था। अग्नि था, तेजस्वी था चर्चस्वी था, ब्रह्मचर्चस्वी था।

हस भरातल पर शंकर होकर आया था। शंकर के मूल की खोज कर गया और दयानन्द बनकर अपनी दया ससार पर कर गया। जहर का प्याला पिलाने वाले को भी दया का प्याला पिला गया। नरवर देह के मोह को त्याग कर हँसते हँसते प्रसन्नता से, परम प्रभु के प्रेम में मस्त होकर ब्रह्मानन्द में विलीन हो गया। एक जीवन, एक क्रान्ति, अतीत के गुण गौरव का एक मजुर लक्ष्य, एक महान् आशा का संचार, एक अद्भुत जीवन ज्योति इस युग में अनन्त समय के लिये झोड़ गया।

वह शंकर था—निस्सन्देह शंकर ही था। प्राणिमात्र के कल्याण के लिये, विश्व के ही कल्याण के लिये, उसकी अमर साधना थी। उसके जीवन का एक-एक क्षण इसकी पूर्ति में लगा।

हम जिस भरातल पर हैं, उससे बहुत ऊँचाई पर वह था। वह चैतन्य था। शुद्ध चैतन्य ही था। उसने हमारे अन्दर चैतन्य का संचार किया। हमारी जाति, हमारे देश, हमारे धर्म, हमारे कर्म में निस्तेजता, प्राण हीनता और मलिनता गहरी जड़ें जमा चुकी थीं। उस शुद्ध बुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी ने अपने ब्रह्मचर्य तेज से हमारे जीवन एवं धर्म कर्म की चैतन्य, तेजोमय एवं ब्रह्म

से वेद से सयुक्त कर दिया। उस चैतन्य, ब्रह्मचारी से चेतनता एवं प्राप्त कर आज हम जीवित हैं, गौरव शाली हैं। अपनी जाति, धर्म और देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और रात्रनैतिक निस्तेजता को त्यागकर जीवन एवं चैतन्यता का अनुभव कर रहे हैं और दूसरों को भी अब हमारी तेजस्विता का भान होने लगा है। आज विश्व की आँखें हमारी ओर भी किसी आशा से किसी महान् सन्देश को प्राप्त करने के लिये लगी हुई हैं।

वह सरस्वती था—वेद विद्या का अपार और अथाह समुद्र था। काशी की पठित मखडली ने उसकी याद लेना चाही। परन्तु वे सब उसकी गहराई को पहुँच न सके। मत मतान्तरों के विद्वानों ने भी अनेक बार उनके अगाव ज्ञान की थाह लेना चाही। उनके ज्ञान सागर में गोते लगाये—परन्तु वे अपने प्राण बचाकर भाग खूब हुये। वह बारा समुद्र नहीं था, अपितु अत्यन्त सरसवान् समुद्र था। उसके पास जो आता वह तृप्त होकर ही जाता था।

वह स्वामी था, विश्वनाथ मन्दिर का वैभव काशी नरेश ने अर्पण करने को प्रार्थना की, उदयपुर महाराजा ने नाथद्वारा की गद्दी उनके चरणों में अर्पित की—परन्तु वह लोभ लालच से विचलित होने वाला नहीं था। भय से विकम्पित होने वाला नहीं था—मृत्यु से भी विचलित होने वाला नहीं था—मृत्युजयी था—ब्रह्मसत्ता थी—अपना ही स्वामी नहीं था—अपनी वृत्तियों का ही स्वामी नहीं था अपितु ससार का स्वामी था। ससार का स्वामी होने पर भी एक लगेटधारी, सर्वहूत,

स्वैव स्यागी सन्वासी था। राजा, महाराजा और सम्राटों की कृपा को उसे इन्डा नहीं थी। राजा, महाराजा और सम्राट् उसकी कृपा की आकांक्षा करते थे। वह सम्राटो का भी सम्राट्-परिवाट् था। जिसकी चारो दिशायेँ ही रचक थी और परम प्रभु ही उसका मन्त्रदाया।

वह योगी था। उसने तपस्या से अपने शरीर, मन एवं अन्त करण को पवित्र किया था। पवित्रान्त करण में वह नित्य ब्रह्म का दर्शन किया करता था। ब्रह्म से नित्य योग-मेल-मिलाप किया करता था। ब्रह्म के आनन्द में नित्य निमग्न रहता था। अतएव निर्भय था। निर्भ्रम था, नि शक था। उसके चारों ओर आनन्द का ही साम्राज्य था—आनन्द का ही सागर हिलोरें मार रहा था। ब्रह्म का तेज, ब्रह्मवर्चस उसके मुख मण्डल पर दैदीप्यमान था। ज्ञान और तेज की रश्मिया उससे प्रक्षुटित होती रहती थीं। वह कभी न धकेने वाला एव विश्राम न करने वाला था। वह सदा जात था, जाग्रत-रूक था, और सबको जगाने वाला था। सबको प्रबुद्ध करने वाला था।

योग साधना में रत रहकर अपना ही उद्धार करने वाला वह नहीं था। वह योगिराज था। भोगों की लालसाओ के पर्वत उससे टकराकर चकनाचूर हो जाते थे। अज्ञान, अविद्या के भयकर प्रलयकारी तूफान वहाँ शान्त हो जाते थे। लोभ एव लालच की कीचड़ वहाँ

जाकर शुष्क घटान हो जाती थी और उस परम तेजस्वी को अपने पङ्क में निमग्न न कर सकी थी, वह त्याग में अनुपम था, तपस्या में अनुपम था, ज्ञान में अनुपम था। अनुपम बका था, उसकी वक्तृत्व शक्ति सभी को मोह लेती थी। उसकी अद्वितीय तर्कना शक्ति युगों से पड़े हुए रुढ़िप्रस्त विचारों को पङ्क मात्र में छिन्न भिन्न कर देती थी। आचार्य शंकर अपने प्रखर तर्क से जो कार्य नहीं कर सके—बुद्ध अपने तप साधना से जो न कर सके—शिवा जी अपनी रथचातुरी से जो काम नहीं कर सके, कविगण एवं भक्त मडली अपने अमर गीतों से जो कार्य न कर सकी, वह कार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने विरककल्याण के लिये कर दिया। इसलिये आज हम उसके कृतज्ञ हैं, उसके आगे नतमस्तक हैं। उसकी मधुर स्मृति को पुन सजीव बनाने का प्रयत्न करते रहते हैं।

उसी महर्षि की आज बोधरात्रि है। यह मगलमयी-शिवरात्रि है। महाशिवरात्रि है। नि सन्देह यह महा-शिवरात्रि अपने नाम के अनुसार अत्यन्त कल्याण कारिणी और मगलमयी भी सिद्ध हुई। यदि महर्षि दयानन्द सरस्वती को इस रात्रि में बोध न हुआ होता तो यह शिवरात्रि नहीं अपितु अशिवरात्रि ही रह जाती, और मानव जाति महान् अन्धकार के गर्त में ही निमग्न रह जाती। महर्षि धन्य हैं, जिन्होंने हमें उवारा उनके उपकार हम कभी न भूल सकेंगे।

लक्ष्मणधारा

*** हमेशा पास रखिये

हैंजा कै, दस्त पेट का दूद
जी मिचलाना कफ खोसी,
जुकाम भदाग्नि, ज्वर आदि
रोगो मे गुणाकारी है
जिससे प्रतिवर्ष देश विदेश के
लाखों रोगी लाभ उठाते हैं

हर जगह मिलता है



एम्प बिलास कम्पनी कानपुर

इहलोक-परलोक हित

गीता-तुलसीकृत रामायण

मण्डल-नियमानुसार

मुफ्त-प्राप्त-कीजिए

नियम तथा सूचीपत्र मुफ्त मगाइये।

परोपकार कीजिये। जीवन लब्धभण्ड है।

पता—व्यवस्थापक, कर्णव्यवस्था मण्डल

(भा०) फुकेरा जिला जयपुर

महर्षि-महिमा

(लेखक श्री प्रकाशचन्द्र जी 'कविरत्न,' अजमेर)।

[यह कविता प्रकाशचन्द्र जी तथा उनके शिष्य पिथूप जी द्वारा दयानन्द दीक्षा-शतान्दी मधुरा में गायी गयी थी]



यू तो कितने ही महापुरुष हुए दुनिया में ।
 कोई गुरु देव दयानन्द सा देखा न सुना ॥
 छोड़ माता पिता घर द्वार धन खजाने को ।
 चल दिया धार के मत ब्रह्मचर्य बाने को ॥
 लगी दिल में थी लगन ऐसी ही दीवाने को ।
 होती दीपक से जैसे प्रीति है परवाने को ॥
 भटका जग में वो खोज सत्य की लगाने को ।
 न मिला आह ! उसे कितने दिनों खाने को ॥
 कभी मरुथल किया तै, बन कभी कौटो वाला ।
 कभी बरफानी पहाड़ी कभी नहीं नाला ॥
 हुआ लथपथ लहू से तन पक्का पाऊँ छाला ।
 फेंके पत्थर किसी ने साप विषैला काला ॥
 खड्ग चमकाया किसी ने तो किसी ने भाला ।
 दिया नादानों ने कितनी हो बार विष-प्याला ॥
 फिर भी पीछे न हटा सत्य का वो मतवाला ।
 आज यूँ मुँह से कह रहा है हर अठना, भाला ॥
 यूँ तो कितने ही महापुरुष हुए दुनिया में ।
 कोई गुरु देव दयानन्द सा देखा न सुना ॥
 पाला हनुमान पवन सुत ने ब्रह्मचर्य था बस ।
 अपने स्वामी श्री रामचन्द्र के रिकाने को ॥
 सुना है पाला ब्रह्मचर्य परशुराम ने था ।
 पुष्पी से नाम क्षत्रि बश के मिटाने को ॥
 पाला था ब्रह्मचर्य भीष्मपितामह ने भी ।
 अपने पितु शानतनु के सुखी बनाने को ॥
 किन्तु गुरुदेव दयानन्द ब्रह्मचारी ने ।
 पाला था ब्रह्मचर्य जग के दुख मिटाने को ॥

दीन दुखियों की दशा देख दुखी होता था ।
 सारा जग चैन से सोता था तब वो रोता था ॥
 विरव कल्याण के साधन सभी सजोता था ।
 एक पल भी वो कभी व्यर्थ को न खोता था ॥
 योगी जो छाठ पहर ध्यान मग्न रहते हैं ।
 देख स्वामी की तपस्या वो यही कहते हैं ॥
 यूँ तो कितने ही महापुरुष हुए दुनिया में ।
 कोई गुरुदेव दयानन्द सा देखा न सुना ॥
 मारते मान रहे मिथ्याचार मरुडी के ।
 वेद-अनुयायी थे रचक थे ओ३म् भगडी के ॥
 पूर्ण प्रतिद्वन्द्वी रहे पातकी पक्षगडी के ।
 निराले शिष्य थे गुरु विरजानन्द दण्डी के ॥
 जैसे कवि अपने मरु छन्द पर निहावर हैं ।
 जैसे प्रेमी बकौर, चन्द पर निहावर हैं ॥
 भृङ्ग भरविन्द के मकरन्द पर निहावर है ।
 तैसे दिल मेरा दयानन्द पर निहावर है ॥
 जिसने मृत आर्य जाति को पुन जिलाया है ।
 खुद जहर खाके वेद अमृत हमें पिलाया है ॥
 धैर्य, विषवा अनाथ, दक्षितो को दिलाया है ।
 जिसने बिलुडे हुआ को हम से फिर मिलाया है ॥
 उस दयानन्द पै बलिहार क्यों न जायँ हम ।
 क्यों ? न उसके लिए सर्वस्व निज चढ़ायँ हम ॥
 आर्य बन सच्चे क्यों न उसका ऋण चुकायँ हम ।
 क्यों ? न भद्रा से गीत थे 'प्रकाश' गायँ हम ॥
 यूँ तो कितने ही महापुरुष हुये दुनिया में ।
 कोई गुरुदेव दयानन्द सा देखा न सुना ॥



‘व्रतेन दीक्षामाप्नोति’

ऋषि के स्वप्न को साकार करने के लिये दीक्षा शताब्दी का मन्देश

(ले०—श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार)

प्राय हम लोग व्रत धारण और दीक्षा को एक समझते हैं, यह किसी अश तक ठीक भी है। परन्तु यदि व्रत और दीक्षा सर्वथा एक वस्तु होते तो वेद यह क्यों कहता कि व्रत से दीक्षा को प्राप्त होता है। व्रत और दीक्षा में भेद है। वह भेद क्या है? परमात्मा को साक्षी करके धारण किया हुआ शकल व्रत कहलाता है, परन्तु उस व्रत धारणा की लोक-साक्षिक घोषणा को दीक्षा कहते हैं। व्रत तो एकान्त में भी धारण किया जा सकता है, परन्तु दीक्षा सब दुनिया के सामने ली जाती है। व्रत और दीक्षा में यही भेद है, जो ढाल पर लटके आम में तथा पक कर टपके आम में। आम चाहे पक कर टपके चाहे, आधी के ऋटके से अथवा तोड़ने वाले के ऋटके से। जब तक वह ढाल पर लटका है, तब तक अत्यन्त मधुर रस से भरा होने पर भी खाने के काम में नहीं आ सकता।

आर्य पुरुषो! आप सबने मथुरा शताब्दी पर एकत्रित होकर यह दीक्षा ली—“वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था की स्थापना और शिक्षा के क्षेत्र में गुरु-शिष्य परम्परा के आदर्शों के अनुसार राष्ट्र का निर्माण करेंगे”।

मैने गुरुकुल काँगड़ी में रहते हुए वर्णाश्रम भर्म की महिमा को श्री आचार्य रामदेव जी की कृपा से कुछ-कुछ समझा। फिर स्नातक होने के परचाय दो वर्ष लगातार पढ़ाप्रचित से इस पर चिन्तन किया। सन् १९३७ ई० में कायाकल्प नामक पुस्तक इस विषय पर प्रकाशित की तथा वर्णाश्रम संघ की स्थापना की।

मेरे हृष का वारापार नहीं रहा जब मैने शताब्दी के दीक्षा पत्र में राष्ट्र निर्माण के लिए वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था का इतना स्पष्ट उल्लेख पाया।

सार्वदेशिक सभा के प्रधान तथा मन्त्री भी (जहाँ तक मुझे स्मरण है) शताब्दी के इस दीक्षा समारोह में उपस्थित थे, और यह व्रत उन्होंने भी दोहराया। इस अवस्था में मेरा यह प्रस्ताव है कि अब सारे आर्यजगत् को अपनी सारी शक्ति इस महान् कार्य की पूर्ति में लगा देनी चाहिये, नहीं तो दीक्षा शब्द का अर्थ हो कुछ नहीं। इस दीक्षा का एक अश तो वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था से सम्बन्ध रखता है, तो दूसरा अश अनुशासन से।

शब्द इस प्रकार हैं—हम सब आर्य जन आर्यसमाज के सगटन की महत्ता और अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए निरचय करते हैं कि, सदैव अनुशासन का पाठन करते हुए पारस्परिक सहयोग और प्रेम के जीवन का निर्माण करेंगे।

सार्वदेशिक सभा के प्रति आर्य जनता में आज तक राज भक्ति से भी बढ़कर गहरी भक्ति रही है। आज तक आर्यसमाज ने जो भी सफलता प्राप्त की है, उसका रहस्य यह अनुशासन भक्ति ही है। सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना है कि वह आर्यसमाज के इस रचनात्मक कार्य को हाथ में ले। आर्य जनता अपनी अनुशासन भक्ति का परिचय दे। फिर देखिए कि हम विजय यात्रा में किस प्रकार घाटी पर घाटी जीतते हुए आगे बढ़ते हैं।

(शेष पृष्ठ २८ पर)

ऋषि के जीवन से प्रेरणा

(ल०—श्री स्वामी अभेदान-दजी महाराज)

मनुष्य के आन्तरिक गुणों को विकसित करने दृष्टि हुई शक्ति को उभारने सुसंकेतना को जगाने तथा एक शब्द में मनुष्य को पूर्ण बनाने, को शिक्षा कहते हैं। जिन जिन विधियों और उपायों से मनुष्य के गुणों का विकास और वृद्धि हो व-हे शिक्षा के अन्तर्गत मानना चाहिये। इसके भीतर शारीरिक मानसिक आध्यात्मिक तमो प्रकार की उन्नति छिपी हुई है।

एक नियम जिनके आधार पर समाज में रहता हुआ मनुष्य व्यक्तिगत सुख समृद्धि और शांति प्राप्त करके लोकहित का भी साधन कर सके सत्कार कहलाता है। सदाचार की शक्ति ही समाज को उत्कर्ष के शिखर पर चढ़ाती है और इसका अभाव ही उसे पतन के गर्त में गिरा देता है।

शिक्षा और सदाचार का गहरा सम्बन्ध है। वास्तव में दोनों का पृथक्करण ही असम्भव है। वर्तमान शिक्षा क्रम में दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध विच्छेद सा हो गया है, या टूटा जा रहा है। अक्षरज्ञान मात्र को ही शिक्षा माना जा रहा है। आज ग्राम के लोगों को अशिक्षित माना जा रहा है, यद्यपि उनके अनेक गुणों को हमें अपनाना चाहिये। आज के ग्रामीण भाई की सादगी और सच्चाई का एक शहर के वातावरण में पोषित व्यक्ति उपहास उड़ाता है, परन्तु याद रह हमें भी सुन्दर और उत्तम शारीरिक स्वास्थ्य रखने के लिये निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। सबसे पूर्व तो अपने शरीर की बनावट (जिसमें पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश का मिश्रण एक तुल्य नये अनुपात में है) को यथावत् समझना, दूसरे उक्त तत्वों का प्रयोग यथा शक्ति, वृद्धि पूर्वक करते रहना।

जलका प्रयोग—पीने तथा नहाने धोने आदि में अच्छी प्रकार निस्कोच करना। ३/४ भाग हमारे शरीर में जल का है। ३—४ सेर पानी का पीना प्रतिदिन आवश्यक है।



श्री स्वामी अभेदान-दजी महाराज

अग्नि का प्रयोग—सूर्य का ताप प्रातःकाल लेना।
वायु का प्रयोग—सुलभ बदन रहना, ढील वस्त्र पहनना इत्यादि।
आकाश का प्रयोग—आकाश का संदेश है कि सभी कार्यों में एतद्गल रखना किसी की हित न करना

इसलिये भोजन इत्यादि में विशेष ध्यान देना आवश्यक है। शास्त्र हमें सिखाता है कि हमें क्या करना चाहिये, परन्तु एक शिक्षित और सदाचारी मनुष्य हमें सिखाता है, कि किसी कार्य को हमें किस प्रकार करना चाहिए। उसी प्रकार मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना भी अति आवश्यक है, इसके अभाव में सदाचार की दीवार कभी खड़ी न हो सकेगी।

मानसिक शिक्षण में तो सबसे बड़ी बात मन की चञ्चलता दूर करना है। जैसे जैसे मन एकाम्र होता चला जायगा हमारी मानसिक तथा सकल्प शक्ति बढ़ होती जायगी, जिससे हम अपने निश्चय और निर्णय पर दृढ़ बने रहेंगे। अपने निश्चय और सकल्पों को सम्पूर्ण विघ्न और बाधाओं का सामना करते हुये, पूरे करना ही आध्यात्मिक शक्ति का चमत्कार है। आत्मा अमर है ऐसी दीक्षा शास्त्र देते चले आ रहे हैं परन्तु अभ्यास के द्वारा जब तक दीक्षा को व्यवहार या अपने आचरण से न सावित कर सकें, तब तक हमारी आध्यात्मिक शिक्षा मानो हुई ही नहीं। देश और कालानुसार अनेक गुरु और आचार्य मानव के सामने आये हैं, और आर्यों भी, परन्तु हमारे सभी आचार्यों ने मूल गुरु परमात्मा-देव को ही माना है। क्योंकि पूर्ण, सत्य, बाहर भीतर एक रूप, अपरिवर्तनशील अटल, एक मात्र सत्ता उसी की है। वह श्रोत-प्रोत है, अपने बाहर और भीतर प्रत्येक जड़ चैतन्य में उसकी उपस्थिति का साक्षात् अनुभव करना ही मनुष्य का परम लक्ष्य है। क्योंकि ऐसी अवस्था प्राप्त करके ही मनुष्य अपने जैसे अन्धों को जानने और मानने में समर्थ होगा। अपना अभिमान जो आदर्श को सदैव नीचे ले जाता है, समाप्त होगा। और आत्मा बोल उठेगा कि मेरे लिये कोई पराया नहीं है।

को मोह क शोक पकरवमनुवरचत
तु आइना हे मेरा, अ आइना हूँ तेरा।

मुझ से जहूर तेरा, मुझ में जहूर तेरा ॥
हे वे खुदी ही जिससे होता है कुर्ब हासिल।

गायब जो आप से हो, पांचे बह पार तेरा ॥

व्रतेन दीक्षा माप्नोति

(दृष्ट २६ का शेष)

आर्य पुरुषों। इस आन्दोलन को अपनाओ। मेरी आर्यसमाजों से अत्यन्त सानुरोध प्रार्थना है कि वे अपने अपने समाज से एक प्रस्ताव इस रूप में सार्वदेशिक सभा के पास पारित करके भेजें।

“यह समाज निरचय करता है कि सार्वदेशिक सभा वर्णाश्रम व्यवस्था की स्थापना के कार्य को तुरन्त अपने हाथ में ले और इसके लिये क्रियात्मक पग उठाए”।

हमने अब तक सूठी वर्ण व्यवस्था का खण्डन किया। सच्चे ब्राह्मण छत्रियादि उत्पन्न करने के लिये कुछ नहीं किया है। गुरुकुलों की स्थापना करके चार वर्ण तथा चार आश्रमों में से एक ब्राह्मणवर्णाश्रम के उद्धार का यत्न किया, किन्तु वह कार्य पूरी वर्णाश्रम व्यवस्था के बिना पूरा नहीं हो सकता। अब वर्तमान गुरुकुलों का वर्ण व्यवस्था के साथ कोई दूर का भी सम्बन्ध नहीं दीखता, हमें इस तरीके में परिश्रम करना होगा। चेतो और वर्णाश्रम व्यवस्था के उद्धार में रात-दिन एक करके लग जाओ, यही दीक्षा-शताब्दी का सन्देश है और ऋषि के प्रति कर्तव्य पालन।



सच्चा आत्मदर्शी या सच्चा अस्तिक सहज अनुभूति से बोलता रहेगा—

करता मैं दर्दमन्द तवीवो से क्या रज्जु।

जिसको दिया था दर्द बड़ा वह हकीम था ॥

आस्तिकता की यह और ऐसी उत्कृष्ट भावनाओं तक पहुँचना ही शिक्षा-दीक्षा और चरित्र की सफलता है। सा विद्या या विमुक्तये का यही अर्थ है। महर्षि दयानन्द इसी पथ के आदर्श पथिक थे, उन्होंने जो बोध प्राप्त किया उसे तर्कों की कसौटी पर कसा, दीक्षा की अग्नि में तपाया और परोपकार में अपना जीवन समर्पित कर दिया। उस महामानव की स्मृति बनाने का यही सर्वोत्तम उपाय है कि हम उसके आचार सम्बन्धी सन्देश को जीवन में साकार बनायें। शिवरात्रि हम सब के लिये भी आज इस बोध के लिये बोधरात्रि बन कर आयी है।



ब्रह्मविबोध

[श्री चन्द्रपालसिंह जी 'मयङ्क' एम० ए०, एल० एल० बी०, साहित्यरत्न, कानपुर]



बीज अन्ध-विरवास अबनि आध्यात्मिक जग-जग कर,
भारत-भू में वृद्धि प्राप्त रत था उस काल निरन्तर ।
जिसने उसे समूल नष्ट कर, ज्ञान-वैदिक कर रोपित,
देश-मध्य सत्यार्थ प्रकाशित करके धी कर दी श्रुति ॥

“गुण से रहित”—सृष्टि की पूजा को जिसने तज कर,
सच्चे “शिव” की प्राप्ति-हेतु था यत्न किया नित जुटकर ।
ऋषियों का आदर्श सत्य करके जिसने दिखलाया,
सत्य-ज्ञान की ज्योति तमाच्छादित भारत में लाया ॥

सन्यासी, योगी, त्यागी, तपसी श्री परोपकारी,
देश-भक्त, पण्डित प्रकाशक, था धर्म ऋषि का चारी ।
“विरजानन्द” तपस्वी का जो शिष्य भक्त था अनुपम,
जिसके जीवन का सुलक्ष्य था अतिशय श्रेष्ठ महत्तम ॥

उस पवित्र ऋषिवर की स्मृति का दिवस श्रेष्ठतम आया,
जिसने था कर्त्तव्य-ज्ञान का पावन पथ दिखलाया ।
ऋषि का ज्ञान-लाभ दिवसोत्सव आश्रो मुदित मनाएँ,
उस महान् ऋषि के चरणों में श्रद्धा कुसुम चढ़ाएँ ॥

हे न हृति श्री इतने से ही कर लें सन्तोषार्जन,
ऋषि का पावन स्वप्न सत्य कर दें मिलकर हम सब जन ।
आर्यवर्त्त को हम सब सच्चा आर्य-देश बनावें,
आर्य-सुसंस्कृति की सुन्दर सुदृढा जग में फैलावें ॥

जन-जन के मन सत्य धर्म की सुप्रतिष्ठा हो जावे,
कलुष-कालिमा मानवता की पूर्वातया धो जावे ।
ऋषि के सच्चे अनुयायी हम सबको आर्य बनावें,
ऋषि बोधोत्सव सत्यार्थों में समझो तभी मनावें ॥

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी की सफलता के लिये लोकनेताओं के सन्देश

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी सफलता की कामना करता हूँ।

नई दिल्ली ३-१२-२६

—जवाहरलाल नेहरू

महर्षि दयानन्द जैसे महापुरुष के स्मृति समारोह की सफलता चाहता हूँ।

नई दिल्ली १६ १२-२६

—राधाकृष्णन

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी स्मारक के लिए मैं हार्दिक शुभ कामना करता हूँ।

नई दिल्ली १२-१२-२६

—गोविन्द वल्लभ पंत

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी की सफलता के लिए महाराजाधिराज नैपाल अपनी शुभकामनायें भेजते हैं।

राजदरबार नैपाल, ८-१२-२६

—पुष्पराज (महाराजा नैपाल के निजी सचिव)

सत्यमेव जयते

राज भवन-चण्डीगढ़

महर्षि दयानन्द आधुनिक भारत के निर्माताओं में एक हैं, और उनका स्थान बहुत ऊँचा है। इतना, प्रजाहृत हिन्दू समाज के पुनरुत्थान के लिए १६ वीं शताब्दी में जिन्होंने कुछ कदम उठाये, उनमें दयानन्द श्रेष्ठतम व्यक्ति हैं। वैदिक सस्कृति को आधुनिक अनुभव की भाषा में रचकर एक नया स्रोत हिन्दू सस्कृति का उन्होंने उत्पन्न किया है हिन्दू जाति का आत्मगौरव, आत्मअभिमान और प्रतिष्ठा बढ़ाई। भोगोन्मुख और स्वार्थनिष्ठ जनता को त्याग तपस्या का सन्देश दिया। सस्कृत विधा के लिए जो कार्य स्वामी दयानन्द जी ने किया उसकी बराबरी और कोई न कर सका। दयानन्द जी यथार्थ महर्षि थे, मार्ग दर्शक थे और महान् थे उनके प्रति मैं यह श्रद्धाजलि प्रस्तुत करता हूँ।

दि० ३-१२-२६

—न० बि० गाडगिल

सत्यमेव जयते

राज्यपाल शिविर, उत्तरप्रदेश

राज्यपाल उत्तरप्रदेश,

७ दिसम्बर १९२६

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि स्वामी दयानन्द दीक्षा शताब्दी महोत्सव के अवसर पर विरजानन्द वैदिक अनुसन्धान भवन की स्थापना होने जा रही है। मैं आशा करता हूँ कि यह सस्था महर्षि दयानन्द के समान धार्मिक व सामाजिक रुढ़ियों को विनष्ट करने में प्रकाश स्तम्भ की भांति पथ-प्रदर्शन करती रहेगी।

मैं उससव की सफलता क हेतु अपनी शुभ कामनायें भेजता हूँ।

—वी०वी० गिरि, उत्तरप्रदेश

सत्यमेव जयते

राज भवन तुभानडूम

गवर्नर आफ केरल

दि० ४-१२-२६

मुझे यह जानकर इयं है कि आगामी २६ से २७ दिसम्बर तक महर्षि दयानन्द जी की दीक्षा शताब्दी का समारोह मधुरा में सम्पन्न हो रहा है। आधुनिक भारत के निर्माण में महर्षि दयानन्द जी का बड़ा उच्च स्थान है। धार्मिक और सामाजिक क्षेत्रों में उन्होंने एक क्रान्ति पैदा कर दी और सुपुत्र हिन्दू समाज को जाग्रत किया, यह अत्यन्त उचित है, कि ऐसे महान् पुरुष की दीक्षा शताब्दी का समारोह बड़े उत्साह से मनाया जा रहा है। यह सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि महर्षि के गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द की स्मृति में वैदिक अनुसन्धान भवन का शिखान्यास आदर्शवीय राष्ट्रपति के कर-कर्मलों द्वारा सम्पन्न हो रहा है। इस शुभ अवसर पर महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पण करते हुए मैं आशा करता हूँ कि महर्षि के जीवन से और उनकी धार्मिक सेवाओं से प्रेरित होकर उनके अनुयायी और धार्मिक जनता हतोपिषय समाज और देश सेवा करेगी।

—रामकृष्णराव

सत्यमेव जयते

गवर्नर आन्ध्रप्रदेश

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी महोत्सव के सुश्रवसर पर मैं अपनी श्रद्धा के तुच्छ फूल महर्षि और उन महान् गुरु दयडी स्वामी विरजानन्द जी के कर-कमलों में भेंट करना हूँ।

इन दोनों महान् आत्माओं का ऋण यह देश कब चुका सकता है। महर्षि दयानन्द जी ने वास्तव में मर रहो जाति को यमराज के अत्यन्त भयानक जबड़ों से खींच निकाला, और निकाला भी इस सुन्दरता से कोई छोटा-सा अंग भी हीन-धीण न हुआ हो। जो प्रोग्राम महर्षि ने देश की स्वाधीनता के लिए देश के आगे वर्षों पहले रखा था। उसी प्रोग्राम पर चलकर देश आगे उन्नत हुआ, अभी देश को उस प्रोग्राम पर के शेष भाग को भी पूरा करना है। महर्षि तो सारे सार को एक कुटुम्ब के समान समझते थे, इसलिए तो सारे सार की उन्नति उनका ध्येय था, और इसी का प्रचार उन्होंने किया। महर्षि का जीवन और उनके काम इतने महान् हैं, कि उनका वर्णन भी पूरी तरह करना कठिन है। हम तो जब इंरधर को धन्यवाद ही कर सकते हैं कि दयानन्द भारत में पैदा हुए।

महर्षि विरजानन्द का ऋण तो मनुष्य जाति कभी भी चुका नहीं सकती, क्योंकि उन्होंने ही सच्चे प्रभु भक्त को बनाया और बनाकर उसके मनुष्य सेवा में अर्पण कर दिया, देश और मनुष्य जाति का कितना प्रेम दयडी जी के महान् हृदय में भरा था, उचित है कि आज के शुभ अवसर पर हम विचार करें कि भारत में विरजानन्द जैसे गुरु और दयानन्द जैसे शिष्य कैसे उत्पन्न किये जा सकते हैं। इनकी बड़ी आवश्यकता है, उतने महान् न सही मगर ऐसे तो हो जो दिल से उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलने का यत्न करें। भगवान् हमारे सहायक हो, और हमारे दिलों को फेर।

—भीमसेन सच्चर

स्वाष्ट तथा कृपि मन्त्री भारत सरकार

नई दिल्ली दि० १-१२ १९२६

यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आगामी २४ से २७ दिसम्बर तक मथुरा में महर्षि दयानन्द-दीक्षा-शताब्दी समारोह मनाया जा रहा है। तथा महर्षि के गुरु दयडी विरजानन्द की स्मृति में "विरजानन्द च वैदिक अनुसन्धान भवन का शिलान्यास भी राष्ट्रपति जी के द्वारा सम्पन्न किया जा रहा है। नवमस्तक हो मैं अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुये शताब्दी समारोह की सफलता के लिए शुभ-कामना भेजता हूँ। —एस० के० पाटिल

सत्यमेव जयते

ए०० आर० २०६४—२६

रेल मन्त्री भारत सरकार

नई दिल्ली २-१२ २६

जब-जब धर्म का वास्तविक स्वरूप अन्ध-विरवासे, रूढ़ियों और परम्पराओं से आवृद्ध होकर विकृत हो जाता है, तब-तब किसी महापुरुष का प्रादुर्भाव होता है, जो इस आवरण को छिन्न-भिन्न कर डालता है। ऐसे आवरण को दूर करने के लिए ही महापुरुषों का जन्म होता है। इन महापुरुषों में महर्षि दयानन्द की भी गणना है जिनका दीक्षा शताब्दी समारोह गत सौ वर्षों में उत्पन्न हुई सुसुखावस्था को दूर करने में सहायक सिद्ध होगा, एवं विरजानन्द वैदिक अनुसन्धान भवन इनका अनुपम साधन बनेगा, ऐसे शुभ अवसर पर मैं भी अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ।

—जगजीवन राम

सत्यमेव जयते

६ अक्टूबर रोड, नई दिल्ली

दि० १६ दिसम्बर १९२६ (२२ अग्रहायण, १८८१)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि २४ दिसम्बर से २७ दिसम्बर तक महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी समारोह सम्पन्न होने जा रहा है। उक्त समारोह में सम्मिलित होने का उस दिन यथासम्भव प्रयास करूँगा। निमन्त्रण के लिए धन्यवाद, समारोह की सफलता के लिए हार्दिक शुभ-कामनायें।

—राजबहादुर

पंजाब सरकार
गवर्मेन्ट आफ पंजाब,

चीफ मिनिस्टर
पंजाब चण्डीगढ़,

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि २४ से २७ दिसम्बर तक मथुरा में महर्षि दीक्षा-शताब्दी समारोह बड़े धूम-धाम से मनाया जा रहा है।

क्रांति द्रष्टा स्वामी दयानन्द जी इस युग के एक महान् समाज सुधारक और उदार चेता तथा उन्मेषक मानस्वी हुये उन्होंने समाज में व्याप्त ऊँच नीच छूत छात अन्ध विश्वास के उन्मूलन में अप्रूप योग दिया है। अत ऐसे महान् सन्त की स्मृति में जो अनुसन्धान भवन का शिलान्यास भारतीय गुणगरिमा के मूर्तिमान स्वरूप राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी के कर कमलों से हो रहा है।

उससे महर्षि दयानन्द जी के बिचारों एवं सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार एवं अनुसन्धान से सफलता प्राप्त होगी और इस समागमन में उपस्थित सब महानुभाव एक उदात्त भावना लेकर लौटेंगे। और उसे देश में व्याप्त असृष्ट रयता को जड़ मूल से उड़ाने में और अधिक दृढ़ता अोजसिवता से कार्य करेंगे, ऐसी मुझे आशा है। —प्रतापसिंह

✽

चन्द्रभानु गुप्त

पत्र० सं० १४१०

✽

खलनऊ

दिसम्बर १, १९२६।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि महर्षि दयानन्द जी के पूज्य गुरु दृषडी विरमानन्द जी की स्मृति में "विरजानन्द वैदिक अनुसन्धान भवन" का शिलान्यास राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी के कर-कमलों द्वारा सम्पन्न होने जा रहा है।

महर्षि दयानन्द जी हमारे देश की उन महान् आत्माओं में से हैं, जिन्होंने देश की सुषुप्त सम्मानिक धार्मिक तथा राष्ट्रिय भावनाओं को जाग्रत करके पुन देश में मर्यादा स्थापित करने का प्रयास किया स्वय कष्ट सहन करके वृद्धे को बचाना उनका ज्येष्ठ था। अपने को विष देनेवाले व्यक्तियों को न केवल बचाने की इच्छा की अपितु उसे मार्ग व्यय देकर सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देने वाले महापुरुष ससारा में विरले ही हुआ करते हैं। ऐसी विभूतियों हमारे देश में समय-समय पर जन्म लेती रही और उनके जीवन की ऐसी घटनायें हमें प्रेरणा प्रदान करती रही हैं।

मैं इस प्रयास की अत्यन्त सराहना करता हूँ और आशा करता हूँ कि इसके तत्त्वावधान में वैदिक अनुसन्धान तथा शोध कार्य कुशलतापूर्वक होगा।

✽

सत्यमेव जयते

✽ ३३ फिरोजाबाद रोड न्यू दिल्ली

यह मालूम कर कि महर्षि दयानन्द का दीक्षा-शताब्दी समारोह महोत्सव २४ दिसम्बर से मनाया जा रहा है, प्रसन्नता हुई।

महर्षि दयानन्द जी ने अपने कार्यों द्वारा भारतीय समाज को जितना अधिक प्रभावित किया, उतना आधुनिक काल के कदाचित किसी सत ने नहीं। यह वजह हुई कि बापू ने अपने जीवन में ऐसे बहुत से काम उठाये और उन्हें आगे बढ़ाया था, जो महर्षि ने आरम्भ किये थे।

एक सनातन धर्म और मूर्तिपूजक हिन्दू होते हुये भी महर्षि दयानन्द जी की सेवाओं की मैं सराहना ही करता हूँ तथा उनकी पूज्य स्मृति में श्रद्धा और आदर से उन्हें प्रणाम करता हूँ।

आपका आर्षजन सफल हो और लोगों को यह बतलाने में समर्थ हो कि हमारे ऋषियों, मुनियों, महर्षियों और महात्माओं ने हमारे लिए क्या-क्या किया और उनका हमारे लिए सन्देश क्या है।

मैं भी २४ ता० को मथुरा पहुँच रहा हूँ सम्भवतः आयोजन में सम्मिलित हो सकूँ।

दि० २-१२-२६

—गोविन्द दास ङोक सभा सदस्य

शिवरात्रि

(लेखक—डा० सुशीराम जी शर्मा, एम०ए०, डी० लिट्०)

मेरे देश ! देखते आये कितनी तमोलैपिका रजनी ।

कितने सन् सन् स्वन निशिय के मोहमयी स्वप्नित जन-शयनी ।

कभी तमिस्रा में सन्तानित दुग्ध-घवल ज्योत्सना अभिरामा ।

कालकूट-कालिमा खिलाये ज्यो पीयूषमयी मधु श्यामा ॥

देखे हैं तुमने गौरव गिरि स्नात चन्द्रिका में यशोमयी ।

देखी है भ्रमराली चुम्बित विकच कमल कलिका मनोजयी ।

आये तब पथ में बनयात्री स्फटिक-शिलाशायी राघव से ।

' निशाचरी वृष्भटिका फटती जिनके भीषण घन्वा रव से ॥

देखे तुमने शेष सयमी निशा-जागरणकारी क्रम से ।

विजित इन्द्रजित सा पराक्रमी वीरवती जिनके सयम से ।

लौकिक दिवा निशा धी जिनको निशा दिवा में परिचय पाती ।

तम-रज से ऊपर जब सत में जाग्रति की वेला आ जाती ॥

तब तुमने देखे है योगी, सनत साधना-निरत वियोगी ।

काल जयी, अन्तक के अन्तक, शकर सदृश विषम विष भोगी ।

वैभव में तन भरम रमाये, शक्ति सद्बिन, रति-रहित अकामा ।

मलमल ज्योर्तिमय त्रिनेत्र से जिनको राका बनी त्रियामा ॥

देखे हैं राजर्षि जनक से शीर बुद्ध से विश्व-विरागी ।

देही ये, फिर भी विदेह वे, बने लोक सुख-हित सुख-यागी ।

देखी है वह रात्रि सो रही यशोधरा जिसमें यशस्विनी ।

चेर रही है जिसे चतुर्दिक पुत्र वित्त-यश की नौकिनी ॥

उसे द्रोह, चल दिये विपिन को मुक्ति मार्ग के वे अभिलाषी ।

काया से कृश, पुष्ट मनन से, पर वाणी से सन्तुत भाषी ।

आर्य चतुष्टयशील जगाया, दुग्ध में सुख की खिली प्रभा सी ।

वह भी धी शिवरात्रि विश्व की, वे थे मगल-पथ विश्वासी ॥

मेरे देश ! बुद्ध फिर आये, पारतन्त्र्य से मुक्ति दिलाने ।

मेरे देश ! राम फिर पाये सीता-स्वाधीनता मिलाने ।

वे शिव, वे शंकर फिर प्रकटे अपना नाम मूलशकर ले ।

सचमुच मगलमयी बनी धी वह शिवरात्रि शिवा सबल से ॥

मेरे देश ! तुम्हारा शंकर दयानन्द का रूप दिखाकर ।

तुम्हें अमर कर गया सदा को विप पी पर हित सीख सिखाकर ।

तेरे रघुवर, तेरे शकर, तेरे गौतम, तेरे मोहन ।

बार-बार आते इस भूपर हो जिससे चैतन्यारोहण ॥

चमक उठें आर्यस्व विश्व को स्वस्तित शान्ति का दे आरवासन ।

दूर दस्युता हो मानव से, दुरित दुर्गुणों का निष्कासन ।

पुन अवतरित हो स्वर्गिक सुख, भूतल का शीतल अन्तस्तल ।

पावन शिव त्रयोदशी भर दे बही भाव हृदयों में निर्मल ॥

ऋषि बोध

(श्री कविवर 'प्रणव' शास्त्री, फीरोजाबाद)

ऋषि बोध प्रभाकर की किरणें
तम तोम का जाल नसाने चलीं

मन-मानस में मधु माधव-सी
कृति कज कली विकसाने चलीं
शुचि हर्ष हिलोर अछोरन से
कर जोर दिया हुलसाने चलीं

सर साल रसाल सुधारन की
सुख धार-सुधा सरसाने चलीं ॥
मन मजुल मूल की भूल भगी
कुल रूपि रुटी-सी ठगी-सी रही

उर अकुर एक नवीन उगा
प्रभु पावन प्रीति पगी-सी रही
अविवेक प्रथा की व्यथान रही
शुभ सत्य की साध सगी-सी रही

शिवरात्रि बनी शिवदात्री महा
नव-जीवन ज्योति जगी सी रही ॥
हृद तन्त्रियों साध स्वर क्रम को
एक राग नया ही बजाने लगीं

शुचि साधन स्वप्न समुच्चलित के
शत स्वर्णिम साज सजाने लगीं
व्रत सयम शील समुच्चलता
भवभूति विभूति लजाने लगीं

वर वेद विनोद की वाटिकाएं
मकरन्द लुटाने खजाने लगीं ॥
मत पन्थ अलीक विदारन को
बल विक्रम वृन्द की वारणा है

छति धर्म सुकर्म प्रसारण की
हृद भावन की भुव धारणा है
उपकार असीम सिखाती रही
प्रिय प्रेम मयी एक पारणा है

यह आर्यसमाज धराज्वल में
ऋषिराज की वन्य विचारणा है ॥

❀ दयानन्द प्रशस्ति ❀

(रचयिता—श्री रामचन्द्र रेड्डी शास्त्री बी० ए०)

कोटि-कोटि शतकोटि वन्दनाञ्जलियों के स्वामिन् ।
दयानन्द । निगमेन्दु सिन्धु । आनन्द कन्द । स्वामिन् ॥
कमल कलोसा हृदय तुम्हारा, धैर्य और सन्तोष भरा ।
सयम और आरोग्य सुक तब गात्र श्रोत्र का कोष भरा ।
हर्ष शोक, अपमान-मान, चिरद्वन्द्व सुक । विरहिन् ॥
तेरी दिव्यता देव दुर्लभा, अमितानन्द प्रभा,
सुमना तुमे घेर खड़ी है विद्रुह भ्रमर सभा ।
सन्त जनो के हज्जीवन । जनरजन । अनुरागिन् ॥
तेरा मानस मान सरोवर, निर्मल मुक्ताकार,
राजहस पाते थे आकर शान्ति शुक्ति का सार ।
श्रद्धानन्दन । आशास्पन्दन । सुक मार्ग गामिन् ॥
निगमागम की धर्म नीति ले, राजनीति राजा मनु की,
उपनिषदों की मधुर गीति ले, पूर्ण प्रीति भारत जन की ।
तुम आये, हम धन्य हो गये, नरवर । निष्कामिन् ॥
तेरे तर्क के तीर जब चले, सदा मुधा में सने चले,
तेरे ज्ञान के बहे न भस्वर, विमल कर्म के सुमन खिले ।
दयान्दाय की सत्यति तुम थे, सत्य धर्म धारिन् ॥
सत्यान्वेषक । मस्कृतिपोषक । हे सुललित मतिमन् ।
तापस तल्लज । राष्ट्र धर्म-ध्वज ' बुद्ध जन प्रियदशिन् ।
ऋग्यजु सामार्थ्य चतुर्भुज । स्थित प्रज । योगिन् ॥
तेरी राह में रोडे बन कर पड़े कई पर टिके कहाँ ?
तुम्हे रोकने चले घने पर सभी भगे कब रुके यहाँ ?
सीना ताने चला जय चला, सद्गुरु । समदशिन् ॥
तेरे बाट पर कई बगोही बटुक चले फिर चले चले,
विकट कष्ट थे, निकट दुष्ट थे, सभी पार कर चले चले ।
गोखी तोले खञ्जर भेले, शिष्य तेरे स्वामिन् ॥
जाने कैसे दर्शन पाये तेरे प्रीति पगे,
परमहंस । मेरे यतीन्द्र । तुम सब जग के थे सगे ।
हाला पीकर अमृत थोटा, तुमने उपकारिन् ॥
दलित जाति की दीन दशा पर बजा जब तेरा टकारा,
मिठी मोह की सब कारा, बज उठा शुद्धि का फकारा ।
डुकारा ही तेरा सुनकर भगे पोप हे दिग्विजयिन् ॥
तब प्रवचन का अक्षर-अक्षर आज मेरा है टकारा,
तेरे स्तवन में जहाँ फिर्लगा, वहीं सुनगा टकारा ।
टकारा है रोम रोम मम, टकारा के सत्यासिन् ॥

तिथि और नक्षत्रों के देवता

(ले० श्री प० शिवदयालु जी मेरठ)

भूकरिषि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने सरस्कार विधि क अन्तर्गत नाम करण प्रकरण में तिथि तथा नक्षत्रों के देवताओं का वर्णन किया है, और तिथि तथा नक्षत्र के साथ उनके देवताओं के नाम से आहुति देने का भी विधान किया है।

वेद मन्त्रों के साथ जो देवताओं का विधान किया गया है, उसकी सगति तो देवता से तात्पर्य मन्त्र के



श्री प० शिवदयालु जी

विषय से है, इसके द्वारा हो जाती है। किन्तु तिथि और नक्षत्रों के देवताओं के सम्बन्ध में वह सगति लगती प्रतीत नहीं होती।

क्या तिथि और नक्षत्रों के यह प्रचलित देवता वैदिक हैं, यह भी विचारणीय है। ऋग्वेद में द्यौस्थानी

देवताओं की सूची में विष्णु, भग, अश्वमन्, सवितृ, मित्र, वरुण, पुष्य की गणना है जो क्रमशः तृतीया तिथि एवं श्रवण नक्षत्र, पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अनुराधा, शतभिषज तथा रेवती नक्षत्रों के देवता कल्पित किये गये हैं।

अन्तरिक्ष स्थानीय देवताओं में रुद्र (शिव) वायु, इन्द्र, आप, अजपकपाद, अहिबुध्न्य की गणना की गई है। जो क्रमशः एकादशी तिथि व आर्द्रानक्षत्र, द्वादशी तिथि व स्वाति नक्षत्र ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ, पूर्वा भाद्रपद उत्तरा भाद्रपद नक्षत्रों के देवता कल्पित किये गये हैं।

पृथ्वी स्थानीय देवताओं में सोम अग्नि, बृहस्पति की गणना की गई है। जो क्रमशः पंचमी तिथि व मार्गशीर्ष नक्षत्र, कृत्तिका एवं पुष्य नक्षत्रों के देवता कल्पित किये गये हैं।

पुनर्वसु नक्षत्र का देवता अदिति है, जो स्त्री है। तथा द्वितीया तिथि का देवता त्वष्ट भाव वाचक देव माना जाता है। इसी प्रकार विश्वेदेवा जो अमावास्या के देवता है वह अनेक हैं एक नहीं और अनिश्चित हैं। रोहणी नक्षत्र का देवता प्रजापति (ब्रह्मा) और मूल नक्षत्र का देवता निष्कंति (राक्षस) भी भाववाचक ही माने जाते हैं।

विशाखा नक्षत्र का देवता चन्द्राग्नि है अर्थात् चन्द्र और अग्नि दो सम्मिलित देवता हैं। इस युगल का वर्णन वेद में उपलब्ध नहीं। हाँ इन्द्राग्नि का वर्णन अचरय है।

अश्विनी तिथि तथा धनिष्ठा नक्षत्र का देवता वसु है। वसु सख्या में ८ हैं। अश्लेषा नक्षत्र का देवता सर्प कल्पित किया गया है। जिसकी गणना निष्कंति (राक्षस) की भौति कहीं भी वेद में देवताओं की श्रेणी में नहीं की

गयी है। इसी प्रकार यहाँ कुमार, मुनि, काम, पितर, आदि को भी गणना देवताओं में की गई है, जो विचारणीय है।

वैदिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत तो इन कथित विग्रह-वान् देवताओं को स्थान ही नहीं है। यह सब देवता वाचक शब्द प्रायः या तो प्रधान रूप से ब्रह्म के वाचक हैं, या विशेष विशेष भौतिक तत्वों एवं शक्तियों के बोधक हैं। अतः यह एक अनुसन्धान का विषय है कि असुक तिथि व नक्षत्र के साथ देवता रूप में असुक-असुक की आहुति क्यों दी जाये।

सर्प तथा निश्चरति (राक्षस) को देवता मानने में क्या प्रयोजन है यह भी विचारणीय है।

ग्रह सूत्रों के अन्तर्गत नक्षत्रों के सम्बन्ध में शुभाशुभ की कल्पना विद्यमान है। रूस्कार विधि में उद्धृत निम्न सूत्रों से यह बात सर्वथा स्पष्ट है—

उद्गम्यन् आर्ष्यमाणे पक्षे पुष्ये नक्षत्रे

चौलकर्मोपनयनगोदानं विवाहं ॥ १ ॥ आरवाज्जायन्
अर्थात्—उत्तरायन शुक्लपक्ष पुष्य नक्षत्र में चूडकर्म,
उपनयन, गोदान तथा विवाह संस्कार किये जाने चाहिये।

पुष्ये नक्षत्रे दारान् कुर्वीत ॥ २ ॥ गोभिल

अर्थात्—पुष्य नक्षत्रमें विवाह संस्कार करना चाहिये।

स्वामी जी महाराज ने विवाह प्रकरण में इन सूत्रों को उद्धृत किया है किन्तु व्याख्या करते हुये पुष्य नक्षत्र से तात्पर्य प्रसन्नता का दिन अर्थ किया गया है। वास्तव में पुष्य नक्षत्र का यह अर्थ नहीं है, क्योंकि

स्वामी जी महाराज को नक्षत्रों में शुभाशुभ की कल्पना अभीष्ट ही नहीं है। अतः उन्होंने स्वतन्त्रा पूर्वक यहाँ अपना मत व्यक्त किया है। स्वामी जी स्वयं महान् आचार्य थे, वह पूर्व आचार्यों से सर्वांग में सहमत हों यह आवश्यक भी नहीं है। फलित ज्योतिषाचार्यों ने अश्विनो, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, घनिष्ठा, शतभिषा, उत्तरा भाद्रपद तथा रेवती नक्षत्रों को शुभ माना है। श्रवण को वृद्धिकारक कहा गया है। कृत्तिका, आर्द्रा, आरवलेषा, पूर्वा फाल्गुन, विशाखा तथा पूर्वा भाद्रपद को अशुभ कहा है। भरणी को नाशक, मघा को शोकद मूल नक्षत्र को क्षय कारक और पूर्वाषाढ एवं उत्तराषाढ को हानिकारक माना है। यह मान्यता सर्वथा अवैदिक है। अतः इन नक्षत्रों के आधार पर जगन सुहृत् का विचार करना भी अज्ञानतः धारणा है।

नक्षत्रों के स्वामी अर्थात् देवता, उनकी जाति, मुख आदि की कल्पना भो शुभाशुभ कल्पना की भाँति सर्वथा अज्ञानतः है, और त्याज्य है। तथा कथित अशुभ नक्षत्रों में जन्मादि होने के कारण नाना प्रकार के दान पुष्य का विधान और चत्र के अशुभ प्रभाव का मार्जन ठगविद्या से भिन्न कुछ नहीं प्रतीत होता।

अतः नामकरण संस्कार में तिथि और नक्षत्र देवता के नाम से आहुति देना ही कोई महत्त्व नहीं रखता। आर्य विद्वानों को इस दिशा में विशेष विचार करना चाहिये।

गवर्नमेंट, आफ राजस्थान

सत्यमेव जयते

जयपुर, राजस्थान

दिसम्बर १०, १९६६

महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी महोत्सव तथा इस अवसर पर विरजानन्द वैदिक अनुसन्धान भवन के शिलान्यास का शुभ मंगवाट प्राप्त कर सुभे अत्यन्त हर्ष हुआ।

महर्षि दयानन्द देश की उन महान् विभूतियों में से थे जिन्होंने अत्यन्त आवश्यकता के समय अवतरित होकर देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, तथा धार्मिक प्रवृत्तियों को नया मोड़ तथा नया जीवन प्रदान किया, वेदों के गहन अध्ययन पर धन देते हुए महर्षि ने धर्म के व्यापक स्वरूप तथा जीवन के समय शुद्धि तथा सत्यता के सिद्धान्तों के पालन का सकलप ही इस अवसर पर महर्षि के प्रति पवित्रता अर्पण किया है। आशा है विरजानन्द वैदिक अनुसन्धान भवन वैदिक अध्ययन तथा अनुसन्धान को प्रोत्साहित कर महर्षि दयानन्द तथा दयवी स्वामी विरजानन्द की पुण्य स्मृति में सर्वथा उपयुक्त सत्था सिद्ध होगी।

समारोह की सफलता के लिये शुभ कामनायें अर्पित हैं।

—मोहनलाल मुस्ताफिया मुख्य मन्त्री

दयानंद के समय भारत की दशा

कवित्त [रच०—श्री कुसुमाकर जी, फीरोजाबाद]

[१]

एक अखिलेश को मुजाते हुए जा रहे थे,
विरव में अनेक अखिलेश पुजने लगे ।
देश में मची थी अभिवादनो की भारी धूम,
जय जय राम, राधेश्याम, भजने लगे ।
एक धर्म ग्रन्थ का न याद रहता था कहीं,
विविध विचारों के समाज सजने लगे ।
लजने लगे थे, श्रुतियों के नाम-धाम वश,
आर्य - सम्भ्रता की मर्यादा तजने लगे ।

[२]

कोई कहता था 'वेद' गीत हैं गठेरियों के,
कोई भूत प्रेत की कहानों बतलाता था ।
कोई कहता था—जत्र मत्र तत्र धारियों के,
कोई 'वाम पन्थ' का कुपथ दिखलाता था ।
कोई नरमेध- पशुमेध, अश्वमेध लिए,
कोई मानवो के कल-काय से मिलाता था ।
कोई कहता था वेद देश से गये हैं दूर,
कोई इतिहास का स्वरूप सिखलाता था ।

[३]

'देव भाषा' 'नागरी' गुणागरी की भूल सभी,
उर्दू—अप्रेजी को सहर्ष पढ़ने लगे ।
श्रुति सुनियों के सद् ग्रन्थ सरिता में फेक,
मिथ्या कल्पना से भरे ग्रन्थ गढ़ने लगे ।
भूल भ्रम - भावना, दुकूल दूमरो का याम,
वेद-प्रतिकूल मत-माथे मढ़ने लगे ।
योरोपीय - रंग - अगाराग को लपेट अग,
ओप भरे आनन, सचोप चढ़ने लगे ।

[४]

हो रही घृणा थी जन जन से प्रत्येक मन,
भिन्नता की भग कूट कूट के भरी गई ।
हुआ-कूत जाति-पौति के हो पविपात से ही,
एकता लता भी नित्य सूखती दूरी गई ।
फूट के फबीले फल फूल-फूल खाए, तब—
शीश दासता की असिधार भी धरी गई ।
मीति-रीति खोई थी, प्रतीति अन्ध होने लगी ।
करके अनीति सुख सम्पति दूरी गई ॥

[५]

पाँव के तले की जूतियाँ हैं महिलायें सभी,
पुरुष सगर्व कर रहे थे खड़े अपमान ।
शिक्षित बनाना आर्य-जाति का कलक महा,
शूद्र हैं गवार, ताड़ने का करते बखान,
जकड़ चुकी थी मातृ-शक्ति दासता के दाम,
वारि बन्तुओं का हो रहा था सूर्य भासमान ।
बाज विधवाओं की विकल वेदना के शूल—
खटक रहे थे, कर रहे थे हमें सावधान ।

[६]

प्यारे श्रुति तुमने कहा था दृढ़ता के साथ,
केन्द्र सत्य विद्या का हे वेद ईश्वरीय ज्ञान ।
विप युक्त अन्न है समस्त ग्रन्थ मानवो के,
वेद ही स्वत अवशेष परत प्रमान ।
ज्ञान, कर्म, यज्ञ की विशेषता बखानते हैं,
उन्नत 'उपासना' का सत्य रचते विधान ।
प्रभु का निदेश है पवित्र विरव-वासियों को,
मानव इसी के अनुकूल वनता महात्त ॥

प्रजा सोशल्लिस्ट पार्टी, सेन्ट्रल आफिस

१८ विन्डरसोर पल्ले, नई दिल्ली

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि मधुरा में महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी समारोह मनाया जा रहा है । महर्षि दयानन्द हमारे देश के महान् विभूतियों में से थे, उनके सन्देश से हमारे समाज को नई जागृति मिली, मेरा यह विश्वास है कि महर्षि दयानन्द जी के जीवन से हम सभी प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं, उनकी चारित्रिक दृढ़ता और विद्वत्ता की इस देश को सदा आवश्यकता रहेगी । मैं आयोजन की सफलता के लिए शुभ कामना करता हूँ ।

दि० १-१२-६४

—प्रशोक मेहता

कर्ण रोग नाशक तैल रजिस्टर्ड

कान की बीमारियों से आराम पाने के लिये 'कर्ण रोग नाशक तैल' बड़ा प्रबन्धी है। यह दवा सन् १९३० से प्रसिद्ध है। इस दीर्घकाल में लैकर्स ने इसकी परीक्षा करके प्रशंसा पत्र भेजे हैं। आप भी एकवार अवश्य आज्ञा-माह्ये। कीमत १ शीशी १५, पैकिंग पोस्टेज १॥)। छै लेने से खर्चा मी।

पता—कार्यालय 'कर्ण रोग नाशक तैल' सन्तोमालन मार्ग
नजीबाबाद यू० पी० NAJIBABAD U P

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१) ऋग्वेद सुबोध भाष्य—मनु उन्दा, मेधातिथी, शुन शेष कवच, परातोलम, हिरण्यगर्भ, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १६) डाक व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्रम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध भाष्य। मूल्य ७) डाक-व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी सू० २) अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(संपूर्ण १८ काण्ड) मूल्य २६) डाक-व्यय ५)

उपनिषद् भाष्य—ईश २), केन ॥), कठ १॥), प्रश्न १॥), सुषुक्क १॥) माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥॥) सबका डाक व्यय २॥)

श्रीमद्भगवद्गीता पुरुषार्थ बोधनी टीका—मूल्य १२॥) डाक-व्यय २)

वैदिक व्याख्यान—अग्नि में आदर्श पुरुष, [२] वैदिक अर्थ-व्यथस्था [३] स्वरत्न्य, [४] सौ वर्षों की आयु, [५] व्यक्तिवाद और समाजवाद [६] शक्ति शक्ति शक्ति, [७] राष्ट्रीय उन्नति, [८] सप्त व्याहृति, [९] वैदिक राष्ट्रनीति, [१०] वैदिक राष्ट्र शासन, [११] वेद का अध्ययन-अध्यापन, [१२] भागवत में वेद दर्शन, [१३] जापति का राज्य शासन, [१४] त्रैत, द्वैत, अद्वैत, [१५] क्या विश्व मिथ्या है?, [१६] वेदों का सरल ऋषियों ने कैसे किया?, [१७] आप वेद रचण कैसे कर रहे हैं? [१८] देवाव प्राप्ति का अनुष्ठान, [१९] जनता का हित करने का कर्त्तव्य, [२०] मानव की सार्थकता, [२१] राष्ट्र निर्माण, [२२] मानव श्रेष्ठ शक्ति, [२३] वेदोक्त विविध प्रकार के शासन। प्रत्येक का मूल्य १०) डाक-व्यय ५)। आगे व्याख्यान छप रहे हैं।

ये ग्रन्थ मनु पुस्तक विक्रेताओं के पाम मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला सूरत

सफेद दाग

यह हमारी दवा सन् १९३६ से प्रसिद्ध है। इस दीर्घकाल में हजारों ने इसकी परीक्षा करके हमें प्रशंसा पत्र भेजे हैं। आप भी एक बार अनुभव कर देखिए। दवा का मूल्य ५) २०, डाक व्यय १॥) २०। अधिक विवरण मुफ्त भगाकर देखिये।

वैद्य के. आर. वोरकर (आर्य)
मु०पी० मंगरूळपीर
जि० अकोला [विदर्भ]

सफेद बाल काला

सिजाव से नहीं, हमारे आयुर्वेदिक सुगन्धित "केश-कल्याण" तैल के लगाने से सफेद बाल सर्वदा के लिए काले हो जाते हैं। यह तैल श्रोत्रों की रोशनी को बढ़ाकर दिग्ग को ताकतवर बनाता है। एकाध बाल पका हो, तो २॥) का तैल मगावे, अधिक हो तो ३॥) ड्रुल पका हो तो ६) का तैल मगावे। गुच्छ-हीन होने पर मूल्य वापस।

पता—एम० के० प्रमाद
पो० हबीबपुर (पटना)

बवासीर

अर्थात्क से मस्ते चाहे वादी बा खूनी के हों, खापता हो जाते हैं। खून को रोककर दर्द, कब्ज, मन्दाग्नि, सुखली को नष्ट करता है। मूल्य ४॥)

पता—राजेन्द्र आयुर्वेदिक औषधालय
बोहामीपुर पटना—३

आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर

के

कुछ प्रमुख प्रकाशन

चारों वेद सरल हिन्दी अनुवाद सहित—सम्पूर्ण १४ जिल्दा में मूल्य ११२) रु० उत्तम छपाई, सफेद चिकना कागज, बयल क्राउन १६ पेजी के सुचम आकार में पचेक जिल्द पूरे कपड़े की बधी हुई सुनहरी अक्षरों सहित हैं। सामवेद १ जिल्द ८) रु० अथर्ववेद ४ जिल्द ३२) रु० यजुर्वेद २ जिल्द १६) रु० ऋग्वेद ४ जिल्द २६) ।

महर्षि जीवन चरित्र—श्री देवेन्द्रनाथ जी द्वारा समहीन व प० घासोराम जी मेरठ द्वारा अनूदित। दोनों भाग सजिल्द व अनेक घटनापूर्ण चित्रों से युक्त। कवर पर महर्षि का तिरगा चित्र आर्न पेपर पर मूल्य ६) रु० प्रति भाग।

क्या रेन म २तिहास है ?—लेखक प० जगन्धी शर्मा विद्यालकार। युक्ति एवं खोजपूर्ण प्रामाणिक ग्रन्थ—मूल्य २॥) रु०

कर्म मीमामा—ल० आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री। पुस्तक में नितक मूल तत्त्व आपदधर्म कर्तव्य और अधिकार, नीति आर विधान नीति आदि पर मौलिक तथा मारगभित माममी है। नवीन तथा सशोधित संस्करण। मूल्य २।) रु०।

स मार्ग दर्शन—ल० स्वामी सदानन्द जी महाराज। लेखक का हिन्दी में लिखी हुई यही एकमात्र पुस्तक है। बुक साइज ६०० पृष्ठ सजिल्द मूल्य केवल ४) रु०।

वेदांग प्रकाशक शुद्ध सम्प्रदाय—मधि विषय १) रु० आध्यात्मिक ४) रु० धातुपाठ ॥२) षष्ठीस्वराण शिष्टा ३) नामिक ॥१) सौवर ॥२) पारिभाषिक ॥१) गणपाठ ॥२) अर्थार्थ १) कारकीय ॥२) मामासिक ॥२), उणाडिकोष आदि अन्य भाग भी छप रहे हैं।

दयानन्द वाणी—भूमिका लेखक पूज्य स्वामी धुवानन्द जी महाराज। पुस्तक में महर्षि के उपदेशों को उत्तमोत्तम ढंग से समहीन किया है। टाइप बहा कवर दो रंगा का, पृष्ठ संख्या २४० मूल्य केवल १॥) रु०।

दयानन्द वचनमृत—लेखक महामा सदानन्द स्वामी सरस्वती। सुल्लिखित भाषा में, महर्षि के जीवन की अद्भुत आकी तथा उनके सुंदर वचन के समग्र क साथ साथ कवर पर सुन्दर तिरगा चित्र मूल्य १२) रु०।

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विचारतन विद्या विशारद विद्या वाचस्पति आदि परीक्षाओं मण्डल के त वायधान म प्रतिरूप हाती है, इन परीक्षाओं की समस्त पुस्तके अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहाँ से भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं की पाठ्यविधि मुफ्त मगावें।



दिव्य दयानन्द



[स्व० कविराज श्री प० नाथूराम शकर शर्मा 'शकर']

जहाँ घोषणा राम के नाम की है
जहाँ कामना कृष्ण के काम की है
अहिंसा जहाँ शुद्ध बुद्धार्थ की है
प्रशामा जहाँ शंकराचार्य की है
वहाँ नैव ने दिव्य योगी उतारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे

अनायाम चेला गया एक चूहा
गिरी मूल, उँची चढ़ी उंच बूहा
जड़ी मृत भूदेश की भक्ति भागी
महादेव के प्रेम की उद्योति जागी
उठे इष्ट की आर सौंवे मियारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

हित्, बन्धु, माता, पिता, मित्र छोड़े
लगे मुक्ति की खोज में, बन्ध तोड़े
भले भाग त्याग, गही योग शिक्षा
फिरे देश में मागते धर्म भिज्ञा
यने भदिका भारती के दुलारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

टिका टंन ठाना उसी ठौर जाना
जहाँ ठीक पाना सुनाथा ठिकाना
मिले योगियों से निकाली कचाई
मिटा अन्ध विश्वास सूभी सचाई
कहाए वृजानन्द के शिष्य प्यारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

मनो भावना साधना में मिला दी
सुधा ध्यान को धारणा की पिला दी
समाधिस्थ हो ब्रह्म में लौ लगाई
मिली सम्पदा मिद्धियों की न भाई
टिके एकता में मिटा भेद सारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

निहारी महा चेतना की महत्ता
उसी में जुड़ी जान ली जीव सत्ता
उपारी उपादान की योग माया
जगज्जाल में तीन का मेल पाया
यमे विश्व की विश्वता में न न्यारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

रहें आदि में अन्न लो ब्रह्मचारी
पढी वेद विद्या, अविद्या विमारी
कहा सज्जनों में वना स्वर्ग भोगी
भजो सच्चिदानन्द को मुक्ति हांगी
न होना कर्मी आलसों या पुकारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

छुआ बूत के छद्म की छेक छाया
मिटा दी मनो की महा मोह माया
दिव्या द्रोप पाखण्ड का न्योज ग्याया
खलोपाड खोटे खलो का विगोया
प्रमादी पछाड किमी में न हारे
प्रतापी न्यानन्द स्वामी हमारे ॥

प्रसादी सदा प्रेम की शरते थे
घृणा से किसी को नहीं टाटते थे
सजीला मदाचार को जानते थे
न चोखा किसी चिद्ध को मानते थे
कर्मी बख धोर कर्मी थे उचारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

न ग्याता किले कल कूटस्थ अत्ता
वही सिन्धु में बूद की भक्ति मत्ता
दिया न्याय का नीचता ने बुझाया
दया और आनन्द का अन्त आया
दिवाली हुई हाय हांली पजार
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे ॥

ओ३म्

साप्ताहिक आर्य मित्र ऋष्यंक

अवैतनिक सम्पादक—उमेशचन्द्र स्नातक एम० ए०

वर्ष } ६२ }	लखनऊ रविवार कार्तिक १, शक १८८२, कार्तिक शुक्र ३, वि० २०१७, २३ अक्टूबर १९६० ई०, दयानन्दाब्द १३६, मृष्टि मवन् १९७२९४६०६१	अंक } ३६-४० }
----------------	---	------------------

वैदिक प्रार्थना

यस्या गायन्ति नृत्यन्ति भूम्या मर्त्या व्यैलवा ।
युध्यन्ते यस्यामाक्रन्दो यस्या वदति दुन्दुभि ।
सा नो भूमिं प्रणुदता सपत्ना नसपत्न मा पृथिवी
कृणोतु ॥

(यस्या) जिस (भूम्या) भूमि पर (व्यैलवा) मुखर
(मर्त्या) मर्द (गायन्ति नृत्यन्ति) गाते नाचते हैं,
(युध्यन्ते) लड़ते हैं, (यस्या) जिस पर (आक्रन्द))
कालाहल है, (यस्या दुन्दुभि वदति) जिस पर मारू
बाजा बजता है, (सा भूमिं न सपत्नान्) वह भूमि
हमारे प्रतिद्वन्दियों को (प्रणुदता) परे डेल दे, (मा)
मुझे (पृथिवी असपत्न कृणोतु) पृथिवी शत्रुहीन
करे ।

मौजी मुखर मर्द करते हैं गायन और नृत्य जिस पर,
जिस पर होते घोष अनेको, जिस पर होते युद्ध प्रस्वर,
और वीरो को करती है जिस पर दु दुभि-ध्वनि उत्तेजित,
करे नाश रिपुओं का पृथिवी, करे हमें वह शत्रु-रहित ।

—राजनाथ पायरेय एम० ए०

विश्व-विभूति



औ टकारा की उजलित ज्योति,

तू कभी नहीं बुझने वाली ।

तुम्हें से जगमग यह जगदीतल,

तुम्हें से भारत गौरवशाली ।

—हरिशास्त्र शर्मा डी० लिट्

सम्पादकीय

आर्यत्व के महान् दायित्व की पूर्ति

★
आर्य ईश्वर पुत्र के आधार पर प्रत्येक आर्य अपने में जिस गौरव की अनुभूति करता है या कर सकता है, उसका कोई धार्मिक, जातीय या साम्प्रदायिक आधार न है और न होना चाहिये, अपितु आर्यत्व गुणवाची शब्द है, जो मानव के सर्व श्रेष्ठ गुणों से युक्त हो वही सच्चा आर्य है। आर्य ही ईश्वर पुत्र है इसके कहने का यह अर्थ कदापि नहीं कि ससार के अन्य प्राणी ईश्वर के पुत्र नहीं हैं अपितु इसका यही भाव लिया जाना चाहिये कि जेमे एक लौकिक पिता अपने उम पुत्र को अधिक स्नेह और प्यार देता है जो अन्य पुत्रों की अपेक्षा श्रेष्ठ और सदगुण सम्पन्न हो। इसी प्रकार ईश्वर आर्यत्व के विशिष्ट गुणों से युक्त व्यक्तियों पर अपनी कृपा का वरद हस्त रखता है और उन्हें अपने सदेश प्रसार का दायित्व सौंपता है।

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना कर हम सबको आर्यत्व की महान् धाती (धरोहर) वेद ज्ञान राशि सौंपी है। आर्य समाज के सदस्यों को प्रभु के ज्ञान सन्देश वेद का पालन करने और प्रचारित करने का दायित्व ऋषि ने सौंपा था। परन्तु उस दायित्व की पूर्ति केवल ग्रन्थ समग्र सकलन और प्रकाशन मात्र से ही नहीं हो सकती। उस दायित्व की पूर्ति आचरण द्वारा ही सम्भव हो सकती है। मनु ने इसी भाव को स्पष्ट करते हुए लिखा था “आचार हीन न पुनन्ति वेदा” वेदों का महा विद्वान् रावण का दूषित जीवन मनु के इस कथन का साक्षी है।

आज हम महर्षि के जीवन की अन्तिम घड़ियों का स्मरण कर उनके प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कर रहे हैं। परन्तु क्या हमारे चरित्रों में ऋषि के चरित्र जैसी आस्तिकता, मनसा वाचा कर्मणा पवित्रता, और विरोध का सामना करने की निर्भीकता, परांपकारिता तथा आदि गुणों की विशेषताओं का विकास हो रहा है या हो सकेगा। यह प्रश्न चिन्ह हम से उत्तर मांग रहा है।

यदि हम अपने को सच्चे ऋषि भक्त सच्चे आर्य और सच्चे ईश्वर पुत्र कहलाना चाहते हैं, तो हमें ऋषि की इन पक्तियों का ध्यान पूर्वक मनन करना चाहिए।

मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्तों के सुख-दुःख और हानि लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान से भी न डरे, और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे, इतना ही नहीं किन्तु अपने सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुण रहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान और गुणवान भी हों तथापि उसका नाश अवनति अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्याय के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो चाहे प्राण भी भले ही जावे परन्तु इस मनुष्य रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।

महर्षि जीवन पर्यन्त उपयुक्त मानवीय आदर्श की व्यावहारिक व्याख्या करते रहे। उन्होंने अपने उदात्त चरित्र द्वारा अपने शत्रुओं और विरोधियों के हृदयों पर भी विजय प्राप्त की। अपने प्रति अपराधियों को क्षमा वीरस्य भूषण के अनुसार क्षमा प्रदान की, सत्ता के लोभ से सदा अलूत रहे तथा सन्यास वर्म के लोकेष्णा त्याग व्रत का सदव पालन करते रहे। इसी व्रत की पालना में उन्हें विप-पान करना पड़ा। पर वे सत्य धर्म से विमुख हो लोक-समग्र के प्रभावी आकर्षण में न फसे। निन्दन्तु नीति निपुणा का दृष्टि में रखते हुए उन्होंने सत्य का सत्य रूप में प्रस्तुत करते रहने का साहसपूर्ण कार्य किया। उस महामानव के चरित का एक-एक पृष्ठ महान् ग्रन्थ से अधिक पवित्र और गम्भीर है।

इस सबका उल्लेख करने का यही अभिप्राय है कि हम ऋषि निर्वाण की स्मृति वेला में ऋषि चरित का अनुसरण करने का व्रत ग्रहण करें।

आज प्राय निराशावादी बन्धु पृष्ठते और कहते हैं कि अब हमें क्या करना है। ऋषि और आर्य समाज का कार्य पूर्ण हो चुका। जो बन्धु ऐसा विचार रखते हैं उनके सम्बन्ध में हमारी

प्रधान सभा का दीपावली-सन्देश

भारतीयों के सब ही पर्व यो तो हसी खुशी और प्रसन्नता के वर्धक है, परन्तु दीपावली और होली का उनमें एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन दोनों ही पर्वों पर नई फसले भी घरों और बाजारों में पहुँच जाता है। इसलिये घर का और देश का भरा हुआ वातावरण भी प्रसन्नता को बढ़ाने में सहायक होता है। सांस्कृतिक भाषा में इसी से इन अवसरों पर किये जाने वाले यज्ञ “नवसस्येष्टि यज्ञ” कहे जाते थे। ऋतु परिवर्तन के कारण घरेलू वातावरण भी बदल जाता है।

कार्तिकी अमावस्या (दीपावली) ३० अक्टूबर १९८३ ई० को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी अपनी भौतिक लीला समाप्त की थी। आज ठाक सत्तर वर्ष उस पुण्यात्मा का विदा लिये हुए हो गये। इसलम्बी अवधि में हमने अपनी कितनी यात्रा ते की है और कितनी अभी शेष है ? थोड़ा सोचें। दीपावली के दिन छोटें छोटें दीपकों की लौ अपने पीछे खड़ी उस दिव्य ज्योति की ओर सकेत कर रही है, जो सदा ही “उठो और कल्याण मार्ग के पथिक बनो” का सदेश दे रही है।

—प्रकाशवीर शास्त्री सप्तद सदस्य
प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश



श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री, सभा प्रधान

यही सम्मति है कि वे ऋषि मिशन और आर्यसमाज को नहीं समझ सके हैं।

आर्यसमाज का कार्य न केवल भारत के लिए अपितु समस्त ससार के लिये है, और यह मिशन न केवल १६ वीं और २० वीं शताब्दी के लिये आरम्भ हुआ, अपितु इसका कार्य ‘यावच्चन्द्र दिवाकरौ’ होता रहेगा। मानव प्रकृति के त्रिगुणात्म स्वरूप के कारण दैवी और आसुरी वृत्तियों का सघर्ष कम अधिक बना रहेगा, तब गम्भीरतापूर्वक साचिये हमारा कार्य समाप्त कैसे हो सकता है। आर्यत्व के इस दायित्व की अनुभूति करके ही ऋषियों ने हमें सन्देश दिया था “चरैवेति चरैवेति” चलते चलते, चलते चलते। आज

आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य को आगे बढ़ने का प्रतलेना होगा और ऋषि की पुण्य स्मृति में अपनी कम जोरियों मानसिक दुर्भावनाओं, सत्ता सघर्षों, दैन्यता और पलायनता की भावनाओं, अकर्मण्यता शिथिलता उदासीनता एवं अश्रद्धा के कल्मष को नष्ट कर हृदय को आर्यत्व की पवित्रता से पुनीत कर अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ना होगा। जा आर्यत्व के महान गौरव की रक्षा में असमर्थ है, वे ईश्वर पुत्र के महान गौरव के अधिकारी नहीं रह सकते। प्रत्येक आर्य सदस्य का निर्णय करना होगा कि वह इस गौरव रक्षा के लिए क्या कर रहा है। निर्णय की गम्भीरता ही उस महान मानव के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धाजलि होगी।



महर्षि की आशा पूर्ण करो



[श्री प० प्रेमचन्द्रजी शर्मा एम०एल०सी०, मन्त्री आ०प्र० नि० सभा, उत्तर प्रदेश]

महर्षि दयानन्द महामानव थे। उन्होंने अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए कठोर साधना और तपस्या की थी। वे, अपना जीवन सार्थक कर गये। वे सृष्ट्युत्पन्न बन गये।

उन्होंने विश्व से अज्ञान, अन्याय, अभाव को समाप्त करने के लिए अपने जीवन का समर्पण किया था। वे चाहते थे कि अकेले मात्र सुख का आनन्द प्राप्त करते। पर उन्हें मानवता के उद्धार की चिन्ता थी। वे विश्व प्रेम के उपासक थे और मानव मात्र नहीं प्राणी मात्र की रक्षा और उन्नति के लिए चिन्तित थे। जीवन के अन्तिम क्षण तक वे अपने सन्मार्ग पर हट रहे उन्हें अपनी तपस्या पर विश्वास था, और वे यह अनुभव करते थे कि उनके सहयोगी आर्य जन उनके वेद-मार्ग का प्रचार और प्रसार अच्छी प्रकार कर सकेंगे। अपने इस विश्वास के आधार पर उन्होंने लिखा था—

जो उन्नति करना चाहता है 'आर्य समाज' के साथ मिल कर उसके उद्देश्यानुसर आचरण करना स्वीकर कीजिए, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा। हम और आपका अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना; अब भी पालन हाता है, आगे हागा। उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिल कर प्रीति से करे। इसीलिए जसा आर्यसमाज आर्या वत दण का उन्नति का कारण है, वसा दूसरा नहीं हो सकता। यदि हम समाज का यथावत सहायता दवे ता बहुत अच्छी बात है क्यो कि समाज का सौभाग्य बढ़ाना समुदाय का काम है—एक का नहीं"। 'सत्यार्थप्रकाश'।

इस प्रकार महर्षि के मानस पुत्र रूप में आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य पर आजीवन एक गम्भीर उत्तर दायित्व रहता है। महर्षि ने जिन समस्याओं की पूर्ति के लिये आर्यसमाज की स्थापना की थी, वे

सामयिक नहीं थी। देश की अव्यवस्था का उन्हें मार्मिक दुःख था और वे एक विश्व नागरिक के रूप में यह भी अनुभव करते थे, कि भारत ही विश्व में शान्ति



श्री प० प्रेमचन्द्र जी शर्मा सभा मन्त्री

की स्थापना कर सकता है, भारत ही भटकती मानवता का, अध्यात्म की प्रेम गंगा में स्नान कर शान्ति सुख प्रदान कर सकता है। इस आशा पूर्ति के लिये उन्होंने साहित्य निर्माण किया और भारतीय एवं वैदिक वाङ्मय पर जो स्वार्थवाद का आवरण व्याप्त था, तथा जिससे वैदिक मत को भूल कर सकड़ों मत मतान्तरो का व्यामोह सव्याप्त था, उसे समाप्त किया। शास्त्रों में प्रचेप बाद तथा वेदों के शुद्धार्थ प्रतिपादन की शैली ने अज्ञान रात्रि को, समाप्त कर ज्ञान सूर्य का प्रकाशित कर दिया।

महर्षि ने वैदिक मत के आदर्श सिद्धान्तों, अपनी प्रगल्भतापूर्ण रचनाओं और मार्ग दर्शन द्वारा आर्य जनो का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। हमने महर्षि की आशाओं के अनुरूप उनके उत्तराधिकार को स्वीकार किया। एक आधी की भानि आर्य समाज की विन्यास

धारा सारे देश में छा गई। विदेशों में इंग्लैण्ड, फ्रांस, अमेरिका ने आर्यसमाज की तीव्र शक्ति को अनुभव किया। आर्य समुदाय अपने पथ पर उत्साह और योजना पूर्वक आगे बढ़ता गया। हमने जो मार्ग स्वीकार किया उसमें कहीं विश्राम का अवसर नहीं था। आणविक शक्ति की तरह निरंतर गति और प्रगति होनी चाहिये थी।

भारत की राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्ति तक हम जिस उत्साह और उल्लास के साथ कर्त्तव्य पथ पर बढ़ते रहे, इतिहास में उसे सदैव स्मरणीय श्रेष्ठ स्थान प्राप्त रहेगा। पर आज हमारी गति मन्द और शिथिल ही नहीं चिन्तनीय बन रही है। हमें सदैव आशावादी रहना चाहिये। परन्तु जो शिथिलता और त्रुटियों हमारे सचटन में आ गयी है, उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी गाडी पटरी से उतर चुकी है, उसे पटरी पर लाकर दूसरों के उपकार का दायित्व आज की पीढी का पूर्ण करना है।

काई व्यक्ति या समुदाय अपने पूर्वजों की गौरवशाली थाती (सम्पत्ति) पर गर्व करते हुए अपने गौरव और महत्त्व नहीं बनाये रख सकता, जब तक कि उसकी इकाइयों और उसका नेतृत्व कर्त्तव्य परायण न हो। केवल यह कहते रहने से कि महर्षि इतने महान थे, आर्य समाज ने यह किया, वह किया, हमारा कार्य समाप्त नहीं हो जाता, अपितु अब तक के लोगों ने जो कुछ किया उसके बाद हमारा कर्त्तव्य आरम्भ होता है। क्या कभी हमने सोचने का प्रयत्न किया है कि आर्य समाज के मिशन की सफलता के लिये हमें व्यक्तिगत रूप से क्या करना है? इसी प्रश्न के उत्तर में आर्यसमाज का भविष्य निहित है।

महर्षि दयानन्द के समय में धार्मिक जगत् में सत्ता का सघर्ष व्याप्त था। समाज पर उसी का नियन्त्रण था, जिसका धर्म पर। आज परिस्थिति में यह परिवर्तन है कि राजनैतिक जगत् में सत्ता का सघर्ष चल रहा है, और सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जगत् पर उसी का अधिकार है, जिसका राजनीति पर। इस परिस्थिति में आर्य समाज का महत्त्वपूर्ण कार्य करना है। आज भारतीय गौरव की रक्षा का प्रश्न

पराधीनता के युग से भी अधिक गम्भीर बना हुआ है। राजनीति और अर्थवाद की चकाचौध में, प्राचीन नैतिकता, धर्म, संस्कृति की उच्चतम भावनायें समाप्त हो रही हैं, और देश में विद्वेष, सघर्ष, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, चोर एवं द्यूतकर्म, मद्यपान, हिंसा आदि दुर्गुण भारत की महत्ता को प्रस रहे हैं। इन सबसे भारत की रक्षा का दायित्व एकमात्र आर्यजनों पर ही है। हम इस देश को आर्यावर्त्त कहते हैं, क्या हमारे आर्यावर्त्त का यही स्वरूप होना चाहिये।

महर्षि अपना काम कर गये। हमें मार्ग दिखा गये उनकी जीवन ज्योति अमर है। उनकी निर्वाण ज्योति हमें कर्त्तव्य का स्मरण कराने आर्या है।

अभी हमने दीक्षा शताब्दी पर उनके जीवन का अनुकरण करने का व्रत लिया था क्या हम व्रत का पालन कर रहे हैं? यदि हमसे भूल हुई है, तो निराश होने की जरूरत नहीं। आओ! हम सब मिलकर एकबार पुन आर्य समाज के कार्य और ऋषि मिशन को पूर्ण करने का व्रत धारण करें। यही ऋषि निर्वाण का सन्देश है—यही महर्षि के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धा जलि होगी।



बहराइच जिला आर्य सम्मेलन

स्थान—इकौना आर्यसमाज

तिथियाँ—०४ से ०८ अक्टूबर सन् ६०

अध्यक्ष—श्री आचार्य बृहस्पति जी शास्त्री

वेदशिरोगणि प्रधान आ०प्र०नि० सभा उ०प्र०

सम्मेलन उद्घाटन कर्त्ता

श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा जी पम० एल० सी०

मन्त्री आ० प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश

यह सम्मेलन इकौना आर्यसमाज की रजत जयन्ती के अवसर पर सम्पन्न होगा।

इस अवसर पर २। हजार आहुतियों से बृहद् यज्ञ भी किया जायगा।





काशी शास्त्रार्थ



[लेखक—युवराज श्री रणजयसिंह जी एम० एल० सी० अमेठी राज्य भू०पू० प्रधान अर्थ प्र० सभा उत्तर प्रदेश]

वैदिक यम का प्रशस्त प्रचार एवं प्रचलित पाखंड का प्रचण्ड खण्डन करते हुए स० १६२६ वि० में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जब संस्कृत विद्या के केन्द्र काशी पहुँचे तब वहाँ कोलाहल मच गया और सर्वत्र चर्चा का वह विषय बन गया कि एक ऐसा सन्यासी आया हुआ है जा वेदों का प्रकाण्ड परिहृत



श्री युवराज रणजयसिंह जी

है तथा काशीस्थ समस्त विद्वानों को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान दे रहा है। कहता है कि प्रतिमा पूजन और मृतक श्राद्ध वेद विहित नहीं है।

तत्कालीन काशी नरेश महोदय ने काशी के विख्यात विद्वान् महानुभावों से अनुरोध किया कि एक सन्यासी अर्थात् महर्षि स्वामी दयानन्द से शास्त्रार्थ करे किन्तु काशीस्थ विद्वानों ने तदर्थ तैयारी करने के लिए १५ दिवस का समय मांगा। अन्ततोगत्वा कार्तिक शुक्ला द्वादशी को अमेठी राज्य के आनन्दबाग में ६० सहस्र जनता की उपस्थिति में शास्त्रार्थ हुआ जो

निस्सन्देह अपूर्व था। काशीनरेश महोदय समापति का सुन्दर सिंहासन मुशोभित कर रहे थे।

एक ओर काशी के सभी दिग्गज विद्वान स्वामी विशुद्धानन्द, परिहृत बाल शास्त्री परिहृत शिनसहाय राम, परिहृत मायव, चार्थ, श्री वामनाचार्य, श्री देवदत्त शर्मा, श्री जयनारायण शुक्ल वाचस्पति, श्री चन्द्रशेखर त्रिपाठी, श्री राधामोहन तर्क वागीश, श्री दुर्गादत्त, श्री बस्तीराम दुबे, श्री काशीप्रसाद शिरोमणि, श्री हरिकृष्ण श्री अम्बिकादत्त व्यास, श्री घनश्याम, श्री ठाकुरदास, श्री हरदत्त दुबे, श्री भैरवदत्त, श्रीवर शुक्ल, श्री विश्वनाथ मेथिल, श्री नवीननारायण तर्कालंकार, श्री मदनमोहन शिरोमणि, श्री कलाशचन्द्र शिरोमणि, श्री मेवकृष्ण वेदान्ती, श्री गणेश श्रोत्रिय, श्री धनीराम नारायण शास्त्री और श्री देवचर नृसिंह शास्त्री प्रभृति तथा दूसरी ओर बाल ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द अकेले।

शास्त्रार्थ संस्कृत भाषा में हुआ था और दिन भर चला था। सायंकाल जब देखा गया किसी प्रकार से महर्षि स्वामी दयानन्द निरुत्तर नहीं हो रहे हैं अपितु उनके प्रश्नों का उत्तर देना असम्भव हो रहा है तब काशीस्थ विद्वानों की लाज बचाने के लिए एक विचित्र चाल चली गयी।

एक फटा पुराना कागज का टुकड़ा श्री स्वामी दयानन्द को दिया गया। उन्होंने श्री स्वामी विशुद्धानन्द से कहा आप ही पढ़ दीजिए। स्वामी विशुद्धानन्द ने कहा सेवक न होने से वे पढ़ नहीं सकते। अन्वेषण होने लगा था। एक लालटेन मंगायी गयी। लालटेन का शीशा धूम्र आच्छादित था और जो उसे लिये हुए था वह जान बूझकर उसे हिला रहा था। उस अल्प प्रकाश में महर्षि स्वामी दयानन्द उसे पढ़ने का प्रयास करने लगे कि काशी के परिहृत गण नर नरक नर

पडे और पौराणिक जनता ने हल्ला मचा दिया।

महर्षि उसे पढ़कर उत्तर देने लगे परन्तु फिर सुनता कौन है, सब लोग भाग खंडे हुए। वाराणसी नगर के कोतवाल श्री रघुनाथप्रसाद के पूछने पर कि यह क्या हो रहा है, सभापति महादय ने चुपके से कहा कि फिर क्या आप चाहते हैं काशी की नाक कट जाय।

दूसरे ही दिन महर्षि दयानन्द ने विज्ञापन प्रकाशित किया। समाचार-पत्रों में महर्षि की जीत छपी। स्वयं काशी नरेश महादय ने स्वामी जी महाराज के पास जाकर भयट् म्बोकार किया परन्तु कुछ दिनों के उपरान्त। दावा जवाहरदास जा काशीस्थ प्रतिष्ठित विद्वान् थे वे प्रारम्भ से ही महर्षि की जीत समझ रहे थे।

स्वामी जी महाराज ने शास्त्रार्थ करने के लिए फिर काशीस्थ विद्वान कभी सामने नहीं आये। स्वामी जी ने ६ बार काशी जाकर ललकारा परन्तु उन लोगों ने साहस नहीं किया। स्वामी विशुद्धानन्द के शिष्य श्री राधाकृष्ण आचार्य (जा हमारे सरस्वत भापा के गुरु थे) वतलात थे कि उक्त ण्णित्वांसिक शास्त्रार्थ के पश्चान् जब जब महर्षि दयानन्द काशी पधारें तब तब विद्वज्जन केवल अपने प्रमुख शिष्य विद्यार्थियों का प्रश्नोत्तर आदि के लिए भेजते रहे और उन्हें यह आदेश रहता था कि स्वाम, दयानन्द जी महाराज के मुख से यदि कोई मस्कृत शब्द तनिक भी अशुद्ध निकले तो तत्काल उन्हें टोक दिया जाय जिसके उपस्थित सज्जन समझे कि काशी के विगार्थी तक स्वामी जी की त्रुटियाँ पकड लेते हैं परन्तु स्वामी दयानन्द जी महाराज इतने भारी विद्वान् थे कि कभी एक भी शब्द ऐसा न बोले जो व्याकरण की दृष्टि से टोकने योग्य रहा हो।

आर्यसमाज के ही नहीं काशी के इतिहास में कटाचित्त येसा शास्त्रार्थ उससे पूर्व न हुआ होगा। उस अद्वितीय शास्त्रार्थ के महत्त्व को सभी पक्ष के विद्वान् मानते हैं। स्वर्गीय श्री महेशप्रसाद जी आलिभ फाजिल का सुभाष था कि काशीस्थ आनन्दवाग में उक्त शास्त्रार्थ की स्मृति में एक पत्थर लगावा दिया जाय। अखिल भारतीय सनातन धर्म परिषद महासभा में भी तदर्थ प्रस्ताव पास हुआ है। उसके अन्वेष श्री परिषद

गोपाल शास्त्री दर्शन रेसरी तथा स्वर्गीय श्री महेशप्रसाद जी के यही विचार थे कि उस पत्थर पर स्वामी दयानन्द जी महाराज एवं शास्त्रार्थ में भाग लेने वाले काशीस्थ प्रमुख विद्वानों के शुभ नाम सवन तथा तिथि अदि अंकित रहे परन्तु द्वार जीत किसी का न लिखी जाय जिससे उसका महत्त्व सवके लिए सदा एक समान रहे।

लेखक ने आनन्दवाग में उक्त शास्त्रार्थ की स्मृति में 'काशी शास्त्रार्थ वेदा' बनवा दी है। अब उस पर पत्थर लगाकर न्सका अनावरण करना शेष है, जिस पर विचार करने के लिए विद्वान महानुभावों से सादर प्रार्थना है।



अन्तरंग सभा की आवश्यक बैठक

३० अक्टूबर १९६०

गोमती की बाढ से सभा के मुख्य कर्त्तलय भवन आर्यमित्र व प्रेस का जो क्षति पहुँची है उस परिस्थिति पर विचार एवं निश्चय करने के लिये ३० अक्टूबर को प्रधान जी के अदेशानुसार अन्तरंग सभा की बैठक होगी। सभी सदस्यों से प्रार्थना है कि पधारने की कृपा कर अनुगृहीत करें।

—उमेशचन्द्र भ्नाटक

गुरुब उपमत्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

नम्र-निवेदन

आर्यमित्र का ऋष्यङ्क निकालने में इस बार हमें जिन कठिनाइयों का सामना करना पडा है, उसका अनुमान इसी से लग सकता है कि प्रेस पानी में डूबा होने के कारण दूसरे प्रेसों में छपाई करानी पडी है। इस अक्ष के लिए जिन लेखक वन्धुओं ने अपनी रचनाये भेजी हैं, उनके प्रति आभार प्रकट करते हुए उन सभी सहयोगियों से क्षमा प्रार्थना करते हैं, जिनकी रचनाये स्थानाभाव और इस सकट स्थिति में हम नहीं छाप सके। जैसा भी वन सका अक्ष आपके समक्ष है।

भवदीय

उमेशचन्द्र भ्नाटक एम० ए०

सम्पादक आर्यमित्र

आर्य बन्धु इस संकट में आर्थिक सहयोग प्रदान कर अपने कर्तव्य का पालन करें

लखनऊ में १० अक्टूबर को सभा के मुख्य कार्यालय नारायण-स्वामी भवन में बाढ़ का पानी भर जाने के कारण सभा भवन की मुख्य कोठी की नींव में पानी पहुँच गया और सभा भवन की दीवारों और छतों में दरारें पड़ गयी हैं। सभी कर्मचारी यज्ञशाला में निवास कर रहे हैं। प्रेस की मशीनें पानी में डूबी पड़ी हैं। प्रेस का कार्य शीघ्र आरम्भ हो सकना कठिन है।

सभा-भवन को क्षति पूर्ति के लिये काफी आर्थिक सहायता की आवश्यकता होगी। सभी आर्य-बन्धुओं, समाजों के अधिकारियों, सभा के अधिकारियों, अन्तरंग सदस्यों से अपील है कि वे इस संकट स्थिति में सहायता प्रदान कर अपने कर्तव्य का पालन करें।

आर्यसमाज द्वारा लखनऊ बाढ़ पीड़ितों की प्रसंशनीय सहायता

लखनऊ की अभूतपूर्व बाढ़ में सत्रस बरस पीड़ित बन्धुओं की सहायता का कार्य ११ अक्टूबर से माल-रोड पर आर्यसमाज का शिविर स्थापित कर आरम्भ कर दिया गया था।

आर्यसमाज गणेशगज के मन्त्री श्री चन्द्रदत्त जी तिवारी एम० ए० अपने सहयोगियों तथा डी० ए० वी० कालेज लखनऊ के १५० से अधिक अध्यापकों व छात्रों सहित सेवा कार्य में सलग्न हैं। कालेज की एन० सी० सी० की यूनिट साहस और तरपता के साथ सेवा सहायता में सलग्न हैं। कालेज के तैराक अध्यापकों ने नदी पार संकट प्रसन्न भाइयों को अपने सिरों पर रख कर खाद्य सामग्री पहुँचाई।

आर्यसमाज शिविर की ओर से बाढ़ पीड़ितों को खाद्य सामग्री वितरण करने के लिए छपे हुए राशन कार्डों का प्रयोग किया जा रहा है। इस व्यवस्था की सभी ने प्रशंसा की है। शिविर की ओर से ३००० से अधिक व्यक्तियों को कार्डों पर खाद्य सामग्री वितरित की जाती है।

शिविर का दैनिक व्यय इस प्रकार है—५ बोरा आटा, २ बोरा दाल, २ बोरा चावल, ३ टीन मिट्टी का तेल, १ मन शक्कर, १ मन दूध, ५० मन लकड़ी, नमक, मिर्च ममाला, सब्जी आदि। इसके अतिरिक्त दोनों समय चाय और नाश्ता भी बाँटा जाता है।

वस्त्र वितरण का कार्य भी श्री प्रि० सन्तोषकुमारी जी प्रिन्सिपल बालिका विद्यालय के सहयोग व सहायता में सम्पन्न हो रहा है। २००० आदिमियों को वस्त्र बाँटे भी जा चुके हैं।

चिकित्सा के लिये भी २ घण्टे होम्योपैथ चिकित्सक शिविर में बैठते हैं।

श्री तिवारी जी तो दिन-रात सहायता-सामग्री समूह तथा धन-समूह कार्यों में सलग्न रहते हैं। उनके साथ आर्यसमाज गणेशगज के सम्मानित अन्तरंग सदस्य सर्व श्री भगवानप्रसाद जी, चन्द्रभाल जी दुवे, प्रह्लादमित्र जी शास्त्री, विष्णुकुमार जी अवस्थी भी हर समय कैंप में ही उपस्थित रहते हैं।

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के मुख्य उपमन्त्री श्री उमेशचन्द्र स्नातक एम० ए० भी कैंप की व्यवस्था व परामर्श के लिए जाते रहे। सभा के कार्यकर्त्ता श्री बाबूराम जी, श्री राजबहादुर जी, श्री नारायण-गोस्वामी जी भी जाते आते रहते हैं।

जनता का आर्यसमाज शिविर को अच्छा सहयोग प्राप्त हो रहा है, फिर भी प्रत्येक आर्य बन्धु का कर्त्तव्य है कि इस सहायता कार्य में दया-शक्ति सहयोग प्रदान करे।

आर्यसमाज का दूसरा शिविर आर्यसमाज हसनगज व नगर आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं की देख-रेख में कार्य कर रहा है। श्री डा० प्रकाशचन्द्र जी, श्री ब्रह्ममित्र जी शास्त्री फौजाबाद रोड व कुतुबपुर में चिकित्सा कार्य कर रहे हैं।

बाढ़ पीड़ित केन्द्रों में जो आर्य बन्धु सेवा कर रहे हैं, वे सब आर्य जगत् की वधाई के पात्र हैं।



महर्षि जीवन का सार--

उपदेशेन वर्तामि



[ले०—श्री डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल अध्यक्ष 'भारतीय विज्ञान' विभाग
बनारस विश्वविद्यालय]



उपदेशेन वर्तामि नानुशास्मही कचन

मैं उपदेश से बरता हूँ, किसी को आशा नहीं देता। अर्थात् मेरे जीवन के द्वारा मेरा उपदेश प्रगट होता है, वाणी के अनुरासन के द्वारा नहीं। भावार्थ यह हुआ कि कर्म के द्वारा दिवा हुआ महत्वपूर्ण उपदेश ससार में सर्वश्रेष्ठ है, वाणी के द्वारा यह करा, यह न करा, की रीति से कहीं हुई बात पतनी प्राण नहीं होती।

इस सृष्टि का निर्माता सृष्टि रचकर सृष्टि की एक एक बात से मौन उपदेश दे रहा है। मेघों की अव्यक्त ध्वनि द व द से, वफनिवद का श्रुति उपदेश सुनता है—
दत्त-दमयत्-दशध्वम् अर्थात् दान दो, आत्म समय करा और प्राणियों पर अनुकम्पा करो।

मेघ का सारा जीवन व्यवहार एक महान् उपदेश है। बिना वाणी से कहे कर्म से मिलने वाला उपदेश शत गुणित और सहस्र गुणित होता है। इस प्रकार सृष्टि व्यवहारों से मिलता हुआ अनादि अनन्त उपदेश प्रतिक्षण हमारे पास आ रहा है—

यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न विभीतो न रिष्यतः एवा
मे प्राणा मा विभे ॥

जैसे सूर्य और चन्द्र न मन से डरते हैं, न शरीर से न्यून होते हैं जैसे नियन्ता ने कर्म पथ में उन्हें ठहरा दिया है वैसे ही बरतते हैं—ऐसे ही मेरा प्राण भी उनसे अभय की शिक्षा ले।

जीवन उपदेश की तूष्णीभाषा है। अब्बा को कहे कि मौखिक उपदेश तो एक या दो भाषाओं में एक व्यक्ति दे सकता है। किन्तु जीवन के उपदेश की भाषा सार्वभौम है। ससार के मानवों की जितनी

भाषायें हैं वे सब जीवन की ही व्याख्या करती हैं। जीवन के द्वारा दिये गये उपदेश को वे सब शब्दों में बिना कहे पकड़ लेती हैं। किसी भाषा कवि ने कहा है—

“कामा जोग कथनि के कहे।

निकसे छिउ न बिना दधि मये ॥

योग तो साधन की वस्तु है उसका मुह जवानी जमा लूच किस काम का। बिना मये दही या दूध में से मक्खन नहीं निकलता। करनी और कथनी में बहुत अन्तर है। करनी का प्रभाव मन पर पडता है कथनी का नहीं। जिस कथन के पीछे जीवन का सत्य नहीं है वह नितेज है, बुझी हुई अग्नि की तरह राख मात्र है। जीवन में उपदेश के अनुसार बरताव करने से ही उसमें चिन्तनारी पैदा होती है। नोआ खाली के हिंसा से भरे हुए वातावरण में उस दायानल का आचमन करने के लिए जब गांधी जी अकेले कूद पडे तो किसी ने उनसे उपदेश मांगा तो उन्होंने लिख कर दिया—“आभार जीवनेइ आमार वाणी।” मेरा जीवन ही मेरी वाणी है। स्वामी दयानन्द का ब्रह्मचर्य व्रत उनका तपःपूत जीवन, उनका ज्ञान प्रदीप श्रुतिव मानव के लिए तूष्णी भावेन जो उपदेश देता है वह सैकड़ों पोथी और व्याख्यानों से सम्भव नहीं। वह जीवन की अग्नि के प्रकाश से प्रकाशित है। उसमें प्राणों की हवि दी गई है। सच्चा उपदेश इसी प्राण हवि को चाहता है। उपदेशक कहता है—मैं स्वयं हवि हूँ। (हबिरस्मि नाम)

उसका मन इस स्थिति की प्राप्ति या अप्राप्ति का लक्ष्य साक्षी है। यदि सत्य की अग्नि की एक चिन्

[शेष पृष्ठ ११ पर]

वेदों के प्रति महर्षि की प्रेरणा क्यों?

[श्री प० नरदेब जी शास्त्री वेदतीर्थ कुलपति गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालामपुर]

मास्तीय विचारधारा के अनुसार विद्याये दो प्रकार की हैं।

(१) परा (२) अपरा

अपरा वेद विद्या ऋग्, यजु साम, अथर्व के रूप में।

परा 'यया तद्वचरमधि गम्यते'

परा वह विद्या है जिससे अक्षर अविनाशी पर ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाय।

जसे नदी के दा किनारे हाते है। 'आर' अर्थान् इधर का किनारा पार' अर्थान् दूसरी ओर का किनारा अथातो ब्रह्म जिज्ञासा वेदान्त दर्शन का सूत्र है।

इस सूत्र में स्पष्ट कहा गया है कि अर्थोति वेदाध्ययनानन्तरम् अर्थान् वेदों के अध्ययन के पश्चान् ब्रह्म जिज्ञासा।

इससे स्पष्ट है वेदों की चरमसीमा है वेदों का पार अथवा वेदों का सिद्धान्त।

तज्जलानिति शान्त इत्युपासीन् (वेदान्त सूत्र) अर्थान् यह सृष्टि 'तज्ज' उस परमात्मा से उत्पन्न हुई 'तज्ज' यह सृष्टि उसी में लीन हो जाती है। तदन अर्थान् यह सृष्टि चराचर रूप उसी में स्थिर रहती है। अर्थान् सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति प्रलय का हेतु परमात्मा है। शम दमादि साधन सम्पन्न हाकर शान्त मन से उसी को जानने की चेष्टा करनी चाहिए।

वेद के विषय में सब शास्त्रकार ब्राह्मणकार सब उपनिषत्कार एक मत है कि अन्त में वेदों का तात्पर्य यही है वेदों में तैत्तिरीय जड देवताओं का वर्णन है पर जन्म चेतना शक्ति है उसी पर ब्रह्म की।

समस्त वेद जिस पद का कहते हैं जिस पद की प्राप्ति के लिये सब ऋषि मुनि महात्मा तप का आश्रय लेने हैं वही ता वह पद है जिसके विषय में थोड़ा सा निर्देश करके वेद चुप हो जाते हैं। जिसके विषय में



आचार्य श्री नरदव जा शास्त्री

ब्रह्मज्ञानी भी कहते हैं कि—

न शक्यते वर्णयितुं तदा गिरा।

स्वयं तदन्त करणेन गच्छते॥

अर्थान् वह वाणी का विषय नहीं है जो उसके विषय में कोई कुछ कह सके, वह स्वस्ववेद्य है। अर्थान् अन्तर्मुख स्वान्त करण से ही जाना जाता है।

ब्रह्म की अनिर्वचनीयता के विषय में पाश्चात्य और पौरस्त्य पण्डितों में भिन्न भिन्न विचार हैं। बाहर से भीतर को जाना और भीतर इसका साक्षात्कार करके फिर बाह्य जगत् के उपर दृष्टि डालना। इसलिये भारतीय ब्रह्मज्ञानियों ने कहा—

यतो यतो निवर्तते ततस्तत् प्रमुच्यते। निवर्तनाद्धि सर्वत न वेत्ति दुस्त्वमखपि, मन जिस जिस विषय से हटता जाय उधर-उधर से छूटता जाता है। इस तरह

हटते हटते जब-जब अन्तर्मुख हो जाता है साक्षात्, आत्म दर्शन हो जाते हैं, तब उसको अणुमात्र भी दुख नहीं होता।

यह साक्षात्कार सकारों पर निर्भर है। जिनके पूर्व जन्म के तीव्र सकार हो और इस जन्म में भी तीव्र उपाय हो वे सहज ही में आत्म अथवा परमात्म दर्शन कर लेते हैं।

पूर्व जन्म के सकार	इस जन्म के उपाय
(१) मृदु सकार	(१) मृदु
(२) मृदु सकार	(२) मध्यम
(३) मृदु सकार	(३) तीव्र
(४) मध्यम सकार	(४) मृदु
(५) मध्यम सकार	(५) मध्यम
(६) मध्यम सकार	(६) तीव्र
(७) तीव्र अविमात्र सकार	(७) मृदु
(८) तीव्र सकार	(८) मध्यम
(९) तीव्र सकार	(९) तीव्र

इस्मीलिए गीता ने कहा है कि—

शाने शाने निवर्तेत। बुद्धया प्रतिगृहीतया।

आत्मसस्य म कृत्वा। न किञ्चिदपिचिन्तयेत्।

ससार से धीरे धीरे हटना चाहिये, बुद्धिपूर्वक हटना चाहिये। और इस प्रकार हटते-हटते मन को आत्मा में रख कर अर्थात् आत्मा के साथ रखकर परब्रह्म का साक्षात्कार करना चाहिये।

इस योग्यता के लिए ही आश्रम व्यवस्था की श्रेणियाँ हैं। साधारण जन के लिये धर्म शास्त्र का आदेश है—आश्रमादाश्रमम् गच्छेत्।

जा तीव्र सकारी जीव हैं वे वैराग्य की भावना जागृत होते ही ससार से विरक्त हो सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि वेद की चरमसीमा ब्रह्म है।

जिसका आरम्भ ब्रह्म जिज्ञासा से और समाप्ति ब्रह्म प्राप्ति में होती है।

जो ब्रह्म की बातें करता है वह ब्रह्म को नहीं जानता। जो उसको जानता है वह कह नहीं सकता वह तो गेगे का गुड है। वस्तुतः ब्रह्म एक पहली है, जो पहली बूझने गया वह फिर इधर का नहीं रहा, जिसने उधर को भ्रम का वह फिर इधर कहाँ ?

नेने की बय जिन्ना के मद्रच्च को इस थग मे

महर्षि दयानन्द ने सबसे अच्छी प्रकार जाना और दूसरों को उससे परिचित कराया।

श्रृंगार्य चाहते थे कि उन्होंने वेदों द्वारा जिन रहस्य को प्राप्त किया है उसे दूसरे भी समझ और जान सके इसीलिये श्रृंगार्य ने मर्यादा बनायी “वेदों का पठना पढ़ाना सब आयों का परम वर्म है” वेदों के साथ मन माने अर्थ कर जो अत्याचार किया गया उसमें वेद माता की रक्षा महर्षि ने की। महर्षि ने हमें वेदों के आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक अर्थों द्वारा समझाने का प्रयत्न किया, वेद जीवन की व्याख्या हैं जीवन में परे की कोई चीज नहीं।

आर्य जनों पर वेदोन्नति का महान् दायित्व है यद्यपि आज वेदों का नाम लेने का एक फैशन चल पडा है पर महर्षि की स्मृति हमें “को वेदानुद्धरिभ्यति” के गम्भीर उक्तदायित्व की प्रेरणा दे रही है। वेदों के सम्बन्ध में हमारे सब प्रयत्न ही यही प्रत्येक आर्य की महर्षि के प्रति सभी श्रद्धाजलि हो सकती है।

उपदेशेन वर्तामि

[पृष्ठ ६ का शेष]

गर्भी भी जीवन की वेदी में नहीं डाली जा सकी तो जीवन में स्थूल (भौतिक ऐश्वर्यरूपी) समिधाओं का चाहे जितना ऊँचा ढेर लगा हो, उसमें प्रकाश उत्पन्न नहीं हो सकता। जीवन के स्थूल उपकरणों की समिधाओं को सत्य की अग्नि से उद्योति में परिणित करना ही जीवन की सच्ची सफलता है। सत्य में नियुक्त जीवन सबको स्वीचता है कोरा प्राज्ञावाद रुचिकर नहीं होता। कोरे उपदेश की गति तो ऐसी है जैसे—

उर्ध्व बाहुविराम्येष नहि कश्चिच्छृणोति मे।

ऊँची बाह उठाकर धर्म की पुकार कर रहा हूँ,

लेकिन कोई सुनता ही नहीं।

महर्षि दयानन्द के पवित्र जीवन की घटनाये जीवित उपदेश बनकर हमारा पथ-प्रदर्शन कर रही है हम साधना के बिना सफलता चाहते हैं उन्होंने साधना के द्वारा सफलता प्राप्त की हम भी सफलता के लिये श्रृंगार्य जीवन का अनुकरण करे सफलता हमारा वरण करेगी। महर्षि-निर्वाण का यही पवित्र सन्देश है।

आदर्श मानव दयानन्द

[रच०—श्री प्रकाशचन्द्र कविरत्न, आर्यसमाल अजमेर]

शुरू देव ऋषि दयानन्द, आदित्य ब्रह्मचारी,
बैठे थे गंगा तट पर, था दृश्य मनोहारी ।

इतने में एक नारी, दुर्दैव की सतायी,
प्रिय पुत्र का लिए शव, रोती विलखती आयी ।

था मास नहीं तन पर, बस सूखी हड्डियाँ थीं,
आसँ धँसी हुई थी, गालों पेँ भुर्रियाँ थीं ।

मुरझाया हुआ मुख था, बिखरे थे केश सारे,
थे पाँव लडखडाते, मग मेँ लुधा के मारे ।

ढकने को लाज तन की, कपड़ा नहीं था पूरा,
बैठे की लाश पर भी था हाँ ! कफन अधूरा ।

थी एक ही तो रस पर, जर्जर मलीन साडी,
हाथों से वही उसने, थी बीच मे से फाडी ।

साडी का एक टुकड़ा, उसने पहन लिया था,
और दूसरे से अपने, सुत का कफन किया था ।

आधा कफन भी उसने, सुत लाश से उतारा,
फिर बे कफन वहाया, गंगा मेँ पुत्र प्यारा ।

अति करुणा पूर्ण ऋषि ने, जब दृश्य यह निहारा,
आँखों से लगी वहने, आँसू की प्रबल धारा ।

चाचा के मरण पर भी, आँसू न एक निकला,
भगिनी के निधन पर भी आँसू न एक निकला ।

देखी दुर्मी, दरिद्रा, जब एक-देश नारी,
रोये, वो विकल होकर, परमार्थ के पुजारी ।

सोचा लगे थे जिनके ठट, वस्त्र अन्न धन के,
हाँ ! शाक, आज उनको, लाले पडे कफन के ।

बन्धन मेँ प्रसन्न करते, क्रन्दन है देश के जन,
मैं कर रहा हूँ बैठा, एकान्त मोक्ष चिन्तन ।

मैं मोक्ष का अन्वेष्टा, आनन्द न चाहूँगा,
कल्याण पथ करोडों, मनुजों को बताऊँगा ।

व्रत ब्रह्मचर्य सेवा, का प्रिय पुनीत धारा,
जग-साय भिदाने को, श्रीवल 'प्रकाश' धारा ।

लखनऊ में गोमती नदी में भीषण बाढ़ !

आर्य्य प्रतिनिधि सभा का नारायणस्वामी-भवन नष्ट

अक्टूबर के प्रथम सप्ताह की भीषण वर्षा के कारण लखनऊ में गोमती नदी में भयंकर विनाशकारी बाढ़ आ गयी। जिससे आधा लखनऊ शहर जलमग्न हो गया। अचानक बाढ़ के आ जाने से गोमती नदी का बाँध टूट गया, जिसने विनाशकारी दृश्य उपस्थित कर दिया। इस बाढ़ से छोटा-बड़ा, कोई न बच सका। सरकार के अनेक कार्यालय, बड़े आदमियों की कोठियाँ और गरीबों के मकान सब डूब गये।

आर्य्य प्रतिनिधि सभा का नारायणस्वामी भवन एकदम पानी में धिर गया। चारों ओर ३३, ४-४ फुट पानी हो गया। समस्त क्वार्टरों में पानी भर गया। किरायेदार छोड़-छोड़ कर सभा भवन के हाल में और कमरों में आ गये। कुछ अपने बाल-बच्चों को लेकर भाग गये।

आर्य्य भास्कर प्रेस में पानी घुस गया, और मशीनें व मोटर पानी में डूब गये। अष्टमस्क छप रहा था, वह छपना बन्द हो गया। कोठी में पानी के प्रवेश की आशंका से रात को १ बजे व्यवस्थापक जी ने प्रेस में से सब छपे और बिना छपे कागज तथा आवश्यक सामान निकाला, और कार्यालय में ले गए। इसलिए वे नष्ट नहीं हो सके।

पानी की तेजी ने नारायणस्वामी-भवन की दीवारें हिला दी। जिससे समस्त सभा भवन में दरारें पड़ गयीं। सब कमरे खिल गये। भवन का प्रत्येक कमरा नष्ट हो गया। सब कर्मचारी अपने-अपने कमरे छोड़ कर यज्ञशाला पर पहुँच गये। पानी ने पूर्व और दक्षिण की दीवार तोड़ दी जिससे पानी बाहर निकल उठा। दो तरफ से पानी आता था, और एक तरफ से निकलता था।

नरही बाजार, हजरतगज बाजार, आस पास की सड़कों पर तीन-तीन, चार-चार फुट पानी चल रहा था। नरही और हजरतगज में नाये चल रही थीं। रज़ा का भार फौज को सौंपा गया था। फौजी टुक बाढ़ में घिरे लोगों को ढोते थे, और हवाई जहाज खाने पीने का सामान ऊपर से घिरे लोगों को डालते थे। इस में बहुत-सा पानी में ही गिर जाता था।

इस अवसर पर आर्य्यसमाज गणेशगज ने अपना कैम्प खोलकर दूध भोजन, कपड़ा आदि बाँटकर प्रशासनीय सेवा की है।

अब बाढ़ घट रही है, पानी का आना जाना बन्द है। मगर कोठी में पानी भरा हुआ है। सभा भवन का प्रत्येक कमरा नष्ट हो गया है, केवल हाल बचा है। सभा को अब इसके बनाने के लिए हजारों रुपया चाहिए। कार्यालय और प्रेस का काम बन्द है, यह अठ्ठ दूसर प्रेसों में छपवा कर भेजा जा रहा है। अगला अठ्ठ ३० अक्टूबर का बन्द रहेगा। ६ नवम्बर का अठ्ठ अगर बाहर प्रबन्ध हो सका तो निकालने का प्रयत्न किया जायगा। आर्य्यसमाजों को और आर्य्य पुरुषों को तुरन्त सभा को धन भेजकर इस समय सभा की सहायता करनी चाहिए।

—प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०
मन्त्री

अनुपम ज्योति के प्रेरणा स्फुलिंग

[ले०—श्री कु० कृष्णाकपूर एम० ए० एल०टी०, इलाहाबाद]

दीपमालिका का पावन पर्व नवजीवन का नवोत्साह लिए जीवन में उल्लास को नव रेखाये अंकित करने हेतु हम लोगों के मध्यस्थ आ गया। आज का पर्व हम वैदिक धर्मावलम्बियों के मानस-पटल पर एक अभिन्न स्मृति सजग करता है। आज के दिवस ही भारत की महान् विभूति, ज्योतिषुज देव दयानन्द विश्व के रगमच से तिरोहित हुई थी। वस्तुतः वह अपूर्व ईश्वर-निष्ठा, आत्म-विश्वास, अखण्ड ब्रह्मचर्य, अनुपम आत्म-त्याग स्वदेशानुराग और दिव्य आभाओं से परिपूर्ण जग-मगते हुए ज्योतिषुज थे, जिसका प्रकाश युगानु-युग तक अजुष्ट रहेंगा। यह दीपमालिका हमें उस महापुरुष की जीवन गत महत्त्वपूर्ण घटनाओं का स्मरण दिलाती है—

उस ज्योतिषुज का पहला स्फुलिंग 'प्रभु में अटूट विश्वास' के रूप में हमारे सममुख आता है। उनकी जीवन की घटनायें "न अरय क्षीयन्त उतय" अर्थात् प्रभु की रक्षा सामर्थ्य का कुछ अन्त नहीं पाया जा सकता, के तन्मय में अक्षरशः विश्वास करती प्रतीत होती है। मगलमय विभु की रक्षा सामर्थ्य में तो उन्हें लेशमात्र भी सन्देह न था, हां भी कैसे प्रभु के अनन्य भक्त का तो सर्वत्र मित्रत्व की दृष्टि का ही जो आभास मिलता है।

दूसरा स्फुलिंग 'मातृभाषा के प्रति अनुराग' के रूप में प्राप्त होता है। वेद के तथाकथित मन्त्र 'इत्था सरस्वती मही निस्त्रा देवीं महो भुव। वीहि सीदद्व सिध', अर्थात् मातृभाषा, मातृ-सभ्यता और मातृ-भूमि यह तीन देवियाँ कल्याण करने वाली है। अतएव हमारे अन्तःकरण में न भूलती हुए बैठे, मे महर्षि की पूर्ण आस्था थी। आस्था ही नहीं, बल्कि जीवन में इसे पूर्णतया जहाँ उतारा वहाँ इसका प्रचार भी किया। उनकी विचारधारा तो ऐसी थी कि "जो इस देश का अन्न खाकर, जल पीकर तथा सास लेकर इस देश की आर्य भाषा को नहीं जानता, वह धर्म का भी पालन करता है या नहीं, इसमें भी सन्देह है।" अन्यत्र

उद्यपुर में एक सज्जन के प्रश्न का उत्तर देते हुए भी इस प्रसंग की दिशा का स्पर्श करता हुआ मक्रेत हमें उपलब्ध होता है कि "एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाये विना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर कार्य है। सब उन्नतियों का केन्द्र ऐक्यभाव है। जहाँ भाषा, भाव और भावना में एकता आ जाए, वहाँ समुद्र में नदियों की भांति सब सुख एक-एक करके स्वयं प्रवेश करने लग जाते हैं।" ऐसी थी ऋषिवर की भावनायें। तथाकथित उद्देश्य पूर्ण हेतु पूर्णतया ब्रह्म प्रयत्नशील भी रहे। आत्मत्याग की तो वह साक्षात् प्रतिमूर्ति ही थे। किसी प्रकार का कोई प्रलोभन उन्हें अपने पाश में बाँधने की सामर्थ्य कैसे कर सकता था क्योंकि वह "द्विरसमयेन पात्रेण सत्य-स्यापिहितं मुखम्" के तत्त्व का पूर्णतया समझने थे और प्रभु की महती अनुकम्पा से यह आवरण सत्य धर्माय दृश्ये" उठ गया था, उन्हें तो सर्वत्र प्रकृति में अपने प्रिय प्रभु की आभा, ज्योति दृष्टिगत होती थी और इस प्रभुज्योतिक का प्रकाश योगानुभूति से अनुभव कर वे स्वयं प्रकाशवान् ज्योतिषुज हो गये।

उनके ज्योतिषुज जीवन से विभिन्न स्फुलिंग सर्वत्र, विभिन्न विषयों पर अपनी आभा विकीर्ण करते प्रतीत होते हैं। वेदरूपी गाय का अमृतमय दुग्ध पानकर जहाँ वह महातेजस्वी परिव्राट दयानन्द बने, वहाँ उन्होंने मृत्युञ्जयपद का प्राप्त भी किया और मृत्यु दशय भी गुरुदत्त जैसे नास्तिक के हृदय में एक विद्युत् संचार कर गया। उसने अन्तर में प्रश्न किया कि इस जीवन की अवसानवेला में मंत्रोच्चारण करते करते इनके मुखों पर मुस्कराहट क्यों है ? यह मुस्कराहट ही मानां गुरुदत्त के लिए समझा बन गई। वह सोचता है कि कोई का जिसका शरीर गल रहा है जिसे किसी प्रकार का सुख नहीं और जो जेल खाने में कैद है, पूछा जाये कि इन सारी विपत्तियों और कष्टों से छूटने के लिए क्या मरना चाहते हो, तो मरने

का नाम सुनकर वह भी कानों पर हाथ रखता है। मृत्यु इतनी भयावनी है। वहाँ मृत्यु इस महान् पुरुष के सम्मुख उपस्थित है परन्तु वह इस प्रकार मुस्करा रहा है, मानों किसी विडुडे हुए से मिलाप हो गया। स्वामी जी की मुस्कराहट क्या थी मानों वह विद्युत् थी जो पड्डिन गुरुदत्त के हृदय में गिरी और उसमें जो कुछ नाग्निकता का कूडा करकट जमा हो रहा था, उसको उस ज्ञान विद्युत् धारा ने भस्म कर दिया। तत्पश्चात् गुरुदत्त एक उच्च श्रेणी का आश्रितक बन गया। दीपमालिका के पर्व पर महर्षि का निर्वाण दिवस हमें अभिनव सन्देश देता है। एक कवि के अनुसार—

“वल्लिदान तुम्हारा अमर ऋषि,
नित नई प्रेरणा देता है।
नस नस में विजली सी चमका,
कर्त्तव्य की आर बढ़ाता है।
तुम अमर हुए और भारत में,
नव जीवन का सचार किया।
अपना सर्वस्व निद्धावर कर,
भारत का पुनरुद्धार किया।
युग युग के आत्याचारों से,
पीडित जननी की हरी पीर।
लां श्रद्धाजलि दे अमर वीर,
इस प्रकार—
“देकर हमको अमर दीप वह,
चला कभी फिर आने का।
हमें जलाये रखना है यह,
जग को आर्य बनाने का।”

यह ‘अमर दीप’ क्या है, एवं ‘इसे जलाये रखना है जग को आर्य बनाने का’, हमारे समक्ष एक प्रश्न उपस्थित करता है। दीपमालिका के दिन सायकाल हम कौंटे कौंटे दीपों से अपने अपने गृहों को प्रखलित करेंगे। पर यह क्षणभंगुर दीप कुछ प्रकाश कर तमिसा में हमें छोड़ देगे। बुझ जायेगे यह भौतिक दीप, किन्तु जलता रहेगा वह देव दयानन्द का अमर ज्ञान प्रदीप। जो कितने ही निष्प्रभ दीपों को जलाने की क्षमता रखता है, जो युग-युगान्तर तक अनेकों

महर्षि दयानन्द

—श्रीकारनाथ मिश्र‘स्वदेश’
लखीमपुर, खीरी

★

सेवक थे स्वामी थे
सखा थे शूर मेनापति,
साहसी श्वतन्त्र थे
‘स्वदेश’ सदाचारी थे।
दीन दुखी आरत के, मालु-भूमि भारत के,
पावन परम पद पकज पुजारी थे ॥
लाज हिन्द की थे सर—
ताज हिन्दुओं के रहे,
विजयी विशाल वीर—
वर व्रतधारी थे।
द्रवित दया से दयानिधि थे दयानन्द थे,
धन्य जननी के लाल बाल ब्रह्मचारी थे ॥
प्रखर पराक्रमी
प्रवर महापण्डित थे
प्रनुर प्रभा से पूर्ण प्रवल प्रवाल थे।
भासमान भारत के भाग्य थे भरत थे कि,
भक्त भारती के
भव्य भावुक विशाल थे।
द्रवित दया से दयानिधि थे दयानन्द कि,
धारे शीश चारु चन्द्रिका का चन्द्रमाल थे।
वीर वल्लभान गुन—
वान थे महान् थे कि
आर्यमा समान आर्य माँ के आर्य-लाल थे ॥

हृदयों में ज्ञान स्फुलिंग डालकर मार्ग निर्देशन करने में सामर्थ्य सम्पन्न रहेगा।

आज का निर्वाण दिवस हमें यही अभिनव सन्देश देता है कि उस अमर दीप ज्योतिपुज देवदयानन्द की ज्ञान-ज्योति से नव आभा, आलाक, प्रेरणा, प्राप्त करें। एवं मंगलमय, ज्योतिर्मय प्रभु से प्रार्थना करें, कि उस अनुपम ज्योतिपुज देवदयानन्द का ज्ञान ज्योति से हमें एक नया स्फुलिंग, हमारे अन्तर में नूतन जागृति और चेतना का सचार करा करके ही इस दीपमालिका को हमसे विद्या बिलाइये। *

उत्तर प्रदेश में

सिंचाई की सुविधाओं में वृद्धि

सन् १९४६ में जहां केवल १७,८२४ मील लम्बी नहरें थी और नलकूपों की संख्या १८४७ थी

प्रथम पंचवर्षीय आयोजन की अवधि में—

४,००० मील लम्बी नई नहरें बनायी गयीं और

२८०० नये नलकूप तैयार किये गये

इनके अतिरिक्त अनेक महत्वपूर्ण बांधों और जलाशयों का निर्माण हुआ

तथा

कुछ छोटी सिंचन-योजनायें भी पूरी की गयीं

इनके फलस्वरूप आयोजन की अवधि पूरी होने तक—

प्रदेश में सिंचित क्षेत्र ६६.७६ लाख एकड़ हो गया

द्वितीय आयोजन में बड़ी सिंचन योजनाओं पर २६ करोड़ तथा

छोटी योजनाओं पर लगभग १३ करोड़ ५८ लाख रुपया

खर्च करने का प्राविधान है ।

सिंचाई की सुविधाओं के विस्तार से

स्वाद्योत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण सहायता मिलेगी

संख्या-११

ऋषि जीवन के प्रभावशाली अन्तिम क्षण

[नास्तिक गुरुदत्त आस्तिक बन गये]

सन् १८८३ में जैसे ही महर्षि दयानन्द की अस्वस्थता का समाचार लाहौर पहुँचा, आर्य जनों में चिन्ता व्याप्त हो गयी। देश की अन्य बड़ी बड़ी आर्यसमाजों की भाँति लाहौर आर्यसमाज की ओर से श्री ला० जीवन दास जी और श्री प० गुरुदत्त जी का प्रतिनिधि रूप में स्वामी जी की सेवा में अजमेर भेजा गया। यद्यपि गुरुदत्त जी का नम्बर इस सम्मान के लिये बहुत पीछे आता क्योंकि वे अभी १६ वर्ष के ही थे। परन्तु ज्ञान अनुभव, प्रभाव और लगन में वे इतने बड़े चढ़े थे कि वह सबके नेता गिने जाते थे। गुरुदत्त लाहौर आर्यसमाज के क्षेत्र में छोटे दार्शनिक (Young Philosopher) और हॉनहार नवयुवक के नाम से प्रतिष्ठित थे।



गुरुदत्त अजमेर पहुँचे। ऋषि के इलाज में भाग लेते रहे। ऋषि का आराम न हुआ, न हुआ। सारा शरीर फुन्सियों से भर गया। शरीर बहुत दुर्बल हो गया था, प्रत्येक साँस के साथ सख्त पीडा हो रही थी। इतना भारी कष्ट और मुह से 'आह' तक का न निकलना सचमुच आश्चर्य की बात थी। गुरुदत्त भी चकित थे। बड़े ध्यान और कौतूहल पूर्ण दृष्टि से ऋषि की ओर देखते। समझ में न आता था कि यह अद्भुत महान व्यक्ति किस प्रकार का है? इतना कष्ट और फिर शान्त। ब्रह्मचर्य, योग और ईश्वर विश्वास का क्रियात्मक सन्देशवाहक अपना असर लाया। गुरुदत्त में एक तीव्र परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ। जिस समय ऋषि प्राणायाम द्वारा अपने प्राणों को त्यागने वाले थे ठीक उस समय ऋषि के अन्तिम शब्द यह थे "हे दयामय ! हे सर्व शक्तिमान ईश्वर ! तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। अ हा ! तैने अच्छी लीला की।" यह सुन गुरुदत्त मन्त्र मुग्ध से रह गये। उन पर जादू का सा असर हुआ। उन्हें जो चीज न्यूटन और बेकन के अध्ययन ने न दी, जो वस्तु वह दार्विन और स्पेन्सर से प्राप्त न कर सके, वह वस्तु उन्हें ऋषि दयानन्द की मृत्यु ने प्रदान की।

श्री प० गुरुदत्त जी विद्यार्थी किस प्रकार का है ? इतना कष्ट और फिर शान्त। ब्रह्मचर्य, योग और ईश्वर विश्वास का क्रियात्मक सन्देशवाहक अपना असर लाया। गुरुदत्त में एक तीव्र परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ। जिस समय ऋषि प्राणायाम द्वारा अपने प्राणों को त्यागने वाले थे ठीक उस समय ऋषि के अन्तिम शब्द यह थे "हे दयामय ! हे सर्व शक्तिमान ईश्वर ! तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। अ हा ! तैने अच्छी लीला की।" यह सुन गुरुदत्त मन्त्र मुग्ध से रह गये। उन पर जादू का सा असर हुआ। उन्हें जो चीज न्यूटन और बेकन के अध्ययन ने न दी, जो वस्तु वह दार्विन और स्पेन्सर से प्राप्त न कर सके, वह वस्तु उन्हें ऋषि दयानन्द की मृत्यु ने प्रदान की।

गुरुदत्त ने देखा कि एक ईश्वर विश्वासी मनुष्य किस शान्ति के साथ जीवन लीला समाप्त कर सकता है, और मृत्यु में भी ईश्वर की महिमा को देख सकता है। महर्षि के इस ईश्वर विश्वास का गुरुदत्त पर अमिट प्रभाव पडा। गुरुदत्त भी ईश्वर विश्वास के रंग में रंग गये, यह रंग अमिट था। गुरुदत्त चले थे ऋषि का रोग नाश करने पर इसके विपरीत ऋषि ने गुरुदत्त के सशय रोग का बीज नाश कर दिया। जो गुरुदत्त सशयशील वृत्ति और नास्तिकता के भावों के साथ अजमेर पहुँचे, वे अजमेर से पक्के ईश्वर विश्वासी आस्तिक बन कर लौटे।



वैदिक-युग में—

पशु-वलि प्रथा नहीं थी



(गौतम बुद्ध की एक साक्षी)

[ले०—श्री प० गंगाप्रसाद जी एम० ए०, रि० चीफ जज, भू० पू० प्रधान सार्वदेशिक सभा]

महात्मा गौतम बुद्ध उस युग में हुए जब इस देश में यज्ञों में हिंसा की जाती थी। उन्होंने अपनी शिक्षाओं के द्वारा अहिंसा का प्रचार किया। अहिंसा का प्रभाव इतना अधिक हुआ कि पशुवलि बिल्कुल बन्द हो गई, पर इसी प्रभाव में यज्ञ पद्धति भी समाप्त हो गई। वास्तव में गौतम बुद्ध का यज्ञों से कोई विरोध नहीं था, उनका विरोध तो यज्ञों में होने वाली हिंसा से था। उनका यह हिंसा विरोध उचित था। महात्मा गौतम बुद्ध ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि वैदिक समय में गौ का वध या पशुवलि नहीं होती थी, और इस प्रकार उन्होंने यज्ञों में पशु वलि का निराकरण कर वैदिक भावना को ही पुनर्स्थापित किया था।

आज प्रायः गौतम बुद्ध के यंत्रों में पशुवलि निराव सम्बन्धी निर्देशों का आधार मान कर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है, कि गौतम बुद्ध से पहले यज्ञों में जो हिंसा की जाती थी, वह वेदानुसूल थी और इस प्रकार वैदिक युग में यज्ञों में हिंसा सिद्ध होती है, परन्तु यह मान्यता गौतम बुद्ध की भावना के विरुद्ध है। गौतम बुद्ध यह स्वयं कहते थे कि वैदिक समय में गौवध या पशुवलि नहीं होती थी। गौतम बुद्ध के इस कथन की साक्षी में ब्राह्मण वर्माय सुते नामक ग्रन्थ में एक कथा आती है, जिसका उल्लेख बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध विद्वान् एव लेखक श्री राहुल साकृत्यायन ने अपनी 'बुद्ध चर्या' नामक पुस्तक में किया है कथा इस प्रकार है—

श्रावस्ती में पाँच सौ शिक्षित ब्राह्मणों का समूह महात्मा बुद्ध के पास गया, और पूछा कि वैदिक युग के ब्राह्मण गौ वध करते थे या नहीं? महात्मा बुद्ध

ने वैदिक युग के ब्राह्मणों का बड़ा सुन्दर चित्र दिया। कुछ भाग इस प्रकार है, कथा के शब्दों में बुद्ध ने कहा—

पुराने ऋषि सयमी व तपस्वी होते थे। वे स्वाध्याय धन वाले होते थे। वे ४८ वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन करते थे। वे तदुल, घी, तेल आदि का यज्ञ करते थे। जब तक लोक में रहे राजा सुखी रही। शन शन राजाओं का सम्पत्ति मकलन, खिया, उत्तम घोड़े, जुड़े रथ, बड़े मकान आदि देखकर उनमें उलटपन आ गया, तब उन्होंने लाभ किया।

तब वे मंत्रों को रचकर इच्चाकु के पास गये तब ब्राह्मणों के चिताये जाने पर राजा ने अश्वमेध, पुरुषमेध, बाजमेध यज्ञ किया और एक एक यज्ञ करके ब्राह्मणों का धन दिया। लाभ में पड़कर उन ब्राह्मणों की लृप्णा बढ़ी, वे मंत्र रचकर फिर इच्चाकु के पास गये, तब ब्राह्मणों से प्रेरित होकर रथप्रभ राजा ने अनेक सौ व हजार गौ यज्ञ में हनन की, जो न पैर मारती थी, न किसी अंग से मारती थीं, तथा जो घड़े भर दूध देती थी, उन्हें सींग पकड़ कर शस्त्र से राजा ने मारा। तब देवता, पितर, इन्द्र अमुर, राक्षस चिल्ला उठे कि अधर्म हुआ, जो गाय के ऊपर शस्त्र उठा।

ऐसा सुनकर उन सब ब्राह्मणों ने बुद्ध का शिष्य होना स्वीकार किया।

महात्मा बुद्ध की उपर्युक्त साक्षी, कि वैदिक युग में गौ वध नहीं होता था, पीछे के ब्राह्मणों ने अपने लोभ से वैदिक साहित्य में मंत्र गढ़कर मिला दिये जिनसे गौ वध होने लगा, बड़े महत्व की है। सभ्य है कि शतपथ व ऐतरेय ब्राह्मणों में जो पशुवलि का (शेष पृष्ठ २८ पर)



ज्योति बुझ न सकेगी



[ले०—श्री ५० रघुवीरसिंह जी शास्त्री, मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली]

गहन निराशा निशा के घने आवरण के मध्य, सिसक्ती, थिलथती शान्ति सत्य की छाया, आज केवल एक प्रश्न चिह्न लेकर समस्त मानव जाति के सम्मुख उपस्थित है कि शाश्वत आनन्द की प्राप्ति का जो दीप्त मार्ग, देव दयानन्द ने प्राणों की आहुति देकर, ज्योतित किया था, उस पथ पर भावी मानव मतान चल पायेगी या नहीं ? आशा की वह स्वर्णिम दीप पत्कियाँ जिनमें दयानन्द ने प्राणों की आभा से जीवन डाला था, हम उस जीवन का भी जीवित रख पायेंगे या नहीं ?

किसमे भूला है कि वर्तमान युग निर्माण में शांति का सत्य का, आनन्द और ज्ञान का प्रशस्त पथ अन्वेषे दयानन्द ने दिखाया था। उस महा मानव ने जाति पाति के टुर्गम गढों का गिरा कर, सर्कारिता की थोथी दीवारें मिटाकर, अज्ञान, अंधकार के चक्र में भटकती करोड़ों आत्माओं को उबार कर पावन प्रेम की एक ऐसी अमृत गंगा प्रवाहित की थी जिससे धरती के समस्त पाप ताप, कष्ट, क्लेशा नष्ट हो, युग का अभिनव अभ्युदय आरम्भ हुआ था।

पश्चिम के छिपते सूर्य को उदय का प्रतीक मान जब भौतिकवादी विनाश-मार्ग पर सारा देश तीव्र गति से दौड़ने पर तत्पर था तब सत्य का उद्घोषक देव दयानन्द ही था जिसने हमारे नेत्र खोल प्रात के उगते हुए सूर्य की लाली से प्रखर अध्यात्मवाद की मजुल किरणों से हमारे अन्दर को पूरित कर, उसमें जीवन की शांति की सच्ची आधारशिला स्थापित की थी। उस महर्षि ने राह दिखायी, ज्ञान दिया, प्रेरणा भरी और दीपमालिका के दिन जब अग्रणीत दीप भारत-बुसुंधरा पर टिमटिमा रहे थे विदा ली। उनकी विदाई बलिदान का वह गौरवपूर्ण अध्याय है जिसकी तुलना विश्व इतिहास के प्रद्यो के खोजने से भी न

मिलेगी। परन्तु आज विचारणीय यह है कि क्या उनके बलिदान की पावन स्मृति में हम उनके अनुयायी उन्हें स्मरण करने का अधिकार भी रखते हैं या नहीं ?

क्या अपने महान् गुरु विश्व उन्नायक देव दयानन्द के जीवन के अन्तिम क्षणा की स्मृति हमारे हृदयों में उनके द्वारा आरम्भ किये महान् लक्ष्य को पूर्ण करने की भावना भर सकेगी, या नहीं ?

उठाकर देखिये चारों ओर अपनी दृष्टि, प्रतांत होगा कि समस्त धरती का बल आज दयानन्द के आदेशों को मिटाने चला आ रहा है। भौतिकवाद के प्रवाह का अनधड, जाति पति की लहरें सिर उठाये घूम घुमडकर बढ़ती हुई आज हमें, दयानन्द के अनुयायियों का चुनौती दे रही है।

किन्तु सोचिये क्या कर रहे हैं आप स्थिति का सामना करने के लिए ? सच्चे हृदय से विचार तो कीजिये।

इस दीपमाला के दिन समस्त दयानन्द के अनुयायियों को अपने हृदय मन्दिर और समाज मन्दिर में बैठकर सोचना होगा कि वे चाहते क्या हैं ? मर्दान् के आदर्शों का जीवन या उनकी समाप्ति ?

अब वह समय आ गया है जब हम अपने कर्त्तव्य का निश्चय करना ही होगा। देरी या उदासी से कार्य चलेगा नहीं। मार्ग केवल दो हैं। एक वह जिसे दया नन्द ने दिखाया था, दूसरा वह जिस पर आज सारा समाज भागा जा रहा है। इसलिए अविलम्ब निश्चय कीजिये कि आप जीवन चाहते हैं या मृत्यु ? विजय वरण करना या हार से ही प्यार करनेकी ठान ली है ?

सोचिये अपना उत्तर दायित्व समझिये और सकल्प कीजिए कि हम दयानन्द के शिष्य किसी भी

मूल्य पर ऋषि के महान् लक्ष्य को अधूरा न रहने देगे और जो निराशा, प्रमाद, वृट्टिया हम में आ गई हैं उनकी दीपमाला के दिन यज्ञ में आहुति दे, नये उत्साह एवं विश्वास के साथ भव्यभावी निर्माण में लगते हुए हम सभी सच्चे हृदय एवं ऊँचे स्वर से घोषणा करें कि 'दयानन्द की ज्योति कभी बुझ न सकेगी। चाहे जो भी क्यों न हो, जो उसे मिटाने का यत्न करेगा, उसे स्वयं समाप्त होना पड़ेगा।

व्रती को स्वर्ग बनाने के लिए सत्य शान्ति और न्याय की विमल पताका जन मन पर लहराने के लिए विजय दयानन्द के विजय संदेश की हांकी।

हमें विश्वास है कि सम्पूर्ण आर्य हृदय में नया विश्वास भर, आगे निरंतर आगे बढ़ने का निश्चय कर कार्य क्षेत्र में अवतरित होंगे। यही ऋषि के प्रति हमारा सच्चा शिष्यत्व हांकी।

महर्षि के कार्य

आनन्द सुधासार व्याकर पिला गया।
भारत को दयानन्द दुवारा जिला गया ॥
ढाला सुधार वारि, बढी बेल मेल की।
दरयो समाज-फूल फबोले खिला गया ॥ आनन्द०
काटे कराल जाल अविद्या अधर्म के।
विद्या-बधू को धर्म-धनी से मिला गया ॥ आनन्द०
खोलो कर्ह न पोल ढके ढांग ढोल की।
मसार के कुपन्थ मतो को हिला गया ॥ आनन्द०
'शङ्कर' दिया बुभ्नाय विवाली का देह का।
रुन्त्य के विशाल वदन में बिला गया ॥ आनन्द०
—श्री नाथूराम शकर जी शर्मा, 'शकर'

हर घर में पूरा दवाखाना मुफ्त

इलाज की सरल पुस्तकों समेत काफी वजन में ४५ दवाइयों का एक औषधालय करीब २००) कीमत काता केवल पेट्री बोतल शीशी आदि के ३७।) खर्च में मुफ्त मंगा ले। (१०) एडवांस मनीआर्डर से भेजकर २७।) की वी० पी० मजूरी दे पासके स्टेशन समेत पता लिखें।
पता—भरत आयुर्वेद भवन ललितपुर (भासी) उ० प्र०

वैदिक युग में पशु-वलि प्रथा नहीं थी

(घृष्ट २६ का शेष)

वर्षान है, वह इसी प्रकार के ब्राह्मणों की करतूत हो। बहुत से आर्यबन्धु इस दोष को वाम मार्गियों पर लगाते हैं। जो भी तथ्य हो यह खोज का विषय है पर गौतम बुद्ध की उपयुक्त साक्षी से यह सिद्ध और स्पष्ट है कि वैदिक युग में गौ वध नहीं होता था। यह साक्षी आर्य समाज की मान्यताओं के अनुरूप है और वैदिक युग को श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए प्रबल प्रमाण है। इस प्रमाण द्वारा उन आरोपों पर आर्य समाज का पक्ष विजय पाने में समर्थ है जिनमें प्राचीन वैदिक युग को दौषपूर्ण एवं निम्न कोटि का सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है।

हमें इस बात को स्वीकार करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए कि प्राचीन भारत में बुद्ध के समय और उनसे पूर्व भी बहुत सी बुराइयाँ आ गई थी, जिनमें यज्ञों में हिंसा और गौवध की दूषित प्रथाएँ भी थी।

जहा गौतम बुद्ध ने अपने प्रचार द्वारा उपयुक्त बुराइयों को दूर करने का सफल प्रयास किया वहा उनके प्रचार ने प्राचीन स्वरूप के प्रति सर्वथा उपेक्षा भी उत्पन्न कर दी। महर्षि दयानन्द को इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने अपने पाखण्ड खण्डन एवं अवैदिकता विरोधी आन्दोलन द्वारा वैदिक युग की मान्यताओं को शुद्ध स्वरूप में प्रचलित किया। यज्ञों में हिंसा नहीं होनी चाहिए, यह ठीक है, पर इसका यह अर्थ नहीं कि जीवन से यज्ञ पद्धति ही समाप्त कर दी जाय। इस प्रकार हम देखते हैं कि गौतम बुद्ध जिस सच्चाई को जानते और मानते हुए भी व्यावहारिक रूप न दे सके, महर्षि दयानन्द ने उसके लिए पूर्ण प्रयत्न किया। इस युग में महर्षि दयानन्द की प्रेरणा से ही ईश्वर के नाम पर होने वाली पशुवलि समाप्त हो सके है, और जो कुछ शेष है उसके समाप्त होने की आशा है। इस उपकार के लिए प्रत्येक भारतीय महर्षि के प्रति सदैव कृतज्ञ रहेगा। हम भी वैदिक युग की मान्यताओं को प्रसारित एवं प्रचारित करने में क्रियात्मक योगदान दे सके, यह हमारी महर्षि के प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।



वंगाल की क्रान्तिकारी विचारधारा पर—

महर्षि दयानन्द का प्रभाव पड़ा था



[ले०—श्री प० दीन वन्धु जी शास्त्री, आर्यसमाज कलकत्ता]

१८७० के प्रयाग कुम्भ में वंगाल के श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने स्वामी दयानन्द जी को वंगाल आने का निमन्त्रण दिया था। उस समय वंगाल में जो सामाजिक सुधार तथा धार्मिक आन्दोलन चल रहे थे, उन सबकी महर्षि दयानन्द के विचारों में विशेष रुचि थी। १८७२ के दिसम्बर मास में स्वामी जी कलकत्ता पहुँचे। कलकत्ता के प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने उनका शानदार स्वागत किया।

म० देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने दोनों पुत्रों, द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर और हेमेश्वरनाथ ठाकुर को स्वामी जी की सेवा में अर्पण कर छोड़ा था। कविवर रवीन्द्र जी इस सारे वातावरण की स्मृति रखते थे, महर्षि दयानन्द के उन्होंने चरण स्पर्श किये थे। महर्षि को उन्होंने वेद मन्त्र सुनाये थे। महर्षि ने उन्हें यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया था। श्री केशवचन्द्र सेन से स्वामी जी को बहुत स्नेह था, पर खेद भी था कि केशवचन्द्र सेन ईसाइयत की ओर बहुत झुके हुए थे और सश्रुतज्ञ नहीं थे। हाँ, केशवचन्द्र सेन जी की दो बातों को बख्शधारण करना, और हिन्दी में भाषण देना, स्वामी जी ने प्रेम से मानकर, तदनुसार आचरण करना आरम्भ कर दिया था। स्मरण रहे कि राजा राममोहन राय और केशवचन्द्र सेन दोनों सुधारकों ने अपने अपने समय में अपने अपने विचारों को हिन्दी में प्रकाशित किया था। अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में प० रामचन्द्र शुक्ल ने ४२६ और ४२७ पृष्ठ पर लिखा है कि राजाराम मोहनराय ने वेदान्त सूत्रों के भाष्य का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित कराया और 'वगदूत' नामक सहायपत्र भी हिन्दी में निकाला। वास्तव में भारत की एकता स्थापित करने में उत्तर प्रदेश की 'शौरसेनी प्राकृत' पिछले डेढ़, दो हजार वर्ष



श्री प० दीनवन्धु जी शास्त्री

से अखिल भारतीय भाषा का काम करती आई है। हिन्दी का आन्दोलन कोई नया नहीं है वह चाहे प्राकृत रूप में हो, या अपभ्रंश में, या हिन्दी में, उर्दू में या हिन्दुस्तानी रूप में, ब्रजभाषा या खड़ी बोली के रूप में। जो कोई भी अखिल भारतीय दृष्टि रखेगा वह इसी बोली का आश्रय लेगा। ईसाई, मुसलमान, अंग्रेज, सरदार, इतर प्राचीन लोग सब अपनी-अपनी बोली के बाद हिन्दी से ही परिचय पाना अनिवार्य समझते रहे हैं। यह मध्यदेश भारत का हृदय है और चिरकाल से इसका स्वामी भारत का सम्राट बनता रहा है। प्रसिद्ध विद्वान् सश्रुतज्ञ, वग भाषा गद्यशैली प्रवर्तक, समाज सुधारक, दयालु और सुरील ईश्वर-

चन्द्र विद्यासागर और स्वामी दयानन्द जी परस्पर प्रेमावद्ध थे, परस्पर बड़ा-मान प्रदर्शन करने थे। दयानन्द जी के कहने पर कि आप वैदिक धर्म प्रचार कीजिए, ईश्वरचन्द्र जी ने कहा था इस शरीर से तो न होगा अगले जन्म में देखा जायगा। बग गद्य के लेखक और पत्रकार अक्षय कुमार दत्त जी स्वामी से समय समय पर अलाप करते थे। योगी अरविन्द घोष जी के नाना राजनारायण वसु स्वामी जी के दूढ़े भक्त थे, और प्रायः उनसे चर्चा करते थे। श्री अरविन्द घोष जी की माता अपने पितामह से स्वामी जी के सम्मान के लिए क्या क्या भाव लाई होगी, उनकी उहा कठिन नहीं। श्री अरविन्द, दयानन्द, -किमि स्तुति करते थे, और प्रत्यक्ष ही स्वयं भी प्रभावित थे। भू-वंश मुखोपाध्याय अपने समय के शिक्षा शास्त्री थे और बिहार में हिन्दी की प्रवर्तना देने हेतु ही की थी। स्वामी जी बहुत से सुधारकों और विद्वानों से मिलकर कलकत्ते के संस्कृत कालेज में वेद शिक्षा योजना पर विचार करते रहे। राजा राजेन्द्रलाल मित्र अपने समय के बड़े विद्वान् थे। प्रसिद्ध आई० सी० ए०, विद्वान् अनुवादक, प्रबन्ध-कुशल श्री रमेशचन्द्र दत्त भी स्वामी जी के साथ इतिहास, वेद आदि पर आलाचना करते रहे। डा० महेन्द्रलाल सरकार अपने समय के विद्वान के अन्वेषक थे। प्रतापचन्द्र नजुमदार ब्रह्म समाज के देश-देशान्तरी में लब्ध। प्रतिप्र उपदेशक थे। ये भी स्वामी जी से मिलते रहे। कविराज गगाधर चरक के टीकाकार थे। लालाबिहारी देव प्रसिद्ध पादरी और वर्धमान के महाराजा दानविहारी कपूर भी चर्चा करते रहे। हेमचन्द्र चक्रवर्ती तो शिष्य रूप से साथ रहकर स्वामी जी में चिरकाल तक योग और उपनिषद् का अभ्यास करते रहे। इसी प्रकार भन्मन्थनाथ चौधरी भी। ताराचरण तर्करत्न और महेशचन्द्र विद्यारत्न से तो स्वामी जी का शास्त्रार्थ ही हुआ। ताराचरण को सवने लज्जित किया। स्वामी जी मुर्शिदाबाद और वर्धमान तक गये। इन दिनों समय निकाल कर स्वामी जी ग्रन्थ रचना भी करते रहे। नाना स्थानों पर उपदेश भी देते थे। इस दीर्घ यात्रा में कलकत्ता और

बंगाल के मुख्य मुख्य व्यक्ति सम्पर्क में आये। श्री रामकृष्ण जी परमहंस से भी स्वामी जी का अनेक बार सान्नाहकार हुआ। सत्यान्येषी जानते हैं कि पहले पहले रामकृष्ण जी परमहंस दयानन्द जी से प्रभावित थे। यदि कोई पूरी खोज करे तो इन पांच मास के कार्य की स्वयं एक छोटी सी पुस्तक लिखी जा सकती है। बंगाल के इन विशिष्ट व्यक्तियों के अपने लेखों, पुस्तकों, परस्पर सन्देशों, तत्कालीन समाचार पत्रों, अध्येतों की गाथियों, गर्वमन्द के विवरणों वाइसराय के सेक्रेटरी प्राप गेट के प्रति भेजे हुए गुप्त टिप्पणियों तथा पत्रों के उत्तरों आदि में स्वामी दयानन्द जी के इस कार्यकाल के विषय में प्रभूत सामग्री एकत्र की जा सकती है। काग्रस के प्रथम अध्यक्ष श्री उमेशचन्द्र बन्धोपाध्याय जी स्वामी जी से भेट करते रहे थे। महर्षि देवेन्द्र ठाकुर के साथ और उसके सहायियों के साथ स्वामी जी का घना सम्पर्क था। स्वामी जी के कहने से श्री देवेन्द्र नाथ ठाकुर ने बालपुर विश्वभारती बनने से पहले शांति निवेदन में प्रतिदिन हॉम करने के लिए एक वेदपाठी शत्रिय नियत कर रखा था। वास्तविक रूप में आदि ब्रह्म समाज के संस्थापक श्री देवेन्द्र ठाकुर तथा उनके परिवार और आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द जी के विचारों में बहुत समानता थी। स्मरण रहे, स्वामी दयानन्द जी के वैदिक पाठशाला खोलने की प्रेरणा देवेन्द्र जी से करते रहे और विश्वभारती शांति निकेतन का मूल नाम ब्रह्मचर्य आश्रम था। भारत के विपम काल में भारत के सुधारकों के साथ परिचय और विचार करके स्वामी दयानन्द जी ने ऐसे-ऐसे विशेष व्यक्तियों को प्रभावित किया, जिन व्यक्तियों ने भारत के अनेक विध्वंस आन्दोलनों में प्रमुख भाग लिया। भारत की वर्तमान स्वतन्त्रता में जिन आन्दोलनों और कार्य-कर्ताओं ने भाग लिया उन पर स्वामी जी का प्रभाव पाठक अन्धेरी प्रकार अनुभव कर सकते हैं। (आदि ब्रह्म समाज के उपदेशक श्री हेमचन्द्र चक्रवर्ती की द्वारा "दयानन्द प्रसंग" के आधार पर)।

विश्व को एक बनाने वाले आर्यजन एक बनें

[ले०—श्री रामवहादुर जी मुख्तार पूरनपुर अविघाता शिक्षा विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश]

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने जीवन काल में एक नारा लगाया था “संसार के विद्वानों एक हो जाओ” दूसरा प्रयत्न किया था कि “संसार में प्रचलित जिनके धर्म हैं, उनमें जो सर्वमान्य सिद्धान्त हैं, उनको एक जगह छोट लिया जाय। तदनुसार धार्मिक सिद्धान्तों का सब समान रूप से पालन करें। दानों वातों में एक ही भेद छिपाया था और वह था, समस्त संसार को एक सूत्र में बांधना। सभी मत मानान्तर रूपां मणियों को एक वागे में पिरोना और विभिन्नता मिटाकर एक रूपता स्थापित करना। जिसमें वास्तविक मुख, शान्ति तथा प्रेम का चहूँ आर साम्राज्य था। परन्तु उन्हे उन दानों प्रयत्नों में सफलता नहीं मिली। क्यों? व्यक्तिगत स्वार्थ प्रतिष्ठता, मान व गुरुत्व का वक्ता पहुँचना था।

आज कांग्रेस जैसी महान् राजनीतिक संस्था में जो छीछालेवर देखने में आ रही है, उसका एकमात्र कारण व्यक्तिगत स्वार्थ, सत्ता का प्रलोभन तथा आपसी ईर्ष्या है ही तो है।

आज देश में जो बेचेना, भ्रष्टाचार, निराशा, भय आदि बढ़ने जा रहे हैं उनका कारण यही तो है कि प्रत्येक अपने ही व्यक्तित्व का प्रदान के लिये अनुचित उपायों का काम में ला रहा है। परिणाम स्वरूप अपूज्यों का मान और पूज्यों का अपमान बढ़ रहा है।



श्री रामवहादुर जी मुख्तार

यदि संसार के विद्वान् एक हो जाते तो क्यों चीन भारत की सीमा का अतिक्रमण करता। क्यों पाकिस्तान बनता और फिर क्यों वह काश्मीर के एक भाग को दबाता, क्यों आर्यजन होकर को जापान में पदार्पण करने से वहाँ की जनता राकती, क्यों अमरीका में ख्रिश्चव का जाना वहाँ की जनता नापसन्द करती, क्यों एक देश दूसरे को सन्देश व शका की दृष्टि से देखे ?

यदि समस्त धर्मों के सर्वमान्य सिद्धान्तों का एकत्रीकरण होकर समान रूपेण उनका अवलम्बन स्वीकार कर लिया जाता तो क्या धर्मों के नाम पर होने वाली लडाइया सदा के लिये समाप्त न हो जाती ?

यदि यह सब कुछ हो जाता तब तो वास्तव में बहुत बड़ा कार्य हो जाता, हमें इस एकता के लिये तो कार्य करना ही है पर उससे पहले आज आर्य समाज के सम्बन्ध में एक इसी प्रकार के नारे की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है और वह है “आर्यसमाज के कर्णधार एक हो जाये।”

आर्य समाज ने सारे विश्व को आर्य बनाने की प्रतिज्ञा ली हुई है। समस्त समाज में प्रेम की गंगा बहाने का पावन व्रत लिया हुआ है। आर्य समाज के अपने सिद्धान्त एक है, जो सार्वभौम है। और विश्व-कल्याणकारी हैं। उन्हीं सिद्धान्तों का लेकर उसने जन्म लिया और उन्हीं के प्रचार व प्रसार के लिये उसके सारे प्रयत्न व उद्योग हैं। परन्तु फिर भी विभिन्नता अन्दर ही अन्दर पनप रही है, और कभी कभी प्रकट रूप भी धारण कर लेती है। समान सिद्धान्तों के मानने वालों में यह प्रतिकूलता कैसी, विश्व में शान्ति स्थापित करने वालों में यह अशान्ति कैसी ? इसके दो कारण हो सकते हैं (१) कार्य प्रणाली के सम्बन्ध में विचारों की भिन्नता। (२) अधिकार लिप्सा।

पहला कारण अवगुण नहीं है। यह तो मनुष्य स्वभाव के अनुकूल ही है, परन्तु बुद्धिमानों का काम है कि एक स्थान पर बैठ कर प्रेम पूर्वक वाद विवाद करके देश धर्म तथा जाति एव ससार का हित सम्मुख रखकर बहुमत से जिस निश्चय पर पहुँचे, उस पर एक मना होकर प्राण-पण से जुट जावे। आर्यसमाज के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं कि जब इस प्रकार कार्य किया गया। विजय श्री ने चरण चूमे। उर्मा निमित्त तो आर्य समाज की स्थान स्थान पर समितियाँ हैं, उप प्रतिनिधि सभायें और प्रदेशीय सभायें हैं तथा केन्द्र में सार्वदेशिक सभा है। इस का विधान प्रजातन्त्रात्मक है। विचारों की विभिन्नता को एक रूपता में परिवर्तित करने के लिए समुचित साधन है। परन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि हम का कहीं पव नष्ट होने लगे हैं। और विघटन की अनेकता की भावना हम में बढ़ रही है। क्या आर्यसमाज के लिए यह लज्जास्पद नहीं है। क्या आर्य समाज के कर्णधार आपसी मनमुटाव मिटाने के लिए एक स्थान पर बैठकर प्रेम पूर्वक वार्तालाप द्वारा किसी निश्चय पर पहुँचने में असमर्थ हो गये हैं। मैं समझता हूँ कि यह कोई कठिन कार्य नहीं है। आज आवश्यकता इस बात की है कि समय रहते हम चेत जायें और हम नारा लगायें “आर्य समाज के कर्णधार एक हो जायें”। ऋषि निर्वाणोत्सव पर यदि ऋषि भक्त सचचे हृदय से ऋषि का श्रद्धाजलि अर्पित करना चाहते हैं, तो उनका श्रद्धाजलि यही है कि सब एक मना होकर आपस में बैठकर विवादों को निपटा लें।

दूसरा कारण—अधिकार लिप्सा—मेरी सम्मति में अवगुण है। यदि मनोमालिन्य पद लिप्सा के लिए है तो इसका निराकरण केवल व्यक्तिगत आत्म निरीक्षण से ही सकता है। ऋषि निर्वाणोत्सव पर प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह ईश्वर को साक्षी करके अपने सम्बन्ध में विचार करे कि जो भी कोई आपसपरिक विवाद होते हैं, या हैं। इसके पीछे, अपने लिए कोई पद प्राप्त करना तो नहीं है अथवा किसी का पद से च्युत करने की अभिलाषा तो नहीं है या वह अनुचित रूप से पद पर आरूढ तो नहीं है ? यदि उत्तर हाँ में मिले तो प्रत्येक अपने पर निमन्त्रण करे, और जो पदाधिकारी हैं उन्हें यथा सम्भव पूरा सहयोग दे। ताकि समाज का कार्य अगे बढ़े और यदि स्वयं किसी पद पर हैं तो उनके कर्त्तव्यों के पालन करने में अपनी पूरी शक्ति लगा दें। जो पदाधिकारी नहीं है उनका पूरा सम्मान करते हुए सहयोग प्राप्त करने की भावना रखे। प्रत्येक व्यक्ति इस सुनहरे नियम को अंगीकार करे कि अपने अवगुण देखे व अन्यो के सदगुणों को निहारें, ता बेडा पार है।

अत आइये ! आज ऋषि निर्वाणोत्सव पर जब कि दीपावली के कारण घरों को स्वच्छ किया जाता है, हम ऋषि से ज्योति प्राप्त कर अपने मन मन्दिरो को शुद्ध और पवित्र बनायें। जो उल्टे रास्ते पर चले गये हैं वे पुन सीधे मार्ग पर आ जायें। जो शक्ति विघटन के कार्य में लग रही है वह सगठन व प्रेम की धारा प्रवाहित करने में लगे। यही ऋषि के प्रति प्रत्येक आर्य की सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

ऋषि दयानन्द का आर्ष दर्शन

[लेखक—श्री विश्वबन्धु शास्त्री, एम० ए०, एम० आ० एल०,
सचालक, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, साधु आश्रम, होशियारपुर]

मनुष्य-मनुष्य में भेद क्या है ? नदी तट पर दो व्यक्ति खड़े हैं। एक इतना ही लाभ उठाता है कि नदी में नहाता अथवा कपड़े धो लेता है। उसके दूसरे साथी की मानसिक तरंगें शीतल समीर के सपर्क से उठती हुई निर्मल नीर की तरंगों के साथ कल्लोल करने लगती हैं, उसे जल-प्रवाह की प्रथमावस्था, वह पर्वतीय दृश्य, वह सुन्दर वन और वह विविध वन सुगों का इधर-उधर कूटना-फाटना—ये सब उस सूक्ष्म दृष्टि के सम्मुख से मानो हांकर जा रहा है। उनका मन उधर लग चुका है, आंतरिक नेत्र खुल गये हैं, मृत वर्तमान की और वर्तमान भविष्य की गोद में खेलता चला जा रहा है।

२—पूर्वचन्द्र की मुहावनी, चादनी और घटा-टोप अन्धकार मयी अमावस्या की रात्रि में भिन्न भिन्न व्यक्तियों को भिन्न भिन्न भावों का भान होता है। तारों भरा गगनतल ज्योतिर्विद्या विशारदों के सामने विलक्षण ही रूप धारण किये होता है। यह सारी बात क्या है ? सर्व धर्म-कर्म के परम मर्मों का प्रकाशक परम पवित्र वेदवाणी क्या सुन्दर तथा यथार्थ रूप में इस भेद के वास्तविक भेद का खोलती है।

“अक्षयवन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्णसमा-
बन्धुः” ऋ १०, ७१, ७ आकार, रूप और रंग के भेद मनुष्यों के वैश्विक भेदक नहीं, वरन् मन के वेग से ही मनुष्यों के तारतम्य का अन्तिम निश्चय हो सकता है। आँखों को देखकर और कानों से सुनकर जिन व्यक्तियों के हृदय पटल में विरोध प्रतिभा मूलक भावों का संचार नहीं होता वे साधारण फॉटि में पशुवृत्ति से जीवित निर्वाह करते हैं। परन्तु जो बाहिर के आवरण का खेद कर वस्तु के वस्तुत्व के दर्शन की लालसा से-व्योक्त हो, निरन्तर अन्तर्मुख रह सकते हैं, वे

महा पुरुष सर्व प्रकार से पूज्य और श्रेष्ठ होते हैं। जिम् आर वे अपनी मनोवृत्ति को प्रेरित करने हैं, उसी आर अग्रतिहत रूप से उनका मार्ग खुलता हुआ चला जाता है। वे स्वैच्छिक प्रेम से परिपूर्ण ढाकर उन्हें धरण करने और मनुष्य मात्र के लिए प्रकाशित करने हैं।

३—ये ऋषि कहलाते हैं। उन्होने धर्म को प्रत्यक्ष कर लिया होता है। ऋषि बनने के लिए सूक्ष्म बुद्धि और अन्तर्बुद्धि की अपेक्षा है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक ऋषि सर्वथा नूतन तत्व का आविष्कर्ता ही हो। वस्तुतः ससार में ऐसी नवीन घटना है भी कौन सी ? धार्मिक विज्ञान तथा सामाजिक सभ्यता का विकास उत्तरोत्तर नहीं वरन् चक्र क्रम से ऊपर और नीचे जाने वाला है। अतः जो व्यक्ति लुप्त हुई अथवा नूतन सर्वहित कारक, सत्य, विज्ञानमय उन्नति की विधियों का प्रकाश करता है, वह ऋषि है। ऋषि हान के लिए शाब्दिक परिवर्तन अथवा क्वाचित्क वृत्तियों से कोई अन्तर नहीं पड़ सकता। इसके साथ ही ऋषि होना निःश्रान्त होना नहीं है। वह अवस्था केवल सर्वज्ञ ब्रह्म का ही प्राप्त है। मानुष दर्शन तथा आर्ष दर्शन में केवल तारतम्य का भेद है। दर्शन की सत्यता को व्यवहार में लाने से ही पता लगता है। यदि ससार उस दर्शन से उन्नत होता है, तो वह सत्य दर्शन है, अन्यथा भ्रमयुक्त है।

४—इन ऊपर के अर्थों में ही स्वामी दयानन्द जी महाराज सच्चे ऋषि हुए हैं। आरम्भ से ही उनकी बुद्धि सूक्ष्मता की ओर झुकी हुई थी। मूषिक क्रीडा मन्त्रियों में बहुतां न कई बार देखी होगी, परन्तु उसका यथार्थ प्रभाव मूल शक्ति के प्रत्यक्ष, कोमल, हृदय-अक्षुर पर ही पडा। मृत्यु किस घर ने नहीं हुई और कौन ऐसा सौभाग्यवान है, जिसके देखते देखते उसका

कोई न कोई प्रेम-पात्र आन की आन में न चल बसा हो। परन्तु जो स्थिर परिणाम पुत्र स्वामी दयानन्द को इस जीवन्त तत्त्व और मृत्यु रहस्य की गन्धेयणा से उपलब्ध हुआ और जो शाश्वत सताप और कठिन वैराग्य का आनन्द उन्हें पाया, वह ऋषियों के ही भाग्य में आता है।

५—उन्होंने सर्वांगपूर्ण, सर्वोन्नतिमूलक, सर्वमंगलप्रद, सर्ववैषम्य विनाशक, अनादिधर्म के दर्शन किये। उनकी विद्या और तपस्या फल लाई। परन्तु आदित्ययन्त्र प्रकाशमान होने हुए भी वह सदा यही कहते रहे कि मैं कोई नवीन, अघाटित अपूर्वज्ञात नहीं कहता। जब से वेद विद्या का लोप-सा हो गया था, ससार में नाना प्रकार के मतों के प्रचार के कारण वास्तविक धर्म के स्वरूप को समझना कठिन हो गया था। कोई सत्कार का भ्रम और मिथ्या बतलाता, कोई ससार को ही सर्वश्रेष्ठ समझता, कोई कर्म पर दल देता, तो कोई उसे जड़ से उड़ाना चाहता था। कोई देवी देवताओं की पूजा सिद्धांत और कोई मनुष्यों के ही गानने मानकर घिसवाता था। कोई बुद्धि का अनास्तिक और कोई बुद्धि का शत्रु था। इस वनाजलता के फल में ऋषि दयानन्द ने 'ऋषियु प्रदिष्टम्' (अ० १०, ७१, ३) अर्थात् ऋषियों ने जिन तत्त्वों का दर्शन किया था, उन्हीं का पुनः साक्षात् किया और उसके प्रचार के लिए वे कटिबद्ध हुए।

६—लोग कहते हैं, वेद सब ग्रन्थों से अति प्राचीन ग्रन्थ है। अतः आधुनिक साहित्य के समाने उसकी क्या गणना हो सकती है? आज ससार ने समस्त प्रकार से जीवन के प्रत्येक सामुदायिक तथा वैयक्तिक विभाग में, ज्ञान, विज्ञान और कला कौशल के प्रताप से अतिमात्र उन्नति कर ली है। यह विकास क्रम इसी प्रकार आरम्भ से चल रहा है। कल से आज उत्कृष्ट है, और आज से अगले वाला दिन अच्छा होगा। परन्तु इस विषय में महाराज दयानन्द ने क्या सुन्दर उपदेश किया है। वैज्ञानिक उन्नति सीधी चाल छोड़ चक्रगति में चला करती है। जैसे मनुष्य के दिन एक समान नहीं होते, वैसे ही जातियों और सभ्यताओं

की भी अस्तित्व है। अतः वेद पुराना हो या नवीन, इस विचार को छोड़कर उसकी शिक्षा को परीक्षा के अनुरूप ग्रहण करो।

७—काली अन्वेषी रात्रि थी, जिसके मृत्युनाद को गुजाने का सौभाग्य ऋषि दयानन्द को प्राप्त हुआ। वह मन्त्रच, वीर योद्धा था। उसे अपने दिव्य प्रकाश को पैदा करने के लिए कितना तुल्य तप करना पड़ा—यह कौन नहीं जानता? सारी आर्य राजा का जीवन, यदि कुछ शपथ थी, तो चुकी हुई रात्रि ने समान हो चुका था। वही हिताने से कोई एक ल विगारी भी शायद विगने से पड़ जाती हो, पर उसका राजा इतनी निःसत्त्व हो चुकी थी कि बाहिर की साधारण वायु ही उसे शान्त कर देने के लिए पर्याप्त थी। तब भी जी महाराज ने अपने दिव्य जीवन के दत्त न जीवन की आहुति उलट दी। उनका तप, उनका त्याग उनकी विद्या, उनका योग, उनकी शक्ति और उनका ब्रह्म वर्चस्व बल सत्र के सब इस यज्ञ में चरु गये।

८—प्रवेश हुआ अन्धकार नियुक्त हुआ। सहस्रों वर्षों के सौ हृष्ट प्रजा के कर्णों में, पर पर जनक पद्यात नर घोरणा की ओर हम सबको जगया। इस समय इस जागृति का प्रभाव देरा के चारों कर्णों में फैलना हुई दिग्गई दे रहा है। इस समय इस वीर घोरणा वः गज दूर दूर से आ है। आर्य-सभ्यता, आर्य-संस्कृति, आर्य-धर्म, आर्य सगठन और अन्य इसी प्रकार के शब्द सर्व साधारण की जिहा पर हैं। आज ऋषियों की भूमि में आर्ष-उद्योगि फिर से चमकती हुई प्रतीत होती है। आज 'समसंज्य' की परिभाषा फिर से राजनैतिक नेताओं के विचार का आदर्श बन रही है। आज साम्यवाद को सामाजिक मर्यादा का प्राण समझा जा रहा है। आज दलितों द्वारा की वर्म का अंग बनाया जा रहा है। आज गौ और उनाथ और अबला को पुकार सुनी जाने लगी है। आज अपनी प्यारी मातृभाषा के प्रयोग में, पूज्य देववाणी की सेवा में और वेदमाता की आराधना में लज्जा नहीं, वरन् गौरव का भाव उत्पन्न होता जा रहा है। पर यह आरम्भ था, समाप्ति

वैदिक विनय

ओ३म सोम रागन्वि नो हृदि गावो न यवमेप्या मर्य इव स आ व्ये ॥

मनुज अपने घर में क्यों रहे चरे गौँ उद्यो जौँका पैल ।
इदम रम जाओँ त्यो नाथ, बना लो अपना इमे नि । ॥

ओ३म यन्भिद्वि ते विराो यथा, प्रवेव वरुण वृत्तम्, मिर्नमसि यविद्यवि ॥

ऋ० १-२५-१

परण हम अविधेकी दिन रात किया करते है जो त्रत भग ।
सम हो कर अपनी सतति पिता, उचारो हम दमो के सग ॥

ओ३म चद् वीटाविन् च वृत्थिरे न्ना पर्यात पराश्रुतम्, यनु स्याहे तदाभर ॥

ऋ० ८ ४५ ४१

परम ऐश्वर्ययुक्त है हम, हमें यो ऐसा धन इष्टवर्णिय ।
वीर बट विर जन चिन्तन ल जन, लेने है जिने स्वकीय ॥

ओ३म आ उ उत्सो मन उन्ना परम नित्यमन्दा । अग्न रवा कामये गिरा ।

ऋ० ८ ११ ७

उठ रही नरा वर्यो राज सित पते का नेग बस ।
परे वह उँम उँचा उँग उँगा उँदित न, नि नत ।
नुहारे वत्मल रगरे, नग उँग उँग कामन क नत ।
राजन नको विवश हो तु, उँग उँग तत्र भय न भ्रान्त ॥
दूर ने इग भल तुम रा उँगी व त, गी क्तिनु समीप ।
विरत कव त्रक चातक गे उँलक राति मे मुक्ता भारता सोप ।



—टा० मुन्शीराम शर्मा 'सोम' मम० पी एच० टी०

[पृष्ठ २६ में आगे]

लगा, बीज डालना है, फल उत्पन्न नहीं ।
इसके महत्त्व का दरान निराशासकियों तथा
दृष्टधर्मियों का जगने के लिए है, आगे के
लिए पुरुषार्थ गोकने के लिए नहीं । उन का
विस्तार कार्य कर्त्ताओं का नुकसान के लिए घर बट कर
फूलने के लिए नहीं । अभी उपर्युक्त मार्ग का खोलना
तथा उसे सिरे तक पहुँचना शप है । क्या हमने आर्थ
भाषा को अपने नित्य के जीवन के प्रोग्राम में लाना
आरम्भ कर दिया है ? क्या ऋषियों के वचनों का
श्रद्धा पूर्वक मनन करते हुए, हम उन्हें अपने जीवन का
रग बना रहे हैं ? क्या हम वेद विद्या की सेवा तथा
अनुसन्धान के लिए अपने जीवन को लगा रहे हैं ?
क्या मन, बचन और कर्म से हम सत्य के भक्त बन
रहे हैं ? क्या हमारे अज्ञोस पडास में हमारे मुँगे

रहने हुए कोई वीन गुणी और अपाहिज भूखो राते तो
नहीं कट रहा ? क्या हमारी गली में कोई अनाथ
और अदवा अन्ध ही अन्ध तो नहीं टुल रहे ? क्या
हमने सच्चे लौकिक और पारलौकिक स्वराज्य के लिए
तेजरी आरम्भ कर दी है—उन सय प्रश्नों का उत्तर
हम देना होगा ?

५० आयें ओपधालय विद्यालय

खोलने की स्कीम सफल बनाने के लिए दो अनु-
भवो प्रभावशाली प्रचारक स्थाई विचार वाले जीवन
भर के लिये चाहिए । प्रारम्भ में (१२५) से ३००) मह-
वार तक देगे । हमारे ही कामों को लगन के साथ करना
हागा, अन्य विकल्प साथ न रखने होंगे । शीघ्र लिखें
या आवें । पता—सिद्धि सागर प्राणाचार्य
वाहुबलि औपधालय, ललितपुर (भोभी) उ० प्र०

विकासवाद विषयक भ्रान्तियां

[लेखक—श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०, प्रयाग]

आज से ठीक सौ वर्ष पूर्व जब ऋषि दयानन्द अपने मन्तव्यों और उद्देश्यों का मुख्यवस्थित करने में यत्नशील थे। इंग्लैण्ड देश का एक युवक वैज्ञानिक जिसका नाम था डार्विन, सामुद्रिक यात्रा में द्वीपस्थ प्राणिवर्ग की आकृतियों तथा प्रकृतियों का वैज्ञानिक निरीक्षण कर रहा था। जिससे वह अपने विकासवाद की आधारशिला को सुट्ट कर सके। उसने अनेक प्रकार के पशु-पक्षियों के नमूने एकत्रित किये और वैज्ञानिक ससार के समक्ष उनका रखकर यह सिद्ध करने का यत्न किया कि इस सृष्टि ने एक मुख्यवस्थित क्रमिक शृंखला है। वस्तुये तथा प्राणिवर्ग एक दूसरे से पृथक् और असम्बद्ध नहीं हैं। उनमें ऐसा ही सादृश्य है, जैसा एक माता पिता की दूरस्थ सन्तान में हुआ करता है।

इसी सिद्धान्त का नाम विकासवाद है। अर्थात् ससार में कोई घटना अकस्मान् और असम्बद्ध नहीं होती। कारण—कार्य की एक शृंखला है, जिसने अर्थात् एक वस्तु दूसरी वस्तु में परिवर्तित हुआ करता है। इससे पूर्व यूरोप के धार्मिक जगत् का यह विश्वास था कि सर्व शक्तिमान् परमेश्वर केवल अपनी इच्छासात्र से बिना किसी उपादान या निमित्त के जगत् बना देता है, ईश्वर कहता है 'भव' (अरबी में कहते हैं 'अन') और इश्वर का हुक्म पाते ही चीज उत्पन्न हो जाती है। यह सिद्धान्त सर्वथा अवैज्ञानिक है, विज्ञान जादू नहीं, जादू का विरोधी है। माली बाग में गुलाब का फूल जगत्त है। जादूगर सभा के मंच पर चुटकी बजाकर गुलाब उत्पन्न कर देता है। धार्मिक जगत् की दृष्टि में ईश्वर भी एक जादूगर था। जब यूरोप में विज्ञान ने उन्नति की तो वैज्ञानिक लोग जादू जैसी निरर्थक बात का कैसे स्वीकार करते? हर कथ्य के कारण को खोजने की प्रवृत्ति बढ़ी और विकासवाद

इमी प्रवृत्ति का फल था। चार्ल्स डार्विन से पहले एरैस्मस डार्विन, वफन, लामार्क आदि कई विद्वानों ने इसी दिशा में प्रयत्न किया था और कई सिद्धान्तों की कल्पनाये की थीं। परन्तु पुष्कल सामग्री जुटाने का श्रेय चार्ल्स डार्विन को है। इसीलिये विकासवाद का डार्विन को पितामह कहते हैं।

डार्विन की सामग्री का निरीक्षण करते ही वैज्ञानिक और धार्मिक दोनों क्षेत्रों में खलबली मच गई। वैज्ञानिक लोग तो आनन्द से परिपूरित होकर वैज्ञानिक सिद्धान्तों के मुख्यवस्थित करने में लग गये और शान्त शान्त मनुष्य जीवन के प्रत्येक विभाग में विकासवाद का सिद्धान्त प्रचरित और समानित हो गया, परन्तु धार्मिक जगत् में घृणा, क्रोध और पक्षपात का तूफान उठ खड़ा हुआ। वॉर्ग ईसाई और इस्लाम आदि सैमेटिक धर्मों की आधारशिला तो एक ऐसे ईश्वर की कल्पना है जो सब कुछ है और सब कुछ कर सकता है, अर्थात् एक बहुत बड़ा कुशल और सफल जादूगर 'सभी भाँति मार्ग ऐसा ही मानते हैं'। ईसाई पादरियों ने विकासवादियों का विरोध किया और धीरे धीरे विरोध। यदि डार्विन चार-सौ वर्ष पूर्व हुआ होता तो शक्य शक्यता के पाप की आज्ञा पाकर उसका जीवित जला दिया जाता। परन्तु पिछली कई शताब्दियों के धर्म-विज्ञान महाभारत ने धर्म को परास्त करके विज्ञान को बल युक्त कर दिया था। अतः एक बार तो वैज्ञानिक अपना अनुसन्धान का कार्य करते रहे। दूसरी ओर पादरियों ने अनेक प्रकार की उट-पटांग पुस्तकें लिखकर जनता को भड़काना आरम्भ किया कि डार्विन मनुष्य की उत्पत्ति ईश्वर से न मानकर बन्दूक से मानता है।

भारतवर्ष के लिए विकासवाद क्या शर्तें हैं। सांख्य-दर्शन में कपिल ने सृष्टि के क्रमिक विकास के

बड़ा अच्छा वर्णन किया है। शतपथ आदि में भी आकाशराद्यु। वायोःग्नि इत्यादि क्रम का उल्लेख है। परन्तु भारतवर्ष का आधुनिक धार्मिक क्षेत्र तो यतना ही विज्ञान विरोधी है, जितने ईसाई या मुसलमान। इसलिए मर्कट गात्र सम्बन्धी मत का भारतवर्ष में विरोध हुआ। और आश्चर्य की बात यह है कि आर्य समाजी विद्वान् भी इन्म चक्र में फस गये। स्वामी दयानन्द ने कपिल का विकासवाद स्वीकार किया है। यह निरीश्वर साख्य के विरोधी है, सेश्वर साख्य के नहीं। यह विकासवाद का विरोध नहीं करते। विकासवाद के निरीश्वर त्रय का विरोध करते हैं परन्तु आर्य समाजी विद्वानों ने ईसाइयों के विकास विरोधी साहित्य को पढ़कर और विकासवाद का न समझकर एक प्रकार का भ्रम उत्पन्न कर दिया है। इस विषय में सबसे अधिक भ्रमांतपादक पुस्तक है “वैदिक सम्पत्ति” जिसका एकमात्र गुण यह है कि वह बड़ी माटी पुस्तक है और उसमें विकासवाद विरोधी उद्धरण बहुत से हैं। हमारे बहुत से लेखक और व्याख्याता घड़ी में घड़ी में उस पुस्तक से वा चार चटकीले उद्धरण लेकर अपने उत्तेजना युक्त व्याख्यानों की सामग्री प्राप्त कर लेते हैं इससे जनता का मनोरंजन हो जाता है। परन्तु यह प्रकृत नहीं होता कि वैदिक धर्म और प्रचलित तथा बहु सम्मानित विकासवाद में क्या समानता है और कहा भेद। आजकल के वैज्ञानिक जगत् में विकासवाद के विरोध के कोई चिह्न पाये नहीं जाते। हा इतना अवश्य है कि उनको पूर्व मान्यताओं में क्या कठिनाइयाँ पड़ रही हैं, इसकी उत्तम अनुभूति है और यह वैज्ञानिक रीति पर इन कठिनाइयों का दूर करने का यत्न कर रहे हैं। इसको आप विकासवाद की पराजय नहीं कह सकते। यो कहना चाहिये कि विकासवाद के सिद्धान्तों का भी विकास हो रहा है।

विकासवादी ईश्वर और जीव की सत्ता स्वीकार नहीं करते। हर एक वैज्ञानिक इन दो शब्दों से बच-भीत हास है। कछुबे का काटा कठौती का डरता है। ईश्वरवादीयों के हाथों विज्ञान ने बहुत कटु अनुभव प्राप्त किये हैं। परन्तु यह भी संस्य ही है कि विमा

आध्यात्मिक सत्ता को स्वीकार किये केवल भौतिकवाद से काम नहीं चलता। परन्तु आर्यसमाज में जो धारणा है वह भी गलत है। वह भी ‘ईश्वर नाम’ के प्रलोभन में वैदिक सिद्धान्तों को विस्मृत करके पादरियों के चले बल गये हैं। स्वामी दयानन्द या वैदिक धर्म न तो भौतिकी के विरोधी हैं न विज्ञान के। यह विरोधी है अनीश्वरवाद और अजीववाद के। परन्तु साथ ही यह उस ईश्वरवाद के भी विरोधी हैं, जिसमें ईश्वर जादूगर या मायावी है, और केवल इच्छा मात्र से सब कुछ कर सकता है। यह तो हुई स्वामी दयानन्द और वैदिक धर्म की बात। रहे हम आर्यसमाजी। यह तो गम्भीरता से विचार ही नहीं करते। किसी चमकीले गिलौने के पीछे लग पड़ते हैं। इस छोटें से लेख में मने सनेत मात्र ही लिखा है। और ‘आर्यमित्र’ के सम्पादक जी के विशेष आम्रह पर। मैंने ‘फिलासफी आफ दयानन्द’, ‘रीजन एण्ड रितीजन’, ‘लाइफ आफ्टर डथ’ आदि पुस्तकों में प्रसंगानुसार इस पर कुछ लिखा है।

गुरुकुल वृन्दावन का महोत्सव

गुरुकुल वृन्दावन (मथुरा) का वार्षिक महोत्सव दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में बड़ी धूम-धाम से मनाया जायगा। उसका तीयारिथ्य अभी से शुरू हो गयी है। इस अवसर पर कई सम्मेलन भी होंगे।

—नरदेव स्नातक एम० पी०

अधिष्ठाता गुरुकुल-वृन्दावन

आवश्यकता

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के लिये एक ऐसे प्रचारक की आवश्यकता है, जो मथुरा जिलास्तरगत मगधीय जनता में गुरुकुल के उद्देश्यों, नवीन बालकों को प्रवेश तथा धन स्रष्ट्र के कार्य का प्रचार कर सके। न्यूनतम वेतन पर कार्य करने वाले महाशुभाव किन्न पते पर पत्र व्यवहार कर।

—नरदेव स्नातक एम० पी०, गुरुयाविद्यालय

गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन (मथुरा)



देव दयानन्द की देन



[ले०—श्री प० शिवदयालु जी मेरठ]

ऋषयः पञ्चानं नि यथा हा १० वा शताब्दी का युग पुरुष का। सत्य नन्द न मस्तर के सच ही मत सम्प्रदाया ० मति को न मित्रि टलचल पदा कर ही है। इत्यादि न भाव न मत् नृत ना और आर्य



श्री प० शिवदयालु ना

मस्कृति का सम्बन्ध दर्शन किया था। अपने समय के पर पादाक्रान्त भारत का भी उसन अच्छी प्रकार देखा था।

दयानन्द ने भारतीय साहित्य और विशेष कर आर्य साहित्य का भलीभांति मन्थन किया था। सच्चे शिव की खोज में दयानन्द ने घर बाहर छाड़ा, पूर्ण विरक्त और सन्धासी बन देश के काने काने में सत्य की खोज में घूमा।

पर्वतों की कन्दराओं में आसीन साधू सन्तों की सेवा में सत्य ऋष की प्राप्ति के निमित्त उपस्थित हुआ

असत्य से कभी समझौता करना उस ऋषि ने न जाना। सत्य और नग्न सत्य का ही उके का चाट, उसने अपने जीवन तक को खतरे में डालकर सदा प्रचार किया।

ऐसे उस ऋषिराज दयानन्द की विश्व के लिए सबसे बड़ी देन “बुद्धिवाद एव मानववाद की निष्ठा है।”

संसार के सच ही मत, पन्थ, सम्प्रदायों के रिलिजन फेथ और मजाहिव के प्रवर्तका ने बुद्धिवाद की निरन्तर अवहेलना की है।

‘मम सत्य’ अथवा ‘मामेव शम्ण वच म न विष्णामि मा शुच’ अर्थात् मेरी शरण न आया मैं सर्व पापों से तुमको निजात दिला दूंगा और ना उच्छ्रमै कन्ता ० वस वही सत्य है। इत्यादि न र इन लोगों ने लगाये हैं। और यह भी कहा है कि मर ने पूर्ण चितने ऋषि पेंगम्बर हुए हैं, सब अकिंचन थे। उन में जा उच्छ्र कहता हूँ वह ही एकमात्र पूर्ण सत्य है और मैं ही पूर्ण सत्य का अन्तिम सन्देश हूँ। अत मेरे पर आत्मीय कर विश्वास ले जाओ। इस प्रकार की बातें निश्चय ही अन्व विश्वासों की जननी हैं।

दयानन्द वह पहला व्यक्ति था जिसने स्पष्ट कहा कि मैं जो कुछ कहता हूँ वह अपनी ओर से नहीं अपितु ब्रह्मा से जैमिनी पर्यन्त ऋषि मुनियों ने जा कुछ कहा है मैं तो केवल उसका प्रचार करता हूँ। मेरे कथन को तर्कों की कसौटी पर कसों और यदि वह खरा उतरे तो ही उसको मानना। दयानन्द ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि सत्य तो सनातन है उसको किसी मत या मजहब की सीमा में बाधकर नहीं रखा जा सकता। सत्य तो ईश्वरगत है और उस पर किसी मत प्रवर्तक की मुहर भा नहीं लगाई जा सकती।

(सं० पृष्ठ ३० पर)



महर्षि दयानन्द के—

अग्निहोत्र-आदेश का प्रत्यक्ष लाभ



[ल०—कविराज श्री रत्न कर नी शास्त्री आयुर्वेद शिरमोंगल]

धार्मिक परिपाटी में होने वाले अनुष्ठान का हाड और निरर्थक कहने की प्रथा सी चल गई है। विशेष कर जिह्वा अनुष्ठान से इन्स का पत्रा सा भी जान हाय प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान का एक दम अनुष्ठानिक और अन्व परम्परा कहने न सकाच नहीं करन। मे यह लेख ज्ञानिया तथा तिपे। राप रूप से लिख रहा हूँ जिह्वा अनुष्ठान तथा यथा का परम्परा निरर्थक लग रही हा।

प्रायः कारवट लगा का भारतीय परम्परा के धार्मिक अनुष्ठान बिना विचार हा अज्ञानिक और अज्ञान कहने की वान सी है। मैं चाहता हूँ कि मेरे निम्न प्रयोग पर वे अग्निहोत्र अथवा दैनिक आ का प्रत्यक्ष लाभ अनुभव कर।

मेन विद्यार्थी जीवन म हवन यज्ञ के सम्बन्ध म वान्त उच्छ्र पडा था तय उमका काल्पनिक रूप ही समझा जा सका था। वह भी लोकर नही पा ला किक। परन्तु आयुर्वेद का विद्यार्थी हन के कारण अज तक का जीवन निरन्तर प्रति राग आर चिकित्सा ने चिन्तन म ही व्यतीत हात गया। गत ३० वर्ष म विद्यार्थी जीवन की अनेक कल्पनाये परीक्षण का कर्मौटी पर वसा गई।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश म लिखा है कि हवन निरन्तर वर्म है। उसम (१) पोष्टिक (२) मिट्ट तथा (३) रगतशाक द्रव्य आहुति रूप म टल गाना चाडिए। चटक और धन्वन्तरि के अनुसार इन तीना का चिकित्सा की दृष्टि से निम्नप्रकार विभाजि कर सकते हैं—

- | | | |
|--------------|---------------|-----------|
| (१) पोष्टिक— | रसायन द्रव्य— | Nutritive |
| (२) मिट्ट— | तर्पणद्रव्य | Tonical |
| (३) रगतशाक— | रागान्द्रव्य | Curative |



[रत्न कर नी शास्त्री]

रूपम विद्यार्थी म हात विद्यार्थीनामा में विभाजित।

मेन अज्ञान हवन निरन्तर १५ वर्ष उच्च मगनुभावा से पूछ — आप का नियम अज्ञान प्रकृत से क्या लाभ हुआ? इसी तरह सर मना कामना पूरी हुई। किना नका, शुद्ध अज्ञान का आराता वरण का मीना त सना पत्रभा विद्यमान है। ५० वर्ष हादक १२ वर्ष का आयु से आजत प्रगति पाता कर हा। नवे पगद्ध अनुभव भो मुता। परन्तु अज्ञान अनुभव के रूप म नाच मै वद प्रयाग रहा है अप इनका प्रयाग कर सका हा।

(१) रत्न कर नी शास्त्री का मतानक राग है। इस म फकत एक श्लोक मला प चल नाचत हात है। अथवा रुद्रा के कारण शय। दाना प्रशाखा म रोगी पुष्पुसा की वदना से आवात रता है। अवर

भी रहता हो है। पीरे धीरे स्थिति चय की बन जाती है। एलीपेथी में जल निस्सारण से लेकर शाक निवारण तक इलाज करने में प्रायः ६ मास से १ वर्ष का समय लगता है। बीं भी पूर्ण स्वस्थ हावा है, इस में सदेह ही रहता है। प्रतिदिन अग्नि होत्र इस प्लूरिसी की अच्छे ढवा है।

(२) दुष्ट प्रतिश्याय (Rhinitis) दूसरा दु खदायी रोग है। इस में नासिका के अन्दर त्रिकुटी के आस पास श्लेष्य कला में शोथ होता है। श्वास प्रश्यास में अत्यन्त कष्ट होता है। रोगी मुह से श्वास ले पाता है। नित्य अग्नि होत्र करने वाले यह नहीं जानते कि दुष्ट प्रतिश्याय क्या है।

(३) मस्तिष्क कला शोथ (Encephalitis) इस रोग में मस्तिष्क शथ के कारण शिरोवेदना रहती है। स्मरण और विचार शक्ति क्षीण होकर नेत्र ज्योति भी कम हो तो है। कभी-कभी उग्र तथा बेहोशी की अवस्था भी हो जाती है। अग्निहोत्र का दैनिक प्रयोग इस सकट से मुक्ति प्रदान करता है।

(४) श्वास प्रणाली प्रवाह (Bronchitis) चौथा वह रोग है जो आये दिन हमारे समाज को दु खी करता है। इसमें श्वास की नली में मूत्रन होकर नित्य खासी रहती है। श्वास बढ जाता है। न्यूमोनिया बन जाता है। धीरे धीरे फेफड़ों से रक्त और मवाद आने लगता है। गले में दर्द से कभी-कभी खासले-खासने के भी हो जाती है। उर हल्का हल्का रहता है। प्रति दिन का अग्निहोत्र इस शत्रु को परास्त करता है।

(५) अवसाद (Alegogy) पाँचवी बाधा है, जो स्नायुमण्डल की शिथिलता से उत्पन्न होती है। अवसाद युक्त रोगी गिरा पडा सा रहता है। निर्जीव तथा निस्तेज शरीर के कारण कार्यक्षमता जाती रहती है। रोगी में माहस तथा प्रफुल्लता नहीं रहती। नित्य का अग्निहोत्र इस सकट का अव्यर्थ प्रतीकार है।

मैंने यहा इन पाच रोगों पर अग्निहोत्र के सफल परिचय लिखे हैं। जिन्हे अग्निहोत्र की धार्मिक किन्तु वैज्ञानिक परम्परा पर आस्था न हो वे इन रोगों पर अग्नि होत्र का परिचय करें। चिकित्सा के भारी खर्च से ही नहीं, जीवन के भारी सकटों से भी आप

देव दयानन्द की देन

[पृष्ठ ३० का शेष]

संसार के मत मजहबों ने सजुचित ढाबरे खेचे हुए हैं। जो भी उन ढायरों में आ जाये वह श्रेष्ठ, धर्मात्मा और मोक्ष का अधिकारी है, और जो न आये वह निहृष्ट, पापी और नरकगामी होगा। इन्हीं सजुचित ढायरों के कारण मानव जाति में विद्वेष घृणा निन्दा का विस्तार हुआ है। शत्रुता बढ़ी है, और भयकर रक्तपात हुआ है।

इन मतों की कृपा ने ही मानवता का जन्म हुआ है जिसने सोंपे मानवता पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया।

दयानन्द ने क्त—'मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समोक्षन्तः' अर्थात् मित्र की दृष्टि से संसार के सर्व प्राणियों को देवों अर्थात् प्राणीमात्र को सेवा और रक्षा करना अपने जीवन का पावन लक्ष्य बनाया।

ऋषि दयानन्द ने "कृष्यन्तो विश्वमार्यम्" का वैदिक सन्देश संसार की सब ही जातियों को सुनाया और व्रतलया कि संसार का सब ही जातियों रूप रग आदि भेदों को त्यागकर समान रूप से ज्ञान प्राप्त करने, स्वतन्त्र जीवन बिताने और वैभवशाली बनने का अधिकार रखती हैं। मानव जीवन की परम साधना भी यहाँ हो कि प्रत्येक मानव स्वयं श्रेष्ठ वैवी गुणों से युक्त होकर आर्य बने और अन्यो को आर्य बनावे।

बड़ी से बड़ी मूर्ख, बरबर जगली जाति तक को आर्य बनाने का सन्देश अपने युग के श्रेष्ठ माने जाने वाले मानवों को दयानन्द ने दिया है।

आओ ! इस पुरय निर्माण पर्व पर उस ऋषि की दिव्य देन को भली-भाति अपने जीवन-पट पर अंकित करने का व्रत धारण करें।

अनायास बच सकते हैं। आपके घर का अग्निहोत्र पडोसियों को भी स्वास्थ्य प्रदान करेगा, इनमें सन्देह नहीं। अग्निहोत्र करने वाले का घर 'सेनेटोरियम' से बढ़कर है।

ऋषि की याद दिलाने

जिसने स्वयं पिया विप अमृतधारा हमें पिलायी है।

उसी ऋषि की याद दिलाने आज दीवाली आयी है ॥

पाखण्डों की घोर घटा में जो विजली बनकर चमका,
कु कृत्यों की कलुष कालिमा पर जो घन दनकर बरसा,
युग दुग का धो पाप पक की जिसने सही सफाई है,

उसी ऋषि की याद

पीडित मानवता के अँसू पोछे जिसने त्राण दिया,
भौतिकता से भीत विश्व को फिर अध्यात्म ज्ञान दिया,
ईति भीति से शून्य स्वस्ति वेदों की राह दिखाई है,

उसी ऋषि की याद

मिथ्यावादी न देते थे पढ़ने का अधिकार हमें,
पैर की जूती कह ठुकराता यह निपटुर ससार हमें,
मातृशक्ति की जिसने फिर मिटती मर्दान बचाई है,

उसी ऋषि की याद

जिसके पावन दया दान से कोई भी न रहा बचित,
क्या त्रिभुज, प्रनाथ, पददलित, अश्रूत जति से निष्कासित,
जिसने गौश्रां के हित में 'याकरुणानिधि' रचाई है,

उसी ऋषि की याद

मिथ्या सम्प्रदायवाद के गढ को भू पर सुला दिया,
दलबन्दी के दल दल को दल पथ को समतल बना दिया,
जिसने हाथ रखा नाडी पर दवा अचूक बनाई है,

उसी ऋषि की याद

जिसने जीवन से जीना मृत्यु में मरना सिखा दिया,
प्राण बचाए घातक के आदर्श अन्ठा दिखा दिया,
जिसने भ्रान्त क्लान्त प्राणों को शान्ति अमर पहुँचाई है,

उसी ऋषि की याद

मेरी श्रद्धा थक जाती है जब ऋषि के गुरा गाती हूँ,
भाव कोप रीता हां जाता शब्द अभाव ही पाती हूँ,
कविता कामिनी कान्त कवि शंकर ने गरिमा गाई है,

उसी ऋषि की याद

—७० सुरीलादेवी आर्दा प्रभाकर एम० ए० नरवाना



महर्षि दयानन्द की जय



[ले०—श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, प्रधान आर्य सार्वदेशिक सभा, दिल्ली]

स्वामी दयानन्द का लक्ष्य वैदिक धर्म का पुनः प्रचार करना था। और वैदिक धर्म की विचारधारा को सार्वजनिक जीवन का आधार बनाना था। यदि विचार की दृष्टि से देखा जाये तो जो वर्तमान समय में भारत का विधान है, उस पर कई अशोभों में ऋषि दयानन्द की छाया है।

शिक्षा के क्षेत्र में—

शिक्षा-जगत् में ऋषि शिक्षा को निशुल्क और अनिवार्य बनाना चाहते थे और धार्मिक शिक्षा को शिक्षा का आवश्यक अंग मानते थे। आज सिद्धान्त रूप से यह बातें मान ली गई हैं। और अब नैतिक और धार्मिक शिक्षा के लिये भी केन्द्रीय सरकार त्रिदात्मिक पग उठाने के लिये बाध्य हुई है। शिक्षा के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द सह-शिक्षा के विलुप्त विरुद्ध थे। भारत में पहले स्त्रियों की शिक्षा की ओर ध्यान नहीं था। पौराणिक स्त्री-शिक्षा का विरोध करते थे। स्वामी दयानन्द के प्रभाव और आर्यसमाज के प्रचार के कारण स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार आरम्भ हुआ और अब तो पूर्ण रूप से प्रचलित है। परन्तु महर्षि ने यह आवश्यक आदेश दिया था कि बालक और बालिकाओं की शिक्षा पृथक्-पृथक् होनी चाहिये। शिक्षा की दौड़-धूप में इस आवश्यक चेतावनी की ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। और दशा शोचनीय होती जा रही है। इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षा के जगत् में जितना उजाला है, वह सब स्वामी दयानन्द के प्रभाव से है और जितना अन्धकार है वह उनके आदेश की अवहेलना से है।

समाज सुधार के क्षेत्र में—

ऋषि दयानन्द सामाजिक व्यवस्था को ठीक रखने के लिये वर्ण और आश्रम की मर्यादा को आवश्यक मानते थे और इसका ही उन्होंने प्रचार किया।

जन्म की जातियों का उन्होंने बहिष्कार किया और यह सिद्ध किया कि जन्म से कोई जाति नहीं होती और न जन्म सूचक जानियाँ माननीय हैं। ऋषि का यह आदेश मान लिया गया है और विद्वान का अंग है, परन्तु दुःख यह है कि सिद्धान्त रूप में स्वामी जी की बात स्वीकार कर लेने पर भी क्रियात्मक रूप में उसकी अवहेलना ही हो रही है। देश में जातिवाद के कारण बड़ा भयंकर संघर्ष चल रहा है। यदि व्यावहारिक जीवन में जातिवाद का अन्त हो जाये तो सारे भारत में एकता का प्रचार हो सकता है। इसी प्रकार स्वामी जी ने अछूतपन के कलक को मिटाने के लिये भरसक प्रयत्न किया और यह सिद्ध किया कि सभ्य मानव बराबर है, उनमें कोई तोच है न च्य। स्वामी जी के प्रभाव के कारण अछूतों द्वारा और दलितों द्वारा का कार्य शकलता पूर्ण चला और अछूतपन का कलक मिटने लगा। विद्वान में यह भी मान लिया गया है और यह प्रयत्न बना दिया गया है कि किसी के अछूत होने के कारण उसी जीवन निर्वाह के मार्ग में कोई बाधा नहीं डाला जा सकती। इस सम्बन्ध का कागज भी बगन गया है। परन्तु इस क्षेत्र में भी बड़ी मूल का जा रही है। अछूत जातियों की सूची बनाकर और उनको हरिजन होने के आधार पर विशेष सुविधाएं में स्वामी और नौकरों के लिए मिलने से अछूतपन मिट नहीं रहा है परन्तु एक स्थाई रूप धारण कर रहा है। जब हरिजन या अछूत सामने जाने वाले आदमियों को अछूत बने रहने में अपना लाभ दाखल है तो अपने का अछूत करने में और समझन में सकोच नहीं करते अपितु गर्व अनुभव करते हैं। कुछ ऐसी जातियाँ भी हैं जो अछूत नहीं थीं, अब अछूतों की सूची में अपना नाम लिखाना चाहती हैं। हरिजनों के साथ पिछड़ी जाति का भी एक प्रसंग चल पडा है। उससे भी बड़ी हानि हो रही है। राष्ट्रीय सरकार एक और

जन्म की जातिशो का वटिष्कार कर रही है और दूसरी ओर अपने संचालन का आधार उन को बना रही हैं। जब सिद्धान्त और व्यवहार में उनका भेद होता है, तभी बड़ी हानि होती है। इसी लिए स्वामी दयानन्द मन बचन और कर्म में समानता चाहते थे।

राजनैतिक क्षेत्र में—

स्वामी दयानन्द प्रजातन्त्र के पोषक थे परन्तु वह यह मानने लगे थे कि सम्मति का अधिकार सब को है, इस बात पर बल देने के कि व्यवस्था केवल यार्मिक विद्वानों की व्यवस्था के अधीन पर ही हो सकती है। इस आवश्यक प्रश्न की भी स्पष्टता नहीं जा रही है और प्रजातन्त्र की आदत जल नहीं फल रही है और कलह का विचार हो रहा है। यदि ऋषि दयानन्द के आदेश का समक कर प्रजातन्त्र की व्यवस्था हो तो राजनीति के जगत् में भाव्य और शक्ति का साक्षात्कार हो सकता है।

धर्म के सम्बन्ध में टिप्पणी—

स्वामी दयानन्द धर्म को सारे जीवन का आधार मानते थे। वह दिन रात के विचार किए हुए जीवन का कोई कार्य सफल नहीं मानते थे। अर्थ और काम जीवन के लक्ष्य हैं मोक्ष भी एक महान् लक्ष्य है परन्तु धर्म के बिना अर्थ और काम की व्यवस्था नहीं है। ऋषि दयानन्द ने धर्म की आवश्यकता पर बल दिया और अब उनके इस प्रभाव से राष्ट्र के सचालक भी धर्म की आवश्यकता अनुभव करने लगे हैं। परन्तु कमी यह है कि धर्म का असली स्वरूप उनके सम्मुख नहीं है, वह धर्म के न्यान में सम्प्रदायों का समकन लगते हैं, और सम्प्रदायों से जो हानि हो रही है उससे डर कर धर्म की ही अवहेलना करने लगते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि धर्म के स्वरूप को समझा जाये, धर्म न केवल सारे भारत को परन्तु सारे ससार को एक सूत्र में बाध सकता है। यदि इस आदेश का अन्वय नहीं किया गया तो बड़ी हानि होने की सम्भावना है।

विश्व-प्रेम—

इस समय आवश्यकता ससार की जय बोलने की है। केवल जय-हिन्द में काम नहीं चलेगा। स्वामी

दयानन्द ने आर्यसमाज के छोटे नियम में ससार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य बताया। उनका लक्ष्य विश्व प्रेम था, देश प्रेम नहीं। आज फूट की अग्नि धधक रही है। सारा ससार जल रहा है। हमें स्वामी दयानन्द की जय के साथ सारे ससार की जय बोलना सीखना चाहिए तभी ससार में सुख और शांति का साम्राज्य हो सकता है।

युग-द्रष्टा महर्षि दयानन्द के प्रति

[रचयिता—लक्ष्मीकान्त गुप्त वी० ए०, कोटा]

चहुँ ओर आतक फैला दासत्व, आठम्वर, अनुदारता, उद्वेग का कुप्रभाव सव्याप्त था। दम्भ, दौर्बल्य, आलस्य, ईर्ष्या, द्वेष, मालिन्य, मद्य, मोह ने घेरा जमा रखा था। सुरीतियों जडता एव प्रसाद का साम्राज्य फैला था—ऐसी अविद्या की तिमिर रात्रि में तुम जीवन ज्योति बनकर आये।

अमर उन्नति, तुम सत्य व्रत साधना हेतु शान्ति क्रान्ति के दूत थे। मानवता की मूर्त्त थे। सरलता, साहस, ईश्वर तथा पवित्रता के प्रतीक थे। स्वतंत्रता के मन्त्रदा, पतितोदारक तुम देश हितैषी थे।

विश्व विभूति, वैदिक सिद्धान्तों का पुनः स्मरण करा, अज्ञान की शीशा बजाई तथा तम हृदय का शीतल दान किया। अज्ञान अंधेरी का आच्छादित कर—विश्व आलोकित कर—दीपावली की अमा—रात्रि में तुम चिर निद्रा में लीन हो गये—यही है तुम्हारी श्रेष्ठता।

महायोगी, तुम्हें शत्रु शत्रु प्रणाम।

छुट्टियों में वैद्यक टूनिंग

इंजेक्शन लगाना बनाना स्टेथेस्कॉप नाड़ी रोग निदान चिकित्सा आदि १२ विषय लिखित और प्रैक्टिकल के साथ १२ दिन में केवल ३१।) फीस में रजि० वी० प० बोर्ड के "आयुर्वेद इंजेक्शन विशारद में A I V के साथ सर्टिफिकेट समेत शीघ्र आकर प्राप्त करें या कोई मंगा लें।

पता:—सै. एस. एस. विद्यापीठ वी परीक्षाबोर्ड रजि० लेलिनपुर (फाम्मी)



विश्व शांति का वैदिक मार्ग

(अय लोको जालमासीच्छक्रस्य महतो महान् (अथर्व)
[ले०—श्री प० विहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ बरेली]

सम्पूर्ण विश्व में शांति स्थापित करने के लिये श्री मुन्तरलाल आर्य ने शांति परिषद् स्थापित कर रक्की है जिसके प्रधान पद से कलकत्ते में उद्घाटन बह भाषण दिया जिसमें नवीय प्रथम मन्त्री का हृदय भी छुन्न हा उठा। शांति के नाम पर चपटनी चीन का बहवा ? यह कसी शांति ? विश्व में शांति सुरक्षा के लिये कभी परिषद में सभा होती है कभी न्यूयार्क में। पर सत्र नगद वही दाव पच चले जात हैं कि हम ही सर्वोपरि कसे रह।

तब तब ससार की बागजार र जनैतिक मार्ग गरा के हाथ में रहेगा शांति कग और कैसे हा सकता है ? जिनके मन अस तुष्ट और अरान्त ना मह याकात् के घडा पर चड भाग रहे हैं और विश्व पर धूल ढडा रहे है उनसे शान्त मुखमय व तावरण को अशा ! 'इ खगालस्ता मुहालस्ता जन् यह विचार असभय और पागलपना है। मुख शान्ति का उपाय एक ही है जा वेद बताता है—

‘सहृदय सामनस्यमविद्वेष कृणामि च ।
अन्याअन्यमाभिहृयंतवत्स जातमिवाद्या । (अथर्व)

सहृदय बना अपने कष्ट के समान अन्या के कष्ट का भी समझे सकर मनाभावा की कष्ट करा अपन मन के अनुकूल ही सकरा चलान का यत्न मत करा। खुनई फौजदार मत बना। अनक मता न खुनई फौजदार बनकर प्रजा का मारा काटा पर सफलता स दूर रहे। इश्वर के नाम पर शांति स्थापित करने के नाम पर मतवाला ने तलवार चलायी 'कतले आम किया पर ससार एकमत न हा पाया। कुछ निराश व्यक्तिया ने इसे टाप रूप मानकर त्याग देने का कडा पर यह स्य गा उनसे भी नहीं गया। चले चेलियों की भीड़ में ही वे रहे और मर। तब ससार ही विलक्षण जल। वेद के शांति में महान् इश्वर तो फिर इससे बूटना दुस्तर ?



—लघन—



क पुरक यहि जल परि कत कुरग अकुलाय ।
अय जो मुखिमि अवा चहे तना त्या अरुर्कत पाय ॥
कना नही मुलकता यह जाल ? मुलके कहां से
सिरा मिले ता मुलके ।

फिलसफी की बहस में उसका पता मिलता नहीं।
डर का मुलका रहे है पर सिरा मिलता नहीं ।
इस जाल का सिरा ता उसी की शरण में जाकर
मिल सकता है जिसका कि यह जाल है। उस महान्
इंद्र (एश्वर्यान् प्रभु) का मुलाकर अभिमानो जीव
अपन का तब तक सब कुछ समझता रहेगा तब तक
इस जाल में पडा तडपेगा। साम्यवाद समाजवाद
गांधीवाद और मार्क्सवाद चाहे जितने वाद हा विवाद
हा बढ़ायगे तब तक ब्रह्मवाद की शरण में नहीं
अया। ब्रह्मवाद अभिमान का दूरकर आत्म चिन्तन
की आर ले चलता है। आत्मचिन्तन से सामनस्य
पेग हाता है। दूसरो के अधिकारों की रक्षा का भाव
हाता है। सह अस्तित्व (Co-existence) की भावना
दृढ हाती है।

दृष रहित बना। किसी के वैभव का देखकर
जला मत। मुदिन बना। और एक दूसरे का इस
प्रकार प्रेम करो जैसे गौ अपने बछड़े को प्रेम करती

है। यह सौदाहरे की तुल्यवन्तो समीर बढ़ायोने क्या ये अहमभाव में मस्त राजनैतिक नेता ?

आजकल आत्म चिन्तन, धर्मभाव, प्रभु चर्चा सर्व गुण दूर भगा दिये गये वेधल राजनीति, वेधल अधि कारवाद, तर्मागुणी नेताओं के कारनामे यही सामग्री सर्वत्र व्याप रही है। किसी समाचार पत्र को उठाओ खुशबू, आइक, लुमुन्वा, इन्ही की चर्चा। इन्ही के गुणावगुण का गणन। अरान्ति की धूल सव में फैल गयी। ईसा के चेले अक्रोक्रन सरकार वाले भी हैं। पर जो पदरो वना सम मानना न; प्रचार करता था, उसे निकाल दिया इन्होंने। उनको छिटि में गोरे ही विश्व में जीने के अधिकारी हैं और नहीं। यदि ईसा मसीह भी उनके राज्य में आ पहुँचे तो उन्हें भी दुबारा सूली पर चढ़ना पड़े।

गीता के अनुसार च प्रभुरी वृत्ति सपन्न, ससार को वन्यन में ही जकड़ रहे हैं। द्वेष ने द्वेष ही तो उपजेगा। (निश्वायाधुर्गिता)

मत मत, रन्तर, प्रान्त, देग, जाति, रग इन सबके भीतर एक आत्मन्तर का प्रयत्न है। तुम्हरे भावनाओं का पकड़ना। सतः कल्याण की कामना करना है। एक मत, धर्म वर्म को अपनाना है। मानव सब जीवों में बड़ा है, अतः सब जीवों को रक्षा करे। उसके नेतृत्व में सब ही सुख से रहे यह हे व्यापक स्वरूप अहिंसा का। वेद भगवान् कहते हैं—

“मित्र की दृष्टि से मैं सब जीवों को देखूँ और मित्र की दृष्टि में सब जीव मुझे देखें” (मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि मुमूर्त्से मित्रमपि म चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षताम) मजदूर वर्ग, किसान वर्ग, पूँजी वाले और बुद्धिजीवी केवल इन तक ही सीमित न रहें किन्तु जीवमात्र की ओर लाने। वेद भगवान् का यह व्यापक दृष्टिकोण सह-अस्तित्व को बढ़ा करेगा। द्वेष की दुर्गन्ध से उपन्न वे राग जिन्हे राजनैतिक मदारी बढ़ा रहे हैं, तब ही दूर होंगे जब व्यापक दृष्टिकोण बढेगा।

पर यह दृष्टिकोण कैसे हो। इस धूल धकड़ में कौन-कौनो कल्याण का मार्ग ? कल्याण मार्ग सुभाना उन महात्माओं का काम है जो स्वार्थ से रहित रहे चुके हैं। अग्नि प्रदान करने वाले हैं—

“यदि सभा में (राज्य सभा) में मतभेद हो तो बहुपक्षानुसार मानना और सम पक्ष में उत्तमों की बात खोकार करनी और दोनों पक्ष वाले बराबर उत्तम हो ता बड़ाई सन्यासियों को सम्मति लेनी। जिर पक्ष पात रहित सर्व हितैषी सन्यासियों कि सम्मति हाँवे वहाँ उत्तम समझनी चाहिये” (मस्कार विधि)

सन्यासी से तःपर्यं स्वामी जी का केवल कपडे वाले सन्यासी से नहीं है। रेखांकित शब्दों में स्वामी जी ने सन्यासी के लक्षण भी कह दिये। “पक्षपात रहित सर्व हितैषी”

आज कहाँ है ऐसे महापुरुष ? सन्यासी केवल ब्राह्मण ही बन सकता है। जब ब्राह्मण ही नहीं तो सन्यासी कहाँ ? आज ता वैश्य और शूद्र प्राय ही जगत् हा रहा है। आत्म व्यवस्था क्या है ? मनुस्मृत्य की निर्माणशाला भौतिक पदार्थों की अनेक निर्माण शालाये बनती जा रही है पर मनुस्मृत्य बनाने का निर्माण शालाये (गुरुकुल) कहाँ हैं ? आज के विशालता में शिक्षा है उच्चकोटि का ज्ञान विज्ञान निर्याया जाता है पर उस ज्ञान विज्ञान का समय में रखना, लक्षित में ही प्रयुक्त करना इसका अभ्यास कराया जाता था गुरुकुलों में।

जनकल्याण की भवना वाले व्यक्ति स्वयं तो अथ भी अनेक उपन्न हुए। प्रत्येक देग में जन्म। कौलिजों में से भी निकले और घर पर ही बैठे भी बने। पर यह पूर्व सस्काओं के कारण कतिपय व्यक्ति टालस्टाय गारी, अद्वानन्द, हसराज, नारायणस्वामी आदि प्रकट हुए। मनुष्य समाज में व्यवस्थित रूप से ऐसे अनेक जन ब्रह्मण श्यागी तपस्वी विद्वान् जन तैयार हों उनका उपाय वर्णाश्रम व्यवस्था ही है।

इस महाद्वन्द्व युद्धकाल में मुक्तिपाने, अशांत राज नैतिक भ्रमभट्टों से बचकर मुख्यव्यवस्थित जीवन बनाने का उपाय एक ही है कि मनुष्य अहमभाव को छोड़कर करोड़ों वर्ष के अनुभूत कल्याणकारक मार्ग वेदों पदेरा को अपनाने। सद्बुधता, सांमनस्य, अविद्वेष और सर्वहित करण। विश्वमेंत्री यही वेदोपदेरा फैलाने के लिये वर्षों तप करते हुए अग्नि द्यानन्द ने दीपावली पर प्राणोत्सर्ग किया। जगत् के हितैषी अग्नि को प्रणाम हो प्रणाम हो।

राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का आदर्श—

२०१८

गुरुकुल शिक्षा-पद्धति



[ले०—श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालकार, उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय]



१—राष्ट्रीय शिक्षा तथा गुरुकुल का अभिप्राय

अन्व राष्ट्रिय शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल आन्दोलन का इतिहास दो कालों में विभक्त है। स्वतन्त्रता से पहले का काल और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का काल। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले के युग में गुरुकुल आन्दोलन का जनता और राष्ट्रिय नेताओं से इतना आर्थिक सहयोग और शक्ति मिली थी, कि उन दिनों प्रत्येक नेता गुरुकुलों में आना तथा देखना अपना दत्त समझता था। यद्यपि गुरुकुलों का सच लक्ष्य आर्यसमाज द्वारा हो रहा था; किन्तु रचना गार स्वरूप इस प्रकार का था कि विदेशों से आने वाले शिक्षा विशेषज्ञ भी अपना भारत यात्रा उस समय तक अधूरी समझते थे, जब तक वे गुरुकुलों में दर्शन न कर लें। वस्तुतः उस समय यह अचित ढंग का एकमात्र राष्ट्रिय शिक्षा आन्दोलन समझा जाता था। असहयोग आन्दोलन के दिनों में भारतीय नेताओं ने इस बात का प्रयत्न किया कि वे राष्ट्रिय शिक्षा सथाओं का चलाए। इन सब में गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली का अनुसरण किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया। यह कहा जाता है कि अथ दमार ढंग की बाग डार हमारे हाथ में आ गई है, हम इस स्थिति में हैं कि अपनी शिक्षा पद्धति का निम्न इच्छानुसार कर सकें। इस समय शिक्षा क्षेत्र में होने वाली सभी कार्यों को राष्ट्रिय शिक्षा कहा जाना चाहिए, किसी संस्था या प्रणाली विशेष को ऐसा दावा करने का अधिकार नहीं कि केवल उसी को राष्ट्रिय कहा जाना चाहिए। कुछ अर्थों में यह सत्य भी है। जो शिक्षा पद्धति राष्ट्र के सीधे नियन्त्रण में हो और उसे किसी अन्य शक्ति द्वारा उबर से न बापा गया हो, वह शिक्षा पद्धति निरिक्त रूप से शब्दार्थ की दृष्टि से राष्ट्रिय है



श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालकार

विन्तु वास्तव में आज हम भारत में जिस पद्धति का अनुसरण करते हैं, वह राष्ट्रिय नहीं क्योंकि यह शिक्षा पद्धति हमारे देश की नहीं है। यदि वह राष्ट्रिय है, तो केवल शब्द की दृष्टि से इसे ऐसा मानना चाहिए न कि भावना की दृष्टि में अमेरिका के आने के बाद भारत की शिक्षा पद्धति में हमने क्या परिवर्तन किये हैं। गुरु शिष्य के मन्वन्धों में इतना अधिक तनाव है

कि अनुशासन समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। चरित्र-निर्माण की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है। शिक्षण के कार्य का अध पतन हो गया है, उसने संबंध अपनी मजबूरी के लिए सवर्ष करने वाले मजदूरों के पेशे का रूप धारण कर लिया है। क्या यही राष्ट्रिय शिक्षा है। राष्ट्रिय शिक्षा के लिये वस्तुतः राष्ट्रिय भावना से आंत-प्रांत होना आवश्यक है। ऐसी विशेषता रखने वाली शिक्षा को ही राष्ट्रिय कहलाने का अधिकार है। अफ्रेजों से विगत में पाई हुई उच्च शिक्षा-पद्धति का राष्ट्रिय नहीं कहा जा सकता, जो न तो ब्रिटेन में है और न ही अन्य देशों में पाई जाती है।

मेरी दृष्टि में इस समय प्रचलित शिक्षा स्वयं प्रवृत्तिलिये राष्ट्रिय नहीं हो सकती क्योंकि इसका संचालन अब हमारे हाथों में है। राष्ट्रिय शिक्षा में कुछ राष्ट्रिय विशेषताएं होनी चाहिए। हमारी वर्तमान शिक्षा में उसका शोचनीय अभाव है। इसके अतिरिक्त मेरा यह भी कर्ना है कि ये राष्ट्रिय विशेषताएं वर्तमान समय में गुरुकुल शिक्षा-पद्धति में विद्यमान हैं, और स्वतंत्रता प्राप्त हो जाने के बाद भी गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के इस ढांचे का कोई पुनर्जीव नहीं दी जा सकती कि उसके अनुसार चलने वाली सस्था राष्ट्रिय शिक्षा सस्था की जानो चाहिए। इस समय यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि भारतीय शिक्षा में किस विशेषताओं का राष्ट्रिय नशा जाना चाहिए। वास्तविक राष्ट्रिय शिक्षा को मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं—

(क) भारतीय शिक्षा पद्धति गुरुकुल शिक्षा कहलाती थी—गुरुकुल शिक्षा-पद्धति के इतिहास की गहराई में जाने का आवश्यकता नहीं है, किन्तु हमारे राष्ट्रिय का सामान्य परिचय रखने वाले व्यक्ति भी भी यह जानते हैं कि प्राचीन भारत में शिक्षा देने वाली सस्थाओं को गुरुकुल कहा जाता था। हमारे शिक्षा-शास्त्रियों ने जिस शिक्षण-पद्धति का विकास किया था, उसे गुरुकुल का नाम दिया गया। अतः भारत में यही शिक्षा-पद्धति प्रचलित थी, अतः गुरुकुल पद्धति ही हमारे देश की राष्ट्रिय शिक्षा-पद्धति कहलाने का अधिकार रखती है।

(ख) गुरुकुल शिक्षा के क्षेत्र में एक पद्धति का

नाम है, किसी विशेष सस्था का नाम नहीं है। गुरुकुल शब्द एक शिक्षा पद्धति को सूचित करता है न कि किसी विशेष सस्था को। जैसे शिक्षा में एक बुनियादी पद्धति है, वैसे ही इसमें गुरुकुल-पद्धति है। गुरु का अर्थ पढ़ाने वाला शिक्षक है और कुल परिवार को कहते हैं। गुरुकुल पद्धति परिवार से बहुरा माध्य रखती है, इसमें गुरु पिता का स्थान ग्रहण करता है और शिष्य पुत्र का। गुरुकुल पद्धति में लड़का अपने माता पिता के छोटे कुल से गुरुकुल होकर के गुरु और उसके शिष्य के विशाल कुल का सदस्य बनाना जाता है। इसका यह अभिप्राय है कि गुरु और शिष्य में बसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए जैसा एक परिवार में पिता और उसके पुत्र में होता है। शिक्षा के क्षेत्र में यह सर्वथा नवीन प्रक्रिया है, और हमारी समूची राष्ट्रिय शिक्षा-पद्धति को आधार शिला यही दृष्टिकोण होना चाहिए।

(ग) गुरुकुल का अभिप्राय एक जीवन भी एक पद्धति है न कि कोई पद्धति या पद्धति का बला पुस्तक। सामान्य रूप से यह समझा जाता है कि गुरुकुल का अर्थ वेदों, गुरुकुल तथा गुरुकुल साहित्य का शिक्षा देना है और उच्च गुणवत्ता शिक्षा का प्रदान करना है। परिवार स्वरूप नहीं है। गुरुकुल गुरुकुल जीवन और उच्च विद्या पर ध्यान देने वाली एक जीवन पद्धति है। इसका किन्हीं पुस्तकों या भाषाओं से कोई सम्बन्ध नहीं है। समष्टि का ज्ञान रखने वाला एक परिष्कृत भी अगुरुकुलीय जीवन बिता सकता है और परिवर्तन ज्ञान का प्रकाण्ड परिष्कृत गुरुकुलीय जीवन पद्धति का अनुसरण कर सकता है। इसलिये गुरुकुल कागर्भ विषय विद्यालय तथा अन्य गुरुकुलों ने इस शिक्षा-पद्धति के अनुसार छात्रों में गुरुकुलीय जीवन भरने का प्रयास किया है। जब यह गुरुकुलीय जीवन तथा गुरुकुल का दृष्टिकोण हमारी शिक्षा में आंत-प्रांत हो जायगा तभी हमारी शिक्षा-पद्धति राष्ट्रिय बनेगी, यह अन्य किसी प्रकार से संभव नहीं है।

(घ) ब्रह्मचर्य अथवा चरित्र निर्माण गुरुकुल शिक्षा-पद्धति का आधार शिला है। गुरुकुल के जीवन

म मूर्त रूप ग्रहण करने वाला भारतीय शिक्षा का राष्ट्रिय रूप इसके ब्रह्मचर्य के आदर्श म सर्वोत्तम रूप म व्यक्त होता है। ब्रह्मवय अधिवाहित चरित्र तत्क सीमित नहीं है, किन्तु य अपने व्यापक अर्थ म अपने मे चरित्र निर्माण के सन्तुष्ट क्षेत्र का समावेश करता है। उत्तम मन समय म हमारी शिक्षा राष्ट्रिय इसलिये कहा जाता है कि इसका संचालन राष्ट्रिय नेताओं के हाथ म है। इसम चरित्र निर्माण की आर विलुप्त धन नहीं लिया जाता अत यह गुरुकुल पद्धति ने राष्ट्रिय भावतम त फ अनुसर नहीं है। राष्ट्रिय शिक्षा चरित्र निर्माण के मूल धार पर प्रतिष्ठित जाना चाहिये। गुरुकुल पद्धति का मुख्य विशेषता—गुरु और शिष्य के अर्न्तनिर्वा घान्त्र सम्पर्क द्वारा चरित्र का निर्माण करना है।

(ड) शिक्षा के क्षेत्र म गुरुकुल एक आदालत है— शिक्षा के क्षेत्र म गुरुकुल के विचार का श्रीगणेश एक नई विचारधारा प्रारंभ ने अन्तर्दान के रूप म हुआ। यह जनता म इतना लक्ष्मि हुआ कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहिले के युग म प्रत्येक व्यक्ति अपने वचन का गुरुकुल म भेजकर प्रशिक्षित करना चाहता था। उस समय जा व्यक्ति कसम शिक्षा सत्या का राष्ट्रिय त्म से चलाना चाहता था वह गुरुकुल के रूप म ही साधता था। गुरुकुल का धन आन वाले सभा विचार हमारी राष्ट्रिय शिक्षा के मूल तत्त्व है।

गुरुकुल शिक्षा पद्धति की पयुक्त विशेषताओं का हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति म पूर्ण अभाव है। अतएव यह धन पूर जल के साथ कही जा सकती है कि यद्यपि शिक्षा का नाति का निर्माण हमारे हाथो म है, किन्तु अभी तक हमने शिक्षा का वास्तविक राष्ट्रिय पद्धति क प्रण नहीं किया। यत गुरुकुल आन्दोलन के अन्तर्गत चलत वक्त्री सस्थाए इन राष्ट्रिय आदर्शों को व्यावहारिक रूप प्रदान कर रही हैं, अत उन्होंने अपना राष्ट्रिय स्वरूप अलुपण रखा है और भारतीय शिक्षा पद्धति के कर्णधारो का उन पर गम्भीर विचार करना चाहिये। महर्षि निर्वाण की स्मृति वेला म प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है कि वह उनके गुरुकुल शिक्षा प्रण ली सम्बन्धी मार्गदर्शन से प्रेरणा ले और गुरुकुल आन्दोलन का क्रियात्मक समर्थक उन राष्ट्रिय शिक्षा को आदर्श बनावे।

❀ दीपावली की अनुपम भेंट ❀

ऋषि दयानन्द का पाँच रंगों में सुन्दरतम आफमैट चित्र १८×२२ आकार में



आर्यनेताओं द्वारा प्रारंभित, मूल्य ७५ नये पैसे

१५ चित्रों का अग्रिम मूल्य डाक-व्यय सहित
११) रुपये।

१०० चित्र एक मास संगाने पर ६०) रुपये।

गीता-विमर्श

समस्त गीता प्रच्छिप्त है—

एक नवीन क्रान्तिकारी रचना मूल्य ७५ नये पैसे।

प्रकाशक-पं० राजेन्द्र, आर्य-निवास,

१८, बंगला, दिल्ली - ११

एक
दीप
बुझ
गया

एक दीप बुझ गया इसी दिन, अनगिन जीवन दीप जलाकर !
वह प्रकाश लेकर आया था, अन्धकार कैसे रह पाता !
ऐसा-वैसा दीप नहीं था, एक झकोरे में बुझ जाता ! ★

मन्मानिल भी मुग्ध रह गया, जिसकी दीपित ज्योति शिखा पर !
एक दीप बुझ गया इसी दिन, अनगिन जीवन दीप जलाकर ! ★

विघ्नो ने वी जिसे बचाई, शूलो ने सत्कार किया था !
दुनिया के दुर्क्यबहारी ने, विष का ही उपहार दिया था ! ★

अवरोधो की अन्ध दृष्टि ने, त्वागत किया उपल धरसाकर !
एक दीप बुझ गया इसी दिन, अनगिन जीवन दीप जलाकर ! ★

उत्पातो की आग देखकर, जिसे हो गई पानी-पानी !
रोड़े भी रोपड़े भूल पर, मृशु प्राण लेकर पछतानी ! ★

पत्थर भी पत्थर न रह सके, फूल बने सिर से टकराकर !
एक दीप बुझ गया इसी दिन, अनगिन जीवन दीप जलाकर ! ★

वेद विभा से तिमिर ध्वस्त कर, जले दीप-से, निर्भय होकर !
तेरी इच्छा पूर्ण हो गयी, प्रभु की इच्छा में लय होकर ! ★

नयी ज्योति भर रहे दुगों से, दीप-दीप में तुम मुस्काकर !
एक दीप बुझ गया इसी दिन, अनगिन जीवन दीप जलाकर ! ★

—लाखनसिंह भदौरिया, नैनपुरी

आ
गयी
दीपा
वली

★ ★ ★

आर्य सस्कृति दीप चमके आ गयी दीपावली ! ★
वह चले श्रुति सोम भरने आ गयी दीपावली !★
स्वाध्याय सौरभ जग उठा फिर 'धर्म' मर्यादा बढी । ★
आराधन का तम तम हरने आ गयी दीपावली !★
उच्चरित हो 'ओ३म्' पर घर परिवर्गिक पूत हो । ★
जलामि इत्तर भन्ने आ गयी दीपावली !★
रुचने घरों में एक जैसे दीप ज्योतिन तो रहे । ★
एनात्मता का पाठ देने आ गयी दीपावली !★

वासु मखल शुद्ध करन लग गय जल जल दिये । ★
निर्गार्थ सेवा भाव भरने आ गयी दीपावली !★
राम के आदर्श का श्रृपिराज के ध्रुव सत्य का । ★
सचरित शुचि सार करने आ गयी दीपावली !★
आ गयी वह आर्य प्रेरक आज गुरु बलिदान तिथि । ★
शक्ति पर नवचार धरने आ गयी दीपावली !★

—धर्मचन्द्र वर्मा 'धर्म' लखनऊ

दीपावली का दिव्य संदेश

ले०—आचार्य श्री रमेशचन्द्रजी शास्त्री, विद्याभास्कर, भारतीय विद्या प्रतिष्ठान, अजमेर

दीपावली प्रति वर्ष आती है। भविष्य में भी दुग दुगान्तर तक आती रहेगी। इसके आवागमन में किसी प्रकार की बाधा पडने वाली नहीं है। करोड़ों की पुरुष इस पर्व को बड़े उत्साह एवं उल्लास के साथ मनाते हैं। आन्तरिक प्रसन्नता की जैसी लहर इस पर्व पर देखने को मिलती है, वैसी अन्य पर नहीं मिलती।

दीपावली के साथ अनेक मधुर तथा कठु स्मृतियाँ हमारे समाज की बँधी हैं। लाखों वर्ष से मनाए जाने वाले पर्व के साथ ऐसा होना संभव ही है। हमें तो इस बात पर विचार करना है कि हम दीपावली क्यों मनाते हैं? दीपक जलाकर प्रसन्नता का अनुभव क्यों करते हैं?

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह अन्वेषण से भाग्य प्रकाश की ओर बढ़ता है। मनुष्य ही प्रथा, उल्लू को छोटकर सभी प्राणी प्रायः प्रकाश की ओर बढ़ते जाते हैं। उल्लू तो उल्लू है, यदि वह भी प्रकाश की ओर बढ़ता तो फिर उसे उल्लू ही कौन कता? इसका तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य प्रकाश से दूर भागता हो उसे उल्लू ही कहना चाहिये। बात भी यही ही है।

दीपावली पर दीपक जलाकर अमावस्या की घोर अन्धरात्रि का अन्धकार दूर किया जाता है। यह तो हमारी भौतिक व्यवस्था है। ठीक इसी प्रकार मान का दीपक जलाकर हम अपने आध्यात्मिक अज्ञानान्धकार को दूर भगाने का प्रयत्न करें, यह इस पर्व का तात्विक भाव है। बौद्ध साहित्य के प्रसिद्ध वाक्य—“असतो मा सद्गमय, तमसा मा ज्योतिर्गमय, त्महामा ज्योतिर्गमय” का भी यही भाव है। हम अज्ञान अस्तित्व से सत्य की ओर बढ़ते हैं।

अन्धकार से प्रकाश की ओर बढ़ते रहे। मृत्यु से अमृत की ओर बढ़ते रहे।

‘असत्य से सत्य की ओर बढ़ना’ साधन है, इसके बिना हमारा अज्ञान अन्धकार नष्ट नहीं होगा अर्थात् सत्य के द्वारा हम अपने आत्मा में ज्योति उत्पन्न करें। जब हमारे भीतर ज्योति जग जागो तभी हम मृत्यु से दूर हट कर अमृत की प्राप्ति कर सकेंगे। अमृत की प्राप्ति ही मानव जीवन का उद्देश्य है। यह अमृत उसे तब मिलेगा जब वह सत्य के द्वारा ज्योति प्राप्त कर लेगा। सत्य के बिना प्रकाश नहीं और प्रकाश के बिना अमृत नहीं।

दीपावली का भौतिक प्रकाश मार्ग दर्शक है। जहाँ जहाँ दीपक जलाते, मार्ग का अन्धकार वहाँ से हट कर दूर चला जाता है। इसी प्रकार सत्य आध्यात्मिक प्रकार का प्रतिष्ठान है। सत्य के बिना आत्मा में प्रकाश नहीं हो सकता।

दीपक में गन्ध तैल होता है, जो जलता है और प्रकाश की वृष्टि करता है। गन्ध-प्रेम के बिना प्रकाश नहीं। आत्मा में प्रेम नहीं तो राग द्वेष आकर बैठ जाये, ये आत्मा को कभी प्रकाश की ओर न बढ़ने दें। इस कारण आत्मा में प्रेम की ज्योति को प्रज्वलित करना मानव का मुख्य कर्तव्य है। वह प्रेम व्यभिचार न होकर समष्टिगत होना चाहिये। एकत्व से अनेकत्व की ओर ले जाने वाला होना चाहिये। महात्मा बुद्ध के शब्द—“बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय” में यही समष्टिगत प्रेम परिलक्षित है। सन्त कीर्ति तो प्रेम के बिना किसी का पोरछन मानने के लिये तैयार नहीं। “ढाँड अलर प्रेम का पढ़ूँ सो पखिल होऊँ” राजपुत्र के टाई डकनर इस जीवन के लक्ष्य रहे।

दीपायना का यथान्तर्गत विवरण है। अत्र
वर से हस्तर प्रकृशना और उठने रण्डपने
हस्तर समष्टि प्रेम का और उठने। एतुने हटकर
अमृत की आर वडना।

हम भारतीय जन महान् सपेरा क ल... र्प
मे अपने जानन म उत्तरतं अ रहे ह और नगर का
सुनाते आ रहे है। भगवान् मन्वार र्मी क र
मर्षि दयान द ने नीपायला के निरु कपन एण म्म
उत्सर्ग करके यही पावन सन्ने म नयम त र्वा म्म
था। क्या आज का पीडित मानवता जन मन्त्र का
सुनेगा ? क्या आज का नग्भक्त नर हम पन्त्र का
समभोग ? क्या आज का क्रम हपव म्म न म्म
मन्देश का पालन करेगा ? क्या प्रयत्न म्मिग अत्र
हम उत्तर देना है।

आर्य शिक्षा मंथार्यों को सूचना

सभा का आर से जा न्मान आर्क मिनि ट्रेरन
म प्ररूप आर्य शिक्षा सन्ध म्म का भेना गया है
म क शिक्षा सन्ध म्म के अधिकार। जना विनाम
का भन किमा प्रकार का परिवर्तन न कर। चिन ब ता
के सन्ध-व म मनभे प्रत त ह ता ए सभा का आर मे
शिक्ष विन म मे उनके सन्ध म पत्राचार किमा जा
रा ए।

भगवान् -

रामकहलुर सुखार

अधित ता शिक्ष विभाग
उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा
पूरनपुर—चिन्ना पीलाभीत

पुत्र गुणपति वृद्धाभवन का
पुत्र रे सन् परी म
गुणजन न पर पता का
अनुपम पुत्र हना है।

पिता का अपना सन्त न
नी पवित्रता मे जितना टटफ
पडती है उससे अधिक अन्य
किमी बात से नी। किसी
के भाग्योदय हाने पर ही "मे
गुणी पुत्र प्राप्त हात है। पुत्रों
के पास बिद्या, धन तथा
सुचरित्र होने पर पिता ही
नहीं समस्त सम्बन्धियों का
दिव्य सुख और दिव्य हर्ष
प्राप्त होता है। × ×
नास्ति खलस्य मित्रम्।

धूर्तका कोई मित्र नहीं
होता। सवजन से दुर्व्यवहार
करने वाला खल बन्धुहीन
होता है। मित्रता का गुण
सवजनों मे ही होता है। दुर्जन
सज्जनों से बँर करके अनिर्गर्भ
रूप से बन्धुहीन हाकर मित्र
द्वेषी धन जाता है। × ×



नैनाल

दुखती आंख, लाली, घाव, आदि अनेक नेत्र रोगों
की अत्यन्त लाभप्रद औषध,
नारवों व्यक्ति प्रतिवर्ष लाभ उठाते हैं।

नैनाल काजल



आंखों को तीसरा तथा सुन्दर बनाता है।

दिहती कैमिकासक दरियागंज देहती

जाति रक्षक महर्षि

[लेखक—श्री इन्द्र वर्मा एम०ए० रामनगर, ननीताल]

लेखक—

यों तो समय समय पर भारत में, अनेक महान् विभूतियां जन्म लेती ही रहती हैं, किन्तु महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती का जन्म लेना भारत के लिये एक विचित्र एवं चिरस्थायी घटना है। स्वामी जी का जन्म ऐसे समय में हुआ था, जब कि भारत का स्थिति बड़ी ही दयनीय था। हिन्दू समाज पतन की आरम्भसर था। लुप्तप्राय, साम्प्रदायिकता, सुश्लिष्ट जाति के अत्याचार, विधवाओं की दयनीय स्थिति, बाल विवाह आदि अनेक दुर्गति से समाज में त्राहि त्राहि मची हुई थी। चारों ओर अविद्या रूपी अन्धकार के बादल महराये हुए थे। भारत की भाली भाली जनता को कोई सहारा देने वाला भी न था। चारों ओर से एक ही आबाज आती थी 'भारत की नाश सफ्ट में है'। माना इसी सफ्ट प्रस्त नाव का बचाने एवं किनारे लगाने के लिये प्रभु ने महर्षि को ससार में जन्म दिया हो।

महर्षि ससार में आये। ससार की समस्याओं का अध्ययन करने का अवसर उन्हें भारत में मिला और अन्त में उन्होंने ससार के कल्याण के लिये 'कृष्णन्तो विश्वमार्यम्' का नारा लगा सम्पूर्ण हिन्दू (आर्य) जाति को चेतन कर दिया। यदि महर्षि ने उस सफ्ट के समय भारत का यह मुग्ध-मग्न न दिया होता तो सम्भव था कि भारत से हिन्दू (आर्य) जाति सदैव के लिये नष्ट हो जाती। अतः आज हमारा हिन्दू समाज महर्षि का ऋणी है और रहेगा।

महर्षि दूरदर्शी थे। वह जानते थे कि उनके परचात् सम्भवतया उनका मुग्ध-मग्न ससार से ओझल हो जाय। अतः उन्होंने यह आवश्यक समझा कि भारत में एक स्वामी संस्था की स्थापना कर दी जाये जो उनके उद्देश्य की पूर्ति एवं हिन्दू समाज की रक्षा के लिये कार्य करे। उन्होंने किया और किया ही। सन् १८६१ में उन्होंने



उद्देश्य से एक संस्था की स्थापना की गई जिसको 'आर्यसमाज' अर्थात् 'आर्यों का समाज' नाम दिया गया। आज आर्यसमाज की शाखाएँ भारत में सर्वत्र एवं अनेक अन्य देशों में भी हैं। स्वामी जी ने इस संस्था के दश नियम भी निर्धारित किए जिनसे कि आज प्रत्येक आर्य मली मॉति अवगत है।

अतः आज दीपावली के अवसर पर प्रत्येक आर्य भाई का कर्तव्य हो जाता है कि वह घर की स्वच्छता के बाद अपने घर में यज्ञ करे। उस महर्षि का गुणगान करे, आर्यसमाज के दश नियमों को पढ़कर उस पर मनन करे, तथा सायंकाल अपने घर पर दीप मालाओं का सुराभित कर हर्षित हो और अपने माइयों को यथा सभव मिश्रान वितरित करें। आज के दिवस प्रसन्नता से वृद्ध यज्ञ करना अत्यन्त उपयोगी होता है क्योंकि वर्षा काल में घर में जितनी गन्दगी हो जाती है, वह दूर हो जाती है। तथा कीड़े मकोड़े तथा मच्छर आदि जो पदा हो जाते हैं, वह सभी नष्ट हो जाते हैं। आज के दिवस ऐसा करने से वर्ष भर स्वास्थ्य लाभ होता है तथा घर धनधान्य से परिपूर्ण रहता है। इसके अतिरिक्त आज हमारा यह भी कर्तव्य हो जाता है कि हम आर्य समाजों में यज्ञ कर सम्पूर्ण हिन्दू समाज को दीपावली के सही महत्त्व को ज्ञात कि स्वामी चाराधर जी ने अपनी 'एक पद्धति पुस्तक' में लिखा है, 'संस्कृत और हिन्दू' नामक शीर्षक आदि कृतियों से बचने की ओर प्रेरित करें।

ऋषि दयानन्द का राजनैतिक संदेश

[ले०—श्रीमती सुशीलादेवी जी विद्यालक्ष्मी भूतपूर्व मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, म०८० आन्ध्र]

जिसका मन आजाद है वह गुलाम होकर भी आजाद है, पर जिसका मन ही गुलाम वह आजाद भी गुलाम है, ऐसा ऋषि का विश्वास था। अतः भारत की मानसिक मुक्ति के लिये सबसे पहिले अप्रेमों और अप्रेमिजयत से लाहा लेने के लिये अप्रेमों के मुख बिले हिन्दी को खडा किया तथा पारश्चात्य शिक्षा प्रणाली के मुकाबिले में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को, उनकी भारतीय राजनीति को यह एक अपूर्व और कर्मा न मुलाई जा सकने योग्य देन थी। स्वयं गुजराती होते हुए भी अपने ग्रन्थ हिन्दी में लिखे, हिन्दी को आर्य भाषा का नाम देकर गौरवान्वित किया। विदेशी सुराज से अपना राज्य जैसा भी हो अच्छा है। इसका प्रचार किया, स्वदेशी का मूलमन्त्र दिया। वड स्वराज, स्वदेशी और स्वभग्य ऋषि के द्वारा दिये गये मन्त्र थे, जिस पर आगे जाकर महात्मा गांधी ने भाष्य किया और जिनके आधार पर भारत स्वतन्त्र हो सका।

ऋषि के जीवन का बहुत बड़ा भाग रियासतों में घूमकर राजाओं के हृदय में स्वदेश प्रेम की ज्योति जगाने में व्यतीत हुआ। आज इतिहास की खोज करने वालों का विचार है कि प्रथम स्वातन्त्र्य युद्ध के सन् १८५७ ने सिपाही विद्रोह के सूत्रधार भी स्वामी दयानन्द ही थे। उनके वेद भाष्य के दर मन्त्र के आखिर में चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य की स्थापना का प्रबल सकल्प भक्तकता है। सरयार्थ प्रकारा का तो पूरा छुटा समुल्लास ही राजघर्म पर लिखा गया है। एक तरफ सामाजिक कूटनीतियों पर कुठाराघात करते थे। दूसरी ओर राजनीति को भी मीनव हिल साधिका बनाना ऋषि का लक्ष्य था। धर्म और राजनीति दोनों अलग अलग नहीं दोनों मिलकर ही भारत का कल्याण कर सकते हैं। शरीर, धर्म, बुद्धि, आत्मा इन चारों के संश्लेष का नाम ही मनुष्य है। सिन्धु की उन्नति का मतलब है

शरीर का बल बढ़े, मन की शक्तियों का विकास हो। बुद्धि की वृद्धि हो और आत्मिक शक्तियों भी बढ़े। इसीलिये पुरुषार्थ भी चार ही माने गये हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। शरीर के लिए अर्थ मन के लिए काम बुद्धि के लिये धर्म और आत्मा के लिए मोक्ष हैं। इन चार में आर्य सस्कृति की जीवन के प्रति सम्पूर्ण विचार धारा प्रतिबिम्बित हो जाती है। मनुष्य की सब प्रकार की इच्छाएं इनके अन्दर आ जाती हैं। शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति के लिये अर्थ की आवश्यकता है मानसिक आवश्यकताओं के लिए काम की। यह दोनों मानव जीवन के आवश्यक अंग हैं। पर यह ही सब कुछ नहीं क्योंकि हमारे जीवन का लक्ष्य सिर्फ अर्थ और काम का सम्पादन मात्र नहीं। आज की सभ्यता अर्थ और काम प्रधान सभ्यता है। इसी से जितने भी नये नये बाढ़ निकल रहे हैं अर्थ का आधार ही बनाकर चलते हैं, पूँजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद, इनका देख कर आज का विचारक समझता है, मनुष्य की असली समस्या आर्थिक है, पैसे की गुत्थी सलफ गई तो सब गुत्थियाँ सुलफ जायगी। पर आर्य सस्कृति का दृष्टि काण यह है कि पैसे का प्रयत्न हल होने पर भी मनुष्य की असली समस्या हल नहीं हो सकती। मनुष्य केवल शरीर नहीं। शारीरिक भूख के शान्त हो जाने वाद कोई और भी भूख है जिसे शान्त करना है। हम शरीर नहीं आत्मा हैं। ससार की वास्तविक सत्ता केवल प्रकृति की नहीं जिसके रहस्यो का खोजने के लिये आज का वैज्ञानिक मतवाला हो रहा है। वह प्रकृति ही सब कुछ नहीं परमात्मा है, जो इस रगमच का वास्तविक सूत्रधार है। ससार में वे व्यक्ति महान् आत्मा बन सके जिन्होंने अर्थ और काम का अपना लक्ष्य न मानकर साधन माना। ऐत एवकेन भुञ्जीव' जो अर्थ जीवन को लक्ष्य मानकर चले। जीवन का

लक्ष्य भेग नहीं, त्याग है। शरीर और मन से मुक्ति चाहिए। शरीर और मन के द्वारा ही। यह ऐसी पहली है जिसे हमारे ऋषि आदि काल से हल करते आये हैं एक तराजू लोहा एक पलड़े पर अर्थ काम को रखो। एक पर मोक्ष को। तराजू की डही धर्म के हृद्य में पकड़ा दो। तब तुम मोक्ष के भागी बन सकते हो उस मुक्तावस्था के मोक्ष की बात जो ऋषियों के जीवन का लक्ष्य थी, छोड़ दीजिए। शायद आपको रुचिकर न लगे, पर मोक्ष का सादा-सा अर्थ है दुःखों से मुक्ति, दुःखों से छुटकारा। यदि धर्मपूर्वक अर्थ और काम का भाग किया जाय तो सासारिक दुःखों से मोक्ष मिल सकता है महासुनि वेद व्यास लिखते हैं।

ऊर्ध्व बाहुविराम्येष, न च कश्चिन्पृणोतिमाम् ।
धर्मादर्थश्च क्रमश्च, स धर्म कि न सेव्यते ॥

यह थी ऋषियों की जीवन योजना, अर्थ और काम का सम्पादन कैसे हो। उत्पन्न पदार्थों का सविभाजन किस प्रकार हो, यह काम है राजनीति का। पर जब कि उसकी ठोरी धर्म के हाथों न हागी, तब तक राजनीति मुक्तिदायिनी कैसे बन सकती है? ऋषि दयानन्द आर्य संस्कृति के पुजारी, आर्य संस्कृति के पुनरुद्धारक थे। वे मानव जाति के कल्याण के लिए इसी आर्य विचारधारा का प्रचार करना चाहते थे। वे जानते थे कि मानव भौतिकवादी लहरों में बह गया तो लक्ष्य तक न पहुँच सकेगा। राजनीति अंधी है यदि धर्म उसका मार्ग-दर्शन न करे। हमारा राष्ट्रिय गान था।

आ ब्रह्मन् वाङ्मणो ब्रह्म वर्चसो जायताम् । आराष्ट्रे राजन्य- शूर इपव्यांसति व्याधी महारथो जायताम् । दोग्धी धेनुर्वोढानद्वानाशुस्ति पुरन्धियौषा जिष्णुरथेष्टाप्रसभ्यो युवांस्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे न पर्जन्यो भिबर्षतु फलवत्यो न औषधयः पच्यन्ताम् । योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ 'यजुर्वेद'

हमारे राष्ट्र में ब्रह्मण्य तेजस्वी हो, क्षत्रिय शूरवीर हों, भर-भर कर दूध देने वाली गाये हों, भारी-भारी बोझ ढोने वाले बैल हों। शीघ्रगामी घोड़े हों, गाँव-का पक्ष-प्रदक्षर्ण करने वाली नारी हों, युवा और वीर

सन्तान हों, सर्वत्र विजय हों, बादल समय पर वरसे फल-फूल धन-धान्य से सब समृद्ध हों हम सबका योगक्षेम हा, कल्याण हो, हम सबकी सत्र तरह की समृद्धि हो।

‘सर्वे भवन्तु सुखिनः’ यही हमारी सामूहिक प्रार्थना थी। आज तो भारत एक सेक्युलर स्टेट है। हिन्दी में इसे धर्म निरपेक्ष राज्य कहते हैं। सच पूछिये तो यह नामकरण ही गलत है। इसे सम्प्रदाय निरपेक्ष मजहब निरपेक्ष कहिये तो चल सकेगा। पर निवेदन है राज्य को धर्मनिरपेक्ष राज्य मत कहिये। इस धर्म निरपेक्षता का ही परिणाम है कि सब को सब तरह की आजादी है। अधर्माचरण, अधर्म, व्यवहार छाया हुआ है, सरकार जानती है, प्रजा का नैतिक स्तर गिर रहा है, हमारे माननीय मन्त्रियों को कष्ट होता है, व्यापार में, बाजार में, सरकार में भ्रष्टाचार देखकर। यह पैसा बुद्धि ही हमारे पतन का कारण है। अर्थ और काम की ओर धर्म के हाथों न रहने से ही सर्वत्र हाहाकार मचा है। विश्व शान्ति के जितने नारे लगते हैं, विश्व शान्ति अपनी दूर खींचती जा रही है, धर्म निरपेक्षता के कारण धर्म की अन्य व्याख्याये छोड़ दीजिये सीधी साँ व्याख्या है धर्म की अपने से उच्च शक्ति पर विश्वास आस्तिकता, ऐसा विश्वास सदा मनुष्य को पाप से बचाता है। पर आज तो राजनीति के दलदल में फन कर आस्तिकता और ईश्वर विश्वास की मान्यतायें, ढाबाढोल हो रही है। अर्थ और काम ही सब कुछ है। उनके लिए सब कुछ कुर्बान किया जा सकता है। फिर दुखों से छुटकारा कैसे हो। ऋषि दयानन्द इसी विचार की प्रतिष्ठा मानव समाज और राजनीतिज्ञों में करना चाहते थे। वे चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य की स्थापना इसीलिए नहीं चाहते थे कि वे साम्राज्यवादी या साम्राज्य लोभी थे। जिसने अपने पिता की जायदाद पर टोंकर मारी। काम से बचने के लिए जिन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पाठन किया। ऐसे अर्थ और काम निरपेक्ष महात्मा को अर्थ और काम का आकषेण नहीं होता। वे तो आर्य साम्राज्य के विस्तार द्वारा आर्य संस्कृति की त्याग प्रदान विचारधारा का प्रचार [शेष पृष्ठ ४८ पर]



ऋषि का धन्यवाद करो



[लेखक—श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज, आचार्य गुरुकुल धरौण्डा]

पाठक वन्द ! अरबों वर्ष पुराने ससार के वैदिक धर्मी पथिकों का मत-मतान्तरों की मदिरा में मत्त मत वालों ने पथ-भ्रष्ट कर दिया। जैसे धूर्त बालक किसी सुमार्ग के यात्री को कुमार्ग पर लगा देते हैं और सुदूर देश में जाने पर यदि कोई सज्जन उचित मार्ग बता दे तो उचित मार्ग बताने वाले का यात्री धन्यवाद करता है। इसी प्रकार मत-मतान्तरों में विभक्त मानव का ऋषि दयानन्द जी महाराज का धन्यवाद करना चाहिए। क्योंकि सृष्टि के आवि से महाभारत पर्यन्त सबका एक ही धर्म था। जैन, बौद्ध, ईसाई, मुसलमान, सिक्खादि मतों के प्रवर्तकों ने वर्णाश्रमी वैदिक धर्मी को पथ-भ्रष्ट कर मत-मतान्तरों की मदिरा पिला दी। महाभारत पर्यन्त रीति-रिवाज, धर्म-मर्यादा, विवाह, शादी वैनिक दिनचर्यादि एक ही प्रकार के थे। ससार के सभी सज्जन पुरुष अपने-अपने का धर्म मानते थे। और मिलते-मिलते समय 'नमस्ते' कहते थे। वेद ही सबका मान्य ग्रन्थ था। और ईश्वर का निराकार, सर्वव्यापक एक ही मानते थे। उसकी उपासना का प्रकार भी वेदानुक्त ही था। क्योंकि लगभग तीन सौ साढ़े तीन सौ वर्ष से पूर्व कोई सिक्ख न था। और न बौद्ध सौ वर्ष से पहले कोई मुसलमान था। उन्नीस सौ साठ (१९६०) से पहले कोई ईसाई न था। लगभग तीन हजार वर्ष से पूर्व कोई जैन और बौद्ध न था। तो प्रश्न होता है कि सिक्ख, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध और जैनादि मत-प्रवर्तकों के माना-पितादि कौन थे। क्योंकि जब तक तत्तत् मतों के सचालकों का जन्म भी नहीं हुआ था। अतः एक ही उत्तर है कि ससार में सभी सज्जन पुरुष आर्य नाम से बिल्लयात थे। और बुद्ध-जनों को अनार्य, मलेच्छ और दस्यु आदि कहते थे। सिक्खों के दशम गुरु, गुरु गोबिन्द-सिंह जी ने अपने आपको अपनी साखियों में आरज (आर्य) धर्म का रक्षक कहा है। पंजाब में पुराने लोग 'य' को 'ज' कहते हैं। और जैन बौद्ध ग्रन्थों में सभ्य

पुरुषों को 'आर्य' शब्द से सम्बोधित किया गया है। वेला 'भक्तिमत्त निकाय' में स्वयं बुद्ध जी कहते हैं 'हे भिक्षुओ ! आर्यों के दर्शन से बञ्चित, आर्य धर्म से अपरिचित, आर्य धर्म ने श्रवणीत पृथ्वी को पृथ्वी के तौर पर समझता है इत्यादि अनेक प्रमाण दिए जा सकते हैं जैन धर्म के 'तत्त्वार्थाधिगमसूत्र' अध्याय तीन सूत्र पन्द्रह में दो ही प्रकार के मनुष्यों का वर्णन आया है। 'आर्यन्लेच्छारश्च' अर्थात् एक आर्य और अन्य स्लेच्छ इसका भाष्य करते हुए भाष्यकार लिखते हैं 'द्विधा मनुष्याभवन्ति आर्या स्लेच्छारश्च' अर्थात् मनुष्य दो प्रकार के होते हैं एक आर्य और दूसरे स्लेच्छ। जैन भाईयों ने अपना नाम जैन कैसे रख लिया है ? जब कि उनके धर्म ग्रन्थ में श्रेष्ठ-जनों को आर्य ही कहा है। और इसके भाष्य में आगे 'इच्छाकुवशियों' को तथा 'धातवा' को भी आर्य वर्णन किया है। और छ प्रकार के आर्यों का वर्णन है। अतः जैन भाई स्वयं निर्णय करें कि वह अपने को आर्यों में गिनते हैं अथवा स्लेच्छों में। अतः यदि वह अपने को श्रेष्ठ मानते हैं तो उन्हें अपने को आर्य ही कहना चाहिए। अपने धर्म शास्त्र की आज्ञा को अवहेलना करना सज्जनों का काम नहीं।

तथा श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन को गीता अध्याय में दो श्लोक दो में अनार्य कह करके उपालम्भ दिया है। 'अनार्य जुष्टम्' अर्थात् हे अर्जुन तुमको यह अनार्यों जैसा मोक्ष कैसे उपलब्ध हो गया। और महाराज रामचन्द्र का दार्लमीक रामायण में स्पष्ट आर्य वर्णन किया है 'आर्य सर्व समश्चैव सदैव भिय दर्शन' मूल रामायण श्लोक १६। महर्षि दार्लमीक के पृष्ठे जाने पर ऋषिराज नागद ने जहाँ राम के अनेक गुणों का वर्णन किया है वहाँ राम को 'आर्य' अपने समय का श्रेष्ठ पुरुष कथन किया है। और ऋग्वेद मण्डल चार सूक्त २६ भगवान् स्वयं कहते हैं 'किं मीने सर्व

आर्यो !!



करोड़ों जले दीप मिट्टी के चाहें
तुम्हें ज्ञान दीपक जलाने पड़े गे ॥
युगो-से जलते रहे दीप-माला अमा रूढ़ि काली नहीं मात खाती ।
नहीं स्नेह सौजन्य का विन्दु पाते यहाँ द्वेष ईर्ष्या खड़ी मुस्कराती ॥
सुधा स्नेह-धारा बहाने से पहिले
खड़े दुर्ग दुर्जन हिलाने पड़े गे ॥१२॥
मनो मन्दिरो की पड़ी शून्य वीथी सुमित्रचव के गीत सोये पड़े हैं ।
वजे वीण कैसे कहों जागरण की सभी उ-मने तार खांये पड़े हैं ॥
सुनो, राष्ट्र 'कल्याण' गाने से पहिले
लगे तार सब ही मिलाने पड़े गे ॥२॥
दयानन्द की दिव्य निर्माण वेला हमे वर्ष मे आ आकर जगाती ।
सुयो कर्मवीरो डटो काय पथ मे' यही सत्य सन्देश सबको सुनाती ॥
विजय गन्ध गौरव लुटाने से पहिले
महात्माग पाटल खिलाने पड़े गे ॥३॥

—कविबर "प्रणव" शास्त्री एम० ए०, फीरोजाबाद

प्रथम यह भूमि आर्य्य को दी है 'अह भूममदद दार्य्यार्थ' अर्थात् मैंने यह भूमि निर्माण करके आर्य्य का दो है। और निरुक्त में तो 'आर्य्य' ईश्वरपुत्र है यह स्पष्ट लिखा है। संस्कृत साहित्य मे सर्वत्र श्रेष्ठ जनो का आर्य्य ही कहा है। और शिजा लेखों पर भी आज तक आर्य्य ही लिखा है, और काशी के विश्व नाथ मन्दिर के प्रवेश द्वार पर अभी तक भी यह अंकित है कि 'आर्य्य धर्मंतराया प्रवेशोऽत्र निषिद्ध' अर्थात् जिनका आर्य्य धर्म नहीं है वह इसमें प्रविष्ट न हो। और मनु आदि धर्मशास्त्रो मे इस भूखण्ड को आर्य्यवर्त कथन किया है।

अग्नेजो ने इस देश का नाम इटिया रखा, मुसलमानो ने हिन्दुस्तान, राजा भरत के नाम पर भारतवर्ष कहा किन्तु महर्षि ने हमे स्मरण कराया कि इस देश का वास्तविक नाम आर्य्यवर्त था और होना चाहिये। साथ ही विश्व में श्रेष्ठ पुरुषो की सङ्ग के रूप में आर्य्य शब्द की महत्त्व स्थापित कर विश्व को नवीन दृष्टिकोण दिया।

ऋषि दयानन्द का राजनैतिक सन्देश

[पृष्ठ ४६ का शेष]

कर मानवमात्र को सुखी बनाना चाहते थे। छठे समुह्लास के सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम मे वे लिखते हैं कि मनुस्मृति, शुक्रनीति, बिदुर प्रजागर और महाभारत के शान्ति पर्व आदि पुस्तको मे देखकर पूर्ण राजनीति को धारण करके सादलिक अथवा नार्वभौम चक्रवर्ति राज्य स्थापित करे और यह समझे कि "वय प्रजापते प्रजा अभूम) हम प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्रजा और परमात्मा हमारा राजा है। प्रभु हमारे हाथ से सत्य न्याय की प्रतिष्ठा करावे। इन वाक्यों मे ऋषि दयानन्द की सम्पूर्ण राजनीति की भलक स्पष्टरूप से प्राप्त होती है। उनका पूर्ण विश्वास था कि "जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढ़ता है। जब दुष्टाचारी होते हैं, तब नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। भगवान् हमे सद्बुद्धि दे। भारतीय राजनीति को उन्नति भवनति का मूल्यांकन भी इसी सूत्र द्वारा किया जाना चाहिये।

वेद का रहस्य प्रकाशित करने के कार्य में—



महर्षिदयानन्द का महत्व



(जि०-श्री प० दा० सातवलेकर जी, स्थाध्याय मण्डल, पारडी जि० सूरत-गुजरात)

वेद की रहस्यमयी पद्धति

वेद और अन्य धर्म ग्रन्थों में धर्म-प्रतिपादन की शैली का एक महान् भेद है। वह भेद समझने के बिना अन्य ग्रन्थ तो समझ में आजायेगी, पर वेद ग्रन्थों का रहस्य समझ में नहीं आयेगा। स्वल्प शब्दों में उस 'वेद के प्रतिपादन की शैली का विचार' इस लेख में करना है।

'विश्व, मानव समाज और मानव व्यक्ति इन तीन क्षेत्रों का उपदेश एक ही स्थान में वेद देता है।।। ऐसी पद्धति उपदेश देने की वेदों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में और उपनिषदों में दीखती है। किसी अन्य धर्म ग्रन्थ में ऐसी पद्धति नहीं है।

विश्व का दृश्य

मनुष्य विश्व की ओर देखता है, तो अपने पाव के नीचे पृथ्वी है, सिर पर आकाश है और इन दोनों के मध्य में अन्तरिक्ष दीखता है। हर एक मनुष्य भूलोक, अन्तरिक्षलोक और स्वर्गलोक ये तीन लोक देखता है। इसको 'त्रिलोकी' कहते हैं। इस त्रिलोकी में सम्पूर्ण विश्व आ जाता है।

शुक्लक में सूर्य, चन्द्र, सप्तर्षि आदि देवतायें हैं, अन्तरिक्ष में चन्द्र, वायु आदि देवतायें हैं और भूमि पर अग्नि, जल, वृक्ष, पर्वत आदि देवतायें हैं। प्रत्येक लोक में ग्यारह-ग्यारह देवतायें हैं। तीनों लोकों में मिलकर तैंतीस देवतायें हैं। इन तैंतीस देवताओं का मिलकर यह सम्पूर्ण विश्व बना है। इसको 'दैवी जगत्' या 'आधिदैविक विश्व' कहते हैं।

जो देवतायें इस त्रिलोकी में हैं, उनका ही वर्णन वेद में है, इस कारण वेद में 'आधिदैविक ज्ञान' ही ऐसा कहा जाता है। आधिदैविक ज्ञान, आधिदैविक विद्या,



श्री प० दामोदर सातवलेकर जी

या विश्वविद्या इनका भाव एक ही है। विश्व में नैसर्गिक स्थिति में जो पदार्थ रहते हैं, उनका यह ज्ञान व्यक्त रीति से वेद में है। विश्व की ओर ऊपर ऊपर से देखने पर देखने वाले के मन में जो विश्व का साक्षात्कार होता है वही आधिदैविक ज्ञान है। मनुष्य पृथिवी पर खड़ा रहे और नीचे से ऊपर तक देखे तो उसकी दृष्टि में पृथिवी, अग्नि, जल, वृक्ष, पर्वत, वायु, मेघ, विश्वत्, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र दीखते हैं। ये ही वेद की देवतायें हैं। इनका वर्णन ही वेद में स्थूल दृष्टि से देखने वालों के आँखों से दीखता है, यहाँ आधिदैविक ज्ञान स्थूल दृष्टि वालों को वेद देता है। यह एक भाग हुआ।

व्यक्ति के शरीर में देवमग

अब मनुष्य के शरीर की ओर देखिये। वेद कहता

हे कि—

यस्य त्रयस्त्रिंशन् देवा अग्रे गात्रा विभेजिरे ।

अथर्व १०।७।७३ ॥

सर्वा धृस्मिन् देवता गात्रो गोष्ठ इषास्ते ॥

अथर्व ११।८।३२ ॥

“किसके अग में तैंतीस देव गात्र—अवयव—बन कर रहे हैं। सब तैंतीस देवता इस मनुष्य के शरीर में गौवें गोशाला में रहती हैं उस तरह रहती हैं।”

इस वेद के कहने से मानव शरीर में सब ३३ देवताये रहीं हैं। और शरीर के अवयव बन कर रहीं हैं। यह सिद्ध होता है। पर बुद्ध बर्म मत के अनुसार यह शरीर पीप विष्टा-मूत्र का दुःखदायी गोला है। यह विचार प्रचलित था। उस कुविचार को भूलता और अपना शरीर देवताओं से परिपूर्ण है, यह वेद का कहना मानना लोगों को कठिन था।

सूर्य आस में रहा है, अग्नि मुख में है, वायु नासिका में है, इंद्र बाहुओं में, चन्द्रमा हृदय में, आत्मव शिख में, पृथिवी पाँवों में इस तरह अपने शरीर में तैंतीस देवों का निवास है, अर्थात् इस शरीर का एक एक अवयव एक-एक देवता का बना है। इस तरह सम्पूर्ण मानवी शरीर देवताओं का बना है।

जैसे विश्व में तैंतीस देवतायें हैं, उसी प्रकार और उसी क्रम से मानव शरीर में भी तैंतीस देवतायें हैं। सिर में गुलोक है और वहाँ गुलोक को देवतायें हैं, गले से नाभी तक का भाग अन्तस्त्रिक लोक है और उसमें मध्य स्थान का देवता गण है, और नाभी से नीचे पृथिवी लोक है और वहाँ पृथिवी स्थान को देवतायें हैं। इस तरह अपने शरीर में त्रिलोक का है और त्रिलोकी की देवतायें यहाँ हैं।

इस रीति से मूर्खों विश्व अश्र रूप से अपने शरीर में है। विश्व में जो है वह सब अश्ररूप से शरीर में है। विश्व के ज्ञान को ‘आधिदेविकज्ञान’ कहते हैं। और एक व्यक्ति के शरीरार्जत ज्ञान को ‘अभ्यारम-ज्ञान’ कहते हैं। वेद का ज्ञान देने की पद्धति इस निसर्ग की पद्धति के अनुसार ठीक वैसी ही है। आधिदेविक ज्ञान के मन्त्र ही अभ्यात्मज्ञान का वाद्य

कराते हैं। सर्वसाधारण विद्वान् लोगों को यह बात समझने में आनी कठिन होता है।

और एक तीसरी कठिनाता है कि व्यक्ति में जो गुण होते हैं, समाज में वे ही गुण ‘गुण्यी’ के रूप में रहते हैं। इसकी तालिका ऐसी बनती है—

विश्व में देवता	व्यक्ति में गुण	समाज में गुण्यी
१ अग्नि	१ वाणी	१ वक्ता, उपदेशक
२ इंद्र	२ बल	२ बलवान, वीर
३ वायु	३ प्राण	३ दीर्घजीवी
४ सूर्य	४ तेजस्विता	४ तेजस्वी
५ पर्वत	५ स्थिरत्त्व	५ स्थान पर्व स्थिर रहने वाला वीर

इस प्रकार विश्व में देवता, व्यक्ति के शरीर में उनके गुण और समाज या राष्ट्र में उन गुणों से युक्त गुण्यी मनुष्य होते हैं। इन तीन स्थानों पर वेद मन्त्र का भाव देखना होता है। यही वेद मन्त्रों के अर्थ का रहस्य है। यह रहस्य ब्राह्मणों, आर्यकों और उपनिषदों में अनेक स्थानों पर अनेक उदाहरणों को देकर स्पष्ट किया है। इसी को (१) आधिदैविक, (२) आध्यात्मिक और (३) आधिभौतिक अर्थ कहते हैं। वेद का यह रहस्य यदि किसी भाष्यकार के ध्यान में प्रथम व्यापक दृष्टि से आया हो तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के ध्यान में आया था, ऐसा हम स्पष्ट रीति से कह सकते हैं। इनके भाष्य में प्रायः प्रत्येक देवता के मन्त्रों का अर्थ करने में इन्द्रोने इतनी गहराई से अर्थों की ओर पढ़ने वालों का अन्वेषण किया है। और अनेक मन्त्रों के अर्थों को स्पष्ट रीति से करके भी बताये हैं। आज के जमाने में अनेक अर्थों के रहस्य अर्थ का वर्णन करने के लिये यदि किसी का आदर करना हो, तो वह सम्मान-महर्षि-श्री दयानन्द सरस्वती जी का ही सरलतया प्राप्त हो सकेगा।

योगी श्री अरविन्द जी

महर्षि जी का भाष्य प्रकाशित होने में अनेक विद्वानों को यह दिव्य दृष्टि इस भाष्य के लोकोत्तर से प्राप्त हुई। योगी श्री अरविन्द जी ने इस भाष्य से यह रहस्यमयी दिव्य दृष्टि प्राप्त की और

[शेष पृष्ठ ५२ पर]

निर्भीकदयानन्द

[रच० श्री कुमुमाकर त्री, साहित्य रत्न फीरोजाबाद]

भारत का सन्त था, महन्त था महान् एव—
भारतीयता का वह विमल वसन्त था ।

कामना अनेक लिए ।

विमल विप्रेक लिए ।

जी म एक टक लिए—

‘जीवन की ज्याति जगती म फिर से नो ।

पर्यटन कर। हु—

दस्म, राज वर्ग पडा घर अन्वकार म ।

वासना विलासिता ने अयुधि अपार म ।

‘सुन्दरी सुग’ के मुक्तक दुलार म

मादक मनाभव के मद अभितार न ।

हृदय विदारक दशा का देख दयानन्द—

विकल हुए थे, कल चित्त म नही थी पलक

नियुत के वेग से चरण दडन लगे,

चित्त म अनेक चरुचप चढन लगे ।

जग म कहावत हे जनता नही कौन ?

‘जेसा भूमिपाल हो, प्रजा का वटा चल हा ।

उज्ज्वल भरा हा जग-जीवन का ताल—

तब मानस मराल भी सु मुक्ति मुक्ति पाता है ।

लेके इसी लक्ष्य का ।

अदम्य उत्साह का ।

‘वाह’ की न कामना, न स्वार्थ भरी चाह हो ।

बौद्ध-शैले राज्य जांधपुर म प्रवोध का—

शोध को, सुधार को, अनोखे अनुरोध को ।

सुदु आगमन नृप हाकर मगन मन—

व्यक्त भाव से, सु सजित प्रसाद म—

ले गए समादर, बिठाया सर्वोच्च—

वच - उपदेश से दिये को भरने लगे ।

यतिवर बोले—

‘प्रिय राजन् सुनो दे कान—

राज्य को बना दो स्वर्ग धाम अभिराम सुम—



श्री कुमुमाकर जी

चालक बनो, परन्तु पालक प्रजा के रहो ।
पालक बना न कभा, दीन हीन जनधे” ॥
कहके ‘तथास्तु’ । चरणों को चूम ‘तेज’ पूज ।
भक्ति भावना से राजनीति पढने लगे ।
प्रीति की प्रतीति ने प्रभाव दडन लगे ।
किन्तु उनका था प्रेम न-ही’ नर्त्तकी से महा-
अवसर देख एक दिन इसी बीच न—
प्यार से फुलाया, भव्य भाव दरसाया—
किन्तु ऋषि से चुराया, जो रहस्य गोपनीय था ।
ऋषि का नियम भी महान् धर्षणीय था ।
उठ ब्रह्म वेला म महर्षि नित्य जाते थे ।
ब्रह्म लीन हाने थे उपत्यका म शल की ।
लौटकर आते थे पभात रात बाते पर ।
किन्तु एक दिन—

लौटे शीघ्र महलो के मध्य ।

देखी, वर प्राण ने शिविका सजीली एक ।

“बोले—यह क्या है ?

ऋषि आने की—मुनी जो पद-चाप तो

तुरन्त भूप—कार्य कवली से—

या विकम्पित थे बेत से ।

बल उपेन्द्र पर अनेक पढने लगे ।

मानव सुगेन्द्र थे शृगाल से विहाल बन ।

लज्जित धमुन्धरा के अङ्क गढ़ने लगे ।
प्रेयसी का इंगित किया कि तुम जाओ शीघ्र ।
बैठ गई, स्वरित अतृप्त पालकी में जब—
मुक गई—जैसे ही,

लपक अवनोन्द्र ने—

बिह्वल हो अपने सु-अरा को लगा दिया ।
सोच कर मेरा प्रेम-प्याला छलके नहीं ।
नियतित हो न कहीं धरणि कठोर पर ।
देख दुष्कर्य, भोह ऋषि की कमान हुई ।
भृकुटि मरोड़-बल उन्नत ललाट पर ।
फड़क उठे थे रद्द पुट, रक्तवर्ण नयन ।
भड़क उठा था ज्वालामुखी शैल क्रोध का ।

तड़िता से तड़प, गरज कढ़ने लगे ।

“भूमिपाल ! तुमको न शर्म है, हया है कुह,
ऐसी वे हयाई क्यों बताओ शीश धारली !”

‘वेज सिंह’ होके सुरतियों का करते हो साथ ।
सन्तति तुन्धारी शादूल क्या बनेगी कदो ?
कुछ तो विचारो कर्म भूप का यही है भला ?
सुन के दहाड दयानन्द की दवङ्ग भूप-
लज्जित, नमित पश्चात्ताप करने लगे ।
होगा अत्रप्राध न भविष्य में कमी भी देव ।
मोंग-मोंग ज्जमा, अश्रु भरने लगे ।
धन्य दयानन्द ! निर्भीकता को धन्य तेरे-
सत्तावारियों के भी सिंहासन हिला दिए ।
स्वार्थहीन संयम-सुधा के भरे घँट कटु ।
मृतक बने थे, नव-जीवन दिला दिए ।

सन्त हो तो ऐसा हो ।

महन्त हो तो ऐसा हो ।

देव-दिव्य लोक में निनाद गूँजने लगा ।
पुण्य भी पवित्र प्रेम-दीप पूजने लगा ।

महर्षि दयानन्द का महत्व

(पृष्ठ ५० का शेष)

अंग्रेजी भाषा में वेद मन्त्रों का रहस्य अर्थ बताने के लिये पर्याप्त लेख लिखे हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के विषय में तथा उनके वेदभाष्य के विषय में योगी श्री अरविन्द जी ने जो अनुपम आदर बनाया है, वैसा आदर उसने किसी भी दूसरे विद्वान् के सबध में नहीं बनाया। श्री कपली शास्त्री आदि अनेक विद्वानों ने उसके पश्चात् वेद का रहस्य अर्थ बताने का प्रयत्न किया। इन सबको जो दिव्य प्रकाश मिला वह महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के भाष्य से ही मिला, ऐसा हम कह सकते हैं। इसीलिये आधुनिक काल में ‘ऋषि’ वह पदवी स्वामी दयानन्द जी को मिली वह योग्य ही है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वेदों के इस रहस्य पूर्ण अर्थ की ज्योति से भारत को प्रकाशित करके, भारत के द्वारा संपूर्ण जगत् को प्रकाशित करने का जो कार्यक्रम भारत के सामने रखा, और आर्यसमाज स्थापना करके जो उपक्रम किया, वह उपक्रम बहाँ तक ही रह गया है। वेदों का प्रकाशन, वेदानुवादों का विश्व की भाषाओं में प्रकाशन, भारत में तथा अन्यान्य देशों में वेद प्रचारार्थ वेद के यथार्थ ज्ञानी उपदेशक भोजना, इत्यादि उनके अनेक कार्य ऐसे ही रहे हैं। पाठकों का ध्यान इस कार्य की ओर खींच कर हम इस लेख को यहाँ, महर्षि जी के विषय में आदर व्यक्त करके, समाप्त करते हैं।



प्रभु, जग का कण-कण ज्योतिर्मय कर दो

(ले०—श्री सुरेशचन्द्र वेदालकार एम० ए० एल० टी०, डी० वी० कालेज गोरखपुर)

दीपावली का पर्व अपना महत्त्व रखता ही था । इतिहास की विचित्रता यह है कि इस गौरवशाली आनन्ददायक सांस्कृतिक इतिहास में भविष्य में अपनेकानेक शृंखलाये आवद्ध हाती गई । इसी दिन भारतीय सस्कृति के अमर स्तम्भ, भक्तराज, सेवा के आदर्श, ब्रह्मचर्य के पालक हनुमान का जन्म हुआ जिनकी वीरता, त्याग तप और बलिदान सदा ही चिरस्मरणीय आदर्श रहेंगे ।



श्री सुरेशचन्द्र जी वेदालकार

इसीदिन भगवान् रामचन्द्र १४ वर्ष का बनवास समाप्त कर, दुष्टता, अन्याय और अत्याचार के प्रतीक अन्वकार के उपासक रावण को समाप्त कर, सत्रस्त, मानवमात्र को भयमुक्त कर अपनी राजधानी अयोध्या में पधारे थे । उनके लौटने से सारा देश प्रसन्नता एवं आनन्द से फूल उठा था । इसी खुशी में जाते दिशाओं में ज्योतिर्के, पुण्य के, और आनन्द के लक्षक दीप जले थे ।

जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी का यही निर्वाण दिवस था ।

भारतीय आध्यात्मिक पुनर्जागरण के अधिष्ठाता स्वामी रामतीर्थ ने भी आज ही के दिन अपने को परमतत्व में लीन कर दिया था ।

आधुनिक भारत ही नहीं विश्व को स्फूर्ति, चेतना और जागृति देने वाले महर्षि दयानन्द ने भी इसीदिन आत्म बलिदान कर आजीवन ज्ञान प्रसार करने के प्रत को इस अनुपम पुर्णहृति से पूर्ण कर इस साल्क तिक पर्व का महत्त्व और भी बढ़ा दिया ।

उपर्युक्त घटनाओं पर विचार करने से हमें यह साचना है कि यह कौन सी विचारधारा या प्रेरणा जो इन पर्व के साथ सम्बन्धित है । तो हमें मालूम पड़ेगा कि यह भावना है, मनुष्य अपने म शक्ति की स्थापना करे तब उसका मार्ग आनन्दमय एवं प्रकाशमय होगा । दीपक की जलती बत्तियाँ हमें सिखाती हैं, कि ऐ मानव यदि तू जीवन का आनन्दमय बनाना चाहता है, तो अपने में इतनी शक्ति पैदा कर कि तू अपने को जलाकर पथभ्रष्टो का मार्ग दिखा दे ।

स्वामी रामतीर्थ, महावीर स्वामी और दयानन्द स्वामी ने यही तो किया । स्वामी दयानन्द से पूर्व देश की आभ्यन्तरिक शक्ति का हास हो चुका था । और जब भीतरी शक्ति में कमी होने लगती है, तभी राष्ट्र का अन्त होता है । आर्थ जाति दूसरो का अनुकरण कर पतन के बगारे पर खड़ी भी । जीवन की, विश्वास की, साहस की एक प्रतिमा सामने आई और उनके देश को ही नहीं, विश्व को सर्वार्थ प्रकाश का पाठ

पढ़ना। वही प्रार उससे विरोधी थे, परन्तु उन विरोधियों को जितने जरा भी पारंगत न की और आर्यों के समाज की स्थापना की। आज भारत की स्वतंत्रता और जागृति का प्रथम श्रेय इसी महर्षि को है। परन्तु बन्धुओं, आज इस पावन दिन पर विचारना है कि हम कहीं उस मार्ग से भ्रष्ट तो नहीं हो गए। कहीं रास्ता तो नहीं मूल रहे है ?

आज दुसरो के सुधार की बात तो बहुत दूर चली गई, हम आपस में इतने उलझ गए कि हमारी शक्ति विस्तृतलित हो गई। यदि आज हमारी जरा भी श्रद्धा अपने इस मत्वापक और नेता के प्रति है तो मैं आज प्रत्येक आर्य समाजो से यह अपील करूंगा कि वह हम पवित्र त्रिवस पर रोग, बलिदान एवं स्थापना की भावना पर धियार करे और यह निश्चय करे कि हम अपने स्वार्थों का दूर कर परार्थ की ओर मुक़ौगे। पदों का लाल हम नहीं करेंगे। हम सच्चे अर्थों में आर्य बनने का प्रयत्न करेंगे।

आर्य को सबसे बड़ी विशेषता यहाँ है कि वह सुस्त, आलस्य और कमचोर नहीं होता। वह तो जीवन का एक ही उद्देश्य समझता है 'चरंवेति चरंवेति' कार्य करो, कार्य करो और जीवन में आगे बढ़ो। का प्रणाम पश्चां वयम्'। याद रखो, जि जग से हन इतनी प्राप्ति होगी जितना कार्य को शन बन हम पूजा लगायेगे। यह पूजा लगाना लिन्दगी के नकटों का सामना करना है। उसके उस पन्न को लतकर पढ़ना है जिसके नभी अक्षर फूलों से नहीं गुड़ जगारों से भी लिले गये है। इसलिए यदि प्रकाश की आर जान चाहते हो तो जहाँ हम महर्षि के जीवन से कर्म को शिक्षा लेनी है, वहाँ सक्दों का सामना करने के लिए दीपक की जलती बत्ती के समान अपने को बलिदान करने की प्रेरणा भी लेनी है। यह छोटे-छोटे पर, यह सस्वायें और इनके साथ लगी हुई सन्पत्ति का प्रलो-भन आक हमें कितना नीचे गिरा रहा है।-यह हम सब बाम्ते ही हैं। तां आइए कर्म और बलिदान दूसरे प्रान्तों में स्वार्थ-स्थाग की शिक्षा लेकर दीपक के इस प्रकाश में अपनी अन्तरात्मा को कालिमा, पाप और

अबकार को दूर करें। पारस्परिक निम्न कोटि की दल-वन्दियों को समाप्त कर हम और आप स्वनिर्माण के साथ राष्ट्र में, समाज में शक्ति का संचार करने का निश्चय करें। यही सच्ची महर्षि के प्रति-श्रद्धावलि होगी। यदि हम यह निश्चय कर लेंगे तो हमारा मार्ग प्रशस्त होगा। अन्वकार विलीन होगा। प्रकाश की किरणें दिखाई देंगी। आप इस निष्कण्डके साथ अपने अन्तःकरण में अवश्य मुनेगे—

शक्तिशाली हो विजयी बनो,
विश्व में गूँज रहा जय-गान।
दरों मत अरे अमृत सन्तान,
अग्रसर है मंगलमय वृद्धि॥
पूर्ण आकर्षण जीवन केन्द्र,
खिंची आवेगी सकल समृद्धि।

अन्त में हम कवि के शब्दों में भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि—

जन मन में चिर शान्ति सरलता,
स्नेह सिक हो दिव्य मधुरता।
अमर प्रेम हो भव्य शीलमय,
व्यापे दिशि-विशि सुकृत सरसता।
अग-बन्ध जर्जर कर जननी—
क्षण-क्षण पुलकत मन्त्र कर दो।
पृष्ठा द्वेष प्रतिकार भावना,
और विषमता क्लृप्त कामना।
हर लो जग से हे दुःखहारी,
जन मन की राग वासना।
आत्म ज्योति से ज्योति हो मन,
पल-पल मंगलमय कर दो।
प्रभु ! जग का कण-कण ज्योतिर्मय कर दो ॥



महर्षि दयानन्द के पुनीत कार्य

अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का पाठ पढ़ाने आये
जिस दिव्य शक्ति से भू पर कोमल,
कलित कुसुम खिलते हैं।
हो समाधिस्थ जिससे योगी मन-
मन्दिर मे मिलते हैं।

वे श्रुतल हृदय के सिंहासन पर उसे बिठाने आये,
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का पाठ पढ़ाने आये ॥

जब विधवाओं की अश्रुधार निज,
बहल धाती थी।
नैराश्य निरा मे मना भावना,
उनकी जब सोती थी।

वे दया और आनन्द उन्हे दे, दुःख मिटाने आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का पाठ पढ़ाने आये ॥

जब शकर स्वामी के अनुयायी,
स्वयम् ब्रह्म बनते थे।
जब नास्तिकता के घृणित पक म,
आर्य स्वयम् सन्ते थे ॥

वे अतैवाद् के शुद्ध-स्वात का, वेग बहाने आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का पाठ पढ़ाने आये ॥

हमने अशियो की पुण्य-सूमि पर,
बिन्दु पाप के बोये।
जो अपने प्यारे बन्धु आप ही,
विधर्मियो में खोये ॥

वे उन विदुक्त स्वजनों को सादर, कठ लगाने आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का, पाठ पढ़ाने आये ॥

निज स्वार्थ अन्ध विर्यास लिये जब,
जड़ पूजन होता था।
पौराणिक घोर श्याम रजनी म,
जब भारत संता था ॥

वे निगम ज्ञान रवि उदय, बदाकर, जे जगाने आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का, पाठ पढ़ाने आये ॥

य मृत्यु का भय शरीर पर
पिड दिये जाने थे।
जब स्वर्ग नेजने के ठके म,
यथा लिपि जाते थे।

वे कर्म भोग का राग प्रसुग ही, हमे बताने आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का पाठ पढ़ाने आये ॥

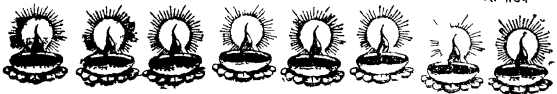
पर भक्ति भजना रुचिद ले,
जब लुटी जाता था।
निज वेद धर्म की सर्वांग ही
जब टूटी जाता था ॥

वे गौतम मुनि का धर्म पाव ले उभे लक्ष्मि आये।
अपि दयानन्द, वेदोक्त धर्म का, पाठ पढ़ाने आये ॥

जब पराशरना पाश वेग के,
कलित कठ ग आया।
जब विदेशियों के दानान्न ने
आयोद्यान जलाया ॥

वे शुभ लक्षण मुग सिचन से, जे उरुकोने आये।
अपि दयानन्द वेदोक्त धर्म का, पाठ पढ़ाने आये ॥

—जयजगदीश पाडेय



विश्व-कल्याण की वैदिक भावना

[लेखक—विद्यामार्च्छक डा० मंगलदेव जी शास्त्री, ब्योतिराश्रम, वाराणसी]

“भद्र-भद्र न आ भर” (ऋग्० ८। ६३। २८)
इस प्रकार भद्र-भावना का मधुर संगीत वेदों में यत्र-तत्र सुनाई देता है। उसी के आधार पर विश्व-कल्याण की भावना को वैदिक पद्धति में नीचे के पद्यों में प्रकट किया गया है।

भद्र भद्र सर्वतो न समेयाद्,
भद्रा वाचः सुमनसो वदेम।
भद्र मनो भद्रकामाय भूयात्,
कामे कामे नो भद्रं विरोचनाम् ॥१॥

इने सब ओर से केवल भद्र अथवा कल्याण ही प्राप्त होते।

हम सद्भावनाओं से युक्त होकर कल्याणमय वाणी को ही बोले।

विशुद्ध विचारों से युक्त हमारे मन की कामनायें भी कल्याणमय हों।

हमारी प्रत्येक कामना में कल्याण का प्रकाश हो ॥

ग्रामे ग्रामे नो भद्र विराजताम्,
भासतां भद्र समितौ सभायाम्।
भद्रं राज्येषु विश्वतः समृध्याद्,
भद्रं पृथिव्या प्रथतां समन्तात् ॥२॥

हमारे ग्राम-ग्राम में भद्रभावना सुशोभित हो।

हमारी समितियों और सभाओं में उसका प्रकाश हो।

राज्यों में सब ओर से भद्र-भावना की वृद्धि हो।

और इस प्रकार समस्त पृथ्वी पर उस का विस्तार हो।

परस्पर भद्र समाचरन्तो,
न मायिनो मानुषीणां प्रजानाम्।
आतन्वन्तः शिवतातिं वरिष्ठाम्,
इद्वैव लोकेऽमृतमामजेम ॥३॥

हम निश्छल भाव से परस्पर कल्याण का आचरण करते हुए और मानव-मात्र के लिए श्रेष्ठ मङ्गल का विस्तार करते हुए इसी लोक में अमृतत्व का सेवन करें।

विप्राः कवयो भद्रवाचो भवन्तो,
भद्र राजानो राज्यधुर बहन्तः।
भद्र गुरो शिष्याणां वसन्तो,
भद्र वय सर्वत आवदेम ॥४॥

हमारे कवि साप्त्तिक विचारों से युक्त होकर कल्याणमय वाणी का प्रसार करने वाले हों। शासक लोग कल्याण के आदर्श से प्रेरित होकर राज्य का शासन करें। गुरु और शिष्य का पारस्परिक सम्बन्ध भी कल्याणमय हो। इस प्रकार हम सब अपने चारों ओर कल्याण का ही वातावरण उपस्थित करें।

भद्र नः करोत्वनिशमन्तरिच,
भद्रं नो वायुः पवमानः प्रधातु।
भद्र भद्रं वावापृथिव्यौ भवेताम्,
भद्र मरुतो वृष्टिवाहा भवन्तु ॥५॥

अन्तरिक्ष हमारे लिए कल्याणकारी हो। पवित्रता-दायक वायु हमारे लिए कल्याणकारी हो कर चले। धुलोक और पृथिवी लोक हमारे लिए सदा मङ्गलकारी हो। मरुद्गण भी वृष्टि द्वारा विश्व का कल्याण करें !!!

शिक्षा-क्षेत्र में आर्यसमाज



[श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालकार एम० ए०, डी० लिट्० अजमेर]

आर्यसमाज जिस प्रकार समाज सुधार, स्वदेशी प्रचार अल्लूतोद्धार एव राष्ट्र भाषा प्रसार में अपने जन्म काल से ही सदैव अग्रणी रहा है। जिसकी सराहना पूज्य महात्मा गांधी जी तथा नेता जी सुभाष चन्द्र बोस जैसे महापुरुषों ने मुक्त कंठ से की थी, उसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने नवीन भारत में वह सुचारु मार्ग प्रदर्शन किया है कि जिसका वर्णन भविष्य के इतिहासकार और विशेषतः शिक्षा विशेषज्ञ युग युगान्तर तक करते रहेंगे।

शिक्षा क्षेत्र में आर्यसमाज के मार्ग दर्शन को हम मुख्यतः तीन भागों में वर्णन कर सकते हैं—

(१) जब भारत प्रगाढाज्ञानान्धकार के गर्त में पतनोन्मुख हो रहा था, विदेशी सरकार भारतीयों को लार्ड मैकाले के शब्दों में अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा रंग और रक्त को छोड़कर शेष सब बातों में पूर्णतः अंग्रेज बनाने पर तुली हुई थी तथा अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त भारतीय अपने बाह्य रूप रंग ढंग, आचार व्यवहार में अपने भारतीय वेश परिधान खान पान, धर्म कर्म को तिलाजलि देते चले जा रहे थे—देश में स्थान स्थान पर अंग्रेजी के स्कूल, कालेज खुलते चले जा रहे थे, उस समय आर्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में एक नितान्त नूतन प्रयोग करने का निर्देश दिया और वह था गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रचलन। ऋषि के पश्चात् आर्यसमाज के तत्कालीन नेताओं ने एक नहीं, अनेक गुरुकुलों की स्थापना की और प्राचीन आर्य प्रणाली को नवीन ढांचे में ढालकर गुरुकुल कांगड़ी, गुरुकुल वृन्दावन, महाविद्यालय ज्वालापुर तथा अन्य अनेक गुरुकुलों की स्थापना की जिनका अनुकरण आगे चलकर ऋषिकुलों और अनेक विद्यापीठों ने किया जो आर्यसमाज के पथ प्रदर्शन का पक्का प्रमाण है।



श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा एम० ए० डी० लिट्

चाहे वे गुरुकुल आर्य भाइयों की उच्च आशाओं को पूर्णतः फलीभूत करने में किसी किसी अंश में सफल न हो पाये हों, किन्तु यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि आर्यसमाज के इन गुरुकुलों ने आर्य समाज को नया देश को जितने उष्णकाण्ड के विद्वान् दिये हैं, उतने भारत की कोई एक अन्य सखा देश को आज तक नहीं दे सकी। "Simple living and high thinking", 'सादा जीवन, उच्च विचार' का जो आदर्श इस गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ने देश के सम्मुख रखा वह राष्ट्रिय कार्यकर्ताओं के लिए भी सदा अनुकरणीय रहा है और रहेगा।

(२) ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज ने सर्वप्रथम हिन्दी को राष्ट्र-भाषा घोषित किया तथा सर्वप्रथम अपनी पाठशालाओं, गुरुकुलों और स्कूलों में हिन्दी को ही शिक्षा का माध्यम बनाने में व्यावहारिक रूप दिया, वह सदैव स्मरणीय रहेगा। पंजाब में तथा अन्य स्थानों में आर्यसमाज को सस्थाओं को हिन्दी माध्यम के कारण अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा किन्तु फिर भी वह दृढ़ रहा।

संसार इस बात का साक्षी है कि जिस हिन्दी माध्यम को आर्यसमाज ने सर्वप्रथम अपनाया था, भारत स्वतन्त्र होने पर उसी प्रदेशीय या हिन्दी भाषा के माध्यम को अब समस्त देश में भारत सरकार घोषित कर चुकी है।

(३) गुरुकुलों तथा संस्कृत पाठशालाओं के अतिरिक्त पाश्चात्य सभ्यता की लहर को रोकने के लिये एवं अंग्रेजी-शिक्षा के प्रभाव को कम करने के लिये आर्यसमाज ने ही० ए० वी० स्कूलों और कालेजों की स्थापना कर देश के नवयुवकों को भारतीयता और धार्मिकता की ओर प्रवृत्त किया। यदि इस समय ब्रिटिश राज्यकाल में इस प्रकार के स्कूल कालेज न खोले जाते तो आज भारत की नवदुग पीढ़ी न मालूम कहीं से कहीं पहुँचती ? जब हमारी संस्कृति और सभ्यता ही उठ जाती तो इस देश का क्या बनता ?

बुलबुल ने आशियाना चमन से उठा लिया।

उसकी बला से बूम रहे या हुमाँ रहे ॥

(४) आर्यसमाज ने अपने शिक्षणालयों में धार्मिक शिक्षा को अनिवार्य रूपसे प्रमुख स्थान दिया जो नैतिक-शिक्षा का आधारभूत सिद्ध हुई। हमारी वर्तमान धर्म-निरपेक्ष सरकार ने आज धर्म-शिक्षा को विद्यालयों से बिल्कुल ही भले ही उड़ा दिया है परन्तु राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद तथा श्री राजगोपालाचार्य तथा हमारे उपराष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन जैसे मान्य मनीषी महानुभाव अब भी यह अनुभव करते हैं कि धर्म-शिक्षा स्कूलों में अवश्य होनी चाहिये। भारत के समस्त विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों का जो गत सम्मेलन खडग बासला में हुआ था उसमें भी यह निश्चय किया गया कि छात्रों में बढ़ती हुई अनुशासन

हर्ष में विषाद

दीपावली ठौर-ठौर दीपको की पाति सजा,
अमा निशा का है तम तोम हर डालती।
नभ के सितारों देती धरा पर है उतार,
काज अचरज का महान कर डालती ॥
सब ओर राग राग है विखेरती, परन्तु
हर्ष में विषाद की प्रभा भी भर डालती।
ऋषि दयानन्द की प्रयाण-तिथि होंके हत-
भागी शुभ्र अक पै कलक धर डालती ॥
दिव्य ज्योति वाले दयानन्द ऋषि इसी दिन,
दीपमालिके। लिये थे जग से तू ही ने छीन।
तेरे सृष्टिका के लनु दीपों की विसात ही क्या,
प्रकृति-नटी के भी हुये थे दीपगण क्षीण ॥
वरती आकाश हाय। रोपडे थे शोक से औ'
तारे व "मयक" सभी दु ख से हुये मलीन।
"स्वामी दयानन्द" धरती से क्या गये कि माना,
अखिल धरा ही सब विधि हुई दीन-हीन ॥
—चन्द्रपालसिंह "मयक" एम० ए०, कानपुर

हीनता का कम करने के लिये स्कूलों कालेजों में धर्म-शिक्षा अनिवार्य कर दी जावे। यह है आर्यसमाज के शिक्षा-क्षेत्र में पथ प्रदर्शन का एक और पक्का प्रमाण।

इस प्रकार यद्यपि आर्यसमाज ने बाल मनोविज्ञान (Child Psychology) पर तथा बाल शिक्षण आदि अभिनव परीक्षण नहीं किये परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज का महत्त्वपूर्ण कार्य रहा है। इसीलिए सन् १९२७ के गुरुकुल कांगड़ी के महासंभव पर महात्मा गांधी जी ने ये उद्गार प्रकट किये थे कि "शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई मिशनरों के परपान् आर्यसमाज का अतीव विस्तृत एवं सराहनीय कार्य रहा है।" इसी प्रकार प्रो० रंगाने अमेरिका की मिस-मेयो की पुस्तक (मदर इण्डिया) के उत्तर में जो (फादर इण्डिया) नाम का ग्रन्थ लिखा था, उसमें आर्यसमाज-की शिक्षण सस्थाओं की मुक्त कठ से सराहना की थी। इस प्रकार भारतीय शिक्षा-क्षेत्र में आर्यसमाज का मार्ग-दर्शन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। —

हे सुख के दाता स्व
प्रकाश स्वरूप सत्को
जानने हारे परमात्मन् ।
आप हमको श्रेष्ठ मार्ग से
सम्पूर्ण प्रज्ञानो को प्राप्त
कराइये । और जो हम म
कुटिल पापाचरण रूप मार्ग
है, उससे प्रथक कीजिय ।
इसलिए हम नम्रतापूर्वक
आपकी बहुत सी अस्तुति
करते हैं कि आप हमका
पवित्र करें ।

× × ×
हे परम गुरा परमात्मन् !
आप हमका अस्तु मार्ग से
प्रथक कर सन्मार्ग म प्र प्र
कीजिये । अविद्या-वशात्
का छुडाकर त्रिचा रूप
सूर्य को प्राप्त कीजिये ।
और सृत्यु रोग से प्रथक
करके मात्त के आनन्दरूप
अमृत को प्राप्त कीजिये ।

× × ×
जब सन्यासी मार्ग म
चले तब इधर उधर न दख
कर नीचे पृथ्वी पर दृष्टि
रख के चले । सदा वक्ष से
छान कर जल पिये । निर
तर सत्य ही बोले । सर्वदा
मन से विचार के सत्य का
ग्रहण कर असत्य को छोड
देवे ।

× × ×
छिन्ने मूले बृचो नश्यति
तथा पापे क्षीणो दु ख नश्यति ।
जैसे मूल कट जाने से बृच
नष्ट होता है, वैसे ही पाप को
बोडने से दु ख नष्ट होता है ।

× × ×

अपने भविष्य के लिए
अपने वच्चों के भविष्य के लिए
अपने देश के भविष्य के लिए
राष्ट्रीय वचत योजनाओं में—

धन लगाइये

आपका धन सुरक्षित रहेगा,
बढ़ महित कुछ वर्षों में वापस मिल जायगा ।

और **इमसे राष्ट्र निर्माण की--**

योजनाएं पूरी होंगी ।

ग्रन्थ-५

अद्वितीय शुद्धि-व्यवस्था

देश-दिदेश मे प्रसिद्ध जाति-निर्णायक ग्रन्थों के ग्राहकों को नियमानुसार

‘गीता’ ‘रामायण’ मुफ्त वितरित

परोपकार कीजिए

जाति-ग्रन्थेपण प्रथम भाग—३६१ हिन्दू जातियों का विवरण प' ४७४ पृष्ठ ।
परिवर्धित सस्करण ६) डा० १॥) “ब्राह्मण निर्णय” सजिल्द १५) ६२० डिमाई
अठ पेजी । सचित्र (क वय २), क्षत्रिय वंश प्रदीप प्रथम भाग ३७१ पृष्ठ ६)
नौ मुस्लिम जाति निर्णय ५२० पृष्ठ ६) डाक० १॥) लृणिया जाति निर्णय लग
भग २२० पृष्ठ । लेखक को ११००) मिले । लृणिया, लृनिया, नृनिया जाति का
उद्धारक ग्रन्थ । पत्राय मे हजारों बीधा जमीन जप्ती से बचायी । मू० ४॥) स०
५॥) डाक वय १।) बडा सूची पत्र जन सम्मति व नियम मुफ्त । शीघ्र मगाइये ।

पता—वर्ण व्यवस्था मण्डल (आ.) फुलेरा जिला जयपुर



आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर

के

कुछ प्रमुख प्रकाशन



चारो वेद सरल हिन्दी अनुवाद सहित—सम्पूर्ण १४ जिल्दों में, मूल्य ११२) रु०, उत्तम छपाई सफेद चिकना कागज, डबल क्राउन १६ पेजी के सुलभ आकार में, प्रत्येक जिल्द पूरे कपडे की बधी हुई, मुनहरी अक्षरों सहित है। सामवेद १ जिल्द ८) रु०, अथर्ववेद ४ जिल्द ३२) रु०, यजुर्वेद २ जिल्द १६) रु०, ऋग्वेद ७ जिल्द ५६)।

महर्षि जीवन चरित्र—श्री देवेन्द्रनाथ जी द्वारा समर्पित व पंडित घासीराम जी मेरठ द्वारा अनुदित। दोनो भाग सजिल्द व अनेको घटना-पूर्ण चित्रों से युक्त। कवर पर महर्षि का तिरंगा चित्र आर्ट पेपर पर मूल्य ८) रु० प्रति भाग।

क्या वेद में इतिहास है ?—लेखक प० जयदेव जी शर्मा विद्यालकार। युक्ति एवं खोजपूर्ण प्रामाणिक ग्रन्थ—मूल्य २।) रु०।

कर्म-मीमांसा—ले० आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री। पुस्तक में नीति के मूल तत्त्व, आपद्धर्म, कर्तव्य और अधिकार, नीति और विधान नीति आदि पर मौलिक तथा सारगर्भित सामग्री है। नवीन तथा सशोधित संस्करण। मूल्य २।) रु०

सन्मार्ग-दर्शन—ले० स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज, लेखक की हिन्दी में लिखी हुई यही एकमात्र पुस्तक है। बुक साइज ६०० पृष्ठ, सजिल्द मूल्य केवल ४) रु०।

वेदांग प्रकाश के शुद्ध संस्करण—सधि विषय १) रु०, आख्यातिक ४) रु०, धातुपाठ १।=), वर्णोच्चारण शिक्षा ३), नामिक १।), सौवर १।=), पारिभाषिक १।), गणपाठ १।=), अन्वयार्थ १), कारकीय १।=), सामासिक १।=), उणादिकोष आदि अन्य भाग भी छप रहे हैं।

दयानन्द वाणी—भूमिका लेखक पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज। पुस्तक में महर्षि के वचनों व उपदेशों को उत्तमोत्तम ढंग से समर्पित किया है। टाइप बड़ा, कवर दो रंगों का, पृष्ठ सख्या २४०, मूल्य केवल १।) रु०।

दयानन्द वचनान्त—लेखक महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती। सुललित भाषा में, महर्षि के जीवन की अद्भुत भाँकी तथा उनके सुन्दर वचनों के सप्रह के साथ-साथ कवर पर सुन्दर तिरंगा चित्र मूल्य १।=)।

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्यारत्न, विद्या विशारद विद्यावाचस्पति आदि परीक्षार्थ मण्डल के तत्वावधान में प्रतिवर्ष होती हैं, इन परीक्षाओं की समस्त पुस्तके अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहाँ से भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं की पाठ्यविधिपुस्तक मंगावें।

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धिः
सधर्मः (वैशेषिकदर्शनं)
जिस मानवोचित कर्त्तव्य
पालन से ऐहिक अभ्युत्थान तथा
मानसिक कल्याण दोनों ही वही
धर्म है। मनुष्यों के भोजन, आहार,
निद्रादि पशुओं के ही समान हैं।
मनुष्यों में धर्म ही पशुओं से
विशिष्ट वस्तु है। धर्महीन मनुष्य
और पशु में कोई अन्तर नहीं है।

× × ×

विद्या ददाति विनय विनया-
द्याति पात्रताम्। पात्रत्वाद्धनमाप्नोति
धनाद्धर्मं तत सुखम्

विद्या से विनय, विनय से
पात्रता, उससे धन, उससे सुख प्राप्त
होता है। सन्मार्ग से आई हुई
विद्या मनुष्य को विनय सिखाय
देती है। × × ×

सर्वेषा भूषण धर्मः

सत्य निष्ठा या स्वकर्त्तव्य पालन
ही मनुष्यमात्र का भूषण है। सत्य
या कर्त्तव्य से हीन मनुष्य मनु-
ष्यताहीन, श्रीहीन असुर है।

धार्मिक परीक्षायें

सरकार से रजिस्टर्ड आर्य साहित्य मण्डल लि अजमेर द्वारा संचालित
भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्या विनोद, विद्यारत्न, विद्या-
विशारद, विद्यावाचस्पति की परीक्षाये आगामी जनवरी में समस्त भारत
में होगी। कोई किसी भी परीक्षा में बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में
सुन्दर सुनहरा उपाधि पत्र प्रदान किया जाता है। धर्म के अतिरिक्त
साहित्य इतिहास, भूगोल, समाज विज्ञान आदि का कोर्स भी इनमें
सम्मिलित है। निम्न पते से पाठ-विधि व आवेदन पत्र मुफ्त मगाइये।

डा० सूर्यदेव शर्मा एम०ए०, डी० लिट्
परीक्षा मन्त्री आर्य विद्या परिषद्, अजमेर।

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद की

सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर शास्त्री और वाचस्पति परीक्षा में बैठिये।
नियमावलीआवेदन पत्र कार्यालय से मगा लें।

—डा० प्रेमदत्त शास्त्री

परीक्षा मन्त्री

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् परीक्षा कार्यालय
आजोगढ़

लक्ष्मणधारा

* * * हमेशा पास रखिये

हैंजा कैं, वस्त, पेट का दर्द
जी मिचलाना, कफ, सर्दीसी,
जुकाम, मदाग्नि, ज्वर आदि
रोगों में गुणकारी है
जिससे प्रतिवर्ष देश विदेशके
लाखोंरोगी लाभ उठाते हैं

हर जगह मिलता है **स्व विलासकम्पनी** कातपुर



सफेद दाग

यह हमारी दवा सन् १९३६ से
प्रसिद्ध है। इस दीर्घकाल में हजारों ने
इसकी परीक्षा करके हमें प्रशंसा पत्र
भेजे हैं। आप भी एक बार अनुभव
कर देखिए। दवा का मूल्य ५) रु०,
ढाक-ज्यय १।) रु०। अधिक विव
रण मुफ्त मगाकर देखिये।

वैद्य के. आर. चोरकर (आर्य)

मु० पो० मगखुम्बीर

खि० अकोला [विदर्भ]

विशेष हाल जानने के लिए सूची-पत्र मुफ्त मंगाकर देखिए।

जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही साथ जानता है, वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को दर के विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है।—वेद

× × ×

जो मुक्ति चाहे वह जीवन मुक्त अर्थात् जिन सिद्ध्या भाषणादि पाप कर्मों का फल दुःख है, उनको छोड़ मुख स्वरूप फल को देने वाले सत्य भाषणादि धर्माचरण अवश्य करे। जो कोई दुःख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दुःख का पापाचरण और सुख का धर्माचरण मूल कारण है।

—ऋषि दयानन्द

× × ×

नास्तिको वेद निन्दकः ॥मनु॥

जो वेदों की निन्दा अर्थात् अपमान, त्याग, विरुद्धाचरण करता है, वह नास्तिक कहाता है।

जो देहधारी है, वह सुख-दुःख की प्राप्ति से प्रथक कभी नहीं रह सकता। और जो शरीर रहित जीवात्मा मुक्ति में सर्व व्यापक परमेश्वर के साथ शुद्ध होकर रहता है, तब उसको सांसारिक सुख दुःख प्राप्त नहीं होता।

× × ×

स्वास्थ्य प्राप्त करने का अमूल्य साधन

च्यवनप्राश

च्यवनप्राश शीत ऋतु में शरीर की तमाम कमियों को पूरा कर देता है। वर्ष भर शरीर में जो कमी आ जाती है, उसे आप च्यवनप्राश से पूरा कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त खाँसी, विगड़ा जुकाम, गले का बैठना आदि विकारों में अनुपम लाभप्रद है।

आज ही अपने लिये एक डिब्बा स्थानीय वितरक से लें या सीधा हमें लिखें।

आयुर्वेदिक औषधियों के कुशल निर्माता—

गुरुकुल काँगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार

स्थानीय वितरक—

लखनऊ—एस०एस०महता एण्ड कम्पनी २० २१ श्रीराम रोड।

चौक—लखनऊ—हरिद्वार औषधालय कमला नेहरू मार्ग गोल दरवाजा

REGD **कर्ण रोग नाशक तैल** रजिस्टर्ड

कान की बीमारियों से आराम पाने के लिए 'कर्ण रोग नाशक तैल', बड़ा अक्सीर है। यह दवा सन् १९३७ से प्रसिद्ध है। इस दीर्घकाल में संकड़ों ने इसकी परीक्षा करके प्रशंसा-पत्र भेजे हैं। आप भी एक बार अवश्य आजमाइये। कीमत १ शीशी १।), पैकिंग पोस्टेज १।।)। छै लेने से खर्चा फ्री। वेचने के लिए एक दर्जन पर ३ शीशी कमीशन।

पता—कार्यालय 'कर्ण रोग नाशक तैल' सन्तोमालान मार्ग

नजीबाबाद यू० पी० * * * NAJIBABAD U P

(मत पढ़ो—यदि परोपकार के लिये दिल में स्थान न हो)
—‘दमा’ और पुरानी खांसी के रोगियों ध्यानपूर्वक पढ़ो—
हमारी “चित्रकूट बूटी” ने तो विदेशों में भी हलचल मचा दी है
पढ़ो... .. देखो लोग क्यों कहते हैं !

श्री. गुरसरनसिंह पो० बक्स २०४३ एनकोन (Ancone Czone) में लिखते हैं मेरी स्त्री को दमा हो गया था जो यहाँ “पनामा” में इलाज पर सैंकड़ों रुपया खर्च किया परन्तु कोई लाभ न हुआ। अकस्मात ही भाई सुचासिंह द्वारा आपकी दवा “चित्रकूट बूटी” मिल गई। वाह रे औषधि ! एक मात्रा ही जादू की तरह से काम करती है। सैंकड़ों रुपया खर्च करने पर जो लाभ न हुआ था, वह इस दवा की एक मात्रा से ही हो गया। परमात्मा आपके कार्यालय की दिन रात उन्नति करे। जिसमें गरीबों का भला हो। मैं पाँच ढालर सेवा में भेजता हूँ। आप किसी धर्म कार्य में लगा दें। अधिक क्या लिखे।

(२) श्री बासुराम कान टेविल नम्बर १४ थाना खास रोहतक से लिखते हैं कि मैंने आपसे सन् १९५० में छ्पे ३ खुराक दमे खासी की दवा मगाई थी। यथार्थ में उन्होंने जादू की तरह से काम किया है। कृपाकर पुडिया इस साल भी जल्दी से भेज दें, परमात्मा आपको सदा जिन्दा रखे जो इस तरह पर जनता की भलाई होती है।

(३) नरेन्द्रसिंह बेदी असिस्टेन्ट सर्जन बावेल दिव्सैरी जिला गुडगावा से लिखते हैं—पिछले साल श्रीमती हरबन्स कौर ने आपकी चित्रकूट बूटी सेवन की थी। एक ही मात्रा में आश्चर्यजनक लाभ हुआ कृपा करके एक पुडिया इस साल जल्दी से और भेजे।

(४) श्री रामसुन्दर भगत सु० मोहनपुर पो०खवास-पुर जि० भागलपुर से लिखते हैं आपकी दवा ‘चित्रकूट बूटी’ से आश्चर्यजनक लाभ हुआ। कृपया दो खुराक और भेज दें।

(५) श्री गौरी शंकर अध्यापक ग्राम कोपवा पो०

पता— रायसाहब के० एल० शर्मा रईस आश्रम ६० “जगधरा” (E. P)

जैदपुर जिला बाराबन्गी से लिखते हैं। १० साल से एक रोगी दमा से तड़फ रहा था। आप की दवा चित्रकूट बूटी की एक ही मात्रा ने उसकी जान बचा दी। यथार्थ में यह दवा अमृत तुल्य है। अधिक कहीं तक लिखा जावे। बस दवा से प्रति वर्ष हजारों स्त्री पुरुष लाभ उठाते हैं। यदि आप इस रोग से तड़फ रहे हो तो मुफ्त में इधर-उधर पैसा बरबाद न करके किसी भी “पूर्णमासी” को एक मात्रा इसकी सेवन करके आश्चर्यजनक गुण देखे। यदि रोग अधिक पुराना हो तो लगातार ३ पूर्णमासी सेवन करे। जड़ से रोग कट जावेगा। यहाँ आश्रम में सब को यह दवा मुफ्त (व्यर्थ) दी जाती है। बाहर मगाने पर केवल ३॥॥) रु० विज्ञापन रजिस्ट्र। अदि का खर्च भेजना पड़ता है। जल्दी मनीआर्डर भेज कर मगाले जिसमें ध्यान वाली पूर्णमासी पर सेवन कर सकें। इस दवा की वी० पी० नही भेजी जाती है क्योंकि वी० पी० कभी-कभी बहुत देर से मिलती है। यदि पूरा कॉर्ज ३ खुराक एक बार मगावे तो ६॥॥) भेजें। अनेक अमीर आदमी अपने नाम से गरीबों को मुफ्त (धर्मार्थ) वाटने के लिये दर्जनों खुराक मगाते हैं उनके लिये रिआयती रेट कम से कम १२ पैकट ३२॥) रु० है। जल्दी मगाकर हर समय घर में रखे।

नोट—“आर्यमित्र” के प्राहकगण ऊपर लिखे अनु सार रुपया मनीआर्डर से “आर्यमित्र” को भेजकर रसीद हमारे पास भेज देने से हम दवा तुरन्त रजिस्ट्री से भेज देंगे। यह रुपया केवल विज्ञापन छपाई खर्च मात्र है। आपको “आर्यमित्र” की सहायता का पुण्य भी प्राप्त होगा। एक पन्थ दो काज वाला परोपकारी कार्य है।

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१) ऋग्वेद सुबोध भाष्य—मधु ऋन्दा, मेधातिथी, शुन शेष ऋष्य, परागोतम, हिरण्य गर्भ, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १६) ढाक व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध भाष्य । मूल्य ७) ढाक-व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अर्चयाय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी मू० २) अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका ढाक-व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) ढाक व्यय ६)

उपनिषद् भाष्य—ईशा २), केन ॥), कठ १॥), प्रन १॥), मुण्डक १॥)

माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥) सबका ढाक व्यय २)

श्रीमद्भगवद्गीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य १२॥) ढाक-व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ संख्या ६६०]

मूल्य १२) ढाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण भाषान्तरकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा वतार जी विद्याभास्कर, रतनगढ़ (जि० विजैनौर) । भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है । यह सब जानते हैं । व्याख्याकार भी हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध है । भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र है । इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन पाठन भारत भर में और घर घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है । इसलिए इसको आज ही मंगवाइये ।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं ।

पता—स्वाध्यायमण्डल किरला पारडी, जिला सूरत

आवश्यकता

दो सुन्दर स्वस्थ, कक्षा ७ तक हिन्दी अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त चतुरि कन्याओं के लिए जिनकी आयु लगभग १५-१५ वर्ष है, योग्य वरों की तथा इन्हीं के एक २५ वर्षीय भाई के लिए जो इण्टर पास है, तथा रेलवे में टिकिट कलैक्टर है, योग्य बधू की आवश्यकता है । विवाह उच्च वर्गीय आर्य परिवारों में जाति बन्धन तथा दहेज प्रथा को तोड़कर वैदिक रीत्यनुसार होगा ।

पता—राधाचरण आर्य पुरोहित
आर्यसमाज गुना-मध्यप्रदेश

आवश्यकता

एक २५ वर्षीय मैट्रिक एसा टी० सी० ट्रेड ब्राह्मण युवक जो राष्ठीय प्राइमरी स्कूल में अध्यापक है, के लिए ब्राह्मण अथवा द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) मात्र की शाकाहारी सुन्दर, शिक्षित १६-१७ वर्षीया कन्या बच्ची आवश्यकता है । ब्राह्मण मात्र को प्राथमिकता दी जावेगी । मिले या लिखें ।

पता—चन्द्रविहारी आर्य
अध्यापक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
अटलू, कोटा (राजस्थान)

योग्य वर की आवश्यकता

एक भद्र परिवार की पढ़ी लिखी सुशील आर्य कन्या के लिए भद्र परिवार का २५ से ३० वर्ष तक के शिक्षित स्वर्णकार युवक की आवश्यकता है । विवाहोच्छुक परिवार मन्त्री आर्य समाज मुजफ्फरपुर (बिहार) से पत्र व्यवहार करें ।

महर्षि दयानन्द

आर्यत्व की एक साकार व्याख्या

—स्वर्गीय श्री अरविंद

ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व और उनके कार्यों में हम स्वतः स्फूर्ति निश्चित प्रयत्न और प्रबल रचना की उस शक्ति को पाते हैं, जो पूर्ण स्पष्टता, सत्य और ईमानदारी के आन्तरिक तत्त्व से आती है।

किसी व्यक्ति का अपने मन में साफ होना, अपने प्रति दूसरों के साथ पूर्णतया सच्चा और सरल होना और अपने कार्य की परिस्थितियों तथा माघनों के साथ पूरे तौर से ईमानदार होना यह हमारी टेढ़ी, पेचीदी और लडखडाने वाली मनुष्य जाति में एक दुर्लभ देन है। आर्य' कार्यकर्ता की यही भावना होती है, और तेजोमय सफलता पाने का यह एक निश्चित रहस्य है। क्योंकि प्रकृति अपने दरवाजे पर हमेशा एक स्पष्ट सच्चे और पहचानने योग्य खटखटाने को पहचान लेती है, और परिणाम में वैसी ही पूरी सजगता और पूरे यत्न के साथ उत्तर देती है।

परिणामतः यह उचित ही है कि उस महान आचार्य की आत्मा अपने अनुयायियों पर अपना चिन्ह अपनी निशानी छोड़ सकी और भारत में ऐसी मस्था विद्यमान हो सकी, जिसके बारे में यह कहा जा सके कि जब कभी कोई ऐसा काम दिखाई देगा जो आवश्यक हो और उचित हो तो उसे करने के लिए आर्य समाज के मनुष्य आगे आयेगे, साधन मिलेगे और वह काम अवश्य पूर्ण होगा।

सत्य एक सरल सी वस्तु लगती है, फिर भी अत्यन्त कठिन है। सत्य ही वैदिक शिक्षा का मूल मन्त्र था। आत्मा में सत्य, दृष्टि में सत्य, इरादे में सत्य और क्रिया में सत्य क्रियात्मक सत्य 'आर्यत्व एक आन्तर निष्कपटता और दृढ़ सत्य हृदयता, स्पष्टता और वाणी तथा कर्म में ग्फुट उदात्तता यह आर्य नैतिकता का स्वभाव रहा है। इस प्रकार का स्वभाव शुद्ध और अवि-कृत शक्ति का रहस्य है और इस बात का चिन्ह है, मनुष्य प्रकृति से बहुत परे नहीं हट गया है। यही ईश्वर के पुत्र 'दिवस्पुत्र' का और सत्व है, उसके सच्चे पुत्र होने का प्रमाण है। यही वह छाप थी, जिसे दयानन्द अपने पीछे छोड़ गये और यही उनका अपना चिन्ह और प्रतिभा होनी चाहिए, जिसके द्वारा कि कोई कार्य 'यह उनसे प्रवर्तित है' इस रूप में पहचाना जा सके।

ईश्वर करे उनकी भावना शुद्ध, अविच्छिन्न, तथा अपरिवर्तित रूप से भारत में काम करे और उस वस्तु को फिर से हमें देने में सहायक हो, जिसकी हमारे जीवन में अत्यन्त आवश्यकता है, अर्थात् शुद्ध शक्ति, उच्च स्पष्टता, सूक्ष्मदर्शी आँखें, सिद्धहस्तता तथा श्रेष्ठ और प्रभुत्वपूर्ण सत्यता।

वाज-सूक्तम्

अर्थात् वैदिक शक्ति-साधना

(लेखक—श्री डा० महलदेव शास्त्री, उपकुलपति, बाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय)

वैदिक धर्म की दृष्टि से वाज, बल, या शक्ति की प्रार्थनाओं का बड़ा महत्त्व है।

उन्हीं प्रार्थनाओं के आधार पर, एक ही स्थान में शतशः मन्त्रों की उत्कृष्ट भावनाओं के एकत्रीकरण के उद्देश्य में, वैदिक छन्द, शब्दावली, शैली और विचार धारा के अनुसार, निम्नलिखित वाज-सूक्त की रचना की गई है। हिन्दी अनुवाद और भावार्थ के साथ उसे हम पाठकों के समुच्च उपस्थित करते हैं—

वाज-सूक्तम्

वाजस्य नु प्रसवे त महान्त—

मिन्द्र देव वृत्रहन्तारमीडे ।
विश्वकर्माण मघवानमुध

साय प्रातर्मन्मना वज्रहस्तम् ॥ १ ॥

अर्थात्, वाज या शक्ति की प्रेरणा के उद्देश्य में, साय और प्रातः, सोत्र द्वारा वृत्र अथवा बाधक शक्तियों के निवारक उभ महान् देव इन्द्ररूप परमात्मा की स्तुति करता हूँ, जो विश्वकर्मा, मघवा (ऐश्वर्यशाली), उग्र और वज्रहस्त है।

यस्ते वाजो निहितो वाजपते ।

कन्यो सूर्ये वायावथ स्त्रेऽयामु ।

तेन नो वाजिन् वाज्रवतो विवेदि॥ (य जुषी रचना)

अर्थात्, हे शक्ति के एकमात्र स्रोत परमात्मन् ।

जो आपकी अनन्त शक्ति अग्नि में, सूर्य में, वायु में और प्रवहणशील नदियों में कार्य कर रही है, भगवन् । उससे आप हम सब का शक्तिशाली बनाइए ।

आज विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि वयु आदि

भौतिक पदार्थों में अनन्तानन्त शक्ति निहित है और उसका उपयोग भी विश्व के व्यावहारिक हित के लिए किया जा सकता है।

इसी सिद्धांत का विवरण नोचे की ऋचा में किया गया है—वाजेन सूर्यन्तम आभिनन्ति

वाजेन वायुस्तरसा प्रवाति ।

वाजेन विश्वं द्योतते सशब्द

वाजेन नद्य प्रवहन्ति वेगान् ॥ ३ ॥

अर्थात्—

वाज से ही सूर्य अन्धकार को दूर करता है,

वाज से ही वायु बल पूर्वक चलता है।

वाज से ही विश्व तूफानकाहट के साथ चमकती है, और वाज से ही नदिया वेग के साथ बहती हैं ॥

वाजेन वीरा विजय लभन्ते

वाजेनेन्द्रो जायते वृत्रहन्ता ।

वाजेन विश्वं रुचमादधाति

वाज बिना परितो चर्वते तप ॥ ४ ॥

अर्थात्, बल द्वारा ही वीरजन विजय को प्राप्त करते हैं। बल या शक्ति द्वारा ही समुन्नति-शील व्यक्ति-

(इन्द्र) अपने लक्ष्य की समस्त बाधाओं (वृत्र) को दूर करता है। बल और शक्ति के होने पर समस्त ससार

दीप्ति से युक्त अर्थात् रोचक प्रतीत होता है। और शक्ति के अभाव में निर्वल व्यक्तियों को अपने चारों

ओर अचकार ही अचकार फेलता हुआ दीखता है।

वाजं पृथिव्या दिवि चान्तिरिच्छे

वाजो विश्वं भुवनमाविशे ।

आर्वाश्च व्यार्वाश्च निवरयन्ते

वाजेन शत्रून् सहसा जयेम ॥ ५ ॥

अर्थात्, वाज पृथ्वी, वायु और आन्तरिक लोक में विद्यमान है। वाज समस्त सृष्टि में प्रारम्भ में ही व्याप्त रहा है। हम अपने मानसिक कष्टों और

शारीरिक व्याधियों को निवारण करने हुए वाज से समस्त आन्तरिक तथा बाह्य शत्रुओं पर सहसा विजय

लाभ करें।

वाजा हि मा सर्ववीरं करोतु

सर्वा आशा वाजपतिर्जयेयम् ।

वाजं पुरस्तादुतं पृथुतो मे

सर्वा आशा वाजपतिर्जयेयम् ॥ ६ ॥

अर्थात्, मेरे सब पुत्र पौत्रादि बल से युक्त हो और मैं बलशाली होता हुआ समस्त दिशाओं में

विजय प्राप्त करूँ। मेरे सामने बल हो और मेरे पीछे भी बल हो इस प्रकार बल से युक्त होऊँ मैं समस्त दिशाओं में सकलता और समृद्धि को पाऊँ।

अवैतनिक सम्पादक—उमेशचन्द्र स्नातक, शिरोमणि एम. ए.

साप्ताहिक आर्य मित्र ऋष्यङ्क

वर्ष
६३

लखनऊ रविवार कार्तिक १४, शक १८८३, कार्तिक कृष्ण १२, वि० २०१८
५ नवम्बर १९६१ ई०, दयानन्दाब्द १३७, सृष्टिसंवत् १९७२६४६०६२

अङ्क
४३

‘वैदिक धर्म’

(श्री डाक्टर हरिशंकर जी शर्मा डी० लिट्)



‘वैदिक धर्म’ विश्व-न्यायी है, क्यो सकीर्ण बनाएँ हम,
कल्याणी बाणी ऋषियो की, सब को क्यो न सुनाएँ हम ।
वैदिक धर्म प्रेम का प्रेरक, रैर वृत्त का नाशक है,
मानव धर्म दिवाकर है वह, उज्वल ज्ञान-प्रकाशक है ।



विश्व बन्धुता भर हृदयो में सदाचार का और बढ़े,
‘मानवता’ के उच्च शिखर पर, मुन्द वारणा धार चढे ।
जो परिव्र की कभी कसौटी पर, पहले कस जाते हैं,
वही वीरवर भ्रान्तजनो को, शुभ सन्मार्ग सुभाते हैं ।



‘ब्राह्मण’ ज्ञानी उठे, देश का मोह-तिमिर, अज्ञान हरे,
‘सृत्रिय’ अत्याचार मिटाकर, सत्याचार प्रचार करें ।
‘वैश्य’ अभाव दूर कर सबका, जीवन-वस्तु प्रदान करें,
‘शूद्र’ लोक की सच्ची सेवा करने में अभिमान करें ।

कर्म-योग में हैंस हँस सकट सहना ‘तप’ कहलाता है,
तबना पड़े धर्महित जो कुछ, वही ‘त्याग’ पद पाता है ।
‘श्याम तपस्या’ रुष्ट हो गये, आश्रो, इन्हे मनाएँ फिर,
‘त्यागी’ और ‘तपस्वी’ बनकर, एक बार दिखलाएँ फिर ।

शुभ संकल्प युक्त सब मन हों, तन परिपुष्ट अरोगी हों,
धन का स्रोत धर्म-भुवता हो जन न विलासी भोगी हों ।
स्वार्थवाद का भूत भयकर, कभी न विश्व-विघातक हो,
दानवता का दम्भ न मौलिक मानवता का पातक हो ।

ऋषि-शोषित से सिञ्चित होकर जो फुलवारी फूल रही,
वैदिक बायु विकम्पित देखो, झुक झुमर-सी झूल रही ।
जिसकी सुखद सुगन्ध विश्व को, बना रही है मस्ताना,
मितने कभी न देना उसको, चाहे तुम खुद मित जाना ।



★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★



सम्प्रदायी

विश्ववादी दयानन्द

महर्षिदयानन्द महापुरुष थे इस मान्यता के पीछे किसी प्रकार का आमहवाद नहीं है अपितु यह एक यथार्थ तथ्य है। महर्षि का दृष्टिकोण भारत की उन्नति तक ही सीमित न था अपितु उनके सतिष्क में विश्व हित ही सर्वोपरि था।

विश्व इतिहास का अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि इस युग में राजनीति में गांधीजी ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने उनकी भाति विश्ववादी दृष्टिकोण का प्रचार किया। अर्थशास्त्र के आधार पर एक दृष्टिकोण मार्क्सवाद ने अवश्य उपस्थित किया लेकिन उसके साथ भौतिकवाद और हिंसात्मक भावना सम्बद्ध है। उस कारण यह मानवता के उच्च आदर्शों की पूर्ति में सहायक नहीं हो सका। धार्मिक क्षेत्र में भी महात्मा इसा और मुहम्मद साहब का विश्व के बड़े राज्यों में गिना जाता है, लेकिन इनकी मान्यता के पीछे तलवार की शक्ति का बल अधिक है, अन्धानुकरण पर व्यक्ति पूजा का विचार उन्होंने अधिक फैलाया। इनसे पूर्व गौतम बुद्ध का धार्मिक प्रेरणा विश्व में गूँज अवश्य लेकिन उनके अहिंसा सन्देश ने मानव का अकर्मण्य बना दिया।

इन सबके विपरीत महर्षि दयानन्द अपनी स्थापनाओं, धारणाओं, अपने आन्दोलनों एवं सर्वहितकारी दृष्टिकाय के कारण एक समीक्षक की दृष्टि में विश्वमहापुरुष की उच्चतम पदवी के सर्वथा योग्य प्रतीत होते हैं। महर्षि के विश्व व्यापी दृष्टिकाय का हम विभिन्न रूपा में इस प्रकार देख सकते हैं—

१-मानव जाति एक है—

जन्म, लिंग, जाति, स्थान आदि विशेष के कारण कोई छाटा बड़ा नहीं है। उन्होंने भारतवर्ष के लोगों का अर्थत्व का जा पाठ पढ़ाया वह इसलिए नहीं कि आर्य रूप में वे श्रेष्ठ बनकर सत्सार के अन्य मानवों का सतार्ये अपितु उनकी शिक्षा का आधार यह था कि आर्यावर्त निवासियों पर मानव जाति के उद्धार का विशेष दायित्व है।

२-मारे संसार का एक ही ईश्वर है—

इस विचार का प्रचार करते हुये उन्होंने सम्प्रदाय बांधी मनावृत्तियों का पुरजोर खण्डन किया। उनका विश्वास था कि सम्प्रदायवाद की धारणा मानवता के लिए विनाशकारी है और इसी विश्वास की पुष्टि के लिए उन्होंने विश्वके विविध सम्प्रदायों का तुलनात्मक विवेचन सत्य धर्मप्रकाश में किया और इस प्रकार विश्व के सम्मुख बहुदेववाद, अथवा प्रथक् देववाद, पैगम्बरवाद का खण्डन कर अपनी धारणा का प्रमाणित किया। इसी प्रसंग में मूर्निपूजा का भी उन्होंने खण्डन किया क्योंकि मूर्निवाद सम्प्रदायवाद का एक विशेष आधार है।

३-संसार उपकार की भावना

महर्षि ने अपने विचारों के प्रसार के लिये आर्य समाज की स्थापना की और आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य सत्सार का उपकार करना निर्धारित किया। यदि उनका दृष्टिकाय तनिक भी सकुचित हाता ता वे इस परिभाषा का अन्तक प्रकार से सकुचित कर सकते थे।

४-व्यक्ति और समाज

महर्षि का दानो की उन्नति में ही मानव जाति का हित दीखता था। इसी आधार पर उन्होंने सारी मानव जाति के लिये व्याप्तगत उन्नति के लिये आश्रम व्यवस्था का और समष्टिगत उन्नति के लिये बर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन और समर्थन किया। वे न पूँजीवाद के समर्थक थे और न व्यक्ति की हत्या कर समाजवाद के समर्थक थे।

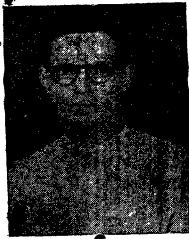
५-यथायोग्य व्यवहार का समर्थन

श्रुति ने शान्यता के आधार पर सामाजिक व्यवस्था का निरूपण किया। इसी सूत्र के माध्य में वह भी कहा जा सकता है कि मानव जाति के हित के लिये हिंसा और अहिंसा अर्थात् दण्डनीति का यथोचित उपयोग किया जाना चाहिये। तुष्टीकरण नीति मानवता के लिये सदैव घातक सिद्ध होती है।

६-प्रजातन्त्र का समर्थन

श्रुति ने अपने विचारों और श्लोकों के प्रति उद्घापोह करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रत्येक व्यक्ति को दी है। (शेष पृष्ठ १६ पर)

मन के दीपक



[रच०—कविबर "प्रणव" शास्त्री, एम ए, फीरोजाबाद]

मिट्टी दीपक छोड़ साधियों,
मन के दीप जलाओ ॥
सभी जानते रवि किरणों ने भूपर स्वर्ण बिल्वेरा
निद्रित तन्द्रित सुमन-भाल को दे दे प्यार सवेरा
किन्तु, कई स्थल हैं ऐसे जहाँ न किरणों पहुँची
वहाँ हृदय की व्यापकता से
अन्तर्व्योति जलाओ ॥ १ ॥

यद्यपि निर्मल स्रोत सलिल को बहती अवरल धारा
तम धरा पर लुपित जनो को मिलता बहुत सहारा
किन्तु, अनेको बातक फिर भी प्यासे ही रह जाते
इन सावन घनश्याम - घटा—
प्रिय, उनको सलिल पिलाओ ॥२॥

प्रकृति प्रेयसी योगदान से पृथिवी पाट रही है
बिना भेद के प्रति क्षण कण सबको बाँट रही है
किन्तु शतो कङ्काल मृत्यु का मन्दिर भौंक रहे हैं
देकर जीवन दान यशस्वी
उनको शीघ्र जिलाओ ॥ ३ ॥

ऋषिबर का सन्देश यही है सभी समुन्नति पावें
दया लिए आनन्द भवन में निर्भय बढ़ते जावें
प्रणव-भक्ति से शक्ति दाहिनी ले अनुरक्ति सजेगी
सत्य ज्ञान से मिथ्या मत के
कोटिन कोट हिलाओ ॥ ४ ॥

जलाना एक दिया

[रच०—श्री कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर]

आ गई है दीवाली,
ले आओ दिये,
ले आओ तेल,
बनाओ बाती,
जलाओ दिये—
कुछ घर में,
कुछ छज्जे पर,
कुछ जीने में
कुछ छत पर भी
रख दो—
कि जागे प्रकाश
भागे अघियारा,
मान हो भग
मानिनी अमा का,
जो कहती है—
अव प्रकाश कहाँ ?
हाँ सुनो,
भूलना मत,
जलाना एक दिया,
मानव के मन में भी,
प्रकाश का केन्द्र यह,
भरा है अन्धेरे से—
एकदम घटा टोप ।
तभी तो निर्माता मन,
नारा का विधाता हुआ,
रचता है ऐटम बम,
सजता है युद्ध साज,
प्यार की खिलारी छोड़,
करता है शीत युद्ध
भूल ही चला है वह—
जीवन का आदि राग—
'मैं तो को, तू मो को—
तेरा मैं, मेरा तू ।'

‘ऋषि-उत्सव’ का महत्व

[पूज्य श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महार ज, प्रधान, सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि समा]

[आशा है आर्यजन अपने नेता पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज के उपयुक्त विचारों पर गम्भीरतापूर्वक ध्यान दग और महर्षि के आदर्शों का जीवन में धारण कर आर्य समाज के गौरव को बढ़ायेंगे । —सम्पादक]

महर्षि दयानन्द की पुण्य स्मृति में, दीपावली के दिन, प्रति वर्ष ऋषि उत्सव बड़े उत्साह एवम् पमा राह से मनाये जाते हैं। प्रत्येक आर्य्य और आर्य्य समाज इस पवित्र पर्व में बड़ी सलग्नता से सम्मिलित हाना अपना मुख्य वर्त्तव्य समझता है। वस्तुतः यह बड़े हर्ष और सताष की बात है। ऋषि दयानन्द की पवित्र स्मृति में जा कुछ किया जाय था। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आधुनिक भारत के निर्माण का सूत्रपात महर्षि दयानन्द द्वारा ही हुआ। सबसे पूर्व उन्होंने ही भारतीय स्वाधीनता के लिए सर्व-साधारण का ध्यान आकृष्ट किया। वैदिक सभ्यति, वैदिक सन्धता, वैदिक साहित्य, भारतीय भाषना, राष्ट्राङ्कार, अस्पृश्यता निवारण बुद्धिवाद, महिला द्वार इत्यादि कल्याणकारी विषया पर सर्व प्रथम अपने विमल विचार प्रकट करने वाले महर्षि दयानन्द ही थे। सुगार सम्बन्धी किसी भी दिशा की आर टि पात कीजिए, सर्वत्र आपको महर्षि दयानन्द की हा परिष्कृत विचार धारा दिखायी देगी। उन्हीं का पवित्र सन्केत दृष्टिगत होगा।

ऋषि दयानन्द द्वारा प्रवर्तित, उनकी प्रतिनिधि सस्था आर्य्य समाज ने भी ‘जनजागरण’ की दिशा म, प्रशसनीय काम किया। ऐसा कोई समाज, समु दाय या सम्प्रदाय नहीं जो आर्य्यसमाज की बिचार धारा से, किसी न किसी प्रकार प्रभावित न हुआ हा। विधर्मों लागो पर भी आर्य्य समाज की गति विधियों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा, फलतः सैकड़ों सहस्रों विधर्मियों ने अपने मत त्याग कर, आर्य्य जाति का सकस रूहा यक बनना उचित समझा। यह उस समय की बात है, जब आर्य्य समाजों और आर्य्य भाई बहना की सख्या वर्त्तमान सख्या की समता म, बहुत ही कम थी। ज्यो ज्यो हमारी और हमारे आर्य



श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज

समाजों की सख्या बढ़ती गई, त्यों त्यों हममें कार्य शक्ति कम हाती गई, अधिकार-लिप्सा और पद-झोलु पता की अमद्व भावना ने आर्य्य समष्टि से स्नेह सह-योग की सद्भावना कम करने में बहुत सहायता दी।

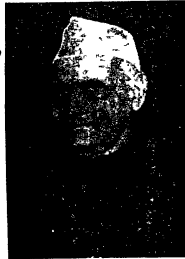
तो क्या आर्य्य समाजों की अथवा आर्य्यों की सख्या वृद्धि कोई बुरी बात है ? कदापि नहीं। मैं तो कहता हूँ। जितनी सख्या वृद्धि हो उतनी ही सतोष जनक है। जब ‘कुरुवन्ता विश्वमार्यम्’ हमारा उद्देश्य है। तब सख्या वृद्धि के विरुद्ध क्यों कर आवाज उठेगी की जा सकती है। हा, आवश्यकता इस बात की (शेष पृष्ठ १६ पर)

आर्यसमाज सैद्धान्तिक राजनीति में भाग लें!

नैतिक-नागरिक जागरण आवश्यक है।

[ले०—श्री डाक्टर हरिशङ्कर जी शर्मा डी०लिट्]

हमारे देश में 'स्वराज्य' तो हो गया, पर 'सुराज्य' नहीं हा पाया। सुराज्य का अर्थ है सुख, समृद्धि, शान्ति, सदाचार, समता, स्नेहशीलता आदि की वृद्धि 'गणतन्त्र' का आधार है—समता, स्वतन्त्रता और बन्धु भावना। स्वराज्य के सम्बन्ध में, महात्मा गांधी के जो स्वप्न थे वे साकार तो हुए ही नहीं, वर्तमान परिस्थिति में, उनके साकार होने की सम्भावना भी नहीं है। दिनों दिन भ्रष्टाचार की वृद्धि हो रही है। जिस जनता का राज्य बताया जाता है, आज वह अपने चुने हुए प्रतिनिधियों की दासी या सेविका बनी हुई है। उसके केवल तीन कर्त्तव्य हैं—कर-दान, मत-दान और स्वागत गान। स्वतन्त्र देश की जनता गुलामों की तरह अपने दिन बिता रही है। उसकी ऐसी दुर्दशा देखकर ही सन्त विनोबा लिखते हैं—



श्री डा० हरिशङ्कर जी शर्मा

“जैसे बेवकूफ बादशाह और उसका वजीर विद्वान् और ज्ञानी होता है न। बादशाह की चांटी और दाढ़ी, जो भी हो, वह वजीर के हाथों में ही रहेगी। वह बादशाह तो नाम मात्र का है, क्योंकि वह मूढ़ है। भले ही उसे बिहासन पर बिठा दिया गया हो, फिर भी वह भेड़ासन है। नाम मात्र का बादशाह पर गुलाम होकर बैठा है। हिन्दुस्तान की जो हिमोक्रेसी (लोकतन्त्र) है, उसकी हालत ऐसे ही बादशाह की सी है। इस लिए सारे देश का शारोमदार उसका उद्धार करना या बुबाना आज बन्द लोगों के हाथों में है। यानी हमने हिमोक्रेसी के नाम पर सारी सत्ता बन्द लोगो के हाथों में दे दी है, और 'हिमोक्रेसी' 'डिक्टेटर शाही' बनी हुई है।”

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि सन्त विनोबा वर्तमान 'लोकतन्त्र' में स्पष्ट रूप में “डिक्टेटर शाही” का ही मथानक एवम भौंडा रूप देख रहे हैं। जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधि गण अपने चुनने वाली जनता

को गुलाम समझते हैं, और जनता स्वयम् अपने को ऐसा ही ख्याल करती है। न 'समता' है, न 'स्वतन्त्रता' और न बन्धु भावना। सुख-समृद्धि और शान्ति का तो दुर्भिक्ष-सा ही है। मार काट, चोरी जारी, हत्या-काण्ड, भ्रष्टाचार का बाजार बुरी तरह गर्म है। ग्रामों में भले ही शिक्षा की कमी थी, परन्तु पचायतो राज्य प्रणाली ने उनमें विरादरीवाद को भी बुरी तरह जगा दिया है। मत-दान के समय नगरों में भी मत-पन्थों एव जाति विरादरीवाद का विष बुरी तरह फैल जाता है, परन्तु थोड़े दिनों बाद लोग उसे भूल जाते हैं, क्योंकि सब लोग अपने अपने काम धर्मों में लगे होते हैं। नगरों की अपेक्षा ग्रामों में बेकारी बहुत है, अत-एव वहाँ मत-दान के समय का भेद-भाव, बैर विरोध बढ़ल जाता है। महात्मा गांधी ने बिलकुल ठीक कहा है—“अच्छे शासन की कलौटी धन जन वृद्धि नहीं, बल्कि चरित्र-निर्माण है। अर्थात् लोकतन्त्र



में उच्चतम गुणों बुद्धिमत्ता, सभी दार्शनिकता और धार्मिकता का प्रादुर्भाव होना चाहिए। साथ ही स्वतन्त्र और प्रगतिपूर्ण मानवता का विकास भी। धर्म के बिना रा नीति कूड़ा करट तथा गन्दगी है।”

वर्तमान शासन को 'धर्म' शब्द से कुछ चिढ़ सी हो गयी है। वह मत, मजहब या सम्प्रदायवाद को 'धर्म' समझने की भयंकर भूल कर रहा है। हाल में हमें, दिल्ली के शिक्षा मन्त्रालय की ओर से प्रकाशित इस आशय की एक सूचना पढ़कर बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ कि छात्रों के लिए नैतिक शिक्षा जो जो पाठ्य पुस्तकें लिखी जायें, उनमें 'ईश्वर' का नाम कहीं न आना चाहिए। यदि यह समाचार पत्रों पर प्रकाशित हुआ है, तो कितनी अविबेक पूर्ण, बेजोड और बेदुम्मी भावना है। महात्मा गांधी तो कहते हैं कि मैं अज्ञ के बिना जीवन जिता सकता हूँ, परन्तु परमपिता परमेश्वर की प्रार्थना बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। हम तो समझते हैं, स्वतन्त्र भारत के शासक गण गांधी जी की जय तो बोलते हैं, परन्तु उनके विचारों का बहिष्कार करते हैं।

आर्यसमाज कुछ दिनों से कोई विरोध आन्दोलन नहीं कर रहा। वह जो कुछ कर चुका है, वह सर्वथा सराहनीय है। मेरी राय में तो स्वतन्त्र भारत में उसे सैद्धान्तिक राजनीति में प्रवेश करना चाहिए। अर्थात् व्यावहारिक राजनीति को कानूनी करिश्मों में निकाल कर धर्म धाम में भी प्रविष्ट कराना आवश्यक है। भारतवर्ष को स्वतन्त्रता दिलाते वाला धर्म है, उसी धर्म से 'स्वराज्य' सुराज्य में परिणत हो सकेगा। कौन नहीं जानता कि सत्य अहिंसा और तप त्याग जिनके माध्यम से हम स्वतन्त्र हुए, धर्म के मूल सिद्धान्त हैं। इन्हीं मौलिक तत्वों का राष्ट्रिय जीवन में प्रवेश करने से सार्वजनिक कल्याण-पथ उन्मुक्त होगा और सुख समृद्धि तथा शान्ति की विशुद्ध भावना जाग्रन् हो सकेगी। आर्यसमाज को अपनी सारी शक्ति का प्रयोग पतदर्थ ही करना चाहिए। यदि देश में धार्मिकता का प्रचार होने से अनुकूल मंगल मूल परिस्थिति उत्पन्न हो सकी ता कितना बड़ा कार्य होगा।



जो लोग कहते हैं कि आर्यसमाज को राजनीति में नहीं पडना चाहिए, वे ठीक कहते हैं। पब्लिसि राजनीति (Current Politics) में सामुदायिक रूप के आर्यसमाज का भाग लेना हमारी कल्पना के भी बाहर है, परन्तु सैद्धान्तिक राजनीति में धर्म भावना का प्रचार-प्रसार करना आर्यसमाज के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि वह निर्भय और निष्पक्ष भाव से, अपने स्वतन्त्र देश की जनता को बतावे कि धर्म क्या है? नैतिकता किसे कहते हैं? इनके अभाव में भ्रष्टाचार चोरी जारी, मारकाट आदि की वृद्धि किष् प्रकार होती है। स्वतन्त्र राष्ट्र में नागरिकों के क्या कर्त्तव्य एवम् अधिकार हैं? 'जनतन्त्र' जनता का राडय क्यों कहाँ और आज राज्य करने वाली जनता अपने ही चुने प्रतिनिधियों की कैसी गुलाम बनी हुई है।

इस प्रकार के प्रचार से देश की बड़ी सेवा होगी। नैतिकता का उदय होकर सुख, शान्ति समृद्धि की वृद्धि होगी। इस प्रकार आर्यसमाज अपने स्वर्गीय नेता श्रद्धेय श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की निम्नलिखित भविष्य वाणी को अरिर्तार्थ कर सकेगा जो उन्होंने अब से ३६ वर्ष पूर्व की थी—

जहा धार्मिक और सामाजिक उन्नति क्षेत्र में भारत प्रजा को दयानन्द के पीछे चलकर हो कल्याण मार्ग सुझा है, वहा राजनैतिक क्षेत्र में भी भारतवासियों को श्रष्टि दयानन्द के बतलाये मार्ग पर ही चलना पडेगा।”

श्रष्टि दयानन्द का बतलाया मार्ग वही है, जिसे महात्मा गांधी ने अपने निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है—

मेरे नजदीक धर्म बिहीन राजनीति कोई चीज नहीं है। धर्म के मानी बहमों और द्वेष करने वाला और सङ्गे वाला धर्म नहीं बल्कि विश्व-व्यापी सहिष्णुता का धर्म। मैं धर्म से भिन्न राजनीति की कल्पना भी नहीं कर सकता। धर्म तो हमारे हर एक कार्य में व्यापक होता चाहिए। धर्म का अर्थ कट्टर पन्थ नहीं बल्कि विश्व की सुख-शान्ति सम्पन्न राज-नैतिक व्यवस्था।





आर्यसमाज की वर्तमान दशा का आलोचनात्मक अध्ययन—

अनागत-चिन्तन

[ले०—श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०]

आर्य समाज के विषय को उन्नतरीति बनाने के लिए मुझे इस वर्तमान काल में तीन बातें चिन्तनीय प्रतीत होती हैं। (१) मान्यताओं का परीक्षण (२) पर नीति (कारेन पालिसी) में परिवर्तन (३) गृह नीति (होम पालिसी) का परिपालन। प्रत्येक के विषय में संक्षेप से विचार करना है। मान्यताओं का परीक्षण—

मेरी धारणा ऐसी है कि हमारे पूर्वजों ने ऋषि दयानन्द के शरीरान्तक पश्चात् आत्म त्याग, उत्साह और तत्परता से जब कार्य आरम्भ किया तो मान्यता का निश्चित करने के लिये उनके पास पुष्कल सामग्री नहीं, सत्यार्थप्रकाश, सस्फूर्ण विधि तथा अन्य ग्रन्थ वर्तमान रूप में विद्यमान न थे और अधिक प्राचीन न थे। ऋषिवर के मौलिक व्याख्यानो के जा सस्कार उस समय के नव वयस्क कार्यकर्त्ताओं के मस्तिष्क में बने रहे उनकी विद्युत् शक्ति उनको आगे बढ़ाती रही। उस समय जा मान्यताये बन गईं वह अगली पीढ़ी के लिये घटापथ या राज मार्ग बन गईं। उनमें कुछ पुरानी परम्पराओं के अवशिष्ट भाग थे जो मूलतः त्यागने से रह गये थे। कुछ उस युग की परिस्थितियाँ और आवश्यकताओं के कारण मनोवैज्ञानिक कारणों से स्वतः बन गईं थीं। कुछ स्वामी जी महाराज के खलदनात्मक व्याख्यानो से जे ली गईं थीं। जब ऋषि के ग्रन्थ उपलब्ध होने लगे तो हमने उनका अध्ययन भी उन्हीं मान्यताओं के आधार पर किया और कालान्तर में वे मान्यताये सीमट की सड़क के समान सुदृढ़ हो गईं। जब विपक्षियों से हमका शास्त्रार्थ करने पडे तो इन मान्यताओं का कूट पीट पर अधिक भ्रजवृत्त बनाने की आवश्यकता पड़ी। हमने ऋषि के ग्रन्थों के शब्दों का उपरी दृष्टि से पढ़ा। उन शब्दों में प्रातः प्रातः जो आत्मा था वह हमारी दृष्टि से आभक्त दान



श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०

गया। इसलिये आजकल यदि कोई नया प्रश्न उपस्थित होता है तो वह धातु और प्रत्यय तक ही सीमित रह जाता है। यही कारण है कि दिन प्रतिदिन हमारी धरणाओं में पौराणिकता का पुट लगता चला जा रहा है। और प्राचीन भारतीय संस्कृति की रक्षा के नाम पर हम उन मौलिक सिद्धांतों का भूलते चले जा रहे हैं जिनके आधार पर ही वैदिक धर्म विश्व व्यापी हो सकता था। और जिन के परित्याग पर वह आशाये विलीन सी होती चली जा रही है, यहाँ मैं कुछ की आर सनेत करता हूँ—

(१) तीसरे समुल्लास में श्री स्वामी महाराज ने सत्यासत्य के निर्णय की कुछ कसौटियाँ दी हैं। जिनमें प्रमाण सम्मिलित हैं। यहाँ प्रश्न यह है कि शब्द प्रमाण का उन में क्या स्थान है? क्या शब्द प्रमाण या आप्त वाक्यों की मान्यताओं में प्रत्यक्षादि का भी कुछ मान है या नहीं? जहाँ कहीं ऐसा सिद्धांत है कि श्रुति के लिए कोई अतिमार्ग नहीं है वहाँ क्या स्वामीजी महाराज को यह शब्दशः मान्य





है अथवा आप्रवाक्यों के माननीय या अमाननीय होने के लिए भी कुछ उदाहरणों की गुंजायश है। उस विषय में हम लोग शक़र या अन्य विद्वानों के किन्ते अनुगामी हैं और ऋषि दयानन्द के किन्ते। साधारण लोग इसकी उपेक्षा कर सकते हैं परन्तु जो यह चाहते हैं कि आर्यसमाज के सिद्धान्तों के ज्ञान में पौराणिक भावमंकार फिर न आ वटें जिसके कारण एक वेद मत के अनेक मत हो गये उनका सतर्क होने की आवश्यकता है।

(२) हमारी पद्धति में याज्ञिक युग की भावनायें बड़े वेग से अम रही हैं। उन सूक्ष्म विचारधाराओं के परीक्षण की आवश्यकता है जो साधारण जनता को प्रलोभन में डाल रहे हैं और हमारा पुरोहित वर्ग उन पौराणिक रूढ़ियों को प्रारसाहन दे रहा है जिनके उन्मूलन के लिए 'यज्ञ' को सीमित करने की आवश्यकता है।

(३) वेद के विषय में अभी हम इसी उलभन में पड़े हैं कि वेदभाष्य की शैलियों में कौन सी शैली यथार्थ है। हमारी महासभाओं में जब वेद-सम्मेलन होते हैं तो वेद का कोई ऐसा रूप हमारे सामने नहीं आता जो विश्व के लोगों का म्राह्य हो सके। हिन्दी और संस्कृत में तो हम मूल शब्दों या उनके पर्यायों को उ्यों का न्यों रखकर अनिश्चितता के दोष को छिपा सकते हैं। परन्तु यदि किसी विदेशी भाषा में अनुवाद करना हो तो भाषा के व्यक्त करने में कठिनाई होती है क्योंकि स्वयं लेखकों के मन में वह भाव व्यक्त नहीं हैं।

(४) वैदिक समाजवाद क्या है यह समस्या अभी तक निश्चित नहीं हो सकी। वर्षों और आश्रम को क्या रूप दिया जाय कि वह विश्व व्यापी हो सके यह टेढ़ा प्रश्न है।

परनीति-

अब थोड़ा सा परनीति (फारेन पालिसी) पर विचार कीजिये, आर्य समाज से इतर संस्थाओं का आर्य समाज से क्या सम्बन्ध होना चाहिये जिससे आर्य समाज के विश्व धर्म होने में सहायता मिले। इस विषय में मुझे हमारी वर्तमान नीति आमूल चुल्ल दूषित प्रतीत होती है। आर्यसमाज कामच, आर्य समाज का प्रेस, आर्यसमाजके आन्दोलन, आर्य

पमाज के नारे, आर्य नेताओं की मनोवृत्तियाँ और 'आर्य जनता की प्रमतिषा बड़े उच्च स्वर से पुकार कर कह रही हैं कि हमारी पर नीति (फारेन पालिसी) पही है जो सैकड़ों वर्षों से सामान्य हिन्दुओं की थी और जिसके कारण न केवल दूसरे देशों में अर्वादि क मतों ने जन्म लिया अपितु उन्होंने अवसर पाकर वैदिक संस्कृति को प्रणष्ट भी कर दिया। इस विषय में साठ साल पहले हम सबसे आगे थे। और यह आशा पक्की थी कि हम ससार में वैदिक धर्म फैला सकेंगे, परन्तु अब तो कई सरथायें हमसे अधिक उदार हैं और इसलिये उनका अधिक मान है, हम प्रतिक्रियावादियों के पजे में हैं। हम वर्तमान साम्प्रदायिक उलभनों में इतने उलभ गये हैं कि विदेशी ईसाइयों को भारत से कैसे निकाला जाय, प्रतिक्रियावादी पाकिस्तानियों से हिन्दुओं को कैसे बचाया जाय, इसका ही हमें अधिक चिन्ता है परन्तु यह चिन्ता किंचित भी नहीं है कि मुसलमानों के विचारों में परिवर्तन करने के लिये क्या उपाय सोचे जाय और विदेशों में आर्य समाज की आवाज कैसे पहुँचाई जाय। जो चिन्ता हिन्दुओं को दो सहस्र वर्षों से रही यह आज भी है। इसलिये 'शुद्धि' आन्दोलन ता धमी का मर गया। इच्छामात्र बनी है, केवल इच्छाओं से तो काम नहीं चलता। क्या यह संभव है कि देहली के कुछ मुसलमान स्वयं सार्वदेशिक समा के कार्यालय में आकर यह माग करे कि आप हमें शुद्ध कर लीजिये। हम आर्य होना चाहते हैं ? जब तक आर्य समाजी मुसलमान को और मुसलमान आर्य समाजी को अपना कट्टर शत्रु समझता है तब तक क्या यह संभव है कि निकट भविष्य या दूरस्थ भविष्य में कभी जादू से ऐसा संभव आ सकता है कि सहयोग-विरोधियों प्रवृत्तियाँ कम हो जाँय ? इसी प्रकार जब तक विदेशों में यह धारणा पक्की होती रहेगी कि भारत में आर्य समाज एक ऐसी संस्था है जो ईसाइयों का फूटो आल्ल से भी देखना नहीं चाहती उस समय तक आर्य समाज के मिशन को विदेश में सफल हाने की क्या आशायें रखी जा सकती हैं ? और क्या वर्तमान अन्तर्जातीय वातावरण में (शेष पृष्ठ १५ पर)





आर्यसमाज और उसका भविष्य

[ले०—श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री एम० पी०, प्रधान आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश]

संसार के अधिकांश महान् पुरुषों तथा नेताओं ने अपना उत्तराधिकार अपने किसी मनोनीत शिष्य का सौंपकर ही इस संसार से प्रयाण किया, किन्तु आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने अपना उत्तराधिकार किसी एक व्यक्ति का न सौंपकर एक सत्ता आर्यसमाज को दिया, यह एक ऐतिहासिक घटना है। इससे यह प्रकट होता है कि ऋषि दयानन्द का मन्तव्य इतना विशाल था कि वह अपने अल्पकालिक सामाजिक जीवन में किसी एक व्यक्ति में वह योग्यता परिलक्षित न कर पाये, अथवा उन्होंने विद्वान्त इसे उचित न समझा। कुछ भी हो आर्यसमाज ही ऋषि दयानन्द का वास्तविक उत्तराधिकारी है। उसी की कार्य प्रणाली पर ऋषि दयानन्द के मन्तव्य की सफलता या असफलता निर्भर है।



आर्यसमाज के नियमों के छूटे नियम में ऋषि ने आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना रक्खा है। कदाचित् इसी कारण आर्यजन एक देशीय राजव्यवस्था से विमुख हो अन्तर्देशीय बनना चाहते हैं, किन्तु क्या यह आवश्यक है कि

श्री पी० प्रकाशवीर शास्त्री सप्त सप्त

राष्ट्रिय अथवा अन्तर्राष्ट्रिय बनने के लिए मनुष्य पारिवारिक न रहे। परिवार, ग्राम, राष्ट्र तथा संसार की सदस्यता क्या एक ही स्थान और काल में सम्भव नहीं है? दूसरी विचारणीय बात यह है कि मनुष्य की सामर्थ्य स्थान और काल से प्रतिबन्धित है, उसके प्रयत्न अकस्मात् सार्वदेशिक नहीं हो सकते? क्या आर्यसमाज का धर्म प्रचार कार्य अनायास ही सार्वदेशिक रूप धारण कर सका था? अपने मन्तव्य में वह सार्वदेशिक और सार्वकालिक अवश्य था किन्तु उसके मौलिक रूप का विकास क्रमशः ही हुआ है। इसी प्रकार एकदेशीय राज व्यवस्था को ठीक कर अन्तर्देशीय जगत् में विस्तार क्रमशः ही किया जा सकता है। यदि महर्षि दयानन्द का राजव्यवस्था में आर्यसमाज का प्रवेश इष्ट न होता तो वह सत्यार्थ प्रकाश में राजधर्म विषयक छूटा समुल्लास न लिखते और न अष्टम् समुल्लास में दुःख के साथ अंकित करते—“अथ अभाग्योदय से आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या कहना, किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अज्ञान, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है—”

प्रक्षिप्त राजनीति में आर्यसमाज का प्रवेश करना तो वास्तव में अचिन्त्य है क्योंकि वह उचित नहीं है, किन्तु क्रमशः वैद्वान्तिक राजनीति को स्पष्ट कर अपनी ही क्रियात्मक राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश आर्यसमाज के लिए अपरिहार्य है, नहीं तो ऋषि के उपर्युक्त शब्द ‘आर्यों के आलस्य, प्रमाद’ आज भी यथास्थित ही जायेगे। अतः आर्य विद्वानों का कर्तव्य है कि वह वैदिक साहित्य का मन्थन कर राजधर्म की समय की आवश्यकता के अनुरूप व्यवस्था दें, और राज्य वर्ग का देश में वैदिक राष्ट्र के आधिभार के लिए प्रेरित करें।





महर्षि दयानन्द का जीवन दर्शन—वेद

(ले०—श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०, मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा, उ० प्रदेश)

आधुनिक भारत के प्रणेता और निर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रातः स्मरणीय नाम ने पिछले दिनों भारतीय गणतन्त्र की लाक सभा को आन्दाखित कर समग्र राष्ट्र का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। ससद् ने निश्चय किया कि राष्ट्र निर्माताओं की पवित्र परम्परा में उनके चित्र की भी स्थापना और प्रतिष्ठा होगी।

ऋषि दयानन्द को लोग विभिन्न रूपों में देखते हैं यथा दार्शनिक, योगी, विद्वान् सुधारक, क्रान्तिकारी, मक्त, त्यागी, यक्ता, राजनीतिज्ञ गोभक्त, परापकारी, ब्रह्मचारी, तपस्वी, वेदोद्धारक आदि।

“जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूर्ति देखी तिन तैसी”

ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन में राष्ट्र निर्माण के अनेकों कार्य किये। स्वराष्ट्र, स्वसंस्कृति, स्वभाषा, स्वधर्म, स्वराज्य का दर्शन ऋषि दयानन्द की कृतियों में इतना अधिक है कि अनेकों से आने पर महात्मा गांधी ने जब स्वतन्त्रता आन्दोलन के लिए भारत का दौरा किया तो वह अनायास कह उठ कि मैंने जहाँ जहाँ आर्यसमाज देखा वहाँ अपना क्षेत्र पहले से तयार पाया।

मानव संस्कृति क्या है किसी का इसका ज्ञान नहीं है, सबका दिग्भ्रम हा रहा है। निकट अतीत में भारत की आध्यात्मिक परम्परा के अनहद नाद ने विश्व का ध्यान आकृष्ट किया था। आध्यात्मिक क्षेत्र की “अहिंसा” चात्रांचित परिधान धारण कर गांधी जी के साथ राजनीति में अवतीर्ण हुई और चकित विश्व ने प्रथमवार अन्धकार में डूबते हुए भौतिकवाद के लिए आशा की प्रखर रश्मि उद्भूत होते देखी। किन्तु ऋषि दयानन्द का उद्घोष “कुरुवन्तो विश्व मार्गम्” की बाणी में मोलता रहा है। महाभारत काल के बाद प्रथमवार प्रसन्न राष्ट्रीय मानस में चेतना उपपन्न हुई। “अहिंसा” भारतीय संस्कृति की ही अपूर्व देन है जिसका मूल स्रोत ‘आर्य संस्कृति’ हा है जिसका प-देश सुनने के लिए आज ससार



श्री प० प्रेमचन्द्र जी शर्मा

उत्कठित और तृपित है तथा जिसके बिना वह महा विनाश की बडिया गिन रहा है। ऋषियों ने जिस संस्कृतिक के दर्शन किये वहाँ विश्व धरणीय संस्कृत पूर्वकाल में सर्वश्रेष्ठ थी, और आज भी है। ऋषियों ने जलम धर्म का साक्षात्कार किया वह दश और काल के सौंचे में सीमित नहीं है वह विश्व में आत प्रात ऐमे नियम है जा सृष्टि क और मानव के जाउन के आन्न भूत हैं। अग्नि, वायु, आदित्य, अमरा, वशिष्ठ विश्वा मित्र, गीतम, कपिल, कणाद आदि ऋषियों की परम्परा के द्वारा वेद विद्या का आरम्भ और विस्तार हुआ।

उसी महती परंपरा में ऋषि दयानन्द ये, उन्हाने वेद के लिए जा कुङ्क किया उस ऋष्य से ससार अन्धकार नहीं हो सकता। सच्ची राष्ट्रीयता की अननी मानव संस्कृति का दर्शन इस युग में प्रथम बार महर्षि दयानन्द ने ही कराया। वेद विद्या की जो मान्यता भारतीय मानस में पुन प्रतिष्ठित हुई उसका अखिन्दाश श्रेय महर्षि दयानन्द का ही है। उनका सबसे महत्वपूर्ण और स्थाई दर्शन वेदों के विषय में ही था, जो मानव के मानस लाक का सूर्य है। “वेद सब त्रिधास्यों का पुस्तक है” यह वाक्य ऋषि दयानन्द ने ही आधुनिक

(शेष पृष्ठ १४ पर)





महर्षि के वेदभाष्य को समझने के लिए उनके दृष्टिकोण को समझें

[ले०—आचार्य श्री वैद्यनाथ जी शास्त्री]

जब आद्य वाहर के विद्वान् महर्षि के वेदमध्य की प्रशंसा कर रहे हैं उसको वेदार्थ का एक प्रशस्त मार्ग कतलब रहे हैं वहाँ हमारे कार्य भाँड्यों म ही कुछ लोग सत्य पर अपनी विपरीत धारणा बन्द कर बुद्धिवां प्रदर्शित करते हैं। मेरा तो यह दृष्टिकोण है कि महर्षि ने जो भी वस्तु कही है वह वास्तविक है। उसमें कोई 'बुँट' नहीं। यह हमारी बुद्धि का दोष है कि हम उसे अच्छी तरह नहीं समझ पाते हैं। रघुवरा जैसी पुस्तक को पढ़ने के लिए यत्न की आवश्यकता है परन्तु दयानन्द के मध्य का लोग बिना यत्न के ही समझना चाहते हैं। महर्षि के समस्त ग्रन्थों को आद्यापान्त पढ़ना नहीं और वेदभाष्य का उससे पूर्व ही इस्तमूलक करना चाहते हैं। वेदार्थ म महर्षि का अपना एक दृष्टिकोण है और यह दृष्टिकोण ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त ऋषि द्वारा म्बिकृत एवं प्रदर्शित दृष्टिकोण है—नया नहीं। जय तक इस दृष्टिकोण नहीं समझ लिया जाता तब तक उनके वेदभाष्य को समझने में भी काठिन्य बना रहगा। यही कारण है कि इस दृष्टिकोण को समझे बिना जब कोई व्यक्ति महर्षि के भाष्य को पढ़ता है ता उसे स्थल-स्थल पर शक्याँ और कमियाँ दिखलाई पडती हैं। कई संस्कृत शब्द वह कह बैठते हैं एक हा 'गो' पद के किरण, पृथिवी और इन्द्रिय आदि अर्थ क्यों लगा दिये गये। कई स्थलों पर उन्हें अति प्रसिद्ध पदों का उलटा अर्थ जो अप्रसिद्ध है दिखलायी पडने लगता है। 'गोमेव' पद को ही लीजिये। महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादशः सुबलास में इसका अर्थ ब्रह्मण्य ग्रंथों के आधार पर ब्रह्म, इन्द्रियार्थ, किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रक्षणा लिखा है। लोगों को इस पर आश्चर्य होता है। अस्तु जिनका ही वैदिक साहित्य का गूढ़ अध्ययन किया जावे महर्षि की बातें ठीक ही सिद्ध हाती हैं। गार्ग्ययण के नाम से मद्रास के ब्रह्मवादिन् प्रेस

से सन् १९१५ में प्रख्यात नाम की एक पुस्तक प्रकाशित हुई है। उसके तीसरे प्रकरण के छठे तर्क में गोमेव की व्याख्या इस प्रकार मिलती है। प्रथकार कहता है—'गोमेवस्तावच्छब्दमेव इत्यवगम्यते। गावाण्यी मेवया सेवोजमिति तदर्थान्। शब्द शास्त्रज्ञानमात्रस्य सर्वेभ्यः प्रदानमेव गोमेवो यज्ञः'। अर्थात् गोमेव शब्दमेव है—येसा जानना चाहिए। 'गो' अर्थात् वाणी का बिसने मेधा से खयाजन हो वह ही इसका अर्थ है। शब्द शास्त्र ज्ञान मात्र का सबको देना गोमेव यज्ञ है, ग र्ग्यायण की यह अर्थ शैली प्रकट करती है कि गोमेव सबको अर्थ निराधार नहीं है।

महर्षि के भाष्य म आदित्य और रुद्र आदि पदों के भिन्न और अप्रसिद्धार्थ का देखकर लोग कह देते हैं कि यह क्या लिख डाला। परन्तु यह ज्ञात हो कि वेदार्थ की उच्चम प्रक्रिया यही रही है। ब्राह्मण ग्रंथों में आदित्य और रुद्र के शतश अर्थ विये गये हैं। रुद्र जहाँ अग्नि, प्राण, आत्मा, परमात्मा आदि अनेकार्थों को देता है वहाँ यह आदित्य के अर्थ को देने वाला है। आदित्य सूर्य की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं और भिन्न भिन्न गुणों एवं कार्यों के कारण उसके नाम भी भिन्न भिन्न हैं। उदाहरणार्थ जैमिनीय उपनिषद् के निम्न वाक्यों को लिया जा सकता है। (हे आदित्य ! त्व) ऋषि सविता भवस्यरेष्यन् विष्णु रुचन् पुरुषः, उदितो बृहस्पतिरभिप्रयन् मषचेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह उभो देवो लहितायन् अस्तमिते यमो भवसि। अश्नन्तु सोमो राजा, निशायाम्पित्वाज स्वप्ने मनुष्यान् प्रविशसि पयसा पशन् विरात्रो भवो भवसि अपरात्रेऽङ्गिरा अग्निहोत्रवेलाया भृगुः ॥ जै० उप० ४।१।१-३। अर्थात् आदित्य उवा काल में सावताह, उदय के लिये जाता हुआ वह विष्णु कहलाता है, उदय होता हुआ वह पुरुष है। उदित हो जाने पर वही बृहस्पति और ऋता हुआ मधवा इन्द्र वैकुण्ठ है। मध्याह्न में उसका नाम भग और अपराह में





है। लाल होता हुआ वह देव है और अस्तमन वेला में उसे यम कहा जाता है। तदनन्तर गाधूलि में वह सोम राजा है और रात्रि में पितृराज है। विरात्र में वह भव कहलाता है और अपरात्र में अगिरा कहा जाता है। वही अग्निहोत्रवेला में भृगु कहा जाता है। इसी प्रकार सूर्य एवं दूमरे अर्धों का देने वाले पद आग्नि की विभिन्न अवस्थाओं के भी द्योतक पाये जाते हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में इनके उदाहरण मिलते हैं। इस स्थिति में स्वभावतः महर्षि का किया अर्थ सर्वथा ठीक ही है। जब तक इसका परिज्ञान नहीं होता है तब तक महर्षि द्वारा किये गये अर्थों को देखने पर मन में सदेह उठ खड़ा होता है।

वेदार्थ सबकी महर्षि के दृष्टिकोण को समझने में निम्न वस्तुओं के परिज्ञान एवं प्राप्ति की आवश्यकता है—

१—वेद ईश्वरीय ज्ञान है और सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है।

२—वेद के सभी शब्द यौगिक हैं और इनमें किसी व्यक्त विशेष का इतिहास नहीं है।

३—देवता मंत्रों के गतिपाठ विषय अथवा विनियुक्त विषय हैं और ये तीन प्रक्रियाओं में अर्थ का लप होते हैं और 'देवता' इसलिए कहलाते हैं कि ये देवता मंत्रों के अर्थ ही नहीं, अर्थपति हैं।

४—वेदार्थ अध्यात्म, अधिदैव, अधिव्यज्ञ प्रकरणों में होता है। अतः यही प्रकरण हैं। श्री पञ्चासतवलेकर जी के बताये प्रकरण नहीं।

५—लोक और शास्त्र में व्युत्पत्तता।

६—“उद्” बल की सम्पत्तता।

साधारणतः इन उपर्युक्त वस्तुओं से महर्षि का दृष्टिकोण समझ में आ जाता है। यौगिकवाद आदि के विशेष परिज्ञान और समस्त वैदिक शब्दों में कोई भी इतिहास व्यक्त विशेष का नहीं है—इसका विशेष वर्णन मेरी वृहत्सुक्तो-वैदिक इतिहास विमर्श और वैदिक ज्योति में देखे।

वेद मन्त्रों का अर्थ करते समय कुञ्ज और आवश्यक बातों का ध्यान रखा जाता है। यास्काचार्य ने इनका अपने ग्रन्थों में पल्लवन किया है और महर्षि के भाष्य में इन नियमों का प्रयोग पाया जाता है।



वेद के पदों के निर्वाचन भिन्नार्थकता के द्योतक है। यास्कीय निरुक्त और ब्राह्मण ग्रन्थों से इसका परिज्ञान होता है। कई पद ऐसे हैं जिनके स्वर सस्कार आदि अभावतः अवगत हो जाते हैं और निर्वाचन सरलता से हो जाता है। परन्तु अनवगत स्वर सस्कार वाले में अनेकशः पद हैं जिनका निर्वाचन बहुत विचार के साथ करना पड़ता है और वह रघुवश और सारस्वत एवं सिद्धान्त कौमुदी के अध्ययन से नहीं हो सकेगा।

१—“व्” वेद मन्त्रों में अनेक स्थलों पर आया है। यह “व्” के रूप में भी प्रयुक्त है और “व्बम्” के रूप में भी शब्द का प्रयोग पाया जाता है। यह पद “नियत” भी है और सर्वनाम भी है। ऐसी अवस्था में स्वर का बहुत-सा विचार खड़ा हो जाता है। यह नाम है अथवा नियत है—इसको जानने का प्रयत्न करना पड़ता है। ऐसे पद को पद जाति न ज्ञात होने वाला “पद” कहा जाता है।

२—कई पद ऐसे हैं जिनका अभिधेय अवगत नहीं होता है। उदाहरणार्थ वजुर्वेद २।१।४२ वें मंत्र का “शिताम्” पद है। इसका निर्वाचन यास्क ने निरुक्त ४।३ पर किया है और शाकपूणि गालव और तृतीय आचार्यों के मत भी दिये हैं।

३—कभी ऐसा होता है कि स्वर अनवगत होता है। ‘वने न वायो न्वाधिप चाकन्’ उदाहरण के रूप में ग्रहण किये जा सकते हैं। ये पद ऋग्वेद १०।२६।१ मंत्र के हैं। यहाँ पर शाकल्य पदकार ने ‘वायो’ का पद ‘वा’ ‘य’—ऐसा पढ़ा है। दूसरा ‘वि’ का पुत्र मान का ‘वाय’ एक पद बन जाता है। इसका निर्णय करने में स्वर की विवेचना करनी पड़ती है। यास्क ने निरुक्त ६।२८ पर इस पर विचार किया है।

४—कई पद ऐसे हैं जिनका सस्कार ज्ञात नहीं होता है। उदाहरणार्थ ऋग्वेद १।१६।३।१० मंत्रस्य ‘ईमान्तास’ पद का लिया जा सकता है। मंत्र में यह अश्व का विशेषण है। परन्तु अश्व से सूर्य के वर्णन में यह प्रयुक्त है। यहाँ पर यह सूर्य का वर्णन करता है अथवा अश्व का वर्णन करता है—इसका सस्कार साधारणतया अवगत नहीं हो पाता। यहाँ पर प्रकृति प्रस्य का ज्ञान दुरुह है। यत्न करने पर ज्ञात होता है।



५—कहीं-कहीं पदों में गुण का परिज्ञान नहीं होता है। उदाहरण के लिए ऋग्वेद १।१६६।६ के क्रिबर्द्धी पद को लिया जा सकता है। यास्क ने इसकी व्याख्या करते हुए साथ में ऋग्वेद ४।३०।२६ मन्त्रस्थ करुलती पद का भी लिया है। अतः इस पद से भग का मह्य किया जावे अथवा पूषा का। भग का पूर्व से प्रकरण है। ये दो पद स्वडे होते हैं। पूषा है भी अदन्तक=विना दात का है। यहाँ पर किसका गौण और प्रधान माना जावे और अर्थ निकाला जावे, इसका विशद विचार करना पड़ता है। तथा निरुक्त शास्त्र की शरण लेनी पड़ती है।

६—कभी कभी विभाग का परिज्ञान नहीं हो पाता। उदाहरणतः ऋग्वेद ५।३६।१ के 'महेना' पद का लिया जा सकता है। यहाँ पर मत्र मत्र में कहा गया है कि हे इन्द्र मुझे महनीय धन दे। 'महेना' का एक पद मानने पर महनीय=प्रशस्त धन अर्थ होगा। और अनेक पद मान+इह+ना मानने पर 'मेरे पास जो नहीं है' वह धन अर्थ होगा। परन्तु इस विभाग का आपाततः परिज्ञान यहाँ पर नहीं हो पाता है।

७—कभी कभी दो पदों के मध्य में होने वाले विस्रेष का परिज्ञान नहीं हो पाता है। ऋग्वेद २।४।२० मन्त्र में 'द्यावा न. पृथिवी' पद पड़े हैं। यहाँ पर 'द्यावा पृथिवी' ऐसा एक पद मान कर अर्थ किया जावेगा। परन्तु मध्य में 'न' पद के आने से यह ज्ञान सरलता से नहीं हो पाता। इसी प्रकार शुन शेष के अर्थ को देने वाला 'शुनश्चिच्छेष' पद है।

८—कभी कभी अभ्याहार का परिज्ञान नहीं हो पाता। इसका उदाहरण ऋग्वेद १।१७।२ मन्त्र का 'दन' पद है। यह 'दानमनस' पद से बना है अर्थात् 'दानमनस्' को 'दनस्' आदेश होकर यह पद बना है अतः अर्थ करते समय इसका अर्थ 'दानमनस्' करना चाहिए। परन्तु शब्द को देखकर यह आपाततः ज्ञात नहीं होता है।

९—कभी क्रम का परिज्ञान नहीं हो पाता। ऋग्वेद ४।३३।५ मन्त्र इसका उदाहरण है। यहाँ पर यह कठिनाई से ज्ञात हो पाता है कि यहाँ पर दो का अथवा बहुत का अर्थान है।

१०—कभी कभी व्यवधान का ज्ञान नहीं हो पाता। ऋग्वेद ७।३६।२ में 'वायुः पूषा स्वस्तये नियु-

॥ आओ दीपमालिके आओ ॥

जगतीतल को दिव्य बनाने।

अपने हाथों इसे सजाने ॥

सौख्य सम्पदा घर घर लाने।

दिव्य ज्योति ले आओ ॥

॥ आओ दीपमालिके आओ ॥

अन्तर्दीप जलाती आओ।

नव प्रकाश फैलाती आओ ॥

॥ आओ दीपमालिके आओ ॥

जय के गीत सुनाती आओ,

धर्म ध्वजा फहराती आओ।

भारत माता के भाङ्गण में।

दीन दीन मानव अप्रण मे,

आज अन्त आरती करने,

अगणित दीप सजाओ ॥

॥ आओ दीपमालिके आओ ॥

—मुकुटविहारी लाल वैद्य

त्वान्" यहाँ पर वायु और पूषा के मध्य "चकार" का व्यवधान है पर यह साधारणतया ज्ञात नहीं होता है।

इसके अतिरिक्त निम्न बातें ध्यान के योग्य हैं —

१—एक पद को दो पद कर दिया है। ऋग्वेद १।०२।२ में "पुरुषाद." पद है—यहाँ पर "पुरुषान् अदनाय" करके व्याख्या की जाती है।

२—दो पदों को एक कर दिया जाता है। ऋग्वेद ३।३।२ में सन्तु निर्धानम् पद है। यहाँ पर "गमनि धानीम्" करके अर्थ किया जाता है। यास्क ने ऐसा ही किया है।

३—आख्यात को नाम बना दिया जाता है। अर्थात् क्रिया को सज्ञा बना दिया जाता है। ऋग्वेद ८।६।३ में "भक्षत" पद है। इसको "विषद्यम.ण" करना पड़ता है।

इस प्रकार ये शास्त्र के नियम हैं जिनको जानकर ही ऋषि का दृष्टिकोण वेदार्थ के विषय में जाना जा सकता है। जब तक इनका परिज्ञान न हो तब तक पदे पदे ऋषिभाष्य के समझने में कठिनाई बनी रहेगी।





प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो

[ले०—श्री आनन्द स्वामी जी सरस्वती]

दीप साहिक का दिवस भारत के लिए एक ऐतिहासिक क्षिपव है। जैनियों, बौद्धों, हिन्दुओं और आर्यसमाजियों के लिए भी। आज से ५८ वर्ष पूर्व आजमेर में इसी दिन एक बेसी घटना घटी जिसे देख कर अस्तिक भी आस्तिक बन गये। जगत् गुरु महर्षि स्वामी वसुदेव ने युक्तियों द्वारा पहित गुरुद्वय विद्यार्थी को आस्तिक बनाने का यत्न किया पर वह न बन सका। विप ने स्वामी जी के शरीर के रंग-रंग में भयकर वेदना उपन्न कर रखी थी परन्तु तपस्या और सद्गुणरतिलता की मूर्ति दयानन्द इसे प्रकट नहीं करते थे, उन्हें पता लगा कि अब अन्तिम घड़ी आ पहुँची है, उठ कर बैठ गये। मन्त्र उच्चारण करने लगे उपस्थित लोगों से पूछा कौन सा दिन और कौन तिथि है ? और सप्त पीछे खड़े हो जाओ। और खिडकियाँ खोल दो। ऊँची ध्वनि से गायत्री मन्त्र का जा किया। नत्र खाले श्पत्र उपर देख कर कहने लगे "बाह प्रभु। केली लीला दिखाई। तेरी इच्छा पूर्ण हो" तीन बार कह कर श्वास हमेशा के लिये छाड़ दिये। नास्तिक गुरुदत्त खड़ा यह दृश्य देख रहा था। जिसे ऋषि की युक्तियाँ आस्तिक न बना सकी थीं यह यह दृश्य देख कर वह आस्तिक बन गया।

'पीछे खड़े हो जाओ' के शब्द मतलबते हैं कि मृत्यु के समव ऋषि ने सद्देश दिया कि मेरे दिखलाये वैदिक मार्ग पर चलाते जाना और वैदिक धम का द्वार सबके लिए खोल देना। आज के दिन चिन्तन करो कि क्या महर्षि के इस अग्रिम सन्देश को हमने पूरा करने का कोई यत्न किया ? यदि कोई बुटि दिखलाई देवी है तो आज उसे पूर्ण करने का व्रत धारण करो।

महर्षि दयानन्द का जीवन दर्शन-वेद

(प्रष्ठ १० का शेष)

काल मे की। मध्यकालीन आचार्य प्राय गीता, उपनिषद् और ब्राह्मण ग्रन्थो पर रुक जाते थे, किन्तु प्रस्थानत्रयी के उस पार जो वेदों का ज्ञान समुद्र है वहा तक पहुँचने का आग्रह ऋषि दयानन्द ने ही किया। वेद और वैदिक सस्कृति की पुनः प्रतिष्ठा के लिए सच्चे सेनानी की मांति जीषन्न भर सचर्च किया।

ऋषि दयानन्द के समक्ष भारत के और भारतीयों सभी मत और सम्प्रदाय थे, त्रिनक्ष ज्ञान उन्होंने प्राप्त किया था। वह चाहते तो किसी भी सम्प्रदाय के महन्त बन कर जीवन सुख चैन से व्यतीत कर सकते थे किन्तु उन्होंने कठों और आपत्तियों का सहना उचित जाना। अत मे गरलपान कर अपना बलिदान भी कर दिया। यह क्यों ? महात्मा गान्धी ने गाली खाकर क्यों प्राण दिये, तथा अनेको सन क्यों सूली पर चढ़ गये ? क्यों कि मानवहित उन्हे जीवन से अधिक प्रिय था। महर्षि दयानन्द न भी जहर का प्याला इसलिए पिया कि उन्हे मनुष्य की आत्मिक स्वतन्त्रता या मनुष्यता अधिक प्रिय थी। उन्हे विश्वास था कि वेदों का सन्देश मानव मात्र के लिये है और वही मानव सस्कृति का मूल है। उसकी ज्याति के बिना भटका हुआ मानव कदापि मार्ग पर नहीं आ सकता। भौतिक जगत के आलोक पुत्र सूर्य के समान मानस जगत का सूर्य वेद ही है, जिसके स्वत प्रमाण के बिना चारों ओर अन्वकार ही अन्वकार है। मानव की मर्यादाओं, उसके कर्तव्यों का जितना विशद और सुस्पष्ट वर्णन वेदों ने किया है उतना अन्यत्र नहीं है। वेद ससार का प्राचीनतम ग्रन्थ है। वेद विद्या सुष्टि विद्या का दूसरा नाम है। इन विद्याओं का अपरिमित विस्तार है।

अन्तरंग अधिवेशन की सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की अन्तरग सभा का साक्षात् अधिवेशन १८ नवम्बर १९३१ दिन शनिवार श्रीसर्वदानन्द साधुआश्रम (पुल काली नदी)जिला अलीगढ़ मे होना निश्चित हुआ है। अस्मक है कि सर्व सदस्य गण नियत समय पर पधार कर अनुगृहीत करेंगे।

नाटः—साधु आश्रम अलीगढ़ से अतपैली राड पर १० मील पर स्थित है। —प्रेमचन्द्र सर्मा सभा मन्त्री





काशी शास्त्रार्थ

[रचयिता—युवराज श्री रणछयसिंह एम० एल० सी०]

काशी में हलचल, मच गयी सन्ध्यासी एक,
दयानन्द आये हैं, जिनकी ललकार है।
विद्वज्जन शास्त्रार्थ करके यह सिद्ध करे,
मूर्ति पूजन वैदिक सिद्धान्तानुसार है।
ईश्वर निराकर कभी, होता साकार नहीं,
लेता न 'रगजय' अजन्मा अवतार है।
शास्त्रार्थ हुआ, पण्डित काशी के परास्त हुए,
मानना ही पडा विद्या स्वामी में अपार है ॥१॥

[पृष्ठ ८ का शेष]

यह कभी समझ हा सकेगा कि भारत सरकार विदेशा ईसाइयों के आने पर पुराने जमाने के समान कोई पाबन्दी लगा दे। और यदि किसी प्रकार ऐसी पाबन्दियों लगा भी दी गईं तो आर्य्य प्रचारकों के साथ बाहर वालों का क्या बर्ताव हागा और भारतीय ईसाइयों की प्रगति-या कैसे राकी जा सकगी। सामाजिक उत्सवों में शान्ति-प्रकरण के पठ करन में तो शान्ति स्थापित न हा सकेगी जब तक कि अशान्त वातावरण में शान्ति के बीज बाने का प्रयत्न नहीं हाता। क्या आर्य्यसमाज की वर्तमान प्रगति-या को दखते हुए कोई कह सकता है कि अमुक अशान्त वातावरण की अशान्ति का कम करने के लिए आर्य्य समाज में यह विधि निकाली? इसके विपरीत तो सभी को दृष्टिगोचर हाता है। यह हमारी परनीति (फारेन पॉलिसी) का फल है कि लाग हमसे डरते तो हैं हमारी और आकर्षित नहीं होते। यह रोग इतना बढ़ गया है कि हमारी गृह नीति (होम पॉलिसी) पर भी इसका प्रभाव है और एक नेता दूसरे नेता से तथा एक विद्वान् दूसरे विद्वान् से शर्षट रहता है और प्रत्येक वा परीच्छ रूप में साधारण जनता का उत्प्रेजित करने की धुनामुनी जारी रहती है।

गृहनीति -

वीसरी बात है गृहनीति का परिपालन। मुझे आर्य्य समाज के नियम-उपनियम या विधान आद् में कोई विशेष नुटि दिखाई नहीं पडती। आर्य्यसमाज का

विधान उत विधान से सर्वथा भिन्न है जा प्राचीन मठों के थे। वर्तमान वातावरण उनके अनुकूल है भी नहीं। सार्वजनिक वातावरण में यही सम्भव था। परन्तु इस विधान का परिपालन नहीं हा रहा। इन्में अधिकतर दाप तो हमारी पर नीति (फारेन पॉलिसी) का है। कहावत तो यह है कि 'इस घर को आग लग गई घर के चिराग से' (अम्मा प्रेरित गेह-पी-प-शिखवा गेह गत भस्मताम्) परन्तु घर के चिराग पर पस्वा करने वाले तो बाहर से घुम आते हैं। आर्य्यसमाज के देत-ओ में से कोई एक भी एना नहीं जा किसी न किसी राज नातिक दल के प्रभाव में न हो और जा आर्य्यसमाज का उम दल के पीछे घसीटने में सहायक न हा। प्रश्न यह नहीं है कि हम किस तर्ज़ से प्रेक्ष्य रहे हैं प्रश्न यह है कि हम किस विद्या में दौड़ रहे हैं और चालीस पचास वर्ष पीछे हम कइह डोगे। योग दर्शन का सूत्र है "इयं दु खमनागतम्" अर्थात् मैं अपने वाले दु ख को हटाने का यत्न करो। अतीत तो चला गया। उसके लिये रोने से क्या-सुख ? और वर्तमान तीव्र गति से अतीत बन रहा है। अनागत परोक्ष है। सबसाधारण की दृष्टि से आफल है। और हम उसकी आर भोंकने से डरते हैं कि कहीं हमारी मान्य ताओं का चकका न लगे। ता क्या आदि बन्द करके अपने का परिस्थिति की लहरोपर डूबा दें। और कइते रहे। जार भेज देगा उबर जायगे?"





(पृष्ठ २ का शेष)

उन्होंने आर्यसमाज के नियमों में आदेश दिया कि सत्य के प्रहस्य करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। यदि आज के प्रजातन्त्र में यह सत्य निष्ठा हो तो प्रजातन्त्र के नाम पर होने वाला दुरामह समाप्त हो जाय। महर्षि दयानन्द ने राज्य-व्यवस्था की दृष्टि से भी प्रजातन्त्र का विशेष महत्त्व प्रदान किया है। राजा के निर्वाचन और सभा समितियों के सघटन का आचार उन्होंने जनमत ही स्वीकार किया है। यही नहीं उन्होंने सामाजिक हित को प्राथमिकता प्रदान करते हुए आदेश दिया है कि सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालन में सध परतन्त्र रहे। इस प्रकार अधिनायकवादी मनोवृत्ति को उन्होंने अपने दृष्टिकोण में अल्पांश में भी स्वीकार नहीं किया।

७-जीवन का सांस्कृतिक आचार

महर्षि मानव जीवन लक्ष्य को भौतिकवाद से ऊपर समझने थे उन्होंने ऐहिक एव पारलौकिक दोनों के समन्वय को जीवन का आदर्श बनाया था। वह अत्युद्यम और निश्चयस दोनों की सिद्धि के लिये मानव जाति और अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहते थे।

इन तथा इन्हीं प्रकार के अन्य अनेक कारणों से हम यह मानने के लिये विवश हैं कि महर्षि दयानन्द मानवता का सर्वाङ्गीण विकास चाहने और करने वाले महापुरुष थे।

महर्षि के पवित्र स्मरण दिवस पर हमें अपने हृदयों का अन्वकार नष्ट कर अन्तस को महर्षि के महान् आदर्शवादी ज्ञानालोक से आश्रोक्त करना चाहिये। महर्षि ने अपनी कठोर साधना द्वारा मानवता को दिव्याभूत प्रदान किया उसका सार्वजनिक प्रसारण महर्षि के अनुयायियों का नैतिक दायित्व है।

अवकाश सूचना

सदैव की भाँति दीपावली की छुट्टी के कारण आर्यमित्र का अंक ४४ दि० १२ नवम्बर का बन्द रहेगा। अब अगला अंक १६ नवम्बर का निकलेगा। पाठक व एजेंट नोट कर लें।

—गाणालक्ष शास्त्री एम० ए०

सह० अधिप्राता

'ऋषि उत्सव का महत्त्व'

[पृष्ठ ४ का शेष]

अवश्य है कि सत्यायुक्ति के साथ साथ हम में धर्मिकता, कर्मण्यता, नैतिकता, सदाचारादि सद्गुणों की भी वृत्ति हो। हम जो सोचें, जो कहें और जा करें उसमें सत्य का सुन्दर समावेश रहे। हम अधिकारों अथवा पदों पर प्राण न देकर सच्चे, सुदृढ़, सदाचारी और धार्मिक कार्यकर्ता सिद्ध हो और सदा-सर्वदा सांत्साह सेवा-कार्य में लग्न रहें। आर्य ग्रन्थों का स्वाध्याय, चिन्तन और मनन करें। केवल स्वाध्याय नहीं, प्रत्युत महापुरुषों की कल्याण-कारिणी शिक्षाओं को अपने जीवन में भी ढालें। सदुपदेशों अथवा पुण्य मय आदेशों को कार्यरूप में परिणत करना ही चरित्र या नैतिकता है।

महर्षि दयानन्द महात्मा थे। वे मन, वचन, कर्म तीनों में एक थे। वे जो सोचते वही कहते और जो कहते उसी के अनुसार करते थे। हम लोग ऋषि के भक्त हैं। हमारा भी कर्तव्य है कि हम सदैव ऋषि के चरण चिन्हों पर चलने का प्रयत्न करें। यह ठीक है कि सब लोग ऋषि नहीं हो सकते, और न यह सभव ही है, परन्तु फिर भी महर्षि निर्देशित शुभ दिशा में चल कर, हम अपने को 'आर्य' या 'मानव' तो अवश्य बना सकते हैं। इस समय सबसे अधिक आवश्यकता 'आर्य' बनने अर्थात् 'मानवता' को अपनाने की है। 'मानव' या 'आर्य' बनने के लिये कर्तव्य निष्ठा, सद्गुणान, आदि सदाचार की आवश्यकता है। अपने को 'आर्य' कहने या लिखने मात्र से कोई कभी आर्य नहीं बन सकता। आर्यत्व तब ही बनेगा जब आर्च्यत्व का मन, वचन एव कर्म से अपनायेगा। इसी का नाम आचरण या चरित्र है और इसी की शिक्षा हमारे महान् आचार्य महर्षि दयानन्द ने सदा दी है। यदि हमें सच्चे अर्थ में ऋषि उद्भव मानना है तो हमें ऋषि के आदेशों और उपदेशों को सद्भावना पूर्वक क्रियात्मक रूप देना होगा अर्थात् उन्हें हृदय से पालन करना पड़ेगा। तभी हम अपने का सखा 'ऋषि-भक्त' या 'आर्य' कह सकेंगे और उनी अवस्था में हमारा 'ऋषि-उत्सव' मनाना समुचित तथा सार्थक सिद्ध होगा।





कर्त्तव्य — जय जगदीश पायदे

दयानन्द गुणगान वैदिक धरा पर,
हमीं जो न गाए तो फिर कौन गाए ।
असद्धर्म से पूर्ण जब मालु भू पर,
अविद्या निशा कालिमा छा रही थी ।
तपस्वी ब्रजानन्द गुरु धाम से तत्र,
समुज्ज्वल प्रभामय उवा आ रही थी ।
उसी ज्ञान का छत्र विश्वम्भरा पर
हमीं जो न छापे तो फिर कौन छापे,
दयानन्द गुणगान वैदिक धरा पर,
हमीं जो न गाए तो फिर कौन गाये ।
कपिल ने जहाँ साख्य सिद्धान्त देखा,
जहाँ व्यास ने दिव्य वेदान्त पाया,
जहाँ से हमें ज्ञान गीता मिली थी,
जहाँ से विश्वद न्याय का तर्क आया ।
ब्रती के बताये उसी वेद पथ पर,
हमीं जो न आवे ता फिर कौन आवे,
दयानन्द गुणगान वैदिक धरा पर,
हमीं जो न गावें तो फिर कौन गावे ।
विधर्मी हुए वेद को त्याग कर जो,
उन्हें शुद्धि का मन्त्र ऋषि ने बताया,
मुक्ता के उसे ही अनाचार में जो,
पढ़े हैं अचेतन न सद्धर्म पाया ।
उन्हीं में सुधा प्राण सचार करने,
हमीं जो न जाबें तो फिर कौन जाए
दयानन्द गुणगान वैदिक धरा पर,
हमीं जो न गाए तो फिर कौन गाए ।
वपासक बने जो यहाँ रूढ़ियों के,
जिन्होंने बढ़ाई घटा शोक की है,
अकर्मयता के निशा आवरण में,
न रेखा जहाँ दिव्य आलोक की है ।
वहीं तो निगम ज्ञान दीपक जलाने,
हमीं जो न जाबें तो फिर कौन जावे ।
दयानन्द गुणगान वैदिक धरा पर,
हमीं जो न गावे तो फिर कौन गावे ।

राष्ट्र पितामह—

महर्षि दयानन्द

[ले०—श्री अनन्तरायनम आयगर, अध्येतृ लोक सभा]

मैं दुनिया के अनेक देशों में घूमा हूँ । किसी देश में सन्तोष नहीं है । पारचात्य नागरिकता में शान्ति नहीं है । हमारा देश हरदम सन्तोषी और शान्तिवाहक रहा है । मनुष्य और पशु में क्या भेद है । धर्म ही वह तत्व है, पर सच्चा धर्म क्या है ? धर्म के लिये सेवा और त्याग चाहिए । संस्कृति का मूल आधार सेवा और त्याग है । बुद्ध ने भी वही किया । राजकुमार होकर भी ससार के कल्याण के लिए परिवार छोड़ दिया—और विशाल परिवार बनाया । सेवा के आदर्श अपनाकर ही उन्होंने मानवता को आगे बढ़ाया । दयानन्द ने भी ससार कल्याणार्थ गृह त्याग और कुटुम्ब त्याग किया था । आज देश को फिर बुद्ध और दयानन्द की आवश्यकता है ।

दयानन्द की भावना त्याग और सेवा की थी, आर्यसमाज की भी एक भावना है प्रेम और समष्टि भाव की, इस भावना का देश विदेश सर्वत्र विकास होना चाहिए । महर्षि दयानन्द ने वेदमंत्रों पर विशेष बल दिया था । आज हमें दयानन्द का वेद भाष्य सुनाना चाहिए और उसका गौरवपूर्ण स्वागत करना चाहिए । स्त्रियों को भी वेद-पाठ करना चाहिए । महर्षि ने हमारी स्त्रियों को वेद-पाठ का अधिकार न देने की भूल का सुवार किया । हमें देश के कोने-कोने में वेद घाष गुंजा देना चाहिए, हिमालय से कन्याकुमारी तक ही नहीं विश्व में सर्वत्र वैदिक नाद गंजना चाहिए ।

भारत देश के राष्ट्र पिता गांधी जी हैं तो महर्षि दयानन्द राष्ट्र पितामह हैं दयानन्द हमारी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों के और स्वाधीनता आन्दोलन के आधा प्रवर्त्तक थे । उन्हीं के चरण चिन्हों पर गांधी जी ने आगे कार्य करने का यत्न किया था ।

★





वैदिक धर्म विश्व का धर्म कब बनेगा ?

(ले०—श्री दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मठल पारढी)



यास्तव मे वैदिक धर्म सम्पूर्ण विश्व का धर्म, सब मानवो का धर्म है, पर वह इस समय किसी के आचरण मे नहीं है। महर्षि आये, उ-होंने चुने हुए जागो को आर्यसमाज की दीक्षा दी और 'कुरव-तो विश्वमार्यम्' की वेदाज्ञानुसार विश्व भर मे वैदिक धर्म प्रसार करने की प्रेरणा उन्हे दी।

"वेद सभ सत्य विद्याओ का पुस्तक है, वेद का पढना, पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है" यह नियम भी आर्यसमाज के नियमो म महर्षि ने समाविष्ट कर दिया था, जिससे कि उनकी वैयक्तिक उन्नति हा सके। इस नियम के बनाने म महर्षि का यही उद्देश्य था कि हर आर्य के घर मे चारो वेद रहे और प्रत्येक आर्य वेद पाठ प्रतिदिन किया करे। और इस तरह सम्पूर्ण वेद ज्ञान के साथ प्रत्येक आर्य अच्छी तरह परिचित हा।

परन्तु अब तक प्रत्येक आर्य के घर मे वेद प्रविष्ट नहीं हा पाये, अत प्रतिदिन वेद का पाठ करने का जा "आर्यों का परम धर्म है" उसका पालन किसी आर्य से नहीं हा पाया, और महर्षि से वैदिक ज्ञान की जो किरण मिली थी, उससे किंचिन्मात्र म प्रकाशित होकर आर्य समझने लगे कि वे सब वैदिक धर्मो बन गये और विश्व में वैदिक धर्म का प्रचार करके जगदुद्धार का कार्य वे कर सकते हैं।

आर्यों का कार्यक्रम—

समाज म जाना, वहा व्याख्यान सुनना, चन्दा दना, वार्षिकात्सव करना, आर्य सम्मेलन करना, प्रचार की धूम का बतान वाले विज्ञापना का छापना इन सब दिव्यानके कार्यों म ही आर्योंने अपने कार्यो की क्षतिशील समझ ली है। पर वस्तुत देखा जाये ता उनके घरो म भी, जो इन उत्सवो म बडे जार शार से कार्य करते हैं, वेदो की पुस्तके नहीं



श्री प० सातवलेकर जी

होगी, और यदि होगी भी, तो उस पर धूल की पतें चढ गई होगी। यद्यपि वे सब 'वेदो का पढना पढ़ाना सब आर्यों का परम धर्म है' इस नियम का मानते हैं, पर उस प्रकार का आचरण वे कभी नहीं बनाते।

परम पूज्य महर्षि ने जो परम धर्म के पालन का नियम बनाया था, वह केवल नियमावलि की शोभा के लिए नहीं था। परमधर्म वह ह'ता है कि जिसका अनिवार्य रूपेण पालन हा। इस परम धर्म का जो पालन करेगे, वे ही वैदिक धर्म का विश्व मे प्रचार कर सकेगे। जितने इस परम धर्म का पालन करनेवाले हैं, वे ही महर्षि के सच्चे अनुयायी हैं, अन्य ता केवल नामधारी हैं। नामधारी आर्यों से विश्व भर में वैदिक धर्म का प्रचार होना दु साध्य ही नहीं नितान्त असम्भव है। अत सर्वप्रथम आर्यों को सच्चे आर्य बननेका प्रयत्न करना चाहिए।



संस्कृत भाषा सीखना—

पहली बात यह है कि सब आर्यों को संस्कृत भाषा का अध्ययन करना चाहिए। संस्कृत भाषा जगत् की सभी भाषाओं की अपेक्षा आसान है। इसलिए थोड़े से परिश्रम से ही यह भाषा सीखी जा सकती है। वह आर्य है, इतना कहने मात्र से मालूम हो जाये कि वह संस्कृत भाषा जानता है। संस्कृत न जानने वाला आर्य न समझा जाए। साधारणतः बोलने पढ़ने और लिखने लायक संस्कृत छ महीने में आ सकती है। आवश्यकता केवल इस बात है कि वह प्रतिदिन एक घंटा इस भाषा को दिया करे।

संस्कृत के बिना वेद का पढ़ना, पढ़ाना हो ही नहीं सकता। अत आर्यों को संस्कृत सीखकर ही संस्कृत प्रचार का कार्य करना चाहिए। अत प्रत्येक आर्यसमाज को चाहिए कि वह संस्कृत का प्रचार सर्व-प्रथम अपने सदस्यों में करे। कोई भी आर्यसमाजी या आर्यसमाज का प्रचारक संस्कृत ज्ञान के बिना न रहे। इन सबको इतनी संस्कृत अवश्य आनी चाहिए कि समय पढ़ने पर वे संस्कृत में बोल भी सकें। इतना संस्कृत भाषा का ज्ञान तो अवश्यमेव होना चाहिए।

वेद की पुस्तकों घर घर में हो—

दूसरी बात यह है कि प्रत्येक आर्य के घर में वेद के प्रथम अवश्य हो। मूल्य की दृष्टि से मूल चार वेद आजकल २०) में प्राप्य हैं। पर इतना भी मूल्य एक साथ न दे सकने वाले आर्यों के लिए विभागशः मूल्य किस्तों पर पुस्तकों के मिलाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

प्रत्येक आर्यसमाज अपने सभासदों की सख्या के अनुसार वेद प्रथ खरीदे, उन ग्रन्थों को अपने सभासदों में बेचे और उनके विभागशः मूल्य बसूल करे। वेदानुवाद के ग्रन्थों का भी इसी तरह प्रचार हो सकता है। इस प्रकार हर आर्य के घर में वेद रह सकते हैं और उसका पाठ भी वे कर सकते हैं। और इस प्रकार प्रत्येक आर्य परम धर्म का पालन कर सकता है। आर्य प्रतिनिधि सभायें तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा इस दिशा में कदम उठाये और वेदों

का अनुवाद मुद्रित करके उसका घर-घर में प्रचार करें। लाभ का दृष्टि में न रख कर केवल लागत व्यय से ही इन्हें बेचे। यह काम पुस्तक विक्रेता या प्रकाशक नहीं कर सकते क्योंकि लाभ के बिना कार्य करना उनके लिए असम्भव है। अत सब आर्य सभायें मिलकर वेद मुद्रण फंड जमा करके इस कार्य को करें।
वेदानुवाद के ग्रन्थ—

वेदानुवाद के ग्रन्थों को प्रकाशित कर लागत मूल्य से या लागत से भी कम मूल्य में आर्यों में बेचे जायें।

वेद सत्रों की पुस्तक अलग हो और उनके अनुवाद के ग्रन्थ पृथक् हो। यह अनुवाद भारत की १६ भाषाओं में हो और वह छापे जायें। यदि सम्भव हो तो अंग्रेजी में भी हो। प्रचार के लिए इसकी अत्यन्त आवश्यकता है। इसके बिना होने वाला प्रचार बे-उनियाद के मकान जैसा है। पुस्तकों के बिना वैदिक धर्म का प्रचार हो ही नहीं सकता।

आर्य सदस्य और पदाधिकारी—

आर्य समाज के तथा प्रतिनिधि सभाओं के सदस्य तथा पदाधिकारी संस्कृत भाषा बोलने वाले तथा वेद का नित्य पाठ करने वाले ही होने चाहिए अन्यथा उनको 'आर्य' कहना एक महज धोखा ही होगा।

उपदेशक की योग्यता—

आर्यसमाज के उपदेशक संस्कृत में उत्तम व्याख्यान दे सकें, इतनी योग्यता उनमें होनी चाहिए। इसके आतिरेक हिन्दी तथा जिस प्रान्त में वे कार्य करें, उस प्रान्त की भाषा उन्हें आनी चाहिए। वेद के कम से कम २००० मन्त्र उनके कण्ठस्थ होने चाहिए। साथ ही उनके अर्थ का ज्ञान भी होना चाहिए। वे उपदेशक दूसरे धर्मों पर आक्रमणात्मक प्रवृत्ति न अपना कर अपने वेद ज्ञान की विशेषताओं को लोगों के सामने रखें।

इस तरह यदि वैदिक धर्म का प्रसार हुआ तो वह धर्म कभी न कभी पृथ्वी पर के सब देशों में फैलेगा। और विश्व में शान्ति का साम्राज्य होगा।

ऋषि की रचना-सत्यार्थ-प्रकाश

(ले०—श्री प० उदयवीर जी शास्त्री, गाजियाबाद)

अतीतकाल के लोककर्त्ता व्यक्तियों के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिये सर्वोत्तम लौकिक साधन उनकी रचनाओं का अध्ययन है। कपिल का साक्षात्कार करने में किसी सीमा तक उस समय हम अवश्य सफल होते दिखाई देते हैं, जब उनके अगाध गम्भीर कृति जलधि में गहरी गोता लगा जाते हैं। प्रत्येक आर्य जन महर्षि दयानन्द के दर्शन के लिए सदा उत्सुक रह सकता है। उसको उत्सुकता के शमन के लिये सरल उपाय है ऋषि की रचनाओं का विश्लेषण पूर्ण अध्ययन। यदि हम प्रत्येक पद पक्ति और के अर्थ, अभिप्राय एवं रहस्य का समझे बिना ही पढ़ते चले जायेंगे, तो निश्चित रूप से हम उस दिव्य आत्मा के दर्शन में पूर्ण सफल न होंगे।

महर्षि की रचना—

उस साहित्य का कलेवर विराल है जिसकी रचना ऋषि दयानन्द ने की। सर्वत्र दश म अपने विचारों के प्रचार की भावना से भ्रमण करते रहने की अवस्था में ऋषि का अत्यल्प अवकाश मिल पाता था, जब वे ग्रन्थ लेखन का कार्य करते थे। वेदों के भाष्य, वेदांगों के व्याख्यान, कर्मशास्त्र, सन्ध्या उपासना, सामाजिक व्यवहार आदि अनेक विषयों पर ऋषि ने छोटे बड़े दर्जना ग्रन्थों की रचना की। जो ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं उनकी संख्या चालीस के लगभग है, अनेक शाब्दार्थों का विवरण इनके अतिरिक्त है, तथा अनेक ग्रन्थ अर्थात् अजमेर में अनुद्विप्त अवस्था में सुरक्षित बताये जाते हैं। सहस्रो वर्ष पूर्व जा भारतीय समाज प्रत्येक प्रकार से अति उन्नत अवस्था में था, वह अपनी सामाजिक शिथिलता, प्रमाद पारस्परिक संघर्ष तथा अज्ञान कारणों से अवनति की ओर बढ़ते हुए ऋषि के प्रादुर्भाव से पूर्व तक पूर्ण विकृत हो चुका था उन अवनति के कारणों का दूरकर समाज का

उसी पूर्व उन्नत अवस्था में ले जाने की उत्कट भावना ऋषि के हृदय में जागरूक थी। उनके साहित्य में अनेकानेक स्थलों पर गहरी भावना के साथ वे उद्गार प्रकट हुए दृष्टिगोचर होते हैं। जनसे भारतीय समाज व राष्ट्र की सर्वाङ्गीण हीन अवस्था से उनके हृदय में व्याप्त गम्भीर क्लेश का अनुभव होता है। उनकी कितनी भी साधारण या उच्चकोटि की रचना हैं वे सब राष्ट्रिय भावना से ओत प्रोत हैं। अब से एक शती पूर्व जब ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य पूर्ण मध्याह्न में तप रहा था, अपने देशी राज्य या स्वराज्य का नाम लेना भी राज विद्रोह समझा जाता था, इस तरह की भावनाओं के लिए राज-दण्ड का भय पदे पदे बना रहता था, ऐसे समय में ऋषि ने अपने साहित्य में सच्चे स्वराज्य का खुला वर्णन किया।

सत्यार्थ-प्रकाश—

ऋषि की समस्त रचनाओं में सत्यार्थ प्रकाश अपना विशेष महत्त्व रखता है। समाज का कोई ऐसा अंग नहीं, जिसके अभ्युदय के लिए इस प्रथरत्न में उपाय एवं विविध विधानों का वर्णन न किया गया हो। ऋषि की समस्त भावनाओं का यह सर्वोच्च एवं सच्चा स्वरूप प्रतीक है। हिन्दी तथा अन्य देशी एवं विदेशी वभिन्न भाषाओं में तीन लाख से भी अधिक प्रतियाँ इसकी प्रकाशित हो चुकी हैं इस भावना से मैं यह नहीं लिख रहा, कि यह हमारे लिए कोई सम्मान की बात है, ऐसे उपयोगी ग्रन्थ रत्न की इतने लम्बे समय में इतनी प्रतियों का प्रकाशित होना एक साधारण बात समझनी चाहिए। फिर भी इससे ग्रन्थ की चतुरस्र उपयोगिता स्पष्ट होती है।

ऋषि रचना में सन्देह—

विक्रमे दिनों अन्य समाजों की ओर से ऐसे सन्देह उत्पन्न किये जाते रहे हैं, कि वर्तमान सत्यार्थ-



प्रकाश श्रृषि दयानन्द की रचना नहीं है। उन्होंने अपने जीवनकाल में जो सत्यार्थ प्रकाश मुद्रित एवं प्रकाशित कराया था, वह इससे भिन्न है। श्रृषि के देहावसान के अनन्तर आर्यसमाजियों ने उस सत्यार्थप्रकाश को बन्द कर दिया, और दूसरा सत्यार्थप्रकाश बनाकर श्रृषि दयानन्द के नाम से प्रकाशित करा दिया गया। वही सत्यार्थप्रकाश आजकल आर्यसमाज में प्रचलित है और उसी को वह अपना मान्य ग्रन्थ मानता है।

जब आर्यसमाज ने श्रृषि के जीवन काल में प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश के सर्वप्रथम संस्करण का पुनः मुद्रण कराना रोक दिया, तब कतिपय ऐसे व्यक्तियों ने जिनका आर्यसमाज से व्यावहारिक विरोध था—उसे पुनः प्रकाशित कराया, पर वह एक बार ही मुद्रित होकर रह गया, फिर भी उससे अनेक व्यक्तियों को वर्तमान सत्यार्थप्रकाश की श्रृषि रचना के विषय में सन्देह उत्पन्न हो जाने के लिए प्रोत्साहन मिला।

उक्त सन्देह सर्वथा निराधार—

सत्यार्थप्रकाश की रचना के विषय में उक्त विचार सर्वथा निराधार एवं मिथ्या हैं। ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह प्रमाणित होना सम्भव नहीं, कि श्रृषि के देहावसान के अनन्तर आर्यसमाजियों ने वर्तमान सत्यार्थप्रकाश को स्वयं लिखवाकर प्रकाशित करा दिया। अभी तक उपलब्ध साधन इस विचार के सर्वथा विपरीत हैं।

इस बात को प्रस्तुत विषय के सभी ज्ञाता अच्छी तरह जानते हैं, कि सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण गुरदादाद निवासी राजा श्री जयकृष्णदास जी के द्वारा प्रकाशित कराया गया था। राजा महोदय ने श्रृषि के प्रवचनों व उपदेशों से प्रभावित होकर उनसे निवेदन किया था, कि इन प्रवचनों को महाराज लिपि बद्ध करा दें ता उन्हें मुद्रित कर प्रकाशित करा दिया जाय जिससे भविष्य में भी जनता लाभ उठा सके। इसी के फलस्वरूप श्रृषि ने लेखक द्वारा अपने उन विचारों को लिपिबद्ध कराया, जो उन्होंने प्रवचनों में प्रकट किये थे। वह पाण्डुलिपि श्री जयकृष्णदास जी को मुद्रणार्थ दे दी गई। उसके प्रकाशित होने पर यह

मात्स्य हुआ कि उसमें कुछ ऐसे विचार सम्मिलित कर दिये गये हैं, जो श्रृषि ने न लिखाये, न प्रवचनों में प्रकट किये और न उनका वाङ्मयीय धो। जब श्रृषि को इस बात की सूचना मिली, तो उन्होंने उन विचारों का प्रतिवाद किया, जो उनकी भावनाओं के प्रतिकूल, प्रकाशक अथवा उनके सलाहकारों की प्रेरणा से मिला दिये गये थे।

ऐसी स्थिति में श्रृषि का यह सकलप होना सम्भव है, कि सत्यार्थप्रकाश का अगला संस्करण शोधकर स्वयं प्रकाशित कराया जाय। प्रथम संस्करण १६३२ विक्रमी सवत् में प्रकाशित हुआ, और १६३६ विक्रमी सवत् में बयौँचैचारण शिक्षा के अन्तिम पृष्ठ पर सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय संस्करण छपाने की प्रबन्ध सूचना प्रकाशित कराई गई। दूसरी सूचना सवत् १६३८ विक्रमी में सन्धि विषय के अन्तिम पृष्ठ पर प्रकाशित की गई। इस अन्तराल काल में सम्भवतः श्रृषि सत्यार्थ प्रकाश के सरोधित द्वितीय संस्करण की पाण्डुलिपि तैयार कराने में यथावसर सतन रहे। ऐसा प्रतीत होता है, कि सवत् १६३८ तक वह पाण्डुलिपि लिखी जाकर प्रायः पूर्ण हो चुकी थी क्योंकि विक्रमी सवत् १६३६ के भाद्रमास से पाण्डुलिपि का प्रारम्भिक अंश छपने के लिये भेजना प्रारम्भ कर दिया गया था। श्रृषि के जीवनकाल में सत्यार्थ प्रकाश के सरोधित द्वितीय संस्करण का कितना भाग मुद्रित हो चुका था, यह श्रृषि के निम्नलिखित पत्र व्यवहार से स्पष्ट होता है।

१—उपयुक्त द्वितीय सूचना के कुछ मास अनन्तर भाद्रवदी १ मंगलवार, सवत् १६३६ विक्रमी [२६ अगस्त १८८२] को श्रृषि ने एक पत्र मेवाड़राज उदयपुर से वैदिक मन्त्रालय के प्रबन्ध कर्त्ता मुन्शी सभयदान को लिखा, उसका प्रसंग में अभिलिखित अंश इस प्रकार है—

‘आज सत्यार्थ प्रकाश को शुद्ध करके ५ पृष्ठ भूमिका के और ३२ पृष्ठ प्रथम समुल्लास के भेजे हैं, पढ़ेंगे।’

इससे स्पष्ट होता है, कि श्रृषि के निर्वाण काल से लगभग एक वर्ष दो मास पूर्व सत्यार्थप्रकाश





के सशोधित द्वितीय संस्करण की प्रेस कार्पी तैयार की जाकर मुद्रण के लिये प्रेस में भेजनी प्रारम्भ कर दी गई थी। निश्चित ही समस्त सत्यार्थ प्रकाश [सशोधित द्वितीय संस्करण] की पाण्डुलिपि इस समय से पूर्व लिखी जा चुकी होगी।

ऋषि के निर्वाण काल से लगभग एक मास पूर्व तक ऋषि का जो पत्र व्यवहार वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धक मुन्शी समर्थदान के साथ हुआ है, उससे स्पष्ट हो जाता है, कि ऋषि सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संस्करण को कितनी जल्दी प्रकाशित कराना चाहते थे। वे इसके लिये बराबर प्रेरणा करते रहे और सत्यार्थप्रकाश का अपेक्षित हस्तलेख लगातार भेजते रहे। यह तभी संभव था, जब ग्रन्थ का समस्त लेख उनके पास तैयार हो। प्रबन्धक के साथ हुए पत्र-व्यवहार के जिन अत्रों से यह स्पष्ट होता है, उन्हें पाठक 'ऋषि के पत्र और विज्ञापन' के निम्नलिखित पृष्ठों में देख सकते हैं—३७३, ३७६, ३७८, ३८८, ४०४, ४२६, ४४७, ४५७-५८, ४८२, ४८४, ४८७, ५००, ५०४, ५१२।

इस विषय का सबसे अन्तिम पत्र आश्विन १३, शनिवार सवत् १९४० विक्रमी [२६ सितम्बर १८८३] का लिखा गया है, जो ऋषि के निर्वाण काल से लगभग एक महीना पूर्व का है। उस पत्र से निश्चय होता है, कि ऋषि के जीवन काल में सत्यार्थ प्रकाश का कितना अंश छप चुका था, और कितना मुद्रण के लिये शेष था। उस पत्र का प्रसंग में अभिलाषित अंश इस प्रकार है—

“और ३२० से लेके ३४४ तक तौरत और जवूर का विषय सत्यार्थ प्रकाश का भेजते हैं संभाल लेना।”

तौरत और जवूर का विषय सत्यार्थ प्रकाश के प्रयोद्देश समुल्लास के ५६ वें सर्माद्य तक में पूरा हुआ है। इससे स्पष्ट होता है, कि यहाँ तक का सत्यार्थ प्रकाश का भाग ऋषि के जीवन काल में मुद्रित हो चुका था। शेष भाग और स्वयन्तव्यामन्तव्य ऋषि के देहावसान के अनन्तर छपे हैं, पर इनका हस्तलेख पहले से तैयार था, यह निश्चित है। इसलिये यह सर्वथा निराधार एवं उपहासास्प

है, कि वर्तमान सत्यार्थ प्रकाश की रचना ऋषि के देहावसान के अनन्तर आर्य समाजियों ने कर ली है। सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन—

आर्य समाज के क्षेत्र में धार्मिक भावना से यदि किसी ग्रन्थ का सबसे अधिक अध्ययन होता है, तो वह सत्यार्थ प्रकाश है। पर यह लेख के साथ लिखना पड़ता है, कि वह अध्ययन या पाठ जितना धार्मिक भावना से होता है, उतना उसमें प्रतिपादित गमरी अर्थों या तत्त्वों को वास्तविक रूप में समझने की भावना से नहीं होता। ऋषि की वास्तविक आत्मा तक पहुँचने अथवा उसके आन्तर दर्शन के लिए ऐसे अध्ययन की अत्यन्त आवश्यकता है। आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् सत्यासी दिवगत श्री स्वामी वेदानन्द हीर्य ने इस दिशा में सर्व प्रथम प्रयत्न किया, और ऐसे अध्ययन के फलस्वरूप उन्होंने सत्यार्थप्रकाश पर अत्यन्त विद्वतापूर्ण टिप्पणी लिखी। इस सटिप्पण सत्यार्थ प्रकाश का स्थूलाक्षरों में 'विरजानन्द वैदिक संस्थान' गाजियाबाद ने प्रकाशन किया है।

अब अन्य अनेक विशेषताओं के साथ इसका तृतीय संस्करण प्रकाशित हुआ है। सत्यार्थ प्रकाश के समस्त संस्करणों में अभी तक अनेक पाठ सन्दिग्धरूप में छपते चले आ रहे हैं। इस ग्रन्थ के इतने अधिक संस्करणों के प्रकाशित होने पर भी इस प्रकारके पाठों के विषय में कभी कोई विवेचन प्रस्तुत नहीं किया गया। सत्यार्थप्रकाश के इस स्थूलाक्षर सटिप्पण संस्करण में प्रायः ऐसे समस्त पाठों के विषय में यथामति विवेचन प्रस्तुत किया गया है। चाहे कहीं पाठ अस्पष्ट हैं, या आपाततः कहीं असामञ्जस्य प्रतीत होता है, सबको यथार्थ रूप में लाने का यत्न किया गया है।

इस संस्करण की दूसरी विशेषता यह है कि पाठक को इसमें मुद्रण की कोई भी अशुद्धि नहीं मिलेगी। इतने विशाल ग्रन्थ में कौन-सा विषय कदा वर्णन किया गया है, इसका पता लगाना बड़ा कठिन होता था, कोई विस्तृत विषय सूची अभी तक तैयार नहीं की गई थी, इस संस्करण में, इस ग्यूनता को भी पूरा कर दिया गया है। प्रमाणरूप से उद्धृत वाक्यों वा सन्दर्भों की अकारादि क्रम से सूची के अतिरिक्त,





ऋषि की प्रेरणा—प्राणिमात्र की सेवा

(ले०—श्री चोखेलाल सत्यपाल जी, अधिष्ठता भारत द्रव्य निषेध विभाग, आर्य प्र० सभा उ०प्र०)

यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति, यद्वाचा वदति तत् कर्मणा करोति, यत् कर्मणा करोति तद्भिसम्पद्यते ॥

जिसका मन से ध्यान किया जाता है उस ही का वाणी से बाला जाता है, उसको ही कर्म में करता है और जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है ।

स्वतन्त्र भारत में राष्ट्रीय एकता के लिए दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ और मद्रास में कांग्रेस सम्मेलन में भारत की एकता पर बल दिया गया और प० जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रीय एकता पर बड़े भावपूर्ण विचार व्यक्त किये । गांधी जयन्ती का बड़ी धूम धाम से मनाते की तय्यारिया हो ही रही थीं कि अलीगढ़ विश्वविद्यालय के छात्रों ने साम्प्रदायिक दंगा हो गया । और भारत में दुःख और लज्जा की लहर दौड़ गई—

आर्य समाज इस दुर्घटना को बड़ी चिन्ता से देखता है और समस्त भारतवासियों के सामने महर्षि दयानन्द की उस मानवता को रखना चाहता है जो ऋषिबन्धु ने सन् १९३६ में अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका के अन्तिम पैरा से एक पैरा पहले व्यक्त किये हैं ।

“जा मिथ्या बात न रोकी जाय तो ससार में बहुत से अनर्थ प्रवृत्त हो जाय ।”

गत सप्तदश अखिबेशन के समय अलीगढ़ विश्व विद्यालय के सम्बन्ध में उप समिति की रिपोर्ट हम लोगों के सामने आ चुकी है परन्तु उसे कार्यान्वित न करने के कारण ही ऐसी दुर्घटना सामने आई ।

ऋषि ने हमको बताया है “इस हानि ने जो कि

एक विस्तृत विषय सूची ग्रन्थ के अन्त में जोड़ दी गई है । सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित छोटे से छोटा विषय भी इस सूची के आधार पर सरलता से मूल ग्रन्थ में निकाला जा सकता है ।

यह सब होने पर भी सत्यार्थप्रकाश के गभीर अध्ययन की अभी आवश्यकता अपेक्षा है । यह ऐसा ग्रन्थ है, जितना ही इसे मथा जायगा, उतना ही अधिक

प्राथी मनुष्यों को प्यारी है सब मनुष्यों को दुःख सागर में डुबा दिया है” । आज अलीगढ़ काठ से उत्तर प्रदेश को जा कलकत्ता है केन्द्र और प्रदेश का सारा शासन उससे व्याकुल है—

आज देव दयानन्द को शासक भूल रहा है और शासित उसकी उपेक्षा कर रहे हैं इन दोनों वर्गों को हा हमको मन, वचन, कर्म से यह दिखाना है कि आर्य समाज का जन्म मानव कल्याण के लिये है और वह राष्ट्रिय एकता की प्राण पण से रक्षा करने को तैयार है और भाषावाद, जातिवाद तथा विघटनकारी तत्वों से बूढ़े दूर है । वह तो एक ईश्वरवाद, बेदों के पवित्र सन्देश, का वादक है जिसको महर्षि ने अपने जीवन के अन्तिम समय तक निभाया और यह कहकर प्राण छोड़े “ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो ।”

आर्यों आआ और अपने वर्तव्य का पालन करो ऋषि ऋण चुकाओ और देश को जगाओ—

“राष्ट्र वय जागृयाम्”

और याद रखो “सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथा योग्य वर्तना चाहिये” । ऋषि की प्राणीमात्र के लिये यह बड़ी भारी देन है । अन्त में प्रार्थना है कि सर्वारम्भा सर्वान्तर्यामी सच्चिदानन्द परमात्मा अपनी कृपा से हम सब को बल दें कि हम लोग वेद पथ पर चलकर प्राणिमात्र के सुख में वृद्धि कर सकें । महर्षि के स्मृति दिवस पर यदि हम मानव सेवा का व्रत लें तो यही उस महानात्मा के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धा-जलि होगी ।

अमृत प्राप्त होगा । सुना है, श्रीमती परोपकारिणी सभा ने ईश्वर ध्यान दिया है, और सत्यार्थप्रकाश पर इस दृष्टि से कार्य किये जाने की योजना प्रारम्भ की है । मेरा समस्त आर्य जनों से नम्र निवेदन है, कि ग्रन्थ के गम्भीर अध्ययन से आत्म शुद्धि का मार्ग प्रशस्त करे, और ऋषि के उद्बोधक आन्तरिक नाद को समझने तथा वहा तक पहुँचाने का प्रयत्न करें ।





दीनबन्धु दयानन्द

दिन वे बरसात के थे
हुई दल दल थी विकट
फसा था एक कृषक
शुद्ध का जिसमें शकट
किये उस कृषक ने थे
यत्न रह रह के बड़े
बैलों की पीठ पे भी
हलढे बहुतेरे जड़े
आखों में प्राण हुए
पसीनों में हुआ तन
निकला फिर भी न सकट
बना अगद का चरण
श्याम आचल निशा का
व्याम पर छाने लगा
अपने नाँवों की तरफ
पक्षी दल जाने लगा
मेघ भी गर्ज उठे
गाव था दूर बहुत
हुआ वह दीन कृषक
चिंता में चूर बहुत
श्री दयानन्द यती
उसी लण आय गधर
देख बैलों की व्यथा
उठ्टी करुणा की लहर
आखों से अश्रु के कण
गय माती से दुलक
पक में उतर पड़े
न रुके एक पलक
साहता ऋषि का था यूँ
गात अति गौर विमल
पक के मध्य में उबो
साहता जाल कमल
गाड़ी के जूप म थे
बला के साथ लगे
जुन हतभारा कृषक
दान के भाग्य जो
व्योही सहायग प्रबल
ऋषि के भुज बल का हुआ
उन थके बैलों का भी



[रचयिता—श्री प्रकाशचन्द्र जी कबिरत्न, अजमेर]

भार कुछ हलका हुआ
गाड़ी के साथ ही फिर
दोनो के पाब हिले
अधमरे प्राणियों को
मानो नव प्राण मिले
पीठ पर हाथ फिरा
बैलों का प्यार किया
खींच गाड़ी का विकट
कीच से पार किया
होके द्रवित वो कृषक
चरणों में ऋषि के पडा
बोला यूँ जोड़ के कर
किया उपकार बडा
किया उपकार न कुछ
बोले ऋषिवर ये वचन
देख हृख प्रस्त इ-हे
हुआ व्याकुल मेरा मन
सुक कर दुख से इन्हे
अपना दुख दूर किया
शान्ति आनन्द से उर
अपना भरपूर किया।





दिवाली और दयानन्द

रच०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार एम. ए. डी. जिल्द, अजमेर)

[१]

दीप माला का दिव्य स्वरूप, फलकता दीप उद्योति के वीच ।

मनाते पर्व प्रजा सह भूप, नित्य स्वातन्त्र्य वृत्त को सींच ॥

वर्ष का वणिज व्याज व्यापार, लगाते थे व्यापारी आज ।

दीनता दूर देश से टार, सजाते थे सब वैभव साज ॥

[२]

दिवाली की वह काली रात, छिपाया जिसने भारत मानु ।

कलित कलिका पे था आघात, ललित लविकापुं पै क्रूर कृषानु ॥

जलाकर दीप लगाते खोज, कहीं है हा ! वह भारत - लाल ।

बिलखती माता है विन ओज, कहीं है मानस मज्जु भराल ॥

[३]

“दया” का दिया बुझाकर आप गये “आनन्द” भवन के द्वार ।

सहै हा ! हम कैसे सन्ताप ? दीर्घ दारुण है देवी मार ।

दिवाली को कर प्राणोत्सर्ग, दिया ऋषिबर ने पावन पाठ,

मह्य कर ले शिच्छा जन वर्ग, न मारे कायरता का काठ ।

[४]

अबनि पे अर्क होत जब अस्त, अमातम ढके अखिल आकाश,

जला घर घर में दीप गृहस्थ, प्रतापी पाते पुण्यप्रकाश ।

इसी विधि वैदिक “सूर्य” स्वरूप, छिपा स्वामी का जीवन आज,

जगत् में घर-घर दीपक रूप, करो सस्थापित आर्यसमाज ॥

[५]

जहै स्वातन्त्र्य वृत्त फल फूल, दासता रहे देश से दूर,

ज्ञान गुण गौरव हो अनुकूल, गर्व का गढ़ हो चकनचूर ॥

हमारे घर आकर प्रति वर्ष, दिवाली देती यह सन्देश ।

“सूर्य” सम ही वैदिक उत्कर्ष, रहे स्वाधीन हमारा देश ॥

—“सूर्य”





सत्य का दूत दयानन्द

आज स्वामी दयानन्द का निर्वाण दिवस है। स्वामी दयानन्द की मृत्यु का दिन है। मृत्यु ? मैं भूल गया, स्वामी दयानन्द की मृत्यु तो हा ही नहीं सकती। कहीं सत्य मरण को प्राप्त हो सकता है ? यदि सत्य की मृत्यु नहीं हो सकती तो



लेखक

स्वामी दयानन्द सत्यवादी का भी मरण असंभव है। उन्होंने ससार में जहां असत्य देखा रखन किना और जहां उन्होंने सत्य देखा, जिसे सत्य समझा उसका मखन किया। उन्हें सत्य और नेवल सत्य क प्रति भक्ति थी, सत्य के प्रति अद्वा थी और सत्य स्वरूप परमात्मा के प्रति विश्वास था। इसीलिए उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश किया और 'सत्यार्थ प्रकाश' लिखा। उन्होंने विश्व का सदेश दिया "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सदा उद्यत रहना चाहिए।" यदि हम अपनी जीवन यात्रा में सत्य साधनों को बिना अपनी सफलता प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगे तो उसमें हमें सफलता नहीं मिलेगी, यदि हम सत्य को छिपाने का प्रयत्न करेंगे तो हमें जीवन में, समाज में कष्टिर्साई का अनुभव करना होगा। असत्य पर

आश्रित हाकर समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न करने के कारण कांग्रेस सरकार का जगह जगह कठि नाइया उठानी पड़ रही हैं। साम्प्रदायिक समस्याओं का हल, भाषावार प्रान्तों की समस्या का समाधान बिना सत्य का प्रकट किए संभव नहीं। उपनिषदा में भी कहा है—

सत्यमेव जयते नाऽनुत्तम् ।

सत्येन पन्था वितता देवयान ॥

सत्य व्यापक है। धर्म और अधर्म और कुल नहीं, अटल सत्य नियमों का पालन धर्म और विराव अधर्म है। कभी कभी चमकते हुए साने के टकन से सत्य का मुँह ढका रहता है। जा मनुष्य इस सत्य को अनुभव कर लते हैं वे सदा समाग का चुनत हैं। हमारे अज के नायक स्वामी दयानन्द का यह सत्य सिद्ध था। उन्होंने उसी सत्य की प्राप्ति के लिए घर छाडा, गृहस्थ छाडा, सय की खाज में जगह जगह धक्के खय, जगलो में वाटा से लाह लुहान हुए समाजों में उन पर पत्थरा का वर्षा हु, मार्गों में उन पर साप फड़े गए भाजन में वाप आद्या गया, गालिया सही परन्तु सत्य का प्रचार न छाडा। एक राजा न नसे बहा कि आप मूर्ति पूजा का रखन छाड़ दीजिए और राज्य ले लाजये परन्तु स्वामी दयानन्द का इस पार्थिव राज्य की क्या आवश्यकता थी ? उनका ता विश्व में ही साम्राज्य था। "पजसका कछु नहीं चाहिए सार्ई शाहशाह" ।

याद स्वामी जी के कार्यों का हम सच्चे से कहे तो असत्य, चारी, भाग विलास और चमक दमक में फैले हुए ससार का सत्य, नतिकता, सयम, ब्रह्मचर्य, त्याग और बलिदान का पाठ पढ़ाया। उन्होंने विश्व का प्रेम मार्ग में फसने के स्थान पर श्रेय मार्ग का सदेश दिया। उन्होंने स्वार्थान्ध जनता का वेद का यह सदेश दिया— शेष पृष्ठ २७ कलम ?

(सुरेशचन्द्र वेदालकार एम ए एल०डी० बी० बी० कालेज, गारखपुर)





ऋषि दयानन्द की कसक

[ले०-श्री रामेश्वरदयाल गुप्त वी एस सी विशारद,]
अन्तरंग सदस्य आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

गोरखपुर जिले में बलसिया एक स्थान है।

कनिह्वम ने वहाँ के टीलों की खुदाई करके दो स्तूपों का पता लगाया था। एक स्तूप में गौतमबुद्ध के दात एक द्विविधा में सुरक्षित निकले थे। एक टीले के नीचे आयताकार कमरा निकला जिसमें गौतम बुद्ध की मनुष्य कद मूर्ति लेटी हुई मुद्रा में है। यह उनके महापरिनिर्वाण का दृश्य है। साथ ही उनके मुख्य शिष्य आनन्द रोने की मुद्रा में हैं। जातकों में कथा आई है कि गौतम बुद्ध ने कहा—“आनन्द तु लन करो। मैंने जिन आर्य सत्सों का उपदेश दिया है उन्हें लेकर चारों दिशाओं में फैलाओ। मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ।” यह भगवान् गौतम बुद्ध का स्वप्न था। गौतम बुद्ध ने वहाँ पुस्तकें लिखीं। उनके स्वर्गा रोहण के बाद ५० वर्ष महास्थविर मोग्गलालयन आदि को बौद्ध दर्शन की स्थापना करने और साहित्य प्रस्तुत करने में लगे। यह सब हा सकने में बौद्धों की ४ विशाल सभायें कालान्तर में हुईं। पहली वृहत्सभा तो राजगिरि में हुई जिसका प्रधान नालन्दा का कुलपति था। राजगिरि की गुफाओं में ये स्थान अब भी सुरक्षित हैं। दूसरी सभा वैशाली में महास्थविर यश के सभापतित्व में हुई जबकि स्थविरवादी तथा महासाधिक विभेद परिपक्व हुये। यह बुद्ध के स्वर्गवास के लगभग १०० वर्ष बाद हुई थी। अशोक के समय तक १२ निकाय बौद्धों के बन चुके थे। अशोक ने गुरु तिष्य (उपगुप्त) के प्रधानत्व में तीसरी वृहत्सभा बुलाई। उसमें २ हजार बौद्ध निष्कासित किये गये

यद्वद् अशुषे त्वमग्ने भद्र करिष्यसि।

तवेत्तन् सत्यं मंगिरः।

अर्थात् समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए आत्मबलिदान, धन बलिदान और तन बलिदान करने वालों का सदा कल्याण होता है। कारा, आज हम स्वामी जी के इन उद्देश्यों पर चलकर सच्चे अर्थों में उनके प्रति अपनी भद्रांजलि अर्पित करते। ★

थे। अशोक के राज्यकाल का वह १७ वां वर्ष था और उसे बौद्ध हुए तब केवल ६ वर्ष हुये थे। उस सभा में बौद्ध धर्म के द्वीप द्वीपान्तर तथा देश-देशान्तर प्रचार की योजना बनाई गई थी। और विद्वानों को निम्न प्रकार विदेश भेजा गया था।—

- | | |
|--------------------------|-----------------------|
| १—महारक्षित | यौन लोक (यवन देश) |
| २—मञ्जुनिक | काश्मीर तथा गान्धार |
| ३—महादेव | महिस मण्डल (मैसूर) |
| ४—चेर रक्षित | वनवास (उत्तरी कनारा) |
| ५—योनक धर्मरक्षित | अपरागतक (कोकण) |
| ६—महाधम्म रक्षित | महाराष्ट्र |
| ७—थेर मन्किम और कश्यप | हिमवत (हिमालय प्रदेश) |
| ८—थेर साण व उत्तर | सुवर्णभूमि (जावा आदि) |
| ९—महामहिन्द्र [महेन्द्र] | लका (सिंहल) (महावश) |

इनम से प्रत्येक विद्वान् के साथ ४ और सहायक विद्वान् भेजे गये थे। महारक्षित के २ शिष्य ईस्तीन तथा थेरायून फिलिस्तीन तथा मित्र में जाकर बसे थे। ईसा मसीह इन्हीं के सम्पर्क में आये थे।

अपने धर्म को फैलाने की आदत हिन्दुओं में नहीं रही है। परन्तु उसे भारतीय आदत नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि बौद्धों ने योजना बद्ध प्रचार द्वारा समूचे यूरोशिया, यूनान, मित्र, चीन व जापान को बौद्ध बना लिया था। बौद्धों के सम्पर्क और प्रभाव से स्थापित ईसाई धर्म में ईसा के जन्म व चमत्कार की सब कथायें बुद्ध जन्म की कथाओं से ली हैं और मिश्रनी धर्म हानि की सारी परम्परायें बौद्धों से ली हैं अतः घर छोड़ लगनशील पादरिथों व उसे सम्पूर्ण योरुप, अमरीका व एशिया में फैला दिया और भारत के धर्म निष्ठ तोरण को भी भेद दिया जहाँ का उद्घोष था।

स्वधर्म निधन श्रेयः परधर्मो भयावहः।
आज्ञ दश में एक करोड़ ईसाई हैं। और यही





कथा इस्लाम की है। उम्मी (निरञ्जर) पैगम्बर ने भी अपने धर्म को फैलाने वाला बनाया। उन्होंने तो कोई साहित्य भी नहीं सृज्ना। उनकी मृत्यु के १३वर्ष बाद खलीफा उमर ने जैद नामक विद्वान् से कुरान सफलित करवाई। परन्तु वे धर्म के लिये युद्ध व जिहाद करने वालों का एक दस्ता छोड़ गये थे। इन जिहादियों ने इस्लाम को भी विश्व धर्म बना दिया। आज परिस्थिति यह है कि विश्व में सबसे अधिक ईसाई फिर बौद्ध फिर मुस्लिम तथा अन्त में हिंदू फिर एनीमिस्ट (प्रकृति पूजक) हैं।

हमारे फैलाव की शृंखला टूट गई है। अपने त्रैतवाद् के महान् सिद्धान्तों के फैलाव की बात दिल ही में रह गई। स्वामी दयानन्द जी महाराज ने प० गुरुदत्त तथा मूलराज प्रभृति सज्जनों को भरते समय अपने पास बुला भेजा था। बड़े कष्ट से उन्होंने कहा था "ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो। तूने अच्छी लीला की।" उनका मानस पुत्र आर्यसमाज शैशव में था। और उस पीढ़े को सींचने का काम वे हम सब पर छोड़ गये। उस समय के वे मनीषी सज्जन धम्मपाल कश्यप और आनन्द की कोटि के हैं। उनकी अपनाई हुई पद्धति से हमारी सख्या भारतवर्ष में लगभग एक करोड़ हो गई है जो ईसाई या सिक्खों या जैनों या कन्युनिगटों में से प्रत्येक से अधिक है। परन्तु अब काम अवरुद्ध-सा हा गया है। हमारे मनीषी चले गये देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में लगनशाल प्रचारक गये। परन्तु विदेशों में हमारा सारा कार्य क्षेत्र प्रवासी हिन्दुओं तक ही सीमित है। स्थानीय (नेटिव लोगो) में तो हमने कार्य का सूत्रपात ही नहीं किया है। इधर भारतवर्ष के महाराष्ट्र, आन्ध्र, मैसूर, केरल मद्रास, उड़ीसा, त्रिपुरा में हा एक बड़े शहरों को छोड़कर हमारा कार्य नगण्य है। कहीं कहीं एकाध आर्यसमाज नक्षत्र टिमटिमाता है, वह भी उन परिश्रम शील पत्राधिया द्वारा जो व्यापार वा नौकरी के कारण सुदूर भागों में गये हैं और अपने साथ साथ आर्य समाज की कसक हृदय में लेकर गये हैं। इस प्रकार तो स्वामी जी महाराज की कसक पूरी नहीं होगी।

समय आगया है कि बौद्धों की तरह विश्वव्यापी फैलाव की योजना बन गी जाये। निश्चय है कि

हमारे पास २-४ दर्जन व्यक्ति आवश्यक हैं जिनको दुनियां बाटी जा सकती है। इधर देहा में प्रचार-प्रसार के लिये अनिवार्य भरती होनी चाहिये। अर्थात् प्रत्येक आर्य समाजी के लिए एक वर्ष प्रचारार्थ भिक्षाटन द्वारा देना लाजिमी कर दे दिया जावे। प्रतिनिधि समाये ऐसे व्यक्तियों को भारत के मानचित्र से एक-एक गांव सौपते जावें। हजारों युवक और युद्ध छुट-पटा रहे हैं कि उन्हें कुछ काम दिया जावे। हमारे पदाधिकारी ऊँचे ठठे और युग की मांग पूरी करें क्योंकि छान्दोग्य उपनिषद् में कहा है—

उक्थ प्राणो वै उक्थ।

क्षत्रं प्राणो वै क्षत्रं।

यजुः प्राणो वै यजुः।

साम प्राणो वै साम।

प्राणवान वा जीवित व्यक्ति या समाज की बड़ी पहिचान है कि वह बड़े, विवातीय द्रव को अपने में आत्मसात् करे, सगठित होकर एक भाग के दुख को सबका दुख समझे और बाहरी आक्रमण से अपनी रक्षा करे। हम जीवित ससुखाय हैं और हमें जीवित रहना है। दुनिया को देने को हमारे पास कुछ है और इसीलिये कुछ वर्षों तक हमारा नारा होना चाहिये प्रसिद्धव्यम्। फैल जाओ। क्या हम ऋषि की आशा को पूर्ण करेगे आज की द्वीप-ज्योति अपने प्रकाश में ऋषि के सच्चे सदेश बाहको की खोज कर रही है।

प्रचेतन

यथा वायुश्चान्वरिक्त च न विभीतो न रिष्यतः।
एषा मे प्राण्यमा विभेः एषामे प्राण्य मा रिषः॥
यथा वीररथीर्थ च न विभीतो न रिष्यतः।
एषामे प्राण्यमा विभेः एषामे प्राण्य मा रिषः॥

जिस प्रकार वायु और अन्तरिक्ष न डरते हैं और न कभी क्षीण होते हैं, वैसे ही मेरे प्राण्य तुम भी न डरो, न क्षीण हो।

जैसे वीर और वीरत्व न डरते हैं, न क्षीण होते हैं, वैसे ही मेरे प्राण्य तुम भी न डरो और न कभी क्षीण हो।

—शौनक सहिता





“शिव और विष्णु ऋषि दयानन्द की दृष्टि में”

(ले०—श्री आचार्य भद्रसेन जी अजमेर)

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि ऋषि दयानन्द ने पाखण्ड मतों, विचारों और मिथ्या देवी, देवताओं का खण्डन किया है। किन्तु इसमें भी कुछ सन्देह नहीं कि उन्होंने सत्य विचारों, सच्चे देवों तथा महापुरुषों का चाहे वे किसी भी धर्म के हो, उतने ही प्रबल शब्दों में समर्थन किया है, (जितना कि पाखण्डमतों तथा नाममात्र के देवी देवताओं का खण्डन), किन्तु खेद से लिखना पड़ता है कि स्वाभ्यायहीन आर्य पुरुषों ने प्रत्येक बात को जो कि उनकी समझ में नहीं आती पाखण्ड और पोपलीला का नाम दे दिया है। जिन महापुरुषों के विकृत स्वरूप का तथा उनके ईश्वरीय स्वरूप का ऋषि ने खण्डन किया, आर्य पुरुषों ने उनकी सत्ता और महत्ता से भी इन्कार कर दिया। और यदि किसी ने उनके सम्मुख उनका नाम भी ले लिया तो उसे पाखण्डी और पोप कूढ़कर उसका उपहास करने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि जहा हम दूसरों के अभिय तथा सब बातों का खण्डन करने वाले कहलाये, वहा उन महापुरुषों के जीवन आदर्श से हम जो उच्च-शिक्षा तथा प्रेरणाएँ मिलती थीं, उनसे भी वंचित रह गये। उदाहरण के तौर पर शिव और विष्णु को ही ले लीजिये। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि ऋषि दयानन्द ने पौराणिक स्वरूप के शिव और विष्णु का खण्डन किया है। उनके ईश्वरीय अवतार होने का भी निराकरण किया है। उनके नाम से बनाये गये शिव पुराण और विष्णु पुराण का भी प्रबल शब्दों में प्रत्याख्यान किया है। इन सबके बावजूद भी ऋषि ने शिव और विष्णु की सत्ता और महत्ता से कहीं इन्कार नहीं किया। प्रस्तुत प्रबल शब्दों में उनकी सत्ता का समर्थन तथा उनके निवास स्थान आदि का भी मनोहारी शब्दों में वर्णन किया है।

ऋषि ने पूना नगर में १५ व्याख्यान दिए। उनमें ६ व्याख्यान केवल प्राचीन भारतीय इतिहास विषय के थे, जो कि भारतीय सभ्यता, सङ्कृति तथा

अमृत के प्राचीन महापुरुषों की गौरव गरिमा का विषय तथा मार्मिक वर्णन करने वाले हैं। ऋषि ने इतिहास परक अपने पहिले व्याख्यान में ही कहा—

“ब्रह्मदेव का पुत्र विराट्, विराट के पुत्र विष्णु सोमसद थे। और अग्निष्वात्त का पुत्र महादेव (शिव जी) थे। विष्णु और महादेव आगे चलकर ब्रह्मा के साथ त्रिमूर्ति के रूप में मुख्य देवता करके प्रसिद्ध हुए।” यहा शिव और विष्णु की सत्ता को महर्षि ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है।

अब जरा उनके निवास स्थान का ऋषि के मुख से मनोहारी वर्णन सुनिये। ‘मन्द सुगन्ध और शीतल वायु जहा चल रही है। रमणायो बनस्पतिया जहा रगी हैं। जहा पर स्फटिक के सहस्रानिर्मल फरनों का जल बह रहा है ऐसे हिमालय की ऊँची चोटी पर विष्णु निवास करने लगे। इमी को वैकुण्ठ भी कहते थे। फिर दूसरे हिमच्छादित भयकर ऊँचे प्रदेश में महादेव वास करने लगे। जिसे कैलाश भी कहते थे।’

इसमें जहा ऋषि ने शिव और विष्णु ने निवास स्थान का सुन्दर वर्णन किया, वहा विष्णु लोक, वैकुण्ठ लोक आदि काई अलौकिक वस्तु न होकर विष्णु के निवास स्थान हिमालय के ऊँचे सुरम्य शिखर का नाम ही वैकुण्ठ था, यह भी ऋषि ने स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर दिया है।

अब जरा इनके धार्मिक ग्रन्थों का वर्णन ऋषि के मुखारविन्द से सुनिये। ऋषि सत्यार्थ प्रकाश के बारहवें समुल्लास में जैनिथों के धर्म ग्रन्थों के इस लेख का कि केवल तीर्थङ्करों द्वारा सच्चा जैन धर्म ही मनुष्यों का उद्धार करने वाला है। अन्य हरि (विष्णु) हर (शिव जी) आदि का धर्म सप्ता का उद्धार करने वाला नहीं, उत्तर देते हुए लिखते हैं—

“भला यह हरि हर आदि महापुरुषों





की कर्म निन्दा है कि जिनके ग्रन्थ देखने से पूर्ण विद्या और धार्मिकता पाई जाती है। उनको बुरा कहना, और अपने महा अस्मभव बातों के कहने वाले तीर्थङ्करों की स्तुति करना।”

और तो क्या कई आर्य पुरुष, यहा तक कि आर्य विद्वान् भी श्रीकृष्ण की भी निन्दा करते नहीं थकते। जिस श्रीकृष्ण महाराज की ऋषि ने अपने ग्रन्थों में भूरि भूरि प्रशंसा की, जिनको सत्यार्थ-प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में ऋषि ने योगिराज और जन्म से सृष्ट्य पर्यन्त एक भी बुरा कर्म न करने वाला लिखा जिनके विषय में सत्यार्थ प्रकाश के बारहवें समुल्लास में जैनियों की इस बात का उल्लेख करते हुए कि—“जिनने भी जैनियों के तीर्थङ्कर आदि हैं, वे सब स्वर्ग को गये, और श्रीकृष्ण आदि सब नर्क को गये” ऋषि लिखते हैं—

“मला कोई बुद्धिमान पुरुष विचारे कि इनके साधु गृहस्थ, तीर्थङ्कर आदि जिनमें बहुत से वेश्या-गामो, पारखी गामी, चार आदि जिन मतस्थ तो स्वर्ग और मुक्ति को गये और श्रीकृष्णादि महाधार्मिक महात्मा सब नरक को गये मला यह कितनी बुरी बात है”। यहाँ ऋषि दयानन्द ने श्रीकृष्ण को महाधार्मिक और महात्मा लिखा है। ऐसे ऋषि के पंम आदर के पात्र श्रीकृष्ण महाराज को भी कई आर्य विद्वान् ता समाज की वेदी पर ही अपने व्याख्यानो में बुरा मला कहने लग पड़ते हैं जिसका कि जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पडता है। कभी कभी तो जनता में आर्यसमाज के प्रति मिथ्या भ्रम न फैल जाए मुझे उठकर उनके व्याख्यान का प्रतिवाद भी करना पडता है। ऐसे व्याख्यानो को सुनकर ही लोगों के अन्दर यह धारणा बैठ गई है कि आर्यसमाजी तो सब का खण्डन करते हैं। और किसी भी देवी देवता को नहीं मानते। अन्त में मेरी आर्य पुरुषो तथा आर्य

*पाठक कहीं “शिवपुराण” और “विष्णुपुराण” को ही शिव तथा विष्णु के ग्रन्थ न समझ ले। वे तो उनके नाम से अन्य पण्डितों ने बनाये हैं। हो सकता है स्वामी जी महाराज ने शिव तथा विष्णु महाराज के स्वरचित ग्रन्थों का भी कही अवलोकन किया हो।

धर्म का सन्देश



तुम बड़े युगपति ! समझकर,
धीम को मधु मास ।
कण्टकों पर तुम चले,
घर अघर पर शत्रु - हास ।

कर दिया तन मन समर्पण,
विश्व के निज हेतु ।
गा रहा गाथा तुम्हारी,
‘ओश्म’ का प्रिय हेतु ।

तुम न थे मानव, महा-
मानव सकल निष्काम,
ले रहा है और लेगा ।
विश्व, ऋषिवर नाम ।

हे दया - आनन्द, कर
आनन्द को सकेत ।
तुमने दिया इस लोक को,
वेद धर्म - का सन्देश ।

—श्रीकार ८२७ अहियापुर, इलाहाबाद

विद्वानों से प्रार्थना है कि वे खण्डन-खण्डन के विषय में ऋषि की शैली को अपनायें। अर्थात् जहाँ वे शिव आदि महापुरुषों के नकली स्वरूप का तथा उनके अवतार होने का निराकरण करें, वहा उनकी सत्ता तथा महत्ता और उनके असली स्वरूप को ही न समाप्त कर दें। प्रत्युत उनके वास्तविक स्वरूप को जनता के सम्मुख रखें। जिससे जहाँ हम तथा अन्य जनता उनके जीवन से उत्तम शिक्षाएँ तथा प्रेरणाएँ प्राप्त करें, वहाँ लोगों के अन्दर जो यह धारणा बैठ गई है कि आर्य समाजी सबका खण्डन करते हैं और किसी को भी नहीं मानते, यह गलत धारणा भी दूर हो जाए।





आर्यो ! दीपावली पर दीक्षा लो

(ले०—श्री भगवानदेव जी गुरुकुलीब, उद्देश्य सावदेशिक आ प्र सभा पाटन)

जैतिथी का कोई पवित्र दिन था। नगर में एक बड़ा भारी जलूप निकाला गया। जैन सम्प्रदाय के छो पुरुष का उत्साह उस जलूप में देखने लायक था। तरह तरह के रंगीन कीमती वस्त्र धारण किये हुए वे लाग सबक पर आगे बढ़ते जा रहे थे। उनके आगे उस सम्प्रदाय के साधु, स्त्री-पुरुष थे। उनके त्यागी लिवास तथा अनुयायियों के रंग विरगे विलासी लिवास का देखकर मैं आश्चर्य में अवश्य पड़ा, परन्तु यहाँही जलूप आगे बढ़ा यहाँही मैंने एक सुन्दर सजी हुई विकटारिया में एक नवजवान खूबसूरत कन्या का देखा, जिसका गुलाबी मुखड़ा कवि क शब्दों में चाद का भी शर्माता था। पूछने पर मुझे बताया गया कि “यह एक कराड़पति सठ की एकमात्र कन्या है जो ‘दीक्षा’ ले रही है।” दीक्षा लेने के पश्चात् यह साधु जीवन विवाहपत्नी और जन धर्म का अध्ययन करके उसका प्रचार करेगी।”

इसी प्रकार जैन नश्युवक आदि भी दीक्षा लेते हैं जिनका दीक्षा देते समय असह्य स्त्री पुरुष बड़े उत्साह के साथ एकत्र हात हैं और उनका शानदार जलूप निकाला जाता है।

द्यानन्द के वीर सैनिक बनने तथा द्यानन्द का काम पूरा करने वालों। दीपावली के पुण्य पवित्र पर्व पर जिस दिन हमारे ऋषि ने माण्डू पद प्राप्त किया—तुम अपने हृदय, घर और समाजों को टटोलो कि आर्यने अथवा आपके बचपों ने या आपकी समाज में कितनी सख्या में लोगों ने “दीक्षा” लेकर द्यानन्द का काम पूरा करने की कोशिश की ?

कुछ समय पूर्व मथुरा में “दीक्षा-शताब्दी” मनाई गई। लाखों अपने आपका ऋषिका “अनुयायी” और ‘आर्य’ कहलाने वाले वहाँ एकत्र हुए। लाखों रुपये खर्च किये गये। इन पक्षियों के लेखक का भी उस अवसर का देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। दीक्षा शताब्दी प्रोग्राम की समाप्ति पर जब मैं वापिस अपने निवास स्थान पर लौटा तब मुझसे एक प्रतिष्ठित जैन

भाई ने पूछा—परिणत जी ! आप इतने दिन कहाँ गये थे ? मैंने उत्तर दिया—“मथुरा में दीक्षा शताब्दी थी—वहाँ गया था।” तब उस जैनी महाशय ने जिज्ञासु भावना से पूछा—“कितने ल गोनने दीक्षा ली ?” यह शब्द सुनकर मेरा मस्तिष्क चकराने लगा—कि यह पूछ क्या रहा है और मैं उसे जवाब क्या दूँ ?” आखिर मैंने उससे कहा—“भेरे देखने में एक ने भी नहीं।” तब उस जैनी महाशय को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसे ? दीक्षा शताब्दी में एक ने भी दीक्षा नहीं ली ?” मैंने उनसे कहा—“हमारे गुरुवर ऋषि द्यानन्द सरस्वती ने अपने गुरु के चरणों में रहकर जब ज्ञान प्राप्त करके दीक्षा ली थी—उसको सौ वर्ष पूरे होने आये थे इसलिये यह प्राप्ताम रखा गया था।”

मैंने जैनी महाशय को उत्तर तो दे दिया, परन्तु मेरा मन विचार सागर में डूब गया। आँखों के चारों ओर मुझे दीक्षा ! दीक्षा ! दीक्षा !!! शब्द दिखाई देने लगा। आत्मा ने कहा—हम लकीर पीटते चले जा रहे हैं धीरे धीरे हमारे अन्दर भी पौराणिकों के अनुमार अन्वविश्वास घर करता जा रहा है—हम लकीर के फकोर बनते जा रहे हैं। जैसे पौराणिक, महापुरुषों की मूर्तियों सामने रखकर अन्व श्रद्धा से उन्हें भगवान मानकर पूजते हैं तथा जयन्तियों मनाते हैं—उनक सा जीवन अपना बनाने की कोशिश नहीं करते—यही हालत आजकल के आर्यसमाजियों की बनती जा रही है।

आर्यसमाज का ढाल पीटने वालों ! वैदिक धर्म की जय बोलने वालों ! जब तक आप बौद्ध, जैन तथा नारायण स्वामी सम्प्रदाय के अनुसार रूखी ‘दीक्षा’ लेकर विश्व की विभिन्न भाषाओं का सीखकर ससार के कोने कोने में फैल न जाओगे, तब तक न विश्व आर्य बन सकेगा और न आप द्यानन्द का काम पूरा कर सकोगे—न वैदिक धर्म की जय होगी। नारे भले ही लगाते रहें। गीत भले ही गाने रहें ! परन्तु हाने का कुछ नहीं।





एक दिन एक आर्यसमाजी घर पर भोजन कर रहा था। बच्चा बीमार था, अचानक उन्हें पता लगा कि पासवाले गाँव में एक हिन्दू यवन मत स्वीकार कर रहा है। भोजन तथा बीमार बच्चे को छोड़ कर वह चूड़ीदार पैजामा तथा सर पर पगड़ी बांधे हुए व्यक्ति उस गाँव को ओर जाने के लिये ट्रेन में सवार हुए। ट्रेन उस गाँव की छोटी स्टेशन होने के कारण नहीं रुकी। चलती गाड़ी में से वह कूद पड़े। दौड़कर उस व्यक्ति के घर पर पहुँचे जो यवन मत स्वीकार करने के लिये तैयार बैठा था। आते ही उस पगड़ी पहने हुए व्यक्ति ने उस सज्जन से पूछा—“आप को आर्य (हिन्दू) धर्म में ऐसी कौन सी कमी दिखाई दी जो आप यवन मत स्वीकार कर रहे हो?” यवन मत स्वीकार करने वाले व्यक्ति ने कहा—“यह मैं फिर बताऊँगा, पहले आप यह बताइये कि आपके यह बुरे हाल क्यों हैं? कपड़े फटे हुए, सारा शरीर घायल यह सब कुछ क्यों?” मुस्कराकर उस पगड़ी वाले ने कहा—“सुना था आप यवन मत स्वीकार कर रहे हो, तब ट्रेन में बैठकर आपको सब माने के लिये आ रहा था। ट्रेन स्टेशन छोटी होने के कारण रुकी नहीं—समय हो चला था, इसलिये चलती ट्रेन में से कूद पड़ा, जिसका यह परिणाम है।” यह बात सुनकर यवन मत स्वीकार करने वाले हिन्दू का हृदय पलट गया। उन्होंने कहा—“जिस धर्म में आप जैसे जान पर खेजने वाले महान् व्यक्ति हैं उस धर्म को मैं कभी नहीं छोड़ूँगा।”

पाठको। यह और कोई नहीं पगड़ी पहने हुए धर्मवीर पण्डित लेखराम थे। जिसको एक यवन ने विश्वासपात करके खजर से खून किया था। इस घटना के पश्चात् सारे शहर पर आर्यसमाज का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वहाँ थोड़े ही दिनों में एक सुन्दर आर्य समाज मन्दिर बन गया और वह शहर आर्य समाज का एक गढ़ बन गया।

चादनी चौक के चारों ओर सगिने थीं। जनसमूह आगे बढ़ने की कोशिश में था। गोरा पलटन गोलियाँ छूटने की तयारी में थी। जल्म रुक गया। इनने न एक विशालकाय, तेजस्वी अर्धलं

वाला गेरुएखल धारण किये हुए—एक सन्यासी आगे बढ़ा, छाती के बटन खोलते हुए उस विशालकाय सन्यासी ने गोरा पलटनको ललकारा—“बच्चाओ गोली!” सन्यासी की गर्जना क्या थी, मानो शेर की गर्जना हुई। जैसे जंगल में शेर गर्जना करता है तो छोटे-छोटे जानवर इधर-उधर जान बचाकर भागते हैं। यही हाल सन्यासी की गर्जना से हुआ। चारों ओर सन्नाटा छा गया। गोरा पलटन की सगिनें झुक गईं, रास्ता साफ हो गया। जल्म शान के साथ आगे बढ़ा। यही क्रान्ति वीर सन्यासी श्रद्धानन्द था। जिसने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके देश को असह्य देश भक्त नौजवान पैदा करके दिये हैं—और दे रहा है जिसका एक मतान्वय सुसलमान ने गोली मार कर खून किया था। उस सन्यासी की कर्मवीरता तथा तप के प्रताप के कारण ही आज भारत की राजधानी दिल्ली में सवा सौ से भी अधिक आर्यसमाजें हैं।

जब तक आर्यसमाज में स्वामी श्रद्धानन्द, पं० लेखराम, महारामा हसराम, लाला लाजपतराय, पं० गुरुदत्त, भाई परमानन्द, नारायणस्वामी, स्वामी दर्शनानन्द, आत्माराम अमृतसरी जैसे त्यागी वीर, जान पर खेलने वाले महारथी थे तब तक आर्यसमाज का बोल बाला था। किसी की हिम्मत नहीं होती थी उसकी ओर आख ठठकर देखने की; परन्तु आज कल हमारा दिन प्रति दिन पतन होता जा रहा है। हम अकर्मण्य होते जा रहे हैं। इसका कारण सिर्फ एक है, और वह है—“पूर्वजों के अनुसार जीवन समाज को समर्पित न करना।”

आप यदि उँचा उठना चाहते हो तो अपना जीवन आज ही निर्भय होकर निस्वार्थभाव से समाज को अर्पण कर दो। और अपने गुरु तथा अन्य पूर्वजों के समान पाखण्ड खण्डनी पताका लेकर धर्म युद्ध के क्षेत्र में उतर आओ अवश्य आप अपने पूर्वजों के समाज उँचा उठाओ और आपकी कीर्ति बढ़ेगी। आप उँचा उठाओ तो आपकी समाज अपने आप उँचा उठेगी। तो आर्यो! आओ, आज ऋषि निर्वाण दिवस पर अपना जीवन समाज को अर्पण करने के लिए ‘धीच्चा’ लें। वह दीक्षा जिससे हम अपना तथा जग का





ऋषि दयानन्द और कुरान शरीफ

(लेखक—श्री बिहारीलाल जी शास्त्री, बरेली)

आर्य जाति के विद्वानों में ऋषि दयानन्द जी ही वह प्रथम विद्वान् हैं, जिन्होंने मुसलमानों के मौलिक मान्य ग्रन्थ, कुरान शरीफ का खण्डन किया। जैन, बौद्ध, वैष्णव, शैव, द्रैविड, अद्वैतवाद के परस्पर खण्डन में आर्य विद्वानों ने पर्याप्त प्रयत्न किये। खूब बहस-बाहस कर एक ने दूसरे के सिद्धान्तों का खण्डन किया पर इस्लाम पर लेखनी उपयुक्त किसी भी मत के विद्वान् ने नहीं चलायी। सम्भवतः इसका कारण पहले

लेखनी से खण्डन किया पर कुरान ने तो अपने समय के मतों का तलवार से उन्मूलन करने का आदेश दिया और लाखों व्यक्ति इस उपदेश के कारण क्रूरतापूर्वक बध कर हलाले गये। ऐसी हिंसा प्रेरक पुस्तक तो ऋषि ने यदि बुद्धि की कसौटी पर कसा तो इनमें मानव-मात्र का कल्याण ही हागा।

कुरान शरीफ का प्रचार जब मुहम्मद साहब के द्वारा प्रारम्भ हुआ तो मुख्य रूप से हजरत ने मूर्ति पूजा का विरोध किया। उनकी सब जाति मूर्ति पूजक थीं। इनका विरोध बढ़ते बढ़ते युद्ध में परिणत हो गया, अनेक युद्ध हुए। कभी किसी की कभी किसी की हार जीत होती रही। अन्तिम विजय हजरत की हुई।

जब मुसलमानी सेना शक्तिशाली हो गयी। तब मूर्ति पूजकों के अतिरिक्त यहूदी और ईसाइयों का भी विरोध प्रारम्भ कर दिया गया। कुरान शरीफ के निम्न वाक्य देखने चाहिये। 'मुसलमानों मुशिकों के अतिरिक्त इन' किताब वालों से (भी) जा लोग न खुदा पर (पूरा) ईमान रखते हैं और न प्रलय के दिन पर, और न उन वस्तुओं को हराम जानते हैं जिन्हें खुदा और उसके रसूल ने हराम कर दिया है। (जैसे शरीब व सुअर) और न सच्चे धर्म पर (अर्थात् इस्लाम धर्म)



लेखक

इस्लाम का ज्ञान न होना और पश्चात् मुसलमानी शासन की कठोरता रही होगी। ऋषि दयानन्द ने कुरान शरीफ की युक्तियुक्त आलोचना निर्भय होकर करी।

इस पर कुछ आर्य जाति के ही लोग स्वामी जी की निन्दा करते हैं। हिन्दू मुस्लिम एकत्व की सृज-वृष्ट्या के शिकार ये नेता नामधारी मुसलमानी मत के खण्डन को कठोरता समझते हैं, परन्तु इनका ध्यान कभी इस तथ्य की ओर नहीं जाता कि स्वामी जी ने

(पृष्ठ ३२ का शेष

कल्याण कर सकें। जब हम दीक्षा लेकर बौद्ध भिक्षुओं के अनुरूप भूमण्डल पर वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए निकल पड़ेगे तभी हम वास्तव में सच्चे दयानन्द के वीर सैनिक कहला सकेंगे। दयानन्द का काम पूरा कर सकेंगे ॥ विश्व को आर्य बना सकेंगे ॥ अन्यथा नहीं।

इसलिए दीपावली पर ऋषि की आत्मा तुमसे पुकार पुकार करे कइती है—आर्यों! दीक्षा लो। दीक्षा लो ॥ वैदिक (मानव) धर्म का प्रचार करने के लिए दीक्षा लो। ★





को स्वीकार करते हैं उनसे (भी) लडो यद्वातक कि यह (आधीन और) जलील होकर (स्वयं अपने) हाथ से (तुमको) कर देने लगे।'

सूरते तांवा स्वाजा हसन निजामी का अर्थ प्र० २६८ आयत के मौलवियों ने यही अर्थ किये हैं। चाहे जिस भाष्य में देखो यही अर्थ मिलेगा।

अब ध्यान दीजिए कि 'जो खुदा पर पूरा ईमान नहीं रखते उनसे लडो' यह है ईश्वरीय आज्ञा, तो यह निश्चय कौन करेगा कि खुदा पर पूरा ईमान कौन रखता है कौन नहीं ?

यहूदी, ईसाई कहेंगे मुसलमानों का पूरा ईमान नहीं, मुसलमान कहते हैं उक्त दोनों का पूरा ईमान नहीं। पूरे अधूरे ईमान को तो ईश्वर ही जान सकता है।

हराम हलाल भी भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के भिन्न-भिन्न हैं। हिन्दू जिन वस्तुओं को हराम समझते हैं तो मुसलमान उन्हें हलाल समझते हैं। चीनी सब पशु पक्षी कीड़े मकोड़ों को खाने में दोष नहीं मानते पर मुसलमान "कउए" "चूह" नहीं खा सकते। इसी पर कतल की आज्ञायें दी जाने लगी तो ससार में कभी शान्ति न रहे। पर कुरानी खुदा इसी पर तलवार चलवाता है और पूरी तरह पर फेल रहता है। आज मुअर और शराब के खाने पीने वाले ससार में मयसे अधिक हैं।

खुदा का काम तो यह था कि हराम और हलाल वस्तुओं के दोष तथा गुण बताकर मनुष्यों को उनका नियंत्रण कराता और विश्व बताता। तलवार का प्रयोग ता असफल रहा।

इसीलिये स्वामी जी महाराज कुरान को ईश्वरी उपदेश नहीं मानते। और खडन करते हैं।

उक्त आयत में गैर मुसलमानों को तब तक कतल करने का आदेश है जब तक कि वे जजिया न देने लगे। और जजिया देने वालों को "जलील" (अधम नीच) कहा गया है। मुसलमानों की आधीनता में वे गैर मुसलमान जजिया दे और जलील बनें तो पैसे राख्य का कौन गर मुसलमान पसंद करेगा। यहाँ भी अल्लाहमियों का उपदेश फेल रहा। इस्लामी राख्य दुनिया के बहुत धाड़े भाग पर है और

उसमें भी गैर मुसलमान बहुत कम हैं और जो हैं वे "जजिया" नहीं देते। इस्लाम में गैर मुसलमानों पर शासन करने की उदारता नहीं। इस्लामी शासन पूरा साम्प्रदायिक शासन होता है।

प्रायः मौलवी मौलाना कहा करते हैं कि इस्लाम में सब मनुष्य बराबर हैं। "अखवते इस्लाम" (इस्लामी भाईचारा) का डका पीटा जाता है। पर यह बात कतई भूठ है। "अखवते इस्लाम" से मौलवियों का मतलब है केवल मुसलमानों से। मुसलमान-मुसलमान मत्र बराबर है। भाई भाई हैं पर गैर-मुसलमान चाहे क्रिस्ता ही या अन्य हों भाई या बराबर का नहीं माना जा सकता। देखो कुरान सूरते तांवा भाष्य स्वाजाहसन निजामी पृष्ठ २६८।

"हुमानद रो। मुशिरक (तो अपने कर्मों व बचनों व विश्वामों के कारण बिलकुल गन्दे और) अपवित्र हैं इसलिये यह लोग इस वर्ष के (सन् ६ रज्जरी) वाद से आदरणीय मस्जिद (अर्थात् कावे के स्थान) के समीप (तक) न आये।"

यहाँ विचार करिये कि जो कावा खुदा का घर कहा जाता है उसके पास तक सब धर्म वाले नहीं जा सकते। मुसलमान कितना ही मैला कुचैला और आचारहीन हा कावे में जा सकता है, मगर पवित्र से पवित्र और भगवारी हिन्दू कावे के पास तक नहीं जा सकता। यह है कुरान की शिक्षा जो मानव-मानव में घृणा उत्पन्न करता है।

इसकी तुलना म पवित्र वेद भगवान् हैं जो कहते हैं—

मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीहे।

"मै प्राणियों का मित्र की दृष्टि से देखूँ"

"यन्मिन्सर्वाणि भूतानि आत्मेवामृद्विजानतः"

ज्ञानी के लिये सब प्राणी आत्म समान होने चाहिये। रामायण में कहा है—

सिवाराम मय सब जग जानो,

करूँ प्रणाम जोरि जुग पानी।

अब न्याय कीजिये घृणा, भेद, मारकाट की शिक्षा ईश्वरीय उपदेश है या सबका आत्मवत् समझने का उपदेश। सब में भगवान् का प्रकाश देखने वाला (शेष पृष्ठ ३६ पर)





दीपावली

(रचयिता—श्री दयाराङ्कर मिश्र, 'सूर्य' पत्रकार, चौक फतेहपुर)

जहाँ पर दुधमुही भी पचिचर्चो विधवा कहाती हो ?
 दिनों म देखने खान के जा सदम उठाती हो ?
 जहाँ अत्रलाय लाया रक्त के आँसू बहाती हो ?
 जहाँ दुर्भाग्य की दुःखमय-लताये लहलहाती हो ?
 सुपद सौभाग्य श्री से जा अभाग्य देश खाली हो ?
 जहाँ काली अभावस हो, वहाँ कैसे 'दिवाली' हो ?

[२]

जहाँ गृह लक्ष्मिनी अविभाग म अपमान पाती हो ?
 सनन् सम्मान के स्थान म टुकरायी जाती हो ?
 निराशा की निबिड निशि म दुखद-बीचन पिताती हो ?
 अभाग्य हर्षस्थल म भी मातम ही मनाती हो ?
 प्री रहती हा नित सौभाग्य पर जिनके घटा काली ?
 मनाय वे दुखित ललनाये कसे 'सूर्य' 'दीवाली' ?

[३]

अभाग्ये रक ! पूजा लक्ष्मा जी की करे कसे ?
 जुधा ब्वाला से पावत है, कहा जीवन धर कैसे ?
 न घर म तल बापक ह, भयकर तम हरे कसे ?
 निराशा स तरे कसे, कहा धीरज धरे कसे ?
 जलाकर दीप मालाये दिखाये कसे उजियाली ?
 दर भी हा जहाँ खाली, वहाँ कसे हा 'दावाली' ?

[४]

रमा कैसे रमे, जब कि सभी व्यापार चौपट हैं ?
 मिठावट, चार बाजारी से सब बाजार चौपट हैं ?
 कमाकर पेट भरने के जहाँ आधार चौपट हैं ?
 कुशल कभी जहाँ पर न्याय के अविचार चौपट हैं ?
 जहाँ वाणिज्य के स्थान म केवल दलाली हो ?
 जहाँ निरुत्ता दिवाला हा, वहाँ कैसे 'दिवाली' हो ?





[५]

करे क्या अर्चना, 'श्री' तो जलधि वस पार जा बेठी ?
 रमा रम्यस्थली म आज आकर रकता बेठी ?
 जहाँ सम्पन्नता थी दीनता आसन जमा बेठी ?
 अभागी मालू भू गृहयुद्ध मे सर्वस्व गवा बेठी ?
 पतन लखकर हमारा पीटते हो शत्रु अब ताकी ?
 मनाये दश फिर दुखप्रद दशा मे कैसे 'दीवाली' ?

[६]

जहाँ हस्ती की किशती के लिये तूफान छाया हो ?
 देश के सामने जीवन मरण का प्रश्न आया हो ?
 कौम पर जालिमों ने दिन-दहाड़े जुलम ढाया हो ?
 विधर्मियों ने हडपने का जिन्हे बीडा उठाया हो ?
 जहाँ असमय म जीवन पुष्प हरता हो निटुर माली ?
 मनाये वे दुस्मित माताये कैसे आज 'दीवाली' ?

[७]

जगत म पूर्ववत् सम्मान जब तक पा नहीं सकते ?
 अनय अपमान के दृढ दुर्ग जब तक ढा नहीं सकते ?
 पतन के पार जब तक आत्म बल पर जा नहीं सकते ?
 पुन स्याई हुई सौभाग्य श्री को ला नहीं सकते ?
 अस्मिन् की तरह तब तक मना सकते न लुरियाली ?
 'विजय श्री' पायेगे जिस दिन, उसी दिन हागी 'दीवाली' ?

(प्रश्न ३४ का शेष)

“अखवते इ-स नी” मानवमात्र म भाईचारा सिखा सकता है या वह मत जा कि केवल मूर्ति पूजा के कारण नेरु से नेक मनुष्य का गन्दा बत वे, सुश्रक कहे ? कौन मानव धर्म कहलाने याग्य है ? क्या मुसलमान कत्र, ताजिजे, अलम, सगे अखद (काला पत्थर) नहीं पूजते ? फिर ये गन्दे क्यों नहीं ? केवल हिन्दू ही गदा क्यों ?

कुरान शरीफ की इस अमानवतावादी, मनुष्यों म घृणा द्र प फंजाने वाली शिक्षा के कारण ही भ्यामी जी न इसे ईश्वरीज्ञान नहीं माना और टटकर खडन किया । ★





गीता—ऋषि दयानन्द की दृष्टि में

[ले०—श्री प० राजेन्द्र जी अतरोली, अलीगढ़]

आर्य समाज में ऐसे बहुत लोग हैं, जिनमें कई विद्वान् भी हैं जिनको या तो यह भ्रम है कि ऋषि दयानन्द गीता को एक प्रामाणिक ग्रन्थ मानते थे, या वे अपनी मान्यता ऋषि की आड़ लेकर आर्यसमाज पर धोषणा चाहते हैं। अभी कुछ दिन पूर्व मेरे विचार और लेखों की आलोचना करते हुए ऐसा ही एक लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें ऋषि को बीच में लाकर गीता की प्रामाणिकता सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। उसका उत्तर मैं 'आर्योदय' और 'आर्यवीर', जालधर म दे चुका हूँ। ऐसे ही कुछ पत्र मुझे अन्य आर्य विद्वानों के भी प्राप्त हुए हैं।

इस सम्बन्ध में दो प्रश्न उठाने जाते हैं। (१) ऋषि दयानन्द ने गीता की कथा की और उसे पढ़ाया। (२) सत्यार्थ प्रकाश और सत्कार विधि में गीता के प्रमाण दिये हैं। इन दोनों पर सच्चे में यहाँ विचार प्रस्तुत करता हूँ—

१—ऋषि दयानन्द ने सन् १६१६-२० वि० में स्वामी विरजानन्द जी के यहाँ शिक्षा समाप्त की। स० १६२४ में हरिद्वार कुम्भ पर प्रचार आरम्भ करने से पूर्व वह दो वर्ष आगरा रहे और शेष दो वर्षों में ग्वालियर, जयपुर, पुष्कर, अजमेर आदि स्थानों में भ्रमण, प्राप्त धर्म ग्रन्थों का अध्ययन और उस समय के अपने विचारानुसार शास्त्र चर्चा करते रहे। आगरा में उन्होंने गीता की कथा की और उसे पत्र सञ्जन को पढ़ाया भी। वह इन दिनों सूर्य को अर्घ्य देते थे, शिव सहस्रनाम, दुर्गा सप्तशती को मानते थे और देवी भागवत का मठन करते थे। रुद्राक्ष की माला पहनते थे और उसका प्रचार करते थे जिसे पीछे आकर गुठली और रुद्र की आँख कढ़कर उपढास करने लगे थे। स० १६३१ में लिखे गये सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण के अन्त में ऋषि का निम्न विज्ञापन इस पर अच्छा प्रकाश डालता है। वह लिखते हैं—“मैंने अपने घर में कुछ वेद का पाठ और विद्या भी पढ़ी।

फिर नर्मदातट में दर्शन शास्त्रों को पढ़ा। फिर मथुरा में श्री स्वा० विरजानन्द सरस्वती दण्डी जी से पूर्ण व्याकरणदिक विद्याभ्यास किया जो बड़े विद्वान् थे। उनके पास रह कर सब शाका समाधान किये। फिर मथुरा से आगरा नगर में दो वर्ष स्थिति की। वहाँ ऋषि मुनियों के सनातन पुस्तक और नवीन पुस्तक भी बहुत मिले। उनका विचारा। फिर ग्वालियर में स्थिति की। वहाँ भी जो-जो पुस्तक मिले उनका विचार किया। जहाँ-जहाँ मुझको शाका रह जाती उनका स्वामी जी (दण्डी विरजानन्द) से उत्तर यथावत् पाया। फिर पुस्तकों को देख के एवत में जाके विचार किया। अपने हृदय में शाका और समाधान किये। सो यह ठीक ठीक निश्चय हृदय में हुआ कि वेद और सनातन ऋषि-मुनियों के शास्त्र सत्य हैं।” आगे ऋषि लिखते हैं कि मनुष्यों को इन्हीं वा अध्ययन करना चाहिये। अन्य ग्रन्थों के लिये वह कहते हैं—“न इनका पढ़े न पढ़ावे न इनको देखे क्योंकि इनका देखने वा सुनने से मनुष्य की बुद्धि विगड़ जाती है। इससे इन ग्रन्थों का ससार में रहन भी न देता बहुत उपकार हो। (ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन पृ० २१)।

यह लम्बा उद्धरण यहाँ इसलिए दिया है कि जिस समय ऋषि दयानन्द ने आगरा में गीता की कथा की उनके धार्मिक विचार अनिश्चित थे। यदि उस समय के विचारों को प्रमाण माना जाय, तो सिद्धांत सम्बन्धी बहुत सी उलझनें उठ खड़ी होंगी। स० १६२४ में हरिद्वार कुम्भ के पश्चात् कर्णवास (बुलन्दशहर उ० प्र०) निवास काल में वहाँ के स्वर्गीय प० भूमित्र शर्मा के मतानुसार वह उस समय गीता के अ० ७, १०, ११, १२ और शेष अध्यायों के अनेक श्लोकों को प्रक्षिप्त मानने लगे थे। यही विचार ऋषि ने स० १६२६ में अपने मिर्जापुर निवास के समय प्रकट किये थे।





सम्बन्ध १६२७ में वह गीता को त्रिदोष सन्निपात से उपमा देने लगे थे और कहते थे कि इसमें कहीं कुछ है, कहीं कुछ है। (प० देवेन्द्रनाथ लिखित वृहद् जीवन चरित्र पृ० २०३ २०४)। हरिद्वार कुम्भ सं० १६३६ में अवतारवाद खण्डन पर व्याख्यान देते समय एक पौराणिक पंडित के गीता के 'यद्वायदादि धर्मस्य' श्लोक का प्रमाण प्रस्तुत करने पर उन्होंने 'गीता को कल की राठ' कहकर उसका प्रमाण अस्वीकार किया (देखो 'आर्यवीर' जालन्धर अगस्त १६६१ 'गीता और ऋषि दयानन्द')। अन्त में अपनी जीवन लीला समाप्त करने से दो वर्ष पूर्व सं० १६३८ में रियासत बनेड़ा के राजा गोविन्दसिंह को उनके गीता का प्रमाण प्रस्तुत करने पर भी यही उत्तर दिया कि 'हम गीता का प्रमाण नहीं मानते आप वेद का कोई प्रमाण दीजिये' (प० देवेन्द्रनाथ कृत वृहद् जीवन चरित्र पृ० ६२० ६२१)। यहाँ हमने ऋषि दयानन्द के गीता सम्बन्धी वे सभी विचार जो समय समय उन्होंने व्यक्त किये क्रमबद्ध प्रस्तुत किये हैं। इनसे स्पष्ट है कि ऋषि के गीता सम्बन्धी विचारों में क्रमशः परिवर्तन हाता रहा और अन्त में वह उसे अप्रामाणिक और अमान्य मानने लगे थे।

२—ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश और सरकार विधि में गीता के कुछ श्लोक उद्धृत किये हैं, इसलिये वह प्रामाणिक है, यह एक ऐसी युक्ति है जो हमारे गीता पोषक विद्वानों के पक्ष की निर्धलता का प्रत्यक्ष कर देती है। ऋषि ने सत्यार्थ-प्रकाश में गीता के पांच उद्धरण दिये हैं, इन्हीं में से दो श्लोक सरकार विधि में भी उद्धृष्ट हैं। सत्यार्थ-प्रकाश की भूमिका में गीता (१८-३७) का श्लोकार्य देकर एक सर्वमान्य सत्य का, ज्ञा गीता का एकाधिकार नहीं है, उल्लेख किया है। समुल्लास ४ में गीता के दो श्लोक ब्राह्मण तृत्रिय वर्ण धर्म के (१८-४२, ४३) दिये हैं और वे भी मनुस्मृति के प्रमाणों के पश्चान्। जहा मनु ने वेद पठन पाठन, यज्ञ और दान, कर्त्तव्य कर्म बताये हैं वहा गीता इनका नाम तक नहीं लेता। इस प्रकार गीता की बर्ण धर्म व्याख्या जहा अपूर्ण है वहा वह

यह भी सिद्ध करती है कि गीता की दृष्टि में वेदाध्ययन और यज्ञकर्म कोई महत्व नहीं रखते।

गीता को वेद समर्थक मानने वाले हमारे विद्वानों की आखे खोलने के लिये यह भी एक प्रमाण है। समुल्लास ८ में, 'नासतो विद्यते भावोनाभावो विद्यते सतः' इत्यादि, (गीता २-१६) देकर एक अन्य सर्वमान्य दार्शनिक सत्य का निरूपण किया है, इसके लिए भी गीता के एकाधिकार की द्वन्द्वी पीटना महत्वहीन है। शेष दो श्लोक पूर्व पक्ष की ओर से प्रस्तुत किये गये हैं, जिनका ऋषि ने वेद विरुद्ध कहकर खण्डन किया है। पहला श्लोक समुल्लास ७ में, 'यदायदा हि धर्मस्य' (गीता ४-७) अवतारवाद का है। दूसरा समु० ६ में, 'यद्गुरुत्वा न निवर्त्तन्तेतद्गाम परममम ॥' (गीता १५-६) मात्र से पुनरावृत्ति न होना विषयक है। बर्णधर्म सम्बन्धी (गीता १८-४२-४३) उपयुक्त यही दो श्लोक सरकार विधि में मनु के श्लोकों के पश्चान् उद्धृत हैं।

यदि इस प्रकार के उद्धरणों को लेकर किसी प्रथ की प्रामाणिकता सिद्ध करना है तब उन शेष प्रथों के सम्बन्ध में क्या होगा जिनके उद्धरण सत्यार्थ-प्रकाश में दिये हैं और जिनको कभी आर्यसमाज ने प्रामाणिक नहीं माना। उन प्रथों के नाम मुनिये-चाणक्य नीति के २ उद्धरण, वृत्त चाणक्य ३, भोज प्रबन्ध-१, सिद्धान्त शिरोमणि १, तन्त्र श्लोक १, मैन्युपनिषद्-१, एक उपनिषद् वचन (प्रतीक नहीं है।) एक अन्य श्लोक जिसका प्रतीक नहीं है। अन्त में 'स्वसन्तव्या-मन्तव्य' में महुरि शतक १, जिसे सरकार विधि में भी दिया है। सरकार विधि में एक जाबालोपनिषद् का भी उद्धरण है।

अतः किसी ग्रन्थ में दिये गये अन्य प्रथों के उद्धरणों के आवार पर यह कहना कि वह प्रथ लेखक का पूर्णतया मान्य थे, एक उपहासजनक युक्ति है। इन उद्धरणों के सम्बन्ध में ऋषि ने क्या लिखा है, यह इस युक्ति की नि सारता सिद्ध करने के लिए पर्याप्त होगा—विज्ञापनम् १४, क्रम सं० ८३ पृ० ६४, ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन में लिखा—“सबको विदित हो कि जो जो बातें वेदों की और उनके अनुकूल हैं उनको मैं मानता हूँ विरुद्ध बातों का नहीं। इससे जो जो मेरे बनाये सत्यार्थ प्रकाश और सरकार विधि आदि ग्रन्थों में गृह्य सूत्र वा मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिये हैं,





दयानन्द-दिवाकर

उस रजनी में भारत भू की गौरव की गरिमा सोई थी।
तभी पिशाचिन बनी विदेशी गौरव, गरिमा छाई थी ॥
भारत भू आक्रान्त बनी सदियों से पराधीन ये थी।
अत्याचारों, अन्यायों से विषवा बनी विलसती थी ॥

पराधीनता रजनी से तदनन्तर तभी प्रभात हुआ।
आर्य-संस्कृति के प्राण्य में दयानन्द रवि उदित हुआ ॥

सदियों में साथे भारत में वैदिक धर्म प्रचार किया।
आर्य-संस्कृति हिन्दी भाषा, भारत गौरव गान किया ॥
भारत और विश्व में फले समो मता का नाश किया।
सभी असत्यों का रूखटन कर जग में वेद प्रचार किया ॥

आर्य संस्कृति का तदनन्तर जग में परम प्रकाश हुआ।
भारत ही क्या जगती भर में दयानन्द रवि दीप्त हुआ ॥

भारत में एक नई क्रांति की नई चेतना जाग उठी।
'स्व-राज्य' और 'भू राज' प्रगति की एक प्रेरणा जाग उठी ॥
विश्व बनाओ आर्य, भावना भारत भर में तभी मची।
किन्तु कहीं से तब तक भारत अभाग्य रजनीं आ पहुँची ॥

देव दयानन्द इस रजनी का चन्द्र दे गये 'आर्यसमाज'।
जिसका पूण-दय होने से पूर्व कर गये स्वयं प्रयाण ॥

—आदित्यपालसिंह आर्य बीर, नर्वदाट, होशंगाबाद (म०प्र०)

व उन ग्रन्थों के मतों को जानने के लिए लिखे
हैं उनमें से वेदार्थ के अनुकूल का माक्षिगत
प्रमाण और विरुद्ध का अप्रमाण मानता हूँ,
इत्यादि।”

ऋषि के उपयुक्त शब्द हैं, यह किसी ननुचन की
अपेक्षा नहीं रखने। यदि इतने पर भी गीता का प्रमाण
कोटि में रखने की कोई हठ करता है, तो हम उसे
आर्यजनता के न्याय पर छोड़ते हैं। एक बात और
लिखकर हम इस लेख का समाप्त करते हैं। ऋषि
दयानन्द के प्रामाणिक ग्रन्थों की दो सूची उपलब्ध हैं।
एक कानपुर और दूसरी बम्बई में दिये गये विज्ञापन
की। इन दानों में गीता का कहीं उल्लेखमात्र तक नहीं
है। महाभारत का है किन्तु वह किस रूप में—

(१) कानपुर—महाभारतम् २१, तत्र शिष्टाना जनाना
लक्षणं निसन्ति ॥ दुष्टाना जनानाञ्च ॥ अर्थ इसमें
शिष्ट और दुष्टतना के लक्षण दिये गए हैं।

(२) बम्बई—महाभारत का इतिहास मानते हैं।
उपयुक्त दानों सूचियों से स्पष्ट है कि ऋषि ने
महाभारत तक का केवल एक नीति और इतिहास ग्रन्थ
के रूप में स्वीकार किया है, धर्म ग्रन्थ स्वरूप में नहीं।
तब गीता के प्रामाण्य का तो कोई प्रश्न ही नहीं रहता।
महाभारत में इतना प्रक्षेप हुआ है कि उसका महत्त्व
पुराणों से अधिक नदी रह गया। इस तथ्य को ऋषि
न भी सत्यार्थ्यकाश एकादश समुल्लास में स्वीकार
किया है। अतएव गीता का ऋषि दयानन्द की
दृष्टि में कोई महत्त्व नहीं है, यह निर्विवाद है।





आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर

के
कुछ प्रमुख प्रकाशन

भारतीय समाज शास्त्रः—लेखक श्री धर्मदेव जी विद्या-मार्तण्ड। वर्णाश्रम व्यवस्था, आर्य सस्कृति, भारतीय समाज में स्त्रियों का स्थान इत्यादि विषयों पर अपने ढंग की अनूठी पुस्तक मूल्य २) रु०।
पुरुषार्थ प्रकाशः—लेखक स्वामी नित्यानन्द जी महाराज, गृहस्थ सन्वन्धी बातों पर गम्भीर ग्रन्थ मूल्य १॥) रु०।

उपनिषद्-संग्रहः—अनु० पण्डित देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री साख्य तीर्थ—इसमें ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तेतरीय, तेतरीय व छान्दोग्य उपनिषद् का सरल और सुबोध भाषानुवाद है। सराशिव सत्करण सजिल्द मूल्य ६) रु०।

महाभारत शिक्षा सुधाः—लेखक स्वामी ब्रह्ममुनि जी—महाभारत की उत्तमोत्तम शिक्षाओं का विराट् एवं मार्मिक विवेचन तथा आर्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन, सुन्दर तथा रंगीन गेटअप मूल्य १॥) रु०।

जीवन की नींवः—तप तथा त्याग का जीवन बनाने के साधनों से युक्त मूल्य २) रु०।

सत्संग यज्ञ विधि—लेखक धर्मेश्वर शिवहरे-यज्ञ करने में पूर्ण रूप से सहायक। विधि क्रमानुसार और मन्त्रों का सरल हिन्दी में अनुवाद—प्रचारार्थ मूल्य ६ आना।

श्री कृष्ण चरित—श्री भवानीलाल जी भारतीय—महाभारत, गीता, उपनिषद् पुराण तथा अन्य ग्रन्थों का मन्थन करके सिद्ध किया कि श्री कृष्ण जी परमयोगी, महान् राजनीतिज्ञ व वेद शास्त्री के विद्वान् थे। मूल्य ३) रु०।

धार्मिक शिक्षा—लेखक डा० सूर्यदेव जी शर्मा आर्यबालक बालिकाओं के पढ़ाने के लिए कक्षा १ से १० तक के लिए बहुत ही उत्तम पुस्तकें। १० भाग में मूल्य केवल ५) रु० ७ आने।

सरल सामान्य विज्ञान—भाग १ से ४ तक—लेखक डाक्टर सूर्यदेव जी शर्मा—सामान्य ज्ञान सन्वन्धी सभी विषयों से पूर्ण स्कूलों में पढ़ाने योग्य। मूल्य भाग १—1), भाग २—1=), भाग ३—1=) व भाग ४—1)।

चरक संहिता का नवीन भाष्य—डा० विनयचन्द्र जी वशिष्ठ व प० जयदेव जी शर्मा—प्रथम भाग मू० ८) रु०, दूसरा भाग मूल्य ८) रु० तृतीय भाग तैयार हो रहा है।

वैदिक इतिहास-विमर्श—ने० आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री मूल्य ८) सजिल्द, ७) अजिल्द।

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्या विनोद, विद्यारत्न, विद्या विशारद तथा विद्यावाचस्पति आदि परीक्षाये मण्डल के तत्त्वावधान में प्रतिवर्ष होती हैं, तथा सबमें उपाधि मिलती है। इन परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहाँ से भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं की पाठ्यविधि मुफ्त मंगावें।





गीत-

दीप मालिके

(रच०—श्री कुमुमाकर जी, फिरोजाबाद)



अमा की घोर निशा में रमा ! तुम्हारे नयन लज्जिले क्यो ?

लोक में विदित यही अपवाद,
शीश पर है पापों का भार ।
लगी मुख पर कालिख की रेख,
न जिसका हो सकता परिहार ।
घृणा की घटा उठी घनघोर,
न कोई करता जी भर प्यार ।
उलूकों के बाहन पर बिठा,
किया कैसा जग ने स्फार ।

‘विष्णु के चरण चापती रहीं, भाव मन के गर्बिले क्यो ?

निखिल जगती में है तम-तोम,
व्योम से बरसें ‘अनृत’-अगर ।
‘अभावों’ का है प्रबल प्रकोप,
‘अनय’ का उठता भीषण ज्वार ।
‘अविद्या’ की वहती वातास
भरा भूतों में भ्रष्टाचार ।
आपदाओं के दीपक दाम,
द्वेष को उद्योतित करते द्वार ।

अल रहा नैतिक-नीड़ निरीह, खिलौने खील सज्जिले क्यो ?

दीप - माता में कैसे, शोक ।
घात क्रीड़ा, तस्कर व्यापार ।
अधम धर्मों की लेकर आड,
सुरक्षा, सस्कृति का सहार ।
दम्भ - दानवता की है जीत,
मजु मानवता की है हार ।
तुम्हारे पुण्य - पर्व पर राष्ट्र,
पतन की पकड़े है पतवार ।

प्रथियों के कसने के समय, तुम्हारे बन्धन ढीले क्यो ?

नाट—वेसा मुझे ध्यान है कि शक्यता है महावीर, रामतीर्थ, स्वा० दयानन्द चारों का निवन दीयावली के दिन ही हुआ था ।

विश्व मे नास्तिकता का नृत्य,
निरन्तर होने लगा निराङ्क,
किया ‘राकर’ ने तीव्र विरोध,
बैठकर विमल वेद पय्यङ्क ।
तुम्हीं ने कमले ! ले करवाल,
किया क्यो क्रूर भृकुटि के बङ्क ।
हुआ है किसका तुमसे त्राण,
करे स्वागत क्यो राजा रङ्क ।

‘वीर जन गण्य से पूज्यो आज, तुम्हारे लोचन गीले क्यो ?

राम मे मैं हूँ, मुझ मे राम’
‘तीर्थ’ ने दिया दिव्य-सन्देश ।
‘तत्त्व एकत्व’ सिखाया शुभ्र,
‘द्वैत’ का रहे न मन में लेरा ।
देख तुम सर्की न दृग से दृश्य,
दिया भक्तों को कलुषित क्लेश ।
ले गई अनुपम विमल विभूति,
रहेगी शाश्वत स्मृति शेष ।

तुम्हारा यह नृरास व्यवहार वचन फिर भी तरजिले क्यो ?

विश्व के वैभव को दुःकार,
किया जिसने था जीवन-दान ।
धर्म का सत्य दिखाया रूप,
सुनाया ‘गुरु-गौरव’ का गान ।
पिला स्वातन्त्र्य-सुधा का सार,
किया हँस हँस कर विष का पान ।
हर्ष का कैसा पावन - पर्व,
हुए कितने दीपक निर्वाण ।

‘व्या-आनन्द’ विहीन विलाक, लोकरु मे भाव हठीले क्यो ?





एकता की भावना—भावना की एकता

(लेखक—श्री बा० पूर्णचन्द्र, एडवोकेट, भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा)



आजकल देश में अनेक प्रकार की फूट प्रचलित है भावा के आधार पर संघर्ष हो रहा है, जातिवाद पर भी कलह आधारित है। राजनीति के क्षेत्र में प्रान्तवाद प्रचलित है, यह जितने विवाद हैं, इनका यदि मिटाना है या समाप्त करना है ता इनके सम्बन्ध में मौलिक दृष्टिकोण से विचार करना आवश्यक है। यह प्रचलित विवाद जिनका उपर उल्लेख किया गया है अपना स्थान विशेष रूप से राजनतिक अधिकारों के सम्बन्ध में रखते हैं।

प्रजातन्त्र और वोट—

प्रजातन्त्र में विसको अधिकार मिलेगा इसका निर्णय वोटों की संख्या पर आधारित रहेगा जिसको अधिक वोट मिलेगे वह प्रबन्ध करने का अधिकारी होगा दूसरे शब्दों में मन्त्री बननेका, राज्य का अधिकारी बननेका और विधान बनाने का अधिकार भी उसको प्राप्त होगा। यह सब अधिकार बड़े आकर्षक हैं।

वोट और गुटबन्दी—

अधिक वोट प्राप्त करने के लिये गुटबन्दी या दलबन्दी बड़ी रोचक और आकर्षक विधि है। यदि एक एक वोट से सम्पर्क प्राप्त किया जाये ता बड़ा कठिन प्रतीत होता है। प्रसार के यत्न के लिये दलबन्दी का रूप देना पडता है इस रूप का ही नाम जातिवाद, सम्प्रदायवाद, भाषावाद और प्रान्तवाद है। कभी कभी जन्म सूचक जातियों के आधार पर वोटों का अपील करते उनका एक गुट या दल बना लिया जाता है और उस कुत्रिम आधार पर वोट प्राप्ति का यत्न किया जाता है।

प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में जब तक वोट की मात्रा पर और संख्या पर सफलता आधारित मानी जायेगी उस समय तक गुटबन्दी किसी न किसी रूप में प्रचलित रहेगी। यदि इस प्रकार की गुटबन्दी को बन्द करना है, ता प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में भी कोई नवीनरूप पर विचार करना होगा।



श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट
प्रजातन्त्र और उम्मीदवार—

यदि प्रजातन्त्र के आधार पर निर्वाचनों के कारण जो संघर्ष बढ़ रहा है उसे समाप्त करना है या मर्यादित करना है तो वोट देने वाले और मागने वालों में कुछ अन्तर अवश्य होना चाहिये। जा निर्वाचन में किसी क्षेत्र के लिये खड़ा हा उसके लिये शिक्षित हाना और सदाचारी होना आवश्यक माना जाये। कम से कम शिक्षा इतनी होनी चाहिये कि वह वाद विवादों में समझकर भाग ले सके। यदि कुछ सम्पत्ति की भी शर्त हा ता अच्छा होगा। सम्प्रति हर एक वोट उम्मीदवार बनकर खड़ा हो सकता है, उसमें योग्यता और अयोग्यता का कोई आधार नहीं रहता यदि कोई आधार रहता है तो केवल इस बात का कि कौन अधिक वोट समग्र कर सकता है। और इसी आधार पर बूझा टिकट दिये जाते हैं और इससे ही गुटबन्दी और कलह बढ़ती है।

प्रजातन्त्र और सद्भावना—

सम्प्रति जो प्रजातन्त्र का रूप प्रचलित है वह केवल संस्था पर आधारित है परन्तु प्राचीन समय के लेखक,





वर्तमान काल तक जितने राजनीति के विशारद और विशेषज्ञ हुए हैं उन सबका आधार यह रहा है कि सम्मति प्राप्त करने का अधिकार केवल युद्ध मानों और सदाचारियों को प्राप्त होना चाहिए। मनु के आधार पर ऋषि विद्वान् न सत्यार्थ प्रकाश के द सुनुल्लास में यह प्रतिपादित किया है कि १०० सूत्रों के मुकामले पर १० वार्षिक विद्वाना की सम्मति माननीय हानी चाहिए। इसी प्रकार की सम्मति फ्लेटो, सोक्रेटज और प्रस के रजिया की है। अमेरिका के प्रसिद्ध विचारक बिल टरान्ट ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मैनसप्ट औफ फिलासफी' में लिखा है कि "डिमा-करेमी टू बी सक्सेस फुल शुड बी फूल प्रूफ" अर्थात् प्रजातन्त्र की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि वह मूर्खों से सुरक्षित रहे। इसी प्रकार अमेरिका के प्रसिद्ध राजनैतिक विद्वान के विशारद लॉट वाइस ने लिखा है कि "रिपब्लिक्स फ्लेरिश वेयर वरचूअस प्रिवेल"। आश्चर्य यह है कि जय सप्त विशेषज्ञों की सम्मति है कि सम्मति का अधिकार ज्ञानवान, शिक्षित और सदाचारियों को ही मिलना चाहिए, हमारे देश में स्वराज्य प्राप्ति की नई उमग के कारण प्रजातन्त्र को धोर रूप में प्रचलित किया गया है और केवल आयु के आधार पर सम्मति देने और सम्मति मार्गने का अधिकार आधारित किया गया है, और जब इस प्रणाली के कारण फूट बढ़ रही है ता उसके मौलिक कारणों पर विचार न करके उपर से विचार किया जा रहा है। और यह आशा की जा रही है कि रोग का निराकरण हो जायेगा। जो सर्वथा निरावार है।

देश प्रेम या विश्व प्रेम—

राजनैतिक क्षेत्र में परस्पर प्रेम की भावना उत्पन्न करने के लिये केवल देश प्रेम की भावना पर्याप्त नहीं है। देश प्रेम के साथ साथ विश्व प्रेम की भावना आवश्यक है। विद्वान के आविष्कारों ने सारे विश्व को एक सूत्र में बांध दिया है। देश और काल की सीमाये समाप्त सी हो गई हैं, एक देश का दूसरे देश पर प्रभाव पड़ रहा है और इसलिये विश्व प्रेम या असार प्रेम की भावना का सचार आरम्भ से नागरिकों के हृदय में होगा तो उनके अन्दर सार्व-

जनिक प्रेम की भावना स्थायी रूप में बनी रहेगी, यदि केवल देश प्रेम की भावना का सचार हुआ तो वह भावना सीमित होकर प्रान्त या नगर तक सीमित हो जाती है और यही सङ्कुचित भावना प्रान्त वाद का रूप धारण कर लेती है।

विश्व प्रेम और ईश्वर की सत्ता में विश्वास—

विश्व प्रेम के साथ-साथ विश्व के विवादा, सचालक और व्यवस्थापक ईश्वर के सबब में भी आस्तिक भावना नागरिकों के हृदय में रहेगी ता न केवल एक देश के नागरिकों में आपस में परन्तु सारे देशों के नागरिकों और प्राणियों के साथ एक सार्वजनिक प्रेम की स्थापना का आधार हो जायेगा। और इसी प्रसंग में यह भी आवश्यक है कि जहा देश प्रेम के लिए 'वन्देमातरम' या 'जन मन गण' का प्रयोग आवश्यक समझा जाता है, सबसे आरम्भ में हर अवसर पर ईश्वर की वन्दना किसी न किसी रूप में अवश्य करनी चाहिए। तथा पृथ्वी माता की वन्दना होनी चाहिए।

एकता की भावना—

एकता की भावना उत्पन्न करने के लिये बड़े प्रयत्न हो रहे हैं। सरकार ने एक आयोग की नियुक्ति की हुई है और विचार के लिए सम्मेलन बुलाये जा रहे हैं। एकता की भावना के अभाव में द्वेष का भावना उत्पन्न हो रही है।

साथ ही प्रजातन्त्र के आधार पर निर्वाचन पद्धति के कारण द्वेष की अग्नि और भी बढ़क रही है, जिसको बुझाने का यत्न हो रहा है। इसके लिए यह आवश्यक है कि एकता की भावना जानने से पूर्व भावना की एकता उत्पन्न करने का यत्न करना चाहिए।

भावना की एकता—

भावना की एकता के सम्बन्ध में विचार करने के लिए यह समझ लेना आवश्यक है कि भावनाओं का सम्बन्ध मनुष्यों के हृदय या मन से है, मन ही सकल्प और विकल्प के उत्पन्न होने का स्थान है और यदि मानसिक जगत् की व्यवस्था विधि पूर्वक हो जाये तो वह भावनाओं की एकता की व्यवस्था हो

(शेष पृष्ठ ४७ पर)





दीपावली और द्यूत निषेध

[ले०-श्री डा० हरिदत्तजी शास्त्री एम ए अभ्युच्च संस्कृत विभाग, डी ए वी कालेज कानपुर]

देश के विभिन्न भागों में विभिन्न परम्पराओं के होते हुए भी दीपावली पर्व की सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक आत्मा एक है, यह पर्व समस्त देशवासियों के लिए एक नूतन उल्लास एक नवीन चेतना और एक जीवित स्फूर्ति एवं राष्ट्रीय एकता का असर संदेश लेकर प्रति वर्ष आता है। अंधकार में, आलोक की सृष्टि करने वाला यह महान पर्व हमोमयी तमिन्ना में विरोहित हमारे जीवन तथा राष्ट्र को नव ज्योत्सना से आलोकित कर दे, यही प्रभु से प्रार्थना है। साथ ही जुए की जो बुरी आदत है जिसके कारण कौरव पाण्डव कुलों का तथा अन्य कुलों का विनाश हुआ, एवं जिसका नग्न वर्णन ऋग्वेद ने इस प्रकार किया है कि पढ़ते हुए दिल धर्रा उठता है। वह बुरी आदत अब हमसे दूर हो जाय यह भी कामना है। जरा ऋग्वेद के जुआरी की कैसी बुरी दशा दिखाई है उसे देखिये।

माता पुत्रस्य चरत क्व स्थित् ॥

ऋणाभा विभ्यद्भिच्छ मानो ।

ऽन्येषामस्तमुप नक्त मेति ॥

अर्थात् जुआरी की स्त्री घर में बैठो पड़ताती है कि न मालूम आज मेरा पति कितना हार कर आयेगा क्योंकि वह उसके आभूषण छीनकर जुआ खेलने के लिए गया है। इसी प्रकार जुआरी की माता भी पड़ताती है कि न मालूम मेरा पुत्र किस दशा में होगा। वह उसके कुमार्ग से हटाने का जब प्रयत्न करती है तब जुआरी पुत्र उसे मार कर घर से बाहर निकाल देता है। वह बेचारी घर-घर में भटकती हुई घूमती है। और उसका पुत्र जब घर के वर्तन भांडे वंच चुकना है तब मकान गिरवी रखकर दूसरे से कर्ज लेता है। और कर्जदारों से डरता हुआ कुछकी करने वालों से मुँह छिपाता हुआ, घर से बाहर रहता है, भोजन का कुछ ठिकाना नहीं, भूखा रहकर दिन काटता है। जब रात में सब सो जाते हैं तब वह डरता डरता अपने

घरआता है-बोली बदल कर आवाज लगाता है, राखे में मिलने वालों से मुँह छिपाता है। घर पर आने पर देखता है कि कर्जदारों ने उसके घर की कड़ियाँ भी उतरवा ली हैं, और उसकी स्त्री व बच्चे भूख से तड़प रहे हैं पर वह व्यसनी इतना होने पर भी अपनी आदत से बाज नहीं आता।

अगले मात्र में जुआरी की भयंकर दुर्दशा का वर्णन ऋग्वेद का मात्र अन्वति कर रहा है।

स्त्रिय दृष्ट्वाय क्तिव तताप,
न्येषा जाया सुकृत च योनिम् ।
पूर्वाह्ने अश्वान् युयुजे हे बभ्रून,
सो आने रन्ते वृषल पपाद ॥ ऋक्

यह जुआरी जब दूसरे के परिवारों को हरा-भरा देखता है। तथा उनके परिवार को हँसी-खुरी में घूमता पाता है तो बहुत दुःखी होता है-इसी प्रकार उनके घरों को सजा हुआ देखकर व क्षिपा पुत्रा देखकर दुःखी होता है और बेचारा अपनी आदतों से इतना मजबूर है कि दिन निकलते ही जुआरियों की टोली में पुन-खडा हो जाता है और वहा पर पुनः पासे फँकता है जिसका फल मिलता है हार और अपमान। घर बिक जाता है वह सड़क के किनारे अग्नि जलाकर जाड़े की राते काटता है। ठिठुरता है वर्षा पड़ने पर घर के बिक जाने के कारण दूसरों की दीवारों के सहारे सारी राते बिता देता है, ऐसे अनर्थकारी, श्रुति-स्मृति निषिद्ध जुए का प्रचार दिवाली के दिनों में खुले आम होता है, जिसके निषेध के लिए वेद का यह अर्थवादात्मक वर्णन है।

आशा है दीवाली के पावन दिन में जुआरी व चोर इससे कुछ शिक्षा अवश्य ग्रहण करेंगे। राष्ट्र को द्यूत की इस बुराई से मुक्त करने का सक्रिय प्रयत्न करना प्रत्येक राष्ट्र दिवैवी का परम कर्तव्य होना चाहिये।



म

मा

ह

हि

र्षि-म



[रच०— श्री लालरुनसिंह भदौरिया, मैनपुरी]

सत्य से जन्मे, हुए तुम सत्य में लयमान ।
बन गया जीवन तुम्हारा सत्य का अभियान ।

एक मूषक ने जगाया, उग्र रुद्रापोह,
जन्म के सग क्रान्ति लाया, सत्य का विद्रोह,
बाध पायी थी नहीं, पितु मोह की जजीर ।
मातु की ममता बहाती रह गई दग-नीर ।

तुम छुड़ाये पीति गगा, बन गये चट्टान ।
था तुम्हारे सामने, इस विश्व का कल्याण ।

व्यष्टि के व्यक्तित्व में, बाये समष्टि विवेक,
तुम युगों के वाद आये, एक केवल एक ।
क्रान्तिदर्शी दृष्टि झाकी, पार युग के पार ।
सृष्टि की सुख-शान्ति का सपना लिए साकार ।

देश के अन्तिम पतन में तुम प्रथम उत्थान ।
पूर्व के उगते अरुण, मध्याह्न के दिन मान ।

वेद की गगा मरस्थल में गई थी सुख ।
था तिमिर वह व्याप्त, भूपर थी न एक मयूख ।
थे घुटन में मनुजता के छटपटाते प्राण,
कर रहा था विश्व, वैदिक वायु का आह्वान ।

तुम उदय के साथ लाये, प्राण का पवमान ।
पा गये जिससे पुन निष्प्राण भी नव प्राण ॥

बर लिए अभिशाप सारे, तज दिये बरदान ।
विश्व का अमृत पिलाकर, खुद किया विष पान ।
फूल बाटे विश्व को, पा शूल के प्रतिदान ।
हैं तुम्हारे अनगिनत, अहसान पर अइसान ।

भूल सकता कौन तुमको देव, अद्धावान ?
तुम हुए माँ भारती के क्रान्ति पुत्र, महान ।



महर्षि की भविष्यवाणी की सफलता

(ले०—श्री मोहनलाल जी मं दि०, बाबेनींग सेपियेर मौरिराश)

महर्षि दयानन्द जी प्रोक्त सत्य धर्म के प्रवचन-प्रचारक और असत्य कल्पित मत पथों के विपुल विदारक थे। वेद धर्म का उच्चतम मानवता का प्रवचक तथा सर्व प्राणिमात्र का हित रक्षक है, उसके ही प्रचार एवं प्रसार में महर्षि ने अपना सर्वश्रेष्ठ बलिदान दिया।

सत्य धर्म के प्रचारार्थ महर्षि को असिधारा पर चलना पड़ा था। सत्य व्रत के परिपालन में उनको अनेक सकट सहने पड़े, विरोधियों का विराध एफ तरफ और दूसरी ओर से रजवाडों का प्रलोभन, दोनों सम्मिलित वारों का प्रतिवाद करना महर्षि दयानन्द का ही काम था। महर्षि सत्य पथ पर अचल और अडिग रहे तथा बड़ी निर्भीकता से आगे ही बढ़ते रहे।

धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं राजनैतिक सभी क्षेत्रों में आपकी अनुपम प्रतिमा थी। साथ ही ऋषि का दृष्टिकोण उदार और विशाल था। "सत्यमेव जयते" पर आपका अटूट विश्वास था। तभी तो सत्याथे प्रकाश की भूमिका में ऋषि ने लिखा है "मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य, सत्य अर्थ का प्रकाशन करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाशन समझा है।

पुन आगे मैं पुराण, जिनियों के ग्रन्थ, वायविल और कुरान को प्रथम ही बुरी दृष्टि से न देखकर उनमें से गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग तथा अन्य मनुष्य जाति की उन्नति के लिये प्रयत्न करता हूँ, वैसा सबको करना योग्य है। इन कथित पक्तियों में महर्षि ने विश्व मानव के कल्याणार्थ सत्य का ग्रहण और असत्य परित्याग का स्वर्गीय सन्देश दिया है।

और अर्बेदिक कुप्रवृत्ति का ऋषि ने प्रबल खण्डन भी किया है। निम्न अर्बेदिक प्रवृत्तियों का खण्डन है, जैसे मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, बाल विवाह, बहु विवाह, बहु देवतावाद, अनार्य शिक्षा प्रचार, स्त्री शिक्षा का अभाव, छुआछूत, जन्म जात से वर्ण धर्म, मतपन्थ का आढम्बर, अनुदार हृदय, मिथ्याभि-



श्री मोहनलाल जी माहिन

मान इत्यादि। और इन सद् प्रवृत्तियों का मखण्डन किया है, अग्निहोत्रयज्ञ, माना पिता गुरु आदि की श्रद्धापूर्वक सेवा-शुभ्र पूजा, युवा विवाह, एकेश्वर पूजा, एक परनीव्रत, अनिवार्य शिक्षा प्रचार, बालक बालिका की, गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था, मानवमात्र से सद्व्यवहार, उदार एवं विशाल मानव धर्म का प्रचार इत्यादि।

उपर्युक्त विषयों पर महर्षि दयानन्द जी का खण्डन-मखण्डनात्मक प्रचार का प्रबल प्रभाव पड़ा है। भारत का गत पौन शती का धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक और राजनैतिक इतिहास साक्षी है। धार्मिक, सामाजिक क्षेत्र में तो युगान्तरकारी क्रान्ति हुई। राजनैतिक जगत का काया कल्प ही हो गया। धर्मोपदेश और शिक्षा प्रचार से धर्मान्धता और मतपथों का दुराग्रह अन्त नहीं रहा। धर्म का ढोंग रचकर धान्तेवाजी का समय समाप्त हो गया। भारतीय जनता नव जागरण युग में है, स्वतन्त्र भारत बाल भानु के आकाश-प्रकाश के स्वच्छ-सांस्कृतिक सुखद समार में श्वास लेने लगा है।

अन्ध विश्वास की नींव उखड़ चुकी है, उनमें सदा वैक आनं लगा है। उन्हें निश्चय हो गया है कि रा-विश्वास, सतर्क विचारयुक्त सद्व्यवहार ही धर्म का मूल है। साहित्यिक क्षेत्र में भी सार्थ सावन की





लीपावानी और अनिशयाक्ति का युग चला गया। वर्तमान में प्रत्येक पुस्तक के प्रत्येक अध्याय, परिच्छेद, तथा प्रति पृष्ठ के प्रकरण पक्ति और शब्द पर स्तर्क खानचीन करने के लिये समर्थ समालोचक तैयार रहने हैं। इस प्रकाश के युग में समर्थ समालोचक की तर्क तलवार में शर्य की गर्दन की खैरियत नहीं रही।

राजनैतिक जगत् में युगान्तरकारी परिवर्तन हो रहा है। प्रत्येक देश और लघु उपनिवेश भी बनन मुक्त होकर स्वतन्त्रता के आकाश प्रकाश में वायु रंग में प्रगति चाहता है। और यह है भी ठीक कक्षा में स्वतन्त्रता मानव समाज का जन्म सिद्ध आरिफार है।

आज से एक शती पूर्व महर्षि दयानन्द ने भगिण्य बाणी की थी काई किनना ही करे परन्तु जा स्वशा राज्य हाता है वह सर्वोपरि उत्तम हाता है। न्याय और दया के साथ विदेशों का राज्य भी पूर्ण सुवदायक नहीं है।" इस अनुपम स्वर्गीय सत्य का प्रत्येक देश के विकसित हृदय और परिष्कृत मस्तिष्क, विवेकशील मानव एक शी के अन्दर ही ऋषि की बाणी में अपनी भौतिक मुक्ति अनुभव करने लगे हैं। इसी प्रकार आगामी एक शती में महर्षि दयानन्द का अध्यात्म मार्ग विरत्र धर्म का अध्यात्म मार्ग होगा, ऐसा अनक योगात्माओं का आदेश है।

एकता की भावना ...

(पृष्ठ ४२ का शेष)

जायेगी। हृदय के जगत् की व्यवस्था के लिये यह समझ लेना आवश्यक है कि बों तक न रात्रनियम की बृहत् है और न लोक नियम की। यह दोनों प्रकार के नियम वाहरो जगत् तक अर्थात् किये हुए काम या कहीं हुई वान तक प्रभावर रख सकते हैं। वान कहन या नम करने का विचार हृदय जगत् में आरम्भ हाता है और वहा नैवल दार्शनिक नियम ही लागू हा सकते हैं। हृदय मन्दिर ही वह स्वान ई जगत् श्वर और जीव का समन्वय है और वही से सारे जीवन की प्रणाली सचालित और मर्यादत हाता है।

परस्पर की कलह का मिटाने के लिये यह आवश्यक है कि भावना की एकता लाई जाये और उसके लिए मनुष्य के स्वभाव का मर्यादित किया जाये। यह धर्म और राजनीति और नैतिक शास्त्र का प्रश्न है। केवल राजनीति जगत् में इस पर विचार करने के लिए और मनोविज्ञान और धर्म के दृष्टिकोण से विचार करना होगा, उपरोक्त रीति से विचार किया गया तो समस्या का समाधान थार्ई रूप से हो जायेगा।



लक्ष्मणधारा

* * * हमेशा पास रखिये

हैजा कैं, वस्तु पेट का दर्द, जी मिवलाना, कफ, खोसी, जुकाम मदाग्नि, ज्वर आदि रोगों में गुणकारी है जिससे प्रतिवर्ष देश विदेश के लाखों रोगी लाभ उठाते हैं।

हर जगह मिलता है **स्प बिलासकम्पनी का पुर**



विशेष हाल जानने के लिए सूची-पत्र मुफ्त भगाकर देखिए।

—आर्य समाज नानापेट, पूना का निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ—

प्रधान—श्री ही० जी० बन्धु

मन्त्री—श्री दशरथ श्रोत्रि

—आर्य समाज वजीरगज, गोडा का नवीन निर्वाचन श्री कृष्णाष्टमी को निम्न प्रकार हुआ—

प्रधान—श्री रामदेव आर्य

मन्त्री—श्री रामजियावनलाल आर्य

आर्य समाज और गावाड पोंगड-

मीरपुर जिला सदरानपुर का चुनाव—

प्रधान—श्री सिंह

मन्त्री—मा० मोहनचतसिंह

कोषाध्यक्ष—पितम्बरसिंह





उत्सव समाचार—

आर्यसमाज दीवानहाल का

७७ वां वार्षिकोत्सव

आर्य समाज दीवानहाल दिल्ली का ७७ वा वार्षिक महोत्सव दिनांक १-२ व ३ दिसम्बर को समारोहपूर्वक गांधी मैदान में सम्पन्न होगा। इस अवसर पर अनेक महत्वपूर्ण सम्मेलनों का आयोजन किया जायेगा, जिनमें देश के गण्य मान्य साधु महात्मा तथा विद्वान् नेता पधारेंगे।

उत्सव से पूर्व दिनांक २३ नवम्बर से आर्य जगद् के प्रसिद्ध विद्वान् श्री आचार्य कृष्ण जी महाराज वेद विषयक कथा किया करेंगे।

आर्य समाज दीवानहाल का नगर कीर्तन का जलूस अपनी विशालता और भव्यता की दृष्टि से समस्त भारत में प्रसिद्ध है। इस वर्ष यह जलूस ता० २६ नवम्बर का राजधानी के मुख्य मुख्य बाजारों में से होकर निकलेगा। —रामगोपाल मंत्री

संस्कार समाचार—

—आर्यसमाज भारत नगर गाजियाबाद के तत्वाचान में आर्यसमाज के पुस्तकाध्यक्ष श्री उल्कतरायजी के सुपुत्र का नामकरण संस्कार दि० ८ १० ६१ को श्री प० तीर्थराम जी के आचार्यत्व में समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ।

बालक का नाम चि०सुरशीलकुमार रखा गया। उरस्थित सज्जनों ने बालक को शुभाशीर्वाद दिया।

—सत्यपाल उपमन्त्री



मस्तिष्क एवं हृदय

सम्बन्धी ब्रह्मकर पागलपन, मृगी, हिस्टीरिया, पुराना सरदर्द, प्लह प्रेशर, दिल की तीव्र धड़कन, तथा हार्दिक पीडा आदि सम्पूर्ण पुराने रोगों के परम विश्वस्त निदान तथा चिकित्सा के लिए परामर्श कीजिए—

कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री आयुर्वेदाचार्य घन्वन्तरि

मुख्याधिष्ठाता, कन्या गुरुकुल, हरिद्वार
मुख्य सम्पादक—“शक्ति-सदेश” साप्ताहिक, कनखल
संचालक—आयुर्वेद शक्ति-आश्रम कनखल
पो० आ० गुरुकुल-कागडी, (सहारनपुर)
फोन न० कार्यालय ६०, निवास ७७



हमेशा पास रखिये, सर्वोत्तम कान के रोगों की अकसीर दवा।

अवश्य पढ़िये **कर्ण रोग नाशक तैल** रजिस्टर्ड

कान बहना, शब्द होना, कम सुनना, दर्द होना, खज आना, सांय-सांय होना, मवाद आना, कुलना, सीटी सी बजना, आदि कान के रोगों में अत्यन्त गुणकारी है। जिससे प्रति वर्ष देश विदेश के हजारों रोगी लाभ उठाते हैं। कीमत १ शीशी १।), [पैकिंग पोस्टेज १।।] छे शीशी मँगाने से खर्चा फ्री। १ दर्जन पर ४ शीशी और ३ दर्जन पर १५ शीशी कमीशन की अधिक भेजी जावेगी। आज ही लिखकर भेगाइये।

पता—कार्यालय 'कर्ण रोग नाशक तैल' सन्तोमालन मार्ग
नजीबाबाद यू० पी० • • • NAJIBABAD U P.

मोटे सफेद कागज पर सुन्दर नये टाइप में

स्थूलाक्षरसटिप्पणसत्यार्थप्रकाश

(पृष्ठ सं० ६००—साइज १२"×१०"—कपड़े की जिन्द)

मूल्य १३ ००

सत्यार्थप्रकाश सस्ता संस्करण

(टाइटल पर दुरंगा ऋषि चित्र)

मूल्य २ ००

वैदिक साहित्य सदन—२।३१, रूपनगर दिल्ली—६





आर्यसमाज को महान् दायित्व पूर्ण करना है

[ले०—श्री नरदेव जी शास्त्री वेदोर्थ, कुम्भपति गुरुकुल महाविद्यालय जवालापुर]

मनु भगवान् कहते हैं—

फल कतकृत्यस्य, यद्यप्यन्वु निवारकम् ।
न नाम-ग्रहणादेव, तस्य वारि प्रसिदति ॥

निर्मली का बीज गदले जल को शुद्ध करने की शक्ति रखता है पर खाली निर्मली, निर्मली के नाम लेने से तो गदला जल स्वच्छ नहीं होता। उस निर्मली के बीज को रगड़कर स्वच्छ जल में घोलकर उस गदले जल में मिलाना पकता है तब कहीं गदला जल थाड़ी देर में स्वच्छ होने लगता है, तब कहीं गदले जल का गाढ़ नीचे बैठने लगता है।

हम आर्य समाजी

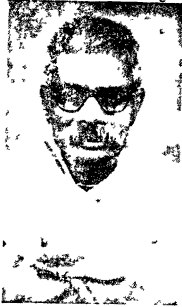
अभिमान के मारे अपनी प्रशंसा अपने आप अपने मुख से कहने, अपनी ही लेखनी से लिखने में नहीं आघाते हैं। अपनी प्रशंसा में कहे गये उद्गारों को सुनकर फूले नहीं समाते हैं। अपनी भूतकाल की क्रियाओं पर मस्त हैं पर यह नहीं समझ रहे हैं कि हमारा भूत कितना ही महान् क्यों न रहा हो हमारा भविष्य अन्धकारमय होता जा रहा है—हमारा वर्तमान हमारी उन्नति में सहायक नहीं हो रहा है—यह सब विचारणीय है—क्या हमारे आचरण “कृत्वन्तो विश्वमार्यम्” के अनुरूप हैं। “कृत्वन्तो विश्वमार्यम्” के लिए कितनी शक्ति अपेक्षित है? यह भी कभी सोचा।

क्या खबर है कि

हमारे सम्मुख कितना बड़ा काम पड़ा हुआ है। यह माना कि सप्तरा के अष्ट बण्ड पाखण्डों के टुकड़े टुकड़े करने में हमने बड़ा काम किया। वह तो एक निषेधार्थक काम था।

अब क्रियात्मक

काम सामने है। यदि वैदिक धर्म को क्रियात्मक विश्व व्यापी सार्वभौम धर्म बनाना है तो अपने बालकों को वेदशास्त्री की शिक्षा दो। उनका अन्त्रे



—आचार्य श्री नरदेव जी शास्त्री—

वेदज्ञ, दर्शन शास्त्री बनाओ। आर्यसमाज के पास बौद्ध धर्मानुयायियों के सदृश सहस्रा आर्यभिक्षु सन्यासी विद्वान् पण्डित हो और वे श्रद्धापूर्वक त्याग तपस्या द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार के लिए चारों दिशाओं में फल तब होगा सार्थक हमारा “कृत्वन्तो विश्वमार्यम्” का नारा, उद्घोष या महानाद—

अब तो

हमारा समाज छोटी छोटी बातों में अपनी शक्ति खर्च कर रहा है।

आर्यों में

तीन प्रकार की शक्ति का सचय हो तब “कृत्वन्तो विश्वमार्यम्” बने। आर्य लोग शीर से पचवान् बन, आर्य लोग मन से दृढ़ प्रतिज्ञा, आर्य लोग



संमलित प्रयत्नशील है, आग लाग पूर्य, ऐश
अध्यात्मभाव और अध्यात्मशक्ति सम्पन्न है,
जगच्छब्ध" साथ चलें, "सर्वध्वम्" एक स्वर हो, "स
वा मनसि जानताम्" एक मन हो जैसे "देवा भागम्"
हमारे पूर्वजों के अतिपूर्वज और उनके भी अतिप्राचीन
पूर्वज करते थे। हमारा "कृत्वन्तो विश्वमार्यम्" तब
सफल होगा जब हमारे "समानी व आकृति." हमारे
अभिप्राय एक से हों, जब हमारे हृदय "समाना
हृदयानि वः एक से हों, समानमस्तु वा मन." हमारे
मन एक से हो और हों हमारा वेदोद्धार के लिए "यथा
व. सुसहासति" एकत्र बैठकर होकर टढ़ विचार करने
की टढ़ भावना ।

यह युग है विज्ञान युग

यह युग है विज्ञान युग—वह भी पाश्चात्य ढंग
का । यह विज्ञान युग, भौतिकवाद को सिर पर लेकर
नगा नाच नाच रहा है । लोगों को नास्तिकता की
आर ले जा रहा है, ससार को "महती विनष्टि" महा
विनाश की आर ले जा रहा है । देखते नहीं कि ससार
किस प्रकार अशान्ति का अखाड़ा बनने जा रहा है—
यह विज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण और प्रयोग ने जो बात
सिद्ध हो उसी को मानता है । हमारे सम्मुख इस
विज्ञानवाद की चंचलता और भौतिकवाद के कलह
उपरूप पकड़ कर आ रहे हैं । इन सबको हमें शान्त
करना है । असली सत्य क्या है, कहाँ है, किसमें है
इत्यादि का सत्य स्वरूप हमें ससार के सम्मुख रखना
है—असली सुख क्या है, कहाँ है, किस प्रकार मिलेगा
यह हमें अशान्त ससार को समझना है जो कि आँख
मँदकर भौतिकवाद के पीछे दौड़ रहा है । इस कोरे
भौतिकवाद की हम तभी कमर तोड़ सकेंगे जब हम
अध्यात्मशक्ति प्रवण होंगे और तभी समस्त संसार
हमारी आर आकृष्ट होगा । तभी हमारा नारा
"कृत्वन्तो विश्वमार्यम्" सफल होगा ।

हमें संसार को छान्दोग्योपनिषद् के शब्दों में स्पष्ट
बतलाना है कि हे नसारी लोगो ! सुख सच्चा सुख है
सच्चे बड़े सुखस्वरूप भगवान् मे जिसको 'भूमा' कहा
जाता है, क्योंकि वह सबसे बड़ा है। उसी की आर
जाना है। सांसारिक छोटे छोटे पदार्थों के पीछे पड़े

आओ दीपावलि आओ !

आओ दीपमालिका पहिने, सोई अन्तश्चली जगावो ।

आओ दीपावलि आओ

अन्ध तिमिर का बन्ध चीर कर

उरपीडन की दुखद पीर हर

जगमग जगमग जगती सारी

आकर तुम चमकाओ—आओ

वह रामराज्य की पावन स्मृति

होती नहीं कभी जो विस्मृत

महाशक्ति का रूप अद्विग ले

नव साहस भर लाओ । आओ

रुद्रा तमसो मा ज्योतिर्गमय

होती असत पर सत की विजय

वन प्रकाश स्तम्भ अद्विग तुम

कण - कण पुन जगाओ—आओ

ऋषि का यह बलिदान पर्व है

ज्योतिष जिससे विश्व सर्व है

सन्देश अटल ज्योतिर्मय उनका

अणु अणु तक पहुँचाओ—आओ

उद्यान विश्व अवरिल यह फूले

वैभव सम्पत्ति घर घर भूले,

शक्ति सुधा मकरद पयोनिधि

कण कण मे सरसाओ—आओ

उच्च निम्न का भेद हटे सब

नाम असित वैषम्य मिटे अब

दे आलोक नवल जगती को

भटकी राह दिखाओ—आओ

—गिरिशारङ्कर शुक्ल "शङ्कर"

हुए भौतिकवादियों, इन छोटे छोटे पदार्थों में सच्चा
सुख कहाँ । उस "भूमा" को जानना हो तो आओ
वेदों की आर क्योंकि अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों
वेदों ही से सिद्ध होंगे । छान्दोग्योपनिषद् का वाक्य इस
प्रकार है—"यो वै भूमा तस्मुख, नाल्पे सुखमसि ।
भूमा स्वेप विजिज्ञासितव्य." ऋषि दयानन्द के मिशन
का यही चरम लक्ष्य था उसी को सफल बनाना आर्यों
का पवित्र कर्तव्य है ।

महर्षि दयानन्द का देवत्व

असत्य का खण्डन भी आवश्यक

(ले०—श्री ५० धर्मदेव जी विद्या मार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ)

प्रधान सार्वदेशिक धर्मार्य सभा—गुरुकुल कागड़ी

ऋग्वेद ७ ६६-१३ में एक मन्त्र आता है, जिसमें देवों का लक्षण इन महत्त्वपूर्ण शब्दों में बताया गया है।

“ऋतावान ऋत जाता ऋतावृषो घोरासो अनृत द्विषः।” अर्थात् देव (ऋतावान) सत्य का व्रत धारण करने वाले (ऋत जाता) सत्य के कारण प्रसिद्ध (ऋतावृषः) सत्य को सदा बढ़ाने वाले—सत्य के समर्थक और (घोरासः अनृत द्विषः) असत्य व भ्रूट के घोर द्वेषी विरोधी, असत्य का प्रबल खण्डन करने वाले होते हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में “सत्यमयाउदेवा” (कौषीतकी ब्राह्मण २।८) “सत्यं संहिता वै देवा” (ऐत० १ ६) “विद्वांसोहि देवा” (शानपथ ३ ७ ३ १०) इत्यादि वचन पाये जाते हैं। जिनमें सत्यनिष्ठ विद्वानों को देव के नाम से पुकारा गया है। परन्तु वेद में सत्य के समर्थन के साथ असत्य का घोर खण्डन भी विद्वानों का कर्त्तव्य बताया गया है। महर्षि दयानन्द पर वेदोक्त देवों का यह लक्षण पूर्णतया चरितार्थ होता है। इसी द्वेषः से प्रेरित होकर महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश लिखा जिसकी प्रारम्भिक भूमिका में उन्होंने स्पष्ट कहा कि—

“मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन, सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है—अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य, और जो मिथ्या है उसका मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा दे।

इसलिए विद्वान् आपो का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दे। पश्चात् वे स्वयं अपना दिवाहित समझ कर, सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।” इत्यादि।

महर्षि दयानन्द के अनुयायी आर्यों के अन्दर यह सत्य के मण्डन और असत्य के खण्डन की भावना

पहले जितनी प्रबल थी अब उतनी प्रबल प्रतीत नहीं होती। पुराने आर्य सत्य सिद्धान्तों को जानने के लिए स्वाध्याय किया करते थे। और असत्य के निराकरणार्थ मौखिक व लिखित शास्त्रार्थ आदि साधनों का आश्रय लेते थे, जिससे पाखण्ड की अधिक वृद्धि न होने पाती थी और ऐसा करने से लोगों को भी मय व सकाच होता था।

लेकिन अब कौ तो आर्यों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति कम हो गई है जिससे बहुत से लोगों को तो सिद्धान्तों का ज्ञान ही नहीं है। और जिनको है उनमें से बहुत कम के अन्दर यह योग्यता और लगन है कि वे असत्य और पाखण्ड का युक्ति युक्त खण्डन निर्भयता से कर सकें। इसका परिणाम यह हो रहा है कि देश में असत्य तथा पाखण्ड की वृद्धि होती जा रही है। क्योंकि अब लोगों को प्रायः आर्यनमाज जैसी सत्या का मय नहीं रहा जो निर्भयता से असत्य का खण्डन करेगी, और आवश्यकतानुसार शास्त्रार्थ के लिए ललकारने में भी सकाच न करेगी।

कितनी ही पाठ्य तथा अन्य पुस्तकों व पत्रिकाओं में वेद, वैदिक धर्म, वैदिक सस्कृति तथा प्राचीन शास्त्र आदि विषयक अशुद्ध बातें निशङ्क लिखी जाती हैं, और आर्य विद्वानों द्वारा, उन पुस्तकों और लेखों की प्रायः उपेक्षा के कारण पाठकों और युवक वर्ग में भ्रम फैलता है यह उचित ही है कि मतभेद होने पर भी, कटु कठोर और चुभने वाले अनुचित शब्दों का प्रयोग न किया जाय। किन्तु युक्तियुक्त प्रभावजनक शब्दों में सप्रमाण असत्य और पाखण्ड का निवारण भी आवश्यक कर्त्तव्य है चाहे वह कुछ अभिय भी लगे।

अतः सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के, सर्वसम्मति





‘कर्णवन्तः! श्रूयताम्’

[ले०—श्री प० रामनारायण जी शास्त्री, आर्यनगर बिन्दकी]
[सदस्य आ० प्र० समा, उत्तरप्रदेश]

पुत्रम कारुणिक ज्ञान के स्रोत प्रभु ने मानव मात्र के लिए अपनी पवित्र कल्याणी वाणी(वेद) द्वारा अनेकों सुखद संदेश देते हुए कहा है कि “श्रुधि श्रुत श्रद्धेयम् तेवदामि” (अथर्व) “हे श्रवण शक्ति वाले मानव ! सुन, अगर तू दिव्य उपदेशों को सुन सकता है। मैं तुम्हसे श्रद्धेय वचन कहता हूँ” परमपिता परमेश्वर नाना प्रकार की सृष्टि से अपने प्यारे पुत्रों के लिए निरन्तर उपदेश दे रहा है और देता रहेगा किन्तु हम कर्णवन्त होकर भी बहिर हैं। ठीक ही है “उतत्व-पर्यन्न ददर्शा वाचमुत्तरवः श्रुवन्न श्रुणोत्येनाम्” ऐसे हम सहस्रो हतभास्य मनुष्य हैं जो देखते हुए नहीं देखते, सुनते हुए भी नहीं सुनते, तो फिर जिसकी यह स्थिति हो जाय, कैसे सुने और कौन सुनाये। यह ता बड़ा भयकर रोग है उसकी चिकित्सा भी कैसे की जाय, क्योंकि जा औषधि दी जाती है वह उसके भीतर ही नहीं पहुँचती, उसे तो वह वमन कर देता है बाहर निकाल देता है, ऐसी स्थिति में रोग असाध्य या दुःसाध्य सा प्रतीत होता है। हा यदि औषधि अन्दर पहुँचने लगे और औषधि पच जाय तो रोगी रोगमुक्त होकर स्वस्थ भी हो सकता है और वह कुछ काम भी कर सकता है।

अतः औषधि प्रवेश (उपदेश ग्रहण) का प्रयत्न सर्वप्रथम आवश्यक है।

से गत ऽ अकट्टवर का नई देहली में निर्वाचित प्रधान के रूप में समस्त आर्य विद्वानों का ध्यान इस और आकृष्ट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ, कि वे युक्ति युक्त सप्रमाण यथा सम्भव कोमल किन्तु स्पष्ट प्रभावात्पादक शब्दों द्वारा, असत्य और पाखण्ड के खडन करने में मद्भाग न करे। असत्य का निराकरण भी देवत्व का एक आवश्यक अंग है।

आज हम बड़े बड़े उपदेश व्याख्यान कथार्थ प्रवचन आदि सुनते हैं परन्तु उस पर आचरण नहीं करते, सुन कर, समझ कर भी उसकी उपेक्षा (अनसुनी) कर पालन नहीं करते। तो फिर उत्तम से उत्तम उष्कोटि के विद्वान् महात्माओं का उपदेश हमारे लिए क्या लाभ पहुँचायेगा।

पाठकगण विचार करें कि यह कितना भयकर सक्रामक रोग है जो कि निरन्तर दुतगत्या प्रवृद्ध होता जा रहा है। प्रायः समस्त विश्व के मानव विशेषकर भारतीय जनता तो इस रोग का शिकार ही हो चुकी है। और धीरे-धीरे आर्य गण भी इससे प्रभावित हो रहे हैं।

समय-समय पर अनेक अनुभवी चिकित्सक विद्वान् सुधारक आये, अपनी अपनी रामबाण औषधियाँ (उपदेशों) का सेवन कराया, पर क्षणिक लाभ के पश्चात् रोग पूर्वपित्त्यापुनरपि उभर दिखाई देने लगा।

भगवान् गौतम बुद्ध, शंकराचार्य, स्वामी रामतीर्थ, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गांधी आदि वैद्य आये जो भारत का निरोग करना चाहते थे पर औषधियाँ वमन होकर बाहर निकल गई फिर कौन स्वस्थ हो सकता है ?

ऐसी ही दशा हमारे आर्यसमाज की भी हो रही है। उरसव महात्सव जयन्तियाँ आर्य महा सम्मेलनादि होने हैं उष्कोटि के घुरन्धर विद्वान्, महात्मा वैतनिक-अवैतनिक प्रचारक, उपदेशक, महोपदेशक गण पधारते हैं अपनी अमोघ औषधियों (असुतोपदेशों) का प्रयोग भी करते हैं पर क्या जनता पर कोई असर पड़ रहा है ? क्या उसका सुधार हो रहा है ? नहीं ! “मज्जे बद्धता ही गया उयो उयो दवा की”।

दुःख तो इस बात का है कि चिकित्सक स्वयं रोग प्रस्त सा होता हुआ दिखाई दे रहा है। आर्यसमाज





जैसी सस्था में यह बधिरपन का रोग आ जाय तो फिर कौन चिकित्सा करेगा ।

इसलिए उपदेश, प्रवचन अन्तःकरण की पोषक महौषधियाँ हैं इनके सेवन के बिना समाज जोवित नहीं रह सकता, तो फिर इसकी क्या चिकित्सा होनी चाहिये, इस विषय में वेद भगवान् कहते हैं “सश्रुतेन गमेमहि, मा श्रुतेन विराधिषि” सम्पूर्ण सामाजिक पुरुष मिलकर परमात्मा से प्रार्थना करे कि हम (श्रुतेन) जो कुछ सुनें, उससे सयुक्त हो सगत हो जायें वह हमारे शरीर में (जीवन) में व्याप्त हो जाय। और जो कुछ भी सुने हैं उससे “मा विराधिषि” हम वियुक्त (पृथक्) न हो जायें। उपयुक्त भव्य भावनाएँ भरकर उपदेश का वचन न करे किन्तु अपने रोम-रोम में उसे व्याप्त कर लें तभी कल्याण हो सकेगा ।

अतः हे आर्यो ! हम उपदेश प्रहण की आदत बनायें। कोई भी उपदेश या प्रतिनिधि सभाओं की आज्ञाएँ हमारे लिए उपेक्षणीय न बने, विचार करे कि एक समय वह था जब कि लोगों ने मूक प्रकृति से उपदेश प्रहण किया था। क्या आप नहीं जानते कि

न्यूटन को एक वृत्त से गिरने वाले फल ने, भगवान् बुद्ध को जर्जरस्थि वाले वृद्ध ने, अतुपम रुद्रेश सुनाए थे जिन्हें सुनकर और प्रहण कर वे ससा व महापुरुष कहलाये ।

जीवन की साधारण घटना भी अनोखा उपदेश देकर चली जाती है परन्तु हम अन्धे और बधिर हो जाते हैं जो कि न देखते हैं और न सुनते हैं ।

इसी दीपमाला के दिन महर्षि दयानन्द सरस्वती की अन्तिम भाकी नास्तिक गुरुदत्त को आस्तिकता का उपदेश देकर चली गई, श्री गुरुदत्त विद्यार्थी का अन्तःकरण परमात्मा की अखण्ड ज्योति से प्रदीप्त हो गया। जो अब तक अन्धेरा था सब दूर हो गया। आओ आर्यो ! इस ऋषि निर्वाण पर एक बार पुनः ऋषि की जीवन लीलाओं (घटनाओं) को कर्णवन्त-होकर अध्ययन करे सुने सुनाए, और उनके दिव्योपदेशों का अमृत पान कर आचरण में लायें, तभी हमारा, हमारे समाज, एव राष्ट्र का कल्याण होगा। महर्षि ने यही उपदेश प्रहण करने का अन्तिम उपदेश “कर्णवन्तः श्रूयताम्” देकर निर्वाणपद प्राप्त किया।★

धार्मिक परीक्षायें



सरकार से रजिस्टर्ड आर्य साहित्य मण्डल अजमेर द्वारा संचालित भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्या विनोद, विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या-वाचस्पति की परीक्षायें आगामी जनवरी में समस्त भारत में होंगी। कोई किसी भी परीक्षा में बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में सुन्दर सुनहरा उपाधि पत्र प्रदान किया जाता है। धर्म के अतिरिक्त साहित्य, इतिहास, भूगोल, समाज विज्ञान आदि का कोर्स भी इनमें सम्मिलित है। निम्न पते से पाठविधि व आवेदन पत्र मुफ्त मंगाकर केन्द्र स्थापित करें।

डा०सूर्यदेव शर्मा एम०ए०, डी०लिट्
परीक्षा मन्त्री आर्य विद्या परिषद्, अजमेर

शुद्ध और पवित्र— हवन सामग्री



सुगन्धित सर्व रोग नाशक आर्य हवन सामग्री जिसकी जिसकी विदेशों में भी धूम है। आर्य नेताओं माहात्म्याओं द्वारा प्रामाणित सर्व रोगनाशक आर्य हवन सामग्री का ही नित्य प्रयोग करने का आज शुभ सकल्प करें।

न० १ सेवायुक्त हवन सामग्री का भाव ८) मन है।
न० २ सुगन्धित हवन सामग्री का भाव ५०) मन है।
आज ही लिखें।

वेदपथिक धर्मवीर आर्य भंडाधारी उपदेशक,
सचालक आर्य हवन सामग्री निर्माणशाला,
अहाता ठाकुरदास, सराय रुहेला, देहली ५





क्रियात्मक आदर्शवादी दयानन्द

(ले०—श्री प्रो० रंगा ए० पी० आन्ध्र)

स्वामी दयानन्द सरस्वती ! क्या यह एक साधारण परिव्राजक सन्यासी का नाम है ? क्या कारण है कि हिन्दुस्तान के करोड़ों पुरुष उसकी पूजा करते हैं यद्यपि वह आत्मा दिवगत हो चुकी है। ऋषि ने कौन-सा अपूर्व काम किया ? उसकी पूजा करने से क्या लाभ ? यह प्रश्न उस अनजान विदेशी यात्री के अन्दर उठेगे जो ससार में भ्रमण करता हुआ इस आर्य भूमि में पदार्पण करेगा। मेरा उत्तर यह है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती किसी परिव्राजक का नाम नहीं है अपितु वह एक 'शक्तिमान विचार' का प्रतीक है। स्वामी दयानन्द की पूजा की जाती है, क्योंकि उसकी पूजा करना सत्य की पूजा करना है, वेदों की पूजा करना है, भूतकाल में और 'भूत' के द्वारा वर्तमान में जीना है, तथा न केवल भारत के अपितु मनुष्य जाति के भविष्य के लिए वर्तमान का ऊँचा उठाना है। ऋषि का समझने का अर्थ यह है कि किस प्रकार मनुष्य सर्वोत्तम रीति से अपने को देश की, नहीं नहीं मनुष्य जाति की सेवा के लिए उपयुक्त बना सकता है।

जिस धर्म का स्वामी दयानन्द ने प्रचार किया, वह कोई नया मत नहीं है अपितु वह उतना ही पुराना है जितनी कि वर्ण को ढकी हुई चाँदिया। यह वह है जो कि मनुष्यों को बनाने वाला है, यह वह धर्म नहीं है जो कि केवल आदर्शों को बताता है, अस्तितु उनका धर्म आदर्शों को क्रियात्मक रूप में चरितार्थ करना सिखाता है, आप उन आदर्शों के सौन्दर्य को अपने क्रियात्मक जीवन में अनुभव कर सकते हैं। जड़वादी लोग स्वामी दयानन्द को केवल आदर्शवादी के रूप में भले ही समझे पर मैं तो उन्हें क्रियात्मक आदर्शवादी समझता हूँ, क्योंकि उनका रात्रि का स्वप्न दिन की सच्चाई है। भारतवर्षों तू उन आदर्शों का स्वप्न देख। एक बार उस ऋषि के सुन्दर विचारों का स्वप्न देख और उनमें मग्न हो जा। तब तू अपने को शक्तिशाली, बलवान अजेय राष्ट्र बना सकेगा।

स्वामी दयानन्द भारतवर्ष की वर्तमान आध्यात्मिक क्रांति के जन्मदाता हैं। किताबी पढितों ने उनका स्वरूप को नहीं समझा, परन्तु सच्चाई का स्पासक वह ऋषि, प्रत्येक भलाई का मित्र तथा प्रत्येक पाप और असत्य का शत्रु था। उन्हें लोगों ने क्यों नहीं समझा ? कारण कि ऋषि को वे ही समझ सकते हैं जो कि उनकी शिक्षाओं पर चले। उन शिक्षाओं के द्वारा वे मनुष्य जाति में ईश्वरी शक्ति का अनुभव करने में समर्थ हो सकते हैं। स्वामी दयानन्द राहुचित अर्थों में देश भक्त नहीं थे। वह सारी मनुष्य जाति के उपदेशक थे और थे मनुष्य जाति के उद्धान के लिए, पर उनका यह विश्वास था कि जो शक्ति मनुष्य जाति को उठा सकती है वह भारतवर्ष में है, इसलिए उन्होंने भारतवर्ष को ब्रह्मचर्य का पवित्र, उच्च तथा नियमित जीवन बिताना सिखाया जिसके द्वारा मनुष्य उस शक्ति को प्राप्त करता है जो शक्ति एक बार र्च्य, चन्द्र और सितारों को भी हिला सकती है और उस शक्ति का वह मनुष्य जाति के अधिक से अधिक िम्भे की अधिक से अधिक बढ़ाई के लिए उपयोग कर सकता है।

मुझे कारावास में सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, तब मैंने 'स्वराज्य का रहस्य' सत्यार्थ प्रकाश में पाया। अगर यह हमारी प्राचीन जाति 'सत्यार्थ प्रकाश' की शिक्षाओं के अनुसार चले तो इस पृथ्वी की कोई शक्ति हमारी स्वाधीनता को नहीं मिटा सकती। सत्यार्थ प्रकाश हमें आन्तरिक स्वराज्य प्राप्त करने की शिक्षा देता है और वह तपस्या, समय या एक शब्द में 'ब्रह्मचर्य' के द्वारा प्राप्त होता है। एक बार जहाँ आन्तरिक स्वराज्य मिलता बाह्य साम्राज्य अपने आप सुदृजित रहेगा। स्वतन्त्रता और पवित्रता का प्राधार ब्रह्मचर्य ही है, जिसे कि ऋषि ने श्री और पुरुष दानों के लिये आवश्यक बताया है। हमारे बच्चे (रोष पृष्ठ ६१ पर)





जर्मनी में दीवाली - पश्चिमी जर्मनी यात्रा के मनोरंजक अनुभव

(लेखक—श्री प्रेमनारायण अग्रवाल)

पश्चिमी योरोप के देश भारत की अपेक्षा बहुत अधिक सम्पन्न, एवं विकसित हैं और विज्ञान के नवीनतम आविष्कारों का वहा ग्ब उपयोग क्रिया जाता है। जब कोई भारतीय इन देशों में भ्रमण करना जाता है तो उसे विभिन्न प्रकार की अनेकों अजीबों गरीब अनुभव होते हैं। कितनी ही मनोरंजक, आश्चर्यजनक और ज्ञानवर्धक बातें देखने में आती हैं। उनमें अनेक चीजें ऐसी हैं जिनको हम अपने देश में भारत में चालू करके देश के चतुर्दिक विकास में सहयोग दे सकते हैं। इनमें कुछ सरकार कर सकती है और कुछ जनता। न अकेली सरकार और न अकेली जनता यह सब कुछ कर सकती है। दोनों के सहयोग से ही यह सब हां सकेगा क्योंकि यह बहुत व्यापक और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में है।

प्रसिद्ध है। इसके सबसे ऊपर के भाग को टेलिविजन वाले काम में लाते हैं। उसके नीचे के भाग में दर्शकों के लिए स्थान है जिससे वह चारों ओर घूम फिर कर स्टुटगार्ट शहर का प्राकृतिक दृश्य देख सके। वहा पर एक दूरबीन भी लगा दी गई है जिसमें ऐसे ढालकर आप देख सकते हैं। भारत में दिल्ली के कुतुबमीनार, आगरे के ताजमहल आदि की मीनारों आदि पर दूरबीनें लगाने की आवश्यकता है जिससे दर्शक लोग उन पर चढ़कर वहा से शहर आदि का दृश्य देख सके। फिर अपनी अपनी दूरबीनें लाने की आवश्यकता नहीं है। विदेशी यात्रियों को आकर्षित करने के अनेक उपायों में यह भी हमें भारत में चालू करना पड़ेगा।

इसके नीचे के भाग में एक रेस्टोरेन्ट है जिसमें आप खा पी सकते हैं। चाय काफी फलों के रस से

श्री अग्रवाल जी ने पिछले ५ वर्षों में योरोप, अफ्रीका तथा पश्चिमी एशिया के २५ देशों की व्यापक यात्रा की है। जर्मनी की जिन बातों ने उन्हें आकर्षित किया उनमें से कुछ इस लेख में पढ़िये।

जर्मनी इन देशों में सबसे अधिक सम्पन्न है और विज्ञान में आगे बढ़ा हुआ है। वहा हमें अन्य देश की अपेक्षा यह चीजें उयादा और पग पग पर देवों को मिलती हैं हमने योरोप अफ्रीका और पश्चिमी के २६ देशों की व्यापक यात्रा की है पर पश्चिमी जर्मनी में जो विविधता देखने को हमें मिली वह अन्य वहाँ भी नहीं। इनमें से कई देशों की हमने दों दों बार यात्रा की है और उनके विभिन्न पहलुओं का देखने सम्पन्नने की चेष्टा की।

स्टुटगार्ट का टेलीविजन टावर—

स्टुटगार्ट जर्मनी का एक अत्यन्त सुन्दर शहर है जो चारों ओर घिरी हुई पहाड़ियों के बीच के मैदान में ब आसपास की पहाड़ियों पर बसा हुआ है। इसका टेलिविजन टावर देशी विदेशी सभी यात्रियों को आकर्षण का केन्द्र है। यह दो तीन कामों के त्रिभु

लगाकर सुस्वादपूर्ण भाजन भी कर सकते हैं। इसमें खिडकियों के पास बैठकर आप भोजन करने के साथ बाहर के नैनभिराम दृश्यावल्लि से मन प्रसन्न भी कर सकते हैं। इस मीनार की तली में चढ़ने से पूर्व भी एक रेस्टोरेन्ट है। दर्शकों की सुविधा व उनके आनन्द का पूरा करने के लिये इनका होना जरूरी है। यही नहीं इस टावर पर चढ़ने के लिए आप लिफ्ट इस्तेमाल कर सकते हैं जिससे ऊपर चढ़ने की थकासे से बच सके। भारत में इस प्रकार के कोई भी मीनार नहीं बनाई गई है जो सदियों से कायम हैं उनको भी आधुनिक युग की दूरबीन जैसी मामूली सुविधाओं से अभी तक सुसांजत नहीं किया गया है।

गर्भवियों भर दीपावलि—

भारत में हम वर्ष में एक बार अपने घरों,





कार्यालयों, सार्वजनिक स्थानों को दीपमालिका या बल्बों की रोशनी से जगमगाते हैं। परन्तु यारोप के देशों में गर्मियों भर दीपावलि जैसी रोशनी की जाती है क्योंकि इस समय बड़ा हज़ारों विदेशी यात्री घूमने फिरने आते हैं। उनके मनोरंजन के लिए अनेक मनवहलाव के साधन खासतौर पर प्रस्तुत किये जाते हैं। देशवासी भी इनसे प्रसन्न होते हैं और इस समय वह भी अपने ही देश के विभिन्न भागों में भ्रमण करते हैं।

जर्मनी है तो औद्योगिक देश और उसकी भारी विदेशी आया का प्रमुख साधन उसके कल कारखाने हैं फिर भी बड़ा की सरकार व जनता ने विदेशी यात्रियों से होने वाली आमदनी की उपेक्षा नहीं की है। जर्मनी का यात्रा उद्योग भी खूब विकसित है और बीसियों हज़ार विदेशी यात्री यहाँ विभिन्न कार्यों के लिये आते हैं। गर्मियों में यहाँ की रोशनी किसी अन्य देश से कम नहीं होती। कहीं कहीं तो यह बहुत अच्छी और आकर्षक होती है। जर्मनी के वैभवशाली और प्रसिद्ध नगर बर्लिन की छटा देखते ही बनती है। यहाँ की सबसे अधिक लाकप्रिय आकर्षक और फैंरा नेबिल सड़क कुफ़ेटे-हटम है। द्वितीय महायुद्ध में विस्मर होने पर इसे फिर नये सिरे से बनाया गया है। इसके दोनों ओर की आलीशान इमारतें गृह निर्माण कला के नवीनतम आविष्कारों और विचारों की परिचायक हैं। वह आधुनिक ढंग का साजासामान से लैस हैं। सड़क के बीचोबीच हरियाली और विभिन्न प्रकार की फूलों की क्यारियाँ बनाई गई हैं, जो प्रत्येक की पुरुष का मन मोह लेती हैं। सारी सड़क अत्यन्त सुन्दर ढंग से बनाई सजाई गई है। विदेशी यात्रियों के लिये तो बहुत आकर्षण हैं। हमारा मन तो दिन भर इसकी सैर करते रहने को चाहता रहा। यहाँ दिन भर घूमने पर भी थकावट नहीं आई और न मनु ऊँचा।

रात्रि के समय भी यह कम आकर्षक नहीं है। यहाँ की रोशनी सारे ठाठ बाट का नये रूप में प्रकट कर इसकी अर्धरात्रि का नया सौंदर्य प्रदान करती है। अनेक यात्री रात्रि के समय का आनन्द लेते और इसकी छटा देखने आते हैं।

मानव-उर दीपक जलें सहित ये लिए कामना-ज्वाल

(रचयिता—श्री आदित्यपालसिंह आर्य)

वैदिकता स्नेह समेत सदा ये श्रद्धा-वाती झाल ।
मानव उर दीपक जलें सहित ये लिये कामना ज्वाल ॥

(१)

कि दवानन्द ऋषिराज ।
तुमने दिया बुझा निज आज ॥
अपना जीवन सूर्य समान ।
पाया जन्म मरण से त्राण ॥
तुम्हारा ही प्रकाश ऋषिराज ।
करता हमे प्रकाशित आज ॥

(२)

कि ये दीपावलि दीपा ।
जलाये स्वामी-मृत्यु समीप ।
देने आश्वासन ये काश ।
तुमने किया जो वेद-प्रकाश ॥
बसकी नहीं बुभेगी ज्वाल ।
रहेगी ये जलती चिरकाल ॥

(३)

कि कण्ठो पर लेते हम भार ।
बनेगा आर्य सभी ससार ॥
बनायेंगे हम विश्व समाज ।
ऋषिवर का ही आर्यसमाज ॥
करेंगे विश्व का वैदिक धर्म ।
मिटाके सभी ये प्रचलित धर्म ॥

(४)

कि मिटेंगे सभी लोेश, विद्वेश ।
बनेगे सुखी विश्व के देश ॥
अत्याचार, अभाव मिटेगा ॥
ज्ञान व्योमि का सूर्य ज्योति ॥
बनेगा विश्व शांति-साम्राज्य ।
होगा तभी आर्य-साम्राज्य ॥

देता रहे सम्बल सदा प्रभु हवनका, ये स्थिर रहें ।
आवे भयकर वायु भौंके तदपि ये जलते रहें ॥





सौ वर्ष पश्चात् भी जहां के तहां

(ले०—कु० सुरशीला पण्डित, सगरिया बबौदा)

सूर्यवर्ध प्रकाश के द्वितीय समुत्थान में मर्त्य की ने हमारे सामने प्रचलित अब विश्वासों से होती हमारी मतानों की बरबादी तथा इन विश्वासों को हम क्यों न माने, इस पर बड़ा ही स्पष्ट प्रकाश डाला



कु० सुरशीला पण्डित बबौदा

है। फिर भी वर्तमान युग के नर नारी कर्म, पुरुषार्थ और सत्य मार्ग छाड़कर प्रारब्ध, गुणों का प्रभाव तथा कुराकार्यों को लेकर मत्र, जाप, व्रत, तंत्र, भूत, भैत, हाकिमी आदि के भ्रमजालों में फसकर, अपने आपको अधिक सुखी बनाना चाहते हैं।

अज्ञानी, अनपढ़ लोगों के लिए तो आज तक कहा जाता था कि वैद्यक शास्त्र, पदार्थ विद्या तथा विज्ञान आदि के पढ़ने, सुनने और विचारों से वे लोग रहित होते थे, अनभिज्ञ होते थे, अतः बीमारियों को भूत प्रेतादि का कारण बताते थे और योग्य उपचार के स्थान पर धूर्त, पाखण्डी, महामूर्ख, स्वार्थी जागो पर विश्वास करके अपनी और घर वालों की बरबादी करते थे, परन्तु आजकल तो पढ़े लिखे,

अनुभवी, थोड़ा सा भी संकट या बीमारी का बर्ह कि दानों तरफ ही अपने को फसा रखते हैं। एक तरफ अच्छे से अच्छा उपचार चला रहा होता है तो दूसरी तरफ देवी, देवताओं की मानता, ब्राह्मणों, उद्योतिषियों के चक में या फाड़ फूक, मंत्र देन वालों के पीछे अपना विश्वास भी खा बैठते हैं और धन भी लुटाते हैं। इतने से ही उनका पूरा नहीं पड़ता, एक ऐसी अगान्ति और बहम मन में पैदा कर लेते हैं कि उसके बचकर से छूटना ता अलग रहा, एक प्रकार का ऐसा लाभ हा जाता है कि प्रत्येक आने वाला व्यक्ति ही उनकी दृष्टि में यदि थोड़ा सा भी उपराक्त अवशिष्टास प्रगट करने वाली वाता का अनुयायी निकला तो वे अपना भविष्य सुभारने वाला ही उसे ममक बैठते हैं। इन पढ़े लिखे का क्या कहा जाये? ओख से अर और ज्ञान से विमुख हा उन्हें अपना उद्धारक वही लाभी, स्वार्थी दिखाई देता है। एकबार ता इस कदम फनकर उनकी बुद्धि और ज्ञान पर पर्दा ही पड़ जाता है। समाचार पत्र, साप्ताहिक और मासिक भा वे वही खरीदते हैं, जिनम उनका भविष्य लिखा हा।

ऐसे वर्धादिवाभासों के कारण स्वस्थ मनुष्य भी अपना स्वास्थ्य गवा बैठता है। जन्म पत्री तथा कुलधर्म उनके लिए जीवन धान बन जाती है, और वे यही के प्रताप के पीछे शान्तिपाठ, व्रत, दान, पूजा आदि म चारी चारी से लग जाते हैं, अनेक रगों के पत्थर ही उनके उत्कर्ष और कल्याण के सूचक बन जाते हैं।

ज्योतिषी जी भी घर और आसामी देखकर निरगिट की तरह रग बदलते किसे अनुभव न किये होंगे? एक ही ग्रह अच्छे बढाकर यदि व्यक्ति पर अपना अच्छा प्रभाव बता रहे हैं तो दूसरे लुटे ग्रह उनकी कुलधर्म के दूसरे घरों में प्रविष्ट हो गये हैं, यताना इनका सहज स्वाभाविक नित्य प्रति का धम है।

अनेको निर्बल दुःखी मनवालों की बीमारी के कारण और मृत्यु के कारण ऐसे लोग बनते हुए





★ आर्यमित्र ★

देखकर भी हमारी आँखें नहीं खुलतीं। मृत्यु मुख या अपने सकटों से बचने के लिये मंत्र का अप और ब्राह्मणों की शांति दिन पर दिन बढ़ती ही जाती है। याम्य, डोरा और यन्त्र बनाकर ऐसे लोगों को लटना यह एक इन लोगों की कूटनीति बनती जा रही है।

इनको और इनके पीछे पागल हुए ज्ञानी लोगों से पूछा जाय कि क्या कोई व्यक्ति और उसकी शक्ति, मृत्यु, परमेश्वर के नियम और कर्मफल से कभी किसी का बचा सकते हैं ?

इसीलिये महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है कि इन मिथ्या बातों से बचने के लिए बाल्यावस्था ही में सतानों के हृदयों में ऐसे सस्कार और उपदेश डाल दे कि जिससे स्वसतान किसी के भ्रमजाल में पडके दुःख न पावे।

अपनी कमजोरियों और त्रुटियों को छिपाना, अपने आचरण और व्यवहार पर विचार न कर सकना, कर्तव्य विमुख होना और अधिक पुरुषार्थ न करना पड़े अतः पर बैठे घन भी मिले, प्रेम भी मिले और शान्ति भी मिले इसके स्वप्न लेना किसको बुरा लगता है। मानसिक आवेगों को सीधे मार्ग पर न ले जाकर यह क्षणिक सुख देने वाली विधि ने आज न पढे लिखों को छोड़ा है, न बैंच डाक्टरों को और न ही आर्यों को।

हमारे राष्ट्र में बाल-मृत्यु सबसे अधिक होती है। शिशु पालन और बाल मनोविज्ञान का ज्ञान तो हमारे से कांसो दूर है, पर जो कुछ वैद्यकीय सहायता हमें प्राप्त होती है, वह भी अधिकांश में हमारे विश्वास से दूर होती जाती है। या तो ज्योतिषी ने ग्रह और नक्षत्र ही ऐसे बता दिये होते हैं कि बच्चा या तो यामार ही रहेगा या मृत्यु ही जावेगी या फिर बच्चों को नजर लगाना, छाया पढ़नी, किसी मरे हुए सम्बन्धी को आत्मा भूत प्रेत बनकर खाने का वृषती है, चैन नहीं लेने देती। ऐसी ऐसी अनेकों बातों ने माताओं को अबा बना रखा है। दवाई, इलाज के पीछे खर्च किये हुए सैकड़ों रुपये भी एक बार नहीं दिखाई देते, जबकि नजर उतारना, आगे धारे, मंत्र और फूँक करवा के बीमारी को कानू में लाया गया

इस प्रभाव के नीचे अन्य इलाज और उपचार तो गौण समझे जाते हैं। और प्रचार भी इसी बात का किचा जाता है कि मित्रत मानने या नजर उतारने पर ही बच्चे ने आँखें खोलीं या हसा। ऐसे उदाहरण प्रत्येक स्थान और वातावरण में दिखाई देते हैं।

यदि ऐसा ही सब बुद्धिराशियों को ठीक लगता हो तो आज स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के पश्चात् जिस देश में असह्य ऐसे व्यक्ति हो जो प्रहो और नक्षत्रों के द्वारा भ्रष्टि का सुवार सकते हैं वे वर्तमान अनेक आपत्तियों को सहज ही दूर कर देश का भारी उपकार कर सकते हैं। स्वयं भी दर-दर न भटक अपनी शक्ति से अपने का लाभान्वित कर सकते हैं—पर ऐसा सोचने और समझने की हमारी बुद्धि नष्ट हातो जा रही है।

हम महर्षि जी की इस पुण्य तिथि पर अपनी अज्ञानता अर्पित करने के पूर्व क्या आर्य परिवारों तथा शिक्षित भाई बहिनो से यह आशा कर सकते हैं कि वे ऐसी बातों और घटनाओं पर विचार करते समय बुद्धि का थोड़े से कष्ट पडने पर विचलित न हाने दे और महर्षि के बताये सत्य मार्ग पर विश्वास करके चले।



जीवन

आत्मान रथिन बुद्धि शरीर रथमेव तु।
बुद्धि तु सारथि बुद्धि मन प्रमहमेव च ॥
इन्द्रियाणि हयानाहु विषया तेषु गांचरान्।
आत्मेन्द्रिय मनोयुक्त भोक्तेत्याहुर्मनीषिण् ॥
इस शरीर रूपी रथ में आत्मा रथी है, बुद्धि सारथी है, मन लगाम है, इन्द्रियों घोड़े हैं और विषय उनके विचरने के मार्ग हैं। इन्द्रिय और मन की सहायता से आत्मा भोग करने वाला है। जो प्रज्ञा सपन्न होकर सकल्पान मन से इन्द्रियों को सुमार्ग पर प्रेरित करता है, वही उस गन्तव्य तक पहुँचता है, जहाँ आत्मा चिरकाल तक अलौकिक आनन्द का अनुभव करता रहता है।



—कठोपनिषद्





सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा का निर्वाचन

सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा का तीन वर्ष के लिए निर्वाचन ता० ८-१० ६१ को दयानन्द भवन सार्वदेशिक सभा कार्यालय में सम्पन्न हुआ। जिसमें उत्तर-प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, मध्यप्रदेश, मध्यभारत, बंगाल, बिहार, गुजरात आदि के ३० प्रतिष्ठित विद्वानों ने भाग लिया। तीन वर्ष के लिए निर्वाचन इस प्रकार हुआ—

१—प्रधान श्री प धर्मदेव जी विद्या-मार्तण्ड (देवमुनि जी) ज्वालपुर।
२ उपप्रधान—श्री आचार्य बृहस्पति जी, देहरादून।

३ मंत्री—श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी 'व्यास' देहली।

४ उपमंत्री—श्री आचार्य राजेन्द्र-नाथजी शास्त्री, देहली।

अन्तरंग सदस्य

५ श्री आचार्य प० वैद्यनाथ जी
६ श्री प० उदयवीर जी शास्त्री, गाजियाबाद।

७ श्री डा० हरिदत्त जी शास्त्री, एम०ए० पी० एच० डी०, कानपुर।

८ श्री प० भीमसेन जी शास्त्री, एम० ए०, देहली।

९ श्री आचार्य वीरेन्द्र जी शास्त्री एम० ए०, रायबरेली।

१०. श्री प० जगदेव जी सिद्धान्त-शास्त्री, पंजाब।

११. श्री स्वामी सत्मुनि जी, पंजाब।

१२ श्रीमती प्रभावतीजी, गु० काँगड़ी

१३ श्री डा० अमरसिंह जी, कलकत्ता

१४. श्री प. ओ३मप्रकाश जी, स्वतौली

१५. श्री आचार्य रामानन्दजी बिहार

—आचार्य विश्वश्रवाः

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१) ऋग्वेद बुधेश भाष्य—मधु छन्दा, मेधातिथी, शुन शेष कण्ठ, परागौतम, हि ख्य गणै, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषिभा के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १६) डाक व्यय १।।) ऋग्वेद का रहस्य मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध भाष्य। मूल्य ७) डाक-व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अष्टाध्याय १—मूल्य १।।), अष्टाध्यायी मू० २) अध्याय ३६, मूल्य १।।) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक-व्यय ६) उपनिषद् भाष्य—ईशा २); केन १।।), कठ १।।), प्रश्न १।।, सुहृद १।।)

माण्डूक्य १।।), ऐत०य १।।) सबका डाक व्यय २।।)

श्रीमद्भगवद्गीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य १२।।) डाक-व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

शुद्ध संख्या ६६०]

मूल्य १२) डाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण भाषान्तरकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा-वतार जी विश्व भास्कर, रतनगढ़ जि० विजौरी। भारतीय आर्य राजने-तिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है। यह सब जानते हैं। व्याख्याकार भी हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र है। इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन-पाठन भारत भर में और घर घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए इसको आज ही मंगाइयें।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला सुरत

❀ जवरी जंत्री ❀

भिन्न भिन्न स्थान के १० लिखे पढ़े सज्जनों के पूरे पते लिखकर यह रहस्यमय जंत्री मुफ्त मगावे।

पता—जवरी आफिस 'जगावरी' E. P



प्रान्तीय आर्यवीर

दल की कार्य-समिति की बैठक

१६ अक्टूबर १९६१ को सीधपुर मे प्रान्तीय आर्य वीर दल की कार्य समिति की बैठक प्रान्तीय सचालक वेदप्रकाश आर्य की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुई। समिति ने सर्व सम्मति से सीतापुर के प्रसिद्ध आर्यवीर श्री रघुनाथसिंह आर्य, एम० ए० को प्रान्तीय सचिव के पद पर नियुक्त किया। एक निश्चय के अनुसार प्रान्त भर के महलपतियो (जिला सचालको) की नियुक्ति पर विचार किया गया तथा तय किया गया उनकी सूची क्रमशः 'आर्यमित्र' मे प्रकाशित की जावे। समिति ने दो प्रस्ताव भी पारित किये। एक प्रस्ताव के अनुसार मुस्लिम विश्व विद्यालय अलीगढ़ पर प्रतिबन्ध लगाने की भारत सरकार से माग की गई। दूसरे प्रस्ताव के द्वारा ईसाइयो की अगष्टीय गतिविधियो से सजग रहने की चेतावनी दी गई। कार्य समिति ने 'द्वारा' के शिबिर में पूर्ण सहयोग करने का निश्चय किया।

—अशाककुमार आर्य

का० मंत्री कृते सचालक आर्य वीरदल व० प्रदेश

गुरुकुल ज्वालापुर फार्मैसी (हरिद्वार)

की
अमूल्य भेंट

गैस्टोना

लट्टी मीठी ढकागों का आना।

गैस उठना, आक रा, कब्ज, वायु

गोला, उदरशूल, गैस के कारण

हाने वाले हृदयायसाद को नष्ट कर भोजन का हजम करता है।

मूल्य ५० गोली १ ५० न० पै०

१५० गोली ४ ००

नोट—अन्य समस्त आयुर्वेदिक औषधियों के लिये याद कीजिये।

प्रत्येक शहर मे एजेन्टों की आवश्यकता है।

गुरुकुल ज्वालापुर फार्मैसी (हरिद्वार)

रक्तिमा

दाद, खाज, खुजली, छाजन,

फोडा फुन्सी व अन्य रक्त विकारों

पर सेवन कीजिए।

रक्तिमा का सेवन स्वास्थ्य एवं शक्ति प्रदान करता है।

मूल्य १० दिन की दवा का १ २५

न०पै०, २० दिन की दवा का २ ०

रोजगार नहीं केवल परोपकार

'दमा' के रोगियो। यह दुष्ट रोग आपके लिये बड़ा दुखदाई है। आखिर पुरानी आप कब तक तडपने रहेंगे ? क्यों नहीं आने वाली किसी भी खांसी 'पूर्णमासी' को यहाँ आश्रम में आकर सैकड़ों रोगियो के साथ हमारी भारत विख्यात महौषधि (चित्रकूट वृटी) धर्मार्थ (मुफ्त) सेवन करके एक ही मात्रा में सदा के लिए इस दुष्ट राग से पीछा छुडाते हैं ? यदि किसी कारण बश यहाँ न आ सकें ता केवल ३॥॥) रु० मात्र विज्ञापन, रजिस्ट्री आदि खर्च तुरन्त मनीआर्डर से भेजकर मगाले, और आराम से अपने घर पर ही सेवन करके पूरा लाभ लठावें। इस दवा की वी० पी० नहीं भेजी जाती है। नोट करले, जन्दी करें, जिससे "पूर्णमासी" से पहले दवा आपको मिल जावे। अन्यथा पछतावेगे।

(नोट) यदि रोग अधिक पुराना हो, तो ३ सुप्लक (पूरा कोर्स) लगातार सेवन करें। जिसमें ढड कट जावे, ३ सुप्लक (पूरा कोर्स) एक बार मगाले वो १०) भेजें। गरीबो का मुफ्त डॉटने के लिये १ दर्जन का रियायती मूल्य ३३॥) रु० है।

पता—रायसाहब के० एल० शर्मा, रहैस, आश्रम (६०) जगाधरी (E P)

वैदिक धर्म का स्वरूप

[ले०—श्री साहू हरिप्रसाद जी, कोषाध्यक्ष सभा]



श्री साहू हरिप्रसाद आर्य काषाध्यक्ष

संसार के मतान्व लोगो ने जिसका नाम धर्म रक्खा है उसका नाम सम्प्रदाय है। धर्म की परिभाषा तो शास्त्र ने निम्न प्रकार से की है। “अभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्म” अर्थात् जिसके द्वारा संसार में रहते हुए सुख प्राप्त हो और अन्त में परम गति प्राप्त हो वह धर्म है। संसार में पापाचार और अत्याचार करने वाले जा सम्प्रदाय हैं—वे धर्म नहीं। और सम्प्रदाय का अर्थ है स्वार्थी लोगो का चलाया हुआ मार्ग। जिस प्रकार वैदिक धर्म ने संसार के अबाध प्राणियों को मानव, आर्य, और ऋषि बनाया उसका संदेश वेद वाक्य “कृष्वन्तो विश्व-मार्थम्” के आदेशानुसार सुख शान्ति का स्थापित करने के लिए संसार के काने-काने में पहुँचाया जाय। इसी वैदिक धर्म के अनुयायी भक्तों के कुत्र उदाहरण निम्नास्त हैं—

धर्मावतार महाराजा रामचन्द्र के राज्य शासन का वर्णन करते हुए गांधामो तुलसीदास ने लिखा है कि—

वैदिक, वैविक, भौतिक तापा। राम राज्य नहिं गृह्ण ह्य पा ॥

इसी प्रकार राजा अश्वपति भी अपने शासन काल में गर्व के साथ कहता है कि मेरे राज्य में कोई अन्यायी, टराचारी चारी, शरापी और मूर्ख नहीं है। वह शान्ति का साम्राज्य था। महात्मा बुद्ध की महान् आत्मा ने राज्य के सुख एश्वर्य का छाड़न का विचार इसी धर्म जिज्ञासा के कारण किया और केवल एक कमण्डलु लेकर ही संसार का कल्याण का मार्ग दिखाया। धर्म पुरीण श्री स्वामी शंकराचार्य जी और भगवान् बुधामरिण ने इसी के लिए जीवन की आहुति लगाई। महर्षि दयानन्द ने इसी धर्म की दीक्षा से दीक्षित होकर हँस हँस कर जहर खाया और अपने जहर देने वाले का जेल जाने से राका तथा अपने पास से धन लेकर उसके प्राणों की रक्षा की। आह! संसार का स्वर्ग बनाने वाले पावन वैदिक धर्म तुम ही तो महर्षि का इतना उदार और विशाल हृदय बना दिया कि जिसका दूसरा उदाहरण उपास्यत करन में आज संसार असमर्थ है।

आर्यसमाज रामपुर का उत्सव आर्य समाज रामपुर का ६१ वॉ बापिकात्सव रविना १० नवम्बर से १४ नवम्बर सन् ६१ तक मनाना निश्चित हुआ है।

तुम मानव नहीं देव हो, दयानन्द हो।

देवीप्यमान था सुखार मण्डल

तेत्र था प्रचण्ड ब्रह्मचर्य का

तप था उसका भी

पर नहीं दूर जनरव से आह्वान था विश्व का

उस दयानन्द की प्रशस्ति थी चहुँ आर

गूज थी दशो दिशा

× × ×

सुनकर नाम दयानन्द का

आई नारी लेने दया उसकी

रूप था अटूट पास उसके भी, मद था सौन्दर्य का

कामना थी पुत्र रत्न दयानन्द सा

लेकिन सन उत्तर दयानन्द का

सन्ध मौन लौट चली

मन में ही श्रद्धा का हार लिये—

कहा दयानन्द ने—

चाहिये पुत्र तुम्हें

जा सम दयानन्द हा

तब माता! समझ लो—

दयानन्द का ही तुम निज पुत्र।’

गदगद हा फूट पड़ी माता

न मिली कही उसे ऐसी ममता

धन्य हा दयानन्द

तुम मानव नहीं देव हो, दयानन्द हो।

—मदनमोहन अजमेर

एक पंथ दो काज

आप अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा शांती व्याख्या
आदि के लिए चिन्तित होते ह.



राष्ट्रीय वचन योजना में धन लगाने में-

आपकी चिन्ता बहुत कुछ कम हो सकती है

राष्ट्रीय वचन योजना में-

व्यक्ति और समाज दोनों का हित निहित है।

गल्प सं० ०

श्रेष्ठ हवन सामग्री

अपने कौशलमय मन प्रयत्न से ही हमें इस प्रकार का भक्तिकृत सामान प्राप्त हो सकता है।
हमारा आशय यह आमलष्य है कि हमें अपने मन प्रयुक्त होने वाले सभी प्रकार के वस्तुओं में प्रथम ही
निर्वाह से हमें अपने यहां ही प्राप्त हो सके। प्रयोग करने में सफलता प्राप्त होगी। आप जागृत
प्राप्त अनुभवों के आधार पर हमें हमें उत्तरांत प्रदान का प्रयत्न कर सकते हैं।

अतः श्रेष्ठ हवन - सामग्री और इसके अतिरिक्त धूप आदि सम्बन्धित
आवश्यकताओं के लिये मदव हमारी जेबों में प्राप्त कीजिए।

निर्माता-दी इण्डियन इवर्स रिसर्च एण्ड मैनफैक्चरिंग क. (एडि०)

लक्ष्मी निवासे, शाहदा नगर, महाराजपुर

वायूसम भारती द्वारा भगवानदेव न शर्मा मास्कर प्राय ५ मीरासाट माग लगनरु से मद्रिद तथा प्रकाशित



स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू का जन्म-दिवस



भारतीय स्वातंत्र्य समर के महान सेनानी स्व० पंडित जवाहरलाल नेहरू जी का १४ नवम्बर को ७५ वाँ जन्म दिवस बड़ समारोह के साथ देश के कोने कोने में मनाया गया। भारत की स्वाधीनता के इतिहास में नेहरू का नाम सदा अमर रहेगा। नेहरू जी भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री थे और जिस दिन से देश स्वतंत्र हुआ उस दिन से लेकर अपने जीवन की अन्तिम घड़ी तक वह प्रधान मन्त्री रहे। हम अपने स्वर्गीय प्रधान मन्त्री के लिए इस अवसर के अवसर पर अपनी अट्ठात्रिंशत् सादर प्रार्थना करते हैं।

भारत केसरी ला० लाजपतराय का बलिदान-दिवस

१७ नवम्बर मंगलवार को भारत के महान स्व० नेता ला० लाजपतराय जी का देहावसान दिवस है। साइमन कमीशन के बहिष्कार करने के कारण पुलिस की लाठियों से गहरी घोट लग जाने के कारण राज के दिन उनका बलिदान हुआ था। ला० लाजपतराय की आयसमाज के सूक्ष्म नेताओं में गणना की जाती है। आयसम जे को ला० लाजपतराय जी पर गव है। मिस मेयो की मबर इडिया न मक भ्रात पुस्तक का महतोत्तर उत्तर ला० लाजपतराय जे की अनहैपी इडिया नामक पुस्तक द्वारा विद्या था। हम अद्य स्व० नेता के प्रति अपनी अट्ठात्रिंशत् सादर सन्निधि प्रकट करते हैं।

आवश्यक सूचना

समा के मंगलानदीन आयसात्कर प्रस को मन्त्री काम करने में आनाकानी करने लगी है। बायाकल्प की दृष्टि से उसकी खोला जा रहा है। अतः आयसम का आगामी अंक हम प्रकाशित न कर सकेंगे। अब अगला अंक ६ दिसम्बर का प्रकाशित होगा।

—सिखबहालु मुखोपमन्त्री

अधिसूचना-संख्या ३३३३ अद्य प्रवेश लक्षणः

साप्ताहिक आर्थामित्र ईसाई मत समीक्षा

वर्ष }
६६ }

रविवार मार्गशीर्ष १ शक १८८६, मागसर्ष ३ वि० २०२१
२२ नवम्बर सन १९६४ ई०, वयानम्बाद १४०, सण्टि सवत १,९७,२९,४९,०६५

} अंक
४६ }

सम्पादकीय—

बम्बई विश्व कैथोलिक ईसाई सम्मेलन का विरोध क्यों

बम्बई के कैथोलिक परिवर्ष के आयोजन प्रसंग ने आर्य समाज के कार्यक्रम को एक विशेष गति प्रदान की है। सांभेदेशिक समाज ने समस्त आयजगत और देशवासियों से अपील की है कि २९ नवम्बर को ईसाई प्रचार निरोध विवसत मनाया जाय।

इस विवसत को सामयिक उपयोगिता सुस्पष्ट है आर्य समाज पर यह बोधोपारोपण किया जाता है कि यह दूसरों को अपना प्रचार नहीं करने देता परन्तु यह बात तथ्य के सर्वथा विरुद्ध है। आर्यसमाज तो सत्य को कोज के लिए सबको प्रवने विचार प्रकट करने का स्वतन्त्रता देना है और उसके लिए सर्वथं कर्ता है। परन्तु बर्सी ज्ञातान्वी के उत्तराष्ट्र में यदि कोई बुद्धि के दरवाजो को बन्द रखन का प्रचार करता है तो आयसमाज उसको कसै सहन कर सकता है। इस लिये आयसमाज ईसाई प्रचारकों से माग करता है कि वे धर्म की बातों को सचवाई और बुद्धि को कसौटी पर उतार कर बिसायें, इसी प्रकार आयसमाज को बूझरी आपतित धर्म परिवर्तन के लिये अनतिक पद्धति के विषय में है। प्रलोमन द्वारा कितने विचारों को छरी बना धर्म प्रचार नहीं है। पर्ले ईसाई धर्म प्रचार के लिये सल्लि का उपयोग किया जाता था। प्राज धर्म और अग्न्य प्रलोमनो का भारत की गरीब जनता की मञ्जूरियों का माकायस कायदा उठाकर से मानव मेधा नहीं कर रहे अपने धर्म को कसकित कर रहे हैं। आयसमाज की त छरी

आगल ईसाई मिशनरियों के प्रचार से भारतीय राष्ट्रीयता को पहचाने वाले अघात के सम्बन्ध में है। ईसाई धर्म को स्वीकार करने वाला यदि भारत राष्ट्र के प्रति अपनी निष्ठा सोकर पोष के आदेश को ही प्रमुक्तता देता है तो भारतीय राष्ट्र विपत्ति में फँव जायगा। अभी १ करोड़ ईस ई हैं जिनको राष्ट्र भक्ति सन्निध है। नागालैण्ड, गोवा और केरल को प्रयुक्तताबाधो धनोवृत्ति के पीछे ईसाई धर्म की घट्ट ही काम कर रही है। इन सैठ्ठामिक विरोधों के आधार पर आयसमाज विश्व कपालिक परिषद् के बम्बई अधिवेशन का विरोध करना है। इस अधिवेशन द्वारा ईसाई धर्म की विशेषता की छाप भारतवासियों के हृदयों पर बढाने का बुधव्यस्त किया जा रहा है।

भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है भारत सरकार की इस पर किसी धर्म को विशेष प्रोत्साहन देने का अधिकार नहीं रह जाता परन्तु भारत सरकार ने इस सम्मेलन के आयो जन में उधारतापुण सहयोग देकर एक विविध स्वित्ति अपनायी है। अब भारत सरकार दूसरे किनी धर्म या सम्प्रदाय के आयोजन में सरकारी सहयोग देने से कंसे पीछे हट सकेंगे और सबको सहयोग देकर एक दूसरे के विरुद्ध आलोचना से सहायक बनेंगी। पता नहीं प्रधान मन्त्री श्री घास्त्रो जो के पास इनका क्या उत्तर है परन्तु यह निश्चित समसिये कि सविधान ने धर्मनिरपेक्षता को आधार इसीलिये माना था कि सरकार पर उनकी धर्मों की जिम्मेवारी न रहे पर ही ठोक उल्टा रहा है कभी बुद्ध जयन्ती का नाटक है तो कभी ईव ई सम्मेलन। भारत सरकार कह सकती है कि हिन्दुओं के धर्मो समारोहों में भी सरकार पुण्य सहयोग देती है। इस प्रकार के सहयोग का सुविधा सबको



समान मिले इसमें कोई आपत्ति नहीं है परन्तु कोई बतार्थे कुम्भ मेले के लिये रियायती टिकट जारी करने की किलो ने मांग की या सरकार ने जारी किये, अथिबु मीडमाइड कम करने दृष्टि से सरकार ऐसा करतो ररतो रही कि अनता। सफर के प्रति उद्यत न हो सफाई और सुरक्षा तो सरकार का दायित्व है इसमे धार्मिक सह्यपना का कोई सम्बन्ध नहीं। पता नहीं सरकार ने किस आधार पर ईसाई सम्मेलन के लिये विशेष सुविधा देने का निरवचय किया।

ईसाई सम्मेलन मे पोप का आगमन यदि राजनैतिक है तो यह धमनिरपेक्ष नीति के विरुद्ध है और यदि धार्मिक है तो पोप को भारत के ईसाईकरण की मांग करने का अधिकार नहीं दिया जा सकता क्योंकि ईसाईकरण की पद्धति अराष्ट्रीय और अर्नैतिक है।

आयसमाज ईसाई धर्म के अन्धविश्वास पूर्ण विद्वानों के विरुद्ध ईसाई धर्म पुन पोप और उनके अनुयायियों को शास्त्रार्थ के लिए साबर निमग्नित करता है परन्तु धन और वृत्त परीकों से ईसाई प्रचार का विरोध करता रहेगा।

दैनिक जागरण का आर्यसमाज पर आरोप

कामपुर से प्रकाशित होने वाले दैनिक जागरण ने अगले १४ नवम्बर के अंक मे केंद्रीय ईसाई विषय सम्मेलन के विरोध में चल रहे आर्यसमाज के अग्रिधान की धार्मिक "असहिष्णुता एव सकीयता का छोटक बतलाया है।"

हम समझते हैं कि रोमन केंद्रीय धर्म, जिसके महापुरोहित भी पाक महोदय हैं, के स्वकवएव उसकी गतिविधियों से अर्नमिल होने के कारण तथा गत चार सताद्विदो मे प्रोजा ओको में केंद्रीय पादरिषों द्वारा जो अमानुषिक अत्याचार किये गये हैं और सारे भारतवर्ष में हरिजनो, आदिवासियो आदि को ईसाई बनाने में जिब छल, कम्ड मप एव कोम प्रावि साधनों का लुलकर प्रयोग किया गया है उनके प्रति आंख मूढ लेने और धमनिरपेक्षता के यथाय क् को न समझने के कारण हो जागरण मे यह लेख छपा है। इन लेख के उलर मे सभा के माननीय उप-प्रधान श्री विद्याधर जो का लेख पाठक आगामी अंक में पढ़ने।

—कम्पाक

चीन में बौद्ध धर्म को जड़े उखाड़ने की चीन को कुम्भित चेष्टा

पता चला है कि चीन सरकार ने भारतनाथ (भारत) में होने वाले ७ वें विश्व बौद्ध सम्मेलन में अपने कर्णों के प्रतिनिधि सम्मिलित होने से मना कर दिया।

चीन मे बौद्ध धर्म के दमन का नूतन प्रमाण है। विश्वस्मनुव से पता चला है कि चीन मे अथिकांश बौद्ध विहारों को कारखानों कीमो बंरिर्को एव राजनीतिष्ठ समा मबनों मे परिवर्तित कर दिया गया है। सत्य ही चीनी नेताओं द्वारा दम मरा जाता है कि बहु धर्म का दुरा आदर करते हैं।

चीन सरकार ने एक कठपुतली बौद्ध सघ बनाया हुआ है जिसका एकमात्र काम चीनी नेताओं की हूं से हा मिलाया है।

भारतनाथ सम्मेलन मे प्रतिनिधि भेजने से चीव को इसका मय है कि कहीं उनकी दमन नीति का दुरुदये वेकों के बौद्ध प्रतिनिधियों के सामने उनकी दमन नीति का पर्दा न उघड़ जाय।

सरकारी काम-काज में हिन्दी की उपेक्षा कब तक ?

आगामी गणनम्न विषय के समय से सरकारी काम-काज में राष्ट्रभाषा हिन्दी के पूर्णतया प्रयोग करने की घोषणा की जा चुकी है। हिन्दी भाषा भाषी सब कायों में तो हिन्दी का ही प्रयोग किया जायेगा ऐसा आश्वासन भी दिया गया है। किन्तु हम देखते हैं कि इस विषय में को पग उठाये जा रहे हैं वह बहुत मन्व हैं। प्रारम्भ का विषय है कि कई घष से सन १९६५ से हिन्दी राष्ट्र की श्यावहारिक भाषा होगी यह निदधय किया जा चुका है और अहिन्दी भाषा-भाषी सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने का आयोजन किया जा रहा है किन्तु अभी तक १ लाख कर्मचारियों में से अभी तक केवल १ लाख २६ सत्रह को ही हिन्दी सिखाई जा सकी है और हिन्दी की प्रतिभ परीक्षा तो केवल ३५२६१ मे ही उत्तीर्ण की है तथा टकन व क्षीप्र िपि मे कम्पना ३३९६ तथा ५९० कर्मचारी ही पास हुए हैं।

(४० भा० हा० १३-१४ जनवर्ष)



अराष्ट्रीय ईसाई मिशनरी प्रचार निरोध

बम्बई में केंद्रीय विद्य परिषद् के आयोजन ने आर्यसमाज के अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन की वास्तविकता सिद्ध कर दी है। श्रद्धि दवानन्द ने अपने पुत्र में विदेशी धर्मों द्वारा भारतीय राष्ट्रियता पर होने वाले आक्रमणों का सामना किया था, आर्यसमाज संबंध राष्ट्र की इस खतरे से सावधान करना रहा, सरकार के कानों में भी आक्रामकता ने अपने विचार गुंताये पर देग की उदासीन जनता और धर्मनिरपेक्षता के नाम पर राष्ट्रघातक धर्मों को समनुष्ठ करने वाली सरकार मचेष्ट न हुई बम्बई की केंद्रीय विद्य परिषद् ने खतरे को बिलकुल हमारे सामने लाकर खड़ा कर दिया है।

आर्यसमाज धर्म प्रचार की स्वतंत्रता का समर्थक है, धर्म परिवर्तन एक वैचारिक परिवर्तन होता है लेकिन यदि इस परिवर्तन के पीछे विवशता या प्रलोभन छिपे हों तो वह धर्म परिवर्तन नहीं शोषण और स्वयं सामना ही होगी। भारत की निर्धन जनता को ब्रिटिश राज्य में ईसाई मिशनरियों द्वारा प्रलोभन देकर भारत विरोधी बनाया गया और आज स्वतंत्र भारत में भी मिशनरी देग की सरीसृप पीर छत्राव परिस्थितियों का लाभ उठाकर भारतवासियों को ईसाई बनाकर भारत विरोधी बन रहे हैं। आर्यसमाज मिशनरियों को इस नीति का घोर विरोधी है। श्रद्धि दवानन्द ने सत्यायप्रकाश में ईसाई धर्म की जो समीक्षा प्रस्तुत की थी वो ढ़क बुद्धि से आज तक ईसाई धर्म के सरलक उसका उत्तर नहीं दे सके हैं। आज भी आर्यसमाज ईसाई धर्म गुह्यो से उस समीक्षा का उत्तर माँगता है। क्या ईसाई के धर्मगुह्य वैचारिक एवं बौद्धिक बुद्धि से आर्यसमाज के लेखकों को रोककर करेगे? यदि ऐसा-हो-सके तो आर्यसमाज उसका स्वागत करेगा परन्तु बुद्धि धर्म को दोष के साथो तक ही सीमित रखना मजूर है-अरे आर्यसमाज ऐसे धर्म प्रचार का संबंध विरोध करेगा। क्योंकि आर्यसमाज के बौद्धिक युग में पोप और उनका गुह्यम शिक्षण, विवेक और अनुसंधान भावना के साथवा विपरीत हैं।

आर्यसमाज विचारधारका के सरलक रूप में आर्यसमाज के अन्तर्गत अराष्ट्रीय मिशनरियों को बिलकुल

विश्वपरिवर्त के अवसर पर देशध्यायी अनियान आरम्भ कर देशवासियों को वस्तुस्थिति समझाने का निश्चय किया है।

आर्यसमाज की निगोमणि सार्वदेशिक सभा ने २९ दिसम्बर को ईसाई प्रचार निरोध दिवस मनाने की देशवासियों से अपील की है और आर्यसमाजों को प्रेरणा की गई है कि वे पब्लिक सभाओं का आयोजन तथा साहित्य वितरण करें।

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री ला० रामगोपाल गी ने ईसाई सम्मेलन के बुधपरिणामों की ओर देशवासियों का ध्यान आकृष्ट करते हुये बताया कि ईसाई प्रचार निरोध विद्यम के अवसर पर सार्वजनिक सभाओं में माग की जायगी कि—

- १-सरकार विश्व ईसाई सम्मेलन को किसी प्रकार का सहयोग न दे।
- २-सम्मेलन का कार्यक्रम प्राकाशनाधी द्वारा प्रसारित न किया जाय।
- ३-पोप द्वारा उपहार रूप में २६ लाख रुपये की जो सामग्री बी जा रही है उसे सीधे प्रधान मन्त्री सहयोग कोष में दे दिया जाय।
- ४-गोवा में गिरजाघरों के जीर्णोद्धार पर सरकारी व्यय न किया जाय।
- ५-ईसाई सम्मेलन के अवसर पर विदेशी धाराय तथा गोप्रांम के विशेष प्रवचन की व्यवस्था न की जाय।
- ६-विदेशों से आने वाले प्रतिनिधियों को चुगी में कोई छूट न दी जाय।
- ७-बम्बई ईसाई सम्मेलन के लिये रेल किराये में ग्यायता सुविधा न दी जाय।

सार्वदेशिक सभा के प्रस्ताव में बताया गया है कि ईसाई सम्मेलन के बुधपरिणाम स्वरूप भारत में ईसाई मिशन और अधिक सक्रिय हो जायगा जो पहले से ही भारत की अक्षयता और राष्ट्रियता के लिये बड़ा खतरा बना हुआ है। इसलिए आर्यसमाज को देशध्यायी आन्दोलन का निश्चय करना पडा है। सम्मेलन के अवसर पर विद्यालय पंथाने पर प्रचार का प्रवचन किया जा रहा है, साहित्य वितरण के साथ साथ आर्यसमाज के प्रमुख वक्ता शास्त्रार्थ मिशनरियों प्रचारक एवं कार्यकर्ता बम्बई में उपस्थित होंगे।



श्री नरेन्द्र जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि मभा मध्य दक्षिण का—

भारत के प्रधान मंत्री के नाम खुला-पत्र

शेधा में, माननीय प्रधान मंत्री को
भारत सरकार, सादर नमस्ते !

एक मकरं चर ६५ ई० को बम्बई नगर में विडम्बणापी
ईसाई महा सम्मेलन की ३८ वी बैठक होने जा रही है ।
इस ईसाई कांग्रेस मे एक लाख कथोलिक पादरियों के
भाग लेने के साथ-साथ आर्यभोय गोप महोदय का इसमे
भाग लेने के लिए भारत पठाया निश्चित हो गया है ।
इस सम्मेलन में बम्बई नगर मे विद्या गया आपका वक्तव्य
पढ़ा हुय को बडा भागाल गहुका ।

इस बात को आपकी सभा में स्पष्ट करने की जो
वृष्टता कर रहा हू आशा है आप उसके लिए क्षमा
करेंगे । कदापि मेरा यह दृष्टिकोण नहीं कि बम्बई मे
आयोजित ईसाई सम्मेलन न हो । क्योंकि हमारे देश मे
ईसाइयों को अपने धर्म के प्रचार की स्वतन्त्रता उसी
प्रकार की जानी चाहिये जिस प्रकार आधुनिक या प्रभु
धर्म वालों को अपने प्रचार की स्वतन्त्रता सारे ससार मे
मिली है । परन्तु यह सम्मेलन भारत मे उस समय हो रहा
है जबकि गोबा तथा न.वालेड आदि को अहित समस्यायें
जमी पुणरूप से सुलझ नहीं पायी । यह बात आपको
पचित हो है कि एक समय से ईस ई मिशनरियो ने भारत
की गरीबों का अनुचित लाम उठाकर अशिक्षित लोगों को
धन का प्रलोभन देकर एब अपने श सनकल मे उहें
ईसाई धर्म में शामिल करने के लिये किस तरह का शाय
किया था । वस्तुतः यह प्रवृत्ति निम्नलम भ्रष्टाचार है ।
मेरे इस कथन की पुष्टि 'मिथोनी कमीशन' की रिपोर्ट
से और अधिक हो जाती है ।

बम्बई नगर मे आपने जो वक्तव्य दिया है, वह भारत
सरकार के सम्प्रदाय विरुद्ध नीति के सच्चा विपरीत है
ऐसा ही अनुभव कर रहा हू । यह सम्मेलन पुणतया धार्मिक
है और इसका उद्देश्य समस्त एशियाखण्ड मे इस सम्मेलन
द्वारा ईसाई मत के प्रचार की योजना बनाना है । इस
प्रकार के सम्प्रदायिक सम्मेलन मे सरकार की ओर से
आयोजन का प्रबंध करना व सारे सरकारी स्कूल, कालेजों
(कहीं के कर्मचारी नियुक्तियों द्वारा ही कभी थ कल्पने का

रहे हों) को बन्द करने का आदेश देना किसी भी रूप में
उचित नहीं है । आर्यभोय गोप महोदय का आयमन
भारत यात्रा की दृष्टि से न होकर मात्र ईसाई कांग्रेस में
शामिल होना है । इस अवसर पर सरकार तथा सार्वजनिक
रूप से उनका प्रबन्ध व स्वागत करना न केवल न्यायाविरुद्ध
है प्रत्युत यह भारत सरकार की नीति के सर्वथा विपरीत
है । भारत सरकार को समय रहते अपनी नीति के प्रति
कृप किये जाने वाले कार्य की ओर ध्यान आकर्षित कराये
जाने पर भी यदि वह इस ओर तमिह ध्यान न देकर उल्टे
आलोचनों प्रवधा तथाहकारों पर किसी प्रकार का आरोप
लगाये और अपनी प्रामाणिक कमजोरी को उधारता व
बन्धुत्व की भावना के आड में छुपाने लगे, मैं समझता हू
कि यह प्रवृत्ति हमारी सरकार के लिये अशोभनीय है ।

एक बार पुन आपको मैं स्पष्ट करू कि यदि आर्य-
भोय गोप महोदय भारत सरकार के नियन्त्रण पर भारत
पचार रहे हों तो उनका इन प्रकार से स्वागत किया जाना
हमारे लिये आपत्ति का कोई कारण नहीं है । परन्तु ये
भारत मे भावना करने वाले ईसाइयों की प्रारब्धा पर
ईसाई कांग्रेस मे भाग लेने के लिये जा रहे हैं । इन्हीं सब
कारणों को लक्ष्य मे रक्कर अयसंवाज इस दिशा में सर-
कार द्वारा अपनाये जाने वाली नीति की कड़ी निन्दा
करता है जो सच्चा वास्तविक है ।

अन्त मे आप से पुन अनुरोध कर्ना कि आप जैसे
प्रभावशाली दूरदर्शी व उदारचेता नेता के रहते हुए
ईसाई मिश-रियों की यह कूटनीतिक चाल हमारे देश में
किसी प्रकार से सकल नहीं हो पायेगी । हमें आप वरपूर्व
विश्वास एव गर्व है कि भारत की आत्मा को किसी तरह
क भोट पहुचे बिना हमारे देश में धार्मिकता की रक्षा
होगी और भारतीय जनता की भावनाओं का पुन आरंभ
होगा । आशा हो नही मुझे नून विश्वास है कि आप धर्म
परायण भारतीय जनता के निवेदन वर अवश्य ध्यान देंगे
और उचित कदम उठायेगे ।

—नरेन्द्र, प्रधान

आर्य प्रतिनिधि मभा मध्य दक्षिण



सीमा के आक्रान्ताओं की अपेक्षा भीतर के आक्रमण में सावधान रहने की अधिक आवश्यकता-प्रकाशवीर शास्त्री

बेहराडून ४ नवम्बर । आर्सेलमाज बेहराडून के ८ व वार्षिकोत्सव पर भाषण करते हुये समस्तसध्य श्री प्रकाश वीर शास्त्री ने बम्बई में होने जा रहे विश्व ईसाई सम्मेलन का विशेष रूप से उल्लेख किया । आपने नागालैंड केरल शास्त्रज्ञ आदि की समस्याओं का कारण ईसाई पावरियों की बताया । श्री शास्त्री ने सरकार को चेनाची दी कि इन भीतरी आक्रान्ताओं से सावधान रहने की अधिक आवश्यकता है ।

विचित्र धर्म-निरपेक्षता

कांग्रेस सरकार की धर्म निरपेक्षता का उपहास करते हुये आपने कहा कि कुछ जयन्ती के अवसर पर इन धर्म निरपेक्ष सरकार ने १। करोड़ रुपया स फारी बोध से व्यय किया । अब बम्बई से गोआ तक के सब गिरजे की सम्मत सरकार अपने व्यय पर करा रही है और इस सम्मेलन के लिये लगभग १ करोड़ रुपया सरकार का धर्म से व्यय किया जा रहा है । ऐी विचित्र धर्म निरपेक्षता कहाचित किसी अन्य देश में नहीं मिल सकती । फिर ईसाई पावरियों का यह काय कोई धर्मिक आ दोहन ही इसके पीछे छिपी राजनैतिक आकांक्षा यह है कि भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों-नागालैंड मणिपुर त्रिपुरा छोग नागपुर केरल आदि-में भारत-विरोधा तत्वों को बढ़ाया जाए । इन शब्दों के साथ श्री शास्त्री ने यह भी बताया कि

लाहौर और स्थितो के क्षेत्र में मन १ ५१ मे जग एक ही मुसलमान या बहा १९६१ की जनगणना मे १२०१ मुसलमान बहा पाए गये । अण्य मे अंब ४५ स घुन आये पाकिस्तानियों को हमारी सरकार अभी तक नहीं निकल पाई । आरने इन बान की अाका प्रष्ट की कि अन् की बर चीन भारत क विरुद्ध प हिनान से शरारत बरायेगा ।

शक्ति सतुलन के लिये अणुबम आवश्यक

२० प्रक शरीर शास्त्रो ने आये चलकर कहा कि अणु पर क्षण ब दी का नारा उमी राक्ष का सकल हो सकना है जिसके नाम अणुबम है । जिकि सतुलन के लिए यह अनि व्यय है कि भारत का अणुबम बनाने ।

श्री लका के भारत वशीधो की समस्या

आय ममात्री म्ता ने सरकार पर आरोप लगाय कि श्री लका के १। लाक बरन वीर्य लोपो हो चावम लेना स्वाकर करक उनत कु ह्य पर क लो क विरु म ग लोच दिरा है । क व जाने अा गे न मरन वीर्य लोपो को निकाल द । भाण क अ न म आान करा कि जनना की त्याग के लिए त्याग करन हेतु सरकार को स्वयं-रा का उद ह्यण राख्यन करना व ह्ये । बीनी अ क ण क समग्र जनना मे उरन हुई याग भावना को सरकार ने स्वण निय अण जमे मूलना पूण गग उठाकर समाप्त कर दिव ।

—बसंत बानी

ईसाई सम्मेलन विरोध

कैथोलिक ईस ई सम्मेलन क सम्ब ध मे निम्न अ र्ष समाजों से हमारे पास विरोध मे पारित किए गये प्रस्ताव आये हैं —नेरठ सबर, पुरानी मण्डी सहारनपुर रेल बाजार कामपुर पुरानी गोबाम, गया बेहराडून आर्य -प प्रतिनिधि समा गाजीपुर तथा सम्मेलन के विरोध मे अनेक वक्तव्य भी आये हैं किन्तु स्थानाभाव के कारण हम उनका सार मात्र ही प्रकाशित कर रहे हैं —

श्री पं० रघुवीर सिंह शास्त्री

सन्त्री भा० प्र० समा पत्राज

भारत प्रथम सन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री जी के ईसाई सम्मेलन मे पचारने की स्वीकृति का आधार भी

काङ्ग्रेसल घोषित जा के साथ ननकी हुई ताभी भेज श्री प्रतीत हुती है जिसमे नप सरकारी स्हयोग की वृष्टि से विशेष यचना को मई होगा ।

श्री रामदाम जी प्रधान

अ० भा० दय न द मालज्जन ममजन होजगारपुर बम्बई के ईव ई सम्मेलन का मून लोय चित जनक सम्भर राजनतिक अमिमिज है जनका राष्ट्र के कोने-कोने मे प्रबल विरोय किया जान चाहिये ।

श्री दयास्वरूप जी

प्रधान सदस्य सावदे प्रक समा

यह ईसाई सम्मेलन मारी बन्दिबानी द्वारा उपलब्ध देश की स्वतन्त्रता पर कुठाराघात करने बाका है ।



रोमन कैथालिक चर्च का आन्तरिक चित्र

पोप साक्षात्पुत्र के विस्तार में सर्वाधिक हाथ दक्षिण आयरलैंड के निवासियों का है। समार में मिलने भी कैथालिक मिशनरी काम कर रहे हैं। उनमें १० प्रतिशत दक्षिण आयरलैंड के हैं अथवा वह लोग हैं जो आयरलैंड से अमरीका आदि देशों में भाग भाग कर जा चुके हैं। पोप की महापरिचय के सख्य जिनको क इतिहास नाम से पुकारा जाता है अधिकतर आयरिश वंश के ही हैं। अमेरिका तथा जपानो भावा भाषी सब यूरोपीय राष्ट्रों के काठिन्यल भी प्रायः आयरिश ही हैं।

क्या उपस्थित होता है कि क्या आयरिश लोग विशेष रूप से ईसा के भक्त हैं अथवा उनमें त्याग की भावना विशेष है? उत्तर में प्राधान्यरूप से यह कहा जा सकता है कि न तो उनमें ईसा के प्रति विशेष भक्ति है और न त्याग की भावना ही। रोमन कैथालिक चर्च में और उसके आदेश पर चलने वाली अनेक आयरलैंड की कैथालिक क्लबों के आयरलैंड निवासी युवक युवतियों की उन्नति क्लब मार्गों की प्रायः आमूल रूप से अवरुद्ध किया हुआ है। उन के लिए आयरलैंड में उच्च शिक्षालय भी नाममात्र की ही हैं और जो हैं उनमें दर्शन, तकनीक, विज्ञान अथवा कला शिक्षा का अभाव है। जब द्वारा अभावित इन शिक्षालयों का एक मात्र उद्देश्य छात्र छात्राओं में कैथालिक पथ की बुद्धि एवं लक्ष्यपूर्ण मध्यमताओं अधिष्ठित करने के प्रति आस्था उत्पन्न करना है। इन शिक्षालयों में इस बात का धुरा-धुरा प्रयत्न किया जाता है कि छात्रों के अन्दर महानिष्ठा का अनुभव हो और बुद्धिवाद की किली भी प्रसार की जाए उनको बल करने पाए।

आयरिश युवक युवतियों के विवाह सम्बन्ध भी चर्च की अनुपमति से ही हो चुके हैं और जब आमूल रूप से उन को कभी आमूल रूप से तक विवाह की आज्ञा नहीं देता। बिल का अन्तर्गत परिचय उनमें शीघ्र सम्बन्धी घृणित रोगों का बहुतायत के साथ होता है।

आयरलैंड के लम्बे एक अस्पताल में प्रतिवर्ष आयरिश कुलुम्बिकाई २१० आरक्षक तत्तान उत्पन्न करती हैं और चर्च के अन्तर्गत के अन्तर्गत के एक प्रकार की आरक्षक

सम्मान की उत्पत्ति प्रति वर्ष ५००० के लगभग है।

भोग मिल सिता तथा अनाचार का जीवन इन आयरिश युवतियों तथा युवकों को भ्रम के बाँटों के सर्वथा अयोग्य बना देना है जिससे यह प्रामो को त्याग कर नगरों की ओर अति बग के साथ भाग रहे हैं। इनमें किसी भी प्रकार की ब्रह्मचर्य व औद्योगिक शिक्षा न होने के कारण यह चर्चों के द्वारों पर प्रायः-पत्र लेकर पहुँच जाते और प्रसारक प्रचारिका बनने की याचना करते हैं। कैथालिक चर्च इनको अल्प वेतन देकर अपने मित्रियों में भर्ती कर लेने और कुछ समय अपने मन्त्रियों की शिक्षा देकर मिशनरी और नर्स बनाकर भारत, अफ्रीका तथा एशिया के बौद्ध देशों में भेज देते हैं। इंग्लैण्ड आदि में उत्पन्न आरक्षक आयरिश नवयुवकों और नवयुवियों के लिये तो केवल एक मात्र जीविका का आधार मिशनरी व नर्स बनना ही है। हम अपने उपरोक्त कथन की पुष्टि में कुछ निम्न प्रमाण प्रस्तुत करते हैं—

१—कक के अभाव कारणेण्डिस लुनी लिखते हैं—

Rural Ireland is stricken & dying & the will to marry and live on land is almost gone

अर्थात् आयरलैंड का प्रायः क्षेत्र अत्यन्त वीरित और मरणास्पद है। विवाह करने की उनकी मानवायें नष्टवाय ही चली हैं तथा अन्न देश में रहने की उनकी आकांक्षा सर्वथा लुप्त हो रहा है।

२—रकेश्वरी बलेघर लिखते हैं कि—

Non marrying or late marrying to see the young women to forsake the country side

अर्थात् प्रविकसित रहने अथवा बहुत देर से विवाह करने की अनुपमति मिलने के कारण नवयुवतियाँ पाम्य क्षेत्रों से पलायन कर रही हैं।

३—आयरलैंड के प्रसिद्ध कान्तिकारी मूढग्य नेता भी कुलुम्बेन महोदय इन आयरिश कैथालिक मिशनरियों के सम्बन्ध में लिखते हैं कि—

These are men of low birth, low-feelings, low habits & no education



जान माइकेल का भयङ्कर विस्फोट

जान माइकेल आयरिश युवाओं का महान नेता था जिसको कटमन्य के पकड़ करने के अपराध में १८५१ की कॅथोलिक सरकार ने देश निकाला दे दिया था और जो अमेरिका के न्यूयॉर्क नगर में जाकर बस गया था। वहां से उसने सिटिजन नॉन्-रेसिस्टेंस सोसिटी के कॅथोलिकों की क्रूर अमानुषिक व्यवस्थाओं का खणन करते हुए पोप की ध्यावरत के सम्मुख में लिखा कि—

It is the germ of national perdition unfolded in a hot-bed of hell and transplanted by the hand of the devil into this upper world for the ruin of human happiness

अर्थात् यह पाप का सदा राष्ट्रगत का नश करने वाला अथवा अयरिश जात का विनष्ट करने वाला फटाफू है। जसमा नरक की घबकती अग्नि से विकसित हुआ है और शतन क हथो से इस अचरित भूमि में अर्थात् स्वयंभूमि में मानवों की सुख शान्ति का विनाश करे हुए इसको आरोपित किया गया है।

जान माइकेल की इन स्वरटोक्ति पर किसी भी प्रकार

अर्थात् यह आयरिश प्रचुरक प्रायः जागृत हैं। इनकी भावनाओं और विचार सक्षुब्ध और चुकठ हैं। इनके आचार निरुद्ध हैं तब शिना काता इनमें अभाव ही रहता है।

४-प्रायः लैंग के प्रसिद्ध डाक्टरों लेखकों एवं सामाजिक कार्यकर्तियों का मत था कि 'ग्लेशडन' अपनी पुस्तक "दो आयरिश एण्ड कैथोलिक पावर" में निम्न शब्दा में व्यक्त किया है—

Irish men particularly from adolescence to marriage masturbate very frequently

अर्थात् आयरिश जन कीमार्गावस्था में विवाह होने से पूर्व तक हस्तमग्न अधिकतर करते रहते हैं।

५-इलनटाड अपना पुस्तक के पृष्ठ २३४ पर लिखता है कि—

Bulk of people in Ireland are enslaved spiritually mentally and philosophically by these who came from their own nation

अर्थात् आयरलैण्ड की अधिकतर जनता उनका सपठन

की टीका टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं है। रोमन कथालिक चर्च द्वारा उसकी प्राणधारी मातृ भूमि आयरलैण्ड के निवासियों का जो क्रमिक विनाश किया जा रहा है उसका मन विषय उसके मानस नेत्रों के सामने घूम रहा है। रोमन कथालिक चर्च राष्ट्र धम का स्पष्ट विरोधी है और राष्ट्रपता को मिटाकर बहु सत्ता में जो साम्राज्यशाही का सत्त उद्यम स्थापित करना चाहता है जान माइकेल उससे अत्यंत क्षुब्ध है। यह सत्ता जो स्वयंभूमि है उसका कथालिक चर्च नरक बनाना चाहता है और सुखशान्ति सरसामे वाले परमत्मा के दिव्य साम्राज्य में जीनान का शासन स्थापित करना चाहता है ऐसी जान माइकेल की अतागत्या की आशा है। ईश्वर कृपा करें कि कथालिकों के यत्निक पर ये प्रबिबेक, मताम्भता और अन्धविश्वासों का पर्दा उठ जावे और मानव को पशु बनाने सम्बन्धी अपनी कुदित्त गतिविधि को त्यागकर सत्ता में और अधिक पाप के मागी न बनें।

— लिख'



के नियमों को अर्थात् रोमन कॅथालिक चर्च द्वारा आध्यात्मिक मानविक एवं बौद्धिक अथवा वास्तविक दृष्टि से दाग बना वो गई है।

पाठकों से यह जानकर आश्चर्य होगा कि जबकि सत्ता के प्रत्येक वे, की जनसंख्या दिन बूनी और रात चौगुनी बढ़ रही है, यह अमागा दक्षिण आयरलैण्ड ही रोमन कथालिक चर्च की कृपा से ऐसा बना दिया गया है कि जिसकी जनसंख्या उत्तरोत्तर घटती पर है और इस घटती का यदि यह ही क्रम चालू रहा तो एक वंश शत वंश के बाद आयरलैण्ड जनसूय ही जावेगा। दूसरे शब्दों में रोमन कॅथालिक चर्च का मेरुदण्ड ध्वस्त ही जावेगा। दक्षिण आयरलैण्ड की जनसंख्या एक शती पूर्व लगभग ६ लाख थी जो घटते-घटते अब २९ लाख से भी ग़ुन रहा गई है।

हमारा दृष्टि में दक्षिण आयरलैण्ड के विनाश का एक मात्र स्तरदायित्व रोमन कॅथालिक चर्च पर है जिसके महापुरुद्वैत पाप पाक बर्बाद से बहार रहे हैं। — लिख'



कैथालिकों का आदर्श समूह सालाजार

गोवा के पुण्य प्रदेश पर 15 मई 1910 ई० में स्व-प्रथम अंकनण वास्तुको देवागली क-सुत्र में पुतागली कैथालिकों का ही हुआ था। यह लोग स्वयं वापकर प्राये थे और कालीकट के हिन्दु नरेश को धोखा देकर इन्होंने बड़ी अपना दुर्ग निर्माण किया और 12 घण्टे के अन्तर अन्तर गोवा पर पुर्तगाली शासक गढ़ दिया। गोवा पर ही नहीं मंगलोर कर्चीन लका विष बम्बई व तागा पट्टण को भी अपने आधीन कर दिया और रोमन कथा लिफ ईसाई धर्म का प्रचार करना प्राप्ति कर दिया।

इनके प्रचार के कारण मुक्त नगरी असा असा नगर जावि न थे। एकमात्र साधन या तत्व न। न वर नीर फाल हार्यों मे लेकर पुतागली कथा करनी पाव पाव जाते और मोली शान्तिस्थि जनना की सम अष्ट करते। श्री हिन्दु रविवार को गिरजाघर न जाए उनका कालागार में डकेल दिया जाता हवन संस्कार पूत पाठ कती को पकड़ कर भीत के घाट उताग जाता। धनतो पर भारी कर लगाया जाता और कर न देने पर उनका सब मपति बन्त कर ली जागी यिना की मुद्रा पर उरनी सन न को कानूनन ईगाई बनाया जाना हिन्दु अर्धर को वापकर गिरजाघर बनाया जाता। यद्य कालिक प्रथम प्रचार के बबरतापुण साधन जो लभ्य समान रा उचित करने वाले हैं।

ई० सुन्दर लाल जी ने अपनी पुस्तक "भारत मे अपेक्षी राज्य" मे स्पष्ट लिखा है कि "यह लोग पुतागली कैथालिक कट्टर धर्मो ईसाई थे और जिस देश पर भी इनका राज्य होता था वहा की भ्रमा को नबरदस्ती ईसाई बनाया वह अपना धर्म समझते थे।"

पुर्तगाली गवर्नर अन्तरजो दे-मुन्ना ने इन कैथालिक लिखा है कि "हम पुतागालियों ने इनके धर्म को 17 दूसरे में सन्धि लेकर ही भारत मे प्रवेश किया।"

पुर्तगाली तानाशाही और मना 1510 ई० के तन्त्रिम तक चला आ रहा है। आगिया विमर जी 1510 ई० को तानाशाही के गीत गाते और तानाशाही समिति के जाने अन्तरार में मुक्त रहते हैं। सालाजार का डिक्टेटरशिप

उनकी दक्षिण में ईव इष्ट का आदेश शासन विमान है जिसका गत गाते यह कैथालिक पदवा करी नहीं चकते। इस सम्बन्ध मे श्री बलनराज के निम्न शब्द विचार-योग्य है—

The Irish bishops and priests still reveal many pro-fascist tendencies and many high Irish clergies praise Spanish & Portuguese dictatorship in exultant terms. Sala Zar's Christian dictatorship is still held up as a model for Irish Catholics

अर्थात् आयरिश बिशप और पादरी प्रायः दिन भी अकेल ना ही पृथुनिमी के शिखार हैं। अनेक उच्च कोट के आयरिश प्रशासक स्पेनिश और पुनगी तानाशाहियों को प्रशंसा करने मे अतिशयोक्ति से काम लेते हैं। सालाजार की ईसाइयन की तानाशाही इन आयरिश कैथालिकों की दृष्टि मे आज दिन भी आदर्श शासन व्यवस्था है।

भारत व यीरों के बलिदान गोवा पुर्तगाली साम्राज्य के गद्दी के प्रगानगे मे मुक्त हुआ है और प्रथम वहाँ के हिन्दुओं ने टण्ठी स्वाभ ली है। किन्तु कालिक पादरियों का गोवा की मुक्ति अत्यन्त अन्तर रही है। मुना है पाप पाल का गाटा ले जाने की भी घड-गन्ध रचा जा रहा है जिससे बड़ी के कैथालिकों मे अन्तर आने पर भारत गणतन्त्र के विरुद्ध उठ खडा होत को प्रेरणा दी जा सके।

—'सिध'

(पृष्ठ 6 का शेष)

भारी भ्रम मे हैं जो यह समझते हैं कि यह अविद्यान केवल कथ लिफबादक प्रचारको का एक परित्र मालन मन्त्र है।

इस पुस्तक के मात क कालिक पादरियों ने, जो अत्यन्त धर्मनका आशान्न कर रहे हैं अपने भी भारत जनता के समझ नानल मे प्रस्तुत कर दिया है। यदि इनने पर मतारी वरकर की प्राप्ति नहीं खुलती और वह तनुचित पण नहीं उठाती है तो इसको विषय की विद्वान्ता क अतिरिक्त और क्या कहा जायगा ?

—'सिध'



इङ्ग्लैंड के बिशप जोन राविन्सन ने—

ईसाई जगत् में भारी कम्पन उत्पन्न कर दिया

(के०-पी० व० लिबरवाल्ड जी मुख्य उपबन्धनों आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तरप्रदेश)

बिशप महोदय ने ६० पृष्ठों की एक पुस्तक (अरनेस्ट टू गाड) अर्थात् ईश्वर के प्रति सत्यनिष्ठा नामक सन् १९६२ में प्रकाशित की। पुस्तक का ६००० का प्रथम संस्करण छपते ही हाथों हाथ निकल गया। इसी संस्करण १०००० छपा और वह भी पुस्तक विक्रेताओं के पास पहुँचने से पहले बिक गया। सन् ६२ के अंत में तृतीय संस्करण ३०००० छपाया गया।

इस पुस्तक के आधार पर अमृत बाजार पत्रिका के लण्डन स्थित सहाय दाता श्री सुन्दर कबाड़ी ने जो अपनी डायरी में भी है उसको लखनऊ में रत्नकर पत्रिका के जय शेरपुर संस्करण में ३१ मार्च ६३ को (पलीट स्ट्रीट आन बाउ-पाथ शीवक एक सेक प्रकाशित हुआ है। जिससे बिशप महोदय के कान्तिकारी बिचारों का पता चला।

अपनी इस पुस्तक में बिशप महोदय लिखते हैं कि—

I realise that my book (Honest to God) will shake a lot of people and that many will think that it is heretical

अर्थात् मैं यह अनुभव करता हूँ कि मेरी यह (ईश्वर के प्रति निष्ठा) नामक पुस्तक अनेक धर्मिकों के बिचारों को प्रकम्पित कर देगी और अनेक यह ही समझेंगे कि यह पुस्तक नास्तिकता का प्रचार करनेवाली है। आप आगे लिखते हैं कि—

I do not fully understand myself all that I am trying to say Should I have waited until my own mind was made up This is a question that always faces a Bishop But I am concerned about the damage being done by some of the outworn images which make it almost impossible for the 20th century man to accept that the christian faith has any relevance for him

अर्थात् मैं स्वतः इस बात को बली प्रकार न समझ सका कि क्या मुझ को उस समय तक के लिए प्रतीक्षा

करनी चाहिए थी कि जो कुछ मैं कहने का प्रयत्न कर रहा हूँ उसको उस समय तक मैं प्रकट न करूँ जब तक कि मेरा मन इस सम्बन्ध में सुदृढ़ न हो जाय। यह एक ऐसा प्रश्न है जो एक बिशप के सामने सदा उपस्थित हुआ करता है। साथ ही मैं इस सम्बन्ध में बिशप के बाहे अथवा कुछ उत्तरदायित्व भी समझता हूँ। आज बिशप ईसाइयत के इन विपरीत विचारों द्वारा जो हागि हो रही है, मैं उसकी चेष्टा भी नहीं कर सकता। जोबनों बर्बो का मानव आज अपने आप को यह स्वीकार करने में असमर्थ पाता है कि ईश्वर का उसके जीवन के साथ कोई सामञ्जस्य है।

यदि धर्म की आयु का युवा पावरी धर्म के सम्बन्ध में एकदम भ्रान्त विचारों की अपेक्षा ईश्वर और स्वर्ग के सम्बन्ध में परिभाषित एवं तर्क संगत विचारों का अधिकार है। बिशप की इस मान्यता का आधार बुद्धिवाद के इन युग का सनातन नैतिक बिकसित स्तर है। आज के इस प्रकाश के युग में धर्म सम्बन्धी काङ्क्षित तर्क शून्य माध्यमों केवल भालकानन व तुल्य हैं।

आज दिन चौथे आगमन में स्थित तथाकथित ईश्वर के प्रति आस्था उत्पन्न करना बिशप की बुद्धि में सम्भव नहीं।

मातृक बिशप ने अपनी पुस्तक में ईश्वर के स्वरूप का प्रतिपदन करने का प्रयत्न किया है। बिशप निश्चय ही सत्य का अन्वेषक है और वह स्पष्ट स्वीकार करता है कि ईश्वर सम्बन्धी अनेक प्रश्नों का समाधान करने में मैं अपने को असमर्थ पाता हूँ। अपने बिचारों के अनुकूल वह परमात्मा की व्याख्या करते हुए लिखता है कि—

God is the ultimate reality, God is the ground of our being

अर्थात् ईश्वर ही एक मौलिक सत्य है और ईश्वर ही हमारा जीवन आधार है।



बिज्ञप यह भी कहता है कि म नत्र को अब तयारकयित स्वर्गीय पिता की माग्गना से ऊपर उठना होगा और यह भावना ही पढ़ेगा कि ईसासहीह सबेह बोये आसमान पर नहीं गया ।

बिज्ञप महोदय की इन पुस्तक मे ईसा सम्बन्धी इन बिचारों की भी हिला दिया है कि बड ईश्वरपुत्र वा एक स्रष्ट के रूप में प्रकट हुआ अर्थात् उसने स्वयं से एक छासांन लगाई और वह पुत्रही तल पर मानव के रूप में प्रकट हो गया ।

भाबुक बिज्ञप साधारण ईसाइयों की माति यह स्वीकार करने की भी उछत नों कि ईसा स्वयं परमात्मा सचवा परमात्मा का एकलौता पुत्र वा ।

“मरियम के कुमारी रहते हुए उसके गर्भ से ईसा की उत्पत्ति हुई” इस माग्गता को भी बिज्ञप आवर देने की तैयार नहीं । जब उसमे इस सम्बन्ध मे पुछा गया तो उसने स्पष्ट कहा कि—“सले ही लोग मुसे नास्तिक कहें किन्तु मैं इस प्रकार के विश्वास रखने मे असमय हू । बाइबिल में इस सम्बन्ध मे ओ प्रमाण एब स अियां अंकित की गई हैं बह अवर्णित हैं । हम ईसा मे ईश्वरीय सत्य का केवल प्रकाशमात्र देखते हैं । बाइबिल मे यह भी स्पष्ट निर्देस नहीं किया कि ईसा स्वयं परमात्मा था ।”

हादिक बिज्ञप की दृष्टि मे बाबा आवम तथा माता हबया का स्वर्ग से अवतरण होना केवल कार्टूनों मे बिचित्र करने वाले कथानक हैं । इनकी यथायता मे कोई बुद्धिवादी मानव विश्वास नहीं कर सकता ।

बिज्ञप महोदय का ईसाइयों की प्रार्थना के सम्बन्ध में भी मतभेद है । आपका कहना है कि ईश्वर प्रार्थना सम्बन्धी बिचने सूपडे परामश देना जिनमे आत्म सतुष्टि न होती हो बहुत सरल है किन्तु बहू सम्बन्धी ओ जिज्ञासाए परामर्शदाता श्वाक्ति के मन मे उत्पन्न होती हैं क्या इन परामर्शों से उछका अपना भी कभी समाधाव हुआ है ?

मानवीय बिज्ञप महोदय के इन बिचारों से ईसाई जगत् में एक कानिस् उत्पन्न होगी । और ईसाई बिचारों की बाइबिल की अनेक माग्गताओं से हाव धोना पड़ेगा । उछमें अनेक सज्ञोचन एब परिवर्तन करने होये तथा बाइबिल के अनेक स्रष्टक्यों को सुद्धरत एब सभरत के

अनुकूल सगनि लगानी होगी । यदि ईसाई जगत् के सूर्यग्ग्य बिचारक इस दिशा मे सत्रिय न हुए तो जहा साम्बदाही देको मे ईसाइयत को अधवग्ग बिधा वा रहा है अमेरिका, यूरोप के बुद्धिवादी राध्दों मे भी इसके प्रति अनास्था का षगायक बाताबागण उत्पन्न हो जायेगा । सले ही कुछ काल के लिये पिछडे हुए देशों व जातियों में कामिनी काँवन व छल छिन्न के आचार पर ईसाइयत की जिग्गा रसा जा सके ।



आर्य महिला सम्मेलन

दिनांक २६ व २७ अक्टूबर की मेरठ नगर मे आर्य केन्द्रिय समिति मेरठ के विशाल वण्डाल मे श्रीमती विद्यावती सेठ देहरादून की अध्यक्षता में प्रांतीय महिला सम्मेलन किया गया ।

यह सम्मेलन प्रांतीय आर्य महिला सङ्घ की ओर से किया गया जिसकी सञ्चालिका महिला सङ्घ की सत्रिणी श्री शकुन्तला गोयल मेरठ हैं ।

सम्मेलन मे रात के विभिन्न स्थानों से लगभग ५० प्रतिनिधियों ने भाग लिया । सम्मेलन मे लगभग १००० बैबियों की उपस्थिति रही । आय विदुषी श्री पुष्पा एम ए बाराणसी, श्री कुलकुमारा लखनऊ, श्री सत्वमाया बरेली, श्री सौजन्या ओ वानप्रस्थाधम उवाच पुर, श्री प्रमसुलमाधयति वानप्रस्थाधम बडालापुर्, श्री माता त्रियम्बदादेवी हरदोई आदि के भाग्य हुए । प्रांत मे महिलाओं को सगठित करने, धानिक शिक्षा को पाठ्यक्रम मे स्थान देने, फंडेशन व विदेगी भावा, आचार व्यवहार रथागने आदि सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये ।

आवश्यकता

एक २४ बर्षीय एम एस. सी की एड कैकबरर के लिए एक सुम्बर, सेट्टुएट आर्य परिवार की (कूर्मीअभिय) बधू बाहिये । पत्र-ध्यवहार का पता—

बेचनसिंह, सत्री आयसभा
पे० कलकत्ता (मिथकपुर)



करे अन्ध-विश्वासों पर ही—

ईसाइयत की आधारशिला धरी है

(ले०—श्री बिहारीलाल जी शास्त्री)

ईसाइयत की यह भावना है कि सत्ता भर के सब मनुष्य पापी हैं। क्योंकि हजरत अब्रहम ने ईश्वर का आदेश न मानकर बजिन वज्र के फल काकर पाप किया अतः उनही सब सनान में पाप का सत्कार वशानुक्रम से होना पड़ा। और इन पाप के वोज को नष्ट करने के लिए ईश्वर ने प्रभु कृष्ण को जन्म लेकर उन पाप पर ही प्रभवे नाम के वात्सल्य से दवा दूर करने का उपचार किया और उन पाप के नश को अपने स्वयं के प्रभु कृष्ण के कट उतारना ही उचित समझा। अतः प्रभु कृष्ण के नाम पर शिश्न, लला, सतम मूल वाप निकल जाया और वह एक अन्तरीयन अर्थात् स्वयं का अधिकारी हुआ। परन्तु विश्वास शत है और वह विश्वास इस प्रकार से होना चाहिये—

क—ईशु बरारी (अक्षत योनि) मरियम से ईश्वरीय आराम से उत्पन्न हुआ।

ख—बहु निष्ठाप और परित्र था।

ग—उतने मनुष्यों के पाप के बदले स्वयं कृष्ण का कष्ट उठाया।

घ—वह (येशु) कृष्ण पर लड़ाया गया। मरने पर गाड़ा गया और तीसरे दिन जी उठा और सबेह ईश्वर के पास पहुँच गया और अब ईश्वर के दाहिने हाथ आसन पर आसीन है।

जो शक्ति इन विश्वास के साथ कैसी पवरी द्वारा बलिदान लेता, वह स्वयं प्राप्त करता। उसको नब प्रकार के पापों के फल नष्ट हो जायेंगे परन्तु अब्रहाम करीबानों से स्वभावतः यत्नकारों विज्ञ प्रकट होगे।

१—बह सपने का उठा लेता। २—उर्रर का उठा। ३—नामा प्रकार की आवाज बलेगा। ४—रोगियों पर हाथ रख कर उन्हें चंगा कर देगा। (पदा मकूम का पुस्तकालय अन्वेषण पुस्तक)

अब त्रिवाणीय यह है कि पूर्ण पिता का पुत्र भी मूल ही हो, काने का पुत्र भी काना ही हो, कुराचारी का बेटा भी कुराचारी ही हो। नास्तिक का पुत्र पौत्र आदि सब वगैरे नास्तिक ही होता रहे यह बाल मुशा हवे (लोक प्रत्यक्ष) क बिना है। अतः आराम का सब वज्र ही पापी होता है उदा. १) अर बरगाव है।

यदि हजरत अब्रहम ने यह बात मानी ली जायें तो ईश्वर का नाम लेकर मसीह के समय तक नये पापों को शक्ति पाप महिन् ही मरते रहे। इतना ही उपाय क्या नहीं मुसा ? वे शक्ति सब के मरने पर सत्कार रहे। ईश्वर को उन पर क्या क्यों नहीं जी ? उतने उन्वे समय के बाद मुशा को उपाय मुसा। हत जघर की बात ?

हजरत अब्रहम हजरत मुसा, हजरत दाऊद, हजरत मुहम्मद एक त जोन क्या सब नरक में ही गये ? यदि मही तो जिस उपाय से ये सब स्वयं को गये उठी उपाय से अन्य मनुष्य भी जा सकते थे फिर ईश्वर को अबतार लेने की आवश्यकता क्यों पड़ी ?

हजरत निष्ठाप तो मसीह के जन्म से पहले ही सबेह स्वयं पहुँच गये त्रिवा वात्सल्य लिये ही यह ईसाइयत की मानत है। जब त्रिवा बिना येशु के बलिदान के स्वयं जा सकते हैं तब येशु का बलिदान देने की क्या आवश्यकता था ?

यदि अन्त योनि मरियम से जन्मे इसका प्रकट ईश्वर का उपाय है जब इनके उलझे हुए बचनमात्र हैं। हजरत अब्रहम यह का यह दयों न इती जुम में और उनका कि उन्वे यत्नकार का मामले में शायद समझते थे। ईश्वर ने मुशा का कौन नही समझाया कि अरिधय लेने द्वारा मरना है और त्रिवा तथा निष्ठाप ध्यास है। यह १४६६-१४७७ ई. में लिखा गया कि ईश्वर ने मुशा को उपाय मुसा।

रहा वा नहीं ?

योसू का क्रम पर चढ़ाया जाना भी असिद्ध और प्रमाणाशुय है। ईसाइयत का सबसे भी मन इस्लाम मसीह का क्रम पर चढ़ाना और मारे जाना नहीं मानता। यदि मसीह क्रम पर से ही ऊपर हो उड़ जाता तो सबह की कोई गुत्रायश नहीं रहती। और कब से उठने के बाद जैमे छिप छिपकर चेलों से योसू मिलता रहा वैसे ही यहूदियों के नेताओं की भी दशन दे देता तो उसके चमत्कार की शक कम जाती। पर यह सब मामला गाल मोल रहा। यह साग का सारा प्रपञ्च पोलूम पीटर आदि चेलों का रखा हुआ सिद्ध होता है, जिसका आधार केवल अध-विश्वास है। भारत की निम्न श्रेणी के अशिक्षित लोगो मे जैसे मूल प्रेत जाहिरि पीर (गुगापीर) आदि भी कयाये चलती रहती हैं वग ही कह निया चारा इजो लो मे मरी पढ़ी हैं ऐवो बातो पर बुद्धिहीन जनता हा विश्वास कर सकती है।

यदि मसीह के नाम पर बलिस्मा लेकर मनुष्य स्वग जा सकता है तो पत्रामृत पाश्च, गगानान करक, राम-नाम लेकर स्वग क्यों नहीं जा सकता ? तकरहिन विश्वास तो सब एक ही श्रेणी मे रखले जायेगे। चाहे वे हिं दुओ के हों वा ईसाइयों के वा अन्य किसी के भी। अन्धविश्वास तो अन्धविश्वास ही है।

जैसे चमत्कार इजो लों मे योसू के लिखे हैं वैसे ही और जमाने भी बढ़िया चमत्कार भारत के सन्तो के बताये जाते हैं तो फिर भारत के लोग उन्हे छ-उकर योसू के पास क्यों जायें ?

अब रही विश्वास की परक तो जब तक कोई शोप पावरी बिनाप आदि विष साकर, सांय पकडकर, हाय करने से रोगियों को चगा करके न दिसा दे तब तक ये सब अविश्वासी हैं और इन अविश्वासियों के हाथ से किया बलिस्मा भी धर्य हो है। अब ससार मे कितने पावरी हैं जो साकस की लिखी कसोटो पर परीक्षा देने को तैयार हैं ? क्या शो पोपपाल छे बा उनके कांड मल जहर खाकर परीक्षा देने को तैयार ? और जब मसीह के विश्वासी पावरी हाथकर करों को चगा कर सकते हैं तो ये मिशन के अस्मल कयों कोले गये हैं। सब बासटों को छुट्टी दो इबाओं को फेंक दो और पावरियों के

एक बात स्पष्ट कर दे कि अब कोई कोई ईसाई इजो ल की उक्त बातो को अलकारिक कह देत है कि जहर खाने से तारक्य है दूबरो वा ओ मरु लना परंतु इजो ल का तात्पर्य ऐसा नहीं है। इजो ल क मत से ये बाक्य आलकारिक नहीं कि तु चमत्कारिक है। योसू के चेलो के कामो मे वणन आता है कि उन्होने ऐसे चमत्कार दिसाये। लोगो मे से मृत प्रेत निकाले, अत यह सब मसीह के भोजो की तरह भोजो दिसाने का ही वणन है परंतु इस बतानिक युग मे इजो ल के सब भोजो (चमत्कार) बर गये करामातों फेल हो गयीं। तब बलिस्मा और विश्वास भी फेल रहा वा नहीं ?

यदि बलिस्मा लेन पर मन बरल जाय और व्यवहार भी उत्तम होने लगे तब तो माना जा सकता है कि बलिस्मे मे कुछ प्रभाव है और यदि बलिस्मे वालो और बिना बलिस्मे वालो के मनो और व्यवहारो मे कोई भेद नहीं है तो बलिस्मे मे कोई प्रभाव नहीं है। ओर जब बलिस्मे मे कोई विशेष प्रभाव नहा दीलता तो कसे मान लिया जाय कि बलिस्मे बरल क वाय दूर हा गये ? और कसे समझा जाये कि वह स्वग गया। हिं दू मानते हैं कि गगानान से मुक्ति मिल जायगी। मुयनमान मानते हैं रोजा करने से मुक्ति मिल जायगी इयो तरह ईसाई मानते हैं कि बलिस्मे से स्वग मिल जायेगा। यदि ईसाई अपने पत्र को सत्य मनन है ता सब सिद्ध मुयलमानो को बात भी सच मानी जायगी बुद्धि नकरग उत्तर नहिं मुयलमानो पर है न ईसाइयो पर। योसू का शिष्य य क्व करता है कि कर्मों के बिना विश्वास मुदी है। यदि यह बात ठीक है तो मुयन मन हो मुक्ति दिला सकते हैं। फिर योसू के नाम पर बलिस्मा लेना गगानाना आदि सब व्यथ रहे। वस्तुतः तो घम साधना का नाम है। बिना साधना के करे अन्ध विश्वापो पर भरोसा करना मरु मूलना है। जब तक मनुष्य के जीवन मे परिवर्तन नहीं होता तब तक ईसा गगाना आदि कोई भी मुक्ति या स्वग नहीं दिसा सकते। स्वर्ग चाहने वालों का यह आचरण करना चाहिये।

सरल स्वभाइ न मन कुटिनाई,

यथा साम सतोय सदा हो।

कीमल बित डीनन पर दाया,

पय सब कर्म पय पक्ति चलयत ॥



सबहि मानवद आय अमानो,
भरत प्रानप्रिय धम ते जगो ॥

—गोस्वामी तुलसीदास

सवार घर के ईसाई उपदेशकों से कितने हैं इन ऊपर की कसौटी पर उतरने वाले ? भारत के गैर ईसाइयों से तो ऐसे सतत सतहों मित्र जायेंगे फिर यहाँ पशु पक्षियों को नित्य मार कर खाने वाले पादरियों की क्या शक्यता है। ईसाइयत के पास न वंश न ऊँचे आराध, न उच्च कोटि के लोगो के चरित्र। कोरे अ-बहिःश्रम वी पर धर्म ईसाइयत का किला लडा है। बुद्धबाइ की एक ठोकर यह यह नहीं सकता। इनलिये पूराय वे पोपां न अनेक वनानिक, वाज-निक और बुद्धिबादियों को मरवा डला। विज्ञान और वंशन की उपरति से बाध ये डालीं। आन मो पूरोर क वंशानिक, वाशनेक और बुद्धिबादो लोग ईसाई नहीं हैं। केवल राजनैतिक और धनी श्वापारी ही ईसाइयत के पोषक हैं। इस धर्म का सम्बन्ध न सुधन वंशनक विवाहो से होता ही नहीं।

बुद्धिबादो विद्वानो को अपनी ओर आकर्षित क ने से ईसाइयत अममय है अतः भारत का कई मो विद्वान् हिन्दू ईसाई नहीं बना केवल मूल, गरीब आलसी और समाज न विरक्त लोग ही ईसाइयो से गये। ईसाइयत का माहिय हिन्दू साहित्य की तुलना से महानुच्छ है। गोता, रामायण श्रीमद्भगवत वेद त की तुलना से बाइबिल अति तुच्छ है। मनोह का चरित्र बहुत योडा मित्रता है और उसम न यडा ना जोगीना बिषय है। जवकि भगवान राम क चरित्र से मानव जीवन के लिये जहुरो सब हो आदर विद्यमान है। योशु का उद्देश इज्जिलो मे जो कुछ है गोता और बुद्ध भाषान के धम्मपद के उपदेशो की ध्वलो छाया मात्र है। अतः वदिक धम सनातन धम जन मन, बौद्ध धम निश्चय धम ये सब ही आय धम ईसाई मत से ऊँचे ठहरते हैं। इनमे बुद्धिपूर्वक उपदेश मरे हुए हैं। कमवाव (गुमागुम धर्मो का महारथ) इन धर्मो को सबसे बडो विशेषता है। ईसाइयत केवल अंध विश्वास और बुद्ध विद्वत् चमत्कारों पर टिकी हुई है। अतः हिन्दुओ को कमठ बनकर साधनीय त्रय से पूण अपनी धम का प्रचार करना चाहिये।

कैथालिक महाम्मेलन से भारत के प्रोटेस्टैन्ट ईसाई भी संशुद्ध

भारत सरकार ने आज तक भी देश में विद्यमान विदेशी मिशनो का राष्ट्रियकरण नहीं किया जबकि अन्य देश चीन को सरकार ने अपनी स्वयंभ्रता के प्रथम वर्ष में ही यह कार्य बुझापूर्वक सम्पन्न कर दिया था। चीन के राष्ट्रिय ईसाई चर्च का रोम के पोप के साथ कोई माता नहीं और न वहाँ विदेशी मिशनरियों के लिये कोई ठिकाना है। किन्तु अपने देश में विदेशी मिशन निरन्तर फल फूल रहते हैं। देश क काने कोने में इतने गहरे सुद्ध होते जा रहे हैं और भारत की जनता को वेग के साथ बराष्ट्रियता का पाठ पढाया जा रहा है।

माननीय जे० एल० बिलियन्स महोदय ने भारत में राष्ट्रिय ईसाई चर्च की नींव माली और अनेक स्थानों पर उनको शाखायें भी स्थापित की। किन्तु भारत सरकार ने इस चर्च का हिमो भी प्रकार की आज तक माह्यता नहीं दी। इस विशिष्टो के सम्मेलन से बिलियन्स महोदय अत्यन्त क्षुब्ध हैं और अपनी भावनायें निम्नप्रकार उगहोंने व्यक्त का हैं —

'इत प्रस्तावित अन्तर्राष्ट्रिय कैथालिक सम्मेलन द्वारा क्रिमी या प्रकार का भ्रम होने वाला नहीं है और ना ही यह पूरा चर्च परिधम के लोगों को एक नूतरे के निष्कट माने वाला है और ना ही स्वयं वगुण्ड में उनको बाँधने वाला गिद्ध होगा। यह केवल एक भारी शाही बरबार के रूप में सम्पन्न होगा और भारतीय जनता के अस्तित्व पर विदेशी मिशनो की प्रभुता और शक्ति का तथा अपनी विनाशकारी ताकत की छाप लगाने वाला सिद्ध होगा। भारत निवासी शक्तिय ईसाई जनता का हित इसी में है कि इन विदेशी मिशनो पर इनके धम और इनक बराष्ट्रिय देशी एकैष्टो की गतिविधियों पर सुरत कडा प्रतिबन्ध लगाया जाय।

इस पृष्ठ कार्य में भारत के राष्ट्रिय ईसाई सब का अपनी सरकार के साथ पूर्ण सहयोग होगा। इसी प्रकार के उद्योग भगलोन मिशन के डाइरेक्टर भी हीनरी राष्ट्रियम ने भी व्यक्त किये हैं और पोप की सेवा के भारत बाध्यन्ध पर अपना रोष प्रकट किया है।

—विद्य

कैथालिक चर्च ज्ञान और बुद्धिवाद का शत्रु है

कैथालिक ईसाई किसी भी कैथालिक शिक्षणालय में जैसे ही वह प्रोटेस्टेंट थ्योडॉस्ट आदि किंगी ईसाई चर्च से तो सम्बन्धित क्यों न हों अपने बच्चों की शिक्षा दिलाना चाप समझते हैं। अमेरिका में आयरिंग कर्मिकों की सख्या वो करोड़ से ऊपर है जबकि उनकी जम मूमि में कुछ कैथालिक जन सख्या घटते घटते अब २९ लाख भी नहीं रही है, अमेरिका में कैथालिकों की यह सख्या बहुत की जन सख्या का लगभग पन्चाशत है कि तु अमेरिका के उच्च शिक्षणालयों में पढ़ने वाले कैथालिक छात्र छात्राओं की सख्या केवल तान प्रतिशत है। कारण यह है कि वहाँ प्रायः उच्च शिक्षणालय अमेरिका के प्रोटेस्टेंट जासन द्वारा संचालित हैं जिनमें यह प्रपने बच्चों को पढ़ाना चाप समझते हैं।

अमेरिका में इनके अपने जो उच्च शिक्षणालय हैं उनमें विज्ञान, दशन, तक शास्त्र आदि बर्तित हैं जोकि इन विषयों के अध्ययन से बुद्धिवाद की हवा लगने का मय तथा इनका मत श्रुता और इनके अन्व-विश्वासों के दुर्गों के स्वरुत होने की आशंका इनके चित्त में बना रहती है।

रोमन कैथालिक चर्च किसी भी ऐसे ग्रन्थ की जिनमें कैथालिकों के अन्व विश्वासों तथा उसकी मना-पनाओं की प्रशंसा व अयश रूप में समालोचना की गई हो अने छात्रों को पढ़ने नहीं देता। आयरलैण्ड क स्कूल कालेजों के पुस्तकालयों में ही केवल नहीं अरि तु सावजनिक पुस्तकालयों तक में ऐसी पुस्तकों के रखने पर चर्च का ओर से पाबन्दी लगी हुई है। दक्षिण आयरलैण्ड की सरकार में जिन पुस्तकों की अबाच्छनीय नहीं समझा है और उसके संस्कार बोर्ड ने उनको मान्यता प्रदान कर दी है। पोप का बंदिखन सिटी का संस्कार बोर्ड उनमें से भी सहस्रों पुस्तकों को अबाच्छनीय घोषित कर चुका है।

बड़-बड़े विश्वविद्यालय लेखकों यथा बरन डगा बर्ट-रैण्ड रमल अनातोले काष्ट, वगसन, गिबसन जूगा क्रिस्टोकर, गोर्की आदि की लिखित पुस्तकों को भी निषेध कर दिया गया है।

जर्मनिक वेबेड की "इन्पोरियल वेबेड" में भी बोरेडी

की होली आइंग", नामन लयुनव का" 'साउथ विथड', अरनेस्ट प्ल बी बी हाबर' टास्तटाय बी 'असा करेनिना' ऐडिव ब टनकी 'गिल्डरसेत्र आक बी मून', क्रिस्टोकर माल्ल की पण्डर आन बी लपट', गबंटनायन की 'बन मोर सिरिग' आदि सपहणीय पुस्तकों पर भी प पडम द्वारा प्रतिबन्ध लगाया हुआ है। इतनसड महोदय अपने ग्रन्थ में यूरोप के लगभग १०० प्रसिद्ध ईसाई लेखकों तथा उनका पुस्तकों की ताणिका प्रस्तुत की है। इय पमर तक रोमन कैथालिक चर्च क कन्ड अटकन सिटी क सन्तर ब ड डरा ५००० से ऊपर पुस्तकों पर जो प्राय ईसाई बड़ नों द्वारा हा आबन है प्रातन्व लगाया जा चुक है।

आयरलैण्ड क किमी भी बावन लय में ऐसा कोई सवाकारन्वरी वे। नगों पा सकत जिनमें क र लिखों की मान्यताओं की समानोचना का जाती हा अरवा उन की अरजातान्वक बुद्धिवाड विरोध अरवा मान्यता के प्रतिकूल होने वाली पातर्बिचयो का मत्तना को ब ती हो।

इस विज्ञान बुद्धिवाद एव प्रकाश के युग में रोमन कैथालिक चर्च की यह कूप मशरुता निश्चय विषय के लिय अमान्य है।



आवश्यकता है

सुवर, गद कर्षी म दल कुलीन राजपूत कन्याओं (८) बी ए बी टी आयु २६ वर्ष (२) एम एस सी (फर्स्ट क्लास) आयु - ४ वर्ष के लिए योग्य, स्वस्थ कुलीन आय वरों की।

जाति पाति का बन्धन नहीं होगा।

पत्र व्यवहार निम्न पते पर करें-

रमजीतसिंह द्वारा आर्यमित्र
५ भोगवाडी भाग लखनऊ



अजमेरा में ऋषि मेला

दिनांक ७-२९ नवम्बर को अजमेरा नगर मे महर्षि स्वामी ब्रह्मानन्द जी के ८१वें विंशति दिवस के उपलक्ष्य मे समारोहपूर्वक उत्सव मनया गया। उत्सव मे श्रीमती विद्योत्तमा यति श्री पी० स्वामिप्रिय जी बड़ोदा पी० स्वामीनाथल भारतीय स्वामी प्रतान द जी पी० जगन्नाथजी उपाध्याय श्री पी० सुवर्देव शर्मा एम० ए० स्वामी रामेश्वरान द जी के भाषण तथा आर्य ऋषि विद्यालय बड़ोदा की छात्राओं के व्यायाम प्रदर्शन हुए।

महिम्ना सम्मेलन का अध्यक्षता आर्य सत्यासिनी विद्योत्तमायति जी ने की।

इन अवसर पर अराष्ट्रीय ईन ई निरोध सम्मेलन भी किया गया श्री विदेशी ईवाई पादरिण्डो को भारत से बाहर निकालने तथा विदेशी स मिशन को मिटाने वाली विपुल ध्वज ति पर प्रतिबध लगाने की स कार से माय की गई। राजस्वन राय प्रतिनिधि समा के मन्त्री श्री शिवशरणलाल जी आदि के इन सम्मेलन मे प्रभावशाली भाषण हुए।

स्वामी मेधावी जी की अध्यक्षता मे अथर्ववेद पारायण का सफल आयोजन, स्वामी रामेश्वरान द जी की अध्यक्षता मे खेल कूद प्रतिव गिता का पुरस्कार वितरण, श्री जे० व० गुक्ला जी का अध्यक्षता मे श्री कर्णूयालाल वाद गति गेता आदि का आयोजन किया गया। इस अवसर पर गोरखा सम्मेलन भी किया गया तथा एक विशाल शोभायात्रा मा वि० ८ नवम्बर को नगर मे निकाली गई और श्री लाल ह्यराज गुप्त प्रधान परोपकारिणी समा के करदमलो द्वारा ओ३म ध्वजा फहराई गई।

गडमुक्तेश्वर कर्तिका महामेले में विंशति प्रचार आयोजन

दिनांक १६ से २८ नवम्बर तक गडमुक्तेश्वर मेके मे मगौरवी के तट पर जिला आय उपरतिनिधि समा मेरठ की ओर से वैदिक धर्म प्रचार का विरट आयोजन किया गया। २० गृह्य जनता आयसमाज के पण्डित मे मरी रहती थी।

अराष्ट्रीय ईन ई निरोध सम्मेलन का भी सफल आयोजन किया गया। जिले से कंपालिको के कुटिलत एवं

अराष्ट्रीय प्रचार का इटकर समना करने का जल लिख गया।

अनेक आर्य विद्वानों एवं श्री निरजनवलाच, हरसहस्र, श्री मेघनाथ जी आदि के प्रभावशाली सजनों ने जनता को कल्याण-यय का स्मरण कराया।

डा० नगेश्वरजी एवं श्री बलवीर्गिह वैद्यक जी आदि ने इस जिला प्रचार को सफल बनाने मे विशेष प्रयत्न किया।

आर्यनमाज मेठ मंदर का वार्षिक उत्सव

दिनांक १३ से १५ अक्टूबर तक आर्यनमाज मेरठ सहर का वार्षिक उत्सव श्री पी० निरख्य लु जी प्रधान आयसमाज को प्रयत्नना मे सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री पी० आचार्य वाचस्पति जी, कुंवर पशुपान तन्वय लोक समा, आचार्य वचनाथ शास्त्री आदि के प्रभावशाली भाषण एवं श्री मेघनाथ जी के मन्त्रन हुए।

आय केन्द्रीय र्मा ति मेठ का उत्सव

वि० २६, २६, २७ अक्टूबर को जीमलाने के विशाल मण्डप मे नगर की समस्त आयसमाजों का सम्मिलित उत्सव मनाया गया ५००० की संख्या मे जनता इस उत्सव मे पण्डाल मे उल्लिखित रहती थी, स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी की अध्यक्षता मे वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया गया। श्री आचार्य भावानन्द जी आदि के प्रभावशाली भाषण एवं श्री मेघनाथ जी अजमेरा को मन्त्रन हुए। २६ ता० को अष्टावार विरोधी मुलूत बड़ु समारोह के साथ नगर मे निहाला गया।

परापकारिणी सभा का नवीन निर्वाचन

ऋषि मेले के अवसर पर परोपकारिणी समा का नव निर्वाचन निम्नप्रकार किया गया। श्री लाल ह्यराज जी गुप्त (बिला) प्रधान, डा०मानकरण शारदा उपप्रधान श्री श्रीराम शारदा मन्त्री, श्री वितरजन वर्मा स० मन्त्री एवं श्री विष्णुच र जी कोपध्यक्ष निर्वाचित किये गये।

भारत प्रधान मन्त्री के प्रयाग प्रागमन पर स्थानिय हिंदू सभा का विरोध प्रदर्शन

दिनांक १२ नवम्बर को श्रीमती पी० विजयलक्ष्मी जी के निर्वाचन समिधान मे फ कामऊ बाजार से जाते हुए प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री को को अनेक ऋषे विखलाए।

अन्तर्राष्ट्रीय कैथालिक सम्मेलन—

धर्म निरपेक्षता को नष्ट करने का षड्यन्त्र

(ले०—श्री रघुवीरसिंह शास्त्री मन्त्री आर्य प्रतिनिधि समाज)

आज से कुछ सप्ताह पश्चात् ३० हजार से अधिक विदेशी कैथोलिक ईसाई मिशनरी भारत की ईसाई संस्कृति से प्रभावित करने, व अनेक राजनैतिक दुरमि-सधियों के साथ बर्गई में २८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक होने वाली (इंटर नेशनल यूनेस्को काफ्रेस) अन्तर्राष्ट्रीय कैथोलिक सम्मेलन में भाग लेने पहुँच रहे हैं।

२—इनमें से बहुत से व्यक्ति ऐसे देशों से भी आयेंगे जिनकी भारत के प्रति नीति सौहार्दपूर्ण नहीं है।

३—इस काफ्रेस को भारत में आयोजित करने का मुख्य कारण केवल यही है कि भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है।

४—इस कैथोलिक विश्व काफ्रेस के आयोजक भारत सरकार की धर्म-निरपेक्षता की भावना का अनुचित लाभ उठा रहे हैं। और भारत सरकार भी इस काफ्रेस को सफल बनाने के लिये अमूल्य सुविधायें बड़ी उदारता के साथ प्रस्तुत कर रही हैं।

५—ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार इस भ्रम का शिकार हो गई है कि साधारणतया अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई बाब व विशेषतया कैथोलिक सम्प्रदाय, धर्म निरपेक्ष विचारधारा का प्रतिपादक है।

यह नितास्त अतथ्य है। अन्तर्राष्ट्रीय कैथोलिक सम्प्रदाय किस प्रकार भारत की धर्मनिरपेक्षता का नष्ट करने का षड्यन्त्र कर रहा है, यह निम्न उदाहरणों से स्पष्ट है—

- (क) सत्तर में केवल एक ईसाई धर्म ही सच्चा धर्म है। पोप पाल (षष्ठ)
- (ख) रोमन कैथोलिकों और अन्य ईसाई सम्प्रदायों को यह धारणा है कि धर्म निरपेक्षता की विचारधारा ही उनके मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है, और इस विचारधारा को नष्ट करने के लिये राजनैतिक शक्ति का उपयोग करेंगे।
- (घर वाट्स बेग्गवय डिस्क गेट बिटेन) नामक पुस्तक

का पृष्ठ ५७५

(ग) इन युग में ईसाईयन के सबसे प्रबल विरोधी इस्लाम, बौद्धमत या हिन्दू धर्म आदि नहीं हैं अतियु विश्वव्यापी धर्म निरपेक्ष नीति की पद्धति ही है।

डा० रघुप एम० जोस्त की येरशलम में हुई अन्तर्राष्ट्रीय मिशनरी काँसिल के अवसर पर घोषणा।

(घ) विश्व के अन्य भागों की भाँति भारत में भी धर्म की वास्तविक छतरा धर्म निरपेक्षता की विचारधारा से ही है। बिलकडमेन्स हाई डाक्टर आक बिबिनिटी।

केवल इतना ही नहीं बल्कि समस्त कैथोलिक सभ्यता ईसाई युवकों को प्रेरित कर रही है कि वे सब धर्म निरपेक्ष सगठनों और उस विचारधारा के समाचार पत्रों व पत्रिकाओं से इस उद्देश्य से प्रविष्ट हो जायें कि वे उनके अन्दर रहकर धर्म निरपेक्षता की विचारधारा को छिन्न-भिन्न कर सकें। यदि इसका भी प्रमाण चाहिये तो यह लीजिये।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि ईसाई युवक बड़े-बड़े शिक्षा केन्द्रों में उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित हों, विद्यार्थी वर्ग व प्रोजेक्टमन लेखनों के द्वारा बहुत प्रभावपूर्ण कार्य कर सकते हैं। उन्हें वैदिक पत्रों, साप्ताहिक पत्रिकाओं में खूब लेख लिखने चाहिये। यह आवश्यक नहीं कि वह लेख विशेष रूप से ईसाईयों के सम्बन्ध में ही हों अलबत्ता उनमें ऐसे लेख लिखे जायें कि जिनसे उनका नाम लेखकों के रूप में बिख्यात हो जाये और उसके बाद उनको इस प्रकार के अवसर सरलता से मिल जायें कि वे धर्म-निरपेक्षता के सम्यक पत्र पत्रिकाओं में आगे चलकर स्पष्टरूप से ईसाईयत की विचारधारा का खुलकर प्रसार कर सकें।

(आइएट आफ लाइफ) नामक पत्रिका जून १९६४ में प्रकाशित एक लेख डॉ. फ्रिडरिखन स्ट्रुडेन्ट्स एण्ड ग्रेजुएट्स शोधक लेख में डेविड एच० एंडेनी एम० ए०)

भारत सरकार अभी तक इस बात से बिल्कुल अनभिज्ञ मालूम पड़ती है कि अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (आल इंडिया वीमेन्स कांफ्रेंस) और राष्ट्रिय महिला परिषद् (नेशनल कौंसिल आफ वीमेन्स) में भी ईसाई एजेण्ट अपने उद्देश्य के प्रति सक्रिय हैं। प्रमाण यह है —

इन ईसाइयों को उन सामाजिक नैतिक और शिक्षा सम्बन्धी आन्दोलनों का भी समर्थन करना चाहिये जिनमें महिला सहाय्य धार्मिक आधार पर कार्य कर रही हैं। क्योंकि यह भी एक ऐसा साधन बन सकता है जिसमें हम इन भारतीय महिलाओं के हृदय में ईसाईयत के स्वर्ण राज्य की विचारधारा के प्रति आकर्षण पैदा कर सकती हैं।

मिस ग्लोमिथ विन्सेट एम०ए० प्रोफेसर आई० टी० कालेज लखनऊ, मन्त्रिणी अवध प्रदेश (शाखा आल इंडिया वीमेन्स कांफ्रेंस)

भारत में बड़ी सख्या में जो विदेशी लोग अंग्रेजी के प्राध्यापक कृषि तथा तकनीकी औद्योगिक सहकारी समितियों में सलाहकार और कृषि विशेषज्ञ के रूप में काम कर रहे हैं उनमें प्रथिकांश अन्तर्राष्ट्रिय कॅथोलिक सम्प्रदाय के गुप्त एजेण्ट हैं। और इनकी सख्या इतनी अधिक है कि उनकी उपस्थिति भारत की राष्ट्रिय सुरक्षा के लिये खतरा बन गई है। भारत सरकार ने शीघ्र ही यदि इस विषय में सतर्कता से काम न लिया तो इनमें स्थिति और भी विषम हो सकती है। यदि भारत सरकार इस जाल में फँसने से बचना चाहती है तो उसको अबिलम्ब कुछ न कुछ कदम उठाने के लिये तैयार होना ही होगा।

इस स्थिति में आधुनिक भारत के करोड़ों हिन्दुओं की भावना का प्रतिनिधित्व करना हुआ माँग करता है कि—

१—सारे विदेशी पाठरिचों को दिसम्बर ६४ तक भारत छोड़ने के लिये विवश किया जाये।

२—सारे विदेशी पाठरिचों की आन्तरिक गतिविधियों की केन्द्रीय गुप्तचर विभाग द्वारा जाच कराई जाये क्योंकि उनकी उपस्थिति निरिधतरूप से देश के लिये खतरा बन

हुई है।

३—विश्व कॅथोलिक कांग्रेस को भी जाने वाली सरकारी व अधसरकारी सहायता व सुविधायें तुरन्त बन्द कर दी जायें।

४—किसी भी मत के प्रचारकों को अत्यास के लिये स्कूल और कालेज बन्द करने की अनुमति न दी जाये।

५—पोप पाल षष्ठ कॅथोलिक सम्प्रदाय के प्रमुक्त की हैसियत से भारत आ रहे हैं, इसलिए किसी भी धर्म निरपेक्ष सगठन की ओर से पोप का स्वागत अवाञ्छनीय है।

६—यदि इस अनर्थ को अभी से न रोका गया तो भारत में धार्मिक शान्ति के भंग होने की भारी आशंका है जिसका उत्तरवारित्व इस स्थिति में पोपपाल और विदेशी ईसाई पाठरिचों पर होगा।

अन्तर्राष्ट्रिय कॅथोलिक सम्प्रदाय भारत सरकार की आलों में किस प्रकार घूल सोक रहा है इसका ताजा उदाहरण वह समाचार है जो इसी मास के प्रथम सप्ताह में भारतीय समाचार पत्रों में धामक शीर्षक के अन्तर्गत छपा है—

नया हस्पताल और कालेज कॅथोलिक चर्च का भारत को उपहार। हमारे निजी सम्बाधवाता द्वारा, बम्बई ६ अक्टूबर। यहाँ होने वाली भारतीय तथा विदेशी कॅथोलिक चर्च की ३० वीं यूनेस्को स्टिक कांग्रेस के अवसर पर भारत को विदे जाने वाले उपहारों में एक उपहार होगा बंगलौर में मेडिकल कालेज और एक हस्पताल। कालेज और हस्पताल के भवनो के लिये संसूद सरकार द्वारा भूमि प्राप्त की जा रही है। इनमें २० प्रतिशत गैर कॅथोलिक छात्रों को स्थान देने का प्रस्ताव है।

—हिन्दुस्तान टाइम्स नई दिल्ली, ७ अक्टूबर १९६४

इस समाचार में ऐसा प्रतीत होता है कि कालेज और हस्पताल विश्व कॅथोलिक सम्प्रदाय की ओर से धर्म निरपेक्ष भारत को एक उपहार के रूप में दिया जा रहा है जिसमें केवल २० प्रतिशत स्थान गैर कॅथोलिक छात्रों को देने का प्रस्ताव है। यह प्रस्ताव मात्र है और यह सीटें भी सुरक्षित नहीं की गई हैं बल्कि गैर कॅथोलिक छात्रों की आड में यह सीटें भी अन्य ईसाई सम्प्रदायों को भी जायें तो आश्चर्य नहीं, यही इस उपहार का वास्तविक

(शेव पृष्ठ २१ पर)

भारत पर पोप की चढ़ाई

(ले०-धी अणुकुमार जी शास्त्री)

पिछले कुछ वर्षों में, भारत में ही रहे ईसाई मत प्रसार की ओर भारतीय नेताओं और भारतीय जनता का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित हुआ है। भारत में ईसाई मत प्रसार का इतिहास लगभग चार सौ वर्ष पुराना है। और भारतीय जनता की ओर से उसके प्रतिरोध का आन्दोलन भी इतना ही पुराना है। भारत के दक्षिणी प्रदेशों में, पूर्वी प्रदेशों में, बिहार, मध्य प्रदेश और मध्य प्रदेश और मध्य भारत, जहाँ जहाँ भारतीय लोग कुछ अधिक संख्या में ईसाई बने हैं, वहाँ वहाँ भारत के स्वतंत्र होने के बाद कुछ नये नये, चौकाने वाले राजनैतिक आंदोलन भी उठे हैं। वहाँ पर भारतीय हिन्दुओं के घातक लक्षण प्रगट हुए हैं। नाग प्रदेश का विद्रोह तो खूबकर सामने आ गया। छोटा नागपुर में भी विद्रोह की उमाला भड़काई गई थी। और भी कई स्थानों पर लाबा विधल रहा है।

भारत विभाजन की दुर्घटना का पञ्जाब और बंगाल पर जो बुरा प्रभाव पड़ा है उससे मिल्न प्रकार का बुरा प्रभाव उन प्रदेशों में पड़ा है, जहाँ विदेशी ताबू ईसाइयत के रूप में भारत विरोधी सैन्याय बना रहे हैं। अफ़ेजो सरकार ने भी ईसाइयों को अपने लगर का खूना बनाने का बख़्तर रखा था। उन्हें परिस्थिति से विश्व होकर जाना पड़ा, परन्तु वे भी अफ़ेजो और ईसाइयत की आड में शोबारा आने के स्वप्न देख रहे हैं। भारत के ईसाई मत के घटक भी येन केन प्रकारेण अपने ईसाई राज्य बनाने के कुचक्र चला रहे हैं। केरल में तो शक्ति परीक्षा हो भी चुकी है। विदेशी रुपये और विदेशी प्रभाव का उपयोग करके भारतीय ईसाइयों की जन संख्या बढ़ाने के जो तोड़ घस घुसके घुसके किये जा रहे हैं। वर्षों के काम दिनों में करने के लिये कार्यकर्ताओं की संख्या भी बहुत अधिक बढ़ा दी गई है। अफ़ेजो राज्य में भारत में ईसाई मत प्रचार का जो नेतृत्व अफ़ेजो के हाथ में था वह नतुद्व श्रावकाल अमेरीका ने ग्रहण कर रखा है। अमेरीका भारत में धनी लोगों में अफ़ेजो की ही स्थिति प्राप्त करके के लिए

सचेष्ट है। चीन के आक्रमण के पश्चात् उसे सफलता भी मिली है।

पिछले पचास वर्षों में ज्यों ज्यों स्वतन्त्रता का आन्दोलन बढ़ता रहा था, त्यों त्यों ही ईसाइयत के प्रचार का आन्दोलन भी जोरदार बनता गया था। पानी की तरह ढपपा बहाया गया। उचित और अनुचित का विचार छोड़कर सभी उपाय काम में लाये गये। भारतीय जनता की विशेष मध्यमवर्गीय स्थिति में ईसाइयों को भी महत्वपूर्ण स्थान मिले वह भी एक निर्णायक साम्प्रदायिक घटक बने। उलझने में यह नई उलझन ईसाइयत की पैदा की गई है।

यहाँ पाठक यह स्पष्ट रूप में जान लें कि यह सब कार्य भारत की तत्कालीन विदेशी सरकार की इच्छा योजना और उसका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सहायता के आधार पर ही किया गया था। वह सरकार क्यों इस कार्य में इतनी अधिक लिप्त हुई थी? इस प्रश्न का उत्तर यह है वह भारत की स्वराज्य की मांग को अधिक से अधिक समय तक टाकना चाहते थे वे भारत में अपने सहधर्मियों की संख्या बढ़ाकर, उनसे अपने ध्यायस्थ की आशा करते थे। तभी तो उन्होंने भारतीय ईसाइयों के विभाग में ऐसी हवा भर दी थी, जिसके कारण बहुत से ईसाई भारत की स्वतन्त्रता का अग्रहण करने वाले लाई होस्टिंग, लाइ क्लाइव और लाइ डलहौजी प्रभृति विदेशियों को अपने सगे चाचा, बाबा, बादा मानने लगे थे। और अपने सच्चे पुरजो से बिमुख हो गये थे।

अफ़ेजो जो कुछ चाहते थे, वह तो नहीं हो सका। तथापि ईसाइयत को जितना बढ़ावा वे दे सकते थे, वे गये। अब अपने कार्य का भार बड़ी चतुराई से उन्होंने अमेरीका को सौंप दिया है। यही कारण है कि अफ़ेजो तो गये, पर अफ़ेजियत नहीं गई। अमेरीका के वर्तमान गोरे निवासी अफ़ेजो और अन्य यूरोपवासियों के ही वंशज हैं।

यद्यपि अफ़ेओ, अमेरीकनों और अन्य ईसाई राष्ट्रों के राजनीति और व्यापार स्पर्धा के कारण बहुत से मतभेद भी हैं। परन्तु भारत में ईसाई मत के प्रसार में वे सभी एक और एक दूसरे के सहयोगी हैं। इस विषय में अपने अपने मतभेदों को भुलाकर काम करने की उनमें उत्तम क्षमता है। भारत सरकार की तत्कालीन धर्म निरपेक्षता की नीति ने उनके पाव यहाँ विशेष रूप से जमा दिये हैं। भारत सरकार भी उनके विषय में कोई प्रभावपूर्ण पग उठाकर यह सिद्ध नहीं करती कि धर्मनिरपेक्षता के कोई और अर्थ भी हो सकते हैं।

भारतीय ईसाइयों ने बड़ली हुई परिस्थितियों के अनुहार अपने आपको बदला नहीं है। आज भी उनके रगड़ग वे ही हैं, जो कि भारत के स्वतन्त्र होने से पूर्व थे। हमें कहने दिया जाय कि भारतीय ईसाइयों में राष्ट्रीय चेतना और सूझ-बूझ का अभाव है। आज भी भारतीयों से दूर हैं। वे विदेशी ईसाइयों को अपने अधिक समीप समझते हैं। इस प्रकार भारतीय ईसाई हमारे गुमराह भाई हैं। उनकी वर्तमान विचारधारा उनके लिये भारतवासियों के लिये भारी हानिकारक है। क्योंकि उनका नेतृत्व आज भी विदेशियों के हाथों में है, उनके धर्मगुरु भी विदेशी हैं, ऐसी अवस्था में वे भारत हितैषी कैसे हो सकते हैं? भारत से, भारत के इतिहास से, भारत के अध्यात्मवाद से वे अपना नाता ही नहीं तोड़ चुके, घृणा भी करते हैं।

जैसे मुसलमान विदेशी आर्यों के भक्त होने के कारण भारत के लिये एक बड़ा खतरा सिद्ध हो चुके हैं, वैसे ही ईसाई भी भारत के लिये एक बड़ा खतरा है। भारत में ईसाइयत के प्रसार के आयोजन भारत की बाल स्वयंश्रुता के लिये घोर हानिकारक एवं अपमानजनक हैं। प्रत्येक भारत हितैषी नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह विदेशी शक्तियों द्वारा सञ्चालित इस ईसाईमत प्रसारक अभियान को बन्द करने के लिये प्रयत्न करे। भारतीय ईसाइयों पर तब तक सनकें दृष्टि रहनी चाहिये, जब तक कि वे अपने आपको विदेशी प्रभावों से मुक्त न कर लें। भारत के ईसाइयों की रगों में भी भारत के ही प्राचीन पुरुषों का छूना है और भारतीय सफ़ाई, इतिहास और भूमि पर उनका भी अधिकार है। यह हम भी मानने हैं

परन्तु इस देश की और इस देश के करोड़ों वासियों के हितों को नष्ट करने का अधिकार उन्हें नहीं है। वे भारतीयता के सभी लाभों को प्राप्त करें। विदेशियों के इशारों पर नाचें नहीं।

भारतवासियों को ईसाई बनाने के लिये पावरी लोग देश, काल और पात्र भेद से अपनी नीति बदल बेते हैं, नये-नये साधनों का उपयोग करते हैं, और अपने विदेशी मालिकों को सतुष्ट करने का यत्न भी करते हैं। ईसाई मत में कोई ऐसा तत्व नहीं है जो भारत में प्रचलित वैदिक-ईश्वरवाद, अध्यात्मवाद, अथ विभाग, आध्यात्म-विभाग, योग विद्या, रहस्य विद्या, ब्रह्मों और विश्व-बन्धुत्व के सार्वभौम विद्वान्तों से टक्कर ले सके। ईसाइयों की बाइबिल और उनके मन्तव्य वेदों के मुकाबिले में ठहरने वाले नहीं हैं। ईसाइयत का इतिहास भी पृथित हत्या काण्डों से ओत-प्रोत है। वे हत्याकाण्ड, जो धर्म के नाम पर ईसाइयों ने ही ईसाइयों पर किये थे। यदि युरोप के ईसाई मतमतान्तर भारत में फैलेंगे और शक्ति प्राप्त करेंगे, तो यहाँ भी युरोपीय इतिहास के मध्य युग जैसे ही भीषण हत्याकाण्ड होंगे।

हमें अपने प्रचारक जीवन में ईसाइयों की शीलियों, रीतियों, नीतियों, प्रणालियों और बालों को समीप से देखने के पर्याप्त अवसर मिले हैं। उनकी प्रचार-प्रणाली का छोड़ा सा परिचय हमने भारतीय जनता के सामने प्रस्तुत किया है। उनके धार्मिक मन्तव्यों और ऐतिहासिक स्वरूप का चित्र भी हमने पुस्तिकाओं में किया है। उनकी बालों को समझ कर हम उनके धर्मग्रन्थों को विफल कर सकते हैं। रोग को छोटा न जानो। धनु को छोटा समझ कर उसकी उपेक्षा न की जाये। पाकिस्तान और चीन से हमारा अधोपित युद्ध हो रहा है। हमारे देश में आपवकालीन स्थिति मौजूद है। फीजी और युद्धकाल के कानून लागू हैं। ऐसे सफ़ट के समय में रोम के पोप ने भारतीय ईसाइयों को अपनी ओर फीड़कर हमारे देश पर षड्यंत्र की है। हम जानते हैं कि पोप ईसाइयों का एक महन्त और पुत्र है, परन्तु हम यहाँ उसका स्वागत कैसे कर सकते हैं। हम तो उसके आगमन को भारत के लिये घोर अशुभ समझते हैं। पोप यहाँ अपनी पोल लीला फैला कर हमारी चकट-काच की स्थिति से अनुचित लाभ उठाने

का यत्न करेगा ही। यदि पोप अपने आप को धर्म का मर्मज्ञ समझता है तो वह हमारे देश के पाण्डित्य को पहले अपने बसा में करे। वह वेदों की शिक्षाओं से बढ़कर कोई शिक्षा बताये। वह बुद्धिवाद की कसीटों पर बाइबिल को और उसके मन्तव्यों को कसे। विदेशी तोपों की गड़गड़ाहट और सोने चांदी की झकार का जाड़ू चलाकर वह हमारे देश के अज्ञानप्रस्त पिण्डों को हटाए, जगल पहाड़ निवासियों को ही चुपके से मूण्डना क्यों चाहता ? भारतीयता के विषय में वह आनता ही क्या है ? हमें ऐसा पोप नहीं चाहिये। पोप-लीला यहा बहुत है।

आज के भारत की मांग तो यह है कि भारत में से ईसाइयत को समाप्त कर दिया जाये कि क्योंकि वह भारतीय अध्यात्मवाद के सामने अग्रगत तुच्छ है। इनलिये समाप्त कर दिया जाये कि ईसाई मत धीरे अर्धजातिक मतों को मान्यता मनवाता है। इसलिये समाप्त कर दिया जाये कि ईसाई मत का इतिहास खून खराबों से परिपूर्ण है, इसलिये समाप्त कर दिया जाये कि भारत में इस मत का प्रसार धार्मिक आधार पर नहीं, अपितु राजनतिक स्वार्थों को साधने के लिये महाभ्रष्ट प्रणालियों के आधार पर किया गया है। इसलिये समाप्त कर दिया जाये कि इसका नेतृत्व भारत विरोधी विदेशियों के हाथ में है। ईसाइयों की चालों को विफल बनाने के लिये भारतीय जनता क्या करे ? हम कुछ प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकते थे, परन्तु नहीं करते। प्रत्येक भारतीयता का प्यारा अपने कर्तव्य का निश्चय अपने आप ही करे। अपनी अन्तरात्मा से प्रकाश प्राप्त करके उठे और कर्म क्षेत्र में, धर्म क्षेत्र में बढ़े।

मुसलमानों के विषय में दो बातें मुख्य हैं—पहिनी यह कि मुसलमानों को भी ईसाई बनाया तो जाता है, परन्तु भारत में मुसलमानों को ईसाई बनाने का कोई अभियान इस समय चालू नहीं है। एक तो इसलिये कि मुसलमानों के ईसाई बनने की सम्भावनायें कम हैं, दूसरे ईसाई पाबंदियों का तथा उनके विदेशी मालिकों को मुसलमान की ओर से इस समय या निकट भविष्य में कोई खतरा नहीं है। उनके हितों में टकराव नहीं है। अपने इतिहास और ध्यान की दृष्टि से तो इस्लाम और ईसाइयत एक ही पेल्ले के चट्टे-बट्टे हैं। इस समय तो हिन्दुओं की जल्द

को घटाना और वैदिक धर्म के महत्व को घटाना ही ईसाइयों और मुसलमानों ने अपना ध्येय बना रखा है। मुसलमानों के विषय में दूसरी बात यह है कि हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिये मुसलमान भी संकड़ों बर्षों तक लगभग उन ही उपायों से काम लेते आ रहे हैं, जिनसे ईसाई काम ले रहे हैं। मुसलमान भारतीय होने पर भी भारतीय हितों की रक्षा के लिये कभी भी आगे नहीं बढ़े। वे तो सदा से ही हमारे शत्रुओं के मित्र हैं। हमें मुसलमानों की ओर से भी सावधान रहना है। ईसाइयों के प्रतिरोध के उस्ताह में मुसलमानों को ओर से होने वाले खतरों की उपेक्षा कोई भारतीय राष्ट्र का प्रेमो कर भी करे सकता है। हमारे सामने तीन मोर्चे हैं—पाकिस्तान चीन और पोप की सेनायें।

(पृष्ठ १८ का शेष)

रहस्य है। विश्व कथोलिक सम्प्रदाय इतना अबोध नहीं है कि अफारन ही उपहार बांटना करे, जितनी अबोध इस उपहार को ग्रहण करने के लिये समुत्सुक भारत सरकार है। इस उपहार के पीछे क्या रहस्य छिपा है यह इस कथोलिक सूचना से स्पष्ट है—

भारत सरकार में एक उच्चस्तरीय क्रिश्चियन मेडिकल कालेज की स्थापना के लिये ईसाई पाबंदी इस आधार पर तीव्र आन्दोलन कर रहे हैं कि भारत सरकार द्वारा स्थापित सरकारी मेडिकल कालेजों में सैद्धांतिक और आध्यात्मिक प्रभाव पैदा करने की सुविधायें नहीं हैं। इसके अनिश्चित इनमें हिन्दुओं, मुसलमानों तथा अन्य धार्मिक वर्गों को जनसह्या के अनुपात के आरार पर इस तरह प्रवेश की व्यवस्था की गई है कि ईसाइयों के लिये (अत्यन्त अल्प संख्यक होने के कारण) वहा प्रवेश का अवसर नहीं है। साथ ही मिशन हस्तक्षेपों के लिये शिक्षित ईसाई डाक्टरों को बहुत कम अनुभव भी जा रही है और धार्मिक क्षेत्रों में तो उनको बहुत ही जल्दतर है।

—लेमन फारेन मिशन इन्वेषायरी रिपोर्ट—रिचिय किंग मिशनरिस ए लेमन इन्वेषायरी आफटर

१०० ईस, पृष्ठ २०९

कथोलिकों की धोखनाओ का यही मेव है। क्या भारत सरकार अब भी इन कथोलिक सम्प्रदाय को खुल खेल्ने की छूट देनी ?

ईसाईयत आर्य हिन्दू धर्म के सामने चरुनाचूर!

[अमेरिका से आये सबको ईसाई बनाने के लिये मि० स्टोक्स वैदिक धर्म से प्रभावित होकर हिन्दू सतयान्वय कैसे बन गये और जीवन भर वैदिक कैसे रहे ? हिन्दू धर्म के अवभूत धमत्कार की एक महान् आश्चर्यजनक बिस्कुल सत्य घटना]

[लेखक-श्री मत्त रामशरणदास पिल्लुवा]

यह ईसामसी के चेहे पादरी तमो तक बड़बड़कर बातें करते हैं और तमो तक उछलते कूबते हैं जब तक इनका किसी सच्चे मंत्रतोड उत्तर देने वाले आर्य विद्वान् से पाला नहीं पडता । इन ईसाई पादरियों मे कोई वम क्षम नहीं होता । यह कलके मनमाने बिगडे विभागों से कल्पित बनाये गये मतमना तर चला अनावि काल से चले आये वैदिक धर्म के सामने कैसे टिक पवते हैं ? ईसाईयत वैदिक धर्म के सामने कंमे चकनाचूर होकर रह गई इस सम्बन्ध की एक महान् आश्चर्यजनक बिस्कुल सत्य घटना हमे माननीय श्री शिवराम सेवक मम्पावक औरमरत ने पिल्लुवा हमारे स्थान पर पधारने पर सुनाई जो हम यहा पर दे रहे हैं आशा है पाठक इसे ध्यान से पढ़ने की कृपा करेंगे । उन्होने कहा -

अमेरिकन अग्नेज पादरी मि० स्टोक्स हिन्दू धर्म की शरण मे कैसे आये ?

यह लगभग सन् १०२ की बात है कि अमेरिका के एक कालेज के एक प्रिन्सिपल ने बाहर से तीन कोड़ी पकड़ करके अपने कौन्सिल मे मगवाये जिनके हाथ पैरो मे पीप खून, मवाद चूर रहा था । इन तीनों काढ़ियों को लाकर कौन्सिल के अहाते मे लडा कर बिया गया । कोल्लिज का घण्टा बजा तो कोल्लिज के सभी विद्यार्थी जा आकर लाइन मे खड हू गये । प्रिन्सिपल ने सबको उन तीनों कोढ़ियों को दिखाते हुये कि जिनके हाथो से पीप, मवाद, लहू टपक रहा था, पुकार कर कहा कि तुममे से ऐसा कोई विद्यार्थी है कि जा आये आये और इन तीन इंसानों की जिन्दगी को बचाये ? बड बडे डाक्टरों की यह राय है कि यदि कोई विद्यार्थी इनके हाथों को अपना खुद समान कर अपने मुख से इनके लोहू और पीप कमे,

मवाद को चूस ले, पी जाय तो इन बेचारे इंसानों की जिन्दगी बच सकती है अग्यया नहीं ।

सब विद्यार्थियों ने यह सब बात सुनी और सुनकर आश्चर्यचकित रह गये और मुन्न रह गये । उनमें से शत से एक विद्यार्थी यह सुनकर आगे बढ़ा और उसने तुरन्त अपने हाथों से एक कोड़ी का हाथ अपने हाथ मे पकड़कर अपना सर झुकाया और उस कोड़ी का लोहू पीप पीने को अपना मुंह प्योड़ी नीचे को झुकाया और पीने को उछल हुआ तो शत से पीछे से आकर तुरन्त प्रिन्सिपल ने उसे गर्दन से पकड़ लिया और फिर प्रिन्सिपल ने उससे कहा कि ऐ विद्यार्थी तुम मेरे टैस्ट में कामयाब हुए और मैं तुमसे यह चाहता हू कि तुम अपनी सारी जिन्दगी ईसाई-मत के प्रचार के लिये बन्क कर दो । उस विद्यार्थी ने बडी प्रसन्नता से उसी समय सबके सामने यह प्रण किया कि मे प्रण करता हू कि अपनी सारी जिन्दगी ईसाई-यत के प्रचार मे लगा दूंगा । उस विद्यार्थी का नाम था मि० स्टोक्स ।

मि० स्टोक्स की बियूटी हिन्दुस्तान में ईसाईयत के प्रचार मे लगी और वह अब अमेरिका से चला और बाभ्ने मे आकर उतर गया । और हिन्दुस्तान में आकर वह सुप्रसिद्ध अग्नेज मि० दीनबन्धु एफ्फुच से मिला । हिन्दु-स्तान का नवशा सामने रखकर बिचार किया गया कि कहाँ-कहाँ पर डेरा डाला जाय और किस इलाके मे जा-आकर ईसाईयत का प्रचार किया जाय और काम किया जाय ? अन्त मे दोनों के परामर्श से यह निश्चय हुआ कि शिमले के करीब पहाड़ियों में प्रचार का सेण्टर कायम किया जाय । शिमला से लगभग १५ मील की दूरी ईसाई मे आकर मि० स्टोक्स ने अपना सेण्टर कायम



किया और ईसाइयत का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। विश्व सिप्रट से उस मि० स्टोक्स नवजवान ने वहाँ पर काम किया वह बस उसी का हिस्सा था। वह नवजवान मि० स्टोक्स अंग्रेज पावरी अपने गले में वूच की शीशी, पानी की शीशी लटवता और एक डब्ले में पकी हुई लिबड़ी लेता और धँले में बचाइयाँ लेता और पैबल ही पहाड़ी जातियों के गाँवों में पहुँच जाता और इन पहाड़ी लोगों से और बीमार लोगों से बड़े ही प्रेम से जाकर मिलता और उन्हें ईशूयसीही की भाषा सुनाता और जो बीमार होते उन्हें वह स्वयं अपने हाथों से दूध पिलाता और वह लिबड़ी खिलाता और यदि उनके पशु प्याने होते तो उन्हें खोलकर अपने हाथों से ले जाता और उन्हें पानी पिलाकर लाता बाधता और बचा देता और उनक दुख बर्से में बड़ा काम आता। अब तो सब उससे नडे ही प्रसन्न और बड़े ही प्रभावित हुये और घड़ाघड हिन्दू से ईसाई बनने लगे और बड़े जोरजोर से खूब धुप्रचार इसाइयत का प्रचार होने लगा और चारों ओर उसकी बड़ी श्वाति फैल गई।

दूसरे दिन क्या हुआ ?

बहुत दिन अब इस प्रकार ईसाईयत का प्रचार करते हुये गुजर गये तो एक दिन क्या हुआ कि मद्रास के एक सस्त पुज्यपाब श्री स्वामी सत्यानन्द जो महाराज जो भूत-पूब रिटायर्ड। लाकल सज्जन थे, हिमालय की अपनी यात्रा को जा रहे थे। उधर से अंग्रेज पावरी मि० स्टोक्स माहब सपरिवार अपने बाल-बच्चों के साथ लैर करने के लिये जा रहे थे तो रास्ते में आगे उन्हें पुज्य श्री स्वामी सत्यानन्द जो महाराज मिल गये। मि० स्टोक्स साहब ने स्वामी सत्यानन्द जो महाराज से पूछा कि स्वामी जो महाराज आप कहाँ पर जा रहे हैं ?

उत्तर में स्वामी सत्यानन्द जो महाराज ने उन्हें बताया कि मैं हिमालय की यात्रा करने के लिये जा रहा हूँ मि० स्टोक्स ने स्वामी जो महाराज से कहा कि स्वामी जो महाराज यह एक पहाड़ी इलाका है और अब शीघ्र ही सूर्य जो डूबने वाला है और सूर्य के डूबते वक्त पहाड़ी इलाके में रुकर करना बड़ी गलती है इसलिये आप रात को आज मेरी कुटिया पर रह जाओ और सुबह होने पर जहाँ चाहो चले जाना। स्वामी जो ने इसे सह्य स्वीकार

कर लिया और स्वामी सत्यानन्द जो महाराज रात को मि० स्टोक्स साहब की कुटिया पर हो रह गये।

ईसाइयत हिन्दू धर्म के सिद्धान्त के सामने चकनाचूर कैसे हुई ?

रात्रि को पुज्य स्वामी श्री सत्यानन्द जो महाराज ने अपने धँले में मे अपनी एक गीता की पोथी निकाली और उसका पाठ करने लगे। स्टोक्स परिवार ने स्वामी जो महाराज से गीता सुनने की जिज्ञासा प्रगट की तो पुज्य स्वामी जो महाराज ने उन्हे गीता सुनाई और गीता के सम्बन्ध में कानी देर तक खूब सतसग हुआ जिससे मि० स्टोक्स साहब और उनका तारा परिवार गाता का कया से और स्वामी जो के सतसग स बडा ही प्रसन्न और प्रभावित हुआ।

प्रात काल जब स्वामी जो महाराज नहा धोकर के अपनी हिमालय की यात्रा करने के लिये जाने को तैयार हुए तो स्टाक्स परिवार ने पुज्य स्वामी जो महाराज को घेर लिया और उनका रास्ता रोक लिया। रात के सतसग का उनके मन के ऊपर बडा असर था। स्टोक्स परिवार ने पुज्य स्वामी जो महाराज से प्रादना की कि स्वामी जो महाराज आप हिमालय की यात्रा के लिये जा रहे हैं पर महाराज यह भी हिमालय है और यहा पर भी कोई किसी प्रकार की मोटर की रेल की खडखड नहीं है और कोई किसी प्रकार का भी उपद्रव नहीं है और यहा पर बिल्कुल एकान्त जगह मे कुटिया है इसलिये आप यहाँ पर कुछ दिन और निवास करने की कृपा करें और बाद में आप जहा जाना चाहो चले जाना।

पुज्य स्वामी जो महाराज ने उनको यह प्राथना स्वीकार कर ली और स्वामी जो स्टोक्स साहब के पास में ही ठहर गये। अब क्या था अब तो स्टोक्स परिवार में नित्य प्रति रात को गीता की कया और सतसग चलने लगा, ज्यों-ज्यों स्वामी जो महाराज के श्रीमुख से मगवान् श्रीकृष्ण के श्रीमुख से निकली गीता की कया सुनते गये और स्वामी जो का सतसग करते गये त्यों-त्यों उनके माग्यो-बय होने गये और वह बडे ही प्रभावित होते गये।

एक दिन पुज्य स्वामी जो महाराज ने गीता के इस फलस्के पर रोसनी डाली और प्रकाश डाला कि मगवान् श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि जो मनुष्य खुद कमाकर

स्वयं ही खा जाता है तो वह मनुष्य अन्न नहीं खाता बल्कि वह पाण खाता है। अब वशा या अब तो स्टोवस साहब के सामने एक ओर हज़रत ईशामयी के ओर दूसरी ओर मगधान श्रीकृष्ण के उपदेश मानने थे और उन्होंने इस पर खूब विचार किया और आखिर गीता के फलके के सामने स्टोवस साहब को अब तो बरबस झुकना पडा और वह नब्रजवान मि० स्टोवन अग्रेश पावरी जो अपने देश अमेरिका से ईशामयी के प्रचार के लिए कसम खाकर सबको ईसा मसीह का मत्त बनाने के लिए आया था, एकवम से उसके ऊपर आय धर्म का ऐसा जादू चढा कि वह अपनी ईशामयी, ईशामयी और व ईबिल आदि सब को ही एकवम से तिलाञ्जलि देकर और सबको ठुकर कर आय धर्म से प्रवेश कर गया। प्राय धर्म के साथ सदा तों के सामने ईसाई मन ठहर नहीं सका। अब तो जिन पूज्य स्वामी सत्यानंद जी महाराज की असीम कृपा से और जिनकी गीता की कथा और अद्भूत सत्संग से उनका जीवन पलटा था अब उन्हीं के नाम पर मि० स्टोवस का नाम भी बदल कर सत्यानंद ही रखा गया और वह प्राणै जाकर इतना प्रभु का अनुभव मत्त हुआ कि उसने अपनी कोठी से ही एक मन्दिर बनवाया और उस मन्दिर की प्रविष्टा के लिए पजाब से पण्डितों को बुलाया जिसमें प० श्री मोहर लाल कुरिया बी० ए० और प० श्री गणेशवल शास्त्री जी महाराज आदि पंडितगण वहा पर गये और बड़े ठाठ-हाट से सब काय हिन्दू धर्मानुसार चला और जब तक हिन्दू पंडितों द्वारा यह सब कार्य होता रहा, स्टोवन साहब चारपाई पर नहीं सोये और जमीन पर ही सोते रहे और उन्होंने भोजन भी नहीं किया, बराबर फकाहार

करते रहे और उन्होंने बराबर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया और मन्त्र का बराबर जप करते रहे और पूर्ण रूप से वैदिक धर्म की शरण में आ गये और श्री कृष्ण मत्त बन गये।

आपका यह निरव्य प्रति का नियम था कि आप प्रातः काल उठने और बाज़ा तबला, शास्त्र, मृदंग के साथ प्रभु की मिलकर प्रार्थना करते, मजन करते और गीता का पाठ करने और गदगद हो जाते थे। इस प्रकार अपने को हिन्दू धर्म की शरण में आया हुआ देलकर वह बड़ी सचची सुष्यागित का अनुभव करते थे। यद्यपि अब उनका पान्थ भौतिक शरीर नहीं रहा कुछ दिन हुए तब उनका शरीर छूट गया है पर आज भी उनका परिवार उस प्रकार पहिले की भांति निरव्य प्रति प्रातः काल की बेला में उठकर हिन्दू धर्म के अनुवार प्रभु की प्रार्थना आराधना करता है और गीता का पाठ करता है और हिन्दू धर्मानुसार चलने में ही महान गौरव का अनुभव करता है। मैं स्वयं मि० स्टोवस साहब से मिला था और मेरो उनसे खूब बातें भी हुई थीं। यह है भारत का हिन्दू धर्म का महान आदर्श-जनक अन्वुभू चमत्कार कि जिसने अमेरिका के इतने बड़े अग्रज को कि जो जीवन भर की कसम खाकर ईशामयी के प्रचार के लिये भारत आया था पर वैदिक धर्म के तेज के सामने, गीता के तेज के सामने वह हनप्रभ हो गया और हिन्दुओं को पथ भ्रष्टकर ईसाई बनाने के बबले स्वयं ही ईशामयी के मत्त होने के बबले श्रीकृष्ण का मत्त हो गया और वाईबिल के पाठ की जगह गीता का पाठ करने लगा और गिरजे में जाने की जगह अपनी कोठी में वैदिक मन्दिर बना प्रभु मत्त करने में तल्लीन हो गया।

गुरुकुल वृन्दावन का ६० वां वार्षिक महोत्सव

सर्व साधारण को यह जानकर अत्यन्त प्रमत्तना होगी, कि गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का ६० वा वार्षिक महोत्सव ०५ मे २० दिसम्बर मन् १९६४ तक बडेममारोह के साथ मनाया जा रहा है जिसमें नव स्नातको का दीवान्त सस्कार भी इसी अवसर पर मन्मन्न होगा। इसके अतिरिक्त सम्स्कृत सम्मेनन आर्य भाषा सम्मेनन, शिक्षा सम्मेनन तथा कवि सम्मेनन आदि होंगे जिसके लिए देश के अग्रगण्य-मान्य नेता आमन्त्रित किये जा रहे हैं और इसी अवसर पर देश के मुपमिद्व विद्वान, व्याख्याताओ तथा उपदेशको के अभिभाषण एवं उपदेश और भजन आदि होंगे। जनता को जयिक मे जयिक यस्या में ममुपस्थित होकर नामान्वित होना चाहिए।

—नरदेव स्नातक मुख्याप्रिष्टाता गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन मधुरा



अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई धर्मप्रसार कांग्रेस पर पावन्दी लगे- हमारी धर्मनिरपेक्षता एवं हमारे समाजवाद के खिलाफ पोप का षड्यन्त्र

सभी देश-भक्त भारतीयों मे तात्कालिक अपील

(ले०-३० वल्लभूति मयुरायम गोरेगाव बम्बई ६२)

अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई धर्मप्रसार कांग्रेस पर पावन्दी लगे । भारत पर एक बड़ पैमाने पर आक्रमण होने जा रहा है ।

हमारी प्रिय मातृभूमि के सम्पूर्ण इतिहास के किन्हीं भी अन्वय आक्रमण से यह आक्रमण अत्यन्त विघातक, क्षयजनक तथा अधिक क्षतरनक और सबनाशकारी होगा ।

वो बच पूर्व अनियों ने भारत पर आक्रमण किया था परन्तु सम्पूर्ण राष्ट्र तन्काल ही एक व्यक्ति की नाई आक्रमकों के खिलाफ उठ खड़ा हुआ । प्रायश प्रतिदिन पाकिस्तानी हमारी सरहदों को पार करने का प्रयत्न करते हैं परन्तु सरकार और हमारी जनता इन आक्रमकों को बाहर धकेलने की सर्वशक्ति सज्ज है । उत्तर से आने वाले आक्रमकों के खिलाफ भारत को सतार के समी लोहस्तंभों एवं शक्ति-प्रिय लोगों का नैतिक बल प्राप्त है । उत्तर से होने वाले क्रिया भी आक्रमण के लिए सरकार एवं जनता जागरूक हैं और परिणामतः इस प्रकार के आक्रमण की समाधान बर्बाद वह हली तो नहीं तो भी दूर की बात हो गई है ।

इस नये आक्रमण का स्वरूप—परन्तु इस नये शक्तिशाली सुनिश्चित ढंग से और सम्पूर्ण शक्ति के साथ किये जाने वाले महान् आक्रमण के प्रति क्या हम सज्ज हैं ?

धील-धील हथार की सेना द्वारा भारत पर आक्रमण होने का रहा है और यह आक्रमण चौराका किया जा रहा है ।

उनकी लुब्ध की जवानों, भारत में ऐसे उबमस्तम्भी क्लृप्त काल्पयन्तु बच धीरों हैं जो उनके लिए सब कुछ

करने-उन्हें नैतिक एवं आर्थिक सहाय्य देने की तत्पर हैं ।

और इस आक्रमण के वास्तव सबने इसकायी स्थिति तो यह है कि सरकार और जनता उनके सिर पर मझराये वाली इस मयकर विपत्ति के प्रति जागरूक तो है ही नहीं, अपितु वे सोल्लाम इन आक्रमकों को स्वागत, सहाय्य और अधिक मदद देने जा रहे हैं । इससे बढ़कर विश्वासघात और लज्जा की बात और क्या हो सकती है कि हम उन्हीं का स्वागत करें जिन्होंने ५०० वर्ष पूर्व हमें छल-दण्डों और कत्लेआम द्वारा गुलाम बनाने के प्रयास किये और आज दुबारा भी जब वे बिलकुल उन्हीं उद्देश्यों से प्रेरित होकर आ रहे हैं ।

और यह आक्रमण है इस वर्ष के नवम्बर मास में बम्बई में होने जा रही अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई धर्म प्रसार कांग्रेस । और वह है ईसाई धर्म पर मर मिटने का, विश्व के समी म गो के रोमन कथोलिकों की हमारी भूमि पर सगठित करना, जिसका मूल उद्देश्य और ध्येय है 'भारत को ईसाईभूमि' और यहाँ के लोगों को राष्ट्रीयत्व-हीन बनाना, ताकि हम कथोलिक गिरजाघर और पुतगाल सहित सभी कथोलिक साम्राज्यवादी शक्तियों के हित में गुलामों की तरह काय करते रहें ।

इस कांग्रेस में आने वाले गणमाय्य और स्वातिप्राप्त व्यक्तियों का स्वरूप—ये ईसाई धर्मयोद्धा आ रहे हैं सभी बिशाओं से और सभी देशों से, यहाँ तक कि पुतगाल के भी । उसी कांग्रेस का अधिकृत बयान देखिये कि इन लोगों में होने 'नवधाम्य और स्वातिप्राप्त व्यक्तियों' । सचमुच ही



होने-गणमान्य और ख्यातिप्राप्त व्यक्ति-गुलाम देशों की जनता को स्वतंत्रता दिलाने वालों में से नहीं, विद्व मे बिरस्यायो शान्ति स्थापना हेतु प्रयत्नशील योद्धाओं मे से नहीं, निरक्षरता और गरीबी का मूलोच्छेदन करने वाले योद्धाओं मे से नहीं-अपितु हमारे-रोमन कॅथोलिक ईसाई धर्म के हेतु धर्मान्ध बलात् धर्मनिरपेक्ष करने वालों मे से गणमान्य और ख्यातिप्राप्त व्यक्ति साथ ही साथ प्रगतिशील विचारों के घृणा करने वालों मे से, जिनको धार्मिक सहिष्णुता, लोकतंत्र के उद्देश्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अरुचि होगी, जिनकी दृष्टि मे सत्तर के पदवलिती की राजनैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता होगी महज एक ढकीसला। ये गणमान्य और ख्यातिप्राप्त व्यक्ति बलाहल होगे उन धार्मिक और राजनैतिक अत्याचार करने वालों के और हमारे रोमन कॅथोलिक धर्म के लिए यत्नशील पुतगाल जैसे साम्राज्यवाधियों के गुप्तधर एव बचतमी।

ये थे ही लोग हैं जिन्होंने फ्रान्को और सालाजार को सक्रिय योगदान दिया है लक्षाओं की कत्लभ्राम करने के लिए। ये थे ही लोग हैं जो बलिष्ण विद्यतनाम के बुद्ध-धर्मावलम्बियों के धर्मच्छेद मे सक्रिय योग और प्रोत्साहन करते हैं, जो हमारे नागाप्रवेश मे विवक्तो को उकसाते हैं, जो कांगो और अगोला और पुतंगाल के अफ्रीकी उपनिवेशों मे होने वाले अत्याचारों के लिए उत्तरदायी हैं। ये थे ही लोग हैं जो कि उस अविश्राणित पुतगाल शासन से गोवा की मुक्ति के पश्चात् भी वहाँ घृणित बलात् धर्मान्तरण करने वालों के आधार स्तम्भ एव भारत मे सयकर धर्मनिरपेक्ष के सत्पापक सेंट संविधर के रगिन चित्रों को बाँटते हैं और हमारे प्राणप्रिय नगवान बुद्ध की मूर्ति को स्रष्टित कर ठोकरें लगाते हैं। ये थे ही लोग हैं जिनके निकृष्टतम उकसाने से कन्याकुमारी मे स्वामी विवेकानन्द स्मारक की गतवर्ष बिगाडा गया। समय ही दशयिगा कि ये थे ही लोग हैं जो गोवा मे वर्तमान मे होने वाले बम-विस्फोटों के लिये उत्तरदायी हैं। यह विशेष उल्लेखनीय है कि भारत के या बिद्व के किसी भी रोमन कॅथोलिक ईसाई गिरजाघर ने विद्यतनाम मे बुद्धमतावलम्बियों के साथ किये जाने वाले धार्मिक छत्र या विवेकानन्द स्मारक के संहनन पर या गोवा में किये बम विस्फोटों की निन्दा करने की बाबत परस्पर चुपे स्राय रखी है। यह उबका

कार्य नहीं है। उनका कार्य तो है निकृष्टतम साधनों द्वारा केवल अज्ञानी जनन का ईसाई धर्मान्तरण करना ताकि ये सेवा करे।

गुलाम बन, रोमन धर्म और साम्राज्यवादी सक्तियों की हम सही मानों मे धर्मनिरपेक्ष धर्म और हैं-भारत हिन्दुओं का देश है-३५ करोड हिन्दुओं का वेताकीस करोड की जनसंख्या मे से। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता। इसे स्वीकार करने मे कोई लज्जा की बात नहीं है। मुस्लिम दलो एव ईसाई धर्मप्रचारकों के आक्रमणों के होने पर भी, छ सौ वर्षों के बिदेशी शासन एव बलात् धर्मान्तरण को शासकों द्वारा प्रत्यक्ष सहाम्य पहुचाने पर भी एव जिन्होंने धर्मनिरपेक्ष करना प्रमान्य किया, ऐसे व्यक्तियों के अमानुषिक छल होने पर भी-हिन्दू धर्म की यह ठोस छट्टान प्राय अमेध रही है। अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई धर्म प्रसार का प्रोत्साहन का उद्देश्य है इसी अमेध छट्टान को और उसके साथ ही साथ परिधमपूर्वक प्राप्त स्वतंत्रता को सुरग लगा देना।

हम हिन्दू परम्पराओं और स्वभाव से सभी धर्मों का आदर करने वाले रहे हैं। शाताभियोतक, हमने अपने पुरातन और पवित्र बंदिक धर्म को समृद्ध व्यापक और विशाल बनाने के लिये दूसरे किसी धर्म मे जो भी श्रद्धा रखी है उसे पूजा, धारण किया और अपने धर्म मे आत्मसात् किया। हमने दूसरे व्यक्ति क धर्म से न कमी घृणा की है, न कमी हम डर हैं और न कमी हमने द्वेष ही किया है। शाताभियोतक हमने सिरिया के छले गये ईसाईसाधियों को अपनी भूमि पर आश्रय दिया है। प्रागते हुए यहुदी और पारसियों ने हमसे आरण मागो है और तत्काल ही उसे पाया। हमने कमी यह आश्चर्यक नहीं समझा कि दूसरों का छल से अथवा उकसाकर भी धर्मान्तरण किया जाय। हमने दूसरों के धार्मिक विचारों के सम्पर्क को रोकना तब तक आवश्यक नहीं समझा जब तक कि वे घातक उद्देश्यों और शस्त्र सामर्थ्य से प्रेरित नहीं रहे। हम तो, यदि कहा जाय, सही मानों मे धर्मनिरपेक्ष रहे हैं। अतएव स्वाभाविकतया हमने अपने राष्ट्रिय नेताओं को भारत को धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित करने दिया जबकि हृषक से हम हिन्दू राज्य माग सकते थे, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार पाकिस्तान इस्लामी राज्य, लका और ब्रह्मदेश बुद्ध धर्मिय राज्य और फिलिपीन्स यहुदी राज्य बने हैं।



परन्तु हमारे नेमाओं की हृदयों की झुकने की मनो-
बुद्धि के कारण और हमारे हिन्दू देशवासियों की आत्म-
पानी उदासीनता के कारण हमारी धर्म निरपेक्षता का
ईसाई धर्म प्रचारकों द्वारा, खासकर रोमन कैथोलिक
गिरजाघरों द्वारा, यह अर्थ लगाया जा रहा है कि यह
मानो उनके उद्देश्य-भारत को ईसाई देश बनाने-के लिये
उन्हें छूट है। हमारी धर्म निरपेक्षता की औद्योगिक वृत्ति
का, बलगत धर्मांतरण जैसे अपने स्वयंस्वभाव के
लिये काम उठाकर, वे इस देश को अतिरिक्त बना उनको
विदेशियों के धार्मिक और सामाजिक प्रभु सत्ता में लाना
चाहते हैं। आगामी अतिरिक्त ईसाई धर्म प्रचार कांप्रेस
उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उठाया गया कदम है।

भारत में ही इस काफ़र का अधिवेशन क्यों—प्राज
तक कभी अन्तर्राष्ट्रिय ईसाई धर्म प्रसार कांप्रेसों के अधि-
वेशन मुख्यतः कैथोलिक ईसाई देशों में हुए हैं। प्रथम बार
ही इस कांप्रेस का अधिवेशन एक गैर कैथोलिक, गैर
ईसाई, हिन्दुओं के देश में हो रहा है। सब देशों को छोड़
कर भारत में ही क्यों? पाकिस्तान एक उन्नत इस्लामी
देश होने के कारण, लका और ब्रह्मदेश द्वारा अपने आपकी
बुद्ध धर्मावलम्बी देश घोषित किये जाने के कारण तथा
बोयलनाम में खीर बुद्धधर्मियों द्वारा रोमन कैथोलिकों को
बिधे जाने वाले प्रतिहार के कारण, मध्यपूर्व के इस्लामी
देशों द्वारा रोमन कैथोलिक धर्म के विस्तार और यहाँ तक
कि अस्तित्व तक को जबरबस्त प्रतिहार होने के कारण
जिसका पर्यवसान टयुनिशिया में २२००० गिरजाघरों के
निराधे होने में हुआ, रोमन कैथोलिक ईसाई धर्म की
प्रतिपामी शक्तियों का कार्यक्षेत्र और विस्तार अंग्र अत्यंत
सीमित हो गया है, इतना ही नहीं कैथोलिक धर्म की
एशिया की भूमि से पूणत लुप्त हो जाने की सम्भावनायें
निर्माण हो गई हैं। कमजोर ताने-बाने स्वार्थी, भ्रष्ट
मैताओं के कारण, केवल भारत ही रोमन कैथोलिक
आकांक्षाओं की सकटपस्त भोका को प्रथमस्वयं हो सकता
है। तीन वर्ष पूर्व हमारे देश की राजधानी नई दिल्ली में
हो सत्तार के चर्चों की भीतिल का तीसरा अधिवेशन किये
जाने को हमारी सरकार ने जो मृदु दृष्टिकोण का परिचय
दिया, उसी से ही वर्तमान प्रयास का उन्होंने साहस किया
है। कैथोलिक प्रतिधर्मियों को केन्द्रिय मुक्ति, पोष में दख

अन्तर्राष्ट्रिय ईसाई धर्म प्रसार कांप्रेस के रूप में हमारी
भूमि पर मयकर आक्रमण की योजना बनाई है और भारत
के उनके पवनस्तनी सभी कांडिनर, आकविशन एष कथो-
लिक धर्माध्यायक के प्रभुत्व में रहने वाले सभी पादरी,
पोष के इन साहसिक कार्य में साथ देने एकत्रित हो गये
हैं।

क्या यह कांप्रेस धार्मिक मेला है—इस अन्तर्राष्ट्रिय
ईसाई धर्म प्रसार कांप्रेस के स्थानीय व्यवस्थापकगण
खुलमखुलता—और निलजजतायुक्त घोषित करते हैं।
(अई कां बुलेटिन-भाग २६) कि उनका उद्देश्य है
ईश्यामसीह का इन देश और सम्पूर्ण विश्व पर राज्य हो।
वे ईशा की सेना हैं। उसको जानने और उसकी सेवा करने
में ही उनकी सतोष नहीं है। उनकी महत्वाकांक्षा है कि वे
सबम ईसा को अग्य सभी को अनवाये, उससे प्यार करवाये
और उनकी सेवा करवाये। इस धर्म युद्ध के पीछे छिपी है
विजयाकांक्षा। अत इस धर्मयुद्ध को धार्मिक भावना से
प्रेरित सम्मेलन, यदि कोई मानता है तो वह बड़ी मारी
गलती कर रहा है।

अतएव रहस्य प्रकट हो गया है। यह अन्तर्राष्ट्रिय
ईसाई धर्म प्रसार कांप्रेस महज ईसाई धर्मावलम्बियों का
कोई पवित्र सम्मेलन नहीं है जैसा कि विशाल हृदयों यज-
मान को विश्वास बिलया जा रहा है। इस कांप्रेस को
मैंत देगी धमशरीरी की एक सना। वे अरे हैं विजया-
कांक्षा से प्रेरित हो, ईसा का साम्राज्य फैलाने / अंसा
कैथोलिक देश स्पेन, पुतगाल और लटिन अमेरिका और
सत्तार मर के इन कैथोलिक देशों के अग्य उपनिवेशों में
फला हुआ है।। नहीं सजजते, वह बिलकुल गलत नहीं
सोच रहे हैं।।

दूसरा घोषित ध्येय जो इन अन्तर्राष्ट्रिय कांप्रेस के
पीछे है वह 'कैथोलिक एकता' के निर्दोष नाम को धारण
कर, हमारी भूमि पर प्रतिद्विधावाधी कैथोलिक शक्तियों
को सगठित करना। द्वितीय महायुद्ध पर्यंत तक के काल
में ईशा की प्रत्येक शाखाओं में कैथोलिक धर्मानुयायी देशों
में अगणित रक्त रजित युद्ध हुये जो व्यक्त करते हैं उनका
ईसा के प्रति प्यार, और "मानव के प्रति प्रेम"। उन युद्धों
में कैथोलिकों की करल को रोमन कैथोलिक गिरजाघरों ने
न जसे एकाक्ष और न दोक सकेने थे। परन्तु सत्तार मर के



कैथोलिक पोप के सीधे आदेशों पर, जो कि उसके धार्मिक अनुयायी-काथोलिकों, बिशपों के माध्यम से पालित किये जाते हैं, एक 'पवित्र कारण' पर एकजिंत हुए हैं और यह कारण है—लोकतन्त्रात्मक आन्दोलनों, अपवित्रेशिक जनों के मुक्ति आन्दोलनों, लोगों के समाजवादी आन्दोलनों को कुचलने के लिये फ्रांको के फण्डे, सालाज़ार के लिगियो, मैनिमको के सिमाराविष्टा और अमेरिका के बल्लस बलान को उकसाकर, प्रोत्साहित कर मुसगठित कर रोमन कैथोलिक चर्च से, सबद्ध किये गये हैं जिनके मूध-य पोप हैं।

यमा यह अन्तर्राष्ट्रिय ईसाई धर्म प्रसार कायेप कैथोलिकों का केवल एक धार्मिक मेधा है? ह्यारी भूम पर 'कैथोलिक एकता' के इस प्रवशन के अन्तिम उद्देश्य क्या हैं? पोप के आदेश और प्रतिगामो तत्सो (जन् फाविस्ट चर्च)हारा शासन एव उपनिवेशवादी शक्तिपों) के सचालन और मार्गदर्शन मे हमारे देश मे कैथोलिकों का यह एकीकरण क्या हमारे देश की रक्षा और राष्ट्रिय एकतता के लिये पोषक है? ये अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न विचित्रता से हमारे बिदेश मन्त्रालय, हमारे प्रधान मन्त्री, बनके केबिनेट और देश के नेताओं की दृष्टि से ओतस हो गये हैं।

रोमन कैथोलिक चर्च की कार्यप्रणाली—कौन नहीं जानता कि कयो लक चर्च सिर्ह धार्मिक सख्या नहीं है अपितु सत्ता मे सशक्त राजनैतिक शक्ति है? सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र मे रोमन कथोलिक चर्च की हस्तक्षेप की शक्ति, इन तथ्य मे अनन्तपुत्रा क्षरनाक हो जाती है कि यह किसी एक विशिष्ट देश तक ही सीमित नहीं है, कारण कोई भी देश ऐसा नहीं जहाँ के सामाजिक और राजनैतिक जीवन को रोप प्रभावित न करता हो। चर्च अपने कार्य क्षेत्र की सीमाओं मे तो रहता ही नहीं अपितु उसकी अपनी यह सैद्धान्तिक माय्यता कि वही अकेला सत्य का धारक है, उसे अक्षरम्भायी रूप से बाध्य करती है कि वह नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में भी अतिक्रमण करे। अपने ध्येयों जिसका कि साम्राज्य सम्पूर्ण जगत् पर व्याप्त है, पर काय करते समय उसके इस ध्येय के कारण कि मानव निमित्त कोई भी कानून उस पर बन्धन कारक नहीं वह कैथोलिक तत्सों की बिद्येको निष्कारणारणों का अन्वयों के बिद्ये, अड्डई

यहां तक कि उम्पूलन के लिए भी, चाहे जिस प्रकार कार्य कर सकता है। (एधरो मेनहटन-२०वीं सवी के बिषय कैथोलिक चर्च, पुस्तक मे)।

भारत धर्म निरपेक्षता से क्या है और उससे भी जाये समाजवाद से। ये दोनों तत्व कैथोलिक चर्च की अक्षि-कर हैं। वे धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद दोनों के खिलाफ कुचाहे सत्ता मे वे कहीं भी क्यों न हो—जीवन-मरण का प्रश्न बनाकर लड़ रहे हैं। जिस प्रकार कम्युनिस्टों का मारा है—सत्ता मर के मजदूरों—पू भीरतियों से लड़ने को सगठित हो जाओ', रोमन कैथोलिक चर्च का मारा है— 'सत्ता मर के कैथोलिको, धर्मनिरपेक्षता के खिलाफ लड़ने, भारत को ईसा का देश बनाने, समाजवाद के खिलाफ लड़ने को सगठित हो जाओ।' हमारी धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के खिलाफ इन शक्तियों के अभाव को अनुमति देकर क्या हमारी सरकार रोमन कैथोलिक चर्च के बिचारों की अनुयायी बन गई है कि वह इस अन्तर्राष्ट्रिय ईसाई धर्म प्रसार कायेप का अविशेषण भारत मे ले और यह भी ऐमे समय मे जबकि हमारे सामने राष्ट्रीय सुरक्षा और प्रायत स्वतन्त्रता की मुद्दु करने से सम्बद्ध समयकर समस्यायें खडी हों। धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के खिलाफ हमारे इच्छित उद्देश्यो को सुरंग लगाने, हमारी सरकार किन प्रकार इन धर्मांधो के काफिले को इजाजत दे सकी। क्या हमारे राष्ट्रीय नेता जो इन धर्मनिरपेक्षताओं को आम-प्रण देते हैं और उन्हें सभी प्रकार से अवैधानिक और गैर कानूनी ढा से साथ वे रहे हैं—यह चाहते हैं कि उनके लड़के और लड़कियां, बहनें, मातायें और पत्नियां ईसाई धर्म अंगीकार कर लें ?

यह वस्तुस्थिति का मञ्जो—यह सबमुष अत्यन्त दुःख बायी है कि जिसके पीछे ग्यस्त राजनैतिक घडयन्त्र, हमारी राष्ट्रीय संस्कृति, हमारी धर्मनिरपेक्षता और हमारे समाज-वाद के ध्येयों का निर्मूलन जिसका ध्येय हो, इस प्रकार के धार्मिक तमाशे को, हमारे स्वर्गीय प्रधान मन्त्री जवाहर लाल नेहरू जो, जो खुब को अमोक्षरवादी मानते थे और जो किना धर्म में बिडशाल नहीं करते थे, अपना आशीर्वाद प्रदान करें। हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि जो धर्म और धार्मिक दलों की अब तब जिसकी उद्गाया करते थे, को वैतरिभिक क्यमाओं और धर्मअर्थों के निष्कारण नहीं

रखते थे, जिनकी स्याति विज्ञान में आस्था रखने वाले मनुष्य की तरह थी, वे भौतिकवादी नेहरू-विज्ञान के इन पुत्रियों को, भौतिक इमारती भूमि पर अपने निर्वाह पौराणिक कथाओं की शिखारसरथी और देवदूतों के विकट चमत्कार फँसाने हेतु इकट्ठे हो रहे हैं किन् प्रकार अपनी वहन विजयचक्रमी के मार्गन निमन्त्रण भेज सकते हैं। गांधी जी भी जिनके नाम पर वर्तमान कांग्रेसी नेता अहिंसावादी हुए हैं, क्या कहते हैं- आज मैं कट्टर ईसाइयों के विरुद्ध बिद्रोह करता हूँ क रण मुझे पूण विडम्बाण हो चका है कि उसने ईसा के सत्य को तोड़-मरोड़ कर रख दिया है। ईसा एशिया के थे जिनका संदेश कई माध्यमों से वितरित हुआ है परन्तु अब उन धर्म को रोमन राजा का समर्थन प्राप्त हुआ। वह राजकीय धर्म हो गया और वह आज तक भी उर्जा का स्रोत बना है। (इतिहास ३० ६ ३६) और स्वयं ईसा समोह के सम्बन्ध मे गांधी जो वा क्या कहना है- 'गौतम की दयालुता को देखिये। वह केवल मानव तक ही सीमित नहीं थी, वह मनुष्य जीवनसाथियों के प्रति भी थी। किन्का हृदय यह सोचकर प्रेम से ओत प्रोत न होगा कि मेयना (मेड का बच्चा) आन्ध्र से उन के कंधों पर आसीन है? सम्पूर्ण जोषधार्मियों के प्रति इस प्रकार का प्रेम ही ईसा के जीवन मे नहीं पाते।' (सत्य के प्रयोग २-२२) हमरण रहे उसी पवित्र गौतम को जिसका अशोक चक्र हवारा पद्यशंकर चिन्ह है वे कौबोलिक हवारे मोल्लास तिरस्कार पूण अग्ने रगीन चित्रों में घुमित धर्म परिवर्तक क्रान्ति सन्धियर द्वारा ठोकरं मारते हुए खिलाते हैं। चाहे शासन मे रहने वाले कांग्रेसी हों अथवा साधुजनिक जीवन मे रहने वाले सभी मे अपनी आँखें मूढ़ रली हैं न केवल वस्तुस्थितियों से अपितु गांधी जी के उपदेशों से भी।

कंसा है इनका मानव-प्रेम - भारत और मातृभों को बंधों बिदेशियों के लिए यत्नमान बनना चाहिये, जब कि उन बिदेशियों के उद्देश्य और महुत्वाकाक्षा हों- 'हवारी पुरातन संस्कृति, हमारे प्राचीन पवित्र बधिक धर्म, हवारी वैश्व-मण्डि तक को लब्ध कर र्में रोमन कंबालिक धर्म के गुलाम बनाना ताकि हम कैलिट और उपनिवेदा-बाधियों के सेवक बनें।' रोमन कंबालिक धर्मप्रचारक, उन का सम्पूर्ण उद्देश्य देखिये, बन्ने बन्नेबन्ने के तन्त्रि कन्ने

कुनन नहीं रहे हैं। उम्होंने विन्पत्री आन्ध्र का बरलल बिद्रवामपाल, महुत्वता का बहल बर्बरता उपकारों का बहल कान और स्वानन का जबाब बर्नों मे दिया है। चाहे किन्नों भी साधनो से बंधों न हों परन्तु सदैव ही हीननम साधनों मे, बजात धर्मान्तरण उनका एकसूत्री ध्येय रहा है। अपने उद्देश्यों को बढ़ाने हेतु वे समय के अनुकूल चाहे जिन प्रकार के बनावटीपन को धारण करेंगे- मानव प्रेम, जीवनदायक ईसा का प्रेम और क्या क्या नहीं। उनका पवित्र पिता (Holy Father) मानव प्रेम की यह जिम्मा फासो और सालाजार को देने कमी नहीं देले गये और न दक्षिण बोधननाय मै बुद्धयर्थावृत्तियों के काल करने बालों को अवधान विवधान द स्मारक को ध्रष्ट करने बालों को। तब वे एकागक यह विवित्र और अज्ञत प्रेम भारतीयों को मानव का कष्ट बंधो उठा रहे हैं-उन मरनीयों को जो चाहे अपनी आर्थिक स्थिति से अम तुष्ट हो पर तु अपने निम्न यार्थिक दानों मे पूण सतुष्ट हैं? इनके बाले मे काइन्ल प्रथम जो कि पोप के एजे ट हैं ब्रिणी बोटनान, कागो, अगोला मे अपने कौगोलिक बानध्यों को यह 'प्रेम' पढान बंधो नहीं जाने, यह देखकर कि उनमे इव गुण का गहरा अम ब है। काइन्ल प्रेम औ उनके रोमन कौगोलिक चक्र के अर्थ अनुयायियों मे इव इसाई प्रेम का तब परिचय नहीं दिया, जब ब्रिटिश शासक आतावी को लडाई के समय हमारे देश-मन्तों को गोलियों मे उडा रहे थे और तब भी नों तब हवारे वीर सैनिक घण्ट पुतु पीत गुन मो से मोश की मुक्ति के लिए यत्नशाल थे।

ऐसे मानव प्रेम की बंधों प्रावश्यकता नहीं-बर्नमान मयकर समय मे, भारत को आबश्यकता है अपने बंधों के लिये अन्न की, अपने औद्योगिकण को योत्रनाओ मे उनको फस्टरियों के लिए मजानो का, उत्तर से या पृथ्वी की सभी दिशाओं के आकवकों से लड़ने उत अपनी वेनाओं के लिए शस्त्रों की। और भारत को आबश्यकता है अपनी रक्षा को उन गुप्तचरों तोडफोड करने बालों, दकालो और मरकाने बालों से भी, जिनमे से अकिंश धर्म-प्रचारकों के रूप मे आकर हवारे देश मे कडिवाइया पैदा करते हैं कंसा कि आज नागा प्रदेश, केरल और गोवा मे छे पद्य है। हम बंधों बहड्ते कि वे आरुद हूमे ईड्य के लिए



प्रेम विखायें जिसका मतलब होता है हमारी मातृभूमि के साथ विश्वासघात। हम नहीं चाहते कि वे हमारे देश में आयें और यहाँ को धम निरपेक्षता और हमारे समाजवाद को मुरग लगायें और हम नहीं चाहते कि वे यहाँ आकर हमारे धर्म और संस्कृति को नष्ट करें।

हमारे पास हमारे निज के देवता अनन्त संख्या में हैं, जो हमें मानवता के लिये प्रेम की सीख दे सकते हैं और यदि हमें और सीखने की आवश्यकता भी है तो भी हम रोमन कथोलिक पादरियों का जो फ मस्टो, सहारकों और ह्वाकाइ करने वालों के मा य एजेण्ट हैं अपने बीच में आमनन नहीं चाहते कि वे आकर हमें प्रेम सिखायें, जो स्वयं उ हे अज्ञात है।

आज की स्थिति में हमारा कर्तव्य—भारत के सर्व साधारण कथोलिकों से हमारा कोई झगडा नहीं। हम जानते हैं कि रोमन कथोलिक चर्च के घातक राजनयिक और अराष्ट्रीय प्रभाव में वे आज भी हैं। जिसका कारण है हमारे शासन और नागरिक जीवन में अंधमरवादी, स्वार्थी नेता गणों की उपस्थिति जिनमें न तो बुरदृष्टि है और न है सहम। हमारे परोपियों के नेताओं श्रीमाओ, नेविन या अयूब जंवे हमारे राष्ट्रीय नेताओं में बुद्धिमत्ता और उत्साह नहीं है, अथवा ये मिशनरी अपने बोरिया-बिस्तरों समेन कमा के यहाँ से चल बिये होते जंवा कि उन्हें लका, ब्यउडा और पाकिस्तान में करना पडा और हमारे देश के उन रजाय लाल माई बहनों, जो पुर्नपोत्र आकाशकों द्वारा भोला, छल और यंत्रणाओं के कारण पिछले छ बी वर्षों में हमसे अलग किये गये हैं, पर का रोम का विघातक प्रभुत्व पमान्त हो जाना। सभी कथोलिक देशों में लाओ ऐव कथोलिक हैं यहाँ तक कि स्वयं रोम में, जिन्होंने पोप के अराष्ट्रीय निद्रा तो का शिकार बनने से इन्कार कर दिया है और हमें उम्मीद है कि हमारे देगवासी रोमन कथोलिक सर्वप्रथम देशभक्त और बाद में कथोलिक बनेंगे यदि पोप के एजेण्टों को सोप्राति-शीप्र उनके बीच में से अलग कर ावदा जाय। भारत में रहने वाले कथोलिकों में हमारा कोई झगडा नहीं, यदि वे अपने ईसा की अपने हृदयों, धरो और बच्चों तक ही सीमित रहें और विदेशी मिशनरियों (धर्म प्रचारकों) के चक्कर में पड़कर हमारे धर्म और संस्कृति पर अतिक्रमण

न करें। अब हम और अधिक सहन नहीं कर सकते। इस 'गामास और सराब बोतल ईवाई धर्म' को (यात्री जी के प्रका हरिजन ६-३-३७) बिलने हमारे पचास लाख माई बहनों का राष्ट्रीयत्व छीन लिया है।

रोमन कथोलिकों के विघातक इरादों का पर्दाफास:—भारतीय कथोलिक चर्च और भारतीय कथोलिक, बिदेस की किसी संस्था से अपने आपकी सम्बद्ध रहकर, धार्मिक अ ध्यारिक्त दृष्टि से क्यों उल रोम के पोप का सम्बन्ध स्थाकार करें ? क्यों उस बिदेशी मुखिया के आदेशों के अनुषार राष्ट्रीय कृत्यों में रत होंगे ? स्वतन्त्र भारत में जब पुव के कि डश शासकों द्वारा प्रवत सभी उपाधियाँ और सहु लयतें देशभक्त भारतीयों द्वारा श्वेच्छा से त्याग दी गईं तो भारत में यह कैसे सहन किया जाता है कि कोई विदेशी धार्मिक राजनयिक राष्य का मुखिया भारतीयों को उपाधियाँ प्रदान करे और उनके माफन आदेश देकर हमारे राष्ट्रीय हित के बिरोध में, भारत के पचास लाख वेगवासियों की अपने प्रति स्वामिनिक भ्यक्त कर-बाये ? भारतीय कथोलिक पादरियों का अराष्ट्रीय कार्यों का इतिहास काफ़ी लम्बा चौड़ा है और ये कार्य अभी भी पूववत् जारी है, धर्म है रोम की यह स्वामिनिक। हमारी स्वतन्त्रता से पुव इन्हीं धर्म गीतों से यहाँ के कथोलिकों को आदेश दिये जाते थ कि वे पुर्तुगाली, फ्रेंचों, ब्रिटिशों के प्रति बफावार रहे और आज इन्हीं पीढ़ों से उन्हें आदेश दिये जाते हैं कि वे हमारे चिरकाक्षित ध्येय धमनिरक्षता और समाजवाद के खिलाफ कार्य करें। यह सभी भारतीय कथोलिकों का अत्यन्त अकरो और पबित्र कृतव्य हो जाता है कि यह भारत के कथोलिक चर्च और रोम के पोप के इस अवपबित्र गठबन्धन को समाप्त कर, पबित्र पिता के, हमारे देश के पचास लाख कथोलिक माई-बहनों के मस्तिक हृदयों पर के, घातक साम्राज्य को बुर निंदाक फेंकें।

भारत के राष्ट्रीय ईसाइयों ने भारतीय राष्ट्रीय चर्च की स्थापना कर एक साहसी कदम उठाया है जिस चर्च के आक प्रिस्ट हैं अत्यन्त आदरयोग्य फादर एस्कारिबिचमन्। कथोलिक भी, यदि वे चाहते हैं, ईसा के सन्देशों को उनके राष्ट्रीय चर्च के माध्यम से प्रसारित कर सकते हैं, किसी प्रकट के पराम्परक का सकारक केने हूने स्वयं किन्ही

प्रकार की भी विदेशी मिशनरियों में आर्थिक सहाय न लेते हुए और विदेशी संस्थाओं से अराष्ट्रीय स्वाभिमति न रखते हुये । यह तथ्य कि कार्डिनल प्रेंस और कॅथोलिक धर्म के रोम के अधीनस्थ अपभ्रंश बंधनों से बंधे पदाधिकारी भारतीय राष्ट्रीय धर्म के विरोध में हैं, स्वतः ही उनके द्वारा अन्तराष्ट्रीय ईसाई धर्म प्रसार का प्रयत्न को बन्द करने में सफल होने के पीछे छिपे उनके विघातक इरादों का पर्याप्त साक्ष्य प्रदान करता है ।

इनके पीछे तक—सम्पूर्ण सत्तार की सत्तार भर की प्रतिगामिता केन्द्र रोम के अधीनस्थ कर देने के विघातक प्रयत्नों के करते समय कॅथोलिकों को कर्मों कर्मों टुकड़ों के प्रलोभन अपने निदेशक और बुद्ध गिहार के सभने ब्रह्मने पढ़ने हैं । इस बार कार्डिनल प्रेंस को बड़ी तकलीफ हो रही है कि वह किस तरह भारत में होने जा रही ईसाई धर्म प्रसार का प्रयत्न के महान भौतिक लाभों को तरकार और सांस्कृतिक संस्थाओं को समझाये । देखिये आध्यात्मिकता से भौतिकता को ओर प्रयाण, स्वायत्तता के लिए कितना यथा तर्क—वर्तमान में अत्यावश्यक विदेशी मुद्रा में बढ़ती होगी साथ ही साथ पयटन को प्रोत्साहन मिलेगा । और दूसरे प्रलोभन भी हैं—'एक

दूसरे को समझना (शायद हम सबको ईसाई बनाकर) और अन्तराष्ट्रीय सहयोग' । (जैसे आयात होगी तोड़कोड़ करने वालों और बर्मा को—सम्भवतः गोवा को उड़ाने) । केवल मूल्य और देशद्रोही ही इन प्रलोभनों के शिकार हो सकते हैं ।

संस्थिति में हमारा पावन कतव्य—अन्तराष्ट्रीय ईसाई धर्म प्रसार का प्रयत्न रोप द्वारा हमारे राष्ट्रीय मामलों में सोचा हस्तक्षेप है, हमें समाजवाद के माग से हटाने के लिये । हमारे नवोदित स्वतन्त्र राष्ट्र पर फासिस्ट सवहारा शासन थोपने का प्रयास है । भारत को ईसाई और अरष्ट्रीय बनाने का प्रयास है ।

हमारे सामर्थ्य के सभी साधनों से उसका प्रतिहार किया जाना चाहिए । भारत पर आक्रमण करने वाली इस फासिस्ट जनता पर रोक लगे । अन्तराष्ट्रीय ईसाई धर्म-प्रसार का प्रयत्न पर रोक लगे—

क्यों ?

हमारी राष्ट्रीय एकात्मता की रक्षा के लिए, हमारी कष्ट प्राप्त स्वतंत्रता की रक्षा के लिये हमारे, समाजवाद के ध्येयों की रक्षा के लिये ।



मुंबई प्रदेश आर्य प्रति निधि मभा

मुंबई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि समा का ५९, ६० का वार्षिक बालन्सा हमारे सामने है । समा से सम्बन्धित आर्य समाजों की सहाय १३३ है । आयममाओं द्वारा अनेक बालिकाओं के शिक्षणालय संचालित हैं । मभा की ६२ ६३ की आय २६४६६ ३९ हुई है जबकि व्यय लगभग ९०००) ५० जबकि हुआ है । समा के प्रधान श्री कान्तिबाल मोहन शर्मा तथा मन्त्री श्री वेणो भाई आय हैं ।

समा द्वारा नीलों में प्रचार कार्य की विशेष आवश्यकता की जा रही है । नीलों की कर्मचारियों के शिक्षण के लिये शबरी आश्रम तथा बालकों के लिए बालमोक्ष कुमर आश्रम की स्थापना की गई है । इस वर्ष प्रदेश में अनेक स्थानों पर नवीन आश्रम स्थापित किये गये हैं ।



आर्य समाज सूचना

आर्य जनता को यह सूचित किया जाना है कि विशेष कारणों से डॉ० ए० बी० इन्टर कानेज गाजीपुर का समस्त प्रबन्ध अर्ध प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश ने सीधे अपने हाथ में ले लिया है और समा प्रधान माननीय श्री मदनमोहन जी वर्मा ने प्रशासनिक बनाना स्वीकार कर लिया है । पूर्ण विश्वास है कि अब यह आर्य समाज की शिक्षण-सहाय प्रगति पथ पर आरूढ़ होगी । श्री वर्माजी ने श्री अमरनाथ जी वर्मा की सहायक प्रशासनिक बनाया है और पाच सत्रनों की एक काम चलाऊ समिति बना दी गई है ।

—चन्द्रवत्त तिवारी समा मन्त्री



भारतीय संस्कृति के चौर हरण की तैयारियाँ

(पोपपाल की बम्बई यात्रा का पोल)

(ले०-श्री बहादुर जी भारती)

वर्षा सभों शताब्दि मे रेडियो मच्चे और छूटे पचार का अति बलवान् माधन बना हुआ है। इमीलिये अब किसी देश को अपना दृष्टिकोण अपने मित्र और दूमेरे लोभों क सामने रखना होता है तो वह अपने रेडियो ट्रान्समीटर से हर प्रकार के मनघडम्प समाचार और वार्तालाप शाइकास्ट करके जनता के विचारों की बदलने के हेतु उसका ब्रेन वाशिंग (मस्तिष्क धुवाई) शुरू कर देता है। जो दूमेरे बलवान और सतक देश इस ब्रेन वाशिंग की मजूता को समझते हैं वे रांडयो के इन् वुडयोग को बिफल बनाने के लिये अपने रेडियो ट्रान्समीटर का अधिक शक्ति का प्रयोग करते हुए प्रायु के रेडियो शाइकास्ट की बेबलेग्य को इनता और ऐमा गडबडा देते हैं कि उसके शाइकास्ट कहीं से सुने नहीं जा सकते इमे तैकन क को भाषा मे (जैविक) कहते हैं। इरका यात्रारणया यद प्रय है कि किसी के रेडियो शाइकास्ट तैबनीक क संहयता से ऐसे बिफल कर दिये जाय कि वे सुने न जा सकें ऐसे ही कुछ समय हुआ इसी उद्देशय लम ने चीन क कुछ शाइकास्ट जेम कर दिये थे।

इम मस क अगत मे होने वालो कथोलिक यूकैरिस्टक काप्रेन का सर्वा भारत के पत्र पत्रिकाओं में खोर से हो रहा है। मति-मानि से इव कथोलिक काप्रेन का डिहोरा भारतीय प्रेन मे पोटा जा रहा है। इसके साथ-साथ बिबई ईसाइयत पर यह पुन मो नबार है कि इस काप्रेन के अहित मे सब प्रकार के लेख इत्यादि (जैम) कर दिये जाये। इसकी गनिविधिया अब इम प्रकार से चल रही हैं कि कुछ पत्रकार और सम्पादक गण इस क्षेत्र मे उन्हीं सहायता और सहयोग देने के लिये बिबश हो गये हैं या बिबश कर दिये गये हैं या उ हों स्वय ही अपनी लेखनी की स्वगन्ध का बलिदान दे दिण है। फलम्बहप उम्होने कथोलिक काप्रेन यूकैरिस्टक काप्रेन के बिरोध में अपना मूह न खोलने की कसब खा ली है। राजधानी क कुछ पत्र तो एक दो कसम और मो आगे चल रहे हैं। इव कथोलिक काप्रेन के हित में तो यह लोय 'मर दक को पाठको क पत्र' इत्याह पुबक प्रकाशिन करने ही हैं परतु उन्होंने धमनिरपेक्षता की आडु लेकर दूवरी तरफ क सब विचारो के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा रखा है। यह है धमनिरपेक्षता की नयी तस्वीर, जिसका बाबेवा देग मे इस जोर से नवाया जा रहा है कि कोई दूमेरो बान कान पडे सुनाई नहीं पड़ती।

इव उल्टे मीब अये १०११ का एक अबभूत नमूना भारत की जनता के सामने बम्बई के चौराठी मंडाल में हुवाये प्रिय प्रधानमन्त्री न भा रखा। उम्होने जनता से कहा कि इस कथोलिक काप्रेन मे शा मल होने का उनका विचार न था कि तु इमक बिषय का आम्बोलन हो रहा है उमे दलकर अब वह अवश्यमेव इसने भाग लेंगे। किस मार्क की बात उ होने कहु डाला है इनका बिबरण आगे चलकर किया जायेगा। दूसरी महत्वपूण बात उम्होने यह कही कि भारतीय जनता को यह ध्यान रखना चाहिए कि पोपवाल न केवल कथोलिक सम्प्रदाय के नेता हैं बह एक राष्ट्र के राजनैतिक प्रमुख भी है। इवलिफ भारतीय जनता को उनका हार्बिक स्वागत करना चाहिए।

प्रधान मंत्री का पहला वक्तव्य बडे बूढ़ो की समझ मे मले ही न जाय किन्तु बचपे इसकी महत्ता को नलीनार्ति समझते हैं। इनका यह कहना कि सम्मेलन क बिषय ही रहे आम्बोलन के कारण अब बह अवश्यमेव इव कथोलिक काप्रस मे भाग लेंगे उन मोले मोले जिद्द बानक का हठ से कुछ बिमिन्न नहीं जो खाती से पीड़ित होने पर भी गोल गप्पे खाने की ऋठ कवल इनलिये पकड़ लेता है कि उनके माता पिता और बिक्रमक इमका बिरोध करते हैं।

पोपवाल एक ही समय मे कथोलिक सम्प्रदाय और एक राष्ट्र के अधिपति मले ही हों व.तु वे इस समय केवल कथोलिक सम्प्रदाय क नेता क रूप मे ही भारत आ रहे हैं। पोपवाल और कथोलिक काप्रेन क कसधारी धर्मो-

अराष्ट्रीय ईसाई निरोध सप्ताह

दि० २८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक प्रान्त के कोने-कोने में मनाया जाय

भारत में विदेशी पादरियों के सङ्ग्रह को समाप्त करने के लिये देश की जनता जाग उठी है। २८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक बम्बई में होने वाले केंद्रात्मिक ईसाई विषय सम्मेलन अर्थात् ज्ञाना बलिदान उरुमव से सभी राष्ट्रीय नागरिक बिनितन हैं। इस सम्मेलन को भारत के हिन्दुओं के ईसाईकरण का भीषण सङ्ग्रह अनुभव किया जा रहा है तथा सरकार भी मयङ्कर ऐतिहासिक भूज का परिष्कार करने के उपाय सोचे जा रहे हैं।

प्रतिनिधि सभा की ओर से प्रांत के प्रत्येक प्रायसमाज से उपयुक्त तारीखों में साप्ताहिक रूप में अराष्ट्रीय ईसाई निरोध सप्ताह मनाने का अनुरोध है। इस पूरे सप्तह में जनता को इस माओ खतरे से सतर्क किया जाय और एतदर्थ सामंजसिक सम एं एव जुलूस निकाले जाय।

अराष्ट्रीय ईसाई विरोधा साहित्य जनता के हाथों में पहुँचाया जाय। सभा की ओर से भी निम्न ट्रेक्ट इस अवसर पर प्रकाशित किये गये हैं—

- १—गोरे पादरियों के लाले कारनामे
- २—रोमन कैथोलिक चर्च का नग्न बिग्र
- ३—क्राइस्ट वरसेज क्रिश्चियेनिटी।

शिवदयालु

मुख्योपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा,
उत्तर-प्रदेश, लखनऊ

भाति स्पष्ट कर चुके हैं कि पोपगाल केवल बम्बई जायेगे और सम्भवत एक दिन ही बम्बई में उहरेगे। रवा यह आश्चर्यजनक बात नहीं कि एक राजनतिक प्रमुख बाहर किसी देश में पहुँची बार जाये और राजधानी न आकर किसी अन्य शहर या गाँव में केवल एक दो दिन रह कर अपना मुद्र छपाकर वापिस लौट जाये? इनके अतिरिक्त यह क्या का राजनतिक शिष्टाचार है कि बह बाहर में आने वाला व्यक्ति तो इस राजधानी की ओर मुँह भी न करे और वहाँ के प्रधान मन्त्री और देश के दूतों के उच्च कोटि के केन्द्रीय अधिकारी विदेशी नेता को मिम्ने और सम्मान पत्र देने राजधानी छोड़कर बम्बई जाये? प्रधान मन्त्री के कहने के मुताबिक यदि पोपगाल राजनतिक नेता की हतियत से भारत आ रहे हैं तो क्या भारत सरकार इस बात की घोषणा करने की हिम्मत रखनी है कि भारत के राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री भारत की राजधानी छोड़कर राजधानी से बाहर आने वाले व्यक्ति को मिलने जायें? क्या भारत सरकार यह भी स्पष्ट कर सकती है कि कथोलिक सम्प्रदाय के यह नेता भारत राज्य के इन बम्बई शहर में दो दिन में कैथोलिक सम्प्रदाय के प्रचार के प्रतिरिक्त और कौन सा धर्मनिरपेक्ष राजनतिक काय करेगे? यह रहस्य किसी से अच छुटा नहीं है कि अपने एक दो दिन की बम्बई यात्रा (हम इसे भारत यात्रा कवाबिन् नहीं मान सकते) में यह राजनतिक नेता शत प्रतिशत अमानतिक काय हा करेगे।

भारतीय संस्कृति के वीरङ्गण को तैव रिया शुरू हैं। भारतीय जनता निरन्धवता छोड़कर आल्ले खेल रही है। वह अब यह जान गई है कि ब्रिटेनी मुग़ा के लालच में नले ही और कुछ बिक जाये परन्तु हिन्दुओं का बिक धन मोलान पर नहीं बढ़ाया जा सकता।

विश्व-ईसाई सम्मेलन

भारत के लिए एक चुनौती

(अन्तर्राष्ट्रिय आर्य एम० ए०, द्वि० वर्ष साप्ताहिक होशियारपुर)

आज भारत के निर्मल गगन पर विपत्ति की काली-काली घटाये छा रही हैं। एक ओर चीनी अग्रपर गृह कांड लड़ा है तो दूसरी ओर पाकिस्तानी भेडिया हमे झेलें बिल्ला रहा है। फिर देश की आन्तरिक अवस्था इनसे भी गम्भीर है। कमरतोड महगाई घूसघोरो, भ्रष्टाचार, मिलावट आदि नाना कुनीतिया एव अनेतिकार्य राष्ट्र की जड़ों को कोलला कर रही हैं। इससे भी बढ़कर फिर आज बम्बई में विश्व ईसाई सम्मेलन होने जा रहा है। भारतीय जनता इन सबसे अत्यन्त क्षुब्ध है। भारत वजन-बाजी को पाषो तले रौंदा जा रहा है और उसकी छाती पर भूंग बली जा रही है।

यह वही अग्रज जाति है जिसने भारत के मुष और बेमब की लूट लमोट कर रख दिया और सोने की जिडिया कुहलाने वाले भारत को कागज की पुडिया बनाकर रख दिया था। यह वही अग्रज जाति है जो आई थी व्यापारी बनकर परन्तु बन बंठी हमारे भाग्य की स्वाभिमो विधात्र। यह वही गोरी घलटन है धम के नाम पर जिसके काले कारनामे इतिहास के पृष्ठों पर अंकित है। यह वही जाति है जिसके धर्म के ठकेदारो ने धम की बलिबेदो पर गेलो-सियो और ब्रूनो जमे मगान मनो घयो को जिम्बा जला दिया था। यही उसी धम की उपातक (जाति) है जिसन खूनो मेरो (ब्लडो मेरो) के रूप में अपन विरोधयो को अग्नि की मट्टी में झोक दिया था। यह वही अग्रज सतति है जिसके अत्याचारों की दवनाक कर्मानो सुनकर धरा काँप उठती है, रोगदे लड़े हो जाते हैं, हृदय का स्पन्दन रुक जाता है।

यह ईसा की यही तथाकथित सतान है जिसने लाज-पतराय पर लाठिया बरसाईं जिसने माई परमानन्द को कारागार की काल कोठरियो में सदाया, जिसने धीर छाबरकर को असह्य कष्ट दिये। यह सम्मेलन दुसरे उस

सदमी की याद दिलाता है जिसको अकाल मृत्यु का प्राप्त बना दिया गया था। यह यूकेरिस्टिक कांग्रेस हमें भारत माता के उन वहाँन मृत्यों मगल पाँडे और तांघाटोये की याद को ताजा करा देता है जिनको वन बहाडे गोली का निगाना बना दिया गया था। यह वही ईसा की फौज है जिसके द्वारा बिस्मिल भगनसिंह, राजगुरु, सुखदेव आदि अनेको वीर पानी के सीखचों से बेधे गये थे, जिसके द्वारा अनेको माताओ की गो वया ख लो कर दी गई थीं, अनेकों बहनों की मापो के सिम्भूर को वीछा गया था। ये वही ईसा के पुत्रारो हैं, धम के नाम पर पिछले विनों जिनके बीड मलकुओ पर ढाये गये भीषण अत्याचारों की माथा को सुनकर आलो के सामने अन्धकार छा गया, ससार दग रह गया था, मानवता बहल उठी थी, स्वय ईसाइयत ने भी लज्जा के मारे तिर नोषा कर लिया था। यही नहीं पेट्रिस लुमुम्बा का हतन भी इसी जाति के करकमलों द्वारा हुआ, लका ने स्वर्गीय प्रधानमन्त्री भडारनायक की श्रुया के पीछे तो स्पष्ट ही ईसाई धर्म के तथाकथित ठेकेदार पादरियो का हाथ था। यह तथ्य तो वहाँ की उच्चवत-व्याघात्य द्वारा भी प्रमाणित हो चुका है। गोत्रा के अन्दर कित प्रकार इन ईसाई धम के सरअकों ने भारतीयों पर जल्म ढाये थे? उनको भुलाया नहीं जा सकता। यह वही तथाकथित जाति है जिसन अब तक भारत को ही नहीं अन्धाका जन विशाल महाद्वीप को भी बासता की वेड़ियों में जकड़े रखा था यू वहा जा सकता है कि समस्त सपार को ही इसने अपने आतकों से आक-बित किया। ससार इस बटु तथ्य से फलोमाति परिबिद्ध है। स्वय बड़े बड़ निष्पक्ष अग्रज इतिहासकार अपने माइयो के इन कुरितत एव जन्म-वृत्तयो पर परधवापात् की आगन स दब्य है।

ये आने वाले हृपारे अतिथि (माग्य) उद्यो संक्राके के



बंसस है जिसने भारत की सभ्कृति एव सभ्प्रजा की मिटाने के लिए ऐसी शिशा प्रणाली बनाई या जिसका उद्देश्य 'Indians in blood and colour but English in taste, in opinion, in moral and in intellect' था। इसी जाति के उन्नायकों एव उन्नायकों ने बेवों की गहरियों के गीत एव अक्षय्य प्रलाप कहा था।

यह वही ईसा की टोली है जिसने भारत के कला कौशल को मिट्टी में मिलाए रख दिया था। सत्तर प्रसिद्ध डाके की मलमल के उद्योग को नष्ट अष्ट करके उसके स्थान पर मन्वेस्टर (निनिन मलमल का प्रवलन इसी के द्वारा किया गया था। इन्हीं की अध्यक्षता में धम प्रचार के लिए यहाँ ईसाई पावरियों को खुली छूट दी गई, स्कूलों और कॉलेजों में अग्रजों की पढ़ाई अनिवार्य करके ईसाइयत का पाठ पढ़ाया गया जिसका परिणाम हम अब तक भुगत रहे हैं।

मालाबार तट पर ईसाई पावरियों का घुमाव प्रचार करवाया गया यहाँ तक कि पवन वेव की रचना की गई। ये सब इन्हीं हमारे मावो अतिथियों के माई ब पुत्रों। आज भी वैसे के बल पर ईसाई पावरियों द्वारा भारत एवं भारतीय जनता का धर्म खरीबा जा रहा है गरीबों, पिछड़े वर्गों एवं आदिवासियों को लोभ लालच देकर उन्हें ईसाई बनाया जा रहा है। राम कृष्ण की काठ की प्रति बनाकर और ईसा की लोहे की मूर्ति बन कर उनको अभिन में डालकर राम-कृष्ण की मूर्ति को फूटकर मोला-नाली भारतीय जनता से कहा जाता है कि तुम्हारा भगवान् मुचुहारा इष्टदेव तो बल सत्ता है परन्तु देखो हमारा पैगम्बर कितना शक्तमाली है वह प्रानि में भी नहीं चलता। इस प्रकार आधे (तुच्छ) साधनो द्वारा ईसाइयत का डक बचाया जा रहा है। धर्म की आड में राजनीतिक शिकार खेला जा रहा है। बर्ना हमसे क्यों घुसक हुआ ? इन्हीं की कूटनीति के कारण !! पाकिस्तान हमसे क्यों अलग हुआ इन्हीं का दुरनिसन्धि के कारण !! आज नागा संघ हमारे सामने इन्हीं की बगोलत है, इन्हीं की कृपा से है। केरल में यह कायम का मन्विमदल नहीं उठरता तो इसके लिए कौन जिम्मेवार है ? केवल एकमात्र ईसाई पावरियों !! कर्णियों वयया भारत को ईसाई बनाने का जिम्

बा रहा है। एक ओर कहा जाता है कि हिन्दू कम हो रहे हैं। हिन्दू आय कम न हो तो ओर कौन हो ? समस्त सत्ता इनका हडप करना चाहता है, मुगलमान सोचते हैं कि हम इन पर हमला करें, ईसाई चाहते हैं कि हम मंदिर मार लें, पण्डित नम्बर हमें ही प्राप्त हो, जो कोई आते हैं सब इन्हीं पर हावी होना चाहते हैं इन्हीं की जूती इन्हीं का तिर।

फिर हमारी घमनिरेष सत्कार आने वाली ईसा की पीठ के लिए सब प्रकार की सुख सुविधाएँ जुटा रही हैं ताकि उनका किसी प्रकार का कष्ट एव पीडा न हो, उनके स देश में क ई विघ्न बाधा न हो। उनके लिए कोई चुन्नी कर नहीं होगा। उनके पासपट की कोई चेन्निंग नहीं होगी। दश में घूमने के लिए उनके बान्ने बाकायदा रियायतों टिकट का प्रबन्ध होगा। बम्बई के विद्यालय एव महा-विद्यालय उनके स्वयंसेवा पाठ सन्वाह के लिए बन्द रखे जायेंगे। माराट्टा और कन्नड़ सरकार उनके स्वयंसेवा निमित्त ८७ से १०० लाख तक कर्यों को भेंट बढ़ा रही है। मारा माय राट्टगति उसका परिवर्धन करने जा रहे हैं। और अब तो यह भा सुना गया है कि पुञ्ज भारत मा के छाल भी यहाँ अपनी लाली विखेरने आ रहे हैं। यह सब कुछ क्या हा रहा है ? मारन, भारतीयता तथा भारतीय जनता को एक बडी मारी चुनौती दी जा रही है, उनके लिए लुना चेंलेंज है। आज यदि आर्यसमाज-बहु आचममात्र जिनके मस्यापक महर्षि दयानन्द ने राट्ट के लिए विषयान किया गितने नई परमानन्द लाला लाजपतराय, स्वामि अद नन्द रामप्रसाद विम्विल जैसे औरों और शहीदों की जन्म दिया जो देश का सतत प्रहरी हैं, जिसने बुझाईयों से टक्कर ली है, जिसने ईसाइयन और इस्लामियत की बाढ से देश को बचाया है और बचा रहा है-उसका यदि कोई समारोह या सम्मेलन होता है वाहे वह सम्मेलन तीन लाख आदिमियों का क्यों न हो उस यह कहकर टाल दिया जाता है कि वह तो माध्प्रदायिक है, (सरकार किसी मत विषय का पोषण नहीं कर सकती) उसकी सहायता तो दूर रही यह है हमारे लिए एक सामयिक चुनौती ! देश के हिन की माय है, तोत्र पुकार है कि इनके (विश्व ईसाई सम्मेलन के) विरोध में तोत्र अधिवान किया जाये ताकि इस्लाम फिर व हमारी सृजना पर हट ।





द्वि मनाचार-

२ लू मनीह पुत्र जीहरी जाति
 ३ नी प्राण नबादा पो० बराही
 ४ १ मे २ फरवरी ६४ को आर्य
 न अ व म स्टेसन रोड मुरावाबाद में
 तो देहराज ओ इवान्म साभेशन विमान
 डेवार्पुर धी गणेशदास ओ साल्मा,
 तो बहुस्वरूप मटनागर एबकोट तथा
 तो यशपाल ओ मन्नी आ० स० सिरती
 गवि मन्त्रों की उपस्थिति मे वैदिक
 म स्वीक र कर अपनी पुरानी जाति
 म्म को प्रह्व किया। नाम परिवर्तन
 ५ लोन्निड रखा गया।

श्र देव दास आर्य मन्त्री के आर्य समा कानपुर द्वारा

-आयनमाज गोवि व नगर कानपुर
 ई ईसाई पुवतो कु० बलेरा व मुस्लिम
 पुवता धी मोमना को उनको इच्छानुसार
 २४ को वैदिक धर्म मे प्रवेश कराया
 लेगा का नम सुषया व मोमना का
 नम स विन्ने रखा गया। तत्परवात
 १० की इच्छानुसार उनका विवाह
 ममश धी पुशीलकुमार ओबास्तव तथा
 शी प्रन्दास नामक पुवकों से आ०स० के
 र हित द्वारा कराया गया।

त०कोल प्रचा० प० छाजूराम शर्मा द्वारा

-हुमारी नकोस फातिमा पुवी सली
 मुक्का खां नई बन्ती अलीगढ़ को २० ६-
 ६४ को शुद्ध करके निमलादेवी नाम
 रखा गया। बड़ मगरवालिका प्रायमरी
 गठनांगी मे सहोदक अर्ध विक्रा हैं। ओ
 जलाभाग महोदय की स्वय प्राथमापन्न
 कर वैदिक धर्म स्वीकार किया।

दिन क १ ७-६४थाम अल्हाबापुर
 रो० पनटी जि० अलीगढ़ मे एक ईसाई
 म्मया ७ पुवक को शुद्धकर उनका विवाह
 रखाकर कराया।

दि० २० ७ ६४ को प्राण पो०
 महमवपुर जि० अलीगढ़ मे २६ ईसाई
 हरिजन स्त्री पुषव बालको को शुद्ध
 किया।

प्रचारक-श्री शिवचरन लाल गौतम द्वारा

-२० ६-६४ डा० सरवातल, अत

रोली अलीगढ़ मे २५ हरिजन ईसाई
 ध्यासियो को शुद्ध किया गया।

प्राण बहगवापुर डा० इच्छतपुर,
 अनरौली अलीगढ़ मे २१ ईसाई हरिजन
 शुद्ध किये गये। प्राण कारबाही (अमृ-
 शहर) जि० बुलम्बहाहर में २० ईसाई
 हरिजन शुद्ध किये गये।



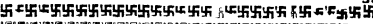
मासिक बुद्धय

सम्प्रदायी मयकर पागलपन, मृगी हिस्टोरिया, पुराना सरबद्ध क्लब प्रेसर, बिच
 की तीव्र पढ़कन, तथा हादिक पीडा आदि सम्पूर्ण पुराने रोगों के परम
 विरहस्त निदान तथा चिकित्सा के लिये परामर्श कीविधि-

आयुर्वेद बृहस्पति कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री

आयुर्वेद धन्वन्तरि
 D Sc. A B I M S L A M S

मुक्क्याधिष्ठाता, कन्या गुरुकुल, हरिद्वार
 मुख्य सम्पादक-“शक्ति सन्देश” साप्ताहिक कनकल
 सचालक-आयुर्वेद शक्ति आश्रम कनकल
 पो० आ० गुरुकुल कागड़ी (सहारनपुर)
 फोन न० कार्यालय ९० निवास ७७



चारो वेद माध्य, स्वामी दयानन्द के त ग्रन्थ तथा
 आर्यसमाज की समस्त पुस्तको का

एक मात्र प्राप्ति स्थान-

आर्य माहिन्य मण्डल लि०
 श्रीनगर रोड, अजमेर

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद की विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या
 वाचस्पति आदि परीक्षार्थ मंडल के तत्वावधान मे प्रतिवर्ष होती हैं। इन परी-
 क्षाओं की समस्त पुस्तकें अन्ध पुस्तक विक्रताओ के अतिरिक्त हमारे यहाँ से
 भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थो का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं
 की पाठविधि मुफ्त मगावें





श्री स्वामी सत्यानन्द हरस्वती
गु०ब० आश्रम वेदध्यास पान

पोस राउरकेला द्वारा -

—ग्राम लालदगा पो० बाना बडगा

जि० सुन्दरगढ़ निवासी कल्या किसान परिवार में १६ व्यक्ति लोटू किसान ६ व्यक्ति बंकी किसान ४ व्यक्ति ठोक् किसान ४ व्यक्ति ११० ६४ को बधिक बच में बीजित किये गये । नाम कमश कृष्णचन्द्र लख बलमद्र और ठाकुर रणसे गये । उनके ४ बालकों को गुरुकुल में लाभ्य दिया गया । १०० म स्कर बुतिया ग्राम बुडाकटा इस इलाके में शुद्धि का काय कर रहे है ।

श्री हरिप्रसाद जी बानप्रस्थी
द्वारा

ग्राम बिजौली जि० मेरठ में कुछ मनुष्यों की मूल से ईसाइयों के गिजे की स्थापना हुई । भारतीय हिंदू शुद्धि समा की ओर से १९७६ की सम्मेलन हुआ । जिसमें ११२ ईसाइयों की शुद्धि हुई तथा बानप्रस्थी श्री हरप्रसाद जी के उपदेशों से आयसमाज और आ० सं० मन्दिर की स्थापना हुई ।

२४ से ३१७६४ तक जिला कुम्भसहर में वेद प्रचार की धूम मचा कर वो सरकार श्री हरप्रसाद जी बानप्रस्थी ने कराये । एक १०० राम शरण दास जी की हुकान व मकान का गृहप्रवेश सरकार या और दूसरा १० मगाप्रसाद जी पू० मन्त्री आय समा के बेबते का नामकरण पा ।

श्री डालचन्द आर्य तथा श्री
हरप्रसाद बानप्रस्थी द्वारा

मन्त्रीय विन्दु शुद्धि समन उपर

शुद्धि सम्मेलन १९७६४ को हुआ । दोशिन कर परतन जाटव जाति जिसमें १३४ ईसाइयों को बधिक धम में सम्मिलित किया गया ।

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१ ऋग्वेदमुबोध भाष्य—मध छावा मेघातिथी शुन शेष कण्ठ)
परागौतम हित्य गम नारायण बृहस्पति विश्वकर्मा सप्त ऋषि व्यास
आदि १० ऋषियों के मंत्रों के मुबोध भाष्य मूल्य १६) डाक व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबाब भाष्य मू०
७) डाक व्यय १)

यजुर्वेद मुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥) अष्टाध्यायी मू० २)
अध्याय ३६ मूल्य ॥) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद मुबोध भाष्य—(समूह २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक व्यय ६)

उपनिषद भाष्य—ईश २) केन ॥) कठ १॥॥) प्रश्न १॥॥) मुण्डक १॥॥)
माण्डूक्य ॥॥) ऐतरेय ॥॥) सबका डाक व्यय २)।

श्रीमद्भगवत्गीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य २०) डाक
व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ सख्या ६९०

मूल्य १२) डाक व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिंदा भाषा में सरल ग्रंथ और विस्तृत तथा मुबोध विवरण भाषांतर तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा बतार जी विद्याभास्कर रतनगढ़ जि० बिजनौर । भारतीय आय राजनतिक साहित्य में यह ग्रंथ प्रथम स्थान में बणन करने योग्य है यह सब जानते हैं । व्याख्याकार श्री हिन्गी जगत में सुप्रसिद्ध हैं । भारत राष्ट्र अब स्वतंत्र है । इस भारत की स्वतंत्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनतिक ग्रंथ का पठन पाठन भारत मर में और घर घर में सबत्र होना अत्यंत आवश्यक है । इसलिए इसका आज ही मगाइये ।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं ।

पता—स्वाध्याय मण्डल भित्ता पारडी, जिला सूरत

-मा० हि० पु० लमा बिल्की के रूपरेखक भी इतवारी काल कार्य ने प्राप्त परवाना जि० कुलम्बग्रहर में २५ १० ६४ को शुद्धि सम्मेलन में १३१ ईसाइयों को वैदिक धर्म की बोधा दी। शुद्धि सत्कार भी हरिप्रताप की वानप्रस्थी ने कराया।

लमा उपदेशक भी डालचन्द आय ने प्राप्त कनोजा जिला मेरठ में २६ १० ६४ को शुद्धि समारोह का आयोजन किया। शुद्धि सत्कार भी हरिप्रताप की वानप्रस्थी ने कराया जिसमें १२१ ईसाइयों ने वैदिक धर्म का व क्षा ली।

< -प्राप्त पुरावपुर कुरसी जि० मेरठ में २७ १० ६४ को भी शाल्प द की के प्रथम से शुद्धि सम्मेलन हुआ जिसमें ६५ ईसाइयों ने वैदिक धर्म की बोधा ली। शुद्धि सत्कार आ हरिप्रताप वानप्रस्थी ने कराया।

हिमालय के हरे
आँवलो से निर्मित
विटामिन सी तथा
लोह से भरपूर



गुरुकुल
कोशी
का

अयनप्राश



शक्ति संचय के
लिए आज से
ही सेवन करें

गुरुकुल का

गुरुकुल वृन्दावन प्रयाग शाला

जिला मथुरा का
विशुद्ध शास्त्रविधि द्वारा
बनाया हुआ
“अयनप्राश”

दोषन वाता स्वास कास हृदय तथा
कफकों की शक्तिवाता
शरीर को बलवान बनाता है।
मूल्य द) १० सेर
गोट—शास्त्र विधि से निर्मित घब रस
मदन आधम, अरिष्ट, तेल तथा
उत्तम सुगन्धित हृदन सामग्री की
तैयार बिकती है। एन्टो की
हर जगह आवश्यकता है, पर
व्यवहार करें।

लखनऊ के सोल एजेंट—

श्री एम० ए० महरा एण्ड कं०,
२० २१ श्रीगम राट

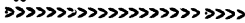
मवश्य पढ़िये

कर्म रोग नाशक तैल

रजिस्टड

काम बहना शब्द होना कम मुनना देव होना साज आना साथ साथ
होना भव व ज्ञाना कुलना सोटा सा बजना आदि काम के रागों में गुणकारा
है पू० १ अ शी १।। वे वजन शीशो कण राग नाशक तेल की मगान वालों
को सोल एजेंट बनाया ज योग और उनका कमीशन में १८ शीशा प्रा साथ
वे मेजो ज योग। सर्वा र्थिग पोस्टेज सरादार क जिम्मे रहेगा। बरली का
प्रसिद्ध रजिस्टड नीतल सुरमा जो आला क लिए बडा गुणकारा है एक
प्राशा १।। हम से मगारर परीना करक दे लय।

कर्म रोग नाशक तैल सन्तोमालन माग नजीबाबाद यू पी



—आर्य समाज प्ररमापुर स्टेड कानपुर । २७ १० ६४ मगलवार को एक ईसाई बत्ती तथा एक मुस्लिम परिवार मे द्रावी हिन्दू पुत्रक का गुंड की गई, पशुवात् बधिक र.ति स दोनो का णिग्रहण तस्कार सम्पन्न किया गया बत्ती का नाम रत्नोनासिंह के स्थान पर ।जरानो रबखा गया तथा पुत्रक का ल के० मुनी स्वामी है ।

—आर्य समाज लुही कानपुर मे २५-० ६४ को एक ईसाई दम्पति को गुंड ो गई । पहले इनके पितामह आश्रय । पूर्व नाम डो डो सिंह परिवर्तित मपालसिंह धीमती मेरी परिवर्तित तित देवी ।

—आर्य समाज बाबूपुरवा कानपुर मे ओज नाम के एक मुसलमान को गुंड ५-८ ६४ को हुइ,नया नाम सतोर्षानह रखा गया ।

—अथ समाज पिम्परी कालोनी जूना) मे एक ईसाई महिला ऐनी ।।सस क शुद्ध कर सुगोलाशवा नाम बा गया म शिवणा नामह ।हन्दू पुत्रक बधिक पढति के अनुवार विाह कार सम्पन्न हुआ ।

रत सरकार से रजिस्टर्ड
सफेद दाग

ने शरीर पर निकलने वाले सफेद चट्ट
हवा मूल्य ६) विवरण मुपत मगारो
गुक्लिमा (इसब,
उकवत,
सर्जवा)
हवा का मूल्य ६) क०
मा श्वास पर पनीजित
हवा मूल्य ६ १०

५ के आर बोरकर आयुर्वेद-मवल
मगकनपीर, जि. अकोला (महाराष्ट्र)



आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के-
भगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस

लखनऊ मे

सभी प्रकार की पुस्तकों, अखबारों

सप्ताहिक तथा मासिक पत्र की छपाई

तथा

जौत्र कर्क-काई लिफाफे, पैड, नोटिस, पोस्टर

आदि की छपाई सुन्दर तथा उचित

मूल्य पर की जाती है ।

प्रदेश की सब आर्य सस्थाओं तथा आर्यतथाओं से निवेदन है कि हे
अपना सनो कार्य मगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस मे छपने सेवें ।

—निर्मलचन्द्र राठी

उपमन्त्री आ० प्र० समा उत्तर प्रदेश
तथा व्यवस्थापक म० डी० आ० भा० प्रेस

लक्ष्मणधारा
हमेशा पास रखिये
दूध, दही, दाल, रोट का दही, जी
मिषलाना, बरफ, लॉली, तुषम, मंदारिन,
नर चादि तमो से बचने के लिए संवत
की प्रतिद बरतिये ।
कल्पे प्मानीय विक्रेता से
प्राप करे —
रूप बिलास कम्पनी कानपुर

बच्चे और उनका भविष्य

(श्री विचारकर जी)

बच्चे हमारे देश की आशा हैं। उनके कंधों पर भविष्य का भार आवेगा। इसलिये इनके जीवन पथ को प्रशस्त करना हर माता पिता का कर्तव्य है जिससे कि वे आगे चलकर कुशल नागरिक बन सकें। उनकी शिक्षा बीछा रहनु सक्षम पर समुचित ध्यान दिया जाय तभी यह सम्भव होगा। बच्चों को प्यार तो सभी करते हैं किन्तु बहुतों का यह ठेका जाना है कि या तो बच्चों पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है या इनका अधि-ध्यान दिया जाता है कि उन स्वयं कुछ सोचन या करन की स्वतन्त्रता ही नहीं रह जाती फलतः उनमें पराक्रम्यन्धन की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है और आत्म-निभर होन की ओर उसकी रुचि नहीं रह जाती। इसलिये यद्यपि स्वाध्याय की साथ उसकी अनिश्चित या रूपान्तरण को देखने हुए उसका पथ-प्रदर्शन करना चाहिये।

लोगों के व्यस्त दैनिक जीवन पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो यह जानकर आश्चर्य होता है कि अपने बच्चों के लिये वे कितना थोड़ा समय निकाल पाते हैं। शिवाजीय त्रे कि जिनके लिये अभि-प्रायक इनका काम करते हैं उन्हीं बच्चों के साथ सन बहलाने का समय रहता है र न उनका विनाशानु शासन करने। इसका परिणाम यह होता है कि जो की बात तो बुर रही बहुत बच्चों का वे ऐसे बच्चों की उपेक्षित रहते हैं कि माता पिता अथवा अभिभावक हैं। ऐसा नहीं हीना चाहिये। जैसे ही बच्चों को बीबीस पन्धे से से सा समय अवधि दिया जाना हुये बच्चों के लिये का एक अक्ष

अनिवार्य रूप से बच्चों का भी होना चाहिये।

भारत में छात्रों के अनुशासन का प्रश्न बहुत बड़ा हो रहा है। छत्र आ-बोलन प्रारम्भ होने पर कभी कभी शान्ति स्थापना के लिये सरकार की बल प्रयोग भी करना पड़ता है। छात्रों की अनुशासनहीनता का योग्य सरकार और शिक्षा प्रणाली पर मूढ दिया जाता है। अध्यापकों की भी बोधो ठहराया जाय है। इस सम्बन्ध में यह न भूलना चाहिये कि अधिकतर छात्रों का उम्र का समय स्कूल कालेजों में नहीं बरन घर पर व्यतीत होता है। यदि बच्चों पर घर में अधिक ध्यान दिया जाय तो वे बड़ों का आदर करना और उनके बताये रास्ते पर चलना सीखेंगे और छात्रों में अनुशासनहीनता और उच्छृङ्खलता नहीं रह जायगी। वे अपने गुरुजनों का भी आदर करेंगे और अध्यापकों को उनका सहायक सहयोग मिलेगा।

बाल कल्याण कार्य के प्रति सरकार यथासम्भव जागरूक है परन्तु भारत जैय विपन्न देश में अन्य सम्पन्न राष्ट्रों के समान बच्चों के लिये सुविधाओं की व्यवस्था करना सम्भव दुष्कर है। फिर भी जो कुछ सम्भव है वह किया जा रहा है। बच्चों में अपराध करने की प्रवृत्ति को रोकने तथा उनके प्रति होने वाले अपराधों को दण्डित करने के उद्देश्य से उत्तरप्रदेश में बाल अ-नियम बनाया गया है जो कानपुर आगरा, वाराणसी, इलाहाबाद बरेली और लखनऊ में पूरा-पूरा लागू भी हो चुका है। इसके अतिरिक्त बाल अपराधियों के ग्यायालय देखभाल वृद्ध तथा एडुवर्ड स्कूलों की कार्य कर रहे हैं। परिणामित तन्ना विमोक्षित

जातियों के बच्चों के लिये आश्रम टाईड के स्कूल भी खोले गये हैं जहाँ बच्चों के लिये शिक्षा आवास तथा मोत्रन आदि की निशुलक व्यवस्था है। आगरा और वाराणसी में बच्चों के मना-शान्ति निदेशन के लिये केन्द्र स्थापित किया गया है। उत्तरप्रदेश में गुंगे बहुरे और अथे बच्चों के लिये कुछ स्कूल निम्नी सस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे थ परन्तु उनमें एक-रूपता न थी। अन्त्य ऐवी सस्थाओं के मार्गदर्शन तथा इनके एक-रूपता लाने के उद्देश्य से सरकार ने आगरा तथा बरेली में गुंगे नया बहुरे बच्चों और लखनऊ और गोरखपुर में अथ बच्चों के लिये स्कूल खोले हैं। इनमें निधन बच्चों के लिये भी स्कूल खोले हैं। इनमें निधन बच्चों को छात्रवृत्तियां देने की व्यवस्था है। आगरा और मेरठ में अनाथ और परिवर्धक बच्चों के लालन-पालन का प्रबन्ध किया गया है। प्रदेश में अग्रह-जगत् पर बालक्रीडा स्थल तथा अनाथा-ल अदि स्थापित किये जा रहे हैं। लखनऊ में मोतीलाल नेहरू स्मारक परिवर्धक एक विशाल बाल-सदरालय की स्थापना की है जहाँ बच्चों को न केवल बुनियादी की विविध वस्तुयें दिखाई जाती हैं बरन उन्हे विभिन्न प्रकार का प्रशिक्षण भी दिया जाता है जिससे नृत्प समीत चित्रकला कोजे बनान काष्ठ कला आदि सम्मिलित है। प्रशा सरकार में इस सदरालय का वित्तीय सहाय आ भी प्राप्त होना है।

बच्चों के उचित लालन-पालन और उनकी सुविधाओं के लिये अभी बहुत कुछ करना शेष है और इनके लिये केवल सरकार पर अथ लम्बिन नहीं रहना चाहिये। सरकार तो इस दिशा में यथासम्भव प्रयत्न कर रही है। आवश्यकता इस बात की है कि माता-पिता तथा अभिभावक और समाज सेवी सस्थायें भी बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करें। ★

एक व्यक्ति अपने काम को
 योग लगान में करे, चाहे वह
 शत्रु में काम करता है,
 शत्रु में लोहा लना है।
 अतः प्रयत्न में ही हमारे
 देश का उन्नति हागी और अन्त में
 हमारी विजय होगी।'

—जवाहरलाल नेहरू

भारत को शक्तिशाली बनाने

तथा

उसकी आर्थिक समृद्धि के लिए

पंचवर्षीय आयोजनाओं को सफल बनाइए !

- ✽ अन्न की उपज में वृद्धि कर
- ✽ कल कारखानों का उत्पादन बढ़ाकर
- ✽ फिजलस्वर्ची गककर और
- ✽ वचन का धन राष्ट्रीय वचन योजना में लगाकर अपनी
 और अपने देश की गहायना कीजिए।

**राष्ट्रीय दृढ़ता से ही जन-जन का
 कल्याण सम्भव है।**



आर्यमित्र



वर्षेतिह सग्यावक-

मेशचन्द्र, स्नातक, शिरोमणि एम. ए.

ओ३म्

साप्ताहिक आर्याभित्त

ऋष्यङ्क

वृष
६६

लखनऊ रविवार कातिक १० शक १८८६ कातिक कृ० १२ वि० २०२१
१ व ८ नवम्बर सन १९६४ ई०, बयान-वाङ्म १४०, सण्डि सवत १९७ २९,४९,०६५

अङ्क
४३-४४



ऋषि-निर्वाण



जिसने जनता के हित में निःस्व तनु को होम दिया है
 पी तीव्र गरल की धारा वसुधा को सोम दिया है ।
 जननी या जनक जनो में जिसने था नाता जोडा
 मिट्टी को प्यार किया था कञ्चन नवनी को छोडा ॥१॥
 लहराई जिसकी जग में गङ्गा सी पूत जशानी,
 कण कण वसुधा का कहता है जिनकी अमिट कहानी ।
 व्रत ब्रह्मचर्य की बरदा पावन प्रतिमा प्रकटाई,
 सागर भी नाप न सकता है जिसकी गुण गहराई ॥२॥
 ले ज्ञान रश्मियाँ स्थणित मृतल पर रवि सम आया,
 पालण्ड पुरातन तमसा की पल में दूर भगाया ।
 शास्त्रार्थ-समर में निभय निष्ठुद्ध नृसिंह बहाडा
 अमिमानी पय विरोधी वृद्धों को शीघ्र पछाडा ॥३॥
 वेदों की ज्ञान सुधा से सर्वो मानवता क्यारी,
 वर्धन की दीप दया से थी सुपुत्रा त्रिवि निहारी ।
 मिथ्या उन्मूलन करके मधुम्ल मन्त्र उमगाया,
 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रभा से था सत्य सुरस्त विलाया ॥४॥
 भारत की राष्ट्रियता का था बीज हृदय में बोया
 जन मन का जागृत करके जो आज यहीं था सोया ।
 जिसके सिद्धांत जगत में निश्चित सी निधि अक्षय है,
 जिसके गुण गौरव गीतों की सरगम अक्षर अक्षय है ॥५॥
 उसके निर्वाण-विषय पर फिर कथो न चेतना जागे
 आर्यरथ स्नेह में अवनी की क्यो न सावना पागे ।
 सृष्टि के हृदय-मयन में श्रद्धा के दीप जलाओ,
 तब सत्य रूप में आर्षो ऋषि अनुगामी कहलाओ ॥६॥
 कविवर—'प्रणव' शास्त्री एम० ए०



सम्पादकीय—

तमसोमा ज्योतिर्गमय

बहुविध ब्रह्मण्य के निर्वाचन विषय का आर्यसमाज, भारतसर्प और विषय की मानव जाति के लिये एक ही सन्देश है, ब्रह्मण्य को मष्टकर ज्ञान का प्रकाश करो। ऋषि जीवन सर्वथा इसी साधना में रत रहे उनके जीवन का एक-एक क्षण ब्रह्मण्य के नाम और ज्ञान के प्रसार में व्यक्त रहना, ऋषि को कठोर साधना में देशवासियों के हृदयों में बहु दिव्य ज्योतिर् आणवत की कि सीया भारत काग उठा, बड़े भारत में फिर से नयी ब्रह्मण्य का रक्त-संचार आरम्भ हो गया और देशवासी स्वाधीनता और पुराण्य की कल्पनाएँ करने लगे। आर्यसमाज की स्थापना द्वारा वे विश्व-उपकार के महान् मिशन की पूति करना चाहते थे परन्तु आर्यसमाज के लिये भारत की सन्ध्या उपेक्षणीय नहीं हो सकती थी इसीलिये सार्वभौम उद्देश्य वाला सपठन होने पर भी आर्यसमाज की विशेष गति-विधियाँ भारतीय जीवन से सम्बन्धित नहीं और भारत के सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में एक हड़कम्प पैदा हो गया। ऋषि चाहते थे कि पहले हम अपने घर का सुधार करके सतार का सुधार अपने आप हो जायगा इसलिये ऋषि ने पाश्चात्य-सभ्यता का दुबारा इस तीव्रता और वेग से बचाया कि स्वार्थी और अग्यायी घरवा उठे, ऋषि को जीवन में चौदह बार विधायन करना पड़ा पर वे 'विष्णु नीति निपुणा' के अनुसार अपने मिशन में अग्रिम रहे। अज्ञान, अग्याय, अभाव के विरुद्ध उन्होंने जो अग्रिमवाच बलाया वह आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना आरम्भ काल में था आज देश स्वाधीन है पर देश का नैतुष्ट्य बालसिक रूप से पराधीन है और पश्चिम के भौतिकवादी आकर्षण ने फसकर मकलची मनोवृत्ति का प्रवर्धन कर रहा है। इस आरम्भ-हृत्न की स्थिति को समाप्त करने के लिये ऋषि वयान्य का जीवन एक आदर्श प्रेरणा स्रोत है। स्वदेश, स्वभाषा, स्वसम्पत्ता, स्वदेशप्रेम आदि के प्रति गौरव की भावना यदि समाप्त हो गयी तो भारत का बचा-बुचा गौरव भी समाप्त हो जायगा। अतः आज देशवासियों के लिये ऋषि निर्वाचन-विषय की श्रेणी प्रेरणा है कि वे राष्ट्र के लिये राष्ट्रीय

जीवन-पद्धति, राष्ट्रीय रहन-सहन, आचार विचार आदि की संहिता निर्धारित करें। पश्चिम के अन्धमानुष्यत्व ने हमारी स्वतन्त्रता को स्वच्छन्दता में बदल दिया है। मर्णादा रहित जीवन प्रणाली किसी भी राष्ट्र को कभी आगे नहीं बढ़ा सकती वह राष्ट्र चाहे कितना ही महान् हो अन्धव्य पतनावस्था को प्राप्त होगा यही कारण है कि १८ शतक के राष्ट्र निर्माण के बाद देश आज अज्ञानकार की व्यापक बलबल में डुबो तरह फल गया है। अज्ञानकार बलबल से राष्ट्र की निकालने का एकमात्र मार्ग है राष्ट्र के जीवन में आस्तिकता और नैतिक मूल्यों की स्थापना। आज सब जगह समाजवाद का तारा मूज रहा है परन्तु आस्तिक विचारधारा से अधिक समाजवाद क्या हो सकता है जिसके कारण शोषण और अग्याय सम्भव ही नहीं रह जाते, "अहिंसा प्रतिष्ठायां शेर दया" जब वर माव ही न रहेगा तब शोषण और अग्याय ही कंते होगा। इसलिये आज देश को सबसे अधिक आवश्यकता आस्तिक भावना के प्रसार की है।

आर्यसमाज के सभी कार्य मानव उपकार योजना के अग हैं परन्तु उन सबके मूल में आस्तिक भावना प्रमुख है। आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य के जीवन में ईश्वर विश्वास सम्पादन रहना चाहिये और देशवासी भी ईश्वर विश्वास को सही रूप में समझ सकें इसका प्रयत्न हमें करना चाहिये। दान्त के 'सर्वज्ञत्वमिदं ब्रह्म' और गंगा स्नान और क्या से पापमुक्ति वाला आस्तिकता ध्यक्ति को निष्कर्मण्य और पाप मनोवृत्ति वाला बनाती है, अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम कर्मवाद के सिद्धान्त का प्रचार करें और कमफल अवश्यमात्री ही इसमें आस्था उत्पन्न करें, देश में सद्यन्त अज्ञानकारी मनोवृत्ति में परिवर्तन आ जायगा।

आज विश्व में मय, अज्ञान्ति और सघर्ष का जो बातावरण सद्यन्त है उस सबका कारण भी अमर्षाहित और भौतिकवादी जीवन पद्धति है, महवि ब्रह्मण्य की शिक्षाओं का यदि व्यापक प्रचार और प्रसार विश्व के भौतिक अगत में किया जा सके तो हमारा बृद्ध विश्वास है कि सतार के विचारक उससे अवश्य प्रभावित होंगे। रोमारोला और एण्ड्रयू जैसम जैसे विद्वानों ने ऋषि के महत्व को स्वीकार कर उनका सम्बेश विश्व मानव तक पहुंचाया है।



मानव मुक्ति का प्रवर्तक दयानन्द



संमत १९४० वि० (३० जनवरी १८८३ ई०) की बीपावली की बीप-
 मूहका की युग-पुद्गल महवि दयानन्द के निर्वाण ने अलौकिक शक्ति
 प्रदान की। विष पान से शरीर आबलों से छलछलाया हुआ था तो भी श्रुति
 यन्त्री मुद्रा में वेवपाठ में सलग्न था और अपने ही घातक, दूध में विष देने
 वाले जगन्नाथ को यह कहकर क्षमा-दान दे रहा था कि 'मैं तो सत्सार में
 मानव समाज को बचाने से मुक्त करने आया हूँ, तो तुझे मर्ग्य करके मृती पर
 बोड़े चढ़ाऊँगा'। उसे मार्ग म्यय दिया और आशीर्वाद देकर बिदा किया।
 तदुपरान्त यह कहकर अपने शरीर को छोड़ा 'ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो'।
 सत्सार के समझ यह उदाहरण उन्होंने प्रस्तुत किया कि सत् और ज्ञानी, योगी
 और यति अपने जीवन से देश और काल को सुरक्षित व आनन्दमय करता
 रहता है और मोत से मिटते हुए भी जीवन की अनहित रूपी युष्मा को दूषित
 नहीं होने देता। क्या आययमाज अपने प्रवर्तक श्रुति के पद-चिह्नों पर चलकर
 देश और राष्ट्र पर अपना सर्वस्व ग्योछावर करके उसके उन्नयन में सलक्ष
 होगा? यदि नहीं, तो निर्वाण दिवस मनाना स्वर्ध होगा।



मदनमोहन वर्मा प्रधान

उत्तरप्रदेश आर्यप्रतिनिधि सभा तथा अव्यय विधान सभा

आर्यसमाज के प्रमुख अधिकारियों और विद्वानों को
 सम्मिलित रूप से ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि श्रुति की
 विचारधारा सही रूप में विद्व-जनता तक पहुंचे। इस
 कार्य के लिये सांकेतिक समाज के विदेश प्रचार विभाग में
 साहित्य निर्वाण का कार्य शीघ्र आरम्भ होना चाहिये।
 जन्म में आर्यसमाज बनता विगडता रहा है अब वह कब
 साकार रूप धारण करेगा नहीं कहा जा सकता परन्तु अब
 'हिन्दू-जन्म' बनने की योजना सामने आ चुकी है। आर्य
 समाज की चाहिये कि ऐसा प्रयत्न हो कि भारतीय विचार-
 धारा का सही रूप में प्रतिनिधित्व हो सके। यदि नहीं भी
 पाश्चात्य-स्वरूप प्रचलित हुआ तो भारत का अवयव ही
 होगा। भारत बेदों का अनुयायी है पर बेदों के सम्बन्ध
 में आसिया दूर करने के लिये कोई प्रणवलील नहीं, इस
 विषय में भी आर्यसमाज का विशेष वायित्व है।

महवि निर्वाण विषय हम आद्य जनो के लिये दाम-
 कृष्ण और अन्न विषयक आ विषय है। हज सुय

सकल्प लें कि हम महवि के बताने पथ पर बुद्धतापूर्वक
 चलेंगे और भारत को आर्य राष्ट्र बनायेंगे तथा विद्व
 ज्ञानि के लिये वैदिक सन्देश गुंजायेंगे। महवि ने जो कार्य
 हमें सौंभ है उसकी पूति में विधाय सम्भव ही नहीं। आज
 की भाषा में हमारा मारा 'आराम ह्राम है' और श्रुति
 वाणी में हमारा मार्ग है— 'चरंवेति चरंवेति चरंवेति' ★

आभार

हम "आर्यमित्र" के विद्वान् लेखकों, कविओं के आभारों
 हैं जिन्होंने अपनी अमूल्य लेखनों का प्रदाय आर्यजगत् को
 दिया है। स्वयानावा से जिनके लेख प्रकाशित नहीं हो
 सके हैं आशा है वे क्षमा करेंगे। —डा. राजेन्द्र, कलसवाकर

✻ आवश्यक सूचना ✻

आर्यमित्र का यह ४३-४४ संसुक्त अंक श्रुत्यक है।
 जो दिनांक १ व ८ नवम्बर का है। अब अगला अंक
 १५ नवम्बर को प्रकाशित होगा। पाठक भौट कर लें।

—कलसवाकर विचारने जन्मो व अधिकांश "आर्यमित्र"



‘यथायोग्य व्यवहार’—

तलवार का जवाब तलवार से

(ले०—श्री प्रकाशवीर जो शास्त्री एम०पी०, मुख्य उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश)

शान्ति सन्निष्ठा और सन्तोष की भी तो एक सीमा होती है। भावान कृष्ण ने सी गाली पुरी हीने तक तो शिशुपाल को क्षमा कर दिया था पर एक सी एक



लेखक

होने पर सुदर्शन चक्र हाथ में दफना मारी हो गया और शिशुपाल को हमेशा के लिये रास्ते से हटा दिया। पाकिस्तान के निर्माता भारत की उबारता को कमजोरी समझ रहे हैं। हम चाहते हैं कि वीरों देश मले पड़ोसियों की तरह रहना सीखें पर उन पर हमारी इस अपील का कोई खास अवर नहीं होता। हमारी हर अच्छी बात को यह ठुकरा देता है और बार बार म्यान से तलवार निकाल कर डराना चाहता है। हजारों हिन्दुओं का खून बहा कर दिया गया जिसकी हवा धीरे धीरे भारत में भी फैलने लगी। अगर वह अपनी इन आदतों से बाज नहीं आये तो फिर मजदूर होकर तलवार का जबाब तलवार से देना होगा। यह वे भी भाव सरदार पटेल के उन शब्दों के जो पाकिस्तानी मनोवृत्ति के नेताओं को जबाब देते हुए उन्होंने मेरठ के कांग्रेस अधिवेशन में कहे थे। सरदार जलजल कर लडाईं भोक केने के पक्ष में कभी नहीं थे

परन्तु लडाईं यदि सर पर लाब ही दी जाय तो उसने बच कर भागना भी महा कायरता समझते थे। उनका अपना विश्वास था कि देश और जानिया हमेशा अपने शक्ति बल से ही सुरक्षित रहती है। इतिहास में जब जब भी इनकी उपेक्षा की गई तब तब ही चोट लगी है। सरदार के देहावसान के बाद भारत के पड़ोसी राष्ट्र चीन ने अपनी कूटनीति में भारत के कुछ शीघ्रस्थ नेताओं को फसा लिया। भगवान बुद्ध और पशुपति की आज में हम यह भूल बढे कि यह इन महादानव की एक चाल मात्र है। उनी चक्कर में सेना पर अत्रिक ध्यय और उसे आधुनिकतम हाथियारों से लैस करने की ओर भी विशेष ध्यान नहीं दिया जा सका। पर जब नेफा और लडाख में एक दिन उसके इरादे खुलकर सामने आये तब फिर हमारे नेताओं ने कहा कि चीन ने विश्वासघात किया है और उसने पीछे से हमारी पीठ में छुरा भोका है। चीनी आक्रमण के समय भारत पर हर छोटा बड़ा एक स्वर से यह ही कहता सुनाई देता था काश कहीं सरदार पाब सात साल और जीवित रह गये होते तो भारत का यह स्वामिमान हिमालय की चोटियों पर इस तरह नष्ट न होता। उस चोट के लगने के बाद एक बात अच्छी हुई और वह यह कि देश फुकार कर खड़ा हो गया और नता मो कहने लगे कि इस हमले ने हमारी आंखें खोल दी है। परन्तु दुर्भाग्य से न तो देश की रकता का ही लाभ उठाया गया और न खुनी ही आंखों से दूर तक कुछ देखने की कोशिश ही की गई। परिणाम सामने है लडाईं फिर सिर पर खड़ी है और नहीं कहा जा सकता कल क्या होने वाला है ?

भारत की साठे पाब सी के लगभग रियासतों के विलीनीकरण का प्रश्न इनना मारो था जिसे मुलताना सरदार के ही बस की बात थी। खून की एक बूद गिराये बिना बडे प्रेम और सद्भाव से इस तरह देश के राजाओं को संभारने में अपने ज्ञान के जिया, वह उनकी सुझाव



का ही परिणाम था। एक-आन जगह कहीं हन्की ली हलचल यदि करनी भी पड़ी तो वो भी विवश होकर। परन्तु ब्रिटेन सरदार सारी रियासतों को भारत में दूध और पानी की तरह मिलाकर ऐसे एकाकार कर गये जैसे बहुत पहले से मानो उन्होंने कोई इसकी योजना बना रखी थी, परन्तु आश्चर्य है, सत्रह साल की लम्बी अवधि बीतने के बाद भी अभी तक भारत के सब नेता मिलकर एक काश्मीर की समस्या का समाधान नहीं कर पाये। सरदार के हाथ में यदि यह भी बात होती तो न जाने कब का इस समस्या का भी हल हो गया होना। अब जिस ढंग से जम्मू काश्मीर की समस्या का समाधान सोचा जा रहा है उससे बात कुछ बिजाड़ हो रही है वन नहीं रही। महाराज हरीसिंह जिन और कई कारणों से जल्दी ही जम्मू काश्मीर का भारत में विलय नहीं कर सके, उनमें एक प्रमुख कारण यह भी था कि तत्कालीन भारत के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू शेष अबदुल्ला को उस राज्य का प्रधान मन्त्री बनाना चाहते थे। महाराज हरीसिंह ने भारत सरकार को इस सम्बन्ध में बहुत कुछ समझाया भी पर उसका कोई विशेष प्रभाव न हो सका। पर आखिरकार १९५३ में महाराज हरीसिंह की बात सामने आई जब शेष अबदुल्ला को उसी भारत विरोधी गतिविधियों के कारण जेल में डालना पड़ा। सरदार पटेल का अंतिम समय तक शेष अबदुल्ला के सम्बन्ध में यह विश्वास था कि यह व्यक्ति कभी भारत का वफादार नहीं हो सकता पर वह इसके लिये करने भी क्या? वशीक काश्मीर ही एक ऐसी रियासत थी जिनके भारत में मिलाने का दायित्व स्वयं श्री नेहरू ने अपने कंधों पर ले लिया था। सरदार का यह भी विश्वास था कि जो शरणाधी सीमा प्राप्त और पंजाब से उजड़ कर आ रहे हैं उनको भारत के सीमावर्ती राज्य में बसने की सुविधाये दी जाये और उनके लिए बहाने अगुए कारोबार भी चलाने की व्यवस्था की जाय, परन्तु शेष के चक्कर में वह सब भी सम्भव न हो सका। अब फिर करोड़ों रुपये उसके मुकदमे पर व्यय करने के बाद बिना निगय पर पहुंचे उसे फिर जेल से बाहर कर दिया है और वह निभय होकर काश्मीर को जनमत संग्रह की आड़ में भारत से पृथक् करने के स्वप्न ले रहा है। वर्तमान भारत सरकार और उसके नेता काश्मीर प्रश्न के

एकीकरण में बाधक संविधान की धारा ३७० को हटाने में इसलिये हिचकते हैं कि इससे विश्व जनमत हमारे खिलाफ हो जायेगा, पर सरदार देश की समस्याओं के समाधान में विवश के अन्वयत की उम्मीद परवाह नहीं करते थे। जतना अपने देशवासियों के मत का बहु ध्यान रखते थे। धनु को तैयारियों के लिये लम्बा समय देना सरदार की नीति के विपरीत था। उनका अपना विचार था जो काम करना है उसे जल्दी ही कर लिया जाय। डेर करने से उसमें और शाखा, प्रशाखा फूटने का मय है। आज या कल जब भी हो काश्मीर की समस्या का समाधान अर्थात् जो धरती इस समय पाकिस्तान के अधिकार में काश्मीर की है उसे तलवार के तल से ही लेना होगा। बाली में रक्क-कर पाकिस्तान उपहार की तरह भारत की गेट में बहु माग दे वेगा ऐसा सोचना भी अपनी अदूरदर्शिता का ही परिचायक होगा। ठीक यह ही स्थिति कंगम चीन के सम्बन्ध में भी है। विश्वासात्माकें कहीं अपना अपनी राजनीतिक सुप्त बूझ का अभाव उसने जब तिब्बत पर निरौह लाभार्थों का कल्ले-बाम किया था हमें सावधान हो जाना चाहिए था। फिर जब बर्तमान के पास बाराहोती में अपनी सेनायें उसने केज की तब तो ज़ांक खुल ही जानी चाहिये थी पर हमें पबशील की हवाओं में इसना मस्त बना दिया था जो हम यह सब सोच भी न पाये। पर क्या आज यह समझ है कि पृथ्वी-पृथ्वी सर लीयों के बहु देश जो कोलम्बो सम्मेलन में सम्मिलित हुये थे, चीनी अनुभव की उपेक्षा करके भारत के साथ चीन के विरोध में ताल टोंक-कर सजे हो जायेंगे और कोलम्बो प्रस्ताव स्वीकार न करने पर खूबकर उठेंगे कि हथ मारत के साथ रहेंगे। श्री में हुए तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन में जिन्हें अपने प्रस्तावों की पृष्ठ भूमि में बैठकर चीनी बमकी से बैठक करने तक का भी साहस न हुआ, अब तक उनके मरोसे बंठा रहा जायेगा? चीन जब अनुभव का बिस्कोट कर चुका है तब ये कहना हम उसके विरोध में जनमत तैयार करने, अपनी दुर्बलता का ही परिचाय देना है। यदि अनुभव तैयार करने की शक्ति हम में है तो क्यों नहीं आत्म-रक्षा के लिए यह भी साहसिक कदम हम उठाते? शक्ति प्रदर्शन के रूप में आग्नि का अग्रघोष देश की के अँडेगा। सरदार की



भेदभित्ति समादर



(ले०-श्री स्वा० भ्रुवानन्द जी सरस्वती)

प्रश्न—कब महर्षि श्री स्वामी ब्रह्मलम्ब सरस्वती जी महाराज से पूर्व अनेक सन्ध्या पद्धति-विद्यमान थीं तब श्री स्वामी जी महाराज ने एक नूतन सन्ध्या-पद्धति का निर्माण क्यों किया ?

उत्तर—(क) समस्त सन्ध्या-पद्धति आचारशुभ साधारण नहीं थी ।

(ख) मंत्रों का विनियोग गिरबंक या सार्बक नहीं था ।

(ग) उन सन्ध्या पद्धतियों में भेदभित्ति का प्रचुर प्राबल्य था ।

प्रश्न—आचार शुभ साधारण का क्या अन्विष्ट है ?

उत्तर—सन्ध्या पद्धति का क्रम यदि वेद, उपनिषद् आदि से अनुभवित है तो वह सन्ध्या पद्धति साधारण है । वेद का आदेश है कि—“उपस्था अग्ने दिवे दिवे दोषावस्तुभिया वयम् । नमो नरस्त एमसि” हे प्रकाश स्वरूप परब्रह्म परमात्मन ! प्रतिदिन साय प्रातः “नमो नरस्त” तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो” “नम अन्नभाय च” नम प्रवक्तु जापकी उपासना करें । इसमें प्रतिदिन सायकाल और प्रातः काल सन्ध्या का विधान है और वह सन्ध्या नम पूर्वक हो । अपि च—

कल्पना कीजिये—स्टेशन पर पहुंचने वाले व्यक्ति के लिये एक तागा ठीक हो, धोखा बन्धन हो, और ट्रेड हो उसके मुख में लगान हो, फ़ाइबर बस हो और अन्धा न हो । ऐसे तागे में बैठने वाला व्यक्ति ही स्टेशन को (प्राप्तव्य स्थान को) प्राप्त कर सकता है । उपनिषद् का उद्देश्य है कि—“आत्मान रश्मि विद्धि शरीर रश्मिषु बुद्धि तु सारश्मि विद्धि मन प्रग्रहमेव च । इन्द्रियाणि हयानानु विध्यास्तेषु गोबरान्” शरीर रश्मि (तागा) है, इन्द्रियां योत्रे ह्यं, मन लगान है, बुद्धि फ़ाइबर है, जीवात्मा यात्रा करने वाला है और वेद प्रतिपादित कर्मकाण्ड ही सड़क है । अर्थात् वेद प्रतिपादित कर्मकाण्ड की सड़क पर जो व्यक्ति शरीर कपी तांगे की बलावेगा वह ही आत्मवन्द्य परब्रह्म परवात्मा को पा सकेगा ।

श्री स्वामी जी महाराज द्वारा निमित्त सन्ध्या पद्धति में यह ही प्रकार निहित है अनएव वेदिक सन्ध्या साधारण है । आचमन से लेकर प्राणायाम तक एक प्रसंग है ।



श्री स्वा भ्रुवानन्द जी

अर्थात् स्नान से शरीर शुद्धि आचमन से कण्ठ - शुद्धि, इन्द्रिय स्वर्ण से इन्द्रियों में बलावान, माजन से इन्द्रिय-बोध दूरीकरण, प्राणायाम से मन की स्थिरता करना है । यहाँ तक एक प्रसंग (प्रकरण), अधमवर्ण द्वितीय प्रसंग, मनसा परिक्रमा तृतीय प्रसंग और उपस्थान चतुर्थ प्रकरण है । प्रथम प्रकरण में प्रभु प्राप्ति के लिये सांनिध्य होता है (योग्य बनना है) पुन अग्निमान निवारणार्थं प्रभु के गुणों का चिन्तन करना है । प्रभुगुण चिन्तन ही अग्निमान निवारण का असाधारण साधन है । अग्निमान रहित विधि-बल याचक ही दाता के पाम पहुँच कर कुछ पा सकता है । इसीलिये श्री स्वामी जी महाराज ने चतुर्थ प्रकरण का माथ उपस्थान रखा है ।

(ख) विनियोग का यह अर्थ है कि जिस मन्त्र का

को अर्थ हो उस मन्त्र को उसी अर्थ में लगाना । विनियोग को प्रकार का होता है । शब्दगत विनियोग और अर्थगत विनियोग । शब्दगत विनियोग उसे कहते हैं कि मन्त्र में शब्द आया हो । शत्रोदेवी— यह आचमन मन्त्र है अर्थात् इस मन्त्र से आचमन किया जाता है किन्तु इस मन्त्र में 'आचमन' शब्द नहीं है इसलिए शब्दगत विनियोग नहीं है अपितु अर्थगत विनियोग है । अर्थात् इस मन्त्र में ऐसा पद है जिसका अर्थ आचमन होता है । 'पीतये-पानाय-आचमनाय' आच-इम आच, श मन्तु । अचि च—

“श्रुत च सत्यञ्चानिद्विद्वान्” इन तीनों मन्त्रों में भी 'अधमर्षण' शब्द नहीं किन्तु अधमर्षणार्थक मन्त्र लिखे हैं । यथा पर भी अर्थगत विनियोग है ।

जिस लेखक की पुस्तक में या लेख में अथवा जिन वक्ता के प्रवचन में उपक्रम और उपसंहार हो तो वह लेखक और वक्ता प्रशंसा का पात्र समझा या माना जाता जाता है । आरम्भ का नाम उपक्रम और समाप्ति का नाम उपसंहार है । लेख या प्रवचन जिस विषय को लेकर आरम्भ किया गया हो उसी विषय पर समाप्त होना चाहिये । श्री स्वामी जी महाराज द्वारा निर्मित सन्ध्या पद्धति को यह गौरव भी प्राप्त है । यथा हि—वाक वाक— उपक्रम प्रथम शरद शतम् उपसंहार है । करतल कर पृष्ठे उपक्रम, अवीना स्वाम शरद शतम् उपसंहार है ।

(ग) भेवमिति का प्रचुर प्राबल्य का अभिप्राय यह है—चारो वेदों की जितनी शाखायें हैं उन सब शाखाओं का समर्थन स्मृतिकारों ने किया है और निम्न प्रकार से आवेश दिया है—

येवा पारपर्यागतो वेद सपरिवृ ह्य ।

तच्छास्त्र कर्म कुर्वति तच्छ्रद्धाऽऽप्यनन्तया ॥

अर्थात् परस्पर से जिस परिवार में जिस वेद की मान्यता बली आई हो उस परिवार को उसी वेद की उसी शाखा का अध्ययन और उसी शाखा के अनुसार सन्ध्या आदि कृत्य करने चाहिये । अर्थात् यजुर्वेदीय शाखाओं के अनुसार अपने-अपने परिवारों में अपनी-अपनी शाखाओं का पठन पाठन करें और उन्हीं शाखाओं के अनुसार सन्ध्या आदि करें । इतना ही भेद नहीं अपितु माध्यमविनीय शाखा का मानने वाला परिवार कठ शाखा का, कीदृश शाखा को मानने वाला परिवार इन दोनों का न अध्ययन

करे और न इनके अनुसार सन्ध्या आदि कर्म ही करे ।

श्रुतवेदीय मानव मम ज (मानव समूह) का यजुर्वेदीय मानव-समाज से भेद, इन दोनों का सामवेदीय मानव-समाज से भेद सामवेदीय मानव-समाज का इन दोनों से भेद, इन तीनों का अथर्ववेदीय मानव समाज से भेद और अथर्ववेदीय मानव-समाज का इन तीनों से भेद । जिस वेद की जितनी शाखा उतने ही समुदाय और उन समुदायों के धार्मिक कृत्यों में अनेक भेदों की भित्ति (दीवार) खड़ी कर दी गई । इस भेद की भित्ति पर चढ़ने वालों में कलह फालुष्य ने ऐसी जड़ जमाई कि परस्पर में घृणा ईर्ष्या और विद्वेष ने अपना स्थायी प्रबल प्रभुत्व स्थापित कर लिया । महर्षि श्री स्वामी वद्यानन्द सरस्वती जी महाराज ने देखा, सुना और सोचा कि जो आर्षं जाति सृष्टि के आरम्भ में उपन्न हुई हो और जिसे ईश्वरीय ज्ञान वेद समुपलब्ध हुआ हो वह जातिभेद की भयकर आंधी में अपने गौरव को उड़ा रही हो और अपने गौरव को भेद के बुद्धान्त वादानुसंग से बंध किये जा रही हो, इसलिए ही उसे दुरवस्था के बुद्धान्ते देखने पड़ रहे हैं ।

श्री स्वामी जी महाराज द्वारा सन्ध्या-पद्धति में शाखा-भेद संबंधी त्यक्त है । भेवमिति का निम्नान्त निरावर है और शाखाभेद का संबंध बहिष्कार है ।

श्री स्वामी जी महाराज ने शाखा भेवमिति का समादर कदापि न किया था और न करते ही थे । क्या इस निर्वाण दिन पर श्री स्वामी जी महाराज के चरण चिह्नों पर चलने वाले हम आर्य परस्पर के आन्तरिक भेद नाशो को भूलाने का सकल्प करेंगे ?

(पृष्ठ ६ का शेष)

नीति यही है “तलवार का जबाब तलवार से बो” मल मनसाहत का मलमनसाहत से और अणु बम का जबाब अणु-बम से ।” एक बार यदि लड़ते लड़ते देश का बहुत बड़ा भाग समाप्त भी हो गया तो उस पर साहस और शौर्य के नये अक्षुर उत्पन्न होंगे । इतिहास सुनहरे अक्षरों में लिखेगा—राम और कृष्ण का देश, शिवा जो और प्रताप का देश, तिलक लाजपतराय और सरदार पटेल का देश अपने पुत्रों के स्वामिमान की रक्षा में लड़ते लड़ते मर गया परन्तु उनसे झुककर कहीं समझौता नहीं किया ।”



धर्म और राजनीति



लेखक—श्री डाक्टर हरिशकर शर्मा डी० लिट्

जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है,
बहुता अधर्म अंधेर-अंधेरा छाता है।

जो लोक और परलोक तिद्धि का साधक है,
अभ्युदय और निश्चयस का आराधक है,
जिसको सकीर्ण भावना कभी न भाती है
जिसको प्रभुता प्रति-अण पीयूष विलाती है,
वह परमतत्त्व सर्वथा भूलाया जाता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥
सद्धर्म सदा सुख शान्ति पुधा बरसाता है,
नय-न्याय-नीति का शुभ सम्भार सुहाता है,
मानवता में वर बंधु भाव उमगाता है,
बसुधा का बहूत कुटुम्ब रूप बरसाता है
इस विधि-विधान में सार न पाया जाता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥

अत्याचारों से भूमि कापने लगती है
सोती सुनीति, बुनीति दानबी जगती है,
तब स्वार्थ-असुर दुर्वध-वर्ष बिल्लाता है
मिजता परता का क्षुद्र भाव नर जाता है
मानव मानवता पर बिय वज्र गिराता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥

मत, ऋष्य, सप्रदायो को धर्म बताते हैं,
वे अज्ञ होय को बिनकर कह मरमाते हैं,
क्या कभी धर्म-प्रवृत्ता ने युद्ध रचाये हैं,
कब सत्य-ग्रहिसा ने नर रक्त बहाये हैं,
बिपदा वारिधि में बिध्न दुबाया जाता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥

अप्यदाचारों की अग्नि उग्र हो जाती है,
गुटबन्दी स्नेह-सघटन का गड़ डाती है,
मँहवाई बिन बिन दूनी बहुती जाती है,
अनता सुख शान्ति न नेक कहीं भी पाती है,
सर्वत्र दुःख दुर्वध वृष्टि में आता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥



सप्राप्त भूमि में तोपें आय उगलती हैं,
अगणित शोणो की वेहे जोती जलती हैं,
होकर अनाथ लाखो जन घुट-घुट रोते हैं,
भूलो मर मर कर प्राण करोबो खोते हैं,
दुर्मिष्ट दुष्ट दानव मानव-दल छाता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥
शासन सत्ता जब धर्मयुक्त हो जाती है,
बनकर विनीत अति सौम्य रूप सरसाती है,
जनता की नैतिकता को ही अपनाती है,
तब शान्तिकान्ति नित सुख-समृद्धि बरसाती है,
सर्वनीच-स्नेह का बूद गड़ डायता जाता है—
जब राजनीति से धर्म हटाया जाता है ॥



भारतीय स्वराज्य के प्रथम मन्त्र-द्रष्टा—

महर्षि दयानन्द सरस्वती

[श्री प० दीनबयाल, जी उपाध्याय, प्रधानमन्त्री अखिल भारतीय जनसंघ दिल्ली]

विक्रमाब्द १९१४ के स्वातन्त्र्य समर में हमारी पराजय के बाद जब अंग्रेजों की विजय पताका चातुरन्त भारत में फहरा रही थी, हमारे राष्ट्र जीवन पर चतुर्विध से सर्मांतक प्रहार हो रहे थे और हम अस्मिन्मृत और अस्मान्निमान शून्य हो निरीह भाव से अंग्रेज प्रभु की करणाकोर को कालावित अपना सर्वस्व मवाते जा रहे थे, तब भारत के जीवन में जामुति शक्त फूटने वाले जो महापुरुष अक्षतीर्ण हुए उनमें महर्षि दयानन्द का स्थान अग्र गण्य है। उनके पास राष्ट्र की बुरबस्था को देखकर दुःखित होने वाला सबेदनशील हृदय था, रोगों का सही निदान और उपचार करने वाले चिकित्सक की बुद्धि थी, एक सुधारक की लगन और कर्मठता तथा बुराई से जूझने वाले एक बुरबीर का साहस था और सबसे बढ़कर वह आर्य दृष्टि की जो विश्व के इन्द्र और मोहान्धकार को चीर कर सत्य का दर्शन कर सके। सत्य सेवा का सम्मल लेकर वे जीवनपथ पर बढ़े। परार्थों की धमकिया और अपनों की उपेक्षा, तिरस्कार और अक्षहेलना किसी ने उनको विचित्र नहीं कर पाया। भारत के पतित और विकृत जीवन को उन्होंने समुज्ज्वल, सुसंस्कृत एवं सत्य प्राचीन आदर्शों के साथ जोड़ा तथा समाज में कुरीतियों से लड़ने तथा अपना जीवन श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा पेश की।

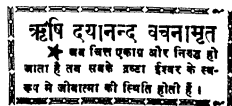
धार्मिक क्रांति को आधारभूत मानकर उन्होंने मूलतः उसी क्षेत्र में काम किया। किन्तु जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जिसकी अछूता छोड़ा। स्वदेशी और स्वराज्य का मन्त्र सर्वप्रथम उन्होंने ही दिया। जिनकी बुद्धिमात्र राजनीतिक है तथा जो पश्चिम की राजनीतिक विचार धाराओं और परम्पराओं का अनुकरण ही भारत की नियति मानते हैं, वे महर्षि को एकपक्षीय अथवा धार्मिक नेता मानकर उनकी अक्षहेलना कर बेते हैं। उन्हें न तो भारत की

आत्मा का ज्ञान है और न महर्षि दयानन्द की महत्ता का।

महर्षि दयानन्द का काम अभी पूरा नहीं हुआ। स्वराज्य के बाद तो हमारा ध्यामोह और बढ़ गया है। महर्षि ने हमें बताया था कि हम उलूकवाहिनी की पूजा के स्थान पर उसे साधन मानकर श्रुत की उपासना करें। पर अभावस की कालरात्रि में आज्ञव्य मानकर का निर्वाण हो गया। हम बीषाबली बनाकर अंधकार से लड़ने का प्रयास कर रहे हैं, सत्य को छोड़कर लक्ष्मी की पूजा में लगे हैं। स्वराज्य में स्वधर्म चला गया। आर्थिक उन्नति की आकांक्षा में दर-दर नीस का कटोरा लेकर घूम रहे हैं, विदेशी मुद्रा अर्जन के लालच में भारत की जनता का धर्मभ्रष्ट एवं राष्ट्र भ्रष्ट करने वाले मसीही पुत्रारियों को आमन्त्रण देकर उनके आबरातिष्य में प्रपने को धन्य मान रहे हैं। आवश्यकता है कि महर्षि का वक्ष घोष फिर से भारताकाश में गूजे। क्या त्वयं बन्धु महर्षि के सन्देश को लेकर खड़े होंगे? तभी तो बीषाबली की रात्रि, जिसमें महर्षि का निर्वाण हुआ, के सम्बन्ध में कवि के प्रश्न का सत्य उत्तर मिल सकेगा—

“इसे रात कह कि प्रमात कह ?”

बीषाबली हमारे लिये घोर तमाच्छन्न रात्रि ही रहेगी अ वा नववय का नव-सन्देश और नव चैतन्य लानेवाली प्रतिपदा के प्रमात की पूर्ववाहिका।



आर्यसमाज राजनीति में भाग ले!

‘महर्षि की क्या इच्छा थी?’



[श्री प० विद्याचर जी उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तरप्रदेश]



अपने देश में अपना राज्य स्थापित करने की उत्कट अभिलाषा से युग-प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक सुधारों में सवती मुक्त प्रवृत्ति करते हुये अपने जीवन के अन्तिम वय राज-स्थान में राजा, महाराजाओं की आत्मविद्या (परमात्मा के गुण, कर्म स्वभाव को यथावत् जानने रूप ब्रह्म-विद्या) ग्वाय-विद्या, सनातन षण्ड-नीति आदि का उपदेश देते हुये बहु निर्देश करते रहे कि राज्य को सुचारुरूप से सञ्चालित करने के निमित्त वैदिक विद्वानों से सम्पर्करूपेण शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है। अल्प समय में ही साहजुराधीश महाराजा उदयपुर, मीलवाडा मन्सा आदि के राजा उनके शिष्य मत्त बन गये। वे अपने कार्य में सफलता से और अप्रसर हो रहे थे, किन्तु परमात्मा की इच्छा कुछ और ही थी। आर्यसमाज को एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व सौकर वे हमारे बीच से चले गये। महर्षि के बेहावसान के उपरान्त आर्यसमाज के तत्कालीन कर्णधारों ने बड़ी श्रद्धा के साथ अपने कर्तव्य का पालन किया और तबथं त्याग तपस्या और बलिदान की होड लग गई। स्वदेशी आन्दोलन, आर्य भाषा प्रचार, शिक्षा प्रसार, शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक सुधार, अछूतोद्धार, आदि युग कार्यों में आर्यसमाज ने एक विशिष्ट ही नहीं, अपितु अनुपम गौरव पूर्ण स्थान प्राप्त किया।

इन ईश्वर धर्म और देश के सच्चे और क्रियाशील उपासकों ने ऐसे भी वे ब्रह्म के हृदय और मस्तिष्क में देश-भक्ति, देश की स्वतन्त्रता की भावना सर्वोपरि थी। तदर्थ वे अपनी सामर्थ्य के अनुसार निरन्तर प्रयत्नशील थे। अनेकों ने देश की बेटी पर अपना जीवन सहृदय समर्पित किया। इस विद्या में सुसंगठित रूप से प्रवृत्ति करने की

आवश्यकता पूज्यपाद स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के पत्रिच बलिदान के उपरान्त अधिक तीव्रता से प्रतीत हुई। १०२० में दिल्ली में आयोजित प्रथम आर्य-सम्मेलन का उच्चलत प्रश्न था, ‘क्या आर्यसमाज राजनीति में भाग लेवे?’ युवकों में उत्साह का पारावार उमड़ रहा था। वे एक स्वर से राजनीति में प्रवेश की अनुमति चाहते थे। किन्तु विचारशील महानुभावों ने देश तथा काल की परिस्थिति के अनुसार यही निश्चय किया कि हमें अपना अत्र शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक सुधारों तक ही सीमित रखना है। इस निर्णय से क्रियाशील आर्ययुवक जिनके हृदय में भारत माता की सेवा के निमित्त अव्यय उत्साह था अपनी शक्ति के अनुसार भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में चले गये। जिसके परिणाम स्वरूप आज के अनेक राजनैतिक बलों के उदोच्छेद श्रेष्ठ अग्रणी होने का श्रेय उनकी ही प्राप्त है।

आर्य समाज ने सामूहिक रूप से राजनीति में जले ही भाग न लिया हो किन्तु अगरेजी सरकार हमें हमेशा सन्दिग्ध दृष्टि से ही नहीं देखती रही अपितु प्रतिशोध रूप असह्य आर्यों को पातनायें भोगनी पड़ीं।

परमपिता परमात्मा की कृपा से देश स्वतन्त्र हुआ। और एक बार पुन आर्य युवकों में देश-भक्ति का अव्यय उत्साह उमड़ पड़ा। वैदिक शिक्षा से अनुप्राणित, उन युवकों ने अनुभव किया कि राष्ट्र की विषम समस्याओं का समाधान आर्यसमाज के पास है किन्तु उनके प्रयोग की शक्ति और सामर्थ्य नहीं। इसको प्राप्त करने के निमित्त वे क्रम से उत्तरोत्तर आगे बढ़ना चाहते हैं, अनुभवों विचारशील महानुभावों के वरव हस्त की छत्रछाया में।

आज महर्षि विद्याचर दिवस के अवसर पर हम साथ



महान् दायित्व पूर्ण करें !



आर्यसमाज का लक्ष्य कितना महान है इस पर जितना ही अधिक विचार करें हम इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि महर्षि दयानन्द चाहते थे कि उनके अनुयायी स्वायत्त से ऊपर उठकर सर्वव्यपार्य में लगे रहें। सत्कार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है इस नियम ने आर्यसमाज को सांबंदेशिक और सावकालिक महत्त्व प्रदान कर दिया है। परन्तु उच्च लक्ष्यों और भावनाओं की पूर्ति या तो मानव ही करेंगे उनमें जसो क्षमता होगी बेसी ही सफलता मिलेगी। आर्यसमाज का गौरवपूर्ण ऐतिहासिक इस बात का साक्षी है कि अल्पशक्ति में होते हुए भी हमारी लोकोपकार भावना अधिक विशाल थी और हमें सफलता भी मिली परन्तु आज हमारी शक्ति विशाल है फिर सफलता कम क्यों है इसके मूल में यही कारण है कि हमने अपने लक्ष्य को सीमित कर लिया है और सीमित (स्थानीय एक देशीय एक दलीय होने के कारण हमारी सारी शक्ति पराथ से हटकर स्वायत्त की ओर सिमटने लगी है। आर्य समाजों लक्ष्याओं के कार्यकारी सगडों के मूल में कोई सैद्धांतिक मतभेद नहीं होते अतः सन्तुष्टि दृष्टिकोण ही इसका कारण है। ऋषिनिर्वाण दिवस होने महर्षि द्वारा सोचें गये उत्तरदायित्व का स्मरण कराने आया है। यदि हम अपने लक्ष्य को सर्वव्यपार्य में रखें तो बहुत सी बाधाएँ स्वयं समाप्त हो जायें और दयानन्द के वीर सैनिक उत्साह के साथ कदम बढ़ाते चलें। मुझे आशा है कि निर्वाण दिवसपर हम अपनी शक्ति के अपभ्रंश को रोक कर परोपकार के उदात्त आदर्श में सलग्न रहने का सफल ब्रह्मराषेणों।



श्री ५० प्रेमचन्द्र शर्मा एम एल सी

—प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०

उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश

धानी से विचार करें और राष्ट्र की आन्तरिक और बाह्य शत्रुओं से रक्षा करने के निमित्त अपनी नीति निश्चित करें। यह सत्य है कि वर्तमान परिस्थितियों पर नियन्त्रण कठिनाता से प्राप्त किया जा सकेगा। पर्याप्त समय एवं सांभल-जिनक सहयोग भी अपेक्षित होगा। किन्तु हम इस अटल विश्वास के साथ आगे बढ़ें -

श्रुत ते राजा बरणो श्रुत देवो ब्रह्मस्पते ।

श्रुत ते इन्द्राग्निश्च राष्ट्रं धारयता श्रुवम ॥

मास [-----]

परमपिता परमात्मा हमारा मार्ग प्रशस्त करे । ●

आर्यसमाज कटरा प्रयाग का ६४वां वार्षिकोत्सव

कर्मलग्न धाना के सामने सा० ३ से ६ नवम्बर तक मनाया जायगा ।

विश्व सन्देश सुनाने के लिये स्वामी मुनीश्वरानन्द जी श्री प्रो० रत्नसिंह जी गाजियाबाद, ५० सत्यमित्र शास्त्री जी गोरखपुर, ५० शिवकुमार शास्त्री जी हरिद्वार, डा० श्रीमती पुष्पावती देवी जी पी०एच०, डी० आदि उपदेशकों तथा अष्ट २ प्रचारकों के पधारने की आशा है ।



वेद के प्रति कर्तव्य पालन करें



महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज को जो बरीहर सीपी भी उसमें सबसे अग्रगण्य है वेद। महर्षि ने अपने जीवन का सबसे कीमती और अधिक भाग वेद के स्वरूप उसके मानवीय उपयोग की व्याख्या करने में लगाया। यदि एक बार को वह कहा जाय कि आर्यसमाज की स्थापना ही ऋषि ने वेदप्रचार के लिये ही की तो कोई अस्तुक्ति न होगी क्योंकि यदि वेद ज्ञान का प्रचार प्रसार ही जाय तो तत्सारीकार स्वयमेव सम्पन्न हो जायगा। इस दृष्टि से आर्यसमाज के कार्यक्रम में वेद अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। महर्षि ने वेदभाष्य और वेदानुसंधान की जो परम्परा आरम्भ की थी आज आर्यसमाज में उसके लिये उतना उत्साह नहीं जितना आरम्भ में था, आर्यसमाज का वेद प्रचार बिनाय उत्सवों के माध्यम ही व्यवस्था में ही जुटा रह जाता है, आवश्यकता है अनुसंधान के कार्य को योजना बद्ध आगे बढ़ाया जाय। वेदों के सम्बन्ध में फेली आन्तियों का नियमित उत्तर दिया जाय। आर्य विद्वानों में महर्षि और आर्यसमाज के प्रति ऐसी निष्ठा जागृत होनी चाहिये वे सब अपने अहम् और पाण्डित्य के चक्कर में न पड़कर अपनी ज्ञान-शक्तियों का आर्यसमाज के लिये समर्पण कर दें। आर्यसमाज की ओर से संगठित रूप से वेद सम्बन्धी समस्याओं पर विचार हो, सगोष्ठियाँ हों और अनुसंधानों की घोषणा हो, आर्यसमाज के इस प्रयत्न से वेद में बढ़ा रखने वाले अन्य लोगों को भी बल मिलेगा।



श्री १० चन्द्रवत्त जो तिवारी समाज-समिति

ऋषि-निर्वाण विद्यार्थी हमारे लिये प्रेरणा विषय है, यदि आर्यसमाज के विद्वान् और कर्मधार इस विद्या में सम्लिप्त भीति निर्धारण कर सकें तो काम आये बड़ेगा। साधारण आर्यजन तो वेद प्रचार में एक सैनिक की भाँति आज भी रुचि रखता है पर उपयुक्त संगठित प्रयत्न से उसे और भी बल मिलेगा, वेद के सम्बन्ध में आर्यसमाज का वास्तविक पूर्ण करना आज की सीढ़ी का वास्तव है।

—१० चन्द्रवत्त तिवारी

समिति आर्य प्रतिनिधि समिति, उत्तर प्रदेश

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ जिससे पढ़ावों का प्रचार्य स्वरूप होय होवे वह विद्या और जिससे तब स्वरूप न जान पड़े, अन्य में अन्य बुद्धि होवे वह अविद्या कहाती है।



प्रचार प्रणाली में नवीनता लावें

आर्यसमाज के प्रचार कार्य को आगे बढ़ाने में योग्य उपदेशकों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और है। समय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए हमें आज इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये कि हमारी प्रचार प्रणाली कहाँ तक समर्थ है। प्रचार के वैज्ञानिक साधनों का हम किन्तना उपयोग कर पा रहे हैं। ईसाई मिशनरियों के पास जो नवीनतम साधन सामग्री होती है उसका स्वल्पांश भी हम अपने प्रचारकों को नहीं दे सकते। एक बात अवश्य है भारत की ग्राम प्रधान संस्कृति होते हुए भी आर्य समाज ग्राम प्रचार में अधिक सफल नहीं हो सका, जबकि ईसाई मिशनरी नगर संस्कृति के प्रतिनिधि होते हुए भी ग्रामों में, अरण्यों में प्रचार कर रहे हैं, इस मौलिक समस्या और मनोवृत्ति पर भी विचार किया जाना चाहिये। आर्यनेता श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने ग्रामों में प्रचार की ओर अनेक बार ध्यान आकृष्ट किया है परन्तु अभी तक हम सहस्रों मनोवृत्ति नहीं छोड़ सके हैं। हमें ऐसे प्रचारक तैयार करने का यत्न करना चाहिये जो ग्राम-जीवन में अपने को समाविष्ट कर सकें। इसी प्रकार प्रचार साहित्य की कमी का प्रश्न भी गम्भीर है। हमारा उपलब्ध साहित्य काफ़ी पुराना है और सामाजिक समस्याओं का समाधान नवीन रूप से प्रस्तुत नहीं कर पाता। इसके लिये भी हमारे विद्वानों को प्रयत्न करना होगा। शुद्धि विचार-विचल के अवसर पर हमें अपनी प्रचार प्रणाली का सिंहावलोकन अवश्य करना चाहिये और शीघ्र ही नवीन रूप के साथ कार्यक्रम में कदम रखना चाहिये। प्रभु हमें अवश्य सफलता प्रदान करेंगे।



श्री हरप्रसाद जी आर्य



—हरप्रसाद आर्य

उपमन्त्री, आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर-प्रदेश

ऋषि वचनमृत

★ यह आर्यावर्त देश ऐसा है जिसके सर्वत्र भूगोल में कोई देश नहीं है, हम लिये इस भूमि का नाम स्वर्ण भूमि है क्योंकि यहाँ स्वर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है जिसको सोहे रूप दरिद्र विदेशी छूले के साथ ही स्वर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

★ जब बुद्ध मनुष्य पाँच शानेन्द्रिय जीव के साथ रहती हैं और बुद्धि का निरन्धव स्थिर होता है उसको परम गति अर्थात् मोक्ष कहते हैं।

★ जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राक्ष्य बढ़ता रहता है और और जब दुष्टधारी होते हैं, तब मनुष्य-धन्य हो जाता है।



वेद प्रचार का स्थायी साधन—प्रेस

★ ● ★

प्रचार के दो सर्वमान्य साधन हैं— (१) मंच तथा (२) प्रेस। एक का प्रभाव शीघ्रकालिक और स्थायी है, दूसरे का अल्पकालिक और अस्थायी। पुस्तकों के पाठक देशकाल की परिधि का अतिक्रमण कर सांभवेतिक और सांभकालिक होते हैं किन्तु मंच के अल्पदेशीय तथा अल्पकालिक। पुस्तकों के द्वारा ही प्राचीन अध्यात्म-ज्ञान, वेदों से महत्विय दयानन्द पर्यन्त, एव लौकिक ज्ञान विज्ञान का सम्पादन हम लोग आज भी कर पाते हैं।



यह आधुनिक छापाई तथा प्रेस का ही चमत्कार है कि सत्सार के बड़े बड़े पुस्तकालयों बाचनालयों तथा समाचार पत्रों द्वारा सत्सार की कीर्ति कीर्ति जनता प्रबुद्ध रहती है। प्रेस के द्वारा ही आज आर्यजन इस युग की महानतम विभूति महत्विय दयानन्द को अद्वाजलि अर्पित कर रहे हैं।

प्रेस यह शीघ्र है जो अपनी अक्षय ज्योति विकीर्ण करता रहता है, झुके-सटके पथिकों को मार्ग दर्शन कराता रहता है। अतः हमारा यह पावन कर्तव्य हो जाता है कि उस ज्योति स्तम्भ की सुरक्षा एव उसका सम्बर्धन करें।

श्री निर्मलचन्द्र राठी, उपमन्त्री समाज

यूरोप आदि उन्नत देशों के सख्त प्रेसों की तो क्या ही क्या कहानी है जिनके द्वारा मानव समाज ज्ञान-विज्ञान से परिपूरित है। अपने देश में ही अज्ञान जनता के कीर्ति स्तम्भ गीता प्रेस पर ही बुष्टिपात् कीजिये। इसका धार्मिक-साहित्य प्रकाशन और वितरण क्या व्यावसायिक है? क्या उसको मशीन किसी व्यावसायिक सत्त्वान की देन है? नहीं, यह है अज्ञान जनता की कर्तव्यनिष्ठा को देन, जो धर्म प्रचार के महत्व को जानती है और जो बाजार में चाहे जितनी सोचबोचो करे धार्मिक क्षेत्र में लेन देन नहीं जानती, केवल दान ही जानती है जो 'यज्ञ' का एक अंग है—देवपूजा, समाधिकरण और दान।

आर्य जनता से यह आशा है कि वह अपने प्रेस सत्त्वानों को दान से सम्पन्न कर उन्हें वैदिक-साहित्य के प्रकाशन का अलुम्ब साधन बनायेगी। स्व० प० भगवानदीन जी ने अपने सात्विक दान से प्रेस की आधारशिला रखी थी, जिसके परिणाम स्वरूप आर्य प्रतिनिधि समाज उत्तर-प्रदेश का भगवानदीन आर्य मास्कर प्रेस स्थापित हो सका, जहाँ से आर्य जगत् का लोकप्रिय पत्र 'आर्यमित्र' प्रकाशित होता है किन्तु जो घनाभाव के कारण आधुनिकता की दौड़ में पिछड़ रहा है।

सुधार, सबल प्रेस ही महत्विय के प्रति सच्ची अद्वाजलि होगी, जो सत्सार की वैदिक साहित्य बिना मुख्य वितरण कर ईसाइयों तथा कम्युनिस्टों के सार्वभौम प्रचार का प्रत्युत्तर देकर वैदिक धर्म की पताका फहरा सके।

निर्मलचन्द्र राठी

उपमन्त्री आ० प्र० समाज उत्तर-प्रदेश तथा व्यवस्थापक आर्य मास्कर प्रेस

छोटा परिवार—सुख का साधन

बड़े परिवार के पालन में बड़ी कठिनाइयां सामने आती हैं
चिन्ताएं बढ़ती हैं और बुढ़ापे तक चैन नहीं मिलता

★

सुख शान्ति पूर्ण भविष्य के लिए
संतति निरोध का प्रयत्न कीजिए

★

नसबंदी आपरेशन इसका सबसे कारगर उपाय है

निकटम परिवार नियोजन केन्द्र से परामर्श

करके

उपलब्ध सुविधाओं से लाभ उठाइए

बिज्ञापन सं० ५-सूचना निवेशालय, उत्तर-प्रदेश द्वारा प्रसारित



दीपावलि का सफल पर्व हो !



(रच०—श्री 'कुमुदाकर' सा० रत्न, आर्यनगर फीरोजाबाद)

हे आर्य !

आर्य सस्कृति के प्रिय पोषक !
 ऋद्धिवाद के बृद्धतम शोषक !
 स्वर्ग नरक की, धर्म-धर्म की—
 पाप पुण्य की, ऊँच-नीच की—
 सगुण और निर्गुण आत्मा की—
 परिभाषा करने वाले—हे वेद-शास्त्र मीमांसक आर्य !
 तुमने ठेका नहीं लिया था ?
 —'सकल विषय को आर्य करेंगे ।
 जीवन पथ - निर्माण करेंगे ।
 कदाचार के केन्द्र प्बस कर,
 सदाचार का सेतु पार कर—
 प्रबल प्रपञ्चों के पादप को—
 हम समूल उन्मूलन करके—
 'तमसो मा'—के पुण्य पाठ से
 'ज्योतिर्मय'—जन लोक करेंगे
 छल-प्रपञ्च पाण्डु स्रग्ध कर—
 नैतिकता के गीड़ मुञ्ज कर—
 मानवता - बन्धुत्व धोष से—
 बस्यु बानर्षी की बुनियाद को—
 कम्पित कर नय-मीत करेंगे ।
 हम असत्य से बर्चित करके,
 सदा सत्य का सिन्धु तरंगें ।
 क्या ये सब कुछ पूर्ण हुआ है ?
 क्या ये प्रश्न था नहीं तुम्हारा ? —
 —'बवानम्ब ऋषि के हम सच्ये—
 सेवक बनकर वेद-धर्म की प्बजा उठाये—
 भूतल को ही स्वर्ग बनाकर—मानव को ही मुक्त करेंगे ।
 जरे, बुर्जों के द्वार खोलकर बेसो तो अलबेले आर्य ?
 शानी में कुछ और तुम्हारी करनी में कुछ और दीक्षता ।
 अनिन्द्य करना खूब जानते ।

मर्चों पर चढ़कर—बालों की लाल
 खींचना खूब जानते ।—
 'कृषवन्तो' का स्वप्न चूर है ।
 वन्म द्वेष के दीपक जलते ।
 दल दल के दलदल में बलते ।
 आतिवाद का उबार आ गया
 जडता से अनिसार हो गया ।
 अबल 'मातृ-माया' का अबल—
 छिन्न-मिन्न करने को जानुर ।
 'परकीया' से प्यार हो गया ।
 जीवित है 'मस्तिष्क दासता, ?
 क्या स्वराज्य का सार यही है ?
 आध्यात्मिक-अंगुदय मार्ग के—
 भौतिकवाद-भूत के पीछे क्यों मड-मल डोढ़ते फिरते ?
 'अश्रम ऋष्या' उपनिषद् कहती—
 'अश्र पूर्णा' के मन्दिर पर कङ्कालों की मीड़ लबी है ।
 भ्रष्टाचार नेडिये पूले मुँह को फाडे यहां लडे हैं ।
 पेट पीठ में मिला विकल हो—
 एक-एक दाने को तरसा, आर्यो ! पावन देश तुम्हारा ?
 जो 'गुप्ता' का डोल पीटता—
 बही 'बूतरो' के सम्मुख ही—
 बॅन्य बीनता बिखा-बिखा कर
 'सोने की बिडिया'को लज्जित इधर कर रहा देश तुम्हारा ।
 महिषासुर महिषाई का उन्मत्त पवन सा झूम झूम कर—
 शाङ्कल-साहस के नल-रव तोड आज हुकार मर रहा ।
 पव प्रभुता के मव में डूबे तुम दीपावलि जला रहे हो ।
 नहीं-नहीं तुल दयानन्द के उज्ज्वल यश को—
 स्नेह-वर्तिका हीन बलि में फूंक रहे हो ।
 'उत्सिष्ठित'—का पाठ पुन तुम एक बार ऐसा बुहराओ ।
 जन जीवन का दीप जले—
 सब दीपावलि का सफल पर्व हो ।
 तभी आर्यो तुम्हें गर्व हो !



आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य का सूत्रधार दयानंद

[ले०—पी० व० शिवबहालु जी मुख्य उपमनी आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश]

वैदिक आदर्शों के अनुकूल द्वीपद्वीपान्तर—पर्यन्त व्यापी अनेक अष्ट मानवों द्वारा सञ्चालित बहुप्राप्य शासन का



लेखक

मग ही आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य है। सत्तार में जब से नी शासन व्यवस्था स्थापित हुई विश्व की महती आर्य जाति ने तब ही से अपने ध्यायक साम्राज्य की नींव डाली और पुगपुगान्तर पर्यन्त इस साम्राज्य का सञ्चालन किया।

भारतवर्ष सदा से इस आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य का केन्द्र रहा है। महाभारत एवं मेनेर्युपनिषद् के कथनानुसार इस भारत देश में मनु (वैवस्वत), पृथु, इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष, माण्वाता, महृष अश्वपति, शशबिन्दु हरिश्चन्द्र, भरत (बौध्पन्त), रघु, विलीप, राम आदि अनेक चक्रवर्ती सम्राट् हुए हैं जिन्होंने सत्तारान्त सूचि पर शासन किया है।

आचार्य दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में स्पष्ट लिखा है कि—“स्वायम्भव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा।” स्वामी दयानन्द एकतन्त्रवाद के घोर विरोधी थे। सत्यार्थ प्रकाश

के षष्ठम समुल्लास में उन्होंने लिखा है कि—‘एक (व्यक्ति) को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये। यदि ऐसा किया गया तो वह अकेला राजा स्वामीन्य व उन्मत्त होकर प्रजा का नाशक होता है।’ स्वामी दयानन्द तो निर्विवाद “व्यधिष्टे बहुप्राप्ये यते महि स्वराज्ये” अर्थात् व्यापक अनेकों द्वारा पुरक्षित स्वराज्य की स्थापना के समर्थक थे।

सत्यार्थ प्रकाश के ११ समुल्लासों में एक स्थान पर आचार्य ने लिखा है कि—“जब रघुगण राजा थे तब रावण भी यहा के आधीन था।” इसका तात्पर्य यह है कि रावण जिसकी राजधानी लका थी, जो आज दिव सागर में डूबी हुई है और रावण के आधीन आस्ट्रेलिया आदि के राज्य भी बतलाये जाते हैं वह भी भारत के आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य के आधीन था। राम के काल में लका के राजा रावण ने एक बार सर उठाया और भारतवर्ष के दक्षिण भू-भाग पर अपना आतक जमाना चाहा। तब राम ने उस का निराकरण किया और अन्धायो अत्याचारी रावण का विध्वंस कर लका के राज्य उसके भाई विभीषण को सौंप दिया।

चक्रवर्ती सम्राट् का यह प्रमुख कर्तव्य होता था कि यदि कोई माण्डलीक राजा अग्याय अत्याचार करने पर उत्तर आये और प्रजा को सताने लगे अथवा अग्य कितनी माण्डलीक राजा से युद्ध करने लगे तो वह बीच में पड़कर युद्ध शान्त कराने और अग्यायो राजा को पबच्छुत कर योग्यतम व्यक्ति को वहाँ का राजा बनवावे।

महर्षि दयानन्द की यह आत्मरिक्त अनिलाया थी कि ऋषियों की पवित्र भूमि भारत क्षीण स्वतन्त्र हो और विदेशियों के चगुल से इसकी पूर्ण मुक्ति हो और वह अपनी प्राचीन संस्कृति के अनुसार पुन एक महान् शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में विकसित हो। आर्याभिनिन्दन के प्रथम प्रकाश में मन्त्र ४३ की व्याख्या करते हुए ऋषि ने लिखा है कि—“अस्मभ्य बरिब सुग कुचि” अर्थात् हमारे लिए चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य धन को सुख से प्राप्त कराओ।”

इसी प्रकार मन्त्र ४५ की व्याख्या करते हुए ऋषि के



लिखा है—“ऐ वरु भगवन् आपकी न्याययुक्त नीतियों में प्रवृत्त होकर [हम] वीरों के चक्रवर्ती राज्य को आपके अनुग्रह से प्राप्त हो।”

आर्याभिनियम द्वितीय प्रकाश में ‘इये पिन्वस्व ऊर्जे पिन्वस्व, ब्रह्मणे पिन्वस्व क्षत्राय पिन्वस्व’ आदि मन्त्र की व्याख्या करते हुए ऋषिबर ने लिखा है कि—‘हे मराजाधिराज परब्रह्मन् ! (क्षत्राय) चक्रवर्ती राज्य के लिए शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलाधि उत्तम गुणयुक्त अपनी कृपा से हम लोगों को करो। अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कमी न हों तथा हम लोग पराग्रीन कमी न हों।’

आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना के निमित्त आर्य जाति में जिन ६ गुणों की विशेष आवश्यकता है और जिन गुणों के कारण उसका चक्रवर्ती साम्राज्य युग युगांतर पर्यन्त विश्व में तथा है उनका निदर्शन भी यहाँ उपर्युक्त मन्त्र की व्याख्या में स्पष्टरूपेण किया गया है।

विदेशी साम्राज्य को भारत से उल्टा-ऊँट फेंकने की प्रबल आकांक्षा भी यहाँ ऋषि ने व्यक्त की है। आर्याभिनियम प्रथम प्रकाश मन्त्र ४५ में ‘तेजस्विनावभोतिमस्तु’ की व्याख्या करते हुए ऋषिबर ने लिखा है—‘अभोग्म्य प्रीति से परमवीर्य पराक्रम से निष्कण्टक चक्रवर्ती राज्य भोगें।’ द्वितीय प्रकाश मन्त्र १ की व्याख्या करते हुए लिखा है कि—‘हे महाराजाधिराज ! जैसा सत्य न्याययुक्त अलङ्घित आपका राज्य है वैसा न्याय राज्य हम लोगों को भी आप की ओर से स्थिर हो।’ महान् क्रान्तियुक्त आचार्य वयानन्द ने यहाँ स्पष्ट शब्दों में आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य के मुख्य आधार तलवार और आज्ञा की परिभाषा में अणुवम भाषि को नहीं माना अपितु सत्य और न्याय (Truth & justice) साम्राज्य के सदा से दो मौलिक स्तम्भ सत्य और न्याय ही रहे हैं। इन्हीं दो तत्वों के विशेष बल पर आर्यों ने लाखों वर्षों पर्यन्त चक्रवर्ती साम्राज्य का सञ्चालन किया है।

मध्य (अफ्रीका) एव मय (अमेरिका) में हुए सन्नाह भरत (बोधयन्त) के ऐन्द्र महासिंघकों में लगभग १२५ राज्यों के प्रतिनिधियों ने निज राष्ट्रदूत्यों के साथ उपस्थित होकर उपर्युक्त दो विशेष गुणों के कारण ही आर्य चक्रवर्ती सन्नाह के प्रति अपनी मान्यतायें व्यक्त की हैं।

ईसामसोह में जिस Kingdom of Heaven अर्थात् स्वर्ग के राज्य की चर्चा हुई जिस में की है ऋषिबर ने उसी ईश्वरीय गुणयुक्त साम्राज्य की स्थापना की ओर विश्व का ध्यान आकर्षित किया है। जब तक विश्व की राजनीति में यह दो महान् ईश्वरीय गुणों को पूरा पूरा स्थान न मिलेगा तब विश्व में स्वायी शान्ति स्थापित हो नहीं सकती। मय, आसकाओं का मूल रात्र्नीतिक मस्तिष्कों को कमी सत्य और न्याय का पुकारो नहीं बनने देने वाला है। सत्तर के १०० से अधिक छोटे बड़े राष्ट्रों एव राज्यों से मिलकर सयुक्त राष्ट्र सच की स्थापना हुई है और सह अस्तित्व के सिद्धान्त पर वह सच विश्व में शान्ति स्थापना में निरन्तर प्रयत्नशील रहता है किन्तु उसका तेजस्वी होना नितागत आवश्यक है। प्राक्लिङ्ग्य सयुक्तराष्ट्र मय अभ्यायी अत्याचारी आततायी आसकों का वमन नहीं कर सकता केवल अनुरोध करने से कोई मानने वाला नहीं। जिस समय तक सत्तार के उच्च प्राक्लिङ्गली राष्ट्र सत्य एव न्याय को अपने प्रमुख सम्बल न बनायेंगे सत्तार में शान्ति की चर्चा केवल चर्चा मात्र रहेगी।

महाविद्वानन्द ने ऋग्वेदादि ऋषि सूक्तिका के पृष्ठ २६६ पर लिखा है कि “वेदादि शास्त्रों की नीति से आर्यों ने भूगोल में करोड़ों वर्ष राज्य किया।” वेदादि शास्त्रों की नीति सत्य व न्याय आदि पर आधारित है जिसका ऊपर बर्णन किया जा चुका है।

आर्य साम्राज्यवाद में प्रजा-शोषण के लिये भूलकर भी स्थान न था। जनता की सबसे निम्न एव उपेक्षित इकाई के उत्थान तक में सदा प्रयत्नशील रहना आर्य राजा का धर्म बतलाया गया है। ‘दरिद्राग्मर कोन्तेय’ आदि घोषों में दरिद्रों का मरण-पोषण करना परम कर्तव्य ठहराया गया है।

आर्य राजा की जय दरिद्रों के पालन-पोषण एव उनके हृदयों के जीत लेने में ही मानी जाती रही है।

वैदिक राज्य का आदर्श तो तब यह ही रहा है कि—
सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा करिष्यद्बुद्धंभारभवेत् ॥

वैदिक राज्य में किसी का शोषण नहीं, किसी का पीडन नहीं, किसी के साथ अन्याय नहीं और किसी का दूषा पक्षपात नहीं, गुण और ध्यान की ही पूजा सदा आर्य राज्य में रही है।



श्रद्धांजलि

दयानन्द की पुष्प स्मृति में,
अद्वा पुष्प चढ़ाने आया हूँ।
जहाँ अनगिनत जीवन पुष्प चढ़े,
निज पुष्प चढ़ाने आया हूँ ॥

उमड़ रहा है खोल हृदय में,
में उसे बहाने आया हूँ।
बख रहूँ तरपें मन मे जो,
में उन्हें सुनाने आया हूँ ॥

तू महान् था हे श्रद्धाविध,
तू ने सत्तार मुकाया था।
पाक्ष्णों को लपिडत करके,
सर्वधर्म वर्धाया था।
मोडी थी गुण की धारा,
कान्ति का बिगुल बजाया था।
विराकार ब्रह्म की उपासना,
सन्ध्या का योग सिखाया था।

सब वेद वदें और वेद सुनें,
ईश्वर का ज्ञान बताया था।
हो आर्यकरण इस धरती का,
यह विष्यमाद गुजाया था।
हो नाश अधिष्ठा के तम का,
ज्योति का पाठ पढ़ाया था।
हों दूर विधमताएँ सारी,
सब को ही गले लगाया था।

तू शानी था, तू ध्यानी था,
तू धर्मयुद्ध सेनानी था,
तू था तपस्वी सूरज तम,
ज्योति का तू अभिधानी था।
ब्रह्मधर्मयुक्त तेजस्वी था,
फिर भी नहीं अभिमानी था।
कवणा का गहरा सागर था,
दया धर्म का दानी था।
पतितों को बनाया पावन था,
विनम्रता मे लासानी था।

कितना भी करू गुणगान श्रद्धि,
फिर भी अधूरा होगा वह।
कितनी भी बढ़ाऊँ अद्वांजलियाँ,
तूत्त न होंगे अन्तर की तह।

वह शक्ति दो हे दयानिधे !

मे जीवन-व्रत निमा जाऊँ।

जो धरण बढ़ रहे हैं आगे,

में ऊन्हें सक्षय तक पतुचा पाऊँ।

—बिष्णुवित्त्य 'बसन्त'

दृष्टि तो होगी तब ही,
बख कर्मों में लाऊँ सिला।
विधपान तजुँ बुष्कर्मों का,
सत्कर्मों से पाऊँ रखा।

अद्वांजलि तो भी अद्वांजल्य मे,
जिस्तने गोली खाई थी।
अद्वांजलि तो भी हसराम ने,
हस कर व्यथा मिटाई थी।
अद्वांजलि ही लेखराम ने,
बख छुरा पीठ मे लाया था।
अद्वांजलि ही सुमेरसिंह ने,
हिन्दी को शीश बढ़ाया था।

अद्वांजलियाँ ही उन बीरों ने,
हैरराबाद मे जो शहीद हुये।
जो छोड़ घ-बार सन्ध्यासी बने,
दिल में दुनियाँ का दर्द लिये।
ले 'ओम्' पताका को कर में,
वेदों के गान गुम्जाने की।
मधुमय वर्षा अनुत्त की कर,
धरती को स्वयं बनाने की।

हम करे आत्म निरीक्षण आज,
वेजें अन्तर में झाँक बरा।
मे वदन्तुपु कहां छिपे बंटे,
जो कते हमारा अहित सदा।
हम करे प्राप्ति प्रभु-शक्ति,
हम इनको मार भगावें अब।
हम दूर करे विधमताओं को,
समताओं को गले लगावें अब।

उस महान् श्रद्धि के प्रति,
यही अद्वांजलि सचची है।
इसमें ही है सब धर्म मरा,
इसमें ही अपनी उन्नति है।

होगा इस से ही पुन

बंधिक धर्म का सूर्य उदय।

गुजेंगी वेद श्रद्धावें अब,

होंगे दूर तमी सदाय।





संयम साधन में प्राणायाम का स्थान

(ले०—श्री आचार्य मद्रसेन श्री अक्षरेर)

महर्षि बयानन्व ने अपने ग्रन्थों में प्राणायाम पर बहुत बल दिया है। वे यह मन्ती प्रकार जानते थे कि प्राणायाम मनुष्य के सधमी तथा सदाबारी बनाने का एक मुख्य तथा आवश्यक अंग है। वे यह भी जानते थे कि जीवन में सधम का अपना एक प्रमुख स्थान है। व स्तब में मानव जीवन की महान् र्दबी शक्तियों का विकास होता ही सधम द्वारा है। सधम यह साधन है जो मानव जीवन को पवित्र तथा निमल बनाकर उसे निस्कार देता है, क्षमका देता है तथा उसे अपने बास्तबिक लक्ष्य तक पहुँचा देता है। सधमी मनुष्य का जीवन एक आदर्श जीवन है। उसके जीवन में न बिलासिता है, न बासता और न उच्छृङ्खलता, सरलता, साधमी तथा सौजन्यता ही उसके जीवन का एक मात्र सुन्दर लक्ष्य है।

अपनी इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि को अनिष्ट मार्ग से हटाकर उन्हें अमीष्ट मार्ग पर चलाना ही सधम है। जहाँ नियन्त्रित मन तथा इन्द्रिया मनुष्य को अपने अमीष्ट मार्ग पर चला कर उसके जीवन को सुखमय बना देती हैं, वहा अनियन्त्रित मन तथा इन्द्रिया मनुष्य को दुःख और अशाति के गहरे गर्त में गिराने का कारण बनती हैं। इसलिये सुखमय जीवन के अनिलाषी के लिए तथा मानव जीवन के महान् लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए सधम साधना परम आवश्यक है। सधमेत, जहाँ सधम साधना से मानव के मानस मन्दिर में सुख और शान्ति का सृजन होता है, वहा असधम द्वारा मानव जीवन दुःख और अशाति का प्राणी बनता है।

यूँ तो सधम साधन के सततजननों में अपनी अपनी सुख के अनुसार सैकड़ों साधन बसधिये हैं। जप, तप, व्रत, उपवास, प्रभु-भजन, ये सब सधम साधन के सुन्दर उपाय हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त—

‘प्राणायाम’

भी सधम प्राप्ति का एक परमोत्कृष्ट साधन है।

प्राणायाम के द्वारा मनुष्य अपनी इन्द्रियों तथा मन पर सरलता से कानू पा लेता है। प्राणायाम के अन्यासी को



लेखक

सधम साधना के लिए अल्प कठोर साधनों के सहारा लेने की आवश्यकता नहीं पडती। प्राण और मन का परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। जहा प्राणों की अस्थिरता और चञ्चलता से मन भी अस्थिर और चञ्चल बन जाता है, वहाँ प्राणों की स्थिरता से मन भी चञ्चलता रहित और स्थिर हो जाता है। प्राणों की चञ्चलता मन की चञ्चलता का तथा प्राणों की स्थिरता मन की स्थिरता का मुख्य कारण है, इसीलिये योग ग्रन्थों में कहा गया है—

चलो धाते चल चित्त, निरचले निरचलो भवेत् ।

अत जो सज्जन चित्त की चञ्चलता को दूर कर उसे स्थिर और एकाग्र बनाना चाहते हैं, उन्हें अपने प्राणों के स्थिर करने का अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। अङ्क अगत् में मन के दूसरे नम्बर पर प्राण ही एक ऐसी महान शक्ति है, जो कि जहा वह अत्यन्त बलवती है, वहाँ अत्यन्त बेगवती भी है, अत, ऐसे बलवान् तथा बेगवान् प्राणों को अनावास सरलता से अपने चञ्चलता तथा केवा अति कठिन

है। उनके वश में करने का एक मात्र उपाय है। 'प्राणायाम' के द्वारा प्राण सहज में ही वश में हो जाते हैं और प्राणों के वश में होते ही मन भी सरलता से साधक के वश में हो जाता है। योग प्रणयों में प्राण और मन को बूध मिले जल की उपमा भी है (बुधाम्बुधत् सम्मिलितो तो तुन्य कियो मानस मादतो)। अतः जैसे बूध मिश्रित जल की गति को वश में कर लेने से बूध की गति स्वतः ही वशवती हो जाती है, उसी प्रकार प्राणों की गति वश में होने पर मन की गति भी स्वयमेव वश में हो जाती है और मन के वश में होते ही जहाँ साधक को समय साधन में सफलता मिलती है, वहाँ उसकी मानसिक शक्तियों का विकास भी सरलता से होने लगता है तथा इन्द्रियों के मल और बोध भी दूर हो कर वे शुद्ध तथा सत्य-गमिनी बन जाती हैं। इस विषय में महर्षि बयानम्ब ने अपने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ में मनु का एक प्रसिद्ध श्लोक बिया है जो कि निम्न प्रकार है—

बह्वन्तेभ्यामयमानाना घातुनां हि यथा मला ।
तयेन्द्रियाणा बह्वन्ते बोधाः प्राणस्य निग्रहात् ॥

अर्थात् जिस प्रकार स्वर्ण आदि बस्तुएँ प्रगिन में तपाने से उनके मल नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार प्राणायाम के द्वारा प्राणों को वश में करने से इन्द्रियों के बोध भी नष्ट हो जाते हैं। 'प्राणायाम' ही वह पञ्चाग्नि है जो साधक के प्राण, अपान प्राणि पाँचों प्रसुप्त प्राणों को जागृत कर उन्हें तेजस्वी तथा निमल बना देती है। यही सच्ची—

पञ्चाग्नि-पूजा

है। श्रेय है कि आजकल के साधुओं ने इस परम हितकारिणी पञ्चाग्नि-पूजा का परित्याग कर अपने चारों ओर पाँच प्रकार की अग्नियों को जलाकर उनके द्वारा इस पवित्र तथा अनमोल मानव देह को तपाना तथा उसे निरर्थक क्लेश पहुँचाना ही पञ्चाग्नि-पूजा समझ लिया है। अतः मानसिक तथा इन्द्रियजन्य दोषों को दूरकर सयमी जीवन बिताने के अनिलाधी को प्राणायाम का अभ्यास नित्यप्रति नियमपूर्वक अवश्य करना चाहिये।

मेरे बिचार में प्राणायाम की यदि अमृत का कलश कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। अनुभवों योगियों का कहना है, कि हृदयारे अहुरप्रभ से सदा अमृत का सरना

बहता रहता है, उस अमृत का रसास्वादन भी प्राणायाम तथा ध्यान, धारणा का अभ्यास ही कर सकता है। जिस अमृतरस का आस्वादन कर साधक के सामने अम्ब इन्द्रियों के रस फीके पद जाते हैं। परन्तु प्राणायाम इस अमृत का रसास्वादन तभी कराता है, तथा अमृततुल्य लाभ भी तभी पहुँचाता है, जबकि प्राणायाम के नियमों का पूर्णतया पालन करते हुए, तथा उसे किसी योग्य अनुभवों से विधिवत् सीखकर उसे पूर्ण श्रद्धा, आस्था तथा कुछ समय तक लगातार धेयपूर्वक किया जाए। यदि हम प्राणायाम के नियमों की अवहेलना करते हैं, तथा उसे विधिपूर्वक नहीं करते तो यह अमृततुल्य प्राणायाम भी कभी-कभी हमारे लिए हानिप्रद बन जाता है। नीचे हम प्राणायाम के अभ्यासी के लिए कुछ आवश्यक नियम दे रहे हैं। प्रिय पाठक यदि इन नियमों का पालन करते हुए प्राणायाम का अभ्यास करेंगे, तो उन्हें प्राणायाम से अवश्य लाभ होगा। उनके मन तथा इन्द्रियों के बोध और चञ्चलता दूर होकर, वे अपने जीवन को पूर्ण सयमी तथा सुख मय बना सकेंगे।

“प्राणायाम के अभ्यासियों के लिये आवश्यक नियम”

१—किसी भी प्रकार के प्राणायाम करने से पूर्व एक-बार अन्धर से श्वास को नासिका द्वारा बन्धपूर्वक बाहर निकाल देना चाहिये, और फिर यथाविधि पूरक आदि प्राणायाम का प्रारम्भ करना चाहिये।

२—प्राणायाम के तीन अंग हैं। पूरक—अर्थात् प्राणों को नासिका द्वारा बाहर से अन्धर करना। कुम्भक—अर्थात् उस अन्धर भरे श्वास को यथाशक्ति अन्धर ही रोक लेना। रेचक—अर्थात् उन रोकें हुए प्राणों को शन-शन सम्बा करके बाहर निकाल देना। प्राणायाम के उद्युक्त तीनों अंगों को करते समय क्रमशः तीन बन्ध करने चाहिये। पूरक करते समय “पूवबन्ध” अर्थात् गुदा और मूलेन्द्रिय का ऊपर आकर्षण करना। कुम्भक करते समय “जालन्धर बन्ध” अर्थात् सिर को बोझा मुकाकर थोड़ी को कण्ठकूप में आकर लगा देना। रेचक करते समय “उद्धियान बन्ध” अर्थात् पेट को यथाशक्ति अन्धर के आना। इससे प्राणायाम के तीनों अंग उरज्ज्वलपूर्वक हो जाते हैं।

३-पूरक करते समय छाती को मली प्रकार से फुलाना चाहिये, जिससे फेफड़ों के सभी हिस्से प्राणों से मली प्रकार भर जाए।

४-श्वास ऊने-शानै और लम्बा करके अन्दर लेना चाहिये, और लम्बा ही करके बाहर निकालना चाहिये।

५-प्राणायाम करते समय 'शीतली' आदि कुछ विशेष प्राणायामों को छोड़कर श्वास नासिका से ही लेना चाहिये। मुँह हुयेता बन्द रखना चाहिये।

६-प्राणायाम व्यायाम आदि शारीरिक परिश्रम करने के पश्चात् बस पत्रह मिनट बिनाम लेकर करना चाहिये।

७-प्राणायाम सुली तथा स्वच्छ हवा में करना चाहिये। किन्तु बिस और से वायु के ओर के झोंके आ रहे हों, उस ओर मुँह करके प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

८-प्राणायाम के अभ्यासी को घूत, दुग्ध आदि तिनाय पदार्थों तथा फलों और हरी सब्जियों का यथाशक्ति अवश्य सेवन करना चाहिये।

९-प्राणायाम करते समय जितना पेट हल्का और आतें मल से रहित होगी, उतना ही प्राणायाम करने में सुगमता तथा अधिक लाभ की प्राप्ति होगी। अतः सायक को इस बात का पुरा प्रयत्न करना चाहिये कि पेट सदा हल्का और आतें मल से रहित रहें।

१०-प्राणायाम के अभ्यासी का आहार सात्विक, पोष्टिक तथा सुपच होना चाहिये।

११-यदि प्राणायाम करने वाले सज्जन प्रातःकाल योग की अलनेती तथा बह्रनेती, या इन दोनों में से कोई एक कर लिया करें तो बहुत अच्छा है। इन दोनों योगिक क्रियाओं के करने से अहाँ बुकाम, सिरध्व तथा नेत्र सम्बन्धी रोगों की निवृत्ति होती है। बहा नासिका के छिद्र स्वच्छ तथा मलरहित होने से प्राणायाम करने में बहुत सुगमता पड़ती है। पाठक उपर्युक्त दोनों क्रियाओं के करने की सविब तथा सरल बिबि नेरी पुस्तक "योग और स्वास्थ्य" अथवा "प्राणायाम" में देख सकते हैं।

१२-प्राणायाम के अभ्यासी को ब्रह्मचर्य पालन अर्थात् वीर्यरक्षा पर पुरा ध्यान देना चाहिये।

१३-प्राणायाम न तो भोजन के पश्चात् और न नूच व्यास की अवस्था में करना चाहिये।

१४-यदि शरीर में किसी प्रकार का कष्ट हो, या शरीर बहुत पका हुआ हो अथवा भोज, शोक, बिन्सा आदि की अवस्था हो तो प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

१५-प्राणायाम के अभ्यासी को सदा नासिका से ही श्वास लेने की आदत डालनी चाहिये, मुँह से क्वापि नहीं।

१६-स्वर आदि की अवस्था में प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

१७-प्राणायाम से शीघ्र लाभ उठाने के लिए तथा शरीर को सदा स्वस्थ और नीरोग बनाए रखने के लिए प्राणायाम के साथ साथ योग के शीर्षसन, सर्वाङ्गासन आदि आसनों का प्रयास भी अवश्य करना चाहिये।

आशा है समय तथा सवाचार के अनिलायी सज्जन प्राणायाम का अभ्यास करते समय उपर्युक्त नियमों का अवश्य ध्यान रखेंगे। केवल ध्यान ही नहीं प्रत्युत इनका तत्परता से पालन करेंगे। यदि प्रिय पाठकों ने उपर्युक्त नियमों का पालन करते हुए प्राणायाम का अनुष्ठान किया तो जहा वे पूर्ण सयमी तथा सवाचारी बनें, बहा अपने शरीर को भी सदा स्वस्थ, बलवान् तथा नीरोग रख सकेंगे।



पवों तथा त्योहारों पर—
कभी-कभी खाद्यानों की
बरबादी हो जाती है।

आपके तथा देश के लिये
अन्न का एक-एक बाना कीमती है।

त्योहारों को सादगी से
मनाइये !

घन और खाद्यान्नों की बरबादी
रोकना आज आपका

पहला कर्तव्य है।

सूचना निदेशालय, उत्तरप्रदेश द्वारा प्रसारित



‘अनार्य जुष्टम्, अस्वर्ग्यम्, अकीर्तिकरम्’



[विद्यामास्कर श्री प० सच्चिदानन्द जी शास्त्री एम० ए०, महोपदेशक]



श्री सच्चिदानन्द जी शास्त्री

भगवान् कृष्ण ने मैदान से भागते हुए अर्जुन को इन उपर्युक्त-महत्वपूर्ण शब्दों से कैसा उपालम्भ दिया है। ऐ श्रद्धि भक्त आर्यों! आप में निष्क्रियता व चेतना-शून्यता कहां से आ गई है। आप प्रति वर्ष अपने अतीत को स्मरण कर, अपनी दुर्बलताओं को दूर करने की शपथ लिया करते हो। अन्धकार से प्रकाश की ओर अज्ञान से ज्ञान की ओर चलने की प्रेरणा सदा से अपने महा-पुरुषों से पाते रहते हो। यदि आप में हीन भावनाओं का समावेश हुआ तो अब तुम्हें कौन बार बार जगाने आयेगा। आज आपके जागते रहने पर भी परिन्दे पर मारते घूमते हैं।

धर्म भूष्ट हो रहा है, माताओं-बहनों की आये दिन बेइज्जती देखने सुनने की मिलती है। अनाथों विधवाओं की आज भी दयनीय दशा का चित्र आंखों के समक्ष दृष्टिगम्य होता रहता है। गौमाता का सूर्य की किरण फूटते ही करुण क्रन्दन कानों को विह्वल किये रहता है। संस्कृत ज्ञानमयी मा का वाज भी अपमान हो रहा है इसे कौन सुनेगा, सिवाय श्रद्धि के इन आर्यों के अतिरिक्त। क्या तुम्हारे होते हुये इस देश की यह हीन दशा इसी प्रकार बनी रहेगी। जरा सोचो और विचारो।

यह श्रद्धि का वर्चस्व क्या यू ही जायगा। उनके बलिदान के पावन स्मृति में हम उनके अनुयायी उन्हें स्मरण करने का अधिकार भी रखते हैं या नहीं?

अपने महान् गुरु देव दयानन्द के जीवन के अन्तिम क्षणों की स्मृति हमारे हृदयों में उनके द्वारा आरम्भ किये महान् लक्ष्य को पूरा करने की भावना भरेगी या नहीं?

समस्त धरती का बल वैदिक आदर्शों को मिटाने चला आ रहा है। भौतिकवाद के प्रवाह का तूफान, जाति-पाति की लहरें मिर पर चढ़ती हुई आज दयानन्द के अनुयायियों को चुनौती दे रही हैं।

वह समय आ गया है जब हमें अपने कर्तव्य का निश्चय करना होगा। धरती को स्वर्ग बनाने के लिये सत्य, शान्ति और न्याय की विमल पताका जन-मन पर लहराने के लिए सम्पूर्ण आर्य, हृदय में नया विश्वास भर कार्य क्षेत्र में अवतरित होंगे और श्रद्धि के प्रति हमारा सच्चा शिष्यत्व होगा।

श्रद्धि श्रद्धि का यही पुनीत पव हमें उनी याद दिलाता है कि हम उनके आदेश से दूर तो नहीं जा रहे हैं, जिससे कि भगवान् कृष्ण का वह वाक्य हमें लाञ्छित न कर सके।

‘अनार्यं जुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन’

और यही श्रद्धि दयानन्द के स्मरण-दिवस पर हमारी सच्ची श्रद्धाजलि होगी।





झंडा ऊँचा रहे हमारा



[ले०-धी रणजीत बी जिज्ञासु बामप्रस्थी, पीलीभीत]

ओं आवित्याः रुद्राः वसवः सुनीथाः
द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम् ।
सजोषसो यज्ञ भवन्तु देवा ऊर्ध्वं
कृष्यन्त्वध्वरस्य केतुम् ॥ ऋ. ३-८-८

अर्थ—(सुनीथा) उत्तम नीति वाले (आवित्या) ४८ वर्ष पयन्त ब्रह्मचर्य धारण करने वाले, चारो वेदों के ज्ञाता, महाविद्वान्, आवित्य ब्रह्मचारी या नेता लोग (रुद्रा) ३६ वर्ष पयन्त ब्रह्मचर्य धारण कर ३ व २ वेद के ज्ञाता रुद्र ब्रह्मचारी या शत्रुओं के रुलानेवाले क्षत्रिय वर्ग (वसव) २५ वर्ष का ब्रह्मचर्य रखने वाले १ वेद के ज्ञाता वसु ब्रह्मचारी या घनिक वर्ग (पृथिवी) विशाल (द्यावा-क्षामा) आकाश और पृथिवी पर (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष में (देवा) परोपकारी विद्वान् (सजोषस) तुल्य प्रीति वाले—एक लक्ष्यवान् होकर (यज्ञ) राष्ट्र रूपी यज्ञ की (भवन्तु) रक्षा करे और (अध्वरस्य) इस राष्ट्र यज्ञ के (केतुम्) अण्डे की (ऊर्ध्वं कृष्यन्तु) ऊँचा करें।

व्याख्या—५ हजार वर्षों बाद चारों वेदों का ज्ञाता आवित्य ब्रह्मचारी महाविद्वान् इस राष्ट्र की और इस आर्य जाति को इसके गत गुणगौरव को पुन स्मरण कराने इसका उद्धार करने आया परन्तु दुर्भाग्य, हमने उस देव ब्रह्मचर्य की वेद का अनुसरण न किया, उसके बतलाये मार्ग को छोड़कर अपने को केवल धार्मिक सस्था घोषित कर राजनीति से दूर रहकर अपना नेतृत्व लो विया जिसके परिणाम स्वरूप अनेको शिक्षा से वीक्षित व्यक्तियों के हाथ में नेतृत्व की बागडोर चली गयी। जिसके परिणाम स्वरूप जिस स्वराज्य में स्नेह, सद्भावना, समता, सहयोग, सुरक्षा और सब सुख सुविधाओं का अवल-मुल्य सगौरव सुनाई देता उसके स्थान पर आज पब प्रभुता, अधिकार सिस्था, वर्त्म, लुटमार, भ्रष्टमरी, बेकारी, साम्प्रदायिकता, अनैतिकता, अराजकता, रिश्वतखोरी, बिदादरी भाव, स्वार्थसिद्धि, चोरबाजारी, स्वजन पक्षपोषकता,

निरुद्यमता, महागाई, खुरेजी आदि की मजदूर बड़ी घिघाह कर ताण्डव कर रही है। शासक वर्ग जनता के खून पसीने की कमाई के धन से निज विलासिता में रत है और जनता महागाई तथा अनेकों करमार से पिटी और बर्षो मर रही है। पाकिस्तान और चीन रूपी अजगर मूँह फाड़े राष्ट्र को निगलने में उद्यत हैं। अन्त बाह्य पक्षमार्गी रिपु शासन की दुर्वल और नपुंसक नीति से लाम उठाकर स्वच्छन्द विचरते शत्रुओं के स्वागत के लिए मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। ऐसे समय में आर्य जिसका शत्रुत्व ही यह है सब ओर से विचार पूर्वक गति करने वाले हाथ पर हाथ धरे राजनैतिक निरपेक्षता का आवरण मुह पर डाले किर्तव्य विमूढ़ बना बैठे रहे क्या यह हमारे आर्य नेतृत्व का आदेश है? जबकि हमारे गुस्वर देव ब्रह्मचर्य में वेदशास्त्रों का सबल शास्त्र वे और अपने साहित्य तथा उपदेशों का आशीर्वाद वे हमें रणाङ्गण में आह्वान किया है। आर्यों की सोचना है कि हम वेद व देव ब्रह्मचर्य के आदेशों पर आकृष्ट होते हैं या राजनैतिक निरपेक्षता के फलस्वरूप राष्ट्र की विध्वंसकारी कगार पर अवस्थित करने के पापी बनते हैं। अस्तु—

उक्त वेदमन्त्र में राष्ट्र ऊँचा उठे, उसका सर्वत्र यज्ञ विस्तीर्ण होये इसके उपाय कहे गये हैं। आवित्य ब्रह्मचारी पूष विद्वान् राष्ट्र के नेतृत्व की समालने वाले ब्रह्मचर्यस्वी ब्राह्मण और क्षत्रिय वर्ग जो दुष्टों को ढलाने वाला तथा शत्रुओं का नाशक और घनिक वैश्य वर्ग और नीतिमान् लोग (सजोषस) एक आवाजें एक लक्ष्यवान् होकर राष्ट्र रूपी यज्ञ की रक्षा करें। वेद में आया है—“यज्ञो भुवनस्य नासि” यज्ञ सारे भुवन का केन्द्र स्थल है और सतपथ में कहा है—“यज्ञो वै श्रेष्ठतमो कर्म” यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। महर्षि ब्रह्मचर्य में जहाँ सबको पक्षमहायज्ञ करने का उपदेश दिया वहाँ राजा के कर्मों को बताया है—“राजा सब विद्य राजकर्मों को ऐसी दलता से करे जिससे प्रजा सब [लेख पृष्ठ ३२ पर]



श्रद्धा और आर्यसमाजी



(ले०-श्री प० बिहारीलाल जो शास्त्री)

आर्य समाजियों को आत्महीन बनाने के लिये आर्य आर्यसमाज के विरोधियों ने अब एक नया नारा



लेखक

निकाला है कि समाज में अज्ञान के माब नहीं। आर्यसमाजी को यह अनुभव कराया जाता है कि तुम अज्ञान विद्वानसहीन हो। तुम्हारा समाज अज्ञानहीन है। अतः तुम धर्म और अध्यात्म से बहुत दूर हो। आध्यात्मिक बनने के लिये गुरु की शरण लो। उपनिषद् मो कहती है—

‘सर्व विद्वानार्यगुरुमेवामिनच्छेच्छ्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठम्’

ब्रह्म ज्ञान के लिए गुरु के पास जाओ जो गुरु वेदज्ञ हो और ब्रह्म में अज्ञानु मो।

बस अनेक आर्यसमाजी भी आजकल के उन गुरुओं की शरण में जा पड़ते हैं जो नये ढंग के होशियार, धर्म के सौदागर हैं। जिनकी उपनिषद् के अनुसार न वेद का ज्ञान है न ब्रह्म में उनकी निष्ठा। जो अपने को ब्रह्म से भी बड़कर बताते हैं। जो रामकृष्ण के अवतार अपने को

कहते हैं। इनमें कुछ तो अंग्रेजी अच्छी बोल लेते हैं अतः अंग्रेजी पढ़े लिखे अब बुद्धि इनके चमू में बड़ जाते हैं। कोई चेला इन्हें हाईकोट का जज बता देता है। कोई कलक्टर समझ लेता है। पर ये होते साधारण ही हैं। कुछ गुरु नितान्त मूर्ख होते हैं। वे चेलों से कह देते हैं—

“योयी पढ़ पढ़ जग मुझा पंडित हुआ न कोय।

ठाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पण्डित होय ॥

प्रेम से इनका आशय होता है केवल गुरु से प्रेम। “तन मन, धन सब अर्पण करे” यह है इन वचक गुरुओं के उपदेश नारिणों तक को। जो सौभाग्यवती पत्नी अपना तन, मन धन पति को अर्पित कर चुकी वह अब गुरु को अर्पित करे तो “अमानत में खयानत” है वा नहीं? पुरी घोले-बाजी है न? मगर यह सोचने समझने की बुद्धि यह गुरु पहले ही हर लेते हैं। “गुरु के बचन करहि बिद्वानता” का उपदेश देकर बुद्धि की गति को ठप कर देते हैं।

ऐसे गुरु आजकल अनेक हैं। खूब माल पैदा कर रहे हैं। नवाबी ठाठ से रहते हैं, और वेद शास्त्र तथा विद्वानों का उपहास करते हैं। इनके चेलों में अधिक संख्या स्त्रियों की रहती है। कोई-कोई अज्ञान अज्ञ आर्य समाजी भी इनमें पढ़च जाता है। इन गुरुओं के चेले, देश ज्ञाति धर्म की समस्याओं से दूर, जनता के कष्टों से अनजान, केवल अपने ऐहिलौकिक आराम में लग्न और पारलौकिक स्वर्ग की आशा में मग्न गुरु में सब कुछ चढाये हुए मस्त रहते हैं। कमाई से ये लोग निश्चिन्त होते हैं। कोई धनी या पेंशनर या फिर गुरु के शेयरहोल्डर (पर्सनर) होते हैं। ये लोग और सराब के नशे में पड़े मस्त लोग देश और जनता के लिये एक से ही व्यर्थ हैं, मृतवत् हैं। इधर आर्यसमाजी की लीजिये। निकम्मा से निकम्मा आर्यसमाजी भी देश धर्म की तख्त रक्षणे वाला मिलेगा। जनता के दुःख सुख की अनुमति उल्लेख अवश्य रहेगी। वह जनजीवन से उदासीन नहीं मिलेगा।



इन अष्टालु कहाने वाले गुदरों ने मठ बनाये, आश्रम काढ़े किये, पर पूर्वी बंगाल के हिन्दू मुसलमान बनते रहे और उसका परिणाम हुआ पूर्वी बंगाल पाकिस्तान बन गया। सहस्रों हिन्दू बेधिया यवनों में जाती रहीं। हरिजन ईसाई बनते रहे और ये अष्टालु मत्त कीर्तन और गुदमक्ति में लीन रहे और अष्टाहीन जिन आर्यसमाजियों को कहा जाता है, उन्होंने सहस्रों स्त्रियों और लाखों पुरुषों को अहिन्दू होने से बचाया और इस प्रकार राष्ट्रियता की सहायता की। लाखों व्यक्तियों को अवबिरवापों से बचाया और यज्ञों की गायत्री मंत्र पढाया। लाखों की वेद विश्वासी और भारतीय सस्कृति का प्रेमी बनाया। कौन माई का लाला ऐसा अष्टालु हुआ है कि जिसने जीवन भर सारा समय जनता को शिक्षित करने में होम दिया हो और जनता से एक पैसा भी न लिया हो। आर्यसमाज में महात्मा हजरत जी प० मेहरबान्व जी आदि अनेक नेता हुए हैं कि जिन्होंने सरस्वती की सेवा में सारा जीवन आहुत कर दिया है। शहीदे अकबर, प० लेखराम जी और शहीदे आसम स्वामी अष्टानन्द जी की ओर का कौन अष्टालु हुआ है कि जिसने अपना धन जीवन, सुख संपत्ति और प्राण भी हिन्दू धर्म, सनातन धर्म, आर्य सस्कृति की रक्षा में भेड़ कर दिये। स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी सर्वदानन्द, ब्रह्मचारी निरयानन्द, म० नारायण स्वामी, पहिन गणपति क्षमर्त जैसे विद्वानों का रयाग और जनसेवा क्या सचची अष्टालु नहीं है। एक है वे अष्टालु जो जनता के सुख दुख की उपेक्षा करके इस भूमि से उबासीन होकर स्वर्ग की चाह में बेचैन हो रहे हैं। दूसरा और है अष्टाहीन कहाने वाला आर्यसमाजी जो इसी जन्म भूमि बसुन्धरा को स्वर्ण बनाने का प्रयत्न कर रहा है।

जनता बताये कि उसका हितैषी कौन है ? और जो जनता की सेवा करता है उससे ही जनार्दन प्रसन्न होगा। तब आर्यसमाजी को अष्टालु सचची अष्टालु रही या नहीं ?

आर्यसमाज के सत्यामी, उपदेशक, मन्त्रीक जनता का बहुत काम ध्यय करारकर जो उच्च कोटि के तर्क सगत विचार जनता को बाटे देते हैं, जैसे विचार वे डोगी गुल सहस्रों रुपये फूक कर भी नहीं दे पाते। आर्यसमाज के अस्सों पर जन-आगरण के लिये जो प्रचार होता है वह लाखों रुपये मन्ठ करके भी वे मुक्ति और स्वर्ण के डंकेदार

नहीं कर पाते। हमें ऐसी अष्टालु नहीं चाहिए कि जो बुद्धि-बाव को बकनामा चाहती है। जो तर्क को दूर करके ही फल-फूल सकती है। हम तो बुद्धिबाव पर परखी हुई तर्क पर तुली हुई "अन्त-सत्यम्-वा-बवाति" सत्य के ऊपर आधुत अष्टालु के पुजारी हैं। जन-ओवन से उपेक्षा कराने वाली, वेदा से अनुराग हटाने वाली बुद्धि को मेड बनाने वाली अष्टालु हेय है निकम्बी है।

आर्यसमाज के सत्यासी जनजीवन से जुड़े हुए हैं। कर्मयोगी हैं। बड़े बड़े गणोत्तरी और हिमालय के योगियों से हमारा वह सत्यामी जनता का कितना हितकारक है जो जनता को इस पाच वेद मन्त्र कठपथ कराके सत्याग्निहोत्र की ओर प्रेरित करता है। अवधिराजों को भगाकर राष्ट्र की स्वस्थ और बलवान् बनाने में लगा हुआ है। जनता के धन से मौज मारने वाले ये डोंगी गुद ऐसे जनसेवक सत्यासी का क्या मुकाबिला कर सकते हैं। त्रिय आर्य भाइयो हमारे इस लेख को पढ़कर फूल न उठिये। जीरों की तुलना में आप अच्छे सही, पर अन्धविश्वासी के मन्त्र से नापने पर आप बहुत छोटे उतरेंगे। अभी बहुत काम पडा है। सैकड़ों अष्टानन्द और लेखराम चाहिये इस्लाम की कूर कट्टरता को दूर करने के लिये। सैकड़ों उपदेशक चाहिये ईसाइयन के अवबिरवास को दूर कर जनता की स्वच्छ आध्यात्मिकता की ओर लाने के लिये। कितने ही आर्यबीरो का बलिदान बलिदानी सुमेरसिंह की तरह होना है राष्ट्रनाया को जीवित करने के लिये। हमारा स्वर्ग, मोक्ष, कल्याण सब है भारतभूमि को प्राचीन गौरव गिरि पर आरूढ करने में। हमारा लक्ष्य और ध्येय निराला है।

"न त्वह कामये राज्य न स्वर्गं नपुनर्भवंच ।

कामये दुःखतपानां प्राणीनामास्तं नाशनम् ॥"

हम न राज्य चाहते हैं न स्वर्ग न मोक्ष, केवल अन्ध-विश्वास से पीड़ित जनता को स्वस्थ सत्य मार्ग पर हमें लाना है। ध्येय कठिन है। धोर साधना की अपेक्षा है। आर्यधनो आजकल की नीतिकबाव की लहर और विषा-सिता की ज्वाला, अष्टाघार की आंधी और राजनीतिक जाड़ुपरो के सुकान से बचकर अपने सरल स्वच्छ जीवन से वह साधना करो जो हमसे पहले आर्य माइयों ने की थी। न्त धारण करो, जपय लो, अपने जीवन को सर्वज्ञान की

प्रभु निकटतम हैं फिर भी बिचार्य नहीं बने, अनुभव में नहीं आते और जैसे कोई अपरिचित दूरस्थ व्यक्ति सम्पर्क से दूबक रहता हो बैसे ही वे भी हम से रहते हैं। अपना होते हुए भी बिराना, निकट होते हुए भी दूर, अन्तर्धर्मि होते हुए भी प्राप्ति से परे, ऐसा क्यों है? वेब कहता है—'प्रभु दूर भी है और समीप भी। समीप उनके



लेखक

लिये है जितके पास मग्न हो चुके हैं। दूर उनके लिये हैं जो पाशों में जकड़े हुए हैं। ये पाश भी वी प्रकार के होते हैं—धर्मिय और अधर्मिय। अधर्मिय पाशों में तमोगुण एव रजोगुण से सम्बन्धित बोधो की गणना है। धर्मिय पाशों में सत्वगुण के बन्धन हैं। जब तक हम इन तीनों पाशों

नबगी से शक्ति रखने की। धर्मधर्म कठिन है पर अन्त में कल्याणकारक है। अपना जीवन स्वच्छ रखकर जनता को स्वच्छ बनाओ। दूसरे स्थान के स्वर्ण की उपेक्षा करके भारत भूमि को स्वयं बना दो यत इसके आवास मानकर अन्ध देश भी रंवी भृत्ति की ओर बढ़ें।

“भ्रस्त मटकली जनता को बेबिक सतपथ पर लाना है। बरक बनी भारत भू को फिर सच्चा स्वयं बनाना है। कष्ट पदों, बलिदान होंय इसकी धिस्ता परधाह नहीं। शोम पञ्जा को हिमगिरि के शिखरों पर फिर फहराना है।

पाश



[डा० पुन्डीराम सम्रा, डी० लिट्० आर्यनगर काणपुर]

से मुक्त नहीं होते, तब तक प्रभु का साक्षात् करने के अधिकारी नहीं हैं। तमोगुण और रजोगुणों के बन्धनों को अधर्मिय पाश कहा गया है, क्योंकि इनसे मानव पाप में लिप्त होता है, दुष्कर्म करता है और परिणामतः पतित होता है। अथ जब पीछे पड़ गया तो मद्र या सुम या कल्याण का हस्तगत करना कठिन ही नहीं असम्भव है। मद्र सुम या सत उपययन की आधाराशिला है। जब तक हम सत्व की स्थिति में नहीं पहुँच पाते, तब तक अधोगति ही अधोगति है। उच्चगमन सत्व की अवस्था में ही सम्भव है। इसके लिये प्रायण से उद्योग करना पड़ता है। उद्योग द्वारा हम पाप के सग्न से हटकर, अन्ध प्रकृति से विमुक्त होकर प्रकाश में पहुँचते हैं और सन्धिनी शक्ति के सहयोग द्वारा उस परम सत्व के साथ समुक्त होने के अधिकारी बनते हैं।

बर्णोय बर्णवेव के पाश त्रत भग करने वालों को सभी स्थानों और कालों में आबद्ध कर लेते हैं। जो पाप करता है, वह इन पाशों में जकड़ा जाता है। वत कुछ प्राकृतिक हैं और कुछ नैतिक हैं। इनमें से किसी भी त्रत को तोड़ने वाला इष्ट भावो बनता है। स्वास्व्य के विषयों को न पालन करना प्राकृतिक त्रत का भग करवा है। झूठ बोलना चोरी करना आवि नैतिक त्रतों के अन्तर्गत हैं। हम चाहे जितना छिपकर त्रत भग करें, पृथ्वी पर, पृथ्वी के ऊपर या उससे भी परे बर्णवेव के सहस्राक्ष स्पर्श (वृत्त) हमें वेक ही लेते हैं। सर्वं तत्राजा बन्धो विचष्टे यन्मस्तरा रोबली यरपरस्तात' (अध० ४-१६ ५)

वर्णवेव के पाश सिकड़ों और सतहों में अर्थात् अन्ध-निहित हैं, पर वे सब तीन भागों में विभक्त किये जा सकते हैं। अ० १-२४-१५ के अनुसार ये उत्तम, मध्यम तथा अधम पाश हैं। ये प्रेमा पाश अधर्म की निर्माफित शक्त के अनुसार सत्पथ प्रकार के शक्ति त्रुद्ध हैं—के से सत्ता



बध्म सप्त सप्त त्रेधा स्थित्यति विविधा कल्पन्तः । छिन्नु सर्वं अनुत् बध्मन् य सत्यं काश्मिन् सुश्रुम् ॥ (अथर्व ४ १६-५) बध्मणदेव के तीन प्रकार के पाश ही सात सात प्रकार के हैं । ये सात सात प्रकार के पाश ही 'क्षन्त मर्यादा' कथ्यस्ततस्तु 'सात मर्यादाओं का भी स्मरण बिना देते हैं। सात मर्यादाओं का तोड़ना मानो सात प्रकार के पाप करना है । ये सात मर्यादायें प्राकृतिक हैं और नैतिक भी । अतः दो बार 'सप्त' शब्द का प्रयोग हुआ है। प्रकृति के क्षेत्र में इनका सम्बन्ध महत्त्व, अहंकार तथा पक्षतन्मात्राओं से है । इन सातों की स्वस्थ रचना तथा समृद्ध करना प्राकृतिक मर्यादा है । नैतिक क्षेत्र में इनकी स्वस्थता तथा समृद्धि के समुपयोग करने की मर्यादा है । यह उपयोग चेतना की अपेक्षा रखता है, अतः नीति के अन्तर्गत जाता है । पर ये सात सात प्रकार के पाश प्रमुखतया तीन ही प्रकार के हैं । प्रकृति त्रिगुणात्मिका है । उसके ये तीन गुण अपने तो हैं ही, पर जब ये चेतना पक्ष पर छा जाते हैं, तो उसे भी अपने रंग में रंग लेते हैं । इन्हीं के कारण जीवात्मा परमात्मा से समुक्त होकर भी, उसका समुद्रा और सत्ता होकर भी, उससे विपुक्त हो जाता है ।

सत्य को जो यत्निव पाश कहा गया है उसका दो एक कारण है । सत्यगुण शुभ या मद्र का प्रापक तो है, पर यह अहंकार में भी बिरा हुआ है । मैं सत पुण्य हूँ, सत्चरित्र से सम्पन्न हूँ, क्षमिष्ठ हूँ । ऐसी भावना जीव और प्रभु के बीच में आबरण का कार्य करती है । सत्य हमें उठाता है पर अहंमिति से समुक्त होकर गिराती भी है । एक अन्य बुद्धि भी है, जिसके अनुसार यह गुण कर्मों के फल से सम्मिलित करके हमें मोक्षदायी भी बनाता है । देवताओं की स्थिति इसी प्रकार की है । वे स्वर्ग में भोग भोगते हैं, कामधारी होते हैं, स्वच्छन्दता से संबंध अधम्य करते हैं, काल और देश दोनों का व्यवधान उनके सामने से हट जाता है । वे निर्द्वन्द्व सुख का उपभोग करते हुए विचरण करते हैं । यह स्थिति भी आर्य संस्कृति में सर्वोत्कृष्ट स्थिति नहीं समझी गई है । देवों से नीचे पितृलोक के निवासी हैं । वे भी मोक्षदायी हैं । कर्म करने से दूर केवल भोग में पड़े हुए व्यक्तियुक्त अपने भावी जीवन के लिये किसी प्रकार का अर्जन नहीं कर पाते । इसीलिए पितर और देव दोनों की स्थिति को अच्छा तो कहा गया है पर सर्वोत्तम

नहीं । परमगति की संज्ञा इनसे ऊपर है ।

परम गति को कुछ ऋषियों ने व्यक्तित्व के विनाश की अभिधा प्रदान की है । व्यक्तित्व ही हमें प्रभु के साथ समुक्त नहीं होने देता । सुसुप्ति में हम तम और रज से दूर रहते हैं, परन्तु चेतना तो बनी ही रहती है । सप्रज्ञात समाधि में भी इसका अनुप्य रहना सिद्ध है । हाँ असप्रज्ञात समाधि में सब कुछ विस्मृत हो जाता है । मोक्ष में इस स्थिति की पराकाष्ठा है । अतः मोक्ष या ब्रह्म रूपता अपने आपको छो देना है जिसमें मैं नहीं रह पाता व्यक्तित्व नष्ट हो जाता है । केवल, एकमात्र, परम तत्व रह जाता है । व्यक्तित्व के अभाव में भूतकाल के लिए शोक ममाने तथा भविष्य के लिये मोह करने का कारण अवशिष्ट नहीं रहता । जब मैं ही नहीं रहा तो कौन विगत से विपटेगा और कौन किसी अनागत की आकांक्षा करेगा ? जो न भूत है और न भविष्य है, केवल वर्तमान ही वर्तमान है, वही परमसत्य, ब्रह्म हमारे निश्चित पुरुषार्थ का एकमात्र लक्ष्य है ।

जैसे पाश अगणित हैं वैसे ही उनसे छूटने के उपाय भी अनेक हैं—सत ते राजन् नियज सहस्रभुजां गमोरा सुमन्तिष्ठे अस्तु । बाबस्व दूरे निश्चिन्ति पराचे कृतचिन्दिने प्रभु मुनिष्ठ अस्मत् ॥ ऋ० १ २४-९ ॥ राजा बन्धु ! तुम्हारे पास तो पाप कपी रोग को दूर करने के लिये संकड़ों, सहस्रों औषधियाँ हैं जो व्यापक तथा गम्भीर प्रभाव उत्पन्न करने वाली हैं । देव ! तुम्हारी सुमति हमें भी प्राप्त हो जिससे निश्चिन्ति, क्लृप्तापत्ति, घोर विषय। हमसे दूर, बहुत दूर भाग जावे । जो पाप हमने किया है और जिस पाप के कारण हम इस भयंकर, विकराल क्लेश के भाजन बने हैं, उस लिये हुए पाप से हमें छुड़ा बीजिए ।

त्वहि विचरतो मुख विदमत परिभूरसि अपन शोषु-
बध्मम । अथ० ४-२३-६

प्रभो ! आप कहाँ नहीं हैं ? आप तो सर्वत्र विद्यमान हैं और यह जो कुछ विचारों देता है उससे भी परे विराजमान हैं । आप ही हमारे पाप को मम्म कीजिए । दिव्यो निबन्धतोमुख अति नावेव पापव । ७। हे सवे व्यापक ! नाभ की नांति अपनी कृपा के द्वारा हमें समस्त द्वेष-कर्मों से पार लगाओ । 'स न सिन्धुनिव नाभा अति पर्या स्वस्तये । = । जैसे नाभ पर बैठकर सिन्धु को पार कर आते (जेष्ठ बुध्म ३६ पृष्ठ)



स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा विश्व धर्म

[ले०—श्री आचार्य रामानन्द शास्त्री, उपप्रधान बिहार समा, पटना ४]

मूर्ख स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की समाप्ति पर लिखा है कि 'यह सिद्धान्त भूगोल में फल जाय'। उन्होंने अपने शिष्यों को यही आदेश दिया कि देश-देशान्तर तथा लोक-लोकान्तर में इस प्रिकाल सत्य वैदिक धर्म को तुम कोने कोने में फैला दो। वस्तुतः आर्यसमाज की स्थापना उन्होंने इसी उद्देश्य से की थी। आर्यसमाज कोई धर्म अथवा पेय नहीं है यह तो उस सगठन का नाम है जिसका उद्देश्य वैदिक धर्म को विश्व में पुन फैलाना है। उन्होंने धर्म की परिभाषा को नियम और उद्देश्य के समान ही सर्वज्ञ प्राज्ञ बनाया। महाराज एकादश सनुल्लास में धर्म की परिभाषा करते हुये कहते हैं कि—जिसे सब माने उसे धर्म तथा एक माने उसे अधर्म समझना। जैसे—सत्य, सचाचारवि। धर्म की यह परिभाषा देश और काल से बाधित नहीं हो सकती है। जीवनी देखने से विदित होता है कि स्वामी जी से किसी ने पूछा कि—पाप, कितने कहते हैं? तो स्वामी जी ने यही उत्तर दिया कि—भारतीय पेल कोड में जो जुम गिखे हैं वही पाप हैं। इससे बढ़कर पाप की और परिभाषा क्या हो सकती है? महाराज ने आर्यावत्त में उत्पन्न मतों का खण्डन भी इसी उद्देश्य से किया है कि यह देश स्वस्थ होकर विश्व में वैदिक धर्म को फैलावे। वस्तुतः आर्य-समाज के सगठन का निम्नलिखित कार्यक्रम रहा है—

- (१) निर्माणात्मक (Constructive)
- (२) खण्डनात्मक (Destructive)
- (३) आक्रमणात्मक (Obstrutive)

प्रथम प्रोग्राम के अनुसार शिक्षा आदि का विस्तार था कि योग्य वैदिक धर्म को ठीक रीति से समझने वाले तथा जीवन में धारण करने वाले नागरिक तैयार हों। दूसरे प्रोग्राम के अनुसार हमारे प्रचारकों में खण्डनात्मक साहित्य का निर्माण किया। वैदिक गाना में विजातीय पदार्थ घुसकर वह इस निर्मल जल को दूधित कर रहे थे, ज्ञाना साधारण जनता उसे ही वैदिक धर्म समझ कर पान

कर रही थी इसलिये इस प्रकार के खण्डनात्मक साहित्य में वैदिक धर्म को निर्मल बनाने में बड़ा ही सहयोग दिया। तीसरे प्रोग्राम के अनुसार धर्म की आज में गुच्छम, एक तन्त्रवाद अथवा सम्प्रदाय विशेष, जनता की बुद्धि को कूठित कर मानवता के प्रति घृणा फैला रहे थे, उनका खण्डन आवश्यक था। यह दूधित मनोवृत्ति आज भी विद्यमान है। जैसे—रोमन कैथोलिक धर्म के परम पवित्र पिता, वैटिकान (Vatican) के पोप ने सब धर्मों में एकता की चर्चा करते हुए ईसाई धर्म को ही सर्वोत्कृष्ट बताया है। इससे परस्पर घृणा को उत्पत्ति समझ है। इसी साम्प्रदायिकता से दूधित होकर मुहम्मद अली साहब ने एक बार कहा था कि—एक इक्के बाला मुसलमान भी महात्मा गांधी से अच्छा है, क्योंकि वह कुरान, हजरत मुहम्मद पर विश्वास करता है। स्वामी जी ने ऐसे विचारों को मानवता के विरुद्ध समझा, इसलिये इसके लिये बौद्धिक क्रान्ति की। वस्तुतः यह साम्प्रदायिक विचार सत्ताज्यवाद तथा पूजोबाद से भी अधिक भयानक हैं जिसे दूर करने की चेष्टा १९ वीं शती में कार्ल मार्क्स ने की थी। इसी विचार के श्रुति ने भारत के बाहर से आने वाले मजहबों की आलोचना की—

कुछ लोगों का कहना है कि यह वैदिक धर्म कभी मिशनरी धर्म नहीं रहा है, यह स्वामी जी की देन है कि वे इस विध्वंसधर्म बनाता चाहते थे। किन्तु उनका यह कहना गलत है। बुद्ध और ईसा से बहुत पहले वेद धर्म प्रचारक विद्य के प्रत्येक हिस्से में गये, उन्होंने—'कुण्डन्तो विश्वमार्थम्' इस श्रुति से प्रेरणा ली। ये धर्म प्रचारक जहाँ कहीं गये धर्म के प्रचार के साथ ज्ञान और विज्ञान का भी प्रचार किया। तभी तो मूर्ख स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि भूगोल में जितनी विद्यायें फैली हैं वे सब आर्यावत्त देश से ही गयी हैं। "अरब और भारत के सम्बन्ध" पुस्तक के लेखक मोलाना मुसलमान गवामी ने लिखा है कि—भारत से मानवा



नामक वैद्य अरब में गये तथा उन्होंने ही आयुर्वेद के संस्कृत ग्रन्थों का अनुबाब अरबी अक्षरों में किया। मोलाना यह भी स्वीकार करते हैं कि-गणित विद्या का ऋषी अरब ही नहीं अपितु सारा यूरोप सृष्टि पर्यन्त रहेगा। क्योंकि भारतीय गणित विद्या अरब से स्पेन गयी, वहाँ से कारबोबा यूनवर्सिटी द्वारा सम्पूर्ण यूरोप में फँल गयी। जिस समय अरब अथवा स्पेन में (Zero) की परिभाषा तथा बीजगणित की पढ़ाई पर प्रतिबन्ध था। उस समय भारतीय ऋषि ज्ञान और विज्ञान का समन्वय कर रहे थे। वे ज्ञान तथा मानव विज्ञान की उन्नति को धर्म का बाधक नहीं, अपितु धर्म का पुरक समझते थे। गीताकार कृष्ण कहते ही हैं कि-ज्ञान तेज्ज स विज्ञानम् इव षष्पामि अर्थात् अर्जुन। तुम्हें ज्ञान और विज्ञान की सम्पूर्ण शिक्षा दूँगा।

महाविद्वान् मक्समूलर ने कहा है कि-प्रसिद्ध तत्व-वेत्ता मुकरात को आत्म ज्ञान की शिक्षा भारतीय पण्डित से प्राप्त हुई थी। पाइथागोरस सांख्य दर्शन से प्रभावित था। मेक्समूलर नाचा विद्वान की दृष्टि से पाइथागोरस को पृथ्वी गुप्त कहते हैं। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् बिन्डर विनिच ने कहा है कि-प्लेटो आदि ने ईरान में आकर भारतीय पण्डितों से अपने ज्ञान की प्रेरणा ली थी। एक सीरिया निवासी सन्त के कथन का उद्धरण देते हुये, स्वर्गिय प० अवाहरलाल नेहक (Discovery of India) (भारत की कहानी) में लिखते हैं कि-एक सीरिया निवासी सन्त ने यूनानियों के व्यवहार से तन होकर कहा था कि-“इन यूनानियों को अपनी विद्या का बड़ा घमण्ड है, इन्हें नहीं मालूम है कि भारत का ज्ञान कितना अपरि-मित है और विषयों की चर्चा न कर, वे (भारतीय) एक से लेकर नव तक अंक लिखना जानते हैं जो इन यूनानियों को नहीं मालूम है।”

पाठक यह न समझें कि ये भारतीय ऋषि अथवा मुनि, या धर्म प्रचारक विरब के और धर्मों से परिचित नहीं थे। समार में जहाँ कहीं भी नूतन विचार उ-पन्न होता था, उसे तर्कों की कसौटी पर कसते भी थे।

मोलाना मुसलमान नरबी कहते हैं कि-जिस समय पश्चिम भारत में (सौराष्ट्र) राजा सोमदेव राज्य करते थे कि उनके दरबार में यह चर्चा चली कि अरब में एक

धर्म चला है जिसका नाम 'इस्लाम' है वह बहुत अच्छा धर्म है। इस पर किसी ने बात काट कर कहा कि नहीं, इस्लाम अपनी खूबियों से नहीं अपितु तलवार से फँल रहा है। मोलाना साहब लिखते हैं कि-एक पत्र राजा ने खलीफा के पास अरब में भेजा तथा उतने लिखा कि- मैंने सुना है कि आपने इस्लाम एक नया धर्म स्वीकार किया है तथा तलवार की जोर से उसे फँला रहे हैं, यदि उसे तलवार की जोर से फला रहे हैं तो उसकी मुझे चिन्ता नहीं क्योंकि उसका प्रबन्ध कर लिया है। यदि, यह धर्म बुद्धि से फँलता है तो आप एक होशियार खानकार को भेजिये कि-हमारी गोष्ठी में इस्लाम पर विचार किया जाय। इस पत्र के अनुसार एक मोलवी कुरान का माहिर अरब के खलीफा के यहाँ से भेजा गया। वह जब दरबार में आया तो भारत के पण्डित ने पूछा कि-आप किस धर्म को मानते हैं। उसने उत्तर दिया कि इस्लाम को। इस्लाम किसे कहते पुन पण्डित ने पूछा-इस्लाम वह धर्म है जो एक खुदा को सब कुछ मानता है-सर्व व्यापक सर्व शक्तिमान् आदि। भारतीय पण्डित ने तर्क किया कि तुम्हारा खुदा सर्वशक्तिमान् है तो ऐसा पदार्थ बना सकता है जो उससे न उठे। यदि हा कहता है तो भी खुदा को सब शक्तिमत्ता जानी है यदि कहता है कि नहीं तो भी उसकी शक्ति मत्ता समाप्त है। अन्त में वह निवत्तर होकर चला गया।

महर्षि स्वामी दयानन्द ने लिखा है कि महात्मा बिदुर ने अरबी में लाशामुह का भेद युधिष्ठिर को बताया। इससे सिद्ध होता है कि भारतवर्ष के ज्ञानी अपने को भाषा की परिधि से दूर हटाकर सर्वभाषा में वैदिक उवाच विचार का प्रचार किया करते थे।

वैदिक ऋषियों तथा मुनियों से ही अनुप्राणित होकर जैन धर्म के प्रचारक हुये उनसे प्रेरणा लेकर बौद्ध धर्म के प्रचारकों ने बुद्ध यागो का प्रचार किया। ईसामसीह तो भारत में आकर पड़े ही थे, यह धाय निर्विवाद सिद्ध हो रहा है। क्योंकि ईसामसीह की बाव्यावस्था का इतिहास मिथ्या है। युवावस्था में वयन है कि मध्य में वह कहा था इसका उल्लेख ईसाई ग्रन्थों में कहीं नहीं मिलता है। इस पर लोगों का कहना है कि वे इतने विनीत तक भारत में ही पड़े रहे। वस्तुतः ईसाई धर्म का आचार तो



झंडा ऊंचा रहे हमारा

(पृष्ठ २५ का शेष)

पट्टवी धर्म का है तथा जिज्ञा सम्पूर्ण बुद्ध धर्म की है ।

निरुक्तं यह है कि—बहु बंदिक धर्म ही विश्व धर्म रहा है, इसी में योश्वता की है कि यह विश्व धर्म बने । स्वामी ब्रह्मण्य सरस्वती ने आर्यसमाज स्थापित कर इसे अनु-प्राणित कर विश्व धर्म बनाने का आवेक्ष किया । अतः हमारी समाजों को समाजों तथा प्रकारों को चाहिये वेव बाणी' को विविगन्त मे पहुँचा वें ।

अतः मे वेवध्यास की यह बाणी उद्धृत कर इस वृत्त को समाप्त कर रहा हूँ ।

मबन्तो बहुला' सन्तु वेव प्रसार्यता मयम् ।

महा० शा० पर्व

अर्थात् आप बहुत हों तथा इस वेव की विश्व मे फैलावें ।

इस कार्य में हमारा सहयोग महर्षि ब्रह्मण्य के प्रति सच्ची अर्पणजलि होगी ।

(पृष्ठ २९ का शेष)

हैं, उसमें डूब नहीं पाते, वैसे ही कल्याण प्राप्ति के लिये आप हमें पार लगा दें । अयज्ञिय पाश भी हमे बांधे हुए है । इन सभी पाशों से आप हमे मुक्त करें ।

अयज्ञिय पाश छुड़ाते नहीं, कस कर अकड़ लेते हैं । बोनो के नाना रूप अवनत एव उन्नत चेतना संपन्न प्राणियों में देखे जा सकते हैं । बोनो से ही छूटना मुक्ति है अथवा चेतना गति की पराकाष्ठा है । परम तत्व प्राप्ति की स्थिति भी अशुभ एव शुभ बोनो से पृथक् है । यदि हम इस स्थिति को प्राप्त करना चाहते हैं तो हमे अयज्ञिय एव यज्ञिय, अशुभ एव शुभ बोनो प्रकार के पाशों से मुक्त होना होगा । वेव ने अयज्ञिय पाशों को अयम एव मध्यम और यज्ञिय पाशों को उत्तम कहा है । पाश तो पाश ही है, बन्धन तो बन्धन ही है, बेड़ी तो बेड़ी ही है । फिर चाहे वह लोहे की हो अथवा स्वर्ण की । कारागार तो कारागार ही है । वह चाहे प्रथम श्रेणी का हो अथवा द्वितीय या निकृष्ट श्रेणी का, बेड़ियों में अकड़ा हुआ, कारागार में पड़ा हुआ प्राणी आनन्वी नहीं कहा जाता ।

विश्व सुरक्षित तथा सुख समृद्धि सम्पन्न हो, राजा की राज्य कार्य की तत्परता ही उसकी संश्लेषासना है" अर्थात् राज्य व राष्ट्र की सुरक्षा और बल सम्पन्न होना श्रेष्ठतम कर्म है अतः राष्ट्र यज्ञ है । द्वितीय यज्ञ का भाव है कि परहित मे अपने स्वार्थ का वृत्त करना । राष्ट्र की सबलता के लिये यह भावना अत्यन्त आवश्यक है । अतः राष्ट्रयज्ञ की सब मिलकर रक्षा करें । हमारे राष्ट्र का कोई भाग हमसे अप हृत कर छोटा न किया जाय अतः (पृथिवी) शम्भ कहा यानी हमारा राष्ट्र विशाल हो, हम अक्षय्य भारत के निभन्ता हों । हम मे प्राप्तीयता आवि के बोध न हों सारा ही भारत हमारा विशाल एक राष्ट्र है । राष्ट्र के अन्वर रहने वाले व्यक्तियों का कोई कार्य ऐसा न हो जिससे राष्ट्र अपमानित हो अपितु शोलोक, पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष लोक मे हमारे राष्ट्र का यश ध्याप्त हो । हम अन्तरिक्ष और धी में वैमानिक शक्ति सम्पन्न हों, जल धल में हमारी सेना अजेय होकर यश लाम करे । सारे ही परोपकारी और विद्वान् राष्ट्र ध्वज को एक भावना के साथ ऊंचा उठावें । श्रुति ने कहा है—“एक भाषा, एक मेव, एक भावना होने पर सागर मे नवियों के समान सारे ही सुख एकत्र हो जाते हैं ।” अतः हमारा झंडा सदा ऊंचा हो ।

जो स्वतन्त्र है, वही आनन्वी है । यह स्वातन्त्र्य प्रकृति के तीनों गुणों से पृथक् होने में है । बन्धन भी प्राकृतिक ही है । जीवका अपना बिगुड रूप प्राकृतिक नहीं चेतन है । यह चेतन आनन्दांश से वञ्चित है । अतः आनन्द की उपलब्धि ही मुक्ति है । अर्थ में वेव के शब्दों मे—“अज्ञित सत न अह्नि अन्त सन्त न पश्यति”—जीव निपट विपटी प्रकृति को डोहता नहीं और निकट ही विद्यमान प्रभु को देखता नहीं, यही उसकी सबसे बड़ी विपत्ति है । निवृत्ता-त्त्विका प्रकृति को छोड़ो और प्रभु का दर्शन करो । इसी मे कल्याण है ।



आर्योद्देश्य



पालन करिये वस नियमों का मला चाहते हो अपना ।
 जावागमनों के कठिन चक्र से मुक्ति चाहते हो अपना ॥
 सभी सत्य विद्या एव जिनका विद्या से होता नाव ।
 उन सब का ही आदिमूल केवल परमेश्वर को तू जान ॥
 ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप व निराकार सर्वशक्तिमान ।
 परम ब्रह्म अनंत अजन्मा निर्विकार है अकल अकाम ॥
 सर्वेश्वर आदि अनुपम है ध्यायक प्रभुवर सर्व अघार ।
 अजर अमर सर्वात्म्यामी अमय शुद्ध गुरु निराधार ॥
 युष्टिकर्ता अगत नियन्ता दयालु न्यायकारी आदित्य ।
 अद्विराम अक्षय्य अच्युत शिव अग्नि आदि कारण है नित्य
 वेद सत्य विद्या की पुस्तक निशिदिन पढो-पढ़ाओ ।
 ईश्वरोक्त स्वाध्याय ग्रन्थ है अनुपम सुनो सुनाओ ॥
 सत्य ग्रहण ही करो सर्वथा असत्यों से रहकर दूर ।
 सत्य प्रकाशवान हो अग मे चहूँ बिशा गूँजे भरपूर ।
 कोई कार्य करने से पहले सदा याव करो निज धर्म ।
 सत्यासत्य का विचार करके आरम्भ करिये अपना कर्म ॥
 ससार का उपकार करना मानव ध्येय प्रधान है ।
 सामाजिक शारीरिक आरिषिक उन्नति का ही विधान है ॥
 विद्व बन्धुमय अग को आनो यथायोग्य वर्तो सबसे ।
 धर्मानुसार प्रीति से रहिये प्राण रहें तन मे जबसे ॥
 अविद्या के नाश हेतु अपना सबस्त अर्पण करिये ।
 सर्वविद्या के प्रचारार्थ जीवन भी समर्पण करिये ॥
 अपनी ही केवल उन्नति से कभी नहीं सतोष करो ।
 सामाजिक व सर्वहितकारी नियमों में रहिये परतन्त्र ।
 प्रत्येक हितकारी नियमों में हरेक बांधव रहे स्वतन्त्र ॥

—डा० रामकेरन आर्य एम०डी०एच०, एम०एस्सी०
 (गोस्ट मैडलिस्ट) निवाजीपुर जमीयन वाराणसी ।

ब्रह्म कैसा ! है तू...



एक अल्हड युवक नव्य वेदान्ती,
 ऋषि बयानन्द के पास आने लगा ।
 और मैं ब्रह्म, मैं ब्रह्म मैं ब्रह्म हूँ,
 उच्च स्वर से यही रट लगाने लगा ।
 एक दिन कहि बताया महाराज ने,
 जीव औ ब्रह्म का भेव उसको मगर ।
 रञ्ज माना नहीं मूढ़ को और नी,
 हठ, दुराग्रह, डिटाई बिलाने लगा ॥
 फिर महाराज ने मुसकराते हुए,
 जब दिया एक, उसके चपत गाल पर ।
 रोष खाने लगा, तिलमिलाने लगा,
 धर्म्य मारा क्यों ! हूला मचाने लगा ॥
 वाक्य बोले महाराज, तत्काल ये,
 ब्रह्म तो है अरे ! शोक दुख से परे ।
 ब्रह्म कैसा ! है तू जो चपत एक में,
 बालकों की तरह बिलबिलाने लगा ॥

—प्रकाशचन्द्र कविरत्न अजमेर

आर्योपप्रतिनिधि सभा लखनऊ

इस सभा का मासिक अधिवेशन २५ अक्तूबर को
 आर्य समाज चौक में सम्पन्न हुआ । बृहदयजु, के ब्रह्मा
 जी प० रामचरित्र जी पाण्डेय थे—सन्ध्या, मन्त्रों-के उप-
 रागत श्री इयाममुन्दर जी शास्त्री का यज्ञ की महत्ता पर
 विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ । सनातन धर्मों पंडितों ने आज के
 दिन शास्त्रार्थ करने का निश्चय किया था, पर कोई भी
 पंडित आर्यसमाज से टक्कर लेने के लिए उपस्थित नहीं
 हुआ । सभा का आगामी मासिक अधिवेशन २९ नवम्बर
 को आर्यसमाज आवर्शनगर में होगा, और अन्तरग की
 बैठक १ नवम्बर रविवार को शाम को ६ बजे आर्यसमाज
 गणेशगज में होगी ।





आर्यसमाज है क्या ?



(से-डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालकार एम०ए० डी० लिट् अजमेर)

जिस आर्यसमाज ने भारत में नव जागृति एवं राष्ट्र-युगात्ता का सूत्रपात किया है, जिसकी विमल विचारधारा आज जन जन के मानस को उड़लित कर रही है, वह आर्यसमाज क्या ? आर्यसमाज कोई नया मत, सम्प्रदाय अथवा धर्म नहीं है। उसके प्रवर्तक श्रद्धा विद्यामन्त्र ने स्पष्टतया कहा है कि आर्यसमाज की स्थापना करके उन्होंने कोई नवीन पन्थ नहीं बलाया, अपितु प्राचीन वैदिक धर्म, वैदिक संस्कृति, सत्यता और परम्परा की पुनः स्थापना की है। उनका उद्देश्य केवल यह था कि समय बीतने के साथ-साथ सत्य सनातन धर्म और उसके अनुयायियों में जो अवैदिक भाव, अन्ध-परम्परायें, रुढ़ियाँ और सामाजिक कुरोतियाँ आ गई हैं, उन्हें दूर किया जाये और शुद्ध वैदिक धर्म जनसाधारण के सामने रखा जाये। इसी कार्य को पूरा करने के लिये श्रद्धा विद्यामन्त्र ने सन् १८७५ में बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी।

सत्य यह है कि वहाँ भी श्रद्धा कुछ दिन ठहर जाते और व्याख्यान अथवा शास्त्रार्थ द्वारा अपने विचार प्रकट कर देते, लोग उनके मन्त्र हो जाते और आर्यसमाज की स्थापना हो जाती। श्रद्धा के निर्वाण के बाद तो आर्यसमाजों की स्थापना की श्रुत बला बन गयी।

श्रद्धा विद्यामन्त्र की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वे प्रत्येक व्यक्ति और समाज की सर्वोत्तुष्टी उन्नति चाहते थे। वे चाहते थे कि व्यक्ति और समष्टि के शरीर मन और आत्मा सब स्वस्थ हों। उन्होंने स्वयं इस बात पर बल दिया और बाद में आर्यसमाज ने भी इस बात का ध्यान रखा। इसीलिए आर्यसमाज ने धार्मिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक सभी प्रकार के सुधारों के करने का यत्न किया।

आर्यसमाज की आधारशिला वेद है। श्रद्धा ने 'वेदों की ओर' का बिगुल बजाया था। हिन्दू जाति वेदों की मन्त्र थी, उन्हें ईश्वरकृत मानती थी, पर वेद हैं क्या, और उनमें है क्या, यह व जानती थी। एक विशेष धर्म

के अतिरिक्त न तो उन्हें कोई बेल सकता था, न सुन सकता था, न छू सकता था, पढ़ने की तो बात अलग रही ! स्त्री जाति वेद, यज्ञादि के पास भी न जा सकती थी ! वेदका माध्य किया और उनका द्वारा जनसाधारण के लिए खोल दिया। आर्यसमाज के प्रचार के कारण आज किसी भी वर्ग का कोई भी व्यक्ति वेद पढ़ सकता है, यज्ञोपवीत पहिन सकता है और यज्ञ कर सकता है। आर्यसमाज के तीसरे नियम 'मे श्रद्धा ने 'वेद का पढ़ना, सुनना, सुनाना आदि का परम धर्म' ही निश्चित कर दिया।

आर्यसमाज का आधार तर्क (बुद्धिवाद) पर है इस लिये वह धार्मिक-अन्धविश्वासों को नहीं मानता। वह अवतारवाद, मूर्तिपूजा, रुढ़िगत पूजा पाठ, जन्म-मरण जादू-टोने, कुत्रिम देवी देवताओं आदि में विश्वास नहीं करता।

आर्यसमाज का धर्म मन्त्रों तक ही सीमित नहीं, अपितु वह व्यक्ति और समष्टि के सर्वत्र और सदा साथ रहने वाली वस्तु है। आर्यसमाज मानता है कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक स्थान और प्रत्येक वया में धर्म का पालन करना चाहिए। सत्य का पालन उच्च आचरण का आधार है इसलिये श्रद्धा ने आर्यसमाज के चतुर्थ नियम में कहा है कि 'सत्य को ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये' और 'सब काम धर्मानुसार सत्य और असत्य को विचार करके करने सामाजिक क्षेत्र में आर्यसमाज मनुष्य मात्र की समता में विश्वास रखता है। उसकी दृष्टि में कोई किसी से ऊँचा नीचा नहीं। प्रत्येक को उन्नति करने का अधिकार है। वर्ण-व्यवस्था जन्म से नहीं होनी, गुण कर्म से होती है। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त कर उन्नति करने का पुरस्कार ही अधिकार है। सुद्व अथवा अछूत भी औरों के समान उन्नति करने का अधिकार रखते हैं। स्त्रियों, अनाथों अछूतों की उन्नति में आर्यसमाज ने अत्यन्त प्रसन्नोपकार कार्य किया है। बाल-



विवाह, अनमेल विवाह आदि सामाजिक बुराइयों को दूर करने का आर्यसमाज ने भरसक प्रयत्न किया है।

ऋषि ने ब्राजीवन सत्य मार्ग पर आचरण किया और आर्यसमाज के अर्पणित कार्यकर्तियों ने धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्रों में इसके अनुसार आचरण करते हुए धीरे धीरे सभ्यता के बीज बोने के काम में लगे हुए हैं।

राजनैतिक क्षेत्र में आर्यसमाज सदा 'स्वराज्य' का पक्षपाती रहा है। वह ऋषि के इस कथन में विश्वास करता है 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।'

ऋषि की यह उक्ति भी कि 'अत्याचार करने वाले की अपेक्षा अत्याचार सहने वाला अधिक पापी होता है' इसी ओर संकेत करती है।

आर्यसमाज धर्म, सभ्यता, संस्कृति, भाषा की एकता में विश्वास करता है। उसका विश्वास है कि बिना इसके राष्ट्र में ऐक्य नहीं हो सकता।

आर्यसमाज ने पश्चिम सभ्यता के चक्रावृत्ति में डालने वाले नैतिकवाद का और उसके तकसूय विद्वानों का बूझना से सामना किया। जन साधारण के सामने उसकी पोल खोलकर रखी। भारत देश की विधायियों के चण्डालों से फलने से बचाया। संक्षेप में आर्यसमाज ने उन सभी कार्यों की नींव डाली जो भारत को एक सुवृद्ध और समृद्ध राष्ट्र बना सकते हैं। आर्यसमाज ने महात्मा गांधी के मार्ग को प्रस्तुत किया था।

श्री आर्य० एम० परनेल, लाइसन आफिसर गियो. सोफिकल म्यूज एण्ड नोट्स लन्डन (जून १९५५) आर्यसमाज का परिचय इस प्रकार देते हैं—

“आर्यसमाज धर्म शान्ति, सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य और निरार्थिक भोजन पर अवलम्बित समाज-रचना का प्रतिपादन करता है। इस नियमों को स्वीकार करने वाला (और उन सिद्धान्तों को स्वीकार कर आचरण में लाने वाला, जिनकी महर्षि ब्रह्मन्व ने वेदों के आधार पर अपने ग्रन्थों में ब्याख्या की है) कोई भी व्यक्ति आर्यसमाज में प्रविष्ट हो सकता।

बर्गॉलियम कोम के शब्दों में—

“आर्यसमाज वेदों की ओर चले आन्दोलन का प्रतिनिधित्व करता है। जिसके स्थापक ने वेदों से निकाल

कर ऐसी बातें प्रकाश में लायी हैं, जिनको आधुनिक भारत में मान्यता प्राप्त है। उन्होंने वेदों के आधार पर एकेध्वरवाद को सिद्ध कर दिया और विविध वैदिक देवताओं को सच्चे परमात्मा के ही विशेषण बताकर बहुदेवतावाद की मान्यता की निस्तारता प्रतिपादित कर दी है। आर्यसमाज कर्मफल और, मुक्ति में विश्वास रखता है। आवागमन के चक्र से छूट जाना मुक्ति है।

‘दयानन्द उच्चकोटि के राष्ट्रवादी थे। जनका आर्य समाज आन्दोलन भारत में आधुनिक राष्ट्रियता एवं जागृति का कारण रहा है।

जैसा कि श्री के० एम० मुन्शी जी ने अपने एक लेख में लिखा था तथा भारत के राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद जी ने अपने मधुरा सम्मेलन के भाषण में कहा था, भारत में राष्ट्रियता एवं स्वतन्त्रता के सर्वप्रथम स्वप्न-बुद्धि ऋषि ब्रह्मन्व ही थे। उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने काँग्रेस से भी पहले भारतीय जनता के हृदयों में देशभक्ति का बीज बोया था। आर्यसमाज के उपदेशकों और प्रचारकों ने स्वयं स्वान पर घूमकर लोगों में स्वराज्य की, स्वतन्त्रता की, स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग की, एवम् देशभक्ति की भावना को जागृत किया था, यही कारण था कि जब सन् १९२१ में महात्मा गांधी ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया था तो देशभक्ति की भावना से अंत-प्रोत्तेजित जेल में जाने वाले लोगों में ६० प्रतिशत से अधिक आर्यसमाजी लोग ही थे। इसी प्रकार शराब की बूकानों पर बरना देने वाले और ग्राम ग्राम में असहयोग आन्दोलन और प्रचार करने वालों में अग्रणी सामाजिक पुरुष ही थे। इसी प्रकार अछूतों के कार्य में जो सफलता महात्मा गांधी की बाब में मिली, वह कदापि न मिलती यदि स्वामी ब्रह्मन्व और आर्यसमाज अपने प्रचार से अछूतों के लिये मृत्ति तैयार न कर देता। इस बात को महात्मा गांधी जी ने स्वयं भी स्वीकार किया।

इसीलिये सन् १९११ की भारत की जनगणना की रिपोर्ट में ब्रह्मन्व महोदय ने लिखा था कि ‘आर्यसमाज १९ वीं शताब्दी का महानतम भारतीय आन्दोलन है।’ नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने भी एक बार कहा था—‘सामाजिक कार्य, बुद्धि, उत्साह और समन्वय की भाषा की दृष्टि से



ऋषि का अद्भुत कार्य



[ले०—श्री सिधकुमार जी शास्त्री काव्यतीर्थ मु०अ०गु०गु०श्यालपुर]

ज्ञानोपाजन करके ऋषि दयानन्द जब वैदिक मत का प्रतिपादन करने कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुए तो उस समय वैदिक धर्म की दशा एक प्राण बिहीन कलेबर के समान थी। कहां तो इस धर्म का वह विषय स्वरूप या कि विशिष्ट आक्रान्ता सैनिक शक्ति से इस देश को पावा कान्त करके भी वैदिक धर्म के गुणों पर मुग्ध होकर आर्य बन गये और गुण कर्मानुसार यहां के वर्णों में घुल-मिल गये। आज इनकी एक इतिहास के विद्यार्थी के अतिरिक्त कोई ज्ञानता भी नहीं। किन्तु ऋषि के समय यह एक मुर्दा था। उसमें किसी वस्तु को आत्मसात् करने की क्षमता नहीं थी। इस बात की पुष्टि के लिए एक उदाहरण देना ही पर्याप्त होगा।

फ्रांसीसी यात्री बर्नियर ने लिखा है कि वह एक बार दारानिकोह के साथ काशी गया, दारा ने काशी के बड़े-बड़े विद्वानों को इकट्ठा किया। बर्नियर ने भी इन मूर्खगण विद्वानों से कुछ सामान्यतः होना चाहा। उसने उन विद्वानों से पूछा कि जिस धर्म के आप अनुयायी हैं वह धर्म कौसा है? विद्वानों ने उत्तर दिया कि वह सत्तार का सर्वश्रेष्ठ धर्म है। बर्नियर ने यह उत्तर सुनकर उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि क्या आप मुझे अपने धर्म में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्रदान कर सकते हैं? काशी

आर्यसमाज की समता कोई समाज नहीं कर सकता। महारामा गांधी जी ने भी लिखा था 'मेने देखा है, जहाँ जहाँ आर्यसमाज है, वहाँ वहाँ जीवन ज्योति है।'

इसीलिये कहा गया है—

यह आर्यसमाज जगत् भर में,
जीवन की ज्योति जगायेगा।
सद्भाव, शान्ति सुख जगती में,
सच्ची मानवता लायेगा ॥

के विद्वानों ने कानों को हाथ लगाकर उत्तर दिया। हम कब कहते हैं कि यह सबके लिए श्रेष्ठ है।

हमारा कहना तो यह है कि यह हमारे लिए सबसे अच्छा है। आपके लिए तो वही अच्छा है जो आप मानते हैं।

जैसे मृत शरीर से दुर्गन्ध उत्पन्न होकर अनेक प्रकार के रोगों को जन्म देती है, उसी प्रकार यहाँ के पाँगा पण्डितों के बुद्धिहीन तथाकथित धार्मिक व्यवहारों से समाज शरीर में अनेक प्रकार के रोग फैल रहे थे।

शक सम्बत् १८४९ के माघ मास में प्रयाग में पंडितों की एक सभा हुई इस सभा में ४८ घण्टे इस बात पर विचार होता रहा कि 'अमोनारायण' मन्त्र सबको दिया जावे या नहीं? और दिया जाय तो ओंकार सहित अथवा ओंकार रहित, ४८ घण्टे के विचार के परश्चात् भी निर्णय नहीं हो पाया।

शक सम्बत् १८५० के आश्विन मास में काशी में एक ब्राह्मण सम्मेलन हुआ इसकी बैठकें सात दिन तक होती रहीं लगभग ३०० पण्डितों ने भाग लिया और विचार विनिमय किया, बड़े सचयों के परश्चात् इस सम्मेलन में यह निश्चय किया कि रजोवर्जन के परश्चात् कन्या को ब्रह्मोत्सव प्राप्त होता है और प्रायश्चित्त से उसकी निर्बन्धि नहीं होती। अर्थात् रजोवर्जन के परश्चात् कन्यादान अवर्ध है। (२) उपजातियों में विवाह नहीं करना चाहिए पुत्र लभानों और अस्पृश्यों की अस्पृश्यता जन्म से है।

ईता की नहीं शताब्दों से लेकर बारहवीं शताब्दी के मध्यभाग तक संस्कृत के बड़े-बड़े विद्वान् हुए और उन्होंने बड़े बड़े ग्रन्थ भी लिखे। किन्तु विदेशियों के द्वारा हमारे समाज पर जो प्रहार हो रहे थे—उनसे समाज की रक्षा के लिये उन विद्वानों ने कहीं एक शब्द भी नहीं लिखा।

यहाँ पाठकों की जानकारी के लिये कतिपय प्रसिद्ध विद्वानों के नाम उनके रचित ग्रन्थ और काव्य कब बरलेख किया जाता है।



नाम	स्थान	समय	ग्रन्थ
मेघातिथि	मिथिला	१००	मेघातिथि मास
विज्ञानेश्वर	कल्याणखेवार	११००	मिताभरा
लक्ष्मीधर	कन्नौज	१३४३	स्मृति कल्पतरु
हलायुध	बंगाल	१२००	ब्राह्मण सर्वस्व
वेक्षण मट्ट	दक्षिण भारत	"	स्मृति चन्द्रिका
हेमाद्रि	देवगिरि	१२६०	चतुर्वर्ग चिन्तामणि
कुल्लूक मट्ट	काशी	१०००	मन्वर्थ मुक्तावलि
वीरमित्रोदय	मिथिला	१३००	वीरमित्रोदय
माधवाचार्य	बिजयनगर	१४००	पाराशर माधव
नीलकण्ठ	कॉकण	१०००	मयूख
अपरार्क	काशी	१४००	अपरार्क
चण्डेश्वर	बंगाल	"	स्मृति रत्नाकर
ओमृतवाहन	"	"	धर्मरत्न
रघुनन्दन	"	१६००	स्मृतिरत्न
कमलाकर	काशी	"	निर्णयसिन्धु
नीलकण्ठ	"	११६१	भगवन्त मास्कर

मेघातिथि के पण्डित का विद्वान् लोहा मानते हैं। विज्ञानेश्वर की मिताभरा महाराष्ट्र के हिन्दू कानून के रूप में प्रचलित रही है। चतुर्वर्ग चिन्तामणि में हेमाद्रि ने दान, तीर्थ और मोक्ष जैसे विषयों के वचन सहीत किये हैं। कुल्लूक की मनुटीका सर्वाधिक प्रसिद्ध है, माधवाचार्य का पाराशर माधव पाराशर स्मृति में भी अधिक प्रचलित है।

किन्तु किसी भी लेखक ने यवनों के अत्याचारों से वेसा में जो हाहाकार मचा हुआ था उसकी ओर दृष्टिपात् नहीं किया। हिन्दुओं को अपनी कुरीतियों को छोड़ने की प्रेरणा करनी चाहिये थी। उस समय के राजा तक अल-कार शास्त्र का निर्माण करते थे। उनकी दृष्टि में सेनापति से राजकवि का अधिक महत्व था, और राजाओं के लिये रणनुमि से रणनुमि अधिक प्रिय थी।

और तो और भी शकराचार्य का क्षेत्र उत्तर भारत था और मुहम्मद बिनकासिम के आक्रमण भी उत्तर भारत में हुए। किन्तु आचार्य ने उनके लिए कहीं एक शब्द तक नहीं लिखा। उनके विचार कितने सकोप थे इसका नमूना उनकी प्रश्नोत्तरी के स्त्री विषयक प्रश्नोत्तरी से और वेदान्त वर्धन के "अध्याध्यायन प्रतिषेधात् स्मृतेरथ"

सूत्र के ऊपर लिखी टिप्पणी से बल सकता है।

बिजयनगर के प्रधानमंत्री माधवाचार्य के ग्रन्थ में तो थोड़ा बहुत परिस्थितियों का विवेचन तो होना ही चाहिए था।

किन्तु बात वही थी, उनकी दृष्टि में धर्म इस लोक में आने वाली वस्तु न थी न उसके लिए यह आवश्यक था कि उसका बुद्धि से कोई तालमेल बैठता है या नहीं? उस समय धर्म के नाम सब सौदा उधारलाते निकला था। नकव उसकी एक कोड़ी भी न मिलती थी। सबका फल परलोक में मिलता था, इस लोक में नहीं। सत्य बोलना धर्म है। क्या लाभ है इसके? इसका लाभ परलोक में प्राप्त होगा।

ऋषि ने इस विगमोह को दूर करने के लिए ऋषि कणाद के शब्दों को स्मरण करगया—“यतोऽभ्युदय नि श्रेयस-सिद्धि सधर्म” धर्म से लोक और परलोक दोनों मुषरने चाहिए। धर्म का प्रथम फल अभ्युदय होना चाहिए और दूसरा नि श्रेयस। वस्तुतः अभ्युदय के बिना नि श्रेयस ही नहीं सकता।

दूसरे सनातन धर्म वह हो सकता है जो सब समयों की समस्या का समाधान करने की क्षमता रखता हो। जो धर्म आज की अडचन को दूर नहीं कर सकता। उसे आज जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं वेद में सनातन धर्म की परिभाषा इस प्रकार की है—

“सनातन धर्मो न माहृकताः स्यात् पुनणव ।” सनातन उसे कहते हैं जो सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है किन्तु अगर कोई नवीन परिस्थिति आती है तो उसके लिए पुन नव फिर नवा ऋ धारण करके सामने आता है।

बस हमारे धर्म की यह क्षमता नष्ट हो गई थी। दूसरे शब्दों में धर्म का नाम तो था उममें प्राण नहीं थे। बलपूर्वक मुसलमान बनाया हुआ एक हिन्दू बार बार दुहाई दे रहा है कि यह कुकृत्य मुझसे बलपूर्वक कराया है। इसमें मेरा क्या अपराध है? आप जो चाहे मुझसे प्रायश्चित्त करा लें किन्तु धर्माचार्यों का एक ही उत्तर था कि बस तुम पतित हो गये। गोरी ने अपनी फौजों के सामने गोएँ खड़ी कर लीं और उन्हें देखकर हमारे सिपाहियों ने अपनी तलवारें म्याम में डाल लीं। उस समय



किसी धर्माचार्य ने यह व्यवस्था नहीं की पराधीनता सबसे बड़ा पाप है उससे बचो। युद्ध में कुछ गोर्ख बलिदान हो गयीं तो विजय प्राप्त करने पर शेष गोर्खों का जीवन तो सुरक्षित हो जायेगा। श्रेष्ठ पाराशर ने अपनी स्मृति में यह व्यवस्था ही की है।

“गवा सरक्षणार्थान् दुष्येद्रोधबन्धयो बद्धछानु नक्त द्विधात् कामाकामरतहि तत्” अर्थात् लक्ष्य यदि गोर्खों का सरक्षण है तो फिर रोध, बन्ध और बध में भी कोई दोष नहीं है।

श्रेष्ठ और आर्यसमाज ने उस भ्रान्ति का निवारण किया और उसका प्रभाव दिलाई दिया। सन् ४६ में नोवाक्काली बगाल में बलपूर्वक मुसलमान बनाये गये हिन्दुओं पर उस समय काशी की बिद्वत्सभा ने १० प्रस्ताव पास किये, जिनमें से एक प्रस्ताव यह था कि ये हिन्दू वास्तव में मुसलमान बने ही नहीं जबकि उनकी मन स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। अतः उनको अपने धर्म में सम्मिलित करने के लिए शास्त्रीय शुद्धि विधान की कोई आवश्यकता नहीं। ये तो केवल गवाजल छिड़क-कर के ही पवित्र कर लेने चाहिए।

यह है इस युद्ध में प्राणों का संचार बस्तुतः यह बहुत बड़ी भ्रान्ति है।

अतः श्रेष्ठिधर ने तो आपको पण्डितराज जगन्नाथ के उन शब्दों में श्रद्धाजलि देता हूँ।

तोयैरत्पेरपिकरुणया मीममानो निवाधे, मालाकर ध्वरचि मबता या तरोरज्यगुष्टि ।

सा कि सख्या जनवितुमिह प्राबुधेभ्येन वाराम्, धारा सारानवि विकिरता विद्वतो वारिवेन ॥

हे माली मयकर झुलसाने वाली गर्मी के दिनों में पानी के छोटे छोटे घड़ों से साँच कर उस सूख को जो तूने जीवनदान दिया। उरुकी तुलना मूसलाधार पानी बरसाती हुई वर्षा श्रेष्ठु की धनयो-घटाए नहीं कर सकती। क्योंकि इस सुखमय समय के दान तुम्हारी कृपा से ही हो रहे हैं।

यही बात बिल्कुल इन्हीं शब्दों में श्रेष्ठि की कही जा सकती है कि—स्वतंत्रता और भारत की भौतिक उन्नति की योजनाओं का श्रेष्ठि चाहते कोई ले ले, पर यदि उस समय भारत को तुमने न बचाया होता तो उसे देखने यहाँ कौन बचता। श्रेष्ठिधर तुम धन्य हो!

आर्यमित्र की उन्नति के लिए—

डा० सूर्यदेव शर्मा स्थिर निधि

अन्तरंग सभा दि० १-५-६३ के निरवधानुसार

विषय सख्या २४ थी व० सूर्य देवजी शर्मा एम.-ए० अजमेर का आर्यमित्र सहाय-तायं धन दिये जाने विषयक पत्र बिचारायं प्रस्तुत होकर श्री शर्माजी का पत्र पढ़ा गया। निरवध हुआ कि बानी सज्जन की निम्नशर्तों के लिये



श्री डा० सूर्यदेव श्री शर्मा दान लेना स्वीकार किया जाये। धन प्राप्त होने पर एफ० डी० में जमा किया जाए।

- १—इस निधि का नाम डा० सूर्यदेव स्थिर निधि होगा।
- २—इस निधि की धन राशि स्थायी रूप में सभा में पृथक जमा होगी।
- ३—इसके ध्याज से प्रति वर्ष सार्वजनिक सत्याओं, पुस्तकालयों एवं वाचनालयों को आर्यमित्र लागत मूल्य में दिया जाया करेगा। कर्त्तव्य में श्रेष्ठ धन आर्यमित्र की उन्नति में लगाया जायेगा।
- ४—वर्ष में कम से कम दो बार जनवरी, जुलाई मास में इस निधि की सूचना प्रयुक्त शर्तों के साथ 'आर्यमित्र' में प्रकाशित होगी।
- ५—सम्मान रूप में 'आर्यमित्र' सभा बानी सज्जन को जेजा जाया करेगा। जहा-जहाँ आर्यमित्र जायेगा, उसकी सूची बानी सज्जन के पास भेजी जाया करेगी।
- ६—आर्यमित्र का प्रकाशन बन्द हो जाने पर इस निधि का ध्याज वैदिक साहित्य प्रकाशन में लगाया जायेगा।

—अप्रवचत तिबारी

मन्त्री, कार्य प्रबन्धि विभा, कलकत्ता ।



समाज का वर्तमान रूप बदलना होगा

[ले०—पी विश्वम्भर सहाय जी 'प्रेम', मेरठ]

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि ब्रह्मन्व सरस्वती ने आर्यसमाज का मूलाधार मानव जीवन की पवित्रता माना था। ऋषि चाहते थे कि वेदानुकूल आचरण करने वाले आर्य इस देश को पतन के गर्त से निकालकर उन्नत करें और जो देश सत्सारा भर में अपने चारित्रिक बल पर सर्वश्रेष्ठ रहा, वह अपनी पुरव प्रतिष्ठा को पुन प्राप्त करने में सफल हो।

मुझे स्मरण है कि जब से पचास वर्ष पूर्व जो व्यक्ति आर्यसमाज में प्रवेश करते थे, वे चरित्रवान् और अपनी बात के सच्चे होते थे। वे अपने आचरण में कोई भी ऐसी बात नहीं आने देते थे, जिसे धर्म के विरुद्ध समझा जाता हो। उस समय के आर्यसमाजी ब्रह्मजुकूल आचरण करना अपना कर्तव्य समझने लगे थे और वे अपने व्यवसाय में पूर्ण ईमानदारी बरतने का यत्न करते थे।

इस प्रकार के आर्यसमाजियों ने समूचे राष्ट्र को एक नई दिशा का ज्ञान कराया। उसमें जहाँ धार्मिक व्यवहार की बात थी, वहाँ उसी के साथ साथ आर्यसमाज ने राष्ट्रिय चेतना के लिये भी विचार दिये। उन दिनों राष्ट्रिय विचारों की बात करना एक प्रकार का खतरा मोल लेना था क्योंकि १८५७ के आन्दोलन को बहाकर अंग्रेज शासक काफी कठोरता से शासन चला रहे थे।

आर्यसमाज ने जनता के नैतिक बल को बढ़ाया। आर्यसमाज में आने वाले लाखों नर-नारियों के विचार परिष्कृत हुए और उनमें धार्मिक भावनायें जगीं। आर्य समाज ने किसी एक स्थान में नहीं किन्तु अपने देश के प्राय सभी भागों में सामाजिक जीवन में परिवर्तन लाने का यत्न किया। सबसे बड़ी समस्या आर्यसमाज ने उस समय यह सुलझाई कि सामाजिक बन्धनों और आर्थिक कठिनाइयों के कारण जो हिन्दू, मुसलमान या ईसाई बन रहे थे, उनको सावधान किया। इतना ही नहीं किन्तु उनको सब प्रकार की सहायता भी दी। इस प्रकार आर्य समाज ने अपने देश के सामाजिक जीवन को उन्नत करने

का यत्न किया।

जब हमें आज की स्थिति की बेखना है। परन्तु सोलह वर्षों में जहाँ हमारे देश ने स्वतन्त्र होकर सत्सारा के बड़े देशों के समान राजनीतिक क्षेत्र में अपना सम्मान बढ़ाया, वहाँ अपने नैतिक बल और आचार-विचार को काफी गिरा लिया। जो बातें सबसे बीस पचास वर्ष पूर्व कल्पना में भी न आती थीं, वे सामने आ रही हैं। छोटे से बड़े तक में इस समय धन कमाने की दौड़ ही लगी हुई है। आज कुछ लोग ऐसे हैं जो धर्म और ईमान को बेचकर मालवार बन जाना अधिक पसन्द करते हैं। उनको न समाज की चिन्ता है और न राष्ट्र की।

आज सामाजिक जीवन इतना अस्त व्यस्त हो गया है कि उसमें सच्चे और ईमानदार व्यक्तियों को गुजारा करना कठिन हो रहा है। मानव जीवन के लिये जिन वस्तुओं की आवश्यकता हैं, वे भी शुद्ध मिलनी दुर्लभ हो गई हैं। मिलावट ने सारे ही राष्ट्र को चिन्ता में डाल दिया है। यदि बेला जाय तो सात्विक प्रवृत्तियों का अभाव सा होता जा रहा है। आर्य समाज जिन धार्मिक विचारों को फँलाकर जनता में शुद्ध विचारों को लाने का यत्न करता था, वे विचार भी आज कोई सुनने को तैयार नहीं।

फिर भी आवश्यकता इस बात की है कि आर्यसमाज ऋषि ब्रह्मन्व के विचारों को फँलाने का यत्न करे। आज भी आर्यसमाज का व्यापक सगठन यदि सक्रिय हो जाय तो सामाजिक जीवन में एक बड़ा परिवर्तन ला सकता है। चरित्र बल के सहारे जिस आर्यसमाज ने सामाजिक-कुरीतियों मिथ्या-विश्वासा और विधियों के कुचक्रों से अब से ५० साठ वर्ष पूर्व मोर्चा लिया था, वह आज भी वर्तमान भ्रष्टाचार और सामाजिक दोषों से दूर करने में सफलता प्राप्त कर सकता है।

समझा ऐसा जाना है कि इस समय आर्यसमाज में
(शेष अगले पृष्ठ पर)



(पृष्ठ ३९ का शेष)

पहले जैसी तेजस्विता नहीं, उतसाह नहीं और नैतिक बल नहीं। यह बात किसी अज्ञ तक ठीक है परन्तु हमें समझना चाहिये कि आर्यसमाज में आज भी सपत्नी और ईमानदार व्यक्ति हैं। आर्यसमाज में काम करने वाले लोगों व्यक्ति आज भी ऐसे हैं जो ईमानदारी से अपना निर्वाह करते हैं। और आर्यसमाज में आज भी ऐसे व्यक्ति मिलेंगे जो पीड़ित मानवों की भलाई में अपना समय लगाने को तैयार हैं।

आर्यसमाज यदि सगठित रूप से जनता के कष्टों को दूर करने में सहायता करने का कोई कार्यक्रम बनाये तो कोई कारण नहीं कि दुखी जनता उसकी ओर आकर्षित न हो। मैं यहाँ किसी भी राजनैतिक दल की आलोचना नहीं कर रहा है परन्तु अपने अनुभव से इतना कहना आवश्यक समझता हूँ कि देश के प्रायः सभी राजनैतिक दल चरित्र-निर्माण की दृष्टि से मौन धारण किये हुए हैं। राजनैतिक प्रवाह में बहकर वे अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिये अनुचित और उचित दोनों प्रकार का मार्ग अपनाने को तैयार हैं। ऐसी बरा में आर्यसमाज यदि जनता की कठिनाइयों को दूर करने में सहायता देता है और जनता को गलत मार्ग पर चलने से सावधान करता है, तो सचमुच इस युग की एक बड़े काम की पूर्ति करता है। इस समय राष्ट्र के चरित्र की रक्षा करना एक महान्

कार्य है। आर्यसमाज इसे अपने ऊपर उठाये, यह आर्य समाज का गौरवपूर्ण कदम होगा।

महर्षि दयानन्द के वीर सैनिकों की अपने आचार्य के प्रति यह सच्ची और सामयिक भद्राञ्जलि होगी।

सभा का नवीन प्रकाशन

पृथिवी माता की महिमा के उपरान्त आ० प्र० सभा का प्रकाशन-विभाग महान् दयानन्द शीर्षक एक अत्यन्त मौलिक एवं अनुसंधान पूर्ण पुस्तक प्रकाशित कर रहा है। इस पुस्तक में श्रद्धा दयानन्द के धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय क्षेत्रों में किये गये महान् कार्यों का विग्वर्शन कराया गया है। लगभग ७० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य केवल ३७ न.पं. मात्र होगा।


पुस्तक में आर्डर भेजने वाले आर्यसभाओं की पुस्तक २५ प्रतिशत कमीशन काट कर भेजी जायेगी।

शिवदयालु

अधिष्ठाता घासीराम प्रकाशन विभाग,
आ० प्र० सभा, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

लक्ष्मणधारा

हमेशा पास रखिये



दैनिक, रोज, दल, पेट का दर्द, भी
निष्पत्ता, कफ, सर्दी, बुखार, मरामि,
ज्वर आदि रोगों से बचने के लिए सप्ताह
की सिद्ध मरामि।

रूप बिलास कम्पनी लखनऊ

विशेष हाल जानने के लिए सूचीपत्र मुफ्त !

आवश्यकता है

सुन्दर, गृह कार्यों में दक्ष कुलीन
राजपूत कन्याओं (१) बी ए बी टी.
आयु २६ वर्ष (२) एम एस सी. (फर्ट
कलास) आयु २४ वर्ष के लिए योग्य,
स्वस्थ कुलीन आर्य वरों की।

पत्र ध्यवहार निम्न पते पर करें—
रणजीतसिंह द्वारा आर्यनिष्ठ
५ धीरारबाई मार्ग लखनऊ



दिवाली का सन्देश और एक टीस



(रच०—श्री वेंच राजबहादुर जी आर्य "सरत")

(१)

(७)

आकर के प्रतिवर्ष दिवाली देतो है तुमको सन्देश—
गति बिधि मूल रहे तुम अपनी भूले ऋषिबर का उपदेश—
यद्यपि थोड़े थे हम रहिले किन्तु टीस थी और लगन—
नहीं थकावट कभी व्याप्तो कार्य मे थी सतत लगन ।

(२)

आर्य पणिक थे लेखराम लाजपतिराय शेरै पञ्जाब—
माधोसिंह नायमल आदिक रहा कार्य करने का चाव—
हसराम आर्यमुनि अमोचन्द बस्तोराम वशानानन्द,
गणपति तुलसीराम श्रद्धानन्द गुरुवत् और सर्ववानन्द ।

(३)

निरमूल लोटे नहीं कहीं से पुष्कल ही घन लाते थे—
जहाँ पहुँच जाते थे जन श्रद्धा के पुष्प चढाते थे ।
नहीं संस्कृत का प्रचार था तो भी गुरुकुल खूबवाये—
और उन्हीं के बच्चे लेकर उनमे बाखिल करवाये ।

(४)

धर्म कर्म के बीचाने उज्ज्वल चरित्र के घनी सदा—
यद्यपि राज्य पराये मे थे तो भी रहती बनी सदा ।
वृत्तधारी उपकारी निशिविन पाला ऋषिबर का आवेश—
रहा लक्ष्य जीवन मे उनका ऊँचा होवे अपना देश ।

(५)

नहीं रहे वह पद के भूँसे और न अधिकारों का घ्यान
मन्त्री बने प्रधान न सोचा कहीं हो रहा कितना मान ।
बिन्ता थी तो यही देश मे होवे वैदिक धर्म प्रचार—
गुरुवत् गढ़ पालण्ड पुराणादिक मिट जाये अष्टाचार ।

(६)

किन्तु आज विपरीत दसा जान कही नो जाती है—
देख देख कर डग अबस्था कुछ लज्जा सी आती है ।
यद्यपि सख्या बहुत बढ़ गई किन्तु न बोले उतना कार्य—
भूल रहे वैदिक परम्परा और बन रहे अम्यत्रहार्य ।

करते सदाग्रह हिन्दी पर गीत संस्कृत के गाते—
किन्तु गुरुकुलों से बच्चे अपने न देखने मे आने ।
बच्चे अंग्रेजी पढ़ने हे और तिनमे जाते हैं—
कोट पेन्ट टोप मे सदा अंग्रेज दृष्टि ही आते हैं ।

(८)

वस्त्र पहनते किन्तु जेनेऊ के घागे न दिखाते हैं—
बाल रसे हैं किन्तु शिशा का निहल न शिर पर पाते हैं ।
संध्याकाल चित्रपट देख अनिहोत्र निगरेटो मे—
घरती अम्बर का अन्तर हे आज बाप भी बेटो मे ।

(९)

वैदिक शिक्षा सरकार नहीं पश्चिम माया का उपयोग—
चले गये अंग्रेज न छूटा अंग्रेजी दुष्टा का रोग ।
हे चरित्र का पाठ कहा सावा जीवन का कहा विचार—
फिर कहिये बन जाय कैसे सन्तानो के सत्य विचार ।

(१०)

विलासिता जीवन मे कयाओ को आप फसाने हैं—
देश पुराने को तन्नने मे हा हा हम न लज्जाते है ।
पतिव्रताओ क से सदा जीवन उच्च विचार कहा—
वेबी लेडी बनती जाती पिराचोन व्यवहार कहा ।

(११)

लेख कलेबर ब्रह्मा जाता, दशा देख मन होता सिद्ध—
दयानन्द के रन्ध्रों से अब विचार पाता हू मित्र ।
अरे न लज्जा आतो हमको विसरते जाते निज टेक—
इसीलिए क्या ? दयानन्द ने विप के प्याले पिये अनेक ।

(१२)

स्याग अवधिक परम्पराएँ करो ऋषि मिशन पूरा आज—
तमी जगत मे कहलायेगा सच्चा वैदिक आर्य समाज ।
सुघरें स्वयं और भी सुघरेंगे तब मुन वैदिक उपदेश—
“सरस” बिवाली दीवो मे खोजो ऋषि का अन्तिम सन्देश ।





आर्यसमाज की वर्तमान युग में आवश्यकता

(ले०-डा० हरिवल्ल जी शास्त्री, वेदान्ताचार्य एम०ए०, पी०एच० डी०,
एकादशतीर्थ, अध्यक्ष सङ्कत विभाग, वयानन्द कालेज कानपुर)

महर्षि वयानन्द सरस्वती ने 'आर्यसमाज' को सुधार करने के लिए ही स्थापित किया था। मानव-समाज में जो बुराईयाँ हैं उनको दूर करना ही आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है।

कुछ लोग यह कहते हैं कि अब तो भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया है इसलिए आर्यसमाज की कोई आवश्यकता नहीं है। जो लोग ऐसा कहते हैं वे भूल करते हैं क्योंकि अभी समाज में अनेको दोष हैं जिनका दूर करना 'आर्यसमाज' का कर्तव्य है। 'आर्यसमाज' कोई सम्प्रदाय या मत नहीं है वरन् यह एक सुधारक सत्वा है। आर्यसमाज ने सर्व प्रथम धार्मिक जगत में क्रांति सञ्चार दी, क्योंकि धर्म के नाम पर इस जगत में अनेको दोष हैं। इसलिए महर्षि वयानन्द जी सरस्वती ने जीवन वर्धन धार्मिक सुधार किया, यनेकों शास्त्रार्थ किये। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के उत्तराद्वैत भाग अर्थात् ११ वें से ४ सप्तमोऽंश तक पौराणिक, नास्तिक, बौद्ध, जैन, ख्रिश्चियन और मुहम्मदी मत की प्रबल शब्दों में आलोचना की है। इससे धार्मिक जगत में अनेको सुधार हुए। अनेक पौराणिक प्रस्तर पूजा, अवतारवाच, जन्मान् वर्णव्यवस्था, बाल विधवादी, तीर्थों में मिथ्या विश्वास को परित्याग करके वेदों का प्रचार करने लग गये हैं। ईसाई और मुसलमान बड़े प्रबल वेग से हिन्दू जाति को हूबपने में लाने के लिये उनका प्रवाह अवश्य कुछ काम हो गया है। अभी भी 'कृष्णतो विश्वधर्मार्थम्' के अनुसार सम्पूर्ण विश्व को आर्य बनाने का कार्य शेष है। अत आर्यसमाज की वर्तमान युग में अत्यन्त आवश्यकता है।

हिन्दुओं से जो मुसलमान, ईसाई हो गये हैं उनको अभी सुद्ध करके हिन्दू जाति में मिलाने का कार्य शेष है। इस देश में दक, दूषण, अज्ञान, यथन प्रभृति अनेकों विदेशी



लेखक



आये और वे राजपूत ब्राह्मणों में ऐसे मिल गये कि उनका पता भी नहीं चलता है।

आज हिन्दू जाति की पाचन शक्ति निर्बल हो गई है अन्धधा काश्मीर और पूर्वी पाकिस्तान की समस्या हल हो गई होनी क्योंकि इन दोनों स्थानों में सब मुसलमान हिन्दुओं से बने हैं।

आर्यसमाज के प्रमुख कार्यों को हम ५ भागों में विभक्त कर सकते हैं (१) धर्म प्रचार (२) समाज सुधार (३) शिक्षा सुधार, (४) राजनैतिक सुधार (५) सांस्कृतिक उद्धार।

धर्म प्रचार

अभी भी बी० ए०, एम० ए० पढ़ लिये लोग गोबर गणेश की, पाषाण की पूजा करते हैं, भूत प्रेत आदि मिथ्या विश्वास करते हैं। अत अभी आर्यसमाज की वेद-सन्देश का प्रचार करना है। यह कार्य प्रबल वेग से होना चाहिए। धार्मिक प्रचार के डग की शिक्षा हमको ईसाई धर्म प्रचारकों से सीखनी चाहिए। आज जगलों, पहाड़ों में भी विदेशी ईसाई मिशनरी किस प्रकार स्कूल, आश्रम-लय आदि खोलकर अपने धर्म का प्रचार करते हैं। उनमें कितना त्याग और कितनी तपस्या है! यदि ५० सत्त्वै धानप्रस्थी और आर्य सन्ध्यावी वैदिक धर्म में अपना जीवन अर्पण कर दें तो प्रबल आर्यसमाज का लक्ष्य पूरा हो जायेगा। यह सत्य युग नहीं वरन् प्रचार-युग है। आर्य-



समाज का ध्यान केवल सस्थाओं के निर्माण में है। आर्य-समाज के स्कूल, कालेज तो अनेकों हैं पर क्या उनसे आर्य विचारधारा के छात्र निकलते हैं? नहीं। आज स्कूल कालेजों में भी धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता है। महात्मा बुद्ध के अनुयायियों ने किस प्रकार सांसारिक सुखों को परित्याग कर चीन, जापान, ग्रीस, सीरिया, लड़ा प्रभृति विदेशों में बौद्ध मत का संदेश फंलाया उसी प्रकार महर्षि दयानन्द जी के सच्चे अनुयायियों को भी धार्मिक क्षेत्र में आकर वैदिक धर्म का प्रचार करना चाहिए। आज तो आर्यसमाज में कुछ प्रच्छन्न तस्कर प्रवेश कर गये हैं जो ब्राह्मण ग्रन्थ, माध्य, वेदमाध्य पत्रिका के नाम पर धन आर्य जनता से मांग मागकर टूटव कर जाते हैं। ऐसे बर्फी लोगों से आर्यसमाज को त्रासधान हो जाना चाहिए।

आज पादचात्य देशों में भी संदेश सुनाने की अत्यन्त आवश्यकता है। समस्त विश्व की आलें आर्यसमाज के सच्चे प्रचारकों की ओर लगी हुई हैं। बंगाल, जपान, काश्मीर, इंडियन भारत में आर्यसमाज का प्रचार नाममात्र का है। समस्त बग प्रान्त असम प्रान्त तांत्रिक है। वहाँ के लोग मत्स्य भोजी हैं। उनमें प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती कृत "सत्याय-प्रकाश" की उर्दू, मराठी, गुजराती, बंगाली, असमी, तामिष, तेलगू, मलयालम, कन्नड़ी तथा पादचात्य भाषाओं में अनुबाध करके विस्तारपूर्वक प्रचार करना चाहिए। क्रिश्चियन मत का ग्रन्थ 'बाइबिल' आज प्रायः समस्त भाषाओं में अनूदित है। इससे भी आर्यसमाज की शिक्षा लेनी चाहिए। आर्य-जगत् की सिरोमणि "धीमती सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, नई दिल्ली" को इधर ध्यान देना चाहिए।

समाज सुधार

हिन्दू समाज में अन्ध-विश्वास और रुढ़िप्रथा का कोलबाला था। स्त्री, दूधों को वेव पढ़ने का अधिकार न था। परदा, बृद्ध विवाह, बाल-विवाह आदि कुरीतिया समाज में प्रवेश कर गई थीं। महर्षि दयानन्द जी ने यजु० १६।२ के आधारे पर स्त्री, दूध सभी मानव मात्र को

अधिकार बतलाया। इस प्रचार से आज सहस्रों नारिया विधुवी हो गई हैं और सहस्रो दूध वेदों के पण्डित हो गये हैं फिर भी अभी प्रचार की आवश्यकता है। आज आर्य-समाज के प्रचार से शिक्षित नारियां परदा नहीं करती हैं। परदा प्रथा वास्तव में हिन्दू समाज का एक अभिशाप है। वैदिक काल में तो परदा एकदम नहीं था। उस समय स्वयंवर प्रथा के कारण परदा की कोई जानता भी नहीं था।

मुसलमानों के आगमन से हिन्दुओं में यह बुराई घुस गई है। अभी भी मारवाड़ में दूध-विवाह तथा देहातो में बाल-विवाह की घटनाएँ पाई जाती हैं। यद्यपि शारदा एषट में बाल-विवाह का निषेध है फिर भी यह एषट पूर्ण रूप से लागू नहीं है। सरकार को इस ओर कड़ा ध्यान बनाना चाहिए। वेदादि सच्छास्त्रों में कहीं बाल और बृद्ध विवाह की चर्चा तक नहीं है। वैदिक काल में लड़कियों का प्रोढ़ावस्था में विवाह होता था।

अस्पृश्यता रूची कौड़ का पीछा अभी भी नहीं छूटा है। सरकार ने विधान बनाकर इसे दूर करने का प्रयास किया है फिर भी इधर आर्य समाज की ध्यान देना चाहिए। महात्मा गांधी ने अछूतों को 'हरिजन' नाम देकर रुढ़ि बना दिया है।

शिक्षा सुधार

भारतवर्ष में शिक्षा में आधुनिक चूल परिवर्तन की नितान्त आवश्यकता है। भारत के स्वतन्त्र होने पर भी अंग्रेजी भाषा का मोह नहीं हटा है। आज हम अंग्रेजी भाषा की ही सर्वेसर्वा समझ बैठे हैं। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने गुजराती होते हुए भी अपने ग्रंथों को संस्कृत व हिन्दी भाषा में लिखा। वे दूरगम्य थे। वे हिन्दी (आर्य) भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में देखने का स्वप्न देखते थे। हमें अज्ञान से हिन्दी, संस्कृत भाषा के प्रचार में जुट जाना चाहिए। जिस देश की अपनी कोई भाषा नहीं वह देश दुर्घट है।

हमें भीषण आम्बोलन करके भी हिन्दी को राजभाषा पद पर स्थित करना चाहिए। हम आर्यों को सर्वत्र पत्राचार में आर्यभाषा (हिन्दी) का ही प्रयोग करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ ४६ पर)



महर्षि दयानन्द और सुराष्ट्र निर्माण



[ले०-५० धर्मदेव जी विद्यामन्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ) आनन्द कुटीर ज्वालापुर]

आर्य समाज सुधारक के रूप में महर्षि दयानन्द का नाम इतना प्रसिद्ध हो चुका है कि उसकी यहाँ विशेष रूप से चर्चा करनी आवश्यक है किन्तु यह खेद और आश्चर्य की बात है कि नवयुग विद्याला और आर्य भारतीय राष्ट्र निर्माता के रूप में उनकी इतनी ह्यति नहीं जितनी होनी चाहिये थी। यद्यपि नेता मुनाबब-उ-अमी जैसे कई सुप्रसिद्ध राजनैतिक नेताओं ने उनके इस रूप को पहचाना और निम्न आशय के शब्दों में भ्रष्टाचार ज्ञी—

‘स्वामी दयानन्द सरस्वती उन महान् शक्तिशाली व्यक्तियों में से हैं जिन्होंने अर्धचौन भारत का निर्माण किया और जो उसके नैतिक और धार्मिक पुनरुद्धार के लिए उत्तरदाता हैं। उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज निस्सन्देह हिन्दू भारत की संस्थाओं के पुनर्निर्माण, सुधार और नवशक्ति प्रदान करने वाले अत्यधिक शक्तिशाली तत्वों में से एक है। हम देखते हैं कि उत्तर भारत में प्रमुख आर्यसमाजी सबसे अधिक प्रभावशाली राष्ट्रीय नेता भी हैं। स्थिरता, दृढ़ता, संगठित कार्य क्षमता आदि की दृष्टि से आर्यसमाज किसी से भी कम नहीं है। आर्यसमाज एक संगठित स्वदेशी विकास है। अपने अग्रणी लेख के अन्त में नेता जी ने निम्नलिखित प्रार्थना मगवान की थी—

‘मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि स्वामी दयानन्द जी द्वारा स्थापित समाज अपने प्रवक्त के अनुरूप तथा योग्य हो और वह भारत की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा आध्यात्मिक मुक्ति का कारण बन सके जिसको हम सब इतना प्यार करते हैं।”

इस भ्रष्टाचार के अन्तिम माग में जो प्रार्थना है, उसमें स्वामी दयानन्द जी द्वारा आर्यसमाज की भारत की सामाजिक और आध्यात्मिक मुक्ति हो नहीं, प्रयुक्त उसके साध्यात्मिक और राजनैतिक मुक्ति का जो स्पष्ट निदर्शन है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(२) कांग्रेस की नू००० प्रवक्ता डा० ऐनी बीसेन्ट ने

अपनी (इंडिया ए नेशन) नामक पुस्तक में तो अत्यधिक स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा की है कि ‘Swami Dayananda was the first to proclaim India for Indians’

अर्थात् स्वामी दयानन्द प्रथम व्यक्ति ने जिन्होंने इस बात की घोषणा की कि भारत भारतीयों के लिए है।

(३) भारत के उपप्रधान मन्त्री, राजनीतिज्ञ गिरो-मणि, लोह पुरुष सरदार बल्लभ साई पटेल ने अपनी मृत्यु से कुछ ही दिन पूर्व ९ नवम्बर १९५१ ई० को बेहली के रामलीला मैदान में महर्षि निर्माणोत्सव पर भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी भ्रष्टाचार इस आशय के शब्दों में प्रकट की थी कि ‘स्वामी दयानन्द एक वीर योद्धा और सत्य के सैनिक थे। वे एक वीर निर्भय पुरुष थे। उन्होंने हमें भी वीर बनना और बुराईयों के विरुद्ध वीरता से लड़ना सिखाया। वे भारतीय संस्कृति के सच्चे अनुगामी थे। उनके जीवन का प्रत्येक माग भारतीय संस्कृति की सर्वोच्च महत्वपूर्ण शिक्षाओं के अनुकूल था।’ इत्यादि

(४) भारत के महामहिम राष्ट्रपति महामनीषी डा० राधाकृष्णन् जी ने २४ फरवरी १९६१ ई० को श्रद्धाबोध के अवसर पर रामलीला मैदान नई बेहली में भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी भ्रष्टाचार इन महत्वपूर्ण शब्दों में प्रकट की थी—

‘स्वामी दयानन्द नवभारत के निर्माताओं में से सर्वोत्तम थे। उन्होंने राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भारत उद्धार और मोक्ष के लिए निरन्तर प्रयत्न किया था। हिन्दू धर्म की बंदीक आचार पर पीछे ले जाने में वे तर्क से प्रेरित थे। उन्होंने समाज को शुद्ध रूप में सुधारने का प्रयत्न किया था जिसकी आज भी आवश्यकता है। भारतीय संविधान में समावेनित सुधारों में से बहुतों की स्फूर्ति उनकी शिक्षाओं से मिली थी।”

इससे उत्तम भ्रष्टाचार ज्ञी और क्या हो सकती है जो जतन्-विस्थात महामनीषी डा० राधाकृष्णन् जी ने महर्षि

वयानन्द के प्रति समर्पित की। इसमें उन्होंने स्वामी वयानन्द जो को एक धार्मिक और सांस्कृतिक सुधारक ही नहीं, राजनैतिक मुक्ति के लिए भी निरन्तर प्रयत्नशील बताया है और यह स्पष्ट घोषणा की है कि उन्होंने भारतीय समाज का जिस प्रकार का सुधार किया, उसकी आज भी बड़ी भारी आवश्यकता है।

उन्होंने यह भी स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया कि भारतीय सविधान में समाविष्ट बहुतने से सुधारों की स्फूर्ति स्वामी वयानन्द जी की शिक्षाओं से मिली। इनमें वे जाति भेद निवारण अस्पृश्यता-निवारण प्रजातन्त्र शासन हिन्दी राष्ट्र भाषा और बेबनागरी लिपि-गोबन्ध विधेय का भारतीय सविधान में निर्देशक सिद्धान्त के रूप में प्रत्याबन् इत्यादि को गिना जा सकता है।

(५) स्व० अद्वय श्री पुरुषोत्तम दास जो टिप्पण जिस समय कापेन के प्रधान थे उस वर्ष ७ अक्टूबर १९५० ई० को आर्यसमाज चौक प्रयाग में भाषण देते हुए उन्हींने स्पष्ट घोषणा की थी कि—

‘मैं स्वामी वयानन्दजी को साम्प्रदायिक नहीं मानता, मेरे विचार में वे महान् थे। उनका धर्म विस्तृत था। मैं उनको राजनैतिक पुरुष भी मानता हूँ।’

स्वराज्य मूल मन्त्र प्रदाता—

प्रायः यह कहा जाता है कि श्री दादा साईं नौरोजी प्रथम राष्ट्रीय नेता थे जिन्होंने कांग्रेस के मन्त्र से सन् १९०६ के कलकत्ता अधिवेशन में सबसे पूर्व स्वराज्य शब्द का राजनैतिक अर्थ में प्रयोग किया किन्तु जब हम महर्षि वयानन्द लिखित सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय आदि पुस्तकों को देखते हैं तो यह विचार सध्या अशुद्ध प्रतीत होता है। सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुत्प्लास में स्वराज्य के महत्व को प्रकट करते हुए सन् १८७५ के लगभग महर्षि वयानन्द सरस्वती ने लिखा था—

‘अब अमाप्योद्येय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों पर राज्य करने की तो कथा ही क्या किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का असंख्य स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ भी है, सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है।

कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि होता है। अथवा मत्तमतान्तर के

आपह रहित अपने और पराये का पक्षपात भ्रम्य, प्रजा पर पिता माता के समान हुवा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण मुक्तदायक नहीं है परन्तु निन्न-निन्न भाषा पृथक् पृथक् अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति-दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना अति कठिन है।’

[सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुत्प्लास]

महर्षि वयानन्द के स्वराज्य के महत्व विषयक ये शब्द स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं। ये शब्द सन् १८७५ के लगभग लिखे गये थे जबकि कांग्रेस की स्थापना सन् १८८५ में हुई। स० प्र० वशम समुत्प्लास में महर्षि ने लिखा—

‘जब स्वदेश में ही स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यवहार व राज्य करें तो बिना बारिद्रय और दुःख के दूबरा कुछ भी नहीं हो सकता।’

आर्याभिविनय नामक प्राचीन पुस्तक में भी महर्षि ने अनेक स्थानों पर इस प्रकार की प्रार्थनाएँ लिखी हैं—

‘अन्य दशधामी राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों।’

[१० क० टिप्पण स० पवत् १९१४ पृ० २१४]

‘ऋजु नीती नो वरुण’ इस ऋग्वेद मन्त्र की व्याख्या में महर्षि ने आर्याभिविनय में लिखा—‘हम पर सहाय करो जिससे सुनीतियुक्त होकर हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े।’

[क० टिप्पण स० पृ ५३]

महर्षि वयानन्द स्वराज्य के लिये कितने उत्सुक थे और किस प्रकार निभयता से अपने विचारों को प्रकट करते थे यह उस भेंट के वृत्तान्त से बहुत अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है जो उनकी जनवरी सन् १८७३ में उस समय के अंग्रेज गवर्नर जनरल लार्ड नार्थब्रुक से कलकत्ता में हुई। उनके यह करने पर कि मुझे अपने विचार प्रकट करने की अंग्रेजी राज्य में पूरी स्वतन्त्रता है जब बायसराय ने कहा कि ‘यदि ऐसा है तो क्या आप अपने देश में अंग्रेजों शासन द्वारा उपलब्ध उपकारों का भी वणन किया करेंगे और अपने व्याख्यानों के प्रारम्भ में जो ईश्वर प्रार्थना आप किया करते हैं, उसमें देश पर अलख अंग्रेजों शासन के लिये प्रार्थना भी किया करेंगे? इस पर महर्षि वयानन्द जी ने कहा—मैं किसी ऐसी बात को मानने से

असमर्थ हूँ क्योंकि मेरा यह बूढ़ विश्वास है कि मेरे देशवासियों को अब्बाध राजनीतिक उन्नति और सत्कार के राज्यों में समानता का बर्ताना पाने के लिये शीघ्र पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये। श्रीमान् जी! ईश्वर से नित्य साय प्रातः उनकी अपार कृपा से इस देश की विदेशियों की दासता से मुक्ति की ही मैं प्रार्थना करता हूँ।

राष्ट्र निर्माता के रूप में उन्होंने जो अद्भुत कार्य किये उनमें सन् १८७७ में वेहली बरबार के अवसर पर सर्वप्रथम ऐश्वर्य सम्मेलन का आयोजन जिसमें श्री केशवचन्द्र सेन, नवीन चन्द्र राय, सर तीर्थब बहमद खान आदि सम्मिलित हुए, आर्य भाषा (हिन्दी) को राज्य भाषा बनाने के लिए प्रबल प्रयत्न करना और 'मेरी आँखें उस दिन की देखने के लिए तरस रही हैं जब काश्मीर से कन्या कुमारी तक सब एक भाषा को समझने और बोलने लग जायेंगे' आदि हार्दिक उद्गारों का प्रकट करना, गोबध निषेध करवाने के लिये हस्ताक्षरादि द्वारा सगठित प्रबल प्रयत्न करना, स्वयं शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहनना और अग्यों को भी वेशा करने की प्रेरणा करना आदि हैं। ऐसे स्वराज्य के मान्यदाता, नवयुग प्रवर्तक, आदर्श राष्ट्र निर्माता महर्षि दयानन्द जी को हमारा प्रणाम हो !

(पृष्ठ ३३ का शेष)

राजनैतिक सुधार

महर्षि दयानन्द जी ने धर्माय, विद्यार्थ और राजार्थ तीन समाजों का निर्माण किया था। हमने राजार्थ समाज की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया इससे भारतवर्ष के शासन की बागडोर अयोग्य व्यक्तियों के हाथ में चली गई है।

महर्षि जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के छठे समुल्लास में सच्ची राजनीति की धर्मा की है। 'स्वराज्य' शब्द का बार बार प्रयोग किया है। प्रजातन्त्र राज्य की महर्षि जी ने महानता बतलाई है। 'स्वदेशी' और 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द जी ने ही वर्तमान युग में किया। स्वदेशी राज्य, स्वदेशी वस्त्र, स्वदेशी भाषा पर महर्षि जी ने बड़ा बल दिया है। देशी रियासतों के सुधारने में भी महर्षि जी का हाथ था। कई नरेश उनके परम मत्त व शिष्य थे।

अतः आर्यसमाज की सामूहिक रूप से नहीं तो वैयक्तिक रूप से राजनीति में भाग लेकर कान्ति लाना चाहिए अन्यथा भारतवर्ष फिर भी दासता की बेड़ियों में जकड़ सकता है।

सांस्कृतिक उद्धार

वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ही पहले भारतीय हैं जिन्होंने भारतवर्ष में पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के बढ़ते हुए प्रवाह को रोका। लोग सब प्रकार के विज्ञान, कला-कौशल और वास्तविक विचारों का आदि-श्रोत योरोप की मानने लगे थे, परन्तु महर्षि दयानन्द जी ने बताया कि जब पश्चिम के लोग गन्त रूप में असम्य होकर बनों में भ्रमण करते थे उससे बहुत पहले हम भारतवासी उपर्युक्त सभी विषयों उन्नति के शिक्षण पर थे वेदों में रेसमी वस्त्रों की धारण करने के लिये आवेश है और पाश्चात्यों की सभ्यता में भी विषय में विश्व सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। हमारी वैदिक संस्कृति व सभ्यता प्राचीन व अनुकरणीय है। अमी हमें इनका प्रचार करना है।

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ जो अनधिकारी सन्यास ग्रहण करेगा तो आप दूबेगा औरों की भी दूबाएगा।

★ जो अविद्यायुक्त मूर्ख, वेदों के न जानने वाले मनुष्य जिस कार्य को कहें उसको कभी न मानना चाहिये क्योंकि जो मूर्खों के कहे हुए धर्म के अनुसार चलते हैं, उनके पीछे संकड़ों प्रकार के पाप लग जाते हैं।

सं० कर्ता—श्री प० कृष्णदत्त आयुर्वेदाचार्य

आर्य समाज के साहित्यिक व्यक्तित्व—

महर्षि दयानन्द सरस्वती



(ले०—भी प्रो० नबानीलाल भारतीय एम० ए० अध्यक्ष—हिन्दी विभाग, गवर्नमेन्ट कालेज, पाली)

महर्षि दयानन्द के बहुमुखी व्यक्तित्व का अध्ययन अनेक दृष्टिकोनों से किया जा सकता है। वे एक महान्

के उच्चकोटि के कवि भी थे। उन्होंने श्रद्धेवादि-माध्य भूमिका, वेदभाष्य, सत्कार विधि आदि ग्रन्थों के प्रारम्भ में स्वरचित श्लोक (पद्य) दिये हैं। ग्रन्थांत की पुष्पिकायें भी अनुष्टुप छन्दों में प्रत्यकार द्वारा ही रची गई हैं। इन पद्यों से महर्षि का कवि रूप प्रस्फुटित होता है। श्रद्धेवादिमाध्य भूमिका के प्रारम्भ में आठ स्वरचित पद्य दिये हैं जिनमें दो शिल्लरिणों और शेष ६ अनुष्टुप छन्द हैं। इसी प्रकार अन्धाय ग्रन्थों में उद्धृत महर्षि के द्वारा रचित श्लोकों की संख्या बहुत अधिक है। १० वीरसेन जी वेदधर्मी ने महर्षि के संस्कृत भाषा के कवि रूप को अपने एक लेख (टकारा पत्रिका में प्रकाशित) में विवेचित किया है।



लेखक

वेदवेत्ता, धर्म-संशोधक, समाज सुधारक, लोकनेता तथा सर्वसंग परिचर्यागो परिश्राजक थे। धर्म, समाज, राष्ट्र, राजनीति, भाषण, साहित्य आदि विभिन्न क्षेत्रों में उनका योगदान महत्वपूर्ण एवं स्मरणीय रहा है। महर्षि के द्वारा रचित ग्रन्थों का जब हम अध्ययन करते हैं तो हमें विवित होता है कि वे एक महान् साहित्यिक और उच्चकोटि के लेखक भी थे। उनका हिन्दी और संस्कृत दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। संस्कृत में उन्होंने भागवत खडन वेद-विषुद्ध मत खण्डन, शिक्षा पत्रीष्वान्त निवारण, वेद-भाष्य, श्रद्धेवादि माध्यभूमिका जैसे महत्वपूर्ण पद्य लिखे। स्वरचित संस्कृत ग्रन्थों को उन्होंने प्राकृत (हिन्दी) भाषा में अनूदित भी किया तथा मौलिक रूप में भी विशाल हिन्दी ग्रन्थों का निर्माण किया। उनके द्वारा रचित साहित्य का प्रकाशन सहस्रों पुष्पों के विशालकाय ग्रन्थों में हुआ है।

महर्षि कवि के रूप में महर्षि-दयानन्द वेदवाणी संस्कृत

हिन्दी साहित्य को महर्षि की देन भी कम मूल्यवान् नहीं है। अपने वेदोपवेश काल के प्रारम्भिक भाग में महर्षि संस्कृत भाषण और संस्कृत के माध्यम से ही वातालाप करते थे। उनकी संस्कृत अत्यन्त सरल, प्रसादगुण युक्त और साधारण पठित व्यक्तिके भी समझ में आ जानेवाली होती थी। महर्षि के ग्रन्थों की संस्कृत भाषा भी उपयुक्त गुणों से युक्त है। वे मध्यकालीन संस्कृत कवियों और लेखकों की भांति अपनी भाषा को अनावश्यक शब्दाङ्कुर युक्त समासयुक्त घटाटोप मयी शैली से परिपूर्ण नहीं बनाते थे। अपनी विद्वत्ता का अनावश्यक प्रदर्शन उन्होंने कहीं नहीं किया। वे सुबोध शैली में अपने भावों को सरलता से व्यक्त करने के लिये परिमार्जित, परिष्कृत किन्तु सरल और प्रभाषपूर्ण भाषा लिखने के समर्थक थे। महर्षि के संस्कृत गद्य की तुलना महर्षि पतञ्जलि और वेदान्त माध्यकार शंकराचार्य के गद्य से की जा सकती है। उनके गद्य की प्राञ्जलता उसकी निजी विशिष्टता है। शास्त्रीय विवेचन के प्रसंगों में उन्होंने सिद्धान्त पक्ष और पूर्वपक्ष की पुरानन परिपाटी का निर्वाह किया है।

महर्षि को हिन्दी में बोलने और लिखने की प्रेरणा ब्राह्म नेता श्री केशवचन्द्र सेन से मिली। धर्म प्रचार के लिए लोक भाषा का ग्रहण सभी धर्मोपदेशको ने किया है। महर्षि भी इसके अपवाद नहीं थे। महर्षि ने हिन्दी गद्य का एक नया रूप प्रस्तुत किया। छण्डन-मण्डन विचार-विमर्श स्वपक्ष स्थापन और परपक्ष निराकरण के लिये जैसी सक्षम सशक्त, व्यवपूर्ण भाषा की आवश्यकता पड़ती है महर्षि की भाषा उसी का जीता जागता रूप है। महर्षि की हिंदी सेवा का गौरवपूर्ण उल्लेख सभी इतिहासकारों ने किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में महर्षि की हिन्दी सेवा का विशद विवेचन किया है। हिन्दी भाषा सार के लेखक द्वय (लाला मगवानवीन तथा श्री० रामदास गोड) की सम्मति दुष्टव्य है—“जनता के लाम की दृष्टि से मातृभाषा गुजराती होने पर भी इस दूरदर्शी और विद्वान् सभ्यसि ने राष्ट्रभाषा हिन्दी का ही प्रचार किया। अपने ग्रन्थ भी हिन्दी में ही लिखे, हिन्दी की उन्नति और प्रचार आर्यसमाज का जिसके वह प्रवर्तक थे, एक विदोष लक्ष्य बनाया। अकेले इन स्वामी जी ने हिन्दी का जितना उपकार किया, हमारा अनुमान है कि अनेक सुसंगठित सस्थाओं ने मिलकर अब तक उनका नहीं कर पाया है।”

हिन्दी गद्यशैली का अध्ययन करते समय स्वामी दयानन्द को एक पृथक् शैलीकार के रूप में परिगणित किया गया है। ‘हिन्दी गद्यशैली का विकास’ के लेखक प्रो० जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने एक पुरा अध्याय ही महर्षि की गद्यशैली को प्रदान किया है। इसी प्रकार “हिन्दी गद्य निर्माता” के लेखक प्रो० प्रेमनारायण टण्डन की सम्मति भी उल्लेखनीय है—“तत्कालीन हिन्दी गद्य की उन्नति में

स्वामी दयानन्द ने महत्वपूर्ण सहयोग दिया। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश, वेदांग प्रकाश, वेदों के भाष्य आदि ग्रन्थ तो हिन्दी में लिखे लिखाये ही, साथ ही आर्यसमाज जैसी प्रगतिशील सस्था का सब काम हिन्दी में ही करने का आदेश दिया। स्वामी जो हिन्दी को भारत की व्यावहारिक भाषा और देश की मातृ राष्ट्रभाषा होने के योग्य समझते थे।” इसी प्रकार प० अयोध्यासिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ ने भी अपने ‘हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास’ शीर्षक व्याख्यानों में महर्षि की साहित्य सेवा पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

महर्षि के हिन्दी में रचित ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश सत्कार-विधि और ऋग्वेदादि-भाष्य सूत्रिका की बृहत्त्रयी की सभा ही जा सकती है। उनकी लघुकृतियों का महत्व भी कम नहीं है। महर्षि ने संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। उनकी शैली में आवश्यकतानुसार ध्वग्य, विनोद, गम्भीरता तथा विश्लेषण प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। व्यवहार मानु तथा सत्यार्थप्रकाश के एकदश समुल्लास में उन्होंने स्वरचित तथा परम्परा प्राप्त अनेक कहानियों तथा बृहदान्तों के द्वारा अपने अमित्राय को व्यक्त किया है। इससे उनके कथा लेखक के रूप की भी साकी मिलती हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्यसमाज की देन शीर्षक प्रबन्ध प्रश्न (Thesis) के लेखक डा० लक्ष्मीनारायण गुप्त ने स्वामी जी की साहित्य सेवाओं का सुन्दर विश्लेषण किया है। प्रस्तुत पत्रियों का लेखक भी “आर्यसमाज का संस्कृत भाषा और साहित्य को योगदान” शीर्षक विषय पर पी एच डी उपाधि के लिये अनुसंधान कर रहा है।

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ मरा हुआ धर्म मारने वाले का नाश और रक्षित किया हुआ धर्म रक्षक की रक्षा करता है इसलिए धर्म का हनन कभी न करना, इम डर से कि मारा हुआ धर्म कभी हमको न मार डाले।

★ कष्ट होने पर भी धर्म पर बुरा हो, रंगीले कपड़े पहनने मात्र से सभ्यसि नहीं होता।

★ कोई बितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वाधिक उत्तम होता है।

सकलनकर्ता—श्री कृष्णवत्त आयुर्वेदालकार, फँजाबाद



महर्षि गुणगान



वयानम्ब ऋषिरात्र तुम्हारे, गुण गण का हृम करते गान ।
 वेव तुम्हारे दिव्य गुणों का, हृम करते हैं मन मे ध्यान ॥
 कहां सत्य जिज्ञासा इतनी, कहा सत्य अनुराग ।
 सत्य प्रकट करने में तुमने, रक्खा गुम आवर्शं महान् ॥
 ईश्वर की पूजा सिल्ललाई, भ्रम लीला सब दूर मगाई ।
 हितकर औषधि हृमे विलाई, विद्या वेव का सच्चा ज्ञान ॥
 अन्धकार में भटक रहे थ, वेव मार्ग को भूल रहे थे ।
 तुमने सच्चा मार्ग दिखाया, कर उन पर कृपा का मान ॥
 कूट कूट कर बया मरी थी, उसमे तुम पाते आनन्द ।
 उससे प्रेरित होकर नुमने, किया बलित अनपतितोत्थान ॥
 वयासिन्धु तुमने विषवाता, के भी प्राण बधाये थे ।
 कहा मिलेगा दूडे से भी, ऐसी कृपा का उवमान ॥
 ब्रह्मधर्म तप से ही तुमने, विजय मृत्यु पर पाई थी ।
 जिसे देख गुडबल कुनास्तिक, आस्तिक गण के बने प्रधान ॥
 लाखों की सम्पति ठुकराई, नहीं सत्य पय छोडा ।
 वेव शास्त्र निष्णान शिरोमणि, नहीं कुछ तुममे अविमान ॥
 इव युग में तुमने ही पहले, था स्वराज्य का मन्त्र विद्या ।
 जिसने देशभक्त गण मे फिर, फूँकी अदभुत नूतन जान ॥
 सभी देशवासी अपनाए, सरल आर्य भाषा को ।
 यह सन्देश मुना तुम पाये, ऐषय विवायक नायक स्वान ॥
 महिलाओं की विषवाओं की, बीन अनायो की कुदशा ।
 उनका फिर उद्धार किये तुम कौन तुम्हारा करे न मान ?
 यज्ञ रूप निज जीवन करके, तुम तो अमर हुए विबुधेश ।
 धर्म वेव पर दीपावलि दिन, अमर तुम्हारा गुन बलिदान ॥

—धर्मदेव विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ)

आनन्द कुटीर, उवालापुर

निर्वाण का स्वर



घोर तम छाया हुआ था जगद में, नम में, निलय में,
 ज्योत्सना की एक रेखा भी न बेती धी दिखाई ।
 ढोंग ओ पाक्षण्ड ही जब धर्म के शासक बने थे,
 स्वार्थ-ताजोरात जब जाने लगी सब को पड़ाई ।
 विश्व का कण-कण रदन कर चीरने छाती लगा था,
 ढाँट कर निर्वाण ने निर्माण की गीता उठाई ।
 मूल शकर ज्योति बेवों की लिये उतरे धरा पर ।
 कौन कहता मौन जग में हो गया निर्वाण का स्वर ॥
 ओश्म की लेकर पताका विश्व की सत्य विलाया,
 खड कर पाक्षण्ड सारा, ढोंग का अस्तित्व ढाया ।
 माध्य वेवो का किया तह जगत की आलें खुली हैं,
 पावरी, पडित, पुत्रगरी पीर का छक्का छुड़ाया ।
 धो विद्या सारा तिमिर सत्य के नभ ज्योत्सना से,
 धर्म वैदिक पर मरो, कर्तव्य पर मरना सिल्लाय ।
 बनो निर्भय सत्य पय पर अमय की आराधना पर ।
 कौन कहता मौन जग मे हो गया निर्वाण का स्वर ॥
 शत्रुओं की चाल शतरजी नहीं अब चल सकेगी,
 जब कि धार्थों की समार्जे विश्व के हर कोण में ।
 जा रही निर्भय तरी तूफान का मय ही नहीं,
 बंटे चतुर नाविक जहा रत्नेश' के हर द्रोण में ।
 निर्वाण ऋषि का नूजता नम मे अनी मुन लो सभी,
 जय नाव वैदिक धर्म का होने लगा बश कोण मे ।
 एक जन भी अब न जायेगा अवैदिक राह पर,
 कौन कहता मौन जग मे हो गया निर्वाण का स्वर ।

—रतनलाल 'रत्नेश'

विरजानन्द विद्यालय, अजमेर





युगपुरुष महर्षि दयानन्द



[श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक, नई दिल्ली]

महर्षि दयानन्द सरस्वती युग पुरुष थे। उनका लक्ष्य धर्म की कुत्सित धारा को बचल कर उसे पवित्र रूप देना और मानव समाज के सर्वतोयुक्ती विकास और व्यापक हित में योगदान करना था। उनका देश में प्रादुर्भाव उस समय हुआ जबकि आर्य धर्म और आर्य सभ्यता के ह्रास की प्रक्रिया अपने उग्र रूप में थी और धर्म के नाम पर अंधधुंध का बोल बाला था।

उनकी शिक्षाएँ वेद ज्ञान पर आधारित थीं इसलिए उनकी शिक्षाओं का प्रभाव हृदय और मस्तिष्क दोनों पर पड़ा जिन्होंने धार्मिक और सामाजिक विचार धारा में स्वस्थ परिवर्तन करके एक युग का सूत्रपात कर दिया।

उनसे पूर्व धार्मिक जगत् में भगवान् बुद्ध और महान् शंकराचार्य ने नवीन युगों का निर्माण किया था। भगवान् बुद्ध ने जन्मना ब्राह्मणों के स्वार्थ एव अविनाशपूर्ण प्रभुत्व घृणित कर्मकाण्ड, पशु बलि और जन्मगत जात पात पर कुठाराघात करके सदाचार और अहिंसा का प्रचार और प्रसार करके लोगों के नैतिक उत्थान में अमित योग दिया था। परन्तु उनकी शिक्षाएँ एकांगी नहीं। वे लोगों को बौद्धिक प्रकाश और शान्ति प्रदान न कर सकीं।

कालान्तर में उनके अनुयायी गुल्डम और भोगवाद में प्रसिद्ध होकर सांसारिक सुख एव विलासिता में लिप्त हो गए और जाति में ध्यात लम्पटता और क्लीबता भगवान् शंकर के प्रादुर्भाव का कारण बन गई।

शंकर की शिक्षाओं ने बौद्धिक प्रकाश तो प्रदान किया परन्तु वे उष्णता प्रदान न कर सकीं। उनकी भावना भोगवाद में लिप्त हुए लोगों को उससे परागमुक्त करने की दिशा में इस सीमा तक गई कि उन्होंने जगत् को मिथ्या धामना और कहना आरम्भ कर दिया। उनकी शिक्षाएँ तर्क और यथायंता की कलौटी पर धरो उतरतीं।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द का लक्ष्य नैतिक और आध्यात्मिक, दृष्टि और समष्टि, धर्म और विज्ञान, आवर्श और यथायं प्राचीन और नवीन में समन्वय उत्पन्न

करके मस्तिष्क और शरीर दोनों को सूक्ष्म की सत्पुष्टि का राज-मार्ग बना देना था। वे इसमें सफल हुए। सांसारिकता से न्यून धर्म और धर्म से न्यून सांसारिकता ये दोनों ही अविनाश होते हैं। इनका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारा आज का अज्ञान समाज है। पिछले ५० वर्षों में सत्तार को सुख-धाम बनाने के जो प्रयत्न हुए उनका लक्ष्य सांसारिकता पर केन्द्रित रहा। इसका फल यह हुआ कि सत्तार सुखधाम बनने के स्थान में सुखधाम बन गया। धर्म का अर्थ है विन प्रसिद्धि का सदाचारमय जीवन। महर्षि दयानन्द ने इसी प्रकार के वेद धर्म पर बल दिया है जो मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक दोनों स्तरों पर ऊँचा उठाए और समाज में सुख शान्ति का साम्राज्य रहे।

समाज का ठीक निर्माण एकमात्र आर्थिक तत्त्वों से सम्भव नहीं है और न समार से विमुक्त करने वाली आध्यात्मिकता से ही सम्भव हो सकेगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपनी अमर कृति सत्यायं प्रकाश में जिस सामाजिक ढांचे की रूप रेखा दी और उसकी व्याख्या प्रस्तुत की है उसी को मूर्तरूप देने से समार का हित सदा-वित हो सकता और शान्ति बनी रह सकती है क्योंकि उस में लौकिक और पारलौकिक कल्याण सम्मिश्रित है।

उनकी समाज-व्यवस्था में सर्वप्रथम स्थान आस्तिकता और एकेश्वरभाव को प्राप्त है जो एकमात्र हमारा परमादर्श होने योग्य है। अपने को अच्छा बनाना और परमात्मा के बच्चों का हित करना उनकी आस्तिकता का परमतत्त्व है।

समाज को शरीर और आत्मा में स्वस्थ, बलिष्ठ, सुशिक्षित एव सुयोग्य सन्तान प्रदान करना इस समाज व्यवस्था का दूसरा और तीसरा अंग है जिसका आधार ब्रह्मचर्य एव सत्य है।

शरीर की बलिष्ठता, शिक्षा, आयु और प्रवृत्ति में समानता और उच्छृङ्खलता के आधार पर नव-युवकी और नव-युवतियों को गृहस्थाश्रम में प्रवेश पाने की अनुमति दी

गई है, साथ ही एकपत्नी व्रत और एकपत्नी व्रत गृहस्थ सुख का प्रमुखतम तत्त्व बताया गया है। इसका लक्ष्य समाज को सुयोग्य सन्तान देना और अर्थ एवं काम की स्वामाबिक इच्छाओं की पूर्ति करने में समर्थ बनाना है। इसी में अपनी स्वामाबिक प्रवृत्ति एवं योग्यता के अनुसार धर्मों का चुनाव करके जीविकोपार्जन की व्यवस्था की गई है। यही धर्म व्यवस्था है जो प्रभृति का विस्तार है। गृहस्थ में रहने की २५ वर्ष की अवधि नियत की गई है। मनुष्य की औसत आयु १०० वर्ष की मानकर उसमें से केवल १/४ को भोग के अर्पण करने और शेष ३/४ को त्याग, तप और आत्म चिन्तन के अर्पण करने का विधान किया गया है जिससे समाज में बेकारी न फैले और भोग धार के कीटाणुओं का प्राबल्य न हो। महर्षि व्यास द्वारा प्रस्तावित समाज व्यवस्था में राजनीति व राज-धर्म का बहुत महत्व है परन्तु वह धर्म और ग्याय दण्ड पर आश्रित होनी चाहिये, जिससे समाज में धार्मिक तत्वों की बढ़ावा मिले और दुष्ट तत्वों का वसन होता रहे। महर्षि व्यास द्वारा समर्पित राजनीति में एकतन्त्र राज्य की आशय नहीं मिल सकता। उसमें प्रजातन्त्र राज्य का समर्थन किया गया है। निर्वाचित राजा की उच्चतम कोटि के व्यक्ति के रूप में कल्पना की गई है। यह है मो ठीक। प्रजातन्त्र शासन शासकों और प्रजा दोनों के चरित्रवान होने से ही ठीक गति में चलते हैं अग्यथा वे लडकड़ा जाते हैं। इस राजनीति में सत्कर्तों राज्य को ही विश्व के कल्याण का साधक माना गया है। सत् राज्य से अज्ञानिता ब्याप्त रहती है।

स्वामी जी महाराज द्वारा प्रस्तुत समाज-व्यवस्था में शासक महाराज आदि अन्वय पराधीन के ज्ञान-पान और सेवन को एकत्र ही एवं त्याग्य बताया गया है। इसके साथ ही श्रेष्ठ आजीविका जो श्रेष्ठ उपायों से अर्जित हो, प्राप्त मानी गई है।

श्री स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित समाज व्यवस्था में भोगों की किन्दा नहीं की गई है। भोगों की भोगने की स्वतन्त्रता है परन्तु उनमें आश्रित न होनी चाहिये और वे व्यक्ति तथा समाज के पतन का कारण न बनने चाहिये। इस समाज व्यवस्था का लक्ष्य है और वह यह कि ईश्वर का आवाहनाकार करने में मनुष्य समर्थ बने। इसके लिये

उत्ते सत्सार में से गुजरना अनिवार्य है अतः सत्सार में से इस प्रकार गुजरे जिससे कि उसकी यात्रा सुखद रहे और वह ईश्वर के साक्षात्कार के मार्ग में गटक न जाय।

इस प्रकार श्री स्वामी जी महाराज ने धार्मिक जगत् में ही नहीं अपितु सामाजिक जगत् में भी एक नई सुखद क्रांति की। उन्होंने जति को अविद्यामयकार से निकाल कर मत-मतान्तरों के पतनकारी एवं मानवता को खिलव एवं लांछित करने वाले प्रभाव से मुक्त करके सच्चे धर्म की प्रतिष्ठित करने तथा सामाजिक शरारियों को दूर कर के स्वस्थ समाज की निर्मित करने का प्रशस्त कार्य किया। धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त उन्नत और सामाजिक दृष्टि से सुखी चरित्रवान और पवित्र समाज से ही राजनैतिक योगक्षेम सम्भव हो सकता है। इस रीति से उन्होंने राजनीति का भी मार्ग-प्रशस्त किया।

गुरुकुल वृन्दावन प्रयोगशाला जिला मथुरा का विशुद्ध शास्त्रविधि द्वारा बनाया हुआ “च्यवनप्राश”

घोषन बाता, खास, कास, दुबय तथा
फेफड़ों की शक्तिबाता
शरीर को बलवान बनाता है।
मूल्य ८) २० सेर

नोट.—शास्त्र विधि से निर्मित सब रस
मसम आसव, अरिष्ट, तेल तथा
उत्तम सुगन्धित हवन सामग्री भी
तैयार मिलती है। एजेन्टों की
हर जगह आवश्यकता है, पत्र
व्यवहार करें।

—व्यवस्थापक



युग-धर्म की मांग



(ले०—श्री मोहनलाल जो मोहित लाबेनोर, सेंट पियेर मोरीसस)

वर्तमान युग में भौतिक विज्ञान की प्रधानता है। मानव समाज प्रायः भौतिक अर्थात् क्षणिक सुख की भ्रम-



लेखक

गुणों में लक्ष्मी है। मानव समाज की आध्यात्मिक पिपासा की ठीक तृप्ति तो वैदिक धर्म से ही हो सकती है। क्योंकि भौतिक विज्ञान और अध्यात्म विज्ञान का तर्क सतत समन्वय ही वैदिक धर्म ही करता है। वेद-विहीन अर्थ लोचुव राजनैतिक नेताओं ने मानव समाज के जीवन-स्तर के माप वण्ड में विषमता पैदा कर दी है। एक देश दूसरे देशों की ओर एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों की घृणित एवं द्वेष भूषित से देख रहे हैं, परन्तु भौत भाव और घृणा-धमण्ड की मात्रा बढ़ रही है। एक दूसरे का शोषण कर उन पर निरंकुश शासन जैसा रासलीली व्यवहार करने वाले जो निरपुत्र राजनीतिज्ञ ही उपाधि ही जाती है। ऐसे अध-

कच्चे शासकों और नेताओं की धांधली बाजी में पड़कर जनता घोर सङ्कट झेलती है। प्रायः जनता में सर्व विवेक का अभाव सा रहता है। अतः मानव जीवन के महत्त्व की ठीक ठीक मूल्यांकन नहीं कर पाती है। कूटनीतियों के प्रलोभन में फँसकर मूर्खतावश अधिवेकी जनता मानवता को कलकित कर अपना भविष्य दुःख बना लेती है। इस लिए युग धर्म का आदेश है कि मनुष्य को वास्तविक मानव बनाने की बीजा बीज्य और इस बीजा-संस्कार का सम्योचित सहो सम्पादन आर्यसमाज ही कर सकता है।

आचार्य महर्षि दयानन्द जी ने देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में वेद प्रचार प्रसार और समाज सुधार का उत्तरदायित्व आर्यसमाज पर ही छोड़ा था। इसलिए बड़ी सतर्कता से काम कर समराज्य में आर्यसमाज को आगे बढ़ाना है। गत पिछले कुछ वर्षों के कामों पर तिहाव-लोकन कर अपनी कमी को अनुभव करें। फिर कमी पूर्ति और मात्मी प्रगति के लिये कार्यक्रम को सम्पन्न करने के सबल साधन तथा सुगम विधि पर गम्भीरता से सोचें। आर्यसमाज की गति-विधि से पता लगता है कि भ्रमण्डल के लगभग दो तिहाई भाग में यत्र-तत्र आर्यसमाज का बीज पतुव चुका है पर ध्यान रहे बीज पतुव जाने मात्र से कृषि-कार्य सफल नहीं होता। क्योंकि बीज को सफल बनाने के लिए भूमि की जुताई, बुआई और सिंचाई के साथ ही सम्यक् पूर्ण-प्रयत्न की आवश्यकता है। तब कृषि कार्य सफलीभूत होता है। उसी प्रकार आर्यसमाज के सामने देश विदेशों में जो धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विशाल कार्यक्षेत्र लाली पड़े हैं, उनको वैदिक संस्कार से सुसंस्कृत बनाने के लिए तत्सर्वो आर्य विद्वान् की आवश्यकता है। धर्म-सतक में फसी हुई मानवता की रक्षा के लिए, श्रद्धा श्रद्धा की पूर्ति के लिए और महर्षि दयानन्द के आदेश की कियामक रूप देने में आर्यसमाज सर्वात्मन आगे बढ़े। यही युग धर्म की धांध है। शुष्क के सुयोग्य

स्नातकों ने जिस सकट काल में मानवता की रक्षा के लिए बयानन्द की बेटी से शाखा ली है, वह सुसमय सामने खड़ा है। और सबल शत्रुओं में चुनौती देता है कि वेद प्रचार और समाज-सेवा के क्षेत्र में आगे आकर अपनी विद्वत्ता तथा कार्य कुशलता से आर्यसमाज को पुरस्कृत करें। महर्षि बयानन्द के सच्चे भक्त, त्यागी और तपस्वी तथा कार्यकुशल मनस्वीगण ही कथित समस्या को सुलझा सकते हैं। विदेशों में तो आर्योपदेशक की नितान्त आवश्यकता ही है। परन्तु भारत में भी सुयोग्य समाज-सेवक उपदेशकों की कमी है। मानव समाज को सजग और प्रगतिशील बनाने के वो उपयोगी और सबल साधन हैं, प्रथम सुयोग्य उपदेशकों की तैयारी तथा नियुक्ति और दूसरा भावात्मक में सुन्दर साहित्य का प्रकाशन।

दोनों काम देश काल के दृष्टिकोण से करने में ही सफलता है। इन दोनों कामों को सफल और चिरस्थायी बनाने के लिए एक सुदृढ़ शक्तिशाली 'संस्थान' भी साध देशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के तत्वावधान में होना परमाश्यक है। साथ ही परोपकारिणी सभा अजमेर और देश विदेश की आर्य प्रतिनिधि सभायें तथा प्रमुख आर्य-समाजों में संस्थान को सफल बनाने में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को सर्वात्मना योगदान दें, तभी कार्य सफल हो सकता है। मेरे विचार में संस्थान के लिए प्रारम्भ में २० लाख की सुरक्षित निधि का प्रबन्ध करना चाहिए। २० लाख की निधि के वार्षिक अंश से संस्थान का काम साधारण रूप से चल सकता है। संस्थान का प्रमुख कार्य होगा एक 'सार्वदेशिक उपदेशक विश्वविद्यालय' का सञ्चालन जिसमें देश विदेश के लिए विभिन्न भाषाओं में समाज सेवार्थ लगनशील कार्यनिष्ठ आर्य विद्वानों को उपदेशक कला का प्रशिक्षण देने का पूरा प्रबन्ध हो, दूसरे काम में प्रकाशन विभाग है। प्रकाशन कार्य बड़ा उत्तरदायित्वपूर्ण है। प्रकाशन विभाग में वैदिक साहित्य और आधुनिक उपयोगी साहित्य को विभिन्न भाषाओं में ठोस तथा सुन्दर साहित्य का निर्माण करना आवश्यक है।

२० लाख की निधि पूर्ति का सुगम-साधन

तीन प्रकार की सबन्ध-श्रेणी रखी जाय, जैसे १००

५०० देने वाले सज्जन को साधारण सदस्यों में और ५०० रूपया देने वाले को आजीवन सदस्यों में। कम से कम एक हजार देने वाले से दाता सदस्य शुरु हो। दाताओं की धन राशि असीमित रहे। और 'ट्रस्टी' की विधि से भी धन लेने का सामयिक विधान संस्थान के लिए श्री सार्व-देशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली बना सकती है।

प्रयत्न करने पर सैकड़ों साधारण सदस्य विदेशों में मिल सकते हैं। आजीवन सदस्य और दाता गज्जन भी मिल सकते हैं। लगनशील सत्यासी, वानप्रस्थी और व्रत निष्ठ आर्य नेताओं के आठ वन तिष्ठ मण्डल सद्भाव से विधि पूर्ण की धुन में लग पड़ें तो भारत के विभिन्न प्रांतों से हो ६ मासों में पर्याप्त धन मिल सकते हैं।

आर्य जगत् के मनस्वी और तपस्वी कर्णधारों से तथा आर्यसमाज के प्राणस्वरूप पूज्य सत्यासी महानुभावों से २०२१ वि०स०स० के ऋषि निर्वाण दिवस पर उपर्युक्त संस्थान की पूर्ति का व्रत लेने के लिये युग धर्म की मांग है। उपर्युक्त संस्थान के विषय में मैंने बिल्कुल साधारण विचार व्यक्त किया है। आर्यसमाज के विद्वानों का संस्थान की आवश्यकता उपयोगिता और एक ठोस कार्यक्रम पर अपना बहुमूल्य विचार 'आर्यमित्र' व 'सार्वदेशिक' पत्र में लिखने के लिये नम्र निवेदन है।

★

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ सब जीव स्वभाव से सुख प्राप्ति की इच्छा और दुःख का वियोग होना चाहते हैं परन्तु जब तक धर्म नहीं करते और पाप नहीं छोड़ते तब तक उनको सुख का मिलना और दुःख का छूटना न होगा क्योंकि जिसका कारण अर्थात् पूरा होना है वह नष्ट कभी नहीं होता।

★ परमेश्वर के काम बिना भूल-नूक के होने से सदा एक से हुआ करते हैं।

बलि और बलिदान क्या है ?



[श्री छेवालाल जी बनस्पली विद्यापीठ, बनस्पली]

आधुनिक पौराणिक मतानुसार बलि व बलिदान शब्द को (शाक्तिक मनुष्य देवी के उपासकों ने) पशु हिंसा परक लगाकर भेत्तें बकरे आदि पशुओं को "देवी दुर्गा, मन्वाली काली चामुण्डा, वाराही शीतला आदि की भेंट के नाम से और (पशुओं की हिंसा पूजा के नाम से)" कराते हैं। वैदिक समय में बलि शब्द पशु हिंसा परक नहीं था क्योंकि शास्त्रों में ऐसा विधान नहीं पाया जाता। इसी बलि शब्द को मीसांसा शास्त्र के सूत्र 'यसाय पशुमालभेतु' यज्ञ में पशु को मारो ऐसा शाक्तिक पौराणिक लीला ही का परिणाम है।

एतरेय ब्राह्मण के ३५/२९ का भाष्य करते हुए सायणब्राह्मण जी ने लिखा है "बलिं कृतम्" (अर्थात् बलि पूजा करोति कर प्रयच्छन्नि मृत्युर्थं) यहाँ राजा की पूजा करना अर्थात् (कर) देना अर्थ, बलि शब्द से स्पष्ट है। गोतम धर्म सूत्र २।१।२४ में "राजो बलिदान कर्षकं वंशम-ष्टषष्टया" यहाँ पर किसानो की ओर से जो वसवां, जाठवां, छटा शुल्क राजा को बिया जावे उसको बलिदान शब्द से व्यक्त किया है।

सू० प्रजातिश्रमा बलिहरति प्रराणे प्रतिष्ठिति
प्र० नि० २।७

अर्थ—ससार, (श्वम् तुमी, इमा) यह, (बलिम्) प्राते (हरन्ति) खाते है, (य) जो (प्राणं) पाच प्राणों से शरीर में, (प्रतिष्ठिति) होकर रहते हैं। इस स्थल पर भी बलि शब्द हिंसायें में नहीं है। किन्तु गोप्य ग्राहार वा ग्राह्य रस के अर्थ में है। नारदाय गृह सूत्र ३।१५ यवभूतेभ्यो बलिं हरति सभूत यज्ञ." यहाँ पर पके हुए अन्न के भाग का नाम बलि है। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना उचित है कि इस उक्त नारदाय सूत्र में बलि शब्द चतु-र्ध्वल भूत के साथ सम्बन्ध दर्शाया है। वेदों में कहीं "भूत बलि" शब्द देखकर "भूतानां बलि" अर्थात् भूतों की बलि, ऐसा नवीन अर्थ कोई न करे। क्योंकि यहाँ भूत शब्द में चतुर्धा विभक्ति है "यदायं बलिहितं सुखं रक्षितं"

अष्टाध्यायी ५।१ से अर्थ हुआ है। इसी सूत्र के भाष्य पर देखिये, महाभाष्यकार महीं पतञ्जलि को भी (बलि) शब्द का अर्थ शुल्कादि भाग ही इष्ट है।

'योहि महाराजाय बलि समह्य राजार्थं मवति'

अ० २।१।२६

मनु महाराज ने भी ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थियों के नित्य कर्तव्य में पंच महायज्ञ बतलाये हैं, उनमें बलि भूत यज्ञ भी सम्मिलित है, वहा पर बलि भूत यज्ञ को इस प्रकार स्पष्ट किया है।

श्लोक—अध्यापनं ब्रह्मयज्ञं पितृ यज्ञादथ तर्पणं ।

अग्निर्वैश्वो बलिभूतो नृयज्ञोतिवि पूजनम् ॥

अर्थात् वेदों का स्वाध्याय ब्रह्मयज्ञ, जोषित माता-पिता पुत्र आदि वितर जनों को तृप्त कर देना पितृ तर्पण है। अग्नि में होम करना वैश्वयज्ञ है, भूत प्राणी को उनका (बलि) भाग देना भूतयज्ञ है। एव महात्मा जनों का सत्कार करना आतिथ्य यज्ञ है यही पाच यज्ञ हुये।

श्लोक—शुनाथ पतितामाच श्वपचा पाप रोगिणाम् ।

बायसना कृमीणाच शनकं निविषद् भूवि ॥ मनु०

अर्थ—जब रसोई पाकशाला में तैयार हो जावे तब छ बलि अर्थात् (भाग) भोजन में से, कुत्ता, पतित, चाण्डाल, पाप रोगी, काक और खीटियों के निमित्त शनकं सहज में अर्थात् धीरे से भूमि में रख देवें और भोजन कर लेने के पश्चात् या पूर्व ही जो जो मिल सके उन उनको दे देवे। यदि बलि का अर्थ मारने का होता तो कुत्ता, कीबा, चींटी आदि को मनुष्य नित्य कर्म समझकर इनका बच किया करते। पशुबलि शब्द से, पशुओं की अन्न जलावि से रक्षा करना तात्पर्य था, परन्तु मांसाहारियों ने बलि पशु शब्द को पशु बध में परिणत करके पशु हत्या की विधि दर्शाई है।

पौराणिक अमर कोष में भी बलि शब्द हत्यापरक नहीं है।

श्लोक—"भागदेवः कुरो बलिः । अमर द्वितीय का०

ज्ञ० श्लोक २७

और

“पाठो होमश्चातिथीना सत्रय्या तर्पण बलि

—अमरकोष द्वितीय का० ब्रह्म० श्लोक १४

इन दोनों स्थलों (आत्रिय और ब्राह्मण वर्गों में कहीं भी पशुबध का “बलि” शत्रु में लेना मात्र भी अर्थ नहीं है क्षत्रिय वर्ग की टीका में भी स्पष्ट लिखा है कि “मागधेय, कर बलि त्रीणि कर्ष काश्चिपोराज ग्राह्य मागम्य” ।

और ब्रह्म वर्ग में बलि “बलि हरण स भूत यज्ञ” मनु के उपरोक्त श्लोकानुसार बलि भूत यज्ञ को ही सिद्ध किया है कि जिसमें भून प्राणियों की रक्षा करना ही कर्तव्य बतलाया है ।

जबकि वेदों में स्पष्ट लिखा है कि “यज्ञमानस्य पशून् पाहि० । “अविम् माहिषी ०” गामाहिषी ० ।”

‘एक सप्त माहिषी ०’ इत्यादि इत्यादि अर्थात् यज्ञ-मान के पशुओं की रक्षा करो, भेड़ बकरो मत मारो, एक सप्त अर्थात् बिना फटे खुर वाले पशुओं को मत मारो इत्यादि ।

इसके अनिश्चित अर्थ ही क्या, हिन्दु मात्र ‘अहिंसा परमो धर्म’ को जानते हैं और सर्वत्र सुनते भी ? ।

जान बूझकर जो “बलि” के अर्थ अनर्थ रूप से पशु-बध परक लगाते हैं, उनसे अधिक अनर्थकारी कौन होगा ? यज्ञ अथवा पूजा के प्रक्रमण में पशु बध बतलाना बड़ा मारी अनर्थ है । क्योंकि “यज्ञ वैपूजा सगतिकरण दानेषु” अर्थात् यज्ञ शब्द का अर्थ विद्वानों का सत्कार विद्वानों से मेल मिलावादि परस्पर व्यवहारिक किया, तथा दान देने का नाम है ।

“पशव इव्यन्ते दीयन्ते यस्मिन् स पशुयज्ञ ।” अर्थात् जिस कार्य में विद्वानों के पालनार्थ पशु दिये जाते हैं उसे पशु यज्ञ कहते हैं । यज्ञ के पर्यायवाची शब्दों में कहीं भी पशु बध की आज्ञा नहीं है । यथा अमर का० २ अर्थ ब्रह्म. वर्ग १३ श्लो०—यज्ञ सवोऽध्वरो याग सप्त तन्मुखं ऋतु

यज्ञ सव अध्वर याग सप्ततन्तु ऋतु.

इसमें यज्ञ का अध्वर नाम ही स्पष्ट बतला रहा है कि ‘न ध्वरतीति स अध्वर’ अर्थात् जिसमें किसी प्रकार की भी पशु बधादि हत्या न हो उसको अध्वर अर्थात् यज्ञ कहते हैं । वैदिक निघण्टु में ‘बलि प्राप्ते धालदाने’ लिखा है इती

तिद्वान्तानुसार “बलि पूजो पहारयो !’ अर्थात् बलि का अर्थ सत्कार करना भीषणनादि उपहार देना है, बलि का अर्थ बध नहीं । मध्य युग में बलि अर्थ में पशु हिंसा का जो बाम मार्गीय प्रवेश भारती कर्मकाण्ड में होने लगा था महर्षि दयानन्द को इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने शास्त्रीय आधार पर पशुबलि का निषेध किया । उनके पहान कार्य से वैदिक कर्म काण्ड की पवित्रता बनी रह सकी और ह्व गर्ब के साथ पशुबलि का धार्मिक कर्मकाण्ड के लिये निषेध कर सकते हैं ।



(पृष्ठ ५४ का शेष)

महर्षि दयानन्द ने यह सभी गुण विद्यमान थे । श्रुति की मविषयवाणी—“इस परमात्मा की सृष्टि में अनिमानी, अन्यायकारी, अविद्वान् लोगों का राज्य बहुत दिन नहीं चलता ।” सच निकली ।

स्वदेश प्रेम

“कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है ।” (स० प्रकाश अष्टम् समुल्लास) ।

“हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, और अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उप्रति तन, मन, धन से सब अने मिलकर किया करें ।”

किन्ने अपनी मातृभूमि से प्यार नहीं होता किन्तु सच्चा प्यार तो वह है जो उसकी उप्रति, उत्कर्ष और विकास के लिये तन, मन धन से सदा तत्पर रहें । जो कुछ हमारे पास है, वह देश का है और उसे देश पर न्यो-छावर करना हमारा परम पुनीत कर्तव्य है । स्वामी जी का सम्पूर्ण जीवन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के उत्थान के लिये रहा । श्रुति ने अपने गुरु के समक्ष जो प्रतिज्ञा की थी उसे पूर्ण करके अपनी गुरुमत्ति का परि-धय दिया । अपने कार्यों से यह विज्ञा दिया कि गुरुकुल के बलुचारी के अध्वर कितनी शक्ति होती है । प्रभु से यही प्रार्थना है कि उस जगद्गुरु के उपदेशों तथा कार्यों से हमारा जीवन अनुप्राणित हो ।





महर्षि दयानन्दस्य शास्त्रार्थाह्वानम्

[रच०- शास्त्रार्थं महारथी श्री १० सत्यमित्र शास्त्री वेदतीर्थ, बडहलगज गोरखपुर]



मनुज निमित्त भागवतादिका,
 बहू पुराण कथा जगती तले ।
 प्रथमस्ति निदान मद कथम्
 कलयतास्त्रिगमागम विस्तृतिम् ॥१॥

न लिखिता किल वेद चतुष्टये,
 मृतक देह निमित्त परा क्रिया ॥
 हृदयतोऽपि कथ परिदर्शयेज्जगति ।
 सन्निगमोदित कल्पनाम् ॥२॥

निगदिता सलिलेषु वृथा कृता ।
 बबननु तीर्थगतमिनुजैरल ।
 तदिय मार्य्य निवास विनाशिनी ॥
 विलय मेष्यति चेद् भविता शिवम् ॥३॥

दृपदुपासनया जडता गतम् ।
 जगदिद कथमेष्यति चेतनाम् ॥
 यदि न यास्यति नाशमिय प्रथा ।
 सदुपदेश गुणैर्जगती तलात् ॥४॥

कथमिय जगतीतल वर्तिनी ।
 विलय मेष्यति भिन्न रचिन्नाम् ॥
 विमल वेद पयात् समलगतामथ ।
 पुराण पथ परिपन्थिनम् ॥५॥

अहह मन्यति मार्ग मुपागत ।
 कविजन श्रुतिरथ सहायिनी ॥
 दिवस मति निशातट सन्ति ।
 न रविदर्शन मिच्छति कर्हिषित् ॥६॥

विमल वैदिक धर्म मणिप्रभा ।
 न विषयैर्मलिने हृदि राजते ॥
 विमल दर्पण एव विराजते ।
 मुस्र शशि द्युति सत्तम वर्मणाम् ॥७॥

रथिर पान परायण चेतसा ।
 जगति शाक्त मत प्रतिपादितम् ॥
 प्रकटमेव यदस्ति महीतले
 श्रितमनेक जनैरकोन्मुखै ॥८॥

थरवि केन विदुत्पयायिना ।
 तदपि वैष्णव मार्ग विडम्बनम् ॥
 भवति यत्र यथोरिव दुर्दशा ।
 जनभि तस्य अनस्य नु तापिन ॥९॥

तदितरेण जनेतर वृत्तिना ।
 गतमतद्वयभिन्न मद कृणम् ॥
 जगति शैवमत शिशुवह्निना ।
 भवति यत्र सुखेन वनस्थिति ॥१०॥

गणपति परिकल्प्य तदाश्रितम् ।
 व्यधूत किन्न मन पुरुषार्थम् ॥
 प्रकृति भिन्नतया किल वास्तवे ।
 भवति यत्र मुखस्य विपर्यय ॥११॥

मनुजतामपहाय कुबुद्धिभि ।
 जनवरेषु गुणावित नामसु ।
 त्रिमुखता चतुराननता तथा ।
 भुज चतुष्टयता ध्वरोपिता ॥१२॥

थव जडभूतिमनाय्य फनप्रदा ।
 गुणमयी थव परेण गुणम्पति ॥
 परम हागत बुद्धिभिरादृता ।
 जगति सैव विचित्र मिद कृतम् ॥१३॥

सकल शक्तिमत करुणाकरा ।
 दत्रभाव गनात् परमेस्वरात् ॥
 जगति मे विमुखा प्रकृति जडाद
 नुनमन्ति कथ नहि ते जडा ॥१४॥

उपकृति जगतामत्रनोवधो ।
 रवि शशि द्युति मत्र चकारताम् ॥
 निखिल विश्व गतस्य नुवृत्तिका ।
 द्वितय विद्यति रादरेण कृता ॥१५॥

नित्य मेत्य च धर्मबुद्धयो ।
 दिशि-दिशि प्रथिन धवल यश ॥
 मनुकलै रमल कमल
 यथा ह्यविश्वैर्भ्रमरै परिगीयते ॥१६॥

वशस्य वृत्तम्

दयाकरानन्द विशेषवर्धनात् ।
 जगती तले यो नितरादुदार वी ॥
 ततान नामानुगुणा निजाभिधाम ।
 गुरु दयानन्द इति प्रकल्पिताम् ॥१॥

कर्तव्यमेव जगता सुपकार कृत्यम् ।
 विद्वद् बरैरिति विचारयतीत्य चित्ते ॥
 या भूतया सकल मेव विचार बुद्धया ।
 दिग्मडल समाभि वेष्टित मादरेण ॥२॥

जयतु-जयतु लोके वेद सूर्य्य प्रकाश ।
 भवतु-भवतु पश्चादाय्यं धर्म प्रभाव ॥
 नयतु नयतु दूर न्यायकारी दयातु ।
 नवयत रोग नून मार्याधि वासात् ॥३॥

प्रो. मैक्समूलर के वेद सम्बन्धी विचार



(ले०—श्री डा० कृष्णचल्लम पालीवाल, एम०एस०सी०, पी०एच०डी०)

अबिकांश भारतीय प्रो० फ्रेडरिक मैक्समूलर को भारत का हितैषी और शुभचिन्तक समझते हैं क्योंकि उन्होंने भारतीय धर्म शास्त्रों और विशेषकर वेदों पर बहुत लिखा। उनके वेदाध्ययन का मूल उद्देश्य क्या था? वेदों में उन्होंने क्या पाया। उनका वेदों के प्रति क्या दृष्टिकोण था और विश्व के धर्म ग्रन्थों में वेदों का इनकी दृष्टि से क्या स्थान है यही इस छोटे से लेख का अभिप्राय है।

आपकी शिक्षा क्षम से जर्मन होने के कारण पहले लीपिग और फिर बर्लिन विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष संस्कृतज्ञ प्रो. हरमैन ब्रोहोस के निरीक्षण में हुई। यहाँ के मन्वा विशेषज्ञ फ्राज बोप और बार्शनिक शीलिंग के बिचारों का मैक्समूलर पर प्रभाव पड़ा। तत्पश्चात् आप श्वेब विशेषज्ञ फ्रांसीसी प्रोफेसर ओगीन बरनोफ के संस्कृत विभाग में पेरिस वेदाध्ययन के लिए (१८४६-४७) आये। शिक्षा समाप्त कर एच एच विल्सन और बार्नो वनसन के आग्रह पर आपसफोर्ड विश्वविद्यालय में वेदानुसन्धान के कार्य में लग गये और आजोवन (१८४७ से १९०० तक) इसी विद्यालय के विद्यार्थी अपने वेद, भाषा तुलनात्मक धर्म और भाषाओं के विकास सम्बन्धी विचार देते रहे। इन पचास वर्षों में आपने "पूर्व की पवित्र पुस्तकें सीरीज" के अन्तर्गत २५ धर्म ग्रन्थों का ५० भागों में अंग्रेजी अनुवाद किया। ये पुस्तकें वेद, उपनिषद्, गीता, वेदांत सूत्र से लेकर जैन, बौद्ध, इस्लाम, फारसी एच चीन के धर्मग्रन्थों आदि के विषय में हैं। स्वयं मैक्समूलर ने वैदिक ऋचायें, उपनिषद्, धम्मपद, गृह्य सूत्र और बौद्ध महायान का अंग्रेजी अनुवाद किया। भारतीय घट् बर्षों पर ८९९ में "Six Systems of Indian Philosophy" एक ग्रन्थ लिखा आप के वेद सम्बन्धी भाषण 'The Vedas, India, what it can teach us' ? पुस्तक के रूप में मिलते हैं।

प्रो० मैक्समूलर के वेदभाष्य का आधार सायण

भाष्य है जिसे उन्होंने पहले ६ भागों में (१८४९-१८७३) छपवाया और दूसरा संस्करण ४ भागों में (१८९०-९२) केवल संहिताएँ क्रमशः १८७३ और १८७७ में छपवाईं।

लेख के प्रारम्भ में उठाये गये प्रश्नों का सबसे प्राथमिक उत्तर उनके वेद शब्द होंगे जिन्हें उन्होंने कभी कभी पत्रों आदि के रूप में व्यक्त किया है। इसी में उनके अन्तर में छिपी भावना व्यक्त हो जायेगी, तो पढ़िये उन्हीं के शब्दों में—

प्रो० मैक्समूलर के एक मित्र ई० बी० पूवी ने उन्हें निम्नलिखित पत्र 'तुम्हारा कार्य भारत के धर्म परिवर्तन के प्रयत्न में एक नवीन युग का निर्माण करेगा और ओक्सफोर्ड विश्वविद्यालय आपको यह स्थान देकर धन्यवाद का पात्र है। यह मुख्य और अत्यन्त महत्वपूर्ण (वेदभाष्यादि) कार्य भारत के धर्म परिवर्तन के कार्य को सरल करेगा और उस प्रारम्भिक असत्य धर्म को इस सत्य धर्म जिसका हम पालन करते हैं तुलना करने योग्य करेगा।'

१८८६ में प्रो० मैक्समूलर ने अपनी पत्नी को एक पत्र इस प्रकार लिख "जुसे आशा है कि मैं यह कार्य सम्पूर्ण करूँगा और मुझे पूर्ण विश्वास है हालांकि मैं उसे बेलने को जीवित न रहूँगा तथापि मेरा यह संस्करण और वेद का माध्य आच्छन्त बहुत हद तक भारत के माय पर और उस देव की लालीं आत्माओं के विकास पर प्रभाव डालेगा। वेद इनके धर्म का मूल है और मुझे विश्वास है कि उनको यह विलाना ही कि वह मूल क्या है इस धर्म को नष्ट करने का एकमात्र उपाय है जो गत तीन हजार वर्षों से वसते (वेद से) उत्पन्न हुआ है।"

१६ दिसम्बर, १८६८ को उन्होंने तत्कालीन भारत के मन्त्री आरगायल के ब्यूक को निम्न पत्र लिखा "भारत का प्राचीन धर्म पतन हो गया है यदि अब भी ईसाई धर्म नहीं प्रचलित होता है तो इसमें किसका दोष है।"

२९ जनवरी १८२२ को श्री बाइरेन्मी मालाबारी को



इस प्रकार एकपत्र प्रो० मैक्समूलर ने लिखा "जैसा कि मैंने पहले भी बताया कि मेरे विचार "हिबर्ट" नाथन लिखते समय भारतीयों के बारे में थे। मैं कम से कम उन बोधों से लोगों को बताना चाहता हूँ जिन तक मैं अपने विचार अग्रंशों द्वारा पहुँचा सकता हूँ कि इस प्राचीन धर्म का ऐतिहासिक महत्त्व क्या है जैसा कि समझा जाता है न केवल यूरोपीय या ईसाइयत की दृष्टि से बल्कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से। मैं दो आपत्तियों से चेतावनी देना चाहता हूँ। प्रथम तो भारत के राष्ट्रीय धर्म की अवहेलना व मूल्य न्यूनता करना जो प्रायः तुम्हारे अपूर्व-यूरोपीय नवप्रवृत्तियों द्वारा किया जाता है और दूसरे अधिक महत्त्व देना या ऐसा अनुवाद करना जैसा कभी नहीं किया गया। ऐसा कुछ बहुत दयानन्द सरस्वती के वेदों पर परिश्रम में प्रदर्शित होता है। वेदों की प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थ मानो जिनमें एक पुरानी और सरल प्रकृति की जाति के मनुष्यों के विचारों का चित्रण है और तब तुम इसकी प्रशंसा कर सकोगे और इसमें से इस आधुनिक युग में नई विशेषकर उपनिषदों की शिक्षाओं को ग्रहण कर सकोगे। लेकिन इनमें क्षोत्र करो "बाध इज्जत, बिजली, यूरोपीय बर्तन और नैतिकता को" वेदों की इसके सत्य रूप में अलग कर दो इसके वास्तविक महत्त्व को नष्ट कर दो और तुम प्राचीन और अर्वाचीन के ऐतिहासिक क्रम को जो इन्हें बाधे हुए है छिन्न-मिन्न कर दो। प्रतीत एक सत्य है, ऐसा मानो। उसका अध्ययन करो तब तुम्हें नबिध्य में मैं अपना ठीक मार्ग अपनाते मैं कम कठिनाता होगी पाठक यहाँ प्रो० साहब की अन्तरात्मा के माथों को समझ गये होंगे और वे किस प्रकार महर्षि दयानन्द भाण्ड्य शैली से मयभीत प्रतीत होते हैं। सम्झते होंगे दयानन्द की शैली के आगे मेरी बाल न गलेगी।

उन्होंने अपने पुत्र को इस प्रकार लिखा तुम पृष्ठों के विवरण में कौन सी पवित्र (धार्मिक) पुस्तक सर्वश्रेष्ठ है? शायद यह उत्तर वसपात पूर्ण प्रतीत हो। लेकिन मैं वास्तव में बाइबिल के म्यू टेस्टामेंट को कहूँगा। उसके पश्चात् कुरान को स्थान दूँगा जो अपनी नैतिक शिक्षाओं में बमुश्किल म्यू टेस्टामेंट के संस्करण से श्रेष्ठ है। उसके पश्चात् कमल, ओल्ड टेस्टामेंट, दक्षिणी बौद्धों की त्रिपि-
(लेख आपके पृष्ठ पर)

सुनाऊँ ऋषि का गौरव-गान

दीन होन भारत में जितसे आगा वेद विहान ।
फले वेद विशद पद्य सब लिये पुराणों की अधियारी ।
छल प्रपञ्च पालख जाळ में मूल रहे ये सब नरनारी ।।
प्रभु के बदले लगे पूजने पीपल और पावाण ।।
ब्रह्मानन्द की ज्ञान सुभा से सुप्त तृपित प्रतिमा पुलकाई ।
दयानन्द के पावन उर में वेद ज्ञान की ज्योति जलाई ।
लगी फूलने प्रभा पुण्य की मिट कर तिमिर महान ।।
तकं तीर शास्त्रार्थ धनुष से सकण मतों का लगा हियाने ।
अपने बुकचे सब टटोलते लगे अनेक विकल्प बताने ।।
सब सत्यायं प्रकाश देख काये इमीळ कुरान ।।
प्रतिमा साधन निराकार की पूजा का हूँ लगे बताने ।
अल्लाह बाले सात फलक को सात उलूल लगे समझाने ।।
ईसाई भी मूल गये अपना शोषा असमान ।।
शिक्षा सूत्र गीता गऊको की उसने ही की पहरेबारी ।
स्वतन्त्रता का महामन्त्र दे गया प्रथम आवित ब्रह्मचारी ।।
स्त्री शिक्षा हिन्दी आलोकित पाकर नव-परिधान ।।
ऋषिबर् के सकेत देखकर शासन ने निज लक्ष्य बनाये ।
छुआछुत और बाल विवाह की बन्दी के अधिनियम बनाये ।।
समी हो गया आर्यबीर तुम किन्तु न लेना मान ।।
बिज्ञानों की चकाचौध में ईश्वर का अस्तित्व मूलकर ।
भौतिकवादी चकाचौध में धर्म कर्म की रहे धूलकर ।।
बने नास्तिक नई रीतानी के उन्मत्त जवान ।
भारतीय संस्कृति छोड़ पादचात्य रागों में जीबन डाला ।
अष्टाध्याय बड़ा चरित्र की पावनता का मुह काला ।।
सह-शिक्षा के परिणामों का बुढ़कर दुखित बखान ।।
एक ओर है ब्रह्मकुमारी मत ने नव पालख रचाया ।
ईसाइयत की सुरसा ने एक ओर निज मुह फँसाया ।।
छद्म प्रलोभन डे लालों का छीन रहे ईमान ।
देख दुखित हो छुपा चन्द्रमा दम्भ द्वेष से धरती काली ।
ऋषिबर् के सिद्धान्त बीप ले तुम्हें जलानी है बीबाली ।।
जिते जलाया था ऋषिबर् ने दे जीवन का बान ।।

सुनाऊँ ऋषि का गौरव गान ।।
—धर्मोन्द्रनाथ 'अलिन्द'
हल्द्वार (बिजनौर)



(पिछले पृष्ठ का शेष)

टिका लाओटस के टाओट, राजा कल्पसुसित, वेद और ब्रह्मेस्ता ।

१८९९ मे प्रो० मैक्समूलर ने ब्रह्मसमाजी एन० के मन्मथदास को निम्नलिखित पत्र लिखा—“तुम जानते हो कि मैंने तुम्हारे भारत के प्रिय धर्म को शुद्ध करने के प्रयत्न एव उसके द्वारा उसे अग्न्य अग्न्यधर्मों विशेषकर ईसाईयत की पवित्रता और पूर्णता के समीप लाने के कार्य का अनेकों वर्षों से अध्ययन किया है। सबसे पहले तुम्हें निरन्धय करना है कि तुम अपने प्राचीन धर्म का कितना भाग त्यागने को तैयार हो। यदि उसका सर्वस्व वहीं जो पुराना कहा जाता है, तुमने काफी मात्रा में त्याग दिया है। ब्रह्मदेवतावाद, मूर्तिवाद और धूम धाम से की गई बलि पूजा ।

तत्पश्चात् न्यूटेस्टामेंट उठाओ और स्वयं पढ़ो और स्वयं निर्णय करो कि उसमें लिले ईसा के शब्द तुम्हें सतुष्ट करते हैं अथवा नहीं। ईसा के अथार्थ्युक्त बचनों में अन्तर्-निहित उपदेश तुम तक वैसे ही आधेगे जैसे वे हम तक आते हैं। हमें भी इन उपदेशों का अपना अर्थ देने का अधिकार नहीं है, विशेषकर यदि हम उनका स्वयं मित्र अर्थ करें। यदि तुम उसकी शिक्षाओं को यथावत् स्वीकार करो तो तुम भी ईसाई हो (या हो सकते हैं)। तुम मुझे अपनी मुख्य परेशानियाँ बताओ, जो तुम्हें स्पष्टरूप से ईसाई बनने में बाधा डालती हैं और जब मैं लिपि में स्पष्ट करने की पूर्ण कोशिश करूँगा कि किस प्रकार मैंने और मेरे साथियों ने उनका मुकाबला किया है और उन्हें हल किया है। मेरी दृष्टि में भारत का मुख्य भाग इसाई बन चुका है। तुम्हें ईसाई बनाने में समझाने बुझाने की जरूरत नहीं है। तब तुम स्वयं अपने (धर्म परिवर्तन) के बारे में विचार करो।

निस्सन्देह! भू और ओल्ड टेस्टामेंट की नैतिक एव चारित्रिक शिक्षाएँ किसी भी अग्न्य पवित्र पुस्तक से कहीं उत्तम हैं। इसमें बाइबिल की अद्वितीयता अन्तर्निहित है साधारणतया अग्न्य पवित्र पुस्तकें प्राचीन काल के लोगों को जो स्मरण रहा उसका सन्धय मात्र हैं।

तुमसे पूर्वागमियों ने पुल निर्माण कर दिया है निर्णयतापूर्वक आगे बढ़ो। यह तुम्हारे कारण दूरेगा नहीं

और उस पार तुम्हारे स्वागत के लिये अनेकों मित्र हैं जिनमें तुम्हारा पुराना मित्र और साथी फ्रेडरिक मैक्समूलर से ज्यादा कोई प्रसन्न न होगा।

प्रोफेसर मैक्समूलर के उपरोक्त उद्धरणों से आपको अब स्पष्ट हो गया होगा कि पचास वर्ष तक वेदाध्ययन करने पर इन्हें वेदों में क्या मिला और जो मिला उसे किस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट करके जनता के सामने रखने का निर्देश दे रहे हैं। ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त जो मानवमात्र को एक परिवार के रूप में देखने व रहने और व्यवहार करने का आदेश देते हैं बचपने के विचार लगते हैं। ऋग्वेद जो स्ट्रुअट वि गोड के शब्दों में Iliad और Odyssey दोनों के मिलकर बराबर है सामान्य ज्ञान से भरा प्रतीत हुआ जबकि सत्य यह है इस ईश्वरीय ज्ञान भण्डार का सत्यार्थ अटकलबाजी या कुत्सित भावनाओं से नहीं निकलता इसके समझने के लिये आर्य प्रजाती की आवश्यकता है जिसे मर्हाष्य वधानव्य ने पुनश्चन्द्र किया और जिते वे अधिक मूल्यवान् कहते हैं। जबकि सच्चाई यह है कि उदात्त विचारों से पूर्ण वेद ज्ञान को श्रेय सिद्ध करें ताकि ईसाईयत के प्रचार का मार्ग सरल हो जाये, यह माधवनायें स्पष्ट होती हैं उनके आशिरी उद्धरणों से। उनके सस्कृत और वेदाध्ययन का मूल उद्देश्य तो भारतीयों का धर्म परिवर्तन न करना या उग्होंने समझ लिया कि वेद भारतीयों के प्राण हैं उनमें अधर्मा उत्पन्न करके ही हम उन्हें ईसाई बना सकते हैं और यही मार्ग उसने अपनाया। आज भी उनके अनुयायी प्रो० एस्टलर ऋग्वेद का पुनर्व्यंठन कर रहे हैं क्योंकि वह विषयानुसार नहीं है। विषय तो उग्हें जब पता चले अब वे सत्य को जानना चाहें वे तो भारतीयों को उनके धर्म प्रथमों के प्रति अधर्मा उत्पन्न करने पर तुले हुए हैं। आज से ती बर्ष पहले एक मैक्समूलर थे मगर आज संकटों मैक्समूलर सस्कृत द्वारा भारतीय सस्कृति में मृत्ति विधाने, तुलनात्मक धर्मों का अध्ययन करने के नाम पर किस प्रकार वेदों का, धर्म शास्त्रों का अर्थ का अर्थ करके धर्म परिवर्तन के कार्य को कर रहे हैं। यह भी कंसा अनुसन्धान है कि वेदों में कुछ भी हो मगर उनमें दूधो पुरोपीय दर्शन,बिबली, बाइबल ।

निस्सन्देह पादचार्य विद्यामो ने अनुसन्धान के नाम पर

[शेष पृष्ठ ६६ पर]



राष्ट्र-लक्ष्मी

(रबीन्द्र अग्निहोत्री एम०ए०, १६, केलाबाग, बरेली)

विश्व विख्यात पशु-विशेषज्ञ डा० राइट ने सन् १९३५ ई० में प्रायः आठवीं के आधारे पर घोषित किया था कि गोवश से भारत को जो आय प्रतिवर्ष होती है वह ११ अरब ४० से अधिक है। यह गणना करते समय उनके समस्त सन् '३५ के चीजों के भाव थे जिनमें आज पांच गुने से लेकर दस गुने तक की वृद्धि हो चुकी है। अत उक्त गणना के आधारे पर ५५ अरब से लेकर ११० अरब ४० तक की वार्षिक आय गोवश से हुई। पर चूकि सन् '३५ से अब तक अबाध रूप से गोवश का बंध किया जा रहा है और उचित पोषण के अभाव में भारतीय गाय की दूध देने की क्षमता में भी ५० प्रतिशत तक ह्रास हुआ है अत गोवश से होने वाली आय में भी घटाय आश्चर्यकारी परिवर्तन आ गया है पर फिर भी वह उपेक्षणीय नहीं है। आज दूध और दूध से बनी चीजों से ६ अरब २० करोड़ ४० प्रति वर्ष आय होती है। गोबर की खाद से १००० करोड़ ४० प्रति वर्ष की आय होती है। (रेलिए अबनीन्द्रकुमार विद्यालकार द्वारा सम्पादित 'भारत ज्ञान कोष' १९६४) यह सम्मिलित आय है। केवल गोवश से आज भी २५ अरब ४० वषाय वार्षिक आय होने का अनुमान है जैसा कि अखिल भारतीय गोरखा सम्मेलन, वृन्दावन में एक वक्ता ने बताया था। यह राशि हमारी समस्त राष्ट्रिय आय के चौथाई भाग से अधिक है। इतनी आमदनी अन्य किसी भी एक श्रोत से नहीं हो रही है। इस पर भी, सरकार से मोटी-मोटी तनखवाह पाने वाले तथा कथित पशु विशेषज्ञों ने देश में 'अनुपयोगी' पशुओं का भूत खड़ा कर रखा है। उनका कहना है कि देश में अधिकांश गायें कम दूध देने वाली हैं, बेल कमजोर हैं अत इन्हें रखने के स्थान पर कटने देने में ही लाभ है। वास्तविकता यह है कि इन लोगों का यह कथन सर्वथा भ्रामक, निराधार अतएव असत्य और अनुसरवायिष्यपूर्ण है। सरकारी आकड़े स्वयं यह बताते हैं कि देश में २ या ३ प्रतिशत से अधिक तथाक-

थित 'अनुपयोगी पशु' नहीं हैं। यह सत्य है कि भारत की अधिकांश गायें कम दूध देने वाली हैं। और जब यह देखते हैं कि नीदरलैंड की गाय औसतन ८००० पौंड, आस्ट्रेलिया की ७००० पौंड, स्वीडन की ६००० पौंड और अमेरिका की ५००० पौंड दूध वर्ष भर में देती है पर भारत की गाय वर्ष भर में केवल ४१३ पौंड दूध देती है (देखिए इंडियन इयर बुक १९६४, हिन्ड पाकेट बुक पृष्ठ १५०, १५१) तो बड़ी शर्म महसूस होती है, और यह देखकर तो अपनी हीन बसा पर ग्लानि अनुभव होती है (क्योंकि यह वस्तुतः हमारी ही उपेक्षा का परिणाम है,) कि अन्य देशों की गायें दूध देने की अवधि में सामान्यत ३००० से ४००० पौंड तक दूध देती हैं पर भारत की गायें साधारणत केवल १५०० पौंड ही दूध देती हैं। (पूर्वोक्त) गाय की दुरधी पादकता में कमी होने का ही परिणाम है कि आज बेलों में अधिक काम करने की क्षमता नहीं। पर विचारणीय यह है कि इस 'अनुपयोगी गोवश' की विद्यमानता में प्रति व्यक्ति उपलब्ध दूध केवल ५६० औंस है, (जिस भारत में घी, दूध आदि की नबिया बहुतों थीं उसकी इस पतित और अक्षमता बला पर जरा ध्यान दीजिए। जरा तुलना भी कीजिए न्यूजीलैंड में प्रति व्यक्ति उपलब्ध दूध ४४ औंस और और डेनमार्क में १४८ औंस है।) इन विशेषज्ञों के कथनानुसार 'अनुपयोगी' गायों को नष्ट कर दिया जाय तो फिर तो भारत में दूध का बर्षान भी दुर्लभ हो जायगा। खेती के दिने भारत में पहले ही दो करोड़ बेलों की कमी है। अगर विद्यमान बेलों को कमजोर एव अनुपयोगी बनाकर समाप्त कर दिया जाय तो भारत में खेती असम्भव हो जायगी क्योंकि सरकारी अनुमान है कि बेलों की हटाकर उनके स्थान पर ट्रेक्टर से काम लेने के लिये ७० लाख ट्रेक्टर चाहिये और फिर प्रति वर्ष १० लाख ट्रेक्टरों की व्यवस्था करनी पडा करेगी। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भारत सरकार वर्तमान गोवश को अनुपयोगी बताने पर नष्ट मले ही कर दे पर ७० लाख ट्रेक्टरों की व्यवस्था करना उसके लिए आकाश-कुमुद चयनमात्र है। फिर क्या ये ट्रेक्टर खेती के लिये खाद भी बिया करेंगे? खाद सामग्री के लिये दूध और घी भी बिया करेंगे? क्या एक बार धन लगा देने पर क्रमश इनकी सतति बढ़ती ही जायगी? इन अनुपयोगी पशुओं को समाप्त करने के बाध

आवश्यक मात्रा में उपयोगी पशु ला बिये जायेंगे—ऐसा बिरबास बिलाना उसी बायबे के समान है जो हिन्दी भाँडो-लून समाप्त कर देने के पदवात् ही हिन्दी को सर्वबानिक पूर्ण अधिकार देने के लिए सरकार की ओर से किया गया था। अपनी जिस मूल के लिये हमें आज तक पशुशास्त्र की अतिम परीक्षा देनी पड़ रही है उसको पुनरावृत्ति करने को हम उद्यत नहीं। यदि सरकार यह चाहती है कि हम इस सारे गोबश को उसके कथनानुसार 'अनुपयोगी' मानकर उसके हवाले कर दें तो उसे पहले दो काम करने होंगे। सब पहले तो इस गोबश के बदले में देश की आवश्यकता भर 'अपयोगी' गोबश प्रदान करना होगा। दूसरे, उसे अपने उस सारे रिकार्ड को झूठा सिद्ध करना होगा जिसके अनुसार 'अनुपयोगी' पशु से भी सामान्य रूप से २२) ४० से लेकर २७) ४० तक का वार्षिक लाभ होता है जिसे आधुनिक विज्ञान की सहायता से १३६०) ४० वार्षिक तक बढ़ाया जा सकता है, मुफ्त की बिजली और खाद का मूल्य घुसक रहा। देखिये मेरा लेख 'वार्षिक कर्साईखाने बनाम बेकोलनि' यदि वह ऐसा करने को उद्यत नहीं तो क्यों न हम उसकी 'लोक कल्याण-प्रवृत्ति' पर सन्वेह करें! ब्रह्म बापेद हो जाने पर और सेतो असम्मन्य हो जाने पर फिर यहाँ बचेगा कौन? शायद मिट्टी फाककर ये विशेषज्ञ ही जीवित रहेंगे!

ये अनुपयोगी कहे जाने वाले पशु देश के लिये बरवान हैं अनिजाय नहीं। अपनी आयु के अन्तिम दिन तक प्रत्येक पशु गोबर और मूत्र देता है। यदि गोबर और मूत्र का ठीक उपयोग किया जाय तो यह स्वयं बहुत बड़ी सम्पत्ति है और इसकी खाद से हम अपने कृषि उत्पादन को पच्चीस गुना बढ़ा सकते हैं। सरकारी पशु गणना रिपोर्ट १९५५-५६ के अनुसार देश में गोबश का प्रतिदिन ६८,३९,३०० भन गोबर होता है। इससे कुछ कम गोमूत्र होता है। 'मिशल इनकम कमेटी' १९५१ की रिपोर्ट में पृष्ठ ६८, अपेग्निक्स ४४ ए पर गोबर और मूत्र के जो भाव लगाये गये हैं उसके अनुसार केवल गोबश से देश की प्रतिवर्ष ६२१ करोड़ ४० का गोबर प्राप्त होता है, अर्थात् एक पशु से ३८ ४० का गोबर। इसी रिपोर्ट के आधार पर एक गाय के मूत्र का वार्षिक मूल्य १४ ४० है (जिससे

mal Husbandry in India १९५१ के अनुसार १६० ४० की माइट्रोबन, ६४० ४० की फाफेट तथा ६५० ४० की पोटास कुल १३६० की अति उपयोगी सामग्री तैयार की जा सकती है। ये अब से २३ वर्ष पुराने मूल्य हैं जिनके अब चौगुने हो जाने में तो कोई सन्वेह है ही नहीं। यदि यह सब न किया जाय, पशुओं से यह लाभ न उठाया जाय तो भी गोबश के प्रत्येक पशु से हमें प्रतिवर्ष ५२ ४० का गोबर एवं गोमूत्र मिल जाता है चाहे वह पशु 'अपयोगी' हो या 'अनुपयोगी', जबकि सरकारी गोसबनो में रखे गये 'अनुपयोगी' पशुओं का खर्चा २५ ४० से लेकर ३० ४० तक आता है क्योंकि वहाँ उन्हें बहुत कम मूल्य में जगली चारा उपलब्ध हो जाता है। पहाड़ों की तराई तथा अन्य इलाकों में किसान लाखों गाय बेल केबल गोबर और मूत्र के लिये ही पालते हैं और वे किसी भी मूल्य पर अपने बूढ़ या अपग पशु को नहीं बेचते।

हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री नेहरू जी को एक बड़ी शिकायत यह रही कि भारत में अधिकांश गाएँ एक एक पाब बूब देने वाली हैं जबकि रूस आदि देशों में गाय एक-एक मन बूब प्रतिदिन देती हैं। स्व० नेहरू जी का यह आरोप अक्षरशः सत्य है। हम स्वयं इस तथ्य से चुकी हैं कि जिस भारत की गाएँ 'शतोबन' (सौ व्यक्तियों को एक समय भरपेट भोजन कराने वाली) प्रसिद्ध थीं, उसी भारत की गाएँ आज 'एकोबन' भी बहीं। भारतीय गाय की बूब देने की क्षमता में निरन्तर ह्रास हो रहा है, और जैसा कि हम पूर्व ही बता आये हैं, यह ह्रास सन् ३५ से ६१ तक ५० प्रतिशत तक हुआ है। प्रश्न यह उठता है कि आखिर इस ह्रास के कारण क्या हैं? और उसके लिये बोधी कौन है? हमने इस समस्या पर जब भी गम्भीरता से विचार किया सरकार की ही बोधी ठहराया और इसके पीछे जो शक्ति (Factor) काम कर रहा है वह है दूधित शिशा और उसी के परिणाम स्वरूप दूधित सामपान, जिसने अपने प्रभाव से 'विवेक शक्ति' को नष्टकर दिया है। गोबश के प्रति सरकार की उपेक्षा का ही परिणाम है कि गायों के बरने के लिये देश में आज गोबर धूमि का नितागत अभाव हो गया है। आज प्राणों तक में घास के बरने के लिए



भूमि नहीं। पशु खाद्य की ७० प्रतिशत कमी होने पर भी इस करोड़ रुपया की आर्थिक सखी विदेशों को भेजी जा रही है। अच्छे सांड आब एक प्रतिशत भी उपलब्ध नहीं हैं। बूबरे देशों की सरकारों ने अपने गोवस को उन्नत एव दुग्धाक बनाने के लिए काकी प्रयत्न किया है। भारत में सरकारी सूत्र ने गाय के रक्षण एव सवर्धन पर इतना ध्यान नहीं दिया। लेकिन इस उपेक्षित अवस्था में भी गाय आज पुनः प्रवृत्ति आर्थिक उपयोगिता और दुग्ध उत्पादन की क्षमता प्रदर्शित कर रही है।

केन्द्रीय गोसम्बद्ध परिषद् द्वारा देश में प्रति वर्ष जो दुग्ध प्रतियोगिता आयोजित की जाती है उसमें गत ५-६ वर्षों से हर वर्ष गाय को ही अधिक दूध देने पर पुरस्कार मिल रहा है। दुग्धोपादन में भैंस गाय से अब भी पिछड़ रही है। उक्त परिषद् के अध्यक्ष श्री उ००० डेबर साई के शब्दों में गाय को अगर मौका मिले तो वह अद्वितीय रूप से दुग्धोपादन की क्षमता प्रदर्शित कर सकती है। 'उर्लॉ-कांचन (महाराष्ट्र) की गोशाला में 'गीरगाय' को प्रति वर्ष ४५, ४७ पौंड से भी ऊपर दूध देने में पुरस्कार मिल रहा है। गतवर्ष इस गोशाला की 'गोपालरत्न' की पदवी दी गई थी। सन् १९६३-६४ की दुग्ध प्रतियोगिता के लिए जो रिकार्डिंग किया गया उसमें उर्लॉकांचन की गाय ने ५३ पौंड दूध दिया। गतवर्ष पंजाब के प्रसिद्ध गोपालक श्री हरीसिंह जी के फार्म की साहोवाल गाय को ६८ ६ पौंड दूध देने के लिए दो हजार रुपया पुरस्कार दिया गया। भैंस को जितनी खुराक मिलती है, जितना अच्छा उसका पालन-पोषण होता है उतना यदि गाय का हो तो भारत की गाय इस अबनत बसा में भी स्व० श्री नेहक की आकांक्षा को पूर्ति कर सकती है।

गत वर्ष गांधी जयन्ती के अवसर पर बम्बई की आरे कालोनी में गायों के एक नए कक्ष का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने देश में दूध की कमी का उल्लेख करते हुए कहा था— 'पर्याप्त मात्रा में दूध मिलने से अधिकांश भारतीय शारीरिक दृष्टि से शिबिल हैं और उनकी यह असमर्थता देश के विकास में बाधक बन रही है।'

गऊ को माता मानने वाले प्रतिवर्ष गोपाष्टमी पर्व मनाकर गो को कामधेनु, शतोदना, अबध्य और अज्या

कहने वाले, सप्ताह के शिरोमणि देश, इस स्वतंत्र भारत के हम आर्यों पर इससे अधिक सम्मीर लांछन और कौन सा हो सकता है? श्रुति निर्वाण के महत्वपूर्ण अवसर पर हम देश की आर्य जनता से अनुरोध करते हैं कि वह जागे और राष्ट्र की लक्ष्मी, सुख और समृद्धि की मुख्य आधार गऊ को उन्नत और विकसित बनाने में सहयोग दे ताकि शतोदना कामधेनु निर्भय होकर बिचरण करें और भारत में फिर से दूध वही की नवियां बहती दिखाई दें। सपन लोग घर पर गऊ पालें। शेष लोग इतना मत अवश्य लें कि दूध पयासमय केवल गाय का ही प्रयोग में लाए गे। इससे गोपालन को प्रोत्साहन मिलेगा, गाय की रक्षा होगी।

[पृष्ठ ६० का शेष]

वेदों के साथ जबर्दस्त अग्न्याय किया है। कहीं वेद की सांख्यिक एव सांख्यिक प्राणिमात्र के कल्याण को मायनायें और कहीं उनकी गिनती उनसे भी हैय जो अमानुषिक और परस्पर विरोधी शिक्षाओं से भरे ग्रन्थ हैं। कहीं सृष्टि के आदि में प्राणिमात्र के कल्याण के लिए दिया गया ईश्वरीय ज्ञान और कहा अल्पज मानव के मस्तिष्क की कल्पनाओं और इतिहास से भरे ये ग्रन्थ। कैंसी तुलना कैंसी सामान्यता। रिसर्च का अर्थ तो यह है कि पदार्थ का सत्य ज्ञान का पता लगाना और वेदों के विषय में बही अर्थ करना जिन मायनाओं से ये ओत प्रोत हैं।

मेरा विचार है कि आज नहीं तो कल सर्वाधिक भी माया शैली ही वेद का सत्यार्थ प्रगट करने में समर्थ होगी जिसे प्रो० संकसपूलर ने स्वीकार नहीं की। इसी शैली को न अपनाने के कारण ये भ्रातियां हो रही हैं।

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ जो कोई दुःख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे वह अर्थन को छोड़ धर्म अवश्य करे।



टी० बी० (तपेदिक)

की अचूक चिकित्सा घर बैठे करे। ५८ वर्ष की खोज,
अनुभव एवं परीक्षण का परिणाम,

‘यज्ञ-चिकित्सा’-भाग २ पूर्णतः संशोधित
नवीन संस्करण

सेनेटोरियम का परिणाम ८० प्रतिशत। लेखक-सर-
कार द्वारा अनेक बार पुरस्कृत एवं समानित स्व० डा०
फुन्बलाल जी अग्निहोत्री एम डी (लवण) मेडिकल
शाकिर टी जी सेनेटोरियम। मूल्य ४००

लेखक की अन्य पुस्तकें

२-आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा

आमूल्य लेखक स्व० श्री मावलकर जी, अध्यक्ष लोक
समा। हर रोग की सरल अचूक चिकित्सा घर पर ही
स्वयं करें। मू० ४००

३-आरोग्य शास्त्र

सर्वदा स्वस्थ रहने के वैज्ञानिक अनुसृत नियम बताने
वाली अपने विषय की एकमात्र पुस्तक। उपहार में देने
के लिये अनुपम भेंट। मू० २००

[उक्त सभी पुस्तकें शिक्षा विभाग एवं पञ्चायत राज
द्वारा स्वीकृत और सरकार द्वारा पुरस्कृत है।

४-राष्ट्र उत्थान की कुञ्जी

गऊ प्रबल पचासों द्वारा अनेक रोगों की चिकित्सा एवं
गऊ की उपयोगिता बताने वाली अनूठी पुस्तक। मू० ५०

“चारों पुस्तकें एक साथ लेने पर छूट १००। डाक-
व्यय २००। हृवन सामग्री-तपेदिक नाशक ६५०,
विशिश्ट रोग नाशक ४५०, दैनिक प्रयोगार्थ “सर्वरोग
प्रतिरोधक-२५० प्रति सेर।”

स्वास्थ्य भंडार, १६, केलाबाग, बरेली।

ब्राच स्वास्थ्य भंडार, ७/३ लाजपतनगर, चौक, लखनऊ-३

आर्य-जगत् के प्रसिद्ध कविवर—
श्री ‘प्रणव’ शास्त्री एम.ए. द्वारा लिखित

* ज्वाला *

वास्तव में ज्वाला है।

जिसका प्रत्येक छन्द हृदय में बीर रस की धारा बहा
देता है। चीन को चेतावनी देने वाले जिसके छन्द हृदय में
ज्वाला मड़काते हैं। जिसके मूमिका लेखक डा० सूर्यदेव
शर्मा एम० ए० अजमेर हैं। एक बार अवश्य पढ़िये।

मूल्य लागत मात्र केवल ५० नये पैसे।

नौजवान जाग

यह भी उन नौजवानों के लिये लिखी गई है, जिन्हें
अपने देव से प्यार है। उस लाल चीन के काले कारनामों
की कविता व शायरी द्वारा पोल खोली गई है। जिसकी
एक प्रति सीमा के जबानों की चुपत मेजो गई हैं।

मूल्य २५ न.पै. दोनो पुस्तकों के लिए ७५
नये पैसे के लिए टिकट भेजकर मंगवाइये।

मिलने का पता.—

१-गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क देहली

२-राधेश्याम गुप्ता, वार्ड नं. ६ बल्लबगढ़

(गुडगांव)



कौन? आर्यसमाज करेगा भारतीय तारुण्य के प्रति

शका—थाई खराबी दशा बिगड़ गई, देश का नव निर्माण,
बता दो कौन करेगा ?

समाधान— बनाये बिगड़ी देश की रक्षा देश का पहरेदार,
यह आर्यसमाज करेगा ।

शका—भटक रहे अन्धेरे मे आज देश के नर - नारी,
नही सूझता पथ जनता फिरती है मारी-मारी,
इन्हे मार्ग दिखलाने वाली अमर ज्योति का दान,
बता दो ?

समाधान—सत्यार्थप्रकाश लिए हमको आगे चचना है,
पडे भले ही विष पीना या कि आग मे जलना है,
अन्धकार के कण-कण मे नूतन ज्योति विस्तार,
आर्यसमाज करेगा ।

शका—विलासिता की घोर घटा आज देश मे छाई है,
कृत्रिमता और फैशन की काली आधी आई है,
दानवता के कुटिल करो से मानवता का त्राण,
बता दो कौन करेगा ?

समाधान—भोग त्याग की धारा को एक केन्द्र मे ला करके,
ज्ञान कर्म का मनमोहक सम्मेलन बुलवा करके,
भौतिकता मे आध्यात्मिकता का सुखकर संचार,
आर्यसमाज करेगा ।

शका—नये नाच लडकियों के देख शर्म शरमाती है,
कहकर कोई क्या कर ले लोई उतर जब जाती है,
लाज लुटी मर्यादा मिट गई मानुष्यकति का मान,
बतादो कौन करेगा ?

समाधान—समझे दुनिया नारी को बेटी भगिनी और माता,
मातृभूमि के रक्षक मे आर्य निभायेंगे नाता,
भाई बहिन का प्रचलित पावन प्रेम भरा व्यवहार,
आर्यसमाज करेगा ।

त्याग, तपस्या, स्वाभिमान हो, नई रवानी हो !
नूतन बल, नूतन पौरुष से भरी जवानी हो ! !

ऐसी हो हुकार कि काई-सा अरिदल फट जाए ।
ऐसी हो ललकार कि परो पर रिपु आ झुक जाए ।
धीप्तानन नख अन्यायी दल तृण-सा धर-धर कापे-
गरजे तो सागर मे रिपु पर प्रलय-घटा घहराये ।

दुष्टो को हो झून, सज्जनों को कल्याणी हो !
नूतन बल, नूतन पौरुष से भरी जवानी हो ! !

जल सी हो शीतलता, सुमनों सा गुण-सौरभ हो-
हो सृष्टिगुना तस्सी निज सस्कृति का गौरव हो,
सूरज सा हो तेज, मिटा दे जो जग का अधिवारा
पावक सी पावनता हो, मन मे न मलिनता हो ।

सरस आचरण, मधुर कर्म हो मधुमय बाणी हो ।
नूतन बल, नूतन पौरुष से भरी जवानी हो ! !

धमा धरित्री सी, धीरज हो अबल हिमालय-सा ।
मुरसरि सी निर्मलता हो, हो सयम चातक-सा,
हो हस-सा विवेक, क्षीर को जल से विलगये,
हो ताजगी पवन सी, निश्छलपन मृग-शावक-सा

दानवता पर मानवता की विजय निशानी हो ।
नूतन बल, नूतन पौरुष से भरी जवानी हो ! !

—भगवानशरण भारद्वाज 'प्रदीप'

सस्कृति सस्थान, स्वाशाकुतुब बरेली

सत्य ज्ञान की किरणो दूर सकल तम भागेगा,
ऋषि सन्देश गुजने दो देश का जन-जन जागेगा,
रोग कई है, एक नहीं है, इन सबका उपचार,
आर्यसमाज करेगा ।

—कु० सुशीला आर्या एम०ए०

कन्या गुरुकुल, नरैला





महर्षि की सार्वभौमिकता



(६०—श्री वेदव्रत शास्त्री सिद्धान्तवाचस्पति, श्री गांधी विद्यालय इष्टर कालेज)

महर्षि की कीर्ति परिमा स्वतन्त्र भारत ने किस स्थाय में गाई जाती है ? जब यह प्रश्न हमारे समक्ष उपस्थित होता है तो गिर लज्जा से नत हो जाता है। उस समय हृदय से यही भाव प्रादुर्भूत होता है कि भारत के वर्तमान आर्य राजनीतिक अथवा आर्यतर राजनीतिक, मुट्टी भर लोगों के असन्तुष्ट होने के मय से महर्षि का नाम तक केना पसन्द नहीं करते, इन्हें कृतघ्न तो नहीं कह सकते परन्तु इन्हें कायर कहने में सकोच भी नहीं करना चाहिए। हम (आर्य) राजनीति में पंर रकते नहीं, कि बोट की युगचुम्बा के आखेट हो जाते हैं। उस समय सत्वाय-प्रकाश का छठवां समुल्लास ही नहीं, अपितु महर्षि के महान् उपकारों तथा आदर्शों को भी विस्मरण कर देते हैं। इतना ही नहीं पारबातय बातावरण के प्रबाह में हमारे पांच भी उठ जाते हैं। हमें यवं करना चाहिये कि हमारा युव कितना महान् था इसने मानवजाति के समुत्थान के लिये अपने मोक्ष परमानन्द को भी कुछ नहीं समझा। आज हम जिस स्वतन्त्र भारत की कीर्ति तथा उत्पत्ति गाते नहीं अघाते, यह समुत्पन्न भारत उन्हीं की अपूर्वं सूझ बूझ का परिणाम है। आज हमारे नेता बब अहिंसाकों का गुण-पात्र करते हैं तो श्री गांधी, बुद्ध और तथा ईसा के सामने महर्षि को भूक खाते हैं या यू कहिये कि उनकी जिह्वा कुठित सी हो जाती है।

आज हम महर्षि की अलौकिक अहिंसा पर प्रकाश नहीं डालना चाहते; क्योंकि यह एक स्वतन्त्र विषय हो जाता है। परन्तु इतना कहने से भी नहीं बूकते कि महर्षि की अहिंसा वृत्ति इन महानुभावों से कहीं बड़ कर थी। आज दीपमार्शिका का दिन है, इसी दिन महर्षि ने अपनी विष्य-बीचन-लीला “ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो” इस अन्तिम वाक्य से समाप्त की थी। आज हम उसी अमर उद्योति की विष्य-छटा से अपने हृदय के निविद्यान्धकार को घट्ट करना चाहते हैं। अपने युव की अर्चना उसी की

अनुपम शम्बावली से करना चाहते हैं जिस तरह उस विष्यात्मा ने प्रभु का गुण-गान उसी की वेद-बाणी से किया था।

महर्षि की मानव-प्रियता

“यद्यपि मे आर्यावर्त देश में उत्पन्न और बसता हू तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न करके याथातथ्य प्रकाश करता हू मैंने ही ब्रह्मे देशस्थ व मतोन्नति के साथ भी वर्तता हू। जैसा स्वदेश बालों के साथ मनुष्योन्नति के विषयों में वर्तता हू वैसा बिदेशियों के साथ भी, तथा सब सज्जनों की वर्तना योग्य है।

निर्बलों की रक्षा

जैसे पशु बलवान होकर निर्बलों को दुक देते और मार भी डालने हैं जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहलाता है और जो स्वार्थवदा पर-हानि मात्र करता है, वह जानों पशुओं का भी बडा भाई है। “सत्या० की भूमिका से”

दण्ड से ही भ्रष्टाचार की निवृत्ति सम्भव

प्रश्न—जो राजा व राणी अथवा न्यायाधीश व उसकी स्त्री व्यभिचारादि कुकर्म करें तो उनको कौन सा दण्ड देवे ?

उत्तर—समा अर्थात् उनको ठो प्रजा पुरुषों से श्री अधिक दण्ड होना चाहिए।

प्रश्न—राजा उनसे दण्ड क्यों प्रह्व करे ?

उत्तर—राजा भी एक पुण्यात्मा भाग्यशाली मनुष्य है, जब उसी को दण्ड न दिया जाय और वह दण्ड न प्रह्व करे तो ब्रह्मे मनुष्य दण्ड को क्यों मानेंगे ? और सब प्रजा और प्रधान राज्याधिकारी और सना धार्मिकता

से वण्ड चाहें तो अकेला राजा क्या कर सकता है ? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा प्रधान और सब समय पुरुष अन्याय में दूब कर न्याय धर्म को दूबा के सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जायें अर्थात् उस दलोक के धर्म को स्मरण करो कि न्याय-वण्ड का नाम ही राजा और धर्म है जो उसका लोप करता है उससे नीच पुरुष दूसरा कौन होगा ?

प्रश्न—यह कडा वण्ड होना उचित नहीं, क्योंकि मनुष्य किसी अङ्ग का बनाने हारा व जिलाने वाला नहीं है इसलिए ऐसा वण्ड न देना चाहिए ।

उत्तर—जो इसको कडा वण्ड जानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते क्योंकि एक पुरुष को इस प्रकार वण्ड देने से सब बुरे काम करने से अलग रहेंगे और बुरे काम को छोड़कर धर्म मार्ग में स्थिर रहेंगे । सब पूछो तो यही है कि एक राई भर सब के भाग में न आवेगा और जो सुगम वण्ड दिया जाय तो कुछ काम बहुत बढ़ कर होने लगेंगे । वह जिसको सुगम सुगम वण्ड कहते हो वह करोड़ों गुना अधिक होने से करोड़ों गुना कठिन होता है क्योंकि जब बहुत मनुष्य कुछ कर्म करेंगे तब थोड़ा-थोड़ा वण्ड भी देना पड़ेगा अर्थात् जैसे एक को मन भर वण्ड हुआ और दूसरे को पाब भर तो पाब भर अधिक एक मन वण्ड होता है तो प्रत्येक मनुष्य के भाग में आध पाब बीस सेर वण्ड पड़ा तो ऐसे सुगम वण्ड को कुछ लोग क्या समझते हैं ? जैसे एक मन, और सहस्र मनुष्यों को पाब पाब वण्ड हुआ तो सबा छ मन मनुष्य जाति पर वण्ड होने से अधिक और यही कडा तथा बहुत, एक मन वण्ड न्यून और सुगम होता है । “छठे समुल्लास से” ।

गणतन्त्र का स्वरूप

यह संक्षेप में राजधर्म का वर्णन यहाँ किया गया है । वेद, मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम, नवम अध्याय में और शुक्रनीति तथा बिदुर प्रजागर और महामारत शान्ति वर्ष के राज-धर्म और आपद्धर्म आदि पुस्तकों में देखकर पूर्ण राजनीति को धारण करके माण्डलिक अथवा सायं-भौम बन्धुवर्ती राज्य करें और यह समझें कि “धय प्रजापते धना बन्धुव” यह यजुर्वेद १८/२९ का बन्धन है । हम प्रजापति अर्थात् परदेव्यर को प्रजा और वरमात्मा हमारा

राजा, हम उसके किकर भृत्यवत् हूँ वह कृपा करके अपनी सृष्टि में हम को राज्याधिकारी करे और हमारे हाथ से अपने सत्य न्याय को प्रवृत्ति करावे ।

“सत्या० वष्ट समुल्लास” ।

छुआछूत का विरोध

प्रश्न—द्विज अपने हाथ से रतोई बनाकर खावें या सूत्र के हाथ की बनाई खावें ?

उत्तर—सूत्र के हाथ की बनाई खावें, क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णस्य स्त्री पुरुष विद्या पढ़ने, राज्य-पालन, और पशु पालन छेती ध्यापार के काम में तत्पर रहे और सूत्र के पात्र तथा उसके घर का पका हुआ अन्न आपत्काल के बिना न खावें—मुनी प्रमाण—“आर्याविष्टाता वा सूत्रा सत्कर्त्तरि, स्यु” आपस्तम्ब प्र० २ । पटल २ । अण्ड २ । सूत्र ४ । यहाँ स्वामी जो ने यह कहा है कि “सूत्र के घर का पका अन्न तथा उसके पात्र में आपत्काल के बिना न खावें” इसका अतिप्राय यह है कि ये जेधारे गरीब और अशिक्षित होते हैं । इनका जीवन-स्तार शोचनीय है, ये गन्दे रहते हैं, स्वच्छता धनामात्र से कर नहीं पाते । अत इनके घर का बातावरण मन को नहीं रुचेगा । इन्हीं कारणों से इनके घर पर नहीं खाना खाना चाहिये । परन्तु यदि इन्हें अपने घर पर रहेंगे तो इनका रहन सहन अपने अनुकूल बना लेंगे । अत इनके हाथ की पकी रतोई खाने में कोई दोष नहीं ।

“प्राचीन भारत में छुवाछूत नहीं थी”

जो प्रथम आर्यावर्त वैश्या लोप व्यापार, राज्यधर्म और भ्रमण के लिये सब भूगोल में घूमते थे और जो आजकल छुवाछूत और धर्म नष्ट होने की शका है वह केवल मुस्लिमों के बहकाने से और अज्ञान के बढ़ने से है । जो मनुष्य देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर जाने-जाने में शका नहीं करते वे देश देशान्तर के अनेक विषय मनुष्यों के समागम में रीति-भाति देखने, अपना राज्य और व्यवहार बढ़ाने से निर्भय शूर वीर होने लगते हैं और अच्छे व्यवहार का प्रहण, बुरी बातों के छोड़ने में तत्पर होने बढ़े ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं । मला जो महा-ध्वष्ट स्वेच्छ-कुलोत्पन्न वैश्यादि के समागम से आचार अष्ट धर्महीन नहीं होते; किन्तु देशान्तर के पुरुषों के समागम सूत्र और



बोध मानते हैं ! यह केवल मूर्खता की बात नहीं तो क्या है ?

छुआछूत से हानियां

क्या सब बुद्धिमानों ने यह निश्चय नहीं किया कि जो राजपुरुषों (सैनिकों) में युद्ध समय में भी चौका लगाकर रसोई बना के खाना, अवश्य पराजय का हेतु है ? किन्तु क्षत्रिय लोगों का (सैनिकों का) युद्ध में एक हाथ से रोटी खाते जल पीते जाना, अपना विजय करना आचार और पराजित होना अनाचार है। इसी मूर्खता से इन लोगों ने चौका लगाते-लगाते विरोध करते-कराते सब स्वातन्त्र्य आनन्द, धन, राज्य, विद्या, और पुरुषार्थ पर चौका कर हाथ पर हाथ धरे हैं और इच्छा करते हैं कुछ पदार्थ मिले तो पकाकर खावें, परन्तु वंशानुवासे होने पर जानो सब आध्यात्मिक बेश भ्रम में चौका लगा के सबया नष्ट कर दिया। "ब्रह्म समुल्लास से"।

संस्कृत भाषा की सजीवता

अपेक्ष ने संस्कृत भाषा को मृत भाषा कह कर इसकी तरफ से लोगों ने अनिच्छा पैदा कर दिया था। महर्षि ने संस्कृत का महत्त्व पुनः सबके सामने रखा। यथा—

प्रश्न—संस्कृत विद्या में पुरी राजनीति है वा अथूरी ?

उत्तर—पुरी है क्योंकि जो जो भूगोल में राजनीति बनी है और चलेगी वह संस्कृत विद्या से ली है और जितना प्रत्यक्ष लेख नहीं है उनके लिये "प्रत्यह लोक बुष्टेऽत्र शास्त्र बुष्टेऽत्र हेतुभिः"। मनु ८।३ और भी—आर्यसमाज के प्रथम और तीसरे नियमों में "सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से ज्ञाने जाते हैं उन सब का आदिमूल परमेश्वर है और तीसरे नियम में 'देव सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है'। वेद ईश्वरीय और संस्कृत में है अतएव संस्कृत भाषा की सहनीयता महर्षि के हृदय में पूर्णरूप से थी। परन्तु आर्य जनो में संस्कृत भाषा का महत्त्व नहीं ही के बराबर है। ये स्वयं तो वेदों का पढ़ना-पढ़ाना इत्यादि पाठ नित्य करते हैं तथापि स्वयं तथा अपने बच्चों को संस्कृत नहीं पढ़ते-पढ़ाते। प्रच्छन्न रूप से अपेक्षी भाषा तथा पाश्चात्य सभ्यता व्यवहार तथा आचरण में रत हैं।

ईसाई तथा मुसलमानों के प्रति महर्षि की

सहानुभूति

प्रायः लोगों के हृदयों में यह क्रम घर कर गया है कि महर्षि इन दो सम्प्रदायों से द्वेष रखते थे परन्तु ऐसी धारणा सर्वथा निर्मूल है। क्योंकि तेरहवें तथा चौदहवें समुल्लास की भूमिका में महर्षि स्वयं लिखते हैं—"यदि एक मतवाले दूसरे मतवाले के विषयों को जानें और अन्य न जानें तो घबावत सबाव नहीं हो सकता किन्तु अज्ञानी किसी अल्पमूक बाड़े में घिर जाते हैं। ऐसा न हो इसलिए इस ग्रन्थ में प्रचारित सब मतों का विषय बोझा बोझा लिखा है। "तेरहवें समु० की भूमिका से"।

सच तो यह है कि इस अनिश्चित अणभगुर जीवन में पराई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अर्थ की रक्षना मनुष्य पन से बहि है। इसमें जो कुछ बिपद्य लिखा गया है, उसको सज्जन लोग विवित कर देंगे तत्पश्चात् जो उचित होगा तो माना जायगा क्योंकि यह लेख हठ, बुराप्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वाद विबाध और विरोध घटाने के लिये किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ क्योंकि एक दूसरे की हानि करने से पुण्य रह परस्पर की लाभ पहुचाना हमारा मुख्य अर्थ है।

(चौदहवें समुल्लास की भूमिका से)

ऐसे उबार चेता महान् पुण्य के पुण्य पान में यदि हम चुप हैं तो हमारी कृतघ्नता है। जब तक हम महर्षि के विचारों का सत्कार में प्रसार नहीं करते तब तक संसार की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकती। आर्यजनों का चरम कर्तव्य है कि अपने यश के मोह को त्यागकर महर्षि का कीर्तिध्वज सत्कार में कहरावें। इनके तप त्याग का आदर्श साहित्य रूप में निर्माण कराकर सत्कार में वितरित करें। आर्य विद्वानों को प्रेरित करें कि छोटे-छोटे बुकलेट तैयार करें। जिन्हें लोग यात्रा आदि में पढ़ सकें। क्योंकि आज लोगों के पास धन और समय की कमी है। जनता अधिक मूल्य की पुस्तकें नहीं खरीब सकती और इस भीषिकता के जमाने में न इसके पास इतना समय है कि वह बड़े-बड़े ग्रन्थ पढ़ सके। इस विंशा में आर्यसमाज को रचनात्मक रूप से प्रगतिशील होना चाहिये।



ऋषि दयानन्द की सूझ

(ले०—श्री स्वामी इष्टानन्द जी गुरुकुल अयोध्या)

एक बार ऋषि दयानन्द अपने उपदेश आगरा बनारस आदि शहरों में करने लगे तो यह प्रतीत हुआ कि हम में अभी कुछ कमी है जो हमारे उपदेश सर्व साधारण पर कृतकार्य नहीं होते ऐसा सोचकर उपदेश का कार्य बन्द कर फरखाबाद टोका घाट पर एक टटी बिसरात में रहने लगे। उस समय स्वामी जी के पास केवल कोपीन के और कोई वस्तु न था। शहर के भक्तों ने तखत गद्दे आदि का प्रबन्ध करने को कहा। स्वामी जी ने कुछ स्वीकार नहीं किया। एक ग्राम ठाकुर छत्रसूहिह जो नित आया करते थे स्वामी जी के पैर छूकर चले जाते थे, उन्हीं से थोड़ा पुआल मगा लिया था। उसी में घुसकर अपना जाड़ा काट लेते थे।

वे ठाकुर हमको जलालाबाद (शाहजहापुर) के उत्सव पर मिले थे। १०८ वर्ष आयु समाप्त कर मरे हैं। यह दृष्टान्त किसी जीवन चरित्र में नहीं आया। वह बताते थे कि मैं बराबर जब तक स्वामी जी रहे जाता रहा और पैर छूकर वापस आता था। कभी-कभी मट्टा ले जाता था, स्वामी जी उसको पी लेते थे। शहर के लोगों को स्वामी जी ने २ घण्टे सत्संग के दे रखे थे। वह ४ बजे से ६ बजे ग्राम को लोग आते थे। वेद भ.व्य की चर्चा वहीं से प्रारम्भ हुई। धन भी एकत्रित होने लगा। माननीय सेठ पुरुषोत्तम दास तथा सेठ दुर्गाप्रसाद के पास धन जमा होता रहा। मेरे कान में भी यह बातें सुनाई पड़ी। मनमें भी यह बात आई पर मैं दुखी हुआ और यह सोचने लगा यदि धन होता तो स्वामी जी की सहायता इस कार्य में करता। इसी विचार से दूसरे दिन जब स्वामी जी के पास गया तो पैर छूकर बैठ गया। स्वामी जी ने पूछा, छत्रसू आज क्या बात है? मैं रोने लगा, उसी रोवासी में मैंने कहा—स्वामी जी मैं बड़ा गरीब हूँ, अन्यथा आपके इस महान् कार्य में कुछ धन देकर सहायक बनता स्वामीजी में सहज स्वभाव चाकू (यह फल काटने को आया था) छठाया और कहा भगत एक आख बेष दो ५००)

ले लो तब मैंने कहा स्वामी जी आख तो १०००) में भी न दूंगा स्वामी जी ने कहा फिर बताओ तुम गरीब कहा हो एक ही आख का सोदा है मैं चुप रह गया तब स्वामी जी ने समझाया कि भगत मनुष्य पुरुषार्थ का त्याग देता है तो धन उसको त्याग देना है। वास्तव में पुरुषार्थ की कमी ही गरीबी है, ईश्वर प्रदत्त गरीबी मनुष्य के अंग प्रत्यंग में कुछ बाधा या जाय उसका सही पता दूसरे करते हैं और करनी भी चाहिये। उस दिन से मैं नित प्रात से उठकर अपने पुरुषार्थ में लग जाता कभी दुखी नहीं रहा। यह तो छत्रसूहिह की बात हुई पश्चात् धन की राशि बढ़ती गई सुना जाता है १ लाख २५ सहस्र रुपया उपर्युक्त महानुभावों के पास पड़ा रहा समाज से किसी कारण के पृथक् हो गये रुपया जैसा था वैसा पड़ा रहा बाद में आर्यसमाज फरखाबाद ने मुकदमा लडा और दोनो महानुभावों पर खातो के मुताबिक डिग्री हुई सुना जाता है कि फरखाबाद ने उस रुपये दो कन्या इस्टर कालेज फरखाबाद में लगा दिया। आगे महानुभाव विचार करें स्वामी जी ने वेदभाष्य किया बहुत सी पुस्तकें लिखी शास्त्रार्थ किये, उस समय देश की बड़ी शोचनीय दशा थी स्वामी जी को अपने कार्यों से तनिक भी अवकाश न मिलता था, अकेले स्वामी जी अकेले जग विरोधी था। स्वामी जी सत्य के पुजारी थे देखा की दशा बिगड चुकी थी।

सत्यार्थ प्रकाश

ईश्वर की सत्ता को प्रथम समुल्लास माहि—
दूजे माहि शिक्षा की नीति निर्धारि है।
तीसरे मे ब्रह्मचर्य विधि को विधान लिखो—
बिना ब्रह्मचर्य नाहि गृहस्थ अधिकारी है।
चौथे समुल्लास माहि गृहस्थ को प्रवेश लिखि—
पाचवें नामग्रन्थ उपाख्य पुस्तकारी है।



छूटे मे राज धर्म शोध के बनायो सर्व—
 वैदिक पद्धति जौन ऋषि ने निहारी है ॥१॥
 सातवें बतायो ईश वेद को विचार "इष्ट" —
 आठवें मे सृष्टि उत्पत्ति जतलाई है ।
 नवें माहि बन्ध मोक्ष विद्या ओ अविद्या सर्व—
 दशमे मे आचार ओर भक्षामक्ष समुझाई है ।
 एकादश हिन्दुन बीच फँसे जो कुपय मत—
 तिनके सुधार हित लेखनी लगाई है ।
 द्वादश माहि जैन बौद्ध भूले जौन जौन "इष्ट" —
 ताको समुझावो, ग्रन्थ उनके देखाई है ॥२॥
 तेरह मे ईसाई लोग मानत जौन जौन ग्रन्थ—
 तिनही की भूल देखि उनको बताई है ।
 साहीभाति चौदह मे यवन मत की भलन को—

शोधि-शोधि खोजि-खोजि उनको देखाई है ।
 अपना-मत इनके बीच तनिक हू लिखी है नाहि—
 सत्य की कसौटी सत्यार्थ लिखि गाई है ।
 अपने मन्तव्य को स्वमन्यामन्तव्य माहि—
 लिखिके देखायो पुनि सत्य अपनाई है ॥३॥

इसी भाति स्वामी जी की आज्ञानुसार अपनी सूझ को बड़ाना चाहिये । हम यदि स्वामी जी के आदेश को नहीं मानते, ओर बालसी प्रमादी होकर अपने को नहीं सुधारते तो ऋषी रहेंगे । हम प्रतिज्ञा करें—सत्यार्थ-प्रकाश ऋग्वेदादि भूमिका जीवन चरित्र, प्रति वर्ष एक आवृत्ति करे, यही तीनो सिद्धांतनयी हैं ।

विश्वकर्मा वंशज बालकों को ७०००) का दान

श्री भवानीलाल गज्जूलाल जी शर्मा स्थिर निधि



१—विश्वकर्मा कुलोत्पन्न श्रीमती तिरुजीदेवी-भवानीलाल शर्मा ककुहास की पुण्यस्मृति मे श्री भवानीलाल जी शर्मा अकबरपुर जिला खानपुर घर्त-मान अमरावती (विदर्भ) निवासी ने श्री विश्वकर्मा वंशीय बालकों के हितार्थ ७०००) की धनराशि सभा को समर्पण कर बी०बी० शर्मा स्थिर निधि की योजना निम्नलिखित नियमा-नुसार माहपद स० २०१४बि० सितम्बर १९५७ ई० को स्थापित की ।



२—इस मूलधन से वार्षिक

व्याज जो कुछ प्राप्त होगा, उते उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा विश्वकर्मा

वसत्र गरीब, असहाय किन्तु होनहार बालक बालिकाओं के शिक्षण सब में व्यय करती रहेगी ।

३—उक्त निधि से आर्थिक सहायता केने वाले इच्छुकों को मास पुसाई में १) के स्टाण्ड मेजकर सभा से छपे कार्य भगाकर भरकर भेजना आवश्यक है ।

—मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश



स्वामी जी के जीवन पर आधारित एकांकी-

मृत्यु को जीतने वाले ऋषि

(ले०—श्री डा० रामचरण महेश्वर एम० ए०, पी०एच० डी०)

[पृष्ठभूमि—संवत् १९४० के कार्तिक मास की अमावस्या और मंगलवार का दिन है

साय के पांच बजा चाहते हैं ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती मृत्युशय्या पर पड़े हैं । कुछ भक्त, श्रद्धालु और शिष्य समीप बैठे हैं, कुछ खड़े हैं । सबके चेहरे पर मानसिक व्यथा और आन्तरिक विक्षोभ के चिह्न हैं । सब परे शान से नजर आते हैं । 'स्वामी जी के नेत्र मुंदे हुए हैं ।]

एक भक्त—(परोशान) उफ् ! कैसी दुर्वह पीडा है । सबको प्रकाश देने वाली इस महान् आत्मा को भी स्वार्थी ससार ने न छोडा कैसी विडम्बना है ससार अपने शूद्र स्वार्थों के पीछे कैसा अन्धा हो रहा है ? भला स्वामी जी ने किसी का क्या बिगाडा था ।

दूसरा भक्त—(वसान्त विस्मित स्वर में) मैं तो यह आश्चर्य करता हू कि उस रसोइया की भी कैसी पत्थर की छाती थी जिसने स्वामी जी की हत्या के लिये भोजन में बारीक काच पीसकर खिला दिया उफ् ! मनुष्य की हैवानियत

तीसरा भक्त—(ऋषि के शरीर को देखते हुये) हाय हाय ऋषिवर के सारे शरीर पर विष के छाले उभर आये हैं ।

पहला भक्त—(रोते हुये) सास रुक रुक कर आ रही है । हे ईश्वर, क्या बड़े महात्माओं को भी मृत्यु से मुक्ति नहीं है

दूसरा भक्त—जलन से स्वामी जी का सारा शरीर जल रहा है । अगर दूसरा मामूली व्यक्ति होता तो कैसी दूरी तरह छटपटाता, बीखता चिल्लाता सोइ

बन्धन उसे अशान्त करता पर ऋषि ऋषि की आत्मा शरीर को छोड़ने की तैयारी में है... परन्तु वे चुपचाप आराम से लेटे हुये हैं ।

तीसरा भक्त—मृत्यु के इन क्षणों में ही मनुष्य के सयम, एकाग्रता और इन्द्रिय नियंत्रण की परीक्षा होती है मृत्यु तो सभी को आती है जो आया है, उसे एक दिन जाना ही है, पर कोई तड़प-तड़प कर बिलख-बिलख कर मरता है, कोई शांतिपूर्वक इस नरवर शरीर को त्यागता है । इस शान्तिपूर्वक मरने का नाम ही मृत्यु को जीतना है ।

पहला—ऋषि को पानी पिलाना चाहिये । गगाजल का बर्तन इधर लाओ शायद इससे इनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी (एक भक्त मेज पर से गगाजल मिश्रित जल लाता है)

पहला—(ऋषि के समीप जाकर) महाराज महाराज आरकी तबियत कैसी है ? कुछ जल ले लीजिये । [ऋषि धीरे धीरे नेत्र खोलते हैं । मृत्यु को काली परछाही नेत्रों से चमकती है पर ऋषि का आत्म-विश्वास अडिग है । उन्हें अपने निकलते हुए प्राणों का बोध है । वे जानते हैं कि कुछ ही देर में इस नरवर शरीर का परित्याग करने वाला हूँ । उन्हें यह भी ध्यान है कि व्यर्थ ही उनके भक्त भी उनकी मृत्यु से परोशान न हों ।]

ऋषि—(क्षण स्वर में) अच्छी है । प्रकाश और अन्धकार का मिलाप है । तुम मेरे जाने से परोशान न होना आर्यसमाज की ज्योति अक्षण्ड रहनी चाहिये ।

पहला भक्त—(शान्ति दिलाते हुए) महाराज आप चिन्ता न करें । हमारे लिये कोई सन्देश दीजिए ।



शुद्धि—(लडखडाते स्वर मे) हा मरने से पूर्व कुछ कहना चाहता हूँ मेरे शिष्यो जब आपस मे भाई-भाई लडते हैं तो तीसरा विदेशी आकर पच बनता है क्या तुम महाभारत की बातें भूल गये ? देखो, आपस की फूट से कौरव, पांडव और यादवों का सत्यानाश हो गया सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग हम भारतवासियो के पीछे लगा है न जाने वह भयकर राक्षस कभी छूटेगा व आयों को सब सुखों और उन्नति से छुडाकर सागर मे डुबो देगा उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र हत्यारे, स्वदेश विनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग मे आर्य लोग अब तक भी चलकर दुख बढा रहे हैं परमेश्वर कृपा करें हमें छूतछात, जाति-पाति, धर्म के बाडम्बरो और इस पारस्परिक फूट जैसे राज रोगो से तुम सब आर्यों की रक्षा करे ।”

[धक कर नेत्र मूद लेते हैं । सब भक्त विस्मित होकर सोचने लगते हैं ।]

पहला भक्त—शुद्धि की चिन्तन शक्ति मृत्यु के मूँह मे भी उतनी सशक्त है । यह बातें याद रखने की हैं ।

दूसरा भक्त—स्वामी जी फिर नेत्र खोल रहे हैं । वह कुछ बोल रहे हैं ।

शुद्धि—(क्षीण दुर्बल स्वर मे) कमरे के सब द्वार और बिडकिया खोल दो । तुम सब मेरे पास खडे हो जाओ अब मैं जाता हूँ ।”

[वे अपनी दृष्टि कमरे के चारो ओर घुमाते हैं । फिर बडे गभीर स्वर मे वेद मन्त्रो का पाठ करते हैं । उनके स्वर मे अब भी आकर्षण है । वेद मन्त्रो का गान करके वे चुप हो जाते है । यकायक बैठ जाते हैं ।]

एक भक्त—(आश्चर्य से) अरे, इस कमजोरी मे भी ये तो बैठ गये ।

दूसरा भक्त—(विस्मित) समाधि लग गई है । बिना हिले डुले सोने की मूर्ति की तरह ये समाधि मे बैठे है ।

तीसरा भक्त—मृत्यु को जीत लिया है ।

[धीरे-धीरे समाधि भंग होती है । अब आखरी घडी आ गई है । आत्मा शरीर को त्याग अनन्त की ओर प्रस्थान कर रही है ।]

स्वयं बुझ गया, दीप जग के जला गया

सो रहा था दिव्य देश भारत यहा पं जिसे,

बंधते विदेशी आय तब चन्द चाट मे,

अज्ञान घमण्ड और भेद-भाव बडा भारी,

भ्रम से ही मानता था अपने को ठाठ मे,

‘लक्ष्मी’ वेद-मित्र तब अस्ताचल पहुचा जा,

घटा टोप तम छाया भारत के घाट मे ।

शुद्धियो के सरताज दयानन्द महाराज,

उपकार हेतु आये भारत के वाट मे ॥

छून-छात दूरकर बैर को विसार कर,

अज्ञान मिटाधकर जग को जमा गया,

ईश को बतायकर प्रीति को बहाय कर,

शेवी देवता के सब भूत को भगा गया ।

‘लक्ष्मी’ वेद मित्र और शिक्षा का प्रसार कर,

दिव्य दयानन्द शुद्धि, नारी की उठा गया,

देश की भलाई कर, दीपावली पायकर,

स्वयं बुझ गया, दीप जग के जला गया ॥

—विजयलक्ष्मी आर्य बी०ए०

आर्यनगर बरवायं

पहला भक्त—(चकित हो) शुद्धि ने फिर आंखे खोल दी है । वे फिर कुछ कह रहे हैं । ध्यान से सुनो

[सब शान्त और चुप । शुद्धि बोलते हैं]

शुद्धि—(दिव्य ज्योति की किरणें छोडते हुए) हे दयामय

हे सर्वशक्तिमान् तेरी यही इच्छा है ।

परमात्मदेव तेरी इच्छा पूर्ण हो आर्यसमाज युग

युग तक जनता को प्रकाशित करे । अहा ! मेरे

परमेश्वर ! तुने अच्छी लीला की । ओ ३म् । ओ ३म्

ओ ३म् ।

[इन शब्दो के साथ ही ब्रह्मर्षि परमधाम को जाने

के लिये अपने आरिभक्त प्राणो को स्वर्ग की सीढी पर

चढाते हैं और फिर फवास को कुछ देर तक भीतर रोककर

‘ओ ३म्’ कहते हुए एक बार ही प्राणो को निकाल देते

हैं । सब भक्त रोते हैं । वातावरण विलुब्ध हो जाता है ।

हवायं भयकर चीत्कार करती हैं । शाम के वारे आकाश

मे शुद्धि की आत्मा का स्वागत करते हैं ।]



ऋषि दयानन्द और स्त्रियों का वेदाधिकार

[श्री शिवपूजनसिंह कुलवाहा "पथिक" बी ए साहित्यालकार, कामपुर]

पौराणिक धर्म स्त्रियों का वेदाधिकार नहीं मानता है। उन्होंने सूत्र व स्त्रियों को एक कोटि में रखकर दोनों को वेद से वंचित कर दिया है। बौद्ध व जैन मत के मूलोद्देश्य करने वाले आद्य श्री शंकराचार्य ने भी वेदान्तवचन के 'शारीरिक माध्य' में दोनों को वेदों से वंचित कर दिया है। यहो परिस्थिति अन्य साम्प्रदायिक आचार्यों की भी है। वेद-कान्तवर्ती महर्षि दयानन्द जी ने इस विचार की प्रबल आलोचना अपने अमर ग्रन्थ "सत्यानुप्रकाश" में की है और दोनों को स्पष्ट वेदाधिकार की वर्षा की है।

महर्षि दयानन्द जी मनु २६।२ के आधार पर मानवमात्र को वेद श्रवण व पढ़ने का अधिकार बतलाते हैं। वास्तव में महर्षि दयानन्द जी का सिद्धान्त नितान्त उचित है। उन्होंने "स्त्री गुरो नाधीयताम" की ध्वजो उड़ा दी है।

उपनिषद् काल में मार्गी ब्रह्मवाचिनी का नाम आता है जिसने राजा जनक की राज्य सभा में ऋषि याज्ञवल्क्य से ब्रह्म विषय पर शास्त्रार्थ किया था। इसका विस्तृत वचन "बृहदारण्यकोपनिषद्" में है। इसी प्रकार महाभारत में 'सुलभा' का नाम आता है। ऋग्वेद के अनेक मन्त्रों का साक्षात्कार ब्रह्म विद्वि रिशो ने किया था जो मन्त्रद्रष्ट्री कहलाती थीं उनमें गोधा, घोषा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषद्, ब्रह्मजाया जुहु, अग्न्य वी उरिन अदिति, इन्द्राणी, इन्द्र माता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपायुजा, यमी, शशवती, नद्य, श्री, लाला, सापरकी, वक्र, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्री, सूर्या, सावित्री, ममता प्रमृति का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

रोमशा ऋ० मण्डल १ सूक्त १२६, मन्त्र ७, लोपायुजा ऋ० म० १ सू० १७९ म० १-६, नद्य ऋ० म० ३ सू० ३३ म० ४, ६, ८, १०, ममता ऋ० म० ६ सू० १०, मन्त्र २, विश्ववरा ऋ० म० ५, सू० २८ म० १-६, शशवती ऋ० म० ८ सू० १ मन्त्र ३४, अपाला ऋ० म० ८ सू० ९१, मन्त्र १-७, घोषा ऋ० म० १०, सूक्त ३९, म० १-१४; यमी ऋ० म० १०, सू० १० म० १, ३, ५, ७, ११, १३, अदिति ऋ० म० १० सू० ६० म० ६, इन्द्राणी ऋ० म० १० सू० ८६, शची (गोलोमी) ऋ० म० १०, सू० १४५, म० १-६, सूर्या ऋ० म० १० सू० ८५, म० १-४७, उर्वशी ऋ० म० १०, सू० ९५, मन्त्र ४ १८, सरमा (वेशुनी) ऋ० म० १०, सू० १०८, दक्षिणा ऋ० म० १० सू० १०७ म० १-११, वाक् ऋ० म० १० सू० १२५, मन्त्र १-८, ब्रह्मजाया जुहु ऋ० म० १०, सू० १०९ म० १-७, रात्री ऋ० म० १०, सू० १२७ म० १-८, श्रद्धा (कामायनी) ऋ० म० १०, सू० १५१, म० १५, गोधा ऋ० म० १०, सू० १३४, म० ६, ७, इन्द्रमाता ऋ० म० १०, सू० १५३ म० १-५, सापरकी ऋ० म० १० सू० १८९ म० १-३ की ऋषिकार्यें हैं।

स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण का भी पूर्ण अधिकार है। बिना उपनयन संस्कार के वेद-मन्त्र पढ़ने का अधिकार ही नहीं है। अतः उपर्युक्त स्त्रियों का भी उपनयन सिद्ध हो जाता है।

सम्प्रति समाज में स्त्रियों में उपनयन संस्कार का प्रायः अभाव है। आर्यसमाज को ध्यान देना चाहिये। महर्षि दयानन्द के महान् उपकारों में सबसे अधिक महत्व स्त्री जाति को वेद अधिकार दिवाने का है। इसकी सम्भीरता को हमें सर्वथ स्विकार करना चाहिये।



ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ प्रजा को अपने सन्तान के सदृश मुक्त वेधे और प्रजा अपने पिता सवृक्ष राजा और राज पुत्रों को जाने ।

★ सब कर्मों का यथावत् फल देना ही ईश्वर का काम है, जमा करना नहीं ।

★ जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने अग्रज को भी सत्य और दूसरे बैरो को मतवाले के सत्य को भी तो भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है इसलिये वह सत्य मत को नहीं प्राप्त हो सकता ।

★ मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का ज्ञाने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सदि, दृष्ट बुरासह और अविद्यादि बंधों । सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता ।

★ जो बलवान होकर निर्बलों की क्षा करता है । वही मनुष्य कहाता है गौर जो स्वायंभवा होकर पर हानिमात्र करता रहता है वह पशुओं का भी बडा साई है ।

★ आर्य उसको कहते हैं जो गुण, मर्म, स्वभाव और सत्य व्यवहारों में सब अधिक हो ।

★ जो जीव जैसा कर्म करता है, रक्षा ही फल पाता है ।

★ सत्कार में सुखी बुखी अपने अपने मुख्य धारों के कारण हैं ।

★ माता-पिता तथा अध्यापक ईर्ष्या द्वेष से विद्यापियों का ताडन न करें ।

(कमरा.)

आर्यमित्र का—

अराष्ट्रीय-ईसाई-निरोध अंक

(२२ नवम्बर १९६४)

पृष्ठ सं० ४०

मूल्य २५ पैसे

★ बम्बई में केंथालिक ईसाइयों के भारत-अभियान (२८ नवम्बर) के अवसर पर प्रकाशित हो रहा है ।

- ईसाइयों की राष्ट्र विरोधी एवं आर्य संस्कृति विनाशक प्रवृत्तियों का विश्लेषण ।
- ईसाइयों के ईसाईस्थान बनाने के कलुषित मसुवों का परिचय ।
- केंथालिक ईसाई पन्थ की कुटिल और क्रूर करतूतों का परिचय ।

२० से अधिक प्रतिया भगाने वाले समाज व सस्था से डाक-व्यय नहीं लिया जावेगा ।

केवल ५००० प्रतिया छप रही हैं । १२ नवम्बर तक कार्यालय में आर्डर पहुंचने पर विशेषांक निरचय मिल जायेगा ।

—सम्पादक "आर्यमित्र"

मस्तिष्क एवं हृदय

सम्बन्धी मयकर पागलपन, मृगी, हिस्तीरिया, पुराना सरबर्, ब्लड प्रेशर, विक की तीव्र घटकन, तथा हादिक पीडा आदि सम्पूर्ण पुराने रोगों के परब विश्वस्त निदान तथा चिकित्सा के लिये परामर्श कीविष्ट—

आयुर्वेद बृहस्पति कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री

आयुर्वेद धन्वन्तरि

D Sc. A B I M S, L.A.M.S

मुद्रयाधिष्ठाता, कम्पा गुरुकुल, हरिद्वार

मुख्य सन्पादक—"शक्ति-सन्देश" साप्ताहिक, कवलक

संचालक—आयुर्वेद शक्ति-आश्रम कवलक

पी० आ० गुरुकुल-कायडों, (सहारनपुर)

फोन न० कार्यालय ९०, निवास ७७

★ जो सत्य बोलता है वह प्रसिद्ध और मिथ्यावादी निन्दित होता है।

★ जो तू में अकेला हू ऐसा अपने आत्मा मे जानकर मिथ्या बोलता है सो ठीक नहीं है किन्तु जो दूसरा तेरे द्वय मे अन्तर्निमित्त रूप से परमेश्वर पुण्य पाप का देखने वाला मुनि स्थित है, उस परमात्मा से डरकर सदा सत्य बोला कर।

★ जो अपराध करे उसको सदा बण्ड देवे और अनपराधी को बण्ड कभी न देवे।

★ जब राजा न्यायासन पर बैठ कर श्राव्य करे तब किसी का पक्षपात न करे किन्तु यथोचित दण्ड देवे।

★ दुष्ट पुरुषो के मारने मे हत्या को पाप नहीं लगता।

★ सवदा शरीर और आत्मा दोनों के बल को बढ़ाते रहना चाहिए।

★ 'यथा राजा तथा प्रजः' जैसा राजा होता है वैसे ही उसकी प्रजा होती है इसलिये राजा और राजपुरुषो को अति उचित है कि कभी दुष्टाचार न करें किन्तु सब बिन धर्म न्याय से वर्त कर सबके सुधार का दृष्टान्त बनें।

★ ईश्वर को जो मनुष्य न जानने व मानते हैं और उसका ध्यान नहीं करते वे आसिक्त मनवर्त सदा दुःख सागर मे ही डूबे रहते हैं। इसलिये सर्वदा उसी को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं।

★ अन्याय से किसी के धन की क्षाणिका मत कर।

★ आत्मा के भीतर से बुरे काम

के करने मे अभय, निश्चय और आनन्दोत्साह उठता है वह जीवात्मा को और से नहीं किन्तु परमात्मा की आर से है।

★ जिसने जैसा जितना दुःख किया हो उसको उतना वेग ही देना चाहिये उसी का नाम सत्य है। (कर्म)

धार्मिक परीक्षायें

सरकार से रजिस्टर्ड आय सॉल्यूशन्स एजेंसी द्वारा संचालित भारत-वर्षीय आय विद्यापरिषद् की विद्याविनोद, विचाररत्न, विद्याविशारद, विद्यावाचस्पति की परीक्षाये आगामी जनवरी में समस्त भारत में होंगी। कोई किसी भी परीक्षा में बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में सुम्बर मुनहरा उपाधि-पत्र प्रदान किया जाता है। धर्म के अतिरिक्त साहित्य, इतिहास, भूगोल, समाज विज्ञान आदि का कोर्स भी इनमें सम्मिलित है। मिन्न पते से पाठसिद्धि व आवेदन पत्र मुफ्त मगार केन्द्र स्थापित करें।

डा० सूर्यदेव शर्मा एम. ए., डी. लिट्

परीक्षा मन्त्री, अर्थ विद्या परिषद् एजेंसी

गोरे पादरियों के काले कारनामों

तथा

रोमन कैथालिक चर्च का नंगा चित्र

यह दोनों ट्रेक्टर समा के प्रकाशना विभाग की ओर से छप रहे हैं। दोनों ही ट्रेक्टर इन कैथालिक मिशन रवों की रोमांचकारी घटनाओं के बोलते हैं। प्रत्येक का मूल्य १० नये पैसे। १०० या अधिक मगानेवाले को १० प्रतिशत कमीशन मिलेगा। शीघ्र अपना आर्डर व अधिम जूल्य भेजें। सम्प्रति केवल १० सत्र ही ट्रेक्टर छप रहे हैं।

शिवदयाल

अधिष्ठाता-घासोराम प्रकाशन विभाग एन सा० बराहोटीय ईलाई भिरोव विभाग
आय प्रतिनिधि समा, ५ मोरारबाई मार्ग कलकत्ता



★ परमेश्वर व्यापक और जीव
प्य है।

★ जैसे माता पिता अपने सन्तानों
कृपा वृष्टि कर उपरति चाहते हैं वैसे
परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा
के बेशुकी प्रकाशित किया है जिससे
व्य अविद्याअंधकार भ्रमजाल में छूट
विद्या विज्ञान रूप सूर्य को प्राप्त
कर अस्थानम्ब में रहे और विद्या तथा
ों की वृद्धि करते जायें।

★ जो मनुष्य विद्वान् सत्वगो
हर पुरा विचार नहीं करता वह महा
पजाल में पडा रहना है। धन्य वे पुरुष
कि सब विद्याओं के सिद्धांतों को
जानते हैं और जानने के लिये परिश्रम
ते हैं।

आवश्यकता

भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस
, मीराबाई मार्ग लखनऊ के
लिये एक एजेंट की आवश्यकता
है, जो वेतन अथवा कमी
के आधार पर छपाई का
कार्य ला सके। प्रेस कार्य से
मानकार व्यक्तिको वरीयता दी
जायेगी। अपनी योग्यता तथा
तन्मत्तम स्वीकार्य वेतन अथवा
कमीशन सहित आवेदन पत्र
तन्मत्त पते पर भेजें—

—निर्मलचन्द्र गौरी

उपमंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा
५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ

★ पूर्व जन्म के पाप पुण्य के अनु- पूर्व जन्म के कर्मानुसार नविष्यत् जन्म
सार वर्तमान जन्म और वर्तमान तथा होते हैं। (कमल)

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१ ऋग्वेदसुबोध माध्य—मधु छन्दा, मेयातियो, जुग) शेष कण्ठ)

परागौतम, हिरण्य गर्भ, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास
आदि, १८ ऋषियों के सुबोध माध्य मूल्य १६) डाक-व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध माध्य। मू०
७) डाक व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध माध्य अध्याय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी मू० २)
अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका डाक-व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध माध्य—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक-व्यय ६)
उपनिषद् माध्य—ईश २), केन ॥), कठ १॥॥) प्रश्न १॥) मुण्डक १॥)

माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥॥) सबका डाक व्यय २।)

श्रीमद्भगवतगीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य २०) डाक-
व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ-संख्या ६९०

मूल्य १२) डाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और
विस्तृत तथा सुबोध विवरण भाषान्तकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा-
वतार जी विद्याभास्कर, रतनगढ़ जि० बिजनौर। भारतीय आर्य राजनैतिक
साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है, यह सब जानते
हैं। व्याख्याकार भी हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र।
इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और
भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता
करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन-पाठन भारत भर में
और घर-घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए इसको आज ही
मगाइये।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला सूरत

★ सप्ताह में जो सच्चा झूठा दोनों सुनने में आता है परन्तु उसको बिचार से निश्चय करना अपना काम है।

★ जो केवल भाण्ड के समान पर-मेश्वर के गुण कीतन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है।

★ मेरा मन शिवशकल्प अर्थात् अपने और दूसरे प्राणियों के अर्थ कल्याण का सकल्प करने हारा होवे। किसी की हानि करने की इच्छा युक्त कभी न हो।

★ मेरा मन इन्द्रियों की अधर्मा-चरण से रोक के धर्मपथ में सदा बलिया करे। ऐसी कृपा मुझ पर कीजिये।

★ अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

★ जो परमेश्वर के मरौते आलसी होकर बंटे रहते हैं, वे महामूर्ख हैं।

★ धर्म से पुरुषार्थो पुण्य का सहाय ईश्वर भी करता है।

★ जो कोई गुड भीठा है ऐसा कहता है उसको गुड प्राप्त व उसका स्वाद प्राप्त कभी नहीं होता और जो यत्न करता है उसको शीघ्र व बिलम्ब से गुड मिल ही जाता है।

★ किसी से बंद न रखे।

★ राग द्वेष छोड़ मोतर और बलाहि से बाहर पवित्र रहे।

★ जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है।

★ परोपकार के लिये सपुत्रों का का तन, मन, धन होता है।

★ जो मत्त ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है।

★ ईश्वर मत्तो के पाव क्षमा नहीं करता।

★ जिनकी विद्या नहीं होती वे पशु के समान घसा तथा बड़बड़ाया

करते हैं जैसे सज्जित उबर युक्त मनुष्य क्षण्ड बण्ड बरुना है वैसे ही अविद्वानों के बहे व लेख को द्यर्थ समझना चाहिए

★ कर्म करने में जीव स्वतंत्र और पाप के दुबमय फल भोगने में परतन्त्र होता है। (क्रमशः)

गुरुकुलकांगड़ी
आपके स्वास्थ्य की रक्षा करती है।

गुरुकुलकांगड़ी फार्मसी-हरिद्वार

गुरुकुलकांगड़ी फार्मसी-हरिद्वार

सखमक के सोल एजेण्ट-आ ए०ए०ए० महुता एण्ड क०, २०-२१ आराम रोड

★ जिस कुल में स्त्री से पुरुष और पुरुष से स्त्री सदा प्रसन्न रहनी है उसी कुल में आनन्द, लक्ष्मी और कीर्ति निवास करती है।

★ जल से बाहर के अंग, सत्याचार, धर्म, विद्या और धर्मानुष्ठान से ही वात्सा और ज्ञान से बुद्धि पवित्र होती है।

★ पालण्डी, वेद विद्वद् आचरण करने वालों, बंझालवृत्ति, शठ और शत्रुओं का बाणी मात्र से सत्कार न करें।

★ ऋत्विक्, पुरोहित, आचार्य, वैकुल, अतिथि, बालक, बूढ़, रोगी, बंध, श्वशुर, मित्र, माता, पिता, बहिन, भाई, पत्नी, पुत्री और मृत्यु से कभी गड़ा न करें।

★ जो वृष्ट अधर्मी हैं उनसे उपेक्षा पारित्व द्रोह छोड़कर उनके दुष्टारने का प्रयत्न किया करे।

★ जो अविद्या के भीतर खेल रहे पने को धीर और पब्रित मानते हैं वे श्रेष्ठ गति को जाने हारे, मूढ़ जैसे अन्धे, पीछे अन्धे दुर्गशा को प्राप्त होते हैं, ऐसे दुष्टों को पाते हैं।

★ वृष्ट ध्वसन में फसने से मरना अच्छा है क्योंकि जो वृष्टाचारी रूप है वह अधिक जियेगा तो अधिक धिक पाव करके नीच नीच गति अर्थात् भ्रूँक-अधिक दुख को प्राप्त होता पाया।

★ बुद्धिमान, कुलीन, धूर, धीर, धुर, दाता, दिव्य द्रुपे को जानने हारे धर्मवान् पुरुष को शत्रु न बनाये किंकि जो ऐसे को शत्रु बनावेगा वह दुख भिगा।

(कवकः)

हिमालय के हेरे
आँवलो से निर्मित,
विटामिन सी तथा
लोह से भरपूर



गुरुकुल
काँगाड़ी
का

शक्ति संचय प्राण



शक्ति संचय के
लिए आज से
ही सेवन करें

गुरुकुल काँगाड़ी फार्मसी, हरिद्वार.

लखनऊ के सोल एजेण्ट—

श्री एस० एत० महता एण्ड कं०,
२०-२१ श्रीराम रोड

अवश्य पढ़िये **कर्ण रोग नाशक तैल** रजिस्टर्ड

कान बहना, शब्द होना, कम सुनना, बर्ब होना, साज आना, साय साय होना, मवाव आना, कुलना, सीटी सी बजना आदि कान के रोगों में गुणकारी है, सू० १ शीशी १।) ३ बजन शीशी कर्ण रोग नाशक तैल की सपाने वालों को सोल एजेण्ट बनाया जायेगा, और उनको कमीशन में १८ शीशी को साय में नेजी आयेंगी, सर्खा रीकम पोस्टेज करीदार के बिन्में रहेगा। बरेली का प्रतिष्ठ रजिस्टर्ड 'शीतल सुरमा' को बाँकों के लिए बड़ा गुणकारी है, एक शीशी १॥)। हम से मगाकर परीक्षा करके देखिये।

'कर्ण रोग नाशक तैल' सन्तोमालन मार्ग नजीबाबाव यू.पी.



★ छल, कपट और कृतघ्नता से अपना ही हृदय दुःखित होता है तो दूसरे की क्या क्या कहनी चाहिये ।

★ मनुष्य का आत्मा उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म, स्वभाव, से सूचित होता है, जेबरो से नहीं ।

★ जो धर्माचरण से रहित है, वह वेद प्रतिपादित धर्मजन्य सुख रूप फल को प्राप्त नहीं हो सकता और जो विद्या पढ़ के धर्माचरण करता है, वही सम्पूर्ण सुख को प्राप्त होता है ।

★ जो पुरुष अर्थ और काम में नहीं फसते हैं, उन्हीं को धर्म का ज्ञान प्राप्त होता है ।

★ जैसा अपने को सुख-प्रिय और सुख अप्रिय है, वैसा ही सर्वत्र समस्त लेना ।

★ ऋषि-कृत ग्रन्थ पढ़ने चाहिए, मनुष्य कृत नहीं ।

★ विद्या विद्वान के लिये अपने स्वरूप का प्रकाश करती है, मूर्ख के लिये नहीं ।

★ दुष्टों को बन्ध देना चाहिये और श्रेष्ठों का पालन करना चाहिये ।

★ वेद ईश्वर-कृत होने से निर्जलत और स्वतः प्रमाण है ।

★ सब स्त्री और पुरुषों को वेद पढ़ने का अधिकार है ।

★ चाहे लड़का लड़की मरण पर्यन्त बचारे रहें परन्तु असद्वृत्त धर्मात् परस्पर विशुद्ध गुण, कर्म, स्वभाव वालों का कभी विवाह न होना चाहिये ।

★ धर्म व्यवस्था, गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार हीनी चाहिए ।

(कमलः)

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के-

भगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस

लखनऊ में

सभी प्रकार की पुस्तकों, अखबारों

साप्ताहिक तथा मासिक पत्र की छपाई

तथा

जौव वर्क-कार्ड, लिफाफे, पैड, नोटिम, पोस्टर

आदि की छपाई सुन्दर तथा उचित

मूल्य पर की जाती है ।

प्रदेश की सब आर्य सस्थाओं तथा आर्यसमाजों से निवेदन है कि वे अपना सभी कार्य भगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस में छपाने भेजें ।

—निर्मलचन्द्र राठी

उपमन्त्री आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश

तथा व्यवस्थापक न० बी० आ० मा० प्रेस

सफेद दाग का मुफ्त इलाज

विद्वानों ने सब कहा है कि परिश्रम का फल कभी बेकार नहीं जाता । हमने परिश्रम, लोभ, लर्च, और अनुसंधान के बाद शिष्य नाशक आयुर्वेदिक दवा का निर्माण किया है । इसके लगाने से शरीर के विभिन्न अंगों के सफेद दाग में अपूर्व लाभ होता है । इस कवकित रोग से एक हजार रोगियों को एक फायल दवा समाज कल्याण के लिये मुफ्त भेजा जावगी शीघ्रता करें ।
पता— श्री लखन फार्मसी, नं० १३, पो०—कतरीसराय (गया)

★ परमेस्वर का स्वाभाविक गुण जगत की उत्पत्ति करने के लिये सब जीवों को प्रसन्न करने के लिये प्रयत्न करने का है।

★ श्रेष्ठों का नाम आर्य, विद्वान् के देव और दुष्टों के दस्यु मूल नाम होने से, आर्य और दस्यु दो नाम हुए।

★ बुद्धात्माओं से न प्रीति करे, न घृणा करे। सकलनकर्ता— श्री कृष्णवत् आयुर्वेदालंकार, फंजाबाद

चारो वेद मन्थ्य, स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ तथा आर्यसमाज की समस्त पुस्तकों का

एक मात्र प्राप्ति स्थान—
आर्य माहित्य मण्डल लि०
श्रीनगर रोड, अजमेर

भारतप्रिय आर्य विद्या परिषद की विद्यारत्न, विद्या विद्यारत्न, विद्या वाचस्पति आदि परीक्षाओं मंडल के तवावधान में प्रतिवर्ष होती हैं। इन परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहां से भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं की पाठविधि मुफ्त मंगावें

मात सरकार से रजिस्टर्ड
सफेद दाग

याने शरीर पर निकलने वाले सफेद चट्टा
दवा मूल्य ६) विवरण मुफ्त मंगावें

एक्झिमा (इसमें, उकलत, कज्जब)

दवा का मूल्य ६) रु० पर परीक्षित
दमा स्वास दवा मूल्य ६ रु०
बंद के आर.बोरकर आयुर्वेद-मजल
श्री मंगलपुर, जि. अकोला (महाराष्ट्र)
(आर्य)

दुनिया में हलचल मचा देने वाली वही अद्भुत

आसामी बंगाली तिलस्मी राज

या

✽ खजाना-करामात ✽

आसाम
बंगाल

नेपाळ
भूटान

पत्रिका एडिशन की हजारों प्रतियां ६।।) रु० मूल्य होते हुए भी हाथोंहाथ खतम हो गई थीं, अब तीसरी बार छप कर पचास पाहियों के पास आ रही हैं। ऐसी पुस्तक आपने नहीं देखी होगी। यदि आपकी वापसव्य हो तो ३ दिन बेलकर वापिस कर सकते हैं। हम तुरन्त मूल्य लौटा देंगे, इससे भड़कर और क्या सचाई होगी।

पृष्ठ संख्या ६५० है। पुस्तक सजिव है।

नोट—आसाम बंगाल के जंगली पहाड़ों में महात्माओं से प्राप्त संकटों प्रकार के सतार की कथित रूप देने वाले रहस्यमय प्रयोग मालूम करने के लिए तुरन्त इस पुस्तक की एक प्रति मंगा लें अन्यथा स्टाक खतम होने पर फिर पहले की तरह पठना होगा। आई के साथ कम से कम २) रु० पेशगी आना जरूरी है।

डिप्टी का लडका

बलकला के मंगलूर बाग 'ईडन गार्डन' की एक सचची घटना। प्रत्येक नवयुवक को यह उपन्यास जरूर पढ़ना चाहिए, ।।।) के स्टाम्प विज्ञापन काचें मेजरकर तुरन्त भेजा जावे।

स्टाक थोडा है।

पता—रायसाहब के० एल० शर्मा एण्ड सन्स, (६३) "जगाधरी" (ई०पी०)

ओ३म्

साप्ताहिक आर्यभट्ट ऋष्यङ्क

वर्ष }
६६ }

लखनऊ रविवार कार्तिक १० शक १८८६, कार्तिक कृ० १२ वि० २०२१
१ व = नवम्बर सन् १९६४ ई०, दयानन्दान्व १४०, सृष्टि मवत १,९७,२९,४९,०६५

} अङ्क
४३-४४ }



ऋषि-निर्वाण



जिसने जनता के हित में निज तनु को होम दिया है,
धी तीव्र गरल की धारा वसुधा को सोम दिया है ।
जननी या जनक जनो में जिसने था नाता जोडा,
मिट्टी को प्यार किया था कञ्चन भवनो को छोडा ॥१॥
लहराई जिसकी जग में गङ्गा सी पुत जशानी,
कण कण वसुधा का कहता है जिनकी अमिट कहानी ।
व्रत ब्रह्मचर्य की बरदा पावन प्रतिमा प्रकटाई,
सागर भी नाप न सकता है जिसको गुरु गहराई ॥२॥
ले ज्ञान रश्मियाँ स्थणिम झूल पर रवि सम आया,
पालण्ड पुरातन तमसा को पल में दूर भगाया ।
शास्त्रार्थ-समर में निर्भय निडर नृतिह बहाडा,
अभिमानी पथ विरोधी बन्दो को शीघ्र पछाडा ॥३॥
वेदों की ज्ञान मुषा से सींची मानवता ब्यारी,
बर्दान की बीप बया से धी सुधुमा त्रिच्व निहारी ।
मिथ्या उभूलन करके मधुमूल मन्त्र उमगाया,
"सत्यार्थ प्रकाश" प्रना से था सत्य सुरतन बिलाया ॥४॥
भारत की राष्ट्रियता का था बीज हृदय में बोया,
जन मन को जागृत करके जो आज यहीं था सोया ।
जिसके सिद्धांत जगत् में निश्चित सी निधि अक्षय हैं,
जिसके गुरु गौरव गीतो की सरगम अमर अमय हैं ॥५॥
उसके निर्वाण-विषय पर फिर क्यों न चेतना जागे,
आर्यरच स्नेह में अथनी को क्यों न साधना पागे ।
सृष्टि के हृदय-सदन में श्रद्धा के बीप जलाओ,
तब सत्य रूप में आर्षो ऋषि अनुगामी कहलाओ ॥६॥
कविबर—"प्रणव" शास्त्री एम० ए०





सम्पादकीय—

तमसोमा ज्योतिर्गमय

महर्षि दयानन्द के निर्वाण दिवस का आर्यसमाज, भारतसर्व और विश्व की मानव जाति के लिये एक ही संस्था है, अज्ञान को नष्टकर ज्ञान का प्रकाश करो। ऋषि जीवन पर्यन्त इसी साधना में रत रहे उनके जीवन का एक-एक क्षण अज्ञान के नाश और ज्ञान के प्रसार में सलग्न रहा, ऋषि की कठोर साधना में देशवासियों के हृदयों में वह दिव्य ज्योतिः आवृत्त की कि सोया भारत जाग उठा, बूढ़े भारत में फिर से नयी ब्रह्मानी का रक्त-सुधार आरम्भ हो गया और देशवासी स्वाधीनता और सुराज्य की कल्पनायें करने लगे। आर्यसमाज की स्थापना द्वारा वे विश्व-उपकार के महान् मिशन की पूर्ति करना चाहते थे परन्तु आर्यसमाज के लिये भारत की समस्या उपेक्षणीय नहीं हो सकती थी इसीलिये सार्वभौम उद्देश्य वाला सगठन होने पर भी आद्यसमाज की विशेष गति विधियां भारतीय जीवन से सम्बन्धित रहें और भारत के सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में एक हृदय कम्प पैदा हो गया। ऋषि चाहते थे कि पहले हम अपने घर का सुधार कर लें सत्सार का सुधार अपने आप हो जायगा इसलिये ऋषि ने पाक्ष्ण्ड-सण्डन का दुष्चारा इस तीक्ष्णता और वेग से चलाया कि स्वार्थी और अन्यायी घबरा उठे, ऋषि को जीवन में चौबहु बार विषयान करना पड़ा पर वे 'निर्वस्तु नीति निवृणा' के अनुसार अपने मिशन में अडिग रहे। अज्ञान, अन्याय, अभाव के विषय उन्हीं को अनिधान चलाया वह आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना आरम्भ काल में था आज देश स्वाधीन है पर देश का नेतृत्व मानसिक रूप से परार्थीन है और पश्चिम के भौतिकवादी आकर्षण में फसकर नकलखी मनोवृत्ति का प्रदर्शन कर रहा है। इस आरतम-हृन्म की स्थिति को समाप्त करने के लिये ऋषि दयानन्द का जीवन एक आवर्ध प्रेरणा स्रोत है। स्वदेश, स्वभावा, स्वसम्पत्ता, स्वदेशभूषा आदि के प्रति गौरव की भावना यदि समाप्त हो गयी तो भारत ब्रह्मच-सूबा गौरव भी समाप्त हो जायगा। अत आज देशवासियों के लिये ऋषि निर्वाण-दिवस की यही प्रेरणा है कि वे राष्ट्र के लिये राष्ट्रीय

जीवन-पद्धति, राष्ट्रीय रहन-सहन, आचार विचार आदि की संहिता निर्धारित करें। पश्चिम के अध्यानुकरण ने हमारी स्वतन्त्रता को स्वच्छन्दता में बदल दिया है। मर्यादा रहित जीवन प्रणाली किसी भी राष्ट्र को कभी आगे नहीं बढ़ा सकती वह राष्ट्र चाहे कितना ही महान् हो अवश्य पतनावस्था को प्राप्त होगा यही कारण है कि १८ वय के राष्ट्र निर्माण के बाद देश आज भ्रष्टाचार की व्यापक दशक में बुड़ी तरह फस गया है। भ्रष्टाचार बलबल से राष्ट्र को निकालने का एकमात्र मार्ग है राष्ट्र के जीवन में आस्तिकता और नैतिक मूल्यों की स्थापना। आज सब जगह समाजवाद का नारा गूज रहा है परन्तु आस्तिक विचारधारा से अधिक समाजवाद क्या हो सकता है जिसके कारण शोषण और अन्याय सम्भव ही नहीं रह जाते, "अहिंसा प्रतिष्ठाया वरं त्याग" जब वरं माध ही न रहेगा तब शोषण और अन्याय ही कंते होगा। इस लिये आज देश को सबसे अधिक आवश्यकता आस्तिक भावना के प्रसार की है।

आर्यसमाज के सभी कार्य मानव उपकार योजना के अग हैं परन्तु उन सबके मूल में आस्तिक भावना प्रमुख है। आद्यसमाज के प्रत्येक सदस्य के जीवन में ईश्वर विद्वान्त सव्याप्त रहना चाहिये और देशवासी भी ईश्वर विद्वान्त को सही रूप में समझ सकें इसका प्रयत्न हमें करना चाहिये। बान्त के 'सर्वज्ञत्वमिदं ब्रह्म' और गंगा स्नान और कथा से पापमुक्ति वाली आस्तिकता व्यक्ति को निष्कर्मण्य और पाप मनोवृत्ति वाला बनाती है, अत प्रावश्यकता इस बात की है कि हम कर्मवाद के सिद्धांत का प्रचार करें और कमकल अवश्यमवादी है इसमें आस्था उत्पन्न करें, देश में सव्याप्त भ्रष्टाचारी मनोवृत्ति में परि वर्तन आ जायगा।

आज विश्व में मय, अज्ञान्ति और सधर्ष का जो वातावरण सव्याप्त है उस सबका कारण भी अमर्यादित और भौतिकवादी जीवन पद्धति है, महर्षि दयानन्द की शिक्षाओं का यदि सव्याप्त प्रचार और प्रसार विश्व के बौद्धिक जगत में किया जा सके तो हमारा दृढ़ विश्वास है कि सत्सार के विचारक उससे अवश्य प्रभावित होंगे। रोमारोलां और एण्ड्र्यू जैवन्त जैसे विद्वानों ने ऋषि के महत्त्व को स्वीकार कर उनका सन्देश विश्व मानव तक पहुंचाया है।



मानव मुक्ति का प्रवर्तक दयानन्द



संवत् १९४० वि० (३० अक्टूबर १९८३ ई०) को बीपावली की दीप-शुद्धला की युग-पुरुष महर्षि दयानन्द के निर्वाण ने अलौकिक दीर्घता प्रदान की। विष पान से शरीर आधलो से छलछलाया हुआ था, तो मो ऋषि गम्भीर मुद्रा में वेदपाठ में सलग्न था और अपने ही घातक, दूध में विष देने वाले जगन्नाथ को यह कहकर क्षमा दान दे रहा था कि 'मैं तो सत्सार में मानव समाज को बधनों से मुक्त करने आया हूँ, तो तुझे बन्धी करके शूलों पर पोड़े चढाऊँगा'। उसे मार्ग व्यर्थ दिया और आशीर्वाद देकर विदा किया। तदुपरान्त यह कहकर अपने शरीर को छोड़ा 'ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो'। सत्सार के समक्ष यह उदाहरण वन्होंने प्रस्तुत किया कि सत् और ज्ञानो, योगी और यति अपने जीवन से देश और काल को सुरमित व आनन्दमय करता रहता है और मोत से मितते हुए मो जीवन की जनहित रूपी सुषमा को दूषित नहीं होने देता। क्या आयममाज अपने प्रवर्तक ऋषि के पद-चिह्नों पर चलकर देश और राष्ट्र पर अपना स्वस्व न्योछाडकर करके उसके उन्नयन में सन्नद्ध होगा ? यदि नहीं, तो निर्वाण दिवस मनाना व्यर्थ होगा।

मदनमोहन वर्मा प्रधान

उत्तरप्रदेश आर्यप्रतिनिधि सभा तथा अध्यक्ष विधान सभा



आर्यसमाज के प्रमुख अधिकारियों और विद्वानों को सम्मिलित रूप से ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि ऋषि की विचारधारा सही रूप में विश्व-जनता तक पहुँचे। इस कार्य के लिये सावदेशिक सभा के विदेश प्रचार विभाग में साहित्य निर्माण का कार्य शीघ्र आरम्भ होना चाहिये। ऋग्वेद में आयममाज बनता बिगड़ता रहा है अब वह कब साकार रूप धारण करेगा नहीं कहा जा सकता परन्तु अब 'हिन्दु-मवन' बनने की योजना सामने आ चुकी है। आर्य समाज को चाहिये कि ऐसा प्रयत्न हो कि भारतीय विचारधारा का सही रूप में प्रतिनिधित्व हो सके। यदि वहाँ भी पाण्डित्य-स्वरूप प्रचलित हुआ तो भारत का अपयश ही होगा। भारत वेदो का अनुयायी है पर वेदों के सम्बन्ध में 'भ्रातिया दूर करने के लिये कोई प्रणयनशील नहीं, हय विश्वास में भी आयसमाज का विशेष दावि-व है।

महर्षि निर्वाण दिवस हम आर्य जनो के लिये शुभ-व्यक्त्य और आत्म निरीक्षण का दिवस है। हम शुभ-

सकल्प लें कि हम महर्षि के बताये पथ पर बड़ल/पूर्वक चलेंगे और भारत को आवाज राष्ट्र बनायेंगे तथा विश्व शांति के लिये वैदिक संदेश गुंजायेंगे। महर्षि ने जो कार्य हमें सौगा है उसकी पूर्ति में विश्राम सम्भव ही नहीं। आज की माया में हमारा नारा 'आराम हराम है' और ऋषि बाणी में हमारा नारा है- 'चरंवेति चरंवेति चरंवेति' ★

आभार

हम "आर्यमित्र" के विद्वान् लेखकों, कवियों के आभारी हैं जिन्होंने अपनी अमूल्य लेखनी का प्रसाद आर्यव्रत को दिया है। स्थानानाथ से जिनके लेख प्रकाशित नहीं हो सके हैं आशा है वे क्षमा करेंगे। -डा राजेन्द्र, उपसर्वाधिक

❀ आवश्यक सूचना ❀

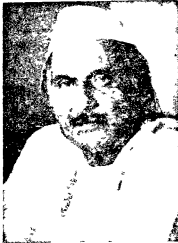
आर्यमित्र का यह ४३-४४ संयुक्त अंक ऋष्यक है। जो विनाक १ व नवम्बर का है। अब अगला अंक १५ नवम्बर को प्रकाशित होगा। पाठक नोट कर लें।

—चन्द्रवत् सिवारी मन्त्रो व अविष्णता "आर्यमित्र"



महान् दयानन्द !

पिछले सो
देढ़ सो वर्षों मे
जिन महापुरुषों
ने भारत प्रेमि
को पवित्र किया
है उनमे स्वा०
दयानन्द सर-
स्वती का स्थान
बहुत ऊँचा है।
सैकड़ों वर्षों से
भोगे हुए हिन्दू
समाज की
आत्मा को उद्-
बुद्ध करने का
बहुत बड़ा श्रेय उनको है। उनके दार्शनिक विचारों से
असहमत होना सम्भव है, वेदों की उन्होने जो व्याख्या की
है उसको बहुत से स्वलो मे स्वीकार न करना सम्भव है
परन्तु उनका उज्ज्वल चरित्र, उजलत देश प्रेम, गम्भीर
बिद्वत्ता और हिन्दुओं के अस्पृश्यते के प्रति अनन्य निष्ठा के
सम्बन्ध मे जो राय नहीं हो सकती। यदि आज हिन्दू
समाज अपनी बहुत सी रुढ़ियों और सामाजिक कुरीतियों
को छोड़ सका है तो इसमे सन्देह नहीं कि यह बहुत दूर
तक स्वामी जी के उपदेशों का प्रभाव है। जो लोग उनके
विचारों से पूर्णतया सहमत नहीं हैं उनके हृदय मे भी
स्वामी दयानन्द जी के प्रति आदर की भावना है। मैं भी
इस अवसर पर आपके साथ उनके प्रति श्रद्धात्रलि अर्पित
करता हू।



श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी

—सम्पूर्णानन्द, राज्यपाल, राजस्थान

राष्ट्रोद्धारक दयानन्द !

हमारे देश की राष्ट्रीयता को जागृत करने में महर्षि
दयानन्द की महान् देन है। वे ऐसे युग मे पैदा हुए जिस
युग मे भारत मे, पालक, अन्धविश्वास और बासता का
बोझबाला था। इस देश की आत्मा पर अनेक आघात हो
रहे थे। महर्षि ने देश के कोने कोने में घूम घूम कर देश
की आत्मा को जागृत करने के लिये अलख जगाया।
उन्होंने नये समाज के निर्माण के लिये श्रेष्ठ तैयार किया
और देश की स्वतन्त्रता के लिये मार्ग सुन्ध किया। वे
व्यावहारिक राजनीतिज्ञ नहीं थे पर उन्होंने देश को राज-
नीति का बौद्धिक ज्ञान दिया।

महर्षि दयानन्द भारत मे स्वराज्य की कल्पना करते
थे और उन्होने आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य मे जहा
वैदिक धर्म की आस्था को स्थिर करने का प्रयास किया
वहा उन्होने देश-भक्ति का पाठ भी पढ़ाया।

पद-बलिर्ताओं को समाज मे उचित स्थान मिले इसके
लिए आर्यसमाज ने विशेष कार्यक्रम बनाकर कार्य किया।
आर्यसमाज मे सबको समान रूप से सम्मान प्राप्त है।
समता तथा समानता का वास्तविक पाठ यदि किसी ने
सिखाया है तो वह महर्षि दयानन्द थे। अछूतों के साथ
होने वाले अमानुषिक व्यवहार को उनके प्रचार ने कुछ
शिथिल किया। आज भी अस्पृश्यता का अविनाश विद्य-
मान है। महर्षि दयानन्द जिस स्वस्थ समाज का निर्माण
करना चाहते थे, उसमे अस्पृश्यता को स्थान नहीं है।
आर्यसमाज आज भी अपने कर्तव्य पालन मे सचेष्ट है।
महर्षि के बतलाये हुए आदर्शों पर चलकर ही हम उनके
प्रति सच्ची श्रद्धा भक्ति दिखा सकते हैं। महर्षि दयानन्द
सरस्वती एक क्रांतिकारी समाज सुधारक थे।

मे दोषावली के इस पुण्य वर्ष पर महर्षि दयानन्द के
प्रति अपनी श्रद्धात्रलि अर्पित करता हू।

—बलदेव सिंह आर्य
उपसचिव कृषि, उत्तर प्रदेश



‘यथायोग्य व्यवहार’—

तलवार का जवाब तलवार से

(ले०—श्री प्रकाशशेखर जो शास्त्री एम०पी०, मुख्य उपप्रधान प्राय प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश)

शान्ति सहिष्णुता और सन्तोष की भी तो एक सोमा होती है। मगबान कुष्ण ने सो माली पूरी होने तक तो त्रिगुपाल को क्षमा कर दिया था पर एक सो एक



लेखक

होने पर सुदर्शन चक्र हाथ में रकना मारी हो गया और त्रिगुपाल को हमेशा के लिये रास्ते से हटा दिया। पाकिस्तान के निर्माता भारत की उबारता को कमजोरी समझ रहे हैं। हम चाहते हैं कि दोनों देश मले पड़ोसियों की तरह रहना सीखें पर उन पर हमारी इस अपील का कोई खास असर नहीं होता। हमारी हर अच्छी बात को वह ठुकरा देता है और बार बार म्यान से तलवार निकाल कर डराना चाहता है। हमारी हि दुओं का खून बहा कर दिया गया जिसकी हवा धीरे धीरे भारत में भी फैलने लगी। अगर वह अपनी इन आदतो से बाज नहीं आयेगे तो फिर मजबूर होकर तलवार का जबाब तलवार से देना होगा। यह ये भी भाव सरदार पटेल के उन शब्दों के जो पाकिस्तानी मनोवृत्ति के नेताओं को जबाब देते हुए उन्होंने मेरठ के कांग्रेस अधिवेशन में कहे थे। सरदार मानवसूत्र कर लड़ाई मोक्ष लेने के बक्ष में लगी नहीं थे

परन्तु लड़ाई यदि सिर पर लाब ही थी जाय तो उससे बच कर मायना भी महा कायरता समझते थे। उनका अपना विश्वास था कि देश और जातिवा हमेशा अपने शक्ति बल से ही सुरक्षित रहती हैं। इतिहास में जब जब भी इनकी उपेक्षा की गई तब तब ही चोट लगी है। सरदार के वैहावसान के बाद भारत के पड़ोसी राष्ट्र चीन ने अपनी कृतनीति में भारत के कुछ शीवस्य नेताओं को फसा लिया। मगबान बुद्ध और पबशोल की आड में हम यह मूल बडे कि यह इन महावानव की एक खाल मात्र है। उसी चक्कर में सेना पर अधिक व्यय और उसे आधुनिकतम हाथियारों से लैस करने की ओर भी विशेष ध्यान नहीं दिया जा सका। पर जब नेफा और लहाख ने एक दिन उसके इरादे खूलकर सामने आये तब फिर हमारे नेताओं ने कहा कि चीन ने विश्वासघात किया है और उसने पीछे से हमारी पीठ में छुरा भोका है। चीनी आक्रमण के समय भारत पर हर छोटा बडा एक स्वर से यह ही कहती सुनाई देता था, काश कहीं सरदार पाव सात साल और जीवित रह गये होते तो भारत का यह स्वाभिमानी हिमालय की चोटियों पर इस तरह नष्ट न होता। उस चोट के लगने के बाद एक बात अच्छी हुई और वह यह कि देश फुकार कर लडा हो गया और नेता भी कहने लगे कि इस हमले ने हमारी आँखें खोल दी हैं। परन्तु दुर्भाग्य से न तो देश की एकता का ही लाम उठाया गया और न खुकी ही आँखों से दूर तक कुछ देखने की कोशिश ही की गई। परिणाम सामने है, लडाईं फिर सिर पर लडा है और नहीं कहा जा सकता कल क्या होने वाला है ?

भारत की साढ़े पाब ली के लगभग रियासतो के विलीनीकरण का प्ररन इतना मारी था जिसे मुलताना सरदार के ही बस की बात थी। खून की एक बूब गिराये बिना बड़े प्रेम और सद्भाव से इस तरह देश के राजाओं को डरभर में अपने साथ के लिबा, यह उनकी सुधसुध



। ही परिणाम था। एक-आध जगह कहीं हल्की सी उल्लंघन यदि करनी भी पड़ी तो वो भी विवश होकर। रम्बु प्रकले सरदार सारी रियासतों को भारत में वृष और पानी की तरह मिलाकर ऐसे एकाकार कर गये जैसे दूत पहले से मानो उन्होंने कोई इसकी योजना बना रखी है, परन्तु आश्चर्य है, सत्रह साल की लम्बी अवधि बीतने के बाद भी अभी तक भारत के सब नेता मिलकर एक शाहीर की समस्या का समाधान नहीं कर पाये। सरदार के हाथ में यदि यह भी बात होती तो न जाने कब का इस समस्या का भी हल हो गया होता। अब जिस उग से जम्मु काश्मीर की समस्या का समाधान सोचा जा रहा है उससे बात कुछ बिाड ही रही है बहन नहीं रही। महाराज श्रीसिंह जिन और कई कारणों से जल्दी ही जम्मु काश्मीर का भारत में विलय नहीं कर सके, उनमें एक प्रमुख कारण यह भी था कि त कालीन भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू श्रेष्ठ अबदुल्ला को उस राज्य का प्रधान मंत्री बनाना चाहते थे। महाराज श्रीसिंह ने भारत सरकार को इस सम्बन्ध में बहुत कुछ समझाया भी पर उसका कोई विशेष प्रभाव न हो सका। पर आखिरकार १९५३ में महाराज श्रीसिंह की बात सामने आई जब श्रेष्ठ अबदुल्ला को उनकी भारत विरोधी गतिविधियों के कारण जेल में डालना पडा। सरदार पटेल का अंतिम समय तक श्रेष्ठ अबदुल्ला के सम्बन्ध में यह विश्वास था कि यह व्यक्ति कभी भारत का वफादार नहीं हो सकता पर वह इसके लिये करने भी क्या ? क्योंकि काश्मीर ही एक ऐसी रियासत थी जिनके भारत में मिलाने का दायित्व स्वयं श्री नेहरू ने अपने कर्तों पर ले लिया था। सरदार का यह भी विश्वास था कि जो शरणार्थी सोमा प्रान्त और पंजाब से उजड़ कर आ रहे हैं उनको भारत के सीमावर्ती राज्य में बसने की सुविधायाँ दी जायें और उनके लिए बड़ा अच्छे कारोबार भी चलाने की व्यवस्था की जाय, परन्तु श्रेष्ठ के चक्कर में वह सब भी सम्भव न हो सका। अब फिर करोड़ों रुपया उसके मुकदमें पर व्यय करने के बाद बिना निणय पर पहुँचे उसे फिर जेल से बाहर कर दिया है और वह निभय होकर काश्मीर को जनमत संग्रह की छाड में भारत से वृषक करने के स्वल्प ले रहा है। वर्तमान भारत सरकार और उसके नेता काश्मीर राज्य के

एकीकरण में बाधक संविधान की धारा ३७० को हटाने में इसलिये हिचकते हैं कि इससे विश्व जनमत हमारे खिलाफ हो जायेगा, पर सरदार देश की समस्याओं के समाधान में विश्व के जनमत की उतनी परवाह नहीं करते थे। जन्म को तैयारियों के लिये लम्बा समय देना सरदार की नीति के विपरीत था। उनका अपना विचार था जो काम करना है उसे जल्दी ही कर लिया जाय। बेर करने से उसमें और शास्ता, प्रशास्ता फूटने का भय है। आज या कल जब भी हो काश्मीर की समस्या का समाधान अर्थात् जो धरती इव समय पाकिस्तान के अधिकार में काश्मीर की है उसे तलवार के बल से ही लेना होगा। बाली में रखकर पाकिस्तान उपहार की तरह भारत को भेंट में वह भाग दे वेगा ऐसा सोचना भी अपनी अदूरदर्शिता का ही परिचायक होगा। ठीक वही स्थिति लगभग चीन के सम्बन्ध में भी है। विश्वासघात कर्तों अथवा अपनी राजनीतिक सूझ-बूझ का अभाव उसने जब तिब्बत पर निरीह लामाओं का कर्ले आम किया था हमें सावधान हो जाना चाहिए था। फिर जब शरीनाथ के पास बाराहोती में अपनी सेनायें उसने भेज दीं तब तो आँख खुल ही जानी चाहिये थी पर हमें पञ्चशील की हवाओं ने इतना मस्त बना दिया था जो हम यह सब सोच भी न पाये। पर क्या आज यह सम्भव है कि मुट्ठी-मुट्ठी भर लोगों के वह देश जो कोलम्बो सम्मेलन में सम्मिलित हुये थे, चीनो अनुभव की उपेक्षा करके भारत के साथ चीन के विरोध में ताल ठोककर खड़े हो जायेंगे और कोलम्बो प्रस्ताव स्वीकार न करने पर खुपकर कहेंगे कि हम भारत के साथ रहेंगे। कैंरो में हुए लक्ष्य राष्ट्रों के सम्मेलन में जिन्हें अपने प्रस्तावों की वृष्ट भूमि में बैठकर चीनी घमकी से बैठक करने तक का भी साहस न हुआ, कब तक उनके भरोसे बैठे रहना जायेगा ? चीन जब अनुभव का बिस्कोट कर चुका है तब ये कहना हम उसके विरोध में जनमत तैयार करेंगे, अपनी बुबलता का ही परिचय देना है। यदि अनुभव तैयार करने की शक्ति हम में है तो क्यों नहीं आत्म-रक्षा के लिए वह भी साहसिक कदम हम उठाते ? शक्ति प्रदर्शन के युग में शांति का जयघोष देश को ले बैठेगा। सरदार की



भेदभित्ति समादर



(ले०-श्री स्वा० ध्रुवानन्द जी सरस्वती)

प्रश्न-जब महावि श्री स्वामी बलानन्द सरस्वती जी महाराज से पूर्व अनेक सन्ध्या पद्धति-विद्यमान थीं तब भी स्वामी जी महाराज ने एक नूतन सन्ध्या पद्धति का निर्माण क्यों किया ?

उत्तर-(क) समस्त सन्ध्या-पद्धति आधारशुभ्य साधार नहीं थी ।

(ख) मन्त्रों का बिनियोग निरर्थक या सार्थक नहीं था ।

(ग) उन सन्ध्या पद्धतियों में भेदभित्ति का प्रचुर प्राबल्य था ।

प्रश्न-आधार-शुभ्य साधार का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर-सन्ध्या पद्धति का क्य प्रथि वेव, उपनिषद् आदि से अनुमोदित है तो वह सन्ध्या पद्धति साधार है । वेव का आदेश है कि-"उपस्था अग्ने बिधे बिधे बोधावस्तिबिया वयम् । नमो नरन्त एमसि" हे प्रकाश स्वरूप परब्रह्म परमात्मन । प्रतिदिन साय प्रात "नमो नरन्त" तेषो नमोऽधिपतियो नमो" "नम शम्भवाय च" नम पूर्वक आपकी उपासना करें । इसमें प्रतिदिन सायकाल और प्रात काल सन्ध्या का विधान है और वह सन्ध्या नम पूर्वक हो । अपि च-

कल्पना कीजिये-स्टेशन पर पहुचने वाले ध्यक्ति के लिये एक तागा ठीक हो, छोडा बलबान हो, और टूँड हो उसके मुल में लगाम हो, ड्राइवर बख हो और अग्धा न हो । ऐसे तागे में बैठने वाला ध्यक्ति ही स्टेशन को (प्राप्तव्य स्थान को) प्राप्त कर सकता है । उपनिषद् का उपदेश है कि-"आत्मान रथिन विद्धि शरीर रथमेवतु बुद्धि तु सारथिम विद्धि मन प्रपहमेव च । इन्द्रियाणि हयानाहु विषयास्तेषु गोचरान्" शरीर रथ (तागा) है, इन्द्रिया घोडे हैं, मन लगाम है, बुद्धि ड्राइवर है, जीवात्मा यात्रा करने वाला है और वेव प्रतिपावित कमकाण्ड ही सडक है । अर्थात् वेव प्रतिपावित कमकाण्ड की सडक पर जो ध्यक्ति शरीर रथी तागे को चलावेगा वह ही आनन्दकन्व परब्रह्म परमात्मा को पा सकेगा ।

श्री स्वामी जी महाराज द्वारा निमित सन्ध्या पद्धति में यह ही प्रकार निहित है अनएव वैदिक सन्ध्या साधार है । आचमन से लेकर प्राणायाम तक एक प्रसग है ।



श्री स्वा ध्रुवानन्द जी

अर्थात् स्नान से शरीर शुद्धि, आचमन से कण्ठ - शुद्धि, इन्द्रिय स्पर्श से इन्द्रियों में बलाधान, माजन से इन्द्रिय-दोष दूरीकरण, प्राणायाम से मन की स्थिरता करना है । यहाँ तक एक प्रसग (प्रकरण), अधमर्षण द्वितीय प्रसग, मनसा परिक्रमा तृतीय प्रसग और उपस्थान चतुर्थ प्रकरण है । प्रथम प्रकरण में प्रभु प्राप्ति के लिये सांघ्रिध होना है (योग बनना है) पुन अमिमान निवारणार्थ प्रभु के गुणों का चिन्तन करना है । प्रभुगुण चिन्तन ही अमिमान निवारण का असाधारण साधन है । अमिमान रहित विधि-वत याचक ही दाता के पास पहुच कर कुछ पा सकता है । इसीलिये श्री स्वामी जी महाराज ने चतुर्थ प्रकरण का नाम उपस्थान रखा है ।

(ख) बिनियोग का यह अर्थ है कि जिस मन्त्र का



को अर्थ हो उस मन्त्र को उसी अर्थ में लगाना । विनियोग को प्रकार का होता है । शब्दगत विनियोग और अर्थगत विनियोग । शब्दगत विनियोग उसे कहते हैं कि मन्त्र में शब्द आया हो । 'शश्रोदेवो'— यह आचमन मन्त्र है अर्थात् इस मन्त्र से आचमन किया जाता है किन्तु इस मन्त्र में 'आचमन' शब्द नहीं है इसलिए शब्दगत विनियोग नहीं है अपितु अर्थगत विनियोग है । अर्थात् इस मन्त्र में ऐसा पद है जिसका अर्थ आचमन होता है । "पीतये-पानाय-आचमनाय" आप-इम आप, श मवन्तु । अपि च—

"श्रुत च सत्यञ्चामिद्धात " इन तीनों मन्त्रों में भी 'अधमर्षण' शब्द नहीं किन्तु अधमर्षणार्थक मन्त्र लिखे हैं । यहा पर भी अर्थगत विनियोग है ।

जिस लेखक को पुस्तक में या लेख में अथवा जिस वक्ता के प्रवचन में उपक्रम और उपसंहार हो तो वह लेखक और वक्ता प्रशंसा का पात्र समझा या माना जाता जाता है । आरम्भ का नाम उपक्रम और समाप्ति का नाम उपसंहार है । लेख या प्रवचन जिस विषय को लेकर आरम्भ किया गया हो उसी विषय पर समाप्त होना चाहिये । श्री स्वामी जी महाराज द्वारा निमित्त सन्ध्या पद्धति की यह गौरव भी प्राप्त है । यथा हि-थाक वाक्-उपक्रम प्रथम शरद शतम उपसंहार है । करतल कर पृष्ठे उपक्रम, अदीना स्वाम शरद शतम् उपसंहार है ।

(ग) भेदमिति का प्रचुर प्राबल्य का अभिप्राय यह है—चारो वेदों की जितनी शाखायें हैं उन सब शाखाओं का समर्थन स्मृतिकारों ने किया है और निम्न प्रकार से आदेश दिया है—

येषां पारपर्यागतो वेद सपरिवृ ह्यु ।

तच्छास्त्र कर्म हुर्कति तच्छ्रद्धाऽध्ययनमथवा ॥

अर्थात् परस्पर से जिस परिवार में जिस वेद की मान्यता बली आई हो उस परिवार को उसी वेद की उसी शाखा का अध्ययन और उसी शाखा के अनुसार सन्ध्या आदि कृत्य करने चाहिये । अर्थात् यजुर्वेदीय शाखाओं के अनुसार अपने-अपने परिवारों में अपनी-अपनी शाखाओं का पठन पाठन करें और उन्हीं शाखाओं के अनुसार सन्ध्या आदि करें । इतना ही भेद नहीं अपितु माध्यमदिनीय शाखा का मानने वाला परिवार कठ शाखा का, कीमुन शाखा को मानने वाला परिवार इन दोनों का न अध्ययन

करे और न इनके अनुसार सन्ध्या आदि कर्म ही करे ।

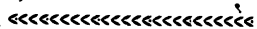
श्रुत्वेदीय मानव समाज (मानव समूह) का यजुर्वेदीय मानव-समाज से भेद, इन दोनों का सामवेदीय मानव-समाज से भेद, सामवेदीय मानव-समाज का इन दोनों से भेद, इन तीनों का अथर्ववेदीय मानव समाज से भेद और अथर्ववेदीय मानव-समाज का इन तीनों से भेद । जिध वेद की जितनी शाखा उतने ही सपुदाय और उन सपुदायों के धार्मिक कृत्यों में अनेक भेदों की मिति (बीवार) लक्ष्य कर बी गई । इस भेद की मिति पर चढ़ने वालों में कलह कालुष्य ने ऐसी जड़ जमाई कि परस्पर में घृणा ईर्ष्या और विद्वेष ने अपना स्थायी प्रबल प्रभूत्व स्थापित कर लिया । महर्षि श्री स्वामी बयानम्ब सरस्वती जी महाराज ने देखा, सुना और सोचा कि जो आर्य जाति वृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न हुई हो और जिसे ईश्वरीय ज्ञान वेद सपुसलब्ध हुआ हो वह जातिभेद की मयकर आँधों में अपने गौरव को उठा रही हो और अपने गौरव को भेद के दुर्दान्त दावानल से बर्ध किये जा रही हो, इसलिए ही उसे बुरबस्था के दुर्दिन देखने पड़ रहे हैं ।

श्री स्वामी जी महाराज द्वारा सन्ध्या-पद्धति में शाखा-भेद सर्वथा स्थूल है । भेदमिति का नितांत निरावर है और शाखाभेद का सर्वथा बहिष्कार है ।

श्री स्वामी जी महाराज ने शाखा भेदमिति का समावर कदापि न किया था और न करते ही थे । क्या इस निर्वाण दिन पर श्री स्वामी जी महाराज के चरण चिह्नों पर चलने वाले हम आर्य परस्पर के आन्तरिक भेद भावों को भूलाने का सकल्प करेंगे ?

(पृष्ठ ६ का शेष)

नीति यही है "तलवार का जबाब तलवार से दो" मल मनसाहृत का मलमनसाहृत से और अणु-बम का जबाब अणु-बम से ।" एक बार यदि लड़ते लड़ते देश का बहुत बड़ा भाग समाप्त भी हो गया तो उस पर साहस और शौर्य के नये अकुर उत्पन्न होंगे । इतिहास सुनकर अजराओं में लिखेगा—राम और कृष्ण का देश, जिवा जी और प्रताप का देश, तिलक लाजपतराय, और सरदार वटेल का देश अपने पुत्रों के स्वामिमान की रक्षा में लड़ते लड़ते मर गया परन्तु उनसे मुककर कहीं सबझोता नहीं किया ।'



धम्म और राजनीति



लेखक—श्री डाक्टर हरिशकर शर्मा डी० लिट्

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है,
बढ़ता अधम्म अन्धेर-अंधेरा छाता है।

जो लोक और परलोक तिद्धि का साधक है,

अम्युच्य और नि श्रेयस का आराधक है,

जिसको सकीर्ण भावना कभी न माती है,

जिसको प्रभुता प्रति-क्षण पीयूष पिलाती है,

वह परमतत्त्व सर्वथा भ्रुसाया जाता है—

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥

सद्धम्म सबा सुख शांति-सुधा बरसाता है,

नय-न्याय-नीति का शुभ सम्मार्ग सुझाता है,

मानवता से भर बभ्रु भाव उमगाता है,

बसुधा का बृहत् कुटुम्ब रूप बरसाता है,

इस विधि-विधान में सार न पाया जाता है—

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥

अत्याचारों से भूमि कापने लगती है,

सोती पुनीति, दुर्नाति धानबी अगती है,

तब स्वार्थ-असुर दुर्वंम-दर्व्य बिसलाता है,

निजता परता का क्षुद्र भाव भर जाता है,

मानव मानवता पर बिय बज्र गिराता है—

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥

मत, पन्थ, सम्प्रदायों को धम्म बताते हैं,

वे जल बीप को बिनकर कह भरमाते हैं,

क्या कभी धम्म-ध्रुवता ने मुद्ध रचाये हैं,

कब सत्य-आहंसा ने नर रक्त बहाये हैं,

विषया वारिधि ने विष्व उबाया जाता है—

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥

अष्टाचारों की अग्नि उप हो जाती है,

गुदबन्धी स्नेह-सवटन का गढ़ डातो है,

मंहगाई बिन बिन बूनी बढ़ती जाती है,

बनता सुख शांति न नेक कहीं नो पाती है,

सर्वत्र कुख दुर्दृश्य दृष्टि में आता है—

जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥



सप्राप्त भूमि ने तोपें आग उगलती हैं,
अगणित लोभों की देहे जीती जलती है,
होकर अनाथ लाखो जन घूट-घूट रोते हैं,
भल्लो मर-मर कर प्राण करोड़ों खोते हैं,
दुर्मिक्ष बुध्द वानव, मानव-दल खाता है—
जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥
शासन-सत्ता जब धम्मयुक्त हो जाती है,
बनकर विनीत अति सोम्य रूप सरसाती है,
जनता भी नैतिकता को ही अपनाती है,
तब शांतिकाति नित सुख-समृद्धि बरसाती है,
सर्वथाव-स्नेह का बृह गढ़ डायता जाता है—
जब राजनीति से धम्म हटाया जाता है ॥



भारतीय स्वराज्य के प्रथम मन्त्र-द्रष्टा—



महर्षि दयानन्द सरस्वती

[श्री प० दीनदयालजी उपाध्याय, प्रधानमन्त्री अखिल भारतीय जनसघ दिल्ली]

विक्रमाब्द १९१४ के स्वातन्त्र्य समर मे हमारी पराजय के बाद जब अंग्रेजों की विजय पताका चातुरन्त मारत मे फहरा रही थी, हमारे राष्ट्र जीवन पर घटविक से मर्यान्तिक प्रहार हो रहे थे और हम आत्मविस्मृत और आ-माभिमाम शून्य हो निरोह भाव से अप्रेज प्रभु की करणाकोर को लाक्षाघित अपना सर्वस्व मचाते जा रहे थे, तब मारत के जीवन में जागृति शक्त फूटने वाले जो महा पुणव अवतीर्ण हुए उनमें महर्षि दयानन्द का स्थान अग्र गण्य है। उनके पास राष्ट्र की दुखस्था की देखकर बुलित होने वाला सबेदनशील हृदय था, लोगों का सहो निदान और उपचार करने वाले चिकित्सक की बुद्धि थी, एक सुचारक की लयन और कर्मठता तथा बुराई से जूझने वाले एक शूरवीर का साहस था और सबसे बढ़कर बहु वार्य दृष्टि थी जो बिचब के द्वन्द्व और मोहान्धकार को चीर कर सत्य का दर्शन कर सके। सत्य सेवा का सम्बल लेकर वे जीवनपथ पर बढ़े। परायों की धमकियाँ और अपनों की उपेक्षा, तिरस्कार और अन्धहेलना किसी ने उनको बिचलित नहीं कर पाया। मारत के पतित और विकृत जीवन को उन्होंने समुज्ज्वल, सुसंस्कृत एवं सत्य प्राचीन आवसों के साथ जोड़ा तथा समाज में कुरीतियों से लड़ने तथा अपना जीवन श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा पैदा की।

धार्मिक कान्ति को आधारभूत मानकर उन्होंने मूलत उसी क्षेत्र मे काम किया। किन्तु जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बिसकी अछूता छोड़ा। स्वदेशी और स्वराज्य का मन्त्र सर्वप्रथम उन्होंने ही दिया। जिनकी दृष्टिमात्र राजनीतिक है तथा जो परिचय की राजनीतिक विचार धाराओं और परम्पराओं का अनुकरण ही मारत की नियति मानते हैं, वे महर्षि को एकपन्थीय अथवा धार्मिक नेता मानकर उनकी अन्धहेलना कर बेते हैं। उन्हें न तो मारत की

आत्मा का ज्ञान है और न महर्षि दयानन्द की महत्ता का।

महर्षि दयानन्द का काम अभी पूरा नहीं हुआ। स्वराज्य के बाद तो हमारा ध्यामीह और बढ़ गया है। महर्षि ने हमें बताया था कि हम उलूकवाहिनी की पूजा के स्थान पर उसे साधन मानकर श्रुत की उपासना करें। पर अभावस की कालरात्रि मे जाज्वल्य मास्कर का निर्वाण हो गया। हम बीपावली बनाकर अन्धकार से लड़ने का प्रयास कर रहे हैं, सत्य को छोड़कर लफ्फी की पूजा में लगे हैं। स्वराज्य मे स्वधर्म चला गया। धार्मिक उन्नति की आकांक्षा मे दर-दर नील का कठोरा लेकर घूम रहे हैं, विदेशी मुद्रा अर्जन के लालच मे मारत को अनन्ता का धर्मभ्रष्ट एवं राष्ट्र भ्रष्ट करने वाले मसीही पुश्कारियों को आमन्त्रण देकर उनके आवरातिष्य मे अपने को धन्य मान रहे हैं। आवश्यकता है कि महर्षि का बख्त घोष फिर से मारताकाश मे गूजे। क्या सार्य बन्धु महर्षि के सम्देश को लेकर लड़ेंगे? तभी तो बीपावली की रात्रि, जिसमे महर्षि का निर्वाण हुआ, के सम्बन्ध में कवि के प्रश्न का सत्य उत्तर मिल सकेगा—

“इसे रात कह कि प्रमात कह ?”

बीपावली हमारे लिये घोर तमाच्छन्न रात्रि ही रहेगी अ वा नवधध का नव-सन्देश और नव चतस्य कानेवाकी प्रतिपदा के प्रमात की पूर्ववाहिका।

श्रुषि दयानन्द वचनामृत
★ जब बिसत एकाप और निरख हो जाता है तब सबसे प्रष्टा ईश्वर के स्व-रूप में जीवार्त्मा की स्थिति होती है।

आर्यसमाज राजनीति में भाग ले !

‘महर्षि की क्या इच्छा थी ?’



[श्री प० विद्याधर जी, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तर प्रदेश]



अपने देश में अपना राज्य स्थापित करने की उत्कट अभिलाषा से युग-प्रवर्तक महर्षि वयानग्व सरस्वतो शारीरिक, आत्मिक एव सामाजिक सुधारों में सत्रतो युष्ठी प्रगति करते हुये अपने जीवन के अन्तिम वर्ष राज-स्वान में राजा, महाराजाओं को आत्मविद्या (परमात्मा के युग, कर्म स्वभाव को यथावत् जानने रूप ब्रह्म-विद्या) म्याय-विद्या, सनातन बण्ड-नीति आदि का उपदेश देते हुये यह निर्देश करते रहे कि राज्य को मुच्चारूप से सञ्चालित करने के निमित्त वैदिक विद्याओं से सम्पर्कपूर्ण शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है। अल्प समय में ही शाहजुराधीश महाराणा उदयपुर, मौलवाडा, मसूवा आदि के राजा उनके श्रद्धालु भक्त बन गये। वे अपने कार्यों में सफलता की ओर अग्रसर हो रहे थे, किन्तु परमात्मा की इच्छा कुछ और ही थी। आर्यसमाज को एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व सौंपकर वे हमारे बीच से चले गये। महर्षि के वेदावसान के उपरान्त आर्यसमाज के तत्कालीन ढणधारो ने बड़ी श्रद्धा के साथ अपने कर्तव्य का पालन किया और तबर्ष त्याग, तपस्या और बलिदान की होड लग गई। स्वदेशी आन्दोलन, आर्य भाषा प्रचार, शिक्षा प्रसार, शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक सुधार, अछूतोद्धार, आदि शुभ कार्यों में आर्यसमाज ने एक विशिष्ट ही नहीं, अपितु अनुपम गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

इन ईश्वर धर्म और देश के सच्चे और क्रियाशील उपासकों में ऐसे भी थे जिनके हृदय और मस्तिष्क में देश-भक्ति, देश की स्वतन्त्रता की भावना सर्वोपरि थी। तबर्ष के अपनी सामर्थ्य के अनुसार निरन्तर प्रयत्नशील थे। अनेकों ने देश की बेदी पर अपना जीवन सहर्ष समर्पित किया। इस विद्या में सुव्यक्त रूप से प्रगति करने की

आवश्यकता पूज्यवाद स्वामी भद्रानन्द जी महाराज के पवित्र बलिदान के उपरान्त अधिक तीव्रता से प्रतीत हुई। १९२७ में दिल्ली में आयोजित प्रथम आर्य सम्मेलन का उल्लसित प्रदन था, “क्या आर्यसमाज राजनीति में भाग लेवे ?” युवकों में उत्साह का पारावार उमड़ रहा था। वे एक स्वर से राजनीति में प्रवेश की अनुमति चाहते थे। किन्तु विचारशील महानुभावों ने देश तथा काल की परिस्थिति के अनुसार यही निश्चय किया कि हमें अपना क्षेत्र शारीरिक, आत्मिक एव सामाजिक सुधारों तक ही सीमित रहना है। इस निर्णय से क्रियाशील आर्ययुवक जिनके हृदय में भारत माता की सेवा के निमित्त अवश्य उत्साह था, अपनी शक्ति के अनुसार भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में चले गये। जिसके परिणाम स्वरूप आज के अनेक राजनैतिक बलों के ज्येष्ठ, श्रेष्ठ अग्रणी होने का श्रेय उनको ही प्राप्त है।

आर्य समाज ने सामूहिक रूप से राजनीति में नले ही भाग न लिया हो किन्तु अगरेजी सरकार हमें हमेशा सन्निग्ध वृष्टि से ही नहीं देखती रही अपितु प्रतिशोध रूप असह्य आर्यों को यातनायें भोगनी पड़ीं।

परमपिता परमात्मा की कृपा से देश स्वतन्त्र हुआ और एक बार पुन आर्य युवकों में देश-भक्ति का अवश्य उत्साह उमड़ पड़ा। वैदिक शिक्षा से अनुप्राणित, उन युवकों ने अनुभव किया कि राष्ट्र की विषय समस्याओं का समाधान आर्यसमाज के पास है किन्तु उनके प्रयोग की शक्ति और सामर्थ्य नहीं। इसको प्राप्त करने के निमित्त वे क्रम से उत्तरोत्तर आगे बढ़ना चाहते हैं, अनुभवों विचारशील महानुभावों के वरव हस्त की छत्रछाया में।

आज महर्षि निर्वाण विषय के अवसर पर हम साज



महान् दायित्व पूर्ण करें !



आर्यसमाज का लक्ष्य कितना महान है इस पर जितना ही अधिक विचार करें हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि महवि दयानन्द चाहते थे कि उनके अनुयायी स्वार्थ से ऊपर उठकर सदैव परार्थ में लगे रहें। सत्कार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है इस नियम ने आर्यसमाज को सार्वदेशिक और सावकालिक महत्व प्रदान कर दिया है। परन्तु उच्च लक्ष्यों और आदर्शों की पूर्तियाँ तो मानव ही करेंगे उनमें जसी समता होगी वसी ही सफलता मिलेगी। आर्यसमाज का गौरवपूर्ण ऐतिहासिक इतिहास इस बात का साक्षी है कि अल्पशक्ति में होते हुए भी हमारी लोकोपकार भावना अधिक विशाल थी और हमें सफलता भी मिली परन्तु आज हमारी शक्ति विशाल है फिर सफलता कम क्यों है इसके मूल में यही कारण है कि हमने अपने लक्ष्य को सीमित कर लिया है और सोमिन (स्यानीय, एक देशीय, एक वकीय) होने के कारण हमारी सारी शक्ति परार्थ से हटकर स्वार्थ की ओर तिमटने लगी है। आर्य समाजों, सस्थाओं के कार्यकारी झगड़ों के मूल में कोई सैद्धान्तिक मतभेद नहीं होते अपितु सकुचित दृष्टिकोण ही इसका कारण है। ऋषिनिर्वाण विवस हृदये महर्षि द्वारा सीये गये उत्तरदायित्व का स्मरण कराने आया है। यदि हम अपने लक्ष्य को सदैव ध्यान में रखें तो बहुत सी बाधाएँ स्वयं समाप्त हो जायें और दयानन्द के वीर सैनिक उत्साह के साथ कदम बढ़ाते चलें। मुझे आशा है कि निर्वाण विवसपर हम अपनी शक्तिके अपव्यय को रोक कर परोपकार के उदात्त आदर्श में सलग्न रहने का सकल्प बुरायेगे।



श्री ५० प्रेमचन्द्र शर्मा एम एल सी

—प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०

उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश

धानी से विचार करें और राष्ट्र की आन्तरिक और बाह्य शत्रुओं से रक्षा करने के निमित्त अपनी नीति निश्चित करें। यह सत्य है कि वर्तमान परिस्थितियों पर नियन्त्रण कठिनाता से प्राप्त किया जा सकेगा। पर्याप्त समय एवं सार्वजनिक सहयोग भी अपेक्षित होगा। किन्तु हम इस अटल विश्वास के साथ आगे बढ़ें -

श्रुत ते राजा वधो श्रुत वेवो बृहस्पते ।

श्रुत ते इन्द्रबाग्निश्च राष्ट्र धारयता श्रुत्व ॥

भाव [-----]

परमपिता परमात्मा हमारा मार्ग प्रशस्त करें । ●

आर्यसमाज कटरा प्रयाग का ६४वाँ वार्षिकोत्सव

कर्मलग्न धाना के सामने ता० ३ से ६ मघम्बर तक मनाया जायगा ।

विषय सन्देश सुनाने के लिये स्वामी मुनीश्वरानन्द जी श्री प्रो० रत्नसिंह जी गाजियाबाद, ५० सत्यमित्र शास्त्री जी गोरखपुर, ५० शिबकुमार शास्त्री जी हरिद्वार, डा० श्रीमती पुष्पावती देवी जी पी०एच०, डी० आदि उपदेशकों तथा अष्ट २ प्रचारकों के पधारने की आशा है ।



वेद के प्रति कर्तव्य पालन करें



महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की जो धरोहर छोपी थी उसमें सबसे अमूल्य है वेद। महर्षि ने अपने जीवन का सबसे कीमती और अधिक भाग वेद के स्वरूप उसके मानवीय उपयोग की व्याख्या करने में लगाया। यदि एक बार की यह कहा जाय कि आर्यसमाज की स्थापना श्री ऋषि ने वेदप्रचार के लिये ही की तो कोई अत्युक्ति न होगी क्योंकि यदि वेद ज्ञान का प्रचार प्रसार हो जाय तो सत्सारीपकार स्वयमेव सम्पन्न हो जायगा। इस दृष्टि से आर्यसमाज के कार्यक्रम में वेद अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। महर्षि ने वेदमाध्य और वेदानुसंधान की जो परम्परा आरम्भ की थी आज आर्यसमाज में उसके लिये उतना उत्साह नहीं जितना आरम्भ में था, आर्यसमाज का वेद प्रचार विभाग उत्सवों के माध्यम ही व्यवस्था में ही जुटा रह जाता है, आवश्यकता है अनुसंधान के कार्य को योजना बद्ध भागे बढ़ाया जाय। वेदों के सम्बन्ध में फंसी आन्तियों का नियमित उत्तर दिया जाय। आर्य विद्वानों में महर्षि और आर्यसमाज के प्रति ऐसी निष्ठा जागृत होनी चाहिये वे सब अपने अहम् और पाण्डित्य के चक्कर में न पड़कर अपनी ज्ञान-शक्तियों का आर्यसमाज के लिये समर्पण कर दें। आर्यसमाज की ओर से संगठित रूप से वेद सम्बन्धी समस्याओं पर विचार हो, सगोष्ठियां हों और अनुसंधानों की घोषणा हो, आर्यसमाज के इस प्रयत्न से वेद में पढ़ा रहने वाले अम्य वर्गों को भी बल मिलेगा।

ऋषि-निर्दिष्ट विषय हृदय से लिये प्रेरणा विद्यत है, यदि आर्यसमाज के विद्वान् और कर्णधार इस विज्ञान में सन्मिषित नीति निर्धारण कर सकें तो काम भागे बढ़ेगा। साधारण आर्यजन तो वेद प्रचार में एक सैनिक की भांति आज भी इंचि रखता है पर उपयुक्त संगठित प्रयत्न से उसे और भी बल मिलेगा, वेद के सम्बन्ध में आर्यसमाज का दायित्व पूर्ण करना आज की पीढ़ी का दायित्व है।



श्री प० चन्द्रबट जी तिवारी समा-मन्त्री

—प० चन्द्रबट तिवारी

मन्त्री आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तर प्रदेश

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ जितने पदार्थों का अर्थ स्वरूप बोध होवे वह विज्ञान और जिससे तब स्वरूप न जान पड़े, अम्य में अम्य बुद्धि होवे वह अविद्या कहंती है।

प्रचार प्रणाली में नवीनता लावें

आर्यसमाज के प्रचार कार्य को आगे बढ़ाने में योग्य उपदेशकों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और है। समय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए हमें आज इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये कि हमारी प्रचार प्रणाली कहां तक समर्थ है। प्रचार के वैज्ञानिक साधनों का हम कितना उपयोग कर पा रहे हैं। ईसाई मिशनरियों के पास जो नवीनतम साधन सामग्री होती है उसका स्वल्पांश भी हम अपने प्रचारकों को नहीं दे सकते। एक बात अवश्य है भारत की ग्राम प्रधान सत्कृति होते हुए भी आर्य समाज ग्राम प्रचार में अधिक सफल नहीं हो सका, जबकि ईसाई मिशनरी नगर सत्कृति के प्रतिनिधि होते हुए भी ग्रामों में, अरण्यों में प्रचार कर रहे हैं, इस मौलिक समस्या और मनोवृत्ति पर भी विचार किया जाना चाहिये। आर्यनेता श्री धामाप्रसाद जी उपाध्याय ने ग्रामों में प्रचार की ओर अनेक बार ध्यान आकृष्ट किया है परन्तु अभी तक हम ग्रामीर मनोवृत्ति नहीं छोड़ सके हैं। हमें ऐसे प्रचारक तैयार करने का यत्न करना चाहिये जो ग्राम-जीवन में अपने को समाविष्ट कर सकें। इसी प्रकार प्रचार साहित्य की कमी का प्रश्न भी गम्भीर है। हमारा उपलब्ध साहित्य काफी पुराना है और सामाजिक समस्याओं का समाधान नवीन रूप से प्रस्तुत नहीं कर पाता। इसके लिये भी हमारे विद्वानों को प्रयत्न करना होगा। ऋषि विचार-विद्यत के अवसर पर हमे अपनी प्रचार प्रणाली का सिंहावलोकन अवश्य करना चाहिये और शीघ्र ही नवीन रूप के साथ कार्यक्षेत्र में कदम रखना चाहिये। प्रभु हमें अवश्य सफलता प्रदान करेंगे।



श्री हरप्रसाद जी आर्य



—हरप्रसाद आर्य

उपगमनी, आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर-प्रदेश

ऋषि वचनामृत

★ यह आर्यावर्त देश ऐसा है जिसके सर्वत्र मूर्खों में कोई देश नहीं है, इन लिये इस मूर्ख का नाम स्वर्ण-मूर्ख है क्योंकि यही स्वर्णविद्वानों को उत्पन्न करती है। आर्यावर्त देश ही सच्चा पार-समणि है जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही स्वर्ण धर्षित् बनाद्व हो जाते हैं।

★ जब बुद्ध मनुष्यक पाँच शान्तिप्रिय जीव के साथ रहती हैं और बुद्धि का निरन्धय स्थिर होता है उसको परम-पति अर्थात् मोक्ष कहते हैं।

★ जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढ़ता रहता है और और जब दुष्टाचारी होते हैं, तब नष्ट-अष्ट हो जाता है।



वेद प्रचार का स्थायी साधन—प्रेस

★ ● ★

प्रचार के दो सर्वमान्य साधन हैं— (१) मख तथा (२) प्रेस। एक का प्रभाव दीर्घकालिक और स्थायी है, दूसरे का अल्पकालिक और अस्थायी। पुस्तकों के पाठक वेदकाल की परिधि का अतिक्रमण कर सार्ववैश्विक और सार्वकालिक होते हैं किन्तु मख के अल्पवैश्वीय तथा अल्पकालिक। पुस्तकों के द्वारा ही प्राचीन अष्टात्म-ज्ञान, वेदों से महर्षि ब्यासमन्त्र पर्यन्त, एव लौकिक ज्ञान विज्ञान का सम्पादन हम लोग प्राप्त कर पाते हैं।

यह प्राधुनिक छपाई तथा प्रेस का ही बमस्कार है कि सत्सार के बड़े बड़े पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा समाचार पत्रों द्वारा सत्सार की कोटि कोटि जनता प्रबुद्ध रहती है। प्रेस के द्वारा ही आज आर्यजन इस युग की महानतम विभूति महर्षि ब्यासमन्त्र को श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं।

प्रेस वह बीज है जो अपनी अज्ञय ज्योति विकीर्ण करता रहता है, मूले-मटके के पथिकों को मार्ग दर्शन कराता रहता है। अतः हमारा यह पावन कर्तव्य ही जाता है कि उस ज्योति-स्तम्भ की सुरक्षा एव उसका सम्बर्धन करें।

यूरोप आदि उन्नत देशों के सशम प्रेसों की तो कथा ही क्या कहानी है जिनके द्वारा मानव समाज ज्ञान-विज्ञान से परिपूरित है। अपने देश में ही श्रद्धालु जनता के कीर्ति स्तम्भ 'गीता प्रेस' पर ही वृष्टिपात कीजिये। उसका धार्मिक-साहित्य प्रकाशन और वितरण क्या व्यावसायिक है? क्या उसकी मशीनें किसी व्यावसायिक संस्थान की देन हैं? नहीं, वह है श्रद्धालु जनता की कर्तव्यनिष्ठा की देन, जो धर्म प्रचार के महत्त्व को जानती है और जो बाजार में चाहे जितनी सोबेबाजी करे धार्मिक क्षेत्र में लेन-देन नहीं जानती, केवल दान ही जानती है जो 'धर्म' का एक अंग है—देवपूजा, सगतिकरण और दान।

आर्य जनता से यह आशा है कि वह अपने प्रेस-संस्थानों को दान से सम्पन्न कर उन्हे वैदिक-साहित्य के प्रकाशन का अशुभ साधन बनायेगी। स्व० प० मगवानबीन जी ने अपने सात्त्विक दान से प्रेस की आधारशिला रखी थी, जिसके परिणाम स्वरूप आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर-प्रदेश का मगवानबीन आर्य मास्कर प्रेस स्थापित हो सका, जहाँ से आर्य जगत् का लोकप्रिय पत्र 'आर्यमित्र' प्रकाशित होता है किन्तु जो चनामाव के कारण आधुनिकता की दौड़ में पिछड़ रहा है।

सुखर, सबल प्रेस ही महर्षि के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी, जो सत्सार को वैदिक-साहित्य बिना मुख्य वितरण कर ईसाइयों तथा कम्युनिस्टों के सार्वभौम प्रचार का प्रत्युत्तर देकर वैदिक धर्म की पताका फहरा सके।



श्री निर्मलचन्द्र राठी, उपमन्त्री समा

निर्मलचन्द्र राठी

उपमन्त्री आ० प्र० समा उत्तर-प्रदेश तथा व्यवस्थापक आर्य मास्कर प्रेस

छोटा परिवार—सुख का साधन

बड़े परिवार के पालन में बड़ी कठिनाइयां सामने आती हैं
चिन्ताएं बढ़ती हैं और बुढ़ापे तक चैन नहीं मिलता

★

सुख शान्ति पूर्ण भविष्य के लिए
संतति निरोध का प्रयत्न कीजिए

★

नसबंदी आपरेशन इसका सबसे कारगर उपाय है

निकटम परिवार नियोजन केन्द्र से परामर्श

करके

उपलब्ध सुविधाओं से लाभ उठाइए

विज्ञापन सं० ५-सूचना निदेशालय, उत्तर-प्रदेश द्वारा प्रसारित



दीपावलि का सफल पर्व हो !



(रच०—श्री 'कुमुदाकर' सा० रत्न, आर्यनगर फीरोजाबाद)

हे आर्य !

आर्य सस्कृति के प्रिय पोषक !
 कविवाद के द्रुततम शोषक !
 स्वर्ग नरक की, धर्म-कर्म की—
 पाप पुण्य की, अंध-नीच की—
 सगुण और निर्गुण आत्मा की—
 परिभाषा करने वाले—हे वेद-शास्त्र भीमांसक आर्य ! !
 तुमने ठेका नहीं लिया था ?
 —'सकल विश्व को आर्य करेंगे ।
 जीवन पथ - निर्माण करेंगे ।
 कदाचार के केन्द्र ध्वस्त कर,
 सवाचार का सेतु पार कर—
 प्रबल प्रपञ्चों के पावप को—
 हृम समूल उन्मूलन करके—
 'समसो मा'—के पुण्य पाठ से
 'उद्योतिर्मय'—जन लोक करेंगे
 छल-प्रपञ्च पाषण्ड लखड कर—
 नैतिकता के नीड़ सुज्वल कर—
 मानवता - बन्धुत्व धोष से—
 बन्धु बानधों की बुनियां को—
 कम्पित कर मय-भीत करेंगे ।
 हृम असत्य से वञ्चित करके,
 सवा सत्य का सिन्धु तरंगे ।
 क्या ये सब कुछ पूर्ण हुआ है ?
 क्या ये प्रश्न या नहीं तुम्हारा ? —
 —'दयानन्द ऋषि के हृम सच्चे—
 सेवक बनकर वेद-धर्म की ध्वजा उठाये—
 मूलक को ही स्वर्ग बनाकर—मानव को ही मुक्त करेंगे ।
 अरे, बुनों के द्वार खोलकर देखो तो अलबेले आर्य ?
 बानी में कुछ और तुम्हारी करनी में कुछ और दीक्षता ।
 अभिनय करना श्रुव जानते ।

मर्चों पर खड़कर—बालों की झाल
 खींचना खूब जानते ।—
 'कृष्णन्तो' का स्वप्न चूर है ।
 धम्म द्वेष के दीपक जलते ।
 दल दल के दलदल में बलते ।
 जातिवाद का उबार आ गया
 जडता से अनिसार हो गया ।
 अबल 'मातृ-माया' का अबल—
 छिन्न-मिन्न करने को आतुर ।
 'परकीया' से ध्वार हो गया ।
 जीवित है 'मस्तिष्क वासता, ?
 क्या स्वराज्य का सार यही है ?
 आध्यात्मिक-अभ्युदय मार्ग के—
 मौलिकवाद-भ्रूण के पीछे क्यों मध-मत्त डोबते फिरते ?
 'अन्नम् ब्रह्म' उपनिषद् कहती—
 'अन्न पूर्णा' के मन्दिर पर कङ्कालों की मीड लखी है ।
 भ्रष्टाचार भेड़िये भूखे मुंह को फाड़े यहाँ लखे हैं ।
 पेट पीठ में मिला विकल हो—
 एक-एक बाने की तरसा, आर्यों ! पावन देश तुम्हारा ?
 ओ 'गुरुता' का ढोल पीटता—
 बही 'बूखरों' के सम्मुख ही—
 दैव्य दोनता बिला-बिला कर
 'सोने की बिड़िया' को लज्जित इधर कर रहा वेद तुम्हारा ।
 महिषासुर मोंहिगाई का उन्मत्त पवन सा झूम झूम कर—
 दाडूँल-साहस के नख रव तोड आज हुकार मर रहा ।
 पब प्रभुता के मद में डूबे तुम दीपावलि जला रहे हो ।
 नहीं-नहीं तुम दयानन्द के उज्ज्वल यश को—
 स्नेह-वर्तिका हीन बलि में फूँक रहे हो ।
 'उत्तिष्ठत'—का पाठ पुन तुम एक बार ऐसा तुम्हाराओ ।
 जन जीवन का दीप जले—
 तब दीपावलि का सफल पर्व हो ।
 सभी आर्यों तुम्हें सर्व हो !



आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य का सूत्रधार दयानंद

[ले०—पी ए० सिक्खवालु जी मुख्य उपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश]

वैदिक आर्यों के अनुकूल द्वीपद्वीपान्तर-पर्यन्त व्यापी अनेक श्रेष्ठ मानवों द्वारा सञ्चालित बहुपाय्य शासन का



लेखक

नग्न ही आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य है। सत्तार में जब से भी शासन व्यवस्था स्थापित हुई विरह की महती आय जाती है तब ही से अपने व्यापक साम्राज्य की नींव डाली और युगयुगान्तर पर्यन्त इस साम्राज्य का संचालन किया।

भारतवर्ष षष्ठा से इस आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य का केन्द्र रहा है। महाभारत एव मंत्रेश्वरपनिषद् के कथनानुसार इस भारत देश में मनु (वेदस्वत), पुष्य, इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष, माण्डवता, नहुष अश्वपति, शशबिन्दु हरिदक्षत्र, भरत (बोधधन्त), रघु, दिलीप, राम आदि अनेक चक्रवर्ती सम्राट् हुए हैं जिन्होंने ससागरान्त भूमि पर शासन किया है।

आचार्य दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में स्पष्ट लिखा है कि—“स्वायम्भव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा।” स्वामी दयानन्द एकतन्त्रवाद के घोर विरोधी थे। सत्यार्थ प्रकाश

के षष्ठम समुल्लास में उन्होंने लिखा है कि—“एक (व्यक्ति) को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये। यदि ऐसा किया गया तो वह अकेला राजा स्वाधीन व उन्नत होकर प्रजा का नाशक होता है।” स्वामी दयानन्द तो निबिबाद “व्यचित्ते बहुपाय्ये यते महि स्वराज्ये” अर्थात् व्यापक अनेकों द्वारा सुरक्षित स्वराज्य की स्थापना के समर्थक थे।

सत्यार्थ प्रकाश के ११ समुल्लासों में एक स्वान पर आचार्य ने लिखा है कि—“जब रघुवर्ण राजा थे तब रावण भी यहाँ के आधीन था।” इसका तात्पर्य यह है कि रावण जिसकी राजधानी लका थी, जो आज दिन सागर में डूबी हुई है और रावण के आधीन आस्ट्रेलिया आदि के राज्य भी बतलाये जाते हैं, वह भी भारत के आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य के आधीन था। राम के काल में लका के राजा रावण ने एक बार सर उठाया और भारतवर्ष के दक्षिण भू-भाग पर अपना आतक जमाना चाहा तब राम ने उसका निराकरण किया और अन्धायी अत्याचारी रावण का विध्वंस कर लका के राज्य उसके भाई विभीषण को सौंप दिया।

चक्रवर्ती सम्राट् का यह प्रमुख कर्तव्य होता था कि यदि कोई माण्डलीक राजा अग्याय अत्याचार करने पर उत्तर आये और प्रजा को सताने लगे अपना अन्य किसी माण्डलीक राजा से युद्ध करने लगे तो वह बीच में पड़कर युद्ध शान्त कराने और अग्यायो राजा को पबन्धुत कर योग्यतम व्यक्ति को वहाँ का राजा बनना देवे।

महर्षि दयानन्द को यह आन्तरिक अर्मिलाया थी कि श्रुतियों की पवित्र भूमि भारत शीघ्र स्वतन्त्र हो और विदेशियों के चंगुल से इसकी पूर्ण मुक्ति हो और यह अपनी प्राचीन सस्कृति के अनुसार पुन एक महान् शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में विकसित हो। आर्याभिविनय के प्रथम प्रकाश में मन्त्र ४३ की व्याख्या करते हुए श्रुति ने लिखा है कि—“अस्मभ्यं बरिव सुग कृषि” अर्थात् हमारे लिए चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य बन को सुख से प्राप्त कराओ।”

इसी प्रकार मन्त्र ४५ की व्याख्या करते हुए श्रुति के



लिखा है—“ए वर मयबन्धु आपकी न्याययुक्त नीतियों में प्रवृत्त होकर [हम] धीरे के चक्रवर्ती राज्य को आपके अनुग्रह से प्राप्त हो।”

आर्याभिविनय द्वितीय प्रकाश में “द्वे विन्वस्व ऊर्जे विन्वस्व, ब्रह्मणे विन्वस्व क्षत्राय विन्वस्व” आदि मन्त्र की व्याख्या करते हुए ऋषिबर ने लिखा है कि—“हे मराजाधिराज परब्रह्मन् ! (अत्राय) चक्रवर्ती राज्य के लिए शौर्य, वैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलाधि उत्तम गुणयुक्त अपनी हृष्या से हम लोगों को करो। अथ देशवासी राजा हमारे देश में कमी न हो तथा हम लोग पराधीन कमी न हों।”

आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना के निमित्त आर्य ज्ञाति में जिन ६ गुणों की विशेष आवश्यकता है और जिन गुणों के कारण उसका चक्रवर्ती साम्राज्य युग युगान्तर पर्यन्त विदग्ध में तथा है उनका निबर्तन भी यहा उपर्युक्त मन्त्र की व्याख्या में स्पष्टरूपेण किया गया है।

विदेशी साम्राज्य को भारत से उखाड़ फेंकने की प्रबल आकांक्षा भी यहा ऋषि ने व्यक्त की है। आर्याभिविनय प्रथम प्रकाश मन्त्र ४५ में “तेजस्विनाधीतमस्तु” की व्याख्या करते हुए ऋषिबर ने लिखा है—“अयोध्य प्रीति से परमवीर्य पराक्रम से निष्कटक चक्रवर्ती राज्य मोगे।” द्वितीय प्रकाश मन्त्र १ की व्याख्या करते हुए लिखा है कि—“हे महाराजाधिराज ! जैसा सत्य न्याययुक्त अखण्डित आपका राज्य है वैसा न्याय राज्य हम लोगों को भी आप की ओर से स्थिर हो।” महान् क्रान्तदर्शी आचार्य दयानन्द ने यहा स्पष्ट शब्दों में आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य के मुख्य आधार तलवार और आग की परिभाषा में अणुबम आदि को नहीं माना अपितु सत्य और न्याय (Truth & justice) साम्राज्य के सदा से दो मौलिक स्तम्भ सत्य और न्याय ही रहे हैं। इन्हीं दो तत्वों के विशेष बल पर आर्यों ने लाखों वर्षों पर्यन्त चक्रवर्ती साम्राज्य का सञ्चालन किया है।

मल्बार (अफ्रीका) एष मय (अमेरिका) में हुए सत्ताद्वन्द्व (बौध्यन्त) के ऐंग्र महासिंघों में लगभग १२५ राज्यों के प्रतिनिधियों ने निज राष्ट्रद्वयों के साथ उपस्थित होकर उपर्युक्त दो विशेष गुणों के कारण ही आर्य चक्रवर्ती सत्ताद्वन्द्व के प्रति अपनी मान्यतायें व्यक्त की हैं।

ईसामसीह ने जिस Kingdom of Heaven अर्थात् स्वर्ग के राज्य की चर्चा बाइबिल में की है ऋषिबर ने उसी ईश्वरीय गुणयुक्त साम्राज्य की स्थापना की ओर विदग्ध का ध्यान प्राकटित किया है। जब तक विश्व की राजनीति में यह दो महान् ईश्वरीय गुणों को पूरा पूरा स्थान न मिलेगा तक विश्व में स्थायी शान्ति स्थापित हो नहीं सकती। मय, आशकाओ का भूत राजनैतिक मस्तिष्कों को कमी सत्य और न्याय का पुञ्जारी नहीं बनने देने वाला है। सवार के १०० से अधिक छोटे बड़े राष्ट्रों एष राज्यों से मिलकर समुक्त राष्ट्र सच की स्थापना हुई है और सह अस्तित्व के सिद्धान्त पर वह सच विश्व में शान्ति स्थापना में निरन्तर प्रयत्नशील रहता है किन्तु उसका तेजस्वी होना नितागत आश्चर्य है। शक्तिशुन्य समुक्तारष्ट्र मय अन्यायी अत्याचारी आततायी शासकों का बधन नहीं कर सकता केवल अनुरोध करने से कोई मानने वाला नहीं। जिस समय तक ससार के उच्च शक्तिशाली राष्ट्र सत्य एव न्याय को अपने प्रमुख सम्बल न बनायेंगे ससार में शान्ति की चर्चा केवल चर्चा मात्र रहेगी।

महाविद्वान्द ने ऋषिबिदि भाष्य भूमिका के पृष्ठ २६६ पर लिखा है कि “वेदावि शास्त्रों की नीति से आर्यों ने भूलो से करोड़ों नव राज्य किया।” वेदावि शास्त्रों की नीति सत्य व न्याय आदि पर आधारित है जिसका ऊपर वर्णन किया जा चुका है।

आर्य साम्राज्यवाद में प्रजा-शोषण के लिये भूलकर भी स्थान न था। जनता की सबसे निम्न एव उपेक्षित इकाई के उत्थान तक में सदा प्रयत्नशील रहना आर्य राजा का धर्म बतलाया गया है। ‘वरिद्रा-मर कौतेय’ आदि घोषों में वरिद्रों का मरण-पोषण करना परम कर्तव्य ठहराया गया है।

आर्य राजा की जय वरिद्रों के पालन-पोषण एष उनके हृदयों के जीत लेने में ही मानी जाती रही है।

वैदिक राज्य का आदर्श तो सदा यह ही रहा है कि—सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया

सर्वे मद्राणि पश्यन्तु मा करिषद्दुःखमागमवत् ॥

वैदिक राज्य में किसी का शोषण नहीं, किसी का पीडन नहीं, किसी के साथ अन्याय नहीं और किसी का वृथा पक्षपात नहीं गुण और त्याग की ही पूजा सदा आर्य राज्य में रहेगी है।



वधानम् की पुष्प स्मृति में,
अद्वा पुष्प चढ़ाने आया हूँ।
जहाँ अनगिनत जीवन पुष्प चढ़े,
निज पुष्प चढ़ाने आया हूँ ॥

उमड़ रहा है खोल हृदय में,
मैं उसे ब्रह्माने आया हूँ।
बज रही तरंगें मन मे जी,
मैं उन्हें सुनाने आया हूँ ॥

तू महान् था हे श्रविवर,
तू ने सत्सार भुकाया था।
पाखण्डों को क्षणित करके,
सत्यमार्ग बसाया था।
मोडी थी युग की धारा,
भक्ति का बिगुल बजाया था।
निराकार ब्रह्म की उपासना,
सन्ध्या का योग सिखाया था।

सब वेद पढ़ें और वेद सुनें,
ईश्वर का ज्ञान बताया था।
हो आर्यकरण इस धरती का,
यह दिव्यनाद गुजाया था।
हो नाश अविद्या के तम का,
ज्योति का पाठ पढ़ाया था।
हैं दूर विषमताएँ सारी,
सब को ही गले लगाया था।

तू शानी था, तू ध्यानी था,
तू धर्मयुद्ध सेनानी था,
तू था तपस्वी सूरज सम,
ज्योति का तू अभिबानी था।
ब्रह्मधर्मयुक्त तेजस्वी था,
फिर भी नहीं अभिमानी था।
कृष्णा का गहरा सागर था,
बया धर्म का दानी था।
पतितों को बनाया पावन था,
विनम्रता मे लासानी था।

कितना भी कर पुण्यगान श्रुति,
फिर भी अधरा होगा वह।
कितनी भी चढ़ाऊँ अद्वांजलियाँ,
तुप्त न होगी अन्तर की तह।

श्रद्धांजलि

वृत्ति तो होगी तब ही,
जब कर्मों में लाऊँ शिक्षा।
विषयान तजू बुझकों का,
सत्कर्मों से पाऊँ रक्षा।

अद्वांजलि तो बी अद्वांनम् मे,
जितने मोली खाईं थी।
अद्वांजलि तो बी हसराम मे,
हस कर ब्यथा मिटाईं थी।
अद्वांजलि बी लेखराम मे,
जब छुरा पीठ में धाया था।
अद्वांजलि बी सुमेरसिंह मे,
हित्थी को शीश चढ़ाया था।

अद्वांजलियाँ बी उन बीरों ने,
हैबराबाद मे जो अहीब हुये।
जो छोड़ घर-बार सग्यासी बने,
बिल में दुनियाँ का बर्ब लिये।
ले 'ओम्' पताका को कर में,
वेदों के गान गुंजाने को।
मधुमय वर्षा अमृत की कर,
घरती को स्वर्ग बनाने को।

हम करें आत्म निरोक्षण आज,
वेदों अन्तर में झाँक बरा।
वे यद्भ्रष्टु कहीं छिपे बंटे,
जो करते हमारा अहित सदा।
हम करें प्राप्त प्रभु-शक्ति,
हम इनको मार भगायें अब।
हम दूर करें विषमताओं को,
समताओं को गले लगायें अब।

उस महान् श्रुति के प्रति,
यही अद्वांजलि सत्कधी है।
इसमें ही है सब मर्म सरा,
इसमें ही अपनी उन्नति है।

होगा इस से ही पुन
बंधिक धर्म का सूर्य उदय।
गुंजेंगे वेद श्रुचायें अब,
होंगे दूर तभी सशय।

बह शक्ति वो हे वयानिधे !

मैं जीवन-व्रत निभा खाऊँ।

ओ धरण बड़ रहे हूँ आगे,

मैं उन्हें सक्य तक पहुँचा पाऊँ।

—बि क्रमावित्य 'बसन्त'





संयम साधन में प्राणायाम का स्थान

(ले०—श्री आचार्य मन्मथेव श्री अक्षरे)

महर्षि इयानन्द ने अपने ग्रन्थों में प्राणायाम पर बहुत बल दिया है। वे यह भली प्रकार जानते थे कि प्राणायाम मनुष्य के सबही तथा सबारो बनाने का एक मुख्य तथा आवश्यक अंग है। वे यह भी जानते थे कि जीवन में संयम का अपना एक प्रमुख स्थान है। वास्तव में मानव जीवन की महान् देवी शक्तियों का विकास होता ही संयम द्वारा है। संयम वह साधन है जो मानव जीवन को पवित्र तथा निमल बनाकर उसे निश्चर देता है, चमका देता है तथा उसे अपने वास्तविक लक्ष्य तक पहुँचा देता है। संयमी मनुष्य का जीवन एक आदर्श जीवन है। उसके जीवन में न बिलासिता है, न हासता और न उच्छ्वलता, सरलता, साधवी तथा सौम्यता ही उसके जीवन का एक मात्र सुन्दर लक्ष्य है।

अपनी इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि को अनिष्ट मार्ग से हटाकर उन्हें अभीष्ट मार्ग पर चलाना ही संयम है। जहाँ नियन्त्रित मन तथा इन्द्रियाँ मनुष्य को अपने अभीष्ट मार्ग पर चला कर उसके जीवन को सुखमय बना देती हैं, वहाँ अनियन्त्रित मन तथा इन्द्रियाँ मनुष्य को दुःख और अशांति के गहरे गर्त में गिराने का कारण बनती हैं। इसलिये सुखमय जीवन के अमिलाषी के लिए तथा मानव जीवन के महान् लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए संयम साधना परम आवश्यक है। संक्षेपतः जहाँ संयम साधना से मानव के मानस अन्दर में सुख और शान्ति का सुजन होता है, वहाँ असंयम द्वारा मानव जीवन दुःख और अशांति का भागी बनता है।

यूँ तो संयम साधन के सन्ततनों ने अपनी-अपनी स्रष्ट के अनुसार संकड़ों साधन दशयि हैं। जप, तप, व्रत, उपवास, प्रभू-नमन, ये सब संयम साधन के सुन्दर उपाय हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त—

‘प्राणायाम’

भी संयम प्राप्ति का एक परमोत्कृष्ट साधन है।

प्राणायाम के द्वारा मनुष्य अपनी इन्द्रियों तथा मन पर सरलता से काबू पा लेता है। प्राणायाम के अभ्यासी को



लेखक

संयम साधना के लिए अग्र्य कठोर साधनों के सहारा लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती। प्राण और मन का परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। जहाँ प्राणों की अस्थिरता और चञ्चलता से मन भी अस्थिर और चञ्चल बन जाता है, वहाँ प्राणों की स्थिरता से मन भी चञ्चलता रहित और स्थिर हो जाता है। प्राणों की चञ्चलता मन की चञ्चलता का तथा प्राणों की स्थिरता मन की स्थिरता का मुख्य कारण है, इसीलिये योग ग्रन्थों में कहा गया है—

चलो बाते चल चित्तं, निरचले निरचलो भवेत् ।

अतः जो सञ्जन चित्त की चञ्चलता को दूर कर उसे स्थिर और एकाग्र बनाना चाहते हैं, उन्हें अपने प्राणों के स्थिर करने का अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। जब जगत् में मन के दूसरे नम्बर पर प्राण ही एक ऐसी महान् शक्ति है, जो कि जहाँ वह अत्यन्त बलवती है, वहाँ अत्यन्त वेगवती भी है, अतः ऐसे बलवान् तथा वेगवान् प्राणों को अभावगत सरलता से अपने बलवर्ती बना केवा अति कठिन



है। उनके बश में करने का एक मात्र उपाय है। 'प्राणायाम' के द्वारा प्राण सहज में ही बश में हो जाते हैं और प्राणों के बश में होते ही मन भी सरलता से साधक के बश में हो जाता है। योग धर्मों में प्राण और मन को बूध मिले जल की उपमा दी है (दुग्धाम्बुवत् सम्मिलितौ तौ मुख्य क्रियौ मानस मावतौ)। अतः जैसे बूध विभित जल की गति को बश में कर लेने से बूध की गति स्वतः ही बशवती हो जाती है, उसी प्रकार प्राणों की गति बश में होने पर मन की गति भी स्वयमेव बश में हो जाती है और मन के बश में होते ही जहाँ साधक को समय साधन में सफलता मिलती है, वहाँ उसकी मानसिक शक्तियों का विकास भी सरलता से होने लगता है तथा इन्द्रियों के मल और बोध भी दूर हो कर वे शुद्ध तथा सत्पय-गमिनी बन जाती हैं। इस विषय में महर्षि दयानन्द ने अपने सत्यायं प्रकाश ग्रन्थ में मनु का एक प्रसिद्ध श्लोक दिया है जो कि निम्न प्रकार है—

बह्मन्नेष्माममानाना धातूनां हि यथा मला ।

सयेन्द्रियाणा बह्मन्ते बोधा. प्राणस्य निग्रहात् ॥

अर्थात् जिस प्रकार स्वर्ण आवि बस्तुएँ अग्नि में तपाने से उनके मल नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार प्राणायाम के द्वारा प्राणों को बश में करने से इन्द्रियों के बोध भी नष्ट हो जाते हैं। 'प्राणायाम' ही वह पंचाग्नि है जो साधक के प्राण, अपान प्रादि पाचो प्रसुप्त प्राणो को जागृत कर उन्हें तेजस्वी तथा निमल बना देती है। यही सच्ची—

पञ्चाग्नि-पूजा

है। श्वेत है कि आजकल के साधुओं ने इस परम हितकारिणी पंचाग्नि-पूजा का परित्याग कर अपने चारों ओर पाच प्रकार की अग्नियों को जलाकर उनके द्वारा इस पवित्र तथा अनमोल मानव देह को तपाना तथा उसे निरर्थक क्लेश पहुँचाना ही पञ्चाग्नि-पूजा समझ लिया है। अतः मानसिक तथा इन्द्रियजन्य बोधों को दूर कर सयमी जीवन जिताने के अग्निवाची को प्राणायाम का अभ्यास नित्यप्रति नियमपूर्वक अवश्य करना चाहिये।

मेरे विचार में प्राणायाम को यदि अमृत का कलश कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। अनुमयी योगियों का कहना है, कि हमारे ब्रह्मरंध्र से सदा अमृत का सरना

बहता रहता है, उस अमृत का रसास्वादन भी प्राणायाम तथा ध्यान, धारणा का अभ्यासी ही कर सकता है। जिस अमृतस का आस्वादन कर साधक के सामने अथ्य इन्द्रियों के रस कीले पद जाते हैं। परन्तु प्राणायाम इस अमृत का रसास्वादन तभी करता है, तथा अमृततुल्य लाभ भी तभी पहुँचाता है, जबकि प्राणायाम के नियमों का पूर्णतया पालन करते हुए, तथा उसे किसी योग्य अनुमयी से विचिबत्त सीखकर उसे पूर्ण श्रद्धा, आस्था तथा कुछ समय तक लगातार धैर्यपूर्वक किया जाए। यदि हम प्राणायाम के नियमों की अवहेलना करते हैं, तथा उसे विधिपूर्वक नहीं करते तो यह अमृततुल्य प्राणायाम भी कभी-कभी हमारे लिए हानिप्रद बन जाता है। नीचे हम प्राणायाम के अभ्यासों के लिए कुछ आवश्यक नियम दे रहे हैं। प्रिय पाठक यदि इन नियमों का पालन करते हुए प्राणायाम का अभ्यास करेंगे, तो उन्हें प्राणायाम से अवश्य लाभ होगा। उनके मन तथा इन्द्रियों के बोध और चञ्चलता दूर होकर, वे अपने जीवन को पूर्ण सयमी तथा सुखमय बना सकेंगे।

“प्राणायाम के अभ्यासियों के लिये आवश्यक नियम”

१—किसी भी प्रकार के प्राणायाम करने से पूर्व एक-बार अन्धर से श्वास को नासिका द्वारा मूलपूर्वक बाहर निकाल देना चाहिये, और फिर यथाविधि पूरक आदि प्राणायाम का प्रारम्भ करना चाहिये।

२—प्राणायाम के तीन अंग हैं। पूरक—अर्थात् प्राणों को नासिका द्वारा बाहर से अन्धर भरना। कुम्भक—अर्थात् उस अन्धर भरे श्वास को यथाशक्ति अन्धर ही रोक लेना। रेचक—अर्थात् उन रोकें हुए प्राणों को शन-शन लम्बा करके बाहर निकाल देना। प्राणायाम के उपर्युक्त तीनों अंगों को करते समय क्रमसः तीन बन्ध करने चाहिये। पूरक करते समय “पूरकबन्ध” अर्थात् पुत्रा और मुलेन्द्रिय का ऊपर आकर्षण करना। कुम्भक करते समय “जालन्धर बन्ध” अर्थात् सिर को थोड़ा मुकाकर थोड़ी को कण्ठकूप में आकर लना देना। रेचक करते समय “उड्घान बन्ध” अर्थात् पेट को यथाशक्ति अन्धर ले जाना। इससे प्राणायाम के तीनों अंग सरलतापूर्वक हो जाते हैं।



३—पूरक करते समय छाती को मली प्रकार से फुलाना चाहिये, जिससे फेफड़ों के सभी हिस्से प्राणो से मली प्रकार भर जाए।

४—श्वास शनै-शनै और लम्बा करके अन्दर लेना चाहिये, और लम्बा ही करके बाहर निकालना चाहिये।

५—प्राणायाम करते समय 'शीतली' आदि कुछ विशेष प्राणायामों को छोड़कर श्वास नासिका से ही लेना चाहिये। मुँह हमेशा बन्द रखना चाहिये।

६—प्राणायाम व्यायाम आदि चारीरिक परिश्रम करने के पश्चात् इस पद्मह्र मिनट विश्राम लेकर करना चाहिये।

७—प्राणायाम खुली तथा स्वच्छ हवा में करना चाहिये। किन्तु जिस ओर से वायु के ओर के झोंके आ रहे हों, उस ओर मुख करके प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

८—प्राणायाम के अग्यासी को घृत, दुग्ध आदि स्निग्ध पदार्थों तथा फलो और हरी सब्जियों का यथाशक्ति अवश्य सेवन करना चाहिये।

९—प्राणायाम करते समय जितना पेट हल्वे और आतें मल से रहित होगी, उतना ही प्राणायाम ने मे सुगमता तथा अधिक लाभ की प्राप्ति होगी।

को इस बात का पूरा प्रयत्न करना चाहिये कि पेट सदा हलका और आतें मल से रहित रहें।

१०—प्राणायाम के अग्यासी का आहार सात्विक, पोष्टिक तथा सुपच होना चाहिये।

११—यदि प्राणायाम करने वाले सज्जन प्रातःकाल योग की जलनेती तथा बस्त्रनेती, या इन दोनों में से कोई एक कर लिया करे तो बहुत अच्छा है। इन दोनों योगिक क्रियाओं के करने से जहाँ जुकाम, छिरबर्ब तथा नेत्र सम्बन्धी रोगों की निवृत्ति होती है। वहाँ नासिका के छिद्र स्वच्छ तथा मलरहित होने से प्राणायाम करने में बहुत सुगमता पड़ती है। पाठक उपर्युक्त दोनों क्रियाओं के करने की सवित्र तथा सरल विधि मेरी पुस्तक "योग और स्वास्थ्य" अथवा "प्राणायाम" में देख सकते हैं।

१२—प्राणायाम के अग्यासी को बह्मर्ष्य पालन अर्थात् वीर्यरक्षा पर पूरा ध्यान देना चाहिये।

१३—प्राणायाम न तो भोजन के पश्चात् और न भूख व्याप्त की अवस्था में करना चाहिये।

१४—यदि शरीर में किसी प्रकार का कष्ट हो, या शरीर बहुत थका हुआ हो अथवा कोष, शोथ, विस्तार आदि की अवस्था हो तो प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

१५—प्राणायाम के अग्यासी को सदा नासिका से ही श्वास लेने की आदत डालनी चाहिये, मुख से कदापि नहीं।

१६—ज्वर आदि की अवस्था में प्राणायाम नहीं करना चाहिये।

१७—प्राणायाम से शीघ्र लाभ उठाने के लिए तथा शरीर को सदा स्वस्थ और नीरोग बनाए रखने के लिए प्राणायाम के साथ साथ योग के शीर्षासन, सर्वाङ्गसन आदि आसनों का प्रयत्न भी अवश्य करना चाहिये।

भाशा है समय तथा सदाचार के अमिलाधी सज्जन प्राणायाम का अग्यास करते समय उपर्युक्त नियमों का अवश्य ध्यान रखेंगे। केवल ध्यान ही नहीं प्रत्युत इनका तत्परता से पालन करेंगे। यदि प्रिय पाठकों ने उपर्युक्त नियमों का पालन करते हुए प्राणायाम का अनुष्ठान किया तो जहा वे पूर्ण समयों तथा सदाचारी बनें, वहा अपने शरीर को भी सदा स्वस्थ, बलवान् तथा नीरोग रख सकेंगे।



पवों तथा त्योहारों पर—
कभी-कभी खाद्यानों की

बरबादी हो जाती है।

आपके तथा देश के लिये

अन्न का एक-एक बाना कीमती है।

त्योहारों को मादगी से
मनाइये।

घन और खाद्यान्नों की बरबादी

रोकना आज आपका

पहला कर्तव्य है।

सूचना निदेशालय, उत्तरप्रदेश द्वारा प्रसारित



'अनार्य जुष्टम्, अस्वर्ग्यम्, अकीर्तिकरम्'



[विद्यानास्कर श्री १० सच्चिदानन्द जी शास्त्री एम० ए०, महोपदेवक]



श्री सच्चिदानन्द जी शास्त्री

भगवान् कृष्ण ने मैदान से भागते हुए अर्जुन को इन उपर्युक्त-महत्वपूर्ण शब्दों से कैसा उपालम्भ दिया है। ऐ ऋषि भक्त आर्यो! आप में निष्क्रियता व चेतना-शून्यता कहाँ से आ गई है। आप प्रति वर्ष अपने अतीत को स्मरण कर, अपनी दुर्बलताओं को दूर करने की शपथ लिया करते हो। अन्धकार से प्रकाश की ओर अज्ञान से ज्ञान की ओर चलने की प्रेरणा सदा से अपने महा-पुरुषों से पाते रहते हो। यदि आप में हीन भावनाओं का समावेश हुआ, तो अब तुम्हें कौन बार-बार जगाने आयेगा। आज आपके जागते रहने पर भी परिन्दे पर भारते घूमते हैं।

घर्म भूष्ट हो रहा है, माताओं-बहनों की आये दिन बेइज्जती देखने-सुनने को मिलती है। अनाथों विधवाओं की आज भी दयनीय दशा का चित्र आँसों के समक्ष दृष्टिगम्य होता रहता है। गौमाता का सूर्य की किरण फूटते ही कर्ण फ्रन्दन कानों को विद्वल किये रहता है। संस्कृत ज्ञानमयी मा का आज भी अपमान हो रहा है इसे कौन सुनेगा, सिवाय ऋषि के इन आर्यों के अतिरिक्त। क्या तुम्हारे होते हुये इस देश की यह हीन दशा इसी प्रकार बनी रहेगी। जरा सोचो और विचारो।

यह ऋषि का वर्षस्व क्या यू ही जायगा। उनके बलिदान के पावन स्मृति में हम उनके अनुयायी उन्हें स्मरण करने का अधिकार भी रखते हैं या नहीं?

अपने महान् गुण देव दयानन्द के जीवन के अन्तिम क्षणों की स्मृति हमारे हृदयों में उनके द्वारा आरम्भ किये महान् लक्ष्य को पूरा करने की भावना भरेंगी या नहीं?

समस्त धरती का बल वैदिक आदर्शों को मिटाने चला आ रहा है। भौतिकवाद के प्रवाह का तूफान, जाति-पाति की लहरें सिर पर चढती हुई आज दयानन्द के अनुयायियों को चुनौती दे रही हैं।

वह समय आ गया है जब हमें अपने कर्तव्य का निश्चय करना होगा। धरती को स्वर्ग बनाने के लिये सत्य, शान्ति और न्याय की विमल पताका जन-मन पर लहराने के लिए सम्पूर्ण आर्य, हृदय में नया विश्वास भर कार्य क्षेत्र में अबतरित होंगे और ऋषि के प्रति हमारा सच्चा शिष्यत्व होगा।

ऋषिऋण का यही पुनीत पर्व हमें उनकी याद दिलाता है कि हम उनके आदेश से दूर तो नहीं जा रहे हैं, जिससे कि भगवान् कृष्ण का वह वाक्य हमें लाञ्छित न कर सके।

'अनार्य जुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन'

और यही ऋषि दयानन्द के स्मरण-दिवस पर हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।





झंडा ऊँचा रहे हमारा



[ले०-बी रणजीत जी जितासु बामप्रवृत्ति, पीलीभीत]

ओं आदित्याः रुद्राः वसवः सुनीयाः
छावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम् ।
सजोषसो यज्ञ भवन्तु देवा ऊर्ध्वं
कृष्वन्त्वध्वरस्य केतुम् ॥ ऋ. ३-८-८

अर्थ—(सुनीया) उत्तम नीति वाले (आदित्या) ४८ वर्ष पयन्त ब्रह्मचर्य धारण करने वाले, चारो वेदों के ज्ञाता, महाविद्वान्, आदित्य ब्रह्मचारी या नेता लोग (रुद्रा) ३६ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य धारण कर ३ व २ वेद के ज्ञाता रुद्र ब्रह्मचारी या शत्रुओं के हलानेवाले अत्रिय वर्ग (वसव) २५ वर्ष का ब्रह्मचर्य रखने वाले १ वेद के ज्ञाता वसु ब्रह्मचारी या धनिक वर्ग (पृथिवी) विशाल (छावा-क्षामा) आकाश और पृथिवी पर (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष में (देवा) परोपकारी विद्वान् (सजोषस) तुल्य प्रीति वाले—एक लक्ष्यवान् होकर (यज्ञ) राष्ट्र रूपी यज्ञ की (भवन्तु) रक्षा करें और (ध्वरस्य) इस राष्ट्र यज्ञ के (केतुम्) झण्डे को (ऊर्ध्वं कृष्वन्तु) ऊँचा करें।

व्याख्या—५ हजार वर्षों बाद चारों वेदों का ज्ञाता आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द इस राष्ट्र की ओर इस आर्य जाति को इसके गत गुणगौरव को पुन स्मरण कराने इसका उद्धार करने आया परन्तु दुर्भाग्य, हमने उस वेद दयानन्द की वेद का अनुसरण न किया, उसके बतलाये मार्ग को छोड़कर अपने को केवल धार्मिक सत्त्वा घोषित कर राजनीति से प्रयुक्त रहकर अपना नेतृत्व लो बिया जिसके परिणाम स्वरूप अज्ञेय शिक्षा से वीक्षित व्यक्तियों के हाथ में नेतृत्व की बागडोर चली गयी। जिसके परिणाम स्वरूप ब्रित स्वराज्य में स्नेह, सद्भावना, समता, सहयोग, सुरक्षा और सब सुख सुविधाओं का अथवा-सुखव सगीत सुभाई देता उसके स्थान पर आज प्रथम प्रभुता, अधिका-र लिप्ता, दमन, स्टमार, भूखमरी, बेकारी, साम्प्रदायिकता, अनैतिकता, अराजकता, रिश्ततन्त्रोरी, बिरादरी धाव, स्वार्थसिद्धि, चोरबाजारी, स्वजन पक्षपोषकता,

निरुद्यमता, महगाई, खूरेजी आदि की मयकर बढी विघाट कर ताण्डव कर रही है। शासक वर्ग जनता के खून पसीने की कमाई के धन से निज विलासिता में रत है और जनता महगाई तथा अनेकों करमार से पिंसी और बढी मर रही है। पाकिस्तान और चीन रूपी अजगर मूंह फाड़े राष्ट्र को निगलने में उद्यत हैं। अन्त-बाह्य पक्षमांगी रिपु शासन की दुर्बल और नपुंसक नीति से लाभ उठाकर स्व-च्छन्द विचरते शत्रुओं के स्वागत के लिए मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। ऐसे समय में आर्य जिसका शब्दार्थ ही यह है सब ओर से विचार पूर्वक गति करने वाले हाथ पर हाथ धरे राजनैतिक निरपेक्षता का आवरण मुह पर डाले किंकर्तव्य विमूढ़ बना बैठे रहे क्या यह हमारे आर्य नेतृत्व का आदेश है? जबकि हमारे पुत्रवर वेद दयानन्द ने वेदशास्त्रों का सबल शस्त्र दे और अपने साहित्य तथा उपदेशों का आशीर्वाद दे हमें रणाङ्गण में आह्वान किया है। आर्यों की सोचना है कि हम वेद व वेद दयानन्द के आदेशों पर आरुढ़ होते हैं या राजनैतिक निरपेक्षता के फलस्वरूप राष्ट्र को विध्वंसकारी कगार पर अवस्थित करने के पापी बनते हैं। अस्तु—

उक्त वेदमन्त्र में राष्ट्र ऊँचा उठे, उसका सर्वत्र यज्ञ विस्तीर्ण होवे इसके उपाय कहे गये हैं। आदित्य ब्रह्मचारी पूर्ण विद्वान् राष्ट्र के नेतृत्व को समालने वाले ब्रह्मचर्यस्वी ब्राह्मण और अत्रिय वर्ग जो उच्छर्तों को हलाने वाला तथा शत्रुओं का नाशक और धनिक वैश्य वर्ग और नीतिमान् क्षीण (सजोषस) एक आदर्श एक लक्ष्यवान् होकर राष्ट्र रूपी यज्ञ की रक्षा करें। वेद में आया है—“यज्ञो भुवनस्य नामि” यज्ञ सारे भुवन का केन्द्र स्थल है और शतपथ में कहा है—“यज्ञोर्वेषेष्ठतमोऽकर्म” यज्ञ अष्टेष्ठतम कर्म है। महर्षि दयानन्द ने जहाँ सबको पक्षमहायज्ञ करने का उप-देश दिया वहाँ राजा के कर्मों को बताया है—“राजा सब विष राजकर्मों को ऐसी बलता से करे जिससे प्रजा सब [शेष पृष्ठ ३२ पर]



श्रद्धा और आर्यसमाजी



(ले०-श्री प० बिहारीलाल जो शास्त्री)

आर्य समाजियों को आत्महीन बनाने के लिये आर्य
ब्राह्मणसमाज के विरोधियों ने अब एक नया नारा



लेखक

निकम्मा है कि समाज में अढ़ा के माब नहीं। आर्यसमाजी को यह अनुभव कराया जाता है कि तुम अढ़ा विद्वांसहीन हो। पुस्तकार समाज अढ़ाहीन है। अतः तुम धर्म और अध्यात्म से बहुत दूर हो। आध्यात्मिक बनने के लिये गुरु की शरण लो। उपनिषद् सो कहती है—

‘तद् विज्ञानार्थं गुरुमेवाभिन्नच्छेद्योत्रिय ब्रह्मनिष्ठम्’

ब्रह्म ज्ञान के लिए गुरु के पास जाओ जो गुरु वेदज्ञ हो और ब्रह्म में अढ़ावु भी।

बस अनेक आर्यसमाजी भी आजकल के उन गुरुओं की शरण में जा पड़ते हैं जो नये ढंग के होशियार, धर्म के सौवागर हैं। जिनको उपनिषद् के अनुसार न वेद का ज्ञान है न ब्रह्म में उनकी निष्ठा। जो अपने को ब्रह्म से भी बड़कर बताते हैं। जो रामकृष्ण के अवतार अपने को

कहते हैं। इनमें कुछ तो अपेजी अच्छी बोल लेते हैं अतः अपेजी पढ़े लिये सब बुद्धि इनके चमूल में बड़ जाते हैं। कोई चेला इन्हें हाईकोट का जज बता देता है। कोई कलक्टर समझ लेता है। पर ये होते साधारण ही हैं। कुछ गुरु नितान्त मूर्ख होते हैं। वे चेला से कहते हैं—

“पोषी पद पद जग मुआ पडित हुआ न कोय।

डाई अकर प्रेम का पढ़े तो पण्डित होय ॥

प्रेम से इनका आशय होता है केवल गुरु से प्रेम। “तन मन, धन सब अर्पण करे” यह है इन वचक गुरुओं के उपदेश नारियों तक को। जो सौभाग्यवती पत्नी अपना तन, मन धन पति को अर्पित कर चुकी वह अब गुरु को अर्पित करे तो “जमानत मे.खयानत” है वा नहीं? पूरी छोले-बाजी है न? मगर यह सोचने समझने की बुद्धि यह गुरु पहले ही हर लेते हैं। “गुरु के बचन करहि विद्वासा” का उपदेश देकर बुद्धि की गति को ठप कर देते हैं।

ऐसे गुरु आजकल अनेक हैं। खूब माल पैदा कर रहे हैं। नबाबी ठाठ से रहते हैं, और वेद शास्त्र तथा बिद्वानों का उपहास करते हैं। इनके चेलों में अधिक सख्या स्त्रियों की रहती है। कोई-कोई अढ़ाजब आर्य समाजी भी इनमें पढ़क जाता है। इन गुरुओं के चेले, देश जाति धर्म की समस्याओं से दूर, जनता के कष्टों से अनजान, केवल अपने ऐहिलौकिक आराम में रूग्ण और पारलौकिक स्वर्ग की आशा में मान गुरु में सब कुछ चढ़ाये हुए मस्त रहते हैं। कर्माई से ये लोग निश्चिन्त होते हैं। कोई धनी या पेंशनर या फिर गुरु के शेवरहीलडर (पत्तवार) होते हैं। ये लोग और शराब के नशे में पड़े मस्त लोग और जनता के लिये एक से ही ध्यर्थ हैं, भुतवत् हैं। इधर आर्यसमाजी को लीजिये। निकम्मा से निकम्मा आर्यसमाजी भी देश धर्म की तडप रखने वाला मिलेगा। जनता के बुलसुल की अनुभूति उसे अबश्य रहेगी। वह जनजीवन से उबासीन नहीं मिलेगा।



इन अड्डालु कहावे वाले पुरुषों ने मठ बनाये, आश्रम कहे किये, पर पूर्वा बगाल के हिन्दू सुसलमान बनते रहे और उच्चका परिधाम हुआ पूर्वा बगाल पाकिस्तान बन गया। सड्डालों हिन्दू वैश्या यवनों मे जाती रहों। हरिजन ईसाई बनते रहे और ये अड्डालु मत्त कीर्तन और पुरुमक्ति में स्नेह रहे और अड्डालुहीन जिन आर्यसमाजियों को कहा जाता है, उग्होंने सहलों स्त्रियों और लाखों पुरुषो को अहिन्दू होने से बचाया और इस प्रकार राश्ट्रियता की सहायता की। लाखों धर्मियों को अवविश्रवाषो से बचाया और सहलों को गायत्री मंत्र पढ़ाया। लाखों को वेद विश्वासी और भारतीय सस्कृति का प्रेमी बनाया। कौन साई का लाला ऐसा अड्डालु हुआ है कि जिसने जीवन भर सारा समय जनता को शिक्षित करने मे होम दिया हो और जनता से एक पैसा भी न लिया हो। आर्यसमाज मे महात्मा ह्यराज जो ५० मेहरबब जी आदि अनेक नेता हुए हैं कि जिन्होंने सरस्वती की सेवा मे सारा जीवन आहुत कर दिया है। ग़होवे अकबर, ५० लेखराम जी और शहीदे आजम स्वामी अड्डानन्द जी की जोड़ का कौन अड्डालु हुआ है कि जिसने अपना धन जीवन, सुख संपत्ति और प्राण भी हिन्दू धर्म, सनातन धर्म, आर्य सस्कृति की रक्षा में नैट कर दिये। स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी सर्वदानन्द, ब्रह्मचारी निरयानन्द, म० नारायण स्वामी, पंडित गणपति शर्मा जैसे विद्वानों का त्याग और जननेवा क्या सचची भडा नहीं है। एक हैं वे अड्डालु जो जनता के सुख सुख की उपेक्षा करके, इस भूमि से उबासीन होकर स्वर्ग की चाह मे बेचैन हो रहे हैं। दूसरा और है अड्डालुहीन कहावे वाला आर्यसमाजी जो इसी जन्म भूमि वसुधरा को स्वर्ग बनाने का प्रयत्न कर रहा है।

जनता बतावे कि उसका हितैषी कौन है ? और जो जनता की सेवा करता है उससे ही अनार्वन प्रसन्न होगा। तब आर्यसमाजी की अड्डा सचची अड्डा रही या नहीं ?

आर्यसमाज के सन्यासी, उपवेशक, मजनीक जनता का बहुत कम ध्यय कराकर जो उच्च कोटि के तक सगत बिचार जनता को बाटे देते हैं, येसे बिचार ये ढोंगी पुरु सहलों खपये फूक कर भी नहीं वे पाते। आर्यसमाज के अड्डालों पर जन-भावरण के लिये जो प्रचार होता है वह अड्डालों स्वयं मजठ करके भी ये मुक्ति और स्वर्ग के ठंकेदार

नहों कर पाते। हमे ऐसी अड्डा नहों चाहिए कि जो बुद्धि-बाव को बफनाना चाहती है। जो तर्कों को दूर करके ही फल फूल सकती है। हम तो बुद्धिबाव पर परखी हुई तर्कों पर तुली हुई "अन्-सत्यम्-धा-वभासि" सत्य के ऊपर आधृत अड्डा के पुजारी हैं। जन-जीवन से उपेक्षा करके धासी, देश से अनुराग हटाने वाली बुद्धि को भेड बनाने वाली अड्डा हेय है निकम्मी है।

आर्यसमाज के सन्यासी जनजीवन से जुड़े हुए हैं। कर्मयोगी हैं। बडे बडे गगोसरी और हिमासव के योगियों से हमारा वह सन्यासी जनता का कितना हितकारक है जो जनता को बस पाच वेद मंत्र कठस्थ कराके सध्यानिहोत्र की ओर प्रेरित करता है। अवविश्रवाषों को भयाकर राष्ट्र को स्वस्थ और बलवान् बनाने मे लगा हुआ है। जनता के धन से मौज मारने वाले ये ढोंगी पुरु ऐसे जनसेवक सन्यासी का क्या मुकाबिला कर सकते हैं। भ्रिय आर्य माइयो हमारे इस लेख को पढ़कर फुल न उखिये। जोरों की तुलना मे आप अच्छे सही, पर ऋषि ब्याजन्ड के गज से नापने पर आप बहुत छोटे उतरेंगे। जमी बहुत काम पडा है। सेंकडों अड्डानन्द और लेखराम चाहिये इस्लाम की क्रूर कट्टरता को दूर करने के लिये। सेंकडों उपवेशक चाहिये ईसाइयन के अवविश्रवाष को दूर कर जनता को स्वच्छ आध्यात्मिकता की ओर लाने के लिये। कितने ही आर्यबीरों का बलिवान बलिवानी सुमेरसिह की तरह होना है राष्ट्रनाथा को जीवित करने के लिये। हमारा स्वर्ग, मोक्ष, कल्याण सब है भारतभूमि की प्राचीन बौरब गिरि पर आरुढ़ करने मे। हमारा लक्ष्य और ध्येय निराला है।

"न स्वह कामये राज्य न स्वर्ग नपुनर्भम्।

कामये दुसलपतानां प्राणीनामार्ति नाक्षमम् ॥"

हम न राज्य चाहते हैं न स्वर्ग न मोक्ष, केवल अन्ध-विश्रवाष से पीडित जनता को स्वस्थ सत्य प्रार्थ पर हूँ लामा है। ध्येय कठिन है। जोर साधना की अपेक्षा है। आर्यजनो आजकल की मौसिकवाव की कहर और किन्न-सिता की ज्वाला, अड्डाचार की आंधी और राक्षसेतिक आतुरगरो के तुषान से बचकर अपने सरल स्वच्छ जीवन से वह साधना करो जो हमसे पहले आर्य माइयों ने की थी। अत धारण करो, सपथ लो, अपने जीवन की बर्तसाव की

प्रभु निकटतम हैं, फिर भी बिसाई नहीं देते, अनुभव में नहीं आते और जैसे कोई अपरिचित, दूरस्थ व्यक्ति सम्पर्क से पृथक् रहता हो, बीसे ही वे भी हम से रहते हैं। अपना होते हुए भी बिराना, निकट होते हुए भी दूर, अन्तर्दामी होते हुए भी प्राप्ति से परे, ऐसा क्यों है? वेब कहता है—“प्रभु दूर भी है और समीप भी। समीप उनके



लेखक

लिये है जिसके पास मग्न हो चुके हैं। दूर उनके लिये हैं जो पाशों में जकड़े हुए हैं। ये पाश भी दो प्रकार के होते हैं—मलिय और अयलिय। अयलिय पाशों में तमोगुण एव रजोगुण से सम्बन्धित बोगो की गणना है। यलिय पाशों में सत्वगुण के बन्धन हैं। जब तक हम इन तीनों पाशों

गंबगी से पवित्र रखने की। धर्ममार्ग कठिन है पर अन्त में कल्याणकारक है। अपना जीवन स्वच्छ रखकर जनता को स्वच्छ बनाओ। दूसरे स्थान के स्वर्ग की उपेक्षा करके भारत भूमि को स्वर्ग बना दो यत इसकी आवश्यक मानकर अन्ध देहा भी वैधो वृत्ति की ओर बढ़ें।

“भ्राम्त मटकती जनता को वैदिक सतपथ पर लाना है। मरक बनी भारत भू को फिर सत्त्वा स्वर्ग बनाना है। कष्ट पडे, बलिदान होंय इसकी विमता परवाह नहीं। भोव् एवजा को हिमगिरि के शिखरों पर फिर फहराना है।

पाश



[डा० पुन्डीराम शर्मा, डी० लिट०, आर्यनगर, कानपुर]

से मुक्त नहीं होते, तब तक प्रभु का साक्षात् करने के अधिकारी नहीं हैं। तमोगुण और रजोगुणों के बन्धनों को अयलिय पाश कहा गया है, क्योंकि इनसे मानव पाप में लिप्त होता है, दुष्कर्म करता है और परिणामत पतित होता है। अथ जब पीछे पड गया तो मद्र या शुभ या कल्याण का हस्तगत करना कठिन ही नहीं असम्भव है। मद्र शुभ या सत उन्नयन की आधारशिला है। जब तक हम सत्व की स्थिति में नहीं पहुँच पाते, तब तक अयोगति ही अयोगति है। उर्ध्वगमन सत्व की अवस्था में ही सम्भव है। इसके लिये प्राणपण से उद्योग करना पड़ता है। उद्योग द्वारा हम पाप के सवर्ग से हटकर, अन्ध प्रकृति से विमुक्त होकर, प्रकाश में पहुँचते हैं और सन्धिनी शक्ति के सहयोग द्वारा उस परम तत्व के साथ समुक्त होने के अधिकारी बनते हैं।

वर्षीय वरणदेव के पास व्रत भंग करने वालों को सभी स्थानों और कालों में आबद्ध कर लेते हैं। जो पाप करता है, वह इन पाशों में जकड़ा जाता है। व्रत कुछ प्राकृतिक हैं और कुछ नैतिक हैं। इनमें से किसी भी व्रत को तोड़ने वाला बन्ध भागी बनता है। स्वास्थ्य के नियमों को न पालन करना प्राकृतिक व्रत का भंग करना है। झूठ बोलना, चोरी करना आदि नैतिक व्रतों के अन्तर्गत हैं। हम चाहे जितना छिपकर व्रत भंग करें, पृथ्वी पर, पृथ्वी के ऊपर या उससे भी परे, वरणदेव के सहस्राक्ष स्पर्श (व्रत) हमें वेक ही लेते हैं। 'सर्वं तत्राजा वरणो विचण्डे यवमरा रोबसी यरपरस्तात्' (अथ० ४-१६ ५)

वरणदेव के पाश संकटों और सहर्षों हैं अर्थात् अज्ञानित हैं, पर वे सब तीन भागों में विभक्त किये जा सकते हैं। ऋ० १-२४-१५ के अनुसार ये उसम, मध्यम तथा अधम पाश हैं। ये त्रेधा पाश अर्थात् की निम्नांकित ऋचा के अनुसार सप्तसप्त प्रकार के वर्णित हुए हैं—ये से पाशा



बचन सप्त सप्त त्रेधा तिष्ठन्ति विधिता यस्तः । छिनन्दु सर्वे अनृत बचन्त यः सत्य वाछानित मुञ्चन्तु । (अथर्व ४ १६६) बचनवेध के तीन प्रकार के पात्र ही सात सात प्रकार के हैं । ये सात सात प्रकार के पात्र 'सप्त मर्वावा कथयस्ततस्तु'—सात मर्वावाओं का भी स्मरण बिला बेते हैं। सात मर्वावाओं का तोड़ना मानो सात प्रकार के पात्र करना है । ये सात मर्वावाये प्राकृतिक हैं और नतिक भी । अतः जो बार 'सप्त' शब्द का प्रयोग हुआ है। प्रकृति के क्षेत्र में इनका सम्बन्ध महत्त्व, अहंकार तथा पचनमात्राओं से है । इन सातों को स्वस्थ रखना तथा समुद्र करना प्राकृतिक मर्वावा है । नैतिक क्षेत्र में इनको स्वस्थता तथा समुद्र के समुपयोग करने की मर्वावा है । यह उपयोग चेतना की अपेक्षा रखता है, अतः नीति के अन्तर्गत आता है । पर ये सात सात प्रकार के पात्र प्रमुखतया तीन ही प्रकार के हैं । प्रकृति त्रिगुणात्मिका है । उसके ये तीन गुण अपने तो हैं ही, पर जब ये चेतना पक्ष पर छा जाते हैं, तो उसे भी अपने रंग में रंग लेते हैं । इन्हीं के कारण जीवात्मा परमात्मा से संयुक्त होकर भी, उसका समुद्रा और सखा होकर भी, उससे वियुक्त हो जाता है ।

सत्व की जो यज्ञिय पात्र कहा गया है उसका भी एक कारण है । सत्वगुण शुभ या भद्र का प्रायक तो है, पर यह अहंकार में भी मिला हुआ है । मैं सत पुरुष हूँ, सच्चरित्र से सम्पन्न हूँ, धर्मिष्ठ हूँ । ऐसी भावना जीव और प्रभु के बीच में आबरण का कार्य करती है । सत्व हमें उठाता है पर अहंमिति से संयुक्त होकर गिराता भी है । एक अग्र्य दृष्टि भी है, जिसके अनुसार यह शुभ कर्मों के फल से सम्पन्न करके हमें भोगधारी भी बनाता है । देवताओं की स्थिति इसी प्रकार की है । वे स्वर्ग में भोग भोगते हैं, कामधारी होते हैं, स्वच्छन्दता से सर्वत्र भ्रमण करते हैं, काल और देश दोनों का व्यवधान उनके सामने से हट जाता है । वे निर्विघ्न सुख का उपभोग करते हुए विचरण करते हैं । यह स्थिति भी आर्य संस्कृति में सर्वोत्कृष्ट स्थिति नहीं समझी गई है । वेनों से नीचे पितृलोक के निवासी हैं । वे भी भोगधारी हैं । कर्म करने से दूर केवल भोग में पड़े हुए व्यक्ति अपने भावों की भाँति के लिये किसी प्रकार का अर्जन नहीं कर पाते । इसीलिए पितर और देव दोनों की स्थिति को अच्छा तो कहा गया है पर सर्वोत्तम

नहीं । परमगति की सजा इनसे ऊपर है ।

परम गति को कुछ श्रद्धियों ने व्यक्तित्व के बिनास की अभिधा प्रदान की है । व्यक्तित्व ही होने प्रभु के साथ संयुक्त नहीं होने देता । सुयुक्ति में हम तम और रज से दूर रहते हैं, परन्तु चेतना तो बनी ही रहती है । सम्भ्रात समाधि में भी इसका अक्षण रहना विद्व है । ई अक्षत्र ज्ञात समाधि में सब कुछ विस्मृत हो जाता है । मोक्ष में इस स्थिति की पराधा है । अतः मोक्ष या ब्रह्म रूपता अपने आपको छो देना है जिसमें मैं नहीं रह पाता व्यक्तित्व नष्ट हो जाता है । केवल, एकमात्र, परम तत्व रह जाता है । व्यक्तित्व के अभाव में भूतकाल के लिए शोक बनाने तथा नविष्य के लिये मोह करने का कारण अवशिष्ट नहीं रहता । जब मैं ही नहीं रहा तो कौन विगत से चिपटेगा और कौन किमी अनागत की आकांक्षा करेगा ? जो न भूत है और न भविष्य है, केवल वर्तमान ही वर्तमान है, वही परमतत्व, ब्रह्म हमारे निखिल पुरुषार्थ का एकमात्र लक्ष्य है ।

जैसे पात्र अर्पणित हैं वैसे ही उनसे छूटने के उपाय भी अनेक हैं—शत ते रात्रन् मित्रज सहस्रमुर्बा गभीरा सुम-तिष्टे अस्तु । बाधस्व वृषे निश्चिन्ति पराचं हृतचिन्ने प्रभु मुग्धि अस्मत् ॥ ऋ० १ २४-९ ॥ राजा वरुण । तुम्हारे पास तो पाप रूपी रोग को दूर करने के लिये संकड़ों, सहस्रों औषधियाँ हैं जो व्यापक तथा गम्भीर प्रभाव उत्पन्न करने वाली हैं । वेव । तुम्हारी सुमति हमें भी प्राप्त हो जिससे निश्चिन्ति, कृच्छ्रापत्ति, घोर विषवा हमसे दूर, बहुत दूर भाग जावे । जो पाप हमने किया है और जिस पाप के कारण हम इस भयकर, विकराल बलेश के नाजान बने हैं, उस किये हुए पाप से हमें छड़ा दीजिए ।

त्वहि विश्वतो मुख विश्वतः परिभूरसि अपन शोभु-चवधम । अथ० ४-३३-६

प्रभो ! आप कहाँ नहीं हैं ? आप तो सर्वत्र विद्यमान हैं और यह जो कुछ बिसाई देता है उससे भी परे विराज-मान हैं । आप ही हमारे पाप को नष्ट कर दीजिए । द्विधो विश्वतोमुख अति नावेध पारय । ७ । हे सर्व व्यापक ! नाश की भाँति अपनी कृपा के द्वारा हमें समस्त द्वेष-रूपों से पार लगाओ । 'स न सित्पुमिष नाबा अति पवां स्व-स्तये । ८ । जैसे नाश पर बैठकर सिन्धु को पार कर आते (शिव पृष्ठ ३९ पर)



स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा विश्व धर्म

[ले०—श्री आचार्य रामानन्द शास्त्री, उपप्रधान बिहार सभा, पटना ४]

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की समाप्ति पर लिखा है कि 'यह सिद्धान्त भूगोल में फैल जाय'। उन्होंने अपने शिष्यों को यही आदेश दिया कि देश-देशान्तर तथा लोक-लोकान्तर में इस त्रिकाल सत्य वैदिक धर्म को तुम कोने-कोने में फैला दो। वस्तुतः आर्यसमाज की स्थापना उन्होंने इसी उद्देश्य से की थी। आर्यसमाज कोई धर्म अथवा पेय नहीं है यह तो उस सगठन का नाम है जिसका उद्देश्य वैदिक धर्म को विश्व में पुन फैलाना है। उन्होंने धर्म की परिभाषा को नियम और उद्देश्य के समान ही सर्वजन ग्राह्य बनाया। महाराज एकादश समुल्लास में धर्म की परिभाषा करते हुये कहते हैं कि—जिसे सब माने उसे धर्म तथा एक माने उसे अधर्म समझना। जैसे—सत्य, सदाचारवि। धर्म की यह परिभाषा देश और काल से बाधित नहीं हो सकती है। जीवनी देखने से विबिध होता है कि स्वामी जी से किसी ने पूछा कि—पाप, कितने कहते हैं? तो स्वामी जी ने यही उत्तर दिया कि—भारतीय पेनल कोड में जो जुर्म लिखे हैं वही पाप हैं। इससे बढ़कर पाप की और परिभाषा क्या हो सकती है? महाराज ने 'आयबिल्ट' में उत्पन्न मतों का खण्डन भी इसी उद्देश्य से किया है कि यह देश स्वस्थ होकर विश्व में वैदिक धर्म को फैलावे। वस्तुतः आर्य-समाज के सगठन का निम्नलिखित कार्यक्रम रहा है—

- (१) निर्माणात्मक (Constructive)
- (२) खण्डनात्मक (Destructive)
- (३) आन्ध्रनात्मक (Obstructive)

प्रथम प्रोग्राम के अनुसार शिक्षा आवि का विस्तार था कि योग्य वैदिक धर्म की ठीक रीति से समझने वाले तथा जीवन में धारण करने वाले नागरिक तैयार हों। दूसरे प्रोग्राम के अनुसार हमारे प्रचारकों में खण्डनात्मक साहित्य का निर्माण किया। वैदिक गंगा में बिजलीय पर्याय घुसकर वह इस निर्मल बल को दूषित कर रहे थे, ज्ञाना साधारण जनता उसे ही वैदिक धर्म समझ कर पान

कर रही थी इसलिये इस प्रकार के खण्डनात्मक साहित्य ने वैदिक धर्म को निर्मल बनाने में बड़ा ही सहयोग दिया। तीसरे प्रोग्राम के अनुसार धर्म की आड में गुच्छम, एक तन्त्रवाद अथवा संप्रदाय विशेष, जनता की बुद्धि को कुठित कर मानवता के प्रति घृणा फैला रहे थे, उनका खण्डन आवश्यक था। यह दूषित मनोवृत्ति आज भी विद्यमान है। जैसे—रोमन कैथोलिक धर्म के परम पवित्र पिता, वेदिकान (Vatican) के पोप ने सब धर्मों में एकता की चर्चा करते हुए ईसाई धर्म को ही सर्वोत्कृष्ट बताया है। इससे परस्पर घृणा की उत्पत्ति सन्नव है। इसी साम्प्रदायिकता से दूषित होकर पुष्टमव अली साहब ने एक बार कहा था कि—एक इन्के बाला मुसलमान भी महात्मा गांधी से अच्छा है, क्योंकि वह कुुरान, हजरत पुष्टमव पर विश्वास करता है। स्वामी जी ने ऐसे विचारों को मानवता के विरुद्ध समझा, इसलिये इसके लिये बौद्धिक कागित की। वस्तुतः यह साम्प्रदायिक विचार सन्नाश्यवाद तथा पूजावाद से भी अद्विक भवावक हैं जिसे दूर करने की चेष्टा १९ वीं शती में कार्ल मार्क्स ने की थी। इसी विचार से श्रुति ने भारत के बाहर से आने वाले मजहबों की आलोचना की—

कुछ लोगों का कहना है कि यह वैदिक धर्म कभी मिस्मरी धर्म नहीं रहा है, यह स्वामी जी की देन है कि वे इस विश्वधर्म बनाना चाहते थे। किन्तु उनका यह कहना गलत है। बुद्ध और ईसा से बहुत पहले वेद धर्म प्रचारक विश्व के प्रत्येक हिस्से में गये, उन्होंने—'कुम्भन्ती बिषयमार्थम्' इस श्रुति से प्रेरणा ली। ये धर्म प्रचारक जहाँ कहीं गये धर्म के प्रचार के साथ ज्ञान और विज्ञान का भी प्रचार किया। तभी तो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि भूगोल में जितनी विद्यायें फैली हैं वे सब आर्थावर्त्त' केस से ही गयी हैं। "अरब और भारत के सम्बन्ध" पुस्तक के लेखक मोसामा दुलेखान मबदी ने लिखा है कि—भारत से मानका

नामक वंश अरब में बसे तथा उन्होंने ही आयुर्वेद के संस्कृत ग्रन्थों का अनुबाध अरबी अक्षरों में किया। मौलाना यह भी स्वीकार करते हैं कि-गणित विद्या का श्रेणी अरब ही नहीं अपितु सारा यूरोप दृष्टि पर्यन्त रहेगा। क्योंकि भारतीय गणित विद्या अरब से स्पेन गयी, वहा से क्राइबोबा यूनर्सिटी द्वारा सम्पूर्ण यूरोप में फैल गयी। जिस समय अरब अथवा स्पेन में (Zero) की परिभाषा तथा बीजगणित की पढ़ाई पर प्रतिबन्ध था। उस समय भारतीय श्रुति ज्ञान और विज्ञान का समन्वय कर रहे थे। वे ज्ञान तथा मानव विज्ञान की उत्पत्ति को धर्म का बाधक नहीं, अपितु धर्म का पुरक समझते थे। गीताकार कृष्ण कहते ही हैं कि-ज्ञान तेज्ज स विज्ञानम् इव वक्ष्यामि अर्थात् अर्जुन ! तुम्हें ज्ञान और विज्ञान की सम्पूर्ण शिक्षा दूंगा।

महाविद्वान् मॅक्समूलर ने कहा है कि-प्रसिद्ध तत्त्व-वेत्ता सुकरात को आरम्भ ज्ञान की शिक्षा भारतीय पण्डित से प्राप्त हुई थी। पाइथागोरस संख्य बर्णन से प्रभावित था। मॅक्समूलर भाषा विज्ञान की दृष्टि से पाइथागोरस को पृथ्वी गुप्त कहते हैं। प्रसिद्ध अर्मेन विद्वान् विन्टर मिनिज ने कहा है कि-प्लेटो आदिने ईरान में आकर भारतीय पण्डितों से अपने ज्ञान की प्रेरणा ली थी। एक सीरिया निवासी सन्त के कथन का उद्धरण देते हुये, स्वर्गिय पञ्जाहुरलाल नेह्रू (Discovery of India) (भारत की कहानी) में लिखते हैं कि-एक सीरिया निवासी सन्त ने यूनानियों के ग्यबहार से तग होकर कहा था कि-“इन यूनानियों को अपनी विद्या का बड़ा घमण्ड है, इन्हें नहीं मालूम है कि भारत का ज्ञान कितना अपरिमित है और विद्ययों की बर्षा न कर, वे (भारतीय) एक से लेकर सब तक आक लिल्लना जानते हैं जो इन यूनानियों को नहीं मालूम है।”

पाठक यह न समझें कि ये भारतीय श्रुति अथवा मुनि, या धर्म प्रचारक विरब के और धर्मों से परिचित नहीं थे। समार में जहा कहीं भी नूतन विचार उत्पन्न होता था, उसे तर्कों की कसौटी पर कसते भी थे।

मौलाना मुलेमान नबवी कहते हैं कि-जिस समय पश्चिम भारत में (सौराष्ट्र) राजा सोमदेव राज्य करते थे कि उनके दरबार में यह बर्षा बनी कि अरब में एक

धर्म चला है जिसका नाम 'इस्लाम' है, वह बहुत अच्छा धर्म है। इस पर किसी ने बात काट कर कहा कि नहीं, इस्लाम अपनी खूबियों से नहीं अपितु तलवार से फैल रहा है। मौलाना साहब लिखते हैं कि-एक पत्र राबा मे खलीफा के पास अरब मे भेजा तथा उसमें लिखा कि- मैंने सुना है कि आपने इस्लाम एक नया धर्म स्वीकार किया है तथा तलवार की जोर से उसे फैला रहे हैं, यदि उसे तलवार की जोर से फला रहे हैं तो उसकी मुझे बिन्ता नहीं क्योंकि उसका प्रबन्ध कर लिया है। यदि, यह धर्म बुद्धि से फैलता है तो आप एक होशियार आनकार को भेजिये कि-हमारी गोठो मे इस्लाम पर विचार किया जाय। इस पत्र के अनुसार एक मोलवी कुरान का माहिर अरब के खलीफा के यहां से भेजा गया। वह जब दरबार मे आया तो भारत के पण्डित ने पूछा कि-आप किस धर्म को मानते हैं। उसने उत्तर दिया कि इस्लाम को। इस्लाम किसे कहते पुन पण्डित ने पूछा-इस्लाम वह धर्म है जो एक ख्वा को सब कुछ मानता है-सर्वं व्यापक सर्वं शक्तिमान् आदि। भारतीय पण्डित ने तर्क किया कि तुम्हारा ख्वा सर्वशक्तिमान् है तो ऐसा पदार्थ बना सकता है जो उससे न उठे। यदि हा कहता है तो भी ख्वा की सर्व शक्तिमत्ता जानी है यदि कहता है कि नहीं तो भी उसकी शक्ति मत्ता समाप्त है। अन्त मे वह निरस्त होकर चला गया।

महर्षि स्वामी दयानन्द ने लिखा है कि महात्मा बिदुर ने अरबी मे लाक्षागृह का भेद युधिष्ठिर को बताया। इससे सिद्ध होता है कि भारतवर्ष के ज्ञानी अपने को भाषा की परिधि से दूर हटाकर सर्वभाषा में वैदिक उवाच विचार का प्रचार किया करते थे।

वैदिक श्रुतियों तथा मुनियों से ही अनुप्राणित होकर जैन धर्म के प्रचारक हुये उनसे प्रेरणा लेकर बौद्ध धर्म के प्रचारको ने बुद्ध वाणी का प्रचार किया। ईसा मसीह तो भारत मे आकर पड़े ही थे, यह प्राय निर्विवाद सिद्ध हो रहा है। क्योंकि ईसा मसीह की भाष्यावस्था का इतिहास मिलता है। युवावस्था मे वर्णन है कि मध्य में वह कहाँ या इसका उल्लेख ईसाई ग्रन्थों मे कहीं नहीं मिलता है। इस पर लोगों का कहना है कि ये इतने दिनों तक भारत में ही पढ़ते रहे। वस्तुतः ईसाई धर्म का आचार तो



पृथ्वी धर्म का है तथा शिक्षा सम्पूर्ण बुद्ध धर्म की है।

निरुक्तयं यह है कि—यह वैदिक धर्म ही विश्व धर्म रहा है, इसी में योग्यता भी है कि यह विश्व धर्म बने। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज स्थापित कर इसे अनु-प्राप्ति कर विश्व धर्म बनाने का आवेश दिया। अतः हमारी समाजों को समाजों तथा प्रचारकों को चाहिये वेद वाणी' को विभिन्नान्त में पढ़ना वें।

अन्त में वेदध्यास की यह वाणी उद्धृत कर इस वृत्त की समाप्ति कर रहा हूँ।

मन्वन्तो बहुला सन्तु वेद प्रसार्यता मयम्।

महा० शा० पर्व

अर्थात् आप बहुत हों तथा इस वेद की विश्व में फैलावें।

इस कार्य में हमारा सहयोग मह्वि दयानन्द के प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगा।

(पृष्ठ २९ का शेष)

हैं, उसमें डूब नहीं पाते, वेसे ही कल्याण प्राप्ति के लिये आप हमें पार लगा दें। अयज्ञिय पाश भी हमें बांधे हुए हैं। इन सभी पाशों से आप हमें मुक्त करें।

अयज्ञिय पाश छुड़ाने नहीं, कस कर जकड़ लेते हैं। दोनों के माना रूप अवनत एव उन्नत चेतना संपन्न प्राणियों में देखे जा सकते हैं। दोनों से ही छूटना मुक्ति है अथवा चेतना गति की पराकाष्ठा है। परम तत्त्व प्राप्ति की स्थिति भी अशुभ एव शुभ दोनों से पृथक् है। यदि—हम इस स्थिति की प्राप्ति करना चाहते हैं तो हमें अयज्ञिय एव यज्ञिय, अशुभ एव शुभ दोनों प्रकार के पाशों से मुक्त होना होगा। वेद में अयज्ञिय पाशों को अथम एव मध्यम और यज्ञिय पाशों को उत्तम कहा है। पाश तो पाश ही है, बन्धन तो बन्धन ही है, बेड़ी तो बेड़ी ही है। फिर चाहे वह लोहे की हो अथवा स्वर्ण की। कारागार तो कारागार ही है। वह चाहे प्रथम श्रेणी का हो अथवा द्वितीय या त्रिपुष्ट श्रेणी का, जेड़ियों में जकड़ा हुआ, कारागार में पड़ा हुआ प्राणी आनन्द ही नहीं कहा जाता।

झंडा ऊंचा रहे हमारा

(पृष्ठ २५ का शेष)

विश्व सुरक्षित तथा सुख संपृद्धि सम्पन्न हो, राजा की राज्य कार्य की तत्परता ही उसकी सद्योपासना है" अर्थात् राज्य व राष्ट्र की सुरक्षा और बल सम्पन्न होना श्रेष्ठतम कर्म है अतः राष्ट्र यज्ञ है। द्वितीय यज्ञ का भाव है कि परहित में अपने स्वार्थ का हट करना। राष्ट्र की सबलता के लिये यह भावना अत्यन्त आवश्यक है। अतः राष्ट्रयज्ञ की तब मिलकर रक्षा करें। हमारे राष्ट्र का कोई भाग हमसे अप हट कर छोटा न किया जाय अतः (पृथिवी) शम्भ कहा यानी हमारा राष्ट्र विशाल हो, हम अल्पभारत के निर्माता हों। हम में प्राम्तीयता आदि के बोध न हों सारा ही भारत हमारा विशाल एक राष्ट्र है। राष्ट्र के अन्वर रहने वाले व्यक्तियों का कोई कार्य ऐसा न हो जिससे राष्ट्र अपमानित हो अपितु शोलोक, पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष लोक में हमारे राष्ट्र का यश व्याप्त हो। हम अन्तरिक्ष और धी में वैमानिक शक्ति सम्पन्न हों, बल पल में हमारी सेना अजेय होकर यश लाभ करे। सारे ही परोपकारी और विद्वान् राष्ट्र ध्वज की एक भावना के साथ ऊंचा उठावें। मह्वि ने कहा है—“एक भेष, एक भेष, एक भावना होने पर सागर में नदियों के समान सारे ही मुख एकत्र हो जाते हैं।” अतः हमारा झंडा सदा ऊंचा हो।

जो स्वतन्त्र है, वही आनन्दी है। यह स्वातन्त्र्य प्रकृति के तीनों गुणों से पृथक् होने में है। बन्धन भी प्राकृतिक ही है। जीवका अपना विशुद्ध रूप प्राकृतिक नहीं चेतन है। यह चेतन आनन्दवास से वंचित है। अतः आनन्द की उप-लब्धि ही मुक्ति है। अथर्व वेद के शब्दों में—“अन्ति सत न जहानि अन्त सन्त न परयति”—जीव निपट विपटी प्रकृति को छोड़ता नहीं और निकट ही विद्यमान प्रभु को देखता नहीं, यही उसकी सबसे बड़ी विपत्ति है। त्रिगुणा-त्मिका प्रकृति को छोड़ो और प्रभु का दर्शन करो। इसी में कल्याण है।



आर्योद्देश्य



पालन करिये इस नियमों का मला चाहते हो अपना ।
आवागमनों के कठिन ऋषि से मुक्ति चाहते हो अपना ॥
सभी सत्य विद्या एव जिनका विद्या से होता भाव ।
उन सब का ही आविर्भूत केवल परमेश्वर को तू जान ॥
ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप व निराकार सर्वशक्तिमान ।
परम ब्रह्म अनत अज्ञाना निर्बिकार है अकल अकाम ॥
सर्वेश्वर आवि अनुपम है व्यापक प्रभुवर सर्व अघार ।
अजर अमर सन्निवर्तनी अमय शुद्ध गुण निराधार ॥
सृष्टिकर्ता अगत नियन्ता दयालु ग्यायकारी आविद्य ।
अविराम अक्षय्य अच्युत शिव अग्नि आवि कारण है नित्य
वेद सत्य विद्या की पुस्तक निशिदिन पढ़ो-पढ़ाओ ।
ईश्वरोक्त स्वाध्याय ग्रन्थ है अनुपम सुनो सुनाओ ॥
सत्य प्रहण ही करो सर्वथा असत्यों से रहकर दूर ।
सत्य प्रकाशवान हो जग में बहू बिशा पूजे मरपूर ।
कोई कार्य करने से पहले सवा याद करो निज धर्म ।
सत्यासत्य का विचार करके आरम्भ करिये अपना कर्म ॥
ससार का उपकार करना मानव ध्येय प्रथम है ।
सामाजिक शारीरिक आत्मिक उन्नति का ही विधान है ॥
विश्व अणुमय जग को जानो यथायोग्य वर्तों सबसे ।
धर्मानुसार प्रीति से रहिये प्राण रहें तन मे अबसे ॥
अविद्या के नाश हेतु अपना सनस्त अर्पण करिये ।
सद्बिद्या के प्रचारार्थ जीवन भी समर्पण करिये ॥
अपनी ही केवल उन्नति से कभी नहीं सतोष करो ।
सामाजिक व सर्वहितकारी नियमों मे रहिये वरतम्भ ।
प्रत्येक हितकारी नियमों मे हरेक बांधव रहें स्वतन्त्र ॥

—डा० रामकरन आर्य एम०बी०एच०, एम०एस०सी०
(गोल्ड मंडलिस्ट) निवासीपुर जमीनज वाराणसी ।

ब्रह्म कैसा ! है तू...



एक अलहूड युवक नद्य वेदान्ती,
ऋषि बयानन्द के पास आने लगा ।
ओर में ब्रह्म, मे ब्रह्म मे ब्रह्म ह,
उच्च स्वर से यही रट लगाने लगा ॥
एक दिन फिर बताया महाराज ने,
जीव ओ ब्रह्म का भेद उसको मगर ।
रुच माना नहीं सूड़ बो ओर भी,
हठ, दुराग्रह, डिटाई विलाने लगा ॥
फिर महाराज ने मुसकराते हुए,
जड़ दिया एक, उसके चपत गाल पर ।
रोय छाने लगा, तिलमिलाने लगा,
धर्म मारा धर्मों ! हल्ला मचाने लगा ॥
बाक्य बोले महाराज, तत्काल ये,
ब्रह्म तो है अरे ! शोक बुल से परे ।
ब्रह्म कैसा ! है तू जो चपत एक मे,
बालको की तरह बिलबिलाने लगा ॥
—प्रकाशचन्द्र कविरत्न अजमेर

आर्योपप्रतिनिधि सभा लखनऊ

इस सभा का मासिक अधिवेशन २५ अक्टूबर को
आर्य समाज चोक मे सम्पन्न हुआ । वृहद्यज्ञ, के ब्रह्मा
श्री प० रामचरित्र जी पाडेय थे—सन्ध्या, मजनों-के उप-
राम्भ श्री इयामसुन्दर जी शास्त्री का यज्ञ की सहसा पर
विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ । सनातन धर्मों पंडितों मे आज के
दिन आत्मार्य करने का निश्चय किया था, पर कोई भी
पंडित आर्यसमाज से टक्कर लेने के लिए उपस्थित नहीं
हुआ । सभा का आगामी मासिक अधिवेशन २९ नवम्बर
को आर्यसमाज आवर्तनगर मे होगा, ओर अन्तरग की
बैठक १ नवम्बर रविवार को शाम को ६ बजे आर्यसमाज
गणेशगञ्ज मे होगी ।





आर्यसमाज है क्या ?



(ले-डा० सूर्यदेव धर्मा साहित्याल कार एम०ए० डी० लिट् अजमेर)

जिस आर्यसमाज ने भारत में नव जागृति एव राष्ट्रीयता का सूत्रपात् किया है, जिसकी विमल विचारधारा आज जन जन के मानस को उद्देलित कर रही है, वह आर्यसमाज क्या ? आर्यसमाज कोई नया मत, सम्प्रदाय अथवा धर्म नहीं है। उसके प्रवर्तक श्रद्धा विद्यानन्द ने स्पष्टतया कहा है कि आर्यसमाज की स्थापना करके उन्होंने कोई नवीन पन्थ नहीं बलाया, अपितु प्राचीन वैदिक धर्म, वैदिक सस्कृति, सम्प्रदाय और परम्परा की पुनः स्थापना की है। उनका उद्देश्य केवल यह था कि समय बीतने के साथ साथ सत्य समाज धर्म और उसके अनुयायियों में जो अवैदिक बातें, अशुद्ध-परम्पराएँ, रुढ़ियाँ और सामाजिक कुरीतियाँ आ गई हैं, उन्हें दूर किया जाये और शुद्ध वैदिक धर्म जनसाधारण के सामने रखा जाये। इसी कार्य को पूरा करने के लिये श्रद्धा विद्यानन्द ने सन् १८७५ में इम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी।

तथ्य यह है कि जहाँ भी श्रद्धा कुछ दिन ठहर जाते और व्याख्यान अथवा शास्त्रार्थ द्वारा अपने विचार प्रकट कर देते, लोग उनके भक्त हो जाते और आर्यसमाज की स्थापना हो जाती। श्रद्धा के निर्वाण के बाद तो आर्यसमाजों की स्थापना की श्रुत्तल बन गयी।

श्रद्धा विद्यानन्द की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वे प्रत्येक व्यक्ति और समाज की सर्वोत्पुञ्ज उन्नति चाहते थे। वे चाहते थे कि व्यक्ति और समष्टि के शरीर मन और आत्मा सब स्वस्थ हों। उन्होंने स्वयं इस बात पर बल दिया और बाद में आर्यसमाज ने भी इस बात का ध्यान रखा। इसीलिए आर्यसमाज ने धार्मिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक सभी प्रकार के सुधारों के करने का यत्न किया।

आर्यसमाज की आधारशिला वेद है। श्रद्धा ने 'वेदों की ओर' का बिगुल बजाया था। हिन्दू जाति वेदों की भक्त थी, उन्हें ईश्वरकृत मानती थी, पर वेद हूँ क्या, और उनमें है क्या, यह न जानती थी। एक विशेष धर्म

के अतिरिक्त न तो उन्हें कोई देख सकता था, न सुन सकता था, न छू सकता था, पढ़ने की तो बात अलग रही। स्त्री जाति वेद, यज्ञादि के पास भी न जा सकती थी। वेदका माध्य किया और उनका द्वारा जनसाधारण के लिए खोल दिया। आर्यसमाज के प्रचार के कारण आज किसी भी धर्म का कोई भी व्यक्ति वेद पढ़ सकता है, यज्ञोपवीत पहिन सकता है और यज्ञ कर सकता है। आर्यसमाज के तीसरे नियम 'मे श्रद्धा ने 'वेद का पढ़ना, सुनना, सुनाना आयाँ का परम धर्म' ही निश्चित कर दिया।

आर्यसमाज का आधार तर्क (बुद्धिवाद) पर है इस लिये वह धार्मिक-अन्यविश्वासों को नहीं मानता। वह अवतारवाद, मूर्तिपूजा, रुढ़िगत पूजा पाठ, जन्म-मन्त्र जादू-टोने, कृत्रिम देवी देवताओं आदि में विश्वास नहीं करता।

आर्यसमाज का धर्म मन्दिरोँ तक ही सीमित नहीं, अपितु वह व्यक्ति और समष्टि के सर्वत्र और सदा साथ रहने वाली वस्तु है। आर्यसमाज मानता है कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक स्थान और प्रत्येक वंश में धर्म का पालन करना चाहिए। सत्य का पालन उच्च आचरण का आधार है इसलिये श्रद्धा ने आर्यसमाज के चतुर्थ नियम में कहा है कि 'सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वथा उद्यत रहना चाहिये' और 'सब काम धर्मानुसार सत्य और असत्य को विचार करके करने सामाजिक क्षेत्र में आर्यसमाज मनुष्य मात्र की समता में विश्वास रखता है। उसकी दृष्टि में कोई किसी से ऊँचा नीचा नहीं। प्रत्येक को उन्नति करने का अधिकार है। वर्ण-व्यवस्था जन्म से नहीं होती, गुण धर्म से होती है। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त कर उन्नति करने का पुरुषों के समान ही अधिकार है। शूद्र अथवा अछूत भी ओरों के समान उन्नति करने का अधिकार रखते हैं। स्त्रियों, अनाथों अछूतों की उन्नति में आर्यसमाज ने अत्यन्त प्रशस्तनीय कार्य किया है। बाह-



विवाह, अनमेल विवाह आदि सामाजिक बुराइयों को दूर करने का आर्यसमाज ने भरसक प्रयत्न किया है।

ऋषि ने आजोवन सत्य मार्ग पर आचरण किया और आर्यसमाज के अगणित कार्यकर्ताओं ने धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्रों में इसके अनुसार आचरण करते हुए घोर यातनायें सहनीं, अनेकों की मौत के घाट उतरना पड़ा।

राजनैतिक क्षेत्र में आर्यसमाज सदा 'स्वराज्य' का पक्षपाती रहा है। वह ऋषि के इस कथन में विश्वास करता है 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।'

ऋषि की यह उक्ति भी कि 'अध्याचार करने वाले की अपेक्षा अत्याचार सहने वाला अधिक पापी होता है' इसी ओर संकेत करती है।

आर्यसमाज धर्म, सभ्यता, संस्कृति, भाषा की एकता में विश्वास करता है। उसका विश्वास है कि बिना इसके राष्ट्र में ऐक्य नहीं हो सकता।

आर्यसमाज ने पश्चिम सभ्यता के चकाबौंध में डालने वाले भौतिकवाद का और उसके तकशून्य विश्वासों का बुद्धता से सामना किया। जन साधारण के सामने उसकी पील झोलकर रखी। भारत देश की विधार्मियों के चगुल में फसने से बचाया। संक्षेप में आर्यसमाज ने उन सभी धार्यों की नींव डाली जो भारत को एक सुबुद्ध और समृद्ध राष्ट्र बना सकते थे। आर्यसमाज ने महात्मा गांधी के मार्ग को प्रशस्त किया वा।

बी आई० एम० परनेल, लाइसन आफिसर थियो-सोफिकल स्पूज एण्ड नोटस लन्दन (जून १९५५) आर्यसमाज का परिचय इस प्रकार देते हैं—

"आर्यसमाज धर्म शान्ति, सार्थभोग चक्रवर्ती राज्य और निरामिष भोजन पर अवलम्बित सदाज-रचना का प्रतिपादन करता है। इस नियमों को स्वीकार करने वाला (और उन सिद्धान्तों को स्वीकार कर आचरण में लाने वाला, जिनकी महर्षि वयानन्द ने वेदों के आधार पर अपने धर्मों में व्याख्या की है) कोई भी ध्यक्त आर्यसमाज में प्रविष्ट हो सकता।

बर्धोलियम फोम के शब्दों में—

"आर्यसमाज वेदों की ओर चलो" आन्दोलन का प्रतिनिधित्व करता है। जिसके सत्पापक ने वेदों से निकाल

कर ऐसी बातें प्रकाश में लायी हैं, जिनकी आधुनिक भारत में मांगता प्राप्त है। उन्होंने वेदों के आधार पर एकेस्वरवाद को सिद्ध कर दिया और विविध वैदिक देवताओं को सच्चे परमात्मा के ही विशेषण बताकर बहुदेवतावाद की मान्यता की निस्तरता प्रतिपादित कर दी है। आर्यसमाज कर्मफल और, मुक्ति में विश्वास रखता है। आवागमन के चक से छूट जाना मुक्ति है।'

'दयानन्द उच्चकोटि के राष्ट्रवादी थे। उनका आर्य समाज आन्दोलन भारत में आधुनिक राष्ट्रीयता एवं जागृति का कारण रहा है।

जैसा कि बी के० एम० मुन्शी जी ने अपने एक लेख में लिखा था तथा भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने अपने मयूरा सम्मेलन के भाषण में कहा था, भारत में राष्ट्रीयता एवं स्वतन्त्रता के सर्वप्रथम स्वप्न-वृष्टि ऋषि वयानन्द ही थे। उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने कांग्रेस से भी पहले भारतीय जनता के हृदयों में देश-भक्ति का बीज बोया था। आर्यसमाज के उपदेशकों और प्रचारकों ने स्थान स्थान पर घूमकर लोगों में स्वराज्य की, स्वतन्त्रता की, स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग की, एषम् देशभक्ति की भावना को जागृत किया था, यही कारण था कि जब सन् १९२१ में महात्मा गांधी ने ब्रिटिश सरकार के विशद असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया था तो देशभक्ति की भावना से ओत प्रोत जेल में जाने वाले लोगों में ६० प्रतिशत से अधिक आर्यसमाजी लोग ही थे। इसी प्रकार शराब की दूकानों पर बरना देने वाले और ग्राम गाम में असहयोग आन्दोलन और प्रचार करने वालों में अग्रणी सामाजिक पुरुष ही थे। इसी प्रकार अछूतों द्वारा के कार्य में जो सफलता महात्मा गांधी को बाद को मिली, वह कदापि न मिलती यदि स्वामी वयानन्द और आर्यसमाज अपने प्रचार से अछूतोंद्वारा के लिये भूमि तैयार न कर देता। इस बात को महात्मा गांधी भी ने स्वयं भी स्वीकार किया।

इसीलिये सन् १९११ की भारत की जनगणना की रिपोर्ट में ग्लन्ट महोदय ने लिखा था कि 'आर्यसमाज १९ वीं शताब्दी का महानतम भारतीय आन्दोलन है।' नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने भी एक बार कहा था—'संप्रति कार्य, बुद्धता, उसाह और समन्वय की भावना की दृष्टि से



ऋषि का अद्भुत कार्य



[ले०—श्री शिवकुमार जी शास्त्री काव्यतीर्थ मु०अ०गु०अ०ज्वालानुर]

श्री नोपार्जन करके ऋषि दयानन्द जब वैदिक मत का प्रतिपादन करने कायं क्षेत्र में अवतीर्ण हुए तो उस समय वैदिक धर्म की दशा एक प्राण विहीन कलेबर के समान थी। कहां तो इस धर्म का वह विषय स्वरूप था कि विदेशी आक्रान्ता सैनिक शक्ति से इस देश को पादाक्रान्त करके भी वैदिक धर्म के पुर्णों पर मुग्ध होकर आर्य बन गये और गुण कर्मानुसार यहा के यर्षों में घुल-मिल गये। आज इनको एक इतिहास के विद्यार्थी के अतिरिक्त कोई जानता भी नहीं। किन्तु ऋषि के समय यह एक सुर्दा था। उसमे किसी बस्तु को आत्मसात् करने की क्षमता नहीं थी। इस बात की पुष्टि के लिए एक उदाहरण देना ही पर्याप्त होगा।

फ्रांसीसी यात्री बनियर ने लिखा है कि वह एक बार वाराणसिकोह के साथ काशी गया, वारा ने काशी के बड़े-बड़े विद्वान्को जो इकट्ठा किया। बनियर ने भी इन सूच्य विद्वानों से कुछ लामान्धित होना चाहा। उसने उन विद्वानों से पूछा कि जिस धर्म के आप अनुयायी हैं वह धर्म कैसा है? विद्वानों ने उत्तर दिया कि वह ससार का सर्वश्रेष्ठ धर्म है। बनियर ने यह उत्तर सुनकर उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि क्या आप मुझे अपने धर्म में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्रदान कर सकते हैं? काशी

आर्यसमाज की समता कोई समाज नहीं कर सकता। महात्मा गांधी जी ने भी लिखा था 'मैंने देखा है, जहां-जहां आर्यसमाज है, वहा वहां जीवन ज्योति है।'

इसीलिये कहा गया है—

यह आर्यसमाज जगत भर मे,
जीवन की ज्योति जगायेगा।
सद्भाव, शान्ति सुख जगती मे,
सच्ची मानवता लायेगा ॥

के विद्वानों ने कानों को हाथ लगाकर उत्तर दिया। हम कब कहते हैं कि यह सबके लिए श्रेष्ठ है।

हमारा कहना तो यह है कि यह हमारे लिए सबसे अच्छा है। आपके लिए तो वही अच्छा है जो आप मानते हैं।

जैसे मृत शरीर से दुर्गन्ध उत्पन्न होकर अनेक प्रकार के रोगों को जन्म देती है, उसी प्रकार यहां के पांग पण्डितों के बुद्धिहीन तथाकथित धार्मिक व्यवहारों से समाज शरीर में अनेक प्रकार के रोग फैल रहे थे।

शक सम्बत् १८४९ के माघ मास में प्रयाग में पंडितों की एक सभा हुई इस सभा में ४८ घण्टे इस बात पर विचार होता रहा कि 'ब्रह्मोन्मत्तायण' मन्त्र सबको दिया जाये या नहीं? और दिया जाय तो ओंकार सहित अथवा ओंकार रहित, ४८ घण्टे के विचार के पश्चात् भी निर्णय नहीं हो पाया।

शक सम्बत् १८५० के आश्विन मास में काशी में एक ब्राह्मण सम्मेलन हुआ इसकी बैठकें सात दिन तक होती रहीं लगभग ३०० पण्डितों ने भाग लिया और विचार विनिमय किया, बड़े सघर्ष के पश्चात् इस सम्मेलन में यह निश्चय किया कि रजोवर्शन के पश्चात् कन्या को ब्रह्मोन्मत्तायण प्राप्त होता है और प्रायश्चित्त से उसकी निवृत्ति नहीं होती। अर्थात् रजोवर्शन के पश्चात् कन्यादान अवधर्म है। (२) उपजातियों में विवाह नहीं करना ब्राह्मण भुक्त लभानों और अस्पृश्यों की अस्पृश्यता जन्म से है।

इंता की नहीं सत्ताम्बो से लेकर बारहवीं सत्ताम्बो के मध्यभाग तक सस्कृत के बड़े-बड़े विद्वान् हुए और उन्होंने बड़े-बड़े ग्रन्थ भी लिखे। किन्तु विदेशियों के द्वारा हमारे समाज पर जो प्रहार हो रहे थे—उनसे समाज की रक्षा के लिये उन विद्वानों ने कहीं एक शब्द भी नहीं लिखा।

यहां पाठकों की जानकारी के लिये कतिपय प्रसिद्ध विद्वानों के नाम उनके रचित ग्रन्थ और काव्य का उल्लेख किया जाता है।



नाम	स्थाल	समय	ग्रन्थ
मेधातिथि	मिथिला	१००	मेधातिथि भास
विज्ञानेश्वर	कल्याणवेवार	११००	मिताक्षरा
लक्ष्मीधर	कथोज	१३४३	स्मृति कल्पतरु
हलायुध	बगाल	१२००	ब्राह्मण सर्वत्व
वेवण भट्ट	बझिन मारत	"	स्मृति चन्द्रिका
हेमाद्रि	देवगिरि	१२६०	चतुर्वर्ग चिन्तामणि
कुल्लूक भट्ट	काशी	१०००	मन्वर्थ मुक्तावलि
बीरमित्रोदय	मिथिला	१३००	बीरमित्रोदय
माधवाचार्य	विजयनगर	१४००	पाराशर माधव
नीलकण्ठ	कोकण	१०००	मयूख
अपरार्क	काशी	१४००	अपरार्क
चण्डेश्वर	बगाल	"	स्मृति रत्नाकर
जोमूतवाहन	"	"	धमरत्न
रघुनन्दन	"	१६००	स्मृनितत्व
कमलाकर	काशी	"	निर्ययसिन्धु
नीलकण्ठ	"	११६१	भगवन्त भास्कर

सूत्र के ऊपर लिखी टिप्पणी से चल सकता है। विजयनगर के प्रधानमंत्री माधवाचार्य के ग्रन्थ में तो थोड़ा बहुत परिस्थितियों का विवेचन तो होना ही चाहिए था।

किन्तु बात बही थी, उनकी दृष्टि ने धर्म इस लोक में आने वाली वस्तु न थी न उसके लिए यह आवश्यक था कि उसका बुद्धि से कोई तालमेल बैठता है या नहीं? उस समय धर्म के नाम सब सौदा उधारलाते निकला था। नकद उसकी एक कौड़ी भी न मिलती थी। सबका फल परलोक में मिलता था, इस लोक में नहीं। सत्य बोलना धर्म है। क्या लाम हैं इसके? इसका लाम परलोक में प्राप्त होगा।

ऋषि ने इस विष्मोह को दूर करने के लिए ऋषि कणाद के शब्दों को स्मरण कराया—“यतोऽभ्युदय नि श्रेयस-सिद्धि सधर्मं” धर्म से लोक और परलोक दोनों सुधरने चाहिए। धर्म का प्रथम फल अभ्युदय होना चाहिए और दूसरा नि श्रेयस। वस्तुतः अभ्युदय के बिना नि श्रेयस ही नहीं सकता।

दूसरे सनातन धर्म बह हो सकता है जो सब समयों की समस्या का समाधान करने की क्षमता रखता हो। जो धर्म आज की अडचन को दूर नहीं कर सकता। उसे आज जो बित रहने का कोई अधिकार नहीं वेद ने सनातन धर्म की परिभाषा इस प्रकार की है—

“सनातन धो न माहुरुक्ताव स्यात् पुनर्भव।” सनातन उसे कहते हैं जो सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है किन्तु अगर कोई नवीन परिस्थिति आती है तो उसके लिए पुन नव फिर नया रूप धारण करके सामने आता है।

बस हमारे धर्म की यह क्षमता नष्ट हो गई थी। दूसरे शब्दों में धर्म का नाम तो था उसमें प्राण नहीं थे। बलपूर्वक मुसलमान बनाया हुआ एक हिन्दू बार बार दुहाई दे रहा है कि यह कुकृत्य मुझसे बलपूर्वक कराया है। इसमें मेरा क्या अपराध है? आप जो चाहें मुझसे प्रायश्चित्त करा लें किन्तु धर्माचार्यों का एक ही उत्तर था कि बस तुम पतित हो गये। गोरी ने अपनी कीर्तियों के सामने गोएँ खड़ी कर लीं और उन्हे देखकर हमारे सिपाहियों ने अपनी तलवारें म्याम में डाल लीं। उस क्षण

मेधातिथि के पण्डित का विद्वान् लोहा मानते हैं। विज्ञानेश्वर की मिताक्षरा महाराष्ट्र के हिन्दू कानून के रूप में प्रचलित रही है। चतुर्वर्ग चिन्तामणि में हेमाद्रि ने दान, तीर्थ और मोक्ष जैसे विषयों के वचन सघीस किये हैं। कुल्लूक की मनुटीका सर्वाधिक प्रसिद्ध है, माधवाचार्य का पाराशर माधव पाराशर स्मृति में भी अधिक प्रचलित है।

किन्तु किसी भी लेखक ने यवनों के अत्याचारों से देश में जो हाहाकार मचा हुआ था उसकी ओर दृष्टिपात नहीं किया। हिन्दुओं को अपनी कुरीतियों को छोड़ने की प्रेरणा करनी चाहिये थी। उस समय के राजा तक अल-कार शास्त्र का निर्माण करते थे। उनकी दृष्टि में सेनापति से राजकवि का अधिक महत्व था, और राजाओं के लिये रणभूमि से रणभूमि अधिक प्रिय थी।

और तो और भी शकराचार्य का क्षेत्र उत्तर भारत था और मुहम्मद बिनकासिम के आक्रमण भी उत्तर भारत में हुए। किन्तु आचार्य ने उनके लिए कहीं एक शब्द तक नहीं लिखा। उनके विचार कितने सफ़ीर्थ थे इसका ममूना उनकी प्ररन्तरी के स्त्री विषयक प्रश्नोत्तरों से और वेदागत दर्शन के “अधनाध्ययन प्रतिषेधात् स्मृतेश्च”

किसी धर्माधार्य ने यह व्यवस्था नहीं की कि पराधीनता सबसे बड़ा पाप है उससे बचो। युद्ध में कुछ गोरें बलिदान हो गयीं तो विजय प्राप्त करने पर शेष योद्धों का जीवन तो सुरक्षित हो जायेगा। श्रद्धि पाराशर ने अपनी स्मृति में यह व्यवस्था दी भी है।

“गवा सरक्षणार्थाय नृष्येद्रोषबन्धयो बद्धछानु नवत-
द्विधात् कामाकामरतहि तत्” अर्थात् लक्ष्य यदि गोओं का
संरक्षण है तो फिर रोष, बन्ध और बध में भी कोई दोष
नहीं है।

श्रद्धि और आर्यसमाज ने उस भ्रान्ति का निवारण
किया और उसका प्रभाव बिलसाई दिया। सन् ४६ में
नोबासाली बंगाल में बलपूर्वक मुसलमान बनाये गये
हिन्दुओं पर उस समय काशी की विद्वत्सभा ने १० प्रस्ताव
पास किये, जिनमें से एक प्रस्ताव यह था कि वे हिन्दू
वास्तव में मुसलमान बने ही नहीं जबकि उनकी मन
स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। अतः उनको अपने
धर्म में सम्मिलित करने के लिए शास्त्रोपयुक्ति विधान
की कोई आवश्यकता नहीं। ये तो केवल गमाजल छिट्ठक-
कर के ही पवित्र कर लेने चाहिए।

यह है इस मुद्दे में प्राणो का संचार बस्तुतः यह बहुत
बड़ी क्रान्ति है।

अतः श्रद्धिबर मैं तो आपको पण्डितराज जगन्नाथ के
उन शब्दों में श्रद्धाजलि देता हूँ।

तोयैरत्परपिकरुणया भीममानो निवाचे, मालाकर
शरच्चि भवता या तरोरज्यपुष्टि ।

सा कि शश्या जनपितुमिह प्रावेष्येन वाराम्, धारा
सारानपि त्रिकरता विश्वतो वारिदेन ॥

हे माली मयकर झलसाने वाली गर्मी के बिनों में
पानी के छोटे छोटे घडों से सोंच कर उस वृक्ष को जो तुने
जीवनदान दिया। उसकी तुलना मूसलाधार पानी बरसाती
हुई वर्षा श्रुतु की घनघोर घटाए नहीं कर सकती।
बर्षा कि इस सुखमय समय के वदान तुम्हारी कृपा से ही हो
रहे हैं।

यही बात बिल्कुल इन्हीं शब्दों में श्रद्धि को कही जा
सकती है कि—न्वतत्रता और भारत की मौलिक उन्नति
की योजनाओं का श्रेय चाहे कोई ले ले, पर यदि उस
समय भारत को तुमने न बचाया होता तो उसे वेदाने यहाँ
कीन बचता। श्रद्धिबर तुम धन्य हो!

आर्यमित्र की उन्नति के लिए—

डा०सूर्यदेव शर्मा स्थिर निधि

अन्तरग सभा वि० १-५-६३ के निश्चयानुसार

विषय सत्या

२४ श्री प० सूर्य
देवजी शर्मा एम-
ए० अजमेर का
आर्यमित्र सहाय-
तार्थ बन दिये
जाने विषयक पत्र
विचारार्थ प्रस्तुत
होकर श्री शर्माजी
का पत्र पढ़ा गया।
निश्चय हुआ कि
शानी सज्जन की
निम्नशर्तों के लिये



चार सहज रूपया
दान लेना स्वीकार
किया जाये। धन प्राप्त
होने पर एफ०-
डी० में जमा किया जाए।

श्री डा० सूर्यदेव जो शर्मा

१—इस निधि का नाम डा० सूर्यदेव स्थिर निधि होगा।

२—इस निधि की धन राशि स्वयंसे रूप में सभा में पृथक
जमा होगी।

३—इसके व्याज से प्रति वर्ष सार्वजनिक सभाओं, पुस्तकाल-
यों एवं वाचनालयों को आर्यमित्र लागत मूल्य में
दिया जाया करेगा। कर्त्तव्य में श्रेय धन आर्यमित्र की
उन्नति में लगाया जायेगा।

४—वर्ष में कम से कम दो बार जनवरी, जुलाई मास में
इस निधि की सूचना प्रमुख शर्तों के साथ ‘आर्यमित्र’
में प्रकाशित होगी।

५—सम्मान रूप में ‘आर्यमित्र’ सदा शानी सज्जन को भेजा
जाया करेगा। जहाँ-जहाँ आर्यमित्र जायेगा, उसकी
सूची शानी सज्जन के पास भेजी जाया करेगी।

६—आर्यमित्र का प्रकाशन बन्द हो जाने पर इस निधि का
व्याज वैधिक साहित्य प्रकाशन में लगाया जायेगा।

—चन्द्रवत् तिथारी

संस्था, धार्य प्रतिनिधि सभा, कलकत्ता,



समाज का वर्तमान रूप बदलना होगा

[लि०—श्री विश्वम्भर सहाय जी 'प्रेमी', मेरठ]

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज का मूलाधार मानव जीवन की पवित्रता माना था। ऋषि चाहते थे कि वेदानुकूल आचरण करने वाले आर्य इस देश की पतन के गर्त से निकालकर उन्नत करें और जो देश सत्सार भर में अपने चारित्रिक बल पर सर्वश्रेष्ठ रहा, वह अपनी पूर्ण प्रतिष्ठा को पुन प्राप्त करने में सफल हो।

मुझे स्मरण है कि अब से पचास वर्ष पूर्व जो व्यक्ति आर्यसमाज में प्रवेश करते थे, वे चरित्रवान और अपनी बात के सच्चे होते थे। वे अपने आचरण में कोई भी ऐसी बात नहीं आने देते थे, जिसे धर्म के विरुद्ध समझा जाता हो। उस समय के आर्यसमाजी धर्मानुकूल आचरण करना अपना कर्तव्य समझने लगे थे और वे अपने व्यवसाय में पूर्ण ईमानदारी बरतने का यत्न करते थे।

इस प्रकार के आयसमाजियों ने समूचे राष्ट्र को एक नई विद्या का ज्ञान कराया। उसमें जहाँ धार्मिक व्यवहार की बात थी, वहाँ उसी के साथ साथ आर्यसमाज ने राष्ट्रिय चेतना के लिये भी विचार दिये। उन विनों राष्ट्रिय विचारों की बात करना एक प्रकार का खतरा मोल लेना था क्योंकि १८५७ के आन्दोलन को दबाकर अंग्रेज शासक काफी कठोरता से शासन चला रहे थे।

आर्यसमाज ने जनता के नैतिक बल को बढ़ाया। आर्यसमाज में आने वाले लाखों नर-नारियों के विचार परिष्कृत हुये और उनमें धार्मिक माननायें ज्यों। आर्य समाज ने किसी एक स्थान में नहीं किन्तु अपने देश के प्रायः सभी भागों में सामाजिक जीवन में परिवर्तन लाने का यत्न किया। सबसे बड़ी समस्या आर्यसमाज ने उस समय यह मुसद्दाई कि सामाजिक बन्धनों और आर्थिक कठिनाइयों के कारण जो हिन्दू, मुसलमान या ईसाई बन रहे थे, उनको सावधान किया। इतना ही नहीं किन्तु उनको सब प्रकार की सहायता भी दी। इस प्रकार आर्य समाज ने अपने देश के सामाजिक जीवन को उन्नत करने

का यत्न किया।

अब हमें आज की स्थिति को देखना है। पन्द्रह सोलह वर्षों में जहाँ हमारे देश ने स्वतन्त्र होकर समार के बड़े देशों के समान राजनीतिक क्षेत्र में अपना सम्मान बढ़ाया, वहाँ अपने नैतिक बल और आचार-विचार को काफी गिरा लिया। जो बातें सबसे शीघ्र पचोस वर्ष पूर्व कल्पना में भी न आती थीं, वे सामने आ रही हैं। छोटे से बड़े तक में इस समय धन कमाने की दौड़ तो लगी हुई है। आज कुछ लोग ऐसे हैं जो धर्म और ईमान को बेचकर मालदार बन जाना अधिक पसन्द करते हैं। उनको न समाज की चिन्ता है और न राष्ट्र की।

आज सामाजिक जीवन इतना अस्त व्यस्त हो गया है कि उसमें सच्चे और ईमानदार व्यक्तियों को गुजारा करना कठिन हो रहा है। मानव जीवन के लिये जिन वस्तुओं की आवश्यकता हैं, वे भी शुद्ध मिलनी दुर्लभ हो गई हैं। मिलावट ने सारे ही राष्ट्र को क्षिन्ता में डाल दिया है। यदि वेला जाय तो सार्विक प्रवृत्तियों का अभाव सा होता जा रहा है। आय समाज जिन धार्मिक विचारों को फँलाकर जनता में शुद्ध विचारों को लाने का यत्न करता था, वे विचार भी आज कोई सुनने को तैयार नहीं।

किर भी आवश्यकता इस बात की है कि आर्यसमाज ऋषि दयानन्द के विचारों को फँलाने का यत्न करे। आज भी आर्यसमाज का व्यापक सगठन यदि सक्रिय हो जाय तो सामाजिक जीवन में एक बड़ा परिवर्तन ला सकता है। चरित्र बल के सहारे जिस आर्यसमाज ने सामाजिक-कुरीतियों मिथ्या-विश्वासों और विधिमियों के कुचक्रों से अब से ५० सठ वर्ष पूर्व मोर्चा लिया था, वह आज भी वर्तमान भ्रष्टाचार और सामाजिक बोधों से दूर करने में सफलता प्राप्त कर सकता है।

समझा ऐसा जाता है कि इस समय आर्यसमाज में (शेष अगले पृष्ठ पर)



(पृष्ठ ३९ का शेष)

पहले जैसी तेजस्विता नहीं, उरसाह नहीं और नैतिक बल नहीं। यह बात किसी अज्ञ तक ठोक है परन्तु हमे समझना चाहिये कि आर्यसमाज में आज भी तपस्वी और ईमानदार व्यक्ति हैं। आर्यसमाज मे काम करने वाले लाखों व्यक्ति आज भी ऐसे हैं जो ईमानदारी से अपना निर्वाह करते हैं। और आर्यसमाज मे आज भी ऐसे व्यक्ति मिलेंगे जो पीडित मानवों की भलाई मे अपना समय लगाने को तैयार हैं।

आर्यसमाज यदि सगठित रूप से जनता के कष्टों को दूर करने मे सहायता करने का कोई कार्यक्रम बनाये तो कोई कारण नहीं कि तुलसी जनता उसकी ओर आकर्षित न हो। मे यहा किसी भी राजनैतिक दल की आलोचना नहीं कर रहा है परन्तु अपने अनुभव से इतना कहना आवश्यक समझता हू कि देश के प्राय सभी राजनैतिक दल चरित्र-निर्माण की दृष्टि से मौन धारण किये हुए हैं। राजनैतिक प्रवाह मे बहकर वे अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिये अनुचित और उचित दोनों प्रकार का मार्ग अपनाने को तैयार हैं। ऐसी बसा मे आर्यसमाज यदि जनता की कठिनाइयों को दूर करने मे सहायता देता है और जनता को गलत माग पर चलने से सावधान करता है, तो सचमुच इस युग की एक बड़े काम की पूर्ति करता है। इस समय राष्ट्र के चरित्र की रक्षा करना एक महान

कार्य है। आर्यसमाज इसे अपने ऊपर उठाये, यह आर्य समाज का गौरवपूर्ण कदम होगा।

महर्षि दयानन्द के बीर सैनिकों की अपने आचार्य के प्रति यह सच्ची और सामयिक श्रद्धांजलि होगी।

सभा का नवीन प्रकाशन

पृथिवी माता की महिमा के उपरान्त आ० प्र० समा का प्रकाशन-विभाग महान् दयानन्द शीर्षक एक अत्यन्त मौलिक एव अनुसंधान पूर्ण पुस्तक प्रकाशित कर रहा है। इस पुस्तक मे श्रुति दयानन्द के धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, वाशानिक, सांस्कृतिक एव राष्ट्रीय क्षेत्रों मे किये गये महान् कार्यों का दिग्दर्शन कराया गया है। लगभग ७० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य केवल ३७ न पें मात्र होगा।

पूब से आर्डर भेजने वाले आर्यसमाजों को पुस्तक २५ प्रतिशत कमीशन काट कर भेजी जावेगी।

शिवदयालु

अधिष्ठाता घासीराम प्रकाशन विभाग,
आ० प्र० समा, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

लक्ष्मणधारा

हमेशा पास रखिये

दूध, दही, दाल, गेट का दर्द, बी
मिष्रजाना, बच्चा, सर्दी, जुकाम, मंदागि,
नजर बन्दि रोमों से बचने के लिए संसार
की प्रतिद्व यौगिय।

बचने स्थानीय विक्रेता मे
प्राप्त करें —



रूप बिलास कम्पनी कानपुर

विशेष हाल जानने के लिए सूचीपत्र मुफ्त।

आवश्यकता है

सुन्दर, गृह कार्यों मे बस कुलीन
राजपूत कन्याओं (१) को ए बी टी.
आयु २६ वर्ष, (२) एम एस सी. (फर्स्ट
क्लास) आयु २४ वर्ष के लिए योग्य,
स्वस्थ कुलीन आयु वर्षों की।

पत्र व्यवहार निम्न पते पर करें—
रजनीतसिंह द्वारा आर्यभट्ट
५ भीराबाई मार्ग लखनऊ



दिवाली का सन्देश और एक टीस



(रचने-श्री वेंच राजबहादुर जी आर्य "सरस")

(१)

(७)

आकर के प्रतिवर्ष दिवाली देनी है तुमको सन्देश-
गति बिधि मूल रहे तुम अगने भूले ऋषिबर का उपदेश-
यद्यपि थोड़े थे हम वहिले किन्तु टीस थी और लगन-
नहीं थकावट कमी व्यापकी कार्य मे थी सतन लगन ।

(२)

आर्य पयिक थे लेखराः राजपतिराज शेर पञ्जाब-
माधोसिंह नायमल आदिक रहा कार्य करने का नाव-
हसराज आर्यपुनि असीचन्द बस्तीराम बर्षानानन्द,
गणपति तुलसीराम अद्धान - गुरुवत्त और सर्वदानन्द ।

(३)

निरमूल लौटे नहीं कहीं गुरुकुल ही घन लाते थे-
जहा पहुंच जाते थे जन श्रद्धा के पुष्प चढ़ाते थे ।
नहीं संस्कृत का प्रचार था तो भी गुरुकुल खूबवाये-
और उम्हीं के बच्चे लेके उनमे दाखिल करावाये ।

(४)

धर्म कर्म के बीचाने उरु ३ चरित्र के घनी सबा-
यद्यपि राज्य पराये मे था तो भी रहती बनी सबा ।
वृत्तधारी उपकारी निशिदि-पाला ऋषिबर का आवेश-
रहा लक्ष्य जीवन मे उरु ३ ऊँचा होवे अपना देश ।

(५)

नहीं रहे वह पद के भूले ही- न अधिकारों का ध्यान
मन्त्री बने प्रधान न सोचा कहा हो रहा कितना मान ।
चिन्ता थी तो यही देश- होवे वैदिक धर्म प्रचार-
गुरुदम गढ़ पाषण्ड पुराण-विक मिट जाये अष्टाचार ।

(६)

किन्तु आज विपरीत दशा जान कही भी जाती है-
देख देख कर दग अवस्था कुछ लज्जा सी आती है ।
यद्यपि सहाय बहुत बढ़ गई किन्तु न बीसे उतना कार्य-
भूल रहे वैदिक परम्परा और बन रहे अश्वयज्ञाचार्य ।

करते सत्याग्रह हिन्दी पर गीत संस्कृत के गाये-
किन्तु गुरुकुलो मे बच्चे अपने न देखने मे जान ।
बच्चे अंग्रेजी पढ़ने हैं और विनये गाता है-
कोट पेट टोप मे सदा अंग्रेज दृष्टि ही जन है ।

वस्त्र पहनते किन्तु जमेडा के रंगे न दिखते इ-
बाल रखे हैं किन्तु पिछा का लिङ्ग न जिर पर पाये है ।
सन्ध्यकाल बिभ्रपट देव अभिहोत्र गणेश-
घरती अम्बर का अन्तः है आज भाप श्रीवेदी मे ।

(९)

वैदिक शिक्षा संस्कार गडि पवित्रम माया का उपयोग-
चले गये अंग्रेज न छूटा अंग्रेजी दुष्टा क राः ।
है चरित्र का पाठ कटा सादा जीवन का कहा विचार-
फिर कष्टिये बन जाये बसे सत्तानो के सत्त विचार ।

(१०)

बिलासिता जीवन मे रूपाश्री वो अप फसाले -
देश पुराने को तजने मे हा हा हम न लज्जाते हैं ।
पतिव्रताओं के से सादा जीवन उच्च विचार कट-
देवी लेडी बनती जाती विगचोन व्यवहार कर ।

(११)

लेख कलेबर बढना जाता, दशा देख मन होना रूपा-
दयानन्द के मन्त्रार्थों से अब विचार पता है निरा ।
अरे न लज्जा आनी हमको धिमराते जाये निरा टक-
इसीलिए क्या ? दशानन्द न विद्य के पगले पिय बनेक ।

(१२)

त्याग अवदिक परम्परा कर ऋषि गिजन पुरा जाज-
तमी जगत मे कहलायेगा सच्चा वैदिक आर्य समाज ।
सुघरें स्वय और भी सुघरेंगे तब मुन वैदिक उपदेश-
"सरस" दिवाली बीपो मे खोजो ऋषि का उल्लिख संस्दर ।





आर्यसमाज की वर्तमान युग में आवश्यकता



(ले०-डा० हरिवल्लभ जी शास्त्री, वेदान्ताचार्य एम०ए०, पी०एच० डी०, एकादशतीर्थ, अष्टम संस्कृत विभाग, वयानन्द कालेज कानपुर)

महर्षि वयानन्द सरस्वती ने 'आर्यसमाज' को सुधार करने के लिए ही स्थापित किया था। मानव समाज में जो बुराइयाँ हैं उनको दूर करना ही आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है।



लेखक

कुछ लोग यह कहते हैं कि अब तो भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया है इसलिए आर्यसमाज की कोई आवश्यकता नहीं है। जो लोग ऐसा कहते हैं वे भूल करते हैं क्योंकि अभी समाज में अनेको दोष हैं जिनका दूर करना 'आर्यसमाज' का कर्तव्य है। 'आर्यसमाज' कोई सम्प्रदाय या मत नहीं है वरन् यह एक सुधारक संस्था है। आर्यसमाज ने सर्व प्रथम धार्मिक अज्ञान के अन्तिम मचायो, क्योंकि धर्म के नाम पर इस जगत में अनेको दोष हैं। इसलिए महर्षि वयानन्द जी सरस्वती ने जीवन पर्वत धार्मिक सुधार किया, अनेकों शास्त्रार्थ किये। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ 'मर्यादा प्रकाश' के उत्तराह्न भाग अर्थात् ११ वें से ४ सप्तललास तक पौराणिक, नास्तिक, बौद्ध, जैन, त्रिदिग्गवन और मुहम्मदी मत की प्रबल शक्तियों में आलोचना की है। इससे धार्मिक अज्ञान के अनेको सुधार हुए। अनेक पौराणिक प्रस्तर पूजा, अवतारवाद, जन्मना बर्णशुद्धस्था, बाल विधवाहोत्र, तीर्थों में मिथ्या विश्वास को परित्याग करके वेदों का प्रचार करने लग गये हैं। ईसाई और मुसलमान बड़े प्रबल वेग से हिन्दू जाति को हड़पने में लगे थे उनका प्रवाह अबश्य कुछ कम हो गया है। अभी भी 'कुश्वन्तो विश्वमार्यम्' के अनुसार सम्पूर्ण विश्व को आर्य बनाने का कार्य शेष है। अत आर्यसमाज की वर्तमान युग में अत्यन्त आवश्यकता है।

आर्य और वे राजपूत ब्राह्मणों में ऐते मिल गये कि उनका पता भी नहीं चलता है।

आज हिन्दू जाति को पावन शक्ति निर्बल हो गई है अग्यथा काश्मीर और पूर्वी पाकिस्तान की समस्या हल हो गई होनी क्योंकि इन दोनों स्थानों में सब मुसलमान हिन्दुओं में बने हैं।

आर्यसमाज के प्रमुख कार्यों को हम ५ भागों में विनक्त कर सकते हैं (१) धर्म प्रचार (२) समाज सुधार (३) शिक्षा सुधार, (४) राजनैतिक सुधार (५) सांस्कृतिक उद्धार।

धर्म प्रचार

अभी भी बी० ए०, एम० ए० पढ़ लिये लोग गोबर गणेश की, पावाण की पूजा करते हैं, मृत प्रेत आदि मिथ्या विरवास करते हैं। अत अभी आर्यसमाज को वेद-सन्देश का प्रचार करना है। यह कार्य प्रबल वेग से होना चाहिए। धार्मिक प्रचार के ढंग की शिक्षा हमको ईसाई धर्म प्रचारको से सीखनी चाहिए। आज जगलों, पहाड़ों में भी विदेशी ईसाई मिशनरी किस प्रकार स्कूल, आतुरालय आदि खोलकर अपने धर्म का प्रचार करते हैं। उनमें कितना त्याग और कितनी तपस्या है। यदि ५० सत्त्वे वानप्रस्थी और आर्य सन्यासी वैदिक धर्म में अपना जीवन अर्पण कर दें तो प्रबन्ध आर्यसमाज का लक्ष्य पूरा हो जायेगा। यह सराका युग नहीं वरन् प्रचार-युग है। आर्य

हिन्दुओं से जो मुसलमान, ईसाई हो गये हैं उनको अभी सुद्ध करके हिन्दू जाति में मिलाने का कार्य शेष है। इस देश में शक, हूण, क्षत्रप, यवन प्रभृति अनेकों विदेशी

समाज का ध्यान केवल सस्थाओं के निर्माण में है। आर्य-समाज के स्कूल, कालेज तो अनेकों हैं पर क्या उनसे आर्य विचारधारा के छात्र निकलते हैं? नहीं। आज स्कूल, कालेजों में भी धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता है। महात्मा बुद्ध के अनुयायियों ने किस प्रकार सामारिक सुखों को परित्याग कर जैन, जापान, ग्रीस, सीरिया, लता प्रभृति विदेशों में बौद्ध मत का संदेश फैलाया उन्ही प्रकार महर्षि बयानन्द जी के सच्चे अनुयायियों को भी धार्मिक क्षेत्र में आकर वैदिक धर्म का प्रचार करना चाहिए। आज तो आयसमाज में कुछ प्रच्छन्न तस्कर प्रवेश कर गये हैं जो बाह्य प्रभ, माध्य, वेदमाध्य पत्रिका के नाम पर धन आर्य जनता में मांग भागकर हड़प कर जाते हैं। ऐसे बन्धु लोगों से आर्यसमाज को सावधान हो जाना चाहिए।

आज पाश्चात्य देशों में भी सन्देश सुनाने की अत्यन्त आवश्यकता है। समस्त विश्व की आँखें आयसमाज के सच्चे प्रचारकों की ओर लगी हुई हैं। बंगाल, असम, काश्मीर, दक्षिण भारत में आर्यसमाज का प्रचार नाममात्र का है। समस्त बंग प्रान्त असम प्रान्त तान्त्रिक है। वहाँ के लोग मत्स्य भोजी हैं। उनमें प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है।

महर्षि बयानन्द जी सरस्वती कृत "सत्यार्थ-प्रकाश" को उर्दू, मराठी, गुजराती, बंगाली, असमी, तामिळ, तेलगू, मलयालम, कन्नड़ी तथा पाश्चात्य भाषाओं में अनुबाध करके विस्तारपूर्वक प्रचार करना चाहिए। क्रिश्चियन मत का ग्रन्थ 'बाईबिल' आज प्रायः समस्त भाषाओं में अनुसृत है। इससे भी आर्यसमाज को शिक्षा लेनी चाहिए। आर्य-जगत् की शिरोमणि "धोमती सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा, बयानन्द भवन, नई दिल्ली" को इधर ध्यान देना चाहिए।

समाज सुधार

हिन्दू समाज में अन्ध-विश्वास और रुढ़िप्रथा का बोलबाला था। स्त्री, शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार न था। परवा, वृद्ध विवाह, बाल-विवाह आदि क्रूरतियाँ समाज में प्रवेश कर गई थीं। महर्षि बयानन्द जी ने यजु० ९६:२ के आधारे पर स्त्री, शूद्र सभी मानव मात्र को

अधिकार बतलाया। इस प्रकार से आज सहस्रों नारियाँ विद्युत् हो गई हैं और सहस्रों शूद्र वेदों के पण्डित हो गये हैं फिर भी अभी प्रचार की आवश्यकता है। आज आर्य-समाज के प्रचार से शिक्षिता नारियाँ परदा नहीं करती हैं। परवा प्रथा वास्तव में हिन्दू समाज का एक अभिशाप है। वैदिक काल में तो परवा एकदम नहीं था। उस समय स्वयंवर प्रथा के कारण परदा को कोई जानता भी नहीं था।

मुसलमानों के आगमन में हिन्दुओं में यह बुराई घुम गई है। अभी भी भारतभर में वृद्ध-विवाह तथा देहातो में बाल-विवाह की घटनाएँ पाई जाती हैं। यद्यपि शारदा एक्ट में बाल-विवाह का निषेध है फिर भी यह एक्ट पूर्ण रूप से लागू नहीं है। सरकार को इस ओर कड़ा बानून बनाना चाहिए। वेदादि सच्छास्त्रों में कहीं बाल और वृद्ध विवाह की चर्चा तक नहीं है। वैदिक काल में लड़कियों का प्रौढ़ावस्था में विवाह होता था।

अस्पृश्यता रूपी कोढ़ का पीछा अभी भी नहीं छूटा है। सरकार ने विधान बनाकर इसे दूर करने का प्रयास किया है फिर भी इधर आर्य समाज को ध्यान देना चाहिए। महात्मा गांधी ने अछूतों को 'हरिजन' नाम देकर रुढ़ि बना दिया है।

शिक्षा सुधार

भारतवर्ष में शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन की निताम्त आवश्यकता है। भारत के स्वतन्त्र होने पर भी अंग्रेजी भाषा का मोह नहीं हटा है। आज हम अंग्रेजी भाषा को ही सर्वोत्तम समझ बैठे हैं। महर्षि बयानन्द जी सरस्वती ने गुजराती होते हुए भी अपने प्रयोगों को संस्कृत व हिन्दी भाषा में लिखा। वे दूरदेश थे। वे हिन्दी (आर्य) भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में देखने का स्वप्न देखते थे। हमें जीवन से हिन्दी, संस्कृत भाषा के प्रचार में जुट जाना चाहिए। जिस देश की अपनी कोई भाषा नहीं वह देश दुर्बल है।

हमें भीषण आम्बोलन करके भी हिन्दी को राजभाषा पद पर स्थित करना चाहिए। हम आर्यों को सर्वत्र पन्नाधार में आर्यभाषा (हिन्दी) का ही प्रयोग करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ ४६ पर)



महर्षि दयानन्द और सुराष्ट्र निर्माण



[से०-५० धर्मदेव श्री विद्यामानन्ध (देवमुनि वानप्रस्थ) आनन्द कुटीर ज्वालापुर]

आदर्श समाज सुधारक के रूप में महर्षि दयानन्द का नाम इतना प्रसिद्ध हो चुका है कि उसकी यहाँ विशेष रूप से चर्चा करनी अनावश्यक है किन्तु यह खेद और आश्चर्य की बात है कि नवयुग विधाता और आदर्श भारतीय राष्ट्र निर्माता के रूप में उनकी इतनी ख्याति नहीं मिलनी होनी चाहिये थी। यद्यपि नेता मुन्नाबख्तर जी जैसे कई सुप्रसिद्ध राजनैतिक नेताओं ने उनके इस रूप को पहचाना और निम्न आशय के शब्दों में श्रद्धाजलि दी—

स्वामी दयानन्द सरस्वती उन महान् शक्तिशाली व्यक्तियों में से हैं जिन्होंने अर्वाचीन भारत का निर्माण किया और जो उनके नैतिक और धार्मिक पुनरुद्धार के लिए उत्तरदायी हैं। उनके द्वारा स्थापित आयसमाज निम्नोक्त हिन्दू भारत की समस्याओं के पुनर्निर्माण, सुधार और नवजीवन प्रदान करने वाले अत्यधिक शक्तिशाली तंत्रों में से एक है। हम देखते हैं कि उत्तर भारत में प्रचलित प्रभामाजी सबसे अधिक प्रभावशाली राष्ट्रीय नेता की है। वे परमा, दृढ़ता, सगठित कार्यक्षमता आदि की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। आयसमाज एक अत्यन्त स्वदेशी विकास है। अपने अग्रणी लेख के अन्त में नेता जी ने निम्नलिखित प्रायनाम सगवान से की थी—

‘श्री ईश्वर से प्रार्थना है कि स्वामी दयानन्द जी द्वारा स्थापित समाज अपने प्रवर्तक के अनुरूप तथा योग्य है और वह भारत की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक मुक्ति का कारण बन सके जिसकी हम सब इतना ध्यान करते हैं।’

उन श्रद्धाजलि के अन्तिम भाग में जो प्रार्थना है, उसमें स्वामी दयानन्द जी द्वारा आयसमाज की भारत की सामाजिक और आध्यात्मिक मुक्ति ही नहीं, परन्तु उसके साथ साथ आर्थिक और राजनैतिक मुक्ति का जो स्पष्ट निर्देश है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(२) आयस की मूल्य प्रथमा डा० ऐनी बोसेन्ट ने

अपनी (इण्डिया ए नेशन) नामक पुस्तक में तो अत्यधिक स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा की है कि ‘Swami Dayanandi was the first to proclaim India for Indians’

अर्थात् स्वामी दयानन्द प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने इस बात की घोषणा की कि भारत भारतीयों के लिए है।

(३) भारत के उपप्रधान मन्त्री, राजनीतिज्ञ शिरोमणि, लोह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल ने अपनी मृत्यु से कुछ ही दिन पूर्व ९ नवम्बर १९५१ ई० की देहली के रामलीला मैदान में महर्षि विचारोत्सव पर भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धाजलि इस आशय के शब्दों में प्रकट की थी कि ‘स्वामी दयानन्द एक वीर योद्धा और सत्य के सैनिक थे। वे एक वीर निभय पुरुष थे। उन्होंने हमें भी वीर बनना और बुराईयों के विपक्षी बनना सिखाया। वे भारतीय संस्कृति के सच्चे अनुगामी थे। उनके जीवन का प्रत्येक भाग भारतीय संस्कृति की सर्वोच्च महत्त्वपूर्ण शिक्षाओं के अनुकूल था।’ इत्यादि

(४) भारत के महामन्त्र राष्ट्रपति प्रहामनोषी डा० राधाकृष्णन् जी ने २४ फरवरी १९६१ ई० की श्रुतिबोध के अवसर पर रामलीला मैदान नई देहली में भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धाजलि इन महत्त्वपूर्ण शब्दों में प्रकट की थी—

‘स्वामी दयानन्द नवभारत के निर्माताओं में से सर्वोत्तम थे। उन्होंने राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भारत उद्वारण और मोक्ष के लिए निरन्तर प्रयत्न किया था। हिन्दू धर्म को सर्वदल आधार पर पीछे ले जाने में वे सर्व से प्रेरित थे। उन्होंने समाज को शुद्ध रूप में सुधारने का प्रयत्न किया था जिसकी आज भी आवश्यकता है। भारतीय सविधान में समावेशित सुधारों में से बहुतों की स्फूर्ति उनकी शिक्षाओं में मिली थी।’

इससे उल्लेख श्रद्धाजलि और क्या हो सकती है जो अतन्विषयात् महामनोषी डा० राधाकृष्णन् जी ने महर्षि

बयानम्ब के प्रति समर्पित की। इसमें उन्होंने स्वामी बयान व जी को एक धार्मिक और सांस्कृतिक सुधारक ही नहीं, राजनैतिक मुक्ति के लिए भी निरंतर प्रयत्नशील बताया है और यह स्पष्ट घोषणा की है कि उन्होंने भारतीय समाज का जिस प्रकार का सुधार किया, उसकी आज भी बड़ी भारी आवश्यकता है।

उन्होंने यह भी स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया कि भारतीय सविधान में समाविष्ट बहूत से सुधारों को स्वीकृत स्वामी बयान-व जी की शिक्षाओं से मिली। इनमें वे जानि भेद निवारण अस्पृश्यता-निवारण प्रजासत्त प्रशासन हिन्दी राष्ट्र भाषा और बेचनागरी लिपि-गोबध निषेध का भारतीय सविधान में निर्देशक सिद्धांत के रूप में प्रत्या-दान इत्यादि को गिना जा सकता है।

(५) स्व० भद्र व श्री पुष्टोत्तम दास जी टन्डन जिस समय कांग्रेस के प्रधान थे उस वर्ष ७ अक्टूबर १९५० ई० को आयसमाज चौक प्रयाग में भाषण देने हुए उन्होंने स्पष्ट घोषणा की थी कि-

‘ मैं स्वामी बयान-वजी की साम्प्रदायिक नहीं मानता, मेरे विचार में वे महान थे। उनका धर्म विस्तृत था। मैं उनका राजनैतिक पुरुष भी मानता हूँ।
स्वराज्य मूल मन्त्र प्रदाता—

प्राय यह कहा जाता है कि श्री बाबा भाई नीरोजी प्रथम राष्ट्रीय नेता थे जिन्होंने कांग्रेस के मन्त्र से सन् १९०६ के कलकत्ता अधिवेशन में सबसे पूर्व स्वराज्य शब्द का राजनैतिक अर्थ में प्रयोग किया किन्तु जब हम महर्षि दयानन्द लिखित सत्याप प्रकाश, आर्याभिविनय आदि पुस्तकों को देखते हैं तो यह विचार सव्या अशुद्ध प्रतीत होता है। सत्याप प्रकाश के अष्टम समुल्लास में स्वराज्य के महत्व को प्रकट करते हुए सन् १८७५ के लग-भग महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा था—

‘अब अमाग्योवय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अग्य देशों पर राज्य करने की तो क्या ही क्या किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अलक्ष्य स्वतन्त्र, स्वाधीन, निभय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ भी है, सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सचोपरि होता है। अथवा मतमतान्तर के

आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात न्यून, प्रजा पर पिता माना के समान कृपा ग्याय और बया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा पृथक पृथक अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति-दुष्टकर है। बिना इसके छूटे परस्पर का उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना अति कठिन है।’

[सत्याप प्रकाश अष्टम समुल्लास]

महर्षि दयानन्द के स्वराज्य के महत्व विवरण के शब्द स्वर्णशरीरों में लिखने योग्य हैं। ये शब्द सन् १८७५ के लगभग लिखे गये थे जबकि कांग्रेस की स्थापना सन् १८८५ में हुई। स० प्र० दशम समुल्लास में महर्षि ने लिखा—

‘जब स्वदेश में ही स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यवहार व राज्य करें तो बिना बारिद्वय और दुःख के दूसरा कुछ भी नहीं हो सकता।”

‘आर्याभिविनय’ नामक प्राथना पुस्तक में भी महर्षि ने अनेक स्थानों पर इस प्रकार की प्रार्थनायें लिखी हैं—

‘अग्य देशवासो राजा हमारे देश में कमी न हों तथा हम लोग पराधीन कमी न हों।

[रा० क० टूट स० सन् १९१४ पृ० २१४]

‘ऋतु नीती नो बध्ण’ इस ऋग्वेद मन्त्र की व्याख्या में महर्षि ने आर्याभिविनय में लिखा—“हम पर सहाय करो जिससे सुनोतिपुत्र होकर हमारा स्वराज्य अर्यन्त बढे।’

[क० टूट स० पृ ५३]

महर्षि दयानन्द स्वराज्य के लिये कितने उत्सुक थे और किस प्रकार निभयता से अपने विचारों को प्रकट करते थे यह उस भेंट के वृत्तान्त से बहुत अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है जो उनकी जनवरी सन १८७३ में उस समय के अंग्रेज गवर्नर जनरल लार्ड नार्थब्रुक से कलकत्ता में हुई। उनके यह करने पर कि मुझे अपने विचार प्रकट करने की अंग्रेजों राज्य में पूरी स्वतन्त्रता है जब बायस-राय ने कहा कि ‘यदि ऐसा ही तो क्या आप अपने देश में अंग्रेजों शासन द्वारा उपलब्ध उपकारों का भी बणन किया करोगे और अपने व्याख्यानो के प्रारम्भ में जो ईश्वर प्रार्थना आप किया करते हैं, उसमें देश पर अलक्ष्य अंग्रेजों शासन के लिये प्रार्थना भी किया करोगे ? इस पर महर्षि दयानन्द जी ने कहा—मैं किसी ऐसी बात को मानने में

असमर्थ हूँ क्योंकि मेरा यह बूढ़ विश्वास है कि मेरे देश-वासियों को अबाध राजनीतिक उन्नति और सत्कार के राज्यो में समानता का दर्जा पाने के लिये शीघ्र पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये। श्रीमान् जी! ईश्वर से नित्य साय प्रातः उतकी अपार कृपा से इस देश की विदेशियों की दासता से मुक्ति की ही मैं प्रार्थना करता हूँ।

राष्ट्र निर्माता के रूप में उन्होंने जो अब्भूत कार्य किये उनमें सन् १८७७ में देहली दरबार के अवसर पर सर्वप्रथम ऐश्वर्य सम्मेलन का आयोजन जिसमें श्री केशवचन्द्र सेन, नवीन चन्द्र राय, सर सैयद अहमद खान आदि सम्मिलित हुए, आर्य भाषा (हिन्दी) को राज्य भाषा बनाने के लिए प्रबल प्रयत्न करना और 'मेरी आँखें उस दिन को देखने के लिए तरस रही हैं जब काश्मीर से कन्या कुमारी तक सब एक भाषा को समझने और बोलने लग जायेंगे' आदि हार्दिक उद्गारों का प्रकट करना, गोबध निषेध करवाने के लिये हस्ताक्षरादि द्वारा सगठित प्रबल प्रयत्न करना, स्वयं शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहनना और अग्र्यों को भी वसा करने की प्रेरणा करना आदि हैं। ऐसे स्वराज्य के मन्त्रवाता, नवयुग प्रवर्तक, अवशर्ष राष्ट्र निर्माता महर्षि दयानन्द जी को हमारा प्रणाम हो!

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ जो अनधिकारी सन्यास ग्रहण करेगा तो आप डूबेगा औरों को भी डबाएगा।

★ जो अविद्यायुक्त मूर्ख, वेदों के न जानने वाले मनुष्य जिस कार्य को कहें उसको कभी न मानना चाहिये क्योंकि जो मूर्खों के कहे हुए धर्म के अनुसर चलते हैं, उनके पीछे संकटों प्रकार के पाप लग जाते हैं।

संकर्ता—श्री प० कृष्णवत्स आयुर्वेदशास्त्रकार

(पृष्ठ ६३ का शेष)

राजनैतिक सुधार

महर्षि दयानन्द जी ने धर्माय, विधाय और राजाय तीन समाजो का निर्माण किया था। हमने राजाय समाज की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया इससे भारतवर्ष के शासन की बागडोर अयोग्य व्यक्तियों के हाथ में चली गई है।

महर्षि जी ने 'सत्याय प्रकाश' के छोटे समुल्लास में सचची राजनीति की चर्चा की है। 'स्वराज्य' शब्द का बार बार प्रयोग किया है। प्रजातन्त्र राज्य की महर्षि जी ने महानता बतलाई है। 'स्वदेशी' और 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द जी ने ही वर्तमान युग में किया। स्वदेशी राज्य, स्वदेशी वस्त्र, स्वदेशी भाषा पर महर्षि जी ने बड़ा बल दिया है। देशी रियासतों के सुधारने में भी महर्षि जी का हाथ था। कई नरेश उनके परम मत्त ब सिद्ध थे।

अतः आर्यसमाज को सामूहिक रूप से नहीं तो वैयक्तिक रूप से राजनीति में भाग लेकर कानि्त लानी चाहिए अन्यथा भारतवर्ष फिर भी दासता की बेड़ियों में अकड़ सकता है।

सांस्कृतिक उद्धार

वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ही पहले भारतीय हैं जिन्होंने भारतवर्ष में पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के बढ़ते हुए प्रवाह को रोका। लोग सब प्रकार के विज्ञान, कला-कौशल और दार्शनिक विचारों का आदि-जोत योरोप को मानने लगे थे, परन्तु महर्षि दयानन्द जी ने बताया कि जब पश्चिम के लोग मग्न रूप में अस्तम्य होकर जर्मों में भ्रमण करते थे उससे बहुत पहले हम भारतवासी उपर्युक्त सभी विषयों उन्नति के शिखर पर थे वेदों में देशमी वस्त्रों की धारण करने के लिये आवेस है और पाश्चात्यों की सम्मति में भी विद्वत् में वेद सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। हमारी वैदिक संस्कृति व सभ्यता प्राचीन व अनुकरणीय है। अनी हमें इनका प्रचार करना है।

आर्यसमाज के साहित्यिक व्यक्तित्व—

महर्षि दयानन्द सरस्वती



(ले०—श्री प्रो० भवानीलाल भारतीय एम० ए० अध्यक्ष—हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कालेज, पाली)

महर्षि दयानन्द के बहुमुखी व्यक्तित्व का अध्ययन अनेक दृष्टिकोणों से किया जा सकता है। वे एक महान्



लेखक

वेदवेत्ता, धर्म-सशोधक, समाज सुधारक, लोकनेता तथा सर्वसंग परित्यागी परिव्राजक थे। धर्म, समाज, राष्ट्र, राजनीति, भाषण, साहित्य आदि विभिन्न क्षेत्रों में उनका योगदान महत्वपूर्ण एवं स्वरणीय रहा है। महर्षि के द्वारा रचित ग्रन्थों का जब हम अध्ययन करते हैं तो हमें विदित होता है कि वे एक महान् साहित्यिक और उच्चकोटि के लेखक भी थे। उनका हिन्दी और संस्कृत दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। संस्कृत में उन्होंने आगवत ऋषि वेद-विषयक मत ऋषि, शिक्षा पत्रोच्चात्त निवारण, वेद-भाष्य, ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका अंश महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे। स्वरचित संस्कृत ग्रन्थों को उन्होंने प्राकृत (हिन्दी) भाषा में अनूदित भी किया तथा मौलिक रूप में भी विशाल हिन्दी ग्रन्थों का निरमाण किया। उनके द्वारा रचित साहित्य का प्रकाशन सहस्रों पृष्ठों के विशालकाय ग्रन्थों में हुआ है।

महर्षि कवि के रूप में महर्षि-दयानन्द वेदवाणी संस्कृत

के उच्चकोटि के कवि भी थे। उन्होंने ऋग्वेदादि-भाष्य भूमिका, वेदभाष्य, स्फकार विधि आदि ग्रन्थों के प्रारम्भ में स्वरचित श्लोक (पद्य) विद्ये हैं। ग्रन्थान्त की पुष्पिकायें भी अनुष्टुप छन्दों में प्रत्यकार द्वारा ही रची गई हैं। इन पद्यों से महर्षि का कवि रूप प्रस्फुटित होता है। ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के प्रारम्भ में आठ स्वरचित पद्य विद्ये हैं जिनमें दो शिखरिणी और शेष ६ अनुष्टुप छन्द हैं। इसी प्रकार अग्याय ग्रन्थों में उद्धृत महर्षि के द्वारा रचित श्लोकों की संख्या बहुत अधिक है। ५० बीरसेन जी वेदधर्मो ने महर्षि के संस्कृत भाषा के कवि रूप को अपने एक लेख (टकारा पत्रिका में प्रकाशित) में विवेचित किया है।

हिन्दी साहित्य को महर्षि की देन भी कम मूल्यवान् नहीं है। अपने वेदोपवेश काल के प्रारम्भिक माग में महर्षि संस्कृत भाषण और संस्कृत के माध्यम से ही बातलाप करते थे। उनकी संस्कृत अत्यन्त सरल, प्रसादगुण युक्त और साधारण पठित व्यक्ति के भी समझ में आ जानेवाली होती थी। महर्षि के ग्रन्थों की संस्कृत भाषा भी उपर्युक्त गुणों से युक्त है। वे मध्यकालीन संस्कृत कवियों और लेखकों की भांति अपनी भाषा को अनावश्यक शब्दाडम्बर युक्त, समासयुक्त घटाटोप भयो शैली से परिपूर्ण नहीं बनाते थे। अपनी विद्वत्ता का अनावश्यक प्रदर्शन उन्होंने कहीं नहीं किया। वे सुबोध शैली में अपने भावों को सरलता से व्यक्त करने के लिये परिमार्जित, परिष्कृत किन्तु सरल और प्रवाहपूर्ण भाषा लिखने के समर्थक थे। महर्षि के संस्कृत पद्य की तुलना महर्षि पतञ्जलि और वेदान्त साध्यकार शंकराचार्य के पद्य से की जा सक्ती है। उनके पद्य की प्राञ्जलता उसको निजी विशिष्टता है। शास्त्रीय विवेचन के प्रसंगों में उन्होंने सिद्धांत पक्ष और पूर्वपक्ष की पुरातन परिपाटी का निर्वाह किया है।

महर्षि की हिन्दी में बोलने और लिखने की प्रेरणा बाह्य नेता श्री केशवचन्द्र सेन से मिली। धर्म प्रचार के लिए लोक भाषा का ग्रहण सभी धर्मोपदेशकों ने किया है। महर्षि भी इसके अपवाद नहीं थे। महर्षि ने हिन्दी गद्य का एक नया रूप प्रस्तुत किया। सख्खन-मख्खन विचार विमर्श स्वपक्ष स्वापन और परपक्ष निराकरण के लिये जैसी महत्त्व सशक्त, व्यंग्यपूर्ण भाषा की आवश्यकता पड़ती है महर्षि की भाषा उसी का जीता जागता रूप है। महर्षि की हिन्दी सेवा का गौरवपूर्ण उल्लेख सभी इतिहासकारों ने किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में महर्षि की हिन्दी सेवा का विशद चित्रण किया है। हिन्दी भाषा सार के लेखक द्वय (लाला मगवानबीन तथा प्रो० रामबास गोड) की सम्मति दृष्ट्य है—“जनता के लाम की दृष्टि से मानुभाषा गुजराती होने पर भी इस दूरदर्शी और विद्वान् सन्यानी ने राष्ट्रभाषा हिन्दी का ही प्रचार किया। अपने ग्रन्थ भी हिन्दी में ही लिखे, हिन्दी की उन्नति और प्रचार आर्यसमाज का जिसके वह प्रयत्नक थे, एक विशेष लक्ष्य बनाया। अकेले इन स्वामी जी ने हिन्दी का जितना उपकार किया, हमारा अनुमान है कि अनेक सुसंगठित सस्थाओं ने मिलकर अब तक उनका नहीं कर पाया है।”

हिन्दी गद्यशैली का अध्ययन करते समय स्वामी दयानन्द को एक पुस्तक शैलीकार के रूप में परिगणित किया गया है। ‘हिन्दी गद्यशैली का विकास’ के लेखक प्रो० जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने एक पूरा अध्याय ही महर्षि की गद्यशैली को प्रदान किया है। इसी प्रकार ‘हिन्दी गद्य निर्माण’ के लेखक प्रो० प्रमनारायण टण्डन की सम्मति भी उल्लेखनीय है—‘तत्कालीन हिन्दी गद्य की उन्नति में

स्वामी दयानन्द ने महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश, वेदांग प्रकाश वेदों के माध्यम से आर्य ग्रन्थ को हिन्दी में लिखे लिखाये ही, साथ ही आर्यसमाज जैसी प्रगतिशील सस्था का सब काम हिन्दी में ही करने का आदेश दिया। स्वामी जी हिन्दी को भारत की व्यावहारिक भाषा और देश की भाषी राष्ट्रभाषा होने के योग्य मम करते थे।” इसी प्रकार प्रो० अयोध्यासिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ ने भी अपने ‘हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास’ शीर्षक व्याख्यानों में महर्षि की साहित्य सेवा पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

महर्षि के हिन्दी में रचित ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश सत्कार-विधि और ऋग्वेदादि-माध्य भूमिका की वृत्तत्रयी की सत्ता दी जा सकती है। उनकी लघुकृतियों का महत्त्व भी कम नहीं है। महर्षि ने संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। उनकी शैली में आवश्यकतानुसार व्यंग्य, विनोद, गम्भीरता तथा विश्लेषण प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। व्यंग्य-हार मानु तथा सत्यार्थप्रकाश के एक-दश समुत्पन्न म उन्हीं स्वर्चित तथा परस्पर प्राप्त अनेक कहानियों तथा वृष्टान्तों के द्वारा अपने अनिष्टों को व्यक्त किया है। इससे उनके कथा लेखक के रूप की भी झाकी मिलती हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्यसमाज की वेन शीर्षक प्रबन्ध-ग्रन्थ (Thesis) के लेखक डा० लक्ष्मीनारायण गुप्त ने स्वामी जी की साहित्य सेवाओं का सु-व्य विश्लेषण किया है। प्रस्तुत पक्तियों का लेखक भी ‘आर्य समाज का संस्कृत भाषा और साहित्य को योगदान’ शीर्षक विषय पर पी एच डी उपाधि के लिये अनुभवान कर रहा है।

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ मर्रा हुआ धर्म मारने वाले का नाश और रक्षित किया हुआ धर्म रक्षक की रक्षा करता है इसलिये धर्म का हनन कर्म न करना, इस उर में कि मर्रा हुआ धर्म कभी हमको न मार डाले।

★ कष्ट होने पर भी धर्म पर बढ़ रही रगिले कपड़े पहनने मात्र से सन्यासी नहीं होता।

★ कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।

सकलकर्ता—श्री कृष्णदत्त आपुर्वेदालकार, फंजाबाद



महर्षि गुणगान



वदानम्ब ऋषिब्राह्म तुम्हारे, गुण गण का हम करते गान ।
 देव तुम्हारे बिम्ब पुष्पो का, हम करते हैं मन मे ध्यान ॥
 कहां सत्य जिज्ञासा इतनी, कहां सत्य अनुराग ।
 सत्य प्रकट करने में तुमने, रक्षणा शुभ आदर्श महान् ॥
 ईश्वर की पूजा सिखलाई, भ्रम लीला सब दूर भगाई ।
 हितकर ओषधि हमें पिलाई, बिया देव का सच्चा ज्ञान ॥
 अग्यकार मे मटक रहे थे, वेद मार्ग को भूल रहे थे ।
 तुमने सच्चा मार्ग सिखाया, कर उन पर कथना का मान ॥
 कूट कूट कर बया मरी थी, उसमे तुम पाते आनन्द ।
 उससे प्रेरित होकर तुमने, किया बलि जनपतितोत्थान ॥
 वयासिन्धु तुमने बिबदाता, के भी प्राण बचाये थे ।
 कहां मिलेगा दूँवें से मी, ऐसी कथना का उद्यमान ॥
 ब्रह्मधर्म तप से ही तुमने, विजय मृत्यु पर पाई थी ।
 जिते वेल् गुडवत् कुनास्तिक, आस्तिक गण के बने प्रधान ॥
 लाखों की सम्पति ठुकराई, नहीं सत्य पथ छोडा ।
 वेद शास्त्र निश्चान शिरोमणि, नहीं कुछ तुमने अभिमान ॥
 इस युग मे तुमने ही पहले, था स्वराज्य का मन्त्र दिया ।
 जिसने देशभक्त गण मे फिर, फूँकी अद्भूत नूतन जान ॥
 सभी देशवासी अपनाएँ, सरल आर्य भाषा को ।
 यह सन्देश सुना तुम पाये, ऐक्य विधायक नायक स्वान ॥
 महिलाओं की विधवाओं की, बीन अनाथो की कुदशा ।
 उनका फिर उद्धार किये तुम कौन तुम्हारा करे न मान ?
 यह रूप निज जीवन करके, तुम तो अमर हुए विदुवेश ।
 धर्म वैदिक पर दीपावलि दिन, अमर तुम्हारा शुभ बलिदान ॥

—धर्मदेव विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ)

आनन्द कुटीर, उवालापुर



निर्वाण का स्वर



घोर तम छाया हुआ था जग में नम में निलय में,
 ज्योत्सना की एक रेखा भी न देती थी दिखाई ।
 ढोंग ओ पाखण्ड ही जब धर्म के शासक बने थे,
 स्वार्थ-ताजोरात जब जाने लगी सब को पढ़ाई ।
 विश्व का कण-कण रदन कर घीरने छाती लगा था,
 दौड कर निर्वाण ने निर्माण की गीता उठाई ।
 मूल शकर ज्योति वेदों की लिये उतरे धरा पर ।
 कौन कहता मोन जग में हो गया निर्वाण का स्वर ॥
 ओ३म् को लेकर पताका विश्व को सत्य सिखाया,
 खड कर पाखण्ड सारा, ढोंग का अस्तित्व टाया ।
 नाथ्य वेदो का किया तट जगत की आखें खुली है,
 पादरी, पडित, पुजारी पीर का छक्का छुटाया ।
 वो दिया सारा तिमिर सत्त्व की नव ज्योत्सना से,
 धर्म वैदिक पर मरो, कर्तव्य पर मरना सिखाया ।
 बने निर्भय सत्य पथ पर अन्नय की आराधना पर ।
 कौन कहता मोन जग मे हो गया निर्वाण का स्वर ॥
 शत्रुओ की चान शनरजी नहीं अब चल रुकेगी,
 जब कि आर्थो की समाजें विश्व के हर कोण में ।
 जा रही निर्भय तरी तूफान का मय ही नही,
 बँडे चतुर नाविक जहा रत्नेश' के हर ड्रोग में ।
 निर्वाण ऋषि का गुंजता नभ मे अमो मुन लो सभी,
 जय नाद वैदिक धर्म का होने लगा वश कोण मे ।
 एक जन भी अब न जायेगा अवैदिक राह पर,
 कौन कहता मोन जग मे हो गया निर्वाण का स्वर ।

—रतनलाल 'रत्नेश'

विज्ञानन्द विद्यालय, अजमेर





युगपुरुष महर्षि दयानन्द



[श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक, नई दिल्ली]

महर्षि दयानन्द सरस्वती युग पुरुष थे। उनका लक्ष्य धर्म की कुत्सित धारा को बदल कर उसे पवित्र रूप देना और मानव समाज के सर्वतोमुखी विकास और व्यापक हित में योगदान करना था। उनका देश में प्रादुर्भाव उस समय हुआ जबकि आर्य धर्म और आर्य संहिता के ह्रास की प्रक्रिया अपने उग्र रूप में थी और धर्म के नाम पर अधर्म का बोल बाला था।

उनकी शिक्षाएँ वेद ज्ञान पर आधारित थीं इसीलिए उनकी शिक्षाओं का प्रभाव हृदय और मस्तिष्क दोनों पर पड़ा जिन्होंने धार्मिक और सामाजिक विचार धारा में स्वस्थ परिवर्तन करके एक युग का सूत्रपात कर दिया।

उन्से पूर्व धार्मिक जगत् में भगवान् बुद्ध और महान् शक्राचार्य ने नवीन युगों का निर्माण किया था। भगवान् बुद्ध ने जन्मना ब्राह्मणों के स्वार्थ एव अभिशाप पूर्ण प्रभुत्व घृणित कर्मकाण्ड, पशु बलि और जन्मगत ज्ञात पात पर कुठाराघात करके सदाचार और अहिंसा का प्रचार और प्रसार करके लोगों के नैतिक उत्थान में अमित योग दिया था। परन्तु उनकी शिक्षाएँ एकांगी रहीं। वे लोगों को बौद्धिक प्रकाश और शान्ति प्रदान न कर सकीं।

कालान्तर में उनके अनुयायी गुरुद्वय और भोगवाद में प्रसिद्ध होकर सांसारिक सुख एव विचारिता में लिप्त हो गए और जाति में ध्यात लम्पटता और क्लीबता भगवान् शक्र के प्रादुर्भाव का कारण बन गई।

शक्र की शिक्षाओं में बौद्धिक प्रकाश तो प्रदान किया परन्तु वे उष्णता प्रदान न कर सकीं। उनकी भावना भोगवाद में लिप्त हुए लोगों को उससे परागमुक्त करने की दिशा में इस सीमा तक गई कि उन्होंने जगत् को मिथ्या मानना और कहना आरम्भ कर दिया। उनकी शिक्षाएँ तर्क और यथार्थता की कसौटी पर खरी उतरतीं।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द का लक्ष्य नैतिक और आध्यात्मिक, स्पष्टि और समष्टि, धर्म और विज्ञान, आदर्श और यथार्थ प्राचीन और नवीन में समन्वय उत्पन्न

करके मस्तिष्क और शरीर दोनों की मूल की सतुष्टि का राज-मार्ग बना देना था। वे इसमें सफल हुए। सांसारिकता से शून्य धर्म और धर्म से शून्य सांसारिकता ये दोनों ही अभिशाप होते हैं। इनका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारा आज का अशांत समाज है। पिछले ५० वर्षों में सत्तार को सुख धाम बनाने के जो प्रयत्न हुए उनका लक्ष्य सांसारिकता पर केन्द्रित रहा। इसका फल यह हुआ कि सत्तार सुखधाम बनने के स्थान में दुःखधाम बन गया। धर्म का अर्थ है विन प्रतिविन का सदाचारमय जीवन। महर्षि दयानन्द ने इसी प्रकार के वेद धर्म पर बल दिया है जो मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक दोनों स्तरों पर ऊँचा उठाए और समाज में सुख शान्ति का साक्षात्प रहे।

समाज का ठीक निर्माण एकमात्र आर्थिक तर्कों से सम्भव नहीं है और न सत्तार से विमुक्त करने वाली आध्यात्मिकता से ही सम्भव हो सकेगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपनी अमर कृति सत्यार्थप्रकाश में जिस सामाजिक ढांचे की रूप रेखा दी और उसकी व्याख्या प्रस्तुत की है उसी को मूर्तरूप देने से सत्तार का हित सपादित हो सकता और शान्ति बनी रह सकती है क्योंकि उस में लौकिक और पारलौकिक कल्याण समन्वित है।

उनकी समाज-व्यवस्था वे सर्वप्रथम स्थान आस्तिकता और एकेद्वारवाद को प्राप्त है जो एकमात्र हमारा परमा दर्श होने योग्य है। अपने को अच्छा बनाना और परमात्मा के बच्चों का हित करना उनकी आस्तिकता का परमतत्त्व है।

समाज को शरीर और आत्मा में स्वस्थ, बलिष्ठ, सुशिक्षित एव सुयोग्य सन्तान प्रदान करना इस समाज व्यवस्था का दूसरा और तीसरा अंग है जिसका आधार ब्रह्मचर्य एव सयम है।

शरीर की बलिष्ठता, शिक्षा, आयु और प्रवृत्ति में समानता और उद्दृष्टता के आधार पर नव-युवकों और नव-युवतियों को गृहस्थाश्रम में प्रवेश पाने की अनुमति दी

गई है, साथ ही एकपत्नी व्रत और एकवति व्रत गार्हस्थ्य सुख का प्रमुखतम तत्त्व बताया गया है। इसका लक्ष्य समाज को सुयोग्य सन्तान देना और अर्थ एवम् काम की स्वामाधिक इच्छाओं की पूर्ति करने में समर्थ बनाना है।

इसी में अपनी स्वामाधिक प्रवृत्ति एवम् योग्यता के अनुसार धन्ये का चुनाव करके जीविकोपार्जन की व्यवस्था की गई है। यही धर्म व्यवस्था है जो प्रकृति का विस्तार है। गृहस्थ में रहने की २५ वर्ष की अवधि नियत की गई है। मनुष्य की औपत आयु २०० वर्ष की मानकर उनमें से केवल २/४ को भोग के अर्पण करने और शेष ३/४ को श्रम, तप और आत्म चिन्तन के अर्पण करने का विधान किया गया है जिससे समाज में बेकारी न फैले और भोग बाध के कीटाणुओं का प्रावलय न हो। मनुष्यि दयानम्ब द्वारा प्रस्तापिन समाज व्यवस्था में राजनीति व राज धर्म का बहुत महत्त्व है परन्तु वह धर्म और धाव वण्ड पर आश्रित होनी चाहिये, जिसमें समाज में धार्मिक तत्त्वों को बढ़ावा मिले और दुष्ट तत्त्वों का दमन होता रहे। मनुष्यि दयानम्ब द्वारा समर्थित राजनीति में एकतन्त्र राज्य को आश्रय नहीं मिल सकता। उसमें प्रजातन्त्र राज्य का सम्बन्धन किया गया है। निर्वाचित राजा की उच्चतम कीर्ति के व्यक्ति के रूप में कल्पना की गई है। यह है भी ठीक। प्रजातन्त्र शासन शासकों और प्रजा दोनों के चरित्रवान होने से ही ठीक गति में चलते हैं अन्यथा वे लडलडा जाते हैं। इस राजनीति में चक्रवर्ती राज्य को ही विश्व के कल्याण का साधक माना गया है। क्षण्ड राज्यों से अशान्ति व्याप्त रहती है।

स्वामी जी महाराज द्वारा प्रस्तुत समाज-व्यवस्था में मांस भविरा आदि अशुभ पदार्थों के खान-पान और सेवन को एकदम हीय एवम् त्याज्य बताया गया है। इसके साथ ही श्रेष्ठ आजीविका जो श्रेष्ठ उपायों से अर्जित हो, प्राप्त मानी गई है।

श्री स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित समाज व्यवस्था में भोगों की निम्नता नहीं की गई है। भोगों को भोगने की स्वतन्त्रता है परन्तु उनमें आसक्ति न होनी चाहिये और वे व्यक्ति तथा समाज के पतन का कारण न बनने चाहिये। इस समाज व्यवस्था का लक्ष्य है और वह यह कि ईश्वर का साक्षात्कार करने में मनुष्य समर्थ बने। इसके लिये

उत्ते ससार में से मुक्तना अनिर्वाय है अत ससार में से इस प्रकार मुक्तने जिसने कि उसकी यात्रा सुखद रहे और वह ईश्वर के साक्षात्कार के मार्ग में मटक न जाय।

इस प्रकार श्री स्वामी जी महाराज ने धार्मिक जगत में ही नहीं अपितु सामाजिक जगत में भी एक नई सुखद कल्पित की। उम्होंने जाति को अविद्या-धकार से निकाल कर मत-मनागतरो के पतनकारी एव मानवता को बिलग एव लोछित करने वाले प्रभाव से मुक्त करके सच्चे धर्म को प्रतिष्ठित करने तथा सामाजिक क्षराबिधो को दूर कर के स्वस्थ समाज को गिनन करने का प्रशस्त कार्य किया। धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त उन्नत और सामाजिक दृष्टि से सुखी चरित्रवान और पवित्र समाज से ही राजनैतिक योगक्षेम सम्भव हो सकता है। इस रीति से उम्होंने राजनीति का भी मार्ग-प्रशस्त किया।

गुरुकुल वृन्दावन प्रयोगशाला
जिला मथुरा का
विशुद्ध शास्त्रविधि द्वारा
बनाया हुआ
“च्यवनप्राश”

योगन बाता, खास, कास, हृदय तथा
फेफड़ों को शक्तिवाता
शरीर को बलवान बनाता है।
मूल्य ८) २० सेर

नोट—शास्त्र विधि से निर्मित सब रस
मत्त आसव, अरिष्ट, तेल तथा
उत्तम सुगन्धित हवन सामग्री भी
तैयार मिलती है। एजेन्टों की
हर जगह आवश्यकता है, पत्र
व्यवहार करें।

—व्यवस्थापक



युग-धर्म की मांग



(ले०-धी मोहनलाल जो मोहित लावेनीर, सेंट पियेर मोरीसस)

वर्तमान युग में नैतिक विज्ञान की प्रधानता है। मानव समाज प्रायः नैतिक अर्थात् क्षणिक सुख की युग-



लेखक

तृष्णा में लबलीन है। मानव समाज की आध्यात्मिक विपासा की ठीक तृप्ति तो वैदिक धर्म से ही हो सकती है। क्योंकि नैतिक विज्ञान और अध्यात्म विज्ञान का तर्क सगन समन्वय जो वैदिक धर्म ही करता है। वेद-विहीन अर्थ लोचुन राजनैतिक नेताओं ने मानव समाज के जीवन-स्तर के माप दण्ड में त्रिपवता बंधा कर दी है। एक देश दूसरे देशों को और एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों को घृणित एवं द्वेष दृष्टि से देख रहे हैं, परन्तु प्रीत भाव और घृणा-घमण्ड को मात्रा बढ रही है। एक दूसरे का शोषण कर उन पर निरङ्कुण शासन जैसा राजसी व्यवहार करने वाले को निचुण राजनीतिज्ञ की उपाधि दी जाती है। ऐसे अध-

कच्चे शासकों और नेताओं की बांधली बाजी में पडकर जनता घोर सकट झेलती है। प्रायः जनता में सब विवेक का अभाव सा रहता है। अतः मानव जीवन के महत्त्व को ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं कर पाती है। कूटनीतिज्ञों के प्रलोभन में फनकर मूर्खतावश अविद्येकी जनता मानवता को कलकित कर अपना भविष्य नुखड बना लेती है। इयं लिए युग धर्म का आदेश है कि मनुष्य को वास्तविक मानव बनाने की बीसा बी जाय और इस बीसा सत्कार का समयोचित सहो सम्पादन आर्यसमाज ही कर सकता है।

आचार्य महर्षि दयानन्द जी ने देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में वेद प्रचार प्रसार और समाज सुधार का उत्तरवायित्त्व आर्यसमाज पर ही छोडा था। इसलिए बड़ी सतर्कता से कमर कसकर समरांगण में आर्यसमाज को आगे बढना है। गत पिछले कुछ वर्षों के कालों पर सिंहावलोकन कर अपनी कमी को अनुभव करें। फिर कमी पूर्ति और भावी प्रगति के लिये कार्यक्रम को सम्पन्न करने के सबल साधन तथा सुगम विधि पर गम्भीरता से सोचें। आर्यसमाज की गति-विधि से पता लगता है कि मूमण्डल के लगभग दो तिहाई भाग में यत्र-तत्र आर्यसमाज का बीज पडुच चुका है पर ध्यान रहे बीज पडुच जाने मात्र से कृषि कार्य सफल नहीं होता। क्योंकि बीज को सफल बनाने के लिए मूमि ढी जुताई, हुआई और सिंचाई के साथ ही सम्यक् पुरण-भरण की आवश्यकता है। तब कृषि-कार्य सफलीभूत होता है। उसी प्रकार आर्यसमाज के सामने देश विदेशों में जो धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विशाल कार्यक्षेत्र जाली पडे हैं, उनको वैदिक सत्कार से सुसंस्कृत बनाने के लिए तपस्वी आर्य विद्वान् की आवश्यकता है। धर्म-सकट में फसी हुई मानवता की रक्षा के लिए, ऋषि ऋण की पूर्ति के लिए और महर्षि दयानन्द के आदेश को क्रियात्मक रूप देने में आर्यसमाज सर्वात्मना भागे बड़े। यही युग धर्म की मांग है। युष्कृण के सुधोग्य

स्नातकों ने जिस सकट काल में मानवता की रक्षा के लिए दयानन्द की बेबी से योधा की है, वह सुसमय सामने खड़ा है। और सबल शक्तों में चुनौती देता है कि वेद प्रचार और समाज सेवा के क्षेत्र में आगे आकर अपनी विद्वत्ता तथा कार्य कुशलता से आर्यसमाज की पुरस्कृत करें। महर्षि दयानन्द के सच्चे भक्त, त्यागी और तपस्वी तथा कार्यकुशल मनस्वीगण ही कथित समस्या को सुलझा सकते हैं। विदेशों में तो आर्योपदेशक की नितान्त आवश्यकता ही है। परन्तु भारत में भी सुयोग्य समाज-सेवक उपदेशकों की कमी है। मानव समाज को सजग और प्रगतिशील बनाने के वो उपयोगी और सबल साधन हैं, प्रथम सुयोग्य उपदेशकों की संयारी तथा नियुक्ति और दूसरा भावांतर में सुन्दर साहित्य का प्रकाशन।

दोनों काम देश काल के दृष्टिकोण से करने में ही सफलता है। इन दोनों कामों को सफल और चिरस्थायी बनाने के लिए एक सुदृढ शक्तिशाली 'संस्थान' भी साथ देशिक आर्य प्रतिनिधि समा देहली के तत्वावधान में होना परमाश्यक है। साथ ही परोपकारिणी सभा अजमेर और देश-विदेश की आर्य प्रतिनिधि समायें तथा प्रमुख आर्य-समाजों भी संस्थान को सफल बनाने में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा को सहायता योगदान दें, तभी कार्य सफल हो सकता है। मेरे विचार में संस्थान के लिए प्रारम्भ में २० लाख की सुरक्षित निधि का प्रबन्ध करना चाहिए। २० लाख की निधि के बायिक षण्ड से संस्थान का काम साधारण रूप से चल सकता है। संस्थान का प्रमुख कार्य होगा एक 'सार्वदेशिक उपदेशक विरचयिता सभा' का संचालन जिसमें देश विदेश के लिए विभिन्न भाषाओं में समाज सेवार्थ लगनशील कार्यनिष्ठ आर्य विद्वानों को उपदेशक कला का प्रशिक्षण देने का पूरा प्रबन्ध हो, दूसरे काम में प्रकाशन विभाग है। प्रकाशन कार्य बड़ा उत्तरदायित्वपूर्ण है। प्रकाशन विभाग में वैदिक साहित्य और आधुनिक उपयोगी साहित्य को विभिन्न भाषाओं में ठीक तथा सुन्दर साहित्य का निर्माण करना आवश्यक है।

२० लाख की निधि पूर्ति का सुगम-साधन तीन प्रकार की सदस्य-श्रेणी रखी जाय, जैसे १००

₹० देने वाले सज्जन को साधारण सदस्यों में और ५०० रुपये देने वाले को आजीवन सदस्यों में। कम से कम एक हजार देने वाले से दाता सदस्य शुरु हो। दाताओं की घन राशि असमीत रहे। और 'ट्रस्टी' की विधि से भी धन लेने का सामयिक विधान संस्थान के लिए श्री सार्व-देशिक आर्य प्रतिनिधि समा देहली बना सकती है।

प्रयत्न करने पर सैकड़ों साधारण सदस्य विदेशों में मिल सकते हैं। आजीवन सदस्य और दाता सज्जन भी मिल सकते हैं। लगनशील सन्वासी, मानप्रस्थी और कर्मनिष्ठ आर्य नेताओं के आठ दम शिष्ट मण्डल सन्वाय से विधि पूर्ति की धुन में लग पड़ें तो भारत के विभिन्न प्रान्तों से ही ६ मासों में पर्याप्त धन मिल सकते हैं।

आर्य-जगत् के मनस्वी और तपस्वी कर्णधारों से तथा आर्यसमाज के प्राणस्वरूप पूज्य सन्वासी महानुभावों से २०२१ वि०सवस्तर के ऋषि निर्वाण दिवस पर उपर्युक्त संस्थान की प्रति का व्रत लेने के लिये युग धर्म की मांग है। उपर्युक्त संस्थान के विषय में मैंने बिल्कुल साधारण विचार व्यक्त किया है। आर्यसमाज के विद्वानों से संस्थान की आवश्यकता उपयोगिता और एक ठोस कार्यक्रम पर अपना बहुमूल्य विचार आर्यभित्र' व 'सार्वदेशिक' पत्र में लिखने के लिये नम्र निवेदन है।



ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ सब जीव स्वभाव से सुख प्राप्ति की इच्छा और दुःख का वियोग होना चाहते हैं परन्तु जब तक धर्म नहीं करते और पाप नहीं छोड़ते तब तक उनको सुख का मिलना और दुःख का छूटना न होगा क्योंकि जिसका कारण अर्थात् पूरा होता है वह नष्ट कभी नहीं होता।

★ परमेश्वर के काम बिना मूल-चूक के होने से सदा एक से हुआ करते हैं।

युग-पुरुष स्वामी दयानन्द



[ले०—श्री रामवतार आर्य, आर्यसमाज गाजीपुर]

जिसने देश और समाज के अन्दर व्याप्त नैराश्य, बेन्या-बारिद्वय और बामाचार समी तमिला को अपने पाण्डित्य दूरबाशिता विवेक और कार्य कुशलता के प्रखर प्रकाश से भेदन कर सुन्दर और कल्याणकर पथ निर्देश किया। जिसने सोते को जगाया, गिरते को उठाया, लुटेते को बचाया और अधमरे को जीवन प्रदान किया। और मनुष्यों के अन्दर नश उमग, नव चेतना एव नव उल्लास जागृत करके उनकी प्रवृत्तियों को रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित किया। उस समाज सुधारक, देशभक्त, वैदिक धर्म के प्रचारक, महान् दार्शनिक, वेदोद्धारक, युगपुरुष, जगद्गुरु महर्षि स्वामी दयानन्द के प्रति अपने उद्गार व्यक्त करते हुए पंजाब केशरी लाला लाजपत राय ने लिखा—

“स्वामी दयानन्द मेरे गुरु हैं, मैंने सत्तार में केवल उन्हीं को गुरु माना है। वह मेरे धर्म के पिता हैं और आर्यसमाज मेरी धर्म की माता है। इन दोनों की गोब मे मैं पला। मुझे इस बात का गव है कि मेरे गुरु ने मुझे स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करना, बोलना और कर्तव्य पालन करना सिखाया तथा मेरी माता ने मुझे एक सत्त्वा में बद्ध होकर नियमानुषतिता का पाठ पढ़ाया।”

स्वाध्याय का उपदेश

स्वामी जी स्वाध्याय पर विशेष बल देते थे। कदाचित् वे मनुष्यों की इस कमजोरी से भलीभांति परिचित थे कि अधिकांश मनुष्य अपने विचारों में उलझे रहते हैं। भ्रम में पड़े रहते हैं। उनका अपना कोई ठोस मत या विचार नहीं होता। जिनका कोई ठोस विचार नहीं, कोई सिद्धान्त नहीं, स्पष्ट मत नहीं, उनके कार्यों तथा आचरण में एकलव्यता कैसे आ पायेगी? कैसे वे कोई ठोस कार्य कर पायेंगे? जो स्वयं अपना भला नहीं कर सकता उनसे कैसे समाज और राष्ट्रकल्याण की आशा की जा सकती है। अतः स्वामी कड़ा करते थे कि सदाय राष्ट्र और

विश्वकल्याण के लिये विद्वान् और सवाचारी पुरुषों की अत्यन्त आवश्यकता है। क्योंकि विद्या-बल के कारण उनका वृष्टिकोण व्यापक होता है।

वे सबकी भलाई और सबके कल्याण की बात सोचते हैं। “विश्व बन्धुत्व और विश्वकुटुम्बकम्” की भावना से नावित होकर उनके कर्ण कुहरों में एक ही नाद, एक ही स्वर गूँजता है—‘कृष्णन्तो विश्वमार्यम्।’ सकुचित वृष्टिकोण के कारण मनुष्य की मनोवृत्ति गरीब हो जाती है और वह स्वार्थ भावना से बुरी तरह आक्रान्त होकर अपराध करना आरम्भ कर देता है। अतः व्यक्ति के वृष्टिकोण को व्यापक बनाने के लिये स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिये “स्वाध्यायान्मात्रमव” (स्वाध्याय में प्रसाद मत करो) का उपदेश दिया गया है। स्वामी जी हर व्यक्ति के आचरण में इस उपदेश को अंकित देखना चाहते थे। युगपुरुष को यही हाविक इच्छा थी।

स्वामी जी कहा करते थे कि “आर्य अकेला हो तो स्वाध्याय करे, वो हों तो परस्पर प्रश्नोत्तर व सवाद करें, सोन हों तो सत्सग एव धार्मिक ग्रन्थ का पाठ करें।” श्रद्धा की अविनाशा थी कि प्रत्येक आर्यसमाजी स्वाध्याय, सरसंग, सवाद और प्रश्नोत्तर के माध्यम से अपने व्यक्तित्व को इतना निखार लें कि कहीं भी वाद विवाद और शास्त्रार्थ के अवसर पर अपना सरसमत दृढ़तापूर्वक व्यक्त कर सके। और अपनी तर्कणा शक्ति से उसका औचित्य सिद्ध करके वेद-वर्म प्रतिष्ठापित कर सके।

भविष्यवाणी सच निकली

वास्तव में महापुरुष वह है जो हर एक परिस्थितियों में हमारी समस्याओं का जबाब दे। परिस्थितियों और समस्याओं का अध्ययन करे। उसे ठीक ठाक समझे और उसका उचित समाधान प्रस्तुत करे। तथा अपने अध्ययन और दूरबाशिता के आधार पर भविष्यवाणी भी कर दे।

(श्रेष्ठ पृष्ठ ५१ पर)

बलि और बलिदान क्या है ?

[श्री खेमालाल जी वनस्पती विद्यापीठ, बनस्पती]



आधुनिक पौराणिक मतानुसार बलि व बलिदान शब्द को (शाक्तिक मनुष्य देवी के उपासको ने) पशु हिंसा परक लगाकर अंतर् बकरे आदि पशुओं को "देवी दुर्गा, महागौरी काली चामुण्डा, बाराहो शोला आदि की भेंट के नाम से और (पशुओं की हिंसा पूजा के नाम से)" कराते हैं। वैदिक समय में बलि शब्द पशु हिंसा परक नहीं था क्योंकि शास्त्रों में ऐसा विधान नहीं पाया जाता। इसी बलि शब्द को मीसांसा शास्त्र के सूत्र 'यथाय पशुमालभेतु' यज्ञ मे पशु को मारो ऐसा शाक्तिक पौराणिक लीला ही का परिणाम है।

एतरेय ब्राह्मण के ३५/२९ का भाष्य करते हुए सायणचार्य जी ने लिखा है "बलि कृतम्" (अर्थात् बलि पूजा कराने पर प्रयत्न प्रत्यर्थ) यहा राजा को पूजा करना अर्थात् (कर) देना अर्थ, बलि शब्द से स्पष्ट है। गोतम धर्म सूत्र २।१।२४ मे "राज्ञो बलिदान कर्षकं ईशम-ष्टवष्टवा" यहा पर किसानो की ओर से जो दसवां, आठवां, छटा शुल्क राजा को दिया जाये उसको बलिदान शब्द से व्यवहृत किया है।

सू० प्रजासिंहमा बलिहरन्ति वराणे प्रतिष्ठित्ति

प्र० नि० २।७

अर्थ—सत्कार, (स्वम् तुमी, (इमा) यह, (बलिम्) प्राप्ते (हरन्ति) लाते है, (य) जो (प्रायं) पाच प्राणो से शरीर मे, (प्रतिष्ठित्ति) होकर रहते हैं। इस स्थल पर भी बलि शब्द हिंसार्थ में नहीं है। किन्तु भोज्य ग्राहण वा प्राहु रस के अर्थ मे है। आरुद्राज गृह सूत्र ३।५ यवभूतेभ्यो बलिं हरति समूल यत् " यहाँ पर पके हुए अन्न के भाग का नाम बलि है। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना उचित है कि इस उक्त आरुद्राज सूत्र में बलि शब्द चतु-र्ष्यंस्त भूत के साथ सम्बन्ध दर्शाया है। वेदों मे कहीं "भूत बलि" शब्द देखकर "भूतानां बलि" अर्थात् भूतो की बलि, ऐसा नवीन अर्थ कोई न करे। क्योंकि यहाँ भूत शब्द मे चतुर्ष्यं विभक्ति है 'यवायं बलिहितं मुख रक्षितं'

अष्टाध्यायी ५।१ से अर्थ हुआ है। इसी सूत्र के भाष्य पर देखिये, महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि को भी (बलि) शब्द का अर्थ शुल्कादि नाग ही इष्ट है।

'योहि महाराजाय बलिं समहा राजार्थो भवति'

अ० २।१।२६

मनु महाराज ने भी ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थियों के नित्य कर्तव्य मे पच महायज्ञ बतलाये हैं; उनमे बलि भूत यज्ञ भी सम्मिलित है, वहा पर बलि भूत यज्ञ को इस प्रकार स्पष्ट किया है।

श्लोक—अध्यापन ब्रह्मयज्ञं पितृ यज्ञाश्च तर्पणं।

अग्निर्वैश्वो बलिभूतो नृपज्ञोतिथि पूजनम् ॥

अर्थात् वेदों का स्वाध्याय ब्रह्मयज्ञ, जीवित माता-पिता गुरु आदि पितर जनों को तृप्त कर देना पितृ तर्पण है। अग्नि मे होम करना वैश्वयज्ञ है, भूत प्राणो को उनका (बलि) माग देना भूतयज्ञ है। एव महात्मा जनो का सत्कार करना आतिथ्य यज्ञ है यही पाच यज्ञ हुये।

श्लोक—युनाच पतितानाच श्वपचा पाप रोमिणाम्।

बायसनां कृमिणाच शनकंनिविपेद् भूवि ॥ मनु०

अर्थ—जब रसोई पाकशाला में तैयार हो जाये तब छ बलि अर्थात् (भाग) भोजन मे से, कुत्ता, पतित, चाण्डाल, पाप रोगी, काक और चींटियो के निमित्त शनकं सहज मे अर्थात् धीरे से भूमि मे रक्ष देवें और भोजन कर लेने के पश्चात् या पूर्व ही जो जो मिल सके उन उनको इ देवे। यदि बलि का अर्थ मारने का होता तो कुत्ता, कौवा, चींटी आदि को मनुष्य नित्य कर्म समझकर इनका बध किया करते। पशुबलि शब्द से, पशुओं की अन्न जलावि से रक्षा करना तात्पर्य था, परन्तु मासाहारियों ने बलि पशु शब्द को पशु बध मे परिणत करके पशु हत्या की विधि दर्शाई है।

पौराणिक अमर कोष मे भी बलि शब्द हत्यापरक नहीं है।

श्लोक—'नागदेवः करो बलिः। अमर द्वितीय का०



ज्ञ० श्लोक २७ और

“पाठो होमश्चातिथीना सधर्मा तर्पणं बलि”

—अमरकोष द्वितीय का० ब्रह्मण० श्लोक १४

इन दोनों स्थलों (अत्रिय और ब्राह्मण वर्गों में कहीं भी पशुबध का “बलि” शब्द से लेना मात्र भी अर्थ नहीं है अत्रिय वर्ग की टीका में भी स्पष्ट लिखा है कि “भागधेय, कर बलि” त्रीणि कर्षं काश्चिन्परोऽज ग्राह्यं भागन्ध” ।

और ब्रह्म वर्ग में बलि “बलि हरणं स भूत यज्ञ” मनु के उपरोक्त श्लोकानुसार बलि भूत यज्ञ की ही सिद्ध किया है कि जिसमें भूत प्राणियों की रक्षा करना ही कर्तव्य बतलाया है ।

अबकि वेदों में स्पष्ट लिखा है कि “यजमानस्य पशून् पाहि० । “अविम् माहिषी ०” गार्माहिंसी ० ।”

‘एक सफ माहिंसी ०’ इत्यादि इत्यादि अर्थात् यजमान के पशुओं की रक्षा करो, भेड़ बकरी मत मारो, एक सफ अर्थात् बिना फटे लुट वाले पशुओं की मत मारो इत्यादि ।

इसके अतिरिक्त आर्य ही क्या, हिन्दु मात्र ‘अहिंसा परमो धर्म’ को जानते हैं और सर्वत्र सुनते भी है ।

जान ब्रूसकर जो “बलि” के अर्थ अनर्थ रूप से पशुबध परक लगते हैं, उनसे अधिक अनर्थकारी कौन होगा ? यज्ञ अथवा पूजा के प्रकरण में पशुबध बतलाना बड़ा मारी अनर्थ है । क्योंकि “यज्ञ देवपूजा सगतिकरण दानेषु” अर्थात् यज्ञ शब्द का अर्थ बिद्वानों का सरकार बिद्वानों से मेल मिलावटि परस्पर व्यवहारिक क्रिया, तथा दान देने का नाम है ।

“पशव इज्यन्ते दीयन्ते यस्मिन् स पशुयज्ञ ।” अर्थात् जिस कार्य में बिद्वानों के पालनार्थ पशु बधे जाते हैं उसे पशु यज्ञ कहते हैं । यज्ञ के पर्यायवाची शब्दों में बहों भी पशुबध की आज्ञा नहीं है । यथा अमर का० २ अर्थ ब्रह्म. वर्ग १३ श्लो०—यज्ञ सवोऽध्वरो याग सप्त तन्मुर्मल क्रतु यज्ञ, सध अध्वर याग सप्ततन्तु क्रतु

इसमें यज्ञ का अध्वर नाम ही स्पष्ट बतला रहा है कि “न अध्वरतीति स अध्वर” अर्थात् जिसमें किसी प्रकार की भी पशु बधादि हरया न हो उसको अध्वर अर्थात् यज्ञ कहते हैं । वैदिक निघट्ट में “बलि प्रासे बलिवाने” लिखा है इति

सिद्धान्तानुसार “बलि पूजो पहारयो. ।’ अर्थात् बलि का अर्थ सरकार करना मोक्षनादि उपहार देना है, बलि का अर्थ बध नहीं । मध्य युग में बलि अर्थ में पशु हिंसा का जो बाम मार्गीय प्रवेश भारती कर्मकाण्ड में होने लगा था महर्षि दयानन्द को इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने शास्त्रीय आधार पर पशुबलि का निषेध किया । उनके महान् कार्य से वैदिक कर्म काण्ड की पवित्रता बनी रह सकी और हन गर्ब के साथ पशुबलि का धार्मिक कर्मकाण्ड के लिये निषेध कर सकते हैं ।



(पृष्ठ ५४ का शेष)

महर्षि दयानन्द में यह सभी गुण विद्यमान थे । श्रुति की भविष्यवाणी—‘इस परमात्मा की सृष्टि में अविमानो, अन्धायकारी, अविद्वान् लोगों का राज्य बहुत दिन नहीं चलता ।’ सब निकली ।

स्वदेश प्रेम

“कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है ।” (स० प्रकाश अष्टम् समुल्लास) ।

‘हम और आपकी अति उचित है कि जिस देश के पदायों से अपना शरीर बना, और अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उत्पत्ति तन, मन, धन से सब जने मिलकर किया करें ।’

किसे अपनी मातृभूमि से प्यार नहीं होता किन्तु सच्चा प्यार तो वह है जो उसकी उन्नति, उत्थर्य और विकास के लिये तन, मन धन से सवा तत्पर रहें । जो कुछ हमारे पास है, वह देश का है और उसे देश पर ग्यो-छावर करना हमारा परम पुनीत कर्तव्य है । स्वामी जी का सम्पूर्ण जीवन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के उत्थान के लिये रहा । श्रुति में अपने गुण के समझ जो प्रतिज्ञा की थी उसे पूर्ण करके अपनी गुणवत्तिका परि-षय दिया । अपने कार्यों से यह सिद्धा दिया कि गुणकुल के ब्रह्मचारी के अन्धर कितनी शक्ति होती है । प्रभु से यही प्रार्थना है कि उस जगद्गुरु के उपदेशों तथा कार्यों से हमारा जीवन अनुभावित हो ।





महर्षि दयानन्दस्य शास्त्रार्थाह्वानम्

[रच०-शास्त्रार्थं महारथी श्री प० सरयमित्र शास्त्री वेदतीर्थ, बडहलगज गोरखपुर]



मनुज निमित्त भागवतादिका,
बह पुराण कथा जगती तले ।
प्रथमस्ति निदान मद कथम्
कलयतास्त्रिगमयाम विस्तृतिम् ॥१॥

न लिखिता किल वेद चतुष्टये,
मृतक देह निमित्त परा क्रिया ॥
हृदयतोऽपि कथ परिदर्शयेज्जगति ।
सन्निगमोदित कल्पनाम् ॥२॥

निगदिता सलिलेषु वृथा कृता ।
बबनमु तीर्थमतिर्मनुजैरल ।
तदिय माय्यं निवास विनाशिनी ॥
विलय मेष्यति चेद् भविता शिवम् ॥३॥

दूषदुपासनया जडता गतम् ।
जगदिद कथमेव्यति चेतनाम् ॥
यदि न यास्यति नाशमिय प्रया ।
सदुपदेश गुणैर्जगती तलात् ॥४॥

कथमिय जगतीतल बतिनी ।
विलय मेष्यति भिन्न रचिन्नाम् ॥
विमल वेद पथात् समलगताधम ।
पुराण पथ परिपन्थिनम् ॥५॥

अहह मन्यति मार्गं मुपागता ।
कविजन श्रुतिरत्र सहायिनी ॥
दिवस मति निशातट सन्तति ।
न रविदर्शन मिच्छति कर्हिचित् ॥६॥

विमल वैदिक धर्मं मणिप्रभा ।
न विपर्यमंलिने हृदि राजते ॥
विमल दर्पण एव विराजते ।
मुख शानि द्युति सत्तम वर्मणाम् ॥७॥

रश्मि पान परायण चेतसा ।
जगति शाक्त मत प्रतिपादितम् ॥
प्रकटमेव यदस्ति महीतले
भ्रितमनेक जनैरकोमुलै ॥८॥

व्यरचि केन चिदुत्पथगायिना ।
तदपि वैष्णव मार्गं विडम्बनम् ॥
भवति यत्र यथोरिव दुर्दशा ।
जनभि तस्य जनस्य नु तापिन ॥९॥

तदितरेण बनेतर वृत्तिना ।
गतमतद्रमभिन्न मद कृणम् ॥
जगति शैवमत शिशुवह्निना ।
भवति यत्र सुखेन वनस्थिति ॥१०॥

जगपति परिकल्प्य तदाश्रितम् ।
व्यधृत किन्न मन पुरपाथम् ॥
प्रकृति भिन्नतया किल वास्तवे ।
भवति यत्र मुखस्य विपर्यय ॥ १॥

मनुजतामपहाय कुबुद्धिभि ।
जनवरेषु गुणान्वित नामसु ।
त्रिमूखता चतुराननता तथा ।
भुज चतुष्टयना ध्वरोपिता ॥२॥

वव जडमूर्तिमनाय्यं फलप्रदा ।
गुणमयी वव परेश गुणस्मृति ॥
परम होगत बुद्धिभिरादृता ।
जगति सैव विचित्र मिद कृतम् ॥३॥

सकल शक्तिमत करुणाकरा ।
दत्रभाव गतान् परमेश्वरान् ॥
जगति पे विमुखा प्रकृति जडाद
नुनमन्ति कथ नहि ते जडा ॥४॥

उपकृति जगतामवलोचययो ।
रवि शशि द्युति मत्र चकारताम् ॥
निखिल विश्व गतस्य सुवतिका ।
द्वितय विद्यति रादरणे कृता ॥५॥

नित्य मेस्य च धमधरन्धरो ।
दिशि-दिशि प्रथिन धवल यश ॥
मनुकुलै रमल कमल
यथा ह्यविधुरैर्भ्रमरे परिगीयते ॥६॥

वशस्य वृत्तम्

दयाकरानन्द विशेषवर्धनात् ।
जगती तले यो नितराणुदारो धी ॥
ततान नामानुगुणा निजाभिधाम् ।
गुरु दयानन्द इति प्रकल्पिताम् ॥१॥

कर्तव्यमेव जगता मुपकार कृत्यम् ।
विद्वद् वरैरिति विचारयोत्स्य चित्तं ॥
या भूतया सकल मेव विचार बुद्धया ।
दिग्मडल समाभि वेष्टित मादरेण ॥२॥

जयतु-जयतु लोके वेद सूर्य्यं प्रकाश ।
भवतु-भवतु पञ्चदाय्यं धर्मं प्रभाव ॥
नयतु नयतु दूर न्यायकारी दयातु ।
नैवयत रोग नून माथ्याधि वासात् ॥३॥



इस प्रकार एकपत्र प्रो० मंससलर ने लिखा "जैसा कि मैंने पहले भी बताया कि मेरे विचार "हितै" मापण लिखते समय भारतीयों के बारे में थे। मैं कम से कम उन थोड़े से लोगों को बताना चाहता हूँ जिन तक मैं अपने विचार अंग्रेजी द्वारा पहुँचा सकता हूँ कि इस प्राचीन धर्म का ऐतिहासिक महत्त्व क्या है जैसा कि समझा जाता है न केवल यूरोपीय या ईसाइयत की दृष्टि से बल्कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से। मैं दो आपत्तियों से चेतावनी देना चाहता हूँ। प्रथम तो भारत के राष्ट्रीय धर्म की अवहेलना व मूल मूल्यकन करना जो प्रायः तुम्हारे अधूरे-यूरोपीय नवयुवकों द्वारा किया जाता है और दूसरे अधिक महत्त्व देना या ऐसा अनुशासक करना जैसा कभी नहीं किया गया। ऐसा दुःखद लोत वयानन्द सरस्वती के वेदों पर परिष्कृत से प्रदर्शित होता है। वेदों को प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थ मानो जिनमें एक पुरानी और सरल प्रकृति की जाति के मनुष्यों के विचारों का चित्रण है और तब तुम इसकी प्रशंसा कर सकोगे और इसमें से इस आधुनिक युग में भी विशेषकर उपनिषदों की शिक्षाओं को ग्रहण कर सकोगे। लेकिन इनमें खोज करो 'बाष्प इजन, बिजली, यूरोपीय बर्तन और नैतिकता की' वेद को इसके सत्य रूप में अलग कर दो इसके वास्तविक महत्त्व को नष्ट कर दो और तुम प्राचीन और अर्वाचीन के ऐतिहासिक क्रम को जो इन्हें बाँधे हुए है छिन्न-भिन्न कर दो। अतीत एक सत्य है, ऐसा मानो। उसका अध्ययन करो तब तुम्हें मविष्य में मैं अपना ठीक मार्ग अपनाने में कम कठिनाता होगी पाठक यहाँ प्रो० साहब की अन्तरात्मा के भावों को समझ गये होंगे और वे किस प्रकार महत्त्व वयानन्द माधव शंली से मयनीत प्रतीत होते हैं। समझते होंगे वयानन्द की शैली के आगे मेरी दाल न गलेगी।

उन्होंने अपने पुत्र को इस प्रकार लिखा तुम पुछोगे कि विश्व में कौन सी पवित्र (धार्मिक) पुस्तक सर्वश्रेष्ठ है? शायद यह उत्तर पक्षपात पूर्ण प्रतीत हो। लेकिन मैं वास्तव में बाइबिल के न्यू टेस्टामेंट को कहूँगा। उसके पश्चात् कुरान को स्थान दूँगा जो अपनी नैतिक शिक्षाओं में बहुमुक्तिकल न्यूटेस्टामेंट के संस्करण से श्रेष्ठ है। उसके पश्चात् कमरा, ओल्ड टेस्टामेंट, दक्षिणी बीबी का त्रिपि-

(लेख आपके पृष्ठ पर)

सुनाऊँ ऋषि का गौरव-मान

दीन हीन भारत में जिससे जागा वेद विहान।
फले वेद विरह पय बब लिये पुरानों की अधियारी।
छल प्रपच पालख जाल में मूल रहे थे सब नरनारी।।
प्रभु के बदले लगे पूजने पीपल और पाषाण।।
प्रज्ञानन्द की ज्ञान सुभा से सुप्त तृपित प्रतिभा पुसकाई।
वयानन्द के पावन उर में वेद ज्ञान की ज्योति जलाई।
लगी फूलने प्रभा पुष्य की मिट कर तिमिर महान्।।
तक तीर शास्त्रार्थ धनुष से सकल मतों का लगा हिलाये।
अपने बुकचे सब टटोलते लगे अनेक विकल्प बताने।।
तब सत्यायं प्रकाश देख कापे इब्रीक कुरान।।
प्रनिमा साधन निराकार की पूजा का हूँ सने बताने।
अल्लाह वाले सात फलक को सात उतुल लगे समझाने।।
ईसाई भी मूल गये अपना बीषा असमान।।
शिक्षा सूत्र गीता गऊर्षों की उसने ही की पहरेदारी।
स्वतन्त्रता का महामन्त्र दे गया प्रथम आविर्त ऋषिदारी।।
स्त्री शिक्षा हिन्दी आलोकित पाकर नव-परिधान।।
ऋषिबर के सकेत देखकर शासन ने निज लक्ष्य बनाये।।
छुआछूत और बाल विवाह की बन्धी के अधिनियम बनाये।।
सभी हो गया आर्यबीर तुम किन्तु न लेना मान।।
विज्ञानों की चकाबौध में ईश्वर का अस्तित्व मूलकर।
भौतिकवादी चकाबौध में धर्म कर्म की रहे मूलकर।।
बने नास्तिक नई रोतनी के उन्मत्त बखान।
भारतीय संस्कृति छोड़ पाश्चात्य रातों में जीवन डाला।।
भ्रष्टाचार बढ़ा चरित्र की पावनता का मुह काला।।
सह-शिक्षा के परिणामों का दुष्कर दुखित बखान।।
एक ओर है ऋषिकुमारी मत ने नव पालख रचाया।
ईसाइयत की सुरसा ने एक ओर निज मुँह फँसाया।।
छद्र प्रलोभन दे लातों का छीन रहे ईमान।।
देख दुखित हो छुपा चन्द्रमा बम्ब डूब से धरती काली।
ऋषिबर के सिद्धान्त दीप से तुम्हें जलानी है बीबाली।।
जिसे जलाया था ऋषिबर ने दे जीवन का बान।।
सुनाऊँ ऋषि का गौरव मान।।

—धर्मन्द्रनाथ 'अलिन्द'
हल्बीर (बिजनौर)

(पिछले पृष्ठ का शेष)

टिका लाओटज के टाओट, राबा कन्प्यूसिस, वेब और बवेस्ता ।

१८९९ में प्रो० मॅक्समूलर ने ब्रह्मसमाजी एम० के मजूमदार को निम्नलिखित पत्र लिखा—“तुम जानते हो कि मैंने तुम्हारे भारत के प्रिय धर्म को खुद करने के प्रयत्न एव उसके द्वारा उसे अन्य अन्यधर्मों विशेषकर ईसाईयत की पवित्रता और पूर्णता के समीप लाने के कार्य का अनेकों वर्षों से अध्ययन किया है। सबसे पहले तुम्हें निरन्धय करना है कि तुम अपने प्राचीन धर्म का कितना भाग त्यागने को तैयार हो। यदि उसका सर्वस्व कहीं जो पुराना कहा जाता है, तुमने काफी मात्रा में त्याग दिया है। बहुदेवतावाद, मूर्तिवाद और धम धाम से की गई बलि पूजा ।

तत्परचात् न्यूटेस्टामेंट उठाओ और स्वयं पढ़ो और स्वयं निर्णय करो कि उसमें लिखे ईसा के शब्द तुम्हें सतुष्ट करते हैं अथवा नहीं। ईसा के श्रद्धालु बच्चों में अन्तर-निहित उपदेश तुम तक वैसे ही आचेंगे जैसे वे हम तक आते हैं। हमें भी इन उपदेशों का अपना अर्थ देने का अधिकार नहीं है, विशेषकर यदि हम उनका स्वयं निम्न अर्थ करें। यदि तुम उसकी शिक्षाओं को यथावत् स्वीकार करो तो तुम भी ईसाई हो (या हो सकते हैं)। तुम मुझे अपनी मुख्य परेशानियाँ बताओ, जो तुम्हें स्पष्टरूप से ईसाई बनने में बाधा डालती हैं और जब मैं लिपि में स्पष्ट करने की पूर्ण कोशिश करूँगा कि किस प्रकार मैंने और मेरे साथियों ने उनका मुकाबला किया है और उन्हें हल किया है। मेरी दृष्टि में भारत का मुख्य भाग इसाई बन चुका है। तुम्हें ईसाई बनाने में समझाने बुझाने की जरूरत नहीं है। तब तुम स्वयं अपने (धर्म परिवर्तन) के बारे में विचार करो।

निस्सर्वेह भू और ओल्ड टेस्टामेंट की नैतिक एव चारित्रिक शिक्षायें कितनी भी अन्य पवित्र पुस्तक से कहीं उत्तम हैं। इसमें बाइबिल की अद्वितीयता अन्तर्निहित है साधारणतया अन्य पवित्र पुस्तकें प्राचीन काल के लोगों को जो स्मरण रहा उसका सचय मात्र हैं।

तुमसे प्रार्थनामियों ने पुल निर्माण कर दिया है निश्चयतापूर्वक आगे बढ़ो। यह तुम्हारे कारण दुखेगा नहीं

और उस पार तुम्हारे स्वागत के लिये अनेकों मित्र हैं जिनमें तुम्हारा पुराना मित्र और साथी रोडरिग मॅक्समूलर से ज्यादा कोई प्रसन्न न होगा।

प्रोफेसर मॅक्समूलर के उपरोक्त उद्धरणों से आपको अब स्पष्ट हो गया होगा कि पचास वर्षों तक वेदाध्ययन करने पर इन्हें वेदों में क्या मिला और जो मिला उसे किस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट करके जनता के सामने रखने का निर्वेश वे रहे हैं। ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त जो मानवमात्र को एक परिवार के रूप में देखने व रहने और व्यवहार करने का आदेश देते हैं बचपने के विचार लगते हैं। ऋग्वेद जो स्टुअर्ट पि गोड के शब्दों में Iliad और Odyssey दोनों के मिलकर बराबर है सामान्य ज्ञान से घरा प्रतीत हुआ जबकि सत्य यह है इस ईश्वरीय ज्ञान भंडार का सत्याथं अटकलबाजी या कुत्सित मायथाओं से नहीं निकलता इसके समझने के लिये आर्थ प्रवाली की आवश्यकता है जिसे मूर्च्छि बयानम्ब ने पुनर्पढ़ा किया और जिसे वे अधिक मूल्यांकन कहते हैं। जबकि सच्चाई यह है कि उचात विचारों से पूर्ण वेद ज्ञान की हेय सिद्ध करें ताकि ईसाईयत के प्रचार का मार्ग सरल हो जावे, यह भावनायें स्पष्ट होती हैं उनके आँसूरी उद्धरणों से। उनके सत्कृत और वेदाध्ययन का मूल उद्देश्य तो भारतीयों का धर्म परिवर्तन न करना था उन्होंने समझ लिया कि वेद भारतीयों के प्राण हैं उनमें अथवा उत्पन्न करके ही हम उन्हें ईसाई बना सकते हैं और यही मार्ग उतने अपनाया। आज भी उनके अनुयायी प्रो० एस्टलर ऋग्वेद का पुनर्गठन कर रहे हैं क्योंकि वह विषयानुसार नहीं है। विषय तो उन्हें जब पता चले जब वे सत्य को जानना चाहें वे तो भारतीयों को उनके धर्म प्रन्थों के प्रति अथवा उत्पन्न करने पर तुले हुए हैं। आज से ती वर्ष पहले एक मॅक्समूलर के मगर आज सैंकड़ों मॅक्समूलर सत्कृत द्वारा भारतीय सत्कृति में नृष्टि विज्ञाने, तुलनात्मक धर्मों का अध्ययन करने के नाम पर किस प्रकार वेदों का, धर्म शास्त्रों का अर्थ का अनर्थ करके धर्म परिवर्तन के कार्य को कर रहे हैं। यह भी कैसा अनुसंधान है कि वेदों में कुछ भी हो मगर उनमें दूढ़ो दूरीयों दर्शन, विचकली, धार्यवच ।

निस्सर्वेह पाश्चात्य विद्वानों ने अनुसंधान के नाम पर

[शेष पृष्ठ ६१ पर]

आवश्यक मात्रा में उपयोगी पशु ला बिये जायेंगे—ऐसा विरवास विलाना उसी बायदे के समान है जो हिन्दी भावोलन समाप्त कर देने के पश्चात् ही हिन्दी को सर्वथा निकाल पूर्ण अधिकार देने के लिए सरकार की ओर से किया गया था। अपने जिस मूल के लिये हमें आज तक परचात्ताप की अग्नि परीक्षा देनी पड़ रही है उसकी पुनरावृत्ति करने को हम उद्यत नहीं। यदि सरकार यह चाहती है कि हम इस सारे गोवश को उसके कथनानुसार 'अनुपयोगी' मानकर उसके हवाले कर दें तो उसे पहले वो काम करने होंगे। सब पहले तो इस गोवश के बदले में देश की आवश्यकता भर 'उपयोगी' गोवश प्रदान करना होगा। दूसरे, उसे अपने उस सारे रिकार्डों को झूठा सिद्ध करना होगा जिसके अनुसार 'अनुपयोगी' पशु से भी सामान्य रूप से २२) ४० से लेकर २७) ४० तक का वार्षिक लाभ होता है जिसे आधुनिक विज्ञान की सहायता से १३६०) ४० वार्षिक तक बढ़ाया जा सकता है, मुफ्त की बिजली और खाद का मूल्य प्रत्यक्ष रहा। (देखिये मेरा लेख 'वांशिक कसाईखाने बनाम देशोन्नति') यदि वह ऐसा करने को उद्यत नहीं तो क्यों न हम उनकी 'लोक कल्याण-प्रवृत्ति' पर सन्देश करें। दूध नापेंद हो जाने पर और खेती असम्भव हो जाने पर फिर यहाँ बचेगा कौन? शायद मिट्टी फाककर ये विशेषज्ञ ही जीवित रहेंगे।

ये अनुपयोगी कहे जाने वाले पशु देश के लिये बरबाद हैं अनिश्चय नहीं। अपनी आयु के अन्तिम दिन तक प्रत्येक पशु गोबर और मूत्र देता है। यदि गोबर और मूत्र का ठीक उपयोग किया जाय तो यह स्वयं बहुत बड़ी सम्पत्ति है और इसकी खाद से हम अपने कृषि उत्पादन को पचचीस गुना बढ़ा सकते हैं। सरकारी पशु गणना रिपोर्ट १९५५-५६ के अनुसार देश में गोवश का प्रतिदिन ६८,३९,३०० मैन गोबर होता है। इससे कुछ कम गोमूत्र होता है। 'नेशनल इनकम कमेटी' १९५१ की रिपोर्ट में पृष्ठ ६८, अपेग्निबस ४४ ए पर गोबर और मूत्र के जो भाव लगाये गये हैं उसके अनुसार केवल गोवश से देश को प्रतिवर्ष ६२१ करोड़ ४० का गोबर प्राप्त होता है, अर्थात् एक पशु से ३८ ४० का गोबर। इसी रिपोर्ट के आधार पर एक गाय के मूत्र का वार्षिक मूल्य १४ ४० है (जिससे

mal Husbandry in India १९५१ के अनुसार १६० ४० की माइट्रोजन, ६४० ४० की फास्फेट तथा ६५० ४० की पोटाश कुल १३६० की अति उपयोगी सामग्री तैयार की जा सकती है। ये अब से २३ वर्ष पुराने मूल्य हैं जिनके अब चौगुने हो जाने में तो कोई सन्देह ही नहीं। यदि यह सब न किया जाय, पशुओं से यह लाभ न उठाया जाय तो भी गोवश के प्रत्येक पशु से हमें प्रतिवर्ष ५२ ४० का गोबर एवं गोमूत्र मिल जाता है चाहे वह पशु 'उपयोगी' हो या 'अनुपयोगी', जबकि सरकारी गोसवनों में रखे गये 'अनुपयोगी' पशुओं का खर्चा २५ ४० से लेकर ३० ४० तक आता है क्योंकि वहाँ उग्रे बहुत कम मूल्य में जगली चारा उपलब्ध हो जाता है। पहाड़ों की तराई तथा अन्य इलाकों में किसान लालो गाय बेल केवल गोबर और मूत्र के लिये ही पालते हैं और वे किसी भी मूल्य पर अपने बूढ़ या अगम पशु को नहीं बेचते।

हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री नेहरू जी को एक बड़ी शिकायत यह रही कि भारत में अधिकांश गाएँ एक एक पाव दूध देने वाली हैं जबकि रूस आदि देशों में गाय एक एक मन दूध प्रतिदिन देती हैं। एब० नेहरू जी का यह आरोप अक्षरशः सत्य है। हम स्वयं इस तथ्य से दुखी हैं कि जिस भारत की गाएँ 'शतोदना' (सौ व्यक्तियों को एक समय भरपेट भोजन कराने वाली) प्रसिद्ध थीं, उसी भारत की गाएँ आज 'एकोदना' भी नहीं। भारतीय गाय की दूध देने की क्षमता में निरन्तर ह्रास हो रहा है, और जैसा कि हम पूर्व ही बता आये हैं, यह ह्रास सन् ३५ से ६१ तक ५० प्रतिशत तक हुआ है। प्रश्न यह उठता है कि आखिर इस ह्रास के कारण क्या हैं? और उसके लिये बोयी कौन है? हमने इस समस्या पर अब भी गम्भीरता से विचार किया सरकार को ही बोयी ठहराया और इसके पीछे जो शक्ति (Factor) काम कर रहा है वह है दूधित शिक्षा और उसी के परिणाम स्वरूप दूधित खानपान, जिसने अपने प्रभाव से बिबेक से 'बिबेक शक्ति' को नष्ट कर दिया है। गोवश के प्रति सरकार की उपेक्षा का ही परिणाम है कि गावों के चरने के लिये देश में आज गोबर धूमि का नितागत क्षय हो गया है। आज गावों तक में घास के चरने के लिए



भूमि नहीं। पशु लाघ की ७० प्रतिशत कमी होने पर भी वस करोड़ रुपया की वार्षिक खली विदेशों को भेजी जा रही है। अच्छे सांड आज एक प्रतिशत भी उपलब्ध नहीं हैं। दूसरे देशों की सरकारों ने अपने भोवसा को उन्नत पशु दुग्धक बनाने के लिए काकी प्रयत्न किया है। भारत में सरकारी सूत्र ने गाय के रक्षण एवं सवर्धन पर इतना ध्यान नहीं दिया। लेकिन इस उपेक्षित अवस्था में भी गाय आज पुन अपनी आर्थिक उपयोगिता और दुग्ध उत्पादन की क्षमता प्रदर्शित कर रही है।

केन्द्रीय गौसम्बद्ध न परिषद् द्वारा देश में प्रति वर्ष जो दुग्ध प्रतियोगिता आयोजित की जाती है उसमें गत ५-६ वर्षों से हर वर्ष गाय की ही अधिक दूध देने पर पुरस्कार मिल रहा है। दुग्धोपादन में भंस गाय से अब भी पिछड़ रही है। उक्त परिषद् के अध्यक्ष श्री उ०न० डेबर माई के शब्दों में गाय को अगर मौका मिले तो वह अद्वितीय रूप से दुग्धोपादन की क्षमता प्रदर्शित कर सकती है। 'उर्लिकांचन (महाराष्ट्र) की गोशाला में 'श्रीगाय' की प्रति वर्ष ४५, ४७ पौंड से भी ऊपर दूध देने में पुरस्कार मिल रहा है। गतवर्ष इस गोशाला की 'गोपालरत्न' की पदवी दी गई थी। सन् १९९३-९४ की दुग्ध प्रतियोगिता के लिए जो रिकार्डिंग किया गया उसमें उर्लिकांचन की गाय ने ५३ पौंड दूध दिया। गतवर्ष पंजाब के प्रसिद्ध गोपालक श्री हरीसिंह जी के फार्म की साहीवाल गाय को ६८ ६ पौंड दूध देने के लिए दो हजार रुपया पुरस्कार दिया गया। भंस को जितनी खुराक मिलती है, जितना अच्छा उसका पालन-पोषण होता है उतना यदि गाय का हो तो भारत की गाय इस अबनत दशा में भी स्व० भी नेहक की आकांक्षा की पूर्ति कर सकती है।

गत वर्ष गांधी जयन्ती के अवसर पर बम्बई की आरे कालोनी में गायों के एक नए कक्ष का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने देश में दूध की कमी का उल्लेख करते हुए कहा था—' पर्याप्त मात्रा में दूध न मिलने से अधिकशां भारतीय शारीरिक दृष्टि से शिथिल हैं और उनकी यह असमर्थता देश के विकास में बाधक बन रही है।'

गऊ की माता मानने वाले प्रतिवर्ष गोपाष्टमी पर्व मनाकर गौ की कामधेनु, क्षीरबन्दा, अवध्य और अघ्न्या

कहने वाले, सप्तर के शिरोमणि देश, इस स्वतंत्र भारत के हम आर्यों पर इतने अधिक बम्बीर लांछन और कीन सा हो सकता है? श्रद्धि निर्माण के महत्वपूर्ण अवसर पर हम देश की आर्य जनता से अनुरोध करते हैं कि वह जागे और राष्ट्र की लक्ष्मी, सुख और समृद्धि की मुख्य आधार गऊ को उन्नत और विकसित बनाने में सहयोग दें ताकि शतौदना कामधेनु निर्भय होकर बिचरग करें और भारत में फिर से दूध दही की नदियां बहती बिल्लाई दें। सपन्न लोग घर पर गऊए पालें। शेष लोग इतना व्रत अवध्य लें कि दूध घ्यासमव केवल गाय का ही प्रयोग में लाएँगे। इससे गोपालन को प्रोत्साहन मिलेगा, गाय की रक्षा होगी।

[पृष्ठ ६० का शेष]

वेदों के साथ जवर्द्धत अन्याय किया है। कहां वेद की साधवैदिक एवं सार्वजनिक प्राणिमात्र के कल्याण की भावनायें और कहां उनकी गिनती उनसे भी हेय जो अमानुषिक और परस्पर विरोधी शिक्षाओं से भरे ग्रन्थ हैं। कहां सृष्टि के आवि में प्राणिमात्र के कल्याण के लिए दिया गया ईद्वरीय ज्ञान और कहा अल्पज मानव के मस्तिष्क की कल्पनाओं और इतिहास से भरे ये ग्रन्थ। कंसी तुलना कंसी सामान्यता। रिसर्च का अर्थ तो यह है कि पदार्थ का सत्य ज्ञान का पता लगाना और वेदों के विषय में बही अर्थ करना जिन भावनाओं से वे जोत प्रोत हैं।

मेरा बिचार है कि आज नहीं तो कल महर्षि की भाषा शैली ही वेद का सत्यार्थ प्रगट करने में समर्थ होगी जिसे प्रो० मधुसूदन ने स्वीकार नहीं की। इसी शैली को न अपनाने के कारण ये भ्रातिया हो रही हैं।

ऋषि दयानन्द वचनानामृत

★ जो कोई तुलु को छुडाना और सुलु को प्राप्त होना चाहे वह अघर्म को छोड़ घर्म अवश्य करे।



टी० बी० (तपेदिक)

की अचूक चिकित्सा घर बैठे करें। ५८ वर्ष की लौज,
अनुभव एवं परीक्षण का परिणाम,

‘यज्ञ-चिकित्सा’—भाग २ पूर्णतः सशोधित
नवीन संस्करण

सेनेटोरियम का परिणाम ८० प्रतिशत। लेखक-सर-
कार द्वारा अनेक बार पुरस्कृत एवं समानित स्व० डा०
फुन्बनलाल जी अग्निहोत्री एम डी (लडन) मेडिकल
शाफिसर टी. बी सेनेटोरियम। मूल्य ५ ००

लेखक की अन्य पुस्तकें

२—आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा

आयुष्य लेखक एड० श्री भावलकर जी, अग्र्यक्ष लोक
समा। हर रोग की सरल अचूक चिकित्सा घर पर ही
स्वयं करें। मू० ५ ००

३—आरोग्य शास्त्र

सर्वथा स्वस्थ रहने के वैज्ञानिक अनुसृत नियम बताने
वाली अपने विषय की एकमात्र पुस्तक। उपहार में देने
के लिये अनुपम भेंट। मू० २.००

[उक्त सभी पुस्तकें शिक्षा विभाग एवं पचायत राज
द्वारा स्वीकृत और सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं।

४—राष्ट्र उत्थान की कुञ्जी

गऊ प्रवृत्त पदार्थों द्वारा अनेक रोगों की चिकित्सा एवं
गऊ की उपयोगिता बताने वाली अनूठी पुस्तक। मू० ५०

“चारों पुस्तकें एक साथ लेने पर छूट १ ००। डाक-
व्यय २ ००। हवन सामग्री—तपेदिक नाशक ६ ५०,
विशिष्ट रोग नाशक ४ ५०, दैनिक प्रयोगार्थ “सर्वरोग
प्रतिरोधक—२ ५० प्रति सेर।”

स्वास्थ्य भंडार, १६, केलाबाग, बरेली।

प्राच स्वास्थ्य भंडार, ७/३ लाजपतनगर, चौक, लखनऊ-३

आर्य-जगत् के प्रसिद्ध कविवर—

श्री ‘प्रणव’ शास्त्री एम.ए. द्वारा लिखित

★ ज्वाला ★

वास्तव में ज्वाला है।

जिसका प्रत्येक छन्ब हृदय में बीर रस की धारा बहा
देता है। चीन की चितावनी देने वाले जिसके छन्ब हृदय में
ज्वाला भड़काते हैं। जिसके भूमिका लेखक डा० सूर्यदेव
शर्मा एम० ए० अबमेर हैं। एक बार अवश्य पढ़िये।

मूल्य लागत मात्र केवल ५० नये पैसे।

नौजवान जाग

यह भी उन नौजवानों के लिये लिखी गई है, जिन्हें
अपने देश से प्यार है। उस लाल चीन के काले कारनामों
की कविता ब शायरी द्वारा पोल खोली गई है। जिसकी
एक प्रति सीमा के जवानों की मुफ्त भेजी गई है।

मूल्य २५ न.पै. दोनो पुस्तकों के लिए ७५
नये पैसे के लिए टिकट भेजकर मंगवाइये।

मिलने का पता.—

१—गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क देहली

२—राधेश्याम गुप्ता, वार्ड नं. ६ बल्लबगढ़

(गुड़गांव)

कौन? आर्यसमाज करेगा भारतीय तारुण्य के प्रति

शका—भाई सराबी दशा विगड गई, देश का नव निर्माण,
बता दो कौन करेगा ?

समाधान—बनाये विगडी देश की रक्षा देश का पहरेदार,
यह आर्यसमाज करेगा ।

शका—भटक रहे अन्धेरे मे आज देश के नर - नारी,
नही सूझता पय जनता फिरती है मारी-मारी,
इन्हे मार्ग दिखलाने वाली अमर ज्योति का दान,
बता दो ?

समाधान—सत्यार्थप्रकाश लिए हमको आगे चचना है,
पढे भले ही विष पीना या कि आग मे जलना है,
अन्धकार के कण-कण मे नूतन ज्योति विस्तार,
आर्यसमाज करेगा ।

शका—बिलासिता की घोर घटा आज देश मे छाई है,
कृत्रिमता और फँशन की काली आधी भाई है,
दानवता के कुटिल करो से मानवता का त्राण,
बता दो कौन करेगा ?

समाधान—भोग त्याग की धारा को एक केन्द्र मे ला करके,
ज्ञान कर्म का मनमोहक सम्मेलन बुलवा करके,
भौतिकता मे आध्यात्मिकता का सुलकर संचार,
आर्यसमाज करेगा ।

शका—नगे नाच लडकियों के देख शर्म शरमाती है,
कहकर कोई क्या कर ले लोई उतर जब जाती है,
लाज लुटी मर्यादा मिट गई मातृशक्ति का मान,
बतादो कौन करेगा ?

समाधान—समझे दुनिया नारी को बेटा भगिनी और माता,
मातृभूमि के रक्षक मे आर्य निभायेंगे नाता,
भाई बहिन का प्रचलित पावन प्रेम भरा व्यवहार,
आर्यसमाज करेगा ।

त्याग, तपस्या, स्वाभिमान हो, नई रवानी हो !
नूतन बल, नूतन पीरुष से भरी जवानी हो ! !

ऐसी हो टुकार कि काई-सा अरिदल फट जाए ।
ऐसी हो ललकार कि वीरो पर रिपु आ झुक जाए ।
दीप्तानन लख अन्यायी दल तृण-सा धर-धर कपि-
गरजे तो सागर मे रिपु पर प्रलय-घटा घहराये ।
दुष्टो को हो शूल, सज्जनों को कल्याणी हो !
नूतन बल, नूतन पीरुष से भरी जवानी हो ! !

जल सी हो शीतलता, सुमनो सा गुण-सीरुष हो-
हो सहिष्णुता तरुसी निज संस्कृति का गौरव हो,
सूरज सग हो तेज, मिटा दे जो जग का अधियारा
पावक सी पावनता हो, मन मे न मलिनता हो ।

सरस आचरण, मधुर कर्म हो मधुमय वाणी हो ।
नूतन बल, नूतन पीरुष से भरी जवानी हो ! !

धमा धरित्री-सी, धीरज हो अचल हिमालय-सा ।
सुरसरि-सी निर्मलता हो, हो सयम चातक-सा,
हो हस-सा विवेक, क्षीर को जल से विलगाये,
हो ताजगी पवन सी, निरखलपन मृग-शावक-सा
दानवता पर मानवता की विजय निशानी हो ।
नूतन बल, नूतन पीरुष से भरी जवानी हो ! !

—भगवानशरण भारद्वाज 'प्रदीप'
संहति सस्थान, स्वाभाकुतुब बरेली

सत्य ज्ञान की किरणो दूर सकल तम भागेगा,
ऋषि सन्देश सूजने दो देश का जन-जन जागेगा,
रोग कई है, एक नहीं है, इन सबका उपचार,
आर्यसमाज करेगा ।

—कुं सुशीला आर्या एम०ए०
कन्या गुरुकुल, नरेला



महर्षि की सार्वभौमिकता



(६०—मी वेदव्रत शास्त्री सिद्धान्तवाचस्पति, श्री गांधी विद्यालय इण्टर कालेज)

महर्षि की कीर्ति गरिमा स्वतन्त्र भारत में किस स्थाय ने गाई जाती है ? जब यह प्रश्न हमारे समक्ष उपस्थित होता है तो सिर लज्जा से नत हो जाता है। उस समय हृदय से घड़ी माघ प्रादुर्भूत होता है कि भारत के वर्तमान आर्य राजनीतिक अथवा आधुनिक राजनीतिक, मुट्टी भर लोगों के असन्तुष्ट होने के भय से महर्षि का नाम तक लेना पसन्द नहीं करते, इन्हें कृतघ्न तो नहीं कह सकते परन्तु इन्हें कायर कहने में सकोच भी नहीं करना चाहिए। हम (आर्य) राजनीति में पंर रखते नहीं, कि बोट की मृगतुष्णा के आखेट हो जाते हैं। उस समय सत्याभ-प्रकाश का छडवां समुल्लास ही नहीं, अपितु महर्षि के महान् उपचारों तथा आदर्शों को भी विस्मरण कर देते हैं। इतना ही नहीं पाश्चात्य वातावरण के प्रबाह में हमारे पाँव भी उठ जाते हैं। हमें गर्व करना चाहिये कि हमारा पुत्र कितना महान् था इसने मानवजाति के समुत्थान के लिये अपने मोक्ष परमानन्द को भी कुछ नहीं समझा। आज हम जिस स्वतन्त्र भारत की कीर्ति तथा उन्नति पाते नहीं अर्थात्, यह समुन्नत भारत उन्हीं की अपूर्व सूझ बूझ का परिणाम है। आज हमारे नेता जब अहिंसाकों का गुणवान करते हैं तो श्री गांधी, बुद्ध और तथा ईसा के सामने महर्षि को भूल जाते हैं या यूँ कहिये कि उनकी जिह्वा कुष्ठित सी हो जाती है।

आज हम महर्षि की अलौकिक अहिंसा पर प्रकाश नहीं डालना चाहते, क्योंकि यह एक स्वतन्त्र विषय हो जाता है। परन्तु इतना कहने से भी नहीं बूकते कि महर्षि की अहिंसा वृत्ति इन महानुभावों से कहीं बड़ कर थी। आज दोषमालिका का दिन है, इसी दिन महर्षि ने अपनी विषय जीवन लीला "ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो" इस अन्तिम वाक्य से समाप्त की थी। आज हम उसी अमर ज्योति की विषय-छटा से अपने हृदय के निविडान्धकार को दण्ड करना चाहते हैं। अपने गुरु की अर्चना उसी की

अनुपम शवावधि से करना चाहते हैं जिस तरह उस विषयात्मा ने प्रभु का पुत्र-गान उसी की वेद-बाणी से किया था।

महर्षि की मानव प्रियता

"व्यक्ति में आर्यावर्त वेश में उत्पन्न और बसता है तथापि जैसे इस वेश के मतमतान्तरो की झूठी बातों का पक्षपात न करके याथातथ्य प्रकाश करता है वैसे ही दूसरे वेशस्थ व मतोन्नति के साथ भी वर्तता है। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषयों में वर्तता है वैसे विदेशियों के साथ भी, तथा सब सज्जनों को वर्तना योग्य है।

निबंलों की रक्षा

जैसे पशु बलवान होकर निबंलों को बुझ देते और मार भी डालते हैं जब मनुष्य शरीर पाके बैसा ही कम करते हैं तो वे मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं और जो बलवान् होकर निबंलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहलाता है और जो स्वार्थवश पर हानि मात्र करता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है। "सत्यां की भूमिका से"

दण्ड से ही भ्रष्टाचार की निवृत्ति सम्भव

प्रश्न—जो राजा व राणी अथवा न्यायाधीश व उसकी स्त्री ध्यनिचारवि कुकर्म करे तो उनको कौन सा दण्ड देवे ?

उत्तर—समा अर्थात् उनको तो प्रजा पुरुषों से भी अधिक दण्ड होना चाहिए।

प्रश्न—राजा उनसे दण्ड क्यों ग्रहण करेगा ?

उत्तर—राजा भी एक पुष्यात्मा भाग्यशाही मनुष्य है जब उसी को दण्ड न दिया जाय और वह दण्ड न ग्रहण करे तो दूसरे मनुष्य दण्ड को क्यों मानेगा ? और सब प्रजा और प्रधान राज्याधिकारी और समा धामिकता



से दण्ड चाहें तो अकेला राजा क्या कर सकता है ? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा प्रधान और सब समर्थ पुरुष अन्याय में डूब कर न्याय धर्म को डूबा के सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जायें अर्थात् उस श्लोक के अर्थ को स्मरण करो कि न्याय-दण्ड का नाम ही राजा और धर्म है जो उसका लोप करता है उससे नीच पुरुष दूसरा कौन होगा ?

प्रश्न—यह कडा दण्ड होना उचित नहीं, क्योंकि मनुष्य किसी अङ्ग का बनाने हारा ब जिलाने वाला नहीं है इसलिए ऐसा दण्ड न देना चाहिए ।

उत्तर—जो इसको कडा दण्ड जानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते क्योंकि एक पुरुष को इस प्रकार दण्ड देने से सब बुरे काम करने से अलग रहेंगे और बुरे काम को छोड़कर धर्म मार्ग में स्थिर रहेंगे । सच पूछो तो यही है कि एक राई भर सब के भाग में न आवेगा और जो सुगम दण्ड दिया जाय तो दुष्ट काम बहुत बढ़ कर होने लगेंगे । वह जिसको तुम सुगम दण्ड कहते हो वह करोड़ों गुना अधिक होने से करोड़ों गुना कठिन होता है क्योंकि जब बहुत मनुष्य दुष्ट कर्म करेंगे तब थोड़ा-थोड़ा दण्ड भी देना परेगा अर्थात् जैसे एक को मन भर दण्ड हुआ और दूसरे को पाव भर तो पाव भर अधिक एक मन दण्ड होता है तो प्रत्येक मनुष्य के भाग में आध पाव बीस सेर दण्ड पड़ा तो ऐसे सुगम दण्ड को दुष्ट लोग क्या समझते हैं ? जैसे एक मन, और सहस्र मनुष्यों को पाव पाव दण्ड हुआ तो सबा छ मन मनुष्य जाति पर दण्ड होने से अधिक और यही कडा तथा बहुत, एक मन दण्ड मनु और सुगम होता है । "छटे समुल्लास से" ।

गणतन्त्र का स्वरूप

यह संक्षेप में राजधर्म का वर्णन यहाँ किया गया है । वेद, मनुस्मृति के सत्य, अष्टम, नवम अध्याय में और शुक्रनीति तथा बिदुर प्रजागर और महाभारत शान्ति पर्व के १५-धर्म और आपद्बर्धम आदि पुस्तकों में देखकर पूर्ण राजनीति को धारण करके माण्डलिक अथवा सार्व-नीच चक्षुर्वर्ती राज्य करें और यह समझें कि "वयं प्रजापते प्रजा मनुष्य" यह यजुर्वेद १८/२९ का वचन है । हम प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्रजा और परमात्मा हमारा

राजा, हम उसके निकर भूयवत् हैं वह कृपा करके अपनी सृष्टि में हम को राज्याधिकारी करे और हमारे हाथ से अपने सत्य न्याय को प्रवृत्ति करावे ।

"सत्या० षष्ठ समुल्लास" ।

छुआछूत का विरोध

प्रश्न—द्विज अपने हाथ से रसोई बनाकर खावें या शूद्र के हाथ की बनाई खावें ?

उत्तर—शूद्र के हाथ की बनाई खावें, क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णस्थ स्त्री पुरुष विद्या पढ़ने, राज्य-पालन, और पशु पालन छेती ध्यापार के काम में तत्पर रहे और शूद्र के पात्र तथा उसके घर का पका हुआ अन्न आपत्काल के बिना न खावें—मुनो प्रमाण—"आर्वाधिष्ठाता वा शूद्रा सस्कर्तारि स्यु" आपस्तम्ब प्र० २ । पटल २ । खण्ड २ । सूत्र ४ । यहा स्वामी श्री ने यह कहा है कि "शूद्र के घर का पका अन्न तथा उसके पात्र में आपत्काल के बिना न खावें" इसका अन्वयार्थ यह है कि ये बेचारों गरीब और अशिक्षित होते हैं । इनका जीवन-न्तर शोचनीय है, वे गन्दे रहते हैं, स्वच्छता बनामात्र से कर नहीं पाते । अत इनके घर का वातावरण मन को नहीं रक्षेगा । इन्हीं कारणों से इनके घर पर नहीं खाना खाना चाहिये । परन्तु यदि इन्हे अपने घर पर रखेंगे तो इनका रहन सहन अपने अनुकूल बना लेंगे । अत इनके हाथ की पकी रसोई खाने में कोई दोष नहीं ।

"प्राचीन भारत में छुआछूत नहीं थी"

जो प्रथम आर्वावर्त वैशीय लोग व्यापार, राज्यधर्म और भ्रमण के लिये सब भूगोल में घूमते थे और जो आजकल छुआछूत और धर्म नष्ट होने की शका है वह केवल मुसलमानों के बहकाने से और अज्ञान के बढ़ने से है । जो मनुष्य देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर जाने-आने में शका नहीं करते वे देश देशान्तर के अनेक विध मनुष्यों के समागम में रीति-माति देखने, अपना राज्य और व्यवहार बढ़ाने से निर्भय शूर भीर होने लगते हैं और अच्छे व्यवहार का ग्रहण, बुरी बातों के छोड़ने में तत्पर होके बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं । मला जो महा-भ्रष्ट म्लेच्छ-कुलोत्पन्न वैश्यादि के समागम से आचार भ्रष्ट धर्महीन नहीं होते; किन्तु देशान्तर के दुष्कों के सभामन क्लृप्त और

बोध मानते हैं ! यह केवल मूर्खता की बात नहीं तो क्या है ?

छुआछूत से हानियाँ

क्या सब बुद्धिमानों ने यह निश्चय नहीं किया कि जो राजपुत्रों (सैनिकों) में युद्ध समय में भी चौका लगाकर रसोई बना के खाना, अवश्य पराजय का हेतु है ? किन्तु क्षत्रिय लोगों का (सैनिकों का) युद्ध में एक हाथ से रोटी खाते जल पीते जाना, अपना विजय करना आचार और पराजित होना अनाचार है। इसी मूढता से इन लोगों ने चौका लगाते-लगाते विरोध करते-कराते सब स्वातन्त्र्य आनन्द, धन, राज्य, विद्या, और पुत्रार्थ पर चौका कर हाथ पर हाथ धरे हैं और इच्छा करते हैं कुछ पदार्थ मिले तो पकाकर खायें, परन्तु वंशानुगत होने पर जानो सब आर्यावर्त देश भर में चौका लगा के सर्वथा नष्ट कर दिया। “दशम समुल्लास से”।

संस्कृत भाषा की सजीवता

अपेक्ष ने संस्कृत भाषा को मृत भाषा कह कर इसकी तरफ से लोगों में अनिच्छा पैदा कर दिया था। महर्षि ने संस्कृत का महत्त्व पुनः सबके सामने रखा। यथा—

प्रश्न—संस्कृत विद्या में पुरी राजनीति है या अथुरी ?

उत्तर—पुरी है क्योंकि जो जो मूगल में राजनीति बली है और चलेगी वह संस्कृत विद्या से ली है और जितना प्रत्यक्ष लेख नहीं है उनके लिये “प्रत्यह लोके वृष्टेवच शास्त्रं वृष्टेवच हेतुमि”। मनु ८।३ और भी—आर्यसमाज के प्रथम और तीसरे नियमों में “सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से ज्ञाने जाते हैं उन सब का आविर्भाव परमेश्वर है और तीसरे नियम में “वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है”। वेद ईश्वरीय और संस्कृत में पूर्णरूप से थी। परन्तु आर्य जनों में संस्कृत भाषा का महत्त्व नहीं ही के बराबर है। ये स्वयं तो वेदों का पढ़ना-पढ़ाना इत्यादि पाठ नित्य करते हैं तथापि स्वयं तथा अपने बच्चों को संस्कृत नहीं पढ़ाते-पढ़ाते। प्रच्छन्न रूप से अंग्रेजी भाषा तथा पाश्चात्य सभ्यता व्यवहार तथा आचरण में रत हैं।

ईसाई तथा मुसलमानों के प्रति महर्षि की सहानुभूति

प्रायः लोगों के हृदयों में यह ज्ञान घर कर गया है कि महर्षि इन दो सम्प्रदायों से दूरे रहते थे परन्तु ऐसी धारणा सर्वथा निर्मूल है। क्योंकि तेरहवें तथा चौदहवें समुल्लास की भूमिका में महर्षि स्वयं लिखते हैं—“यदि एक मतवाले दूसरे मतवाले के विषयों को जानें और अन्य न जानें तो यथावत् सवाह नहीं हो सकता किन्तु अज्ञानी किसी भ्रमण्य बाड़े में घिर जाते हैं। ऐसा न हो इसलिये इस ग्रन्थ में प्रचारित सब मतों का विषय बोझा पोड़ा लिखा है। “तेरहवें समु० की भूमिका से”।

सच तो यह है कि इस अनिश्चित अज्ञानभंगुर जीवन में पढ़ाई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अन्य को रखना मनुष्य-जन से बहि है। इसमें जो कुछ बिपद्य लिखा गया है, उसको सज्जन लोग विहित कर देंगे तत्पश्चात् जो उचित होगा तो माना जायगा क्योंकि यह लेख हठ, बुराप्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वाद विवाद और विरोध घटाने के लिये किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ क्योंकि एक दूसरे की हानि करने से पृथक् रह परस्पर को लाभ पहुँचाना हमारा मुख्य अर्थ है।

(चौदहवें समुल्लास की भूमिका से)

ऐसे उदार चेता महान् पुत्र के गुण गान में यदि हम चुप हैं तो हमारी कृतघ्नता है। जब तक हम महर्षि के विचारों का सत्कार में प्रसार नहीं करते तब तक सत्कार की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकती। आर्यजनों का परम कर्तव्य है कि अपने यश के मोह को त्यागकर महर्षि का कीर्तिष्वाज सत्कार में फहरायें। इनके तप त्याग का आदर्श साहित्य रूप में निर्माण कराकर सत्कार में बितरित करें। आर्य विद्वानों को प्रेरित करें कि छोटे-छोटे बुकलेट तैयार करें। जिन्हें लोग यात्रा आदि में पढ़ सकें। क्योंकि आज लोगों के पास धन और समय की कमी है। जगता अधिक मूल्य की पुस्तकें नहीं खरीब सकती और इस भौतिकता के जमाने में न इसके पास इतना समय है कि वह बड़े-बड़े ग्रन्थ पढ़ सके। इस विद्या में आर्यसमाज को रचनात्मक रूप से प्रगतिशील होना चाहिये।



ऋषि दयानन्द की सूझ

(से०—श्री स्वामी इष्टानन्द जी गुरुकुल अयोध्या)

एक बार ऋषि दयानन्द अपने उपदेश आगरा बनारस आदि शहरों में करते लगे तो यह प्रतीत हुआ कि हम में अभी कुछ कमी है जो हमारे उपदेश सर्व साधारण पर कृतकार्य नहीं होते ऐसा सोचकर उपदेश का कार्य बन्द कर फर्रुखाबाद टोका घाट पर एक टूटी बिसरात में रहने लगे। उस समय स्वामी जी के पास केवल कोपीन के और कोई वस्तु न था। शहर के भक्तों ने तख्त गद्दे आदि का प्रबन्ध करने को कहा। स्वामी जी ने कुछ स्वीकार नहीं किया। एक ग्राम ठाकुर छज्जूसिंह जो नित आया करते थे स्वामी जी के पैर छूकर चले जाते थे, उन्हीं से थोड़ा पुआल मगा लिया था। उसी में घुसकर अपना जाड़ा काट लेते थे।

वे ठाकुर हमको जलालाबाद (माहजहापुर) के उत्सव पर मिले थे। १०० वर्ष आयु समाप्त कर मरे हैं। यह वृष्टान्त किसी जीवन चरित्र में नहीं आया। वह बताते थे कि मैं बराबर जब तक स्वामी जी रहे जाता रहा और पैर छूकर वापस आता था। कभी-कभी मट्टा ले जाता था, स्वामी जी उसको पी लेते थे। शहर के लोगों को स्वामी जी ने २ घण्टे सत्संग के दे रखे थे। वह ४ बजे से ६ बजे शाम को लोग आते थे। वेद भाष्य की चर्चा वहीं से प्रारम्भ हुई। धन भी एकत्रित होने लगा। माननीय नेठ पुरुषोत्तम दास तथा सेठ दुर्गाप्रसाद के पास धन जमा होता रहा। भेरे कान में भी यह बातें सुनाई पड़ी। मनमें भी यह बात आई पर मैं दुखी हुआ और यह सोचने लगा यदि धन होता तो स्वामी जी की सहायता इस कार्य में करता। इसी विचार से दूसरे दिन जब स्वामी जी के पास गया तो पैर छूकर बैठ गया। स्वामी जी ने पूछा, छज्जू आज क्या बात है? मैं रोने लगा, उसी रोजासी में मैंने कहा—स्वामी जी मैं बड़ा गरीब हूँ, अन्यथा आपके इस महान् कार्य में कुछ धन देकर सहायक बनता स्वामीजी ने सहज स्वभाव चाकू (यह फल काटने को आया था) उठाया और कहा भगल एक आलू बेच दो ५००)

ले लो तब मैंने कहा स्वामी जी आलू तो १०००) में भी न दूंगा स्वामी जी ने कहा फिर बताओ तुम गरीब कहा हो एक ही आलू का सौदा है मे चूप रह गया तब स्वामी जी ने समझाया कि भगत मनुष्य पुरुषार्थ का त्याग देता है तो बन उसको त्याग देना है। वास्तव में पुरुषार्थ की कमी ही गरीबी है, ईश्वर प्रदत्त गरीबी मनुष्य के अंग प्रत्यंग में कुछ बाधा आ जाय उसका सही पता दूसरे करते हैं और करनी भी चाहिये। उस दिन से मैं नित प्रात में उठकर अपने पुरुषार्थ में लग जाता कभी दुखी नहीं रहा। यह तो छज्जूसिंह की बात हुई पश्चात् धन की राशि बढ़ती गई सुना जाता है १ लाख २५ सहस्र रुपया उपर्युक्त महानुभावों के पास पड़ा रहा समाज से किसी कारण के पृथक् हो गये रुपया जैगा था वैसा पड़ा रहा बाद में आर्यसमाज फर्रुखाबाद ने मुकदमा लड़ा और दोनों महानुभावों पर खानों के मुताबिक डिग्री हुई सुना जाता है कि फर्रुखाबाद ने उस रुपये को कन्या इंटर कालेज फर्रुखाबाद में लगा दिया। आगे महानुभाव विचार करे स्वामी जी ने वेदभाष्य किया बहुत सी पुस्तकें लिखी शास्त्रार्थ किये, उस समय देश की बड़ी शोचनीय दशा थी स्वामी जी को अपने कार्यों से तनिक भी अवकाश न मिलता था, अकेले स्वामी जी अकेले जग विरोधी था। स्वामी जी सत्य के पुजारी थे देश की दशा बिगड चुकी थी।

सत्यार्थ प्रकाश

ईश्वर की सत्ता को प्रथम समुल्लास माहि—
दूजे माहि शिक्षा की नीति निर्धारो है।
तीसरे में ब्रह्मचर्य विधि को विधान लिखो—
बिना ब्रह्मचर्य नाहि गृहस्थ अधिकारी है।
चौथे समुल्लास माहि गृहस्थ को प्रवेश लिखि—
पाचवें बानप्रस्थ ग्रन्थास मुखकारी है।



छूटे मे राज धर्म शोध के बताया सबै—
 वैदिक पद्धति जौन ऋषि ने निहारी है ॥१॥
 सातवें बताया ईश वेद को विचार "नट्ट"—
 आठवें मे सृष्टि उत्पत्ति जतलाई है ।
 नवें माहि बन्व मोक्ष विद्या ओ बविद्या सबै—
 दशमे मे आचार और भक्षाभक्ष समुझाई है ।
 एकादश हिन्दुन बीच फेले जो कुपथ मत—
 तिनके सुधार हित लेखनी लगाई है ।
 द्वादश माहि जैन बौद्ध भूले जौन-जौन "दृष्ट"—
 ताको समुझावो, ग्रन्थ उनके देखाई है ॥२॥
 तेरह मे ईसाई लोग मानत जौन-जौन ग्रन्थ—
 तिनही की भूल देखि उनको बताई है ।
 ताहीभाति चौदह मे यवन मत की भूलन को—

शोधि-शोधि खोजि-खोजि उनको देखाई है ।
 अपने मत इनके बीच तनिक हू लिखो है नाहि—
 सत्य की कसोटो सत्यार्थ लिखि गाई है ।
 अपने मन्तव्य को स्वमव्यामन्तव्य माहि—
 लिखिके देखायो पुनि सत्य अपनाई है ॥३॥

इसी भाति स्वामी जी की आज्ञानुसार अपनी सूझ को बढ़ाना चाहिये । हम यदि स्वामी जी के आदेश को नहीं मानते, और आलसी प्रमादी होकर अपने को नहीं सुधारते तो ऋणी रहेंगे । हम प्रतिज्ञा करें—सत्यार्थ-प्रकाश ऋषेदादि भूमिका जीवन चरित्र, प्रति वर्ष एक आवृत्ति करे, यही तीनों सिद्धांतत्रयी है ।

विश्वकर्मा वंशज बालकों को ७०००) का दान श्री भवानीलाल गज्जूलाल जी शर्मा स्थिर निधि



१-विश्वकर्मा कुलोत्पन्न श्रीमती तिरुजोवेवी-भवानीलाल शर्मा ककुहास की पुण्यस्मृति में श्री भवानीलाल जी शर्मा अकबरपुर जिला कानपुर वर्तमान अमरावती (विदर्भ) निवासी ने श्री विश्वकर्मा वंशीय बालकों के हितार्थ ७०००) श्री धनराशि सभा को समर्पण कर श्री ०जी० शर्मा स्थिर निधि की योजना निम्नलिखित नियमानुसार माहपद स० २०१४वि० सितम्बर १९५७ ई० को स्थापित की ।



२-इस मूलधन से आर्थिक

व्याज जो कुछ प्राप्त होगा, उसे उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा विश्वकर्मा वंशज गरीब, असहाय किनु होनहार बालक बालिकाओं के शिक्षण मत्र में व्यय करती रहेगी ।

३-उक्त निधि से आर्थिक सहायता लेने वाले इच्छुकों को मास बुलाई में १) के स्टाण्ड भेजकर सभा से छपे कार्य समाकर भरकर भेजना आवश्यक है ।

—मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश



स्वामी जी के जीवन पर आधारित एकांकी—

मृत्यु को जीतने वाले ऋषि

(६०—श्री डा० रामचरण महेंद्र एम० ए०, पी०एच० डी०)

[पृष्ठभूमि—सबत १९४० के कार्तिक मास की अमावस्या और मंगलवार का दिन है

साय के पांच बजा चाहते हैं ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती मृत्युशय्या पर पड़े हैं । कुछ भक्त, श्रद्धालु और शिष्य समीप बैठे हैं, कुछ खड़े हैं । सबके चेहरे पर मानसिक व्यथा और आन्तरिक विलोभ के चिह्न हैं । सब परेशान से नजर आते हैं । 'स्वामी जी के नेत्र मुंदे हुये हैं ।]

एक भक्त—(परेशान) उफ् ! कैसी दुर्बल पीडा है । सबको प्रकाश देने वाली इस महान् आत्मा को भी स्वार्थी ससार ने न छोडा कैसी विडम्बना है ससार अपने क्षुद्र स्वार्थों के पीछे कैसा अन्धा हो रहा है ? भला स्वामी जी ने किसी का क्या बिगाडा था ।

दूसरा भक्त—(क्लान्त विस्मित स्वर में) मैं तो यह आश्चर्य करता हू कि उस रसोइया की भी कैसी पत्थर की छाती थी जिसने स्वामी जी की हत्या के लिये भोजन में बारीक काच पीसकर खिला दिया उफ् ! मनुष्य की हैवानियत

तीसरा भक्त—(ऋषि के शरीर को देखते हुये) हाय हाय ऋषिवर के सारे शरीर पर विष के छाले उभर आये हैं ।

पहला भक्त—(रोते हुये) सांस रुक रुक कर आ रही है । हे ईश्वर, क्या बड़े महात्माओं को भी मृत्यु से मुक्ति नहीं है

दूसरा भक्त—जलन से स्वामी जी का सारा शरीर जल रहा है । अगर दूसरा मामूली व्यक्ति होता तो कैसी बुरी तरह छटपटाता, चीखता चिल्लाता...मोह

बन्धन उसे अशान्न करता पर ऋषि ऋषि की आत्मा शरीर को छोड़ने की तैयारी में है .. परन्तु वे चुपचाप आराम से लेटे हुये हैं ।

तीसरा भक्त—मृत्यु के इन क्षणों में ही मनुष्य के सयम, एकाग्रता और इन्द्रिय नियंत्रण की परीक्षा होती है मृत्यु तो सभी को आती है जो आया है उसे एक दिन जाना ही है, पर कोई सड़पतड़प कर बिलख-बिलख कर मरता है, कोई शान्तिपूर्वक रूप नश्वर शरीर को त्यागता है । इस शान्तिपूर्वक मरने का नाम ही मृत्यु को जीतना है ।

पहला—ऋषि को पानी पिलाना चाहिये । गंगाजल का बर्तन इचर लाओ शायद इससे इनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी (एक भक्त मेज पर से गंगाजल मिश्रित जल लाता है)

पहला—(ऋषि के समीप जाकर) महाराज महाराज आरकी तबियत कैसी है ? कुछ जल ले लीजिये । [ऋषि धीरे धीरे नेत्र खोलते हैं । मृत्यु की काली परदाही नेत्रों से चमकती है, पर ऋषि का आत्म-विश्वास अडिग है । उन्हें अपने निकलने हुए प्राणों का बोध है । वे जानते हैं कि कुछ ही देर में मैं इस नश्वर शरीर का परिव्रयाग करने वाला हू । उन्हें यह भी ध्यान है कि व्यर्थ ही उनके भक्त भी उनकी मृत्यु से परेशान न हों ।]

ऋषि—(क्षीण स्वर में) अच्छी है । प्रकाश और अन्धकार का मिलाप है । तुम मेरे जाने से परेशान न होना आर्यसमाज की ज्योति अखण्ड रहनी चाहिये ।

पहला भक्त—(शान्ति दिलाते हुए) महाराज आप चिन्ता न करें । हमारे लिये कोई सन्देश बीजिए



ऋषि— (लडखडाते स्वर मे) हा मरने से पूर्व कुछ कहना चाहता हूँ मेरे शिष्यो जब आपस मे भाई-भाई लडते है तो तीसरा विदेशी आकर पच बनता है क्या तुम महाभारत की बातें भूल गये ? देखो, आपस की फूट से कौरव, पांडव और यादवों का सत्यानाश हो गया सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग हम भारतवासियो के पीछे लगा है न जाने वह भयकर राक्षस कभी छूटेगा व आयों को सब सुखो और उन्नति से छुडाकर सागर मे डुबो देगा उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र हत्यारे, स्वदेश विनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग मे आयें लोग अब तक भी चलकर दुख बडा रहे हैं परमेश्वर कृपा करे हमे छूतछात, जाति-पाति, व्यर्थ के आडम्बरो और इस पारस्परिक फट जैसे राज रोगो से तुम सब आयों की रक्षा करे । ”

[घक कर नेत्र मूद लेते है । सब भक्त विस्मित होकर सोचने लगते हैं ।]

पहला भक्त—ऋषि की चिन्तन शक्ति मृत्यु के मुँह मे भी उतनी सशक्त है । यह बातें याद रखने की हैं ।

दूसरा भक्त—स्वामी जी फिर नेत्र खोल रहे हैं । वह कुछ बोल रहे है ।

ऋषि— (क्षीण दुर्बल स्वर मे) कमरे के सब द्वार और बिडकिया खोल दो । तुम सब मेरे पास खडे हो जाओ अब मैं जाता हूँ । ”

[वे अपनी दृष्टि कमरे के चारो ओर घुमाते हैं । फिर बडे गभीर स्वर मे वेद मन्त्रो का पाठ करते हैं । उनके स्वर मे अब भी आकर्षण है । वेद मन्त्रो का गान करके वे चुप हो जाते हैं । यकायक बैठ जाते हैं ।]
एक भक्त— (आश्चर्य से) अरे, इस कमजोरी मे भी ये तो बैठ गये ।

दूसरा भक्त— (विस्मित) समाधि लग गई है । बिना हिले डुले सोने की मूर्ति की तरह ये समाधि मे बैठे है ।

तीसरा भक्त—मृत्यु को जीत लिया है ।
[धीरे-धीरे समाधि भंग होती है । अब आखरी घडी आ गई है । आत्मा शरीर को त्याग अनन्त की ओर प्रस्थान कर रही है ।]

स्वयं बुझ गया, दीप जग के जला गया

सो रहा था दिव्य देश भारत यहा पै जिसे,
वचते विदेशी आय तब चन्द चाट मे,
अज्ञान घमण्ड और भेद-भाव बडा भारी,
भ्रम से ही मानता था अपने को ठाठ मे,
'लक्ष्मी' वेद-मित्र तब अस्ताचल पहुचा जा,
घटा-टोप तम छाया भारत के घाट मे ।
ऋषियो के सरताज दयानन्द महाराज,
उपकार हेतु आये भारत के बाट मे ॥
छूत-छात दूरकर बैर को बिसार कर,
अज्ञान मिटाकर जग को जगा गया,
ईश को बताकर प्रीति को बढ़ाय कर,
देवी देवता के सब भूत को भगा गया ।
'लक्ष्मी' वेद मित्र और शिक्षा का प्रसार कर,
दिव्य दयानन्द ऋषि, नारी को उठा गया,
देश की भलाई कर, दीपावली पायकर,
स्वयं बुझ गया, दीप जग के जला गया ॥

—विजयलक्ष्मी आर्य बी०ए०

आर्यनवर बवायूं

पहला भक्त— (चकित हो) ऋषि ने फिर आँखे खोल दी है । वे फिर कुछ कह रहे हैं । ध्यान से सुनो

[सब शांत और चुप । ऋषि बोलते हैं]

ऋषि— (दिव्य ज्योति की किरणें छोडते हुए) हे दयामय हे सर्वशक्तिमान् तेरी यही इच्छा है । परमात्मदेव तेरी इच्छा पूर्ण हो आर्यसमाज युग युग तक जनता को प्रकाशित करे अहा ! मेरे परमेश्वर ! तूने अच्छी लीला की ! ओ ३ म् ! ओ ३ म् ! ओ ३ म् !

[इन शब्दो के साथ ही ब्रह्मर्षि परमधाम को जाने के लिये अपने आत्मिक प्राणो को स्वर्ग की सीढ़ी पर चढाते हैं और फिर श्वास को कुछ देर तक भीतर रोककर 'ओ ३ म्' कहते हुए एक बार ही प्राणो को निकाल देते हैं । सब भक्त रोते हैं । वातावरण विषुम्भ हो जाता है । हवायें भयकर चीत्कार करती हैं । शाम के तारे आकाश मे ऋषि की आत्मा का स्वागत करते हैं ।]

ऋषि दयानन्द वचनामृत

★ प्रजा को अपने सन्तान के सवश सुल बेवे और प्रजा अपने पिता सवश राजा और राज पुर्वों को जाने ।

★ सब कर्मों का यथावत् फल देना ही ईश्वर का काम है, भमा करना नहीं ।

★ जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है इसलिये वह सत्य मत को नहीं प्राप्त हो सकता ।

★ मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ दुराग्रह और अबिद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में मूक जाता है ।

★ जो बलवान होकर निर्बलों की रक्षा करता है । वही मनुष्य कहाता है और जो स्वायंभस होकर पर हानिमात्र करता रहता है वह पशुओं का भी बड़ा मर्द है ।

★ आर्य उसको कहते हैं जो पुण, कर्म, स्वभाव और सत्य ध्यबहारो में सब से अधिक हो ।

★ जो कौब असा कर्म करता है, वेसा ही फल पाता है ।

★ ससार में सुखी दुखी अपने अपने पुष्य पावो के कारण हैं ।

★ माता-पिता तथा अध्यापक ईर्ष्या द्वेष से विद्याविषयों का सादन न करे ।

(कपथ.)

आर्यमित्र का-

अराष्ट्रीय-ईसाई-निरोध अंक

(२२ नवम्बर १९६४)

पृष्ठ सं ४०

मूल्य २५ पैसे

★ दम्बई में कौथालिक ईसाइयो के भारत-अभियान (२८ नवम्बर) के अवसर पर प्रकाशित हो रहा है ।

- ईसाइयों की राष्ट्र विरोधी एव आय संस्कृति विनाशक प्रवृत्तियों का विवर्जन ।
- ईसाइयों के ईसाईस्थान बनाने के क्लुवित मसूचो का परिचय ।
- कौथालिक ईसाई पन्थ की कुटिल और क्रूर करतूतो का परिचय ।

२० से अधिक प्रतिया मगाने वाले समाज व सस्था से डाक-व्यय नहीं लिया जावेगा ।

केवल ५००० प्रतिया छप रही हैं । १२ नवम्बर तक कार्यालय में आर्डर पहुंचने पर विशेषांक निरचय मिल जायेगा ।

-सम्पादक "आर्यमित्र"

मस्तिष्क एवं हृदय

सन्बन्धी मयकर पागलपन, मुगी, रिस्टीरिया, पुराना सरबर्, म्लड प्रेसर, विह की तीव्र धक्कन, तथा हाविक पीडा आदि सम्पूर्ण पुराने रोगों के परब विरवस्त निदान तथा चिकित्सा के लिये परामशं कौविप-

आयुर्वेद बृहस्पति कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री

आयुर्वेद धन्वन्तरि

D Sc A P I M S., L.A.M.S

मुख्याभिष्ठाता, कन्या गुरुकुल, हरिदाश

मुख्य सम्पादक-"मान सन्ज" साप्ताहिक, कनकज

मद्यानक-आर्य मित्र-आर्यमित्र कानकज

पो० आ० गुरुकुल-कागडी, (सहारनपुर)

फोन न० कार्यालय ९०, निवास ७७





★ परमेश्वर व्यापक और जीव्य है।

★ जैसे माता पिता अपने सन्तानों को ध्यावृष्टि कर उन्नति चाहते हैं वैसे परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा के बरों को प्रकाशित किया है जिससे वे अविद्यान्धकार भ्रमजाल से छूट विद्या विज्ञान रूप सूर्य को प्राप्त कर अत्यानन्द में रहे और विद्या तथा जीव्य वृद्धि करते जायें।

★ जो मनुष्य विद्वान् सत्संगीत पुरा विचार नहीं करता वह सदा भ्रम में पड़ा रहता है। धन्य वे पुरुष जो सब विद्याओं के लिङ्गमूर्ति को हैं और जानने के लिये परिश्रम है।

आवश्यकता

गवानदीन आर्यभास्कर प्रेस मीराबाई मार्ग लखनऊ के एक एजेंट की आवश्यकता है, जो वेतन अथवा कमी के आधार पर छपाई कार्य ला सके। प्रेस कार्य से कार ध्यक्तिको बरीयता दी गी। अपनी योग्यता तथा नतम स्वोकार्य वेतन अथवा शन सहित आवेदन पत्र व पते पर भेजे—

—निर्मलचन्द्र राठी
मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा
, मीराबाई मार्ग, लखनऊ

★ पूर्व जन्म के पाप पुण्य के अनु-पूर्व जन्म के कर्मानुसार प्रविष्टत् मन्त्र
सार वर्तमान जन्म और वर्तमान तथा होते हैं। (कमल)

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१ ऋग्वेदसुबोध भाष्य—मधु छन्दा, मेपातियो, सुता शिव कव्य) परागीतम, हिरण्य गर्भ, माराण्य, बृहस्पति, विरवकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १६) डाक-व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध भाष्य १ मू० ७) डाक व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी मू० २) अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका डाक-व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक-व्यय ६) उपनिषद् भाष्य—ईश २), केन ॥), कठ १॥) प्रश्न १॥) मुण्डक १॥) माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥) सबका डाक व्यय २)।

श्रीमद्भगवतगीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य २०) डाक-व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ-संख्या ६९० मूल्य १२) डाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण भाषान्तकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामान्वतार जी विद्याभास्कर, रतनगढ़ जि० बिजनौर। भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है, यह सब जानते हैं। व्याख्याकार श्री हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र है। इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन-पाठन भारत भर में और घर-घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिये इसको आज ही मगाइये।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला सूरत



★ संसार में तो सच्चा मूठा बोलों सुनने में आता है परन्तु उसको विचार से निश्चय करना अपना काम है।

★ ओ केवल माण्ड के समान पर-मेश्वर के गुण कीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करवा व्यर्थ है।

★ मेरा मन शिवशकल्य अर्थात् अपने ओर दूसरे प्राणियों के अर्थ कल्याण का सकल्य करने हारा होवे। किसी को हानि करने की इच्छा युक्त कमी न हो।

★ मेरा मन इन्द्रियों को अधर्मा-चरण से रोक के धर्मपथ में सदा चलाया करे। ऐसी कृपा मुझ पर कीजिये।

★ अपने पुत्रधार्य के उपरागत प्रार्थना करनी योग्य है।

★ जो परमेश्वर के मरुसे आलसी होकर बंटे रहते हैं, वे महामूर्ख हैं।

★ धर्म से पुखार्यों पुख का सहाय ईश्वर भी करता है।

★ जो कोई गुड मीठा है ऐसा कहता है उसको गुड प्राप्त व उसका स्वाद प्राप्त कमी नहीं होता और जो यल्ल करता है उसको शीघ्र व विलम्ब से गुड मिल ही जाता है।

★ किसी से बेर न रखे।

★ राग द्वेष छोड़ भीतर और बलाहि से बाहर पवित्र रहे।

★ जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है।

★ परोपकार के लिये सपुत्र्यों का का सन, मन, धन होता है।

★ जो भक्त ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है।

★ ईश्वर भक्तों के पाप क्षमा नहीं करता।

★ जिनको बिद्या नहीं होती वे पशु के समान यथा तथा बड़बड़ाया

करते हैं जैसे सन्निगत चर युक्त मनु अण्ड बण्ड बनना है वैसे ही अविद्या के बह्वे व लेल का व्यर्थ समझना चाहि

★ कर्म करने में जीव स्वतन्त्र अ पाप के दुःखमय फल भोगने में परल होता है। (क्रमश)

गुरुकुलकांगड़ी चाय

आपके स्वास्थ्य की रक्षा करती है।

गुरुकुलकांगड़ी फार्मसी हरिद्वार

★ जिस कुल में स्त्री से पुरुष और पुरुष से स्त्री सदा प्रसन्न रहनी है उसी में आनन्द, लक्ष्मी और कीर्ति निवासती है।

★ जल से बाहर के अग, सत्याचार, बल, बिद्या और धर्मानुष्ठान से शत्रुता और शान से बुद्धि पवित्र होती

★ पाण्डित्य, वेद विरह आचरण में बालों, बंडालबन्धि, शठ और कों का वाणी मात्र से सत्कार न करें।

★ ऋषिभ्यः, पुरोहित, आचार्य, ल, अतिथि, बालक, ब्रह्म, योगी, वैद्य, गंधी, मित्र, माता, पिता, बहिन, पत्नी, पुत्री और मृत्यु से बर्णन न करें।

★ जो दुष्ट अधर्मों हैं उनसे उपेक्षा तू द्रोह छोड़कर उनके मुधारने का किया करे।

★ जो अविद्या के नीतर खेल रहे का धीर और पंडित मानने हैं वे गति को जाने हारे, मूढ जैसे जन्मे छे अन्वे दुःखों को प्राप्त होते हैं, दुर्बलों को पाते हैं।

★ दुष्ट ध्यान में फसने से मर अच्छा है क्योंकि जो दुष्टाचारी है वह अधिक जियेगा तो अधिक न पाव करके नीब नीच गति अर्थात् न-प्रविष्ट दुःख को प्राप्त होता।

★ बुद्धिमान, कुलीन, शूर, धीर, दाता, दिये हुये को जानने हारे देयवान् पुरुष को शत्रु न बनाये जो ऐसे को शत्रु बनावेना यह दुःख।

(कथनः)

हिमालय के ढेर
ऑक्सीजन से निर्मित,
विटामिन सी तथा
लोह से भरपूर



गुरुकुल
कौंगड़ी
का

अयन प्राण



शक्ति संचय के
लिए आज से
ही सेवन करें

गुरुकुल कौंगड़ी फार्मसी, हरिद्वार.

लखनऊ के सोल एजेण्ट—

श्री एस० एस० महता एण्ड कं०,
२०-२१ श्रीराम रोड

अवश्य पढ़िये कर्ण रोग नाशक तैल .. रजिस्टर्ड

कान बहना, शब्द होना, कम सुनना, बर्ब होना, साय आना, साय साय होना, मवाब आना, कुलना, सीटी सो बजना आदि कान के रोगों में गुणकारी है, यू० १ शीशी १। ३ दजन शीशी कर्ण रोग नाशक तैल को मगाने वालों को सोल एजेण्ट बनाया जायेगा, और उनको कमीशन में १८ शीशी फ्री साय में भेजी जायेगी, खर्चा वैकिंग पोस्टेज खरीदार के बिना रहेगा। बरेली का प्रसिद्ध रजिस्टर्ड 'श्रीतल सुरमा' जो आंखों के लिए बड़ा गुणकारी है, एक शीशी १।। । हम से मगाकर परीक्षा करके बेचिये।

'कर्ण रोग नाशक तैल' सन्तोमालन मार्ग नजीबाबाद यू.पी.

★ परमेश्वर का स्वाभाविक गुण
गुण की उत्पत्ति करके सब जीवों को
सिख्य पदार्थ वेकर परोपकार करना है।

★ धेठों का नाम आर्य, विद्वान्
के देव और बुष्टो के दस्तु मूलं नाम होने
से, आर्य और दस्तु वो नाम हुए।

★ बुष्टात्माओं से न प्रीति करे, न
बंद करे। सकलनकर्ता—
श्री कृष्णवत्त आयुर्वेदालकार, फंजाबाद

चारो वेद भाष्य, स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ तथा
आर्यसमाज की समस्त पुस्तकों का
एक मात्र प्राप्ति स्थान—
आर्य माहित्य मण्डल लि०
श्रीनगर रोड, अजमेर
भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद की विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या
वाचस्पति आदि परीक्षाओं मण्डल के तत्वावधान में प्रतिवर्ष होती हैं। इन परी-
क्षाओं की समस्त पुस्तकों अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहां से
भी मिलती हैं।
वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं
की पाठविधि मुफ्त मगावें

भारत सरकार से रजिस्टर्ड
सफेद दाग
पाने शरीर पर निकलने वाले सफेद दागों
दवा मूल्य ६) विचरण मुफ्त मगावें
एक्विडमा (इसब,
उकवत,
सर्बुवा)
दवा का मूल्य ६) रु०
दमा स्वास पर परीक्षित
दवा मूल्य ६ रु०)
बंद के.आर.बोरकर आयुर्वेद-भारत
पो. बगकलपीर, जि. अकोला (महाराष्ट्र
(आर्य)

आसाम बंगाल	<p>दुनिया में हलचल मचा देने वाली वही अद्भुत आसामी बंगाली तिलस्मी राज या ❀ खजाना-करामात ❀</p>	नेपाळ भूटान
<p>परिले एडोशन की हज़ारों प्रतियाँ ६।।।) रु० मूल्य होते हुए भी हाथोंहाथ खतम हो गई थीं, अब तीसरी बार छप कर पडाघड प्राहकों के पास जा रही हैं। ऐसी पुस्तक आपने नहीं देखी होगी। यदि आपकी नापसन्द हो तो ३ दिन देलकर वापिस कर सकते हैं। हम तुरन्त मूल्य लौटा देंगे, इससे श्रद्धा और क्या सचाई होगी। पुष्ट सख्या ६५० है। पुस्तक सजिव है।</p> <p>नोट—आसाम बंगाल के जगलो पहाडों से महात्माओं से प्राप्त सैकड़ों प्रकार के संसार की बर्णित कर देने वाले रहस्यमय प्रयोग मात्र ६.५० के लिए तुरन्त इस पुस्तक की एक प्रति मगा लें अन्यथा स्टोक खतम होने पर फिर पहले की तरह पछताना होगा। आर्डर के साथ कम से कम २) रु० पेसागी जाना ज़रूरी है।</p> <p>कलकत्ता के मसहूर बाग 'ईडन गार्डन' की एक सच्ची घटना। प्रत्येक नवयुवक को यह उपन्यास ज़रूर पढ़ना चाहिए, ।।।) के स्टाम्प बिज्ञापन कर्षं भेजकर तुरन्त बंधा लें। स्टाक घेडा है।</p> <p>पता—रायसाहब के० एल० शर्मा एण्ड सन्स, (६३) "जगाधरी" (ई०पी०)</p>		

आर्यसमाज के संस्थापक—
महर्षि दयानन्द सरस्वती



जो न हटा मुल कर बढा जीवन भर भाग,
जिसका साहस हेर, विघ्न, प्रय, सकट भागे ।
सबल सारथ की हाउर, अनृत की जीत न होगी,
ऐसे प्रबल विचार सहित विचरा जो योगी ।
उस दयानन्द ऋषि राज का, प्रकृत पाठ जनता पढ़े ।
प्रभु 'शकर' आर्यसमाज का वैदिक बल गौरव बढ़े ।
—स्व० श्री नाथराम शकर शर्मा 'शकर'

जी३न् गुरुकुल काँगड़ा

साप्ताहिक आर्यमित्र आर्यसमाज अंक

वार्षिक मू० न० विदेश में १ पौड]

[इस प्रति का ५० न.पै.

वर्ष }
६६ }

सन्तानः रविवार चंद्र २३ शक १८८६, अ० चंद्र क० ३० वि० २०२१
१२ अप्रैल सन् १९६४ ई०, वयानम्बान्व १४०, सृष्टि सवत १९,७२,९४,९०६४

} अंक
} १३-१४

‘आर्य समाज’ से

हे आर्यसमाज, ज्योति का वाता तू है,

सारी उन्नति का ज्ञान-प्रवाला तू है ।

तूने ही फिर से सोता देश जगाया,

जन-जनता को कल्याण-मार्ग दिखलाया ।

वृद्धि बयानम्ब से प्राण-प्रतिष्ठा पाई,
तुझको सत्यार्थ-प्रकाश मिला सुखवाँई ।
तूने ही स्वावलम्ब की बिधि बतलाई,
सब भ्रान्त भावनाओं से मुक्ति दिलाई ।

बिधवा, अनाथ, अस्पृश्यों का उद्धारक,
सद्वर्त्म-प्रबर्णक समता स्रोत प्रसारक ।
महिलाओं को सम्मान दिलाने वाला,
‘मानवता’ का पीयूष विलाने वाला ।

‘सद्बुद्धि’ का आवर्ष महत्त्व दिखाया,
बैदिक संस्कृति का सौंदर्य सुखद उद्गाया ।
हो गया प्रभावित सारा देश हमारा,
भारत के बाहर भी बिबेक बिस्तारा ।

पोकुल पर कृष्णामृत बरसाने वाला,
पाण्ड्य-बाद पर बख्त गिराने वाला ।
मावकता का दुर्बल बवाने वाला,
आमिष-मक्षम को पाप बताने वाला ।

तुझ को न विदेशी शासन कभी सुहाया,
सबंदा स्वदेशी सत्ता का गुण पाया ।
सबसे पहले ‘स्वराज्य’-सन्देश सुनाया,
निज भाषा, सूषा, देश, देश अपनाया ।

‘बापू’ के तप ने देश स्वतन्त्र बनाया,
फिर से स्वराज्य का सुन्दर सूर्य उगाया ।
बहु पराधीनता-पाश कट गया सारा,
अब तो अपने पर है अधिकार हमारा ।

हे आज हमारा राज्य, हमारा बल है,
यह बल नित बढ़ता रहे, मुदूढ़ सबल है ।
आत्मा, मन, और शरीर बलिष्ठ बना दे,
‘मानवता’ का सच्चा आवर्ष दिखा दे ।

बैदिकता की जगती पर ज्योति जगा दे,
भारत-भू पर पहला-सा ही गुण ला दे ।
सब बनें धीर, धर्मज्ञ, पाप का शय ही,
सबंत्र अहिंसा, सत्य धर्म की जय हो ।

—हरिशंकर शर्मा
कोहामठो, आगरा



सम्पादकीय

स्थापना-दिवस की प्रेरणाएं

आर्यसमाज स्थापना दिवस का आर्यसमाज के लिये वही महत्त्व होना चाहिये जो किसी ध्यक्त के लिये उसके जन्म दिवस का होता है। १८७५ में आर्यसमाज की स्थापना हुई इस प्रकार उस दिन स्थापित यह समाज आज ८९ वर्ष का हो चुका है। इस औद्योगिक में आर्य नहीं आ सकता, आर्यसमाज का गौरव बिलाने के लिये जिन पूर्वजों ने अपना समर्थन और सहयोग दिया आज के हम लोग उन सभी के प्रति हार्दिक श्रद्धांजलियां अर्पित करते हैं। श्राविक श्रद्धांजलियां देने मात्र से ही हमारा कर्तव्य समाप्त नहीं हो जाता हमें उनके पद-चिह्नों पर चलकर आर्यसमाज को आगे बढ़ाकर उनके प्रति ध्या-हारिक श्रद्धा ध्यक्त करना चाहिये।

आर्यसमाज के अतीत की स्वर्णिम शालियां देखने आर्य पूर्वजों के तप पूत जीवन व्यवहारों की खर्चा करने का आज हम जरा भी अवसर नहीं निकाल पाते। जब हम स्वयं ही उन्हें मूला रहे हैं तब आगे आने वाली पीढ़ी से यह आशा करना कि वह आर्यसमाज के कार्यों को आगे बढ़ायेगी एक विलुप्त कल्पना ही होगी। आवश्यकता इस बात की है कि आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर प्रत्येक समाज में उसके इतिहास का तिहावलोकन किया जाय। स्थानीय पूर्व कार्यकर्ताओं का स्मरण किया जाय और नवीनो को प्रोत्साहित किया जाय। स्थान-स्थान पर आगामी वर्ष के लिये कार्यक्रम निर्धारण का कार्य भी इस पवित्र दिवस का एक प्रमुख अंग होना चाहिये।

आर्यसमाज एक विश्ववादी संगठन है पर इस विश्व संगठन की जड़ें स्थानीय संगठन हैं। इस दृष्टि से स्थानीय विकास अपना विशेष महत्त्व रखता है। लेकिन स्थानीय विकास एवं प्रवेशीय विकास को उतना ही महत्त्व मिलना चाहिये जिससे आ-समाज के विश्ववादी स्वरूप को आघात न पहुँचता हो। आशा है आर्यसमाज स्थापना दिवस पर आर्यजन इस दिशा में विचार करेंगे।

आर्यसमाज के विश्ववादी स्वरूप को विकसित करने

की दृष्टि से आज हमें विचार करना चाहिये कि क्या आर्यसमाज ने एक संगठन रूप में भारत की सीमाओं और प्रवासी भारतीयों के क्षेत्रों से आगे बढ़कर मानव समुदाय के अन्य वर्गों तक पहुँचने का यत्न किया है। यदि हमने अभी तक इस दिशा में ध्यापक प्रयत्न नहीं किये हैं तो उसके क्या कारण हैं और अब हमें इस ओर क्या कदम उठाने चाहिये। आज विश्व एक इकाई रूप में संगठित हो चुका है और हम देखते हैं कि प्रतिदिन अन्तरराष्ट्रीय सस्थाओं के रूप में अनेक सस्थाएं देश-विदेशों में अपने प्रतिनिधि भेजकर विश्व समस्याओं के समाधान में अपना योगदान देती हैं। आर्यसमाज जिसका जन्म ही वैशिक सीमाओं को लाघकर सत्कार उपकार के ध्यापक आधार पर हुआ है, अभी तक विश्व समस्याओं के प्रति विश्व-संगठन के रूप में आगे नहीं आ सका है। हमें अपना इस कर्मों को अच्छी प्रकार अनुभव कर लेना, चाहिये और उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। आर्यसमाज के संगठन का जो रूप आज विद्यमान है, उस में यद्यपि सांवेदेशिक स्वरूप कल्पित है परन्तु वास्तव में प्रबन्ध की दृष्टि से वह भारत की समाजों का केन्द्रीय संगठन अधिक है। विशेष के नाम पर प्रवासी भारतीयों द्वारा निर्मित आर्य प्रतिनिधि समाजों का सीमित प्रति-निधित्व उसमें है। अपने इस स्वरूप के कारण सांवेदेशिक समा विश्व-प्रचार पर बहुत कम ध्यान दे पाती है। उस की सारी शक्ति भारत की सीमाओं में लगी रहती है। हमारी सम्मति में आर्यसमाज के सर्वधार्मिक ढांचे में ऐसा परिवर्तन किया जाना चाहिये कि एक अखिल भारतीय आय प्रतिनिधि समा बन जाय और वही भारत की सम्-स्थाओं को अपने हाथ में ले और सांवेदेशिक समा विश्व के रूप में विश्व की नैतिक और विश्वशांति एवं धर्म प्रचार सम्बन्धी समस्याओं पर विचार एवं आन्दोलन करे। आर्यसमाज स्थापना दिवस के सुअवसर पर संगठन के इस पक्ष पर भी गम्भीर विचार होना चाहिये।

आर्यसमाज का उद्देश्य महान् है, लक्ष्य भी महान् है, पर महान शब्द का यह अर्थ नहीं कि हम धीजनावृद्ध कार्य न करें। अभी तक हमारी नीति ध्याअवसर की रही है, अब समय आ गया है कि हम अपने कायकर्म की सफलता के लिए एक वर्षीय, नौ वार्षिक, पञ्चवर्षीय कार्यक्रम अवश्य स्वीकार करें। जिना इसके संगठन में स्थिरता और दृढ़ता

आर्यसमाज स्थापना दिवस पर—

हमारा संकल्प !

आर्यसमाज स्थापना दिवस हमारे सामने एक अत्यन्त शुभ मुहूर्त लेकर प्रस्तुत कर देता है। आर्यसमाज की स्थापना हुई, मानो हमारे लिये ऐसा पथ या मार्ग प्रशस्त हो गया कि जिसको ग्रहण करके हम अपने जीवन को समुन्नत व उत्कृष्ट बना सकते हैं। किन्तु केवल इतना कह देने से न हमें सतोष होना चाहिये और न यह भ्रम ही होना चाहिये कि हम वस्तुतः आर्यत्व को प्राप्त हो गए हैं। यह स्मरण रहे कि प्रति क्षण जो आलस, प्रमाद अथवा प्रलाप मे व्यय व्यतीत होता है, उसी अनुपात में मानव उद्देश्य की सफलता की दृष्टि से, जीवन अस्वीकृत होता है। मेरा निश्चित मत यह है कि आर्यसमाज का अस्तित्व उन समय सार्थक हो सकता है जब कि वह अपने मन्तव्यों को पूरा करे।

इस समाज का प्रथम तथा सर्वोत्कृष्ट मतव्य है कि प्रत्येक सदस्य के हृदय में ईश्वर के प्रति असौम्य और अगाध भ्रद्धा की भावना जागृत हो। दूसरा, उस सत्या के प्रथेक सदस्य में सदाचरण, सत्य विचार और सच्चरित्र का सर्वांगीण संचार हो। तीसरा, प्रत्येक कृत्य में जनहित और देशभक्ति का लक्ष्य, इतर सर्व आकांक्षाओं और महत्वाकांक्षाओं की अपेक्षा, सर्वोपरि रहे।

यह सब उद्देश्य हमारे नियमों में निहित हैं। प्रत्येक आर्यसमाज का कर्तव्य है कि इस शुभ अवसर पर वह पिछके वर्गों की सहायताओं व बिरुद्धताओं पर वृष्टिपात करे, उन पुण्यों को ग्रहण करने की प्रतिज्ञा करे कि जिससे वह पिछके वर्गों वचन रहा हो और ऐसे कार्यक्रम निर्धारित करे कि समाज के सदस्यों के अन्दर व्यय बाह्यविवाद की भावनाओं का ह्रास हो तथा वे रचनात्मक कार्यों में सन्नद्ध हों कि जिससे परिणामस्वरूप आर्यसमाज का विकास व विस्तार हो तथा जनहित और देशहित निष्पन्न हो।



श्री मदनमोहन जी शर्मा
अध्यक्ष विधान सभा उ०प्र०

—मदनमोहन शर्मा प्रथम
आर्य प्रतिनिधि सभा, उ०प्र०, लखनऊ

का अभाव बना रहेगा। आर्यसमाज की आवश्यकता स्थायी आवश्यकता है। ऐसा कमी न होगा जब हमारी आवश्यकता न होगी इसलिये अवश्य आत्मविश्वास के साथ स्थापना-दिवस का यही सन्देश है कि हम कदम बढ़ाते चलें, “चरंवेति चरंवेति, चरंवेति”। ✪

अपनी विवशता

श्रेष्ठ शुभल प्रतिपदा को आर्यसमाज स्थापना दिवस के साथ सन् २०२१ का समारम्भ होता है, जिसके उपलक्ष्य में “चरंवेति” अथवा “आर्यसमाज जन्म” जन्म करवा है।

इसने आर्यसमाज के अतीत, वर्तमान और भविष्य का कहां तक समावेश हो पाया है इसका निष्पत्ति तो पाठक ही करेंगे, किन्तु आर्यसमाज के ‘संगठन पक्ष’ का विवरण समाजों द्वारा समय से प्राप्त न हो सकने से इस अंक में समन्वित न हो सका, आशा है इसके लिए अवश्य समाज करेंगे। यह कमी आगामी विषय होगा। अनुचित लेख तथा छपाई आदि की त्रुटियों के लिए सज्जन-मनुष्य से क्षमा याचना ही की जा सकती है। कृपातु लेखकों के प्रति धन्यवाद न करना कृतज्ञता होगी।

—डा० राजेन्द्र, प्रबन्ध-सम्पादक



आर्यसमाज-आधार तथा संगठन !

[ले०—धी प्रकाशबीर जो शास्त्री एम०पी०, मुख्य उपप्रधान समा, उ प्र]

मानव शरीर के प्रत्येक ऐच्छक कार्य-कलाप का आधार जैसे कोई मानसिक प्रक्रिया होती है उसी प्रकार ससार के प्रत्येक सामाजिक संगठन का भी कोई दार्शनिक आधार होता है और उसकी सम्पूर्णता के अनुपात से ही कार्य-कारण सरणि द्वारा कार्य की पूर्ति होती है। उदाहरणार्थ ससार के प्रत्येक मत और सम्प्रदाय—हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, कम्युनिस्ट आदि के दार्शनिक आधार—पुराण, कुरान, बाइबिल, कैपिटल आदि ग्रन्थ हैं। उनके गुण दोषों के अनुसार ही उनके अनुयायी भी होते हैं।

आर्यसमाज का मूलाधार वेद है, जो ससार के प्राचीनतम ग्रन्थ माने जाते हैं, और जो बाह्य सत्ता में मतभेद तथा संशय होने पर भी अन्त सत्ता के अनुसार मानुषी सृष्टि के आदि से वर्तमान हैं—

तस्माद्यज्ञात्सर्वभूत ऋच सामानि जज्ञिरे। छन्वासि जज्ञिरे तस्माद्यज्ञुस्तास्मद् आयत ॥ऋक०—यजु०॥

इसकी सर्वव्युत्पत्ति परमात्मा से ऋक, साम, अथर्व और यजु उत्पन्न हुए हैं। आज विज्ञान द्वारा भी अध्यात्म विद्या की परीक्षण द्वारा सत्यता सिद्ध हो चुकी है, जिसमें मैग्नेटिज्म और हिप्नोटिज्म आदि वैज्ञानिक सहाय्यों का आधिनायक हुआ है। इनके द्वारा एक मनुष्य अपनी प्रबल इच्छा शक्ति द्वारा दूसरे को अपना ज्ञान दे सकता और उससे कार्य करवा सकता है। इसी प्रकार अनन्त शक्तिसाली परमात्मा भी अपनी ईशान शक्ति से ज्ञान देता है। तर्क भी यही सिद्ध करता है कि जैसे बिना सूर्य के स्वस्थ नेत्र भी नहीं देख सकते, उसी प्रकार मानव बुद्धि भी बिना सहायता के स्वयं सब कुछ उद्भावित नहीं कर सकती है अतः सृष्टि के प्रादि में ज्ञान-बीज का प्रकाशित होना आवश्यक है।

इस आदि स्रोत से उद्भूत होकर वैदिक ज्ञान का चतुर्विध प्रसार हुआ। वेदों का काल-भेद से सर्वत्र उसका प्रभाव पड़ा परन्तु अन्ततः उस स्रोतस्त्रिणी की शाखायें देशकालिक प्रभाव से कालान्तर में ऋणान्तरित हो गईं, किन्तु उसकी मूलधारा शैवाल आवृत होने पर भी अपने उदगम-स्थल पर निर्मल बनी रही। उसकी शोच का श्रेय वर्तमान युग में आदिस्थ ब्रह्मचारी महर्षि बयानम्ब सरस्वती को है जिनके पवित्र मानस-पटल पर आदिगुरु ने प्रेरणा की रेखायें प्रकृत कीं।

अपनी शिक्षा-वीणा से निवृत्त होकर महर्षि बयानम्ब ने अपने गुरु षडो विरजानम्ब के आदेशानुसार अर्धविक्रम मत्तमात्सरों के अन्धकार को ध्वस्त करने के लिए भारत का दौरा किया और शास्त्राचारों का क्रम बांध दिया। इस प्रकार देश के अश्रेष्ठ जन ने सम्पूर्ण स्थापित कर बम्बई में चंद्र सुवी प्रतिपदा स० १९३२ अर्थात् ७ अप्रैल १८७५ को प्रथम आर्यसमाज की स्थापना की तथा आर्यसमाज के २८ नियम बनाए। इन प्रारम्भिक नियमों में उद्देश्य, निष्पन्न, उपविबन्ध सती का समावेश है। आर्यसमाज के वर्तमान सञ्चित इत नियम लाहौर में पीछे से बने। इसके अनन्तर आर्य समाज का देश में विस्तार होता रहा तथा आर्य प्रतिनिधि समाए बनती रहें। अन्ततः काश्मीर, आर्यवेदिक समा की स्थापना सन १९०८ में हुई।

महर्षि बयानम्ब की देश वेदान्तरों में भी वैदिक धर्म के प्रचार की इच्छा थी जिसके अनुसार उन्होंने भी स्वयम्भूती कृष्ण वर्मा को विलायत भेजा था। विदेशों में सर्वप्रथम आर्यसमाज की स्थापना लन्डन में हुई थी, उसके पश्चात् अफ्रीका आदि विभिन्न उपनिवेशों में जो भारतीय विद्वान् गये उनके ऋषि के अनुयायियों ने आर्यसमाज के विचारों का प्रचार किया तथा अनेक समाज की स्थापना की।

अनुशासन प्रिय बनें

प्रत्येक समाज, समाज सगठन के सदस्यों के लिए आवश्यक है कि वे अपने अन्दर अनुशासन भावनाओं को विकसित करें। जनतन्त्र का यह अनिवार्य नियम है कि सब लोग एक सम्मति के नहीं हो सकते। मतभेद के इस बुनियादी आधार को स्वीकार करके ही आर्यसमाज के सबसे समाज के कार्य में सहायक बन सकते हैं। आर्य समाज के सगठन पक्ष में सेवा का जो धोड़ा बहुत अनुभव मुझे हुआ है उससे मैं यही अनुभव करता हूँ कि हम सगठन में परस्पर सहयोग से रहने की भावना से दूर जा रहे हैं। अनुशासन की भावना आन्तरिक प्रेरणा का विषय है। ऊपर से लाया गया अनुशासन बाह्य दृष्टि से चाहे कुछ महत्व रखता हो पर हृदयपक्ष उससे प्रभावित नहीं होता।

आर्यसमाज के स्वानीय प्रांतीय और सांघदेशिक मतभेदों की वृद्धि के मूल में अनुशासनप्रियता का अभाव ही मुख्य है बहुमत पक्ष का भी विशेष उत्तरदायित्व है कि वह अपने से निम्न सम्मति वालों के सम्मान को ठेस न पहुँचाये और अपना व्यवहार सौम्य रखे। बहुमत के आधार पर अपने से निम्न विचार वालों की निरन्तर उपेक्षा ही सगठन में तीव्र प्रतिक्रियाओं को जन्म देती है, अतः इस ओर विशेष ध्यान रहना चाहिये।

आर्यसमाज सगठन को सुवृद्ध बनाने के लिये हमें सगठन के सदस्यों की भावना को विकसित करना चाहिये और संवेद यह देखना चाहिये कि जो भी निर्णय हुआ है, उससे आर्यसमाज का हित है तो हमें अपना मतभेद समाप्त कर सहयोग आरम्भ कर देना चाहिये। यदि हम ऐसा करते हैं तो हम अनुशासनप्रिय हैं, यदि इसके विरुद्ध हमारा आचरण है तो हम अनुशासन की भावना में कमजोर हैं। आर्यसमाज स्थापना दिवस के शुभासुर पर हमें इस विज्ञान में गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिये।



श्री प्रेमचन्द्र जी शर्मा एच. एल. सी

—प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०

उपप्रधान आर्यप्रतिनिधि समाज उ० प्र०

ऋषि दयानन्द अपने स्मारक रूप में अपने ग्रन्थ, शिष्य तथा आर्यसमाज को छोड़ गए हैं। इनमें से आर्यसमाज ही उनका उत्तराधिकारी तथा प्रतिनिधि है। उनके ग्रन्थों, सिद्धान्तों, सभाओं अपितु वेदों की रक्षा का भार, आर्य समाज पर ही है। आर्यजगत् तथा आयसमाज में भेद है। आर्यसमाज उन लोगों का सघ है जो वैदिक धर्म के प्रचार तथा रक्षण की अभिलाषा रखते हुए सगठन में सम्मिलित हैं। वैदिक धर्मों आर्यसमाज के अन्दर भी हो सकते हैं और आर्यजगत् आर्यसमाज तक सीमित नहीं है।

आर्यसमाज का वर्तमान जनताभिन्न संघटन वास्तविक जगत् में नया है। सब धर्मों में एकतन्त्र-गुरु, पोष, रक्षण, कल्याण आदि चार-आर्यसमाज के लक्षण हैं—को विदित-

लता वृष्टिगत होती है वह बन्दई के प्रारम्भिक नियमों की अवहेलना के कारण है, जिनके नियम स० २४ में समासदों की चारित्रिक योग्यता पर विशेष बल दिया गया है तथा निममों में हेर-फेर का अधिकार भी नियम स० २४ में केवल श्रेष्ठ समासदों को ही दिया गया है।

आर्यसमाज का उद्देश्य सत्कार का उपकार करना तथा उसका माध्यम शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करना है। किसी एक पक्ष तक सीमित रहना उसका विरुद्ध है। आर्यसमाज की सगुर्मुखी उन्नति उसके धार्मिक आधार के सम्पूर्ण पालन-चातुर्बद्ध पारार्यक महायज्ञ-से ही हो सकती है, जहाँ शास्त्र और शस्त्र दोनों का विद्यमान है।



आर्यसमाज की शिक्षा-नीति

आर्यसमाज के महत्वपूर्ण कार्यों में शिक्षा का प्रचार सबसे प्रमुख है क्योंकि अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि के लिए सतत प्रयत्नशील रहना इस सगठन का उद्देश्य है। इस विद्या में हमारी सारी शक्ति भावनात्मक उत्साह से प्रभावित रही है। डी० ए० बी० कालेज लाहौर की स्थापना और उसके बाद गुरुकुल आम्बोलन की विचारधारा के रूप में हमारी शक्ति दोनों में बट गई। उद्देश्य एक शिक्षाप्रचार, पर मार्ग दो हो गये। ८० वर्ष का सम्झा मार्ग तप कर लेने के बाद आज हमे अपनी शिक्षा नीति का सिद्धान्तो-कन करना चाहिये।

हमे गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिये कि (१) डी० ए० बी० कालेजों आदि की स्थापना से आर्यसमाज के दृष्टिकोण प्रचार में कितनी सफलता मिली और मिल रही है। (२) गुरुकुलों की स्थापना से हम कहां तक आर्यसमाज के विचार को आगे बढ़ा सके हैं और बढ़ा रहे हैं।

इसके साथ ही शिक्षा नीति में हम कहां तक स्वतन्त्र हैं या हमारा और राज्य का क्या सम्बन्ध होना चाहिये, इस विद्या में गम्भीर विचार की आवश्यकता है।

भारत में आर्यसमाज की शिक्षा-नीति का व्यावहारिक आधार ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध स्वदेशामिमान की भावना अग्रत करना रहा पर स्वतन्त्र भारत में स्वदेशामिमान की विद्या विरोधात्मक न होकर निर्णयात्मक अधिक होनी चाहिये।

आर्यसमाज की शिक्षा नीति के स्पष्टीकरण और समन्वयात्मक स्वरूप निर्माण की दृष्टि से आर्य शिक्षा विशेषज्ञों को आर्यसमाज स्थापना दिवस के शुभ अवसर पर गम्भीर विचार करना चाहिये। वर्तमान समय में पुरानी पीढ़ी के लोगों के विचारों का लान भी हमे मिल सकता है जो हमारी आगामी नीति के लिये स्थायी महत्व का सिद्ध होगा। यदि सार्वदेशिक सभा स्वयं अथवा विद्यार्थ-सभा द्वारा इस सम्बन्ध में आर्य शिक्षा विशेषज्ञों के सम्मेलन का आयोजन कर सके तो स्थापना-दिवस की यह एक महत्वपूर्ण प्रेरणा होगी।

—महेन्द्रप्रताप शास्त्री एम. ए.

उपप्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र०



ऋषि दयानन्द वचनामृत

आर्यसमाज के ठीक नियमों को समझ कर आपको वेद के अज्ञानानुसार सबके हित में अवश्य लग जाना चाहिये—विशेषता से अपने आर्षावर्ष देश के सुधारने में अत्यन्त, श्रद्धा, प्रेम और शक्ति होगी चाहिए। सबको अपने समान जानकर उनके क्लेशों को काटने और सुखों को बढ़ाने के लिए प्रयत्न और उपाय करना उचित है। सबका हित करना ही परम धर्म है। इसी के प्रचार की वेद में आज्ञा पाई जाती है।

आर्यममाज स्थापना दिवस पर—

संस्मरण तथा शुभकामना!



लगभग पचास वर्ष हुए जब तेरह वर्ष की अवस्था में मैं 'आर्यमित्र' का प्राहक बना था। मुझे दो वर्ष ज्येष्ठ आदर्श कर्मवीर स्वर्गीय भ्राता राज-कुमार श्री रणवीरसिंह जी सद्गम प्रचारक' और 'वेद प्रकाश' मगाते थे। मैं भी आर्यमित्र तथा वेद प्रकाश' मगाने लगा था। फिर तो आर्यसमाज के अनेक पत्र आने लगे थे यथा 'भारत सुदृशा प्रवर्तक', 'आर्यावर्त', 'नवजीवन' 'भारतीय', अनाथ रक्षक', 'कन्यामनोरजन', वैदिक मैगज़ीन' तथा 'आर्य-मुसाफिर' आदि, परन्तु उक्त स्वर्गीय अप्रज एव मैं 'आर्यमित्र' तथा 'वेद प्रकाश' की अलग अलग प्रतिया मगवाते थे। आपस में कोई बँधनस्य अथवा होड़ की बात नहीं थी। वे मुझ पर अतीव अनुकम्पा करते थे। उनके साथ खेलता-कूदता तथा पढता लिखता था। पूर्ण प्रेम तथा सहयोग होते हुए भी केवल सर्वाधिक प्रिय होने के कारण 'आर्यमित्र' तथा 'वेदप्रकाश' अपने अपने लिये विशेष रूप से मगाते थे। 'आर्यमित्र' मुझे इतना प्रिय है कि जब डाक आती है तब सब प्रथम मैं उसे ही लेकर पढ़ता हूँ, जैसे एक रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट

मजिस्ट्रेट सेवक अलीरखा इस जन पद मे य। चाहे जितने पत्र आते थे वे कराचो से आये जाती पत्र 'दान' को सबसे पहले पढते थे।

'आर्यमित्र' अब भी मेरे तथा मेरी धर्मपत्नी जी के नाम से आते हैं। मेरी प्रति पढ़ने के उपरान्त आर्यसमाज रामनगर को वाचनालय के लिये वे दी जाती है और धर्मपत्नी जी की सुरक्षित रहती है। हम लोग 'आर्यमित्र' की उप्रति उत्तरोत्तर सदा चाहते हैं।

सुपति भवन, अमेठी राज्य
जनपद मुलतानपुर अवध

—रणजयसिंह एम० पी०
राजा, अमेठी राज्य, अवध

वृहदधिवेशन सम्बन्धी सभा की घोषणा

(दिनांक २३ व २४ मई १९६४)

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्य समाजों एव आर्य उपप्रतिनिधि समाजों के मन्त्री महानुमाओं को विदित हो कि आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश का वार्षिक साधारण अधिवेशन (वृहदधिवेशन) दिनांक २३ व २४ मई १९६४ ई० स्थान आर्यसमाज मन्दिर गोल, गोकर्ननाथ जिला क्षीरी से होना निश्चित हुआ है। आशा है कि समाजों के श्री मन्त्री महोदय जपर्युक्त तिथियां नोट कर कृतार्थ करेंगे। और वार्षिक प्रतिनिधि चित्र मय समा प्राप्तव्य धन के तुरन्त भेजने का कष्ट करेंगे।

निवेदक—

अग्रबल तिवारी समा-मन्त्री

आर्य समाज का प्रधान कार्य—

नैतिक-नागरिक-प्रचार

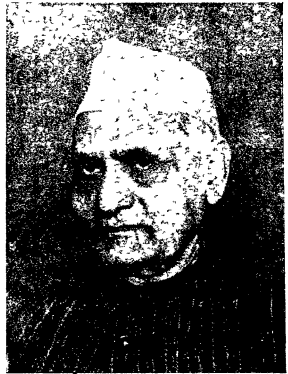
‘स्वराज्य’ को ‘सुराज्य’ भी बनाओ !

(श्री डा० हरिदासकर शर्मा डी० लिट्०)

[आर्य-जगत् के सम्माननीय नेता और विद्वान् लेखक ने आर्यसमाज के कर्तव्यों की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए राष्ट्र में नैतिकता की भावना जागृत करने की विशेष प्रेरणा दी है। स्वराज्य को सुराज्य बनाने के लिए आर्य-समाज ही नैतिकता का सर्वाधिक प्रचार कर सकता है इस दायित्व को आर्य जन पूर्ण करने का सफल लक्ष्य है।

—सम्पादक]

आर्यसमाज ने अपने सत्यापन-काल से धर्म समाज एवम् राष्ट्र-सेवा के लिए जो महान् कार्य किये हैं, वे प्रत्येक दृष्टि से प्रशंसनीय और प्रभावशाली हैं। ‘स्वराज्य’ की ओर सबसे पहले महर्षि दयानन्द ने ही जन-जनता का ध्यान आकृष्ट किया और आर्य मार्ग-बहन स्वातन्त्र्य सधाम में सौराह सभिमलित हुए। स्वराज्य-प्राप्ति के लिए धर्म के मौलिक सिद्धान्तों का प्रयोग किया गया। अर्थात् सत्य-अहिंसा और तप-त्याग द्वारा ही पराधीन भारतवर्ष को आजादी मिली। महात्मा गांधी जी ने स्पष्ट कहा कि मैं धर्महीन राजनीति को गन्द या कूड़ा करकट समझता हूँ। “Politics bereft of religion are absolute dirt to me.” राजनीति ही नहीं, समाज-सुधार और राष्ट्र-भावा-प्रचार के लिए भी आर्य-समाज ने महान् कार्य किया। शिक्षा जगत् में भी वह विमल विचार-धारा लेकर आगे बढ़ा। गोरक्षा की ओर सर्वसाधारण का ध्यान आकृष्ट किया। महर्षि दयानन्द का प्राबुर्भाव न हुआ होता तो आज भारत तथा भारत-वासियों—विशेषकर शिक्षा-सूत्र धारी टिन्दुओं की—बड़ी ही अचानक या बुद्धिपूर्वक होती। इसे प्रायः सब ही समझदार लोग स्वीकार करते हैं। आर्यसमाज ने देश को जगाया और उसे जीवन-जागृति प्रदान की। ‘दयानन्द बीक्षा-सत्ता-

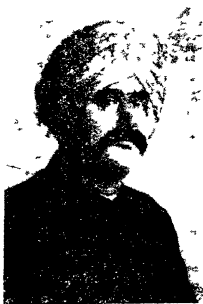


लेखक

को महोत्सव’ के सुत्रवसर पर तत्कालीन राष्ट्ररति माननीय श्री राजेन्द्रप्रसाद जी ने स्पष्ट कहा था कि ऋषि दयानन्द ने जो कहा वही महात्मा गांधी ने करके दिखाया।

आज हमारा देश स्वतन्त्र है, और हम अपने राज्य में रह रहे हैं, परन्तु हमारी इस ‘स्वतन्त्रता’ को स्वाध्यायिता के स्वार्थी और भ्रष्टाचार के मेडियों ने अपनी कुशाओं द्वारा दूषित कर दिया है। ‘स्वराज्य’ सूर्य पर अवनत्य की

(अधु ५५ पर)



आर्य जगत् के विख्यात नेता
लखनऊ शहर—
श्री रासबिहारी तिवारी

आर्यसमाज गणेशगज, डी० ए० वी०
काफे ब्र बालिका विद्यालय, आर्य कन्या
पाठशाला, आर्य टेलरिङ्ग स्कूल लखनऊ
आदि संस्थाएँ आपके अनवरत परिश्रम,
आर्य जगत् के प्रति सच्ची निष्ठा और
कर्तव्य परायणता की उज्ज्वल प्रतीक
हैं। आपके सुयोग्य पुत्र श्री ए० चन्द्रबस
श्री तिवारी बी ए एल एल बी, मन्त्री
समाजिक उपर्युक्त संस्थाओं का
और आर्य प्रतिनिधि समाज उत्तर प्रदेश
का सम्पूर्ण कार्य भार समाले हुए हैं।



कविता-कामिनि कान्त—

श्री नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर'

आप श्रद्धा दयानन्द के दर्शन करके आर्य बने थे, और सारे जीवन
आपने अपनी लेखनी से आर्यसमाज की सेवा की। आपकी सक्रिय
कविताएँ घर घर में गाई जाती हैं। आपके पुत्र श्री डा० हरिशंकर की
धर्मा डी० लिट्० आर्य जगत् के सुविख्यात लेखक, कवि और नेता हैं।



सरल नहीं है। मुझे विश्वास है कि आर्यसमाज अपनी बृद्ध सिद्धान्त निष्ठा और लगन एवं योग्यता के द्वारा आस्तिक-वाद के प्रचार में अन्ततः सफल होगा और सम्पूर्ण विश्व के विचारवान व्यक्तियों अघ्यारम्भवादी होंगे। विजय प्राप्ति के लिये हमें भी अपने ध्येय में पूर्ण निमग्न होना होगा।

दूसरी बात जो आर्यसमाज की उन्नति में बाधक है वह है साधारणतया हिन्दुओं की सहिष्णुतावृत्ति है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' या यदि मैं आज के शब्दों में कहूँ तो गांधीवाद की बेसमझी है। गांधी के मूलभूत सिद्धान्तों को ठीक-ठीक न समझकर उसका अज्ञानमय उपयोग करना है। सहिष्णुता एक सबगुण है परन्तु उसकी बेसमझी, उसका दुरुपयोग, उसकी परिधि को न जानना, वृत्तुण है। उसी प्रकार 'अक्रोध' सबगुण है और क्रोध वृत्तुण है परन्तु 'मन्यु' का त्याग तो सबगुण नहीं कहा जा सकता। वैदिक प्रार्थना में हम प्रतिदिन पाठ करते हैं—

‘मन्युरति मन्युम मयि देहि’

तीसरी बात जो आर्यसमाज की उन्नति में बाधक है वह आर्यसमाज और आर्यसमाजियों से सम्बन्ध रखती है। यह व ह्य नहीं आभ्यान्तरिक कारण है। हम आर्यजन पुरानी कुरीतियों को जो प्रायः हल हो चुकी हैं, किंवा जिनको विशाल हिन्दू समाज ने स्वीकार कर लिया है उन्हीं को हम पीटे जा रहे हैं यथा—बाल-विवाह, अछूतोद्धार, जन्मना वर्ण-पवस्था आदि, इनके सुधार का प्रयत्न जारी रहे इसमें कोई आपत्ति नहीं परन्तु आज देश और समाज में नई कुरीतियाँ जन्म ले रहीं और बढ़ रही हैं और भयकर रूप से आक्रमण कर रही हैं, उपर हमारा ध्यान नहीं के बराबर है। नई कुरीतियों को दूर करने की दिशा में आयसमाज द्वारा विशेष यत्न होना चाहिये। सभी आर्यसमाज विद्वान् हिन्दू धर्मावलम्बियों का नेतृत्व कर सकेंगे जैसा कि वह अब तक करता आया है। नहीं तो आर्यसमाज का आन्दोलन रूप समाप्त हो जायगा और वह एक पन्थ बन जायगा।

हमारी लड़कियों की वेशभूषा, तिनेमा का सवाचार और सद्ब्यवहार पर कुपपरिणाम, जीवन में अर्थवाद की प्रधानता और अष्टाचार आदि अनेक ऐसी बातें हैं जिनके विद्वद्भ्यापक आन्दोलन की योजना आयसमाज की ओर से बननी चाहिये। अराध्द्वय ईसाई पादरियों द्वारा जन्-

वित्त धर्म परिवर्तन भी हिन्दू समाज पर घुन लगा रहा है, इसी प्रकार अनेक सामाजिक समस्याएँ बननी हुई हैं जिनकी ओर हमें ध्यान देना चाहिये। हम आर्यसमाजियों से बोलने में बुद्धि और करने में ह्वास हो गया है। ईसाई पादरियों को देखिये उनका हल्का सुनाई नहीं देता परन्तु जगलों और पहाड़ों में जा जाकर वे चुपचाप लगन से कार्य करते हैं। हमारे यहाँ इस प्रकार कार्य करने वालों का अभाव है। अस्तु—

एक और बात जो आर्यसमाज की शक्ति और उप-योगिता का महान् ह्रास कर रही है वह है हममें पारस्परिक ईर्ष्या और आपसी सला सधर्म, प्रायः हमारी सारी शक्ति और समय इसी में गूँथ हो रहा है, हम आर्यसमाज के हित अथवा अपनी सत्त्वामों के हित की वृद्धि से सोचना और तदनुकूल ब्यवहार करना छोड़कर अपने अच्छे-अच्छे कार्यकर्ताओं की निन्दा और उनके उल्लाङ्ग-पछाङ्ग की ही सवा सोचते हैं। इस प्रकार की गूँथबन्दी, ईर्ष्या द्वेष का घुन जिस समाज को लग जावे उसका भविष्य अन्धकार-मय हो जाता है। यदि हम अब भी इसी में लगे रहे तो कोई भी उत्तम कार्य करना हमारे लिये सम्भव न हो सकेगा। एक उदार बुद्धिमान और प्रसिद्ध वानी महोदय के पास जिनसे मेरा परिचय है एक दिन अर्यसमाज सम्बन्धी किसी कार्य के लिये अपने एक दो मित्रों के साथ हम गये। उनके मुख से जो बात निकली वह मुझे भेद गई। उन्होंने कुछ इस प्रकार की भावना व्यक्त की वह आर्यसमाज कहाँ है जिसको यदि धन की सहायता दी जाती थी वेने वाले को इस बात का पूर्ण विश्वास रहता था कि उसके दिये धन के एक एक पैसे का सदुपयोग होगा।

यदि हम सच्चे हृदय से आत्मनिरीक्षण करें तो इसमें सन्देह नहीं कि हममें सामाजिक वृत्ति का अभाव बढ़ रहा है जिसे रोकना होगा।

मगवान कृष्ण के ये वचन यदि हम स्मरण रखें और तदनुकूल आचरण करते रहें तो महर्षि दयानन्द के चरण चिन्हों में चलने की शक्ति परमात्मा हमें देगा अग्यथा नहीं।

उर्ध्वं गच्छति सत्त्वस्था, मध्ये तिष्ठति राजसाः।

अधम्यं गुरु बुद्धिश्चा अधो गच्छति तामसाः ॥



(पृष्ठ १२ का शेष)

आर्यसमाज के नियमों के नीतर न कहीं अपना नाम डाला न अपनी पुस्तकों का। इस विषय में आधुनिक आचार्यों में ऋषि दयानन्द का नाम निराला है, सब को अपने नाम का प्रलोभन है, महात्मा बुद्ध भी अपने शिष्यों को कहते हैं कि बुद्ध की शरण आओ, गीता में श्रीकृष्ण जी भी इसी बात पर बल देते हैं "मशयात्री मय" गीता, लेकिन ऋषि दयानन्द तो कहीं भी इस प्रकार का दूरस्थ सकेत भी नहीं करते हैं। यदि आर्यसमाजी अपनी भ्रष्टा के आवेश में इस प्रकार की कोई प्रवृत्ति उत्पन्न करेंगे तो वह न केवल स्वामी दयानन्द जी के मन्तव्यों के विरुद्ध होगा अपितु इससे आर्यसमाज की उन्नति में भी बाधा पड़ेगी।

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के अन्त में "स्वामन्तव्यामन्तव्य प्रकाश" के नाम से एक परिशिष्ट दिया है जिसको प्रायः आर्यसमाज का सिद्धान्त समझा जाता है। परन्तु यह भूल है, यदि ऋषि को ऐसा अमीच्छ होता तो वह मन्तव्य अमन्तव्य के साथ 'स्व' शब्द का प्रयोग न करते। वहाँ भी स्वामी दयानन्द जी ने एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति का विवरण किया है वे यह नहीं चाहते कि लोग अपने सिद्धान्तों की खोज में ऋषि दयानन्द की अग्नी परीक्षा करें। 'स्वामन्तव्यामन्तव्यप्रकाश' है क्या? बस्तुतः यह है एक कुञ्जी, ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की समझने के लिए, यों सन्निधि कि वह कोय है उन शब्दों का जिनका स्वामी दयानन्द जी ने अपने अन्वयार्थ प्रथो मे प्रयोग किया है। एक शब्द के अनेक अर्थ हो सकते हैं। कहीं पारिभाषिक कहीं सांख्यिक कहीं धार्मिक, परन्तु शब्दों का अर्थ तो प्रकरण से लेना होगा। इसीलिए स्वामी जी ने अपने ग्रन्थों की कुञ्जी "स्वामन्तव्यामन्तव्य प्रकाश" में दे दी है। सम्भव है कहीं उससे विपरीत मिले या सशयात्मक हो या प्रमाद से अग्न्या हो गया हो उसका निर्णय इसी कुञ्जी से होना चाहिये। "स्वामन्तव्यामन्तव्य" का यही मूल्य है। इसको आर्य समाज के नियमों से उतर कर दूसरी ओणों में रखना होगा, स्वामन्तव्यामन्तव्य से नीचे और उनकी अपेक्षा गौण ऋषि के अन्य सन्तत ग्रन्थ हैं। जहाँ उनका आशय ऊपर की दो कस्तौदियों पर न कसे वहाँ उसकी माय्यता उसनी ही कम हो जायेगी। स्वामी दयानन्द जी

के सिद्धान्तों का समन्वय इसी प्रकार से हो सकता है। आर्यसमाजी प्रायः यह भूल करता है कि वह इन कस्तौदियों में भेद नहीं कर सकता है, उसके लिए आर्यसमाज के नियम, 'स्वामन्तव्यामन्तव्य' ऋषि के अन्य ग्रन्थ, ऋषि के ग्रन्थों पर व्याख्यान, ऋषि के विषय में सुनी-सुनायी गायार्थ, ऋषि के व्याख्यानों की सुना-सुना कर उनके ऊपर बनायी हुई पुस्तकें, सब ममकक्ष समझ ली जाती हैं यह एक ममस्या है, जिसकी ओर आज हमें विशेष ध्यान देना चाहिये।

इस प्रकार आर्यसमाज के (१) ईश्वर जीव प्रकृति सम्बन्धी दृष्टिकोण (२) वेद के सार्वजनीन अथवा सार्व-देशिक प्रचार की नीति (३) आर्यसमाज का सांख्यिक स्वरूप ये ऐसी बातें हैं जिनकी प्रत्येक आर्यसमाजी को अपनी दृष्टि में हर समय रक्षना चाहिये। महर्षि दयानन्द का पथ-प्रदर्शन हमें इस ओर सफलतापूर्वक बढ़ने की शक्ति प्रदान करता रहेगा।



(पृष्ठ ९ का शेष)

विध्वली बबली छाने लगी है। परिणाम स्पष्ट है, जनता का प्राप्त उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। अन्न वस्त्र तक का भयकर सङ्कट उपस्थित हो गया है। यह अनाचार, विधान निर्माण या कानूनसाजी पर करोड़ों रुपया व्यय करने से दूर नहीं हो सकता और न हुआ है। इसके लिये मानवता का प्रसार और प्रचार करना होगा। 'मानवता' 'नैतिकता' से उत्पन्न होती है और मूलाधार धम्म सिद्धान्तों को अवलम्ब मे लाना ही नैतिकता है, जिसे अंग्रेजी में 'मोरैलिटी' और अरबी में 'अखलाक' कहते हैं। आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि वह सारे राष्ट्र में सच्युत रूप से नैतिकता का प्रचार करे। यह कार्य लेखनी और वाणी दोनों प्रकार से किया जाए। प्रचारक भी बैसे बनें जैसा वे दूसरों को बनाना चाहते हैं।

दूसरा कार्य है नागरिकता-प्रचार का। 'गणतन्त्र' 'लोकतन्त्र' आदि का अर्थ है जनता का राज्य। यही 'डिमोक्रेसी' एवम् 'जमहूरी' सत्तनत' का मतलब है, परन्तु आज जनता के केवल तीन कर्त्तव्य रह गये हैं, चन्दा देना, वोट बाँटना और अपने द्वारा निर्वाचन प्रतिनिधियों का स्वागत सत्कार करना। जिस जनता का राज्य बताया जाता है

वह इतनी अबोध, शिथिल और प्रसुप्त है कि उसे न अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान है और न अधिकारों का भाव । स्वतन्त्रता प्राप्ति के शुभ अवसर पर जनता में जो जीवन जागृति थी आज वह कहा है । 'नागरिकता' के प्रचार से सर्व साधारण लोग अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों को समझ सकते हैं । ये अधिकार और कर्त्तव्य 'स्वराज्य सविधान' में अङ्कित हैं । उन्हीं के प्रचार-प्रसार और समझाने बुझाने की आवश्यकता है । राजनैतिक सम्प्रदायवाद ने अनेकता एवं विरादरोवाद तथा गुटबन्दी के जो विषैले बीज बो

दिये हैं, उन्हें नष्ट-धष्ट कर देने की अथग्न आवश्यकता है । इसे आर्यतमाज ही कर सकता है—स्वयम् निर्दोष और निर्लिप्त बनकर ।

नैतिकता और नागरिकता का प्रचार आर्यतमाज द्वारा बड़ी सफलता से हो सकता है । ऐसा करने में न पार्टीबाजी है न बलबन्दी । धर्म के मूल सिद्धान्तों की कौन अवमानना कर सकेगा ? मला 'स्वराज्य-सविधान' का प्रचार किसको अनुचित प्रतीत होगा ? आर्यतमाजों को यह प्रचार कार्य अपने प्राय या नगर के प्रत्येक 'बाड़' या

टी० बी० (तपेदिक)

की अचूक चिकित्सा घर बैठे करें । ५० वर्ष की श्रम, अनुभव एवं परोक्षण का परिणाम,
'यज्ञ-चिकित्सा'

सेनेटोरियम का परिणाम ८० प्रतिशत । लेखक—सरकार द्वारा अनेक बार पुरस्कृत एवं सम्मानित स्व० डा० फुन्दनलाल जी अग्निहोत्री एम डी (एलन) मेडिकल आफिसर टी बी सेनेटोरियम । मू ५ ००

लेखक बी कुल अ य पुस्तकें

२—आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा

आमूल लेखक स्व० श्री मावलकर जी, अध्यक्ष लोक सभा । हर रोग की सरल अचूक चिकित्सा घर पर ही स्वयं करें । मू० ४ ००

३—आरोग्य शास्त्र

सर्वदा स्वस्थ रहने के वैज्ञानिक अनुभूत नियम बताने वाली अपने विषय की एकमात्र पुस्तक । उपहार में देने के लिए अनुपम भेंट । मू० २ ००

[उक्त सभी पुस्तकें शिक्षा विभाग एवं पचायतराज द्वारा स्वीकृत और सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं ।]

४ राष्ट्र उत्थान की कुञ्जी

गऊ प्रव्रत पदार्थों द्वारा अनेक रोगों की चिकित्सा एवं गऊ की उपयोगिता बताने वाली अनूठी पुस्तक । मू० ० ५० । डाक ध्यय तबका पुष्क ।

"बारा पुस्तकें एक साथ लेने पर छूट १ ०० । डाक ध्यय २ ५० । हवन सामग्री—नपेदिक नाशक ६ ५०, विशिष्ट रोग नाशक—४ ५०, वैदिक प्रयोगार्थ "सर्वरोग प्रतिरोधक—२ ५० प्रति सेर ।"

स्वास्थ्य भंडार, १६, केलाबाग, बरेली ।

ब्राच स्वास्थ्य भंडार, ७ / ३ लाजपतनगर, सखनऊ

महल्ले में, बड़े उस्ताह और प्रयत्न में सबको सुनानी - समझानी होगी, क्योंकि उनमें सबका हित और लाभ है । शासन को भी इस उद्योग द्वारा यथेष्ट सहायता मिलेगी । जिस प्रकार बुद्धि आम्बोलन आर्यतमाज ने बहुत बड़े परिमाण में किया था उसी प्रकार यह राष्ट्र-शोधन की समस्या है, जिसकी प्रति शीघ्र, अवश्य और बड़े उस्ताह से होनी चाहिए । इसके द्वारा 'स्वराज्य' को 'सुराज्य' भी बनने में पूरी सहायता मिलेगी और राष्ट्र का बड़ा हित होगा । ★

शीघ्र पता देते हुए पधारें

श्री स्वामी सत्यानन्द जी सरस्वती जो कोटियारी (जिला हरदोई) में प्रचार काय आर्यतमाजो का करते रहे हैं वह स्वामी जो शीघ्र पधारने की कृपा करें आर्यतमाजें नरोथा, कसौरा किरतिवापुर मोटिया, सकपड़ापुर, अगलपुर, लहीपुर आदि आदि आमन्त्रित कर रहो हैं ।

—स-बी

१—जिला आर्यबोर बल मोरजापुर के समस्त सदस्यों को विहित हो कि शिबशकरी के मेले में २० अप्रैल को जिला आर्यबोर बल की एक आवश्यकीय बैठक आर्य समाज के पहाल में होगी । अत सभी आर्यबोरों की उपस्थिति १० बजे दिन को अवश्य ही अनिवार्य एवं प्राथनाय है ।

आर्य समाज की आवश्यकता

[ले०—श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा एम०ए० बी-लिट, अजमेर]

[आर्य समाज की स्थापना किसी अरथायी उद्देश्य की पूर्ति के लिये नहीं हुई थी उसकी स्थापना सत्कार उपकार के महान् उद्देश्य के लिए हुई है, उसकी पूर्ति का प्रयत्न कभी समाप्त नहीं हो सकता। लेखक ने आर्य समाज की अनिर्धार्य आवश्यकता बतलाते हुए आर्यजनों को उत्साह पूर्वक सत्कार उपकार के मिशन में सलग्न रहने की प्रेरणा दी है।

—सम्पादक]



लेखक

कुछ वर्षों से हमारे कर्णकुहरो में ऐसे शब्दनाद गुंजायमान होते रहते हैं कि 'अब आर्य समाज मृतप्राय हो चुका है—उसमें अब पूर्व की भाँति जीवन एवं कार्य का उत्साह और उमंग नहीं रही है—अब आर्य समाज की आवश्यकता नहीं है—आर्य समाज को अब अपना काम बन्द कर देना चाहिये—आर्य समाज में शिथिलता आ गई है—आर्य समाज के सम्मुख अब कोई प्रोग्राम (विशेष कार्यक्रम) नहीं है—आर्य समाज को केवल पुरानी लकीर पीट रहे हैं इत्यादि।' यदि ये आवाजें आर्य समाज के बाहर के लोगों के द्वारा उठाई जावें तो न तो हमें आश्चर्य हो, न विशेष दुःख, क्योंकि विरोधी लोग तो अपने प्रतिद्वन्द्वी को निरस्तहित करना भी विरोध का एक अंग और अपनी विजय का एक साधन मानते हैं और वे उसका प्रयोग कभी कभी सफलतापूर्वक करते भी रहते हैं, परन्तु हमारे विस्मय और दुःख का पारावार तब नहीं रहता, जब हम अपने ही आर्य समाज के कई कर्णधारों और नेताओं एवं कार्यकर्ताओं को इस प्रकार की बातें करते सुनते हैं। आर्य समाज के प्लेटफार्मों और व्याख्यान मंचों से निराशा की बातें एवं घटनाएँ हमें सुनाई जाती हैं। आर्य समाज के पत्रों में लेखों में, सम्पादकीय टिप्पणियों में निरन्तर निराशावाद का रुचनपूर्ण राग अलाप जाता है। सब मानिये, जब मैं ऐसे लेख अथवा टिप्पणों पढ़ता हूँ, अथवा ऐसे ठंडे निरस्तहाई प्रवचन सुनता हूँ तो मुझमें महान दुःख होता है और ऐसे प्रवचनकर्ताओं एवं लेखकों और टिप्पणों सम्पादकों को मैं समाज का हितैषी नहीं समझ



सकता। मैं तो मानता हूँ कि वे समाज का जहित ही सम्पादन कर रहे हैं। जानबूझ कर अथवा अज्ञानतावश एक ऐसे निरस्तहाई एवं निराशा की बेलि बो रहे हैं जो शर्म शर्म फलने-फूलने पर अपने आश्रयवाता आर्य समाज रूपी वृक्ष को ही समाप्त कर देगी। ऐसे निराशावादी महानुभावों से मैं प्रार्थना करूँगा कि वे ऐसे सामाजिक पानक-पक से अपने को पकिल और कलकित न कर पृथक् हो रहे तो समाज का अधिक कल्याण होगा।

आर्य समाज के सम्बन्ध में निराशा वृक्षक जो भी बातें कही जाती हैं अथवा आशंकाएँ उठाई जाती हैं, उनको हम तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं—

- (१) अब आर्य समाज की आवश्यकता नहीं है।
- (२) आर्य समाज शिथिल एवं निष्क्रिय हो गया है।
- (३) आर्य समाज के सम्मुख कोई विशेष प्रोग्राम नहीं है।

इनमें से पहली बात का उत्तर तो मैंने अब से कई वर्ष पूर्व लिखित पुस्तक "आर्य समाज की आवश्यकता" में बड़े जोरदार शब्दों में दिया था वह पुस्तक पटना दिल्ली

और प्रयाग आदि अनेक स्थानों में कांग्रेस के बृहद अधिवेशनों तक के अवसर पर वितरित की गई थी और मैं समझता हूँ तब की अपेक्षा अब आर्यसमाज की ओर भी अधिक आवश्यकता है जबकि समस्त राष्ट्र में भ्रष्टाचार का ही प्रदर्शन किया जा रहा है, हमारा नवयुवक समाज धमनिरपेक्षता के नाम पर अधम एव अनैतिकता के गर्भ में गिरता चला जा रहा है, धर्म एव नैतिक मान्यताओं के प्रति उसकी उदासीनता अक्षत रहती जाती रही है। ईसाई, मुसलमान, बौद्ध और वहाबी प्रचारक प्रवृत्ति अधिक सक्रियता से भारतीय संस्कृति, हिन्दू जाति एव राष्ट्रीयता पर अधिकाधिक प्रहार करते जा रहे हैं। मला, ऐसे सफट काल में इस हिन्दू जाति का, वैदिक संस्कृति का, एव भारतीय राष्ट्रीयता का सर्वोत्तम रक्षक आर्यसमाज के अतिरिक्त और कौन हो सकता है? इस अन्वेषण हिन्दू जाति को आशय कौन दे सकता है? गदियों, कुतियों और पदों के प्रलोभनों से ऊँचा उठकर वेदा में व्याप्त भ्रष्टाचार और अनैतिकता का निवारण और कौन कर सकता है? स्वर्गीय राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र-प्रसाद जी तथा राजपि पुरुषोत्तमदास टंडन के शब्दों में आर्यसमाज से ही ऐसी आशा की जा सकती है। तभी तो मैंने एक कविता की प्रारम्भिक पक्तियों में ही लिखा था—

कहता है कौन कि भूतल पर,
आवश्यक आर्यसमाज नहीं ?
बया ऋषि का मिशन हुआ पूरा,
कुछ करना वैदिक काज नहीं ?

(२) दूसरी बात यह कही जाती है कि आर्यसमाज स्थितिल एव निष्क्रिय हो गया है। यह बात भी सर्वशे मे तच्चो पर आधारित नहीं है। आर्यसमाज की शिक्षण सस्थाओं एव उसकी अन्य सामाजिक सस्थाओं की तुलना में भारत का अन्य कोई समाज (ईसाइयों के अतिरिक्त जिनमें करोड़ों रुपये की वार्षिक सहायता विदेशों से इस कार्य के लिये ही मिलती है) सिर उठाकर नहीं कह सकता कि देश के, समाज सुधार के एव शिक्षा के विस्तार में जो कार्य आर्यसमाज ने किया है और कर रहा है वह किन्तु अन्य ने नहीं किया है; स्वर्गीय महात्मा गांधी जी ने

सन् १९२७ के अप्रैल मास में गुरुकुल कांगड़ी के महोत्सव पर इस तथ्य को स्वीकार करते हुये आर्यसमाज को बधाई दी थी। अगो १० माच को दयानन्द कालेज अजमेर के वार्षिक समारोह की अध्यक्षता करते हुये राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय श्री मोहनलाल जो मुखाडिया ने भी स्पष्ट कहा था कि जो कार्य महात्मा गांधी ने किया उसकी भूमिका स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज ने पहले ही तैयार कर दी थी। आर्यसमाज का काय समस्त क्षेत्रों में और विशेषतः मुशिक्षित सपुदाय के विचारों में परिवर्तन के रूप में शान्ति के साथ मूक भाव से निरन्तर चल रहा है।

(३) "आर्यसमाज के सम्मुख कोई विशेष कार्यक्रम नहीं है" जो लोग ऐसा कहते हैं, ज्ञात होता है कि उन्होंने आर्यसमाज के उद्देश्य को समझा ही नहीं।

"सत्तार का उपकार करना इस ममाज का मुख्य उद्देश्य है" इससे बढकर कार्यक्रम किसका है ?

"धर्म वैदिक है हमारा, आर्य ध्यारा नाम है।
वेद के अनुसार सारा, जग बनाना काम है।"

सत्तार में (केवल भारत में ही नहीं) वेद का प्रचार करना, वैदिक विचारों का विस्तार, वैदिक संस्कृति की पूर्ववत् भूतल पर पुन स्थापना आदि महान् कार्य हमारे सामने हैं, इसीलिये "कुष्वन्तो विश्वमार्यम्" का हमारा नारा है। इसी आशा को लेकर अमेरिका के योगी एन्ड्रयू जॅक्सन जैसे विद्वानों ने आर्यसमाज के लिये लिखा था— (जिसकी कुछ पक्तियां मेरे द्वारा काव्यानुवाद में प्रस्तुत हैं)—

"अहो, एक प्रज्वलित अग्नि को,
विदव मध्य में देख रहा।
है उवाला पालण्ड नाशिनी,
श्रेय कारिणी सुमग महा ॥
× × × × ×
आर्य समाज रूप मट्टी में,
अग्नि शिक्षा बह जलती है।
दयानन्द के हृदय स्थल से,
जीवन र्योति निकलती है ॥"



सांस्कृतिक अभ्युत्थान और आर्यसमाज

(ले०—श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी, मेरठ)

महर्षि दयानन्द ने उन्नीसवीं शती में जो महान् क्रांति की, उसका प्रभाव सम्पूर्ण देश पर पड़ा। धार्मिक एवं सामाजिक रूप में भारतवर्ष में एक नई चेतना उत्पन्न हुई, परन्तु इसी के साथ राजनीतिक जागृति का भी उदय हुआ।

महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म के प्रचार में अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दी। उन्होंने इस बात का पूण प्रयत्न किया कि भारत में वैदिक सस्कृति का अभ्युदय हो। उनका कहना है "पाच सत्स्र वर्षों के पूव वेदमत से मिस्र दूसरा कोई भी मत न था।"

वैदिक सस्कृति प्रत्येक व्यक्ति के शुद्धाचरण पर अवलम्बित थी। उन्होंने इस बात का यत्न किया कि धर्म के

[आज सस्कृति के नाम पर मानवीय भावना के साथ जो अन्ध्याय हो रहा है, सस्कृति को मनोरंजन और विलासिता का प्रतीक समझा जा रहा है, आयसमाज को उसके विरुद्ध आन्दोलन करना चाहिये। भौतिक विकास की अपेक्षा आत्मिक विकास ही सांस्कृतिक विकास है इस कतव्य की ओर ध्यान लेखक ने आर्यसमाज के कर्णधारों को प्रेरणा दी है। —सम्पादक]

विपरीत चलने वाले में वैदिक भावनाओं का उदय हो और वे धर्माभ्युत्थान को परिष्कार करके धर्म के वास्तविक महत्त्व को समझने में सफल हो। इन प्रकार के व्यक्तियों का उन्होंने आर्यसमाज के रूप में संगठित किया, और उस आर्यसमाज ने अपने देश में पुन वैदिक धर्म फैलाने का यत्न किया।

आर्यसमाज में प्रवेश करने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस बात का यत्न करता था कि उसका आचरण शुद्ध और पवित्र हो। उसकी वाणी का मूल्य था। अधिकारी वर्ग आर्यसमाज को सत्यवक्ता और ईमानदार समझने थे। इस प्रकार के आर्यों ने वैदिक सस्कृति को पुन जीवित करके अपने देश को समुन्नत करने का यत्न किया। आयसमाज ने सावजनिक जीवन में पवित्रता लाने और नैतिक बल की वृद्धि करने में महान् योग दिया।

इसमें सदेह नहीं कि आयसमाज को धर्माभ्युत्थान और सामाजिक सुगीतियों के निवारण में बड़ी सफलता मिली

परन्तु हजारों वर्षों से फैले अल्प विश्वासों को समाप्त कर देना साधारण काम न था। इसका परिणाम यह हुआ कि आयसमाज के प्रचार कार्य के रुक जाने और प्रभावशील आर्यों के राजनैतिक क्षेत्र में चले जाने से सस्कृति का स्वरूप ही बदल गया। यही कारण है कि आयसमाज ने सांस्कृतिक अभ्युत्थान का जो रूप जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया था, आज उसकी पूर्ण रूप में अवहेलना की जाने लगी है।

धार्मिक रूप में सांस्कृतिक अभ्युत्थान का आशय मानव चरित्र का ऊँचापन था। परन्तु आज राजनीति ने उसके रूप को पुणतया परिवर्तित कर दिया है। अंतर्राष्ट्रीय जगत में आज भारतीय सांस्कृतिक अभ्युत्थान का अर्थ यह

है कि भारतीय युवतियाँ कला और सस्कृति के नाम पर विदेशों में जाकर नृत्य और संगीत का प्रदर्शन करें, वहाँ जाकर वे पश्चिमी वातावरण की छाप अपने ऊपर लगायें। अन्तर्वेशीय जगत में सांस्कृतिक अभ्युत्थान का आशय यह है कि हमारी लड़कियाँ रसिकजन अफसरों और धर्म से गिरे रहने और राजपुरुषों के सम्मुख अर्द्धनग्न रूप में नृत्य करें, और मधुर कठ से संगीत प्रस्तुत करें। आश्चर्य की बात तो यह है कि विदेशी लड़कियाँ भी हमारे बड़े बड़े कार्यक्रमों में सस्कृति और कला के नाम पर प्रदर्शन के लिए आमंत्रित की जाने लगी हैं और ऐसे समारोहों में हमारे ऐसे नेता भी सम्मिलित होते हैं, जिन पर सम्पूर्ण राष्ट्र के नैतिक उत्थान का उत्तरदायित्व है। हम नृत्य और संगीत के विरोधी नहीं, परन्तु इसके लिए मर्यादा होनी चाहिए। यह नहीं कि इजीनियर्स या किसी अन्य वैज्ञानिकों का सम्मेलन तो केवल दो घंटे का हो और उसके साथ सांस्कृतिक कार्यक्रमों की योजना चार घंटे के स्थान

की जाय। ऐसा करने से मुख्य कार्यक्रम का कोई महत्व नहीं रहता। जब तक हमारे शासक और उच्च अधिकारी इस प्रकार की नीति बरतते रहेगे तब तक प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति कभी नहीं पनपेगी।

आज स्थिति यह है कि वम और सदाचार पैसे के आगे नगण्य समझे जाने लगे हैं। समाज में देने गिने सत महात्मा अथवा योगियों को छोड़कर अपने-अपने क्षेत्र में वे व्यक्ति सम्माननीय समझे जाते हैं, जो धनी और प्रभावशाली हैं। ऐसी दशा में सांस्कृतिक मर्यादायें भी स्थिर नहीं रहें। इसका प्रभाव हमारे सारे समाज पर पडा है। समाज का सामान्य जीवन आज अस्त-व्यस्त होना जा रहा है और समाज में वे तत्त्व पनप रहे हैं जिनका कोई धार्मिक आधार नहीं और जिनका चरित्र भी उन्नत नहीं।

इस विषय पर स्थिति का मुकाबला करने की शक्ति आज भी यदि किसी सभ्यता में है तो वह केवल आयसमाज ही है। आज भी आयसमाज में काम करने वाले अपने चरित्र को उन्नत करने का यत्न करते हैं। उनमें अब भी यह भावना है कि वे ऐसा कोई निम्ननीय कार्य न करें, जिससे समाज को हानि पहुंचे या वे समाज की दृष्टि में नैतिकता से गिरे समझे जायें। मेरा अपना यह बड़ा विश्वास है कि हमारे राजपुरुष और नेता मले ही अपने देश का आर्थिक विकास कर दें परन्तु उनमें यह शक्ति नहीं कि वे मानव चरित्र को ऊंचा कर सकें। मानव चरित्र को ऊंचा करने के लिए चरित्रवान् आर्यों की आवश्यकता है, ऐसे आर्यों की आवश्यकता है जिनमें गरीबी से टक्कर लेने की शक्ति हो, जो आज के प्रलम्बनों में न पडकर अपने सादगी के जीवन में सन्तोष करने वाले हों, आज आवश्यकता ऐसे व्यक्तियों की है जो सरकारी कार्यालयों, सस्थानों और कल कारखानों में काम करते हुए अपनी ईमानदारी की बही छाप लगाने वाले हों जहाँ अंग्रेज के शासनकाल में आर्यसमाज में काम करने वालों ने लगाई थी। उन्होंने अपने अफसरो से यह कबुलवा लिया था "आर्यसमाजों बड़े ईमानदार होते हैं।"

आर्यसमाज में काम करने वालों के सम्बन्ध में जनता बड़ी ऊँची भावना रखती थी। स्वामी श्रद्धानन्द महात्मा हुसर्राज, लाला लाजपतराय, नारायणस्वामी आदि अनेक आर्य नेताओं ने विद्वानों, राजपुरुषों और अन्य क्षेत्रों में कर्म करने वाले सुधारकों से सर्वोत्तम उपाय प्राप्त किया।

उनके समय में आर्यसमाज का सर्वत्र सम्मान था। उसी सम्मान को पुन प्राप्त करने के लिए आर्यसमाज को प्रयत्नशील होना है। संस्कृति के अभ्युत्थान के लिए युद्ध विचारों और शुद्धाचरण की आवश्यकता है। जो व्यक्ति शराब और अन्य व्यसनो में फसे रहते हैं, वे भारतीय संस्कृति की रक्षा कभी नहीं कर सकते। इस प्रकार के व्यक्ति तो हम देश की सांस्कृतिक मान्यताओं का गला घोट रहे हैं। ऐसे व्यक्तियों का उद्देश्य तो केवल जीवन का आनन्द लेना मात्र है।

प्राचीन वैदिक संस्कृति की रक्षा के लिए हमें महर्षि दयानन्द के माग वा अनुसरण करना होगा। जीवन में पवित्रता, धार्मिकता और सत्यवादिता लानी होगी। इन देश के महापुरुषों के आदर्शों के अनुकूल आचरण करना होगा। इसके अतिरिक्त पारिवारिक जीवन को भी गृहिकी विलासिता और अयशोचलुपना में रक्षा कर्नी होगी।

हम आज क पय भ्रष्ट युवक और युवतियों को भी सम्भाग पर लाना होगा। आज स्थिति यह है कि युवक और युवतिया नये विचारों में पलकर आश्रयकता से अधिक स्वतन्त्र और स्वच्छ हो गये हैं। शिक्षा पाकर वे पश्चिमी विचारों में रहना अधिक पसन्द करते हैं। भारतीय संस्कृति की मर्यादा का पालन करना तो वे विघ्नदायन समझते हैं। उनके इन विचारों को परिवर्तित करना पश्चि कठिन काम है, फिर भी आयसमाज में वह शक्ति निहित है कि उसमें काम करने वाले लाखों भाई और बहिनें अपने पवित्र आचरण से इन बहकें युवकों और युवतियों में कुछ परिवर्तन ला दें।

आर्यसमाज मानवमात्र का कल्याण चाहता है। आर्य समाज मानव जीवन में पवित्रता लाना चाहता है। आर्य-समाज मरती हुई मानवता को जीवन देना चाहता है। परन्तु इसके लिए आवश्यकता है कि चरित्रवान् आर्य-समाजों अपना मूल्यवान समय देकर समाज के वैदिक जीवन में परिवर्तन लाने का यत्न करें। मेरे विचार में सामाजिक उत्थान का अर्थ सम्पूर्ण राष्ट्र का अभ्युदय है। आर्यसमाज का जन्म मनुष्यमात्र के कल्याण के लिये हुआ। अत हम सबको पूरी शक्ति के साथ अपनी संस्कृति की रक्षा में योग देना चाहिए और आर्यसमाज के ससरोपकार उद्देश्य की धार्मिक कर्म में पूर्ण करनी चाहिए।

हमारा उद्धारकर्ता

(ले०-डा० श्री मुन्शीराम शर्मा, आयनगर, कानपुर]

आयसमाज भारतीय भावना, परम्परा और गौरव का रक्षक है, महवि वयान्व ने मानव सस्कृति के पथ-प्रदर्शन के लिये इसका निर्माण किया था इसकी उन्नति करना हमारा कर्तव्य है। —सपावक

शोधान कभी सौरभ-सम्पन्न अमराइयो के स्वको से विस्तीर्ण ध्योम और पृथित पृथिवी को वासन्ती आभा प्रदान कर रहा था। वे प्रकृति से ही गुरु तरु, न जाने, सहसा कहा बिलीन हो गये ? उद्यान में धीरे-धीरे उजड़ते-उजड़ते रह गई वे वामिया, जो विषधर मुजगो की क्रीडा-



लेखक

स्थली बनी हुई थीं। अब वे आत्र नहीं थे जो मुपव्व कल गुच्छो से लवे हुए रसपान के लिए सबको आकर्षित करते थे और उसके पूर्व मजरियो की मीनी-मीनी गन्ध से मधुपो के लिये लीला-विशोद का साधन बने हुए थे।

वेश का हुरा मरा उद्यान उजड़ गया। 'न सेस्तेनो जनपदे' की घोषणा करने वाले आर्य-सम्राट विवा हो गये। अमृत के स्थान पर विषधरो का सामना करना पडा, पारस्परिक सहायता द्वारा एक दूसरे के योग-श्रेम के विधाता वैमनस्य के क्रीडा-कनुक बन गये। विकास की धरम काष्ठा पर पहुचकर आय जाति ऐसे पतन को प्राप्त हुई कि उसके चारो ओर जम्बाल ही जम्बाल चिखलाई बने

लगा। कमल नहीं, शंवाल भी नहीं, कर्दम ही कर्दम ! ! विशीर्णच्छद हस की माति उसके क्लेश का पारावार नहीं था।

वमुग्धरा के इस रत्न को लूटने के लिए विदेशियो की भी गुध्र-सृष्टि पडी। काफिले के काफिले, समूह के समूह एक एक कर आये और लूट-खसोट कर चले गये। कुछ ऐसे भी आये जिनके देश में जनता एक एक बूब पानी के लिए तरसती रहती है, एक-एक कण बाने के लिए परमु खापेसी बनी रहती है। गगा, यधुना, राबी, चुनाव चम्बल का यह प्रवेश, गोदा कावेरी और नर्मदा की जल-राशि से सिंचित यह भूमि उन्हे भा गई। वे यहीं बस गये। कुछ ऐसे भी आये जो बसे ही नहीं, राज्य करने लगे और राज्य ही नहीं, अपनी मान्यताओ को भी धोपने लगे।

आर्य जाति का स्वत्व ध्वस्त हो गया, पर इस अमृत सन्तान को तो अमर रहना था। भगवान के विधान में जो अध्यात्म की निधि इसे सृष्टि के प्रारम्भ में मिली, उसे मानवता के सत्राण के लिए सुरक्षित रहना था। आपत्तियों पर आपत्तियां आईं, आधी और तूफान आये, प्रलयकर दृश्य उपस्थित हुए, पर अपनी अमर निधि को अक्षल में छिपाये यह जैसे-तैसे काल-यापन करती रही, सास लेती रही। बीच-बीच में आधावासनकारी आम्बोलन होते रहे। आचार्य-सन्त क्षत्रिय इसमें, अपने बलिदानों द्वारा, प्राण फूकते रहे पर सात सौ वर्षों का पराधीनता का लम्बा चौडा युग किसी का भी कचूमर निकाल देने के लिये पर्याप्त होता है। यह तो प्रभु की कृपा ही थी कि हम मिटे नहीं, बचे रहे, कोई तत्व हमारे अस्तित्व को प्राणधत्व देता रहा।

कहते हैं, देव, विधि के विधान में, किसी पद-बलिहारी सत्ता के लिये आ जाते हैं। कर्म-विपाक ही उन्हें

खींच लाता है या उनकी सहज कृपा उन्हें ले आती है, यह तो भगवान् ही जाने, पर ऐसा होता अवश्य है। वेव के कई मन्त्रों में विद्युत् गुण सम्पन्न धर्मात्माओं के अवतरण और उनके द्वारा होने वाले रक्षण की चर्चा आती है। महर्षि दयानन्द ऐसे ही एक देव थे। उनके तप में उन्हें मूलशकर से दयानन्द बना दिया था। वे मूल में तो शकर कल्याणकारी थे ही। जीवन के अन्तिम पक्ष में वे वया में ही आनन्द लेने लगे। उनकी वया प्राणीमात्र के लिये थी। मानव और मानवों में श्रेष्ठ आर्यवंश के उद्धार में तो उनकी वया का सर्वाधिक सक्रिय रूप दिखाई दिया। उनका विश्वास था कि यदि आर्य जाति बच गई, तो मानवता की भी रक्षा हो जायगी और यदि आर्यत्व ही नहीं रहा, तो मात्स्यन्याय की चपेट में सभी मृत्यु-प्रस्त हो जायगे।

आर्य जाति के उद्धार के लिये, भारत का उत्थान, देश का पराधीनता-पाशों से उन्मोचन आवश्यक था। महर्षि के ग्रन्थों में यह भाव पब-पब पर ध्वनित हो रहा है। स्वाधीन देश ही अपनी अस्मिता, अपनी सभ्यता, अपनी संस्कृति, अपनी ज्ञान-राशि, अपनी आदर्श परायणता को अक्षुण्ण रख सकता है। पराधीनता तो इनका रक्षण नहीं, भक्षण करती है। महर्षि का अन्तिम जीवन राज-स्थान में व्यतीत हुआ और वहा स्वातन्त्र्य-प्राप्ति के लिये साधनों का अनुसन्धान और प्रयोग भी। परोपकारिणी समा और आर्यसमाज की स्थापना उन्हीं दिनों की गई।

महर्षि मन वचन-कर्म से एक थे। मन और वाणी के साथ कर्म न हो, तो उनका कोई उपयोग नहीं है। क्रिया-बली वाणी, कर्म-गर्भा मति ही सार्थक है। आर्यसमाज ने भी दोनों को साथ-साथ रखा। उसने उपदेश ही नहीं दिया, करके भी दिखाया। वह वाक्पूर ही नहीं, कर्मपूर भी रहा है। उसने मट्ट ही नहीं, मट्ट का भी कार्य किया है, ब्राह्मण ही नहीं, क्षत्रियत्व की दीप्ति भी प्रदर्शित की है। उसने जहाँ विध्यदेवों की भांति प्रकाश दिया है, यहा

पितरों की भांति रक्षा भी की है। अथर्व० १८१-४७ में दोनो तत्व एक दूसरे के सर्वधर्म कहे गये हैं। मट्ट मट्ट को, ब्रह्म क्षत्र को भावित करके सप्राण बनाता है, तो क्षत्रिय ब्राह्मणत्व के विकास के लिए उचित वातावरण प्रस्तुत कर देता है। एक को दूसरे की अपेक्षा है। दोनो के समन्वय द्वारा ही उन्नति का अवरुद्ध पथ उन्मुक्त होता है। आर्यसमाज ने जहा गुरुवत्त को जन्म दिया, वहा महात्मा हसराम को भी, स्वामी श्रद्धानन्द को उत्पन्न किया वहा लाला लाजपतराय को भी, स्वामी दर्शनानन्द तथा गणपति शर्मा उसकी कोल में पले, वहा प्रसिद्ध कातिकारी भाई परमानन्द और प० रामप्रसाद बिस्मिल भी। उसने विचार और बलिवान एक साथ बिये हैं, ज्ञान और कर्म की एक साथ प्रतिष्ठा की है, कथनी और करनी को एक समान महत्व दिया है, 'शास्त्रादपि शरादपि' की उक्ति को जीवन में घटाया है और देश एव विश्व के उत्थान में अनुपम योगदान दिया है। आर्यसमाज की यह देन भारतीय इतिहास में अमर रहेगी।

मै महर्षि को और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज को भारत का उद्धारकर्ता मानता हूँ। महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायियों ने भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के लिए, आर्य जाति को उसके प्राचीन गौरव तक पुन पट्टवाने के लिये, वेव को मनुप्रोक्त प्रतिष्ठा देने के लिये, संस्कृत तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार के लिये, देश में भावात्मक एकता की स्थापना के लिये, स्त्री जाति तथा अछूतों के उद्धार के लिये जो पुरुषार्थ किया है, वह स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा और आने वाली पीढ़ियों का पथ-प्रदर्शन करता रहेगा। उसके अब तक के जीवन में आचार्य शकर तथा कुमारिल मट्ट ही नहीं, प्रताप छत्रसाल तथा गुरु गोबिन्द भी दिखाई दिये है। जानियो और बलिवानियो की एक भूखला की भूखला उसने उत्पन्न की है। ऐसे ऋषि को और ऐसे आर्यसमाज को वया कोई कमी भूल सकता है ?

दयानन्द-वचनामृत

मेरी अत करण से यही कामना है कि भारतवर्ष के एक अन्त से दूसरे अन्त तक आर्यसमाज स्थापित हो, और देश में व्यापी हुई कुरीतियाँ उन्मूलित हो जाएँ।

आर्यसमाज और वैदिक आन्दोलन

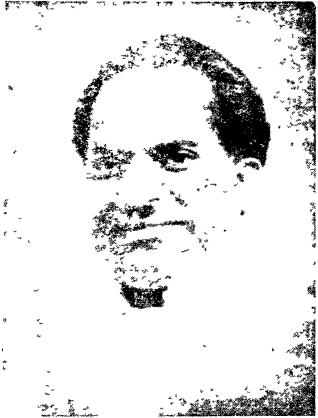
(ले०—श्री माधव्यं वैद्यनाथ जी शास्त्री)

[वेद प्रचार आर्यसमाज के रचनात्मक कार्यक्रम का अग रहा है। वेद के सम्बन्ध में प्रत्येक आय को भ्रष्टा और अध्ययन की परम्परा बनाये रखनी चाहिये। लेखक ने वेद के प्रति आर्यजनों का ध्यान आकृष्ट किया है।

—सम्पादक]

आर्यसमाज की स्थापना युगदृष्टा भगवान् वयानन्द के द्वारा हुई थी। प्रतिवर्ष आर्यसमाज स्थापना दिवस हम मनाते हैं। और आर्यसमाज के कार्यों का पुषगान करते हैं। यह स्मरण रखना चाहिए कि वतमान काल की अपेक्षा प्रारम्भ काल का रूप कुछ विशेष था। प्रारम्भिक काल का आर्यसमाज एक आन्दोलन था। वतमान का आयसमाज एक सस्था है। आन्दोलन और सस्था में जो भेद हुआ करता है वही भेद वर्तमान और प्रारम्भ के आयसमाज में है। आर्य समाज के आन्दोलन की एक बड़ी भारी छाप वेदाध्ययन (Vedic Studies) पर पड़ी।

प्रारम्भ काल में लोगों में यह धारणा बन गई थी कि वेद तो कलियुग में लुप्त हो गये हैं। परन्तु आर्यसमाज के वेद प्रचार का यह प्रभाव तो अवश्य हुआ कि लोग इस कलियुग में भी वेद का होना मानते हैं और उन्हीं संहिताओं का पठन पाठन करते हैं जिनको आयसमाज वेद की संहिता कहता आया है। अर्थ और व्याख्या में मतभेद रखते हुए भी कोई इस विषय में मतभेद नहीं रखता है कि ये चार संहितायें वेद नहीं हैं। साथ ही वेद की मूल संहिताओं का जहा से भी प्रकाशन हुआ है—सबसे अधिक



लेखक

प्रकाशन और विस्तार आर्यसमाजाधिकृत स्थानों से ही हुआ है। चारो वेदो की चारो मूल संहिताओं का एकत्र प्रकाशन अब भी श्री परोपकारिणी सभा अजमेर अथवा आय सस्थानो एव आयसमाज से प्रभावित सस्थानों से ही है। एक रुढ़ि यह चल रही थी कि शूद्र और स्त्री को वेदाध्ययन और वेद के कर्मकाण्ड का अधिकार नहीं है। परन्तु आज आर्यसमाज के प्रभाव से यह धारणा समाप्त-प्राय हो चुकी है। कोई भी इसे समझदारी का विषय नहीं समझता है। बड़े-बड़े सनातनी विद्वान् भी अब इसे प्रथम नहीं देते।

कुछ ऐसे भी सनातनी विद्वान हैं जो वेद से अब विज्ञान निकालते हैं। जयपुर की एक विद्वत् परम्परा इस पर कार्य भी करती आ रही है। उसके प्रकार पर भले ही विबाध हो, वह इसमें सफल है या नहीं, कल्पना में उड़ रही है वा वास्तविकता भी उसकी खोज में है वा नहीं—इत्यादि बातों पर मतभेद हो सकता है और है। परन्तु वेद में ज्ञान-विज्ञान का स्त्रोत है, इस पर किसी का मत-भेद नहीं हो सकता है। यह धारणा सनातन धर्मी विद्वानों की अपने आचार्यों से तो प्राप्त नहीं है। क्योंकि सायण, महोषर और उषट वा बंकट माधव आदि किसी ने भी इस विचारधारा को प्रस्फुटित नहीं किया है। स्पष्ट शब्दों में यदि किसी ने इस विचारधारा को प्रकट किया है तो आचार्य दयानन्द सरस्वती ने किया है और वह आर्यसमाज के तीसरे नियम के रूप में विद्यमान है। कहना पड़ेगा कि यह बहुत बड़ा प्रभाव है और है आर्यसमाज के वैदिक आन्दोलन का ही।

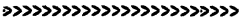
श्री अरविन्द घोष ने भी वेद की वैज्ञानिकी व्याख्या करने की घोषणा की है। कई आर्यसामाजिक जन भी व्यय में उनके कथन से महर्षि की तारीफ सिद्ध करने का ध्यय प्रयत्न करते हैं। श्री अरविन्द ने महर्षि दयानन्द को कहीं पर महर्षि वा ऋषि नहीं लिखा है। वे तो स्वयं ही वेदवि और महर्षि बनना चाहते थे। हा! इस दिशा में वे खुले महर्षि दयानन्द की विचारधारा का सामना नहीं कर सकते थे। अतः कभी-कभी तारीफ भी कर दिया करते थे। परन्तु अरविन्द के विचारों को मान देने वाले निष्पक्ष विद्वानों श्री के० बरदाचारी आदि ने महर्षि दयानन्द की वेद-सम्बन्धी कारकासरणी का और उनके योगिकवाद की भ्रूति-भ्रूति प्रशंसा की है। इससे वर्तमान विचारशील विद्वानों का दृष्टिकोण महर्षि की ओर आ रहा है।

वेद के अनुसंधान पूर्ण ग्रन्थ जितने भी मैंने लिखे हैं वे नगवान् दयानन्द की सरणी के पोषक हैं। परन्तु मैंने देखा है कि इन ग्रन्थों का अधिक स्वागत बाहरी और जो आर्य समाजों नहीं हैं—उन विद्वानों के द्वारा हुआ है। 'वैदिक-इन्वेक्स' वेद के इतिहासों की शिक्षा को पुष्ट करने वाली एक दुर्गम अज्ञेय दुर्ग समझी जाने वाली पुस्तक समझी जाती रही है। परन्तु जब मैंने इसके उत्तर में

'वैदिक इतिहास-विमर्श' जैसे महान ग्रन्थ को लिखा और प्रकाशित कराया तो ज्ञात हुआ और अभी तक भी सदा सम्मनित आती है—कि यह एक अदभुत कृति है। ये प्रशंसक विद्वान आर्यसमाजों नहीं—फिर भी इस अनुसंधान की प्रशंसा करते हैं। आर्यसमाजों तो इस महान कार्य की प्रशंसा करने में भी अर्कचन है और उसको पाठों का ही सदा स्थाल रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह सब प्रभाव आर्यसमाज के अतिरिक्त और किसका हो सकता है।

श्री गोस्वामी गणेशदत्त जी सनातन धर्म समा के प्रान थे। जब मैं पोरबन्दर गुरुकुल की सस्थाओं का आचार्य था तो एक समय उनका वहाँ पर जाना हुआ। श्री सेठ नान जी भाई कालिदास मेहता के यहाँ वे ठहरे थे। गोस्वामी जी ने कई व्याख्यान दिये—सब मे मेरी तारीफ करते थे। सायकाल को एक दिन गीता मन्दिर में भी समा थी। मेरे जाते ही उन्होंने बड़े आदर से बैठाय। सेठ जी को आश्चर्य हुआ कि इनको आचार्य जी का (मेरा) परिचय कहाँ से हो गया है। उनको कुतूहल हुआ। गोस्वामी जी जब व्याख्यान देने लखे हुए तो सेठ जी के इस कुतूहल को मिटाते हुए बोले कि—सेठ जी! मैं तो गीता का ही व्याख्यान देता हूँ। वेद की व्याख्या तो ये ही कर सकते हैं। ये आर्यसमाजों हैं, मैं सनातनी हूँ—परन्तु वेद विद्या में मैं भी इन्हें प्रमाण मानता हूँ। मेरा लाहौर से परिचय है और यही धारणा है। सेठ जी और सभी श्रोता आश्चर्य में रह गये। गोस्वामी जी की बात का लोगो पर यह प्रभाव पडा कि वेद के वास्तविक विद्वान अब भी आर्यसमाज में ही हैं।

यह तो एक घटना है। वस्तुतः आन्तरिक रूप में वैदिक अध्ययन पर आर्यसमाज के प्रवर्तक का पर्याप्त प्रभाव है। पाठचार्यों पर प्रभाव डालने के लिये आर्य समाज को वैदिक आन्दोलन को चालू रखना चाहिये। सारी शक्ति वेद के आन्दोलन में लगानी चाहिये। आर्य समाज के स्थापना दिवस पर हम सोचें, समझें, और कटि-बद्ध हो वेद के अध्ययन को प्रगति देने के लिए। यदि इस दिशा में एक बार आर्यसमाज आन्दोलनकारी के रूप में जुट जावे तो सारी बाधाएँ काफूर हो जावेंगी और महर्षि का वैदिक दृष्टिकोण सभी अपनाते को तैयार होंगे।



Sciences) तथा विविध विज्ञानों (Natural Sciences) को भी पाठ्यक्रम में उचित स्थान दिया गया । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की सर्वप्रमुख विशेषता रही विविध ज्ञान विज्ञान का राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षण करना ।

गुरुकुलो का ध्येय केवल पुस्तकीय ज्ञानार्जन तक ही सीमित नहीं था । छात्रों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास को चतुर्मुखी प्रगति का आयोजन भी उनका मुख्य लक्ष्य था । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ने देश और धर्म को अनेक निष्ठावान् सेवक और कार्यकर्ता विधे यह उसकी अतीत कालीन सफलता का छोटक है ।

वह सत्यावाद्वा का ज्ञानात्ता था । केवल शिक्षण सत्यायें ही नहूँ, अनायालय, विधवाधय आदि अन्याय्य सजाज की वृष्टि से उपयोगी सत्याओ का भी सगठन आर्यसमाज के तत्त्वावधान मे हुआ । ऐसा प्रतीत होता था मानो कर्मलोक प्रवृत्त हुआ है । समाज सेवा की यह प्रवृत्ति दुष्काल, बाढ, महामारी आदि बंधो आपदाओ मे तो साकार हो उठती ही थी, परन्तु सामान्य समय मे भी दलितोद्धार, नारी जागरण आदि के रूप मे वह समय समय पर प्रकट हो कार्यकर्ताओ की कर्मठता और उनकी लगन की सूचना देती रहती थी ।

वह समय आर्यसमाज का स्वयं युग था । चारों ओर उत्साह और उमग का वातावरण था । देश, जाति और धर्म के लिये कुछ कर गुजरने की भावना लोगों मे काम कर रही थी । उसी उत्साह की लहर मे आर्यसमाज को अनेक अग्नि परीक्षाओ मे से गुजरना पडा, परन्तु अपने अनुयायियों की दृढ आस्था और सिद्धान्तों के प्रति उनके अडिग प्रेम ने उन सारी विपत्तियों को निःशेष कर दिया, जिनके कारण एकबार तो इस महान् सत्या के अस्तित्व के विषय मे ही शंका उपस्थित हो गई थी । हैबराबाद दक्षिण का बिराट्ट सत्याग्रह आन्दोलन तथा सिंध मे सत्याग्रहप्रकाश की जम्ती के विरुद्ध आन्दोलन हमारे प्रगति पय को अंकित करने वाले दृढ चरण बिल्लू हैं ।

आर्यसमाज के विगत गौरवपूर्ण अतीत का यह एक सिंहावलोकन मात्र है । आज परिस्थितिया बदल चुकी हैं । विज्ञान की आश्चर्यजनक उप्रति ने हमारी आस्थाओ तथा धारणाओ को डाबाडोल कर दिया है । धर्म और आध्यात्म की आवश्यकताओ और उपयोगिता के प्रति

मानव लग्नप्रस्त हो गया है । ऐसी सकारणाकालीन स्थिति मे आर्यसमाज का जराजीर्ण ढांचा यदि चरमपरा उठा हो तो आश्चर्य ही क्या ? जिस प्रकार मनुष्य की आयु निश्चित होती है उसी प्रकार सत्ताओं और आन्दोलनों के भी उप्रति और विकास के निश्चित दिन होते हैं । महाकाल के इस निमंम नियति-धक के दशनों मे पीसे जाकर न जाने कितने बिराट्ट जन आन्दोलन समाप्त हो गये और हो रहे हैं । ऐसी अवस्था मे यदि आर्यसमाज के नेता और सचालक यह सोचते हों कि उग्रोने अपनी सत्या को सजोवनी बूटी पिला दी है तो यह यह उनका ध्रम ही है । आर्यसमाज की मौलिक धारणायें और उसके प्रवर्तक के सिद्धान्त और मन्तव्य अजर-अमर है, परन्तु इस बात की कोई गारण्टी नहूँ कि सत्या और आन्दोलन के रूप मे आगयो दो शताब्दियों मे आर्यसमाज जीवित रहे ही । हमारे सामने ब्रह्मसमाज और धियोसोकी आदि अन्य धार्मिक-सामाजिक (सोशियो रिक्लीजियस सूचमेण्टस) आन्दोलनो के उदाहरण विद्यमान हैं । राजा राममोहनराय के सुधार और सत्कार सम्बन्धी सिद्धान्त और कार्य भारतीय इतिहास मे अमर हो गये, परन्तु उन के द्वारा प्रवृत्त ब्राह्मसमाज आज कहाँ है ? बंगाल मे उसकी वो चार शाखायें नाममात्र के लिये मले ही विद्यमान हो अन्याय उपरोसनी शताब्दी का वह जीवन्त प्रगतिशील आन्दोलन आज इतिहास के पृष्ठों में ही शेष रह गया है । अत निष्कर्ष रूप मे हम यह कह सकते हैं कि आज आत्म निरीक्षण और आत्मालोचन की सर्वोपरि आवश्यकता है ।

हम एक क्षण के लिये अस्तमूर्खी होकर सोचें । हमारे सगठन में क्या-क्या दोष जा गये हैं ? क्यों हमारी विविध प्रवृत्तियाँ आलस्य, प्रमाद और अवसाद के कारण कुण्ठित हो गई हैं ? हम अपने आदर्शों के अनुकूल अपना लुब्ध का ही जीवन नहीं बना पा रहे तो विद्व को आर्य बनाने का स्वप्न कैसे साकार हो सकेगा ।

आज आर्यसमाज के प्रत्येक विभाग को नवीन रूप मे सगठित करने की आवश्यकता है । हमारे उत्सव और अधिवेशन, हमारे सत्सग और मन्दिर, हमारा प्रेस और व्याख्यान मञ्च, हमारे प्रचारक और उपदेशक सभी युग की आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार सुसगठित, सुसम्बद्ध एव शक्तिशाली होकर सार्वभौम बैदिक धर्म के

आर्यसमाज का मिशनरी साहित्य

[ले०-श्री विश्वनाथ जो शास्त्री एम० ए०, सागर विश्वविद्यालय]

वैदिक धर्म सत्सार में सबसे प्राचीन और सर्वश्रेष्ठ धर्म है। परन्तु काल की अबाध गति से इसमें इतने परिवर्तन हो गये कि इसके मौलिक रूप को ही पचकाना कठिन हो गया। इसका समुच्चल रूप मिट्टी की अनेकानेक परतों के कारण अत्यन्त क्लृप्त हो गया था। यह धर्म जो पहले लोहे के वण्ड के समान था अब सूत के कच्चे धागे के समान हो गया। विधर्मियों ने इन जजर धर्म पर अनेकानेक आक्रमण करके करोड़ों वैदिक धर्म के अनुयायियों को विधर्मी बनाना आरम्भ कर दिया। ऐसे विधर्म समय में महर्षि दयानन्द का आविर्भाव हुआ। उन्होंने वैदिक धर्म के मौलिक रूप को जनता के सामने रखा। उन्होंने अपने अपूर्व तर्क बल से सभी विधर्मियों की पोल को खोला और वैदिक धर्म की स्थापना की। जनता ने यह समझकर देखा और फिर से भारतीय वैदिक संस्कृति की ओर मुकी। विधर्मियों के आक्रमण कुछ डीले पड़े। परन्तु यह आन्दोलन कोई क्षणिक तो नहीं था। ऋषि ने इस आन्दोलन को सर्वथा के लिए चलाये रखने के लिए १८७५ में आर्यसमाज की स्थापना की।

आर्यसमाज एक धार्मिक संगठन है, मिशन है। इसका उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार करना है। यह वैदिक धर्म के मूल अनुयायियों को वैदिक धर्म के मूलभूत सिद्धांतों का परिचय कराता है। यह हिन्दू धर्म के दलित बग को ऊपर उठाकर सब्ब हिन्दुओं का स्थान देता है। यह हिन्दू धर्म से पतित हो गये लोगों को पुनः हिन्दू धर्म में मिलाता है। यह जन्म के विधर्मियों को भी शुद्ध करके हिन्दू आर्य बनाता है।

आर्यसमाज ने मौलिक प्रचार और लेखबद्ध साहित्य द्वारा अपने विज्ञान का प्रचार किया है। लेखबद्ध साहित्य प्रमुख रूप से दो प्रकार का है, एक शास्त्रीय साहित्य और दूसरा मिशनरी साहित्य। शास्त्रीय साहित्य से हमारा तात्पर्य प्राचीन शास्त्रों के अनुवादों और व्याख्याओं में है। मिशनरी साहित्य का अर्थ वह साहित्य है जिससे लोग आर्य

समाजी बनें। शास्त्रीय साहित्य अपेक्षाकृत थोड़े लोगों को आकृष्ट करता है। दार्शनिक विद्वान् सूक्ष्म तत्वों के समझने के लिए शास्त्रीय साहित्य का अध्ययन करते हैं। अथवा पुरोहित लोग कमकाण्ड के लिए शास्त्रों का पठन पाठन करते हैं। मिशनरी साहित्य का निर्माण तो जन-साधारण के लिए किया जाता है।

मिशनरी साहित्य का प्रारम्भ "सत्याथ प्रकाश" से होना है। ऋषि दयानन्द के इस अपूर्व ग्रन्थ के पहले दस समुल्लासों में वैदिक धर्म के निदानों का वक्षन किया है और पिछले चार समुल्लासों में मत-मतांतरों का लक्षण किया है। सत्याथप्रकाश रूपी अमोघ वज्र में ऋषि ने भारतीय आकाश में छाए हुए मतमतांतरों के घोर-अधकारमय मेघों को छिन्न भिन्न कर दिया। सत्याथप्रकाश को पढ़कर सहस्रों लोग आर्यसमाजी बन गये। जो इस अपूर्व ग्रन्थ को एक बार पढ़ लेता है वह पुनः कभी भी पतित नहीं हो सकता। आर्यसमाज के पहले युग में सत्याथप्रकाश पढ़ हुए आर्यसमाजी सनातन धर्म के विगण विद्वानों और मौलवियों तथा पादरियों से डटकर शास्त्राय करते रहे हैं। हमें भारतीय साहित्य में मिशनरी ग्रन्थ तो डूढ़ने से भी नहीं मिलता। मिशनरी साहित्य की परंपरा तो जन और बौद्ध ग्रन्थों से आरम्भ हुई है। हिन्दू धर्म में शकराचार्य एकमात्र मिशनरी हुये हैं।

आर्यसमाज में प्रचार कार्य तो पहले भी खूब हुआ और अब भी खूब होता है। परन्तु यह काय अधिकतर मौलिक रूप से ही व्याख्यानों द्वारा होता है। आर्यसमाज ने शास्त्रीय साहित्य तो पुष्कल रूप में निर्माण किया है परन्तु मिशनरी साहित्य अपेक्षाकृत थोड़ा ही रचा गया है। ऋषि दयानन्द के सत्याथप्रकाश के परचात् स्वामी नित्यानन्द के 'पुरुषार्थ प्रकाश' ने आर्यजगत् में पर्याप्त ख्याति प्राप्त की इसके बाद स्वामी वर्सानन्द जो के विविध विषय विद्वान्-वित्त टूँटों में आर्यजगत् में धूम मचा दी। इसके साथ ही प० तुलसीराम जो का नाम आता है। आपने अपने



साहित्य पत्र "वेद प्रकाश" के लेखों तथा अन्य विवेचनात्मक ग्रंथों में मिशनरी साहित्य का निर्माण किया। २० ज्वालाप्रसाद ने सत्याग्रहप्रकाश के (१ समुल्लासों के खंडन में दयानंद तिमिर भास्कर जिज्ञा तुलसीराम स्वामी ने भास्कर प्रकाश रचकर इसका उत्तर दिया। ज्वालाप्रसाद के भाई बलदेवप्रसाद ने ३ समुल्लासों के खण्डन में धर्म विचारक से और भवानोप्रसाद ने भास्कराभास निवारण से भास्कर प्रकाश का खण्डन किया। तुलसीराम ने पुन विचारक प्रकाश लिखकर धर्म विचारक का उत्तर दिया। इही दिनों म महाराम मुंशीरामजी अथवा स्वामी श्रद्धानंद जी ने अपने साप्ताहिक पत्र सद्धर्म प्रचारक द्वारा आय समाज के मिशन को समुद्रज्वल किया। इसके बाद नारायण स्वामी जी ने 'आयममाज क्या है?' छोटी-सी पुस्तक लिखी। इसी प्रकार धर्मदेव विद्यावाचस्पति ने वैदिक धर्म आयममाज प्रश्नोत्तरी लिखी। सांबदेशिक समा द्वारा रचित 'आयममाज परिचय' और पंजाब समा द्वारा रचित 'वैदिक ज्ञान की दृष्टि' इपी क्षेत्र की पुस्तकें हैं।

सांबदेशिक समा की ओर से प्रकाशित प० डॉर का आयममाज का इतिहास और प० हूरिश्चन्द्र कृत आयममाज का इतिहास, उत्तरप्रदेश समा का ७५ वर्षीय इतिहास भी आयममाज के प्रचार काय पर प्रकाश डालते हैं।

आयममाज का मिशनरी साहित्य अंग्रेजी में भी लिखा गया। ला० लाजपतराय का आयसमाज, बाबा छत्रसिंह का Feeding of the Arya Samaj, विष्णुदत्त शर्मा का Hand book of the Arya Samaj, प० चमूगर्ग का Ten Commandments of Dayanand, गंगाप्रसाद उपाध्याय का Origin, mission and scope of Arya Samaj, दीवानचंद्र जी का Arya Samaj, धर्मदेव विद्यावाचस्पति का Catechism of the Vedic Dharma and Arya Samaj, मूरगनु जी का Dayanand, his life and work, विश्वप्रकाश जी का Life and teaching of Swami Dayanand आदि उल्लेखनीय हैं।

आयममाज के विदेश प्रचार कार्य में कहता जैमिनि जी का नाम उल्लेखनीय है।

मारोत्रप, मन्नाया, स्याम, मुधात्रा, फीजी, ग्युर्ज लंड, फ्रीडीहा, अन्नीहा, सुगो इत्यादि समस्त सुषेले का अभ्य

करके और महर्षी ध्यास्थान देकर उन्होंने वैदिक धर्म का प्रचार किया। १९३२ में उन्होंने सत्याग्रहप्रकाश का फारसी में अनुवाद किया जो अप्रकाशित ही रहा। मेहता जी ही एकमात्र ऐसे प्रचारक हैं जिन्होंने बिना किसी सभा की सहायता के स्वतंत्र रूप में समस्त देशों में प्रचार किया है। वे प्रचार सम्बन्धी साहित्य स्वयं लिखकर, प्रकाशित करवा कर अपने साथ रखने थे और बेचते थे। उनकी स्मरण शक्ति अद्भुत थी। उनकी अपने भ्रमण तथा प्रचार की तिथियां और समय तक याद रहता था। उन्होंने वैदिक आश्रम व्यवस्था के अनुसार गृहस्थ के बाद वानप्रस्थ और फिर सन्यास आश्रम ग्रहण किया और अपना नाम स्वामी ज्ञानानन्द रक्खा। उन्होंने हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी में अनेक पुस्तकें लिखीं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में

- (1) Vedic mission in British East Africa
- (2) India, the world teacher and coloniser
- (3) India's message to the world
- (4) Sublimity of the Vedis

विदेश प्रचार साहित्य में स्वामी स्वतंत्रतानन्दकृत 'विदेशों में एक साल' तथा सांबदेशिक समा कृत 'विदेशों में आयममाज' हैं। इस क्षेत्र में प० रुचिराम कृत 'अरब में सात साल' भी पठनीय है। प० अयोध्याप्रसाद जी आनंद स्वामी जी, सत्यदेव परिभाजक जी, स्वामी ध्रुवानन्द जी तथा ओमप्रकाश तथापी जीने विदेशों की यात्रा करके मिशनरी साहित्य के निर्माण में योग दिया है।

आयसमाज के मिशनरी साहित्य में खण्डन का भी प्रमुख स्थान रहा है। ऋषि ने सत्याग्रह प्रकाश में सपी मतमतान्तरो का खण्डन किया था। इस्लाम की समीक्षा में तो पहले पहल प० लेखराम आर्य-पथिक ने विबुल साहित्य लिखा। उनका साहित्य "कुलियात आर्यमुसाफिर" नाम में विख्यात है। इसके बाद प० रामचन्द्र देहलवी ने इस क्षेत्र में कार्य किया। उन्होंने "कुरान में अन्य मतावलम्बियों के लिए कुछ अति कठोर, उरोजक वाक्यों का सघट्ट" लिखा। इस क्षेत्र में लक्ष्मण आर्यविदेशक ने भी बड़ा कार्य किया है। उन्होंने अनेक पुस्तकें और ट्रेक्ट लिखे। शोक है कि आजकल की पुस्तक सूचियों में लक्ष्मण जी सौर महता जैमिनि की पुस्तकों का कहीं नाम भी देखने में नहीं आता। लक्ष्मण जी ने अपने अन्तिम दिनों में इस्लाम और वैदिक धर्म का तुलनात्मक अध्ययन वि

पर एक विपुल ग्रन्थ लिखा था। परन्तु अब तो उनकी कोई कृति भी दृष्टिगोचर नहीं होती। प० कालिचरण जी मौलवी फाजिल आगरा, प० विरजोलाल प्रेम (पंजाब) प० शान्ति प्रकाश जी (आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब) ने भी इस क्षेत्र में पर्याप्त काय किया है।

ईसाई मत की आलोचना में स्वामी दर्शनानन्द जी ने कई ट्रैक्ट लिखे थे। कालिचरण आर्य, कालिचरण मौलवी फाजिल और शिवदायलु जी ने कई ट्रैक्ट लिखे हैं। कुछ साल हुए सावदेशिक सभा ने ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन चलाया था तो ओम् प्रकाश जी त्यागी ने भी कई छोटी पुस्तकें लिखी थीं।

पौराणिक मत के खडन में तो अनेक ग्रन्थ लिखे गए, कई पुराणों की आलोचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। दया नन्द उपदेशक विद्यालय, गुरुदत्त भवन लाहौर में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी तथा स्वामी वेदानन्द जी के तत्वावधान में मतसारांगम कृत भविष्य पुराण की आलोचना, शिवपुराण की आलोचना, श्रुतिकाल कृत वाराह पुराण की आलोचना प्रकाशित हुई। मत्तराम कृत कर्म पुराण की आलोचना और मोमतेज विद्यालङ्कार कृत लिंग पुराण की आलोचना और दत्तात्रयदास कृत गरुड पुराण की आलोचना भी प्रकाशित हुईं। प० मनसारांगम कृत पौराणिक पोलप्रकाश ने भी ख्याति प्राप्त की थी। आचार्य रामदेव ने पुराणमत पर्यालोचन ग्रन्थ लिखा। परन्तु दुःख है कि आज देखने भर के लिए भी उपर्युक्त पुस्तकें नहीं मिल रही हैं। जगदीशचन्द्र ने गोविन्दराम हासनानन्द की ओर से विष्णु पुराण की आलोचना नामक लघु सी पुस्तक अभी-अभी प्रकाशित की है। मूर्तिपूजा अवतारवाद आदि के सम्बन्ध में बुद्धदेव सोपुत्री कृत (१) मूर्तिपूजा मीमांसा और (२) अवतारवाद मीमांसा और भूमिचरमा कृत मूर्तिपूजा समीक्षा कनी प्रकाशित हुई थीं। प० शिवशंकर शर्मा कृत आद्य निणय भी एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है। श्रीराम आर्य कृत 'अवतार रहस्य और शिवलिंग पूजा बघों' भी उल्लेखनीय है। राधास्वामी मत समीक्षा अत्र में लक्ष्मण जी ने राधास्वामी मत और वैदिक धर्म तथा सोमानन्द स्वामी ने राधास्वामी मत आलोचन लिखा था। जैन धर्म के सम्बन्ध में श्रीराम आर्य कृत मुनिसमाज मुखमर्दन है। सिक्ख धर्म के सम्बन्ध में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने आर्य सिद्धान्त और सिक्ख गुरु

पुस्तक लिखी थी। अब मन-मत्तानन्दों की समीक्षा का काम और विशेष रूप से पौराणिक मन और अज्ञ सम्प्रदायों की समीक्षा तो समाप्त हो रही है। आर्य नेता राजनीति में भाग ले रहे हैं और विशेष रूप से जनसभ्य आदि राजनतिक दलों के सम्पर्क में आकर आर्य से हिन्दू बन रहे हैं। अब केवल ईसाइयों से ही कुछ सघष चल रहा है और इन दिशा में छोटे-मोटे ट्रैक्ट प्रकाशित होते रहते हैं। अभी इस दिशा में प्रचुर साहित्य की आवश्यकता है। नेता और पंडित तो बड़े उत्पन्न हो रहे हैं परन्तु मिशनरियों की सहायता कम हो रही है। आर्य समाज की जीवित रखने के लिए मिशनरी और प्रचारकों की आवश्यकता है। प्रचार के काम को स्थायी रखने के लिए खण्डन मण्डनात्मक साहित्य की आवश्यकता है। आर्य समाज को राजनीति में नेतृत्व के प्रलोभनों और सत्यान्वादा से मुक्त होकर प्रचार क्षेत्र में आगे बढ़ना चाहिए। प्रचार काय ही आर्यसमाज का प्राण है।

(पृष्ठ २८ का शेष)

सावदेशिक प्रचार के तेजस्वी माध्यम बनने, यही हमारी कामना है। ऐसा होनेपर ही आर्यावृत के उत्थञ्जक भविष्य की कामना करने वाले दश हितैषी दयानन्द के स्वप्न पूरे होंगे। जिस महागुरुध्वज ने जनकल्याण की उदार भावना में अपने समाधिक क मुख को ठुकराया उसी के दाढ़ी बनकर हम स्वाव विपत्ता में आदृष्ट मान होकर अपने कृत्य को विस्मृत कर चुके हैं।

आर्यसमाज क लिये आज सर्वाधिक आवश्यकता है अपनी त्रुटियों, अपने अभावों और अपनी असमताओं पर विचार करने की। हम अपने आपको आत्मकन्द्रित करें और व्यक्ति पर विचार करें, हमन प्रायसमाज और उसके प्रवक्त की मूल भावना को कहा तक समझा है? क्या हम आर्यसमाज के जीवन दर्शन को सफल सके है? क्या आर्यसमाज के सिद्धान्तों और मन्तव्यों के प्रति हम में उतनी ही निष्ठा और आस्था है जो उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशाब्द और इस शताब्दी के प्रथम दो दशाब्दों में विद्यमान आर्य पुरुषों में थी। यदि ये सब बातें नहीं हैं तो हम अपने सम्पूर्ण आडम्बर और पाखण्ड का विसर्जन कर अपने ध्येय की प्राप्ति का उपाय क्यों न करें?

तमसो मा ज्योतिर्गमय-धियो यो न प्रचोदयात् ।



राष्ट्र-निर्माण का स्थायी साधन--आर्यसमाज

[श्री किशोरीलाल गुप्त एम०ए०, सिद्धान्तशास्त्री, साहित्य वाचस्पति, काथ्य एव वेदवीर्यं (पृ०)]

मूर्ध्व स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन एव कार्यकलापो पर जितना ही गहन मनन किया जाता है, उतनी ही अधिक उनकी दूरदर्शिता प्रकाश में आती चली जा रही है। उत्तराखण्ड के हिमाच्छादित पहाड़ों, नदियों उपन्यकारों, एव दक्षिण की नमदा ताप्ती और कावेरी के बौहूड जगलो का पयटन करते हुए उनका विविध प्रकार के साधु सन्यासी एव योगीराजो से भेंट हुई। सबको अपने-अपने रग में रगा पाया। स्वदेश, स्वभाषा, स्वसंस्कृति एव स्वराज्य की ओर से सबको विमुख पाया। सच्चे शिव की खोज भी उनके द्वारा न कर पाये। बंबाल प्रजाचक्षु सद्गुरु बड़ी विरजानन्द के चरणों में विद्याध्ययन करने की उम्हे प्रेरणा हुई, और अन्ततोगत्वा उनकी चिरामिलिखित मनोकामना सिद्ध हुई। गुरुवर्य की भी चिरामिलिखित मनोकामना विद्यार्थी दयानन्द को उपलब्ध कर सफलीभूत हो उठी। अध्ययन समाप्त हुआ। गुरु दक्षिणा समर्पण करने का समय आया अकिंचन दयानन्द पर क्या धरा था? भाग-जाचकर गुरुदेव की प्रिय वस्तु लींग समर्पित की गयी। सजल नेत्रों से प्रकट हो रहा था कि गुरुवर्य की भाग ही किसी अन्य वस्तु की थी। भगवन! स्विकारी में बिलम्ब का कारण? मुझे भीतिक पदार्थ नहीं चाहिये। फिर यह जीवन ही किस अर्थ का चरणों में अर्पण है। धन्य हो! जाओ, देश और देशव्यापी पाखण्ड का मूलोच्छेद करो।

चरणों में सादर प्रणामानान्तर गुरुवर्य में साजीव विवायी ली। हरद्वार में विराट् कुम्भ का मेला लगा हुआ था। पट्टे। एकाकी! असहाय! असह्य जनसमुदाय के विरुद्ध, निर्भय, निशक पाखण्ड-खण्डनी पताका फहराई गई। खलबली मची। दृष्ट पुष्ट शरीर। मस्तक पर अलौकिक आभा। उपदेश सारगमित, यद्यपि रुढ़िवाद के एकदम प्रतिकूल! वेद और केवल वेद का प्रतिपादन। मूनिपूजा, मृतकश्राद्ध, बालविवाह, बहुविवाह, यद्ध विवाह, साईं, ककीर एव स्याने विमानों के ताना पाखण्डों का भडाफोड, अकाट्य युक्तियां। ज्ञान का मण्डार, निर्भय गर्जना। क्या मजाल किसी की जो सामने आने का साहस कर सके?

मेला सानन्द समाप्त हुआ। जिमको देखो, सुनो, इसी विचित्र सन्यासी की मुख पर चर्चा! भारत के कोने कोने से विशाल जन समूह हरद्वार एकत्रित हुआ था। प्रत्येक व्यक्ति दयानन्द का अलौकिक प्रसाद लेकर धर लीटा। इधर इस निराले सन्यासी ने चतुर्मुखी प्रचार-पुरोगम निर्धारित किया। मौखिक उपदेश, खूले आम शास्त्रार्थ, लेख एव पुस्तकादि का प्रकाशन, विशेषतया वेद-माध्य, वह भी संस्कृत एव हिन्दी आय भाषा समुत्त, चौथे वैदिक पाठशालाओं की स्थापना। त्यागी, तपस्वी, कर्तव्यपरायण अध्यापकों के अनाथ में ये पाठशालायें बन्द करनी पड़ें।

एक अन्य अभाव सर्वोपरि अनुभव होने लगा। कोई सचालक सस्था चाहिए। गुरुधर्म फलाने वाली नहीं, कर्मठ, लगनशील, सेवा भावना से ओत-प्रोत। सोचा, फिर सोचा, सद्भक्तों से परामर्श लिया, और अन्त में आर्यसमाज की स्थापना की गयी। भावी प्रचार "कृष्णतो विश्वमार्यम" का समस्त गुरुतर मार आर्यसमाज की सौंपा। आर्यसमाज ने भी अपने मागीरथ प्रयत्नों द्वारा वह समस्त मार अपने ऊपर उठाया जिसकी देश को अनिवार्य आबन्धकता थी। जिधर चाहे उधर आख उठाकर देखिये देशोन्नति के सभी कार्य कलापो में आर्यसमाज प्रमुख सहाय दृष्टिगोचर होगा। स्वराज्य-प्राप्ति में भी आयवीरो ने प्रमुख ही भाग लिया, और वह भी ज्ञान्त भावना से।

किन्तु खेद है कि स्वाधीनता ने जनता रूपी ऊंट की नकेल डीली कर दी है, और विशेषकर अधिकारी वर्ग की, भ्रष्टाचार का आज सबत्र बोलबाला है। आर्यसमाज इस अनैतिकता से बेखबर नहीं। उसका प्रत्येक समासव आर्य-समाज के सामूहिक कदम उठाने की बाट जोह रहा है। जब गैरों के अत्याचारों से विमुक्ति प्राप्त की तब अपने से भी करनी ही पडगी। और उसके लिये चाहिए घुआधार प्रचार तथा आन्दोलन। अब तो "यथा राजा तथा प्रजा" नहीं, यथा प्रजा तथा राजा (शासन) करके विखाना ही पडेगा। और वह करेगी आर्यसमाज!

श्री स्वामी विरजानन्द जी महाराज



जिनकी प्रेरणा से बालक मूलशकर ऋषि दयानन्द कहलाये



—

महर्षि दयानन्द सरस्वती
जिनका सस्थापित आयसमाज
ससार को प्रकाश प्रदान
कर रहा है।



जिन्होंने ऋषि दयानन्द की शिक्षा
पढ़ात का प्रचार और प्रसार
करते हुए अपने प्राणोत्सर्ग किये।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज





महर्षि के प्रति

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप-प्रस्त, तप-त्याग तुम्हारा ।

तुम तो मुक्त हो गये ऋषिदर, जन-जन के शिष्यत्व में लय हो,

मुक्ति हुई सुखा-सी मोहित, तुम पर, जग को क्यों विस्मय हो ।

मुस्काते तुम गये, ज्योति का बिल्वरा पडा पराम तुम्हारा ।

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

तुम मागे थे, जन-मगल के लिए स्वयं घर-द्वार छोडकर ।

भुड कर देखा नहीं, मातु पितु की ममता से मोह तोडकर ।

पत्थर का कर लिंगा कलेजा, कर न सका, कुछ 'राग' तुम्हारा ।

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप-प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

पर मुझको ऐसा रगता है, मा के अधु पडे है पीछे ।

सिद्धि तुम्हारी अब तक शापित, लगता, शाप लगे हैं पीछे ।

जीवन-भर विष पिया, आज तक जगा नहीं सोमाय तुम्हारा ।

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

दिष के घूट भरे जिसके हित, वह अमृत-घट काम न आया ।

सूरज तुम धर गये हाथ पर, तम से हमे उबार न पाया ।

बहक रहा है दावानल से, वह सपनों का बाग तुम्हारा ।

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

अब तक पडी ऋचायें रीतीं, 'शो-कदम्पा-निधि' सिसक रही है ।

माँ का क्षत-विक्षत वक्षस्वत्र, आग चतुर्दिक धाक रही है ।

मानवता का दर्द पृच्छता—“कहाँ गया अनुराग तुम्हारा ?”

अब तक मुक्त नहीं हो पाया शाप प्रस्त तप-त्याग तुम्हारा ।

'गुरुकुल की शिषा' अनाथ है, 'वर्णाश्रम' पद्धति रीती है ।

ब्रह्मचर्य की खिल्ली उडती, 'सरकृत' की दुगति होती है ?

'भोगवाद' वे रहा चुनौती, व्यर्थ गया वैराग्य तुम्हारा ?

अब तक मुक्त नहीं हो पाया शाप प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

'संस्कार-विधि' जगा न पायी 'संस्कार' से हीन मनुज है ।

अस्त हुआ "व्यवहार-मानु" ही अन्धकार में लीन मनुज है ।

असत-तिमिर से हुआ पराजित, क्या "सत्यार्थ-प्रकाश" तुम्हारा ?

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

ऋषिदर ! क्षमा मागने मा से, फिर से नू पर आना होगा ।

आशिश लेकर, शाप मुक्त हो, फिर से राष्ट्र-जगाना होगा ।

जगती के अधरो पर होगा, तब वेदों का नाब तुम्हारा ।

अब तक मुक्त नहीं हो पाया, शाप-प्रस्त तप त्याग तुम्हारा ।

—लाखनसिंह 'शैलेन्द्र' साहित्यालकार भोजपुरा मैनपुरी



हमारी प्रचार पद्धति—

आर्यसमाज एवं जन सम्पर्क

(ले०—श्री गोपालदत्त शास्त्री एम०ए० रामजस कालेज, बेहली)

अधिक अन्न उपजाओ योजना के अन्तर्गत प्रारम्भ में सरकार ने जहा पुरानी कृषि की भूमियों में नये नये प्रयोग किये वहा साथ ही नई-नई कृषि योग्य भूमि प्राप्त करने का भी प्रयत्न किया, जगलो को काटकर कृषि के योग्य बनाया गया तथा ऊसर भूमि को भी यथासमय उपजाऊ बनाने के प्रयत्न हुए । जब ऊबड़ खाबड़ एब जगली भूमि को कृषियोग्य बनाने की भूमिका प्रारम्भ होती है तो नि सवेह साधारण हलबल की अपेक्षा महाकाय कृषियन्त्रों से भी विशेष सफलता मिलती है, जैसे जैसे जमीन अनुकूल रूप धारण करती जानी है वैसे वैसे ही किसान के प्रयत्न भी मिन्न-मिन्न रूप धारण करते चले जाने हैं । कल्पना कीजिये—प्रारम्भ में हल या मशॉनों से भूमि को समतल अथवा अनुकूल बनाने की सफलता की प्रसन्नता में किसान उसमें बराबर हल ही चलाता रहे तो परिणाम क्या होगा ? अथवा बीज बोने के बाद फिर हल बल लेकर खेत में पहुच जाय और किसी के रोकने पर यही उत्तर दे कि—आप नहीं जानते, यहा की बेटोल और ऊबड़खाबड़ भूमि को मे इसी हल बल की बदौलत इतनी सुन्दर बना पाया हू—सो इसे तो प्रयोग करने से रोकूंगा नहीं, हा और कोई अबातर उपाय बताए तो विचार करूंगा ।

मेरा अनिप्राय आर्यसमाज की प्रचार पद्धति से है, प्रारम्भ की परिस्थितियो से वर्तमान परिस्थितिया मिन्न हैं, नि सवेह इस समय हल चलाने की अपेक्षा बीज बोने और उसकी रक्षा करना ही मुख्य कार्य होना चाहिये, जहा आवश्यकता हो वहा वह उपाय भी अपनाया जा सकता है, ठीक उसी तरह जिस तरह कि यदि बीज नहीं उगता या किसी अन्य कारण से खगब हो जाय तो किसान उसे बुबारा हल चलाकर फिर बोता है । वास्तव में यह तर्क (या नारा) अब जनसाधारण को अधिक प्रभावित नहीं करता कि आर्यसमाज का मुख्य कार्य खडगात्मक है । इसी प्रवृत्ति को मुख्यता देने से एक बहुत बड़ी हानि हुई है और

वह यह कि आर्यसमाज में सुबनात्मक शक्तियों एब प्रवृत्तियों का प्राय अभाव सा है। बनाने की अपेक्षा मिटाना अर्थात् सरल है, जब सरल काम में ही गौरव मिल जाता है तो कठिन कार्य की ओर प्रवृत्ति क्यों हो ? व्यक्तिगत प्रयत्न और सामाजिक प्रयत्न में अन्तर स्वामाबिक है । सुबनात्मक प्रवृत्ति से मेरा अनिप्राय उन तत्वों से है जो केवल क्षणिक प्रभावशाली न होकर समाज में ऐसी भावना को सुस्थिरता की स्थिति प्रदान करें । यदि हम अपने उद्देश्य की इस दिशा में मोड़ें तो अवश्य ही हमें उन तत्वों से सम्पर्क स्थापित करना होगा जो केवल नारेबाजी से अलग रहकर इस प्रयत्न में कुछ योगदान कर सकते हैं । यह बुद्धिवादी वर्ग समाज में अपना विनिष्ट स्थान रक्षता है । पर इससे हमें सामाजिक सम्पर्क स्थापित करने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं हुई—बयोंकि हमारी प्रमुख भावना अभी भी जमीन को ही ठीक करने की है ।

बेहली में थोडे दिन के निवास में ही मुझे कतिपय विद्वविद्यालय के तथा प्रमुख सरकारी व्यक्तियों से मिलने का अवसर मिला और बातचीत में यह भी स्पष्ट हो गया कि वे इसलिये सक्रिय भाग नहीं लेते कि—उन्हें केवलमात्र चुनाव में रधि नहीं, और समाज के अधिकारियों को उसके अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में रधि नहीं । मैं समझता हू मिन्न-मिन्न प्रकार के व्यक्तियों का समूह ही समाज है—उनसे उनकी रधि एब योग्यता के अनुसार काम उठाने का प्रयत्न किया जाय तो समाज की विशेष काम होने के साथ-साथ लोक प्रियता भी प्राप्त हो सकती है । ऐसे व्यक्ति धीरे-धीरे उवासीन हो जाते हैं और नाभी पीड़ी तो अपरिचित ही रह जाती है । अनेक पुरुषुओं के स्नातक तथा प्रमुख आर्य परिवारों के व्यक्ति आ० सं० से अर्जवृत्त से होकर रह रहे हैं, कमी कमी चर्चा करके ही वे इस विज्ञान में आत्म तुष्टि अनुभव कर लेते हैं । क्या हमारे नेता इस विज्ञान में कुछ विचार करेंगे ?

महर्षि दयानन्द सरस्वती के सूच्ये शिष्य

श्री प० लेखराम जी



श्री प० गुरुदत्त विद्याधी



श्री दयानन्द की मृत्यु का दुःख
देखकर आप नास्तिक से आस्तिक
बन गये थे ।

★

आर्यसमाज के सुविद्यतात विद्वान और लेखक
श्री बाबू घासीराम जी एम० ए० मेरठ

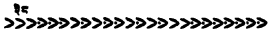


जो अपनी बाणी और लेखनी से आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार
करते हुए देश पर बलिदान हो गये ।

व
च
ना
सू
त

दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं कि
काशीमीर से कन्या कुमारी तक और अटक से कटक तक
नागरी अक्षरों का ही प्रयोग और प्रचार होगा । मैंने
आर्यावत्त' मर मे भाषा का ऐक्य सम्पादन करने के लिए
ही, अपने सकल ग्रन्थ आर्यभाषा में लिखे और प्रकाशित
किए हैं ।

आपने अपनी बाणी और लेखनी दोनों से
आर्यसमाज की प्रशसनीय सेवा की ।
आप आर्य प्रतिनिधि समा के कई वर्ष
तक प्रधान रहे ।



विश्व में वैदिक धर्म प्रचार और आर्यसमाज

[ले०-श्री मोहनलाल जी मोहित, मोरिसस]

विश्व में वैदिक धर्म प्रचार का उत्तरदायित्व आर्य-समाज पर है। हमारे धर्माचार्य महर्षि दयानन्द जी ने आर्यसमाज को आदेश दिया था 'द्वीप द्वीपान्तर और देश देशान्तर में वेद प्रचार करना'। इस पुनीत कर्तव्य के परिपालन में क्रियात्मक रूप से आर्यसमाज ने कहाँ तक सफलता पाई है? यह विचारणीय प्रश्न है। आर्य समाज के कार्यो पर एक ऐतिहासिक झाँकी देने पर मालूम होता है कि १९वीं शती के अन्तिम चरण और २०वीं शती के प्रारम्भ में अर्थात् सन १८७५ से १९२५ ई० तक इन ५० वर्षों का कार्य काल बड़ा महत्वपूर्ण था।

बहु शुभ समय तर्षण आर्यसमाज का प्रचार युग था। गम्भीर विचार एवं निष्पक्ष दृष्टिकोण से देखने पर कहा जा सकता है वही भारत का नव-जागरण-काल का प्रारम्भ युग था। वह युगांतकारी युग था, जब आर्यसमाज के कायक्षेत्र में श्री कर्मयोगी स्वामी श्रद्धानन्द जी श्री महात्मा हनराज जी, श्री लाला लाजपत राय जी, मुनिबेर गुहदत्त जी और प० लेखराम जी आदि नर-रत्न सार्वस्मिना आर्यसमाज की प्रगति में लगे थे।

फलन धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक और शैक्षणिक अनेक विज्ञान में आर्यसमाज ने प्रशसनीय सफलता पाई। उसी समय सुदूर उपनिवेशों में आर्य प्रचारक भी गये। आर्यसमाज के प्रचार से उपनिवेशीय भारतीयों के जीवन स्तर में सुधार हुआ और बड़ी प्रगति हुई। उपनिवेशीय भारतीयों की जो वर्तमान धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक प्रगतिशील परिस्थिति है, उसके नव निर्माण में आर्यसमाज के सबल हाथों का योगदान है। परन्तु वर्तमान जनवृद्धि और पश्चिमीय चञ्चल बातावरण में पड़कर दूषित मनोवृत्ति, असत्य एवं उद्दण्ड भाव का विकास होने लगा है।

अतः ऐसी परिस्थिति में एक प्रभावशाली रचनात्मक प्रचार-प्रणाली का उपक्रम होना आवश्यक है। आर्यसमाज को वर्तमान में भ्रमण्डल के मानचित्र के अनुसार साव-देशीय दृष्टिकोण से वेद-प्रचारक तैयार करने चाहिये।

अब समय आ गया है कि आर्यसमाज को जो काम छोड़



लेखक

कर वेद प्रचार में सर्वात्मना लग जाना चाहिये।

विदेशों में सफल प्रचार कार्य के लिये बहुमायी विद्वान साथ ही श्रद्धावान लगनशील सुवक्ष और प्रभावशाली ध्यत्किन्व सम्पन्न पुरुषों की आवश्यकता है।

सुयोग्य उपदेशक की तैयारी के लिये मेरा सुझाव—

(१) श्री तार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा वेहली, गुहकुलों और दयानन्द महाविद्यालयों में से, १० उन सफल स्नातकों का चुनाव करें जो विदेशों में आर्यसमाज का प्रचार करने का उत्सुक हों और योग्यता की दृष्टि से सक्त में आचार्य तथा अप्रेजी में एम०ए० तक सफल हों।

(२) ऐसे १० सुयोग्य बकूब कलाप्रिय विद्वानों को उप-देशक पदवृत्ति का प्रशिक्षण देने के लिये दो वर्ष के कार्य-क्रम की सुध्यवस्था का उत्तरदायित्व श्री तार्व-देशिक आर्य प्रतिनिधि समा अपने कर्ष पर लेवे, विश्व में वैदिक धर्म प्रचार इस योजना का उद्देश्य है।

सम्प्रति यूरोप, अमेरिका द्वीप और एशिया के चीन, जापान, रूस आदि देश तथा अनेक उपनिवेशों की जनता बेधामृत पान के लिये लालायित है।

बयोक इन देशों में सत्-आत्मज्ञान का प्रायः अभाव (केवल एक ५० वर्ष)



आर्य समाज का भविष्य

[ले०—श्री सुरेदाचन्द्र जी वेदालकार एम० ए०, गोरखपुर]

[आर्य समाज के उज्ज्वल भविष्य के लिये विद्वान् लेखक ने स्थिति का सहावलोकन करते हुए प्रेरणा दी है कि हम आर्य समाज की सफलता के लिये आत्म निरीक्षण और चिन्तन कर अपनी कमियों को दूर करने का यत्न करें ।
—सम्पादक]

भारत एव विश्व के इतिहास के आर्य समाज का एक अपना अद्भुत स्थान है । इस बात की व्याख्या करते हुए यदि मैं यह कहूँ कि धार्मिक एव सामाजिक दृष्टि से कृत्रिमों एव अन्धविश्वासों में भ्रमित विश्व को यदि किसी ने दृष्टि शक्ति प्रदान की तो वह निर्विवाद आर्य समाज है, तो यह अत्युक्ति न होगी । यदि मैं यह कहूँ कि ईसाई एव मुसलमानों द्वारा लूटे जाते हुए हिन्दुत्व के कोष की यदि किसी ने रक्षा की और उसे समृद्ध करने का प्रयास किया तो वह आर्य समाज है, तो इसमें असत्य की जरा गन्ध नहीं । यदि मैं यह कहूँ कि भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के मूलमन्त्र का धाना और स्वतन्त्रता सधाम में फिर चाहे वह हिंसात्मक हो या अहिंसात्मक सबसे आगे बढ़कर लड़ने वाला सैनिक आर्य समाज है, तो वह एक ऐतिहासिक सत्य ही माना जायगा । परन्तु स्वराज्य प्राप्त होने के बाद आज हम अधिक शिथिल हो गये हैं । आज आर्य समाज में गतिहीनता सी आ रही है इसी कारण आज नवीन वर्ग या नवयुवक इसमें नहीं आ रहे हैं । यदि गम्भीरतापूर्वक हम आत्मनिरीक्षण और मनन करने को तत्पर होंगे तो यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि सफेद बाल और कुछ परम्परा की रक्षा करने वाले बूढ़ों के बाद आगे आनेवाली पीढ़ी आर्य समाज का उत्सव करा सकती है परन्तु आर्य समाज की गतिशीलता एव प्रवाह को जारी नहीं रख सकती है । यह स्पष्ट एव अनुभवजन्य सत्य है । क्यों? यह प्रश्न विचारणीय है । और इस क्यों का उत्तर बाहर खोजने की अपेक्षा हमें अपने अन्तःकरण में खोजना होगा ।

अपनी दशा का अनुमान हम आधुनिक समाज और

वेश में अपने महत्त्व को देखकर कर सकते हैं । हमारा क्या महत्त्व है इसके लिए आप सोचेंगे तो आपको पता चलेगा कि आर्य समाज व्यक्ति को आधार बनाकर चलने वाली सस्था है । अर्थात् व्यक्तित्व के निर्माण द्वारा समाज का निर्माण इस रूप में आर्य समाज करना चाहता है कि यदि सभी व्यक्ति अच्छे बन जायेंगे तो समाज अच्छा होगा और समाज अच्छा होगा तो राष्ट्र और मानवता को बन्ध मिलेगा और इस प्रकार उसका 'कृष्णन्तो विश्वमार्याम्' वा सिद्धांत विद्वद् लागू हो सकेगा । परन्तु आज आर्य समाज से व्यक्तित्व का निर्माण करने का कार्य लगभग समाप्त हो गया है । और परिणाम यह है कि राष्ट्र ने आर्य समाज को भुला दिया है ।

शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज ने बहुत कुछ योगदान दिया है । स्त्री शिक्षा, बालकों की शिक्षा, विद्यालयों का निर्माण आदि का द्वारा सरकारी स्तर पर उसने शिक्षा का प्रचार किया । परन्तु आज स्वतन्त्रभारत में शिक्षा पर विचार करने वालों को हम कोई अपना दृष्टिकोण नहीं दे सकते हैं । हमारे पास अपना दृष्टिकोण है भी तो नहीं । स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुलों का निर्माण कर इस युग में एक मौलिक शिक्षा प्रणाली की स्थापना की थी और विश्व के शिक्षा विशेषज्ञ गुरुकुल में समय समय पर आते थे और उस पर विचार करते थे । लेकिन आज स्थिति काफी बदली हुई है । हम शिक्षा में स्वतन्त्र भावना को रक्षित अपनी मर्यादाओं का सरकारीकरण कर रहे हैं । आज आर्य समाज के पास कोई भी ऐसा केन्द्र नहीं जहाँ धर्म समाज के वैदिक धर्म के मूल वेदों का उसी श्रद्धा और

विश्वास के साथ अध्यापन होता हो। अतः इस विषय में हमें सोचना है कि भविष्य में हमारी शिक्षा सध्यायें कौसी हो? हम कौसे आय विद्वान् उत्पन्न कर सकें।

दूसरी बात आर्यसमाज की प्रचार पद्धति की है। आर्य समाज के प्लेटफार्म से क्या कहा जा रहा है, यह समझना बड़ा कठिन कार्य है। एक व्यक्ति आता है वह अपने भावण में एक वेद मन्त्र पढ़ता है और उसकी व्याख्या में उस विषय से असंबन्धित परन्तु सामयिक बातों का उल्लेख कर देता है। श्रोताओं का स्तर देखकर उसे यह कार्य करना पड़ता है। यह तो कुछ ठीक भी है पर सबसे अधिक महत्ता जिन मजनोपदेशकों को दी जाती है और जिन पर उत्सव की सफलता निर्भर होती है वे मजनोपदेशक उस मन्त्र से कितनी सत्य और असत्य घटनाओं द्वारा एक विचित्र प्रकार का मनोरंजन करते हैं जो कि हसी के बीच आर्यसमाज के सिद्धान्तों को उड़ा देता है। मुझे तो ऐसा अनुभव हो रहा है कि आज के बूढ़ एव आर्यसमाज के सिद्धान्तों से परिवर्तित उपदेशकों के न रहने के बाद आर्यसमाज के प्लेटफार्म मनोरंजन के साधनमात्र रह जायेंगे। यह भी एक सोचने की बात है।

तीसरी बात यह है कि आज आर्यसमाज का देश एव समाज की किसी भी समिति एव सगठन में कोई पृष्ठ नहीं है। क्योंकि आर्यसमाज को आधार बनाकर व्यक्ति आगे बढ़ते हैं और पुनः वे उसे छोड़कर राजनीति को आधार बना लेते हैं। हमारे पास ऐसा आकर्षण नहीं है कि हम उन्हें अपनी ओर रख सकें। परिणाम यह होता है कि उन्हें अपनी महत्ता बढ़ाने के लिए हमारे पास आने की अपेक्षा हमें आर्यसमाज की महत्ता बढ़ाने के लिए उनके आश्रित होना पड़ता है। हम अपने व्यक्तियों की उपेक्षा एव उनकी अपेक्षा करते हैं। क्या इसके विपरीत भाव की जागृति हो सकती है?

आर्यसमाज को अपने को सुदृढ़ करने के लिए नव-युवकों को प्रभावित करने के लिए कोई उपयुक्त कार्यक्रम सम्मुख रखना होगा। आर्यवीर दल एव आर्यकुमार समाजों की उपेक्षा का परिणाम आज हमें अनुभव हो रहा है जब आर्य समाज के सत्सगो में थोड़े से सफेद बालों वाले और बूढ़ सज्जन दिखाई देते हैं। अतः मैं तो समझता हूँ कि इन सध्याओं को पोषण देना चाहिए।

आर्यसमाज के सिद्धान्त बुद्धिवादी हैं, सत्य हैं और उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे सभी कालों और सभी समयों पर सत्य हैं। परन्तु सत्य भी अनुपयुक्त व्यक्तियों के हाथ पर अपना प्रभाव छोड़ देता है। ऐसी दशा में आज जब हम आर्यसमाज के भविष्य पर विचार कर रहे हैं तो हमें उपयुक्त एव उससे सम्बन्धित अन्य बातों पर विचार करना चाहिए। अर्थात् हम एक वैदिक धर्म के ज्ञान का केन्द्र बनायें। प्रचार पद्धति में परिवर्तन करें, अपने महत्व को स्थापित करने का प्रयत्न करें तथा आर्यवीर दल और आर्यकुमार समाजों को बल दें। अन्यथा आर्यसमाज का भविष्य बहुत उज्ज्वल नहीं। युग बड़ी तेजी से बदल रहा है। यदि हम छूट गए तो बहुत पीछे रह जायेंगे। बस, परमेश्वर से प्रार्थना है कि वह हमें शक्ति और बल दे कि हम आगे बढ़ सकें। ★

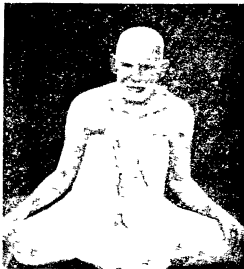
(पृष्ठ ३४ का शेष)

सा ही है। जो कुछ अद्य में वहाँ आत्मज्ञान का प्रचार सुना जाता है, उसमें सम्प्रदाय बालों की आर्थिक लिप्ता तथा प्रपञ्च की मात्रा ही अधिक है। कथित देशों के आत्मज्ञान के सत्य जिज्ञासु, निराश और अज्ञान हैं। नास्तिक भोगवादी अर्थ-लोलुपों के विनाशकारी यन्त्रों का आविष्कार और उसके दुष्प्रयोग से मानवता कराह रही है। वेद विरुद्ध पन्थ-प्रचारकों का दुर्ध्वंश, नास्तिक भोगवादी पदिचमयी सभ्यता का शिष्टताहीन नग्न-नृत्य और मानवतावाशक विनाशकारी यन्त्रों के निर्माता अर्थलोलुप साप्ताग्र्यवादियों के पजे में मानवता अन्तिम सास ले रही है। मानव-विनाशकारी ऐसी दुःख परिस्थिति में मानव समाज के सबल प्रहरी आर्यसमाज को बड़ी सतर्कता से कर्तव्य पालन करना धर्म है।

उपयुक्त सारी विषय समझाओं का सही समाधान वैदिक धर्म में है। वैदिक धर्म मानवता को सात्त्विक सम्पत्ति है। वेद के सुन्दर सिद्धान्त में बिदम्बकल्याण निहित है। आर्यसमाज ने जितने मानव-हितकारों काय किये हैं, उनमें लोकमत से सबल समर्थन मिला है। अब समय आ गया है कि मानवता की रक्षा के लिये पूर्ण सध बल से समरागण में आर्यसमाज को आगे बढ़ना चाहिये। आशा है आर्यजन आर्यसमाज के विश्व प्रचार वायित्व को स्वीकार करेंगे। ★

आर्य समाज की स्वर्गीय विभूतियाँ

त्यागमूर्ति श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज



महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज



स्व० श्री प० गणपति शर्मा जी



डी ए बी कालिज लाहौर के संस्थापक
श्री महामा हसराम जी





भारतीय गौरव की रक्षा में आर्यसमाज के संस्थापक—

महर्षि दयानन्द का योग-दान

[ले०—श्री आनन्द स्वामी सरस्वती, तपोवन, वेहरादून]

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज सरस्वती के कार्यक्रम और जीवन घटनाओं पर दृष्टि डालें तो ऐसा प्रतीत होता है कि उनके हृदय और मस्तिष्क में सारी मानव जाति के लिये एक सम्मोर पीड़ा थी। वेद ने कहा भी है कि ऋषि वह है जो मनुष्य मात्र का हितकारी हो।

ऋषि स यो मनुहित । ऋ० १०।१६।५

परन्तु जहाँ सारे ससार के कल्याण का विचार उनके मन में था वहाँ, भारतीय प्रजा के लिये विशेष स्थान था। साम्यवाद के नेता कार्ल मार्क्स का विचार तो यह था कि "भारतीय समाज का कोई इतिहास है ही नहीं" और उन्होंने यह भी लिखा कि "मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूँ जिनका भारत के स्वर्णकाल में विश्वास है।"

(1) इन पत्रों में कार्ल मार्क्स ने अपनी कितनी अज्ञानता प्रकट की, यदि कार्ल मार्क्स का सम्पर्क स्वामी दयानन्द जी के साथ हो जाता तो वह न केवल आस्तिक बन जाते, अपितु भारतीय सस्कृति के भक्त भी बन जाते।

महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में अनेक काय किये जिनकी गणना कठिन है। परन्तु उनका सबसे बड़ा कार्य यह था कि उन्होंने भारत में फैली हुई निराशा को बड़े जोर से झिझोड़ा। अंग्रेज शासकों ने यह विचारधारा फैला रखी थी कि भारत के लोग शासन करने योग्य नहीं। फ्रेंच लेखक वाल्टेयर ने 'फ्रेंगमैट्स आन इण्डिया' में भारत के सम्बन्ध में यह विचार दिया कि "भारतीय सस्कृति का तत्त्व यह है कि बीड़ने की अपेक्षा चलना अच्छा है। और चलने की अपेक्षा खड़े रहना अच्छा है। और खड़े रहने पर वह बीड़ने में रुचि रखते हैं और बीड़ने की अपेक्षा लेट जाना अच्छा समझते हैं और लेट जाने से सो जाना उनको अधिक प्रिय है।" इसके साथ ईसाई पादरी हिन्दुओं को



लेखक

असम्य साबित करने लगे। देवी देवताओं की हसी उडाने लगे। और हिन्दू अपनी प्राचीन सभ्यता और मध्य वैदिक सिद्धान्तों को भूला चुके थे इसलिये वह ईसाइयों को कोई उत्तर न दे सकते थे। एक मुसलमान व्यक्ति अबुल्ला ने 'तोहफतुल हिन्द' नामक पुस्तक में हिन्दू सभ्यता, प्रार्थन, धर्म और आर्य पुरुषों को बेहद घिनोने रूप में वर्णित किया। इसका उत्तर देने वाला कोई न था। हिन्दू अपनी प्राचीन सस्कृति, सभ्यता तथा सिद्धान्तों को मूल जानने के कारण अपने आपको बहुत नीचा समझने लगे थे। उस समय ऐसा प्रतीत होने लगा था कि हिन्दुओं की यह धारणा बन गई है कि वे सदा के लिये दूसरों के गुलाम बने रहेंगे। अंग्रेजों ने भी अपनी कूटनीतिज्ञता से व्यापार करते-करते शासक का रूप धारण कर लिया। उस समय के भारतीयों के मन में यह बात घर कर गई थी, कि यूरोपियन लोग ही राज्य प्रबन्ध कर सकते हैं। कार्ल मार्क्स के शब्दों में इंग्लैंड ने भारतीय समाज का सारा ढाँचा ही तोड़ डाला। सारा समाज ही बिचर चुका था। पौराणिकता और अज्ञान ने

(1) कार्ल मार्क्स के भारत सम्बन्धी ज्ञत, सम्पादिका कृपा देवी । १० जून और २१ जुलाई १८५९ ।



माई को भाई से अलग कर दिया था। प्रकृति-पूजा ने बुद्धि हर ली थी। आर्यमविश्र्वास के स्थान पर आत्ममलानि पनप रही थी। "जगत तीन काल में मिथ्या है।" का प्रचार प्रबल था। छूनछान ने, आपस की फूट ने, बाल विवाह आदि कुरीतियों ने भारतीय समाज की बुनियाद हिला डाली थी। घर की यह अवस्था, उधर विदेशी शासकों की चालें भयकर रूप धारण कर रही थीं। कुछ वर्ष और यदि यही अवस्था रहती तो भयकर पतन हो जाता और यूरोपियन पादरियों ने तो लिख भी दिया था कि ५० वर्ष पश्चात् सारा भारत ईसाई हो जायगा। परन्तु भारत को पुन उठना था और उसका उत्थान करने के लिये महर्षि दयानन्द के हृदय में जोत जगी। ३० वध निरतर घोर तप करने के पश्चात् दयानन्द उत्तराखण्ड और हिमालय की उलूग चोटियों से नीचे उतरे। उन्होंने स्पष्ट देख लिया कि भारत के लोगों के पतन का सबसे बड़ा कारण वेद को मूल जाना है और साथ ही अपने उज्ज्वल भूत को विस्मरण कर देना है।

महर्षि दयानन्द ने सोये हुए भारतीय सिंहा को जगाया कि श्वो गीदड़ बने बंटे हो। तुम्हारे पास बुद्धि बल, बाहु बल और धन बल तीनों विद्यमान हैं, फिर निराश क्यों होते हो। स्वामी दयानन्द ने सबसे अचम्भे का चमत्कार यह दिखाया कि उन्होंने भारतीयों के अन्दर यह भावना भर दी, कि हम भगवान राम, गुरु बणिष्ठ, कृष्ण और

पुधिष्ठर आदि महानुभावों के वंशज हैं। हमारी वैदिक सस्कृति ससार भर के लोगों की सस्कृति से पुरानी और अत्यन्त पवित्र तथा ऊँची है। विदेशी राज्य की हानियों को उन्होंने प्रकट किया और सबसे पूर्व 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग करके भारतीय राज्य स्थापित करने का विचार दिया।

स्वा० दयानन्द ने स्वराज्य की आधार शिला रखी और उसी पर मंगावी और अन्य नेताओं ने स्वतंत्रता का भवन तैयार किया। परन्तु दुख यह है कि आधुनिक नेताओं ने महर्षि दयानन्द के एक आदेश को सव्या भुला दिया। और वह यह कि आध्यात्मिक उन्नति के बिना केवल भौतिक उन्नति विनाश का साधन बन सकती है। और आज स्वतन्त्रता मिलने के बाद जो आपा-धापी, भ्रष्टाचार, अन्याय, नैतिक पतन और नास्तिकता दिखाई दे रही है इसका सबसे बड़ा कारण स्वामी दयानन्द के वैदिक आदेश को मूल जाना है।

यदि भारत के लोग सुखी होना चाहते हैं, तो इसका एकमात्र साधन यह है कि वे स्वामी दयानन्द के वैदिक विचारों को अपनाएँ और अपने जीवन में डालें तथा उन्हीं के अनुसार चरित्र निर्माण करें। यही सीधा मार्ग है। आर्यसमाज के सदस्यों और नेताओं का भी इस सम्बन्ध में विशेष वायिद्व है। आर्यसमाज स्थापना के पावन पर्व पर हम विचार करें और आत्म-निरीक्षण कर आगे बढ़ें।



पुरोहित की आवश्यकता।

एक उदार, मिलनसार, सफल वक्ता, कथा सस्कार आदि में निपुण, ग्राम प्रचार में रुचि रखने वाला, धार्मिक और सस्कृत की परीक्षाओं की तैयारी कराने में कुशल पुरोहित की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार। मकान बिजली सहित आर्यसमाज मन्दिर में ही निशुल्क मिलेगा। पत्र-व्यवहार प्रधान, आर्यसमाज सागर ५० प्र० से करें।

आवश्यकता

आर्य कन्या इन्टर कालिज नजीबाबाद के लिए सुयोग्य अनुभवों आर्ष विचारों की आचार्या (Principal) चाहिये। अपेक्षा या सस्कृत की एम ए हो तो अच्छा है, वेतन सरकारी प्रेड के अनुसार मिलेगा। प्राथना पत्र साटि-फिकटों की नकलो सहित शीघ्र आने चाहिये। १८-१४-१७

बनारसीलाल आर्य मैनेजर

जलता दीपक

(सि०—श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट पु प्रधान सा आ प्र नि सभा देहली)

एव ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन् सता ।

सखा सख्या समिध्यते ॥ ऋ० ८-४३-१४

सम्बार्थ —

(अग्ने) हे अग्ने । (एव) तू (हि) नि सन्देह (अग्निना) अग्नि द्वारा (समिध्यसे) प्रदीप्त किया जाता है । (विप्र) तू विप परम ज्ञानी (विप्रेण) मुझ ज्ञानी द्वारा (सन्) तू सत् श्रेष्ठ (सता) मुझ साथु श्रेष्ठ द्वारा और (सखा) तू सच्चा । सखा (सख्या) मुझ सखा द्वारा प्रदीप्त किया जाता है ।

इस मन्त्र मे ज्ञान और प्रकाश के प्रवाह को, प्रवाहित और सुरक्षित रखने के लिए बड़ा सुन्दर आदेश दिया गया है ।

अग्नि से अग्नि सुलगनी है, ज्ञानी से ज्ञान बढ़ता है, और सत्ता से श्रेष्ठता मे वृद्धि होती है । मित्र से मित्र प्रख्वलित और प्रदीप्त होता है ।

इसी मन्त्र के आदेश को लक्ष्य मे रखकर आर्यसमाज के नियमों मे वेदों को सत्य विद्या की पुस्तक बताया गया है । और उनका पढ़ना पढ़ाना, और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म बताया गया है ।

एक जलते हुए दीपक से अनेकों दीपक जलाये जा सकते हैं । पर तु जिन प्रकार जलते हुए दीपक के लिए तेल और बत्ती दोनों आवश्यक हैं अर्थात् ज्ञान और कर्म दोनों अनिवाद्य हैं । इसी प्रकार जलते दीपक से वही दीपक जलाये जा सकेंगे जिनमे तेल और बत्ती दोनों का समावेश होगा यदि केवल तेल व बत्ती होगी या तेल ज्यादा और बत्ती छोटी या बत्ती बड़ी तेल थोड़ा तो दीपक जलाये नहीं जा सकेंगे ।

गुरु विरजानन्द से महर्षि दयानन्द ने ज्ञान प्राप्त किया और स्वयं प्रख्वलित हुए और गुरु विरजानन्द के नाम को प्रतिष्ठ कर दिया । गुरु ने शिष्य का ज्ञान बढ़ाया और शिष्य ने गुरु का नाम और अपना बढ़ाया । महर्षि दयानन्द जीवन पर्यन्त ज्ञान का प्रकाश करते रहे । और अन्धकार



लेखक

का निराकरण । मरते समय भी गुरुवत् विद्यार्थी के अदर आस्तिकता के प्रवाह को उत्पन्न कर दिया । आर्यसमाज स्थापना विवस मानना रुझि नहीं है । यह एक आवश्यक और उपयोगी कतथ्य है । इस अवसर पर हम सबको यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि किस प्रकार ज्ञान मे वृद्धि हो । और उस ज्ञान के आधार पर चरित्र और कर्म मर्याबित हों ।

दीपावली पर दीपक जलाये जाते हैं । इन जलते हुए दीपकों को मनोविज्ञान की दृष्टि से इस मन्त्र के प्रकाश मे देखना चाहिये । जैसे बाहर दीपक जल रहे हों, वैसे अन्दर भी प्रकाश बढ़ते रहना चाहिये ।

वेद ईश्वरीय ज्ञान है । हर सृष्टि की आवि मे उनका प्रादुर्भाव होता है, और प्रलय तक प्रचार रहता है, और पुन नये कल्प मे फिर उनका प्रादुर्भाव हो जाता है, जिस प्रकार सृष्टि प्रवाह से अनावि है वैसे ही ज्ञान का प्रवाह भी अनावि है । आवश्यकता इसकी है कि प्रत्येक ब्यक्ति अपने ज्ञान मे वृद्धि करता रहे और अपने ज्ञान से दूसरों को लाभ पहुँचाता रहे । यह श्रुतुला सुरक्षित रहनी चाहिये । ज्ञान नित्य बढ़ता है, परन्तु ज्ञान के नाम पर मिथ्या ज्ञान उत्पन्न हो सके, इसके लिये प्राचीन वैदिक ज्ञान के आदेश के रूप मे आवश्यकता है ।

मनोचिन्ता के लिये आकाशं चामृते, ज्यमुत्सृज्य

चाहिये। सुवर्ण की परीक्षा के लिये कसौटी चाहिये। बैबिक सूर्य का प्रकाश सृष्टि के आरम्भ में हुआ और इसी प्रकाश के आधार पर इस प्रकाश के विस्तार में वृद्धि होती रहनी चाहिये। इस मन्त्र के आशय की इस विज्ञान के युग में हम बिजलीघर के उदाहरण से समझ सकते हैं। बिजली के लिये एक Power House या केन्द्रीय उत्पत्ति स्थान की आवश्यकता है। उस स्थान से विद्युत् तारों द्वारा वितरण की जाती है। परन्तु इस विद्युत् से यही स्थान लाम उठा सकते हैं जिनके अन्दर Fitting अर्थात् निर्माण है। केवल निर्माण ही नहीं Connection और सम्बन्ध भी आवश्यक है और इसके साथ प्रयोग भी आवश्यक है। अर्थात् समय पर विद्युत् से लाम उठाने की योग्यता और क्षमता होनी चाहिए। प्रयोग सम्बन्धी ज्ञान भी होना चाहिए।

आर्यसमाज एक बिजली घर है, उसके अनुयायी और हितैषी हो अपने आपको शिक्षा सस्कार, धर्म, भावना और योग्याप्त्य से [१] बनाकर योग्य बनकर इन बिजली घर से अपना सम्बन्ध जोड़ लेना चाहिए और समय-समय पर इसके प्रकाश से लाम उठाते रहना चाहिए और दूसरो को लाम पहुँचाते रहना चाहिए।

व्यवस्थापिका

यदि एक अकेला सब वेदों के जानने हारा द्विजों में उत्तम सन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे यही श्रेष्ठ धर्म है, क्योंकि अज्ञानियों के सहस्रों, लाखों, करोड़ों मिलके जो व्यवस्था करें उसको कमी न मानना चाहिए। जो ब्रह्मचर्य, सत्यमाध्यादि का धर्म, वेद, विद्या या विचार से रहित जन्ममात्र से शूद्रवत वर्तमान है उन सहस्रों मनुष्यों के मिलने से भी समा नहीं कहाती। जो अविद्या-युक्त मूर्ख वेदों के न जानने वाले मनुष्य जिन्ध धर्म को कहें उसको कमी न मानना चाहिये क्योंकि जो मूर्खों के कहे हुए अनुसार धर्म पर चलते हैं उनके पीछे संकड़ों प्रकार के पाप लग जाते हैं। न दधानद

सर्वोदय और आर्यसमाज

(ले०—श्री आदित्यपालसिंह जी आर्य, लखनवा)

स्वानुर (फर्लाबाद) के एक सर्वोदयी कार्यकर्ता श्री डा० हरीसिंह जी कटियार ने मुझे एक भेंट के अवसर पर बताया कि "आज का युग अर्थ का युग है। कोई भी समाज जो अर्थ की विधमता दूर करने में प्रयत्न शील है, जनता का धन्यवाद का पात्र है। आर्यसमाज केवल एक धार्मिक आन्दोलन है जो जनता से मुक्ति या पुनजन्म के सुधार के लिए प्रयास करता है। उसकी यह बातें जनता नहीं अपनायेगी, क्योंकि वह तो इसी जन्म में और यहीं सुख और सुधार चाहती है और आप उससे उसकी बातें करते हैं जिसे उसने देखा नहीं। अत आर्य-समाज और उसके सस्थापक से सर्वोदय और उसके सस्थापक का स्थान में अधिक मानता हूँ क्योंकि 'सर्वोदय' का अभियान इसी जन्म में सुख और सुधार के लिये उद्दिष्ट है।"

मैंने कहा कि "मैं ऐसा नहीं समझता। मेरी तो ऐसी धारणा है कि आर्यसमाज से बढ़कर जनता के इस जन्म और अगले जन्म को सुधारने वाली और कोई सस्था नहीं और उसके सस्थापक स्वामी दयानन्द से बढ़कर ससार का कोई हित चिन्तक न हुआ, न है और न होगा। आप का 'सर्वोदय' का आन्दोलन आर्यसमाज का एक आन्दोलन है जो उसके १० नियमों में एक में इस प्रकार वर्णित है—

'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये'—यही है आपका 'सर्वोदय'। यहाँ उन्नति से अभिप्राय ससार की सारोत्तिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति से है जिसमें सब प्रकार की उन्नतियों का समावेश हो जाता है। ऐसी बशा में सर्वोदय का अभियान आर्य-समाज के अभियान से बढ़कर नहीं हो सकता। हाँ, वह आर्यसमाज के कार्यक्रम का ही एक अंग है।"

विदेशियों की दृष्टि मे—

सार्वत्रिक सुख अभ्युदय और आनन्द का युग लाने वाली शक्ति—

आर्यसमाज

(अमेरिकन विद्वान् “एड्यूज जैक्सन” के विचार)



मुझे एक आग दिखाई देती है जो कि सर्वत्र फैली हुई है अर्थात् असीम प्रेम की आग जो कि द्वेष को जलाने वाली है और प्रत्येक वस्तु को जलाकर शुद्ध कर रही है। अमरीका के शीतल मैदानों, अफ्रीका के विस्तृत देशों, एशिया के प्राचीन पर्वतों और योरोप के विशाल राज्यों पर मुझे इस सबको जलाने वाली और सबको इकट्ठा करने वाली आग की ज्वालामयें दिखायी देती हैं। इसकी चर्चा निम्नस्थ देशों से उठी है। अपने सुख और उन्नति के लिए इसे मनुष्य ने स्वयं प्रज्ज्वलित किया है। पृथ्वी पर मनुष्य ही एक ऐसा ध्यति है जो आग को जलाकर स्थायी बना सकता है। जहा एक ओर वह अपने घरों में नारकीय अग्नि मडकाने में अर्पणों है वहीं प्रेमोपस की तरह नारकीय घरों को प्रेम से पवित्र और बुद्धि से प्रकाशित करने वाली अग्नि को लाने के लिए भी यही अपसर है। इस अपरिमित अग्नि को देखकर, जो निस्संवेह राज्यों, साम्राज्यों और सत्तार भर के प्रबन्ध और नीति के दोषों को पिघला डालेगी, इस अग्नि की कल्पना में मैं अत्यन्त आनन्दित होकर एक उत्साहमय जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। सब ऊँचे-ऊँचे पहाड़ जल उठेंगे, घाटियों के रमणीय नगर भुन जायेंगे, प्यारे घर और प्रेमपूर्ण हृदय साथ-साथ पिघलेंगे, पाप-पुण्य सयुक्त होकर यो अन्तर्हित होंगे जैसे सूर्य की किरणों में ओस। असीम उन्नति की विद्युत् से मनुष्य का हृदय हिल रहा है। आज उसकी केवल चिन्तारियाँ आकाश की ओर उड़ती हैं, वक्ताओं और कवियों

और ग्रन्थ निर्माताओं की शिक्षाओं में इधर-उधर ज्वालामयें दोल पड़ती हैं।

यह आग सनातन आर्य धर्म को स्वामाविक पवित्र बना मे लाने के लिये थी जिसे आर्यसमाज कहते हैं। यह आग मारतवर्ष के एक परम योगी दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रकाशमान हुई थी। हिन्दू-मुसलमान इस प्रखण्ड अग्नि को बुझाने के लिए चारों ओर वेग से दौड़े, किन्तु यह आग ऐसे वेग से बढ़ती गई कि जिसका इसके प्रकाशक दयानन्द को ध्यान में न था और ईसाइयों ने भी जिनके धर्म की आग और पवित्र दीपक पहले पहले पूव में ही प्रकाशित हुए थे, एशिया के इस नये प्रकाश को बुझाने में हिन्दू मुसलमानों का साथ दिया, परन्तु यह ईश्वरीय आग और भी मडक उठी, और सर्वत्र फैल गई। सम्पूर्ण दोषों का सघट्ट नित्य की शुद्ध करने वाली मट्टी में जलकर नस्म हो जायगा, यहाँ तक कि रोग के स्थान में आरोग्य, झूठे विश्वास की जगह तर्क, पाप के स्थान में पुण्य, अविद्या की जगह विज्ञान, द्वेष की जगह मित्रता, बैर की जगह समता, नरक के स्थान में परमेश्वर और प्रकृति का राज्य होगा। मैं इस अग्नि की मांगलिक समझता हूँ। जब यह अग्नि सुन्दर पृथ्वी को मवजीवन प्रदान करेगी तो सार्वत्रिक सुख अभ्युदय और आनन्द का युग आरम्भ हो जायगा।

[अनुषाविका एव प्रेषिका—

—मजिताकुमारी, पन्त-ब्रह्मन, हलद्वानो]

दयानन्द वचनामृत

मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य का निर्णय करने कराने के लिए है। इसी मत मतान्तर के विषय से जगत् में जो जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं, होंगे उनको पक्षपात् रहित विद्वज्जन जान सकते हैं। जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मतमतान्तर का विरुद्धबाध न छुटेगा तब तक अन्योग्य को आनन्द न होगा।



महान् सन्त दयानन्द

[ले०—श्री ५० शिवदयालु जी मेरठ]

श्रीरामजी दयानन्द निश्चय ही एक महान् सन्त थे नीरक्षीर विवेकी परमहंस थे। उनका चरित्र कवि शिरोमणि तुलसीदास जी के शब्दों में कपास के सदृश था। जैसे कपास को पंदा होते ही चर्खों में ओटा जाता फिर



लेखक

धुनकी से धुनकर चर्खों में काटा जाता है तत्पश्चात् करघे में बुना जाता फिर धोबी उसको घाट पर ले जाकर पानी में पछाड़ता है। सूखने पर उसकी कुन्वी की जाती फिर बर्जी उसके अंग अंग को काटकर सूई से बेधकर बस्त्र तैयार करता है और इस प्रकार वह कपास से नाना कष्ट सहन कर बस्त्र रूप में परिहित ही साधता है, उस ही प्रकार परमहंस दयानन्द को गृह त्यागने पर पिता के आदेश से सिपाही बनको पकड़ते, गुप्त दयानन्द ऋद्ध होकर उस पर लाठी प्रहार करते उत्तराखण्ड में विचरते हुए नाना घातनाएँ सहन करनी पड़तीं और जब प्रचार क्षेत्र में उतरते

तो अनेक बार उनको विष दिया जाता, राव राजा तेजसिंह उन पर नगी तलवार लेकर झपटते, बगाल में तान्त्रिक-लोग उनको एक मकान में घेर कर वेधी की बलि चढ़ाने की तैयारी करते और जोधपुर में उस पर घातक विष का प्रयोग किया जाता है किन्तु वे कभी विचलित नहीं होते और ससार के कल्याण के निमित्त रचे हुए अपने विष्वयज्ञ में निरन्तर शान्त चित्त ही आत्मावृत्ति डालते चले जाते हैं।

सन्त दयानन्द पर्वत की कन्दरा में बैठकर समाधि का आनन्द ले सकते थे और मोक्ष प्राप्त कर सकते थे, किन्तु उन्होंने व्यक्तित्त मोक्ष की प्राप्ति की कभी कामना न थी उनका लक्ष्य सामूहिक मुक्ति उपलब्ध करना था। मानव जाति को मुक्ति सुख का योग कराना था। इसीलिये जगत हित को लक्ष्य बना कर वे कार्य क्षेत्र में उतरे और निरन्तर कष्ट बाधाओं को सहते सहते हुए उन्होंने अपने लक्ष्य को पूरा किया।

दयानन्द द्वन्द्वों का सहन करने की दृष्टि से, मोषण कपटों और सकटों का सामने करने की दृष्टि से महान् सहिष्णु थे किन्तु अनीति अनाचार के साथ, असत्य और अन्याय के साथ समझौता करना उस परमहंस ने सीखा न था।

नाना मत पन्थों के दोगों और मिथ्या विचारों का लण्डन करने में उन्होंने कभी सकाच नहीं किया।

महाराज उदयपुर ने उनसे नाथद्वारे की गद्दी का महन्त बनने की प्रार्थना की और मूर्ति-पूजन के लण्डन से विरक्त रहने का अनुरोध किया, किन्तु महान् सन्त के रूप में उन्होंने उस प्रार्थना को ठुकरा दिया और कहा कि मैं अपने उस महान् स्वामी की जो ब्रह्माण्ड का स्रष्टा है आज्ञा मानूँ व तेरी जिसके राज्य से एक दीड़ में बाहर आ सकता हूँ।

सन्त नग्न-सत्य का परम पुजारी हुआ करता है तो हमारे चरित्र नायक परमहंस दयानन्द जी महाराज भी मनसा बाबा कर्मणा एकमात्र सत्य के पुजारी थे। सत्य जो सनातन है सबा एकरस रहने वाला है, निरन्तर उसको ही अपने जीवन में डालना और उसका प्रचार करना सन्त शिरोमणि दयानन्द का काम था।

कर्नल आलकाट एब मैडम थ्लैबैटस्की ने उनको अपनी थ्यूसोफिकल सोसायटी का परम गुरु बनाने का सकल्प कर उनसे भेंट की किन्तु सत्य ज्ञान के परम केन्द्र वेद में उनकी आस्था वेल् ऋषि ने उनसे एकदम किनारा किया और विश्वव्याप्ति के मोह को ठोकर मार दी।

दयानन्द केवल स्वयं ही सत्य के परम पुजारी न थे बल्कि वह तो अपने प्रत्येक अनुयायी को सत्य का पुजारी बनाना चाहते थे और इसीलिए आर्यसमाज के चौथे व पाँचवें नियमों में सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में उद्यत रहने का आदेश दिया और सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने की प्रेरणा दी।

सन्त पुरुष आदर्श निरभिमानी किन्तु स्वामिमानो हुआ करते हैं। पूना में जिस समय स्वामी जी प्रचार कर रहे थे। तो लोगों ने एक व्यक्ति को दयानन्द जैसे वस्त्रादि पहना कर गधे पर चढ़ाकर उसकी सवारी निकाली और जब स्वामी जी को इसका समाचार मिला तो उन्होंने हँस कर कहा कि ठीक ही तो है नकली दयानन्द के साथ यही सलूक किया जाना चाहिये।

मेरठ आर्यसमाज के प्रथम वाक्कीत्सव पर स्वामीजी जी महाराज स्वयं पधारें थे, समाज की अन्तरग समा में स्वामी जी विशेष रूप से आमन्त्रित थे। सदस्यों ने स्वामी जी से आर्यसमाज का परम सरक्षक बनने का अनुरोध किया तो उन्होंने हँसकर कहा कि मैं तो तुम्हारा सदस्य भी नहीं केवल एक दर्शक के रूप में यहाँ उपस्थित हूँ। यदि मुझको परम सरक्षक बनाओगे तो भोले लोगों उस प्यारे प्रभु को क्या कह कर पुकारोगे। स्वामी जी का युक्तियुक्त उत्तर सुनकर सब आवाक रह गये।

स्वामी दयानन्द निरभिमानी थे किन्तु साब ही उच्च-कोटि के स्वामिमानो भी थे। कलकत्ते में प्रचारार्थ जब

स्वामी जी गये तो उनके व्याख्यानों से प्रभावित होकर कलकत्ते के लाट पादरी ने गवर्नर जनरल लार्ड ब्रुक से उनकी प्रशंसा की और स्वामी जी से उनको मिलाया।

लार्ड ब्रुक ने स्वामी जी से कही कि महाराज आप मत पर्यों की कड़ी समालोचना करते हो जनता इससे रुष्ट है अतः आप कहें तो आपकी सुरक्षा की व्यवस्था कर दूँ। स्वामी जी ने कहा कि मलका विक्टोरिया के राज्य में सब को अपने-अपने धर्म के प्रचार की स्वतन्त्रता प्राप्त है और रक्षक तो वह भगवान् है मुझे सुरक्षा की कोई आवश्यकता नहीं। लार्ड ब्रुक ने कहा कि महाराज जब आप मलका के राज्य की सराहना करते हो तो अपने भाषकों में भी अप्रेजी राज्य को कुछ प्रशंसा कर दिया करो। इस पर स्वामी जी ने तडक कर कहा कि यह नहीं हो सकता। मैं विदेशी राज्य को स्वदेशी राज्य की अपेक्षा हेय समझता हूँ। अपने देश में अपना राज्य ही सर्वोपरि है इत्यादि। इस प्रकार सन्त दयानन्द स्वदेशामिमान, स्वसंस्कृति एव स्वजाति के अभिमान के महान् पुजारी थे।

सन्त परम कारुणिक एव दयालु हुआ करते हैं। स्वामी दयानन्द ने अपनी भगिनी एब बाबा की मृत्यु अपनी आँसों से देखी किन्तु रदन नहीं किया और जब गंगा के किनारे एक गरीब बेबी को अपने पुत्र की लाश को नग्न जलप्रवाह करते देखा वह परम कारुणिक सन्त दयानन्द दहाड़ मारकर रोने लगे, और अपने देश की पराधीनता और कगाली पर रदन करने लगे।

एक बार स्वामी जी के एक भक्त तहसीलदार महोदय विष देने वाले एक व्यक्ति को पकड़कर स्वामी जी के सामने लाये तो परम दयालु सन्त दयानन्द ने कहा कि इपको छोड़ दो, मैं लीपों को बन्वनों में जकड़वाने नहीं अपितु उनको मुक्त कराने आया हूँ।

अन्तिम बार घातक विष का प्रयोग करने वाले व्यक्ति को बजाय पकड़वाने के उस परम सन्त ने कुछ खपा देकर चलता कर दिया।

स्वामी दयानन्द के जीवन की ऐसी अनेकों घटनायें हैं जिनसे यह स्पष्ट प्रमाणित हो जाता है कि वह महान् आचार्य दयानन्द निश्चय ही एक उच्चकोटि के सन्त, हंस व परमहंस थे।

किसी को बढाना माना जाय किन्तु अल्पायु विद्वान् को ही समाज मे प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए (ननन बूढ़ो भवति येनास्य पलितशिर । यो वै युवाय्यधीयानस्ते देवा स्वधिर विदुः ॥ मनु) । एक बार भारत के एक राजा अश्वपति ने अपने अतिथि से कहा था—मेरे राज्य मे कोई भी अविद्वान् नहीं है' । इसका अर्थ यही है कि मे शिक्षा-संस्था को समुन्नत करने मे सर्वेव जागरूक रहा हू ।

स्नातक क लिए भारतीय शिक्षा संस्था का एक आदेश सर्वैव रहा है—'स्वाध्यायानामा प्रमद' स्वाध्याय की परम्परा मे प्रमाद न करो । तुमने जिस प्रकार पढा लिखा है वैसे ही दूसरों को पढाते लिखाते रहो । भारतीय शिक्षा संस्था का स्वरूप भी यही रहा है । पारिवारिक जीवन के आवश्यक पक्ष यज्ञों मे 'वेदयज्ञ' शिक्षा संस्था को ही प्रस्तुत करता है । आज तो शिक्षा के कितने ही नये उपकरण बन गये हैं, परन्तु प्राचीन भारतीय परिपाटी मे 'श्रोत-शिक्षा' का आदर्श ही सहस्रों वर्षों तक रहा है, जिसमे विद्यार्थी अपने गुरु से सुनकर ही विद्या से अपना बुद्धि कोष भरा करता था । इस मौखिक शिक्षा का भी भारत के शिक्षा इतिहास में बहुत ऊँचा स्थान है । संस्कृत साहित्य मे श्रुति का अर्थ ही 'विद्या' अथवा 'ज्ञान' है । गुरु के मुख से सुनकर ज्ञान का जो विकास होता है, लिखे हुए से नहीं होता । लिखा हुआ तो ज्ञान का केवल अनुवाद मात्र है । ज्ञान की कितनी ही अभिव्यञ्जनायें गुरुमुख से सुनकर ही प्राप्त होती हैं, वे भाषा के दायरे मे बाँधी नहीं जा सकती ।

गुरु शिष्य परम्परा मे किसी विषय की विशेष ज्ञान-गिरमा उच्च स्तर तक विकसित हो जाती है । इस उच्च स्तर के ज्ञान कोष की सुरक्षा जिम गुरु शिष्य परम्परा मे होती रही है उसका नाम 'चरण' रक्खा गया था । एक विषय के परिज्ञान मे विकास करते करते ज्ञान भी जो शाखा और प्रशाखायें आविर्भूत होतीं, वे उसी चरण के अन्तर्गत वेश भर मे फैली हुई थीं । गुरु, चरण अथवा शिष्य के अनुसार विद्यार्थी की पट्टचान तुम्हट हो जाती थी । काष्क, पणिनीय, वैय्याकरण आदि नाम उन्हीं के परिचायक हैं । एक एक चरण मे उममे सम्बन्धित ज्ञान की अनेक शाखाओ मे प्रचुर विकास हुआ और उनके शास्त्रानाम विषयो के आधार पर प्रसिद्ध होगये । तैत्तिरीय और ऐतरेय आदि गुरुओ के नाम पर उपनिषद्, ब्राह्मण,

प्रातिशाख्य, और आरण्यक आदि कितना ही ज्ञान विस्तार हमे आज तक उपलब्ध होता है ।

गुरु ही नहीं, स्त्रियो की शिक्षा के लिये भारतीय शिक्षा संस्था मे प्रचुर विकास हुआ है । काश्यप संहिता मे कनकल मे स्थापित एक ऐसे विश्वविद्यालय का उल्लेख है जिसमे स्त्रिया उच्च कक्षाओं तक आधुर्वेव पढ़ती थीं । पाणिनि तथा पतञ्जलि ने भी चरणो मे शिक्षा प्राप्त करने वाली स्त्रियो का उल्लेख किया है । (अष्टाध्यायी ४-१-६३)

अधेध्रो स्त्रिया ही नहीं आचार्या भी थीं, जिनसे पुरुषों ने विद्या प्राप्त की थी । प्राचीन साहित्य मे स्त्री लिङ्ग उपाधियो का बहुधा उल्लेख मिलता है । आचार्या और आचार्यानी दो शब्दो का पाणिनि ने उल्लेख किया है । आचार्या वह स्त्री जो स्वयं विदुषी होकर शिष्यो का अध्यापन करती है, किन्तु आचार्यानी आचार्या की पत्नी का बोधक है, चाहे वह स्वयं विदुषी हो या न हो ।

आचार्या अथवा अचार्या की जहाँ स्वयं आचार निष्ठ होकर शिक्षा का संचालन करना आवश्यक था, वहाँ विद्यार्थी को भी ब्रह्मचारी, रहकर शिक्षा प्राप्त करना अनिवार्य था । ब्रह्म का अर्थ ज्ञान है । अतएव ज्ञान प्राप्त करने के लिये जो चर्चा आवश्यक है, उस पर आश्चर्य रह कर विद्यार्थी जब शिक्षा प्राप्त करता था, उसे ब्रह्मचारी कहने थे । अथववेव मे ब्रह्मचारी के लिये एक सुन्दर कल्पना का उल्लेख है । ब्रह्मचारी विद्या के गभ मे रहता है, (अथव० ११-५३—'आचार्या उपनयमानो ब्रह्मचारिण कुर्वते गभमन्त ।') उसका स्नातक होना विद्या का प्रसव है । इस सन्तान का जनक मामो आचार्या ही है । इसीलिये ब्रह्मचारी प्राचार्या का अन्तेवासी कहा जाता था ।

माणवक और अन्तेवासी विद्यार्थी की दो अवस्थायें हैं । उपनयन से पूव छात्र माणवक और उपनीत होकर अन्तेवासी । विद्यार्थी द्वारा आचार्या का वरण और आचार्या द्वारा विद्यार्थी का उपनयन एक गम्भीर और प्रभावशाली प्रक्रिया है । अनेक प्राचीन संहिता ग्रन्थों मे अध्ययन की यह विधि दी गई है । (चरक स० विमान० ८।६।२३) छकी, लोतुप, द्रोही, और इन्द्रिय लोतुप छात्र को ब्रह्मचारी बनाना निषिद्ध है । जो गुरु की विद्या मे श्रद्धा नहीं रखता उसका उपनयन ही व्यर्थ है । (निरुक्त न० २।१।७) माणवक मे यदि ज्ञान की पिपासा जागृत नहीं हुई तो वह ज्ञान और

उसकी चर्चा के पथ पर अप्रसर नहीं हो सकेगा। इसलिये शिक्षा की पहली सीढ़ी यह है कि माणवक में ज्ञान की पिपासा जागृत करो।

किसी विद्या का पारङ्गामी ज्ञान प्राप्न करने के लिये जब कोई जिज्ञासु गुरु के समीप जाता गुरु का पहिला आवेश यही होता था कि आश्रम में ब्रह्मचारी बनकर कम से कम एक वर्ष रहो। कमी-कमी तो यह ब्रह्मचर्या दस और बारह वर्ष तक सुदीर्घ कालीन भी होती थी, और तब कहीं अस्सी विषय का प्रवचन होता। (छान्दोग्य० अ० ४ स० १०-अ० ६-स० १, उपनयन की प्रक्रिया मनु से २।३६-५० देखें।) यह ब्रह्मचर्या विश्वाधी की लगन और विषय के ज्ञान की योग्यता का सम्पादन करने क लिये आवश्यक ही है। कमी कमी इस ब्रह्मचय व्रत की निष्ठा में स्वय ही अमोघ विषय का परिज्ञान उद्बुद्ध हो जाना, और विद्यार्थी स्वय कहने लगता कि मेरी जिज्ञासा का उत्तर मिल गया। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विद्यार्थी में अमोघ विषय के ज्ञान की उत्कट अभिलाषा जागृत होनी चाहिए। यह अभिलाषा जब तक नहीं होती, गुरु के ध्यास्थान ध्यव है। पचनम्त्र जैसे राजनीति शास्त्र के रचे जाने की कहानी ही यह है। किसी राजा के राजकुमार विषय वासनाओं में फने रहते थे। राजा ने राजनीति शास्त्र की शिक्षा के अनेक प्रयास किये, परन्तु राजकुमारों की प्रवृत्ति शिक्षा की ओर न हुई आखिर बिष्णु शर्मा जैसे योग्य आचार्य ने राजनीति को कथाओं के रूप में सुनाना प्रारम्भ किया। कथा के लोम में राजकुमारों का मन उषर आकृष्ट हुआ, और अनायास राजनीति का ज्ञान सुकर हो गया। शिक्षा के लिये विद्यार्थी की एकाग्रता ही पर्याप्त नहीं है, गुरु को भी मनोवैज्ञानिक साधनों की गहराई में घबे बिना काम नहीं चलता।

१—आचार्य, २—प्रवक्ता, ३—श्रोत्रिय, ४—अध्यापक इन चार प्रकार के शिक्षकों का नाम प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है।

(१) आचार्य का स्थान इनमें सर्वोच्च है। वह उपनयन संस्कार द्वारा माणवक ब्रह्मचारी बनाता है। ब्रह्मचारी आचार्य का अन्तेवासी बन जाता है। वह चौबीस घंटे का तत्सय है। इसी स्थिति को अथर्व में विद्या का गर्भ कहा गया है। आचार्य शिक्षा और बोधा, दोनों का जनकवासी है। यह पुरुष का धैर्यक निर्माण है। याम्ना

चार्य ने निरुक्त में लिखा है कि आचार्य सज्ञा का अर्थ है वह ध्यक्ति जो आचार तथा ज्ञान दोनों की शिक्षा दे सके। तैत्तिरीय, पाणिनीय आदि अन्तेवासी होते थे।

(२) प्रवक्ता आचार्य से उतर कर प्रवक्ता की प्रतिष्ठा थी। यह वैदिक शाखा ग्रन्थों का व्याख्याता होता था। वेद तथा वेदान्तों का व्याख्याकार प्रवक्ता है। बृहस्पति आदि प्रवक्ता थे। इन्हे गौड शिक्षक मान सकते हैं।

(३) श्रोत्रिय-वेद के साङ्गोपाङ्ग अध्येता और अध्यापयिता श्रोत्रिय है। इन्हे वेद सम्बर कण्ठ रहते और उसी विद्या की शिक्षा देने वाले श्रोत्रिय हैं। यह प्राचीन भारत में एक विस्तृत विषय था—पदपाठ, क्रम, जटापाठ आदि अनेक शैलियों के शिक्षक श्रोत्रिय वर्ग में आते हैं।

(४) अध्यापक-वैज्ञानिक या लौकिक साहित्य के शिक्षक का नाम अध्यापक है। अध्यापक का बोला से सम्बन्ध नहीं है। अन्तेवासी का उत्तरदायित्व वह नहीं लेता।

जिन प्रकार गुरुओं की चार कोटिया है उसी प्रकार विद्यार्थियों की तीन कोटिया थीं। (१) माणवक (२) अन्तेवासी और (३) चरक।

माणवक—अनुपनीत छोटे माणवक हैं। यह प्रारम्भिक शिक्षा के छात्र हैं।

अन्तेवासी—यह उपनीत विद्यार्थी हैं। नौ वर्ष से चौबीस वर्ष या अठतालीस वर्ष तक की आयु के विद्यार्थी इन कोटि में आ सकते हैं। इनकी शिक्षा और बोधा आचार्य के गुरुकुल में होनी थी।

चरक—आज इस विद्यालय में, कल और किसी विद्यालय में घूमने वाले विद्यार्थी चरक कहे जाते थे। इनमें सभी आयु के प्रौढ विद्यार्थी ही होते थे। बृहदारण्यक उपनिषद (३-३) में ऐसे विद्यार्थियों का उल्लेख है जो चरक थे। विचरण करते हुए ज्ञानार्जन करने का नाम बौद्ध साहित्य में 'चारिका' शब्द से बहुश व्यवहृत हुआ है। वैशम्पायन भी चरक विद्यार्थी थे और चरक संहिता के प्रनि संस्कर्ता भी चरक विद्यार्थी अनुसन्धानात्मक अध्ययन में अभिरुचि रखने वाले अधिक थे।

अध्ययन के विषय केवल अध्यात्म ही न थे, किन्तु नाट्य, संगीत, शिल्प, आयुर्वेद, पशुचिकित्सा, उद्यान कला, कृषि, काहकर्म (कारंटी) लेन-देन, ध्यापार, शास्त्र कला, शूद्रार पाक शास्त्र, आदि सभी थे। (शिल्पिन-खिन-अष्टाध्यायी, मिश्रुनटमूत्रयो अष्टाध्यायी। चारैस-चेन अष्ट-ध्यायी। दान महत्प्रदानात्मक निरुक्तान-अष्टाध्यायी)



शिक्षार्थी भी एक प्रकार के नहीं थे। इनमें भले-बुरे सभी होते थे। विद्यार्थी के लिये प्राप्त होने वाली भोजन आदि की सुविधाओं के लालच में अनेक लोग विद्यार्थी होने का ढोंग भी बनाये फिरते थे। कुछ विद्यार्थी अल्प कालीन सत्र के तथा कुछ दीर्घकालीन सत्र के होते थे। एक मास या एक बर की बीक्षा के लिये आने वाले छात्रों को मासिक ब्रह्मचारी अथवा वार्षिक ब्रह्मचारी शब्दों से सम्बोधित किया जाता था। ऋतु क्रम से वासन्तिक, वार्षिक और शारदिक छात्र भी होते थे। (तदस्य ब्रह्मचर्यम् ५-१-१४ अष्टाध्यायी)।

अध्यापक भी विविध प्रकार के होते ही थे। कुस्तिता-ध्यापकों में घूर्त भी होते थे, दारुणाध्यापक और घोर-ध्यापक भी। परन्तु अध्यापक की अयोग्यता जल्दी ही खूब जाती है। इसलिये उनकी प्रतिष्ठा गुरुओं में नहीं रहती। चरक संहिता में लिखा है कि विद्यार्थी को चाहिये कि वह पहिले आचार्य की सोच समझ कर चुने। इस सोच समझ में गुरु की परीक्षा भी होती थी। गुरु के गुणों की परीक्षा में लिखा है कि उसे उज्वल ज्ञान वाला, चतुर, बुद्धाचरण, इन्द्रियों से अविकल, दूसरे के स्वभाव की शीघ्र समझने वाला, निर्लौभ, निरहंकार, अनिन्दक, अक्रोधी, सहिष्णु तथा शिष्य को पुत्र की भांति प्रेम करने वाला होना चाहिये। (चरक, विमान ८-४)

शिक्षा की सरणि:-

(१) चरण शिक्षा तथा (२) जानपदी शिक्षा, इस प्रकार शिक्षा की दो श्रेणियाँ थीं। चरणो में बौद्धिक शिक्षाएँ, तथा जानपदी में कला-कौशल गिनी जाती हैं। (निरुक्त १-१-१६) जानपदी शिक्षा में पशु, पक्षी, वृक्ष, लता आदि की शिक्षाएँ सम्मिलित रही हैं। इन सम्पूर्ण विषयों को अध्यापन करने के लिये आचार्य, प्रवक्ता, भोत्रिय, उपाध्याय, ब्रह्मचारी, तथा चरण सस्यार्ये, परिवर्षे बाद, प्रथ्य लेखन तथा साहित्य २६ सारे साधन उपयोग में आते रहे हैं। परिवर्षे में मित्र मित्र चरणो के प्रतिनिधि विद्वान् एकत्रित होकर तत्त्व निर्णय करते थे। बाद शास्त्रार्थ शैली द्वारा पक्ष-प्रतिपक्ष के विचार से निर्णय करने का माग था। इस प्रकार विद्या प्रसार की मित्र-मित्र अनेक शैलियाँ प्रचलित रही हैं।

ब्रह्मचारी की उपनयन विधि का उल्लेख चरक

संहिता में विस्तार से दिया है। उस प्रसंग के देखने से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा संस्था में देव, ब्राह्मण, गुरु, बृद्ध, सिद्ध तथा अचार्य यह छ ध्यक्ति ज्ञान की गरिमा में प्रतिष्ठित थे। ब्रह्मचारी को इन्हें प्रणाम करना आवश्यक बताया गया है। वहाँ लिखा है कि इन सबमें भी आचार्य की प्रतिष्ठा ही अधिक है। (उपनीयतु य शिष्य वेद मध्यापयेत द्विज। सकल्प स रहस्य च तथाचार्यं प्रचेक्षते ॥ मनु० २।१४०) ब्रह्मचारी का कर्तव्य है कि वह अपने गुरु को भ्रानि की भांति पवित्र, राजा की भांति मुनासक, पिता की भांति पालक और सरक्षक मानकर ध्यवहार करे। विद्योपार्जन के तीन प्रमुख साधन भी कहे गये हैं—(१) अध्ययन, (२) अध्यापन (३) तथा तद्विद्य समाया, अर्थात् उस-उस विषय के जानकारों से वातलाप।

नित्य अग्निहोत्र, निष्काचरण, नीची शौग्या पर शयन, तथा गुरु सेवा, यह वीक्षान्त पर्यन्त ब्रह्मचारी का आवश्यक व्रत है। शिक्षा में निष्का का समावेश भारतीय शिक्षा संस्था की ही लोकोत्तर विशेषता है। मनु ने यहाँ तक लिखा है कि जो ब्रह्मचारी नित्य निष्का सांगने नहीं जाता तथा नित्य अग्निहोत्र नहीं करता उसका व्रत भंग हो जाता है। निष्का लाकर गुरु को देना चाहिये। गुरु उसमें से जो कुछ देवे वही भोजन ब्रह्मचारी को करना चाहिये।

विद्यार्थी के लिए नित्य निष्काचरण की दो प्रमुख उपयोगितायें हैं। प्रथम यह कि निष्काचरण करने वाला ध्यक्ति निरहंकार हो जाता है। दूसरी यह कि लौकिक ध्यवहार का परिज्ञान ब्रह्मचारी को होता रहता है। सामाजिक सम्पर्क से अलग रखकर विद्यार्थी को शिक्षा देना जीवन की उपयोगिता को कम करता है। न केवल इतना ही प्रयुक्त लोकध्यवहार के परिज्ञान से हीन शास्त्रज्ञ ध्यक्ति भी मूर्ख की भांति उपहास का पात्र है। आचार्य की सेवा में विधिवत विद्याध्ययन समाप्त कर बीक्षा लेने वाले स्नातक का सम्मान समाज में सर्वोच्च है। मनु ने लिखा है कि राजा के सम्मान में सबको अपना आसन छोड़कर खड़ा हो जाना चाहिए। किन्तु स्नातक के आने पर राजा का भी अपना आसन छोड़कर खड़ा होना आवश्यक है (मनु० २।१३९)।

(शेष पृष्ठ ५९ पर)

आर्यसमाज स्थापना दिवस पर—

गोरक्षा आन्दोलन-एक विवेचन

(ले०-श्री रवीन्द्र अग्निहोत्री एम ए १६ केलाबाग, बरेली)

यद्यपि यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वेवसूमि भारत में गोरक्षा आन्दोलन किस तिथि से प्रारम्भ हुआ पर यह श्रुत सत्य है कि इस आन्दोलन का शीघ्रपेश उसी दिन हो गया होगा जिस दिन किसी अनुर ने आर्य जाति की जननी के विध्वंस का विचारमात्र किया होगा। महर्षि च्यवन और मुनि दधीचि, सफ़ाद् दिलीप और गाडीवधारी अर्जुन के गोरक्षण के प्रयास और त्याग उस युग के ऐतिहासिक तथ्य हैं जो अंग्रेजी शासनकाल से आज तक अबाध रूप से चली आती हुई 'धम-निरपेक्ष शिक्षा' की मृग मरीचिका के लोभुप, अंग्रेजी का ककहरा मात्र जानते हुए भी अपने को सर्वज्ञ समझने वाले आधुनिक 'एंग्लो इन्डियन साहबों' के गले उतरता ही नहीं। तथाकथित प्रगतिशील-बैज्ञानिक विचारों के ये विद्वान् और इतिहासज्ञ इस तथ्य से इनकार न कर सकेंगे कि मुल्तान नामिन्द्रीन, बाबर, हुमायूँ, अकबर, शाह आलम और उनके वंशजों ने भारत पर अपने सात सौ वर्ष के शासन काल में यहाँ की पुरानी नीति नहीं बदली। किसी भी व्यवस्था में कोई परिवर्तन करते समय उन्होंने राजा के हित को प्राथमिकता दी। पर जिनके राजशासन कौशल का इका बजाया गया, जो धूर्तता, चातुरी, कार्यसाधुता, सदसद्विचार, पाखंड आवि विशिष्टताओं में प्रसिद्ध थे, व हैं, उन्होंने इस सम्बन्ध में ऐसी बर्बरता और अमानुषता दिखाई कि इसकी मिसाल विश्व के इतिहास में समवत दूसरी न मिलेगी। अंग्रेजी शासन से पहले यहाँ 'गोरक्षा आन्दोलन' की आवश्यकता ही नहीं थी। उस समय समाज में दो ही वर्ग थे। एक गऊ को मानुषवत् पूजनीय मानने वाला वर्ग चतुष्टयात्मक आर्यों का वर्ग, दूसरा, प्रतिपक्षी को विद्राकर उसे हानि पहुँचाने वाला, आर्यों की गायों का अपहरण कर उनको भक्षण करने वाला, पराई बहलगुनी में अपनी नाक कटाने को तत्पर दानव, राक्षस,

असुर, म्लेच्छ आवि सजाओं से अमहित बिया जाने वाला गोमलकों का वर्ग। दोनों में आत्मरक्षा के लिए सघर्ष चलता रहता था। अंग्रेजी शासन में उस झगड़े का बाह्य-रूप परिवर्तित हो गया। पहले जो गोरक्षण शस्त्र से निर्णीत होता था अंग्रेजी राज्य में उसे गोशाला, गो रक्षिणी समा, समाचार पत्र, व्याख्यान, आवेदन पत्र आदि का रूप प्राप्त हुआ और वह सामुदायिक रूप से 'गोरक्षा का आन्दोलन' कहा जाने लगा और इसके नेताओं को 'गोरक्षक' की सजा प्राप्त हुई। इस अर्थ में सर्व प्रथम 'गोरक्षक' थे विद्वच्छत पुत्र्य महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज।

सन्वत् १९३७ वि० में आगरा के प्रसिद्ध वकील श्री गिरधारीलाल जो के गृह पर 'गोकर्णानिधि' पुस्तक लिखने और 'गोकृष्यादि रक्षिणी समा' की स्थापना करने से पूर्व ही महर्षि ने अजमेर में राजस्थान के पोलिटिकल एजेंट कर्नल ब्रूक से गोबध निबंध का आग्रह किया था। यह उस समय की बात है जब महर्षि अपने सिद्धान्तों की निश्चित रूपरेखा भी तैयार नहीं कर पाए थे। श्री ५० हरिद्वन्त्र जो विद्यालकार ने महर्षि के जीवन चरित्र में इस प्रसंग को 'गोबध रूकवाने का पहला प्रयत्न' उपशीर्षक देकर पृष्ठ ५१-५२ पर लिखा है—'इस यात्रालाप में स्वामी जी ने कर्नल को यह मानने के लिए बाध्य कर दिया कि एक गो से ही अनेक मनुष्य पलते हैं और गोबध से हानि होती है।' दूसरे दिन भी पौन घटे तक बातचीत करने के पश्चात् 'गोबध से हानि स्वीकार करने पर भी कर्नल ने इतना ही किया कि गवर्नर जनरल के नाम एक छिट्टी दी और कहा कि गोबध रूकवाना मेरे अधिकार से बाहर है।'।

फिर वह 'गोबध निबंध के लिए महान् आन्दोलन' उपशीर्षक देकर पृष्ठ २६०-२६१ पर लिखते हैं—'एक

समय महर्षि का मुख्य कार्यक्रम गोरक्षा आन्दोलन था। उनके अधिकतर व्याख्यानो का विषय गोरक्षा और गोबध निषेध आन्दोलन रहा। उनका विचार था कि कम से कम तीन करोड़ व्यक्तियों के हस्ताक्षरों से गोबध निषेध का प्राथम्यपत्र साम्राज्यी विधेयोरिया की सेवा में भेजने से यह कार्य सिद्ध हो जायगा। इसके लिए महर्षि ने एक विज्ञापन गोरक्षा के लाभ और गोबध से हानिगो को बताते हुए हस्ताक्षर के लिए निषेधन पत्र सहित देश के राजा महाराजाओं, प्रत्येक आर्यसमाज व अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों एवं सत्याओ को भेजा। महर्षि के इन सारे प्रयत्नों को वृष्टिगत रखते हुए 'गोज्ञान कोष' में लिखा गया है—'उन्होंने गोकुलध्याननिधि नामक एक पुस्तक प्रकाशित की और पत्राव, राजपूताना, युक्तप्रान्त आदि प्रदेशों में अनेक गोशालाएँ स्थापित कीं। रेवाड़ी की गोशाला उनकी स्थापित की हुई गोशालाओं में से पुरानी गोशाला है। मूर्तिपूजा, पुराण आदि सम्बन्धी स्वामी जी के मत बहुजनमान्य नहीं थे इस कारण उनके प्रारम्भ किए हुए गोरक्षण कार्य का प्रसार, उनके विमूर्तिमत्त्व के विचार से जितना होना चाहिये था, उतना न हो सका। फिर भी उनके पोस्तान से लोगों के सामने एक उदाहरण उपस्थित हो गया और उत्पन्न की हुई जापति से कार्य की रूपरेखा पाकर अनेक कार्यकर्ता तथा गोरक्षोपदेशक निर्माण हो गए। अनेक नई गोशालाएँ भी स्थापित हुईं।' फर्रुखाबाद के गोमन्त सेठ मोहन लाल जी ने 'गोधम प्रकाश' नामक समाचारपत्र निकालना प्रारम्भ किया। हरद्वार में बाबा भगवानदास ने 'गोहितकारी बपत्त' खोला। भारतेन्दुहरिदचन्द्र और स्वामी भगलदेव ने 'गोरक्षा प्रकाश मजरी', 'गोपुकार चालीसी', 'पाव पंर की गाय' आदि पुस्तको तथा व्याख्यान द्वारा, स्वामी आलाराम सागर सत्यासी ने व्यापक प्रचार कार्य द्वारा, पं० जगतनारायण ने 'गोसेवक' साप्ताहिक, 'जीवदयामृत' मासिक तथा गोरक्षा सम्बन्धी २५ ३० पुस्तकों द्वारा, तथा अन्य अनेक गोमन्तों ने महर्षि के गोरक्षा के काम को आगे बढ़ाया। मथुरा में सन् १८८९ में 'देव प्रतिमावर्चकाना गोरक्षिणी समा' स्थापित हुई जो बाद में 'श्रीकृष्ण गोशाला' और 'मथुरा गोरक्षिणी समा' के रूप में परिवर्तित हो गई। प्रयाग में बि सेम्डल कमेटी आफ द काउन्सेलरियल फंड की स्थापना हुई जिसने एक प्रस्ताव द्वारा सरकार से यह मांग की कि सैनिक और असैनिक

योरोंपियनों के लिए गोमांस आस्ट्रेलिया से मगवा कर दिया जाया करे। उक्त प्रस्ताव को द्विधा रूप में परिणत कराने के उद्देश्य से जबलपुर के एक पारसी सज्जन श्री करसेट जी सोराब जी जस्तावाला कुछ वर्ष तक इंग्लैंड में जाकर रहे। उन्होंने सरकार को यह आश्वासन भी दिया कि इस कार्य में सरकार को जी घाटा होगा उसकी पूर्ति के लिए मैं उद्यत हूँ। पर अंग्रेज सरकार भारतीय पशुओं विशेष रूप से गऊ को घटाने की एक नीति निश्चित कर चुकी थी अतः उसने उक्त प्राथना अस्वीकार कर दी।

महर्षि के एक व्याख्यान की प्रशंसा करते हुए गोज्ञान कोष ने लिखा है—'यह आश्चर्य होता है कि पचास वर्ष पूर्व के उस धर्म प्रवणता के काल में भी स्वामी जी जैसा मेधावी सन्यासी उत्पन्न होकर गोरक्षण के धार्मिक महत्त्व को बनाये रखकर कृषि, ध्यापार, राजनीति, अर्थशास्त्र, भौतिक शास्त्र आदि की दृष्टि से गोरक्षण की व्यावहारिक उपयुक्तता केवल हिन्दुओं को ही नहीं, किन्तु ईसाई, मुसलमान आदि अन्य धर्मावलम्बियों को भी समझा देता है और सभी को गोरक्षण के पवित्र कार्य में उद्यत करता है। यह जगदधारी धेनुमाता की माता की महिमा है। श्री स्वामी जी का गोरक्षण सम्बन्धी गहरा व्यापक अध्ययन भी कौतुकास्पद है।'

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि महर्षि ने गोरक्षा आन्दोलन के जिस बीज का ब्यन किया था उसे उन लोगो ने भी यथाशक्ति सींचा जो महर्षि के अन्य सिद्धांतों से सहमत न होने के कारण उनके विरोधी भी थे। पर गोरक्षा का कल्पवृक्ष आज भी एक उपेक्षित कोने में खड़ा अपने माग्य पर आठ आँसू बहा रहा है। उसके जीवन में न वर्षा आई न बसत। कारण यह है कि गोहत्यारो ने जैसी जागरूकता से अपने हितों की रक्षा की, वैसी सावधानी से गोरक्षको ने अपने हितों को रक्षा भी नहीं। आइये। आज आर्यसमाज स्थापना दिवस पर हम विचार करें कि महर्षि की गोरक्षण योजना का क्या स्वरूप था जिसने विभिन्न मतावलम्बियों को भी इस पुनीत यज्ञ में आहूति देने को उद्यत कर दिया।

विचारशील पाठक इस मत से सहमत होंगे कि महर्षि का दृष्टिकोण किसी भी क्षेत्र में साम्प्रदायिक या एकदेशीय नहीं, वरन् 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भाव भावना पर आधारित विशुद्ध धार्मिक है—व्यापक या सही अर्थ में—



जिसके प्रतंगत वैयक्तिक, सामाजिक, शारीरिक, औद्योगिक, राजनीतिक, धार्मिक (प्रचलित अर्थ में), शैक्षणिक जातीय, स्त्री, पुरुष पशु विषयक सभी भेद-उपभेद आ जाते हैं। गोरक्षा की समस्या पर भी महर्षि ने अपने स्वभावा-नुरूप उक्त दृष्टिकोण से ही विचार करके कार्य की जो योजना निश्चित की उसे सूत्र रूप में हृद्य गोरक्षण, गोपालन और गोसंबद्धन-इन तीन सजाओ में समाहित कर सकते हैं। बूचड़खानों के गोसहार का चित्र जिनके अस्त-चक्षुओं के सामाने हैं वे 'मयाव रक्षणम्' के अनुसार कसाइयों की छत्री से गाय बछड़ों को बचाना ही गोरक्षण मानेंगे। पिजारापोल का नमूना जिनके सामने हैं वे अनाथ, अपग गायों और अन्य जीवों के पालन को ही गोरक्षण समझते हैं। जिनकी दृष्टि के सामने आधुनिक शास्त्रीय उपकरणों और यन्त्र सामग्रियों से सुसज्जित पश्चिमी देशों के दुग्धालय हैं उनके अनुसार यदि गोशालाओं में सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट गाय बछड़े, उत्तम नस्ल के सांड, और आदर्श गोपालन व्यवस्था जैसे आह्लाददायक दृश्य देखें पड़ें तो वही सच्चा गोरक्षण कहा जायगा। पर महर्षि के मतानुसार इन तीनों ही कार्यों की परम आवश्यकता है। एक ओर से गायों को कसाईखानों में न जाने देना और दूसरी ओर से गायों की नस्ल सुधार कर उनकी दुग्धोत्पादकता बढ़ाने का प्रयत्न करना यह महर्षि की गोकृष्य विरक्षियों सभा की योजना के मूल सिद्धान्त हैं। महर्षि के निकट गोरक्षा का प्रश्न केवल पशु रक्षा का प्रश्न नहीं, बल्कि हमारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आत्मिक, सामाजिक, धार्मिक, जातीय-सभी प्रकार के जीवन का प्रश्न है। महर्षि गोकृष्य की हमारे उक्त जीवनो में उपयोगिता को सही प्रकार समझते थे जिसका संकेत उन्होंने गोकृष्यनिधि के पृष्ठ ५ और ६ पर किया है। फिर इस योजना का विरोधी कौन होता। महर्षि के मन में एक मनोरम चित्र रहा होगा-प्रत्येक नगर और ग्राम में एक गोकृष्यादि रक्षियों सभा का, 'जिससे गो आदि पशु जहाँ तक सामर्थ्य हो बचाए जावें और उनके बचाने से दूध घी और लेनी के बढ़ने से सबको मुक्त बढ़ता रहे।' (गोकृष्य निधि पृष्ठ २) पाठक, महर्षि के दायित्व को पूरा करने के लिये अपने जातीय जीवन की बर्बाद पर विचार कर जगदगुरु दयानन्द को उस कल्पना को साकार करने का बीड़ा उठावें जिससे भूतल पर सच्चा रामराज्य उतर आए, वैदिक का आदर्श अवतरित हो जाए !

(पृष्ठ ३३ का शेष)

“मैं एक ऐसी अग्नि देखता हूँ जो सर्वव्यापक है। वह अप्रमेय प्रेम की अग्नि है। जो सर्व विद्वेय को मर्ममत्ता करने के लिये प्रज्वलित हो रही है और सर्ववस्तुओं को पवित्र करने के लिये पिघला रही है। अमेरिका के प्रशस्त क्षेत्रों, अफ्रीका के महान स्वर्ण, एशिया के पर्वतों, योरोप के विशाल राज्यों और राष्ट्रों में सर्वपावन, इस अग्नि की प्रज्वलित ज्वालाएँ मुझे दृष्टिगोचर हो रही हैं। ”

आर्यसमाज ने वेबोद्वार, समाजोद्वार के लिए बहुत कुछ किया है। संस्कृत, हिन्दी का प्रचार किया। सुद्धि का द्वार खोलकर जन्म के मुसलमान व ईसाईयों को भी सम्मिलित करने का बीड़ा उठाया।

भारत के दो टुकड़े हो जाने से आर्यसमाज के कार्य में कुछ शिथिलता आ गई है। पञ्जाब में आर्यसमाज का कार्य विस्तृत रूप से था। पापिस्थान बनने के कारण आर्य समाज की भीषण अति हुई है।

आज आयसमाज स्थापना विवक्ष के शुभ अवसर पर प्रत्येक आर्यसमाजों को महर्षि दयानन्द जी द्वारा स्थापित आर्यसमाज के सिद्धान्तों वा तन, मन, धन से प्रचार करने के लिये प्रतिज्ञा करनी चाहिये।

★

“गीता विज्ञान विवेचन”

आत्मदर्शो महात्मा द्वारा १०००) पुरस्कार प्राप्त
गीता पर अपूर्व विवेचनात्मक ग्रन्थ। दृष्टिकोण-वैदिक
प्रसिद्ध “गीतामर्म के यशस्वी लेखक
श्री कृष्णस्वरूप जी विद्यालकार
की नवीन रचना।

मूल्य ४), ४(1) डाकखर्च पृथक्।

पुस्तकालयों को १) कमीशन

पता (१) श्री भद्रपुत्र जी आर्य। मन्त्री आर्यसमाज

डा० इस्लाम नगर, जि० बदायूँ

(२) डा० लालबिहारी जी गुप्ता।

रघुनन्दनप्रसाद मार्ग

डा० जि० बरेली

प्रो० सत्यव्रत, उपकुलपति मुकुल विश्वविद्यालय की आर्यसमाजों के लिए अद्वितीय पुस्तकें

१. एकादशोपनिषद्

(धारावाही हिन्दी में सचित्र मूल सहित)

सूमिका ले०—डा० राधाकृष्णन्, राष्ट्रपति

उपनिषदों के अनेक अनुवाद हुए हैं, परन्तु प्रगुन अनुवाद सब अनुवादों से विशेष है। ऊपर मोटे मोटे अक्षरों में हिन्दी-भाषा दिया गया है, जो हिन्दी तथा संस्कृत भाग की तुलना करना चाहें उनके लिए फुटनोट में संस्कृत भाग दिया गया है। आर्यसमाजों में सतस्र के समय इस अनुवाद के पाठ से सहानुभूति कथा की जा सकती है। साधारण पढ़े लिखे लोगों तथा संस्कृत के अगाध पठितों-दोनों के लिए यह अपने ढंग का अनूठा ग्रन्थ है। इसमें एक स्थल भी ऐसा नहीं है जो साधारण हिन्दी जानने वाले को समझ न आये। ७०० पृष्ठों की कपड़े की सजिल्द तथा सचित्र पुस्तक का दाम सिर्फ बारह रुपये है।

२. आर्य-संस्कृति के मूल-तत्व

आर्यसमाज में प्रायः कहा जाता है कि समाज में उच्च कोटि का साहित्य नहीं है। प्रो० सत्यव्रत जी की पुस्तक "आर्य संस्कृति के मूल तत्व" इस कथन को पूरा कर देती है। इस ग्रन्थ में आर्य सिद्धान्तों पर दार्शनिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से हर सिद्धान्त को समझाया गया है। नवभारत टाइम्स का कथन है कि 'इस ग्रन्थ को आर्य संस्कृति का दर्शन शास्त्र कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।' आज के नव-युवकों में आर्य विचारों का संचार करने के लिए इसमें अच्छी दूसरी पुस्तक नहीं है। सजिल्द पुस्तक का दाम चार रुपये है।

३. ब्रह्मचर्य सन्देश

सूमिका ले स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानंद जी महाराज

नव युवकों को ब्रह्मचर्य जैसे नाजुक विषय पर सरल, सुन्दर भाषा में जो कुछ कहा जा सकता है इस पुस्तक में कह दिया गया है। लखनवा ५५ बमबोर लिखता है—“सबसे अधिक खोजपूज, सबसे अधिक प्रामाणिक, सबसे अधिक ज्ञातव्य विषयों से भरी हुई यही पुस्तक देखने में आई है।” अनेक नवयुवकों ने इस ग्रन्थ को पढ़कर लिखा है कि क्या ही अच्छा होता, कुछ दिन पहले यह पुस्तक मेरे हाथ पड़ जाती और मैं जीवन माग में पय-अष्ट होने से बच जाता। आर्यसमाजों का कतय है, कि इस पुस्तक को अधिक से अधिक संख्या में मगबाकर विद्यार्थियों में बाँटे ताकि उन तक ब्रह्मचर्य जैसे महान सिद्धान्त का सन्देश पहुंचे। सजिल्द पुस्तक का दाम साठ चार रुपये है।

४. स्त्रियों की स्थिति

ले—आचार्य चन्द्रावती लखनपाल, एम ए बी टी

इस पुस्तक की लेखिका को इस पुस्तक के लिखने पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद ने सर्वोत्तम लेखिका घोषित कर अखिल भारतीय संस्कृतिया पारितोषिक दिया है। यह पुस्तक पिता अपनी पुत्री को, पति अपनी पत्नी को और माई अपनी बहन को भेंट दे तो इससे बढ़कर दूसरी भेंट नहीं हो सकती। कपड़े की सजिल्द पुस्तक का दाम चार रुपये है।

इन पुस्तकों के बिना आर्यसमाजों के पुस्तकालय अधूरे हैं

मिलने का पता-विजयकृष्ण लखनपाल एण्ड क०, विद्या विहार, ४ बलबीर रोड, देहरादून (आ)

रोजगार नहीं केवल परोपकार है

(भारत के पूज्य ऋषियों के अद्भुत चमत्कार)

पर्यनाशक

बिना मारे अपनी अद्भुत शक्ति के सागो की मगा देने वाली और काटे हुए प्राणियों को मिनटों में काल के भयकर गाल से बचाने वाली महोवधि जो प्रतिवप हजारो प्राणियों के प्राण बचाती है मूल्य प्रति डिब्बा ४) २० एक दर्जन के ४५) २० ।

बिच्छ विषनाशक

बिच्छू के काटे हुए प्राणियों को सेकेण्डो में रोते और तडकने हुआ को हसा देने वाली शक्ति शाली दवा है । मूल्य प्रति शीशी १।।), एक दर्जन १५) २० ।

चित्रकट बूटी

“बमा” पुरानो खासी की अद्भुत दक्षिणाली महोवधि जो प्रत्येक “पूणमासी को भारत के कोने-कोने में तथा विदेशो में हजारो रोगी सेवन करके पुरा लाभ उठाते हैं । मूल्य प्रति पैकेट ३।।) पुरा कोर्स ३ पैकेट एक साथ मगाने से १०) २० लिये जाते है । यदि रोग अधिक पुराना हो तो ३ पैकेट सेवन करने पर जड से रोग नष्ट होगा । १२ पैकेट एक साथ मगाने से ३५।।) २० लिये जाते है । इस दवा की बी०पी०नहीं भेजी जाती है, दवा मनीआडर भेजकर मगावें ।

नोट—कार्यालय में उपरोक्त तीनों दवाएँ मुफ्त (घमथि) दी जाती है । बाहर भी संकडो धन्वान सज्जन अपने नाम से गरीबो को मुफ्त बाटने के लिये दर्जनों मगाते है । दर्जन में रिवायतो रट उ ही के लिए हैं । यह रिवायतो रेट दर्जन से कम पर लागू न होगे । प्रत्येक घर में हर समय यह दवायें रखना उचित है । न मालूम किस समय अपनी तथा दूसरो की रसा करने का पुण्य प्राप्त हो सके । दर्जन के आडर पर आधा मूल्य पेशगी आना जरूरी है । अन्यथा पासल नहीं भेजा जावेगा ।

आसाम
बगाल

दुनिया में हलचल मचा देने वाली वही अद्भुत पुस्तक
आगामी बंगाली तिलर्मा राज
या

नेपाल
भूटान

✻ खजाना-करामात ✻

जिसको हजारो प्रतिवा पहिले एडीशन ६।।।) २० मूल्य होते हुए भी हाथोहाथ छतम हो गई थी अब तीसरी बार छप कर धडाधड प्राहको के पास जा रही हैं । ऐसी पुस्तक आपने नहीं देखी होगी । यदि आपको नापसन्द हो तो ३ दिन देखकर वापिस कर सकते हैं । हम तुरन्त मूल्य लौटा देंगे, इससे बढकर और क्या सचाई होगी ।

पृष्ठ संख्या ६५० है । पुस्तक सजिव है ।

नोट—उपरोक्त तीनों औषधिया तथा आसाम बगाल के जंगलो पहाडो में महा-माओ से प्राप्त संकडो प्रकार के सतार को चकित कर देने वाले रहस्यमय प्रयोग मालम करने के लिये तुरन्त इस पुस्तक की एक प्रति मगाले अन्यथा स्टाक छतम होने पर फिर पहले की तरह पछताना होगा । आडर के साथ कम से कम २) २० पेशगी आना जरूरी है ।

डिण्टी का लडका

कलकत्ता के मशहूर बाग ‘ईडन गार्डन’ की एक सचची घटना । प्रत्येक नवयुवक को यह उप-वास जरूर पढना चाहिये, ।।।) के स्टाम्प विज्ञापन लख भेजकर तुरन्त मगा ३) २० टाक थोडा है ।

पता—गुयसाहब के० एल० शर्मा एड मन्स, (६३) “जगाधरी” (ई०पी०)



श्री सभा प्रधन जी का भ्रमण पुणेगम

१९ अप्रैल बदायूँ आ० स० बोनों समाज
२० " बिलसी "

१ मई गोंडा आय सम्मेलन
३ मई साहजहापुर की तीनों समाज
४ मई खुशगम, मीरानपुर कटरा

—ब-द्वदत्त तिवारी, सामाजिकी

मास अप्रैल के प्रोग्राम

श्री रामस्वरूप जी आर्य मुसाफिर ६ से
८ उषियानी, ११ से १३ हाथरम नवा
गम, १४ से १७ बिन्दकी, १८ से २१
कासगम।

श्री धमराजसिंहजी-६, ७ कलवारी
८-९ लालगम, १० से १३ बस्ती, १७ से
२० फर्रुखाबाद।

श्री धमदत्त जी आनन्द-१० से १४
मानवारा, १७ से २० फर्रुखाबाद।

श्री गजराजसिंह जी-९-१० दादो
१३ से १६ केराकन, २४ से २६ सरसाव

श्री खेमचन्द्र जी-८ से २५ देवरिया
श्री रघुवरदत्त जी-५ से ७ मंलानी

पद्मचान् लखीमपुर खोरी।

श्री जयपालसिंह जी-११ से १३
कोड़ा जहानाबाद, १६ से १९ म्वालटोली
कानपुर, २४ से २६ सरसावा।

महोपदेशक

श्री प० रुद्रवत्त जी शास्त्री-५ से ७
नवाबगम बरेली, ११ से १३ बस्ती, १७
से १९ म्वालटोली कानपुर, ३० से तिलह

श्री प० सत्यनिर जो शास्त्री-६ से
८ उषियानी, ९-१० लालगम, ११ से
१३ कोड़ा जहानाबाद, १५ से १७ बिन्दकी
२४ से २६ लल्लापुरा बारागसी।

—सच्चिदानन्द शास्त्री एम०ए०

स० अविष्ठाता, उपवेश विभाग

शीत कालीन भेंट

च्यवनप्राश रसायन

(अष्ट वर्ग युक्त)

ताजे आंवले व हिमालय की
ताजी दिव्य वनोषधियों से निमित्त
खासी, श्वास व फेफड़ों की कमजोरी
नाशक, उत्तम रसायन, व विटामिन
'सी' भरपूर।

स्वर्ण प्रभा

केसर, कस्तूरी, स्वर्ण, मकरध्वज
तथा शक्तिवर्धक औषधियों से निमित्त,
शरीर में शक्ति व ओज वृद्धिकारक,
विमागी ताकत से भरपूर, नवनीयन व
स्मरण शक्ति वायक, विमागी काम
करने वालों का परम मित्र व उत्तम
टानिक।

मूल्य २० गोली ५००
६० " १३५०

गैट्टेना—छट्टी मोठी इकारों का आना, गंस का उठना व अन्य
समस्त पेट के रोगों पर मेवन करे।

मूल्य ५० गोली १५०, १५० गोली ४००

अन्य समस्त आयुर्वेदिक औषधियों के लिये याव रखें। आर्डर के साथ
आधा मूल्य पेशगी भेजिये।

गुरुकुल ज्वालापुर फार्मसी हरिद्वार, सहारनपुर

वैद्यों, हकीमों

ग्राम चिकित्सकों तथा आयुर्वेदिक विद्यालयों के
विद्यार्थियों के लिये

डा० रामनाथ वर्मा लिखित

हिन्दी भाषा में एलोपैथिक विषय पर चार प्रमुख तथा
अत्युपयोगी ग्रन्थ

- | | | |
|----|---------------------------------------|-----------|
| १ | वर्मा एलोपैथिक गाइड (छटा सस्करण) | मूल्य १२) |
| २ | " " निघटु (पाचवा सस्करण) | मूल्य १२) |
| ३. | " " चिकित्सा (दूसरा सस्करण छप रहा है) | |
| ४ | " " योग रत्नाकर (पहला सस्करण) | मूल्य १६) |

मिलने का पता—

डा० रामनाथ वर्मा, मुजफ्फर नगर
मीतोलाल बनारसीदास प्रकाशक बगलौ रोड
जवाहरनगर दिल्ली

स्थापना दिवस के उपलक्ष में

एक आर्य आई ने हमें साहित्य प्रचार के लिये दान देने का वचन दिया है। दान की सहायता एक रूपया प्रति सौ के हिसाब से उन समाजों और प्रचार विधियों को भी जायगी जो पंचगंगाप्रसाद 'उपाध्याय' द्वारा लिखित ट्रैक्ट 'आर्यसमाज क्या है' की ग्यून से ग्यून एक सौ प्रतिया वितरण करेंगे। ट्रैक्ट का घटाया हुआ मूल्य ४) [बढ़िया कागज पर ५)] प्रति सौ और एक सौ पर रजिस्ट्री सहित डाक खर्च २) ६५ न० पं० है।

"उपाध्याय" जी की अंग्रेजी पुरतक "Origin & Scope of Arya Samaj" [मूल्य १।।] प्रति भी इसी उपलक्ष्य से दान दी जायगी।

यह सुविधा अप्रैल मास में ही दी जाएगी। इन्हे मनीआईर द्वारा मूल्य भेजकर मगाने में ही आपका मला है।

मंत्री ट्रैक्ट विभाग आर्यसमाज चौक इलाहाबाद

आर्य हवन सामग्री पर शुभ-सम्मति

वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री प० मदनमोहन विद्या-सागर जी हैदराबाद (आ० प्र०) लिखते हैं—

कई अन्य हवन सामग्री विक्रेताओं द्वारा बनी हवन सामग्री से मैंने श्री धर्मवीर झाडाधारी जी द्वारा निमित्त हवन सामग्री को विशेष गुणयुक्त सुगन्धित पाया। यज्ञों में इसका अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिये। ऐसी उत्तम सामग्री बनाने के लिए श्री प० धर्मवीर जी आर्यों के धर्मबाद के पात्र हैं।

न० १ मेवायुक्त हवन सामग्री का भाव ८०) मन है।

न० २ बिना मेवा की सामग्री का भाव ५०) मन है।

अधिक मगाने पर कमीशन मिलता है।

सभी नगरों में हवन सामग्री के विक्रेताओं की अवि-लम्ब आवश्यकता है। उचित कमीशन दिया जावेगा।

वेदपथिक धर्मवीर आर्य झाडाधारी

सचालक—आर्य हवन सामग्री निर्माणशाला

अहाता ठाकुरदास सराय खेला, नई दिल्ली ५

हमारी चार अनुभूत औषधियां

च्यवनप्राश

उत्तम शक्ति वर्धक रसायन है। समस्त शरीर को बल प्रदान करता है।

ब्राह्मी तैल

दिमागी शक्ति को बढ़ाता है। इसका प्रयोग प्रति दिन नियमानुसार करें।

पायाकिल

मसूढ़ों से खून व पीप आने को रोकता है। दैनिक प्रयोग के लिए उत्तम मजन है।

भीमसेनी सुरमा

आंखों में खजली व पानी निरूलने में अपूर्व गुणदायक है।

गुरुकुल कागड़ी फार्मसी, हरिद्वार

लखनऊ के सोल एजेण्ट—श्री एस० एस० महता एण्ड कं०, २०-२१ श्रीराम रोड।

आगामी उत्सव

वेदिक साधन आश्रम-तपोवन, देहरा-
दून मे १९ अप्रैल (रविवार) से २६
अप्रैल (रविवार) १९६४ तबनुवार ७
बंशाख से १४ बंशाख सबत २०२१ तक
२५००० आहुतियों का गायत्री महायज्ञ,
योगसाधना-शिविर तथा मत्सग, श्री
महात्मा आनन्दस्वामी सरस्वती महाराज
जी की अध्यक्षता में होगा ।

—आर्यसमाज रक्सौल (चम्पारण)

का ३९ वा वार्षिकोत्सव १२, १३, १४
अप्रैल १९६४, रवि, सोम, मंगलवार को
समारीहपूर्वक मनाया जायगा ।

—आर्यसमाज बलनपुर (सारण)

का १० वा वार्षिक महोत्सव ता० २७
अप्रैल से ३० अप्रैल तक बड़े धूमधाम से
मनाया जायेगा उस अवसर पर आर्यजगत
के बड़े बड़े धुरन्धर विद्वान पधार रहे हैं ।

—कन्याओं की धार्मिक एव आधु-
निक शिक्षा के केन्द्र कन्या गुरुकुल हरि-
द्वार कानल का ३० वा वार्षिकोत्सव
१२ मे १५ अप्रैल तक सारी समारोह
सहित मनाया जायेगा ।

—आर्यसमाज जौनपुर का ६२ वा
वार्षिकोत्सव दि० १७ से २० अप्रैल तक
मनाया जायेगा इस अवसर पर स्वामी
प्रणवानन्द जी महाराज कुदाके प्रकाश
विद्वान् श्री प विद्यामिक्षु जी एम ए एल.
टी, श्री कुवर मुखलाल जी आर्य मुसा-
फिर, श्री रामजी प्रसाद जी गुप्त आर्य
मिक्षु तथा नन्दलाल जी महिपालसिंह जी
आदि पधार रहे हे । —मन्त्री

—आर्यवर्तनिधि समा वाराणसी
का वार्षिक निर्वाचन दिनक १२ अप्रैल
१९६४ ई० रविवार सायंकाल ४ बजे
आर्यसमाज जौनपुरा मे होगा । सभा मन्त्री
श्री गंगा प्रसाद जी आय सूचिन करते
हैं कि प्रत्येक समाज अपने प्रतिनिधि को
प्रतिनिधि फाम वार्षिक शुल्क सहित
निश्चत समय पर भेजकर कार्य में सह-
योग प्रदान करे ।

उत्सवों की सफलता के लिए आ०प्र०स० से प्राप्त कीजिए

सुयोग्य विद्वान्; शास्त्रार्थ महारथी व्याख्याता
तथा संगीतज्ञ प्रचारकों को

महोपदेशक:—

मजनोपदेशक.—

- | | |
|---|---------------------------|
| १ श्री प० रुद्रवत्तजी शास्त्री विद्यामास्कर | १ श्री प० रामस्वरूपजी |
| शास्त्रार्थ महारथी | आर्यमुसाफिर |
| २ ,, सत्यमित्रजी शास्त्री व्याकरणाचार्य | २ ,, प० धर्मवत्तजी आनन्द |
| शास्त्रार्थ महारथी | ३ ,, डा० गजराजसिंह जी |
| | ४ ,, डा० धर्मराजसिंह जी |
| ३ ,, रामनारायणजी विद्यार्थी | ५ ,, प० रघुवरदत्तजी शर्मा |
| ४ ,, राम निवासजी शास्त्री | ६ ,, प० क्षेमचन्द्र जी |

चिमटा-मण्डली को याद करें ।

श्री कु० वीरेन्द्र जी वीर “धनुर्धर” की सेवायें सभा मे प्राप्त
हो गई हैं ।

सचिवबानन्द शास्त्री एम० ए०

स० अचिष्टाता

चारो वेद भाष्य, स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ
तथा

आर्यसमाज की समस्त पुस्तको का

एक मात्र प्राप्ति स्थान—

आर्य साहित्य मण्डल लि०

श्रीनगर रोड, अजमेर

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या
वाचस्पति आदि परीक्षायें मंडल के तत्वावधान मे प्रतिवर्ष होती हैं । इन परी-
क्षाओं की समस्त पुस्तकें अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहां से
भी मिलती हैं ।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थो का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं
की पाठविधि मुफ्त मगावें

विश्वविख्यात प्रो. सुरेन्द्र शुक्ल

[आधुनिक अर्जुन]



श्री प्रो० सुरेन्द्र शुक्ल

विशिष्ट प्रदर्शनों की सूची

धनुर्विद्या तथा राइफल शूटिंग के अनेको आदर्शजनक लक्ष्य भेद, छाती पर हाथी की छडा करना, दो चालू मोटरो को एक साथ रोकना हाथी बाधने की सोकल तोडना, भारी से भारी पत्थर छाती पर रलकर तुडवाना, आभी सूत मोटी तावे की वाली की कागज की तरह हाथो से चीर डालना, आठ मनुष्यो से अकेले रस्साकसो, हवय एच नाडी की गति रोकना आदि-आदि ।

पता—प्रो० सुरेन्द्र शुक्ल [आधुनिक अर्जुन]
शक्ति-निवास, सीतापुर

सफेद दाग का मुफ्त इलाज

विद्वानो ने सच कहा है कि परिश्रम का फल बेकार नहीं जाता है । हमने सतत परिश्रम के बाव शिष्य नाशक आयुर्वेदिक दवा तैयार की है, जो कि सफेद दाग से अपूर्व लाभ पहुंचती है । प्रचारार्थ एक हजार रोगियों को एक फायल दवा मुफ्त भेजी जायगी ।

श्री लाखन फार्मसी न० ११० पो० लालबिगहा (गया) ।

सूचना आर्यवीर दल

मीरजापुर जिला के समस्त आर्य समाजो तथा आर्यवीर दलों के मन्त्री व प्रधानो से निवेदन है कि २० अप्रैल सोमवार समय ४ बजे शाम से रामनवमी के अवसर पर 'शिवशकरी मेले' मे आर्य समाज के पडाल मे 'जिला आर्यवीर दल सम्मेलन' विराट पैमान पर श्री अवध-विहारी जी खन्ना स० सचालक के समा-पतित्व मे किया जा रहा है । अत प्रत्येक समाज से ५-५ प्रतिनिधि व दल से भी भाग लेने की कृपा करें । इसके पूब १२ बजे से श्री महानन्दसिंह व श्री विश्राम-सिंह का भजन होगा ।

सुयोग्य वर की आवश्यकता

एम०ए०, 'साहित्य रत्न', 'प्रनाकर', 'सरस्वती' आदि परीक्षोत्तीण, एक प्रतिष्ठित आय परिवार की २२ वर्षीया ब्राह्मण कन्या के लिए सुयोग्य वर की आवश्यकता है । कन्या 'बी०एड०'-परीक्षा की तयारी कर रही है । उसके पिता विद्वान् गुरुकुल स्नातक है । पत्र व्यवहार का पता—

१७-11-१२-१५

—'साहित्य'

द्वारा 'आय मित्र'

५, मीराबाई माग, लखनऊ

सफेद दाग

परिश्रम एवं खोजने के बाव सफेद दाग की ओषधि का निर्माण किया गया है । हजारो ने इसका अनुभव करके लाभ उठाया है । रोग के विवरण के साथ पत्र व्यवहार करें । प्रचार के लिए १५ दिन की दवा मुफ्त । १२-११-१३

(अ म) श्रीकृष्ण वैद्य

पो० कतरी सराय (गया)



आर्य अग्रवाल वैश्य वर की आवश्यकता

एक अग्रवाल वैश्य आर्य कन्या जो सम्पूर्ण विधियों में बी०ए० पास तथा प्रभाकर उतीर्ण है, उनके जिसे प्रेजुएट आर्य वर की आवश्यकता है। कन्या सुन्दर स्वस्थ तथा सौम्य और गृह कार्यों में दक्ष है। पत्रव्यवहार नीचे लिखे पते पर करें।

द्वारा आचार्य विश्वभवा व्यास एम०ए० गुरुकुल
११९ गौतम नगर, नई दिल्ली १६

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१ ऋग्वेदसुबोध भाष्य—मधु छन्दा, मेधातियो, गुन शेष कण्व)

परागौतम, हिरण्य गर्भ, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १६) डाक व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)—सुबोध भाष्य। मू०

७) डाक व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी मू० २)

अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक-व्यय ६)

उपनिषद् भाष्य—ईश २), केन ॥), कठ १॥) प्रश्न १॥) मुण्डक १॥)

शाङ्ख्य ॥), ऐतरेय ॥)। सबका डाक व्यय २)।

श्रीमद्भगवद्गीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य १२॥) डाक-व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ-सह्या ६९०

मूल्य १२ डाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण माघान्तकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा-क्षतार जी विद्याभास्कर, रतनगढ़ जि० बिजनौर। भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है यह सब जानते हैं। व्याख्याकार भी हिन्दी जगत में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र। इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन भारत भर में और घर-घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए इसको आज ही मगाइये।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किरला पारडी, जिला सूरत

आवश्यकता

कन्या गुरुकुल देहरादून की १० श्रेणी तक शिक्षा प्राप्त १८ वर्षोंवा एक स्वस्थ सुयोग्य एवं सुन्दर कन्या के लिए लग-नग २२ वर्षों (इष्टर वा बी० ए० व गुरुकुल का स्नातक) लड़के की आवश्यकता है। लड़का आर्यसमाजो विचार का तथा वैश्य मात्र में होना आवश्यक है।

पत्र व्यवहार का पता —

विद्याभास्कर भास्त्री

२ धामावाला बाजार, देहरादून

आवश्यकता

आवश्यकता है, एक सुयोग्य, सुशिक्षित, स्वस्थ, स्वावलम्बी, सरकारी सचिव, साहूबे जायदाद ३५ वर्षों का ह्युण विधुर की, एक सुन्दर, स्वस्थ तथा गृह कार्य में दक्ष ब्राह्मण महिला की। १६-१२-१४

—के०एल० शर्मा

द्वारा "आर्य मित्र"

५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ

सफेद दाग

भारत सरकारसे रजिस्टर्ड

पाने शरीर पर निकलने वाले सफेद चट्टे

ववा मूल्य ६) विवरण मुफ्त मगावें

एक्विमा

(इसब, उकबत, क्षर्बुवा)

ववा का मूल्य ६) रु०

दमा श्वास

पर परीक्षित ववा मूल्य ६ रु०) बंध के.आर जोरकर आयुर्वेद मखन बो मगकलीपर, जि अकोला (महाराष्ट्र) (आर्य)

युवाशक्ति को लाइये

(श्री ईश्वरबबालु जी आर्य, मुख्य उपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश)



लेखक

प्रत्येक सस्था में तीन प्रकार के कार्यकर्ता हुआ करते हैं, प्राचीन (बुद्ध) वर्तमान और नबागन्तुक। जिस समाज या सगठन में यह धारा प्रवाहित होती रहती है, वह सदैव आगे बढ़ता और जीवित रहता है। आर्यसमाज के प्रारम्भिक इतिहास का जिन महापुरुषों ने निर्माण किया उनको अधिकांश शक्ति अपने समय की बुराइयों को दूर करने के साथ साथ आगे के लिए अपने स्थानापन्न तय्यार करने में लगी रही। आर्यसमाज की सस्थाय नई पीढ़ी को तय्यार करने के केन्द्र बने, परन्तु आज हम इस बिशा में उदासीनता अनुभव करते हैं। आर्य शिक्षा-पस्थायें हमारे ब्यक्तिगत सामाजिक गौरव का साधन अधिक हैं। आर्यसमाज प्रचार में सहायक कम होने का यही कारण है कि आर्य समाज में युवक वर्ग का अभाव बढ़ता जा रहा है। प्रत्येक सगठन अपना एक युवक समुदाय तय्यार करती है, चाहे कांग्रेस हो या कोई अन्य सभा परन्तु आर्यसमाज में इस ओर उदासीनता क्यों है, यह विचारणीय प्रश्न है। मैं आर्यजगत के सम्मुख विनम्र अभ्यथना करना चाहता हूँ कि आर्यसमाज के युवक आन्दोलन को पुनर्गठित और सशक्त बनाने में अपनी शक्ति लगा दीजिये। आर्यसमाज स्थापना के ८९वें दिवस पर हम सब मिलकर यह सकल्प करें कि हम नई पीढ़ी को आर्यसमाज का उत्तरदायित्व सौंपने का दायित्व पूरा करेंगे। यदि इस बिशा में हम सच्चे हैं तो हमें अपने परिवारों के बालको, युवको को आर्यसमाज में लाने का यत्न करना चाहिये। आर्यकुमार परिषद् के ध्यावहारिकरूप को महत्व देकर हम अपनी शिक्षा-सस्थाओं में सगठित युवा शक्ति को आर्यसमाज की ओर ला सकते हैं। आवश्यकता है स्नेह और लगन के साथ युवा-वर्ग से सम्पर्क स्थापित करने की। आशा है स्थापना दिवस से आर्यजन इस बिशा में प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

आर्य वीर दल समाचार—

—पूर्वोत्तर प्रदेशीय आर्यवीर दल केन्द्र वाराणसी के अधीनस्थ समस्त उप सचालको, मण्डलपतियों की सूचित किया जाता है कि आगामी गर्मी को छुट्टी के अवसर पर के लिये ध्यापक कार्यक्रम की योजनायें बनाई गई हैं। आप अपने क्षेत्रों के कर्मठ कार्यकर्ताओं की सूची केन्द्र को शीघ्र भेजें तथा समय बान देने वाले वीरों की सूची भेजें जिससे उनके समय का सतुषयोग बल कार्य के लिये किया जा सके।

२—पूर्वोत्तर-प्रदेश केन्द्र वाराणसी के सचालक श्री अवधबिहारी कृष्ण ने अपने अधीनस्थ निम्नलिखित तीनों क्षेत्रों के लिये तीन उप-सचालकों को नियुक्त किया। आर्यवीर दल उत्तर-प्रदेश केन्द्र वाराणसी उप सचालक श्री

बेचनसिंह, गाजीपुर केन्द्र श्री प्रभदयाल आय तथा जौनपुर केन्द्र श्री मुन्नीलाल। उप सचालको से निवेदन है कि अधीनस्थ मण्डलों के मण्डलपतियों की नियुक्ति शीघ्र करते हुए उसको सूची केन्द्र को शीघ्र भेजें।

३—पूर्वोत्तर प्रदेशीय आर्यवीर दल केन्द्र वाराणसी को कार्य समिति की सदस्यों की आवश्यक बैठक २६ ४-६४ को आर्यसमाज मन्दिर लल्लापुरा वाराणसी में दोपहर २ बजे से केन्द्र के सचालक श्री अवधबिहारी कृष्ण की अध्यक्षता में होगी। समस्त उपसचालक एवं मण्डलपति अपने-अपने क्षेत्रों की विवरण पत्रिका शीघ्र केन्द्र को भेजें, तथा बैठक में उपस्थित होकर कार्य सम्पादन में योग्य हों।

—उत्सामान्त मन्त्री

पूर्वोत्तर प्रदेशीय आर्यवीर दल केन्द्र वाराणसी
कार्यसिद्ध—ती ३३/३०३ बिछापीठ रोड वाराणसी २

आर्यसमाज और हिन्दी

(से०-श्री साहू हरप्रसाद जी कोषाध्यक्ष, आर्य प्रतिनिधि समा, उत्तरप्रदेश)

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जन्म गुजरात प्रान्त में हुआ था, जिसके कारण उनकी मातृभाषा गुजराती थी। जब वह पढ़ लिख कर निष्ठात हुए, और उन्होंने सारे देश का दौरा किया तो उन्हें अनुभव हुआ कि सारे देश में एक हिन्दी भाषा ही ऐसी है, जो सर्वत्र बोली और समझी जाती है। इसलिए उन्होंने हिन्दी बोलना और लिखना प्रारम्भ कर दिया।

ऋषि ने अपना सम्पूर्ण साहित्य हिन्दी में ही लिखा जिससे जन साधारण लाभ उठा सकें। ऋषि दयानन्द के हिन्दी प्रचार को उनके सस्थापित आर्य समाज ने अपने ऊपर लिया, और आर्यसमाज के विद्वानों ने अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दी में लिखे, और प्रकाशित किये।

दयानन्द कालिज और हिन्दी

१ जून १८८६ को ऋषि दयानन्द की स्मृति में दयानन्द एन्को बैंगिक कालिज लाहौर में खोला गया तो उसके उद्देश्यों व नियमों के अन्दर यह भी अंकित है कि इस कालिज का उद्देश्य संस्कृत व हिन्दी भाषा की वृद्धि करना, प्रसार करना और प्रचार करना है।

आर्यसमाज ने शिक्षा क्षेत्र में उतर कर हजारों कन्या पाठशालाएँ, डी ए बी स्कूल, डी ए बी कालिज आदि खोल कर हिन्दी को गौरवान्वित किया। अग्रजों के समय में ही मुश्किलों की स्थापना हुई, और इनमें से जो स्नातक निकले, उन्होंने हिन्दी साहित्य मण्डार की भी वृद्धि की।

पंजाब में उर्दू का बोलबाला था, मगर पंजाबी आर्य नेताओं ने भी हिन्दी की भी वृद्धि के लिए अनेक प्रयत्न-

नीय कार्य किये। पंजाब के आर्य विद्वानों ने बड़ा उच्च-कोटि का आर्य साहित्य देश को दिया। महात्मा श्रद्धानन्द जी महाराज अपना अखबार सद्बर्म्म प्रचारक उर्दू में निकालते थे, परन्तु फिर उन्होंने उसे भी हिन्दी में निकालना प्रारम्भ कर दिया, पंजाब के बैंगिक मिलाप, प्रताप आदि अखबार जो उर्दू में निकलते थे, वे भी हिन्दी में निकलने लगे।

देश की आर्य प्रतिनिधि समाजों ने भी सर्वत्र से अपना सारा काम हिन्दी में ही किया, और उनके द्वारा हिन्दी का बड़ा प्रचार और प्रसार हुआ। आयमित्र ने तो अपने जीवन के ६५ वर्ष हिन्दी सेवा में ही लगा दिये। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों और विद्वानों में अधिकतर ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त ही हैं। इस तरह हिन्दी के उत्थान का श्रेय अधिकतर आर्यसमाज को ही है।



ऋषि दयानन्द वचनमृत

दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं कि काश्मीर से कन्या कुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रयोग और प्रचार होगा। मैंने आर्यावर्त भर में भाषा का ऐक्य सपादन करने के लिए ही अपने सकल ग्रन्थ आर्य भाषा में लिखे और प्रकाशित किए हैं।

आवश्यकता है

आर्य हायर सेकेण्डरी स्कूल पानीपत के लिये एक ट्रेड शास्त्री की आवश्यकता है। आर्यसमाज के सिद्धान्तों को मानने वाले तथा प्रवक्ता को प्राथमिकता दी जावेगी। प्रार्थना-पत्र २० अप्रैल तक मैनेजर के नाम आ जाना चाहिये।

वेद के प्रति कर्तव्य



[श्री आचार्य विश्वभवा जी, दिल्ली]

ऋषि का दृढ़ विश्वास था कि यह ससार जो दुखी है इसकी रक्षा वेदज्ञ ही कर सकता है। वेद विमुख ससार दुखी होता है वेदानुसारी ससार सुखी होता है। पर वह विद्वान् साधारण न हो। बहुत बड़ा विद्वान ही यह काम कर सकता है। विद्वानों के दो काम हैं वे उपदेश द्वारा ससार को समझावें और अध्यापन द्वारा ससार को माधी सन्तान को तैयार करें जिनका नाम ऋषि ने अपने वेदमाध्य में अध्यापक और उपदेशक रखा है ससार को बनाने और बिगाड़ने वाले ये ही वो होते हैं।

१—आप कुशिक्षा देकर छात्र वर्ग का विभाग खराब कर बीजिये जैसा अग्नेजो ने किया, मंकाले ने किया और—
२—गलत चीज का प्रचार जनता में करिये जैसे सप्रदाय वालों ने किया।

(बस ससार का नाश अवश्यम्भावी है)

१—आप अध्यापन द्वारा फिर उस कुशिक्षा को दूर कीजिये।

२—सही प्रचार जनता में कीजिये।

(बस ससार का सुधार अवश्यम्भावी है)

परन्तु ये अध्यापक और उपदेशक साधारण योग्यता के नहीं बहुत उच्चकोटि के हों।

ऋषि की लेखनी के अन्तिम शब्द

मर्हा है बहुत बड़ा साहित्य ससार को दिया। वेद

❀ ऋषि गान ❀

न जाना कभी वेद का ज्ञान क्या है ।
कि है धर्म क्या और ईमान क्या है ॥
कभी पेड़ पौधों को सर जा झुकाया ।
कभी कब्र पर जाय दीपक जलाया ।
कभी मूर्ति के सामने भोग लाया ।
न समझा कभी यह कि पाषाण क्या है ॥
प्रयाग द्वारिका और हरिद्वार काशी ।
फिरा घूमता बन के मुक्ति का पिपासी ।
न जाना कहां पर है घट-घट निवासी ।
न समझा कि सर्वज्ञ भगवान क्या है ॥
किसी के छुये धर्म बिगडा हमारा ।
किसी को अछूत सूद्र कह कर पुकारा ।
मनुज से किया या मनुज ने किनारा ।
न मन में ये समझा कि इन्सान है ॥
कहीं पर गऊ बश की चोत्कारें ।

अनाथ और अबला कहीं पर बहाड़े ।

कहीं मातृ शक्ति तिरस्कृत पुकारे ।

न समझा कि नारी का स्थान क्या है ॥

ग्रह चाल नक्षत्र का ताप भारी ।

बता लूट उगते थे पड़े पुजारी ।

कहीं भूत प्रेतादिकों की बीमारी ।

न समझा कि मृतों का आस्थान क्या है ॥

सुभग वेद ज्योति बुझी जा रही थी ।

धनी पोप लीला बढ़ी जा रही थी ।

ऋषि ने कहा आके जेतो मुजनवर ।

सही पथ से भ्रान्ति ब्यवधान क्या है ॥

हिलाया सकल सम्प्रदायों मतो को ।

लगे दूड़ने धर्म सब सत्पथों को ।

लगे तर्क में मांगने मान्यतायें ।

हिले बाइबिल कुरां औ पुराण क्या हैं ॥

दिए जो कि सकेत ऋषिराज ने हैं ।

प्रचारित किये आर्यसमाज ने हैं ।

बला आज शासन उन्हीं के सहारे ।

अधिक और गौरव का परिमाण क्या है ॥

—धर्मन्द्रनाथ अलिन्द

हल्द्वी, बिजनीर

नारी समाज आर्य जीवन की सत्प्रेरणा ले

(ले०—अक्षयकुमारी शास्त्री, आचार्या कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हायरस)

विश्व हितैषी महर्षि वयानन्द महाराज ने मानव जाति के समुदाय के लिये नारी जाति को सम्मान दिलाने का जो आन्दोलन किया था उसके लिये नारी-समाज उनका सदैव आभारी रहेगा। महर्षि के विचारानुसार आर्य सम्प्रदाय ने स्त्री-शिक्षा और नारी सम्मान के लिये ध्यापक आन्दोलन किया, भारत के महिला-जागरण की प्रमुख भूमिका आर्यसमाज द्वारा ही लिखी गई। बाल विवाह का निषेध, विधवाओं का संरक्षण और उनको समाज में उचित स्थान दिलाना, कन्याओं की शिक्षा के लिये स्थान स्थान पर कन्या पाठशालाओं की स्थापना, वेदाधिकार, पर्दा प्रथा का विरोध, दहेज दानव का बलन, जाति भेद का उन्मूलन आदि ऐसे कार्य हैं जिनमें आर्यसमाज ने राष्ट्र का पथ-प्रदर्शन किया और राष्ट्र की प्रसुप्त नारी शक्ति को विदेशी दासता के विशुद्ध बलवती शक्ति सेना के रूप में प्रस्तुत कर दिया। आज नारी अपने सम्मानपूर्ण पद को प्राप्त कर चुकी है परन्तु आर्यसमाज का कार्य अभी बहुत बाकी है। मैं आर्य महिलाओं से अपेक्षित करूँगी कि वे आर्यसमाज स्थापना दिवस के सुअवसर पर गम्भीर चिन्तन करें कि क्या आज जागृति और समानता के नाम पर नारी जिस पथ पर पग बढ़ा रही है उससे स्वयं नारी का अहित नहीं हो रहा, क्या नारी की वर्तमान फँसना मानव, पश्चिम का अन्धानुकरण नारी समाज के नैतिक विकास में बाधक नहीं बन रहा, क्या इस प्रकार अनजाने ही नारी फिर मानव की बिलास मानवमायों का शिकार नहीं हो रही, समाज में सम्मान से रहने का जो सम्बल महर्षि और आर्य समाज ने हमें दिया था क्या उससे हम दूर नहीं जा रहीं, क्या उसका अन्तिम परिणाम नारी का पुनः पतन और बलन ही न होगा। नारी को भावी पतन की सम्भावनाओं से बचाने का दायित्व पुनः आर्यसमाज पर आ पड़ा है। यदि आर्य महिलाएँ और आर्यजन आये हुए सकट को समझ लें तो



लेखिका

बहुत कुछ हो सकता है। हमें दूर न जाकर सबसे पहले अपने घरों की देखना होगा, हमारी लड़कियाँ, बधुएँ और बहनें जिस रूप-रंग, देश-भूषा में रह रही हैं वह कहा तक शालीनता, नारी सुलभ-लज्जा और नारी गौरव की रक्षा में सहायक है। यदि हम अपने परिवारों में और अपने-समाज में अपेक्षित सुधार ला सकें तो नारी जाति की महती सेवा होगी। आर्यसमाज स्थापना - दिवस के अवसर पर मैं अपनी बहनों से यह प्रेरणा लेने का अनुरोध करूँगी कि वे आर्य जीवन के आवश्यों को समझें और स्वयं बँसा बनें और अपने समाज को उसके अनुसार बनायें।

माध्य करते करते महर्षि की लिखाई अन्तिम पक्षिया, जिसके बाद कुछ नहीं लिखाया, पढ़ो। ऋषि के जीवन का अन्तिम उपदेश ध्यान देकर सुनो। अध्यापकों और उपदेशकों को सम्बोधन करते हुये ऋषि लिखते हैं कि मित्र और बहन प्राण और उदान के समान वर्तमान अध्यापक और उपदेशकों सुनो—

हे विद्वानों जो बहुत काल पर्यन्त ब्रह्मचर्य से शास्त्रों को

पढ़ता है वही बुद्धिमान होकर सब मनुष्यों की रक्षा करने में समर्थ होता है। —महर्षि माध्य भाषार्थ ऋ०७-६१-२

मुक्ति में जाते हुये महर्षि के लिखे-लिखाये ये अन्तिम शब्द हैं। इसके उपरान्त महर्षि ने कुछ नहीं लिखाया। अतः वेद का कार्य करके ऋषि की भावना के प्रति श्रद्धा-जलि अर्पित करनी चाहिये।

आर्यसमाज और यज्ञ

(ले०—श्री प० रामप्रसाद जो मेडू अस्तरंग सबस्य आर्य प्र० समा उ प्र)

ऋषि दयानन्द के प्रादुर्भाव से पूर्व भारत की दशा बयनीय थी। यहाँ अनेक प्रकार के मतमत्तान्तर फैले हुए थे। अज्ञान अंधिष्ठा का बोल बाला था। वेद विद्या विलुप्त हो गई थी। लोग वेदों का नाम झूल गए थे। ऋषि दयानन्द ने ससार का ध्यान वेदों की ओर आकर्षित किया और वेदों का सरल और सुबोध माध्य करके आर्य जाति का वेदों में श्रद्धा और विश्वास पैदा किया, जिसके कारण लोगों की दृष्टि वेद पढ़ने की ओर हुई। आर्यसमाज के बिद्वानों ने भी जहाँ चारों वेदों के माध्य किये, वहाँ वेदों के मन्त्रों के छोटे छोटे सम्करण प्रकाशित करके घर घर में पहुँचाये। इसका परिणाम यह हुआ कि आर्य जाति का ध्यान यज्ञों को ओर गया और जगह-जगह यज्ञ होने लगे। आर्यों को तो नित्यप्रति यज्ञ करना अनिवार्य कर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि यज्ञ की महत्ता का ज्ञान जनसाधारण को ही गया और यज्ञों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हुई। आज सारे देश में अनेक स्थानों पर प्रतिवर्ष बड़े-बड़े विशाल यज्ञ होते हैं, जिनसे जन समाज का कल्याण तो होता ही है, पर इसके प्रभाव से अनेक सक्ामक रोगों का विनाश हो जाता है। यज्ञ से वायु शुद्ध होती है और वायु की शुद्धता से अनेक रोग दूर होते हैं इसलिए प्रत्येक आर्य को नियमित रूप से प्रति दिन यज्ञ करना चाहिए। इससे अपना ही लाभ नहीं है, इससे पर उपकार भी है। दैनिक यज्ञ करने वाले को शान्ति प्राप्त होती है। उसका मन सात्विक विचारों से परिपूर्ण रहता है। इसलिए अगर शान्ति लाभ चाहते हो तो प्रतिदिन यज्ञ करने की प्रवृत्ति को जिए और यज्ञ करना प्रारम्भ कर दीजिए।

प्रत्येक आर्य के जीवन में यज्ञ को महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिये। महर्षि दयानन्द जी महाराज ने इसी नीति से यज्ञ-मेधायति विधि का निर्माण कर हमारा



लेखक

पथ-प्रदर्शन किया। आर्यसमाज के पुराने लोगों में यज्ञ कर्मकाण्ड भाव की ओर जो श्रद्धा और रूचि थी, उसका आज अभाव दिखाई पड़ता है। जब हम अपने सब कार्यों को महत्व देते हैं तब ब्रह्मयज्ञ और देवयज्ञ की उपेक्षा क्यों करें। हम चाहते हैं कि सारे विश्व में वेदमन्त्रों की ध्वनि गूँज उठे, 'ऋष्यन्तो विश्वमाय्यमं' साकार हो उठे, परन्तु यह स्वप्न पहले घर में साकार होना चाहिए। आर्यसमाज स्थापना-विकास हमें अपनी कमियाँ देखने और आगे बढ़ने की प्रेरणा देने आया है। आशा है आर्यजन अपने यज्ञप्रतिष्ठा स्मरण करेंगे और उसके पालन की प्रतिष्ठा कर आर्य भावना का परिचय देंगे।

आर्यसमाज—एक विश्व संगठन

हम देखते हैं कि आर्यसमाज को व्यापक रूप से सगठित करने का विचार जैसा उसकी स्थापना के समय व्यक्त किया गया था, महर्षि के पदचात् मुख्य विचारणीय विषय बन गया।

यद्यपि इस विचार को सफलता बेर में मिल सकी परन्तु इसका यह परिणाम अवश्य हुआ कि देश के जिन प्रान्तों में आर्यसमाजों की संख्या बढ़ने लगी उन प्रान्तों में आर्यसमाजों ने मिलकर आर्य प्रतिनिधि समाजों की स्थापना करनी आरम्भ कर दी।

१८८६ में पंजाब और पश्चिमोत्तर प्रदेश व अवध (वर्तमान उत्तर प्रदेश) में आर्य प्रतिनिधि समाजों की स्थापनाएँ हो गईं और दोनों प्रान्तों में व्यापक रूप से प्रचार का कार्य आरम्भ हो गया। आर्यसमाजों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी।

१८८८ में अजमेर राजस्थान व मालवा आर्य प्रतिनिधि समाज की स्थापना हुई।

१८९९ में बिहार तथा बंगाल की संयुक्त आय प्रतिनिधि समाज की स्थापना हुई।

१८८९ में मध्य प्रदेश आर्य प्रतिनिधि समाज की स्थापना हुई।

१९०२ में बम्बई आर्य प्रतिनिधि समाज की स्थापना हुई।

इस प्रकार भारत के सभी प्रमुख प्रान्तों में १९०२ तक आर्य प्रतिनिधि समाजों की स्थापनाएँ हो चुकी थीं, परन्तु अभी तक भी आर्यसमाज का केन्द्रीय संगठन नहीं बन सका, माननीय रानाडे का प्रस्ताव अभी तक सावनात्मक एकता का एक शुभ संकल्प ही बना रहा।

१९०० ई० में भारत धर्म महामण्डल के दिल्ली उत्सव में उपस्थित आर्यजनों ने इस विषय पर विचार हुआ था, पर ६ सदस्यों की एक अनौपचारिक समिति बनने से अधिक कार्यवाही न हो सकी। समिति की समय-समय पर अनेक बैठकें होती रहीं। नियमों के अनेक प्रारूप बने और रह होते रहे। १९०८ के आरम्भ में इस विषय में कुछ निश्चयात्मक कार्य हुआ और सितम्बर १९०८ में आगरा

के हाँग की मण्डी आर्यसमाज में एक कन्वेंशन में आर्यवर्तीय सार्वदेशिक समाज की स्थापना की विधिवत् घोषणा कर दी गई। इस घोषणा के फलस्वरूप आर्यजगत् में सगठनात्मक एकता की भावना को व्यावहारिक रूप मिला। इस घोषणानुसार आर्य प्रतिनिधि समाजों के प्रतिनिधियों का प्रथम अधिवेशन ३१ अगस्त १९०९ ई० को देहली में सम्पन्न हुआ। २५ अगस्त १९१४ को सार्वदेशिक समाज की विधिवत् रजिस्ट्री करा ली गई।

इस प्रकार आर्यसमाज के संगठन में केन्द्रीकरण का जो अभाव चला आ रहा था उसकी समाप्ति हो गई और आर्यजगत् में एक संगठन के रूप में विकसित होने की भावना बलवती होने लगी। प्रान्तीय समाज अपने प्रान्तों में प्रचार कार्य को आगे बढ़ाने लगीं और सार्वदेशिक समाज ने उन क्षेत्रों की ओर ध्यान देना आरम्भ किया जहाँ अभी तक आर्यसमाज स्थापित नहीं हुए थे।

सार्वदेशिक समाज की स्थापना के पश्चात् १९१९ में सिन्ध प्रान्त में आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य उसके नियमों में स्पष्ट घोषित है। सत्कार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, यह घोषणा करते महर्षि बयानन्द ने आर्यसमाज के सदस्यों पर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी सौंप दी। यह जिम्मेदारी कैसे पूर्ण हो इसके लिए आर्यसमाज के व्यापक संगठन की रूपरेखा तैयार की गई। आरम्भ में महर्षि बयानन्द जहाँ-जहाँ प्रचारार्थ पहुँचते वहाँ उनके श्रद्धालु मत्स्य-जन आर्यसमाज की स्थापना कर उनके कार्य को आगे बढ़ाने का सकल्प ग्रहण करते इस प्रकार महर्षि के जीवन-काल में ही देश के विभिन्न प्रान्तों और प्रमुख नगरों में आर्यसमाज स्थापित हो चुके थे और सभी आर्यजन हृदय से चाहते थे कि आर्यसमाज का सर्वेश्वर देश-विदेश में फैल जाय।

महर्षि बयानन्द ने १८७५ में आर्यसमाज की जो रूपरेखा घोषित की थी उसकी तीसरी धारा इस प्रकार थी—

“इस समाज में प्रत्येक देश के मन्थ एक प्रधान समाज

होगा और अन्य समाज शाखा-प्रशाखा होंगे।”

इस धारा के शब्दों में महर्षि के भाव स्पष्ट हैं कि वे आर्यसमाज का व्यापक सगठन करना और देखना चाहते थे।

महर्षि के निधन समय तक (१८८३ के अन्त तक) ७९ आर्यसमाजों देश में स्थापित हो चुकी थीं (आर्य समाचार मेरठ)।

महर्षि की मृत्यु के पश्चात् अजमेर में वि० ८३ में परोपकारियों समा की बैठक हुई। इस बैठक में समा के सदस्य श्री प० महादेव गोविन्द रानाडे ने एक प्रस्ताव किया कि—

“आर्यसमाजों को आपस में और परोपकारियों के साथ अधिक समीप लाने के उद्देश्य से एक आर्य प्रतिनिधि समा का सगठन होना चाहिए। जब तक इस प्रकार की समा न बने तब तक परोपकारियों के समासद् ही जो कि आर्यसमाज के भी सदस्य हैं प्रतिनिधि मान लिये जाएँ। जब प्रतिनिधि समा बन जाय तब परोपकारियों में जो जगहे खाली हो, ऐसे ढग पर भरती जायें कि परोपकारियों में कम से कम आधे प्रतिनिधि समा के सदस्य मुकरर हो जायें।”

इसी प्रकार १८८४ में बम्बई आर्यसमाज के उपप्रधान श्री सेवक लाल कृष्णदास की ओर से सब आर्यसमाजों को एक परिपत्र भेजकर प्रार्थना की गई थी कि “सब आर्यसमाजों को परस्पर परिचय तथा सहायता के लिए एक शृंखला में बंध जाना चाहिये। इस कार्य के लिये यह उचित प्रतीत होता है कि एक प्रधान आर्यसमाज बनाया जाय, जिसमें सब आर्यसमाजों के प्रतिनिधि सम्मिलित हों। प्रधान समाज की नियमावली में सम्पूर्ण देश को एक ही प्रान्त मानकर उसकी प्रतिनिधि समा सगठित करने का सुझाव था।”

आर्य प्रतिनिधि समा का सगठन हुआ जिससे उस क्षेत्र में वैदिक धर्म प्रचार का कार्य आगे बढ़ सका, इसी समा के सहयोग से लिम्ब में सत्यार्थप्रकाश-रत्ना आन्दोलन भी चलाया गया था।

इसी प्रकार १९३१ में हैदराबाद निजाम के राज्य में आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ाने के लिये हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि समा की स्थापना हुई। १९३७-३८ में

सत्यवक्ता महर्षि दयानन्द

ऋषियर से कहा इन्दुमणि होकर योगी अवधूत देव ।
 लण्डन-मण्डन के झण्डन में हो महाराज । क्यों ध्यय पडे ।।
 ऋषियर बोले लण्डन-मण्डन ये तुमने झसट माना है ।
 पर, मैने यह जनता के हित अति ही श्रेयस्कर जाना है ।।
 इसके द्वारा जन-जन को सत्यासत्य विवेक कराना है ।
 इसके ही द्वारा ऋषियों का ऋण मुझे अवश्य चुकाना है ।।
 ऋषियों की सन्तति बुरी तरह है कुरीतियों में फसी हुई ।
 सत् के प्रकाश दूर असत् अघ अन्धकार में फसी हुई ।।
 लखके इनकी यह हीन दशा अत्यन्त विकल मन होता है ।
 मैं अशु बहाता हूँ, सारा जग जब निद्रा में सोता है ।।
 मैं सतपथ दिखा क्यों न इनके जीवन में शान्ति सुधा घोलूँ ।
 खल स्वार्थी प्रपचियों की मैं निर्भय हो क्यों न पोल खोलूँ ।।
 दूग कर्ण जीम होते कैसे ? मैं अग्धा, बधिर, मूक हो लूँ ।
 गुरु ने मुझको सद्ज्ञान दिया, फिर क्यों ना सत्य-सत्य बोलूँ ।।

—प्रकाशचन्द्र कविरत्न, अजमेर

इसी समा के सहयोग से सार्वदेशिक समा ने हैदराबाद में सत्याग्रह कर धर्मयुद्ध में विजय प्राप्त की थी, हैदराबाद को स्वतन्त्र भारत का अंग बनाने में भी वहा की आर्य प्रतिनिधि समा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

१९३० में बिहार में आर्यसमाज के प्रचार को आगे बढ़ाने की दृष्टि से बंगाल को समा से पृथक् बिहार आर्य प्रतिनिधि समा का निर्माण कर दिया गया, उधर आसाम में प्रचार कार्य को आगे बढ़ाने की दृष्टि से बंगाल समा के क्षेत्र में आसाम प्रान्त भी सम्मिलित कर दिया गया।

इस प्रकार भारत के सभी प्रमुख प्रान्तों में आर्य प्रतिनिधि समाओं के सगठन बन जाने और उनसे निर्मित सार्वदेशिक समा के द्वारा आर्यसमाज का सगठन एक स्थायी एव व्यापक महत्व का सगठन बन गया।

सार्वदेशिक समा ने १९२५ में महर्षि दयानन्द जन्म शताब्दी का मधुरा में समारोहपूर्वक आयोजन किया

ब्रिटेनले आर्य जगत् ही नहीं सारे भारत मे महर्षि एष ब्रैविक धर्म की महत्ता को बल प्रान्त हुआ । १९३३ मे लन्दनमे मे ऋषि निर्वाण अर्य शताब्दी का आयोजन किया गया । १९५९ मे महर्षि बयानन्द बोझा शताब्दी समारोह मुम्बई मे आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश के तत्त्वाधान से आयोजित हुआ । भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने समारोह मे पधार कर महर्षि को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की और पुष बिरजानन्द स्मारक का शिलान्यास किया । १९६१ मे साबैदेशिक समा की स्वर्ण जयन्ती देहली में मनाई गई इस प्रकार आर्यसमाज समठन केन्द्रीय रूप मे विचरित होठा रहा है ।

साबैदेशिक समा ने भारत के उन क्षेत्रों में जहां आर्य सम्प्रदाय नहीं था ध्यम्य देना आरम्भ किया और मद्रास, बंगलौर आदि में प्रचारक भेजे तथा आर्यसमाजों की स्थापना की। मद्रास क्षेत्र मे मोपला-विद्रोह के समय आर्यसमाज ने साम्प्रदायिक उन्मास से हिन्दुओं की रक्षा की ।

भारत से बाहर विदेशो मे भी जहां-जहां आर्यसमाज पहुंचते रहे आर्यसमाज समठन की मानना मूजती रही ।

मारीशस—मारीशस में १८९६ मे ही आर्यसमाज के स्वल्प पढ़क चुके थे और अनेक स्थानों पर आर्यसमाजों की स्थापना होने लगी । १९२७ में मारीशस आर्य प्रतिनिधि समा स्थापित हो गई ।

पूर्वीय अफ्रीका—१९२० मे पूर्वी अफ्रीका आर्य प्रतिनिधि स्थापित हुई जजीबार, वारस्सलाम, मुम्बासा, नैरोबी, किम्बुतु, कम्पाला समाजों ने इसकी स्थापना में विशेष योग दिया ।

दक्षिण अफ्रीका—१९२५ मे जन्म शताब्दी के अवसर पर उपस्थित दक्षिण अफ्रीकी आर्य बन्धुओं मे दक्षिण अफ्रीका आर्य प्रतिनिधि समा स्थापना की घोषणा की और सन् २७ में यह साबैदेशिक समा से सम्बद्ध हो गई ।

ब्रह्मदेश—बर्मा का क्षेत्र भारत का ही अंग था पर बाद मे पुषक कर दिया गया ब्रह्मा भी आर्यजनों ने ब्रह्मदेश आर्य प्रतिनिधि समा की स्थापना कर ली और प्रचार कार्य आगे बढ़ाया ।

कम्बोडिया—१९२५ की जन्म शताब्दी से पूर्ण ही ब्रह्मदेश

में आर्यसमाज की स्थापना हो चुकी थी। जन्म शताब्दी के बाद १९२८ मे वहां आर्यसमाज भवन का निर्माण कर लिया गया ।

फ़ीजी—फ़ीजी मे भारतीयों की संख्या बहुत अधिक थी। आर्यसमाज के विचारों का प्रचार करने के लिये भारत से अनेक प्रचारक जाते रहे वहां भी आर्य प्रतिनिधि समा की स्थापना हो गई और उसका कार्य सुचारु रूप से चरु रहूँ है ।

बंकोक और सिंगापुर—पाइलैण्ड मे बंकोक नगर मे उत्तर प्रदेश के आर्यजनों ने आर्यसमाज की स्थापना कर वहां ब्रैविक धर्म प्रचार की आगे बढ़ाया । सिंगापुर मे भी आर्यसमाज स्थापित है और कार्य बड़े उत्साह के साथ हो रहा है ।

इंग्लैण्ड—इंग्लैण्ड का भारत के साथ जो सम्बन्ध रहा उसके कारण भारतीय वहां बहुत जाते रहे जिनमे आर्यसमाजो भी थे । श्याम जी कृष्ण बर्मा, बैरिस्टर रोशनलाल और चिरजीव मारद्वज आदि ने लन्दन नगर मे "आर्यसमाज" स्थापना मे विशेष योग दिया । इस समय भी उर्ध्व्वर्ध्व जो इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं । अभी तक आर्यसमाज का वहां अपना कोई भवन नहीं है जिसकी पूर्ति अशिलम्ब होनी चाहिये ।

ब्रिटिश गायना—इस क्षेत्र मे भी आर्यसमाज स्थापित हैं और अच्छा कार्य कर रही हैं ।

अमेरिका—अमेरिका के श्री डा० मार्स ने न्यूयार्क मे ब्रैविक सोसाइटी की स्थापना की है और आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दे रहे हैं ।

इस प्रकार १८७५ मे जिस आर्यसमाज समठन की नींव महर्षि बयानन्द ने बसनी थी । आज एक विश्वव्यापी समठन बन चुका है । "कृष्णन्तो विश्वमार्यम्" के आदर्श की पूर्ति के लिए हमे अभी बहुत कुछ करना है। आर्यसमाज स्थापना-विकास का ८५वां वर्ष हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रहा है। क्या हमलूँ विकास समठन की दिशा में अपने कर्तव्य का पालन करेंगे। विश्व का विस्तृत क्षेत्र ब्रैविक धर्म के अमृत सन्देश के लिये हमारी प्रतीक्षा कर रहा है ।

आर्यसमाज स्थापना दिवस १३ अप्रैल ६४

कार्यक्रम

आर्यसमाज का स्थापना दिवस आर्यसमाज के स्वीकृत पर्वों में से एक माना जाता है। सावदेशिक समाज के निश्चयानुसार इस वर यह पर्व १३-४-६४ को मनाया जाएगा।

★ प्रातःकाल रामो, कस्तूरी और नगरी में प्रभात फेरी हो जिसमें पर्यटन किया जाय कि सनस्त आर्य नर नारी और आर्यसमाज से प्रेम रखने वाले इतर जन बहुसंख्या में सम्मिलित हो और यह विशाल और भव्य रूप ग्रहण करें।

★ प्रातः मध्याह्न या सायंकाल सुविधानुसार आर्य मन्दिरों इत्यादि में सार्वजनिक सभाओं की जावें। मना का कार्यक्रम आरम्भ करने से पूर्व मना स्थल पर वृद्ध यज्ञ किया जाय। स्थापना-दिवस के उपलक्ष्य में प्रत्येक आर्य परिवार में प्रातः यज्ञोपरात ओंसे ध्वजारोहण होना चाहिए। समाज में वेद मन्त्रों का पाठ प्रवचन और ध्यास्थान हो। नव्युत्थात आर्यसमाज स्थापना दिवस की स्मृति में आर्यसमाज स्थापना के इतिहास, आर्यसमाज के लक्ष्य और उसकी उपयोगिता, अब तक के प्रमुख कार्य, सावजनिक सेवाओं, सस्थाओं और समाज के कार्य-क्रम पर निबन्ध पाठ तथा मावणादि क्रिये जावें। देण, काल और परिस्थिति के अनुसार पुरोगम उचित समय ले।

स्मरण रहे कि सावजनिक सभाओं में आर्यसमाज की महिमा और उसकी आवश्यकता पर ही बल दिया जाय। ऋटियों के बणन का स्थान अन्तरङ्ग समाज से बाहर कहीं नहीं। यह बात आपके ध्यान से ओक्षण न होने पावे।

★ इस दिन प्रत्येक आर्य परिवार अपने घरों में दीपमाला करें। ओंसे ध्वज प्रत्येक घर तथा समाज मन्दिर पर लहराया जाना आवश्यक है। इसी दिन आर्यसमाज मन्दिरों और सस्थाओं में भो रोगनी की जाए।

★ इस दिन की सार्वजनिक सभा में सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि समाज की वेद-प्रचार-निधि के लिए अधिक से अधिक धन संग्रह करके सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि समाज दयानन्द मठन (रामलीला मंडान) नई दिल्ली १ के पते पर मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सुरक्षित भेज दें जिससे समाज देश विदेश में वैदिक धर्म के प्रचार कार्य का अधिकाधिक विस्तार कर सके। सब प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि समाजों की सहमति से समाज में गत कई वर्गों से निश्चय किया हुआ है कि आर्य समाज स्थापना दिवस के पवित्र पर्व के उपलक्ष्य में प्रत्येक आर्यसमाज अपने समाजसेवा से, उत्तर परित्तारों के प्रत्येक ध्यक्ति में और प्रत्येक आर्य अंगों से पुष्कल धन एकत्र करके समाज की वेद प्रचार निधि के लिए भेजे। सावदेशिक समाज की अन्तरङ्ग समाज में प्रत्येक परिवार से कम से कम २ २० प्रातः करने का आदेश दिया है तथा इस धन को ऐच्छिक न समझा जाय। आर्य नर-नारी इसे धर्म रक्षा कर समझे।

★ यह भी यत्न किया जाय कि उस दिन निकटवर्ती स्थानों में जहाँ आर्यसमाज नहीं है बहुसंख्या में आर्यसमाज स्थापित किए जावें और आर्य सदस्यों की संख्या बढ़ाई जाय।

★ इसी दिन प्रत्येक आर्य एवं आर्य समाज आत्म-निरीक्षण करे और देखे कि उनके वैयक्तिक एवं सामाजिक आचरण से आर्यसमाज का गौरव बढ़ा है या नहीं और आर्यसमाज के कार्य विस्तार में उसका कोई योगदान रहा है या नहीं। यदि इनमें कोई ऋति रही है तो उनके सुचारु और प्रगति को आर्यसमाज के लिए अधिकाधिक उपयोगी बनाने का यत्न लेना चाहिए।

दयानन्द मठन (रामलीला मंडान)

नई दिल्ली-१

रामगोपाल

मन्त्री

सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि समाज

आर्यसमाज के नियम

- १—सब सत्य-विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि-मूल परमेश्वर है ।
- २—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान, ग्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अन्वय सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वांगीर्यामी, अजर, अमर, अमय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है । उमी की उपासना करनी योग्य है ।
- ३—वेद सब सत्य-विद्याओं की पुस्तक है । वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आयों का परम धर्म है ।
- ४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सदा उद्यत रहना चाहिए ।
- ५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को बिचार के करना चाहिए ।
- ६—सत्कार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है । अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।
- ७—सबसे प्रीति पूवक धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए ।
- ८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए ।
- ९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।
- १०—सब मनुष्यों को सामाजिक, सबहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें ।

आर्य जीवन आचार संहिता

पांच यम—

तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्याऽपरिग्रहा यथा

- १—अहिंसा—मन, बचन, कर्म से किसी को दुःख न देना ।
- २—सत्य—मन, बचन, कर्म से सत्य का व्यवहार करना ।
- ३—अस्तेय—मन, बचन, कर्म से चोरी का त्याग करना ।
- ४—ब्रह्मचर्य—अष्टमैश्वर्य से बचना, ऋतुचर्या का पालन करना ।
- ५—अपरिग्रह—आयपूर्वक भोग मोलुपता व अन्याय से किसी वस्तु की इच्छा न करना ।

शौच सतीष तप स्वाध्याय ईश्वर प्राणिधानानि नियमा—

- १—शौच—शरीर, मन, आत्मा, तथा बुद्धि शुद्ध रखना ।
- २—सतीष—धर्म और परिश्रम से प्राप्त में प्रमत्त रहना ।
- ३—तप—धर्माचरण में मज्जुट प्री सहन करना, निरय कर्मों का नियम पूवक पालन करना ।
- ४—स्वाध्याय—वेद, उपनिषदादि आय ग्रन्थों का अध्ययन व मनन करना ।
- ५—ईश्वर प्राणिधान—ईश्वर शक्ति (सर्वत्र ईश्वर के अरण) करना ।

साप्ताहिक आर्यामित्र ऋषि-निर्वाण अङ्क

अध्वेनिक मन्पावक उमेडाचन्द्र स्नातक एम० ए०

मूल्य ५० पैसे

वर्ष
६८

कलकत्ता रविवार कार्तिक १५ २२ अंक १८८८ कार्तिक कृ० ८ ३० वि० २०२३
१ १३ मन्बर सन १९६६ ई०, बयानन्दाब्द १६२ सखि सवत १ ९७ २९ ४९ ०६७

अङ्क
४२-४३



दीपावली ज्योतिर्गान



जली विवाली दयानन्द की, जग म उभोनि जगाने को
मैतिक नित्य निनाद वेदो का, नील गगन गुजधाने को

अन्याय अमाव अज्ञान अमा का, अवसित हुआ अधरा
दिष्य विवाकर को किरणो से उगा स्वण सवेरा

प्रखर प्रकाश चल चढा अकाश विव विगद्विगत चमकाने को
विहस उठा बंधव्य निकल, सज सुनी मार्गें सिद्धरी
मंदमाव की मिटो माधना, अरु अन्तस को दूरी

चला पुजारी परम प्रम का, प्रियतम पाठ पढ़ाने को
पालण्ड खण्डनी गदी पताका, देव गगन धरया
बरा धसी पालण्ड डोग की, गुरुडम का गढ़ डाय

अकाठय प्रमाणप्रलयकर शकर, धृतियो के चला सुनाने को
अधिष्णुते बह ब्रह्मचर्य का श्रेयस्कर स-यासी
क्षमा के अधिदेवना से, हुई धरा धयासी

प्रशरिन पय का पविक मीन वा, माटी मे मिल जाने को
बाबशं अनुपम आस्तिपय का, अ-निम क्षण दर्शया
शानुऊचय से मृत्युञ्जय वन, मन्द मन्द मुसकाया

प्रभु की इच्छा पूरी करने, बडा परम पर पाने को
प्रबल प्रवर्तक आर्य भाषा का, गौमाता की गरिमा
सत्यप्रकाश में गाई जिसने, प्रथम स्वदेशी महिमा

बची लेखनी ललित लाल की भ्रम का भूत नगाने की
बड़े बेग से बड़ रही है, मारी अष्टाचारी
अमर शान्ति के कान्तिभूत हे, गरल पान के प्रेम दुजारी

मृदु स्मृति मे चला है मोहन, अडा सुमन चढ़ाने को

-मदनमोहन एडवोकेट, मोठ [झांसी]



सम्पादकीय

हम अपना अल्प-निरीक्षण करें

जैसे वीपक की प्रमा से अमा की तमसावृत वृत्त रजनी आलोकित हो उठती है, भारत की अन्धकार रात्रि में महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन की तपस्या और उत्सर्ग से जो ज्योति प्रज्वलित की उसी का प्रकाश हमें स्वाधीनता का गौरव प्रदान कर सका, महात्मा गांधी ने स्वयं स्वीकार किया कि देशोन्मत्ति के जो कार्य महर्षि ने आरम्भ किये थे, मैं उन्हें जो आगे बढ़ा रहा हूँ। ऐसी स्थिति में दिव्य दयानन्द की ज्योति के आलोक का महत्व हम मली-नाति अनुभव कर सकते हैं। बीपावली के अवसर पर महर्षि निर्वाण का स्मरण हमें इस बात की प्रेरणा देता है कि हम महर्षि के सन्देश पर विचार करें और उसे अपने और समाज के जीवन में लाने का यत्न करें।

महर्षि के सम्मुख सत्सार उपकार की महान् भावना थी, वे सत्सार को अज्ञानता के उत्पीडन से मुक्त कराना चाहते थे, वे भारत और विश्व के समस्त जागड़ों का मूल अज्ञानता को मानते थे, और इसीलिये उन्होंने ज्ञान के ज्वहार बेदों की ओर सत्सार को लौटने की प्रेरणा दी। महर्षि ने वेद प्रचार का जो कार्य आरम्भ किया था उसकी पूर्ति का दायित्व आधुनिक समाज पर था और है। आज महर्षि निर्वाण के अवसर पर हमें गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिये कि वेद-प्रचार का हमने कितना कार्य किया है, और अभी क्या एव कंसे करना शेष है।

महर्षि ने देश में शिक्षा, अस्पृश्यता निवारण, महिला जागरण, स्वदेशी, स्वभाषा, स्वसम्पत्ता एव सस्कृति का प्रचार किया उन सब कार्यों में हम बहुत कुछ आगे बढ़े, परन्तु स्वाधीनता के पश्चात् राष्ट्र और विश्व की समस्याओं ने हमें अपना कार्यक्रम नवीन रूप से निर्धारित करने की प्रेरणा दी है। उन समस्याओं के समाधान के लिये महर्षि की दृष्टि ही हमारी सहायक बन सकती है।

भारतीय जीवन में से अनतिक्रमता और भ्रष्टाचार निवारण के लिये महर्षि की निर्भीकता एव विवेकशीलता से हमें काम लेना होगा। देश की राजनीति में जो

उच्छृङ्खलता और सत्तावाद सव्याप्त हो रहा है, उसके निवारणार्थ अज्ञानियों के मताधिकार के स्थान पर हमें महर्षि के योग्यतावादी दृष्टिकोण को महत्व देना होगा, राष्ट्र के जीवन में व्याप्त असंतोष, धृपा और द्वेष के निवारणार्थ हमें आस्तिक विचारधारा का प्रचार करना होगा, बिद्व की सत्रस्त मानवता को शांति का सन्देश देने के लिये हमें महर्षि के वेद-सन्देश का प्रचार करना होगा।

इन सब कार्यों के लिये आवश्यक है कि दयानन्द के धीर सैनिक आज अपना आत्म निरीक्षण करें और आत्मा की शुद्धि कर उत्साह के साथ महर्षि सन्देश प्रचार का सकल्प बुझावें।

महर्षि ने अपनी जीवन ज्योति से जो प्रकाश हमें दिया है मानवता उसके लिये सदैव ऋणी रहेंगे।

महर्षि के चरणों में नत सस्तक भ्रष्टाजलि।

—सनातक

आर्यजगत् का महान् उत्सव

आकर्षक कार्यक्रम एव गम्भीर सम्मेलन

महात्मा नारायण स्वाधी जन्म

शत, वृद्धी ममारोड

विसम्बर के अन्तिम सप्ताह में शुद्धुल विश्वविद्यालय
बृन्वावन (मयुरा) में आयोजित।

आर्यजम अधिकाधिक सस्था में पहुँचने
का निश्चय करें

—नरदेव सनातक ससद सदस्य

सयोजक

सार्वदेशिक महात्मा नारायण स्वाधी

जन्म शताब्दी समारोह समिति

आवश्यक सूचना

राष्ट्रियज्जु के पश्चात् का अज्जु जो बन्द रहता था, इस वर्ष बन्द नहीं होगा। अगला अज्जु २०-११-६६ का गोरक्षा-अज्जु होगा।

—सन्प्रवस तिथारी

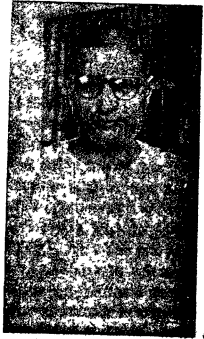
अधिष्ठाता आर्य मित्र व समामनी



आर्थ नेता गोरक्षा सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेने को तय्यार



श्री आनन्दमिस्त्रु जी महाराज
श्री ओ३म प्रकाश त्यागी जी
सेनापति आर्यवीर बल



श्री प० प्रशांतवीर जी साहनी सतद सदस्य
उप प्रधान आ प्र० सभा उत्तर प्रदेश व सांबदेशिक सभा

सांबदेशिक सभा की गोरक्षा आन्दोलन समिति के तत्वावधान में गोरक्षा सत्याग्रह के उद्ये त यार है। सैनिक ने सत्याग्रह की घोषणा कर बी आरसमाजो से सत्याग्रही पहचाने लगे। सांबदेशिक सभा से अनुमति लेकर अधिकाधिक सत्या में दिल्ली पहुंचे।

श्री निचुमुंमार जार र्शा उपनयन सभा

जगा गये दीप

[कवि-कस्तूरचन्द "धनसार" आर्यसमाज पीपाठ शहर]

(इन्द्रविजय छन्द)

मान प्रकाश बड़े सुखदा जब, वैदिक-दीप दयामन्द जोये।
दूर हठी बुद्ध-यामनि थी जिसमें सब मानव जीवन छोये !!
मान लिये अघकार प्रकाश सभी भ्रम में जग के जन सोये।
आज अक्षण्ड दिपालि रही घन सार-विचार, सुदीप संजोये।!

[१]

दीप जले घर के निन अन्दर, है जितना उतना हि प्रकाशे।
कायम सो न रहे फिर भी दूक-आवत वात, सुदीप बिनाशे।!
और न दीप, दिपालि रहे नित, चार घड़ी सुख-त्रेम बिकासे।
वैदिक-बोध, प्रकाश मुजोमित, भारत में अति से प्रिय भासे।!

[२]

दीप अक्षण्ड बुसा करके तुम, एक अनित्य प्रकाश बतावे।
माति न आज सुहाति नहीं मन-मन्दिर, बीच प्रकाश न आवे।!
आकर काम भला न किया असमजस में पडके पछतावे।
पूज्य बही ऋषि लोप, हुए इस-कारण दीप-दिपालि न भावे।!

[३]

चाहत है इस कारण से पर-लोक गये ऋषि, स्वागत कीने।
लेकर दीप-प्रकाश खडी तुम, दर्शन पाय सुधारस पीने !!
शान्ति समं, धुप, हाजर होकर, दीपति-दीप जला सब बीने।
योगि बही दूब-योग सजाकर, आनन्द-नारग के पय लीने।!

[४]

वेत्र रहा गुच्छत खडा ऋषि, ओम उचारत पांश बढ़ाया।
वित्य-काश, हुआ मुल ऊपर, देख रहे मन में घबराया।!
नास्तिक, का वह आस्तिक होकर, पूरब का सब नेव बिलाया।
दीप जलाय गये मन-मन्दिर, बस, सुखी 'धनसार' जमाया।!

[५]



अ(ओ) ! आत्म-निरीक्षण करें !



(श्री विद्याधर जी प्रधान आयोपप्रतिनिधि समा कानपुर)

आज हीपावलि है। आज ही के दिन तो महर्षि ने शरीर त्याग किया था, यह कहते हुए "परमात्मा, तू ने विचित्र श्ला की। तेरी इच्छा पूण हो। उनके इन शब्दों में उनका सारा जीवन झाक रहा था। जिनके मूल में शंकर मानव मात्र के कल्याण की भावना थी, शुद्ध भ्रंतय ब्रह्मचारी ने कालांतर मे नुस विरजानन्द बण्डी से श्री प्रकाश प्राप्त किया, उस को दया करके सब को आगन्धित करन के निमित्त प्रसारित कर दिया। मानव को ऐसी दिव्य दृष्टि दी कि वह परम पिता परमात्मा के काण्य को समझ सकने मे समथ हो सके।

विचारशील मामव सज्ञस होकर, श्रद्धा पूर्वक बड़ा, आगे सब सत्य विद्याओं की पुस्तक-वेद की जीर। उसे उप-वेश मिला "वेद का पढ़ना और सुनना तो आवश्यक है ही पढ़ना और सुनना परम धम है" और ऐसा अनुष्ठान करके ही "प्रियो देवाना दक्षिणार्थं वातुरिह मूयासमय मे काम समुध्यतामुप मावो नमतु ॥ (यजु अ० २६ म० २) वह बेबो का दक्षिणा देने वालो का प्रिय हो सकने की कामना को, पूण कर सकेगा।

इस प्रयास मे हम अनी किंचित गतिशील ही हुए थे, प्रगतिशील नी नहीं कि नियम पालन द्वारा अजित महती शक्ति के साथ मुड गये, शिक्षा-प्रसार, समाज-सुधार, देशोद्धार की ओर चारों ओर से स्वागत हुआ, इस देशीय-मान ज्योति का विरोध नी हुआ, राजा का ओर से नी भीतर प्रजा से नी, अपने और परायो से नी किन्तु हमे तो प्राप्त हुआ था अमल उस सत्या-वेधी महर्षि के द्वारा। हम सबका सामना करने हुए, अपनी वेदाकित धंजयन्ती कहराते आगे चले।

वेद की कल्याणी वाणी का द्वार सबके लिये खुल गया। प्रचलित दीपको से असह्य दीपक प्रदीप्त हो उठे। ससार चमत्कृत हुआ। विचार-विमर्श हुये, शास्त्रार्थ हुए। मत मना-तरो के विद्वानों ने अपनी - अपनी मांय इलहामी पुस्तकों की

ब्याख्या, उनके माध्य, नूतन विधि से प्रस्तुत किये। चारों ओर छाये हुए अन्ध विश्वास, अनार्य साहित्य, अवैदिक मन्तव्यो एव आचरणो के घने बावल छिन्न भिन्न हो गये। वेद प्रचार, शिक्षा प्रसार, हिन्दो प्रचार, स्वदेश एवं स्वदेशी वस्तुप्रेम, छूत-छात का लण्डन वाल एव बुद्ध विवाह का विरोध, मातृ शक्ति की जापूति और शिक्षा चरित्रनिर्माण आदि सम्बन्धी जो कार्य—क्रम आर्यसमाज की वेदी से प्रारम्भ हुए थे आज सबने ही एक स्वर से अपना लिये हैं, इसलिये, अब यह नितान्त आवश्यक है कि हम अपने परम धर्म—वेद का पढ़ना, पढ़ाना, सुनना-सुनाना के अनुष्ठान की ओर, जिसकी हम एक प्रकार से उपेक्षा करने आये हैं, अधिक सक्रिय हों। परम पिता परमात्मा हमारा माग प्रशस्त करे।

सुधार का आधार

[रचयिता—श्री राजा रणजयसिंह जी एम०पी० अमैठी राज्य]

(१)

वेश बशा वेष्ट दु ख होता है अपार आज,

फैली अराजकता है, घटा सदाचार है।

ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ का बोल बाला है चारों ओर
घोर भ्रष्टाचार, अनाचार का प्रसार है।

(२)

ऐसी परिस्थिति में 'रणजय' है करना क्या ?

साहस आवश्यक है, करना सुधार है।

स्वामी दयानन्द के शिक्षाये वेद पथ पर

चलना तदर्थ अब केवल आधार है ॥१॥



महर्षि की प्रेरणा—

गुरुकुल आन्दोलन

(श्री नरदेव जी स्नातक समूह सदस्य, मु० अविष्ठाता गु० वि० वि० वावावन)



महर्षि दयानन्द ने भारतीय पराधीनता की भीमसा करके यह अनुभव कर लिया था कि इसका कारण देश में सञ्चालित शिक्षा है। ब्रिटेनी शासन ने अपनी शिक्षा का दुर्बित प्रचार कर भारतीय मानस को गौरवहीन बनाने का षडयन्त्र किया था। महर्षि ने उस षडयन्त्र का सामना करने के लिये गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के पुनरुज्जीवन का प्रयत्न किया। आर्यसमाज ने महर्षि के इस आन्दोलन को सान्सार रूप दिया और स्थान-स्थान पर गुरुकुल खोले। गुरुकुलों ने राष्ट्रीय जागरण में जो योग दिया वह भारतीय इतिहास में स्मरणीय रहेगा। आज देश के सम्मुख सबसे बड़ी समस्या, जितना-पनस्य है। छात्रों की अनुशानन ही रता गुरु शिष्य व्यवहार में असीम्यता- समाज में आदर्श नागरिका का अभाव, अनैतिकता अन्धकार, स्वदेश-स्वभावा एवम् स्व सस्कृति के प्रति अनास्था आदि ऐसी अनेकी बानें हैं। जिनका शिक्षा प्रणाली से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

है, और यही वृष्टि सारी समस्याओं को जड़ है। इस दृष्टि का निराकरण गुरुकुल के शांत एव आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सम्भव हो सकती है।

महर्षि दयानन्द की निर्वाण स्मृति में आज हमें उनके का को पूरा करने का व्रत दुहराना है। मेरी दृष्टि में गुरुकुल आन्दोलन को सफल और सफल बनाना हमारा सक्लप होना चाहिये। यदि गुरुकुल आन्दोलन सफल हो गया तो हम महर्षि के स्वप्नों का भारत ही नहीं विषय निर्माण करने में सफल हो सकेंगे।

× ×

यदि हम चाहते हैं कि देश की इन समस्याओं का शीघ्र और समुचित समाधान हो तो हमें गुरुकुल प्रणाली को अपनाना होगा। भारत के सूतपून राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद, राष्ट्रपति राजकृष्णन सू० पू० शिक्षा मन्त्री श्री मार्लि आदि जनों ने इस प्रणाली की उपयोगिता को सत्य स्वरूप पर स्वीकार किया है। गुरुकुल पद्धति में कुछ ऐसे आदर्श पक्ष हैं, जिन्हें जीवन की उन्नति से विशेष सम्बन्ध है। गुरुकुल के वातावरण में गुरु-शिष्य सम्बन्धों में जो पवित्रता आ जाती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। जीवन में सावगी, अनुशासन और आध्यात्मिकता आदि ऐसे आदर्श हैं जिनकी समाज को अन्वयिक आवश्यकता है। अधुनिक शिक्षा प्रणाली भौतिकतावाद से प्रभावित है इसी कारण जीवन की सांग्ताथे भौतिकतावादी होती जा रही

उत्तर प्रदेश की आर्यसमाजों गोरक्षा आन्दोलन को सफल बनावें

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की अन्तरग सभा वि० ६-११-६६ की बैठक में गोरक्षा आन्दोलन की स्थिति एष प्रगति पर विचार किया। सभा ने एक प्रस्ताव द्वारा उत्तरप्रदेश की समस्त आर्यसमाजों को आदेश दिया है कि सावदेशिक सभा की ओर से गोरक्षा आन्दोलन के लिए जो परिपत्र और आदेश प्रसारित हों उनके अनुसार कार्य करें और आन्दोलन को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दें।

दीपावली का दिव्य सन्देश



[श्री रामचरित्र पाण्डेय आर्योपदेशक साहित्यपरदन, बी ए० एल टी , लखनऊ]

बीसवीं शताब्दी के महानतम मानव ऋषि दयानन्द सरस्वती ईश्वरीय ज्ञान वेद का मन्दन करके अमृत रूप नवनीत का पान कर महर्षि पद को प्राप्त कर निर्वाण को प्राप्त करने में सफल हुए। साथ ही अमर्त्य नर ना चरित्रों को 'महाजनोपेन गता स पथा' का उपदेश देते हुए उनके मार्ग को प्रशस्त कर गये।

आज के दीपावली के शास्त्रबन्धन व कृत्रिम आलोक में अपना अकृत्रिम आलोक सम्मिलित कर अमर बना गये।

ऋषिवर ने अमृतपुत्र मानव को वेद व सन्देश 'मनुभव' के द्वारा सही तथा सच्चे स्वरूप में मानव बनने पर बल दिया, क्योंकि ऋषि को यह निश्चय था कि बिना मनुष्य होने मानव समाज में वेवत्त्व का अभाव रहेगा, यह अभाव समाज में सुख व शान्ति को स्वप्न बनाकर अश्रवणव्यत करके समाज को नष्ट-भ्रष्ट कर देता।

जस मनुष्य बनाने के अनेक विधि कर्तव्यों का वगन करके मार्ग प्रशस्त किया। ऋषिवर के नियम कोरे उपदेश ही नहीं, वे प्रयोगात्मक कर्तव्य हैं जिनको आत्मसात् करके घोषणा की कि इनके अभ्यास से अभ्यस्त हुआ मानव धर्मात्मा बनता है। उन्ही नियमों को रथूलरूप में पंचयज्ञों की सत्ता लेकर नित्य-नैमित्तिक ठहराया, साथ ही इन पंचयज्ञों को करते हुये काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा मद के सुरक्षित रखने के प्रति भगवान मनु का उद्धरण 'स्वस्य च प्रियभास्यन' के द्वारा अनुशासित करते हुये बल पूर्वक घोषणा की कि धर्म बही है जो अपने को प्रिय हो अर्थात् अपनी आत्मा के अनुकूल आचरण करना ही धर्म है, इसी के द्वारा समाज में वेवत्त्व का सञ्चार होकर समाज सुखी एवं समृद्ध बनता है। यही समृद्धि शान्ति में परिवर्तित होकर मनुजुओं को अनुकूल वातावरण उत्पन्न कर शाश्वत शान्ति प्राप्त कराने में समर्थ होती है।

ऋषिवर ने ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पद्यन्त महर्षियों के मन्तव्यों के आधार पर क्रियाशील जीवन पर बल दिया। जैसा कि यजुर्वेद अ० १७ मंत्र ३१ द्वारा यह प्रमाणित होता है कि 'न तत्र विदवा यश्नना जजानान्यष्टुध्माक्रमन्तर वन्व। नीतारण प्रावृताः पलथा चासुत्पः उवतशासद्वचरन्ति।

अर्थात् जो पुरुष अज्ञानी (जिन्हे आत्मा परमात्मा तथा जगन का ज्ञान नहीं) प्रलापी (बिना प्रयोजन व्यर्थ का बोलपान करने वाले) पैटू (खा ले गिये और मौज करी के पिढान पर चरने वाले) उवदशास (पड़ल्ले विद्वान् ब्याख्याता होने हुए तो क्रियाशील नहीं) न ते विवाच 'उस जगत निय ता प्रजा पल' को नहीं जान पाते।

इस मन्त्र की स्पष्टोक्ति द्वारा ऋषिवर क्रियाशील जीवन पर कितना बल दे रहे हैं उक्त क्रियाशीलता को जीवन में परिणत कर विद्व को क्रियाशीलता का पाठ पढ़ा गये।

आज दीपावली यही उद्बोधन लेकर उपस्थित हुई है। आओ हम सब अपना अपना कायाकल्प करके 'कृष्णस्वस्वमायम्' द्वारा ऋषि-निर्वाण पद को सकल बनावें।

**आय प्रतिनिधि सभा राजस्थान का
हैं रक जग्गी महोत्सव
संस्कृति संरक्षण सम्मेलन व गोरक्षा सम्मेलन
संसद सदस्य अटलबिहारी वाजपेयी करेंगे**

आगामी १९ नवम्बर ६६ से २१ दिसम्बर ६६ तक ऋषि उद्यान अजमेर में आयोजित हो रहे आ प्रतिनिधि सभा राजस्थान की हीरक जयन्ती (७५ वर्षीय महोत्सव) के अवसर पर हीरक जयन्ती महोत्सव का महात्मा आनन्द स्वामी द्वारा सम्पन्न होने के पश्चात् संसद सदस्य श्री अटलबिहारी वाजपेयी दिनांक १९।११।६६ को सम्प्रकाश संस्कृति संरक्षण सम्मेलन व गोरक्षा सम्मेलन का उद्घाटन करेंगे।

महर्षि स्तुतिः

×

स्वसक्ति से किसने विश्व व्यापिनी—

उठा लिया बरणी का सुव्योम की,

स्वयम् प्रसूता कलिताम्बरा मयी—

कछार मे फंली पादपावली ।

प्रबुद्ध क्या गुम पावकांगना—

प्रचण्ड थी बाणी पुण्य मगला,

सप्राण थी जैसे द्रवते चन्द्रिका—

मदस्तला ती सुदुष्या पयस्विनी ।

सत्कर्क भद्रा क्षीराम्बु ती मिली—

जहाँ न थी कर्कशता कठोरता,

आयाङ्ग का वर्षणशालमेघ था

सुपुत्र था वह गीतम कणाद का ।

सुधीर्ष्य शुल्का, नवशस्य श्यामला—

क्षमा सद्बन्धु वह पृथ्वी स्वरूप था ।

विरत किया पीडा के कुपन्ध से

स्वधातको को स्वद्रव्य बाण से ।

सिद्धास्त में अगवपाद सा अडिग—

ज्वररूपणों मे सौमित्र राम था,

करस्थ अगीकृत वेद को किया—

उदार चेता ऋषिवर महामना ।

स्वराश्य का पीवक मन्त्र इष्टा—

साक्षात् कृत धर्मा वा कृतार्थ था,

बड़े उसी का हम दृष्टि बिन्दु ले—

सहज चेता स्वराष्ट्र के लिये ।

—नाभशरण आयं

—आर्यसमाज कदर का ६५ वां वार्षिकोत्सव सर्ववै की
मार्ति इस वर्ष भी दीपावली के शुभाशुभ पर चि० १२नव०
धानिबार से १५ नवम्बर, मंगलवार तक समारोहपूर्वक
मनाया जा रहा है ।
—मन्त्री

श्रुति ज्ञान के दीपक जलाओ !

आ गई दीपावली श्रुति ज्ञान के दीपक जलाओ !

दीप जो जलता रहे नित

विश्व भर को वे उजाला ।

बुझ न पाये अधियों मे

हो स्वयं धुन का निराला ।

है कठिन कुछ काय लेकिन आर्य मानव को बनाओ !

आज के दिन एक दीपक

बुझ गया देकर उजाला ।

वह भीत होकर भी गया

बंरिन अमा का स्वाह प्याला ।

ऋषि दयानन्द की तरह हसते हुए जीवन लुटाओ !

पञ्चमय हो जाय जीवन

वे दुखी जन को सहारा

पूर्ण ऋषि उद्देश्य हो

भोगे विभव ससार सारा ।

‘धर्म से मदके हुये है राह पर उनको लगाओ !

—‘धर्म’ सिद्धान्तरत्न, लखनऊ

आय उप प्रतिनिधि सभा, लखनऊ

३० अक्टूबर को आर्य उप प्रतिनिधि सभा लखनऊ
का, मासिक अधिवेशन, आय स्त्री समाज नारायण स्वामी-
मवन’ के निमन्त्रण पर, समा मवन मे, जिला समा के
प्रधान श्री श्रीकृष्ण बल्लेव जी की अध्यक्षता
मे समारोहपूर्वक संपन्न हुआ । सर्व प्रथम समा मवन की
विशाल यज्ञशाला मे श्री प० रामचन्द्रिज जी पाण्डेय व
श्री मेधावी शास्त्री के तत्वाधान मे सामवेद से बृहद यज्ञ
हुआ । यज्ञ की यज्ञमान श्रीमती प्रेमलता जी बल्शी प्रधाना
आर्य स्त्रीसमाज थीं । इन्होंने (जि०समा को बान मे दिये ।
यज्ञ के पदचान्त् समा-मवन के हाल मे अधिवेशन की
कार्यवाही प्रारम्भ हुई । सबसे पहले श्रीमती सन्तोष जी
महाना ने सध्या और प्रार्थना करायी, इसके पदचान्त्
श्रीमती उर्मिला जी आर्या व श्रीमती विमला जी महाना
के प्रभावशाली ईश्वर भक्ति के भजन हुए । तत्पश्चात्
श्री माननीय देवराज जी वैदिक मिशनरी का प्रभावशाली
और विद्वत्पूर्ण वेदोपदेश हुआ ।



राष्ट्र
नि
र्मा
ता
द
या
न
न्द

चले, श्रुति राष्ट्र में निर्माण की उज्ज्वल विभा भरने ।

दुगो में अथ, उर में वेवता, धी वदा में पीडा ।
 कभी विह्वल-विकल मस्तिष्क में जाती रही भीडा ।
 अबुल उस्माह, साहन, धैर्य, दुइना मेरु सी अविचल ।
 उफनता उवार मा आया, मचलता ही गया अविचल ।
 सदा प्रभु-भक्ति, आत्मिक-जालि क करते रहे धरने ।
 हमारी आय-संस्कृति का पुन उद्धार हो कमे ?
 अबल असहाय- जीवन में सबल ध्यवहार हो कैसे ?
 सधु-नन-राष्ट्र में मडम की मरिता बहे कैसे ?
 विदेशी-बागता से मुक्त ये मानव रहे कैसे ?
 अलौकिक देश क अपुराण दा सागर चले तरने ।
 अनाया देश दवा का विवभा बन रहा निर्नय ।
 तिरस्कृत, तेज-दूत होकर, पूजा वा कर रहा अभिनय ।
 बट पुण्या, सत कन्द्य का लेकर अरण केतम ।
 मचेनन हो गये जग के सभी उन्मत्त जट-चेतन ।
 मे स्नेह से दीपक चले गिरि-शृङ्ग पर धरने ।
 सभी को दग्ध मडना-जल में जकड़ा हुआ देखा ।
 हृष्ट अति प्रव्त, बिन्ता प्रस्त, मांय पर खिंची रेखा ।
 बिहीना वस्त्र से ललता, कफन धोकर लिए जाती ।
 गरीबी देखकर निज देश की, फटने लगी छाती ।
 विमल तकल्प को लेकर चले अभिद्राप को हरने ।
 'विदेशी राज्य मे बढ़कर हमारा राज्य सुन्दर है' ।
 नहीं कोई सुखो 'सुक' है, न के ही 'स्वर्ण-नयजर' है ।
 'विदेशी-जम' का जूता अर भोले । मनोहर है ?
 दिकत के गुच्छ चरणों से अपावन हाय मन्दिर है ?
 चले गुण कम से 'जगाप्रमो' की मान्यत, बरने ।
 विकम्पित हो गये राजे लताडे सुप्त रजवाड ।
 विलापी-दम्भियों के दर्प, मिध्या-मान-मव झाड़े ।
 भ्रमों के हिल गये नूधर, सजन अबज्ञेय मत-वादी ।
 अमर अस्तित्व के सम्मुख रहा कोई न प्रतिवादी ।
 नवेली 'नीति' से बर 'जम' का परिणय चले करने ।
 बने हम बहचारी मस्त-गज से झुमने वाले ।
 सुदशम चक्र बनकर शशु के शिर पर घूमने वाले ।
 उदय हो अभुदय दिनकर अमावो की अमा नागे ।
 पराभव की निता मे भी, धवल ध्रुव-धैर्य का जागे ।
 बुशासन की बुख-बुध्ति का बल-वीर्य सहरने ।
 चले, श्रुति राष्ट्र में निर्माण की उज्ज्वल-विभा भरने ।



कुपुमाकर
 भायंनगर,
 फीरोजाबाद



गोरक्षा और ऋषि दयानन्द

[ले०—श्री पं० बिहारीलाल जो शास्त्री]

ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से विदित होता है कि धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक सभी समस्याओं पर ऋषि ने विचार किया है।

गोहत्या को रोकवाने के लिये ऋषि दयानन्द ने उस



श्री बिहारीलाल जो शास्त्री

समय ही प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया था जबकि अंग्रेजी साम्राज्य का सूर्य मध्याह्न में था। परन्तु उनके स्वर्गगमन के कारण वह प्रयत्न वहीं ठप्प हो गया। आज पूरे उत्साह के साथ ऋषि दयानन्द का प्रिय वह आन्दोलन फिर उभरा है। और इसे उभार रहे हैं ससार से बिरक्त साधु महात्मा जिनको कोई भी राजनैतिक स्वार्थ प्रेरित नहीं कर रहा है केवल यह आन्दोलन भावना प्रधान है। परन्तु यह भावना केवल मतांधता के विश्वासों पर नहीं है। वेद शास्त्र अधविश्वासों की बात कभी नहीं कहते। तर्क-

हीन कोई भी उपवेश नहीं देते।

गोहत्या का निषेध आर्य लोगों में इसलिये है कि गौ सृष्टि का एक चमत्कारी उपकारक पशु है। उसे कष्ट देना महापाप है। वैसे तो किसी भी जीव को मारना इसलिये पाप है कि प्रत्येक जीव को जीवन का उतना ही अधिकार है जितना कि आपको है। अतः उस जीव को मारना दूसरे के अधिकार का अपहरण करना है। और यदि बलवान निबलो के अधिकारों का अपहरण करने लगें तो अव्यवस्था फैल सकती है। अतः जब तक वह जीव तुम्हारे लिये हानिकारक नहीं है, अनता को बुद्ध-प्रव नहीं है, विघ्नकारक नहीं है तब तक उसे मारना पाप है। अपने स्वाध के लिये, शोक के लिये, उदरभरण के लिये जीवों को सताना अपराध है। कुछ अन्नरवशां अब यह बकवास करते देखे जाते हैं कि दूध पीना भी हिंसा है, पाप है। इन पापम बुद्धियों से पूछो कि क्या तुमने माँ का दूध पीकर उसकी हिंसा करी थी। सब में विदित है कि बच्चे को दूध पिलाने में माँ को आनन्द आता है। ठीक इसी प्रकार गौ को दूध बुहाने में सुख मिलता है। एक साहब बोले कि गौ का दूध और भुन एक ही पदार्थ है। इन मोडूरार्यों से पूछा जाये कि एक-एक गौ बीस-बीस सेर दूध दे देती है किन्तु उसके शरीर से इतना रक्त निकाला जाये तो क्या वह बच सकती है? खेत में पड़ा मूँले का खाद और खाद पदार्थ अन्न तत्व रूप से एक होते हुए भी क्या व्यवहार में एक हो सकते हैं? इसी प्रकार गौ बुध लिया जाता है गौ की सेवा से और प्रसन्ता से और मास लिया जाता है उस पर अत्याचार करके।

गौ मास वातवर्षक, अतिसार कारक और भी बनेक रोग को देने वाला है। परन्तु पशुगव्य-दूध, बही, घी, गोबर और गोमूत्र बहुत गुणमयी हुई औषधियाँ हैं।



इसीलिये वेद ने उपवेश दिया है —

“माता खराणां दुहिता वसूनां स्वसावित्यानाम् अमृतस्य नामि । प्रनुबोध चिकितुषे जनाय मा गामनागामवर्जित-बधिष्ठ” ॥

अर्थ—समक्षदार जनो के लिये कहा जाता है कि गाय निरपराध है, आवबनीय है इसे मत मारो । क्योंकि गौ शत्रु को माता है । खर ११ हँ—

प्राण, अपान, समान, उदान, ध्यान, माग, कर्म, कृफल, वेदवत् और धनजय वशवां प्राण और ग्यारहवां जीवात्मा । गौ इनकी माता है अर्थात् निर्माता है । इन्हें पुष्ट और सतुष्ट करने वाली है । वसुओ अर्थात् पृथिवी जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों की दुहिता है । इन पदार्थों को दुहने वाली है । कैसे ? मुनिये—

इलाजेशम्ली, (सूर्य चिकित्सा) को करने वाले बंछ लाल, पीली, हरी, नीजी, आदि रंग की बोटलों में पानी भरकर धूप में रक्त देते हैं । वे बोटलों रगों के कारण वसुओ से भिन्न-भिन्न पदार्थ खींचती हैं । लाल बोटल के जल में और प्रमाव उत्पन्न हो जाता है । पीली बोटल में और प्रमाव हो जाता है । हरी शीशी के जल में अन्य प्रकार का प्रमाव उत्पन्न हो जाता और डाक्टर अवल-बवलकर उन बोटलों का जल रोगियों को देता है और रोग दूर हो जाते हैं । मगवान ने विविध रगों की गौए इसीलिए बनाई हैं कि वे गौए अपने रगों के कारण वसुओं में से नामा प्रकार के प्रमावों को दुह लेती हैं । लाल गौ के दूध का प्रमाव और श्यामा गौ के दूध का प्रमाव अग्न्य श्वेत घेनु के दूध का प्रमाव सूतरा, कबरी गाय का दूध प्रायः प्रमाव वाला होता है । देको भावप्रकाश निघंटु—
गन्ध बुध्थं विशेषेण, मधुरे रस पाकयोः

शीतले स्निग्धकृत् स्निग्ध वात पित्तभ्रमाशनम् शीघ्र धातु मलक्षोत किञ्चित्क्लेबकर गुण ।
बरा समस्त रोगाणां क्षान्तिकृत् सेवितां सबा ह्यनाया गोर्भेद्गन्ध वात हारि गुणाधिकम्
रीतापा हर्त्ने पित्त तथा वात हर भवेत्
लेम्भक गुण शुक्लाया रक्त जिन्ना च वातहृत् (दुग्ध वर्ग)

अर्थ—विशेष करके गोदुग्ध रसपाक में मधुर होता

है । शीतल है । स्निग्धता करने वाला है । स्निग्ध है । वात, पित्त, रक्त विकारों का नाशक है । शोथ, धातु मल-क्षोत में कुछ श्लेष्मकारक और मारी है । सेवन करने वालों के जरा (बुढ़ापा) आदि सब रोगों को नाश करने वाला है ।

कृष्णा (श्यामा) गौ का दूध वात रोग हारी तथा अधिक गुण वाला होता है । पीनी गौ का दूध पित्त और वात रोग दूर करता है । श्वेत गौ का दूध श्लेष्मा करने वाला, मारी, लाल और चितली गौ का दूध वात को बढ़ाने वाला है ।

भावप्रकाश निघंटु में ५ प्रकार की गौए बतायी हैं— काली, पीली, श्वेत, लाल और चितकबरी ।

ससार में और भी अनेक रंग की गौए हैं । इस प्रकार गौ इलाजेशम्ली की दूध भरी शीशियाँ हैं और आदिष्य अर्थात् १२ मासों की यह स्वसा-भगिनी हैं अर्थात् प्रत्येक मास से इसके दूध के गुण सात्म्य करते हैं ।

वे जो महिमा गौ कुध में है अग्न्य पशुओं के कुध में नहीं है । अतः ऋषियो ने गौ का विशेष आदर किया और उसे “अधन्मा” (अविध्य) ठहराया । गौहत्या महापाप और मानव हत्या सम समझी गयी ।

भारत में पहले गौओं का ही प्राधान्य था । लार्डों गौएँ पाली जाती थीं सूर्यो गौएँ दान दी जाती थीं । भैंस पालन का प्रचार नहीं था । बकरी भी थोड़ी मात्रा में ही पाली जाती थीं । भैंसों का प्रचार यहाँ सिकन्दर के छागमन के बाद यूनानियों ने किया ।

वेद में गौ को अमृतस्यनाभि—अमृत का केन्द्र बताया गौमूत्र और गोबर श्वेत कुष्ठ की अनुमृत औषधें हैं । सप्रहणी पर गौतक गौ के दूध का मद्धा अनुपम औषधि भी है और पध्व भी । गौ के गोबर के सूखे आरम्भक सूखे उपलों से जो तेल निकाला जाता है वह छाजन ऐश्विना की उत्तम दवा है गौ जो कुछ खाती है उसका बुरा और हानिकारक भाग अपने शरीर में रखती है और उसका भाग बाहर निकालकर फेंक देती है । इसलिए भुक्त-लमान युनानी इलाज करने वालों ने गौ गोमांस को हानि कारक बताया है और पञ्चगव्य लाभकारक है ।

शरीर दुई नवी को गौ की पूँछ पकड़ कर पार किया
(शेष पृष्ठ १६ पर)



आर्यसमाज में शिष्य परम्परा का अभाव

(श्री आचार्य मद्रसेन जी, अजमेर)

सम्भवतः उपर्युक्त शीर्षक को पढ़कर प्रिय पाठक आश्चर्य करोगे और सहसा कह उठेंगे—हम तो यह समझने में कि आर्यसमाज से गुरुपरम्परा ही लुप्त होती जा रही है किन्तु भाप तो शिष्य परम्परा के लोप का ही गीत गा रहे हो। यदि मुझ से पूछा जाए, तो मैं तो स्वानुभव में यही कहूँगा कि आर्यसमाज में शिष्य-परम्परा का ही लोप हो रहा है। गुरु परम्परा के लोप का कारण भी तो शिष्य परम्परा का लोप ही है। जब कि कोई किसी का शिष्य ही नहीं बनना चाहता, विनम्र भाव से गुरुचरणों में बैठ कर विद्यार्जन तथा गुण ग्रहण ही नहीं करना चाहता तो वह आगे खल गुरु बनेगा ही कैसे। अतः मेरे विचार में गुरु-परम्परा के लोप का कारण भी शिष्य परम्परा का अभाव ही है। आर्यसमाज में कोई शिष्य तो है ही नहीं प्रयुक्त जिसे भी देखें, चाहे वह निरक्षर मट्टाचार्य भी क्यों न हो अपने को गुरु विरजानन्द ही समझता है। अर्थात् कोई किसी से गुण ग्रहण तो करना ही नहीं चाहता।

नापितानां विवाहेतु सर्वेऽशुद्ध मानिनः।

जैसे नाइयों के विवाह में सभी अपने को ठाकर ही समझते हैं यही अवस्था हमारी है। यदि किसी आप पुरुष को कोई साधारण शका भी होती है, तो झट अप्पवानों में छप जाता है—आप विद्वान् मेरे प्रश्नों का उत्तर दें मानी वे स्वयं आर्य विद्वानों के भी गुरु हैं। उचित तो यह है कि हम शिष्य भाव से विनम्रता पूर्वक आप विद्वानों से पूछें कि आर्य विद्वानों से मेरी कुछ सन्देश विचारणार्थ (शकाएँ) इत्यादि। अभी कुछ दिन हुए एक विरजानन्द नामक विद्यार्थी ने आर्योदय पत्र में लेख निकाला—“आप विद्वानों से मेरे प्रश्न” मानी वह स्वयं, प्रतिवादी बनकर आर्य विद्वानों से शास्त्रार्थ कर रहा है। मैं तब एक वर्ष तक तपोवन (वेहरावन) में रहा हूँ। सौभाग्यवश आश्रम में म० प्रभुआश्रित जी महाराज पधार गये। आश्रम के साधकों ने अपने-अपने सन्देश तथा शकाएँ महाराज के सम्मुख उपस्थित कीं हम में से एक साधक

कहने लगा—मेरे आपसे कुछ प्रश्न हैं। आप पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दें। मैंने उपर्युक्त महाशय से कहा—आप कम से कम दिनभर भाव से तो पूज्य महात्मा जी के सम्मुख अपनी शकाएँ उपस्थित करें।

आर्यसमाज में यदि कोई थोड़ा सा भी सन्देश या



आचार्य मद्रसेन जी

हवन याद कर लेता है तो वह यज्ञ का अर्थ मन्त्रों में थोड़े पुरोहित या ब्रह्मा का भी गुरु बन जाना है वह ब्रह्मा या पुरोहित जी के बोलने से पहले ही अपनी विद्वत्ता दिखाने के लिए उपस्थित लोगों को उपदेश देना प्रारम्भ कर देता है—ऐसा नहीं ऐसा करो। पुरोहित जी के मन्त्रोच्चारण से पहले ही गलत-सलत मन्त्रोच्चारण करना प्रारम्भ कर देता है, विशेष करके अधिकारी वगैरे। पुरोहित या ब्रह्मा विद्याग भी सोचने लगता है कि इस यज्ञ का ब्रह्मा मैं हूँ या वह महाशय। उचित तो यही है कि यज्ञ आदिके अवसर पर हम जिन्हें भी यज्ञ का ब्रह्मा या पुरोहित बनाएँ, सब उनके पीछे चलें उनके मन्त्रोच्चारण आदिके अनुकरण करें तदनुसार अपने उच्चारण की अशुद्धियों को ठीक करें। पंजाबी भाषा में एक कहावत है—



‘गुरु जिःहादि कूबने, सेले जान छड़प’

यहां तो गुरु विचारे अभी मन्त्रीचचारण कर ही नहीं पाते कूबना तो दर किनार सेले पहिले ही आगे बड़-बड़ कर छलांगं मारने लगते हैं। जब हम पुरेहित जी के नियन्त्रण से ही नहीं रहना चाटते फिर हम उन्हें गुरु या भाषाय समझेंगे ही कैसे। उनसे गुण ही कैसे ग्रहण करेंगे।

कुछ वर्ष हुए मैं अलवर राज्य की एक छोटी समाज के वायिकोत्सव पर ब्याहयान देने गया। मैं चारपाई पर बैठा हा हुआ था कि एक जाट कृषक महाशय हाथ में सस्कारविधि लेकर मेरे सामने आकर खड़े हो गये और कहने लगे, मैं इस आर्यसमाज का पुरेहित हूँ और सेतो भी बरता हूँ। मैंने कहा बड़ी प्रसन्नता की बात है आप सेतो भी बरते हैं और पुरेहित का कार्य भी, मेर इन प्रशंसा से बचनो को मुन कर पुरोहित जो मे मानो अपने को चारो देहो का दूण चरित ही समझ लिया। हमरे दिन आय पुरुषो ने अपने बालको के उद्योपदीत सरकार रखे और उनका आचार्य मुझे नियुक्त किया, उपयुक्त सस्कारो मे स्तीभाय से या दुर्भाग्य से उक्त पुरोहित जो भी पधार गये। मैं जब ही मन्त्रीचचारण करना शुरू करता, वे महाशय मेरे आगे-आगे छलागे मारना प्रारम्भ कर देते। मुझ, अशुद्ध जंसा भी आता वे आगे बड़ी लगाए बिना न रहते। मैंने बीच-बीच में उन्हे कई बार टोका कि महाशय जो यह ठीक है कि आप इस समाज के पुरोहित हैं किन्तु इस प्रज्ञोपधीत सरकार का कार्य तो मुझे ही पाना गया है। इसलिए आप मेरे पीछे चलें, आगे-आगे भागो मत, किन्तु—‘स्वभावो दुरतिष्ठम’ एक बार जो स्वभाव पड़ गया फिर उसका छटना मुश्किल ? वे थोड़ी देर तक तो मेरे साथ चलते फिर आगे भागना शुरू कर देते।

आय पुरुषो का यह कर्तव्य था कि जब भी उत्सव आदि के अवसर पर कोई विद्वान या सन्यासी महात्मा पधारें। तब विनम्र तथा जिज्ञासा भाव से उनके पास जाकर बैठें, अज्ञा पूर्वक अपने सशयो का निवारण करें। किन्तु यहाँ तो समाज के अधिकारी महोदय या से ब्याहयान का प्रोप्राम सुनाने आते हैं, या भूले मटके भोजन के समय। शेष हारे समय उपवेशक या सन्यासी महामुभाव हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहते हैं। कोई बात भी आकर नहीं पूछता। कभी-कभी तो हम जिज्ञासु की

जिज्ञासा भाव से भी बाधक बन जाते हैं। यदि कोई भूला मटका आर्य पुरुष कभी किसी विद्वान् ने कोई प्रश्न कर भी बँटता है, तो अपने को कट्टर आर्यसमाजी समझने वाला भावपुरुष उपयुक्त विद्वान के समाधान करने से पूब ही झट बोल उठता है। और उसका अपट्टान्ट समाधान करना गुरु कर देता है वह यह भी नहीं सोचता कि जिस जिज्ञासु ने जिज्ञासा भाव से एक विद्वान के सम्मुख अपना जिज्ञासा रली है। उसके हृदय को कितना आघात पहुँचा वह इतना भी विचार नहीं करता कि जिस विद्वान् के सम्मुख यह जिज्ञासा रली गई है वह कम से कम विद्वत्ता और अनुभव में भूब से तो अधिक योग्य है। इनके समाधान को सुन तो लूगा सम्भव है मुझे भी इस से कुछ लाभ पहुँच जाए और मेरे ज्ञान और अनुभव में भी कुछ वृद्धि हो जाए, किन्तु यह तो तभी सम्भव है जब कि हम उपयुक्त विद्वान का आबर या गुदभाव से देखें। किन्तु वह तो अपने को श्रुति प्रधानत्व का सोलह कला पूर्ण साक्षात् अवतार समझता है।

तपोवन मे मुझ से एक जिज्ञासु सज्जन ने कहा— आचार्य जो मेरे कुछ सन्देश हैं, कृपा कर आप उनका समाधान करें। वह सज्जन अभी बोल ही रहे थे कि झट पास मे बँठे एक महाशय बोल उठे—आप के प्रदनों का उत्तर तो मैं आप को दूंगा मैंने प्रदनकर्ता महाशय से कहा। पहिले आप इनका समाधान सुन लो यदि आप की जिज्ञासा का समाधान हो जाए तो ठीक, अन्यथा मैं आप का समाधान करने का प्रयत्न करूँगा।

अपने गुरु जनो तथा साधु महात्माजो के प्रति श्रद्धा देखनी ही तो आप राजस्थान मे आकर जैन समाज को देखिये। जब उन्हे पता लगता है कि आज हमारे नगर मे अमुक साधु या साध्वी पधारने वाले हैं। तो पंवल बल कर मार्ग में उनके स्वागत करते तथा चरणो मे नमस्कार करते हैं उपवेश के समय बत्चित होकर उनका उपवेश सुनते हैं, उपवेशटा साधु या साध्वी चाहे बिल्कल साधारण उपवेश ही क्यों न दें। एक कंगोड़पति भी उनके उपवेशों को बत्चित होकर सुनता तथा अपने को धन्य समझता है यही तो श्रुति ने कहा था—

सर्वं मनुष्यं आमन्त्रणेन विदुषां आह्वानं कृत्वा एतान् सत्कृत्य एतेभ्य स्व विद्या परीभित्वा अधिक

अविद्या विद्या च प्रहीतव्या — ऋग्वेद भाष्य ६।६०।१५

सब मनुष्य श्रद्धापूर्वक विद्वानों को आमन्त्रित करते, उन्हें सत्कार पूर्वक अपने पास बुलाए। उनका घयायोग्य तत्कार करके उनसे अपनी विद्या और योग्यता की परीक्षा कराए और उनसे अधिरू ने अरिह विद्या ग्रहण करें। यदि वे विपरीत इनके हमारे उत्सव आदि के अवसरो पर यदि कोई साधु महात्मा या विद्वान हीचे सादे सरल शब्दों में जीवनायोगी वा वैदिक सिद्धान्त पर कितना भी उपयोगी व्याख्यान क्यों न दें, वह तो हमें पचने ही नहीं आता। उन्हे ही कहने लगते हैं—आज तो कोई जोशीला लेखक नहीं था। जबकि हमें अपने विद्वानों या सन्ध्यासी महात्माओं के प्रति गुरु या पूज्य भावना ही नहीं तब हमें उनके उपदेश या प्रवचन जोशीले मालूम ही कैसे हो। 'हमें तो कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा' वाले आजकल के भजनोंको तथा उपदेशकों के केवल जनता के मनोरंजन करने वाले बेलुके भजनों और व्याख्यानो में ही जोशीलापन नजर आता है।

ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में नाममात्र के अयोग्य, स्वार्थी गुरुओं का तो निराकरण किया। किन्तु हमने तो योगियों के ऊपर भी अपने गुरुभाव तथा श्रद्धा और आस्था को सर्वथा हटा दिया। आज ऋषि के वेदभाष्य को उठाकर देखिये। जगह-जगह उन्होंने विद्वानों तथा गुरुजनों की सेवा तथा उनका आदर, तथा सम्मान करने का विधान किया है। एक स्थान पर तो ऋषि ने यहाँ तक लिखा है।

नहि परमेश्वर तुल्येन धार्मिकेण विदुषा बिना कर्म-
चित् सर्वपक्षयानां सुखानां च प्रवाता कश्चिदस्ति।

—ऋग्वेद भाष्य १।५३।२

अर्थात्—“परमेश्वर के तुल्य धार्मिक विद्वान् की कृपा तथा उपदेश के बिना सब प्रकार के सुखों और पदार्थों

का प्रदान करने वाला और कोई भी नहीं” यहाँ ऋषि ने धार्मिक विद्वान् को ईश्वर मुन्य लिखा है शायद कोई कट्टर आर्यसमाजी कह उठे ऋषि दयानन्द धार्मिक विद्वान् को ईश्वर तुल्य लिखें यह कमी नहीं हो सकता, वे कृपा कर ऋषि का ऋग्वेद भाष्य मण्डल १ सूक्त ५३ मन्त्र २ का सहज तथा हिन्दी भाषा में अवश्य देखने का कष्ट करें। ऋषि ने साथ ही यह भी लिखा है कि कोई भी मनुष्य ऐसे विद्वानों के सहाय तथा कृपा के बिना सब प्रकार के सुखों तथा पदार्थों को नहीं प्राप्त कर सकता। किन्तु यह तो तमी सम्भव है जबकि हम उन्हें अपना पूज्य या गुरु समझें। और वीर अर्जुन की तरह कहें—

शिष्यस्तेऽऽशाधि मत्स्वः प्रपन्नम् ॥ गीता

हे महाराज कृष्ण ! मैं आप की शरण में आया हूँ। शरणागत शिष्य को सम्मार्ग बिल्हाओ। एक तरफ हम हैं कि विद्वानों तथा सन्ध्यासी महात्माओं को अपना पूज्य गुरु समझ कर उनसे उपदेशों को श्रवण करना तथा उनके सबुपदेशों द्वारा सब प्रकार के सुखों को प्राप्त करना मानो अपना अवमान समझते हैं। फिर भला गुरु परम्परागत हमारे अन्ध विवेक मानों तथा सर्व सुखों का सत्कार कैसे हो। यह तो तमी सम्भव है जबकि हम अपने अन्ध ज्ञान और विद्या की कुछ अज्ञानता अनुभव कर और सुनिश्चर प० गुरुदत्त की तरह आगे को विद्यार्थी समझें और अपनी ग्लानता को दूर करने के लिए अपने विद्वानों तथा महात्मा जनों का अनुकरण करें तथा उन्हें अपना पूज्य गुरु समझकर उनसे अपने ज्ञान और स्वाध्याय की कमी को पूर्ण करें, उत्तरोत्तर उसमें वृद्धि करें। यही ऋषि प्रवर्णित सर्व सुख प्रवाता सच्ची शिष्य परम्परा है यही गुरुपरम्परा की उत्तरोत्तर वृद्धि का भी मूल कारण है।





आवाहन

—बुद्धिप्रकाश आर्य समाज ए—

प्रधानाचार्य बयानन्व इण्टर कालेज, त्रिन्वन्ती फोर्ह्युर



भौतिकता की मरी जवानी,
पुग ले रहा करवटें साथी—
दुनियां बहुत गई भागे ।
भच्छे बुरे सभी कामों मे—
तथाकथित अरुष्ठा केवल,
परिणाम भएकर लिये हुये है ।
ऐसा कुछ है ज्ञात हो रहा—
वर्ग चतुष्टय—
धर्म अथ का कान मोक्ष का—
आवि अत निज नष्ट कर चुका ।
स्वप्न जाल मे अर्थ काम के
पागल प्राणी उलझ चुका है ।
कीर्ति और कचन के साधन
रहे विचारे—
मन्दिर मस्जिद गिर्जे सारे ।
वेद पुराण कुरान बाइबिल
कोसो दूर रहे करनी से
केवल कौरी कचनी मे है
पल्लव ग्राही ज्ञान मिल गया
समझ लिया नर श्रेष्ठ हमी है
ऐसा भ्रम है ।

सीखो हम से अजा, यज्ञ की सुन्दर विधिया ।
मधुर प्रवचन उपदेशो की मजुल लडिया ॥

ईसा, मूसा के बडे हम है ।
और खूवा के बडे भी है ।
यह नही—
अवतार इन्सानियत के भी है ।
ममता दया सोख लो मुझ से ।

बन ईसाई
अरे दया के बन्नी पुतलो
बनो कसाई
मास निरीह प्राणियो का तुम खाओ

गीत दया के सुन्दर गाओ ।
धर्म बदलकर लोगो का
निज राजनीति का धरु
अखिल जग मे फैलाओ
ईसा मूसा राम कृष्ण के चेलो मुन लो
नहीं चलेंगे यह हरकण्डे—
मेवभाव विट्टेपो का यह चक्र चला यदि
हो जाये प्रकृति कोप से बिल्कुल ठडे
खूब सोच लो
धम रक्त से रजिन बहून हो चुका ।
छल छिद्रो से पाखंडो से
धर्म कलकित बहुत हो चुका ।
अरे धर्म के ठेकेदारो ।
दया तुम निज करनी से अपनी—
बफना दोगे धम सदा को ?
तुमसे तो नास्तिक अच्छे है
जो कहते है—
धम ले रहा सासों मत छेडो मत टोको
और इधर तुम चले—
धर्माडम्बर दम्न छप की
तेज कटारी से शिर छिन्न उसी का करे ।
रक्खो बिल पर हाय और सोबो

सच्ची श्रद्धा आज तुम्हारी दम्न बन गई ।
अरे ! तुम्हारी पूजा केवल छप बन गई ॥

सब मानो—
तोनो के दीनता भरे स्वर केवल
कानो मे ईश्वर के जाते ।
धनी कमी दया ईश्वर को है पाते ?
हम हवन नित्य करने है ।
कडु सत्य बका करने ह ।
बनकर बगुल भवन विश्व को
खूब ढगा करने है ।
हम रुच्छे पंच नमाजी ह
पौराणिक, आवसनाजी ह ।



नर श्रेष्ठ हमी हैं। क्योंकि सबा
हम नित्य कम करते हैं
खोली आँखें—
तुम क्या हो देखो।
कीरा है केवल इन्म तुम्हारा।
सुनो ध्यान से—
क्या तुम बीनो की आँहे सुनते हो ?
बलितो के क्या तुम ताप शमन करते हो ?
क्या अच्छो से तुम नेह किया करते हो ?
और विचारो—
क्या दीन पड़ोसी की तुमने है भूल मिटाई ?
क्या अच्छे नर करते कमी बड़ाई ?
क्या अभेद्य कंचुली स्वायं की अभिमानी की
सदा सवदा को उतार फेंकी है तुमने ?
क्या मुपत माल या सम्पत्ति पाने पर—
निज धर्म आर्य मिद्वान्त निहारा तुमने ?
यदि नहीं—
छोड़ दो आडम्बर गुरुधम को।
व्ययं पाप मल लादो अरे पीढ़ियों पर
माना कि धर्म अच्छा तुम भी अच्छे हो।
पर पृछो दिल से—
केवल अपने ही लिये ? या कि पैरो को ?
धर्म ओट बन जाता यदि पापों की
सरिता बहती है जग मे तब तापो की।
हो ताल मेल कवनो करनो का
और मधुर वाणी हो
पिचले आनू से ह्वय
बेखनर दान दुखी प्राणी को
बेखो अवगुण अपने गुण औरो के
महा मत्र यह सीखो
योःस्मान् द्वंष्ट, य च वय द्विषम
त धो जम्भे वधम—
का राग कहो और सीखो।
तमी धर्म की ध्वजा विद्व मे
लहरायेगी फहरायेगी।
स्वय भनाय आकषण औरो के
अभ्यया सम्यता सत्य सनातन
मुन्या का, श्राव्या की,
काल माल मे छिप जायेगी।

(पृष्ठ ११ का शेष)

जा सकता है। परन्तु भंस तो बीच धार मे ही डुबो बेगी
भंस का दूध आलस्य और प्रमाद पंवा करता है। भंस के
पडरे को देख लीजिये मुस्त खडा-खडा कान बजाता
रहेगा। गौ का बछडा इधर-उधर उछल कूद करेगा और
उछलता फिरेगा। बकरी का दूध भी वीरत्व और उरसाह
को कम करता है। कायर मनुष्य को फारसो मे बुजविल
कहा जाता है अर्थात् बकरे का सा दिल रखने वाला।

भंस, और बकरी भेड, तथा ऊँटनी के दूध मे और
भी बहुत अवगुण है जो कि गोदुग्ध मे नहीं। गोदुग्ध बड़ा
लामवायक है।

श्री स्वामी बयानन्द ने एक पुस्तक लिखी है—'गो
करुणानिधि' इस पुस्तक मे एक देकर बताया है कि गोरक्षा
से मनुष्यो को अधिक भोजन मिलना है गोहत्या से नहीं।

गदर के बाद गोरक्षा के लिए प्रयत्न करने वालो मे
स्वामी जी सर्वप्रथम थे।

गोरक्षा के लिये कृको मे (तामधारी सिन्धो मे) अजब
बलिदान दिव्य है। पूजनीय श्री गुरु रामसिंह जी को
अधे जो ने देश से (नखासत कर दिया था। कटारपुर से,
श्री ड०० पूणासह जाब धमबारा ने अपन का बलिदान
किया। इन्हें सदा हा गोहत्या रोकन क (नद तन, मन,
पुटाता रदा है। मुगल बाबनादा न तो इन्हुओं की
भावना का कबर का परन्तु व अत्रां क चले इन्हें नाम
धारा कारसा नती इन्हुओं की भावनाओं से बलबाइ
करक इन्हुओं को बाँट म पीतत बनत जा रहूँ। न
जान बनना बनत हठ वनी है। इनको बुद्धि बचरोत
दिशा म चल पड़ो है। इसीलये हर जगह जनता इन्हें
कास रता है।

गोहत्या बन्द न हुई तो बड़े भयकर परिणाम होते।
गोहत्या बन्दो के परबान्तर यद् (बकार होगा। क गो
सरभण किस्त प्रकार से किया जाय। तब देश मे आर्थिक
दुष्कालोण स भी और धार्मिक दुष्कालोण स भी संकड़ों
गाशालायें खोली जायेंगी। व्यापारिक गोशालायें बूध,
मखन का उत्पादन करेगी और धार्मिक गोशालायें मे
अपङ्ग, अनाय, बूढ़ गोआ का पालन होगा। इसमे आर्थिक
कांनोदिया भी सामने आयेगी परन्तु उनका सामना
दूसरा तरह से कर लया जायगा। प्रथम भावना की रक्षा
हानी चाह्य।





उत्थान



[डा० मुशोराम शर्मा, ९/७० आर्यनगर, कानपुर]



श्री मुशोराम जी शर्मा

“यह आर्यावर्त देश ऐसा है जिसके सव्त्र भूगोल मे दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिये इस भूमि का नाम सुवर्ण भूमि है—सृष्टि की आवि मे आर्य लोग इसी देश मे आकर बसे—जितने भूगोल मे देश हैं वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते है। पारसमणि पत्थर मुना जाता है परन्तु आर्यावर्त देश सच्चा पारसमणि है जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं। सृष्टि से लेके आज से पाच सहस्र वर्ष पूर्व तक आर्यों का चक्रवर्ती राज्य था। अन्य देशो मे माण्डलिक राजा रहते थे।”

महर्षि के इन शब्दो को पढ़कर भारतीयता का कोई भी प्रेमी नक्त गद्गद हो उठेगा, परन्तु जब उसकी दृष्टि भारत की वर्तमान बसा पर जायगी तो वह तिलमिला उठेगा। देश के कर्णधारो की मनोवृत्ति, जिसमे योरोपीय रगडग मिल गये हैं और ऊपर से नीचे तक फंला हुआ भ्रष्टाचार जो आर्यमण की आ तरशिला को ही कम्पादगान कर रहा है, महर्षि के स्वप्नो के भारत को आलसो से ओझल कर देते है और ऐसा प्रतीत होने लगता है कि जैसे यह देश भारत या आर्यावर्त

न रहा हो, म्लेच्छो और वसुओ का देश बन गया हो। महात्मा गांधी के स्वप्नो का भारत भी वह नहीं है। अमेरिका के एक बम्पति यहाँ आये और नेहरू के भारत मे जो कुछ था, उसका अत्यन्त कट्ट स्वाव उन्हे खलना पड़ा। पत्नी सुटी और मरी। अमरीका का सम्भ्रान्त नागरिक नेहरू के इलाहाबाद के निकट ही फूट-फूट कर रोया और बिबस होकर पत्नी को छोकर एकाकी रूप मे अपने देश को लौट गया। नेहरू के दिल पर इससे चोट लगी कि नहीं, पर एक भारतीय, सच्चे भारतीय का हृदय तो शतधा विदीर्ण हो गया होगा। जिस भारत के आतिथ्य और शील की प्रशंसा फाहियान, ह्वंनचवाग आदि विदेशियों ने मुक्त कठ से की हो वह इतनी पतित बसा मे पहुच गया है, इसकी कल्पना करते ही हृदय हाहाकार करने लगता है। यह किसी अन्य के नहीं अपने ही पापो के परिणाम हैं।

यह क्यों हुआ ? महर्षि ने उसी स्थल पर लिखा है—“स्वायम्भव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा। तत्पश्चात् आपस के विरोध से लडकर नष्ट हो गये क्योंकि इस परमात्मा की सृष्टि मे अनिमानी अन्यायकारी अविद्वान् लोगो का राज्य बहुत दिन नहीं चलता। महर्षि ने प्रयोजन से अधिक धन को भी पतन का कारण लिखा है, क्योंकि उससे आलस्य, पुरुषार्थ-रहितता, ईर्ष्या, द्वेष, विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता है, जो विद्या और सुशिक्षा के लिये घातक है तथा दुर्गुण और दुष्ट ध्यसन जैसे मद्य-मास आदि का सेवन स्वेच्छाचार आदि बोधो को ष्ट्रावा देते हैं। अन्याय तथा आपसी विरोध-ध्व्यक्ति एव समाज-समी को पतन के गह्वर वर्त मे मग्न कर देते हैं। उत्थान के लिये महर्षि ने आगे चलकर लिखा है—हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थो से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे भी होगा, उसकी उन्नति सन, मन, धन से सब जाने मिल कर प्रीति



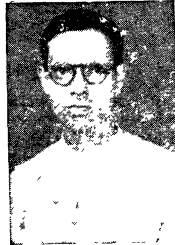
से करें। महर्षि ने पवन के रोग का निदान किया और उपचार का निर्देश भी किया, पर प्रश्न यह है कि हम उनके बताये हुये उपचार का सेवन क्यों नहीं कर सके। आर्यसमाज के सदस्य हम सब अपने को ऋषि का अनुयायी कहते हैं परन्तु महर्षि-निविष्ट पय का हम कहां तक अनुसरण करते हैं, इसे हम सब अपने मन से सोच लें। क्या हम सगंधा-बन्धन करते हैं अग्निहोत्र करते हैं, वेद पढ़ते हैं और मिलकर कार्य करते हैं? यदि नहीं, तो इन बातों का अन्यो के प्रति उपवेश करने का क्या प्रयोजन है? वास्तविकता यह है कि चाहे आर्यसमाज हो और चाहे कांग्रेस, देश इस समय अमाय प्रवृत्तियों के बाहुल्य से पदाक्रान्त हो रहा है। आर्य प्रवृत्ति के प्राणी हैं तो, परन्तु ये प्रमथिष्णु रूप में अन्यो को प्रभावित करते नहीं जान पड़ते। जब से महात्मा गांधी के तप और त्याग के मार्ग का उल्लंघन करके हम यूरोपीय भौतिकता के कुत्सित अशो को अपनाते पर कटिबद्ध हुये तभी से विपथगामी बनते चले गये, और आज जिस स्थान पर हम खड़े हैं वहाँ अन्धकार और विनाश के परत पर परत घिरते चले आ रहे हैं। पता नहीं सर्वस्व सहार की बेला किस क्षण सिर पर आ दूटे।

तो क्या हम गिर ही जायेंगे? क्या उठने का अवसर अब न मिल सकेगा? नहीं, ऐसा नहीं है, जितना आर्य रक्त बचा है, वह निराशा को नहीं जानता। बंदिक जीवन की आद्वयानमयी उमर्ग, आशा की तरंग, आनन्दबाव की हिलोरें आज भी उसके हृदय को स्पन्दित कर रही है। यही वह रक्त है जो यवनों द्वारा घनाच्छादित आकाश में चन्व वरदायी के रूप में उदय हुआ था और जिसने पृथिवीराज चौहान को रंगरेलियों से निकाल कर अनार्यों से मोर्चा लेने के लिये सन्नद्ध किया था। यही रक्त महाराणा प्रताप के रूप में अकबर का अनुवर बनने के विशद युद्ध ठानता रहा। भूषण की बाणी ने इसी रक्त का स्वन किया और शिवा जी के समान महाराष्ट्र साम्राज्य के सूत्रधार को जन्म दिया। गुप्त मोर्चाबन्धन इसी रक्त का प्रतिनिधित्व करते थे। राजा राम मोहनराय और महर्षि बयानन्द की घमनियों ने इसी आर्य रक्त का संचार था। लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी और सुभाष के रूप में यही रक्त बोल रहा था। यही रक्त देश को ऊँचा उठाता रहा है पर, आह! कहीं विदेशी रक्त इसके अन्वर अवश्य आ घुसा है और जब-जब हम उठे हैं, तब-तब यही विदेशी रक्त दुर्वाग्नि राक्षसी शूद्र के रूप में लड़ा होकर हमें दबावता रहा है। क्या हम इस अनाय रक्त को पहिचान सकेंगे?

आर्य और अनार्य की पहिचान क्या है? दोनों मानव का रूप धारण किये हुये हैं। पशु के समान किसी के सिर पर सींग नहीं हैं जिससे उसे दूसरे से भिन्न किया जा सके। सीरी पहिचान यह है कि जो शक्ति इस देश से प्रेम करता है, इसकी परस्पर-भ्रु खला को तोड़ने में जिसका विल बुली होता है, जो इस देश के महापुरुषों में आस्था रखता है, जिसे मनु, पुत्र, राम, कृष्ण, गौतम, महावीर, वास्मीकि और ध्यास प्यारे हैं, जो आर्य पद्धति का अनुगमन करने में गौरव का अनुगम करता है, इस देश के लिये मरमिटने में जिने अपना सौभाग्य बिज्जई देना है, जो मिलकर प्रेमपूर्वक चञ्चना है, पारस्परिक वंदनस्व के बीजो का वपन नहीं करता है, वही आर्य है और जो इसने विपरीत पथ पर प्रयाण करता है, वही अनार्य है विदेशी रक्त है। जब तक इसे दबाया नहीं जायगा, तब तक आर्यत्व उठकर भी गिरता रहेगा। आवश्यकता है आर्य रक्त के सगठन की, आर्यसमाज की जो आर्यों की एकता के सूत्र में आबद्ध कर सके। हमारा सगठित सबल रूप ही अनार्यत्व का परामव करके आर्यत्व को विजयी बना सकेगा। अनार्यों को आर्यरूप में परिणत करना होगा। दुर्प्रवृत्तियों का दमन और सन् प्रवृत्तियों का सरक्षण करना होगा। ऋणाकार का नग्न रूप आर्यत्व के इस उत्थान से ही नष्ट हो सकेगा। आर्य सवाचार-परायण होता है। साध्याचार, सत्यप का अनुगमन-आर्य की विशेषता है। यदि हम आर्य बन सके और सगठित हो सके, तो पतन की विशा से मुक्तकर हम उत्थानशील हो सकेंगे, यह निश्चित है।



आर्यों से



(कविबर 'प्रणव' शास्त्री एम० ए ,

आर्य नगर, फीरोजाबाद)

धरा मे नये प्राण लाने को आर्यों
महामन्त्र वेदो के गाते चलो रे ।

न सोये सदा से मुहागिनि कहानी,
प्रभाती सुनाते जगाते चलो रे ॥१॥

विचारो के अन्तम् की अन्त पुरी मे अमावस की राती यहाँ झूमती है
खड़ी साधना और आराधन भी निराशा निशा के चरण चूमती है
अत पुष्य प्रतिभा प्रभा पूर्णिमा को
प्रतिष्ठा सुरग मे रंगते चलो रे ॥२॥

कहाँ देख पावस प्रया पावनी को बिरोधी बला की घटायें न छाये
बड़े मान सूनो के मीले मनो मे न बंधम्य वर्षा झड़ी सी लगाये
नया मोड लेंगी बहारें स्वय ही
सुधा प्रेम की यो पगाते चलो रे ॥३॥

मला बयो न सोयेंगी आध्यात्म चर्चा जगाये न जागे मुझों सो रहे हो
कहाँ कल्प वृक्षो की छाया मिलेगी विषैली लताएँ यहाँ को रहे हो
तनी स्वर्ग मू को झुके, सत्यता का
कि नन्दन नया सा लगाते चलो रे ॥४॥

अचम्भा है लज्जित शुभा शारदा ही चला की खड़ी ले रही आरती है
पुन पवित्रमी अप्सरा की मुलामी बजाने लगी मौन सी आरती है
उठाओ निली गौरवो की पताका
मनो हीनता को भगाते चलो रे ॥५॥



शुद्धि दयानन्द ने श्रेष्ठ समाज बनाने का यत्न किया



[श्री विद्वम्बर सहाय प्रेमी]

उन्नीसवीं शती में शुद्धि दयानन्द ने वैदिक धर्म का प्रचार करके सम्पूर्ण समाज को सुसंस्कृत एवं श्रेष्ठ बनाने का जो महत्वपूर्ण कार्य किया, वह इतिहास के पृष्ठों में सदा स्वर्णाक्षरी में अंकित रहेगा, उन्होंने पतनोन्मुख भारतवासियों को धर्मानुकूल आचरण करने की दिशा में जो प्रेरणा की उसके फलस्वरूप लाखों व्यक्तियों ने उनके मार्ग को अपनाकर समाज को उन्नत करने का यत्न किया।

ऐसे धर्माचरण करने वाले व्यक्तियों ने आर्यसमाजों के द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार करके समाज को उन्नत करने का यत्न किया। आर्यसमाज में प्रवेश करने वाले व्यक्ति का उस समय यह कर्तव्य था कि वह अपना जीवन यापन ईमानदारी के साथ करें। उस समय आर्यसमाज में प्रविष्ट होने वाला व्यक्ति बेईमानी करने का साहस ही नहीं करता था।

शुद्धि दयानन्द प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में पवित्रता लाने की प्रेरणा करते थे। उनका सिद्धांत था कि व्यक्तियों में पवित्रता आने से ही समाज में पवित्रता आएगी क्योंकि व्यक्ति ही समाज को बनाते हैं।

आर्यसमाज ने व्यक्तियों में धार्मिक भावनाएँ जागृत की। लाखों परिवार ऐसे बने जिनका सारा जीवन सच्चाई और ईमानदारी की परिधि में केन्द्रित हो गया था। इस प्रकार के व्यक्तियों और परिवारों ने समाज में नई चेतना उत्पन्न की और अपने देश की प्राचीन संस्कृति का पुनरुद्धार करने में सक्रिय योग दिया।

इसका परिणाम यह हुआ कि समाज में सच्चे और ईमानदार व्यक्तियों का आवरण होने लगा। यदि यह कहा जाए कि उस समय धूर्त और दुष्टाचारी आर्यसमाज के

कार्यकर्ताओं से घबड़ाने लगे थे तो अस्युक्ति की बात न होगी।

शुद्धि दयानन्द ने समाज का खानपान, रहन सहन और जीवन यापन का ढंग परिवर्तित करने का भरसक यत्न किया। वे चाहते थे कि समाज सात्विकता की ओर



श्री विद्वम्बर सहाय जी प्रेमी

बढ़ें। उनकी सारी शक्ति इसी बात में लगी कि वैदिक धर्म का प्रचार हो जिससे समाज में उत्पन्न विषमता मिट जाए।

शुद्धि दयानन्द के घोर तप और त्याग के बल पर समाज में जो नए विचार जागृत हुए, वे आज स्थिर दिखाई नहीं दे रहे। जिस श्रेष्ठ समाज की रचना का कार्यभार आर्यसमाज ने समाला था, वह आज शिथिल दिखाई दे रहा है।

भारत की स्वतन्त्रता के उपरान्त देश में एक नया ही विचार बढ़ता और फैलता जा रहा है। उसमें धार्मिकता को कोई विशेष स्थान नहीं है। धार्मिकता केवल

व्यक्ति तक सीमित कर दी गई है। व्यक्ति को अधिकार है कि वह किसी भी धर्म की किसी भी बात को माने या न माने। विचार स्वतन्त्र्य के नाम पर प्रत्येक युवक धर्म से विमुख होता जा रहा है। यदि उनको धार्मिक जीवन की ओर प्रेरित न किया गया तो न मालूम वह किस गत में गिरेगा।

आज समाज धर्माचरण को कोई महत्व नहीं दे रहा। धनोपाजन ही सब कुछ है, इस भावना ने समाज का सारा ढांचा ही बदल दिया है। बुकानदार और सरकारी कार्यालयों में काम करने वाला कर्मचारी अपने से ऊपर के पूंजीपतियों और उच्च अधिकारियों से इस बात को तो सीखना चाहता है कि धनोपाजन कैसे किया जाए परन्तु वह यह नहीं सीखना चाहता कि समाज को श्रेष्ठता की ओर ले जाया जाए।

इस समय समाज में जो अनैतिकता आई है उसका मूल कारण धनोपाजन की ही भावना है। धन कमाने में आज मनुष्य धर्म और कर्म दोनों को भूलता जा रहा है। इसी के साथ-साथ आज की राजनीति में भी समाज की भारी क्षति पहुँचाई है। राजनीति ने कुछ व्यक्तियों को इतना स्वार्थी बना दिया है कि वे यह सोचने ही नहीं कि समाज की क्या दशा होती जा रही है। राजनीति जीवन का अंग है। इसके बिना हमारे समाज का कोई काप पूरा नहीं होगा। राजनीति हमारे देश के शासन को संचालित करने का आधार है। परन्तु वेल्ना यह है कि उस राजनीति का संचालन कितने हाथों में है। यदि उसका संचालन सत्य पर आधारित है तो निश्चय ही समाज उन्नत होगा और यदि वह स्वावपरता, पदलोभुपता और शासनाधिकार पर अबलम्बित है तो समाज का पतन अवश्यम्भावी है।

आज समाज अत्य व्यस्त है। समाज में ऐसे तत्वों को बल मिल रहा है जो सदाचरण में विश्वास ही नहीं रखते। आज देश में अराष्ट्रीय प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं, और उन्होंने उस जनता को आतंकित किया हुआ है जो सच्चाई के मार्ग पर चलकर अपना जीवन यापन करती है।

जीवन में पवित्र भावनाएँ लाने के लिये श्रद्धा विद्या-नन्द ने जो मार्ग प्रदर्शित किया था, उससे विमुख होकर

समाज कदापि उन्नत नहीं हो सकता। समाज को उन्नत करने के लिये शुद्ध विचारों का होना आवश्यक है। शुद्ध विचार तभी हो सकते हैं जत्र मनुष्य अपने आहार विहार में शुद्धता बरते। यह नहीं हो सकता कि मनुष्य एक तरफ तो मनचाहा पापाचरण करना रहे और दूसरी तरफ यह कहे कि हम उन्नत कर रहे हैं। आज राजनीतिज्ञों ने यही दृष्टिकोण अपना लिया है। देश में पवित्रता सन्धना के प्रसार को वे भारत की प्रति मान रहे हैं। शराय और मासालार का जोर बढ़ने पर भी भोजन में परिवर्तन लाने की बात करते हैं। इतना ही नहीं किन्तु अन्न नान नृत्यों को वे सांस्कृतिक उन्नत मानने लगे हैं। ऐसी एक नहीं अनेक बातें हैं जो 'ना' दिन तेजी के साथ हमारे युवक और युवतियों में फैलित होनी जा रही हैं। राष्ट्रीय उन्नत की चर्चा के सामने ये राजनीतिज्ञ चरित्र की बात को मुनना तक पसन्द नहीं करते।

ऐसी विषय स्थिति को परिवर्तित करने या सवारने का काय आयसमाज को उसी प्रकार अपने हाथ में लेना चाहिये जिन प्रकार उसने महर्षि दयानन्द के जीवन काल में लिया था। आसमाज में अब भी ऐसे हजारों व्यक्ति हैं जो ईमानदारी की कमाई पर अपना जीवन यापन कर रहे हैं। आसमाज में ऐसे अनेक नर नारी हैं जो धर्मानुकूल आचरण करते हैं। आज भी सरकारी नौकर्या में ऐसे हजारों व्यक्ति मिल जाएंगे जो रिश्वत लेना अधर्म समझते हैं। यदि ऐसे व्यक्तियों की सहाय बढ़ाने में आयसमाज सफल होता है तो निस्संशय वह समाज की एक बड़ी सेवा करेगा।

अनपत तन्नु तदामो अशुने ।
तपस्या रहित मनुष्य प्रभु को नहीं
परखता ।

दिवमारुहत तपसा तपस्वी ।
तपस्वी तप से ऊपर उठता है ।
तपसा पुत्रा विजहि शशू ।
तप से सम्पूण विघ्न बाधाओं की
जीत ।

त्य तप परितप्यालय स्व ।
तू तप कर स्वर्ग को प्राप्ति कर ।



आर्यसमाज की बृहत्त्रयी

(विद्याभूषण आचार्य ओंकार मिश्र "प्रणव" शास्त्री एम० ए० फीरोजाबाद)

महर्षि दयानन्द ने जितना साहित्य लिखा है, यदि उसका हम वर्गीकरण करें तो स्थूल रूपण उसके दो भेद हो सकेंगे। प्रथम मालिक साहित्य, द्वितीय अनूदित साहित्य। मौलिक साहित्य की श्रेणी में मोक्षरत्नविधि, सत्याग्रहप्रकाश, सस्कारविधि, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, सम्पूर्ण वाच्य प्रबोधार्थ कृतियाँ सम्मिलित हैं। अनूदित साहित्य में मट्टधिकृत वेदना ग्रहो। इस छोटे से लेख में ऋषि के मौलिक साहित्य में ही लो प्रमुख ग्रन्थ है, उन पर ही कुछ लिखना अभी ट है। महर्षि के मौलिक साहित्य में सस्कार विधि, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, एव तत्पर्याय प्रकाश सर्वप्रधान ग्रन्थ हैं। इन तीनों ग्रन्थों की विद्येयताओं के कारण ही आर्यसमाज इन तीनों बृहत्त्रयों के नाम से पुकारते हैं।

सर्वप्रथम विचारणीय है कि महर्षि ने इन तीन ग्रन्थ रत्नों का निर्माण किस उद्देश्य से किया? यह बात जानने के लिये इन ग्रन्थों के प्रारम्भ में लिखित भूमिका ही पर्याप्त है। इनमें से ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका तो स्वयं वेदनाश्रय की भूमिका है, जो उसके विषय में इस दृष्टिकोण से विचार विमर्श करने की आवश्यकता नहीं, हा इस विचार कोटि में सस्कार विधि तथा सत्याग्रहप्रकाश ग्रन्थ ही आते हैं। अतः क्रमानुसार इन ग्रन्थों पर विचार कीजिये।

सस्कार विधि

ऋषि को यह अनुपम कृति है। इसकी भूमिका में ऋषि ने जो शब्द लिखे हैं उनमें ज्ञात होता है कि ऋषि ने इस ग्रन्थ का निर्माण इस लिये किया कि लोग इस प्रणाली के आधार पर जीवन को मत्स्यता के सन्धे में डालकर धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष को प्राप्त कर सकें तथा राष्ट्र के लिये सुन्दर सुसंस्कृत नागरिक बन सकें।

सस्कार शब्द हमारी यदिक संस्कृति में अति प्रचलित

शब्द है। साधारणतया सभी जानते हैं कि किसी वस्तु का सस्कार हो जाने के उपरान्त उस वस्तु का कितना मूल्य बढ़ जाता है। यो देखने में मिट्टी का कोई मूल्य नहीं किन्तु इसी मिट्टी का कोई कुशल कुम्भकार घट, शराबा आदि के रूप में सस्कार कर देता है, अथवा उसको ईंट की शकल दे देता है तो वही मिट्टी मूल्यवती हो जाती है। वस्तुतः सस्कार करने से वस्तु में गुण परिवर्तन होता है, रूप परिवर्तन होता है और होता है उपयोग परिवर्तन है। साधारणतया लकड़ी का मूल्य २-५० अथवा ३) मन होता है, किन्तु एक छड़ी जो कि सस्कार की गया है स्नान कर चुकी है, उसी का दो या तीन रूपया हो जाता है। इस प्रकार हम विचार सकते हैं कि मूल वस्तु में सस्कार हो जाने के उपरान्त उस वस्तु की क्या विशेषता एवं महत्ता हो जाती है।

यह विवेचन भौतिक वस्तुओं के सस्कार का है इसी विधा में हम जरा चेतन आत्मा के सस्कार के विषय में विचार करें। एक व्यक्ति जो कि शिशु रूप में अभी उत्पन्न हुआ है, वह एक असहाय, सजीव मास पिण्ड है, उसकी पुष्टि तथा वृद्धि के लिए किसी अन्य सहायक एवं साधनों की अपेक्षा है। भोजनावि पदार्थों से उसका शरीर दृष्ट-पुष्ट होकर समुन्नत होता है, उसी प्रकार प्राच्य प्रणाली के आधार पर सस्कार विधि की प्रक्रिया से दृष्ट-पुष्ट मास-पिण्ड में रहने वाला आत्मा भी अपने गुण तथा बंधव के विकास की ओर बढ़ता है। उत्पन्न मानव का रहन-सहन, रीति-रिवाज, शिक्षा-वीक्षा, ये सब मानव समाज के द्वारा विविध प्रणालियों के द्वारा प्रदत्त सस्कार के ही परिणाम हैं। मानव का अन्त करण चतुष्टय सस्कारों की शुद्ध चेतना से निर्मल एवं जागृत होता है, इस दृष्टिकोण से महर्षि दयानन्द ने बिना किसी भेदभाव के मानव-निर्माण की विधा में 'सस्कार-विधि' जैसे महान्त



ग्रन्थ का निर्माण किया। ऋषि ने पुरातन श्रौत, स्मार्तादि ग्रन्थों का अथर्वलोकात्मक कर 'सारततो प्राह्य मयास्य फला के के सत्य सिद्धान्त के आधार पर सञ्चित किन्तु अत्यन्त उपयोगी सत्कार विधि हमारे समक्ष उपस्थित की कि जिसके आधार पर मानवमात्र अपने राहट्ट के लिए मस्कारी नागरिकों का निर्माण कर सके।

महर्षि ने इस महान् ग्रन्थ में मानव निर्माण की वे सभी प्रक्रियाएँ प्रस्तुत कीं जिनके आधार पर वस्तुतः मानव मानव कहलाने का अधिकारी बनता है। इस 'सत्कार विधि' में 'गर्भाधान' से लेकर 'अन्त्येष्टि' कम-विधि तक सोलह सत्कार गिनाये हैं। इनमें गर्भाधान, पुसवन, सीमन्तोन्नयन, ये तीन सत्कार जन्म से पूर्व हैं, तथा जातकर्म से लेकर 'सन्ध्यास' तक ये जन्मोपरान्त जीवन निर्माण की प्रणाली का सकेत करते हैं, और मरणोपरान्त 'अन्त्येष्टि कम' यह मृतक शरीर ठिकाने लगाने के लिए सर्वोत्तम वैज्ञानिक प्रक्रिया का निर्देश करता है। इस प्रकार ऋषि ने सृष्टि में मानव निर्माण का बीजवपन करने के लिए 'सत्कार विधि' का निर्माण 'सत्यार्थप्रकाश' से भी पूर्व किया।

सत्यार्थप्रकाश

ऋषि की यह महती एवं अदभुत रचना 'सत्कार विधि' तथा 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' के बाव की रचना है। इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य ग्रन्थ का नामकरण ही बता रहा है। अर्थात् ऋषि की सत्कार में सत्य अथ का प्रकाश करना ही अभीष्ट था। सत्य अथ के प्रकाश करने के लिए जो प्रणालियाँ, साधन तथा उपक्रम हो सकते हैं, उन सबका वर्णन इस अनुपम ग्रन्थ में विद्यमान है। ऋषि ने इस पवित्र ग्रन्थ को चौदह भागों में विभक्त किया है, इन भागों का नाम उन्होंने समुल्लास रखा है। ग्रन्थ-विभाग के लिए अध्याय, परिच्छेद, उल्लास शब्द संस्कृत साहित्य में अतीव प्रचलित एवं प्रसिद्ध हैं किन्तु ऋषि ने उल्लास शब्द से पूर्व 'सम्' उपसर्ग का प्रयोग कर यह सकेत किया है कि सत्य अथ का प्रकाश हो जाने पर मनुष्य को 'समुल्लास' अर्थात् अत्यन्त हार्दिक प्रसन्नता

होती है, तदनुसार ही महर्षि ने अध्ययादि नाम छोड़कर समुल्लास शब्द की योजना ग्रन्थ विभाग में की है। इस 'सत्यार्थ प्रकाश' में ऋषि ने यथास्थान जो अन्य ग्रन्थों के प्रमाण उद्धृत किए हैं, उनकी तालिका के आधार पर यह अनुमान लगाना कठिन हो जाता है कि इस ग्रन्थ के लिखने से पूर्व कितने ग्रन्थों का स्वाध्याय किया था तथा उनकी स्मृति कितनी तीव्र थी और उनकी प्रतिमा की परितीमा क्या थी? मेरे अपने विचार से ऋषि ने इस ग्रन्थ के लिखने से पूर्व कम से कम ५००, ६०० ग्रन्थ अवश्य ही पढ़े और देखे होंगे। इन ग्रन्थों की प्राप्ति में ऋषि को कितना कष्टोपरिश्रम करना पड़ा होगा यह एक पृथक् विचारणीय विषय है।

विषय-विवेचन की दृष्टि से 'सत्यार्थप्रकाश' के स्वरूप पर विचार कीजिए। प्रथम समुल्लास में ईश्वर के नामों की व्याख्या तथा ओमनाम की प्रभुवता, द्वितीय समुल्लास में 'शिक्षा' प्रणाली की विवेचना, तृतीय समुल्लास में अध्ययन-अध्यापन विधि का वर्णन, चतुर्थ समुल्लास में गृहस्थाश्रम की रूपरेखा, पंचम समुल्लास में वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम की संमोक्षा, षष्ठ समुल्लास में राजधर्म का वर्णन, सप्तम समुल्लास में ईश्वर, देव-विषय प्रतिपादन, अष्टम समुल्लास में दृष्टि की उत्पत्ति स्थिति तथा प्रलय का वैज्ञानिक प्रकार, नवम समुल्लास में विद्या, अविद्या बन्ध मोक्ष विषय की कीर्तना, दशम समुल्लास में आचार-नाचार, भय मृत्यु विषय की प्रतिष्ठा, एकादश समुल्लास में आर्याजतीय मत्तन्नाम्नर विद्वज्जी समा-लोचना, द्वादश समुल्लास में बौद्ध जन चारवा- विचार-धारा का समीक्षण, त्रयोदश समुल्लास में ईसाई मत का पोस्टमाटम, तथा चतुर्दश समुल्लास में इस्लाम मत का सर्वक्षण किया गया है। ग्रन्थ के अन्त में 'स्वमन्तव्या-मन्तव्य' प्रकाश नामक प्रकरण में ऋषि की वेदानुमोदित मान्यताओं का वर्णन है। इस्यावन रसों की यह वेदी-प्यमान मात्रा पाठकों के मस्तिष्क में ज्ञान की प्रखर किरणों का आधान कर देती है।

सम्पूर्ण ग्रन्थ का पर्यालोचन करने पर प्रतीत होता



है, कि किस प्रकार श्रद्धि ने अपनी अलौकिक प्रतिभा, अबभूत विद्वता एव अर्धं नर्तग' शैली के आधार पर प्रतिपाद्य विषयों का विवेचन किया है। मानव जीवन का ऐसा कोई दृष्टिकोण अवशिष्ट नहीं है, जो कि सत्यार्थ प्रकाश सेपढ़ने को न मिलना हो।

अत्यन्त मनोहारिणी सरल तथा सुबोध प्रदोत्तर प्रणाली के रूप में दुरूह दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन साधारण जनता को भी आनन्द की अनुभूति कराता है। ग्रन्थारम्भ में लिखित तथा पूर्वाद्ध' के पञ्चान लिखित भूमिका, और अनुभूमिकाओं से इस ग्रन्थ लेखन का उद्देश्य वर्णन में प्रतिबिम्ब की भाँति स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है। श्रद्धि का इस ग्रन्थ रचना में उद्देश्य केवल इतना है कि मनुष्य अपनी बुद्धि विवेचना के आधार पर तर्कों के वातावरण में धर्म का सत्य स्वरूप जानकर जीवन की गतिविधि को प्रभु के मविधान के अनुकूल बनकर मोक्ष प्राप्त कर सके। तथा प्रचलित असत्य, मानव कृत मतमतान्तरो की भूलभुलैया में पडकर कष्ट न भोगे। इसी पवित्र भावना के आधार पर ग्रन्थ के जन्म में महर्षि के ये शब्द पढ़िये "सर्व शक्तिमान परमात्मा की कृपा सहाय और आप्तजनो की सहानुभूति से "यह सिद्धान्त सवत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जाय" जिससे सब लोग सहज से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहे, यही मेरा मुख्य प्रयोजन है"।

इन पवित्र शब्दों की विद्यमानता में कौन ऐसा अज्ञ मनुष्य होगा जो कि श्रद्धि की 'सर्वजन हिताय सर्वं जन सुखाय' आन्तरिक कष्टना मारी पुरीन मानना को अग्यथा शब्दों में पठ सके।

श्रद्धेवादि भाष्य भूमिका

यह ग्रन्थ जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, चारों वेदों के भाष्य की भूमिका है, इसके नाम से भी यही अर्थ एव प्रयोजन ध्वनित होता है। वेदभाष्य की भूमिका होते हुए भी इस ग्रन्थ की मौलिक ग्रन्थों में गणना इसलिए की गई है कि इस ग्रन्थ में वेदों की मान्यता

के विषय में श्रद्धि ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, तथा उन विचारों की पुष्टि वेद मन्त्रों से की है। इस ग्रन्थ को आरम्भ करते हुए श्रद्धि ने प्रारम्भ में स्वरचित आठ श्लोक लिखे हैं, इन श्लोकों में इस ग्रन्थ के लिखने का उद्देश्य समिहित है। अन्तिम तीन श्लोकों का भाव यह है—कि मैं प्राच्य आर्य श्रद्धि मुनियों की वेद भाष्य की समातनी प्रणाली के आधार पर वेद मन्त्रों के अर्थ कहूँगा, जिससे साम्प्रतिक वेद भाष्यों के दोष दुर्गुण दूर होकर वेदों का सत्य समातन अर्थ मानवमात्र के समक्ष ईश्वर की सहायता से प्रकाशित हो सके।

इस उपस्थापना की छाया में इस ग्रन्थ के निर्माण का प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है। श्रद्धि को चारों वेदों का भाष्य करना अभीष्ट था तबनुसार जो उन्होंने श्रद्धेव का भाष्य (आधे से अधिक) तथा सम्पूर्ण 'यजुर्वेद' का भाष्य किया इस प्रसंग में मैं अपनी धारणा पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता हूँ कि श्रद्धि ने 'यजुर्वेद' के भाष्यारम्भ जो एक पद्य "योजीवेद्युवधाति सर्वयुक्तुत ज्ञान गुणरीश्वर। त तत्वा नियते परोपकृतये सद्य सुद्योधाय च ॥ श्रद्धेवरय विधाय वं गुण गुणि ज्ञान प्रवानुर्बं।

भाष्य काम्य मयो क्रियामय यजुर्वेदस्य भाष्यम्यया। लिखा है, उससे यह बात रेखाङ्कित पद के अर्थ से सर्वथा स्पष्ट है कि श्रद्धि ने सर्वप्रथम श्रद्धेव का भाष्य सम्पूर्ण किया तत्पश्चात् ही यजुर्वेद का भाष्य आरम्भ किया। यहाँ वेद विद्या के पारंगत पण्डित पुद्गल ये, फिर यह नहीं हो सकता कि उन्होंने श्रद्धेव का भाष्य अधूरा छोड़कर यजुर्वेद का भाष्य प्रारम्भ कर दिया हो। यदि ऐसा हुआ तो क्यों? क्यों फिर श्रद्धि ने रेखाङ्कित पद स्वरचित पद्य में समिन्विष्ट किया। अतः यह बात सर्वथा सिद्ध है कि श्रद्धेव पर श्रद्धि का भाष्य पूर्ण था वह किन्हीं भी कारणों से अप्राप्य हो गया या मध्य हो गया।

अस्तु श्रद्धि ने इस 'श्रद्धेवादि भाष्य भूमिका' में चारों वेदों के प्रतिपाद्य विषय की अति सक्षिप्त सारणी का दिग्दर्शन कराया है। इस ग्रन्थ में कुल ५७ विषयों की ओर सकेत है। इस सहाय में वेदों को विवेचनीय



वह ब्रह्मचारी क्यों आया था

उठ चलो लेखनी लिखो आज वह ब्रह्मचारी क्यों आया था ।

अमृत का स्रोत बहाने को जो विष पीकर मुसकाया था ॥

सकट की पावक में जल कर जो शुद्ध स्वर्ण सा चमक उठा ।

चल रहा विश्व सारा उस पर, उसने जो पथ दिखलाया था ॥

हो रहे देश स्वाधीन तोड़ साम्राज्यवाद की जंजीरें ।

मुन्दर स्वराज्य का शब्द ऋषि ने पहले ही बतलाया था ॥

सब देश समझने लगे आज हैं जाति भेद के पातक को ।

जिस छ्त्रा दूत का भून गगने का अभियान चलाया था ॥

जो हीन समझते नारी को पंरो की जती बतला कर ।

बन गई राष्ट्रसूत्र की प्रश्न विन्ने यह पाठ पढ़ाया था ॥

है अल्लाह वाले सान फलक को सात उमूल लगे कहे ।

ईपाई मत ने खुदा चोथवें अम्बर पर बिठलाया था ॥

प्रतिमा पूजा का साधन है, प्रभु निराहार तब जान गये ।

जब ध्यानन्द ने वेदो का पावन प्रकाश दिखाया था ॥

हिल गई मतो की दीवारें सब लगे देखने बुकचो को ।

शास्त्रार्थ तर्क का योगी ने जब उन पर शस्त्र चलाया था ॥

बुझ गया अन्त में दीप किन्तु दे गया जगन को दीबाली ।

जो ब्रजानन्द ने वेदो का वह पावन दीप जलाया था ॥

रह गये चमकते तारे पर छुप गया चाँद वह भारत का ।

लज्जित हो दीबाली ने अविद्यारी में भूँह डुबकाया था ॥

—धर्मन्द्रनाथ 'अलिन्द'

हल्द्वार, बिजनौर

विषयो का विशदबणन देखने को मिलता है । ईश्वर से लेकर सृष्टि सिद्धान्त के अनुकूल समस्त पदार्थ जात का वर्णन वैज्ञानिक प्रक्रिया के आधार पर मिलता है । इस ग्रन्थ के पढ़ने से विद्वन्मण्डल सहजतया जान सकता है कि वेदो में ईश्वर, जीव प्रकृति इन तीन अनादि सत्ताओ की मीमासा किस प्रकार की गई है । भूगोल के मानवमात्र की नहीं, अपितु प्राणीमात्र के हित साधना का किस प्रकार वर्णन किया गया है । किस प्रकार वेदो में जीव, ब्रह्म की चर्चा तथा सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, गणित, मुक्ति, वैज्ञानिक आविष्कार, सामाजिक व्यवस्था, वर्ण व्यवस्थादि का किस प्रकार विशद विवेचन किया है ।

इस प्रकार 'ऋग्वेदादि साधु भूमिका' वेदो के उदात्त

ज्ञान की सरल सुगोप्य रचणिम शक्ती करा वेती है । मान्य मनीषियो की यह ध्रुव धारणा है जो भी काल, देश, राष्ट्र या जाति इन तीन वहानु ग्रन्थो का पर्यालोचन कर इनके आवशों को क्रियामक साधे में टाल सकेगा, वह कभी भी भ्रान्त नहीं हो सकेगा । आर्यों के लिये तो इन ग्रन्थो का अध्ययनाध्यापन विशेष रूपेण कर्तव्य है । इन तीन ग्रन्थो की महत्तम विवेचताओ के कारण ही इन ग्रन्थ रत्नो को 'वृहत्त्रयो' की सजा दी जानी चाहिये । ऋषि निर्वाण के इस पवित्र पत्र पर इन ग्रन्थो के स्वाध्याय का सब लोगो को व्रत लेना चाहिये, जिससे हम सब ऋषि के शब्दो में ही धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारो पदार्थों को प्राप्त कर सशुभ जीवन व्यतीत न कर सकें ।





मुक्तिदाता महर्षि

(आचार्य प० रामकिशोर जी शास्त्री, गोवर्धन [मथुरा] उ० प्र०)

सृष्टि के आरम्भ से ही आर्य जाति ने वैदिकनस्कृति को पूर्ण रूप से क्रियान्वित करके महानारन का उतक लोकोत्तर बंधन, जगदाधिपत्य एवं जगदपुत्रत्व को प्राप्त किया। इत तथ्य को विश्व के सभी विचारशील महानुभावों ने एक मत से स्वीकार किया है। महानारन के कुछ पूर्व से "अत्याहुतिं त्विन् महानामपत्रं शनिष्ठा" बड़ो की भी अधिकतम उन्नति पतनपुत्रक होनी है। आर्य जाति भी इस सृष्टि का अपवाद न बन सकी, और उसे भी बिनाशक, कलुषित कुरीतियों की अधीन अस्त-व्यस्त कर दिया, जिसके फलस्वरूप अज्ञानिता ही शतशतों तक बंधेसक, विद्यार्थी शासकों के पदाकांत होना पडा। इस अज्ञाननिमिराठन दशा में गौतममुनि, स्वामी चराराच्य नानक, कबीर, राजाराम मोहनराय, स्वामी विवेकानन्द प्रभृति महानुभावों ने भारतीय जनता को कुरीतियों से मुक्त कर देश को गौरवान्वित करने का प्रयास किया। किन्तु ये सभी महापुरुष आर्य जाति को किसी एक ही क्षेत्र में सम्मनित करने का ध्येय प्राप्त कर सके। इसी का परिणाम था, कि युगपुत्र महर्षि दयानन्द सरस्वती को, सामाजिक कुरीतियों तथा पराधीनता से भारतीय जनता को मुक्त कर गत गौरव का पात्र बनाने के लिये मगरीय प्रयत्न करना पडा। महर्षि के कार्यकाल में देश की सामाजिक दशा पारस्परिक भेदभाव के कारण अत्यन्त छिन्न-भिन्न एवं दयनीय थी। छुआ-छूत के भूज से ग्रस्त समाज का नेतृत्व, आर्य जाति के एक वर्ग को मानवीय अधिकार वेदादि के पठन-पाठन से ही वञ्चित न कर रहा था, अपितु घृणापूर्ण दृष्टि से देख रहा था, "डोल गवार सूत्र पशु नारी, ये सब ताडन के अतिहारी" यत् तुलसीदास की चौपाई उन ही श्रुति की परिचायक है। कल्पित सामाजिक नियमों के आधार पर "स्त्री सूत्री शेष नाधीयताम्" इस वाक्य को श्रुति शताकर स्त्री तथा

सूत्रों को मूर्ख ही रखकर समाज में अज्ञान का साम्राज्य स्थापित किया जा रहा था। सूत्र द्वारा वेद मन्त्र का उच्चारण करने पर जिह्वाच्छेद तथा सुनने पर कान में जीसा पियलाकर डाङ्गे का पात्रविक नियम भी बना डाला था। सामाजिक नेताओं के अन्धकारों से पीडित सूत्रवर्ग ईसाई तथा मुसलमानों की अवज्ञा की नीति तथा उनसे प्राप्त आश्वानन एवं रक्षण को ईश्वरीय कृपा मानकर उनका अनुयायी ही रहा था। इन परिस्थितियों के कारण आर्य जाति दिन प्रतिदिन घटती तथा विधर्मियों की सख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। एकबार कृती भी कारण से विधर्मी बने अपने नाई को पुन अपने में मिलाना स्वयं अवश्य था। अधिहास बाल विद्यार्थी पुत्रविवाह पर लगे सामाजिक प्रतिबन्ध के फलस्वरूप यवामन स्वीकार कर दयाओं की वृद्धि कर रही थी। स्त्री एव सूत्रों की घोर उपेक्षा सर्वसम्मत सामाजिक सिद्धान्त बन चुका था। आर्य जनता का अविश्व प्रथम अन्धकारमय था। ऐसी परिस्थिति में महर्षि ने अचनीय होकर सभी मानवताओं पर घोर प्रहार किया। यजुर्वेद के २६ वें अध्याय के 'यवे मा वाच व यागी मावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्म राजग्यभ्याम् । सूत्राय चार्यम् च स्वाय चारणाय च ।'

इस मन्त्र द्वारा सब को वेद पढ़ने का अधिकार सिद्ध किया। मार्गों, मंत्रों आदि के उदाहरणों द्वारा स्त्रियों को वेदादि शास्त्रों के अध्ययन का पात्र घोषित किया। 'यत्र तास्त्वुत्पत्यते' इत्यादि मनु ध्वजन द्वारा स्त्री जाति के सम्मान को सुत्र मूल तथा अमान को दुख मूल बनाया।' ईसाई तथा यवन मतों का खण्डन कर महर्षि ने भारतीय जनता को उबर जाने से रोका तथा गये हुए भारतीयों को पुन आर्य जाति में सम्मिलित कर

आर्य जाति को संगठित बनाया। इस प्रकार महर्षि ने धर्म के आविष्कार, ईश्वरीय ज्ञान वेद के आधार पर बोध पूज करिपत साम्राजिक द्धर्मो से भारतीय जनता को मुक्ति प्रदान की तथा आर्य जाति को बहिक सिद्धान्तो के मुद्दह प्रासाव म मुरक्षित कर दिया जिस पर बिर्वामजा के सिद्धान्त बाण नि-प्रभाव सिद्ध हुये ह ।

२-पराधीनता से मुक्ति

इतिहास प्रसिद्ध राष्ट्र मानव सांगठित दशा के कारण आर्य जाति विदेशियो के पदाक्रान्त थी। सन १५७ के स्वतन्त्रता युद्ध के जयकल हो जाने से पत्रां वनप्रता का नाम लेना मृत्यु का जाहान समझा जाना था। विजित आर्य जाति अरा तोष से सयम अवद्विचन होती जा रही थी, देश वरान मत्र प्रयो के चरणी मे समर्पित कर चुका था जत सयम स र्वा ररवा दु पन, के सिद्धान्त को मानने वाले महर्षि क हृदय मे देश की पराधीनता तीव्र बाण क सन्तान धोडा दे रही थी। अग्रजो के अ-अवार की चिन्ता न कर महर्षि ने आर्य जाति को जगाने का महत्त्वपूर्ण काम किया, 'सत्यार्थ-प्रकाश' द्वारा गत मारत्र प्त स्मरण कराया। विदेशी राज्य की निन्दा कटन हुय महर्षि ने लिखा—“प्राचीन म भी आर्या का अजग्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन निमव राज्य इस समय नहीं है, जो कुछ हे भी वह भी विदेशियो के पदाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोडे राज्य स्वतन्त्र हू टुदिन जब आता हे तब देश बासियो को अनेक प्रकार क दुख भोगने पडते है, कोई कितना भी कहे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता हे, वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मत-मतांतर के आयह से रहित अपने और पराये के पक्षपाल शून्य प्रजा पर पिना के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियो का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं”, इसके अतिरिक्त यत्र-तत्र सबत्र अपने विद्वता एव जोजपूर्ण भाषणो द्वारा भी सुध आर्य जाति को जगाया। ११ वे समुल्लास मे पूर्वजो के चक्रवर्तित्व तथा जगदुपुल्व की चर्चा करते हुए महर्षि ने लिखा, कि ऐसे महान ध्यक्तियो की सन्तान तुम सबका निराश होना लज्जाजनक हे।

महर्षि के प्रयास से राष्ट्र मे नयी जागृति एव शक्ति का आविर्भाव हुआ। महर्षि की प्रेरणा से श्री श्याम जी कुणवमा, स्वामी श्रद्धानन्द जी, श्री मदनलाल डोंगरा, लाला हनरज, लाला लानपतगय, डा० सत्यपाल आदि ने अपना सक्षम राष्ट्र के चरणा पर ध्योठावर कर दिया, महर्षि के विचारो ने ही भाई परमानन्द, बालमुकुन्द, गंडालान, रामप्रसाद बिस्मिल, सरदार भगतसिंह आदि को स्वतन्त्रता संग्राम मे सक्रिय योग देने की प्रेरणा की। महर्षि को श्रद्धाजलि देने हुये श्री अनन्त शयनम आयगर त्पुत्र अध्याज लोकमान ने कहा था कि “यदि महात्मा गान्धी राष्ट्र नेता हे तो महर्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्र भितामर्ह । दयानन्द हमारी राष्ट्रीय प्रवृत्तियो तथा स्वाधीनता आन्दोलन के आद्य प्रवतक थे, उन्हो के चरण-चिह्नो पर चलकर गान्धी जी ने आगे कार्य करने का पथ किया। इसी प्रकार सभी राजनैतिक नेताओ ने महर्षि को स्वतन्त्रता की नायना का जन्मदाता स्वीकार किया हे। महर्षि की पवित्र भावना, काय प्रणाली एव विचारगति ने ही पल्लवित होकर हमे विदेशी शासन मे मुक्ति प्रदान की यह निर्विवाद सत्य हे।

३ सत्कार से मुक्ति

नारतीय सस्कृति मे मुक्त होना मानव जीवन का परम लक्ष्य मना हे। नीतिशास्त्र के महाविद्वित श्री बिष्णु शर्मा की —

“धर्मोऽ काममोक्षेऽयु यस्यैकीर्णिव न विद्यते। अजा-गलस्तनस्पेतस्य जन्म निरर्थकम्।” यह सूक्ति धर्मार्थ काम मोक्ष एव पुष्पाय चतुष्टय की उपेक्षा करने वाले मानव का जम बकरी के गले के स्तन के समान व्यर्थ घोवित करती हे। अत मानवो ने अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार परमोपादेय मुक्ति के स्थान एव प्रकारो की कल्पना की हे। अर्धे-अधी लोग मोक्ष जिला “जिवपुर मे जाकर मोनी होकर बैठना, ईमाई चीये आसमान, मुसलमान सातबे आममान मे आनन्द भोना, वाममार्गी श्रीपुर, शैव कलाश, बंणव बंभुण्ड, गोकुलिया गोसई गोकुल मे जाकर उत्तम स्त्री, अन्न, पान, वस्त्र, स्थान आदि को पाकर (शेष पृष्ठ २९ पर)



वेदप्रचार का शुभ परिणाम

[श्री मोहनलाल जी मोहित लाबेनीर सॅ-पियेर मोरीशस]

महर्षि दयानन्द जी ने "वेद पढ़ना-पढ़ाना और मुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म" बताया है। और देश-देशान्तर, द्वीप-द्वीपान्तर में वेदप्रचार के द्वारा मान-वता का उत्थान करना आर्यसमाज का प्रधान उद्देश्य बताया है। महर्षि दयानन्द ने परम पुनीत जीवन से प्रेरणा लेकर आर्यसमाज के तपस्वी विद्वानों ने सात्विक



श्री मोहनलाल जी मोहित

तन्मयता से वेदप्रचार और समाज-सुधार के कार्यों में अपने को बलिदान कर दिया।

आर्यसमाज का प्रारम्भिक युग का वेदप्रचार और सामाजिक सुधार के कार्यों ने लदिये तो प्रसुप्त भारतीय राष्ट्रीय जीवन में नव चेतना दी।

वेद प्रचार, समाज-सुधार तथा शिक्षा-क्षेत्र में गुरुकुल और डी. ए० बी० कालेज के द्वारा श्री महात्मा मुंशी-

राम, महात्मा हसराम, मुनिवर गुरुबल्ल, लाला लाजपत-राय, धर्मवीर प० लेखराम जी, जैसे तपस्वी महापुरुषों के योगदान से आर्यसमाज में १० वर्ष में ही युगांतरकारी कार्य कर दिया। राष्ट्र का एक चौथाई भाग जो अछूत नाम से पुण्य पड़ा था, आर्यसमाज ने उनको शुद्ध और शिक्षित कर राष्ट्र का उपयोगी अंग बनाया। बाल-विवाह को निषेध कर और बाल विधवाओं का पुनर्विवाह को समर्थन देकर आर्यसमाज ने हिन्दुओं के सामाजिक कलक को दूर किया।

विधर्मियों से शास्त्रार्थ में लोहा लेकर उन्हें परास्त कर आर्यसमाज ने उनके पत्रों से हिन्दू जनता की रक्षा की। जन्म जाति का मिथ्याभिमान तथा नीच-ऊँच का दम्भ-पाखण्ड रूपी कोढ़ को आर्यसमाज ने विध्वंस कर दिया तथा परस्पर में भ्रातृभाव का प्रचार कर सध शक्ति को जन्म दिया। मानव प्राणीमात्र को विद्या-शिक्षा का अधिकार देकर हिन्दू समाज की मानसिक दामता को दूर किया। मातृ-भाषा का प्रचार, वैदिक सस्कृति का प्रसार और सबको सन्ध्या गायत्री का अधिकार देकर वैदिक ऋषि परम्परा और राम, कृष्ण के वंशजों को महर्षि दयानन्द एव आर्यसमाज ने जीवन दान दिया। धार्मिक क्षेत्र में पौराणिक ऋषि अन्धविश्वास से निराश और हताश शिक्षित लोक मत को ज्ञान कर्मोपासना की अमृत-धारा से आर्यसमाज ने नवजीवन प्रदान किया।

आर्यसमाज के तपस्वी विद्वानों ने देश-देशान्तर में वेद-प्रचार से मनुभव की दिव्य-ध्वनि से जन-जीवन में नव चेतना दी। युग में पलटा छाया। आर्य समाज ने तर्कगत जाग्रत विवेक से समाज और राष्ट्र में विचार-विनिमय की शैली सीखी और बौद्धिक एव मानसिक दासता का अन्त हो चुका और जागरण-जगत् में लोक-मत में प्रगति पाई।

विश्व में अब तो आर्थिक और राजनीतिक दासता

की जगह नहीं रही, सम्प्रति स्वराज्य तथा स्वतन्त्रता की विजय ध्वनि ही लोक-वाणी बनी है।

पिछली एक शती के युग महापुरुषों की महान् तपस्या ने अर्थ-लोलुप साम्राज्यवादियों के अत्याचार और शोषण से जनता को मुक्त किया और वेद-प्रचार, शिक्षा-प्रसार तथा समाज सुधार का प्रबल आन्दोलन से अन्धविश्वास तथा गुरुदम का गढ़ भी गिर चुका है। उत्पीड़ित एवं शोषित मानवता को राहत मिली। उनके नैतिक जीवन में विकास हुआ, उनके विकसित हृदय तथा परिष्कृत मस्तिष्क अपनी व्यावहारिक कुशलता से सामाजिक जीवन स्तर को शुद्ध एवं उत्कृष्ट बना रहा है। आयसमाज के महारथी गण ने देश-देशांतर में दौरा करके वेद प्रचार की देव-ध्वनि से सुवर्णयुग का निर्माण किया, ये सब वेद-प्रचार का ही शुभ परिणाम है।

उपदेशक विश्व विद्यालय

श्री सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा देहली के तत्वावधान में "उपदेशक-विश्ववैदिक विद्यालय" संस्थान की स्थापना आवश्यक है।

जहाँ से देश-वेदशत म. प्रचाराय उच्चकोटि के वैदिक साहित्य में पारंगत (बढ़ान को दा बा तीन वर्ष के लिए उपदेशक-कला का प्रशिक्षण दिया जाय।

गुरुकुलों और आर्य विद्यालयों से लगनशील तपस्वी ३० ब्रह्मचारी को चुना जाय प्रशिक्षण के लिए और उन्हें निःशुल्क प्रशिक्षण संस्थान की ओर से दिया जाय। देश-विदेश में प्रचारार्थ विश्व की प्रमुख १०, १५ भाषाओं के माध्यम से प्रशिक्षण देना आवश्यक होगा। यदि सावदेशिक समा शिक्षा-विशेषज्ञ प्राध्यापकों से कथित विषय पर एक कार्यक्रम तैयार कर विचार-विनिमय के लिए प्रकाशित करें तो ठीक होगा।

संस्थान को स्थाई बनाने के लिये पाँच या छे लाख की निधि की आवश्यकता है, जो विश्व की आर्यसमाजों श्रद्धा से करना चाहे तो एक वर्ष में ही पुष्कल धन मिल सकता है। उपर्युक्त संस्थान को द्वारा ही देश-विदेश में वेद-प्रचार का उद्देश्य सफल हो सकता है।

(पृष्ठ २७ का शेष)

आनन्द भोगने को ही मुक्ति मानते हैं, पौराणिक लोग ब्रह्मा के साथ जीव के सालोषय, सानुष्य, सामीप्य तथा सायुष्य को, नवीन वेदान्ती जीव के ब्रह्म में लय को मुक्ति मानते हैं। महर्षि ने सत्याय प्रकाश के नवम समुल्लास में इन सबका विस्तारपूर्वक खण्डन करके "स एष पूर्वधामपि गुरु कालेनानवच्छेदान्" तत्र निरतिशय सवज्ञ बीजम्" पातञ्जल योग दर्शन के इन दो सूत्रों द्वारा सुसिद्ध पूर्व आचार्यों के भी गुरु तथा सवज्ञ परमात्मा के त्रिकाल-बाधित सत्य ज्ञान वेद के आधार पर मुक्ति के सत्त्वरूप का विवेचन किया है। अल्पज्ञ मानवों द्वारा निर्दिष्ट, कल्पित नाना प्रकार की मूर्तिपूजा रूप हेत्वाभास को व्यर्थ बताते हुये महर्षि ने परमेश्वर की आज्ञा का पालन, अधम अविद्यादि का परित्याग, सत्याचरण, परोपकार, विद्यादि की वृद्धि, वेद प्रतिपादित ईश्वरोपसना, योगाभ्यास, धर्म तथा ज्ञान की उन्नति, न्याय रक्षा आदि को मुक्ति का तथा इसके विपरीत आचरण को बन्धन का साधन बताया। इन साधनों द्वारा ही मानव का हृदय पवित्र तथा आत्मा बलवान् बनकर ईश्वर के साक्षात्कार के योग्य बनता है। इस सम्बन्ध के विशेष ज्ञान हेतु "सत्याय प्रकाश" के नवम समुल्लास का गम्भीर स्वाध्याय परमावश्यक है। अवैदिक मतमतान्तरो द्वारा प्रवर्धित इन्द्रजाल में न भटककर आर्य जाति मुक्ति के यथाथ स्वरूप को जानकर तदनुकूल आचरणों द्वारा अपना जीवन लक्ष्य प्राप्त कर सके यह महर्षि की हार्दिक अभिलाषा थी। सामाजिक कुरीतियों एवं पराधीनता से मुक्ति मिले बिना ससार से मुक्ति पाना सर्वथा असम्भव समझकर महर्षि ने इनके दूर करने का वृद्ध प्रयास किया। आर्य जाति के मुक्तिदाता, मुक्तात्मा महर्षि के उपकारों के हम सब सदैव ऋणी रहेंगे। आज महर्षि के निर्वाण पर्यं पर उनके आदेशों के पूर्ण पालन की प्रतिज्ञा कर श्रद्धाजिज्ञ समर्पित करना" हम सबका परम कर्तव्य है।



महर्षि के परम भक्त—

श्री पं. क्षेमकरणदास त्रिवेदी और वेदभाष्य

[श्री चन्द्रनारायण एम ए एल-एल बी एडवोकेट, बरेली]

सन् १९१८ में त्रिवेदी जी की पौत्री के विवाह में मैं बर पक्ष की ओर से सम्मिलित हुआ। उस समय मैंने सर्व प्रथम त्रिवेदी जी महाराज के दर्शन किये थे। नाम सुना था परन्तु दर्शन नहीं किए थे।



श्री बाबू चन्द्रनारायण जी

जब यह ज्ञात हुआ कि मुझे एक कायस्थ महोदय की भारत में त्रिवेदी जी के यहाँ जाना है—तो मुझे बड़ा कौतूहल हुआ। मैं समझता था कि त्रिवेदी जी कोई ब्राह्मण हैं। वहाँ जाकर ज्ञात हुआ कि वे भी कायस्थ हैं और 'सेठ' उनकी अल्ल है। उस समय उनके एक मात्र पुत्र श्री विष्णु दयाल सेठ सिविकम स्टेट में एकाउण्ट आफिसर थे—वे नहीं आ सके थे।

कायस्थ होते हुये भी वे वेद का भाष्य कर रहे हैं यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि इस मूल मंदिरा सेवी बिरादरी में भी ऐसे वेवता उत्पन्न हो गये। धन्य है यह परिवार जिसके प्रमुख त्रिवेदी जी हैं। मैं बड़ा सौभाग्यशाली होता यदि मेरा भी इस परिवार से सम्बन्ध हो जाता। दैवयोग से १९२१ में श्री त्रिवेदी जी

की पुत्रवधू की कनिष्ठ बहिन से मेरा विवाह हो गया। अब मुझे त्रिवेदी जी से प्रायः सम्पर्क में आने का अवसर मिलने लगा। मैं उन्हे दिव्य-गुण शक्ति सम्पन्न व्यक्ति समझता था। मैं आपसमाज के ब्राह्मणानों में सुना करता था कि वेद मन्त्रों के गूढ रहस्य बड़े-बड़े ऋषि मुनि भी नहीं समझ पाये, तो यह साधारण गुञ्जोत्पन्न व्यक्ति भाष्य कैसे कर सकता है। एक दिन सनसन् नाहन बटोर कर मैं उनसे ही इस पर प्रकाश डालने की वृष्टता कर बैठा। उन्होंने बड़े प्रेम से सब वृत्तान्त सुनाया।

“ऊन दिनों मैं मुरादाबाद की ट्रेजरी में ३०) मासिक पर लौकर था। वही मैंने महर्षि के दर्शन किये और उनके उपदेशों से मेरा मन और मस्तिष्क ओन प्रीत हो गया। एक दिन मैंने चरणस्पर्श कर महर्षि से करबद्ध प्रार्थना की—

“भगवन् मुझे अपना शिष्य बना ले” स्वामी जी ने उत्तर दिया—

“शिष्य मैं उसे बनाता हूँ जिसका यज्ञोपवीत हो।”

“तो मेरा यज्ञोपवीत कर दे”

“यज्ञोपवीत मैं उसे देता हूँ जो संस्कृत जानना हो”

“महाराज, मैं संस्कृत जानता तो नहीं हूँ—जाय पढ़ाये।”

“इस शर्त पर पढ़ा सकता हूँ कि पढ़कर वेद-भाष्य करो”

स्वामी जी ने सोचा होगा कि यह इतनी कड़ी शर्त मानने को उद्यत न होगे और मुझे न संस्कृत पढ़ाना पड़ेगी न यज्ञोपवीत देना पड़ेगा। परन्तु त्रिवेदी जी के हृदय-सिन्धु में शिष्य बनने की लगलता ठाढ़ें मार रही थी—तुरन्त “एयमस्सु” कह दिया। सम्भव है कि महर्षि ने योगबल से जान लिया हो कि यह श्रद्धालु पुण्य आने चलकर वेद भाष्यकार बन सकता है अतः उनकी सुगुप्त



मानना को जागृत करने के लिये यह प्रेरणा भी हो।

अस्तु महर्षि ने उन्हे घडोपवीत भी दिया और सस्कृत भी पढ़ाना आरम्भ किया। त्रिवेदी जी ने महर्षि को विये हुये बच्चनो को ऐसा निमाया कि बडी तगमयता से मुडा-बस्पा मे भी सस्कृत जैसे गहन भाषा मे भी पारगति प्राप्त कर ली। तत्पश्चात् वेदाध्ययन आरम्भ किया और महाराजा बडौदा के वेद त्रिग्रन्थ से चारों वेदो मे परी-क्षाये उत्तीर्ण कीं। वहाँ के ब्राह्मणों ने उन्हे "त्रिवेदी" तो माना किन्तु अयर्बवेद की परीना की उत्तीर्णता का प्रमाण-पत्र नहीं दिया। इसने उन्हे ठेस ली और अयर्ब-वेद का ही भाष्य करने का निश्चय कर लाया।

त्रिवेदी जी के पास केवल १४००) थे। इनकी अल्पराशि मे से, कहां से पुस्तकें मोठ गी जायें, कहां से पण्डितो को पारश्रमिक दिया जाये, इने वडे महान् कार्य की कैसे व्यवस्था की जाये, इन प्रश्नो ने उन्हे विगितन कर दिया। परिवार के लो गो ने बचन दिया हन पर जो कुछ है इस पवित्र काय के लिये समर्पण हे।

इसी समय पत्राव व सजुक्त प्राप्त की सरकारी वा प्रतिनिधि समझो ने अधिक सहायना देना स्वीकार किया जिसका योग एक सौ मासिक था।

प्रात तडके अपनी लुटिया डोर लेकर शौचादि से निवृत्त होने को निकल जाये, लौटकर स्नान करने पत्र करते, प्रातराश व दुग्धान के पदवान् भाष्य के कार्य मे जुट जाते। तीन पडित सहायक थे। उन्हे मासिक वेतन देते थे। बारह बजे तक यह कार्य चलना तत्र भोजन करके विश्राम करते। तीन से पाँच बजे तक फिर भाष्य सम्बन्धी कार्य होता।

जितना छपता जाता था वह स्वामी ग्राहको को भेज दिया जाता था। कुल भाष्य का मूल्य ४८०० था। भारत और भारत के बाहर सैकडो ग्राहको के पास पोस्ट से भेजा जाता था।

कभी कभी रात्रि मे उठकर अपने उद्यान की शिला पर बंठ जाते और घण्टो सोचते विचारते। कभी कभी घर के किसी व्यक्त को जगाकर सोची हुई बात लिखा देते कि कहीं विस्मृत न हो जाये। उनके परिवार मे सभी सस्कृतज्ञ थे। कभी कभी किसी मत्र के अर्थ करने मे कठिनाई आजाती तो रात्रि मे एकागत मे विचार करते।

मैंने कहा आप क्या सोचते हैं तो कहा स्वामी जी को कीसता हूँ कि मुझ जैसे अल्पमति से वेद भाष्य जैसे महत्वपूर्ण कार्य की प्रतिष्ठा करानी।

कोई माने या न माने परन्तु त्रिवेदी जी ने बताया कि कई बार मैं ध्यानावस्थित था कि इस मत्र का क्या अर्थ कहूँ तो ऐसा आभास हुआ कि महर्षि सामने खडे कहर रहे हैं कि इनका अर्थ ऐसे करो। प्रात जब वह अर्थ विद्वद मंडली के समभरजते तो वह हर्षान्मत्त हो जाती। सम्भव है इस घटना का उल्लेख कतपय पाठको को फोल कल्पित या सिद्धान्त विशुद्ध प्रतीत हो। परन्तु त्रिवेदी जी को ध्यानावस्थित तो मैंने अपने नेत्रों से देखा है, ध्यान से उठने के पश्चात् मत्र का जो अर्थ विचारा था वह भी उन्होने उठकर लिखाया यह भी मैंने देखा और स्वप्न मे महर्षि द्वारा सकेन की बात स्वयम् त्रिवेदी जी ने अपने मुखारविन्द से कही।

महर्षि ने अपने गुरु श्री प्रज्ञाचक्षु के आदेश पर अनाथ प्रर्थो का ज्ञान भुला दिया, और त्रिवेदी जी ने ४० वर्ष की आयु मे अपने गुरु महर्षि की आज्ञानुसार सस्कृत का अध्ययन आरम्भ किया। महर्षि ने अपने गुरु की इच्छा पूर्ति के लिये सारा जीवन पावाड खडन मे लगा दिया और त्रिवेदी जी ने अपने गुरु की इच्छानुसार वेद भाष्य किया। त्रिवेदी जी का भाष्य किस कोटि का है—यह मैं नहीं कह सकता क्योंकि मैं वेदों का मर्मज्ञ नहीं हूँ। परन्तु उनके भाष्य पर जो विद्वानों की सम्मतिया प्राप्त हुई उनसे प्रष्ट होता है कि उनका भाष्य ऋषि के सिद्धान्त और मन्त-यो के सत्या अनुकूल था।

पारस पत्थर किसी ने देखा नहीं है परन्तु यदि पारस के स्पशं से पत्थर सोना हो सकता है—या यह केवल किम्बदन्ती ही हो—तो भी यह मानना पडेगा कि महर्षि जैसे पारस के सधर्क मे आकर क्षेमकरण दास जैसे नगण्य व्यक्त भारतवर्ष के महान् पंडितों और वेद भाष्य-कारों की पक्ति मे शोभायमान होने के योग्य हुये।

अयर्बवेद (त्रिवेदी जी का भाष्य) अब प्राय अप्राप्य है। क्या कोई सस्या उसके प्रकाशित करने का उद्योग करेगी। उसने अंग्रेजी का अनुवाद भी सम्मिलित कर दिया जाये तो अधिक उपयोगी बन सकता है। ★



ऋषि-महिमा

(सुश्री कुमारी सुशीला आर्या एम०ए० विद्यावाचस्पति)



तेरी महिमा का हम से प्यारे ऋषि,
जाता खींच के नक्शा दिखाया नहीं ।
मूक वाणी हुई और जड़ लेखनी,
कुछ उपाय समझ मे ही आया नहीं ।
कौन है जिसको तूने न आनन्द दिया,
बया दृष्टि से किसको लुभाया नहीं ।
कौन बुझिया न जिसका बने आसरा,
नीर करुणा का जीभर बहाया नहीं ।
किस दलित दीन की बेदना ने तुझे,
सब के सोने पर रातो रलाया नहीं ।
किस अनाथ का नाथ बना तू नहीं,
किसका भाग्य बिधाता कहाया नहीं ।
किस बलित को न बल-बल से बाहर किया,
पतित है कौन सा जो उठाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ॥
किस कलक की धोई नहीं फालिमा,
किस कृपा पात्र पर तरस खाया नहीं ।
क्या कहानी कहे हम मनुजमात्र की,
जीब जन्तु भी कोई सताया नहीं ।
छोड़ दी हिसको ने भी हिंसावृत्ति,
सिंह ने मारा, मकर ने डुबाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ॥
पंर की जूतिया कह गिरते हमे,
सिर की पगड़ी बना क्या उठाया नहीं ।
गौओं के हित नरे नाबना भाव ले,
क्या 'गोकर्णानिधि'को रचाया नहीं ।
कौन बिछुडा गले से लगाया नहीं,
कौन भटका मुमार्ग पर लाया नहीं ।
कौन पासपड जो खण्ड-खण्ड न किया,

कौन दुर्व्यसन है जो छुड़ाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ।
कौन है मिथ्या-पथ जिसका चोराहे पर,
भोड भाण्डा ऋषि ने गिराया नहीं ।
किसकी शक्ति थी जो तेरे सम्मुख उटा,
कौन है तुझसे जो मात लाया नहीं ।
आफतें कौन सी सिर पं झेली नहीं,
भार या कौन सा जो उठाया नहीं ।
कौन बिद्या जो तुझ से छिपी रह सकी,
वेद का कौन सा भेद पाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ।
कौन है लेखनी जो न महिमा लिखे,
गीत किस किसने स्वामी का गाया नहीं ।
चूहे तक को बना करके अपना गुरु,
क्या जगत् का गुरु तू कहाया नहीं ।
औरो के ताप को भेटने के लिए,
स्वर्ण-तनभट्टी मे कब तपाया नहीं ।
लोक हित का पथिक बनके शंकर मेरे,
जहर तूने मला कब पचाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ।
अन्त जब प्रभु की की इच्छा प्रबल जान ली,
काल को हस गले क्या लगाया नहीं ।
शिष्य तेरे नहीं हम गुरुदेव सच,
ऋण यदि आज तक भी चुकाया नहीं ।
काम तुमसे भी छुडवा अधूरा लिया,
पुरा करके स्वय भी दिखाया नहीं ।
आई बीवाली बेकर अग्धेरा गई,
ज्ञान-बीपक जो घर-घर जलाया नहीं ।
तेरी महिमा का हमसे ॥



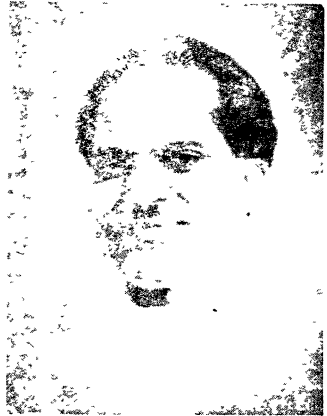
महर्षि दयानन्द की धर्म मीमांसा

[श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री]

धर्म क्या है और अधर्म क्या है ? यह एक विवेच्य विषय है । नीतिविदों का विचार यह है कि भक्षण और रक्षण आवि चेतनमात्र में स्वभावतः है और पशु एव मानव इन विषयों में समान है । परन्तु लक्षण का विषय एक ऐसी विशेषता है जो मानव में ही पाई जाती है । मानव लक्षण करने में अपनी विशेषता रखता है । धर्म का मानव से सीधा सम्बन्ध है । अतः इसका भी लक्षण करना उसके लिये अनिवार्य था । विविध लक्षण धर्म के हमारे शास्त्रों में पाये जाते हैं जो अपने-अपने दृष्टिकोणों में परिपूर्ण हैं । परन्तु जहाँ अन्य आचार्यों ने इस धर्म के विविध सुन्दर लक्षण किये हैं वहाँ भगवान् दयानन्द ने इन लक्षणों को स्वीकार करते हुए धर्म का सुधरा और निखरा हुआ स्वरूप रखा है । वे स्वमन्थ्यामन्तव्य प्रकाश में लिखते हैं—

“जो पक्षपात रहित न्यायाचरण सत्य भाषणादियुक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविहृद्ध है, उसको धर्म और जो पक्षपात सहित, अन्यायाचरण मिथ्या भाषणादि ईश्वराज्ञा भगवद्-विहृद्ध है उसको अधर्म मानता हूँ ।” इसके अतिरिक्त अपने ग्रन्थों में उन्होंने कई स्थलों पर ऐसी ही मिलती-जुलती बातें धर्म के सम्बन्ध में कही हैं । परन्तु यह उनका कथन उनके मन्तव्यों में से उद्धृत किया जा रहा है । इसकी विशेषता पर कुछ विचार आगे की पंक्तियों में किया जाता है ।

मानव धर्म शास्त्र के प्रवक्ता मनु ने प्रसंगत धर्म के विषय में कई प्रकार के विचार प्रस्तुत किये हैं । वेद, स्मृति सवाचार और आत्मप्रियता की धर्म का चार लक्षण



आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री

उन्होंने एक स्थल पर स्वीकार किया है । दूसरे स्थल पर उन्होंने धर्म के दश लक्षण स्वीकार किये हैं । यह भी कहा गया है कि धारण करने के कारण यह धर्म कहा जाता है और यह धर्म का धारक है । “हमारे भारत आवि प्रथम म इसी प्रकार के अन्य लक्षण भी देखे गये हैं । इन सभी लक्षणों में धर्म के लक्षण कहे गये हैं वा धर्म के कुछ आवश्यक तत्त्व बताये गये हैं—यह प्रश्न उठता है । विचार करने पर पता चलेगा कि इनमें लक्षण और लक्ष्य

दोनों का वर्णन है। वेद, स्मृति, सदाचार और आत्मा की प्रियता धर्मों के परिचय के साधन हैं अतः लक्षण हैं। परन्तु धृति, भ्रमा आदि १० धर्म के तत्त्व हैं—अतः ये धर्म के लक्षित तत्त्व हैं। जब मानव की प्रवृत्तिमात्र को कसौटी पर कसने का विचार उठेगा तब इन्हों को प्रकार की दृष्टियों पर कसा जा सकेगा।

बैशेषिक दर्शन के कर्ता ने पदार्थ धर्म की दृष्टि से धर्म का लक्षण किया है। धर्म आत्मा का गुण है और आत्मा एव मन के स्व व्यापार का प्रशस्त प्रकार मी है। बैशेषिककार धर्म का लक्षण करते हुये कहते हैं कि जिससे अमृदुवय और नि श्रेयस को सिद्धि हो उसका नाम धर्म है। इस धर्म के ज्ञान के लिये वेद की आवश्यकता है और वेद ईश्वर का ज्ञान होने से प्रमाण नहीं नहीं, परम प्रमाण है। बैशेषिक के इस लक्षण में पदार्थ धर्म की जहाँ दृष्टि है वहाँ कर्त्तृव्यापार रूप व्यापार का भी सन्निवेश है। परन्तु इस धर्म के ज्ञान के लिये वेद और ईश्वर दोनों की आवश्यकता है। तात्पर्य यह है कि धर्म आत्मा का गुण है जिन प्रकार रूप आदि अग्नि आदि के धर्म होने से गुण है। जब आत्मा इसे व्यापार में लाता है तब यह उसके और मन के सहयोग से सम्पन्न होता है। परन्तु आत्मा और मन का शरीरेन्द्रिय आदि से किया प्रत्येक व्यापार धर्म ही हो—ऐसा नहीं है। जो व्यापार वेद के अनुकूल और ईश्वर के नियम के अनुरूप होता है वह धर्म है—तद्विम्न धर्म नहीं।

मीमांसा दर्शन में भी धर्म का लक्षण किया गया है। विधि और निवेध की प्रेरणा जिसमें पाई जावे वह धर्म है। परन्तु मीमांसाकार ने इस धर्म की परीक्षा में वेद को परम प्रमाण माना है। उसका कारण यह भी प्रकट किया है कि वेद में सृष्टि के नियमों का प्रतिपादन जैसा किया गया है वे, बस्तुतः सत्ता में उसी प्रकार से पाये जाते हैं और किसी प्रकार की बन्धन नहीं पाया जाता है अतः वेद की धर्म के विषय में परम-प्रमाणात्ता है। इसी प्रसंग में एक और भी तथ्य का उद्घाटन महर्षि जैमिनि ने किया है। वह यह है कि वेद के शब्दों के साथ उम्होने सृष्टि के पदार्थों का ओपसिक्त सम्बन्ध माना है। तात्पर्य यह है कि सृष्टि के पदार्थों की उत्पत्ति वेद शब्द पूर्वक

है। श्यास इस सिद्धान्त के परमपौवक थे। बैशेषिकदर्शन में भी इसका मूल मिलता है। आचार्य जैमिनि के लक्षण में भी धर्म के साथ वेद का बहुत ही अद्भुत सम्बन्ध है।

बैशेषिक दर्शन पर उपस्कार लिखने वाले शाकर मिश्र ने धर्म की निवृत्ति लक्षण और विधि रूप माना है। सर्व दर्शन सग्रह कर्त्ता ने पुण्यात्मक प्रवृत्ति का नाम धर्म माना है। अचार्य जन धर्म को प्रत्यक्ष नहीं मानते। इते अनु मानगम्य मानते हैं। इस प्रकार धर्म के विषय में विविध वर्णन मिलते हैं। परन्तु यह एक तथ्यभूत बात है कि वेद का और ईश्वर नियम का सम्बन्ध लगभग सभी में किसी न किसी रूप में पाया जाता है।

वेद के विरुद्ध न होना धर्म का लक्षण है परन्तु वेद का ज्ञान स्वयं ईश्वर की प्रेरणा का फल है। ईश्वर की आज्ञा वा ईश्वर का नियम सृष्टिगत नियम है। उससे भी धर्म को अविच्छेदता होनी चाहिये। वाक्य, मन और शरीर से जो भी उस न प्रवृत्ति की जाती है वह धर्म है। सत्य भाषण, न्यायाचरण आदि इसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं। इन प्रवृत्तियों में न्याय्य वा अयाय का निर्णय करना कठिन कार्य है। कौन सी प्रवृत्ति वा कर्म वा न्याय्य है और कौन सा अन्याय्य—इसका विचार करना सरल कार्य नहीं है। धृति, भ्रमा आदि धर्मयुक्त कर्म हैं—यह तो ठीक ही है—परन्तु ये धर्म और न्याय्य कर्म की कसौटी नहीं है। अतः ये लक्ष्य है, लक्षण नहीं। हाँ जब ये किसी के द्वारा पालन किये हुए होकर दूसरों के पक्ष प्रदर्शक बनने हैं तब ये सदाचार के अत्यंत होने से लक्षण की सत्ता प्राप्त कर लेते हैं। सत्य-भाषण आदि से युक्त न्यायाचरण धर्म है परन्तु उसमें पक्षपात का अभाव होना चाहिये। पक्षपात एक प्रकार पूर्व निश्चित धारणा है। वह लोच और सत्यान्वेषण के मार्ग में बाधक है। पक्षपात न्याय का भी इसी प्रकार विरोधी है। जहाँ पक्षपात है वहाँ न्याय की सम्भावना नहीं हो सकती है।

अतः सत्य भाषणादि युक्त न्यायाचरण वह है जो पक्षपात से रहित होकर किया जावे। परन्तु फिर भी प्रश्न यह उठता है कि पक्षपात न होने पर भी न्याय और सत्य के निर्णय की तो कोई कसौटी बनानी ही पड़ेगी? इस



संस्कृत ग्रंथों में—

महर्षि दयानन्द विषयक संदर्भ

(प्रो० मबानीलाल भारतीय, एम०ए० रिसर्व स्कालर, अध्यक्ष—हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कालेज, पाली)

अपने शोध विषयक कार्य के प्रसंग में मुझे कतिपय पुस्तकालयों का अवलोकन करना पडा। श्री पुष्कूल चित्तौडगड के पुस्तकालय में वीरवश वर्णनम् (लेखक प० नगजीराम शर्मा) नामक एक संस्कृत काव्य ग्रन्थ देखा। इसे बनेडा राज्य के राजपण्डित ने लिखा है तथा



श्री मबानीलाल जी भारतीय

१९८२ वि० में यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। देशी राज्यों और जमींदारों के यहाँ संस्कृत पंडितों को आश्रय मिलता था। उपर्युक्त पण्डित ने बनेडा राज्य के शासकों की प्रशस्ति में उक्त ग्रन्थ लिखा है। इसमें महर्षि का उल्लेख निम्न पद्यों में हुआ है—

श्रीमद्दयानन्द इहागतो भ्रमन,

श्री भारतेश्टाग्निनवेणु सम्मिते ।

वर्षे हि वेदायं निजोक्ति कल्पको,

विद्वान् विजेता विदुषां शमानिनाम् ॥

११/२२

वैदिक धर्म प्रवक्तक प्रसिद्ध श्रीमद्दयानन्द स्वामी जल भारत का भ्रमण करते हुए सन् १९३८ में यहाँ

भी आये थे। आप वेदों की व्याख्या करने में प्रबल मुक्ति प्रवशक थे, तथा शास्त्राय वे पण्डितमन्य विद्वानों के घमण्ड को बात की बात में चूर्ण कर देते थे।

दृष्ट्वा बनेडाधिपतेस्तु कोविदान्,

वेदायं विज्ञाच्छ्रुति पारग नृपम् ।

वेदान्त विज्ञ नयतन्त्र कोविद,

शास्त्राति शीण्ड जनतामि पालकम् ।

११/२३

स्वामी जी बनेडाधीश को वेद वेदान्त, राजनीति विज्ञ तथा शास्त्रास्त्र कला में प्रवीण और प्रजापालन में तत्पर देखकर बहुत प्रसन्न हुये।

श्रुत्वंन धो राजकुमार्योर्वर,

गान श्रुते पाठ्यमनुष्यवाश्वलम् ।

सोऽत्राध्यगोष्ट प्रभुराशु गायन,

साम्न स पाठ नृप पण्डिताद्यति ॥

११/२४

जब राज पण्डितों की वेदायं विषयक प्रौढ विद्वत्ता तथा राजकुमारों का वेदपाठ कौशल देखा तो उनके हर्ष की सीमा न रही। उन्होंने यहाँ (नगर से पूर्व सालरा शिवालय में) रहकर राजपण्डितों से सामवेद का गाना और कुछ पाठ सीखा।

कालेऽल्पके घम्म्यनयो समस्करी,

चित्तोड नाम्नि प्रवितं सुपत्सने ।

पाठ घनान्त यजुषोऽथ गायन,

साम्नीभिसध्व्यु सुहर्षितोऽभवत् ॥

११/२५

पश्चात् चित्तौड नगर में पुन इन दोनों राजकुमारों के घनान्त यजुषेय के पाठ और सामवेद के मुन्डर गायन को सुनकर स्वामी जी बहुत हर्षित हुये।



तेर्ननयोगिनकथा निवेदिता,
मेवाडनायाधि मुख तर्बं व स ।
श्रुत्वा श्रुतेर्गनिम पूर्वं सश्रुत,
राजर्षि सू-वो प्रबभूव विस्मित ॥

११/२६

उन्होंने महाराणा जी के सम्मुख उक्त गान का वृत्तान्त सुनाया तो उसी समय महाराणा जी ने इन दोनों राज-कुमारों को बुलाकर इन्हीं का अपूर्व भृति गायन सुना और बहुत प्रसन्न हुए ।

उपर्युक्त स्वामी जी से सम्बन्धित पद्यों में एक ही बात आपत्तिजनक और नमोत्याजक है । पद्य सख्या २३ में कवि का यह कथन कि स्वामी जी ने राजपण्डितों से सामवेद का गायन और पाठ सीखा, गलत है । स्वामी जी उच्चकोटि के वेद विद और साम गान के पारग विद्वान् थे । राजस्थान भ्रमण से पूर्व ही उन्होंने साम वेद गान का अभ्यास कर लिया था, तथा कई लोगों के समक्ष साम गान सुना भी चुके थे । अत उक्त ग्रन्थ का यह उल्लेख असत्य है । एक राजाभित कवि ने अपने सहवर्गी राजपण्डितों की मिथ्या प्रशंसा के लिये ही यह उल्लेख किया ह ।

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द माग (रातानाडा) जोध-पुर का पुस्तकालय छानते हुये मुझे कालीप्रसाद शास्त्री (सम्पादक सस्कृतम्) रचित एक ग्रन्थ विद् धृतम् (द्वितीय खण्ड) मिला । इसका प्रकाशन १९९५ वि० में सस्कृत कार्यालय अयोध्या से हुआ है । ग्रन्थ में पौरस्त्य और पाश्चात्य अनेक सस्कृत विद्वानों का सक्षिप्त इतिवृत्त लिखा गया है । इसमें दण्डी विरजानन्द जी के विषय में निम्न विवरण लिखा है—“पजाव प्रान्तीय करतारपुर प्रान्तगत गगापुर नामके ग्रामेऽप्यमुत्पन्न अस्य पिता नारायणदास सारस्वत ब्राह्मण । अथ ५ वर्षावस्थाया शीतला-क्रमणेन हीन नेत्रो बभूव । नारायणदासस्तथा तत्पत्नी च द्वादश वर्षीयसमम विमृष्य परलोक गता । भ्रातृ पत्न्याऽऽर्भे बलेऽशोबन्तोऽतो हरिद्वारे पूर्णानन्दत सन्यास जप्राह । पितुरन्तिके सारस्वत चन्द्रकेऽनेताधीते हरिद्वारे सिद्धान्त-कौमुदी काश्यामये ग्रन्था । अथ १८९३ विक्रमाब्दे मथुरायामे का पाठशाला स्थापिता यस्या स्वामि दयानन्देन

शिक्षा प्राप्ता । अथ ७५ वर्षावस्थायां १९२९ विक्रमाब्दे शरीर तत्याज ।” पृ० १५६

अर्थात् पजाव प्रान्तस्थ करतारपुर मण्डल के गगापुर नामक ग्राम में ये उत्पन्न हुये । इनके पिता नारायणदास सारस्वत ब्राह्मण थे । ५ वर्ष की अवस्था में शीतला से ये अन्ध हो गये । नारायणदास और उसकी पत्नी इन्हे १२ वर्ष का छोड़कर परलोक सिंभारे । मौजार्ई ने इन्हे कई कष्ट दिये अत ये हरिद्वार जाकर स्वा० पूर्णानन्द से सन्यासी बन गये । पिता के समीप रहकर सारस्वत और चन्द्रिका (व्याकरण ग्रन्थ) पढ़े । हरिद्वार में सिद्धान्त कौमुदी तथा काशी में अन्य ग्रन्थ पढ़े । १८९३ वि० में मथुरा में एक पाठशाला स्थापित की जिसमें स्वामी दयानन्द ने शिक्षा पाई । ७५ वर्ष की अवस्था में सवत् १९२९ में इन्होंने शरीर छोडा ।

इस विवरण में निम्न भूलें हैं—

१—दण्डी जी के पिता का नाम नारायणदास न होकर नारायणदास था । ब्राह्मण दासान्त नाम नहीं रखते ।

२—दण्डी विरजानन्द ८० वर्ष से ऊपर आयु पाकर स्वर्गवासी हुये ।

महर्षि दयानन्द के विषय में उक्त ग्रन्थ में निम्न उल्लेख मिलता है—“अथ विक्रमस्य १९ शताब्द्या उत्तरार्धे काठियावाडस्य मोरवी राज्ये जात ‘अथ पूर्णानन्दस्य शिष्यता प्राप्य मथुरायाम् प्रजाचक्षु विरजानन्दात् सस्कृत भाषा पपाठ । अनेन सत्यायप्रकाश ऋग्वेदादि भाष्य भूमिकादयो ग्रन्था हिन्दी भाषाया लिखिता । अथ सस्कृत भाषाया प्रचार कामयतेस्म । अनेनार्यसमाज इञ्चालित । काश्याम स्वामि विद्युद्धानन्देन सहास्य शास्त्रार्थो जात । वेदप्रवारेऽप्य सुयत्न कृतवान् । कयाचिद्र-मानाम्न्या स्त्रियासाहाऽयासीत् सम्बन्ध किन्तु केषाञ्चि-द्विचारेऽप्यजन्मस्थान जात्यार्चारादि विषये सत्यता न प्राप्यते । अथ प्रसिद्धो विद्वान् कयाचिद्रेश्याय विष द्वारा अजमेरे मारितो १८८३ ईसाब्दे ॥” पृ० १६४

अर्थात् विक्रम की १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ये काठियावाड के मोरवी राज्य में उत्पन्न हुये । पूर्णानन्द से सन्यास ग्रहण कर मथुरा में स्वामी विरजानन्द से



शतवार प्रणाम!



शुद्धिबर जब स्मरण आपका स्मृति पत्र पर माता है—

भद्रा सहित तभी भक्तक तब चरणों में शुक जाता है ।

तेरे सम या तुही जगत् में ऐसा मैंने जाना है ।

सच्चा देव पथ प्रवेशक मैंने तुमको ही माना है ।

तेरे उपदेशों ने लोगों के सारे धर्म भगा दिये—

चार चांद तेरी मृत्यु दीपाबलि में लगादिये ।

लोग मनाते पर्व मोद से यह कह आई दीवाली—

किन्तु हमने भी याद सदा वह भगलवाली निशिकाली ।

अरे बता वो माई कोई रात्र हृदय का तो खोलो—

सत्य बया का सिंधु देवता कहा विराजा है बोलो,

अरे वापु सर्वत्र चिब्रती है तू जानी देश-विदेश—

मेरे शुद्धिबर दयानन्द का भी लाई बया कुछ सन्देश ।

शतवार दयानन्द तेरा दर्शन ही भगलवाता था—

दीन दु लो विधवा अनाथ गऊओ का सच्चा त्राना था,

ईसा यवन पोष मठधारी पडा पीर पुजारी तब—

रवि सम तेज निरखि तेरा बनकर उलूक छिप जाते सब ।

ललिकर बशा देश की तेरे हृदय बेचना होती थी—

बिन्ता में निशि जा ती सारी और डेवना होनी थी ।

दुम गा यह जगत आपको शुद्धिबर जान न पाया था—

इसीलिये बदले में हमने तुमको जहर पिलाया था ।

अहा बया आनन्द यहा भी तुमको शोध न जाया था—

रूपये बेकर हृत्पारे को सीमापार पठाया था ।

पावन गुर्जर प्रान्त कर दिया तंने अरे मूलशकर—

नाम पिता का और साथ ही जननी की भी कोष्ण अमर ।

हैं अनक उपकार देश पर कहे कहां तक गाऊंगा—

वर्णन नहीं कर सकूंगा गाते-गाते थक जाऊंगा ।

हृदय देवता जब मुन पाता लोगो से तब कीर्ति ललाम—

भद्रा सहित तभी कर देता 'सरस' तुम्हें शतवार प्रणाम ।

— वंछ राज बहादुर आर्य 'सरस'





स्वामी दयानन्द के प्रति सर्वां श्रद्धांजलि— गोरक्षा आन्दोलन सफल हो

[श्री सुरेशचन्द्र जी वेदालंकार एम ए एल टी, डी बी कालेज, गोरखपुर]

आज देश ने फिर भारत वरुं की सरहदर से मंग की है कि आरतव्य मे गोहत्या पर कानूनी बन्धन लगाया जाय और गोहत्या के अपराधियों को कड़ी सजा दे दी जाय। गोरक्षा के लिए गोहत्या पर प्रतिबन्ध आवश्यक है ही। हमारे देश की यह मांग्यता रही है "वह ग्रन्थ सब ग्रन्थ नहीं जिसमे गो जानि की महिमा का वणन न हो, वह देश पवित्र देश नहीं है जिसमे गोव्रज स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण न करना हो, वह घर घर नहीं है जिसमे गो का निवास न हो।"



श्री सुरेशचन्द्र जी वेदालंकार

यस्मिं क्वापि गृहे नास्ति धेनुवत्नानु चारिणी, मगलानि कुतस्तस्य कुतस्तस्य तम क्षयम्। यन्वेदवेदं ध्यात् यन् गोभिरलुहन्म्। यन् बालं परिव्रत श्मशान मेव तत गृहम्। अर्पातुं जिस घर मे गो नहीं होती वह घर श्मशान मेव के समान होता है। अगि कहा है— धनञ्जय गोधन धाम्य स्वर्णविद्यो ध्वंय हि। अर्थात्, गोधन के सामने और सब धन व्यर्थ से हैं।

अग्नि पुराण मे लिखा है— गाव स्वगण्य सोपान गाव मागम्य मुत्तमम्। गाव पवित्र परम गावो धन्या सनातना। नमो गोम्य श्रीमतीम्य सौरभेयोम्य एव च। नमो ब्रह्म सुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमा। वेद मे गो को अक्षया कहा गया है। 'अक्षया इति गवा नामक एना हन्तु महसि।' गो जाति का नाम ही अक्षया (न मारने योग्य है) इसे कौन मार सकता है? गोशो को बचना यज्ञ नहीं हो सकता था। 'गावो यज्ञस्य हि फल गोबु यज्ञा प्रतिष्ठिता।' अर्थात् यज्ञ फल का कारण गोमे ने और यज्ञ गोबु से ही प्रतिष्ठित है। गोमे ने जीवन का आधार अन्न है। और यह अन्न बावलो से उत्पन्न होता है। परन्तु यह बावल यदि यज्ञ न हो तो नहीं उत्पन्न हो सकते। यज्ञ धूम से बावल बनते हैं, मेघ जल बरसाने हे। जल से कृषि होनी है। इस प्रकार मनुष्य के जीवन का आधार गोयें ठहरती हैं यह वह माता है जो हमारा मान इज्जत और हमारा पालन-पोषण करती है। भावना मे बहते हुए हम कह सकते है "एतद् विषय रूप सब रूपम्" अर्थात् सम्पूर्ण विश्व रूप (प्राणिमात्र) गोयें हैं। विश्व मे जो कुछ है सब गोरूप है। यही कारण है कि गो का महत्व बहुत अधिक प्रदर्शित किया गया है। ऋग्वेद मे दो गो सूक्त है। एक है छठे मण्डल का अट्ठारह-सवा सूक्त और दूसरा है दशम मण्डल का १६९ वा सूक्त। इसके अतिरिक्त भी सभी वेदो मे गो के महत्व का प्रतिपादन है।

कहा जा सकता है इसमे अनुचित पशु पूजा के भाव हैं, यह पशु पूजा वैज्ञानिक नहीं। वस्तुस्थिति यह नहीं। जिस तरह हम उपयोगिता की दृष्टि से किसी वस्तु का मूल्यांकन करते हैं उसी तरह वेदो मे तीव्र उपयोगिता की



दृष्टि से ही विचार किया था। उनका कहना कि गाय हमारे लिये अत्यन्त उपयोगी प्राणी है, उसकी हमें खूब सेवा और रक्षा करनी चाहिये और गाय की सेवा और रक्षा उपयोगिता की दृष्टि से ही सही। हम करेंगे तो निश्चय ही वह गाय हमें 'बूध वेगी—पर्याप्त मात्रा में बूध वेगी। वेद का वचन है 'सहस्र धारा पयसा मही गौ' अर्थात् ऐसी गाय हमें मिलेगी जो हजार धाराओं में बूध वेगी, आप समझ सकते हैं कि एक गाय की एक बूध की धारा कितनी होती है और सत्यार्थप्रकाश तथा गोकर्णानिधि में स्वामी जी महाराज ने एक गाय से कितना लाभ होना बताया है। अथर्ववेद में आया है—
वशादेव उपजीवन्ति वशा मनुष्या उत।
वशेव सर्वसमवन्त्यावत् सूर्यां विपश्यति।

जहां तक 'सूर्य' का प्रकाश पहुँचता है, गाँवों सबको समान रूप से लाभ पहुँचाती हैं। देव, मनुष्य, राक्षस सभी गोकुण्ड से लाभ उठाते हैं। यह गौ 'माता रुद्राणां दुहित्वा वसुनां स्वसादित्यनामभृतस्य नामि। प्र नु वाच चिकितुषे जनायामा गामनागामर्षितं वधिष्णु।'

अर्थात् जो गौ रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, आदित्यों की मगिनी और बुध का निवास स्थान है। मनुष्यों! उस निरपाधिनी और अद्वितीय रूपिणी देवी का वध न करो। इतना ही नहीं वेदों में आया है कि गाय की सेवा करो और स्वादिष्ट तृण खिलाओ, तृप्तिकर लज्जितो और उन्हें सुख से रखो। ये गाँव स्वस्थ, सुन्दर, स्वच्छ, मंगलमयी और सन्तानवती हो, यह कामना की गई है। ऐसा क्यों है? इसका कारण गाय की उपयोगिता है। अथर्व वेद ४-२१-६ में आया है—

सूय गावो मेदयवाकुशचिवक्षीर चित्कृणथासुप्रतीकम्।

भद्र गृह कुपुय भद्रवाचो वृहदोवउच्यते समास।

हे गावो! जिसका शरीर स्नेह (चिकनाई) के अभाव से सूख गया हो उसे तुम अपने मेदे से भर देती हो, दुबल और कुरूप को सुन्दर बना देती हो। मेदे का अर्थ है चर्बी जिसे हम 'फैट' कहते हैं। इसका मतलब यह है कि जो लोग गाय का महत्व न मानकर भैंस को चर्बी के लिये अधिक उपयोगी मानते हैं उन्हें परीक्षण

करने पर पता चलेगा कि बुबले व्यक्ति को मोटा ताजा करने लायक चर्बी गाय के बूध में होती है। जो शरीर अक्षीर है उसे गाय क्षीर बनाती हैं। 'क्षीर' का अर्थ है शोभन और 'अक्षीर' का अर्थ है अशोभन। इस प्रकार गाय की रक्षा और सेवा के पीछे उपयोगिता की भावना तो यही है। उपयोगी वस्तु की सेवा करने से वह हमारे लिये अधिक उपयोगी हो सकेगी और सेवा अधिक उपयोगी वस्तु की ही की जा सकती है। वेदों में जहाँ यह उपयोगिता बतलाई गई है वहाँ लिखा है—

मयोभूषांतो अभिवातुषा ऊर्जस्वती शेषधीरारिज्ञानाम्।

पीवस्वती जीर्वाधया विवास्वयवसाय पदते रुद्रभूङ्ग।।

अर्थात् सुखकर वायु गावों की ओर से बहे। गाँवों बलकारक तृण पत्र आदि का आस्वादन करें। ये प्रभूत और प्राण तृप्तिकारक जल का पान करें, हे सहदेव, इन गावों को स्वच्छन्दता से रखो। भारतवर्ष में गाय को माता माना गया है। परन्तु इस माता की जितनी दुर्दशा और जितनी हत्या यहाँ हो रही है, उसके कुफल देश को भुगतने पड़ रहे हैं। जिस देश में बूध और घी की नदियाँ बहती थीं, जिस देश में 'बुध विक्रयी' 'घृत विक्रयी' और 'वधि विक्रयी' खराब गालियाँ समझी जाती थीं वहाँ गाय की दुर्दशा है उसकी ओर सबसे पहले ध्यान आकृष्ट करने वाले महर्षि दयानन्द ही इस युग में हुये हैं। शायद विज्ञानानिमित्तान् व्यक्ति आज टूँडरो की आधिष्णुति के बाद गाय की उपयोगिता का खंडन करने लगे, परन्तु विचारणीय यह है कि टूँडरो की खेती क्या हमारे देश में सम्भव है? क्या उस खेती की हानियाँ अब प्रत्यक्ष नहीं हो रहीं और गोहत्या तो राष्ट्र के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाली वस्तु समझ कर बन्द होना नितान्त आवश्यक है। अब तो यूरोप के डाक्टरों ने गोमास भक्षण को हानिकारक बताया है और गोकुण्ड को शरीर और बुद्धि की दृष्टि से अत्यन्त लाभकर माना है। गाय का बूध पवित्र है और सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि गाय का बूध हमारी दुमति को दूर करता है। श्रद्धेव का एक मन्त्र है—

गोमिष्टरेय [अर्माति बुरेवा,
यवेन क्षुध परिहृत विद्वाम्।



वन्दनीय गोमाता



गौरव सुषमा का आश्रय, है वन्दनीय गोमाता ।
 भाग्य का गोमाता से, है सुखमा शान्दवत नाता ॥

गोकुल श्री वृद्धि दिना रमा, मानव दूषर कापयना,
 मानवता धू-यस्थल मे यद् जाती है बानवता ।

इतिहास अत भारत का गोवर्धन धम बनाता ॥ है वन्दनीय गोमाता ॥

गोमाता को वेदो मे, प्रभु ने अख्या बतलाया,
 सब शास्त्रो ने मरुग्न हो, गौ का गुण-गौरव गाया ।

वधि दुग्ध तथा घृत द्वारा, गोकुल दूधल का माता ॥ है वन्दनीय गोमाता ॥

ट्रेंचर से पा रकना है, क्या खाद कही यह नारत,
 जन जितसे धरा उवरा, सबको करती सुख सरत ।

बैभानिक नूतन कृषि का, परिणाम न सुखद दिखाता ॥ है वन्दनीय गोमाता ॥

भारत मे गोमाता दो, सबने सुखमूल बताया,
 पर पञ्चशौल बालों ने गौ को न हाय अपनाया ।

असएव आज भी भारत, गोवध का पाप बमाता ॥ है वन्दनीय गोमाता ॥

चाहे जो कुछ हो जाये, गोवध न सहेंगे अब हम,
 गोवध के पद किये बिन, सुख से न रहेंगे अब हम ।

बहु भारश्रीय क्या गितके, मन मे न भाव यह जाता ॥ है वन्दनीय गोमाता ॥

— प० रामकिशोर शास्त्री
 गोवर्धन (मयुरा)



अर्थात् दुर्भाग्य की ओर ले जाने वाली अजुद्धि का हम गाय के दूध के द्वारा निवारण करें। सब तरह की अजुद्धि मिटाने और उसने से जहर को निकालने के लिये गाय का दूध उपयोगी होता है। इस दूध से हमारी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक सजुद्धि होन है। इसने हम यशस्वी बनते है और अपने राष्ट्र की रक्षा करने मे समर्थ हो सकते है।

अत स्वामी दयानन्द के प्रति हमारी आज सबसे बड़ी श्रद्धाजलि यही होगी कि हम सरकार को बाधित करें कि बहु गो हत्या बन्द करे और गौ की रक्षा करने का प्रयत्न करें।

उन्मन्

आर्यसमाज लाहौरनगर कानपुर का महोत्सव २७ से ३० अक्टूबर तक बड़े समारोह से मनाया गया। सर्वश्री आचार्य प्रियव्रत जी, पंडित त्रिचोकनाथ जी शास्त्री, ब० सगीशचन्द्र, श्री विप्रोतना यती के प्रभावशाली भाषण और श्री प्रतापजीर जी प्रचारक के भजन हुए। २७ अक्टूबर को विशाल नगर कीर्तन निकला। इस अवसर पर राष्ट्र-रक्षा सम्मेलन, महिला सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन तथा आर्य सम्मेलन शानदार हुए। श्री मेहरबन्द खन्ना मन्त्री आवात भारत सरकार तथा श्री डाक्टर हरेकृष्ण महताब नूतनयुग्ं मुष्ट मन्त्री उबीसा भी पधारे और इनके प्रभावशाली भाषण हुए। रविवार को कुंभध्वि कर्मण भी कोला मण ।

—सन्धी



दयानन्द की दिव्य दृष्टि



[श्री डा० सूर्यदेव शर्मा सिद्धान्त वाचस्पति, एम०ए०, डी० लिट्, अजमेर]

ऋषि की परिभाषा करते हुये निरुक्तकार ने लिखा है, “ऋषयो मन्त्र दृष्टार”। ऋषि दयानन्द ने भी “ऋष्येवाहि माध्य भूमिका” में इसी तथ्य की पुष्टि की है, अर्थात् जो मन्त्रों के दर्शन करने वाले होते हैं, वे ऋषि कहलाते हैं। हमारे प्राचीन काल के ऋषि तो मन्त्रों के अर्थ, भाव, गूढ़ रहस्यों की व्याख्या करने के कारण से ऋषि बने, लेकिन आधुनिक काल में आचार्य दयानन्द केवल एक दो मन्त्र के भावार्थ-दर्शन से ऋषि नहीं बने, किन्तु समस्त वैदिक वाङ्मय की एक मखीन दर्शन के रूप में व्याख्या करने के कारण ऋषि पदवी को प्राप्त हुये, ऐसा कुछ विद्वानों का विश्वास है।

परन्तु मैं एक दूसरा दृष्टिकोण आज उपस्थित करने आ रहा हूँ। मैं आचार्य दयानन्द के ऋषित्व में एक दीर्घ द्रष्टा एवं भविष्य द्रष्टा के दर्शन पाता हूँ और उनकी दीर्घ दृष्टि में अनेक उन परियोजनाओं, मुधारों एवं दृष्टिकोणों को बीजरूप में देखता हूँ जो उनके जीवनकाल से ५० अथवा १०० साल आगे चलकर जन-जन के मानस में, समाज में एवं राष्ट्र में व्यावहारिक एवं विस्तृत रूप में हमारे सम्मुख आ रहे हैं। उदाहरण के लिये—

(१) सर्व प्रथम ऋषि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ “सत्यार्थ प्रकाश” में निर्भय, स्वतन्त्र, स्वाधीन और अलङ्घ्य स्वराज्य का उल्लेख किया। स्वराज्य के ये चार विशेषण कितने सार्थक हैं, ये विद्वज्जन ही समझ सकते हैं। इन विशेषणों में यह भाव अन्तर्निहित है कि राष्ट्र की ‘स्वाधीनता’ तभी स्थिर रह सकती है जब वह पूर्ण आर्थिक दृष्टि से ‘स्वतन्त्र’ हो, सो अभी भारत नहीं है। हमें अपने पेट भरने के लिये भी दूसरे देशों से भील मागनी पड़ती है। हमारा राष्ट्र अभी ‘निर्भय’ भी नहीं है। क्योंकि चीन और पाकिस्तान जैसे दुर्दान्त शत्रुओं के आक्रमण का निरन्तर भय बना हुआ है। इसी प्रकार तीसरा विशेषण ‘अलङ्घ्य’ भी कितना सार्थक है। ऋषि की दिव्य-दृष्टि में

सन् १८५७ में, अब से ९० वर्ष पूर्व, यह बात कैसे आई कि भारत राष्ट्र अलङ्घ्य नहीं रह पायेगा, इसलिये उन्होंने अलङ्घ्यता की शान रल बी अपने “स्वराज्य” के साथ में।

(२) ऋषि दयानन्द ने स्वदेशी वस्त्रों एवं वस्तुओं



डा० सूर्यदेव जी शर्मा

के प्रयोग पर कितना बल दिया और शाहपुरा के महाराज को लद्दर का कोट धनाने का आदेश क्यों दिया? वह जानते थे कि आगे चलकर लद्दर पहनना स्वदेशी भक्ति की एक अनिवार्य शर्त बनेगी।

(३) जिस हरिजनोद्धार पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इतना बल दिया और भारत सरकार जिसके लिये अब तक इतनी प्रयत्नशील है, उसका बीजारोपण ऋषि दयानन्द ने पहले ही कर दिया था। महात्मा गांधी के शब्दों में यदि ऋषि दयानन्द और आर्यसमाजी लोग अछूतोंद्धार के लिये पहले से इतना क्षेत्र तयार न कर देते तो महात्मा जी को भी इतनी जल्दी सफलता न मिलती।

(४) हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रयत्न को (शेष पृष्ठ ४५ पर)



मृत्युञ्जय दयानन्द



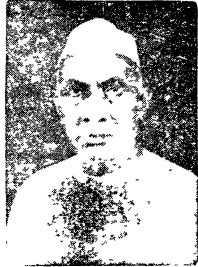
[श्री बा० पूर्णचन्द जी, आगरा]

मूर्तिर्हाय के जीवन में बराराय की भावना उनके चचा और बहिन की मृत्यु से उत्पन्न हुई। शिवरात्रि के दृश्य से वह सच्चे शिव और ईश्वर के स्वरूप को जानना चाहते थे और इसीलिए उन्होंने देशाटन किया। बड़े-बड़े कष्ट सहे और तप और त्याग के आधार पर गुरु विरजानन्द की दीक्षा से सच्चे शिव के स्वरूप को उन्होंने समझा।

मृत्युओं के दृश्य से जो बराराय उनके हृदय में उत्पन्न हुआ उसका प्रभाव मृत्यु के समय तक उनमें अंकित रहा। मूर्ति ने मृत्यु के समय अत्यन्त शारीरिक कष्ट होते हुए भी अपने शान्त स्वभाव और बृह आस्तिकता का परिचय दिया। उनके ये शब्द कि 'हे ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो' बड़े शिक्षाप्रद और उनके उच्च आचार और विचार को प्रगट करने वाले हैं। मरते समय बड़े-बड़े राजा और महाराजा, धनपंड्य और निधन, स्वस्थ पهلवान और बर्षों के रोगी सब व्याकुल हो जाते हैं। ऐसी व्याकुलता, ऐसे भ्रमसूचक विचारों का परिणाम है कि मरने वाला अपने आत्मा के स्वरूप को नहीं जानता, परमात्मा के न्याय में विश्वास नहीं रखता और न मृत्यु के स्वरूप को समझता है। मृत्यु किसी जीवन प्रक्रिया का अन्तिम दृश्य नहीं है। मृत्यु परिवर्तनों के चक्र में एक पड़ाव है। अमर आत्मा केवल एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश करता है। मृत्यु जीवन रूपी यात्रा की एक मजिल है।

जिनके सामने लक्ष्य हैं वे मार्ग की बाधाओं से विचलित नहीं होते। मृत्यु के समय शान्त चित्त न होना और चिन्तित और भयभीत होना इस बात का चेतक है कि (१) वह मृत्यु के स्वरूप को नहीं समझता है। मृत्यु परिवर्तन का नाम है और परिवर्तन से एक स्थायी सत्ता सिद्ध होती है। (२) जीव और शरीर के सम्बन्ध को नहीं समझना, शरीर से अनुचित मोह। (३) जीव का अन्य प्राणियों से ठीक-ठीक सम्बन्ध न समझना। यदि हम

ध्यान में रखें कि हमारा अन्य प्राणियों से सम्बन्ध जीव और शरीर के संयोग के साथ ही है तो हम मृत्यु से न डरेंगे और न सम्बन्धियों से विधोय होने पर रोयेंगे। (४) ससार के भोग पदार्थों से अनुचित मोह तथा उनसे



श्री बा० पूर्णचन्द जी

अपना ठीक सम्बन्ध न समझना और यह भूल जाना कि यह स्थायी नहीं है, इनके रूप में सदा परिवर्तन होता रहता है और ये केवल सामयिक उपयोग के लिए हैं। (५) ईश्वर के स्वरूप को न समझना और ईश्वर की न्यायप्रियता में विश्वास न रखना (६) अपना कर्तव्य पालन न करना और इस पाप के फल मिलने से डरना। केवल बही विद्यार्थी मरते जाने से डरता है जिसने सबक याद नहीं किया है। बही पुत्र अपने पिता के सामने जाने से डरता है जिसने अपने पिता की आज्ञा का पालन नहीं किया है (७) जिसने अन्य प्राणियों को सताया है वह उनसे बचले में सताये जाने से डरता है। (८) यह भूल



महर्षि योगीराज दयानन्द की प्रबल योग साधना

[आचार्य प० दयानिध जो द्वारकी वैद्यकी, लालारवाचार्य, बरवाचार्य, महापरीक्षक बम्बईकमल गोरखपुर उत्तर प्रदेश]

महर्षि दयानन्द जी महान योगी थे। उनकी गणना प्राचीन योगियों में थी। लोग शहर की लक्ष्मी और योग को प्रथम स्थान देने हैं, किन्तु मैं इस मूलशक्ति को योग में प्रथम स्थान देता हूँ, इसका मुख्य कारण यह है कि विज्ञित्य को समन्वयप्रदानतो,

जिज्ञिष्यस्वादिह योग सागत ।

तृतीय नेत्र उचलन प्रभाशिताम्,

लहास वेगान्तिरता कपदिन । १

शहर जो मैं तो विवाह दो बार करके योग साधना में लगत होकर कर्षण की अधिकार में किया था किन्तु ऋषिराज दयानन्द ने अखिल इन्द्रियों को जीत कर ससार में ब्रह्मचर्य में विमूढित होकर सीधे ही सन्यास की दीक्षा को लिया था। शहर का तृतीय नेत्र रहा हो अर्थात् नहीं किन्तु इस मूलशक्ति के वेवसान मय नेत्र को देखकर पीरानिन्द के भक्त हंस पड़े तथा पाषाण शक्ति शहर को छोड़कर निराकार वैदिक शहर के भक्त बने—

ध्रुव समासाद्य सुखेन पार्वतीम्

गणेशता मानुषदि प्रयत्नत ।

गुहागृहान्त कृत योग साधन ।

शिवाय मायाखिल विरबन्धते । २

जाने से कि मृत्यु ही मोक्ष का द्वार है और मृत्यु तथा मोक्ष की राशि एक ही है। (१) यह मूल जाने से कि मृत्यु दुःख नहीं है, प्रत्युत दुःखों से छूट जाने का साधन है। यदि ऊपर लिखे विचार करने सम्मुख रहे तो हम ऋषि के अन्तिम दृश्य और अन्तिम वाक्य पर श्रद्धा न करके उनसे शिक्षा ग्रहण करते रहेंगे।

विश्व में सुलभूषक पार्वती के विवाह कर और अतीव प्रयत्न से गणेश को प्राप्त कर गुहा में बंठकर योग साधन करने वाले शहर में विकार हो सकता है किन्तु ब्रह्मचारी मूलशक्ति तो शुद्ध चेतन्य ब्रह्मचारी बनकर योग साधना में लगे थे, तथा स्वामी दयानन्द बनकर सफल ससार के कल्याण निमित्त समाधिस्थ हुए थे। शुद्ध चेतन्य ब्रह्मचारी स्वामी पूर्णानन्द जी से सन्यास दीक्षा लेकर तथा कुछ दिन सन्यास की क्रियाओं को सीखकर सत्य शिव की तलाश में योगसाधना में अग्रतर हुए और इन पवतो के उच्च शिखरो झाड़ियों में योगी के अन्वेषण में तत्पर हुए, अन्त में 'जिन खोजा तिन पाइया, जिसने खोजा उसको मिल गया 'दो जागार तम् ऋष्य जामयन्ते' जो जागता है वहीं ऋष्य को प्राप्त करता है तथा तान को सम्राप्त करता है। एक दिन दयानन्द ने मुना विद्यासाधनमें योगानन्द जी एक महात्मा रहते थे। वह योग क्रिया में कुशल है उस महात्मा की उम्कट मिलाप उरुकता से प्रेरित होकर वे श्यामाश्रम पहुँचे। वहाँ उन्होंने उक्त महात्मा से योग रहस्य को सुना और योग की पुस्तकों का अध्ययन कर तथा कुछ क्रियाओं को सीखकर पुन अन्य योगियों के अन्वेषण में तत्पर हुए। उन्होंने वहाँ से अन्वेषण करते हुये झाड़ोड कर्नाली में दो महात्माओं के दर्शन किये। उनमें से एक का नाम स्वामी ज्वालानन्दपुरी तथा दूसरे का नाम स्वामी शिवानन्द गिरी था। वे दोनों महाशुभाव प्रसन्न चित्त प्रशान्तात्मा योगी थे। स्वामी दयानन्द जी अपना अहीनाय्य मानकर उनसे पास बहुत बित रहकर योग की समस्त क्रियाओं को सीखा। उन दोनों महात्माओं ने अपने साथ ही उनको साधना में उपस्थित किया और यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान वक्क की



स्थिति का ज्ञान करारकर समाधि विधि की शिक्षा दी। अम्यासान्तर मे योग दर्शन पतञ्जलि ऋषि कृत की चर्चा एव अध्यापन भी कराया।

उसके उपरान्त वे लोग वहाँ से अहमदाबाद चले गये और इनसे कह गये कि आप मुझे एक मास के उपरान्त ब्रिलियेगा। ऋषि दयानन्द जी ने आत्ममुख से उनकी प्रशंसा के साथ कृपणता प्रकट की है। 'स्वामी उवाला-नन्द जी तथा स्वामी शिवानन्द जी को मे नहीं विस्तृत कर सकता हूँ। जिनकी कृपा से मुझे योग तक संप्राप्त हुआ तथा मुझे योग विद्या सम्पूर्ण किञ्चा सहित संप्राप्त हो गई। वरतुत उन दोनों महात्माओं ने मुझ पर अगार उपकार किया। इस कारण मे उनका विशेष रूप से अनु-गृहीत हूँ। पुन आबू पर्वत पर योगी जनो का नाम सुन-कर तथा वहाँ से हरिद्वार कुम्भ मेले पर योगीजनों से मिलने की उत्कंठा से चल पड़े। वहाँ मेले मे गया उस पार जहाँ योगी महात्मा रहते थे, उनसे मिलकर दिहरी होते हुए तुगनाथ की चोटी पर चढ़ना आरम्भ किया। वहाँ ही तपस्या करने का निश्चय किया। किन्तु वहाँ से कुछ दिन तपकर ओछी मठ पहुँचे। वहाँ के महन्त ने उन्हें गद्दी का प्रलोभन देकर कहा कि दयानन्द यहाँ ही रहो। तुम्हें लाखों की सम्पत्ति प्राप्त हो जावेगी। उस पर ऋषि राज ने कहा कि इससे बढ़कर सम्पत्ति माता-पिता की थी, उसको त्याग कर मे ब्रह्मचर्येण मे तपकर हुआ। अब आपकी गद्दी मे क्या रखा है। यह कहकर वहाँ से जोशी मठ चल दिये। यह अस्त्येय की प्रतिष्ठा है अहिंसा की प्रतिष्ठा थी कि सब पर दया थी और अपने प्राणघातक को भी हथिये देकर नैपाल जाने दो कहा। सत्य की साक्षात् प्रतिभूति ने सत्य के प्रचार मे एव अपने गुरु के सत्य ऋण को चुकाने के लिए जीवन भर तप किया और गुरुऋण को माता-पिता के ऋण से भी महान मानकर कमयोगी एव ज्ञानयोगी बने। अन्ततोगत्वा जब ओछी मठ के महन्त को फटकार कर जोशी मठ पहुँचे तो वहाँ के रावल जी से प्रोटकर योगियों के आरक्षण एव सम्मिलनार्थ तथा सिद्धि प्राप्त करने के लिये दूट १९०५ लेकर हिमाच्छादित हिमालय की ओर चल दिये और एक कन्दरा मे बँडकर बेबागुसार उपह्वारे गिरिगा सममे ब

नदीना धिया विप्रोज्जायत को चरितार्थ कर पदमासन लगाकर समाधिस्थ हुए और बोले-

इहासने शुध्यतु मे शरीरे त्वागस्थि मांसम् ।

प्रलय प्रयातु ।

अप्राप्य ज्ञान बहुकल्प तुलनम् ।

नैवासनात कायमनश्चलिष्यति ॥ ३ ॥

इस आसन पर बँडे हुये मेरा शरीर शुष्क हो जाये, चाम, हड्डियाँ, मांस गल जाये, किन्तु दयानन्द बिना प्रभु दर्शन पाये इस आसन से उठ नहीं सकता। अन्तत उन की ऋणभरा प्रज्ञा द्वारा समाधि संप्राप्त हो गई। इस प्रकार प्रत्येक दिन मनाधि लगाना और योग क्रियाओं का करदा जीवन भर नहीं छटा। अन्त मे दीपमालिका के दिन योगिराज ने समाधिस्थावस्था मे तद्वर शरीर को छोड कर अमरत्व को प्राप्त किया।

यदीय सदधम पयायलम्बिणी ।

महन्वदीना भुवने विराजते ॥

विराजते विश्वतले स एवतु ।

स्वामी दयानन्द तरस्वनी पति ॥ ४ ॥

(पृष्ठ ४२ का शेष)

तीर्ण्ये। स्वय गुजराती होते हुये महात्मा गाँधी जी ने तो हिन्दी १, २, ३-भाषा का आन्दोलन बाद को हाथ मे लिया, लेकिन उनसे ५०-६० वर्ष पूर्व ही ऋषि दयानन्द हिन्दो को राष्ट्र भाषा मान चुके थे। (इसका विस्तृत विवरण मेरी सद्य रचित पुस्तक 'हिन्दी और आर्यसमाज' मे देखिये) ।

(५) गोरक्षा का तथा गोवध निषेध का प्रश्न हिन्दू नेताओं ने मुख्य रूप से अब उठाया है और अब तदध आन्दोलन, अनन्त एव सत्याग्रह किया जा रहा है, लेकिन ऋषि दयानन्द ने ९० वर्ष पूर्व ही "गो कर्हणानिषि" पुस्तक लिखकर और भारत के जगो लाट से मिलकर इस आन्दोलन का सूत्रपात कर दिया था।

कहाँ तक दिये जाये दयानन्द की विश्वदृष्टि के उदाहरण ?

है पश्य दुश्मनो महर्षे दिव्य दृष्टि वाले ।

तेरा ही माग-दर्शन यह राष्ट्र आज पा ले ॥



संसार के लिए सबसे बड़ी देन—

महर्षि दयानन्द की नैरुक्तिक वेदभाष्य शैली

[लेखक—श्री मगवतदयालु जी सिद्धान्त वाचस्पति, भरथना]

महर्षि दयानन्द के आगमन से पूर्व लोग वेद का नाम तो लेते थे परन्तु वेदों में क्या है यह विस्मृत कर चुके थे। वेदों की श्रुति कृत प्रणाली से अर्थ न करके लौकिक कोष व व्याकरणानुसार अन्वय हो रहे थे। वेदों के सम्बन्ध में अनेक भ्रातिया प्रसारित हो रही थीं। योशुपियन विद्वानों का कथन था।

(१) वेद बच्चों की बिलबिलाहट और गड़रियों के गीत हैं।

(२) वेदों में अग्नि, वायु, मित्र, वरुण और इन्द्रादि बहू देवताओं की पूजा का विधान है।

(३) वेदों में माय, घोडा, बरूरी और पुरुषों की बलि देने का विधान है और वेदों में मांस-मक्षणलिखा है।

(४) वेदों में इतिहास है और कहानियाँ हैं। ये मिन्न-मिन्न काल में श्रुतियों ने बनाए हैं, 'अपोरुवेय नहीं हैं और न अनादि हैं आदि-आदि।

महर्षि दयानन्द ने अपने पुरुष स्वामी विरजानन्द के उपदेशानुसार श्रुति कृत ग्रन्थों वैदिक व्याकरण, अष्टाध्यायी। महामाष्य, वैदिक कोष निघन्टु और निरुक्तादि के आधार पर वेद माध्य करके अपना सारा जीवन वेदों के उद्धार में लगा दिया। वे वेदों के लिये जिये और वेदों के लिये मरे। उन्होंने घोषित किया कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक हैं' और वेद का पढ़ना पढ़ाना सब आयों का परम कर्त्तव्य है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है और अपोरुवेय हैं। वे सृष्टि के आदि में चार श्रुतियों के हृदय में ईश्वर ने प्रकाशित किये। (Back to the Vedas) यह उनका नारा था। वैदिक शब्द यौगिक हैं और वैदिक कोष के अनुसार अनेकार्थ वाच्य हैं। उनका अर्थ प्रकरण के अनुसार लेने से ही सही हो सकेगा जंसा कि उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश का प्रथम समुल्लास लिखकर सिद्ध किया है कि अग्नि, इन्द्र, आदि एक ही परमात्मा के यौगिक

नाम हैं, वेदों में बहू देवतावाद नहीं है। वैदिक यज्ञों में पशु नरादि बलि का विधान नहीं है। उन्होंने 'गोमेध यज्ञ' अश्वमेध यज्ञ, अजामेध यज्ञ, नरमेध यज्ञ के निम्न



श्री मगवतदयालु जी

अर्थ किये—गो पृथ्वी व इन्द्रियादि को कहते हैं अतः पृथ्वी को कृषि योग्य करना व इन्द्रियों को शुद्ध व वमन करना, अश्वमेध के अर्थ किये राष्ट्र व यज्ञ राष्ट्रोन्नति करना, अजामेध के अर्थ किये प्रकृति से मिन्न-मिन्न लाभ उठाना, नरमेध का अर्थ किया अन्वेषिष्ठ सस्कार—“मासोदनम्” का अर्थ किया निरुक्त के आधार पर “मास माननम्, मानस वा, मनो अस्मिन् सीवति वा”।

अर्थ—(१) प्रतिष्ठित पुरुष के लिये लाया जाता है वह मांस कहलाता है।

(२) जो शुभ मन से लाया जाता है उसका नाम भी मांस है। (शेष पृष्ठ ४८ पर)



दीप



मैं तो हूँ जाग ही रहा ! पर तुम तो हो सो जाते ?

जितना पाते नहीं अधिक कुछ उससे हो खी-आते !

पवन-पुत्र ने कहा बशानन ने कब उसको माना-

सीता लौटाई न, अन्त मे हाथ रहा पटताना,

तब मेरी ही बृहत् रूप ज्वाला कुछ ऐसी धधकी-

क्षण मे लका जली पाप की वृत्ति राम ने वच की ।

छद्म पुष्पक विमान पर सीता सहित अयोध्या आये-

स्वामत मे घर-घर मे सबने अपने दीप जलाये ।

मन की अंख खोलकर देखो उनको हर्ष मनाते ।

मैं तो हूँ जाग ही रहा ! पर तुम तो हो सो जाते !

'नहीं सुई की नोक बराबर भूमि किसी को बूगा-

बीर भोग्या यह वसुधा मैं ही उलको लूगा ।'

कहा कृष्ण ने 'हे दुर्योधन ! ऐसा हठ मत ठानो ।

पाण्डव भी हैं बधु तुम्हारे मेरा कहना मानो !'

मैंने भी शिर हिला दिया सम्पूर्ण समर्थन अपना-

पर आकाश-कुसुम सा मेरा ध्वज हुआ सुख-सपना ।

छिन्ना भयकर युद्ध सभी कुछ हाथ ! हो गया स्वाहा-

मेरे बुझते हुए हृदय से कड़ा मोन स्वर हा ! हा ! !

कास ! तुम्हारे हृदय वेदना मेरी यह छू पाते ?

मैं तो हूँ जाग ही रहा ! पर तुम तो हो सो जाते !

गोरी से जयजन्व जा मिले, कम्पित तन मैं रोया-

सद्युक्ता का भाग्य लग रहा अब खोया ! अब खोया !

गोरी को जय पकड़ बचनो से उन्मुक्त किया था-

तब मुझको यह लगा कि मैंने ही विष-घूट पिया था ।

रोका सो-सो बार हिलाकर शीश न नृप ने माना-

तब मैंने बुझ करके चाहा था यह उन्हें बुझाना-

नहीं देश का भाग्य दीप यह अपने साथ बुझाओ !

कभी शत्रु यह सगा न होगा ! मत माया मे आओ ! !

नश्वरारों मे तूती के कब बोल मुने है जाते !

मैं तो हूँ जाग ही रहा ! पर तुम तो हो सो जाते !





भयेंजों के कुटिल चक्र ने ऐसा जाल पसारा—

अपनी भाषा, भाव-वेष से कर बियाव्यार !

मेकाले की नीति फल गई बलकें यहाँ पर डाले—

पराधीन हो गये, पड़ गये प्रणो के भी लाले ।

मगतसिंह, आजाद, और बिस्मिल, चुनाव सेनानी—

दयानन्द, मालवी, तिलक, गांधी ने डार न मानी ।

सूय उगा करके स्वराज्य का चले गये नर नाहर—

प्राण-रश्मि पा उनकी चमके मोतोलाल-जवाहर ।

तुलसी और रवीन्द्र काब्य-स्वर स्वतन्त्रता को गाते ।

मैं तो हूँ जाग ही रहा ! पर तुम तो हो सो जाते ।

हिन्दी चीनी भाई-भाई ! पाकिस्तानी भाई !

सब भाई है ! फिर यह कौने किसने आग लाई ?

अब भी सावधान हो जाओ ! अपने को पहिचानो !

अपनी भाषा अपनी आशा जन्म भूमि को जानो ।

जो इसके विपरीत चले चलने दो चाल न उसको—

जब अपनी हाडी में तुम गलने दो डाल न उसको ।

कहीं न आने वाली पीढ़ी तुम्हें कलक लगाये—

कहीं न आदर्शों में आकर के खण्डहर बस जाये ?

बड़ी समय है जब तुम सब मिल निज कलक धो जाते !

मैं तो हूँ जाग ही रहा, पर तुम तो हो सो जाते !

—**क्रुधर हरिश्चन्द्र देव वर्मा 'चातक' कविवरन**



(पृष्ठ ४६ का शेष)

(३) जिसमें मन लिखता है अर्थात् रोचक भोजन-वेदों में अनेक मन्त्रों में मासोदन बनाकर अतिथि को खिलाने को लिखा है । इसके सच्चे अर्थ रोचक मास, क्षीर व दूध पाक के हैं । वैदिक काल में मास ओदन और कहलाती थी अर्थात् रोचक भोजन मांस को भ्रान्ति अनर्थ है । इसी प्रकार उन्होंने सिद्ध किया कि वेदों में सारी विद्याओं व विज्ञान का मूल है—“वेदोऽखिलो धर्म मूल” मनुस्मृति २-६ ॥ महर्षि दयानन्द की नैश्चिक्त वेद माध्य शैली ने ससार के विद्वानों को विचार धारा को परिवर्तित कर दिया । उन्होंने यह भी सिद्ध किया कि वेदों के अन्दर अलंकारिक वर्णन प्राकृतिक वस्तुओं का है जैसे गौतम चन्द्रमा को कहते हैं और अहिल्या रात्रि को कहते हैं । इन्द्र सूर्य को कहते हैं । चन्द्रमा व रात्री का साध है—प्रातः सूर्य की किरणों से रात्रि छिन्न-भिन्न हो जाती है—यह गौतम व रानी व चन्द्र को ही स्पष्ट नहीं है—

अतः वेदों में इतिहास नहीं है । संवत्समूलर जैसे विद्वान् को भी मानना पड़ा वेद विज्ञान की पुस्तकें हैं “Vedas are the books of science” श्री अरविन्द घोष का वक्तव्य है—whatever be the final complete interpretation Dayanand will be honoured as the first discoverer of right clues He has found the keys of the doors that time had closed and rent asunder the seal of imprisoned fountains

अर्थ—“वेदों का अन्तिम तथा प्रमाणिक माध्य चाहे कुछ भी हो दयानन्द का स्थान उपयुक्त शैली के प्रथम आविष्कारक के रूप में सर्वोच्च है । जिन वेदों के द्वार को समय ने बन्द कर दिया था उसकी चाबी को उसने पा लिया ।”



ऋषिवर ! तुमने किन शब्दों में श्रद्धांजलि दी !



हे गुरुवर ! मैं हृत्बुद्धि हू, मुझे यह ज्ञान नहीं है कि मैं तेरे विषय सन्देश को, कहां तक हृदयङ्गम कर सका हू, गुरुवर ? तेरे विषय सन्देश का प्रचार-प्रसार करना तो अलग रहा । हे ऋषिवर ! जब मैं तेरे चरित्र पर विचार करता हूँ तो मेरा मानस पुलकित हो उठता है । मैं उस समय कह उठता हूँ कि तू क्या नश्री था । तूने कितने पिपामु जन को वेदामृत का पान करा कर उनका जीवन सफल करा दिया । गुरुवर ! तूने कितने नवयुवकों को नास्तिक में आस्तिक बनाकर एक अनुपम मार्ग प्रशस्त कर गया ।

८ १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी प० इयाम जी कृष्ण वर्मा को इङ्गलैण्ड में भेजा था । तेरे ही शिष्य भगवत्सिंह, सावरकर, मदनलाल, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, नाई परमानन्द आदि अगणित नवयुवकों ने मातृभूमि के हितार्थ अथवा तन, मन, निष्ठावर कर दिया था । मैं इन नवयुवकों की पत्कियों में बैठने का साहस भी नहीं कर सकता ।

गुरुवर ! तू ने विश्व के भोगवावियों का यह स देश बिषा या कि जब तक तुम लोग त्यागवाव की ओर नहीं लौटोगे तब तक तुम्हें शान्ति उपलब्ध नहीं हो सकती, तुम चाहे जितनी विश्व शान्ति का रट लगाते रहो किन्तु व्यर्थ है । हे ऋषि मत्तो ! मैं तुम्हें भी यह चेतावनी दे रहा हूँ कि यदि तुम ऋषि की पवित्र आत्मा को शान्ति देना चाहते हो तो आज के इस पवित्र विषय पर यह प्रतिज्ञा करो कि मैं सर्वदा सत्य बोलूँगा, चाहे विधान सभा में रहूँ, चाहे लोक सभा में अथवा अन्य स्थान पर । मैं नित्य शास्त्रों का स्वाध्याय करूँगा और असत्य मतों का निर्भीकतापूर्वक खण्डन करूँगा । हे गुरुवर बयानन्द ! मैं तेरे बया और आनन्द को तेरे जीवन चरित्र से हृदयङ्गम करके तुम्हें अक्षुपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा हूँ, गुरुवेव ! यह श्रद्धांजलि अवश्य स्वीकार कर लेना ।

— तर्करत्न लक्ष्मीनारायण शास्त्री, साहित्यरत्न,



फर्नखाबाद में महर्षि दयानन्द सरस्वती

[भाषार्थ बीरेन्द्र शास्त्री एम ए, अधिष्ठाता वा० प्रकाशन एच सस्कृत प्रचार आर्य प्रतिनिधि समा, बनारसपुर]

प्रथम बार आगमन

महर्षि दयानन्द सरस्वती का का फर्नखाबाद से विशेष सम्बन्ध रहा है। उन्होंने फर्नखाबाद में प्रथम बार संवत् १९२४ विक्रम, श्वेच्छ मास में, छा० जगन्नाथप्रसादजी के विश्राम घाट पर २ दिन निवास किया। आयु ४४ वर्ष, बल्ब कोबल लगोटी, शरीर पर गंगा की रज अथवा होम की मलम रमाये, कमण्डलु साथ में, अधिकांश सस्कृत में भाषण करते थे। बहुत कम सोते थे, अधिक समय समाधि लगाते थे। एक ही बार भोजन करते थे। कोई सामान साथ में नहीं। स्नान से गीली लगोटी शरीर पर ही सूख जाती थी।

छात्रा मन्नीलाल जाड़ती—गंगा स्नान और सूर्य को जल चढ़ाने से क्या लाभ है ?

महर्षि—ये जड़ पदार्थ हैं। गंगाजल स्नान और सिंघाई आदि के जिये उपयोगी है। सूर्य अन्धकार नाशक तथा ज्योत्स्ना का द्योपक है। गंगास्नान और सूर्य को जल चढ़ाने से मुक्ति नहीं होती।

दूसरीबार आगमन

महर्षि संवत् १९२४ विक्रम, पौष मास को आरम्भ में उसी विश्रामघाट पर ६ मास ठहरे जो 'सिद्धगोपाल की विश्राम' नाम से प्रसिद्ध है। वहाँ महर्षि ने बाबू हुर्गा-सहाय अथवा क के पुरोहित प० गंगादास को मनुस्मृति चढ़ाई। करते हैं कि स्वामी जी के हाथ का सलोहित छात्र और मन्त्र वेद प० गंगादास के घर हस्तलिखित विद्यालय हैं। कुछ घटनाएँ—

(१) प० गंगाराम शास्त्री वैदियावाले ने पुत्र और शिष्य को स्वामी जी के पास भेजा—

शिष्य—अज्ञान।

महर्षि—आपुष्मान् नव। (उस समय पढ़ाने में व्यस्तता से अधिक बात नहीं की)।

शिष्य—अज्ञकारी चाण्डाल होता है।

महर्षि—(पढ़ाना समाप्त करने के पश्चात्) अब कहिये, क्या कहते थे।

शिष्य ने फिर पूर्वोक्त वाक्य बुहराया।

महर्षि—अहंकार क्या वस्तु है ? क्या मुझको अहंकारी कहते हुये तुमने अहंकार नहीं किया ? मद्र मिथ्यामिमान नहीं करना चाहिये। कार्य में प्रवृत्ति अनिमान नहीं। सत्कार में जितने कार्यकुशल हुए हैं, क्या रामचन्द्र, क्या कृष्णचन्द्र—ये अपने कर्तव्य को पालन करने के उपरान्त दूसरा काय करते थे। यदि तुम इस प्रकार पठन-पाठन में होते तो सत्य कहो, पाठ भंग होने का कुछ तुम्हारी आत्मा को होता वा नहीं ?

शिष्य—हां, हां महाराज।

गंगाराम शास्त्री ने शिष्य से महर्षि की बिद्वता का समाचार जानकर शास्त्रार्थ का विचार छोड़ दिया।

(२) चंद्र सुवी संवत् १९२६ (१४ मार्च १९१९) को, ११ दिन तक ११ पण्डितों द्वारा स्वामी जी के निरीक्षण में जप और होम करने के पश्चात् छा० जगन्नाथ-प्रसाद जी आदि ने अपने घर स्वामी जी द्वारा भेजे गये प० पीताम्बरदास से यज्ञोपवीत लिया। पंडितों में बड़ा कोसालू मन्त्रा कि श्रुतिपूजन नहीं हुआ और शुक्रास्त में यज्ञोपवीत हुआ है, वैद्यो १ वर्ष में ही क्या अनिष्ट होता है।

महर्षि—मेरा मुक्त (सदेव मुक्त सत् ब्रह्म) कभी अस्त नहीं होता। पाषाणादि श्रुतिपूजन वेद विषय है।

(३) मेट के भी गोपाल (हरिगोपाल) शास्त्री को शास्त्रार्थ के लिए बुलाया गया। विश्राम घाट पर श्रुतिपूजा विषय पर शास्त्रार्थ हुआ—

शास्त्री—मो स्वामिन्, मया रात्रौ विचारः कृतः। सर्वत्र श्रुतिपूजनस्य व्ययस्याऽयस्ति। पुत्र कथं जन्मन कियते।

वाक्य महान् में बोलने लगे ।

स्वामी जी—मायायां बद्, मायाया बद् । प्रकरण विहाय मा गच्छ ।

ओझा—अहम् तु प्रकरण विहाय न गच्छामि, परन्तु भीमना पुन-पुन प्रकरणमभिनयते । प्रकरण शब्दस्य कथं सिद्धिः ?

स्वामी जी—प्र पूर्वात् कृत् वातोऽयं प्रथमे कृते सति प्रकरणशब्दस्य सिद्धिमवति ।

ओझा—वातु समयो भवति किम्बाऽसमया भवति ?

स्वामी जी—‘समयं पदविधि’ के अनुसार वातु समयं है ।

ओझा—असमयं किसे कहते हैं ?

स्वामी जी—सापेक्षोऽसमयो भवति । यह महाभाष्य का कथन है ।

ओझा—यह वचन महाभाष्य का नहीं है ।

इस पर स्वामी जी के पास पढ़ने वाले ब्रजकिशोर ने महाभाष्य मगाकर अ० २, पाठ १ में विलम्बा विया । पठित मन्त्री दग रह गयी ।

ओझा—मैं इसे प्रमाण नहीं मानता । हम जो कहते हैं वह भाष्यकार से कम नहीं ।

स्वामी जी—तुम महाभाष्य के कर्ता पतञ्जलि मुनि के आगे अग्रथ हो । यदि कुछ पांडित्य का अभिमान है तो बताओ ‘कथं सत्ता किसकी है ?’

ओझा—ने कुछ उत्तर नहीं दिया ।

स्वामी जी—देखो, महाभाष्य में ‘अकथित च’ इस सूत्र में कर्म की कथ्य सत्ता की है ।

इस प्रकार रात के १ बजे तक वार्तालाप होता रहा अन्त में यह निश्चय हुआ कि ‘समयं पदविधि’ सूत्र संबंध घट जाये तो स्वामी जी की जय, और यदि एक स्थान पर लगे तो हलधर ओझा की जय ।

दूसरे दिन रात के ८ बजे फिर जगता एकत्र हुई ।

बड़ी कठिनाता से शान्ति रक्की गई । स्वामी जी ने कहा—“जो शास्त्रार्थ न करे उस पर मोहरपा का पाप चढ़ेगा । मैं सत्यपत्नी हूँ, हार भी गया तो कोई हानि नहीं । तुम गृहस्थ हो, इसलिये पराजय से अधिक हानि सम्भव है । ओझा जी ने कहा—मैं हारूँगा ही क्यों ?

प्रकाश और महाभाष्य का ग्रन्थ मगाकर स्वामी जी ने सब विद्वानों के आगे ‘समयं पदविधि’ की व्याख्या जोलकर रक्ष ही और सूत्र की व्यापकता को अनेक उदाहरण देकर समझाया । ओझा जी से कुछ उत्तर देते न बना और इस प्रकार पराजित होने पर उन्हें उनके साथी अपने साथ ले गये । सबने एक वाक्य होकर कंठ विधा, कि हलधर की प्रतिज्ञा अशुद्ध सिद्ध हो गयी ।

साधो का कढ़ी भात

अनेक सततामी साथी, जो साध कहे जाते हैं और मद्य भास का सेवन नहीं करते, स्वामी जी के पास आवा करते थे । स्वामी जी ने जब इनका बिया कढ़ी भात खाया तो मगर में बहुत आश्चर्य किया गया । लोगों के प्रश्न करने पर स्वामी जी ने उत्तर दिया कि ‘बि मद्य-भास के व्यवहार से रहित हैं । तब इनका अन्न अशुद्ध क्यों ? अशुद्ध तो वह होता है जो अन्याय से उपाजित है अथवा ठीक पका नहीं, या बासी, सड़ा पुर्णम्थादि दोषों से युक्त है । इन दोषों से रहित अन्न अप्राप्त नहीं । जाप लोग घृणा करते हैं इसी से वे वेद मार्ग पर लीचे नहीं आते । प्रीतिपूर्वक धर्म की बात समझाने से वैदिक बन सकते हैं । वैदिक धर्म मनुष्यमात्र से धृवारहित प्रेम के बर्ताव की शिक्षा देता है ।

शका समाधान

१ प० बलदेवप्रसाद—शिकार से जीर्वाहता का पाप लगता है वा नहीं ?

स्वामी जी—हिसक जीव जो अपने बुद्ध स्वभाव से खेतों और पार्लमीय पशुओं तथा मनुष्यों का नाश करते हैं अत उनके मारने से मनुष्यों और पशुओं की रक्षा होती है, किसी की हानि नहीं, अत ऐसे शिकार में दोष नहीं ।

२ श्रीवे परमानन्द—मद्यपान में क्या दोष है ?

स्वामी जी—मद्यपान सब मर्ति निश्चित है । मद्यपी जन उन्मत्त होकर औरों की सांभान्य हानि नहीं, बरन प्राणनाश तक कर देता है और आप भी अपराधक मारा जाता है अथवा रोगवश मरता और दुःखोंके प्राप् होता है । वह अकरणीय करता और विद्यायत्न भाति



महर्षि—कुत्र लिखितमस्ति तदुच्यताम् ।
शास्त्री—देवताअपचन चं व समिदाधान मेव च ।
(मनु० अ० २, श्लोक १७२) ।
महर्षि—अस्मायं कियताम् ।
शास्त्री—देवताओं का पूजन करे और साथ प्रातः
होम करे । पूजा मूर्ति की होती है, इस कारण यहाँ मूर्ति-
पूजन का विधान है ।

महर्षि व्युत्पत्ति द्वारा इसका अर्थ सुनो । अवपूजायाम्
इस धातु से अर्चन शब्द बनता है जिसका अर्थ सत्कार है ।
तो यहाँ होम में विद्वानों के सत्कार का अभिप्राय है, मूर्ति
पूजा नहीं है । यज्ञ मूर्त्त नहीं करा सकता यह कार्य
विद्वानों के द्वारा ही उपादेय है । अतएव उन देवता अर्थात्
विद्वानों का सत्कार अवश्य करना चाहिये ।

शास्त्री जी निश्चर हो गये । काशी जाकर पण्डितों
को एक व्यवस्था लाये । २४ मई (वैशाख शुक्ल १४,
संवत् १९२५ वि०) को नृसिंह चौबसे के मेले पर टोका
स्थान पर लडा गाइकर कोलाहल करने लगे और वहाँ
स्वामी जी को शास्त्रार्थ के लिये बुलाने लगे । स्वामी जी
ने कहा कि 'यहाँ विश्राम पर शान्तिपूर्वक शास्त्रार्थ करने
के लिए आओ' । श्री गोपाल शास्त्री ने कहा—'स्वामी जी
ने मन्त्र प्रयोग से बिसरात कील बी है, इसलिए वहाँ जाने
पर बेरो जीत न होगी ।'

'यह पण्डितों की व्यवस्था है । जय देवों, जय काली,
बपानन्द हार गये' आदि के कोलाहल और गडबड के
समाचार सुनकर जिल. मजिस्ट्रेट ने एक दरोगा को भी
जी के पास भेजा । स्वामी जी ने कहा—'मैं तो अपने स्थान
पर शान्तिपूर्वक बैठे हूँ । बार-बार बुलाने पर भी नीचे
नहीं उतरता । यहीं बैठा उन उपद्रवियों का बकवाद और
गालीबान सुनता रहा ।' प्रभावित होकर बारोगा मुरझा
की व्यवस्था कर चला गया । कोतवाल के डाटने पर श्री
गोपाल शास्त्री हटकर फर्खाबाद छोड़कर चले गये ।

(४) दो दिन पश्चात् डाकमूर्शी ज्वालप्रसाद स्वामी
जी के पास आकर कुरसी डालकर असन्म्यता से बकने
लगे । स्वामी जी के मत्त साथ लोगो ने ज्वालाप्रसाद को
कुर्सी से गिराकर ऊपले जाग लगा दी ।

(५) एक दिन गोबर्द्धनबास पट्टेवाले बाबा के भेजे
एक वृष्ट ने आकर प्रश्न किया कि गंगा मुक्ति देती है कि
नहीं ? स्वामी जी ने खन्धन किया । इस पर वह जूता
फेंककर भागा । साथो ने उसे पकड़कर टोका । स्वामी जी
ने कहा—इसे छोड़ दो । इसने अज्ञानवश ऐसा किया है ।
निर्बल पर क्या करना बल की प्रशंसा है ।

(६) एक दिन ४-५ मुसलमान आकर कहने लगे—
परमेस्वर ने मुहम्मद साहब को हमारे लिये भेजा है कि
नहीं ? स्वामी जी ने उत्तर दिया—'आप अप्रसन्न न
होइयेगा । हम तो मुहम्मद को अच्छा नहीं समझते । आप
लोगो ने भी अच्छा नहीं किया जो उसके अनुयायी बन
गये । जब चोटी के बाल कटवा डाले यें तो इतनी लम्बी
दाढ़ी रखने से क्या लाभ ?

फर्खाबाद का दूसरा शास्त्रार्थ

लाला प्रेमदास देवीदास लखी आदि ने कानपुर से
हलवर ओझा को शास्त्रार्थ के लिये बुलाया और कहा
'हम तो बब-बब कर शास्त्रार्थ करेंगे' । लाला जगन्नाथ-
प्रसाद ने तत्काल ढाई हजार रुपये जमा करके कहा कि
आप भी इतने ही जमा कीजिए किन्तु वे तैयार न हुए ।
ज्येष्ठ शुक्ल १०, शनिवार (१९ जून १८६९) को
अनेक पण्डितों और रईसों के साथ ओझा स्वामी जी के
पास शास्त्रार्थ के लिये रात को ९ बजे पहुंचे । मूर्ति पूजा
विषय छोड़कर ओझा ने मद्यपान पर बातचीत आरम्भ
कर दी और कहा—'लौभाभ्या सुरां पिबेत् ।' इस प्रमाण
से सुरापान उचित है ।

स्वामी जी—'यहाँ सुरा शब्द ते रोमलता का अभि-
प्राय है, मदिता का नहीं । मद्यपान सब शास्त्रों में वर्जित
है ।

ओझा—'आप सभ्यता के लक्षण बताइये ।

स्वामी जी—'कल्पत केश नक्षत्रम्भू पाभी बंधी
कुमुम्भवान् । विचरेन्नियतो नित्य सर्व भूताम्बपीडयन् ॥

(मनु० ६/५२)

यवहरेव विरजेत् सवहरेव प्राञ्जेव वनात् वा गुहात्
वा ब्रह्मचरिदिव प्राञ्जेत् ।

अब आप ब्राह्मण के लक्षण बताइये ।

ओझा जी इधर-उधर बगलें झांकने लगे । दो एक

पदापी की प्राप्ति से वंचित रहता है अतः मद्यपान त्याग्य है।

३ लाला मनीलाल—सन्ध्या कितनी बार करनी चाहिये ?

स्वामी जी—प्रातः साय सन्धि बेला में, दो काल में, एकात्म में जल के किनारे पवित्र होकर सन्ध्या करनी चाहिये। अब कृष्ण जी द्वारका से हस्तिनापुर गये तो दो काल में सन्ध्या की। भागवत में भी 'साय प्रातरुपासीत' लिखा है।

४ लाला गङ्गूलाल—भोग विनामह क्या बहनी गंगा के पुत्र थे और पार्वती क्या हिमालय की कन्या थी ?

स्वामी जी—भोग्म की माता का नाम गंगा था। बहूतो गंगा नरदेह धारिणी नहीं है। पार्वती हिमालय के राजा की कन्या थीं। पत्थर से कन्या उत्पन्न नहीं हो सकती, ससार में सृष्टिक्रम के विरुद्ध कुछ नहीं होता।

५ लाला अजनायप्रसाद—मनुष्य का कर्तव्य क्या है ?

स्वामी जी—ईश्वर की प्राप्ति, जो ईश्वरीय आज्ञाओं के पालन करने से होती है। ये आज्ञायें वेदों का आचरण करना, धर्म के दश लक्षणों पर चलना और दश अधर्मों का त्याग करना है। मनु ने धर्म के १० लक्षण अ० ६ श्लोक १२ में तथा अधर्म के लक्षण अ० १२ श्लोक ५-७ में बताये हैं।

गप्पाष्टकी और सत्याष्टकी दयानन्द

लाला मदन मोहनलाल—कुछ लोग आपको आठ गप्यों बताने वाला कहते हैं जिससे धूत लोग आपको गप्पाष्टकी कहते हैं ?

स्वामी जी—पुत्रों चाहे जो कहा जाय चिन्ता नहीं।

८ गप्यों इस प्रकार हैं—

(१) पुराण, (२) पाषाणादि पूजा, (३) शंभु बंशवध आदि मत, (४) वानमार्ग, (५) भावक द्रव्य सेवन, (६) पर स्त्री गमन, (७) चोरी, और (८) छल, भविष्य, मिथ्या भाषण। आठ सत्याष्टक निर्मललिखित हैं—

(१) वेद और आय ग्रन्थ।

(२) ब्रह्मचर्यपूर्वक वेदों का पठन-पाठन।

(३) सन्ध्या, अग्निहोत्र का अनुष्ठान।

(४) गृहस्य धर्म और पञ्चमहायज्ञ का करना।

(५) सत्यग, उपासना योगाभ्यासपूर्वक बानन्स्थ का सेवन।

(६) परा विद्या का अभ्यास और सत्यास ग्रहण।

(७) काम, क्रोध, लोभ, मोह, मग, डंभ का त्याग।

(८) पंच क्लेशों को त्यागकर मोक्षानन्द प्राप्ति।

स्वामी जी का शारीरिक बल

एक दिन कई पहलवान खोंबो ने कहा कि यदि स्वामी जी कसरत करें तो वे बल में भी किसी से हिलिये न हिलें। यह सुनकर स्वामी जी ने अपनी कोपीन उसके आगे निचोरी और कहा कि अब इसमें से जो एक बूढ़ भी निकाल सके प्रशंसायोग्य बलवान माना जायेगा। पहलवानों ने पृथक्-पृथक् दोनो हाथों से दबा-दबा कर कोपीन को देखा किन्तु पानी की एक बूढ़ भी न निकाल सके। सब ने स्वामी जी को धन्य-धन्य कहकर उनके बल की प्रशंसा की।

सहनशीलता के दो उदाहरण

(१) एक दिन एक निरक्षर देहानी सद्गुरु नामक ब्राह्मण ने स्वामी जी को जेक कटु वचन कहे, उन्हें ईसाई बताया, किन्तु स्वामी जी मुस्फुराते हुए चले गये। जब निवास पर पहुंचे तो वही ब्राह्मण वहाँ भी स्वामी जी को चिढ़ाने के लिये पहुंचा। स्वामी जी ने 'आइये, बंधिये' कहकर उससे मधुरता से बातचीत की, जिससे उसका चित्त द्रवित हो गया और उसने क्षमा याचना की।

(२) स्वामी जी गंगा किनारे जल में पंर फेंकाये लेटे थे। कुछ चंचल बालकों ने रेत के गोले बना-बनाकर मारना आरम्भ किया। जब रेत आंखों में गिरा तो स्वामी जी वहाँ से उठकर चले गये।

युवकों को वेदयागमन से वञ्चाया

सेठ पन्नालाल का पुत्र बहुत बिगड़ चुका था। बहुत समझा-बुझाकर उसे स्वामी जी के पास ले आया गया। स्वामी जी ने अपने मधुर प्रभावशाली उपदेश से उसको



तथा उस जैसे, अनेक कुमारीय युवको को वैश्यागमन से बचाया। सेठ पन्-न के इस पुत्र ने अपना जीवन पवित्र कर स्वामी जी का शिष्य बनकर उनके कार्यों में बड़ी सहायता दी। कहा जाता है कि एक दिन स्वामी जी के अवारण में बहुत सी वैश्यायें भी यह देखने गयीं कि वह सातु फाव ह जो हमारी आजोबिका समाप्त कर रहा है।

योगविद्या की शक्त

एक दिन गढ़ी के नवान्न ने स्वामी जी से पूछा कि क्या कोई ऐसी विद्या है जिससे दूर के हालात मालूम हो सकें। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि योग विद्या में यह शक्ति अवश्य है परन्तु योगीजन किसी की गुप्त बातों को जानने की इच्छा नहीं करते। उनका उद्देश्य तो परमेश्वर को जानना ही होता है अतः वे उसी के ध्यान में मग्न रहते हैं।

कहा जाता है कि स्वामी जी कभी-कभी सारी रात समाधि में लीन रहते थे।

सस्कृत पाठशाला की स्थापना

लाला बशीराल शिवालय बनवाने वाले थे कि स्वामी जी का उपदेश सुनकर उन्होंने शिवालय के स्थान पर पाठशाला स्थापित करा दी। ५ विद्यार्थी प्रविष्ट हुए। सबसे अष्टाध्यायी पढ़ना आरम्भ किया। १० बज-किसोर अध्यापक नियत हुए। इसी समय वहाँ स्वामी जी ने अपने और वेदपाठी ब्राह्मणों को वेदपाठ को पुष्ट करने के लिये जर्मनी से वेद की प्रतियाँ मगामी थीं।

तीसरी बार आगमन

सन् १९२८ माघपद मास में स्वामी जी ने तीसरी बार फरवरी मास में आकर अपनी पाठशाला का निरीक्षण किया और उसे सेठ पन्-लाल के प्रबन्ध से हटाकर लाला निरंजनाजी के प्रबन्ध में उनके बाग में स्थापित किया। ४० युगलकिसोर प्रधानाध्यापक बनाये गये। १० उद्याल-दल और नीमसेन भी शिक्षा प्रदान करने लगे।

स्वामी सरधानन्द ने श्रीमद्धानन्द प्रकाश में मार्ग-शुक्ल सवत् १९२८ में भी फरवरी मास में आकर तीस मास तक निवास करना लिखा है। किन्तु कुछ अधिक बिबरण

नहीं लिखा। फरवरी मास के इतिहास में इसका वर्णन नहीं मिलता।

चौथी बार आगमन

सवत् १९३० मार्गशीर्ष अमावस्या (२० नवम्बर १८७३ ई०) को स्वामी जी फरवरी मास आकर पाठशाला में ही ठहरे, और पांच बड़ी ६ सवत् १९३० (१० विसम्बर १८७३ ई०) तक अर्थात् २० दिन वहाँ रहे। इस अवसर पर १०० पी० पी० के गवर्नर मेयोर और जिन्ना बिनाग के डायरेक्टर कमलन से उनकी भेंट हुई और स्वामी जी ने उनसे गोवा बन्द करने का परामर्श का आग्रह किया। कलकत्ता के देवदत्त स्वामी जी के साथ वहाँ आये थे। उन्होंने कई बार स्वामी जी को रात से १२ बजे १ बजे तक उठकर देखा तो परमात्मन लगाये समाधिस्थ पाया। २० बिम्बेश्वर ब्याल शास्त्री सरस्वत्या ने एक दिन राती रात को स्वामी जी से भेंट कर वर्णाश्रम जय पर प्रश्नोत्तर कर अपना श्रम दूर किया।

पाँचवीं बार आगमन

सवत् १९३३ वि० श्येष्ठ शुक्ल १ से श्येष्ठ शुक्ल १ तक स्वामी जी ५वीं बार फरवरी मास आकर १५ दिन वहाँ रहे। पाठशाला की बसा ठीक न देखकर उसे तोड़ दिया। २३ मई १९२६ ई० की वहाँ की दो बड़े ईसाई पादरियो से वार्तालाप करके ईसाई मत का खण्डन किया।

छठी बार आगमन

सवत् १९३६ वि० आश्विन सुदी १० (२५ सितम्बर सन् १८७९ ई०) को स्वामी जी आर्यसमाज के उत्सव पर फरवरी मास आये और वहाँ मगर से १ मील गंगा के किनारे लाला कालीचरण रामचरण की पुण्यवाटिका में द्वितीय आश्विन बदी ७ सवत् १९३६ तक रहे। फरवरी मास और फतेहगढ़ में अनेक व्याख्यान हुए। फरवरी मास के पञ्चमि में २० प्रदल लिखकर स्वामी जी के पास भेजे थे। १२ अक्टूबर को ये प्रदल आर्यसमाज में पढ़े गये और उनके उत्तर महर्षि ने आर्यसमाज द्वारा भिजवाये। ये प्रश्नोत्तर अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। प्रश्नों का निर्माण मुख्य रूप से १० बलदेवप्रसाद की ०९० हेडमास्टर हाईस्कूल के किया था। उन्होंने एक धर्म समाजी स्थापित की की



धर्मसमाज को पुस्तकालय, पुस्तकालय, पहलवान और नारायण दुबे ने स्वामी जी के समर्थक चौबे तोताराम पर हाथ उठाया जिससे उनपर मुकदमा चला और उन दोनों को बण्ड मिला। सातवीं बार जब स्वामी जी ने फर्क खाबाब आकर यह समाचार सुना तो उन्होंने मुकदमेबाजी की निन्दा की और सहनशीलता तथा उदारता का उपदेश दिया।

स्वामी जी के उत्तरों का प्रभाव अच्छा पड़ा। पं० बलदेवप्रसाद बी० ए० स्वयं आर्यसमाज में आने लगे और समाज बन गये।

प्रश्न और उत्तर भारतमुद्रण प्रबन्धक में उस समय छपे थे और फर्क खाबाब के इतिहास में भी छपे हैं। किन्तु स्वामी सत्यानन्द लिखित जीवन चरित्र से विदित होता है कि सत्यानन्द कतव्य एवम स भक्षण सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर की भाषा भारतमुद्रण प्रबन्धक और पं० लेखराम कृत जीवनकृत जीवन चरित्र में कुछ-कुछ भिन्नता है।

फतेहगढ़ में स्वामी जी ने आर्यसमाज १० नियमों की पूर्ण बताया था वहाँ व्याख्यान का बीच में एक शरानी कोलाहल मचाने लगा जो स्वामी जी के सहनाद से सर्वथा शांत हो गया।

अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं में स्वामी जी की निर्धनों के प्रति सहानुभूति की सूचक निम्न लिखित घटना उल्लेखनीय है। सतसंग में शका-समाधान के समय एक स्त्री को झंके कुम्भले वस्त्र में लपेटकर अपना मरा बच्चा ले आते हुए देखकर स्वामी जी ने इतका कारण पूछा तो उन्होंने अपनी असमर्थता तथा निर्धनता को ही कारण बताया जिस पर स्वामी जी के नेत्रों से आंसुओं की जड़ी दूट पड़ी। उन्होंने आसू पीछे ले हुये कहा—'कभी यह भारत विभूति का भवन था। परन्तु आज मरे बालकों के तन को ढांपने के लिए नया कपड़ा भी नहीं मिलता।'

सातवीं और अंतिम बार आगमन

बैनास श्रुवल ११ स० १९३७ (२ मई १८८० ई) गुरुवार को स्वामीजी अंतिम बार फर्क खाबाब आर्यसमाज के निमन्त्रण पर आये और ०१/१४ कृष्ण न तत लाला काकीचरण रामचरण रईस के दाग में विश्राम किया। फर्क खाबाब आर्यसमाज ने ११ और फतेहगढ़ में मुश्की

गौरीलाल बकाल के स्थान पर दो व्याख्यान अत्यन्त महत्वपूर्ण हुये। फतेहगढ़ में २९ मई, १८८० रविवार को व्याख्यान के पश्चात आर्यसमाज स्थापित हुआ।

२० जून १८८० रविवार को मुक्ति विषय पर स्वामी जी का ऐतिहासिक महत्वपूर्ण व्याख्यान हुआ, जिसमें उन्होंने मुक्ति से नुनरावृत्ति के सम्बन्ध में अपने विचार निश्चित करने की घोषणा की, और अपने समर्थन में निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत किये—

(१) इवानीमिष सवत्र नात्यन्तोच्छेद ।

—कपिक मुनि, साह्य बर्षान १, १५९

(२) ते ब्रह्म लोकेषु परान्तकाले; परामृता परिमुच्यन्ति सर्वे ॥ —मुण्डक उपनिषद, ३-२

अर्थात् मुक्त पुरुष परान्तकाल (महाप्रलय) अर्थात् ११,०४०,०००,००,००० इक्कीस बीस 'दस [सत्र] चालीस अरब वर्षों तक ईश्वर' के आश्रय में सुखपूर्वक रहते हैं। यह मुक्ति की अर्थय सत्यायप्रकाश के नवम समुत्प्लास मुक्ति प्रकरण में भी की गई है।

अंतिम व्याख्यान २७ जून सन १८८० को आर्यसमाज भवन फर्क खाबाब में श्रुवेद विषय पर अत्यन्त महत्वपूर्ण हुआ और श्रुवेदाय के प्रकाशनायक धर्म प्रदान करने की प्रार्थना बाबू दुर्गाप्रसाद रईस के सुधाहृद श्री मुश्की नारायण ने की।

जाति निर्णय

जाति अन्वेषण प्रथम भाग-३६१ हिन्दू जातियों का 'विश्वकोष'-डि० ४७५ पृष्ठ। सजिब ८। अक्ष ११११), सत्रियवश प्रथीप प्र० भाग-११०० सत्रिय बर्षों की सूची सहित, सत्रिय जाति का प्रसिद्ध ग्रन्थ। सजि० ८। डा० ११११। श्री मुस्लिम जाति निर्णय-५२० पृष्ठ। अद्वितीय 'शुद्धि व्यवस्था' सहित उद्धारक ग्रंथ। सजि० ८। डा० ११११), रूणिया जाति निर्णय-२०० पृष्ठ। लूथिया, नूनियां जाति का उद्धारक ग्रंथ। सजि० ८। डा० ११११) नियमानुसार-'गीता' 'रामायण' सूचीपत्र 'मुपत्र'। पता—बर्नं व्यवस्था मण्डल (ए) कुलेरा (बयपुर)



ऋषिराज स्मरण



इयानन्द ऋषिराज तुम्हारा, धडा से करते गुण गाव ।
 तुमने सच्चा मार्ग दिखाया, करते सदा तुम्हारा माव ॥
 सब पर क्या बिस्वा कर तुमने, पाया था नित विद्यमानव ।
 चरणचिह्न पर चलें तुम्हारे, जिससे हो सबका उरखान ॥
 तुम उदारतम वेद शास्त्र के, धर्ममंज परम आचार्य ।
 तुमने तम सब दूर भगाया, वे वेदों का पावन ज्ञान ॥
 दलितों का उद्धार किया नित, पतितों का तुमने उद्धार ।
 बन कर सच्चे शिष्य तुम्हारे, हम कर लें सबहा कृत्याव ॥
 महिलार्थी थीं बनी बालिका, पंरो की वे जूती नुन्य ।
 सिंहाद वेदों का करके, उहे दिल,मा तुमने मान ॥
 ये विदेशियों के चक्कर में, शिस्त उन्हे देवता मान ।
 तुमने जापू न किया स्वदेशी, गा स्वराज्य का निज अभिमान ॥
 जाति भेद अस्वस्थ मानना, गुगडू खाने राष्ट्र समाज ।
 इनको भगा सिखाया तुमने, ईश्वर के सब पुत्र समान ।
 त्याग तपस्या सत्य विमलता, निर्भयता तुम ये साकार ।
 क्यों व नवायें सीस तुम्हारे, सम्मुख ऋषिबर भादु समान ॥
 ईश्वर तेरी इच्छा पूरी, हो तूने शुभ लीला की ।
 यह कह करके शान्त भाव से, किया धर्म हित निज बलिदान ॥
 तुम आर्षर्ष समाज सुधारक, तुम्हीं विश्व के सच्चे नायक ।
 यतिबर युग निर्माता तुम थे, तुम थे शुभ गुण यश की छाव ॥
 एकेश्वर पुका सिखलाई, भेद भावना दूर भगाई ।
 वेद मार्ग की रीति चलाई, करते वेव तुम्हारा ध्यान ॥

— धर्मदेव विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ)

आनन्द कुटी, ज्वालापुर



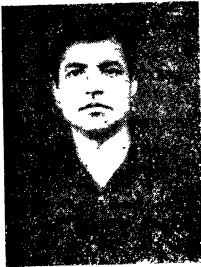


गुह्यता गुह्यं तमो !



(श्री विक्रमादित्य जी बसंत स० कोवाप्यस्य आर्यप्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश)

संसार के प्रत्येक देश में विभिन्न ऋतुओं में अनेक पर्व मनाए जाते हैं। कुछ पर्वों का सम्बन्ध जहाँ ऋतु परिवर्तन से होता है, वहाँ कुछ पर्व महान् विभूतियों के आदर्शों की स्मृति को स्थायी रूप से जीवित रखने के लिए भी निश्चित कर दिये जाते हैं। भारतवर्ष में दोपावली का



श्री विक्रमादित्य जी 'बसन्त'

पर्व एक ऐसा पुनीत पर्व है जिसका सम्बन्ध ऋतु परिवर्तन के साथ २ अनेक महान् पुरुषों के जीवन आदर्शों से भी जुड़ा हुआ है। पर्व आनन्द के प्रतीक हैं और आनन्द शुचिता से प्राप्त होता है। शुचिता तप से मिलती है और तप शक्ति-बान ही कर सकता है।

दोपावली की अन्धतम रात्रि को हम जिस प्रकार दीपों के प्रकाश से उज्ज्वलता प्रदान करते हैं वैसे ही सामाजिक और राष्ट्रीय क्षेत्रों में पाप रूपी गहन तम को दूर करने वाले अनुपमार्थी मर्यादा पुरुषोत्तम राम और महान् तपस्वी ऋषि ब्रह्माम्ब के आदर्शों को गुम्माने के

लिए हम प्रथम अपने अन्तरतम को ज्ञान के आलोक से आलोकित करते हैं तत्पश्चात् अपने जीवन दीप से जीवन दीपों को जलाने का क्रम चालू रहता है तब तक समाज में सुख शान्ति और समृद्धि की अभिवृद्धि होती रहती है किन्तु जब यह क्रम अवरुद्ध हो जाता है तो पाप के तिमिर युक्त वृत्त में मानवी जीवन पथ भ्रष्ट होकर ठोकरें खाने लगता है और बुद्धों व तापों से सन्तप्त होकर प्राहि-प्राहि करने लगता है।

गुण प्रवर्तक ऐसे ही अन्धकार के निवारण का व्रत लेते हैं और मनस्वी व तपस्वी होकर जब मानव समूह को सरस्वी कर देते हैं तो जगत में यशस्वी होकर अमर हो जाते हैं। ऐसे महान् पुरुषों को पर्वों पर श्रद्धा-लियाँ अर्पित करना स्वामाधिक ही है परन्तु मौखिक श्रद्धाजलियों से बहु श्रेष्ठ कार्य तो सिद्ध नहीं होता जिसकी पूर्ति के लिए महान् विभूतियाँ स्थापित होती हैं। सच्ची श्रद्धाजलि तो वह है जो कर्म के रूप में बी जाए। चित्र की नहीं चरित्र की पूजा होनी चाहिए। गुण गान के साथ गुण ग्रहण किए जाने चाहिए। कर्म ही वास्तविक पूजा है और श्रेष्ठ कर्म के निमित्त श्रद्धा और ज्ञान का होना आवश्यक है। मस्तिक का विवेक पथ, का प्रदर्शन करता है और हृदय की श्रद्धा लक्ष्य तक पहुँचाने का एक वाहन है।

तो आइए इस ऋषि निर्वाण पर्व पर ऋषि ब्रह्माम्ब को श्रद्धाजलि अर्पण करने के निमित्त हम अपना आत्म-निरीक्षण करते हुए एक व्रत लें कि अपने अन्तर के अन्धकार को वेद की पावन ज्योति से दूर करके हम अपने जगमगाते हुए जीवन दीप से दूसरों के जीवन दीप जलायेंगे। एक-एक घर में ज्ञान के दीप जलाकर पाण्डव रूपी अन्धकार का समूल नाश करेंगे। प्रमाद रूपी तम को तप रूपी ज्योति में परिवर्तित करेंगे। अभिधा का नाश और विधा की वृद्धि करेंगे। जिस ईश्वरीय ज्ञान को ऋषि (शेष पृष्ठ ६२ पर)



श्री प्रकाशवीरजी शास्त्री कम.पी. ऋषि निर्वाणोत्सव के अध्यक्ष होंगे

नयी दिल्ली २१-१०-६६ आयें
केन्द्रीय समा दिल्ली राज्य के तत्वाधान
में शुक्रवार दि० ११-११-६६ को राम-
कीर्त्ता मंडान नई दिल्ली में प्रातः ८ से
१२ बजे तक महर्षि वयानन्दजी सरस्वती
का ६३ वाँ निर्वाणोत्सव मनाया जा रहा
है।

ध्वजारोहण पूज्य स्वामी ब्रह्मानन्द
जी इच्छी एटा वाले करेंगे। इस अवसर
पर स्वामी आनन्द मिश्र जी महाराज,
आचार्य बंशनाथ जी शास्त्री, प्रोफेसर
उत्समचन्द्र जी शार, प्रो० सत्यमूषण जी
योगी, श्री देशराज जी चौधरी तथा
अन्य नेता व विद्वान स्वामी वयानन्द जी
को धर्माजलि भेंट करेंगे।

इस उत्सव में प्रधान मन्त्री भीमती
इन्दिरा गांधी, रक्षा मन्त्री वार्डे० बी०
चौहान, राजा दिनेशसिंह जी मन्त्री
त्रिवेदी, मन्त्रालय, श्री राजबहादुर जी
सूचना एवं प्रसारण मन्त्री के पधारने
की भी सम्भावना है।।

—रामनाथ सहगल प्रधान-मन्त्री

भूल सुधार

२३ अक्टूबर के अर्धमित्र अंक ४० में पृष्ठ
५ पर पद्य शीर्षक लेख की लेखिका श्री
मानिनी देवी जी मन्त्रिणी एम्बो आ०स०
कांक भूल से छपा है। अब वे इस समय
मन्त्रिणी नहीं हैं। —सपावक

समार क कल्याण के लिये चार अमूल्य पुस्तकें

सम्यार्थ प्रकाश

यह सम्यार्थप्रकाश महर्षि के द्वितीय
संस्करण से प्रकाशित किया है। मोटा
बखार, सफेद कगज़, मोटा कवर, पृ०
स० = १६, मूल्य २५०। दण्ड कापी मगाने
वालोंको २००। डाक खर्च आदि अलग।

अमृत पथ की ओर

लेखक दीनानाथ त्रि०शास्त्री, भूमिका
लेखक गृहमन्त्री श्री०गुलशारीलाल न दा
इस पुस्तक में उपनिषदों के चुने
हुए श्लोकों का अमूल्य संग्रह है। पृ०
५० १६०। मूल्य ११०।

वेद प्रचारक मण्डल, रोहतक रोड, नई दिल्ली-६

वयानन्द प्रकाश

महर्षि वयानन्द का जीवन विधि,
लेखक स्वा० सत्यानन्द सरस्वती। यह
जीवन ४१वीं रोचकता से लिखी गई है।
हि पढ़ने वाले अश्चर्य में आ जाते हैं।
पृ०स० ५६०, सखिन्द, सोलह पिच।
मूल्य २५०। दण्ड कापी मगाने पर ९००।

यजुर्वेद भावार्थ प्रकाश

महर्षि वयानन्द के यजुर्वेद भाष्य के
४० अध्यायों का भावार्थ उन्हीं के शब्दों
में छपा है। पृ०स० ३००। मूल्य केवल
२००। पुस्तकों का सूचीपत्र तथा वेद-
प्रचारक पत्र मुफ्त मगावें।

गुरुकुल वृन्दावन प्रयोगशाला

जिला मथुरा का

“च्यवनप्राश”

परागरस

विशुद्धशास्त्र विधि द्वारा
बनाया हुआ

घोबन दाता, श्वास, कास हृदय तथा

फेफड़ों की शक्तिदाता तथा शरीर को

बलवान बनाता है।

मूल्य ८) १०) १२)

नोट—शास्त्र विधि से निमित्त सब रस, भस्म आसव, अरिष्ट, तैल तैयार
मिलते हैं। एजेण्टों की हर जगह आवश्यकता है, पत्र व्यवहार करें।

—व्यवस्थापक

प्रमेह और समस्त वीर्य-विकारों
की एकमात्र औषधि है। स्वप्नबोध
जैसे भयंकर रोग पर अदना जात्रु का
सा असर दिखाने है। वहा की यह
सूक्ष्मता ववाओं में से एक है।
मूल्य एक तोला ६)

हवन सामग्री

सब ऋतुओं के अनुकूल, रोग नाशक,
सुगन्धित विद्योप रूप से तैयार की
जाती है। आयसमाजों को १२।।
प्रतिशत कमीशन मिलेगा।



आय समाज का क्रान्तिकारी साहित्य

डा० सूर्यदेव शर्मा एम० एम० डी-लिट् की नवीन रचनायें

आर्यसमाज और हिन्दी

स्वामी वयानम्ब से लेकर आर्यसमाज ने अब तक हिन्दी प्रसार, साहित्य, काव्य, पत्रकारिता, पुस्तक प्रणयन आदि क्षेत्र में देश-विदेशों में जो क्रान्तिकारी कार्य किया है उस का गवेषणापूर्ण विस्तृत वर्णन इस पुस्तक में खोजपूर्ण ढंग से किया गया है। मूल्य १) २०

विश्व के महामानव

कृष्ण, बुद्ध, महावीर, वयानम्ब, गांधी, ईसा, टालस्टाय नामक नेहरू जी आदि २९ से अधिक विश्व के महापुरुषों के जीवन तथा उनके शिक्षा-सिद्धान्त मुद्रित भाषा में दिये गये हैं। मूल्य १) २०

आर्य वेद भाष्य स्व. वयानम्ब कृत गद्य तथा आर्यसमाज की समस्त पुस्तकों का प्राप्त स्थान—

आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, श्री नगर रोड अजमेर,

लेखक की अन्य रचनायें

धार्मिक शिक्षा १० भागों में मू० ५५८ स्कूलों में श्रेणीवार पुरुष मूल (यजुर्वेद अध्याय ३१-३२) मू० ३१ पैसे
हैबराबाद सत्याग्रह का रक्तरजित इतिहास २ व० ५० पैसे
युद्धनीति और अहिंसा—मू० १) रुपये ३० पैसे
स्वयं जीवन मू० १) २० २५ पैसे
साहित्य प्रवेश ४ भागों में—कमल मू० ४४ पैसे, ४४ पैसे, १) २०, १) २०

सरल सामान्य ज्ञान ४ भागों में मू० कमल ३७ पैसे, ३७ पैसे, ४४ पैसे ५० पैसे

इतिहास की कहानियाँ—मू० ४० पैसे

हमारे आदर्श मू० १) २५ पैसे

बंदिक राष्ट्र गीत (अधकवेद-पञ्चीसक का हिन्दी, अंग्रेजी तथा मुन्दर कविता में अनुवाद) मू० ५० पैसे

‘आयुर्वेद की सर्वोत्तम, काम के बीसी रोगों की एक अकसीर दवा’

एजेन्ट चाहिये

कर्ण रोग नाशक तैल

रजिस्टर्ड

कान बहना, शब्द होना, कम सुनना, बर्ब होना, साज आना, सांय सांय हौना, मबाव आना, कुलमा, सीटी सी बजना, आदि कान के रोगों में बड़ा पुष्पकारी है। मू० १ शीशी २), एक दर्जन पर ४ शीशी कमीशन में अधिक हैकर एजेन्ट बनाने हैं, कर्णा पंकिग-पोस्टेज छी। एक दर्जन से कम मगाने पर कर्णा पंकिग-पोस्टेज खरीदार के जिम्मे रहेगा। बरेली का प्रसिद्ध रजि० ‘शीतल सुरमा’ से, आँसों का मंला पानी, निगाह तेज करना, बुझने न जाना, अंधेरा व तारे से बौझना, धुंधला व खूजली मचना, पानी बहना, जलन, सुर्खी, रोहों आदि को शीघ्र आराम करता है, एकबार परीक्षा करके देखिये, कीमत १ शीशी २), आज ही हमसे मगाइये। पत्र साफ-साफ लिखें।

‘कर्ण रोग नाशक तैल’ सन्तोमालन माग, नजीबाबाद यू०पी०

भारत सचकार से रजिस्टर्ड

सफेद दाग

की दवा मूल्य ७) विवरण मुफ्त मगार्ने।

दमा श्वास पर अनुभाविक दवा है। मूल्य ७) रुपये

एदिलमा (इसब, खर्जूवा चम्बक की दवा) दवा का मू० ७) डाक ध्यय १।।। पोपियों की मुफ्त सलाह दी जाती है।

वैद्य के. आर. खोरकर

आयुर्वेद-मदन (आर्य)

मू० ५० मगकलपीर, बि. बकोला

[महापाण्ड]

महर्षि दयानन्द के सम्पर्क ने हमारे परिवार

को देश पर मरना सिखाया

देहरादून में अमर हुतात्मा सरदार भगतसिंह के भाई के उद्गार

आर्य वीर वरु को ओर से वीर कान्तिकारियों का अभिनन्दन

आर्य वीर वरु को ओर से आपसमाज परिवार देहरादून में अमर हुतात्मा सरदार भगतसिंह के भाइयों सर्वश्री कुलनार सिंह और रमवीर सिंह तथा स्वतन्त्र्य वीर विनायक दानोदर सावरकर जी के साथी तथा उनके वधों तक निजो सहायक रहने वाले कान्तिहारी श्री बालाराव सावरकर का ११ अक्टूबर को अभिनन्दन किया गया।

सरदार भगतसिंह के भाई श्री कुलनारसिंह ने अपने माघण में कहा कि आधुनिक युग में देश भक्ति तथा चरित्रोत्थान की लहर महर्षि दयानन्द ने ही बताई थी। आपने कहा कि 'स्वामी दयानन्द जब पंजाब के शहर होशियारपुर में पढ़ाये तो इनारे पितामह सरदार अन्नसिंह उनका प्रबचन सुनने कई गोल पंदल चलकर होशियारपुर पहुँचे। उस समय के सिख जाटों में मदिरा पान तथा मांस भक्षण आदि के जो व्यसन आम थे, वे हमारे बाबा जी में भी थे परन्तु महर्षि के मन्वचन ने ऐसा जादू किया कि वे पश्के आयसमाजी बन गये और वे व्यसन सदा के लिए त्याग दिये। फिर हमारे पिता जी और दोनों चचा भी आर्यसमाज के मस्कारों में ही पड़े। जब सरदार भगतसिंह का जन्म हुआ तो पिता जी और दोनों चचा देश भक्ति के अपराध में अंग्रेजों की जेलों में पड़े गये। भगत का जन्म होने पर वे शीघ्र ही जमानतों आदि पर छोड़ दिये गये, इसने इस बालक को 'भाग्य वाला' माना। आपने कहा कि भगतसिंह जी जब नाम बदलकर कानपुर में श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' में सहायक का काम करते थे, तो बहुत अच्छी हिन्दी लिखने लगे थे। पंजाब के एक सिख परिवार में जन्मे पने युवक में इतनी अच्छी हिन्दी लिखने की क्षमता आ जाना केवल आर्यसमाज के कारण ही सम्भव हुआ।

अमर हुतात्मा के छोटे भाई श्री रमवीरसिंह ने कहा कि हमारा परिवार आयसमाज का बहुत श्रेणी है। आप के इस निराशापूर्ण वातावरण में आयसमाज से ही आशा की जाती है कि वह चरित्रोत्थान द्वारा राष्ट्र को सबल बना सकता है।

स्वतन्त्रता के लिए अपना रक्तदान ही पर्याप्त नहीं, शत्रु का रक्त भी बहाना पड़ता है।

श्री बालाराव सावरकर ने कहा अभी कवि महात्माजी ने अपनी कविताओं में कहा कि स्वतन्त्रता के लिए अपना रक्त देना पड़ता है, परन्तु वीर सावरकर कहा करते थे कि स्वतन्त्रता के लिए केवल अपना रक्त बहाना ही पर्याप्त नहीं है, उसके लिए शत्रुओं का रक्त बहाना भी बहुत आवश्यक है। वीर सावरकर जी द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी को दिए गये अनेक शब्दों का आपने उल्लेख किया जो आज हिन्दी में सुप्रचलित हैं। वीर सावरकर भाषा-सुद्धि के बहुत बड़े पक्षपाती थे, भाषा को लिखनी बनाया उन्हें पसन्द नहीं था। स्वतन्त्रता से पूर्व उन्होंने कहा था कि भारत की राष्ट्रभाषा ऐसी संस्कृत-निष्ठ हिन्दी होनी चाहिये जैसी स्वामी दयानन्द जी ने अपने सत्यार्थ प्रकाश में लिखी है।

श्री बालाराव ने पाकिस्तानी क्षेत्रों से अपने जवानों को पीछे हटाने के पग की कटु आलोचना की। आपने कहा कि हम विद्वज जनमत का भय दिखाकर अपनी कायरता को छिपाने का निरर्थक प्रयास करते हैं। अमेरिका यदि आज दक्षिण वियतनाम में बंटा है और रूस जब पूर्वी जर्मनी में बंटा है तो हमें अपने ही देश के अग्यायपूर्वक युधक् किए गये भाग में जाकर डेठने से कौन कित्त मुह से रोक सकता था। आपने सब युधकों को आह्वान किया कि व्यर्थ के आन्दोलनों को छोड़कर सरकार से एक ही माग करें कि उन सब को सैनिक प्रशिक्षण दिया जाये और बड़े से बड़े अस्त्र-शस्त्रों का निमाण अविलम्ब किया जाए। सैनिक दृष्टि से सबल बने बिना हम सम्मानपूर्वक नहीं जी सकते।

दीपावली के शुभ पर्व पर—

फोन-२५९९३

हर प्रकार की सुन्दर तथा आकर्षक छपाई के लिए

अपनी नवीन व्यवस्था के साथ

भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस

५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ



आपकी सेवा में उपस्थित है

—निर्मलचन्द राठी अधिष्ठाता



दीपावली आह्वान करती है

सूखे का युद्ध-स्तर पर मुकाबला करने के लिए

अपने साधनों या सरकारी मदद में

- ★ बड़ा संध्या में कच्चे हुए खाद
- ★ पक्के हुए और नलकूप बनाय
- ★ नदी नालों में पम्प मट लगाय
- ★ नहरों-गुलों नालियों को मनमाना न काट
- ★ मुलम जल—भंडार का सदुपयोग करें जिससे भूमि स मनचाही पैदावार ले सके
- ★ बड़े पैमाने पर साग-सब्जिया उगा सकें
- ★ अधिक पैदावार देनेवाले अन्न की किस्में बो सकें
- ★ साल में एक ही खेत से कई फसलें ले सकें
- ★ छोटे से छोटे जोत की उपज बढ़ा सकें और

खाद्यान्न में आत्म-निर्भरता का लक्ष्य शीघ्र पूरा हो

विज्ञापन सं०-६ सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश द्वारा प्रसारित



स्वयंसाधिकांशकी आर्थ प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश के लिए भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस, ५ मीराबाई मार्ग लखनऊ

में श्री बाबुराम मारली द्वारा मुद्रित प्रकाशित ।

आर्यामन

ॐ

नानादिः सम्पिद्यते

स्वामी ध्रुवानन्द अङ्क

स्वामी जी की पाँच बातें

आर्यसमाज की उन्नति और प्रगति को लक्ष्य में रखकर मैंने पांच बातों को सोचा है, जिनकी ओर मैं प्रत्येक आर्य का ध्यान आकृष्ट करता हूँ। यदि आप माई-बहन इन बातों की क्रिया में लव्येंगे तो उनकी वैयक्तिक और सामाजिक उन्नति होने में पूरी सहायता मिलेगी, ऐसी मेरी धारणा है।

१—प्रत्येक आर्य सबस्य और सबस्या, रात्रि की सोते समय, कम से कम, एक मिनट यह सोचे कि आज मैंने मन, वचन या शरीर से कोई ऐसा काय तो नहीं किया जिससे आर्यसमाज का यश दूषित हुआ हो।

२—प्रत्येक आर्य सबस्य सपरिवार आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्सभ में सम्मिलित हो।

३—प्रत्येक आर्य सबस्य, सन्नव हो तो दोनों समय, अग्यचा एक समय तो अवश्य ही, सपरिवार सम्मिलित उपासना करे।

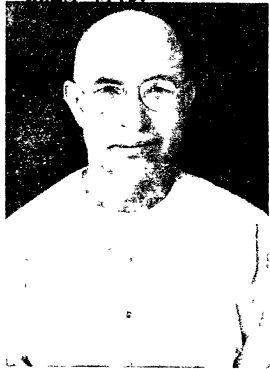
४—प्रत्येक आर्य सबस्य, अपनी आयका डाताश स्वयमेव आर्यसमाज में जाकर अवश्य दे।

५—आर्यसमाज के मंत्री और प्रधान का कर्तव्य है कि वे यह देखें कि उनके साप्ताहिक सत्सभों में कौन सबस्य बयो उपस्थित नहीं हुआ। सम्मिलित न होने का कारण जानकर उसे निवारण करने की चेष्टा करनी चाहिये।

ध्रुवानन्द सरस्वती

इस अङ्क का मूल्य ५० नये पैसे

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती
कलकत्ता



जन्म सन् १८८२

देहावसान २९ जून १९६५

जिन स्वामी जी ने पावन गुण गण धारे,
प्रभु की इच्छा है, वे अब स्वर्ग सिधारे।

उनके अनुयायी बनें, ईश वह बल दो,
जीवन कर्मण्य, पवित्र, निपट निर्मल हो।

भौतिक शरीर तो नष्ट हुआ करता है,
पर, अमर आत्मा कभी नहीं मरता है।

ऐसे सन्तों का सुपना सदा छाएगा,
जो भक्त जनों को सत्यय बिल्लाएगा।

—डा० हरिदास शर्मा सी० लि०

आर्य नेताओं की श्रद्धाञ्जलियां

★

अद्वैत स्वामी ध्रुवानन्द महाराज सवा के लिए इन स्थूल नेत्रों से ओझल हो गए। आर्यसमाज के सगठन की सर्वापार समझने वाले, देश विदेश में महत्त्व बयान करने वाले पंडिताने वाले, सारा ही जीवन आर्यसमाज के हित में लगा देने वाले स्वामीध्रुवानन्द जी हा शोक ! चले गये ! हृदय रोग के साथ पर्याप्त युद्ध उन्होंने किया। रोग-पीडित होते हुए मांग दौड़ करते रहे ताकि आर्य समाज का गौरव बना रहे, बढ़ता रहे और अब सारा बोझ आर्य मात्र पर छोड़ बिरकाल के लिए विश्राम करने चले गये।

—आनन्दस्वामी सरस्वती

—स्वामी जी के निधन के समाचार से भारी चोट लगी।

—अनन्तस्वामी सरस्वती

—स्वामी कर्मठ कर्मयोगी थे। उनका जीवन आर्य समाज की सेवा करते हुए ही समाप्त हुआ। उनके जीवन में कोई भी धम्बा न था।

स्वामी बहानन्द षष्ठी आर्य गुरुकुल, एटा

—पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी के निधन से महान दुख हुआ। उनके निधन से आर्यजगत और राष्ट्र की गहरी क्षति हुई है। हम सबका कर्नश्य है कि उनके पद-चिन्हों पर चलते हुए उनके कार्यों की पूर्ति करें।

—पुण्यचन्द्र एडवोकेट मूलपूर्व प्रधान सा०वे० समा
साईधान आगरा

—स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज का सहसा एव असामयिक निधन आर्यजगत् के लिए वखाघात से अधिक भयकर है।

कुछ समय में नहीं आ रहा कि देश के भाग्य में क्या है। जब पंच-प्रवशन की अनिबाध आबधयकता है तब एक एक करके धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक तथा राजनैतिक स्तम्भ टूटते चले जा रहे हैं। मुझे तो भविष्य अन्धकार भय प्रतीत होता है क्योंकि जो हृदय-बिचारक अभाव होता जा रहा है उसकी पूर्ति वृष्टिगोचर नहीं होती परमेश्वर ! पाहिमाम् !

(राबा) रणजयसिंह एम०पी०, अमेठी

—स्वामी जी के देहावसान का दुःख समाचार मुन कर आवाक् रह गया। स्वामी जी की मृत्यु आर्यसमाज

पर ऐसा वखाघात है कि उसके प्रभाव को आर्यसमाज सहन कर सकेगा इसमें मुझे सन्देह है।

पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने अपना सर्वस्व आर्यसमाज के चरणों में अर्पित कर दिया था। वृद्धावस्था में भी वह अपने रोगस्थ की चिन्ता न कर आर्यसमाज की ज्योति की रक्षा व प्रसार के लिए ही रात-दिन मागते रहे थे। —धोमप्रकाश त्यागी, टरोरो (पूर्व अफ्रीका)

—एक अत्यन्त दुःख समाचार कानो में पड़ा कि आर्यसमाज के महान नेता और बीतराग सत्यासी स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज इस सप्तार से उठ गये हैं। स्वा० ध्रुवानन्द जी अपने को आर्यसमाज के अर्पण कर चुके थे। उनकी गणना हम अपने उन नेताओं में कर सकते हैं जिन्होंने होश समाजते ही आर्यसमाज का आबल पकड़ा और फिर जीवन के अन्तिम सांस तक उसे नहीं छोड़ा। केवल आबल ही नहीं पकड़ा बल्कि उसकी सेवा में अपने जीवन का एक-एक पल लगा दिया। सोते-जागते, उठते बंठते उन्हें सिवा आर्यसमाज के किसी दूसरी बात की चिन्ता न थी।

स्वामी जी को मृत्यु से आर्यसमाज में एक ऐसा स्थान रिक्त हुआ है जो सुगमता में न भरेगा।

बन्तुत आयसमाज अब एक ऐसे युग में प्रविष्ट हो चुका है जहा वह उत्तरोत्तर कमजोर ही होता जा रहा है। उसके पुराने महारयी उसे छोड़ते जा रहे हैं, उनका स्थान लेने वाले नये पंदा नहीं हो रहे। आज जब आर्य समाज की नाव मसधार में है और जबकि किसी ऐसे नेता की जरूरत है जो उसे उसमें से निकाल सके स्वामी ध्रुवानन्द का वियोग आयसमाज के लिए एक ऐसी हानि है जिसकी पूर्ति न हो सकेगी।

वीरेश्र एम० ए० (बीर प्रताप जालधर)

—आर्यसमाज का महान् सेनानी हम सबको छोड़कर परमधाम को प्राप्त हो गया। उनकी जीवन यात्रा आ० स० के एक सन्धे इतिहास में एक बड़े अध्याय के रूप में याद रहेगी। उनके निधन से भारी सूनापन, नेतृत्व, व सबको एक कड़ी में आबद्ध करने की क्षमता का अभाव प्रतीत होने लगा।

—बीरसेन वेदधमी इन्वीर

ओ३म्

साप्ताहिक आर्यामित्र

श्री श्री ध्रुवानन्द-अङ्क

अवैतनिक सम्पादक उमेशचन्द्र स्नातक एम० ए०

मूल्य ५० पैसे

वर्ष
६८

सप्तमक रविवार पौष १९ शक १८८७, माघ कृ० ३ वि० २०२२
२, ९ जनवरी सन् १९६६ ई०, श्यामन्यात्र १४१, सृष्टि सवत १,९७,२९,४९,०६६

अङ्क
१-२

ओ३म् और गायत्री मन्त्र

[व्याख्या]

(यह व्याख्या श्री स्वामी जी ने अपने विद्यार्थी काल में की थी। यह उनकी हस्तलिपि से छापी जाती है।—संपादक)

ओ३म्

ओ३म् अकार, उकार, मकार इन तीन अक्षरों से बनता है ॥१॥ अकार का अर्थ (विराट्^१ अग्नि^२ विश्वादिनी^३) विराट से हुए एक घर अक्षर सप्ताह को प्रकाशित करता है उसको विराट् कहते हैं (अग्नि) वेदों से जो प्राप्त हो उसको अग्नि कहते (विषय) स्थित हैं आकाश पृथिवी मनुष्य जिसमें वह विश्व, ये तीनों परमेश्वर के नाम हैं। उकार से (हिरण्य गर्भ [वायु] तैजसादीनि) सूर्यादि तेज हैं अन्दर जिसके वह हिरण्यगर्भ ईश्वर है (वायु) जो अत्यन्त बल से सप्ताह को धारण करता है वह वायु ईश्वर का नाम है (तैजस) सूर्य को प्रकाश देने स्वयं प्रकाश वाला होने से तैजस नाम ईश्वर का है (मकार से) (ईश्वर आदित्य प्राज्ञादीनि) ईश्वर सर्वशक्तिमान् न्यायकारि है (आदित्य) कभी नाश न होने से ईश्वर आदित्य है प्राज्ञादीनि (प्राज्ञादीनि) अच्छी तरह सप्ताह को जानता है इसलिये परमेश्वर का प्राज्ञ है ॥१॥ यह ओ३म् का अर्थ है अब गायत्री मन्त्र आगे लिखा जायगा—

ओ३म् स्रभुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यममर्षो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

शु अ० ३६ म० ३ ॥

यह गायत्री मन्त्र है (स्र) जो सब जगत् के जीने का हेतु और प्राणों से प्रिय है (भुव) जो मुक्ति की इच्छा करने वालों को मुक्ति और अपने सेवकों को बुद्धि से पृथक् करके सर्वदा सुख में रखता है (स्व) सब जगत् में व्यापक सबको नियंत्रण में रखता सबके ठहरने का स्थान तथा मुख स्वरूप है (तत् सवितु) सब जगत् का पैदा करने वाला (वरेण्य) सबको ब्रह्मण करने योग्य (मर्ष) पापों के नाश करने वाला (देवस्य) देवयामी परमात्मा का (धीमही) हृद्य व्याप करते हैं (यो) जो (न) हमारी (विषय) बुद्धियों को (प्रचोदयात्) धर्म के कामों में लगाइये पाप से हटाकर अष्ट कामों में लगाइये। गायत्री का अर्थ हो गया। इतिवाम् ह० पुनरेत्र विद्यार्थी ॥१॥



सम्पादकीय—

आर्यसमाज की अनुपम विभूति

स्व० स्वामी भ्रुवानन्दजी महाराज

पुण्य स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज आर्यसमाज के उज्ज्वलतम रत्न थे उनका जीवन वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिये आदर्श ज्योतिस्तम्भ बना रहेगा।

यह एक विचित्र सयोग की ही बात है कि जिस पावन व्रज भूमि ने योगिराज श्री कृष्ण को जन्म महर्षि वयानन्द को बोधा और राजा वि महेन्द्रप्रताप को देशमक्ति से आत्मावित किया उसी पवित्र भूमि ने स्वामी जी ने जन्म और शिक्षा प्राप्त की साधारणतया व्यक्ति गुण की खोज करते हैं पर वास्तव में आपकी खोज श्री स्वामी सर्वज्ञानन्द जी महाराज ने की और इस अनुपम रत्न को आर्यसमाज को भेंट कर दिया।

श्री स्वामी सर्वज्ञानन्द जी महाराज महर्षि वयानन्द के आदर्श अनुयायी और आर्यसमाज के कर्मठ प्रचारक थे वे बीतराग तो थे ही सत्या और सगठनवाद से भी अस्मृक्त थे। वे कर्म में और कर्तव्य पालन में विश्वास रखते थे। उन्होंने स्वामी भ्रुवानन्द जैसे आदर्श शिष्य का निर्माण उसी साधना और तपस्या से किया था जैसे आचार्य प्रवर विरजानन्द जी महाराज ने महर्षि दयानन्द का मयूरा की पाठशाला में किया था। स्वामी सर्वज्ञानन्द और स्वामी भ्रुवानन्द की साधना - स्थली भी मयूरा ही बनी यह एक आकस्मिक सयोग तो हुआ ही दोनों गुण शिष्यों के लिए गौरव का विषय भी।

पुनः शास्त्री से राजगुरु और स्वामी भ्रुवानन्द तक स्वामी जी का जीवन आर्यसमाजमय ही रहा, स्वामी जी के लिए अन्य सब कार्य आर्यसमाज की अपेक्षा गौण थे क्योंकि वे मानते थे कि आर्यसमाज की रक्षा और उन्नति से ही अन्य सब कार्य सिद्ध हो सकते हैं।

स्वामी भ्रुवानन्द जी ने अपने प्रारम्भिक सामाजिक जीवन से ही राजवर्ग एवं श्रेष्ठवर्ग को प्रभावित कर लिया था। कालाकांकर और शाहपुरा में आपने राज परिवारों को आर्यसमाज के निकट लाने में सफलता प्राप्त की। दोनों राजपरिवार आज भी आर्यसमाजी हैं और आर्यसमाज के लिए सक्रिय हैं।

बिहार में आर्यप्रतिनिधि समा गुडकुल वैद्यनाथ धाम

आफि का सगठन और विस्तार आपकी उल्लेखनीय सेवा है।

उत्तरप्रदेश तो आपका अपना घर ही था। जा० प्र० समा उत्तरप्रदेश के निर्माण विकास और प्रतिष्ठा का आपकी जितना ध्यान था उतना अन्य किसी को नहीं। हैबराबाद सत्याग्रह के सेनानायक रूप में आपने उ० प्र० के सम्मान को बढ़ाया आपको प्रतिनिधि समा ने आप की अनुपस्थिति में प्रधान निर्वाचित कर गौरवान्वित किया। सांवेदेशिक समा के भी आप अनेक बार प्रधान निर्वाचित हुए और नारीशय, अफ्रीका मलाया थाईलैंड की विदेश प्रचार यात्राओं द्वारा आपने आर्यसमाज का सन्देश विद्वे के विविगन्त में प्रसारित किया।

आपको हर पमय एक ही धुन रहती थी कि आर्य समाज की उन्नति हो वे जब आर्यजनों में उवासीनता या ध्यनि क्रम अनुभव करते तो आत्म निरीक्षण करते तथा अर्थों को भी प्रेरणा करते। आर्यसमाज की उन्नति के लिये आप सर्वत्र प्रेरणा करते रहे। उनके सूत्रों का पालन कर हम आर्यसमाज को आगे बढा सकते हैं।

आर्यसमाज के सगठन को सुदृढ बनाने के लिए स्वा० जी ने जो भी ठीक समझा मंदा किया। उनकी सदाशयना को दृष्टि में रखते हुए हमें ऐसा दृढ प्रयत्न करना चाहिये कि स्वामी जी की भावना फलवनी हो।

सगठन को सुदृढ बनाने में उनकी नीति से कोई सहमत हो या न हो उनके उद्देश्य का हम सब आदर करने हैं और स्वामी जी के प्रति हमारी यही सच्ची श्रद्धाजलि होगी कि हम अपने अनथक प्रयत्न से आर्यसमाज को सुदृढ और सुस्थिर बनायें।

आर्यमित्र और स्वामी जी का इतना अधिक भविष्य सम्बन्ध रहा कि दोनों कभी पृथक् नहीं किये जा सके। स्वामी जी कही भी रहे हों आर्यमित्र की उन्नति विन्ना सदैव करते रहे, आर्यमित्र के जीवन में जब-जब भी सकट आया स्वामी जी ने सहारा दिया और दौड़ूप की। पिछले दिनों मित्र की सुस्थिरता ने वे बहुत प्रमत्त थे और उनका आशीर्वाद मित्र को प्राप्त था, हम मित्र परिवार की ओर से स्वामी जी के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करते हैं। हम सदैव प्रयत्न करेंगे कि स्वामी जी की भावनाओं के अनु-रूप मित्र कार्य करे और आर्यसमाज का कार्य आगे बढ़े।



स्व० श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज

[धी—डा० हरिशङ्कर जी शर्मा, डी० लिट०]

सद्वर्त्म धाम श्री ध्रुवानन्द सन्यासी,
जिनकी सुकीर्ति फैली है, पुण्य प्रभा-सी ।
ये बीतराग, तप-त्याग वृत्ति-बल धारी,
'मानवता' की मुहु मुक्ति लोक-उपकारी ।
ऋषि दयानन्द-निदिष्ट मार्ग अपनाया,
वैदिकता का अनुपम आदर्श बिलाया ।
निर्भय, निरीह, उज्वल उदात्त जीवन था,
जन सेवा सत् कर्तव्य धर्म-धी धन था ।
या घर विशाल शक्ति-व तेजधारी ये,
सबके सुधि सुभ बितक थे, हितकारी ये ।
सर्वदानन्द स्वामी ने जब अपनाया,
तो पाल पोस कर पण्डित इन्हे बनाया ।
कर्त्तव्य कर्म का सुम समार्ग सुझाया,
ऋषि दयानन्द का गुण-गौरव समझाया ।
आज्ञान ब्रह्मचारी रह आधु बितायो,
पण्डित धुरेन्द्र शास्त्री बन कीर्ति कमायी ।
जब ब्रह्मचर्य आधम से हुई उदायी,
तो बने विज्ञ घर 'ध्रुवानन्द सन्यासी' ।
कत्याणी बाणी अमृत बरसती थी,
दिग्भ्रात जनों को सत् पथ बिललाती थी ।
जनता को धर्म कर्म का मर्म बताया,
ऋषि दयानन्द का सुम सन्देश सुनाया ।
ये धर्म हेतु सोस्ताह सबैव विचरते,
मन, वचन, कर्म से सब की सेवा करते ।
जब-जब समाज पर सकट-घन घहराये,
जब जब विरोधियों ने विष-बाण चलाये,
तब-तब नृसिंह, निर्भय बन आगे आये,
सज प्राण मोह कर्त्तव्य मार्ग पर धाए ।
बहु भरत-मिलाप-दुःख कंसा सुखर था,
जब बुद्धि आन्वोलन-प्रसाध घर-घर था ।

तब रने रात-दिन बिछुड़े बन्धु मनाए,
कर पूर्ण यत्न भूले-भटके अपनाए ।
जब राज्य हैदराबाद बना भग्यायी,
निष्पक्ष भाव मिट गया, क्रूरता छायी ।
बहु सत्यक लोग न धर्म कर्म कर पाते,
करते तो दण्डित होते, कष्ट उठाते ।
नागरिक चेतना नष्ट हुई जाती थी,
विषयुक्त विषमता विषद-वञ्ज जाती थी ।
तब आर्यसमाज धीर बन आगे आया,
'सत्याग्रह' द्वारा अत्याचार मिटाया ।
मिल गयी सफलता सकट के दिन कीते,
हो गये आर्यधीरो के मन के झोते ।
जब आर्यजगत ने सत्य हेतु हठ ठानी,
तब श्री ध्रुरेन्द्र शास्त्री भी थे सेनाणी ।
सत्याग्रह किया, जेल-जीवन अपनाया,
बन्धो बन वैदिक तप-महूएक बिलाया ।
जब सिन्धु प्रान्त को क्षुद्र भाव नाया था,
'सत्याग्रह' प्र'श' मयकर ठहराया था ।
तब वे चूनौतियाँ सिंह समान बहाड़े,
बेरी-बिरोधियों के दल-बर्ष पछाड़े ।
भारत के सुम स्वातन्त्र्य समर में आए,
तब सत्य-अहिंसा सत् साधन अपनाए ।
बासता नष्ट हो वे उपाय बतलाए,
कारागारो ने कुछ बर्ष बिलाए,
अति उच्च आर्य नेता थे, सत् साधक थे,
ऋषि दयानन्द के अधिचल आराधक थे ।
जिसका जीवन औरो के लिए रहा था,
जिसने जन-सेवा में अति कष्ट सहा था,
जो सब सत्य-सम्पन्न निपट निश्चल था,
उस सन्यासी का जीवन-जन्म सफल था ।



पहले प्रादेशिक प्रतिनिधि को अपनाया,
फिर आर्य्य सांवेदिक प्रधान-पद पाया ।
सब कार्य्य व्यवस्था दृढ़ता से करते थे,
निष्पक्ष न्याय-पद्धति नित अनुसरते थे ।

कुछ वर्ष विदेशों में भी धम्म प्रचारा,
वैदिक शिक्षा का मध्य माव विस्तारा,
बन गये प्रवासी भारतीय अनुयायी,
सर्वत्र सुयस की धबल श्रज्जा फहरायी ।

प्रिय भारतीय भाषों को अपनाया था,
नित आर्य्य संस्कृति का गौरव गाथा था ।
बाल्यावस्था में पुर-परिवार बिसारा,
बन विभुष विषव धनुस्त्व विमल बिसारा ।

ये सन्त सर्वबानन्द परम उपकारी,
उनके थे शिष्य पुरेन्द्र आज्ञाकारी ।
दे सानुआश्रम के सत संचालक थे,
सब मद्र मावनाजों के परिपालक थे ।

निज गुहवर का आदर्श सदा अपनाया,
कर्त्तव्य मार्ग से कभी न पैर हटाया ।
शुचिता के ही साधक थे, उन्नायक थे,
वे आर्य्य जाति के नेता या नायक थे ।

राजाजों, राजकुमारों के गुरु ज्ञानी,
श्री प्रधानन्व थे वर विद्या-दानी ।
इन परिवारों में पूर्ण प्रतिष्ठा पाई,
वैदिक विधान की उज्वल ज्योति जगाई ।

जिन स्वामी जी ने पावन गुण गण धारे,
प्रभु की इच्छा है, वे अब स्वर्ग सिंधारे ।
उनके अनुयायी बनें, ईश वह बल बो,
जीवन कम्मध्य, पवित्र, निपट निर्मल हो ।

भौतिक शरीर तो नष्ट हुआ करता है,
पर, अमर आत्मा कभी नहीं मरता है ।
ऐसे सन्तों का सुयस सदा छापवा,
जो मरत जनों को सत्य दिखलाएगा ।



श्रज्जाजलि

श्री स्वामी प्रधानन्व जी आर्य्य-जगत् के एक अन-
मोल रत्न थे, जिनके अकस्मात् स्वर्गवास से आर्य्यसमाज
को एक गहरा धक्का लगा है तथा उसकी प्रगति में भी
प्रबल क्षति हुयी है । ऐसी महान् विभूति को खोकर हम
अत्यन्त दुःखी हैं ।

बीतराग स्वामी प्रधानन्व जो बाल्यकाल से ही,
तपस्वी स्वामी सर्वदानन्व जी के सहवास में रहे और वेद-
वेदांगो का अध्ययन करके आर्य्य-जगत् के समक्ष राजगुरु
पुरेन्द्र शास्त्री के रूप में प्रतिष्ठित हुए । समस्त जीवन
को ब्रह्मचर्य पालन करके, वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार
में समर्पित किया और भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में भी
सम्मिलित होकर बेल यात्रायें की । १९३८-३९ में हैदरा-
बाद सत्याग्रह में सर्वाधिकारी की हैसियत से सत्याग्रह कर
जेलयात्रा की । देश-वैशान्तर का पर्यटन करके आर्य्य-संसार
के समक्ष ज्योतिस्तम्भ के तुल्य वे सदैव उपस्थित रहेंगे
तथा उनका जीवन हमें तपोमय आदर्शों के लिए अनुप्राणित
करता रहेगा ।

मदनमोहन धर्म

प्रधान आर्य्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर-प्रदेश

कर्मठ संन्यासी

श्री स्वामी प्रधानन्व जी आर्य्यसमाज के सुविख्यात
नेता और मार्ग दर्शक थे । वह आजीवन ब्रह्मचारी रहे ।
उन्होंने अपने पवित्र और आदर्श जीवन के द्वारा हजारों
व्यक्तियों को सन्मार्ग दिखाया । उन्होंने आर्य्यसमाज की
अन्त समय तक सेवा की । वे कर्मठ संन्यासी थे । वह
सदैव बातचीत में आर्य्यसमाज की उन्नति की ही बात
करते थे । उन्होंने आर्य्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की
बहुत उन्नति की । सभा की आर्थिक दशा सुधारने में उन
का योग सहायनीय रहा । वह आर्य्यसमाज के उज्ज्वल
यत्न थे । उन पर आर्य्यसमाज को गर्व था ।

—चन्द्रदत्त मन्त्री, आर्य्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश



ऋषि-भक्त स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

[ले — श्री आनन्द स्वामी जी सरस्वती महाराज]

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती के साथ चिरकाल से मेरा सम्बन्ध रहा है। जब वे राजगुरु पंडित बुरेन्द्र शास्त्री थे तब मैं लाहौर में आर्य प्रादेशिक प्रति-बिधि समा पत्राब, सिध, बिलोचिस्तान का पहले मंत्री, पुन प्रधान था। मैंने राजगुरु जी से प्रायता को कि आप कृपया इन तीन प्रान्तों का भी भ्रमण कीजिए जिसे राज-गुरु जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया और इन प्रान्तों के बड़े बड़े विशेष नगरों में राजगुरु जी के भाषणों का प्रबन्ध किया गया। उनकी मेधाय खुशहालचन्द जी के सुपुत्र युद्धवीर जी को उनके साथ कर दिया गया। जहाँ कहीं राजगुरु पहुंचे उनका भय भ्रमण हुआ और जनता ने उनके भाषणों से पर्याप्त लाभ उठाया और भूरि-भूरि प्रशंसा की। वे जहाँ कहीं पधारते वहाँ के आर्य नर-नारियों को सच्चा आर्य बनने का उपदेश देते।

(२) जब हैदराबाद का आर्य सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ और राजगुरु जी चीथे सब अधिकारों के रूप में अपना प्रबल बल लेकर गुलबर्गा जेल में पहुंचे, मैं तीसरे अधि-कारी के रूप में गुलबर्गा जेल का वासी बन चुका हुआ था। सारे जेल में राजगुरु जी को सिर पर उठा लिया और इन के स्वागत में जेल ही के अन्दर एक भय सम्मेलन हुआ जिसमें राजगुरु जी ने नाथन बेंते हुए यह कहा कि आर्य सत्याग्रही अपनी मांगें पूरी होने पर ही जेल से बाहर निकलेंगे और यदि मांगें पूरी न हुईं तो हमारी काशों से यह जेल हमेशा भूमि बन जाएगा। सहर्ष सत्याग्रहियों ने उसी समय कहा कि "हम घरो से सिर पर कफन बांध कर आए हैं" और अन्त में आर्यसमाज के सत्याग्रही विजय पताका लहराते जेलों से बाहर आए।

(३) एक बार राजगुरु जी मुझे कहने लगे कि मुझे भी गणेशी ले चलिए जिसे मैंने सहर्ष स्वीकार किया। तब गणेशी आने के लिए उत्तरकाशी से ५६ मील पैदल चलना होता था। जिस प्रसन्नता, उत्साह और जोश से राजगुरु जी ने यह यात्रा की उसे बेलकर मैंने राजगुरु जी से कहा कि आप तो पर्वतों के ऊपर इस प्रकार चढ़ते हैं

जैसे तीस बरस के युवक भी चढ़ न पाए। गणेशी के मार्ग में भारत का अन्तिम ग्राम "धराली" है। इस ग्राम से लगभग एक मील ऊपर वह गुफा है जहाँ महर्षि स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने तीन महीने की समाधी लगाई थी। जब मैं राजगुरु जी को इस गुफा में ले गया और वहाँ हम दोनों मौन साधकर बैठ गए तो राजगुरु जी के नेत्रों को मैंने जलपूज देखा। मैंने पूछा, क्या विचार आ गया? वे कहने लगे कि "महर्षि ने हमारे कल्याण के लिए कितना धोर तप तपा है। इस जगल में कितने ही भूरे रीछ आ जा रहे हैं और महर्षि ऐसे स्थान पर बिना किसी सहारे के घोर तपस्या करते रहे; निकट ही एक छोटी सी नदी निमल जल से पूर्ण बह रही थी। राज-गुरु जी कहने लगे—यहाँ तो महर्षि स्नान करते होंगे। इन्हीं बड़े-बड़े पत्थरों पर बैठकर प्रभु भजन करते होंगे।' यह कहते-कहते राजगुरु जी के नेत्रों से टप-टप अश्रु गिरने लगे। और कितने ही समय तक वे हठी अवस्था में एक शिला पर बैठे रहे और जब हम गणेशी जा पहुंचे तो वहाँ के तपस्वी महात्माओं से मिलकर राजगुरु जी ने सबको यही प्रेरणा दी कि वे भी महर्षि वय,तन्व के समान दुखी दुनिया को सुख का मय दिखाने के लिए नीचे चले। परन्तु राजगुरु जी को क्रिपी ने भी आश्वासन न दिलाया और राजगुरु जी मुझे कहने लगे कि इन तपस्वियों की ओक्षा महर्षि कितने बिलक्षण थे जिन्होंने अपने मौल पर भी लात मारकर मानव के कल्याण के लिए अपने प्राण तक त्याग दिए। क्या हम भी कभी इस ऋण का कोई अंश उतार पाएँगे और जब साधु-आश्रम पुल काली नदी में मेरे गुरु श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती से राजगुरु जी ने दीक्षा ली तब कहने लगे कि आज कुछ मानसिक शांति प्रतीत हो रही है।

राजगुरु होने के रूप में और स्वामी ध्रुवानन्द जी के रूप में उन्होंने सारा ही जीवन वैदिक-विचार के प्रसार और आर्यसमाज के सज्जन के किए लक्ष्य किए रखा।



श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी—

आर्यसमाज की एक महान् विभूति

(ले०—श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक)

१९५७ का अप्रैल मास था। स्वर्गीय श्री महात्मा नारायणस्वामी जी महाराज रोग के निदान के लिये स्व० श्री० म० कृष्ण जी द्वारा लाहौर के मेडीकल कालेज अस्पताल में दाखिल किये गये थे। सार्वदेशिक सभा की अन्तरग बैठक बलिदान भवन में हो रही थी उसमें श्री स्वामी जी के स्वास्थ्य पर चिन्ता प्रकट करते हुए शीघ्र आरोग्य लाभ की प्रार्थना की गई और उनकी परिचर्या एवं देखभाल के लिये किसी विश्वस्त सदस्य को लाहौर भेजने का निश्चय हुआ। श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री जी (स्वर्गीय श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सस्वती) ने इस कार्य के लिए अपने को प्रस्तुत किया। अन्तरग सभा निश्चिन्त हो गई और राजगुरु जी उसी दिन रात्रि की ट्रेन से लाहौर खाना ही गये और वहाँ पहुँच कर स्वामी जी महाराज की परिचर्या का कार्य अपने हाथ में ले लिया। यह थी उनकी गुरु जनो के प्रति स्नेह, श्रद्धा और सेवा की भावना।

जब राजगुरु जी सार्वदेशिक सभा के प्रथम बार प्रधान निर्वाचन हुए तब सभा कोषाध्यक्ष श्री स्व० ला० नारायण दत्त जी रोग शैया पर पड़े थे। राजगुरु जी अकेले उनमें मिलने के लिए उनकी बाराबन्भा रोड, स्थित कोठी पर गये। लाला जी उन्हें अपने विरोधी कैम्प का एक प्रमुख सदस्य नमस्ते थे। इधर-उधर की बात-चीत के बाद लाला जी ने कहा कि "पत्र द्वारा ही मेरे स्वास्थ्य का समाचार जान लेते। यहाँ आने का कष्ट क्यों किया?" राजगुरु जी ने कहा कि "लाला जी! आपका आशीर्वाद लेने आया हूँ। आशीर्वाद दीजिए जिससे इस गुरुत्तर भार को सफलता पूर्वक सभालने में समर्थ होऊँ।" लाला जी की आशु से आसू आ गये। राजगुरु जी की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा "मेरा हृदय आपके साथ है।" सार्वदेशिक सभा की नौका के कुशल मासी

बनो यही मेरी कामना है।" हा! एक बात का ध्यान रखना। सभा की जो उन्नत आर्थिक स्थिति बनाई गई है उसे कायम रखना। यह छिन्न-भिन्न न होने पाय। राजगुरु जी ने इस उद्बोधन को पल्ले में बाधा और न केवल सभा के व्यय की पूर्ति ही की अपितु कई हजार रुपये से सभा की महानिधि भी बना दी। आर्यसमाज और सार्वदेशिक सभा की हित-भावना उनमें इतनी प्रबल एवं उग्र थी कि वे अपने विरोधियों से मिलने-जुलने और उनका सहयोग प्राप्त करने के लिए सदा उद्यत रहते थे और इसमें मानापमान नहीं समझते थे।

१९५५ में सभा का वार्षिक अधिवेशन बलिदान भवन में हो रहा था। १९५४ में श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री सन्यास ग्रहण करके स्वामी ध्रुवानन्द बन गये थे। सदस्य महानुभाव आने शुरू हो गये। उस वर्ष उन्होंने प्रधान न बनने का निश्चय किया हुआ था। उनके एक परम स्नेही ने प्रधान पद स्वीकार करने का अनुरोध किया। उनके अनुरोध और युक्तियों को धैर्य पूर्वक सुनने के बाद दृढ़ स्वर में बोले "इस बार प्रधान न बनने का मैंने दृढ़ निश्चय किया है। मैं इस बार प्रधान बनना मोक्ष के समान पाप समझूँगा।" यह सुनकर वे स्नेही चुप हो गये। उन्होंने चुप देखकर कहा कि "मैं विदेश जा रहा हूँ। वहाँ मेरे से जो कार्य हो जायगा वह प्रधान पद पर रहते हुए सम्भव न होगा।

मैं जिन हाथों में सभा को सौंप रहा हूँ वे बड़े दृढ़ हैं और आर्य जगत् में मैं जिन दो व्यक्तियों की सम्मति का सदैव आदर करता रहूँ उनमें से वे एक हैं।" वे थे स्वर्गीय श्री पंडित इन्द्र विद्यावाचस्पति जी। यह थी विदेश प्रचार की उनकी उग्र भावना जो जीवन के अन्त तक उग्र बनी रही।

१९६१ के अप्रैल मास में मारीशस, पूर्वी अफ्रीका,

भेडागास्कर, रोडेशिया आदि में निरन्तर साढ़े पांच वर्ष के लगभग प्रचार करने के बाद वे भारत लौटे। मीरीशस में उनका लगभग चार वर्षों का प्रवासकाल व्यतीत हुआ। उन्होंने वहा की दो सभाओं को एक करके आर्यसमाज की छिन्न-भिन्न हुई शक्ति का एकीकरण करके बड़े महत्व का कार्य किया। इनका ही नहीं उन्होंने अपने पीछे कार्य-के सचालन तथा मुख्यवस्था के लिए श्री स्वर्गीय स्वामी अभेदानन्द जी महाराज को अनुरोध पूर्वक मीरीशस बुला लिया और उन्हें कार्य सभलवा देने के बाद ही वहा से भारत के लिए प्रस्थान किया। भारत लौट आने पर श्री महाराम आनन्द स्वामी जी महाराज को विशेष प्रार्थना कर वहा भेजा। स्वयं भी वहा तथा दक्षिण अमेरिका, फिजी, इत्यादि जाने वाले थे। सब तैयारियां हो चुकी थीं, परन्तु इसी बीच मे वे हम से सदैव के लिए जुदा हो गए।

१९६४ के फरवरी, मार्च में उन्होंने वार्डलैण्ड, सिगापुर, आदि की दो मास की प्रचार यात्रा की। स्वास्थ्य के ठीक न होते हुए भी यह यात्रा की गई थी। इससे पिछले वर्ष वे ब्रह्म देश में प्रचार कर आये थे। सिगापुर आदि के न केवल आर्य सस्थाओं में ही अतिबु बोद्ध, एव अन्य धार्मिक सस्थानों में भी उनके व्याख्यान हुए। वहा के बड़े बड़े आर्य जनो एव अन्य मतावलम्बियो ने मुक्तकंठ से यह स्वीकार किया कि उन्होंने जो छाप उन पर डाली वह पूर्ववर्ती कोई आर्य धर्मोपदेष्टा न डाल सका।

हैदराबाद के धर्म-युद्ध और सिन्ध के सत्याग्रह में आर्यजन भीषण परीक्षण में से गुजरे थे। उनकी सफलता के लिए प्रायः प्रत्येक आर्य ने अपना योग दिया था। किसी ने धन के द्वारा किसी ने प्रचार के द्वारा किसी ने प्रबन्ध में हाथ बटाने के द्वारा और किसी ने सत्याग्रह के द्वारा। परन्तु जिन्हे सत्याग्रह के प्रधान सूत्रधार स्व० महाराम नारायण स्वामी जी महाराज ने विश्वास, योग्यता और त्याग भावना के आधार पर अधिनायको का गुरुतर कार्य सौंपा था उनमें से एक राजगुरु बुरेन्द्र शास्त्री थे। राजगुरु जी ने जिस जर्षे के साथ स्पेशल ट्रेन से यात्रा की थी वह सबसे बड़ा जर्षा था। उनकी स्पेशल ट्रेन भी पहली ही थी। हैदराबाद के धर्म-युद्ध में जो अधिनायक तप कर कुन्दन सिद्ध हो चुके थे उन्हें ही सिंध



श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज

के सत्याग्रह में बुलाया गया था। उनमें एक अपवाद श्री प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित थे। मुस्लिम लीगी, प्रशासन के अधीन सिन्ध के मुस्लिम बहूल प्रान्त में आर्यों का सत्याग्रह करना आग के साथ खेलने और सिर पर कफन बाधकर जाने के समान था। राजगुरु बुरेन्द्र शास्त्री जी को ही सर्वप्रथम सत्याग्रह प्रकाश के चौदहवें समुल्लास के पठन-पाठन पर लगे प्रतिबन्ध को तोड़ने का भार सौंपा गया था। उन्होंने कई दिन तक कराची के राजपथो पर खड़े होकर सत्याग्रह-प्रकाश के उस समुल्लास का पाठ किया और आर्यसमाज की विजय का झंडा ऊँचा किया था।

श्री राजगुरु जी ने देशी रजवाडों में प्रचार और अनेक राजघरानों को आर्यसमाज का भक्त बनाने तथा बनाये रखने का सत् प्रयत्न किया था जिनमें शाहपुरा, बिजुआ, कालाकाकर, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

पूर्वी बंगाल के पीडितों की सेवा-सहायता का अभियान एव आर्य सार्वदेशिक सभा के उत्साही मन्त्री श्री ला० रामगोपाल शालवाले के विशेष प्रयत्न पर आरम्भ हो चुका था। कलकत्ता, मेदे, हसनाबाद, हस्तिनापुर में सहायता केन्द्र खूब खुले थे। आर्य हिन्दू जनता धन, और



स्वामी जी का व्यक्तित्व

[श्री प० प्रेमचन्द्र जी शर्मा, एम०एल० सी]

श्री स्वामी भ्रुवान्ध जी आर्यसमाज के महान नेता और विचारक थे। वह सच्चे कर्मठ, धर्मनिष्ठ, श्रद्धा विधानम् के मक्त और आर्यसमाज के चमकते हुए नक्षत्र थे। उन्होंने उत्तरप्रदेश, बिहार, बंगाल, बम्बई, आदि सभी प्रांतों में अपने महान् व्यक्तित्व से बड़े-बड़े लोगों को आर्यसमाज में दीक्षित किया। उन्होंने कई राजाओं को आर्यसमाजो बनाया। आर्यसमाज पर जब जब सफ्ट का समय आया, वे सीना तान कर आगे आये, उन्होंने आर्यसमाज के कार्य के सामने अपने स्वास्थ्य की चिन्ता नहीं की। उन्होंने देश में ही नहीं विदेशों में जाकर बंदिक धर्म की ध्वजा फहरायी। दक्षिण अफ्रीका मीरीशस, पाईलैंड, वर्मा, सिंगापुर आदि अनेक देशों में उन्होंने आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार किया। मैं जब समा का मन्त्री था, उस समय श्री स्वामी जी मीरीशस में बंदिक धर्म का प्रचार कर रहे थे। उन्होंने वहाँ की दोनों समाओं को मिलाने में बड़ा परिश्रम किया। स्वामी जी

क सम्बन्ध में उस समय मीरीशस के कई पत्र हमें मिले जिनमें श्री स्वामी जी के व्यक्तित्व की सराहना की गई थी, और लिखा था कि आज तक भारतवर्ष से ऐसा कोई व्यक्ति यहाँ नहीं आया जितने अपने लिए या अपनी सव्या के लिए धन एकत्र न किया हो, पर स्वामी भ्रुवान्ध जी ही ऐसे आये हैं कि उन्होंने किसी भी प्रकार की इच्छा नहीं की। मीरीशस में श्री स्वामी जी के हजारों व्यक्ति मक्त बन गये। वे जिस परिवार में जाते, उसे आर्य बनाकर छोड़ते। उन्हें हर समय, उठते बैठते आर्य समाज की ही चिन्ता रहती थी। वे आर्य प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश के कई वर्ष तक प्रधान रहे, उन्होंने समा की आर्थिक जम्हा ठीक की। जब सावदेशिक समा के प्रधान हुए तो उन्होंने सावदेशिक समा के लिए बड़ा कार्य किया। उनकी यह सदैव इच्छा रहनी थी कि समाओं के अधिकारी कसब और आंध्र ही हो, जिनके द्वारा समाओं का गौरव नष्ट, इमीन्डि वे समाओं के निर्वाचनों में भाग लिया करते थे। उन्होंने अन्त समय तक आर्यसमाज की सेवा की और आर्यसमाज की चिन्ता में ही अपने प्राण दिये।



श्री स्वामी भ्रुवान्ध जी महाराज का शव बिल्ली रामलीला मैदान में। पास में शोक में खड़े हैं आर्यजन ।



स्वामी जी का आदर्श जीवन

(श्री निमलचन्द्र जी राठी, अधिष्ठाता म०वी० आयभास्कर प्रेस)



श्री स्वामी प्रवानन्द जी बड़े तेजस्वी, विद्वान और आयुजगत के महाद सुमन्वितक थे। उनका सम्पूर्ण जीवन आर्यजगत् की सेवा करने हुए बीता। उन्होंने कभी आर्यसमाज के विरुद्ध कोई बात नहीं सुनी। उनका जीवन पवित्र और उज्वल था। उनके जीवन से हुआगे नवयुवकों ने प्रेरणा प्राप्त की। वह अपनी लगन के एक ही थे। उन्होंने देश-विदेश सभी जगह आयसमाज के काय को आगे बढ़ाया। वह मगधन प्रिय थे। मगधन के विरुद्ध वे कोई बात नहीं सुनने थे। उन्होंने राजामहाराजाओं से भी वैदिक धर्म का प्रचार किया और उन्हें वैदिक धर्म से बोधित किया। उन्होंने जिन परिवार में भोजा किया उसे पक्का आय बना दिया। उनका चित्तन आयसमाज के कार्य को ओं बड़न ही रहा। उन्हें देश प्रेम था। स्वतन्त्रता संग्राम में भी वे पीछे नहीं रहे। हैदराबाद में निजामशाही के विरुद्ध जब आय सभ्य गृह हुआ तो उसमें भी वे मकड़ों मार्ग का जगत् विरोध क्रम से हैदराबाद पहुँचे, सत्याग्रह किया और जेल गये। सत्याग्रह प्रकाश के १८ वें समुल्लास की रक्षार्थ वे कराची भी सबसे आगे सत्याग्रह के लिए पहुँचे थे। वहाँ वहाँ से बड़ी सुमन्वित में ज.य.समाज का नेतृत्व करते थे। वह महान् निर्भीक सत्यासी थे। जब वे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के प्रधान बने तो उन्होंने सारे प्रान्त का दौरा किया और समाज के लिए हजारों बचिया लाये। जब वे सार्वदेशिक समाज के प्रधान बने तो उन्होंने विदेशों में भी आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार करने का प्रोग्राम बनाया और वे दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, बरमा, सिंगापुर थाईलैंड आदि देशों में गये, वहाँ जाकर उन्होंने वैदिक सन्देश सुनाया।



श्री स्वामी प्रवानन्द जी

गोकरनाथ में बुलाया, तब श्री स्वामी जी का हमने सख्त स्वागत किया। श्री स्वामी जी ने स्वागत का उत्तर देते हुए कहा "कि मेरा यह शरीर आर्यसमाज का है, अगर कहीं आर्यसमाज का मयन बन रहा हो और उसमें चूने की कमी पड़ रही हो, तो मैं अपना शरीर चक्की में पीसवा कर उस चूने की पूर्ति करने के लिए तैयार हूँ। यह था श्री स्वामी जी का आर्यसमाज से प्रेम। वह आर्य समाज की सेवा करते हुए ही अपने प्राणोत्सर्ग कर गये। आर्यसमाज उनकी सेवाओं को कभी मूल नहीं सकता। ●

जब हमने आर्य प्रतिनिधि सभा का अधिवेशन गोला

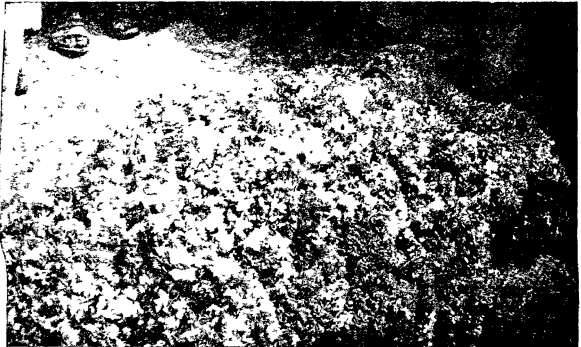


चमकता तारा विलीन हो गया!

(श्री हरप्रसाद जी साहू अधिष्ठाता नू-सम्पत्ति विभाग)

श्री स्वामी श्री बालकृष्ण जी आर्यसमाज के उज्वल रत्न थे। वे चमकते तारे की तरह प्रकट हुए और विलीन हो गये। वह महान पुरुषार्थी थे, उन्होंने अपने पुरुषार्थ से ही अपना निर्माण किया। स्वामी सर्वज्ञानन्द जी को ऐसा शिष्य मिला जिसने श्री स्वामी जी को भी चमका दिया। उन्होंने अपना विवाह नहीं किया। परिवार से कोई सम्बन्ध नहीं रखा। उनका विस्तृत परिवार आर्यजगत ही था। वे राजगुरु बने। राजाओं में उन्होंने वैदिक धर्म का सम्देश पहुँचाया। उन्हे अपना नक्त बनाया और सन्यास ले लिया। वे राजसी सन्यासी थे। वे जहा गये उन्होंने आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार किया। उनका केवल उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार ही रहा। वे बड़े चरित्रवान और ईश्वर भक्त थे। उनके

पवित्र जीवन से हजारों नवयुवकों ने प्रेरणा प्राप्त की। आर्य प्रतिनिधि समा उत्तरप्रदेश के तो वे प्राण थे। उन्होंने समा को काफी मजबूत बनाया। उनके प्रचार का क्षेत्र समस्त भारत और विदेश रहा। अनेक देशों में उन्होंने जाकर वैदिक धर्म का सम्देश पहुँचाया। उनका खाना-पीना मात्सिक रहता था। ठाट-बाट राजसी। वह कभी एक जगह नहीं बैठे, संकष्टों मीलों का सफर वे प्रतिमास करते थे। उनके व्याख्यान प्रभावशाली होते थे। आर्य जनता पर उनका प्रभुत्वप्रभाव पड़ता था। वह सर्वत्र आस के कार्य में व्यस्त रहते थे। स्वभाव के सरल और विनीची थे। ८३ वर्ष की आयु में भी वे नवयुवकों जैसा काय करते थे। उन्हें अपना काम अपने हाथ से करना अधिक पसन्द था। उन्होंने आर्यसमाज की जो सेवा की वह सर्वत्र स्मरण रहेगी। ★



पुष्प मालाओं से आच्छादित श्री स्वामी श्री बालकृष्ण जी महाराज का शव ।

आदर्श सन्त तुमको प्रणाम

आदर्श सन्त तुमको प्रणाम !

ओ बीतराग के प्रती शिष्य कमनीय गुणों के मध्य धाम ।

तुमने समाज के लिये सहे थे कष्ट मुलों का किया त्याग,

ओ पावन ऋषि के मत्त ? तुम्हे था लौकिक भोगों से विराग,

तुमने उनका बल दिया दर्प, जो आर्य जगत को बने धाम ॥

× × ×

तुमने लेकर के वेद दीप, अज्ञान तिमिर का किया नाश,

सब देख सके जितमे तुमारा ऐसा फंलाया था प्रकाश,

सब यशोमान करते स्वामिन् ? आपका विदय के नगर प्राम ॥

× × ×

ऋषि मिशन बढ़ाया आगे को ध्रुव तुम देश विदेशों मे,

अथ ह्रुये कभी भी लिल नही हे महाबीर ! तुम क्लेशों मे,

होता न कौन नत मस्तक है आपका देखकर हचिर काम ॥

× × ×

ध्रुव था विचार, ध्रुव सवाचार अध्रुव का था नाम नहीं,

था वेद धर्म मे ध्रुव निश्चय अध्रुव था कोई काम नहीं,

अन्वय सर्वथा था स्वामिन् ? ओ 'ध्रुवानन्द' आपका नाम ॥

× × ×

पाओ तुम स्व मिन् ! ध्रुवानन्द हम सब हैं इसके अभिलाषी,

आपके अमर उरकारों से उपकृत हैं हम भारतवासी,

अतएव समर्पित करते हैं सादर यह श्रद्धाजलि ललाम ॥

आदर्श सन्त तुमको प्रणाम ॥

× × ×



अपने अदम्य, उत्साह और साहस से, स्वामी जी विधर्मियों के गठ तड़कते रहे ।

आई जो आपत्तियों जहाँ से आर्य जनता पें, उनको उनी दिशा मे सब मोड़ते रहे ।

आर्य जगत बीच हुआ जब बिलपाव भाव, करके प्रयास उते सदा जोड़ी रहे ।

यत्र-तत्र-सर्वत्र वेद के विरोधियों का, स्वामी ध्रुवानन्द सदा मण्डा फोड़ते रहे । १।

आर्य जनता के लिये करते सर्वत्र रहे, अपने मुनों का वे सर्वत्र बलिदान थे ।

उनका प्रशसनीय सवाचार था प्रसिद्ध, तथा श्रवणहार के वडे ही विद्वान् थे ।

कष्ट कष्टको मे भी सर्वत्र मुँकराते रहे, हुए कभी भी न वस्त धीर नीतिमान थे ।

करते सब एकमत हो आज यही श्रेष्ठ, स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती जी महान् थे ॥२॥

अपनी तपस्या, त्याग तथा मध्य बहुता से, पोष वष खण्डियों के दुर्ग को हिला गये ।

वीन, हीन, बलित, मलीन मानवों को सम्य, पुरुषों के बीच पूण रूप से मिला गये ।

करने का विश्व मध्य धर्म का प्रचार हमे, पूर्ण अमय दान पूज्य स्वामी जी दिला गये

पर बुल इतना है करके अनाथ हमे, अब स्वामी ध्रुवानन्द सहसा बिला गये ॥३॥

—रामनिवास आश्रम

श्री सर्वदानन्द साधु आश्रम

(अस्सीगढ़)



स्वामी जी का स्मारक पानीगांव में बनाओ

[ले०—श्री प० बेनीराम शर्मा सरपच न्याय पचायत पानीगाव (मथुरा)]

(श्री प० बेनीराम जी शर्मा सरपच पानीगाव, मथुरा, पूज्य श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी के भतीजे हैं। इस लेख में श्री शर्मा जी ने स्वामी जी के स्मारक की बात लिखी है। स्वामी जी के भक्तों को वहाँ एक कमरा बनवाकर आर्य समाज स्थापित कर देना चाहिए। —सम्पादक)

श्री पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती पूर्वं श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री न्यायभूषण आचार्य श्री पंडित बिहारीलाल जी शुक्ल के सबसे छोटे पुत्र थे। सबसे बड़े श्री प० किशनलाल, श्री प० नन्दराम, श्री प० बशीधर व श्री प० घमंदास व श्री धुरेन्द्र जी। लेखक स्वामी जी के



राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री

बड़े भाई प० बशीधर जी का पुत्र है। हमारा परिवार भरतपुर राजपुरोहित परिवार से सम्बन्धित था, श्री पूज्य स्वामी जी को धूरिया नाम से बोला करते थे, क्योंकि इनका जन्म होली की धुलैडी की हुवा था। गांव में आप गाय चराया करते थे, खेती करते थे। इधर स्वामी सर्वदा नन्द जी गुरुकुल वृन्दावन जब आते थे, तो वह राया

स्टेशन से पैदल पानीगांव होकर वृन्दावन आते थे। स्वामी का प्रेम हमारे बाबा प० बिहारी लाल जी से होने के कारण स्वामी जी उनके पास कुछ समय रुका करते थे और ब्रज का भोजन छाल महेरी खाया करते थे। स्वामी जी ने हमारे परिवार से काफी जानकारी प्राप्त कर ली और हमारे बाबा व दादी से धूरिया बालक को मांग बैठे। हमारे घर के बराबर एक वगाली साधु बाबा मागुनीदास जी की कुटिया थी, स्वामी जी वही ठहरते थे। बाबा मागुनी दास जी ने धूरिया बालक को स्वामी जी को दिलाते में हमारे परिवार को समझाने में काफी मदद दी। स्वामी ध्रुवानन्द जी बाबा मागुनीदास जी के आजीवन आभारी रहे कि जिन्होंने उन्हें नवजीवन प्रदान करने में सहयोग दिया और जब तक वह साधु जीवित रहे, स्वामी जी वस्त्र आदि में उनकी सेवा करते रहे। स्वामी ध्रुवानन्द जी ने उन्हीं बंगाली साधु द्वारा अपने माता-पिता को चारोषाम की तीर्थयात्रा भी उसी बंगाली साधु से करवाई और यात्रा का सम्पूर्ण व्यय आपने ही दिया। मुद्दि आन्दोलन तक आप कमी-कमी अपने घर आया करते थे।

मैं उनके जीवन भर अपने बचपन से ही उनके सम्पर्क में रहा करता था और पत्र-व्यवहार बनाये रखता था, वह मेरे पत्रों का समुचित उत्तर दिया करते थे। मेरे विचार बचपन से राष्ट्रीय थे। मुझे यह अभिलाषा रहती थी कि मैं उनकी अधिक चरण सेवा करूँ। कलकत्ता कांग्रेस के अवसर पर मैंने सुना कि राजगुरु जी भी वहाँ जा रहे हैं, मैं भी घर से भाग कर कलकत्ते पहुँचा। प्रातः काल जब राजगुरु जी झंडा अभिवादन के बाद स्व० श्री मदनमोहन मालवीय जी से मिलने गये। राजगुरु जी

बिदेसी वस्त्र पहिने हुए थे। मालवीयजी ने तपाक से कल्ल धुरेन्द्र यह समय इन वस्त्रों का नहीं है। इतना सुनते ही राजगुह जी ने अपने समस्त वस्त्रों की होली जला दी, और उसी दिन से शुद्ध सादी पहिनाता शुरू कर दिया।

स्वच्छता प्रिय—अपने वस्त्र आजीवन अपने हाथ से धोते रहे। कभी-कभी कुछ बड़े लोग उनसे पूछा करते थे, कि गुरु जी आपके वस्त्र सफेद दूध के फेन के समान कैसे रहते हैं? उत्तर मिलता था कि मैं अपने हाथ से धोता हूँ। वस्त्र सुखाने की झोरी पर हर आठवें दिन पालिश कराई जाती थी, ताकि वस्त्रों पर कोई दाग न लग जावे।

जब स्वामी जी के माता-पिता का देहावसान हुआ और घर से उन्हें सूचना दी गई तो वह देर से घर पहुँचे उनके बड़े भाई ने कुछ कटु शब्द कहे, तो आपने तेज भाषा में उत्तर दिया कि माता-पिता का सच्चा स्मारक मैं हूँ, जो कि उनकी ओर से देश व धर्म को अर्पण किया गया हूँ और कर्मकांड का अपना हिस्सा देकर चले आये। फिर उनका प्रेम अपने बड़े भाई व० नन्दराम जी से रहा, वह विधुर थे, कोई सन्तान नहीं हुई थी। उनको भी कभी-कभी बस्त्रादि भेजा करते थे। उनके मरने के उपरान्त वह फिर कभी गाव नहीं गये। परिवारी एव ग्रामीण जिस किसी को मिलना होता गुरुकुल के उत्सव पर मिल लेते थे।

मेरी जब कभी एकांत में चरण सेवा करते समय बातें होती थी, तो वह कहा करते थे, कि पानीगाव में एक कमरा बनवाकर आर्यसमाज कायम करूँगा और उसी जगह को पसन्द किया था कि जिस जगह पर उस बंगाली साधु की कुटिया थी। एक बार गुरुकुल उत्सव पर रात को प्रोग्राम मुझे बताया कि सुबह गाव चलूँगा और एक जोवरसियर को भी कह दिया श्री करनमिह जी ठेकेदार मधुरा से भी कह दिया कि सुबह गाव चलकर एक कमरे का नक्शा बनवाकर तस्मीना करना है। परन्तु श्री लालबहादुर शास्त्री जी जो कि अब भारत के प्रधान मन्त्री हैं, उस समय उत्तर-प्रदेश के गृह मन्त्री थे, उनका तार आ गया और वह पानीगाव न आ सके।

श्री पूज्य स्वामी जी की जब-जब इच्छा होती थी मुझे पत्र देकर चाहे जहा बुला लेते थे और परिवार की कुशल ले लेते थे। जब वह सिगापुर की यात्रा पर गये

थे, तब उन्होंने मुझे आगरा बुलाया, वह वहा श्री पुरी जी के यहाँ एक शाही में सम्मिलित थे। आगरा क्लब होटल में मिला, मैंने उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में धीरे से कहा स्वामी जी भ्रमण कम कर दीजिये तो आपने तेजी से उत्तर दिया कि भाई यह देह तो जाना ही है क्यों न कार्य करते करते समाप्त हो, देश व धर्म आर्यसमाज के कार्य के आगे मुझे प्राणों की कोई चिन्ता नहीं है। उसी बात को धरितायं करके दिखला दिया। गत वर्ष आश्रम पर जब दौरा हुआ था, तब मैं सपत्नीक बहो पर था, और ऐसा आभास हुआ कि अभी प्राणान्त हुआ परन्तु कुछ समय को और रह गये। उस हालत में भी मुझे व मेरी पत्नी को सुबह फिर आशा दी कि गाव में आर्यसमाज की स्थापना करो।

भ्रष्टाचार विरोधी—जब मैं न्याय-व्यायन पानीगाव क्षेत्र का सपच चुना गया और उन्हें यह बात मालूम हुई तो मुझे वृन्दावन बुलाया और आशा दी कि रिश्वत नहीं लेना और ऐसा काम करना ताकि इलाके में तेरा नाम हो।

मेरी पत्नी को वह अधिक प्यार करते थे, वह भी जब कभी उनके दर्शन हेतु जाती थी। अब स्वामी जी की आशाओं का उम पर इतना प्रभाव है कि उनसे सध्या याद कर ली और नित्य कर्म करके ही भोजन करती है।

ता० १६ जून को मैंने उनको एक पत्र लिखा उनके स्वास्थ्य के बारे में, तो उन्होंने श्री लाला रामगोपाल जी शालवालो के द्वारा उत्तर दिया था कि मैं २९ जून सन् ६५ को १ दिन को देहली आ रहा हूँ, मेरा स्वास्थ्य पूर्ण-पेक्षा ठीक है, चिन्ता की कोई बात नहीं है। विवि की विडम्बना २९ जून को ही मुझे रात्रि के रेडियो से उनकी मृत्यु का समाचार मिला।

उनकी आशायें शिरोधार्य हैं। आर्यसमाज के सुर्ध्व आजीवन ब्रह्मचारी त्यागी नेता की पूज्य भूमि में जो कि ब्रज चौरासी कोस की परिक्रमा का मार्ग है, वहा उनकी स्मारक स्थली का निर्माण आवश्यक है। आर्यसमाज की स्थापना।

परिवारी जन आर्यसमाज सांवेदिक सभा एव उत्तर-प्रदेशी सभा से एव उनके शिष्य, भक्तों से निवेदन करते हैं कि उनकी दान आशाओं को पूर्ण करने की कृपा करें। बस यही मेरा निवेदन है।



श्री स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज

[संक्षिप्त जीवन परिचय]

[श्री साक्षात् रामगोपाल जी सासबाले, मन्त्री सार्वभौमिक समाज दिल्ली]

पूज्यपाद श्री स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज का पृथक् आत्मिक देहावसान २९ जून को प्रातः ६ बजे बम्बई में श्री सेठ प्रतापसिंह गुरजी बल्लभवास के निवास स्थान पर हृदय की गति बन्द हो जाने से उस समय हुआ, जब स्वामी जी महाराज बायुधान से दिल्ली प्रस्थान करने की तैयारी कर रहे थे।

वे आर्यसमाज के मूर्धन्य नेता थे और आर्यसमाज की आँसू उनके नेतृत्व पर टिकी थीं। मृत्यु के समय उनकी आयु ८३ वर्ष थी। वे स्वनिर्मित महानुभाव थे। आर्य समाज के काय में ही उनका एक एक क्षण व्यतीत होता था। ऐसा लगता है कि उनके निधन से आर्यसमाज अपनी किसी बहुमूल्य निधि से वंचित हो गया है।

पूज्यपाद श्री स्वामी भ्रुवानन्द जी सरस्वती का असाधारण निधन आयसमाज की महती क्षति है जिसका ठीक ठीक अंदाजा इस समय नहीं लग सकता। ऐसे अबसर आयेगे जब उनका अभाव घुरी तरह खटकेगा। उन अंसे महर्षि दयानन्द के भिक्षुजिनका एक एक क्षण आयसमाज पर अर्पित रहा हो मुश्किल से देखने को मिलेगा। वे आयसमाज के लिए जिंदा और उसी के लिए मरे यह कह दिया जाय तो इसमें अत्युक्ति होगी। वे आर्यसमाज और सार्वभौमिक समाज को बहुत उन्नत और यशस्वी देखने के लिये लालयित रहने थे और इसके लिए उन्होंने कोई प्रयत्न उठा न रखा था। वे समाजकी अपने व्यक्तित्व से ऊपर रहते थे। इनके लिए कितना ही बड़ा मूल्य क्यों न चुकाया जाय, प्रयत्न के कितने ही कड़े घूंट क्यों न पिये जाय इनकी वे तनिक भी परवाह न करते थे। उनकी बाणी में और व्यक्तित्व में प्रभाव था। ऐसे अमूल्य रत्न को खोहर यदि आयसमाज अपने को अर्कचक्र अनुभव करे और आयजगत में शोक एवं सूनापन व्याप्त देखे पड़े तो यह स्वाभाविक ही है।

श्री स्वामी भ्रुवानन्द जी (राजगुरु श्री घुरेन्द्र शास्त्री) महाराज का जन्म सन् १८८२ में पानी गाँव (मथुरा) में हुआ था।

संस्कृत के अध्ययन के लिए उत्कण्ठा प्राप्त हो जाने और इसकी पूर्ति में घर वालों के बाधक बनने पर लगभग २३ वर्ष की आयु में वह एक विद्यार्थि समाज को चुन-चाप घर से भाग निकले और आर्य प्रतिनिधि समाज राध-स्वामि द्वारा सञ्चालित मथुरा के विरजानन्द आश्रम में पहुँच गये। आश्रम के अध्यक्ष ने उन्हें संस्कृत पढ़ने की अनुमति दे दी। पढ़ाई के बखले में अवैतनिक रूप में इन्हें आश्रम के विद्यार्थियों के भोजन बनाने का कार्य सौंपा गया। जब स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज आश्रम के अध्यक्ष बनकर गये और उन्होंने इनकी परीक्षा ली तो बड़े प्रशंसक हुए और इन्हें भोजन बनाने के कार्य से मुक्त कर दिया। स्वामी जी के चले जाने और नये अध्यक्ष के आ जाने पर विद्यार्थियों और अध्यक्ष के मध्य सघर्ष हो गया जिसके फलस्वरूप आश्रम टूट गया। वहाँ से वे रणजी की बगिया में स्थित बुन्वावन के श्रद्धिकुल में पढ़ने के लिए गए। परन्तु सैदान्तिक मतभेद होने के कारण वहाँ अधिक समय तक रहना न हो सका और घर चले गए। स्वामी सबदानन्द जी महाराज को इसकी सूचना दी गई। वे सूचना पाकर इनके घर गये और इनकी माता जी को यह आश्वासन देने पर कि इन्हें साधु न बनाया जायगा, अपने साथ साधु आश्रम (अलीगढ़) में ले आए और उनकी पढ़ाई का समुचित प्रबन्ध कर दिया।

१९८८ में वे शास्त्री परीक्षा देने के लिए मुल्तान चले गए। १९१९ में पन्ना विश्वविद्यालय की शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण कर ली।

इसके पश्चात् महाराजा कालेज जयपुर में कुछ नव्य (शिव पुष्ट ५४ पर)

आर्यसमाज की अपूर्णीय क्षति —

स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज का महाप्रयाण

(से०—श्री बालदेव शर्मा, 'प्रधानमन्त्री' आर्य प्रतिनिधि सभा, बिहार)

आर्यसमाज के सार्वभौमिक मूर्धन्य नेता, अविभाजित भारत के अनेकों देवी राजाओं के गुरु, सार्वभौमिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मृतपूर्व प्रधान स्वा० प्रधानम् श्री सरस्वती का महाप्रयाण दिनांक २९ जून १९६५ को प्रातः ७। बजे बम्बई में हो गया। इनकी मृत्यु से आर्य जगत् की जो महान् क्षति हुई है, उसकी पूर्ति निकट भविष्य में असम्भव है। स्वामी जी की मृत्यु से समस्त आर्य-जगत शोक सागर में डूब गया।

स्वामी प्रधानम् जी महाराज का जन्म मयूरा के निकट पानी ग्राम में एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन में पढ़ लिख नहीं सके। २३ वर्ष की उम्र ही बली थी। पढ़ने की उत्कट अभिलाषा से पूज्यपाद स्वा० सर्वदानम् जी महाराज के आश्रम में आये। वहाँ आश्रम के विद्यार्थियों की रोटी बनाने के काम पर नियोजित किये गये। विद्या एव ज्ञान की प्रबल पिपासा थी, अतः रोटी बनाने के साथ पढ़ा भी करते थे। उस समय उनका नाम धुरेन्द्र था। एक दिन पूज्यपाद स्वामी सर्वदानम् जी महाराज की कृपा मरी पनी दृष्टि इन पर पड़ी और उनसे कुछ प्रश्न पूछे। उत्तर से सन्तुष्ट होकर स्वामी जी महाराज ने रोटी बनाने के कार्य से मुक्त करके केवल पढ़ने में नियोजित कर दिया। पढ़ने लखने में कुशाग्र बुद्धि के कारण आश्रम की पढ़ाई शीघ्र ही पूरी हो गयी। स्वामी जी महाराज ने ब्रह्मचारी धुरेन्द्र को लाहौर में पढ़ने के लिए भेज दिया। वहाँ से शास्त्री परीक्षा में उत्तीर्ण होकर श्री शास्त्री जी ने जयपुर तथा बाराणसी जाकर न्याय शास्त्र का विशेष रूप से अध्ययन किया और आर्य-जगत् में प० धुरेन्द्र शास्त्री "न्याय मूर्धन्य" के रूप में प्रसिद्ध हुए। पूज्य स्वा० सर्वदानम् जी महाराज के साधु आश्रम में पुल काली नदी के किनारे ब्रह्मचारी अखिलानन्द जी, प० ब्रह्मवत् जी जिज्ञासु,

प० धुरेन्द्र जी शास्त्री तथा इनके एक और साथी ने व्रत लिया था कि आजन्म ब्रह्मचारी रहकर स्वा० बयानम् जी महाराज के सिद्धान्तों का प्रसार एवं प्रचार करेंगे। इन चारों में प्रथम तीनों ने अपने जीवन का एक एक क्षण अपने सकल्प के अनुसार देश तथा धर्म के उन्नयन में लगाकर व्रत को अक्षरशः निभाया। पश्चात् पण्डित जी ने अखिल भारतवर्षीय शुद्धि सभा में अधिकारी के रूप में स्वा० अष्टानन्द जी महाराज के साथ शुद्धि के कार्य में सारे भारतवर्ष में भ्रमण कर लाखों मल्लानों तथा अन्य विधर्मियों की शुद्धि की।

१९२४ ई० में इनकी ख्याति बढ़ने लगी। पटना सिटी के हुतात्मा वीर बा० नारायणसिंह जी ने इन्हें उत्सव के अवसर पर आमन्त्रित किया। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के प्रधान मन्त्री तथा गुरुकुल महाविद्यालय के मुख्य जन्मवाता जिन्हें महामना प० मदनमोहन मालवीय 'सरस्वती' के वरद पुत्र से सम्बोधन किया करते थे उन्हीं के समापत्तित्व में एक शास्त्रार्थ हो रहा था। विरोधी पक्ष की ओर से प० आरामराम जी तथा आर्य-समाज की ओर से श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री जी 'न्यायमूर्धन्य' उत्तर दे रहे थे। इनका शरीर सुदौन और बलवान्, छाती उमड़ी हुई, तेजपूर्ण आँखें, ऊचा मस्तक लम्बे पाँव, बाजू मोटे तथा आकर्षक और तेजपूर्ण मुलमण्डल इनके, व्यक्तित्व एव वाणी का अमिट प्रभाव मेरे ऊपर पड़ा। अपार भीड़ भी मन्त्र-मुग्ध होकर मुन रही थी। शास्त्रार्थ के अन्त में जनता वैदिक धर्म की जय, स्वा० बयानम् की जय एव प० धुरेन्द्र शास्त्री जी की जय बोल रही थी।

पश्चात् प० रामवन्द जी द्विवेदी के आग्रह से गुरुकुल महाविद्यालय बँदनाय धाम के आचार्य पद की स्वी-

कार कर १९२९ तक कार्य करते रहे और वेवधर को ही मुख्य केन्द्र बनाकर सारे भारतवर्ष में प्रचार करते रहे। उस समय से मृत्यु पर्यन्त तक ये बिहार के एक अमिष अंग बने रहे।

सन् १९२७ में बानापुर आर्यसमाज में स्वर्ण जयन्ती समारोह होने वाला था। लोगों की धारणा थी कि आर्य समाज में विद्वान् लोग नहीं हैं। इस भावना को निर्मूल करने के लिए इन्होंने राजा अवधेशसिंह जी, कालाकाकर एव अमेठी के राजकुमार रणजयसिंह की समापतित्व करने के लिए आमन्त्रित किया एव आय जगत् के बड़े-बड़े नेता महात्मा नारायणस्वामी, प० रामचन्द्र जी वेहलबी आदि पधारें। यः समारोह बहुत ही सफल रहा तथा बड़ा ही प्रभावीत्पादक रहा।

जीवन के प्रारम्भ से अस्वस्थ होने के पूर्व तक अपना वस्त्र प्रक्षालन, निवास की सफाई आदि सारा कार्य आप स्वयं किया करते थे। नियमित व्यायाम, सध्या अग्नि-होत्र आदि वैदिक कार्य करते थे।

स्वामी ध्रुवानन्द जी का प्रभाव भारत तथा भारत के बाहर सभी स्थानों पर समान था सभी स्थानों के श्रेष्ठ जन सम्मानपूर्वक इनका आदर करते थे।

प० धुरेन्द्र जी शास्त्री के प्रभाव से बिहार के नव-युवकगण आये और स्वामी जी महाराज ने इन नवयुवकों के आग्रह पर अपना मुख्य निवास केन्द्र पटने में बनाने की स्वीकृति दे दी। स्वीकृति मिलते ही पटना जनरल अस्पताल के मुख्य चिकित्सा सहायक श्री नवल जी ने अपना बार्डर निवास के लिए प्रदान किया। इस अवधि में इनका मुख्य कार्य आर्यसमाज का प्रचार था। पटना निवास काल में आयकुमार समा को सुदृढ़ बनाकर पुष्पित एवं पल्लवित किया। सायंकाल में प्रतिदिन सँकड़ों नव युवक आर्यसमाज बाकीपुर में स्थित आर्यकुमार ममा में पुस्तकालय, व्यायामशाला (वदधात् धुरेन्द्र व्यायामशाला) एव वैदिक हिन्दी पुस्तकालय से आर्यसमाज का प्रचार कार्य करते रहे। उस समय इन आर्यकुमार समा में अकथनीय जीवन था। उक्त अवसर पर उक्त आर्यकुमार समा का बायिकोस्तव इतना आकर्षक एव प्रभावोत्पादक होता कि जिसमें समापतित्व का कार्य पटना हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश सर ट्रेलर कुटनी एवं श्री के पी जायसवाल, सर

गणेशवर्तिसिंह आदि किया करते थे। जिसमें पटना विद्वद्विद्यालय (उस समय बिहार में केवल एकही विद्वद्विद्यालय) के सँकड़ों स्नातक एव स्नातकोत्तर छात्र आर्यसमाज के सिद्धान्तों में जीवित हुआ करते थे। मुख्यतः स्वामी शकरानन्द जी (कराची) तथा प० रामचन्द्र जी वेहलबी के माधव सुनने के लिये बहुत मीठ आया करती थी।

पटना निवास के समय १९३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में प० धुरेन्द्र जी शास्त्री ने सक्रिय भाग लिया बिहार के भिन्न-भिन्न भागों में जन जागरण तथा राष्ट्रीय भावना को जगाने का प्रबल प्रयत्न किया। पटना सिटी स्थित मंगल तालाब पर माधव देने के लिये सरकार ने इन्हें दण्डित किया तथा हजारी बाग जेल में कड़ी बनाकर बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेताओं के साथ रखे गये। जेल में भी वैदिक धर्म प्रचार के लिए वैदिक बलास लिया करते थे। तथा सध्या एव यज्ञ का सक्रिय प्रचार किया करते थे, उत्तर बिहार के शास्त्रार्थ में बहा के कट्टर पीठाधिकों ने अचानक गले में मोटी रस्सी डालकर मारना चाहा, पर इनकी शारीरिक शक्ति एव ईश्वर की कृपा ही थी कि आपकी जान बच गयी। शाहपुराधीश महाराजा उमेशसिंह जी इनके अनुकरणीय आचरण एव कर्मठ जीवन से बहुत ही प्रभावित हुए तथा राजकुमार सुवर्णम देव को धर्म-शिक्षा पढ़ाने के लिए इन्हें नियुक्त किया। यहाँ कई वर्षों तक इस कार्य को करते रहे। महाराज उमेशसिंह जी भी इनसे बहुत ही प्रभावित हुए और इन्हें 'राजगुरु' की उपाधि से दरबार में अलंकृत किया गया। पूषियों, विद्युआ, सालाबाड़ा, देवासे (जूनियर) शाहपुरा के राजा आपके शिष्य रहने में गौरवान्वित थे। इनके अतिरिक्त सँकड़ों राजा, राजबहादुर तथा जमींदार का नाम गिनाना सम्भव नहीं है। समा के समापति चुने गये और उस पर्व पर कई वर्षों तक सफलतापूर्वक कार्य किया।

हैबराबाद में हिन्दुओं पर निजामशाही सरकार की नाबिरशाही एव अत्याचार से बचाने के लिए आर्यसमाज को कोप भाजन बनना पड़ा। निजाम शाही सरकार वधुबल से आर्यवीरों पर अमानुषिक अत्याचार बोरों से करने लगी किन्तु आर्यवीर गोवड़ भ्रमकी से कोई बरने वाले घोड़े ही थे। सार्वदेशिक समा को लाचार होकर

सत्याग्रह करना पड़ा। इसी हैबराबाद सत्याग्रह के आप चौथे डिक्टेटर सर्वाधिकारी चुने गये। स्पेशल ट्रेन से आर्य सत्याग्रहियों को लेकर निजामशाही के किले की जड़ हिला दी। कई बार जेल की अमानुषिक एवं विशेष व्यंति-नाओं को सहते रहे।

पदचातु अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार समा के समापति चुने गये। इस पद को इन्होंने बड़ी दक्षता से सम्भाला।

सिन्ध के सत्याग्र प्रकाश सत्याग्रह के आप प्रथम सर्वाधिकारी बनाये गये तथा सत्याग्रहियों को लेकर कराची की गलियों में सत्याग्र प्रकाश की आबाज को गुंजाते रहे किन्तु आर्य वीरों को रोकने का साहस सरकार को नहीं हुआ। फलतः सिन्ध सरकार का यह प्रतिबन्ध केवल कागजी ही रह गया।

१९५० से १९५५ तक साबदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा के समापतित्व से साबदेशिक समा की नींव को बूढ़ बनाकर आर्यसमाज का सर्वांगीण विकास करते रहे।

पदचातु सन्यास आश्रम में बीजित होकर स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज ने सन् १९५५ के नवम्बर में साढ़े तीन वर्षों तक भोरीशस, पूर्वी अफ्रीका (युगाण्डा, टान्यानिका जजीबार) दक्षिण रोडेशिया 'भेडागास्कर आदि स्थानों में बड़ी सफलता के साथ वैदिक धर्म की तुम्बुनी बजाते हुए आर्यसमाज के सगठन को बूढ़ एवं स्थिर किया।

विदेश से आने पर पुन दिल्ली में अखिल भारत-वर्षीय आर्य सम्मेलन के समापति चुने गये। पदचातु तीन वर्षों तक स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज ने साबदेशिक आर्य प्रतिनिधि समा का समापतित्व किया।

१९६४ में पुन बर्मा तथा मलाया में जाकर प्रचार किया ता० २९जून १९६५ को प्रात काल सूरजी के बम्बई स्थित कक्ष पंसेल में जब वे दिल्ली हवाई अड्डा से चलने की तैयार थे, उसी समय अचानक हृदय का दौरा हुआ तथा साबदेशिक समा के प्रयाण भी प्रताप जी बल्लभवास जी सूर के कच्छ पंसेल में इनका प्राणान्त हो गया।

स्वामी भ्रुवानन्द जी के नेतृत्व में विशेष भातं चरित्र-निर्माण, सगठन प्रेम एवं आर्य-सिद्धान्त के लिये सर्वस्व ध्याग की भावना थी। स्वामी जी महाराज ने

आर्यसमाज के लिये घर द्वार नाता रिश्ता, अपना पराया सबको त्याग कर सब कुछ आर्य समाज को ही अपना बनाया।

दक्षिणाधि जो कुछ भी प्राप्त होता सब सर्वदा-मन्त्र साधु आश्रम के सत्कालन एवं अम्य उदीयमान छात्रों को दे दिया करते थे। मृत्यु के समय उनके पास कुछ भी पैसे नहीं थे।

वर्षों पूर्व से ही बड़े-बड़े डाक्टर स्वामी जी को पूर्ण चिधाम की सम्मति देते आ रहे थे किन्तु स्वामी जी महाराज ने अपना अनुम्य शेष जीवन भी आर्यसमाज के लिए म्योछावर कर दिया। आर्यसमाज को सगठित पुष्पित एवं फलित देखकर उनका मुग्धमग्धल लिल उठता था। स्वामी जी महाराज बड़े क्रियाशील, निस्वार्थ जनसेवी कर्मठ अम्यवसायी, बुद्ध, सत्कर्मी, वैदिक सत्कृति में अदूट वास्थावान् तथा आर्यसमाज के पूर्णग्य नेता थे। स्वामी भ्रुवानन्द जी महाराज के चरित्र में ऋष्यतेज एवं क्षान तेज का अलौकिक सम्मिश्रण था। इनका जीवन 'स्वयमेव म्योग्रता' का अनुपम उदाहरण है। इन्हीं कारणों से सर्वत्र उनके लिये विजय थी जयमाल लिये लब्धी रहती थी। जब तक आर्यसमाज जीवित रहेगा, इनकी अमल-भवल कृति जीवित रहेगी एवं इनका चरित्र प्रकाश-स्तम्भ के समान काम करता रहेगा।

[पृष्ठ १७ का शेष]

आर्यसमाज में आ जाते हैं वे भी कालांतर में यहाँ की गुटबन्दी, पबलोपुत्ता और मले लोगो की अप्रतिष्ठा को देखकर इससे दूर रहना ही श्रेयस्कर समझते हैं।

आर्यसमाज स्वामी भ्रुवानन्द जी की सेवाओं को मली प्रकार समझे और उनका म्युत्यांकन करे। ऋषि ब्रह्मानन्द के बताये हुये आर्य सगठन के वास्तविक रूप का अनुकरण करे और गुटबन्दी, योग्य अयोग्य समासर्बों की भरती के बल पर समाज और समाजों में पबालीनी होने की कृत्सित मनोवृत्ति का परित्याग करे।



आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान्-

स्वामी ध्रुवानन्द जी के कतिपय संस्मरण

(ले०—श्री प्रो० भवानीलाल जी भारतीय एम० ए०)

स्वामी ध्रुवानन्द जी के गत २९ जून को दिवगत होने से आर्य जगत् की कितनी अपूरणीय क्षति हुई है, यह सहज ही कल्पनीय नहीं है। स्वामी जी युग पुरुष, युग नेता तथा वास्तविक नेतृत्व की क्षमता रखने वाले अद्भुत पुरुष थे। हैबराबाद आर्य सत्याग्रह तथा सिन्ध के सत्याग्रह प्रकाश आन्दोलन में माग लेकर उन्होंने आय जाति का ही नेतृत्व नहीं किया अपितु समस्त सारत के समाज में अपने कौशल पूर्ण नेतृत्व की धाक बिठा ली। उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि समा तथा साबदेशिक समा के प्रधान पद पर वर्षों रहकर उन्होंने आर्यसमाज के आन्तरिक सगठनात्मक पहलू को सुदृढ़ बनाने का अपूर्व प्रयास किया।

लेखक को स्वामी जी के प्रथम दर्शन उस समय हुए जब वे एक गोरक्षा सम्मेलन का समापनित्व करने १९५४ में जोधपुर पधारे थे। उस समय उनका प्रवचन जोधपुर की महर्षि दयानन्द मार्ग (रातानाडा) आर्यसमाज में रक्खा गया, और उसमें नगर के सभी आर्य पुरुषों के अतिरिक्त अनेक गण्यमान नागरिक एवं भारतीय सरकृति के उपासक सज्जन भी विद्यमान थे। उक्त गोरक्षा सम्मेलन का आयोजन जिन व्यक्तियों ने किया था, उनमें आर्यसमाज के प्रतिनिधि नगण्य थे, अतः इस स्थिति को मैंने स्वामी जी के समक्ष प्रस्तुत किया। उनका समाधान अत्यन्त युक्तियुक्त था। उन्होंने कहा कि इस प्रकार के गोरक्षा सम्मेलनों के आयोजन रखना आर्यसमाजों का ही प्रमुख कर्तव्य है। यदि हम स्वयं ही अपने कर्तव्य से पराङ्मुख हों, और अन्य लोग उस कार्य को करें तो हमें उसमें वैधानिक आपत्ति करने का क्या अधिकार है ?

स्वामी ध्रुवानन्द जी जहाँ जाते, वहाँ के आर्य पुरुषों से मिलकर आर्यसमाज की आन्तरिक समस्याओं और आन्तरिक स्थिति पर चर्चा अवश्य करते। वे यह भी चेष्टा

करते कि आर्यसमाजियों के पारस्परिक वैनमन्य को दूर करने तथा उन्हें परस्पर निकट लाने के लिये पूर्ण प्रयास किया जाय। यथासम्भव वे आर्यसमाजों में ही ठहरना पसन्द करते, यद्यपि नगर के गण्यमान्य व्यक्तियों की यह अभिलाषा रहती कि स्वामी जी अपने निवास द्वारा उनके मबन को सुशोभित करें। उत बार भी जब वे जोधपुर पधारे थे तो नगर के एक प्रतिष्ठित और धनी वकील की फोटी पर ठहरने के आग्रह को अस्वीकार कर उन्होंने आर्यसमाज सरदार पुरा के साधारण कमरे में ही अपना डेरा जमाया। आर्यसमाज को अपना सर्वस्व समझने वाले व्यक्ति से यही ओक्षा की जा सकती है।

उस दौरान स्वामी जी ने मुझे अपने कक्ष में पृथक् रूप से बुलाया और मेरा व्यक्तिगत विस्तृत परिचय पूछा। मैंने निवेदन किया कि मैं आर्यसमाज में अपनी छात्रावस्था से ही दिलचस्पी लेता रहा हूँ तथा आर्यसमाज के लगनमयी पत्रों में नियमित रूप से सैद्धान्तिक लेख आदि लिखता रहता हूँ। स्वामी जी यह जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझे -याय दर्शन का विधिवत् अध्ययन करने का परामर्श दिया। मैंने उन्हें अपनी स्वरचित 'महर्षि दयानन्द तथा अन्य भारतीय धर्मशास्त्र' शीर्षक पुस्तिका भेंट की, तो वे उसे पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा मेरी लिखने पढ़ने सम्बन्धी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन दिया। कहना न होगा कि मेरी 'श्रीकृष्ण चरित' शीर्षक पुस्तक को प्रकाशित करने की प्रेरणा स्वर्गीय स्वामी जी ने ही आर्य साहित्य मण्डल को दी, जिसके फलस्वरूप उक्त मण्डल द्वारा यह ग्रन्थ छप सका।

सन्ध्यास ग्रहण के अनन्तर स्वामी जी ने अफ्रीका, मीरीशस आदि बिदेशों में आर्य धर्म के प्रचारार्थ प्रस्थान किया। उस समय मैं एक छोटे से गांव में अपनी जीविका बसा रह रहा था। उस समय आर्यमित्र ने प्रकाशित मेरे

कतिपय वेद विषयक लेखों को पढ़कर स्वामी जी ने उक्त बेहात में मुझे पत्र लिखा तथा निरन्तर पत्राचार रखने का परामर्श दिया। जिन लोगों का स्वामी जी से पत्र व्यवहार रहता था, वे यह जानते हैं कि स्वामी जी के पत्र कितने प्रेरणाप्रद होते थे। वे पत्रों के अन्त में 'शिवास्ते सन्तु पन्थान' जैसा उक्तुष्ट आशीर्वाद सूचक वाक्य लिखना कभी नहीं भूलते थे।

स्वामी जी अपने विवेक प्रवास से जब १९६१ में लौटे तो उन्हें नवम आर्य महासम्मेलन बिल्ली का अध्यक्ष पद स्वीकार करना पड़ा। इस पद को ग्रहण करने के अनन्तर वे सार्वदेशिक सभा के अध्यक्ष पद पर पुन निर्वाचित हुए। इस समय तक अनेक प्रान्तों के आर्य पुरुषों में मनोमालिन्य दृष्टिगोचर हो रहा था तथा कतिपय प्रतिनिधि सभाओं के अधिका रियों में भी सौमनस्य भाव बहुत कम था। उस समय जब मैं स्वामी से बिल्ली के बयानन्द मठन में मिला तो उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि वे बेश व्यापि दौरा करेंगे तथा प्रत्येक प्रान्त के आर्य पुरुषों से मिलकर उनके पारस्परिक वाद-विवादों को दूर करने में सहायक होंगे। कहना न होगा कि इस प्रकार का कार्य आर्यसमाज की आन्तरिक शक्ति को सुबुद्ध बनाने तथा उसके सगठन को निर्बल बनाने की दृष्टि से नितान्त इलाघनीय था। उसी समय स्वामी जी ने लेखक को अपना एक हस्ताक्षर युक्त चित्र भी दिया।

स्वामी जी की यह हार्दिक इच्छा रहती थी कि आर्य समाज का भीतरी सगठन भी उतना ही मजबूत रहे जितना कि उसका बाहरी रूप जन समाज के समक्ष आता है। उन्होंने आर्यसमाज की आन्तरिक समस्याओं को सुलझाने में अपनी अपार सगठन शक्ति का परिचय दिया था। जोधपुर में सार्वदेशिक सभा की जो अखल सम्पत्ति है उसके सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लेने के लिए स्वामी जी जोधपुर आये। उस समय (अक्टूबर १९६२) मैं जोधपुर से स्पानास्तरित होकर पाली आ गया था। जोधपुर आते ही श्री महाराज ने मुझे स्मरण किया। मैं तुरन्त उनकी सेवा में पहुँचा। स्वामी जी ने मुझसे जोधपुर की सम्पत्ति विषयक मेरी जानकारी के बारे

में पूछा, तथा इसी प्रकार सभी पक्षों की बातें सुनने के अनन्तर अपना निर्णय दिया।

स्वामी प्रबन्धन-व जी एक मधुर वक्ता, कुशल सज्जा सवालक तथा आर्यसमाज के अप्रतिम नेता थे। इस बार तथा इससे पूर्व भी जब वे आर्यसमाज गुलाबसागर जोधपुर के वैदिक एवं साप्ताहिक सत्सग में उपस्थित हुये तो सम्प्रा तथा यक्ष विषयक आर्यों की कतिपय त्रुटियों तथा असंगतियों के, शोधन की ओर उन्होंने सबका ध्यान आकृष्ट किया। मन्त्रों के उच्चारण के सम्बन्ध में जो सामान्य त्रुटियाँ आर्य पुरुषों से होती हैं उनको ओर निर्देश करना यह बतलाता है कि स्वामी जी आर्यसमाज की छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी समस्या के प्रति भी कितने जागरूक रहते थे। हम जानते हैं कि सगठन में छोटी छोटी बातों का बड़ा महत्व रहता है।

इस बार मैंने स्वामी जी से आर्यसमाज की कतिपय समस्याओं के बारे में कुछ प्रश्न इण्टरव्यू के रूप में पूछे जो बाद में सार्वदेशिक सभा के मुल-पत्र सार्वदेशिक में छपे। स्वामी जी द्वारा बताये गये कुछ स्वर्ण सूत्र निम्न-लिखित हैं—

[१] प्रत्येक आर्यसमाजसद् प्रति रविवार अपने परि-
वार सहित आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्सग में उप-
स्थित हो।

[२] आर्यसमाज का प्रत्येक अधिकारी इस बात की
देखे कि उस समाज के कौन कौन समासद् सत्सग में उप-
स्थित नहीं होते हैं। वे स्वयं उन समासदों से व्यक्तिगत
सम्पर्क स्थापित कर उनसे सत्सग में सम्मिलित होने की
प्रेरणा करें।

[३] प्रत्येक समासद् अपना मासिक चन्दा स्वयं
आर्यसमाज में लाकर कोषाध्यक्ष के पास जमा कराये।
यह कार्य कर्मचारी के सुपुर्न न किया जाय। इससे आर्य-
समाज के प्रति हमारे दायित्व का मान हमें होगा।

[४] प्रत्येक आर्य कोई देसा कार्य न करें, न ऐसी
बाथी बोले जिससे आर्यसमाज के गौरव की क्षति
पहुँचे।

कहना न होगा कि यदि उक्त सूत्रों को हम आचर्य



में जाने उन्हें तो सहज ही में आर्यसमाज का कावाकल्प हो सकता है ।

गत वर्ष से स्वामी जी प्रायः दग्ध रहने लगे थे, फिर भी आर्यसमाज के कार्यों से उन्हें कहीं बिधाम था । हनुमान के शब्दों में 'राम काज साथे बिना मोहि कहां बिधाम' जब तक इयामन्व के कार्य की पूर्ण सिद्धि न हो, जब तक आर्यसमाज की विजय बुद्धि विग्-विगल्लर में न पूंजै लगे तब तक स्वामी भ्रुवानन्द को चैन नहीं । वत वे पूर्वी पाकिस्तान से जाने वाले शरबाधियों के सहायता कार्य में जुट गये । बगाल, त्रिपुरा, तथा अन्य सीमावर्ती प्रांतों में आर्यसमाजों द्वारा काले गये सहायता शिविरों का निरीक्षण करना उनके व्यस्त कार्यक्रम का का एक प्रमुख भाग रहा ।

गत वर्ष स्वामी जी ने मुझसे पूछा कि क्या मैं प्रचारार्थ ३-४ मास के लिये मीरीशस जाने के लिए तैयार हूँ । वहाँ की आर्य प्रतिनिधि सभा ने सार्वभौमिक सभा से एक प्रचारक मांगा और स्वामी जी चाहते थे कि मैं कुछ दिन अवकाश लेकर इस कार्य में प्रवृत्त होऊँ । उन्होंने यह भी पूछा कि क्या मेरे लिये कुछ वर्षों के लिये मीरीशस की राजधानी में प्रारम्भ किये गये डी० ए० बी० कालेज में प्राध्यापक पद पर रहना स्वीकार्य होगा । मैं अपने अनुसन्धान कार्य तथा कुछ स्थास्थ विषयक कारकों से इस विषय में कुछ निवचय नहीं कर पा रहा था, परन्तु स्वामी जी का मुझे इस कार्य के लिये स्मरण करना ही इस बात का द्योतक है कि वे हार्दिक रूप से यह चाहते थे कि आर्यसमाज केवल स्वदेश में ही नहीं अपितु विदेश में भी लोक-प्रियता प्राप्त करे । उनकी सिंगापुर और बेंकोक की यात्रा ने भी प्रवासी भारतवासियों के बीच आर्यसमाज को जनप्रिय बनाया । स्वामी जी अपनी सेवाओं के लिये आर्य पुरुषों के लिये सदा स्मरणीय एवं बंदनीय रहेंगे ।



हा स्वामी भ्रुवानन्द सरस्वती !

पंच तख निर्मित शरीर से नासा तोडा—
 आर्य-वगत् से हाय अधानक मुख को मोड़ा ।
 बने चूरिया से घुरेन्द्र गुब पववी पाई—
 ब्रह्मचर्य की शलक रही वेहरे पर छाई ।
 बलितों पर करते दया हीनों के अवतार ये—
 रहे मधुर भाषी सवा रवागी बहुत उदार थे ।
 बवानन्द के मिशन हेतु तुम सब कुछ छोडा—
 बने न कभी गृहस्थ मोह का बन्धन तोडा ।
 काम कोष की गती न तुम तक गति कर पाई ।
 होये बड़े प्रचार यही धुनि रही समाई ।
 छन्नत भाल विशाल उर उपकारी विद्वान् ये—
 न्याय-शास्त्र में थे निपुण सबको एक समान थे ।
 साधु आश्रम बुझी विकल ब्रह्मचारी सारे—
 दूइत आँसे काड भाज तुम कहां सिचारे—
 कहां पर लगी समाधि कहां रत हुए योग मे—
 काली सरिता आज रो रही है बियोग में ।
 शिष्य सर्वबानन्द के आज सवा को तो गये—
 'सरस' मातृ नृ खोजती लाल तपस्वी लो गये ।
 —बैद्य राजबहादुर आर्य 'सरस'

भ्रुवानन्द

धर्म के धनी थे भ्रुवानन्द भ्रुवतारा सम,
 अपने सिद्धांत की अटलता बिला गये ॥
 आजम्भ ब्रह्मचर्य व्रत साधना के साधन सा,
 कीर्ति कोनुदी को कुज कुज में बिला गये ॥
 अपनी तेजस्विता निर्माकता प्रचार शैली,
 सगठन की क्षमता से सेनानी कहा गये ॥
 विश्व कल्याण हित मां भारती का बरब पुत्र,
 नदबर काया मानव सेवा में लया गये ॥
 घुरेन्द्र शास्त्री से भ्रुवानन्द स्वामी बन,
 छोड मोह समता कीबल्य में बिला गये ॥
 —सूर्यप्रकाश (जीनपुर)

हा ! पूज्य स्वामी श्री भ्रुवानन्द जी महाराज !

(विद्याभूषण श्री ओंकार मिश्र 'प्रणव' शास्त्री, एम० ए०, आचार्य, फीरोजाबाद)

आर्य जगत् के प्रसिद्ध कविवर प० श्री प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न अक्षमेर ने एक कविता लिखी है—“रहेंगे न हम और सुख साज सारे मगर सृष्टि का चक्र चलता रहेगा।” गीत की यह प्रथम पंक्ति सत्सार की नश्वरता का मानो सजीव चित्र उपस्थित कर रही है। सत्सार से आये दिन कितनी विभूतिया उठती जा रही हैं किन्तु सृष्टि का चक्र अनावि काल से चल रहा है, और चलता रहेगा। विधि का विधान अत्यन्त कठोर एव निश्चित है कौन जानता था विगत जून के उस २९ दिनांक को जिसने कि हम से आर्यजगत् के प्रसिद्ध महान् सुमन्वित्तक आचार्य ब्रह्मचारी पूज्य स्वामी भ्रुवानन्द जी को एक क्षण में विद्युत् कर दिया।

मैं पूज्य स्वामी जी को ३५ वर्ष से जबकि वे राजगुरु प० धुरेन्द्र शास्त्री के रूप में विख्यात थे, जानता था। सन् १९३१ की बात है, जबकि मैं देशबन्धु विद्यालय नहर पुल बरौठा में कुछ दिन पढ़ने के उपरांत साधुआश्रम पर प्रविष्ट हुआ। उस समय आश्रम पर पूज्य प० श्री इन्द्रदेव जी व्याकरणाचार्य मुख्याध्यापक तथा पूज्य स्वा० श्री पूर्णानन्द जी सरस्वती मुख्याधिष्ठाता थे। मैं साधुआश्रम पर लगभग ३ वर्ष तक पड़ा। इस समय में अनेक बार राजगुरु जी के दर्शन किये। वे अत्यन्त स्वस्थ, स्वच्छ एव प्रसन्न चित्त रहने वाले व्यक्ति थे। ब्रह्मचर्य से परिपूर्ण उनका मुख मण्डल देवीप्यमान रहता था। उनकी भुजायें हाथी की शुष्क के समान एव जघायें कवली स्तम्भ के समान ही थीं। व्यायाम में अत्यन्त रुचि थी। वे स्वच्छता के तो मानो साक्षात् अवतार थे। यहां तक कि बस्त्रों के साथ लुझाऊं तथा छाने की भी धोते थे। जिस कमरे में वे जाकर रद्द करते थे वह भी अत्यन्त साफ रहता था। उनकी हम लोग सभी छात्र “शास्त्री” जी के नाम से जानते थे। और जानते थे बड़े स्वामी जी (पूज्य स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज) के प्रधान शिष्य के रूप में। मेरे सहपाठियों में से वे उस समय प० श्री शानेन्द्र शर्मा शास्त्री

अम्बाला इनके अनुज स्व० प० देवेन्द्र शर्मा काव्य ध्या० तीर्थ, आचार्य प० विश्वबन्धु जा शास्त्री, प० जयदेव शर्मा बँध, पूज्य प० शिवकुमार जी शास्त्री तथा स्व० प० शिववत्स जी शास्त्री हम लोगों से स्तोनियर थे।

हम लोगों को एक बार पूज्य बड़े स्वामी जी ने ‘तर्क सग्रह’ पढ़ाना प्रारम्भ किया। एक दिन स्वामी जी ने पढ़ाते हुए किसी प्रसंग में कहा—वेस्तुते हो इस ‘धुरेन्द्र’ को जब यह मेरे पास पहिले पहल मयुरा में आया था तो इसका नाम ‘धूरिया’ था और यह निरक्षर था तुम लोग भी इसकी तरह भ्रमपूर्वक पढ़ोगे तो शास्त्री बन जाओगे।

बस उसी दिन से ‘शास्त्री जी’ का जीवन हम लोगों के लिए अनुकरणीय बन गया। वे जब कभी आश्रम पर आकर रहते थे तो कुछ न कुछ बिन मर करते ही रहते थे। कभी वहाँ झाड़ू लगाते, कहीं घास छीलते, कहीं कोई बूझ लगाते, या कुएँ की सफाई करते। शास्त्री जी का श्रम एव तपोनिष्ठ जीवन हम छात्रों को सर्वत्र प्रेरणा देता रहता था। वे हम सबको व्यक्तिगत रूपेण भी पहिचानते थे। यही जान पहिचान अभी तक चली आ रही थी। उसी के आधार पर आश्रम से घृयक् हो जाने पर भी जब कहीं ‘शास्त्री जी’ मिल जाते थे तभी कुशक मगल पूछने के बाव दो प्रश्न अवश्य करते थे। १—सन्ध्या दोनों समय करते हो। २—व्यायाम रोज करते हो। इन प्रश्नों का यदि सन्तोषजनक उत्तर उनकी मिल जाता तो वे प्रसन्न होते थे। यदि कभी उत्तर में कुछ कमी होती, तो तत्काल उपवेश देने लग जाते थे।

इस लेख को लिखते समय उस समय का भी दृश्य स्मृति पट पर आ रहा है, जबकि ‘शास्त्री जी’ आश्रम पर ही पुण्य इलोक स्व० पूज्य स्वामी श्री आत्मानन्द जी महाराज से सन्धास आश्रम की वीक्षा लेकर धुरेन्द्र शास्त्री से स्वा० भ्रुवानन्द बने। उस समय आश्रम के पूर्ण समारोह के साथ होने वाले इस महोत्सव की अपूर्व शोभा थी। मध्य यशशाला से स्वा० आत्मानन्द जी महाराज,

स्वा० ब्रह्मानन्द जी बम्बई महाराज, आचार्य १० शङ्कर-
बेध जी बंधाकरण, स्व० पूज्य १० ब्रह्मवत्त जी जिज्ञासु
आचार्य, पूज्य ३० अखिलानन्द जी महाराज विराजमान
थे। पूर्ण विधि विधान के साथ जिस समय पूज्य स्वा०
आत्मानन्द जी महाराज के पुण्यादेश से डा० प्रेमदत्त
शास्त्री मुख्य कार्यकर्ता ने गैरिक वस्त्र एव कमण्डलु उठा-
कर उनको समर्पित किया, तब उपस्थित जनता की
आँसों में आँसू छलछला आये। उस समय पूज्य १० ब्रह्म-
वत्त जी जिज्ञासु तो कण्ठाघरोध होने के कारण 'ये हमारे
गुरु का गुरुद्वारा है 'इन शब्दों के अतिरिक्त कुछ बोल
भी न सके। कलकत्ता निवासी १० अयोध्याप्रसाद जी
बैदिक मिशनरी ने कहा कि हम तो सैंकिण्ड इयर में ही
रह गये और 'शास्त्री जी' तो फोरथइयर में पहुँच गये।
एकबार जनता उस समय फिर भाव विमोह हो उठी
जबकि आर्यजगत के प्रसिद्ध नेता म० कृष्ण जी ने स्वा०
ध्रुवानन्द जी के चरण छूकर बन्दना की।

कावाय वस्त्रधारी बम्बई कमण्डलु हाथ में लिए हुए
ध्रुवानन्द सरस्वती बोक्षा के अन्तिम भाग का समापन
करने के लिये जिस समय काली नदी के पुल के नीचे
पहुँचे तो एक अनोखा समारोह था। ऊपर जनसमूह
उमड़ रहा था, तो कालीनदी की असह्य लहरें तबागत
स्वा० ध्रुवानन्द का स्वागत करने के लिये उछलती-कूवती
हुई मन्द ध्वनि के साथ लोटपोट हो रही थीं। विचार
आता है कि काली नदी की लोल लहरिया तब से अब
तक पता नहीं कितनी बार नाचती विरकती हुई चली जा
रही हैं, और विधाँव गति से यह क्रम प्रचलित रहेगा।
नदी का पुल मोन समाधि में अब तक लीन है, काली
नदी के दोनों किनारे भी ज्यों के त्यों हैं, जिन पर कि
उनके प्यारे ध्रुवानन्द प्रातः साथ भ्रमण किया करते थे।
आश्रम के वृक्ष भी ज्यों के त्यों लहरा रहे हैं किन्तु अब
बहु चमकता हुआ मुखमण्डल देखने को नहीं मिलेगा।

स्वामी जी महाराज में एक विशेष गुण यह था कि
जो इनका परिचित होता था उसको वे भूलते नहीं थे,

चाहे कितना ही समय व्यतीत हो जाये। एक बार बात
अलीगढ़ आ० स० मन्दिर की है और उस समय की है—
जबकि स्वामी जी अफ्रीका की प्रचार यात्रा से लौटे थे।
उस दिन रविवार था। सत्सग में स्वामी जी महाराज
का व्याख्यान भी हुआ। व्याख्यान के उपरान्त आर्यपुरुषों
की भीड़ ने स्वामी जी को घेर लिया। कुछ विशिष्ट
पुरुषों से स्वामी जी बातलाप करने लगे। उसी समय मैंने
चरणस्पर्श कर नमस्ते किया। तुरन्त बोल उठे, अरे
'प्रणव' अच्छा कुशल पूर्वक हो। मैंने कहा—आपका
आशीर्वाद है।

भारतीय वेशभूषा के वे कट्टर पक्षपाती थे, आश्रम
की गत स्वर्ण जयन्ती पर मैं चूड़ीदार पाजामा तथा शेर-
बानी पहिने ही चला गया और स्वामी जी को जाकर
प्रणाम किया तो मुन्कराकर बोले—आइये मुन्शी जी।
और कहने लगे—गण्डित होकर ये मुन्शियों की वेशभूषा
क्यों रखते हो ?

स्वामी जी समाज के व अपने प्रियजनों के जिस
कार्य में जुटते थे उसमें प्राणपण लगा देते थे। गत चुनाव
में अल्ल गढ़ क्षेत्र से १० शिवकुमारजी शास्त्री ने एम०पी०
पद के लिये चुनाव लड़ा था उसमें स्वामी जी महाराज
ने बड़ा परिश्रम किया। एक वोट के लिये वे कितने
लालायित थे। एक दिन कार्यालय में बैठे बैठे कहने लगे
कि इगलास के पास किसी ग्राम में मेरे मामा रहते थे उन
के नाम और ग्राम का पता लग जाये तो कुछ वोट तो
मिल ही जायेंगे। उस समय पूज्य १० शिवकुमार जी
शास्त्री ने सकेत किया और धीरे से कहा देखो स्वामीजी
की बिनता। ऐसा था स्वामी जी महाराज का अपनी के
प्रति अपनत्व।

आज आर्य जगत् के सर्वोच्च सेनानी पूज्य स्वामीजी
महाराज की केवल स्मृतिया शेष हैं। अब उनके नाम के
साथ स्वर्गीय शब्द जुड़कर कितना लुब्धायक प्रतीत होता
है, यह मुझ जैसे मादुकमत्तो का हृदय ही जानता है।

माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्याः अयं १२।१।१२

मातृभूमि पृथिवी के पुत्रो मातृभूमि हित बलि हो जाओ।

मातृभूमि को तन, मन, धन अर्पण कर जीवन सफल बनाओ ॥



पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री के दर्शन मात्र से आर्यसमाज की ओर आकृष्ट

(ले० - श्री रामस्वरूप 'सिद्धान्त शास्त्री' मूलपूर्ण मन्त्री आर्यसमाज, शाहपुरा, रागस्थान)

अप्रैल सन् ३५ की बात है जिस समय मैं ७वीं कक्षा में पढ़ता था प्रातः ७।। बजे पाठशाला में पहुँचे जा रहा था, सामने से आते हुये एक मध्य वैदोप्यमान महा-पुरुष जिनके शिर पर काले केश, पंरो में काले रंग के जूते, सफेद कुर्ता एवं सफेद धोती पहने, हाथ में काला छाता, मस्तक पर यज्ञ की काली बिन्दु, हाथ में मुनहरी घड़ी लगाये द्रुत गति से आते हुये को देखा। शिष्टाचार के नाते हमने नमस्ते किया तो उत्तर मिला कि "बच्चे लोगों नमस्ते" यह कह कर चले गये और हम भी पाठ-शाला चल बिये। शाम को भी उसी सत्रक पर हमने उनको पुचरते देखा। पुछताछ के अनन्तर हमें यह मालूम हुआ कि वे महापुरुष शाहपुरा के पुत्रराज महोदय श्री सुवर्शन बेव जी को वैदिक धर्म की वीक्षा देने हेतु बुलवाये गये हैं और प्रातः साय उमीदसागर जो यहाँ से ४ मील दूरी पर है भ्रमणार्थ जाया करते हैं। यह भी मालूम हुआ कि प्रत्येक बुधवार को आर्यसमाज भवन में साप्ताहिक अधि-वेशन के समय इनका उपवेश होता है। यह जानकर हम भी अपने सहपाठियों के साथ प्रत्येक बुधवार (राजकीय अबकाश) को आर्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशन में भाग लेने लगे और यह भी अनुभव करने लगे कि जिस दिन शास्त्री जी सत्संग में उपवेश देते थे उस दिन हमें विशेष आनन्द प्राप्त होता था।

उन्हीं दिनों आर्यसमाज के सहस्यगण पं० धुरेन्द्र जी को समाज के प्रधान निर्वाचित करना चाहते थे, परन्तु शक्ति जी ने हृत्स पत्र को अस्वीकार करते हुए केवल अन्तरंग सबन्ध ही होना स्वीकार किया एवं आर्यसमाज शाहपुरा की ओर से आर्य प्रतिनिधि समाज रागस्थान व मालवा प्रांत में भेजे जाने वाले प्रतिनिधि के रूप में शास्त्री जी अब्धय निर्वाचित होते थे और आर्यसमाज शाहपुरा का

प्रतिनिधित्व करते थे।

इन्हीं दिनों हमने यह भी सुना कि वर्तमान राजाधि-राज श्री उन्मेदासह जी इनकी विद्वत्ता की ओर आकृष्ट होकर पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री को राजकीय सम्मान के साथ "राजगुरु" की उपाधि प्रदान कर रहे हैं।

सन् १९३५ से सन ३८ तक राजगुरु जी शाहपुरा में रहे और विशेष कार्यबश आर्यसमाज के प्रचारार्थ बाहुर भी पदार्पण करते रहते थे।

सन् ३९ में हमने सुना कि आर्यसमाज की ओर से एक बहुत बड़ा प्राब्योलन निजाम सरकार के विरुद्ध हैबर-जाव में चलाया जा रहा है जिसके सर्वाधिकारी महात्मा-नारायणस्वामी जी एवं द्वितीय वेश मत्त कु० चावकरण जी शारवा अपने बल बल के साथ जेलों में चले गये हैं और तृतीय सर्वाधिकारी राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री निर्वाचित हुए हैं और १५०० मनुष्यों के साथ स्पेशल ट्रेन द्वारा अजमेर से रवाना होकर निजाम सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह करने पधार रहे हैं। इस स्पेशल ट्रेन में सम्मिलित होने के लिये शाहपुरा के १२ बीर सिपाही अपने सेनाजी श्री किस्तूरचन्द्र जी तीशानी बाल के साथ हैबरबा.व में सत्याग्रह करने पधारे थे।

सत्याग्रह का पूर्ण विवरण पढ़ने के लिये उन्हीं दिनों मैं रात्रि को आर्यसमाज भवन में शोलापुर से निकलने वाले 'दैनिक विभिन्नजय' पत्र को पढ़ने जाया करता था। उन दिनों आर्यसमाज के मन्त्री श्री विश्वेश्वर जी नार-डाज ने मुझे आर्यसमाज का सदस्य बनने की ओर प्रेरित किया और मैंने सहर्ष स्वीकार किया। तभी से मैं आर्यसमाज के प्रत्येक कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लेने लगा हूँ। मेरी सक्रियता को देखकर सन् १९५१ के निर्वाचन में मुझे अन्तरंग सदस्य, सन् ५२ में द्रव्य निरीक्षक एवं सन् ५३ में

मुझे आर्यसमाज के मन्त्री पद पर निर्वाचित कर दिया।

आर्यसमाज शाहपुरा का साधारण अधिवेशन वि० १-४-५७ को हुआ जिसकी अध्यक्षता तत्कालीन सार्व-वैशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान राजगुरु प० घुरेन्द्र जी शास्त्री ने की। उस निर्वाचन में पुन मुझे ही आर्य-समाज का मन्त्री निर्वाचित किया। निर्वाचन के अनन्तर शुभाशीर्षा के रूप में मेरे लिए राजगुरु जी ने 'मोली गाय' शब्द का प्रयोग किया। यह बरवान मुझे अभी तक प्राप्त है। इन पत्तियों के लेखक को यह अवसर भी प्राप्त हुआ जब राजगुरु प० घुरेन्द्र जी शास्त्री स्वामी भ्रूवानन्द जी बनने जा रहे थे। अक्टूबर सन ५४ के आयमित्र में जब हमने यह समाचार पढ़ा कि 'आर्य जगत् की आशाओं के केन्द्र सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान राज गुरु प० घुरेन्द्र जी शास्त्री वि० ७ नवम्बर सन् ५४ को हरदुआगञ्ज साधु आश्रम के उत्सव पर सन्यास आश्रम में प्रविष्ट हो रहे हैं' पढ़कर प्रसन्नता का पारावार न रहा। उस समय मैं आर्यसमाज का मन्त्री था और शाहपुरा की ओर से सन्यास ग्रहण के लिये वस्त्र एवं लबाड़ें लेकर साधु आश्रम पहुँचा। मेरे बहा पढ़चने पर उपस्थित विद्वत् समाज में राजगुरु जी ने आय राज परिवार एवं आर्य-समाज शाहपुरा का जो घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है प्रदर्शित किया और यह भी घोषणा की कि मैं कल होने वाले सन्यास सत्कार में शाहपुरा से आई हुई लबाड़ें को पहन कर ही यज्ञशालाओं में प्रवेश करूँगा और हुआ भी ऐसा ही।

मेरे लिये बहू दृश्य अभूतपूर्व था जब स्वामी जी ने सन्यास ग्रहण किया। उसके अनन्तर स्वामी जी को कई मानपत्र भेंट किये गये जिनमें शाहपुरा द्वारा समर्पित मानपत्र उपस्थित जान समुदाय में मैंने पढ़कर सुनाया।

मानपत्र के प्रत्युत्तर में पूज्य स्वामी जी ने जो शब्द शाहपुरा के लिये प्रयुक्त किये वे अभी तक मेरे कानों में उधों के त्यों गुंजार कर रहे हैं। स्वामी जी ने कहा 'महावि स्वामी बयानन्द जी मुहाराज ने जिन जिन नरेशों को वैदिक धर्म की ओर आकृष्ट किया उनमें शाहपुरा नरेश श्रीमान् राजाधिराज श्री नारहरसिंह जी प्रमुख थे और मेरा भी सोभाग्य है कि उन्हीं के पौत्र युवराज श्री सुवर्षान देव जी को मैंने दीक्षा दी।'

सत्कार के अनन्तर मैंने स्वामी जी को शाहपुरा पधारने के लिए आमन्त्रित किया और उन्हींसे सहर्ष स्वीकार भी कर लिया। शाहपुरा पधारने पर उपस्थित सभी आर्य महानुभावों ने भोजन का निमन्त्रण दिया तो पूज्य स्वामी जी ने मेरी ओर संकेत कर कहा कि भोजन इसके यहाँ ही करूँगा क्योंकि यह मेरे वहाँ (साधुआश्रम) उपस्थित हुआ है परन्तु शर्त यह है कि भोजन में होना चाहिये चूरमा-बाटी और दाल (यह भोजन स्वामी जी को विशेष प्रिय था।) स्वामी जी के आदेशानुसार ही भोजन कराया गया तभी से स्वामी जी के और मेरे अति निकट सम्बन्ध हो गये ऐसा मैं स्वयं अनुभव करने लगा।

इसके अनन्तर जब-जब भी स्वामी जी का कार्यक्रम शाहपुरा पधारने का होता तो मुझे ही आर्यसमाज की ओर से अजमेर तक अगवानों के लिए जाने का अवसर मिलता था।

सन् १९५९ में हीरकजयन्ती महोत्सव आर्यसमाज शाहपुरा के अवसर पर पूज्य स्वामी जी को अफ्रीका में निमन्त्रण पत्र भेजा परन्तु उन्हीं दिनों वे बहा विशेष रूप से सगठन का कार्य कर रहे थे, अतः शाहपुरा पदार्पण कर सकने में असमर्थता प्रकट की और शुभ कामना का संदेश भेज दिया।

विदेश यात्रा के पदचात् नवम आर्य महा सम्मेलन के अवसर पर उपस्थित शाहपुरा के आर्यों का समूह जब बयानन्द भवन देहली में स्वामी जी से मिला तो उस समय पू० स्वामी जी ने हमारे निमन्त्रण पर शाहपुरा पधारना स्वीकार किया। कार्यक्रम के अनुसार समय पर मैं अजमेर उपस्थित हो गया। माडल स्टेशन पर श्रीमान् राजाधिराज साहब सुवर्षानदेव जी सपरिवार स्वागत हेतु पधारे थे। शाहपुरा पहुँचने पर बस स्टैण्ड के वहाँ उपस्थित हजारों की जनसंख्या ने पू० स्वामी जी का जो सत्कार किया वह अवर्णनीय है। फूलमालाओं से आच्छादित स्वामी जी व राजाधिराज साहब के दृश्य को देखकर आर्य नरनारियों ने जिस श्रद्धा का परिचय दिया वह इस लेखनी से नहीं लिखा जा सकता। तदनन्तर राज महलों के बीच से विशाल जनसमूह के बीच में स्वामी जी को मानपत्र अर्पित किया और पूज्य स्वामी जी ने उपस्थित जनता को धन्यवाद देकर मानपत्र का प्रत्युत्तर दिया और

समी उपस्थित जनसमुदाय से अमायाचना की। शाहपुरा के लिए यह स्वामी जी का अंतिम सम्मान रहा।

गत वर्ष आयसमाज शाहपुरा द्वारा भेजा गया एक प्रतिनिधि मण्डल श्रीमद्धान व महिला शिक्षण के द्र की सहायता हेतु कलकत्ता गया हुआ था वहा पर पूज्य स्वामी जी के सत प्रय नो द्वारा प्रतिनिधि मण्डल को पूण सफ लता प्राप्त हुई है।

पूज्य स्वामी जी का आयसमाज शाहपुरा से पत्र व्यवहार द्वारा सम्पर्क चला आ रहा था। उनका अंतिम पत्र बम्बई से दि० २५ जुलाई का लिखा हुआ म श्री जी आय समाज को प्राप्त हुआ जिसमे आयसमाज के नवनिर्वाचित

अधिकारियों को शुभ कामना एवं समी आय व धुओ को नमस्ते लिखा है। दि० ३० जुलाई को दैनिक हि दुस्तान पत्र मे जब मैने यह समाचार पढ़ा कि स्वामीजी की दिव्य विमूर्ति सदा के लिये अस्त हो गई तो मेरा गला रुध गया आँसो से अश्रुधारा बह पड़ी और करीब १० मिनट तक आँसो बन्द करके अश्रुओ को पोछते पोछते स्वामी जी के समी सस्मरणो को पुन बोहराने लगा और यह अनुभव करने लगा कि अब हमे इस ज म मे स्वामी जी के वशन न ही सकगे। इस प्रकार मन को समझाकर सा त्वना बी। प्रमो! दिव्यात्मा को श्राति वे। ओ३म शम



रक्षा कोष

बि बकी श्रीमद्दयामव उ०मा०वि० (फतहपुर) की ओर से २००) ६० स्टेट बक ड्राफ्ट द्वारा तथा ५०१) जिला विद्यालय निरीक्षक द्वारा सुरक्षा कोष के लिए सग्रह कर भेजे गये। विद्यार्थियों और शिक्षकों ने अपने पास से यह धन दान दिया है।

आवश्यकता है

महिला कालेज, पोरबन्दर के लिए

१-गुजरात यूनिवर्सिटी से सम्बद्ध छात्रावास युक्त महिला भाट स कालेज के लिये सुयोग्य अनुभवी महिला प्रिंसिपल की। प्रोफसर स्तर की योग्यता होना जरूरी है। आयसमाजी विचार की महिला को प्राथमिकता दी जायगी।

२-गुरुकुलीय पद्धति पर चलनेवाले उक्त महिला कालेज के लिए सुयोग्य मुशिक्षित तथा अनुभवी आध्यापक (होस्टल बाउंड) की। आयसमाजी उम्मीदवार को विशेषता दी जायगी।

—ध्यवस्थापक आय कन्या गुरुकुल पोरबन्दर सीराष्ट्र

शक्ति संचय के लिए आज रौ ही सचन करें

गुरुकुल पोरबन्दर

लखनऊ के सोल एजेंट—ए० ए० मेहता एण्ड कम्पनी
श्रीराम रोड लखनऊ

श्रद्धांजलि

ओ धरती के "ध्रुवानन्द" तुम ध्रुवानन्द मे समा गये ।
 ओ ! जगती के महापुरुष तुम महाप्राण मे बिला गये ॥
 विगत मास वे दुर्बल होने भी गोधमपुर आये थे ।
 उत्सुक जनता ने दशन कर श्रद्धा मुमन चढाये थे ॥
 कम शील मानव को बनने के सिद्धांत बताये थे ।
 होगी प्रगति समाजो की तब ऐसे मन्त्र सुनाये थे ।
 अपने जीवन की नैराशा हम सबको वे बता गये ।
 ओ मावस की अधियारी ! तू क्यों ऐसी विकराल हुई ।
 पृथ्वी के पावन पुरुषों के प्राणों की तू काल हुई ।
 कितनी जीवन ज्योति बुझाई फिर भी नहीं निहाल हुई ।
 किन्तु सपूतो को छोकर पृथ्वी माता कगाल हुई ॥
 वे तो अपनी अमर ज्योति का जग मे दीपक जला गये ॥
 श्चषिबर "वयानन्द" को तू ने दीपावलि बनकर लाया ।
 आसादी की अमा निशा बन ध्रुव.नन्द जी को लाया ॥
 किन्तु न तूने स्वच्छ चादनी का किंचित वैभव पाया ।
 नहीं प्रलय तक भी पाने का अशवांसन तूने पाया ॥
 सूर्य चन्द्र से ऊंचे देखो "ध्रुवानन्द" ध्रुवलोच गये ।
 चोरो को तू स.हस देती धनिको का धन हरण करे ।
 बीन बरिब्र दुखी मानव के प्राणो का भी हरण करे ।
 मूले नटके पथिको का मारग भटका पथ भ्रष्ट करे ।
 जो तेरा अनुकरण करे उनका भी जीवन नष्ट करे ।
 अगी ! कलमु ह्री वे तो तेरा भी गुण गौरव बढ़ा गये ॥
 उनके उच्चारणों का अब जग सोपान बनायेगा ।
 जित पर चटखर मृ-यु लोके से स्वर्ग लोके को जायेगा ॥
 युग-युग तक ये निधन दिवस अब आयसमाज मनायेगा ।
 उनके पद चिन्हो पर चल कर उच्च भविष्य बनायेगा ॥
 "कृष्ण!" जग को जीवन देकर जीवन लीला दिला गये ।
 महिला आयसनाज बरोठा भी अति शोक समती है ।
 पूज्यपाद श्री "ध्रुवानन्द" को श्रद्धांजली चढाती है ।
 उनकी रमृति इस हृदय पटल पर अंकित होती जाती है ।
 कौन कुशल मगल पूछेगा कौन सुनेगा पाती है ।
 सन्त सबदानन्द आश्रम की वड़ती शोभा घटा गये ॥
 कृष्णाकुमारी, बरोठा (अलीगढ़)



आर्यममाज के तपस्वी, त्यागी और निर्भीक मूर्धन्य नेता—

श्री स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

(ले०—श्री प० कृष्णदत्त जी आयुर्वेदालकार, फीजाबाद)

रग लाती है हिना पत्थर पे पिस जाने के बाद ।

सुबर्ण होता है इन्सा आफते आने के बाद ॥

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी का जन्म सन् १८८२ मे पानी गांव मयुरा मे हुआ था और मृत्यु २९ जून सन् १९६५ ई० को बछई मे हुई जिससे सारे आर्य-जगत् मे शोक छा गया । जब मैंने समाचार पत्रों द्वारा यह जाना कि दिनांक २९ जून को बछई मे आर्यसमाज के प्राण श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का स्वर्गवास हो गया तो मुझे वह दिन याद आ गया जबकि देहली मे श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का सन् १९२६ ई० मे बलिदान अब्दुल रशीद नामक एक घर्मान्ध मुसलमान के द्वारा हुआ था । उस समय गोहाटी मे अखिल भारतीय कांग्रेस महासभा का वापिक अधिवेशन हो रहा था जिसमे महात्मा गांधी उपस्थित थे उन्हें जैसे ही पता लगा कि श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान हो गया तो देहली जो तार उन्होंने दिया वह यह था—

“As a soldier he lived and as a soldier he died in the battlefield”

अर्थात् “एक सैनिक के रूप मे उन्होंने जीवन व्यतीत किया और एक सैनिक के रूप मे ही प्राण युद्ध-क्षेत्र मे विसर्जित हुए ।” इसी प्रकार श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने यद्यपि बहुत उन्नति कर ली थी और वर्तमान काल मे आर्य जगत् के रूप से बड़े नेता थे परन्तु उन्होंने कभी अपने आप को नेता नहीं समझा, सर्वदा एक सैनिक की तरह जहां उन्होंने अपनी आवश्यकता समझी, पहुंच गये और ऐसा उत्तम कार्य किया कि आर्यसमाज का मस्तक ऊंचा हो गया । आर्यसमाज की घुन उन पर हर समय सवार रहती थी । साधारणवस्था मे भी वह आर्यसमाज और मर्हपि दयानन्द को नहीं भूलते थे । वैदिक धर्म से उनको अनन्य प्रेम था और उसकी रसा के लिए तन,

मन और धन सभी कुछ उन्होंने न्योछावर किया । उनके साधन बड़े परिमित थे फिर भी अपने उद्यम, उत्साह एव प्रतिभाशाली बुद्धि से सबको बता दिया कि मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का विधाना है । (Man is the master of his own destiny) जैसा हम चाहे वैसा हम अपने जीवन को बना सकते है । वैदिक आदर्श बहुत ऊंचे है उन पर प्रत्येक व्यक्ति आसानी से उल नहीं सकता । श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने उन पर चलकर एक आदर्श उपस्थित किया है । प्रत्येक आर्यसमाजी का कर्तव्य है कि वह उनसे प्रेरणा प्राप्त करके अपने जीवन को ऊंचा बनावे । तभी वह जनता की सेवा करने के योग्य भी बन सकता है । यह स्मरण रहे कि बुझे दीपक से कोई दीपक जल नहीं सकता । अतः शरीर, मन और आत्मा को शुद्ध भोजन, व्यायाम, स्वाध्याय एव सदाचार से पुष्ट करना चाहिए तभी हम ऋषि ऋण से मुक्त हो सकेंगे और श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी के जीवन से शिखा प्राप्त कर सकेंगे । उनमे अनेक गुण थे जिनमें से कुछ पर यहा प्रकाश डाला जाता है । मुझे कई बार उनके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और प्रत्येक बार दर्शन करने के पश्चात् मेरी श्रद्धा बढती ही गई । हमे दुख इस बात का है कि इस समय आर्य जगत् मे उनके जैसा कोई प्रभावशाली नेता नहीं जो हंगारा मार्ग दर्शन कर सके । खुशी इस बात की अवश्य है कि हमारे नेता श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने वह उच्च कोटि की सफलता प्राप्त की है जो सबको प्राप्त नहीं होती । इस ससार मे सफल होना सब चाहते हैं पर यह सौभाग्य सब को प्राप्त नहीं होता । स्वामी ध्रुवानन्द एक आदर्श सन्यासी थे । वीतराग और आजन्म ब्रह्मचारी थे ।

१—आदर्श गुरु के आदर्श शिष्य—आदर्श गुरु श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के आप आदर्श शिष्य थे ।

उन्होंने अपने सब ज्ञान और विद्या से पूर्ण करके इनको आर्यसमाज की सेवा के लिए तैयार किया था। श्री स्वामी भ्रूवानन्द जी को हर समय अपने गुरु का ध्यान रहता था और जब कभी अवसर आता था बड़े सम्मान से उनका नाम लेते थे। आदर्श शिष्य बनकर जो सुन्दर कार्य वे कर गये हैं वह आर्यसमाज के इतिहास में स्वर्ण-क्षरों में अंकित रहेगा। कवि अकबर ने लिखा है कि—

“निगाहे कामिलो पर पड ही जाती है, जमाने की।
कही छिपता है अकबर, फूल पत्तो मे निहौ होकर ॥”

जिसमें गुण होना है वह प्रगट हो ही जाता है। शब्द होता है तो मखिया आ ही जाती है।

२—बाल्य-काल में बालक पर जो सत्कार पड जाते हैं वे अमिट रहते हैं। श्री स्वामी भ्रूवानन्द जी का पहला नाम श्री १० धुरेन्द्र शास्त्री था। आप व्याकरण के आचार्य तथा पददर्शनों के पण्डित थे। ऋषिकृत ग्रन्थों में आपकी अनन्य श्रद्धा थी उनके आप अद्वितीय विद्वान् थे। आपके व्याख्यान बड़े हृदयग्राही, रोचक, सारगर्भित और प्रभावशाली होते थे जनता इत्तचित्त होकर बड़ी श्रद्धा से आपके मुख में निकला एक-एक शब्द सुनती थी और प्रशंसा करती थी। भाषण देने की शैली आपकी बहुत ही उत्तम थी जिस विषय पर बोलते थे उसका जीवित जागृत चित्र खीचकर सामने ऐसा खडा कर देते थे जैसे कुशल चित्रकार चित्र खीचकर सामने रख देता है।

३—हैदराबाद सत्याग्रह के दिनों में सन् १९३५ ई० में जिस बीरता और साहस से आपने आर्य जगत् का नेतृत्व किया वह भुलाया नहीं जा सकता। आप निर्भीक नेता थे निजाम की जेलों में बडा कष्ट मिलाता है यह सब जानते हुए भी आप जेल जानने से घबड़ाए नहीं। अपितु अपने साथ हजारों आर्य समाजियों को ले जाकर हैदराबाद की जेल भर कर आर्यसमाज के गौरव को बढ़ाया और निजाम हैदराबाद पर आर्यसमाज की शक्ति की धाक जमा दी और वह भी समझ गया कि इनसे मोर्चा लेना भिड के छत में हाथ डालना है। “It is a hard nut to crack”

४—श्री स्वामी भ्रूवानन्द जी सरल जीवन और उच्चचिन्तार (Simple living and high thinking) की पूर्ति थे। दुनिया साजी या मक्कारी आपको

नहीं आती थी आप बाहर भीतर एक से थे। धर्म शास्त्रों लिखा है कि “मनस्येक बचस्येक कर्मण्येक महात्मनाम्” अर्थात् मन बाणी और कर्म तीनों में जिनके एकता होती है वे महात्मा कहलाते हैं आप वस्तुतः महात्मा कहलाने के योग्य थे।

५—सयमी और अनुशासन प्रिय—बहुधर्म के नियमों का वृद्धता से पालन कर आपने सुन्दर चरित्र का निर्माण किया था आपका चेहरा तेजस्वी था उस पर लावण्य और कान्ति दिखाई देती थी, सज्जनों के मित्र एव दुर्जनों के शत्रु थे। अनुशासन के मानने वाले थे अनुशासन को तोड़ने वाले वे प्रत्येक कार्य के विरुद्ध थे। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रवेश के बृहदधिदेशनों में सर्वथा वे इस बात का ध्यान रखते थे कि कोई गडबड या अशुभस्थान न हो और सब कार्य नियमानुसार अनुशासन के अन्तर हो। वे चाहते थे कि आर्यसमाज में बलबन्दी न हो और सब मिलकर वैदिक धर्म की सेवा करके महर्षि के ऋण को उतारने का प्रयत्न करें।

६—बिनोब प्रिय और प्रसन्न बदन—जब वह प्रसन्न होते थे तो बिनोब की बातें भी करते थे लेकिन इस बिनोब में कोई अशिष्टता न होती थी। एक विशेषता यह भी थी कि हर समय प्रसन्न रहते थे। चेहरा मुसकराता रहता था शिष्टता सबाचार और सभ्यता के प्रतीक थे।

७—परोपकारी—इस स्वार्थी ससार में जबकि हर एक स्वार्थ में लीन दिखाई देता है श्री स्वामी भ्रूवानन्द जी ने त्यागपूर्ण जीवन व्यतीत किया है। अपने किसी स्वार्थ की पूर्ति नहीं की है। “नास्मार्थं नाऽपि कामार्थं अपभूत दया प्रति” यह बड़ी उच्च भावना है। प्राचीन ऋषि महर्षि इसी भावना से भावित होकर जनता जनार्दन का कल्याण किया करते थे। पादचार्य सभ्यता और सद्कृति ने हमारे देश में जिस स्वार्थ की बुद्धि को उत्पन्न किया है। उसके भाप सतत विरोधी थे। आपका तो कहना था कि ‘अथ निज परोवेत्ति गणना लघुचेतसाम्। उदार चरितानाम् तु बहुधैव कुटुम्बकम् ॥’

८—मधुर भाषी, सुशील और नम्र—आप जब बोलते थे तो ऐवा लगता था कि मानो मुँह से फूल सड रहे हैं। प्रत्येक शब्द चुना हुआ। मधुर, सुशीलता एव सौजन्यता को प्रकट करता था।

९-प्रभु मस्त एव आस्तिक-आप निराकार प्रभु के मस्त के और सन्ध्या प्रतिबिम्ब बड़े प्रेम से करते थे और आर्षसमाजियों को प्रति दिन दो बार प्रेम से सन्ध्या करने का उपदेश दिया करते थे ।

१०-स्वदेश मस्त-आप भारतवर्ष का राजनैतिक उत्थान भी चाहते थे । १५ अगस्त १९४७ को स्वराज्य प्राप्त होने पर जैसे सब भारतवासियों को प्रसन्नता हुई वैसे ही आपको भी हुई लेकिन जिस ढंग से कांग्रेस शासन चल रहा है और भ्रष्टाचार बढ़ रहा है उसको देखकर आपको बुल्ल होता था । आपकी हासिक इच्छा थी कि 'स्वराज्य' शीघ्र 'सुराज्य' में परिवर्तित हो ।

११-स्वच्छता प्रेमी-आप सबदा स्वच्छ कपड़े पहनते थे कपड़ों को प्रतिदिन अपने हाथ से धो लेते थे जैसे आपके कपड़े स्वच्छ थे वैसे ही आपका हृदय (अन्तःकरण) भी स्वच्छ था । ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट से आप ऊपर थे ।

१२-सुन्दर स्वास्थ्य-आपके सुन्दर स्वास्थ्य का रहस्य यह था कि आप प्रतिदिन व्यायाम करते थे और सतीगुणी भोजन करते थे । आज जो भोजन में अशुद्धता आ रही है, पढ़े लिखे बी० ए० पास मास और अण्डों का सेवन करने लगे हैं इसके आप प्रबल विरोधी थे ।

१३-परिश्रमी जीवन-यद्यपि आपने इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी और आर्य सार्वभौमिक समा के प्रधान तक हो चुके थे । (जो आर्य-जगत् में सबसे ऊँचा सम्मान का स्थान है) वे चाहते तो आराम से गद्दों पर पड़े रहते परन्तु उन्होंने सर्वदा परिश्रमी जीवन व्यतीत किया आलस्य से सर्वदा दूर रहे । और कर्तव्यों के पालन में बूढ़ रहे क्योंकि वे समझते थे कि "उद्यमेनहि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथं" ।

१४-अन्याय और अत्याचार के विरोधी-जहाँ भी सुनते थे कि अन्याय और अत्याचार हो रहा है उसके निवारण के लिए दौड़ पड़ते थे । इस प्रकार स्वामी प्र.वानन्द जी में अनेक गुण थे जिन्होंने उन्हें महान् बनाया और जिनके कारण वे एक साधारण व्यक्ति के स्तर से उठकर आर्यजगत् की शिरोमणि समा आर्य सार्वभौमिक समा के प्रधान पद तक पहुँच गए और सफलता पूर्वक सब कार्य निभाते रहे । अन्त में यही कहना पड़ता है कि—

"यो तो दुनिया के समुन्दर में कमी होती नहीं ।
लाखों मोती हैं मगर उस आब का मोती नहीं ॥



लक्ष्मणधारा

इसकी बन्द बूटें लेने से
हैजा, क्लि, इस्त, पेटदर्द, जी-मिचलाना,
पेक्सिस, लट्टी-डकारें, ददहजनी, पेट फूलना, कफ,
खाँसी, जुकाम आदि दूर होते हैं और लगाने से
पेट, भोज, सूजन, फोड़ा-फुन्गी, श्वेतदर्द, सिरदर्द, कानदर्द,
बाँतदर्द, भिड़ मक्खी आदि के काटे के दर्द दूर करने में संसार
की अनुपम महोषधि। हा जगह मिलता है ।

कीमत बड़ी शीशी २।।, छोटी शीशी १।।

रूप विलास्य कम्पनी मदानपुर

विशेष हाल जानने के लिए सूचीपत्र मुफ्त मगाइये ।

आवश्यकता

एक सुन्दर सुगील स्वस्थ गृह कार्य में वक्ष २५ वर्षीया अप्रवाल कुलुत्पन्न आर्य परिवार की एम० ए० बी० एड० उत्तीर्ण कन्या के लिये उच्च शिक्षा प्राप्त अच्छी सविस् करते हुये ३० वर्ष के आर्य परिवार के घर की आवश्यकता है । विवाह जाति बन्धन तोड़कर भी हो सकता है । दहेज के इच्छुक पत्र व्यवहार करने का कष्ट न करें ।

—श्यामलाल अप्रवाल

५६५/१४० पुरननगर जोधाखेड़ा

पो० भा० सिंगारनगर

ललमऊ

स्वा.
ध्रु
वा
नं
द
ध्रु
व
ता
रा
ब
न
आ
या
था

पिटते थे हिन्दू, सन् बजते थे न मविर्गों में,
सध्या, हवन, यज्ञ ध्वजा पर भी दिखाया था ।
रिजबी का चक्र बना करवा था अर्धवज्र,
हैवराबाद में हिन्दू वन का दिखाया था ॥
उहते थे मन्दिर हिन्दू बनते थे ईमाई यवन,
राज्य था निजाम का तुरको का सोलबाग था ।
हिन्दू हितैषी अग्य देखे जब सत्याग्रह,
आर्या की ज्योति शत्रुत्री घुरेण्ड हमारा था ॥१॥
सिन्ध की सरकार मुस्लिम लीग गवनमेण्ट बनी,
राज्य के प्रकाश पर अघकाश छाया था ।
मुनकर बनौनी अपयत्न में राज म गया ।
सिन्धी भाषा में उसे फिर से छपवाया था ॥
सत्य की सिरौही लिए स्वामी ध्रुवानन्द चले,
कराची की सड़को पर उमे बिरुवाया था ।
करके नीलाम उमे डाई मो रूपो मे,
अर्थ सन्ध्या का ध्रुव ध्वजा फहराया था ॥२॥
पानीपत मयूरा में जन्मे थे घुरेण्ड जी
सस्कृत की शिक्षा हेतु गृह को बिराया था ।
बिरजानन्द आश्रम में पाठक का रूप परि,
विद्या से नेह करित न मन जलाया था ॥
साधु सर्वदानन्द पारखी से पाला पडा
पाठक से पाठक का रूप दर्शाया था ।
माता के दशनाथ गये जब घर को वे,
पारखी ने लाकर फिर से शत्रुत्री बनाया था ॥३॥
मन्थ न्याय जयपुर में पढ करके काशी चले,
पढ दर्शनो का यहाँ ज्ञान उपजाया था ।
भारतीय हिन्दू सुडी सभा का प्रचार करके,
बँछनाव धाम में गुरुकुल बसाया था ।
शाहपुराधर्मा, कालाकार के तरेणो ने,
राजगुरु पद से सुशोभित कराया था ।
उत्तरप्रदेश आर्य सभा को सुशोभित कर,
साधवेशिक सभा की ध्वजा लहराया था ॥
मोरिशस, युगाण्डा, जमीराबाद देशो मे,
भारतीय सन्ध्या का झण्डा फहराया था ।
पाखण्ड की निशानी आये पोलपाल ज्ञानी बन,
बैदिक धरम का उन्हेँ मार्ग बिजलाया था ।
था सवाचारी आविरय ब्रह्मचारी बह,
केन्द्रबिन्दु बनकर समाज में समाया था ।
सच्चे अर्थो में आर्य जाति को जगाने हेतु,
स्वामी ध्रुवानन्द ध्रुवतारा बन आया था ॥५॥

श्री रामचरित्र बँध
उपप्रधान आ०स० बस्ती

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

गुरु-शिष्य सम्बन्ध

[ले०—श्री डा० प्रेमदत्त जी स्नातक साधु आश्रम ज्वालापुरी अलीगढ़]

बड़े स्वामी बीतराग सर्ववानन्द जी महाराज स्वयं मुगगाय करते थे, जब मैं धुरेन्द्र के पानी गाया गया तो इसे मैंने गाँव के ग्वालो का मुखिया बना देखा, और कान से ऊँचा लट्टु बाधता था। २३ वर्ष की आयु तक अक्षर ज्ञान नहीं था। जब मेरे पास रहने लगा तो कई दिन मैंने स्वयं रीटी बन ना सिखाया, कई बार लाडना भी दी, फिर तो इसे अच्छा भोजन बनाना आ गया। पढ़ना भी था और भोजन भी बनाता था।

बड़े स्वामी जी अग्य विद्याधियों के साथ आश्रम पर श्री मनीषी देव शास्त्री और मुनीलक्ष्म जी शास्त्री को जो जन्म से जादूब जे आश्रम के पास चण्डीली के र ने वाले थे। अष्टाध्यायी पढ़ते थे, उन्हीं के पास धुरेन्द्र जी बँट जाया करते और सुनने रहते जब बड़े स्वामी जी पाठ पृष्ठते अग्य विद्याधियों के चुप रहते पर धुरेन्द्र जी कहते गुरु जी मैं बनाऊँ और अष्टाध्यायी के सूत्र कर्मश उन्हें सुना देते थे। ऐसी विलक्षण प्रतिभा देखकर स्वामी जी ने उन्हें विधिबत पढ़ाना प्रारम्भ किया था।

बीतराग स्वामी सर्ववानन्द जी महाराज अधुनिक विद्यासे बहूत दूर रहते थे। कई बार प० धुरेन्द्र जी ने उनसे कहा गुरु जी एक चित्र उतरवा लेने बीजिये। जब बड़े स्वामी जी नहीं माने तो आश्रम पर छिपकर चित्र उतरवाने के लिए एक फोटोग्राफर को बुलवाया और जहाँ स्वामी जी पेड़ के नीचे मग्या करते थे, वहाँ कमरे को बिन में ही पेड़ पर फिट करा दिया। जंने ही स्वामी जी संग्रह्या मे लीन हुए कमरे का बटन दबाकर फोटो ले लिया गया। स्वामी जी को उस समय पता चला जब चित्र बन कर उनके नामने आया। केवल यही चित्र उनका उप लक्ष्य है। इस चित्र कांड पर बड़े स्वामी जी दो बिन तक अप्रसन्न रहते थे।

जब प० धुरेन्द्र जी आश्रम के सरक्षक बने तब स्वामी जी के एक विद्यार्थी स्व० शिवदत्त जी को आश्रम के नियम पालन न करने पर मार कर बाहर कर दिया। उस समय बड़े स्वामी जी आश्रम पर नहीं थे। जब प्रचार से आये तो इन्हे बुलाकर पूछा—यह आश्रम से निकाले जाने के बाद बनेगा कि बिगड़ेगा? जब वह चुप रहे तो स्वा० जी ने ही कहा कि आश्रम पर ही उसे मुगारा जा सक है। अत पुन वापस बुलाओ। गुरु जी की आज्ञा मान कर उन्हें वापस ले आये थे।

प० धुरेन्द्र जी ही बड़े स्वामी जी की सेवा बुधूवा मे अधिक रहते थे। एक बार गुरु जी (बड़े स्वामी जी) इनसे अप्रसन्न हो गये और दो दिन तक न बोले थे वे बराबर उनकी सेवा मे लगे रहे। जब रात्रि को गुरु जी के चरण दवाते हुए पूछा—मुझमे कोई अपराध हो गया है। बड़े स्वामी जी ने गम्भीर होकर कहा—मुझे अपराध का प्रायश्चित्त यह करना है कि कल दोनों समय भोजन नहीं मिलेगा और सम्पूर्ण आश्रम की सफाई अकेले करनी होगी। प० धुरेन्द्र जी ने यही किया और आगे नियम से और सावधानी पूर्वक कार्य करने की प्रतिज्ञा की। अपराध यह था कि बड़े स्वामी जी आश्रम पर जब प्रचार पर से आते थे, तो विद्यार्थियों को बाटने के लिए मीठा या फल लाते थे। इस बार जब फल लाये तो हर बार की भाति प० धुरेन्द्र जी को बाटने के लिए कह दिया, फल बाटे नहीं गये अपितु रखे हुए सड़ गये, उन्हे बड़े स्वा० जी ने देख लिया, उनके कतव्य पालन न करने पर बड़े दुखी हुए।

स्वर्गीय स्वामी जी (प० धुरेन्द्र जी शास्त्री) जहाँ-जहाँ पड़े, उन्हीने अपने गुरुजी का सदा सम्मान किया। श्री प० परमानन्द जी शास्त्री मुख्याचार्य श्री राधाकृष्ण'

शुंझला जावेंगे। जब अमृत्नगर पट्टने तो बोले तू तो ऐसे सो रहा था मानो घर सो रहा है। मैंने कहा गुरु जी ऐसी कोई बात नहीं है, मैं तो चुचपाप इनलिए पडा था कि आपसे कुछ कहूंगा तो आप झुझला जावेंगे। नही ऐसी ठह मे कहीं नीद आती है।

गुरुजी के अधिकार पत्र मैं ही लिखता रहा। पत्रो मे उनके चुने हुए शब्दो मे 'ध्रुव शरणा' 'और प्रभून प्रसन्नता' दोनो शब्द अवश्य आते थे। कभी-कभी तो एक एक पत्र ४ बार तक लिखना पडता था। वह कहा करते थे, कोई अनावश्यक शब्द तो नही लिख गया, कई बार पढवा कर सुनते थे।

सन्ध्यास ग्रहण करते समय जहा सन्ध्यात की दीक्षा स्वामी आत्मानन्द जी महाराज दिया रहे थे, वहाँ सभी क्रियात्मक काय मेने किया। जब नदी को धारा मे खड़े होकर गेव वस्त्र पहनने लगे तो बोले यह सवेह मेरा अन्तिम संस्कार है।

साधु-आश्रम की कुछ कुटियाँ जिसमे बड़े स्वामी जी रहते थे-बाब मे गुरु जी रहने लगे। वह अभी तक गेरू से पोनी जाती है। उठने बैठने कभी कभी कपडा मे गेरू लगने से कपडे रंग जाने रहे, तो गुरु जी कहा करते-प्रेम, ये आश्रम तुमसे सन्ध्यामी बनाना चाहता है।

गुरु जी व्यवस्थित और सादा इतने थे, कि वह हमेशा अपने साथ १ बिस्तर, १ कण्डी और बँग रखते थे। बिस्तर बाधने का उनका जाना क्रम था। बिस्तर मे जो जहा रखना है, वह वही रखा जाता यदि उपर नीचे हो गया था बिस्तर जल्दी मे उनके पीछे बाध दिया तो पुन खलवाते थे, अपने सहयोग मे व्यवस्थित करते थे। कण्डी मे जो चीज जहाँ भी रखी है, वहा से जरा भी इधर उधर हुई तो पुन सभी चीजो जहा की तहाँ रखते थे और कहते थे कितने बार समझाया है। व्यवस्था बनाना सीखो सामान ऐसा रचना चाहिए जिसे जधरे मे भी समय पडने पर उठाया जा सके।

वह सारी आयु खादी के वस्त्र पहनते रहे। आर्य समाज मे जब गो रक्षा आन्दोलन प्रारम्भ किया तब से उन्होंने चमड़े का वग और चमड़े के जूते पहनने छोड

दिये थे। सन् १९४२ के आन्दोलन से पूर्व भी वह राष्ट्रीय आन्दोलन मे जेल गये थे। उन्होंने अपना राष्ट्रीय कार्य-क्षेत्र बाकीपुर, पटना बनाया था। वहाँ वह आर्यसमाज के कार्य के साथ राष्ट्रीय आन्दोलन मे भाग लेते रहे।

जहा से भी घूमकर आश्रम पर आते तो बकूल की दतौन का एक मुट्ठा बाधकर साथ ले आते, जब उनमे से दतौन करते-करते सुखने लगती तो रात्रि मे उन्हें पानी मे डाल देते या गौली मिट्टी मे गाड देते मुबह वह चबने लायक हो जाती। सारी आयु वह बकूल की ही दतौन करते रहे। अपनी अन्तिम आयु तक उनके न बांत हिले और न दाडें, सभी मोती जैसे स्वच्छ और दृढ़ थे।

एक बार आश्रम पर सध्या समय विद्यार्थियों की पक्ति मे गुरु जी तथा कविबर प० प्रकाशचन्द्र जी अजमेर, आमने सामने बैठकर सध्या कर रहे थे, बीच-बीच मे दोनो ही मुसकराते रहे। पता नहीं कैसे वह मुसकराहट हँसी मे परिवर्तित हो गई। सभी विद्यार्थी हँस पडे। बाब मे पता चला कि गुरु जी आँख मीचकर सध्या कर रहे थे और फवि जो ने बहुत बारीक मिचें पिली उनके लोटे मे डाल दी थी, जिससे उग्रे आचमन करने पर शरारत ज्ञात हो गई।

गुरु जी के कारण अलीगढ़ जिले मे आर्यसमाजों की सध्या १०९ के लगभग है, इनमे से अनेको समाजें उन्हीं के द्वारा स्थापित की गई हैं। उनके समय के कार्यकर्ताओं मे स्वर्गीय श्री प्रेमसिंह जी, खमानसिंह जी, इन्द्र वर्मा, प० आत्माराम जी वानप्रस्थी, श्री नाहरसिंह जी, गोकुल-चन्द शर्मा, भाई दामोदर जी पहलवान, वर्तमान मे प० रामप्रसाद जी मेडू, प० इन्द्रवत्त शर्मा, मन्त्री सरदारसिंह जी मई, मा० सरदारसिंह जी हैं।

गुरु जी के सहपाठियो मे स्वर्गीय प० ब्रह्मवत्त जी जिज्ञासु, प० शकरदेव जी नौरेर, प० श्री सुरेन्द्र शर्मा गौड, स्वामी ब्रह्मानन्द जी बण्डी रहे हैं।

मुझे गुरु जी के सानिध्य मे रहने के कारण इतने संस्मरण याद हैं कि एक अच्छी पुस्तक लिखी जा सकती है।



श्रद्धांजलि

(वृत्तं भुजग प्रयात)

विशुद्धा-तरात्मा तपपूतजन्मा,
यनि सावभौमदच्च विक्रात कर्मा ।
सदा वेदविद्याप्रसारामिसक्त,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात । १
प्रचाराय धर्मस्य सवम्ब स्यामी,
चरन ब्रह्मचर्यं सदा वीतरागी ।
अभिभ्रात सेर्वेक धर्मा मनस्वी,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥२
वधानन्द वर्षाण्ड्र वर्षाण्ड्र मक्त,
सुधी सर्वदानन्दयोगिप्रशिष्य ।
बिपश्चित प्रकाण्डरत्र विक्षपातवक्ता,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥३
* कुले मध्यमे पानिप्राभेऽपि जात,
तपस्यागतकल्पबीघ'क्षमेन ।
धुरीयाद्दुरेन्द्रो गुरुभूषतोना
ध्रुवानन्द योगी तत सबभूव ॥४
× समा पञ्च पावस्त नेता बरिष्ठ,
समाया बभूवार्थसामाजिकानाम् ।
चमूनायको धर्मयुद्धद्वयस्य,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥५
समप्रार्थशास्त्रार्थ विज्ञो मनोवी,
गुरु राजमाधोऽपि विद्या विमल ।
अनेक क्षमापाल सम्मायशास्ता,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥६

• उनका जन्म मध्यम कुल में पानिगाँव नामक ग्राम में हुआ था। वे अपने त्याग और तप से धुरीय से धुरेन्द्र शास्त्री और ध्रुवानन्द स्वामी हुए।

× लगभग पाच वर्ष तक सा० आ० सं० के प्रधान थे तथा हैदराबाद और सिन्ध धर्मयुद्ध के वीर सेनानी थे।

अटप्राप्त वेदो विवेदो तयंव,
प्रचार च धर्मस्य कुवन् सवं ।
विभिन्दस्तमोऽधर्मं रूप रवीव,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥७
स्फुरद्दीप्ति सदीप्त भक्ष्यायगण्टि,
श्रुति ज्ञान संप्राप्त दिग्घाय वृष्टि ।
तपस्त्याग बंदुष्य जाञ्ज्वल्यमूर्ति,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव धाम यात ॥८
त्यजत बन्धुवर्गं स धर्माय दास्ये,
जहृद्योवने गेहसौह्य तदर्थम् ।
तदर्थं चरन्नष्टिक ब्रह्मचर्यं,
ध्रुवानन्द योगी ध्रुव वन्दनीय ॥९
चकोरो यथा शीतरश्मो प्रयाते,
प्रयाते च भानो यथा पुण्डरीकम् ।
तथा बुक्षमना समन्तार्थं जाति,
पर धाम याते ध्रुवानन्द साथी ॥१०
—प्रो० हरिदचन्द्र रेणापुरकर एम० ए०
सह्याद्रि कॉलेज शिमोगा (मंसूर राज्य)

ध्रुव संन्यासी था !

ध्रुव धम धारी ब्रह्मचारी, वृत्तधारी ध्रुव,
ध्रुव वेद पाठी ध्रुव, ध्यान था संन्यासी का !
ध्रुवानन्द ध्रुव बोध, ध्रुव ध्येय दृढ़ धुन,
ध्रुव तेज-गुञ्ज रहे, ध्रुव विद्या-भासी का !
ध्रुव-ऋषि प्रणाली को, ध्रुव अपनाने रहे,
ध्रुव थे विचार ध्रुव वैदिक प्रकाशी का !
ध्रुव गरिमा के गुरु, ध्रुव तप्य भाषी देव,
ध्रुव थे प्रभाव ध्रुव ब्रह्म के विलासी का !

—कवि किस्तूरचन्द "धनसार"
पीपाड शहर (राज०)



आदर्श आर्य नेता—

स्वर्गीय स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

(ले०—श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री)

अभी कुछ ही समय पूर्व स्वामी जी महाराज हमारे मध्य विद्यमान थे परन्तु आवागमन के चक्र ने अब हमें उन्हें स्वर्गीय कहने के लिए बाध्य कर दिया। विधाना की इस दुनिया में जीवन-मरण की समस्या सतत प्रवाह से चली आ रही है। मृत्यु एक ऐसी वस्तु है कि जिसका सामना बिना किसी भेद भाव के सभी को एक दिन करना ही पड़ना है। स्वामी जी महाराज दिवंगत हो गये परन्तु उनके कार्य-कलाप सदा अमर रहेंगे। वे एक निर्भीक, मनस्वी, यशस्वी आर्य नेता और सन्यासी थे। अपने समय में उन्होंने सदा आर्यसमाज को ऊपर उठाने का प्रयत्न किया। सारा ही जीवन इसको दे दिया। अन्तिम क्षण तक आर्यसमाज की सेवा में रत रहे। उनका यह वागदान सदा स्मरणीय रहेगा कि साव-देशिक सभा को अयोध्या ट्रायो में जाने से उन्होंने सदा बचाया और इन्हीं के लिए अपना अन्न भी कर दिया।

मेरे परिचय की घटना

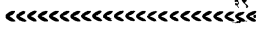
पेशे छ्वा से यह योग्यता मुझे प्राप्त थी कि मैं विद्यार्थी जीवन काल में ही व्याख्यानो और शास्त्रार्थों के लिए जाया करना था। उस समय शास्त्रार्थ करने में और व्याख्यान देने आदि में कितना अधिक उत्साह था उसका वणन करना मेरे लिए कठिन है। श्री स्वामी जी ने तब सन्यास नहीं लिया था और उनका नाम श्री राज-गुरु धुरेन्द्र शास्त्री था। उस समय इनका ठाठ बाट निराला ही था। शरीर में हृष्ट वृष्ट थे ही परन्तु राज-गुरु पने की भी पग पग पर अनुभूति होती थी। नेता तो बन ही चुके थे। स्वात्मानिमान ऊँचे दर्जे का रखते थे। किसी से बात करने में भी ये बातें सरलता से टपक पड़ती थी। साधारण आदमी तो बात भी करने में धोड़ी भीति का अनुभव करता था। एक तो करेला दूसरे नीम

चढा—उत्तर प्रदेश प्रतिनिधि सभा ने इन्हे समाजो के निरीक्षण का कार्य भी दे रखा था। फिर कहना क्या? ये केवल समाज का ही निरीक्षण नहीं करते थे सामा-जिक जनो का भी निरीक्षण करते थे। वकील हो, वा जज, प्रोफेसर हो वा आचार्य, सन्ध्या-हवन के मन्त्र पूछ लेना तो इनकी एक साधारण बात थी। कभी अथ भी पूछ लिया करते थे। इनका निरीक्षण इतना कठिन होता था कि कई बार तो कई लोगों से झगडा हो जाया करता था।

सयोगवश ये निरीक्षणार्थ जौनपुर समाज में ठहरे थे। मैं भी बनारस से किसी कार्य से वहा आया था और समाज में ठहरा था। इस बात का मुझे तनिक भी पूर्वा-भास नहीं था कि यहा कोई घटना घट जावेगी। जौनपुर वस्तुतः पूज्य महात्मा नारायणस्वामी का प्रिय स्थान था। स्वर्गीय स्वामी ध्रुवानन्द जी का भी अभी तक उस स्थान से बडा प्रेम था। शाहगज कस्बे में एक व्यापारी श्री रामेश्वर प्रसाद जी रहा करते थे। वे शाहगज समाज के प्रधान थे। उनके साथ प्रधान शब्द का समवाय हो गया। अब उनके भाई श्री बाबुराम जी प्रधान हैं। इनके साथ भी वह 'प्रधान' पद राजाओं के पुस्तनी खिताब की तरह चला आ रहा है। यह परिवार अच्छा आर्य सामा-जिक परिवार है। श्री राजगुरु जी वहा ही ठहरा करते थे और शाहगज अवश्य वर्ष में एक दो बार जाया ही करते थे।

मेरा भी जौनपुर से बहुत बडा सम्बन्ध है। कहना चाहिए कि वह स्थिर सम्बन्ध है। इस तरह जौनपुर वह नगरी है जिससे पूज्य महात्मा नारायणस्वामी, पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती और इन पत्कियों के लेखक तीनों का ही घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है।

राजगुरु जी जौनपुर का निरीक्षण करने को समाज



में ठहरे थे और मैं कार्यवश वहा ठहरा था। परन्तु दोनों का मिलना दो दिन वहा रहते हुये भी नहीं हुआ। कारण यह था कि वे अपनी शान में थे और लेखक अपनी शान में था। निरीक्षण की घड़ी आ ही गई। राजगुरु जी रजिस्टर आदि देखने के बाद प्रधान और मन्त्री से सध्या के मन्त्रों के अर्थ पूछने लगे। लोगों ने उत्तर दिया। परन्तु बँवयोग से प्रधान से अघमर्षण मन्त्र का अर्थ पूछे जाने पर उसने अर्थ तो बताया परन्तु इनकी वह स्वीकार न हुआ। प्रधान ने मेरी तरफ सकेत करके कहा कि पठित जी ने भी यही अर्थ बताया है। अब क्या था ? पारा गर्म हो गया। राजगुरु जी ने मुझसे ही सध्या के अघमर्षण मन्त्र पूछने प्रारम्भ कर दिये। मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। बस क्या था ? वे आवेश में आ गये। मैं भी कम नहीं था। उन्होंने कहा 'तुमको कुछ नहीं आता'। मैंने कहा 'आप नाममात्र के राजगुरु है।' भला आप ही इन मन्त्रों की सगति लगा दीजिये। उन्होंने क्रोध में कहा 'आपको मुझसे पूछने का कोई अधिकार नहीं है।' मैंने उत्तर में उसी कड़क और जोश से कहा ? " 'आपको यह अधिकार किम महाम्यायालय ने दे रखा है। मुझे भय है कि उन समय वहा सभा का कोई अधिकारी नहीं था अन्यथा वह और कुछ न मही मुझे अनार्य तो कह ही देना। अस्तु ! राजगुरु जी के बहुत बिगडने पर मैंने कहा कि पहले आपको यह जानना चाहिए था कि मैं जौनपुर समाज का सदस्य हूँ वा नहीं। फिर पूछने आदि की बात करनी चाहिए थी। परन्तु यह सब मुझने और और पोषीशन साफ करने कराने की वहा बात ही क्या हो सकती थी। उस प्रचण्ड क्रोध के सामने यह सब ध्वंस था। आखिर ! यह एक नेता, निरीक्षक और राजगुरु का प्रमान था। कोई साधारण बात नहीं थी। स्वात् मैं भी नेता और राजगुरु आदि होता तो मैं भी ऐसा ही करता वा क्या करता ?

मैं उसी दिन दोपहर को बनारस वापस गया। श्री राजगुरु जी दूसरे दिन बनारस पहुँचे। काशी समाज में ही वे ठहरे। परन्तु मस्तिष्क में जौनपुर वाली बात की उथल पुथल थी। डायरी में भी कुछ पक्तियाँ अवश्य ही लिखी गईं होंगी। उसके दूसरे दिन रविवार था। श्री राजगुरु जी का समाज के अधिवेशन में भाषण था।

खीरयत बस इतनी थी कि काशी समाज में उनका निरीक्षण नहीं था। पता चला कि उन्हें एक सप्ताह वहा पर ठहरना है। वह भी इसलिए कि भरतपुर में एक पठित से राजा को प्रभावित करने के लिए शास्त्रार्थ करने की तैयारी करना था। जैसा मुझने में आया था, वह पठित बड़ा योग्य था, उसे पछाडना आवश्यक था। राजगुरु जी जब लखनऊ से चले थे तब और उसके पूर्व भी वे इन पक्तियों के लेखक के विषय में श्री मान्य ब्रह्मचारी अखिलानन्द (वर्तमान में शरिया में है) और स्वर्गीय श्री प० रामदत्त जी शुक्ल, लखनऊ से पर्याप्त तारीफ सुन चुके थे। अतः इस दौरे में वे बनारस में मिलना भी चाहते थे। उधर मेरी उन समय की यह धारणा थी कि इनसे दूर ही रहना चाहिए क्योंकि वे राजाओं के आसपास रहने से अभिमानी है। परन्तु वास्तविकता मेरी धारणा के विपरीत थी। वे हृदय से मिलना चाहते थे और सम्पर्क रखना चाहते थे। जहरत पडने पर उस भरतपुर वाले पठित ने शास्त्रार्थ में भी भिडाना चाहते थे। परन्तु यह शास्त्रार्थ स्वयं ही करना चाहते थे। यह इसलिए भी उन्हें करना था कि राजगुरु की भी पोषीशन तो रखनी ही थी। मुझसे मिलने की उनकी इच्छा इसलिए भी थी कि श्री पठित रामदत्त जी शुक्ल ने मेरी प्रशंसा की थी। जबकि शुक्ल जी के विषय में यह प्रसिद्ध था कि वे किमी की प्रशंसा कम ही किया करते थे। उनके द्वारा मेरी प्रशंसा किया जाना राजगुरु जी के लिए कुछ विशेष बात थी। परन्तु जैसा कि बाद में ज्ञात हुआ शुक्ल जी ने तारीफ तो की साथ ही यह भी कह दिया था कि मेरा सम्पर्क पूज्य महात्मा नारायणस्वामी जी से अधिक है। दैवान् उन्हीं दिनों महात्मा नारायणस्वामी जी धनबाद गये थे और बनारस होने हुए देहरादून एक्सप्रेस से उवालापुर जा रहे थे और यह सूचना श्री ब्रह्मचारी अखिलानन्द के पत्र में राजगुरु जी को मिली जो कि राजगुरु जी के बुलाने पर उसी गाडी में बनारस आ रहे थे। राजगुरु जी तथा दूसरे सज्जन ट्रेन पर महात्मा जी से मिलने गये। अवसर पाकर मेरे सम्बन्ध में भी राजगुरु जी ने पूछा। महात्मा जी ने भी बड़ी प्रशंसा की।

इस घटना की कड़ी कहा खुबेगी इसका मुझे कोई

पता नहीं था। परन्तु जौनपुर वासी बात मन मे बार-बार उठती थी। यह बात बनारस मे श्री राजगुरु जी के ठहरने के तीसरे दिन की है कि श्री ब्रह्मचारी जी का एक भ्रादमी मुझे बुलाने आया। उसने कहा कि ब्रह्मचारी जी सरिया से आये हैं और बुला रहे हैं। मैं गया तो देखता हूँ कि वहाँ कई विद्वानों की पचायत लगी है। प्रमाण खोजे जा रहे हैं। ब्रह्मचारी जी ने मुझे पृथक् ले जाकर पूछा कि इस शास्त्रार्थ के लिए क्या प्रमाण चाहिए और किस रूप मे इसे किया जावे तो ठीक होगा। मैंने कहा मैं दो घण्टे मे सब तैयार कर देता हूँ और पुस्तकों के प्रमाणों पर निशान लगा देता हूँ उन्होंने कहा—'अवश्य कर लाइये मैं उनके कमरे मे बैठता और वहीं पर पुस्तकालय से पुस्तकें मगाकर दो घण्टे मे सब कार्य पूरा करके ब्रह्मचारी जी को दे दिया। लेकिन यह नहीं ज्ञात था कि अभी राजगुरु जी के सामने इस पर छानबीन भी होनी है। यदि तनिक भी इसका परिज्ञान होता तो स्यात् जौनपुर की घटना का सारा दृश्य और उसकी प्रतिक्रिया उठ खड़ी होती। राजगुरु जी को उधर यह पता नहीं था कि यह वैद्यनाथ शास्त्री वही व्यक्ति होगा जिसने अध-मर्षण पर मेरा ही मरण प्रारम्भ कर दिया था। कारण भी स्पष्ट था कि जौनपुर मे उन्होंने मेरा नाम भी जानने का कष्ट नहीं किया। कष्ट करते भी कौमे, कहा सक्द्र राजगुरु कहा कालेज का एक विद्यार्थी।

अस्तु। २ बजें के समय श्री ब्रह्मचारी जी मेरे साथ शास्त्री जी के पास आर्यसमाज हाल में जा बैठे। परस्पर नमस्ते के आदान-प्रदान के बाद राजगुरु जी ब्रह्मचारी जी से पूछ बैठे कि इस घमण्डी व्यक्ति को आप कैसे मिल गये। मैंने बिना ब्रह्मचारी जी के उत्तर की प्रतीक्षा किये कहा कि 'घमण्डी राजगुरुओं के लिए ऐसे ही घमण्डी की आवश्यकता पडा करती है'। ब्रह्मचारी जी बीच मे ही बात काटकर मेरा परिचय देने लगे कि यह वही है जिनके विषय मे वातालाप हो रहा था। राजगुरु जी आश्चर्ययुक्त शान्त मुद्रा मे बोले कि इनका और मेरा तो जौनपुर मे झगडा हो गया था। अच्छा हुआ कि अब परस्पर वातालाप हो जावेगा। शास्त्रार्थ की पुस्तकें और सब प्रमाण आदि पर तीन घण्टे तक

बातचीत होती रही और राजगुरु जी बहुत प्रसन्न हुए। अब वे जौनपुर वाले राजगुरु जी नहीं रह गये थे और न मैं वह जौनपुर मे उनसे प्रश्न करने वाला घमण्डी (उनके शब्दों मे)। उस समय से वे बहुत ही प्रेम रखने लगे और अन्तिम समय तक वह वैसा ही बना रहा। मुझ पर उनका विश्वास बहुत अधिक रहा।

'मैं वो चीजों का लालची हूँ'

बनारस के उसी आवास काल मे जाने के एक दिन पहले स्वयं उन्होंने कहा कि मैं कुछ वातालाप करना चाहता हूँ। आज घूमने चलेंगे तब वह वातालाप होगा और जौनपुर की घटना की सफाई भी हो जावेगी। हम घूमने के लिए दशाश्वमेध घाट पर गए। राजगुरु जी रास्ते भर अपनी सफाई देते रहे और मैं अपनी। घाट पर जब पहुँचे तो मैंने पूछा आपने वातालाप क्या करना था शास्त्रीय अथवा कोई अन्य। उन्होंने कहा मुझ मे और कोई लोभ लालच नहीं परन्तु दो लालचों का मैं सवरण नहीं कर सकता और न कर सकूँगा। मैंने पूछा वे दो असवरणीय लालच क्या है? उन्होंने अपनी कहानी सुनानी प्रारम्भ की। कहने लगे कि जब मैं किसी सुन्दर सुगठित भव्य मूर्ति राजा वा धनिक वा नेता को और योग्यतम विद्वान् को देखता हूँ तो मेरा लालच की पारा-वार नहीं रहता। मैं चाहता हूँ कि वह आर्यसमाज मे रहे। तथा महर्षि दयानन्द का भक्त रहे। इसको न मैं दूर कर सका और न करना चाहता हूँ। मैंने कहा 'यह लोभ नहीं यह तो जनिवार्य लोभ, वाछनीय लोभ और दैवी लोभ है। मैंने उस समय अनुभव किया कि आर्यसमाज और भगवान् दयानन्द के लिये इनके हृदय मे कितना उच्च स्थान है। वे वस्तुतः क्या है? और क्या इनका कार्यकाल है? वस्तुतः स्वामी जी ने इन्हीं दोनों को लेकर अन्तिम समय तक आर्यसमाज को प्रबद्ध किया। योग्य व्यक्तियों और विद्वानों को सदा साथी बनाकर रखते थे और जिस पर विश्वास करते थे अटूट करते थे।

अफ्रीका की यात्रा से जब मैं लौटने लगा आप हुआई अड्डे पर अन्य आर्यजनों के साथ उपस्थित थे। मैंने कहा स्वामी जी महाराज। आपने क्या कष्ट किया। बोले—

श्री स्वामी जी के प्रति-

मायों के सिर से बरब-हस्त प्रवाम्ब का हटा अरे
 निर्दयी कि बिबेली नागिन सी घिर गई काल की घटा अरे ।
 चतुर सारथी रहित हाथ । आर्यों के रथ का क्या होगा ?
 'प्रभु' जैसे पूत सपूत बिना सस्कृत माता का क्या होगा ?
 मास सारवा का मन्धिर ! बिना पुजारी आज हुआ ।
 ऋषि प्रजापी, आर्य पद्धति का मुनसान जहान हुआ ।
 आदर्श पुनीता सीता सी बनवासिन कहीं न हो जाये ।
 सरला बाला उमिल जैसी विस्मृत कहीं न हो जाये ॥
 ओ चतुर चितेरे नैयायिक ! वेद शास्त्र के सुभानी ।
 भारत माता के विष्य पूत ! विज्ञान साधना के ध्यानी ।
 प्राच्य-मध्य पद्धति का तुमने अपूर्व समन्वय कर डाला ।
 पतस्रज मे लाकर बसन्त नवजीवन सबको दे डाला ॥
 जब तक रविशशि मे प्रकाश, गंगा यमुना मे है पानी ।
 तब तक बिरुते कीर्ति कौमुदी, ओ बयान्ब के सेनानी ।
 पद्म वाच्य प्रमाणत मुने ! इतनी सब पर कृपा करो ।
 शीलाकुल भारत जननी की श्रद्धाजलि स्वीकार करो ॥
 —आचार्य मित्रसेन एम० ए० सेवा-सदन कटरा, अलीगढ़

मैंने घर छोड़ा, परिवार छोड़ा, भाई बन्धु छोड़े, मिनि-
 स्टरो और दूसरो को बिवाई देने नहीं जाता, परन्तु आर्य
 ऋषत् के एक विद्वान् को जिसको मैं अपना भाई और
 परिवार समझता हूँ तथा मिनिस्टरो आदि से बड़ा सम-
 झता हूँ, उसको नहीं छोड़ता हूँ और उसे बिवाई देने न
 जाऊँ तो किसको । आज जब इन बातों को स्मरण करता
 हूँ तो मन की क्या स्थिति होती है, यह वर्णन नहीं की जा
 सकती । अन्त समय तक इस महारामा ने जब भी सिद्धान्त
 सम्बन्धी अथवा सघटन सम्बन्धी अथवा समाज और
 समाजो की कोई भी बात आई सदा सलाह की और पूर्ण
 विश्वास किया । सिद्धान्तो आदि के विषय मे तो सदा ही
 मुझ पर अदृढ विश्वास करते रहे ।

सभा मे बराबर रहते हुए सभा मे एक प्रकार की
 रौनक थी । आज उनके जाने के बाद शून्यता का अनुभव

होता है । आर्यसमाज का उनके निधन से एक स्तम्भ ही
 टूट गया ।

जीवनी लिखी और छापी जाये ।

पूज्य स्वामी जी के परिचिनो ओर भक्तो की एक
 बहुत बड़ी मध्या है । इनमे अनेको श्रीमान् और योग्य
 व्यक्ति है । मुझ लगभग सबसे परिचय होने से यह कहने
 का साहस होता है कि स्वामी जी महाराज की जीवनी
 अच्छे ढंग पर लिखी और छापाई जानी चाहिए । सबको
 मिलकर यह कार्य करना ही चाहिए । श्री डा० हरिश्चन्द्र
 दामा जी ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्हें स्वामी जी की सभी जीवन
 घटनायें मांजूम हैं । वे स्वामी जी के घनिष्ठ सम्पर्क में
 रहे हैं । अत वे इस जीवनी को लिखें तो बहुत अच्छा
 होगा । उनका पावन स्मरणहमे सर्वव कर्तव्य की प्रेरणा
 देता रहेगा ।





मेरे सामाजिक सहयोगी स्वामी ध्रुवानन्द जी का दुःखद निधन

[श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०, प्रयाग]

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी के दुर्भाग्य-प्रद निधन पर आर्य्य जगत् में जो शोक की लहर फैल गई वह स्वाभाविक ही थी क्योंकि गत चालीस वर्षों से आर्य्यसमाज की कोई प्रगति या नीति-रीति ऐसी न थी, जिसमें स्वामी जी का कोई हाथ न रहा हो। स्वामी जी भाग्यशाली भी थे और प्रभावशाली भी। भाग्यशाली होने का तो एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि एक छोटे-से मयूरा जिले के ग्राम में एक अकिञ्चन अशिक्षित ब्राह्मण घर में जन्म लेकर वह आर्य्यसमाज के उच्चतम पद पर आरूढ रहे। सयुक्त प्रान्तीय आर्य्य प्रतिनिधि सभा तथा सार्वदेशिक सभा के कई वर्ष प्रधान रहे। परन्तु जब वह प्रधान नहीं भी रहे तब भी प्रधानत्व उन्हीं का रहा। वह एक प्रकार से बिहार, यू० पी०, राजस्थान में तो वेमुकुट के सम्राट थे। यह तो मभव था उनका प्रस्तावित कोई व्यक्ति प्रधान न चुना जा सके परन्तु यह मभव न था कि जिसका वह विरोध करे वह प्रधान चुना जावे। बिहार के तो अनेक आर्य्यसमाजों का निर्वाचन उनके सकेत पर होता था। उनका प्रभाव गावों पर भी था और नगरों पर भी। प्रत्येक नगर में उनके कुछ भक्त थे और अनन्य भक्त।

यह उनका सौभाग्य था कि उनका शिक्षण श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज जैसे वीतराग सन्यासी के द्वारा हुआ। इस पारस पत्थर के स्पर्श से लोहा सोना हो गया। स्वामी सर्वदानन्द जी जैसा वीतराग सन्यासी कम देखने को मिलेगा और कम सुनने को भी। पुर्वपणा और बितोषणा को तो वह त्याग ही चुके थे परन्तु लोकीपणा तो बिरक्तों से भी नहीं छूटनी, वह लोकीपणा स्वामी सर्वदानन्द जी में लेशमात्र भी न थी। इसकी तो कहानियां प्रसिद्ध हैं। एक बार स्वामी जी को किसी आर्य्यसमाज ने उपदेश के लिए निमंत्रित किया। वह रात में पढ़के, समाज मन्दिर का द्वार बन्द था। वह कमली ओढ़कर वही सो रहे।

प्रातः काल अर्धरे में मन्त्री जी आये और एक फकीर को सोता देखकर निरस्कार से उसे डाट दिया। स्वामी जी अलग खिसक गए। प्रातः काल जब सभा लगी तो मन्त्री जी बोले कि श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज का उपदेश होने को था। वह आये नहीं स्वामी जी ने उठकर कहा कि मैं तो बैठा हूँ, मन्त्री जी पर घड़ो पानी पड़ गया। इसी प्रकार एक समाज में चलते समय उनको केवल २) दो हाथे दिये। उन्होंने रेल के बाजू से कहा कि टिकट दे दो। 'कहा का?' मुझे इम लायन पर जाना है, जहा तक का २) में आ सके। ऐसे वीतराग सन्यासी के श्री ध्रुवानन्द जी शिष्य थे। पहला नाम था धुरिया। गुफ जी का रखा नाम था, धुरेन्द्र। सन्यास लिया तो स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती हुये। धुरिया धुरेन्द्र ध्रुवानन्द में केवल शाब्दिक अनुप्रास ही नहीं है, भाव सादृश्य भी है।

मेरा स्वामी ध्रुवानन्द जी का विदोष सम्पर्क १९३९ ई० की अप्रैल में प्रारम्भ होता है। उसमें तीस साल पूर्व में जब वह इस ग्राम में काम करने लगे तब से साधारण परिचय था। १९३९ ई० में हैदराबाद सत्याग्रह आरम्भ हुआ। २० जनवरी को श्री नारभ्यण स्वामी जी पहले डिक्टेटर बनकर गये। २० फरवरी को राजस्थान के कुवरचन्द करण शारदा दूसरे डिक्टेटर। २० मार्च को पञ्जाब से श्री महात्मा खुशालचन्द्र (श्री आनन्द स्वामी जी) तीसरे डिक्टेटर। २० अप्रैल को यू० पी० के चौथे डिक्टेटर राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री जी। मैं जनवरी से ही सत्याग्रह में केन्द्रालय शोलापुर में श्री स्वामी स्वानन्द जी के साथ काम करता था। उस समय मेरी प्रान्तीयता की भावना ने जोर मारा। राजस्थान और पञ्जाब में बड़ी चहल-पहल थी। मेरा प्रान्त सोना रहा था। मुझे अच्छा न लगा। मैंने श्री राजगुरु जी को वैयक्तिक पत्र लिखा

पत्र का तुरन्त प्रभाव हुआ। श्री शास्त्री जी ने तूफानी दौरा किया और बहुत से साथियों के साथ शोलापुर पहुंच गये। उन्ही दिनों मानुषा समाज का उत्सव था। मैं भी गया और श्री धुरेन्द्र शास्त्री जी भी। मुझे ऐसा लगा कि शास्त्री जी कुछ अमनुष्य हैं। यह शुभ लक्षण न थे। मैंने तुरन्त स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को फोन करके शोलापुर से बुलाया। वह दूम्परे दिन प्रातःकाल ही आ गये। श्री राजगुरु जी का असन्तोष दूर हो गया और २० अप्रैल को उन्होंने चौथे डिक्टेटर के रूप में अङ्ग्रेजों से सत्याग्रह किया। तब से हम दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। सत्याग्रह के पश्चात् हम दोनों ने एक साल तक शोलापुर में एक उपदेशक विद्यालय चलाया जिसका मुख्य उद्देश्य था हैदराबाद के युवकों को तैयार करना। वस्तुतः विद्यालय के आचार्य तो वही थे। मैं तो दक्षिण में प्रचारार्थ गया था, परन्तु बात टूट्टी उलटी। मैं ह्यात्रा-भीरु। वह थे यात्रा प्रेमी। मैं शहर तभी जाता हूँ, जब अत्यन्त आवश्यक हो। वह आवश्यक होने पर भी एक स्थान पर नहीं ठहर सकते। अतः संचालन तो मुझी को करना पड़ा। परन्तु उन दिनों से सम्पर्क बढ़ना ही गया। वह मुझ से प्रेम करते थे और मुझे उनमें स्नेह था। परन्तु हम दोनों के दृष्टिकोण तथा नीति में बहुत बड़ा अन्तर था। वह छोटी मोटी बातों पर डाट बैठते थे। राजगुरु जी ठहरे। मैं ननुनच किये बिना नहीं रहता था। परन्तु मैं और वह दोनों जानते थे कि हमारी प्रवृत्ति आध्यत्मसाज के हित में है। एक वर्ष तक उनके प्रबान्तव में मैं साव-देशिक का मन्त्री रहा। परस्पर कोई मतभेद नहीं रहा। शायद इसका अधिकतर श्रेय उनकी ही मुझ को न हो। क्योंकि वह दबना भी जानते थे। यही तो उनकी सफलता का रहस्य था। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी भीतराम थे। श्री स्वामी आत्मानन्द जी जिन्होंने उन्हीने मन्त्रास लिया वह भी बहुत सतोमुणी थे, यद्यपि लगे उनकी राजनैतिक झमेलों में भी खीच लेते थे। जब वह 'मुक्तिराम' जी के नाम से गुरुकुल येरारोही (रावल पिण्डी) में थे तब उन्हीने हैदराबाद में सत्याग्रह किया था। जब लोकसच'

खोला गया तो लोगों ने स्वामी आत्मानन्द जी को घसीट लिया। हिन्दी सत्याग्रह में भी स्वामी आत्मानन्द जी मुखिया बने। परन्तु स्वामी सर्वदानन्द जी इन सब प्रलो-भनों से सदा मुक्त रहे। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी की प्रवृत्तियाँ उन दोनों गुरुओं से भिन्न थीं। 'राजगुरु' जी शब्द ही उनकी प्रवृत्तियों का वास्तविक चोतक था। चुनाव के मुद्दे में उनको मजा आता था और अन्त तक आना रहा। २९ जून को वह कानपुर पहुंच रहे थे कि सावदेशिक के चुनाव का संचालन कर सकें। परन्तु मृत्यु ने उनका प्रोग्राम अस्तव्यस्त कर दिया। फिर भी जो चुनाव में हुआ वह उनके निर्देशानुसार ही हुआ। ऐसा मेरा विचार है।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी उन गिने-चुने लोगों में से थे, जिन्होंने आयु भर केवल आध्यत्मसाज की ही सेवा की, घरबार तो था ही नहीं। समाज ही उनका सब कुछ था। वह कांग्रेस में भी रहे और जेल भी गये। परन्तु अन्त को फिर आर्यसमाज के अनन्य उपासक बन गये। ऐसे नेता का चला जाना आशावादियों को भी निराश कर देता है।

मेरी तमस में नहीं आता कि मैं उनके जाने पर शोक करूँ या अपने न जा सकने पर। मेरी दशा इस समय ऐसी है जैसी उस यात्री की होती है जिसके साथी रेल पर बैठकर चल दिये और वह प्लेटफार्म पर ही छूट गया हो।

पीले पत्ते तो झड़ते ही हैं, मेरे झड़ने में भी एक झटके की देर है। परन्तु १९६५ ई० में जितना पत-साड हुआ है शायद ही कभी हुआ हो। आशा रखनी चाहिये कि ससार चक्र पतसाड के पीछे नहीं कोपलें उत्पन्न करेगा और आध्यत्मसाज के युवक और युवतियाँ श्रद्धा दयानन्द के कार्य में को अप्रतिहत रूप से करते रहेगे।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी में बहुत से गुण थे। इनका विस्तृत वर्णन यहाँ सम्भव नहीं है।



उसकी सफलता का श्रेय आपका ही है। मई सन् १९४० ई० में इन्दौर सम्मेलन में आप अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार परिवर्द्ध के प्रधान निर्वाचित हुए थे। आपकी भव्य उन्नत मूर्ति छरहरा, शरीर तीक्ष्ण, मधुर स्वर और सौम्य विशाल स्निग्ध, भाल देलकर आपके तदनुरूप गुणों की छाप दर्शकों पर तुरन्त बैठ जाती थी। आप १९५५ ई० में सन्यास आश्रम में प्रवेश हुए और वह धुरेन्द्र सान्नी में स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती के नाम से प्रसिद्ध हो गये। आप आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न थे।

आर्य सभा मोरिशस के अनुरोध पर सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने ५ जनवरी १९५७ ई० में श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज को वैदिक धर्म प्रचारार्थ भेजा। आपके आते ही मोरिशस भर में वेद प्रचार की धूम मच गयी। १२ मई १९५७ ई० को उत्तर प्रान्तीय आर्य समाजियों की ओर से आपके आचायत्व में मोसेरमा में एक नगरकीर्तन किया गया था। जिसमें करीब बीस हजार नर-नारियों ने भाग लिया था। मोरिशस में आर्यों की दो सभाएँ थी, 'आर्य सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा।' स्वामी जी महाराज के अदृष्ट परिश्रम से आर्य प्रतिनिधि सभा आर्य सभा में विलीन हो गई। अब मोरिशस में आर्यों की एक ही सभा है जिसके द्वारा वहाँ वैदिक धर्म का प्रचार होता है।

श्री स्वामी जी सन् १९६१ ई० के जनवरी में मोरिशस

छाड़कर भारत चले आये, और दिल्ली में आर्य प्रतिनिधि सभा के पुन प्रधान बने। मन् १९६४ ई० में प्रधान पद त्यागकर थाईलैण्ड, मथाया गये और वैदिक धर्म का प्रचार किया। उसी समय पाकिस्तान सरकार हिन्दू और ईसाइयों का बहिष्कार कर रही थी। श्री स्वामी जी शरणार्थियों की सहायता में लग गये, उस कार्य में परिश्रम के कारण आपकी शारीरिक ताकत घट गई और आप अस्वस्थ हो गये।

श्री स्वामी जी से २१ फरवरी ६५ को अलीगढ में श्री सुरेन्द्रकुमार जी के स्थान पर मैंने भेंट की थी। कौन जानता था कि पूज्य स्वामी जी से फ़िरभेट नहीं होगी? अन २९ जून को अचानक श्री स्वामी जी की मृत्यु का समाचार जानकर अत्यन्त बल्लेष्ट हुआ। आपका शव ट्रेन द्वारा बम्बई में दिल्ली लाया गया और वैदिक रीति से अन्त्येष्टि मस्कार किया गया। हजारों नर नारी अपने नेना की याद में रो रहे थे।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी उच्चकोटि के विद्वान्, सन्यासी थे। आपकी मृत्यु में आर्य-जगत् को भारी क्षति पहुँची है। स्वामी जी अब समार में नहीं रहे किन्तु आपका आरोपित किया हुआ एक नारियल का वृक्ष जो मेरे आगम में है, सदा आपका स्मरण दिलावेगा।

अन्त में परमपिता परमात्मा से प्रायना है कि दिवगत आत्मा को अनन्त शान्ति सद्गति मिले और शोकातुर आर्यों को वय प्राप्त हो।

चारों वेद भाष्य, स्वामी ध्यानन्द कृत ग्रन्थ तथा

आर्यसमाज की समस्त पुस्तकों का

एक मात्र प्राप्ति स्थान—

आर्यसाहित्य मण्डल लि०

श्रीनगर रोड, अजमेर

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिवर्द्ध की विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या वाचस्पति आदि परीक्षाओं मंडल के तत्वावधान में प्रतिवर्ष होती हैं। इन परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें अन्य पुस्तक विक्रेताओं के अतिरिक्त हमारे यहाँ से भी मिलती हैं।

वेद व अन्य आर्य ग्रन्थों का सूचीपत्र तथा परीक्षाओं की पाठविधि मुफ्त मंगावें

दयानन्द-राजोह

(१२ फरवरी से १८ फरवरी ६६ तक)

उत्तरप्रदेशीय समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि 'दयानन्द सप्ताह' विनाक १२ फरवरी ६६ से १८ फरवरी ६६ तक मनाना निश्चित हुआ है। आर्यसमाजों के कायकर्तव्यों से प्रायर्था है कि उत्तरप्रदेश में उक्त सप्ताह को उस्ताहपूर्वक मनाने का आयोजन करना चाहिये। सप्ताह का कार्यक्रम आयोजन के आगामी अंक में प्रकाशित किया जायगा।

— चन्द्ररत्न सभा मन्त्री



स्वामी ध्रुवानन्द जी चले गये !

(ले - श्री आचार्य रामकेशोर जी शास्त्री श्री सर्वदानन्द साधु आश्रम)

श्री स्वामी जी का अत्यन्त मधुर, विनोदी, स्वभाव, विषम समय में दिये गये प्रेमपूर्ण आवासान, कठिन अवसरो पर भी उद्विग्नता का अभाव, ८३ वर्ष की अवस्था में अदम्य उत्साह, अस्वभाविकता में चिकित्सको द्वारा पूर्ण विश्राम का अनुरोध करने पर भी आर्य जगत् के कल्याण के लिये उद्योगशीलता आवि गुणों के स्मरण में मुझे विश्रित सा कर दिया है।

सब कुछ सुन लेने पर भी आर्यसमाज के विकास के हित में अपना सबस्य बलिदान करने के लिये सदा सन्नद्ध रहने वाले, वैदिक सस्कृति के सफल सरक्षक, महर्षि बयानन्द सरस्वती के अनन्य भक्त, आर्यजनों पर पिता के समान स्नेह रखने वाले, श्री स्वामी जी सहसा ही हमें असहाय छोड़कर चले जायेंगे, हृदय को यह विद्वान ही नहीं हुआ, उसी समय शोकाकुल आश्रम के उपमन्त्री श्री बाबूराम जी मास्टर द्वारा नेत्रों से अविच्छिन्न अश्रुधारा बहाते हुये गद्गद् स्वर से "शास्त्री जी कराल काल में हमें लूट लिया, हम अनाथ हो गये" यह कथन क्रन्दन सुनकर इस हतहृदय को विद्वान हो पाया, कि श्री स्वामी जी इस असार सतार से प्रस्थान कर गये।

जनवरी मास में आश्रम पर चल रही प्राकृतिक चिकित्सा के मध्य में ही श्री स्वामी जी पर हृदय रोग का आक्रमण हुआ था, परन्तु परमपिता परमात्मा की कृपा से कराल काल उस, समय अपनी क्रूर योजना में सफल होकर हमें श्री स्वामी जी के कृपापूर्ण प्यार से वञ्चित न कर सका। प्रातःकाल चिकित्सकों के अनुरोध से श्री स्वामी जी के पूण विश्राम की व्यवस्था की गई, अनिष्टकारक समझकर चिकित्सकों ने धार्तालाप करने पर भी प्रतिबन्ध लया दिया, वह जीवन और मृत्यु के तर्घ्व का समय था, किन्तु, उस समय भी श्री स्वामी जी को जीवन की नहीं अपितु आर्यसमाज के हित की ही चिन्ता रहती थी। मुझे प्रतिदिन सायंकाल ७ बजे बाहुर से आये

पत्रों का उत्तर लिखवाने हेतु उपस्थित होने का आदेश श्री स्वामी जी से मिल चुका था, उस दिन प्रतिबन्ध था फिर भी मैं सायंकाल उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात करने के लिये उनके आवास स्थान पर गया, श्री स्वामी जी ने मुझे देखते ही प्रसन्न मुद्रा में ही मन्वहार्य के साथ कहा, कि आपने पत्र लिखवाना तो बन्द करा ही दिया, श्री स्वामी जी अपरिमेय कष्ट को अवश्य मोक्षव्य कर्मफल के रूप में प्रसन्नतापूर्वक सहन करते हुए—

"पत्कार पक्व पुनराविशति" इस वैदिक सिद्धान्त का गवहार द्वारा सदा उपदेश दिया करते थे। उस समय भी श्री स्वामी जी का ध्यान कष्ट की ओर नहीं, अपितु कार्य की ओर ही था। श्री स्वामी जी ने अत्यन्त प्रेम के साथ आर्यसमाज के कार्य को पूर्ण प्रेम एव मनो योग के साथ प्रगति प्रदान करने का उपदेश दिया। यत्र-तत्र वृष्टिगत हुई आर्यसमाज के कार्य की शिथिलता ही सदा श्री स्वामी जी की चिन्ता का प्रमुख विषय रहती थी। स्वास्थ्य की ओर से उपेक्षा, और आर्यसमाज के कार्य की अत्यधिक अपेक्षा के कारण ही श्री स्वामी जी का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर क्षीण एव निराशाजनक होता गया।

आश्रम से चलकर योग चिकित्सकों की देखरेख में कुछ समय तक वे अलीगढ़ में रहे, वहाँ उनके स्वास्थ्य में कुछ सुधार हुआ। चिकित्सकों द्वारा पूर्ण विश्राम का अनुरोध करने पर भी आ० स० के दीवाने श्री स्वामी जी देहली होकर आर्यप्रतिमिति सभा उत्तरप्रदेश के वार्षिक वृहद्विेशन में मेरठ पहुंच गये।

दिनांक २८-४-६५ को प्रबन्धकों के अनुरोध पर आर्य महासम्मेलन में समापित पत्र स्वीकार करके सभा का सञ्चालन किया। श्री स्वामी जी ने अपने प्राण से पूर्व कहा कि "पर्याप्त समय से अस्वस्थ होने पर भी अपने उत्तरप्रदेश के आर्य भाई बहिनों के अन्तिम दर्शन करने तथा उन्हें अन्तिम सम्बोध देने के लिए मैंने मेरठ,



भारतसमाज के अधिकारियों का अनुरोध स्वीकार कर लिया है, उनके ये शब्द जीवन के प्रति पूर्ण निराशा के द्योतक थे। परन्तु हम सब को यह विश्वास नहीं हुआ, कि ये शब्द इतने शीघ्र अपना प्रभाव बिखला सकेंगे। और फिर हमें उनके विषय वचन सुनने का समय ही न मिल सकेगा। अपने नाचन में उन्होंने आर्यसमाज की स्थिति को दृढ़ तथा प्रगतिशील बनाने के लिए जो उपाय सप्रमाण प्रस्तुत किये थे उनके किपाशील जीवन के अपूर्व रत्न थे। "कुण्वन्तो विश्वमार्याम्" इस वैदिक घोष को कार्यरूप में परिणत करने के लिये न केवल भारत में अथितु, मीरीशत,अफ्रीका, बर्मा आदि देशों में भी उन्होने अत्यन्त प्रशस्तनीय कार्य किये, पवित्र प्रवचन तथा स्पृह-भोज सत्ताचार सम्पन्न व्यवहार से श्री स्वामी जी आजीवन आसक्त को गौरवान्वित करते रहे। आर्यसमाज के हित में दुनिवार सांसारिक भोगों का परित्याग कर आजीवन कठिन ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले, तपो-निष्ठ, आश्रित अनहाय छात्रों के उन्नायक, परम व्यवहार कुशल एवनीतिज्ञ श्री स्वामी जी नवंबर पाञ्चमौतिक शरीर का परित्याग कर जीवन के अन्तिम लक्ष्य के अधिकारी बन गये।

आज से कुछ वर्ष पूर्व जब वे मीरीशत से भारत लौटे थे, उस समय आश्रम पर बंधारने पर यज्ञशाला के जिस पवित्र मण्डप में पुष्प बर्धा करते हुए हम लोगों ने तस्कृत के पक्षों से उनका स्वागत किया था, विधि की बिडम्बना

के कारण उसी स्थल पर अशुभ बर्धा करते हुए तस्कृत पक्षों में श्रद्धांजलि समर्पित करने की विवश होना पड़ा। अस्तु—
श्री स्वामी जी जब हमारे बीच में नहीं हैं, किन्तु उनके विचार एवं व्यवहार अनन्तकाल तक हमें प्रेरणा देते रहेंगे, हम सब का कर्तव्य है, आर्यसमाज के कार्य को अत्यन्त वृद्धता तथा सत्यनिष्ठा से प्रगतिशील बनाकर श्री स्वा भ्रुवानन्वजी की आत्मा को चिरशान्ति प्रदान करें।

अन्तरंगाधिवेशन की अचना (१३ फरवरी ६६ स्थान बरेली)

आर्य प्रतिनिधि समाध्य अन्तरंग समासदों को सूचित किया जाता है कि समा की अन्तरंग का साधारण अधिवेशन दिनांक १३ फरवरी १९६६ दिन रवि-वार को आर्यसमाज मन्डिर बिहारीपुर बरेली में आरम्भ होगा। अन्तरंग की प्रथम बैठक ९ बजे प्रातःकाल से मन्डिर में प्रारम्भ होगी। सदस्यों के निवास की व्यवस्था महिला सुधार महाविद्यालय में की गई है। १२ फरवरी को उप समितियों की बैठकें होंगी। अतः अन्तरंग सदस्य गणों से प्रार्थना है कि नियत समय पर धारा कर कृतार्थ करें।
—व्यग्रवत्त समा मन्त्री

नये वर्ष पर कर्ण रोग नाशक तैल अवश्य मगाइये

“कर्णरोग नाशक तैल” रजि० नं० १ शीशी ११), आंखों का “शीतल सुरमा” रजि० नं० १ शी० १११) आंखों का ‘शीतल अजन’ रजि० नं० १ शी० २), नेत्रों में ‘पीपुष अजन’ रजि० नं० १ शी० २११), ‘कुठार मोतिया बिन्दू’ रजि० नं० १ शी० ३११), दांतों में ‘शीतल अजन’ रजि० नं० १ शी० ११), बर्ब में ‘शीतल वाम’ रजि० नं० १ शी० १०० वं बीनाई में ‘शिखराज सुरमा’ नं० १ शी० ६), आंखों का ‘परबाल अजन’ नं० १ शी० १) ‘जवाहर सुरमा’ (स्वाह) नं० १ शी० ३) ‘जवाहर अजन’ (सफेद) नं० १ शी० २११) ‘शीतल मरहम’ नं० १ शी० १०० वं, अष्ट ‘शीतल काजल’ नं० १ शी० १११) सर्वा पैंकिग-पोस्टेज क्षरीवार के जिम्मे रहेंगा, आज ही हमसे मगाइये।
‘कर्ण रोग नाशक तैल’ सप्तोमालन मार्ग, नजीबाबाद यू.पी.

चम्पारण जिला आ.उ प्र.समा
प्रधान-श्री जीवणलाल जी मोतीहारी
उपप्रधान-श्री रामवल्लाल जी बेतिया
उपप्रधान-श्री योगेन्द्रप्रसाद जी एडवोकेट मोतीहारी। प्रधान मन्त्री-श्री बी० के० शास्त्री रबसोल, उपमन्त्री-श्री रामनारायण जी मोतीहारी, उपमन्त्री-श्री दोनानाथ जी नरकटियागज, कोषाध्यक्ष-श्री श्रद्धानन्द जी मलाही, निरीक्षक-श्री रामाजा ठाकुर रबसोल, सत्या निरीक्षक-श्री सत्यनारायणराय मेहसी।
अन्तरङ्ग सदस्य १२। न्याय समा का भी निर्माण किया गया।



मेरे 'कुल' गुरु का महा-प्रयाण

[ले० श्री स्ना० वेदव्रत जी एम० ए० अमरावती]

आकाशवाणी द्वारा प्रसारित समाचारी द्वारा यह सुनते ही हृदयाघात हुआ, "कि दि० २९ जून, ६५ को प्रातः आर्यसमाज के परमप्राण पूज्य स्वामी भ्रुवानन्द जी सरस्वती महाराज का निर्वाण हृदयगत अवस्य होने से हो गया।"

मैं लखनऊ में बैठा पू० स्वामी जी के दर्शनों की महती उत्कण्ठा में चातकवत् तृपित नयनों से बाट जोह रहा था, कि कब पू० स्वामी जी कानपुर पधारें और मैं श्री चरणों की धूल से स्वयं को कृताय कर मार्ग-दर्शन प्राप्त करूँ। अब तो परम पूज्य स्वामी जी के श्री चरणों में रहकर जो कुछ भी प्राप्त हुआ था, उसी के दृश्य चित्र पट के समान स्मृति-पट पर उमड़ते रहते हैं।

पूज्य स्वामी जी महाराज सन्यास दीक्षा से पूर्व आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के प्रधान होने के कारण पदेन गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के 'कुलपति' भी थे, प्रति वर्ष 'कुल' के वार्षिक महोत्सव पर पधारते ही वे परन्तु दो शब्द निवेदन का अवसर प्राप्त करना बड़ा ही कठिन होता था। मैं तथा स्व० डा० इन्द्र वर्मा जी (न्होटी अलीगढ़ निवासी) के मुमुक्षु स्ना० सुरेन्द्रपाल सिंह जी, जो कि मेरे सहपाठी थे, दोनों मिलकर स्वामी जी के चरणों तक पहुँचने के लिए पहले कु० सुखलाल जी 'भार्यमुसाफिर' (जो कि 'सुरेन्द्र' के पूजा जी भी हैं) के पास उपदेश ग्रहण करने जा पहुँचते थे। फिर घण्टों समय शका समाधान में लगता था, परन्तु बहुत देर तक मेरी शकाओं आदि के सुनने से न ऊबते ही वे और न सग-लाभ का लाभ हमें उठने ही देता था। सन् १९४९ ई० में गुरुकुल से स्नातक-दीक्षा के पश्चात् सन् १९५५ में जब स्वामी जी मोरीशस प्रचारार्थ जा रहे थे, मैंने पूज्य स्वामी जी से पत्र द्वारा प्रार्थना की थी कि बम्बई जाते समय केवल दो दिनों के लिए अमरावती (म०प्र०) पधार कर अपने दर्शन व उपदेशों से नगरवासियों को कृणु-हृत्य करें। तीसरे ही दिन तार द्वारा स्वामी जी ने मनोकामना पूर्ण करने की सूचना भेज दी तथा तदनुसार पधारें। मैं उस समय आयसमाज का मन्त्री था। पूज्य स्वामी जी ने कुछ अस्वस्थ होते हुए भी अपार जन समारोह में अपने प्रभावशाली तर्क व प्रमाणों से मराठी भाषियों के अन्तःकरणों से भी भावपूर्ण उद्गार निकलवा दिये कि हाँ केवल आर्य सिद्धान्तों का मार्ग ही मनुष्य को शान्ति, व सफलता का सच्चा मार्ग दर्शा सकता है। यह था उनका चरित्र व पाण्डित्य।

समय की सूझ, त्वरितवाग्मिता, प्रगाढ़ पाण्डित्य और तर्कपूर्ण भावाभिव्यक्ति के साथ-साथ पू० स्वामी जी का तप पूत चरित्र 'सोने में सुगन्ध' की उक्ति को चरितार्थ करता था।

पू० स्वामी जी के विछोह से मन के बाध अधीर हो रहे हैं, कि वे फिर न आयेंगे।

पू० गुरुकुल के श्री चरणों में श्रद्धाजलि अर्पित है।

—आर्यसमाज के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार से उग्होंने जो सेवाएँ की हैं, के
 सदा स्मरणीय रहेंगी। उनके निधन से आर्यसमाज को अवर्णनीय क्षति हुई है।
 आर्यजगत् में उनके निधन पर जो शोक मनाया जा रहा है, गुरुकुल वांग्मी उसमें
 सम्मिलित है। —प्रियव्रत वेदवाचस्पति आचार्य गुरुकुल कागड़ी

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती जी की अन्तिम क्रिया का दृश्य

मृत्यु की परिस्थितियां और मृत्यु के पश्चात्

(ले०—श्री आचार्य विद्वत्श्रवा व्यास एम० ए० वेदसाहित्याचार्य देहली)

सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में

जि स दिन श्री स्वामी जी की मृत्यु हुई मैं सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पहुँचा तो वहाँ लाला राम-गोपाल जी शालवाले तथा आचार्य श्री वैद्यनाथ जी बैठे सोच रहे थे। लोग आते-जाते थे। हम लोगों का सारा दिन देश देशान्तर में टुककाल करने में और रेडियो द्वारा यह दुःखद समाचार प्रसारित कराने में बीता था। साथ ही निरन्तर बम्बई से फोन मिलते रहना पडा कि स्वामी जी महाराज का शव सेठ प्रताप भाई की कोठी कच्छ कंसल से मर्हव द्वारा सस्थापित आर्यसमाज काकड-बाडी बम्बई में पहुँच गया है, वहाँकी की भीड़ लगी है। पहिले वायुयान द्वारा शव लाने का प्रयास किया गया, पर मौसम के खराब होने से प्रबन्ध न हो सका, अन्तिम सूचना यह मिली कि फ्रिडियर मेल से स्वामी जी महाराज का शव आज २९ जून सायकाल ७। बजे चलेगा और ३० जून सायकाल नई देहली स्टेशन पर पहुँचेगा।

सेठ प्रताप भाई ३० जून प्रातः ही वायुयान से देहली पहुँचे

सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री सेठ प्रतापसिंह जी धूरु जी वल्लभदास ३० जून को प्रातः ही बम्बई से देहली सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पहुँचे। सेठ जी के घर पर उन्हीं की गोद में स्वामी जी महाराज के प्राण निकले थे। हम लोग सेठ जी से स्वामी जी महाराज का अन्तिम दृश्य सुनना चाहते थे। सेठ जी का गलाबन्धा हुआ था शोल नहीं सके, केवल अश्रुधारा उनकी बह रही थी। केवल अल पीकर बिना कुछ खाये सेठ जी सारा दिन सभा कार्यालय में बैठे रहे। कुछ देर में सबलकर सेठजी ने सुनाया, कि— स्वामी जी कल २९ जून को प्रातः काल वायुयान

द्वारा देहली को आने को थे। प्रातः जब पोने ६ बजे को हुए स्वामी जी मुझे बोले कि प्रताप! अब समय हो गया कपड़े पहिने और चलो मैं तैयार हो गया हूँ। लिफ्ट के नीचे कार मगवाई और हवाई अड्डे पर चलने को जब मैं तैयार होकर आया और स्वामी जी को कहा कि कार आ गई है। स्वामी जी बोले कि प्रताप, कुछ तबियत खबडा रही है, पना नही भया कारण है। फौरन डाक्टर बुलाया गया। डाक्टर ने दवा दी और कहा कि आपकी स्थिति ठीक नहीं है आप ज्ञाने का विचार छोड दे। स्वामी जी ने कहा कि मुझे देहली पहुँचकर कानपुर सार्वदेशिक सभा के अधिवेशन में जाना है, वहाँ आर्यसमाज की एक विकट स्थिति है, उसको सार्वदेशिक के अधिवेशन में ठीक करना है। स्वामी जी को सबने ही मना किया यहाँ तक कि मातुश्री ने भी प्रार्थना की पर स्वामी जी ने अपना विचार नहीं बदला। बोले कुछ विश्राम कर लूँ। तब चलूँगा, हवाई जहाज का समय छूटने का ७ बजे है। यह कहकर स्वामी जी नीचे विछे कालीन पर लेट गये। फिर उठने का यत्न किया कि चप्पल पहनूँ और चलूँ मेठ जी ने रोते हुए बताया कि मी जी उठें और मेरे हाथों पर हाथ रखें। निकला और प्राण निकल गये। सारा घर रो पडा और हाहाकार मच गया।

नई दिल्ली स्टेशन पर स्वामी जी के शव का आगमन

३० जून सायकाल नई दिल्ली स्टेशन पर फ्रिडियर मेल द्वारा स्वामी जी का शव एक पूरे डिब्बे में पहुँचा। हजारों की सख्या में नर-नारी सार्वदेशिक सभा तथा

दिल्ली के आर्यसमाजो के लोग तथा अन्य गण्य मान्य व्यक्तिक नई दिल्ली स्टेशन पर मौन मुद्रा मे एकत्र होगये । फ टियर मेल स्टेशन पर पहुंचा । जिस डिब्बे मे स्वामी जी का शव था, उसके दोनो ओर ओ३म् के झण्डे लगे थे । भीड़ उधर दौड़ी । सेठ प्रताप भाई के हाथ मे उस डिब्बे की चाभी थी, सेठ जी ने उस डिब्बे का ताला स्वयं खोला । स्वामी जी का शव एक लकड़ी की पेंटी मे था उसको उठाकर स्टेशन से बाहर लाकर एम्बुलेस कार मे रखा गया । ला० रामगोपाल जी और मैं उसमे शव को लेकर बैठ गये शेष जनता अपनी कारो से कुछ अन्य यानों से सावदेशिक सभा की ओर चल पडी । सब मौन-मुद्रा मे ही थे ।

सावदेशिक सभा कार्यालय पर स्वामी जी का शव पहुंचा

सावदेशिक सभा के कार्यालय के सामने रामलीला मैदान मे शामियाना कनात आदि लगाकर एक पटगृह बनाया गया वहा तखत पर स्वामी जी का शव जो एक लकड़ी की पेंटी मे था, रखा गया और स्वामी जी का विदेश मे लेंचा गया एक सुन्दर फोटो वहा लगा दिया गया । सारी रात सब जागते रहे और लोग आते जाते रहे । प्रात काल ६ बजे स्वामी जी का शव खोला गया उस दिन १ जुलाई थी और ४८ घण्टे स्वर्गवास को हुए हो चुके थे । ओ३म् के झण्डो से स्वामी जी को ढाँका गया मुह खुला छोड दिया गया जिससे लोग अतिम दर्शन कर सके । प्रात काल से ही भीड़ जमा होनी प्रारम्भ हो गई । १ जुलाई प्रात ८ बजे शव यात्रा प्रारम्भ हुई । एक ट्रक पर स्वामी जी की अर्धा रस्ती गई मुह खुला हुआ था । ट्रक पर बा० कालोचरण जी आर्य वर्तमान स्वामी अखिलामन्द जी के पुत्र और मैं तथा आर्यवीर दल के एक सेनानी तथा एक अन्य आर्य महानुभाव अर्धा के चारो कोनों पर रहे ।

शव यात्रा

जब यह शवयात्रा चली सब नर-नारी गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर रहे थे हजारो की संख्या मे नर-नारी शव के साथ थे । मार्ग में छत्तो से भक्त लोग फूलो की

बर्षा कर रहे थे । जिबर से शव जाता था लोग फूलों की बालाए भेंट करते थे हमारे आर्यवीर दल के सेनानी उन हारो को लेकर शव पर चढ़ाते जाते थे और जब हार बहुत जमा हो जाते थे और स्वामी जी ढक जाते थे तब हार हटा दिये जाते थे और फिर हारो का ढेर लग जाता था । रामलीला मैदान से अजमेरी गेट धावडी बाजार चादनी चौक लालकिला होता हुआ निगम बोध घाट को यह शव जा रहा था । चित्रकार जगह जगह पर फोटो ले रहे थे । मार्ग मे जो भी आर्यसमाज पडी आर्यसमाज नया बास आदि ने स्वागत किया । आगे चलकर आर्यसमाज दीवान हाल पर वह शव कुछ देर रुका । मार्ग मे जगह-जगह शव यात्रियो को जल से स्वागत किया गया । और अन्त मे स्वामी जी के शव को लेकर हम लोग निगम बोध घाट यमुना निकूल पर ९॥ बजे पहुंच गये । इस शव यात्रा मे दिल्ली के आर्यसमाजो पुरोहित वर्ग तथा सन्यासी मण्डल भी अच्छी सख्या मे था जिनकी पूरी सूची सावदेशिक पत्र में प्रकाशित होगी । महात्मा आनन्द स्वामी जी महात्मा आनन्द भिक्षु जी स्वामी आत्मानन्द तीर्थ आदि तथा डी० डी० राम पटना, वीरेन्द्र जी मालिक प्राप आदि सब प्रान्तो के लोग प्रात काल शव यात्रा मे सम्मिलित होने लिए देहली पहुंच चुके थे । यह अखिल भारतीय शैली पर शवयात्र थी ।

अन्त्येष्टि क्रिया

निगम बोध घाट पर रेलवे आफिसर लोग एस० एन० सक्सेना डी० एम० आदि भी पहुंच गये । उ-होने दिल्ली के स्टेशनों पर लाउड स्पीकर द्वारा ९॥ बजे से यह घोषणा कराई कि स्वामी जी महाराज का शव यमुना पर पहुंच चुका है । बाहर से आने वाले लोग सावदेशिक सभा न पहुंचे प्रत्युत सीधे यमुना तट पर पहुंचें । ९॥ बजे से ११॥ बजे तक हम लोग शव को लिए निगम बोध घाट पर प्रतीक्षा करते रहे रेलो से उतरने वाले स्वामी जी के भक्त निगम बोध घाट पर सीधे पहुंच रहे थे । अन्त्येष्टि क्रिया के लिये एक मन शुद्ध देशी धी, दो मन सामग्री, एक मन चन्दन तथा अन्य सामान एकत्र था । स्वामी प्र. बालकृष्ण जी के आश्रम हरदुआगंज से स्वामी हरिहरानन्द जी २९ जून को ही देहली एक पीपा धी लेकर पहुंच गये थे तथा उन्होने और १००) रूपयो का



सामान धी के अतिरिक्त मगाया ।

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती जी महाराज की अन्त्येष्टि क्रिया निगम बोध घाट पर किस स्थान पर की जावे वह स्थान सेठ प्रतापभाई जी तथा आचार्य वैद्यनाथ जी के साथ मैं एक दिन पूर्व ही श्मशान घाट पर जाकर निश्चित कर आया था । बरेली नगर का श्मशान घाट भारत में एक प्रसिद्ध स्थान है वहा महात्मा नारायण-स्वामी जी की अन्त्येष्टि क्रिया होने पर उस स्थान पर पूर्ण वैदिक रीति से एक विशेष ढग की अन्त्येष्टि वेदि हमने बनाई है । देहली के श्मशान घाट पर साधारण वेदी है उस पर हमारा विचार बरेली जैसी वेदी बनाने का है ।

१ जुलाई ११। बजे दिन के निगम बोध घाट पर दाह क्रिया प्रारम्भ हुई । प्रश्न यह था कि अग्नि कौन लगावे । स्वामी जी महाराज अन्तराष्ट्रिय व्यक्ति थे अतः सार्वदेशिक सभा के सेठ प्रताप भाई जी निश्चित किये गये उसके कई कारण थे । प्रथम तो यह कि वे सार्वदेशिक सभा के प्रधान हैं । दूसरे उनके घर पर स्वामी जी का नश्वर शरीर छूटा तथा तीमरा कारण यह था स्वामी जी महाराज सेठ जी के पिता जी शूर जी बल्लभदास के गुरु थे । स्वामी जी के सामने प्रताप भाई पैदा हुए बचपन से पले और स्वामी जी ने ही प्रतापभाई का यशोपवीत सस्कार कराया प्रताप भाई स्वामी जी के पुत्रवत् थे और प्रताप भाई की गोद में ही स्वामी जी का स्वर्गवास हुआ । अतः प्रताप भाई ने एक बड़े खूब में कपूर जलाकर महात्मा आनन्द स्वामी जी के सहयोग से अग्नि दाह प्रारम्भ किया । स्वामी जी का जब चन्दन की समिधाओं तथा अन्य समिधाओं में रखा हुआ था । अन्तिम समय स्वामी जी का मुह खुला रखा या मुह पर मैने रुमाल डाल दिया था । बार बार दर्शक दशन करना चाहते थे जो भी नया दर्शक पहुंचता था मुह खोलकर दर्शन कराये जाते थे । श्मशान घाट पर दिल्ली के आर्य स्त्री समाजों की भी बहुत भीड़ थी । मनो पुष्पमालाओं से ढके स्वामी जी के शव को यमुना जल से सींचा गया था । लगभग पचास आर्य विद्वान् मन्त्रों का उच्चारण कर रहे थे । सन्यासियों की बहुत बड़ी भीड़ थी । आर्य महिलाएँ अग्नि की लपटों की परवाह न करके श्रद्धावेश में सामग्री

की आहुतिया दे रही थी । श्री आचार्य वैद्यनाथ जी मन्त्रोच्चारण की व्यवस्था कर रहे थे और मैं तो शव और सामग्री की व्यवस्था में लगा था । चारों ओर से आर्य विद्वान् मन्त्रध्वनि कर रहे थे । कुछ देर में देखा कि स्वामी जी का नश्वर शरीर भी अग्नि की लपटों में मिलकर पचतत्वों में मिल गया । अब वह मधुर चेहरा, आर्यसमाज की चिन्ता में ही गम्भीर मुद्रा वाला बाल-ब्रह्मचारी का मुख, ऋषि की भक्ति में तड़पने वाला देह, विद्या का सूर्य गुरुजनों की भक्ति वाला मेरा ४० वर्ष का साथी इस सप्ताह में अब देखने को भी नहीं मिल सकता । मेरी दृष्टि में यह आर्यसमाज के सच्चे नेताओं का अतिम पटाक्षेप है । अन्त में आनन्दभिक्षु जी ने प्रार्थना कराई । सब कानपुर गये । जो रह गये उन्होंने अस्थि सचय करके यमुना के अर्पण किया । किसी का कहा न माना कानपुर जाऊंगा की रट रही । जाओ अब तो आत्मा ब्रह्म में विश्राम करेगा और अस्थिया यमुना में । प्रभु का कहा ही माना ।

मृत्यु की परिस्थितियाँ

मित्र ! तुम क्यों मरे, किस चिन्ता में हार्टफेल हुआ, न तुम्हारा कोई परिवार था और न घर । मेरे साथी ! तुम्हें किस बात की चिन्ता थी क्या बुख था । आवाज आई कि आर्यसमाज की बो विचारधाराओं की टक्कर में मेरी मृत्यु हुई ।

१—एक विचारधारा यह है कि—

(क) सार्वदेशिक सभा किसी एक नगर या एक देश की सत्था नहीं है । इसके अधिवेशन केवल देहली में न होकर सर्वत्र हो । आर्यसमाज का सार्वदेशिक गौरव बढ़े ।

(ख) नीचे से ऊपर तक आर्यसमाज में अनुशासन रहे । आर्यसमाजों प्रान्तीय सभाओं के शासन में रहे और प्रान्तीय सभाएँ सार्वदेशिक सभा के पूर्ण नियन्त्रण और अनुशासन में रहे इससे मेरे आर्यसमाज का गौरव रहेगा ।

(ग) किसी भी प्रान्त का सार्वदेशिक में अकेला इतना बहुमत नहीं हो जाना चाहिए कि एक ही प्रान्त सार्वदेशिक का मालिक बनकर बैठ जावे ।



हे आर्य जगत् के मूर्धन्य सभ्यासी ! क्या इसके प्रति-
कूल भी कोई विचारधारा है ?

हा है ।

वह क्या है ।

सुनो हे आर्यसमाज के भावी कर्णधारो ! एक दूसरी
विचारधारा का जन्म हुआ है ० यह है कि—

(क) सार्वदेशिक सभा का अधवेशन देहली से बाहर
न हो ।

(ख) प्रान्तीय सभाओ पर सार्वदेशिक सभा का
अधिकार नहीं है, प्रान्तीय सभाएँ स्वतन्त्र हैं । सार्वदेशिक
सभा एक फेडरेशन है मिलकर बैठ गये । न बैठे । हम
अलग हैं प्रत्येक प्रान्त स्वतन्त्र है ।

(ग) यदि हमारी प्रान्तीय सभा बड़ी है तो हमारे
लोग अधिक से अधिक सभ्या मे सार्वदेशिक मे रहेंगे और
प्रातो के चाहे थोड़े रहे ।

ओ भावी कर्णधारो ! मैं तो चल बसा । यदि
अगला जन्म हुआ तो फिर आर्यसमाज की सेवा करूँगा
और कोई इच्छा नहीं है । आर्यसमाज के परम तपस्वी
वीतराग मेरे गुरु पूज्यवर स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज
ने मुझे आर्यसमाज के लिये बनाया । मैंने अपने शरीर के
एक एक रोम से आर्यसमाज को बनाया प्रत्येक श्वास
आर्यसमाज के लिए लिया । आयसमाज के लिए श्वास
छोड़ा । मेरा स्वास्थ्य ठीक न होने पर भी मृत्यु का
आह्वान किया पर आयसमाज के सगठन का काम नहीं
छोड़ा ।

हे मेरे उत्तराधिकारियो !

अपना गौरव मन सोचो । आयसमाज के गौरव को
अपना गौरव समझो । आर्यसमाज की प्रतिष्ठा मे अपनी
प्रतिष्ठा समझो । मैं चला गया और तुम भी एक दिन
चले जाओगे पर मेरा यह आर्यसमाज रहेगा । इसके सग-
ठन को यदि दृढ़ रखना चाहते हो तो नीचे से ऊपर तक
अनुशासन मे रहो ।

(क) आर्यसमाजे प्रान्तीय सभाओ के अनुशासन
मे रहे ।

(ख) प्रान्तीय सभाएँ सार्वदेशिक के अनुशासन

स्वावलम्बी स्वामी जी

श्री पूज्य स्वामी जी महाराज से मेरा बडा प्रनिष्ठ
सम्बन्ध रहा है । स्वामी जी आर्यसमाज के
सिद्धान्तो के विशेष मर्मज्ञ थे । स्वामी जी के अन्दर अद्-
भुत प्रतिभायें थी । कई विशेष गुण श्री स्वामी सर्वदानन्द
जी के आपके अन्दर विद्यमान थे । आपके अन्दर एक
अद्भुत नेतृत्व शक्ति थी । एक विशेषता यह थी कि जब
कभी कुछ विरोधी भी विरोधात्मक भावना लेकर आपके
समक्ष जाते थे, तो आप अपने बातचीत के ढग से उनकी
विरोधी भावनाओ को समाप्त कर देते थे । स्वामी जी
कितने स्वावलम्बी थे, इसका केवल एक दृष्टान्त आपके
सामने रखता हू ।

सन् १९४४ की बात है, जबकि मैं रावलपिण्डी मे था
श्री स्वामी जी महाराज (उस समय श्री प०युरेन्द्र शास्त्री)
को आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के लिये आमन्त्रित किया
गया । आप पधारें, सफर के कपड़े कुछ मँले हो गये थे,
सब कपड़े इकट्ठे करके स्नानागार मे धोने के लिए चल
पडे । मैंने कहा शास्त्री जी आप इन्हे रख देंगे इनके धोने
की व्यवस्था हम कर देंगे । उन्होंने कितना सुन्दर उत्तर
दिया—

विद्याभास्कर जी ! यह तो मेरा अपना काम है,
मनुष्य को अपना कार्य अपने हाथ से ही करना चाहिए ।
कितना स्वावलम्बन तथा सरलता थी उनकी इस बात मे ।

आर्य-जगत् की एक बहुत बड़ी शक्ति सदा के लिए
चली गई ! न जाने कहाँ इस महती क्षति को कौन पूरा
करेगा भगवान् जाने ।

—विद्याभास्कर शास्त्री
मन्त्री आर्य समाज देहरादून

मे रहे ।

(ग) आर्यसमाज को सार्वदेशिक बनाओ ।

(घ) और सब प्रास्तो का ध्यान रखो केवल
अपना नहीं ।

यदि ऐसा करोगे आर्यसमाज सुदृढ़ रहेगा । प्रभु तेरी
इच्छा पूर्ण हो, मैं तो अपनी निभाकर चला ।

पूज्यपाद स्वामी—

ध्रुवानन्द जी सरस्वती

पूज्यपाद स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती आर्यजगत् के पू एक महान् विद्वान्, नेता तथा महोपदेशक थे।

आपका कार्यक्षेत्र विशेषतः बिहार प्रान्त रहा। आप ने बिहार में तूकानी दौरा करके बौद्धिक सम्बन्ध को पहचाना। वाराणसी के शास्त्रार्थ महारथी प० ले० पी० चौधरी जी काव्यतीय आपके परममित्रो में हैं। दरभंगा जिले के 'नाजिरपुर' में पौराणिक पण्डितो के साथ आपने ब चौधरी जी ने 'वर्ण व्यवस्था' पर शास्त्रार्थ किया। आपकी विद्वता व पाण्डित्य के कारण पौराणिक पण्डितो का घोर पराजय हुआ।

सबप्रथम आपके व्याख्यान सुनने व दर्शन करने का सीनाय मुझे लॉरे में 'श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा' पञ्जाब के महोत्सव में हुआ था। उनकी भाषण-शैली रोचक व हृदय में पठने वाली होती थी।

—शिव पूजनसह कुशवह, एम ए सिद्धान्तवाचस्पति कानपुर

श्रद्धा के दो सुमन

२९ जून विधाता का क्रूर श्मश्रु, आर्यजगत् के लिए एक आकस्मिक कुठाराघात कर गया। हम देखते ही रह गये और हमारा प्रिय कमण्डलु हमें रोता बिललता छोड़ चला गया। आज जबकि आयसमाज एक बोराहे पर लबा है। राष्ट्र पर सकट छाया हुआ है, हिन्दी भाषा के ऊपर कुठाराघात हो रहा है, हमारा पथ प्रदर्शक हम से बिलुप्त गया। ऐसे महापुरुष के लिए आज आयजगत् ही नहीं समूची मानव शक्ति बिलल रही है। यद्यपि आज ये हमारे बीच नहीं हैं, पर उनके विचार उनकी निष्ठा सर्वत्र मानवमात्र का पथ-प्रदर्शन करती रहेगी। देश के महान् सपूत आर्यजगत् के कर्मठ नेता पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी को मैं अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करती हुई ईश्वर से यही प्रार्थना करती हूँ कि उनकी दिवंगत आत्मा को क्षान्ति प्रदान करे। —प्रमोला आर्य एम०ए० हापरस

स्व. स्वा. ध्रुवानन्दजी महाराज

स्वर्गीय स्वामी जी जब प. पुरेन्द्र शास्त्री जी थे, उस समय मेरी सबप्रथम भेंट १९२३ में स्व० राजा अवधेश सिंह जी की कोठी नगर प्रतापगढ़ (अवध) में हुई थी। प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होकर वे मुझसे भी मिले। तरसवान् कहीं न कहीं उत्सवों, सम्मेलनों आदि अवसरों पर प्रायः उनके दर्शन होते रहते। कटरा समाज के उत्सव पर भी आया करते थे। एक वर्ष तो पूज्यपाद बीनराग स्वामि सदानन्द जी महाराज को समाज के वार्षिकोत्सव में ले आए। मैं उनके निमन्त्रण पर हरदुआ गज भी कई बार गया।

स्नेहबन्ध परिवार में भी उनका प्रवेश हो गया। मेरे सम्मिलित परिवार में लघु भ्राता के पुत्रो पुत्रियो एवं धेवनी के कई सस्कार आपने कराये। विद्यावनी एम ए का यज्ञोपवीत सस्कार १९३५ में, इनकी पुत्री का यज्ञोपवीत सस्कार १९६२ में इनके नव-निर्माणित गृह प्रवेश मेरठ में पूज्य स्वामी जी ने ही कराए। इनके दा छोटे भ्राताओं के यज्ञोपवीत सस्कार १९५१ में कराए। इनकी छोटी बहिन का यज्ञोपवीत एवं विवाह-सस्कार १९६२ में कराए। विद्यावनी आश्रम को वार्षिक वार्षिक सहायता भी भेजा करती है।

मैं उनके सन्यासाश्रम सस्कार में उपस्थित न हो सका, उनको बड़ा दुःख हुआ था, मुझे तो हुआ ही।

विदेशी यात्राओं में जब कहीं वह जाते थे, मुझ से पत्र-व्यवहार बराबर होता रहा। हर पत्रोत्तर में वह यह अवश्य लिखते थे कि आपका पत्र तो एक समाचार पत्र होता है जिसके द्वारा अत्यधिक समाचारों से वे अवगत होते थे।

प्रयाग होकर जब भी वह यात्रा करते तो रात्रि में गौ का दूध अवश्य पान करते थे।

१-७ १९६५ को निगमबोध घाट दिल्ली में उनके अन्त्येष्टि सस्कार में भी मैं उपस्थित था।

हा स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज की आत्मा को धन्य है, वन्दान की भूमि जिसने ऐसा समाज सेवक, अनन्यक कायकर्ता जाति व देश की सेवा में दिया।

—मातागुलाम, उपप्रधान कटरा प्रयाग

एक संस्मरण

(ले०—धी महेशचन्द्र आर्यं विलखुआ)

१५ वर्ष पहले की बात है कि मैं फरीदनगर जिला मेरठ में आर्यसमाज का मन्त्री था मेरी प्रार्थना पर श्री राजगुरु सुरेन्द्र शास्त्री पुत्र के नामकरण सस्कार पर फरीदनगर पधारे। मैंने सस्कार में गुरु जी को ५१) दक्षिणा के लिये दिये तो गुरु जी बोले तुम आर्यसमाज का प्रचार बन्द करना चाहते हो ? मैंने हाथ जोड़कर पूछा—कैसे तो आपने बताया कि तुमने 'सैकड़ों आदमी कस्वे के इकट्ठे किये, हलुवे आदि का प्रबन्ध किया ५१) दक्षिणा के दे रहे हो ? इसका प्रभाव जनता पर यह पड़ेगा कि आर्यसमाज की रीति से सस्कार कराने में तो सैकड़ों रुपया खर्च होते हैं और कोई सस्कार कराता हुआ भी नहीं करायेगा। अच्छा तुम मुझको २) दक्षिणा में दे दो और फिर जितने पड़ित सस्कार में है दो-दो रुपये इनको भी दो और फिर कहा कि अच्छा होता तुम कम से कम खर्च करते।

(२) हमने उनको टिकाने के लिये एक मुसलमान

आदि में नी खूब सफल प्रचार कार्य किया। स्वामी जी को आर्यसमाज और सार्वदेशिक समा के प्रति की गई भ्रूलुब्धान सेवाओं के आदर स्वरूप आर्यसमाज ने उन्हें सार्वदेशिक समा की स्वर्ण जयन्ती महोत्सव और नवम आर्य महासम्मेलन का प्रधान चुनकर अपने एक बड़े कर्तव्य का पालन किया था।

श्री स्वामी जी महर्षि दयानन्द के तपस्वी मित्र थे। उनको विशद् कीर्ति सर्वत्र कायम रहेगी।

उनके निधन से आर्यसमाज की शो क्षति हुई है उस की पूर्ति होनी सम्भव नहीं है। परमात्मा विचगत् आत्मा गकीसवी प्रदान करे।



भाई की बैठक माग ली और उसको खूब साफ की और तमाम तसवीरों आदि हटा दी थी। जब गुरु जी को उसमें ठहराया ५ मिनट के बाद ही बोले क्या तुम्हारे मकान में मेरे ठहरने के लिये स्थान नहीं था ? तुमने मुसलमान के मकान में क्यों ठहराया एक घण्टे के अन्तर मेरा प्रबन्ध दूसरी जगह कर दो मुझको तुम्हारा मकान छोटा टूटा-फूटा ही अच्छा है। हमने फौरन ही अपने मकान में प्रबन्ध कर दिया।

अगले दिन जब हम लोग इकट्ठे होकर शास्त्री जी के पास गये और कुछ उपदेश की प्रार्थना की तो आपने कहा—आजकल हर आर्यसमाजी को फिर समाज सुधार की है, मानो कि समाज सुधार का ठेकेदार आर्यसमाजी ही हो। (तुम लोग) केच दयानन्द के नियमों को भी नहीं पढ़ते हो। स्वामी जी ने लिखा है शारीरिक आत्मिक-सामाजिक उन्नति करना। तो आर्यसमाजी न शरीर को शक्तिवान बनाते न आत्मा को बलवान, और लगे समाज को सुधारने की बात करते हैं जो आदमी अपनी उन्नति (शारीरिक व आत्मिक) नहीं कर सकता वह आदमी समाज की उन्नति भी नहीं कर सकता। यही कारण है कि आज के समाजी समाज पर प्रभाव नहीं पड़ता तो तुम लोग पहले अपने शरीर व आत्मा को बलवान बनाओ, समाज को बाद में।

(३) स्वामी जी की आयु उस समय ६० वर्ष से भी ऊपर थी फिर भी नियम के साथ व्यायाम करते थे फरीदनगर भी उन्होंने इतना व्यायाम किया कि हम जबान होते भी इतना नहीं कर सकते थे।

(४) ४-५ मास के पश्चात् हम तीन चार समाजी गुरु जी के दर्शन करने दिल्ली गये, उस समय हमारी समाज का एक प्रभावशाली नीजवान सभासद विजली से मर चुका था, जब गुरु जी ने उसका समाचार सुना तो बोले—“ऐसा ही होना था।”

गुरु जी को ईश्वर ने अटूट प्रेम व श्रद्धा थी।



स्वा. ध्रुवानन्द के प्रति श्रद्धांजलि

ज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज के अन्तिम दर्शन पू. मेरठ अधिवेशन में जब २८-२९ मई ६५ में हुए—चरण स्पर्श करने पर उन्होंने कृपापूर्ण अपना शुभाशीर्वाद दिया।

भरथना में कई बार पधारे परन्तु अन्तिम बार वे हैदराबाद सत्याग्रह से विजयी होकर सन् १९५० में पधारे। भरथना समाज ने उनका धूम-धाम से हादिक स्वागत किया और जलूस निकाला। उन्होंने जब हैदराबाद आर्य सत्याग्रह की सफलता, जेठ यातनाओं के रोमांचकारी बलिदानों का वर्णन सुनाया तो सारी जनता द्रवीभूत हो गई। वे तप, त्याग, साहस, वीरता, सयम,

सत्यता और निर्भयता की साक्षात् मूर्ति थे। वे आजन्म ब्रह्मचारी रहे और अपने उपरोक्त सद्गुणों से उन्होंने आर्यसमाज में उच्च से उच्च पद, आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के प्रधान पदों को ही नहीं प्राप्त किया किन्तु परिव्राजक रूप में अफ्रीका, मारीशस आदि विदेशों में जाकर भी विश्व-ख्याति प्राप्त की। उन्होंने आर्यसमाज का कार्य करते हुए ही बम्बई में २९-६ ६५ को सद्गति प्राप्त की। सारे आर्य जगत् के लिये उनका जीवन प्रेरणा देने वाला है।

—मगवनदयालु मुस्तार

उपप्रधान, भूतपूर्व अन्तरग सदस्य आ प्र सभा लखनऊ

आर्यमित्र की उन्नति के लिये—

डा० सूर्यदेव शर्मा स्थिर निधि

अन्तरग समा दि० ९-५-६३ के निश्चयानुसार

विषय सं० २४ थी प० सूर्यदेव शर्मा एम० ए० अजमेर का आर्यमित्र सहायताार्थ धन दिये जाने विषयक पत्र विचारार्थ प्रस्तुत होकर श्री शर्मा जी का पत्र पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि दानी सज्जन की निम्न शर्तों के लिये चार सहस्र रुपये दान लेना स्वीकार किया जाये। धन प्राप्त होने पर एफ० बी० में जमा किया जाए।

१—इस निधि का नाम डा० सूर्यदेव स्थिर निधि होगा।

२—इस निधि की बनराशि स्वामी रूप में समा में वृषक जमा होगी।

३—इसके ब्याज से प्रति वर्ष सार्वजनिक सत्यागों, पुस्तकालयों एवं बाचनसालयों को आर्यमित्र लागत मूल्य में बिया जाया करेगा। बचान्त में शेष धन आर्यमित्र की उन्नति में लगाया जायेगा।

४—धर्म में कम से कम दो बार जनवरी, जुलाई मास में इस निधि की सूचना प्रमुख शर्तों के साथ 'आर्यमित्र' में प्रकाशित होगी।

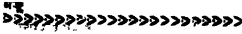
५—सम्मान रूप में 'आर्यमित्र' सवा दानी सज्जन को भेजा जाया करेगा। जहाँ जहाँ उसकी सूची बानी सज्जन के पास भेजी जाया करेगी।

६—आर्यमित्र का प्रकाशन बन्द हो जाने पर इस निधि का क्याज वैदिक साहित्य प्रकाशन में लगाया जायेगा।

—चन्द्रवत्स तिवारी सन्नी, आर्य प्रतिनिधि सभा, लखनऊ



डा० सूर्यदेव शर्मा



स्वामी ध्रुवानन्द जी का कर्तव्य-पालन

[संस्मरण]

(श्री रामचन्द्र जी एडवोकेट, ऋषिकेश)

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश में, जब श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने सबसे प्रथम आर्य समाजों का निरीक्षण करना आरम्भ किया था, और इतना श्रम करते थे कि एक-एक दिन में तीन-चार समाजों का निरीक्षण कर लेते थे। साथ में वे आसन में लिपटा हुआ चादर आदि और शोला रखते थे, समाज का निरीक्षण करने के साथ वहा के अधिकारी बर्ग की परीक्षा भी लेते थे। हसमुख और विनोदप्रिय होने के कारण सब कार्य प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न कर लेते थे, खाने-पीने की भी परवाह नहीं थी। निरीक्षक रूप में ही प्रथम बार वह दोपहर की गाड़ी से नगीना पहुँचे। किसी को कोई सूचना नहीं थी, स्टेसन से तागा भी नहीं लिया, आसन बगल में दबाकर और शोला हाथ में लेकर शहर को चल दिये किसी से पूर्व परिचय भी नहीं था बाजार में आकर मन्त्री आ० स० का पता पूछा। मन्त्री का मकान तो दूर था बाजार में उपमन्त्री की दुकान थी, किसी ने उसी का पता बता दिया। आप दुकान के आगे जाकर खड़े हो गये और पूछा क्या आप आ० स० के मन्त्री हैं? उन्होंने उत्तर दिया कि मैं उपमन्त्री हूँ। आप सेवा बतलाइये तब कहा कि मैं निरीक्षण करने सभा से आया हूँ। उपमन्त्री जी ने तुरन्त दुकान बन्द करके उनसे कहा कि मन्दिर में चलिये वही मन्त्री जी भी आ जायेंगे। मन्दिर में आकर उनको हाल में विश्राम करने को कहा और भोजन के लिये पूछा। कर्मचारी मन्त्री जी को बुलाने चला गया। उस समय वह ५० घुन्नेर शास्त्री थे। भोजन के लिये कह दिया कि भोजन धामपुर कर चुके हैं और वहा का निरीक्षण करके ही यहा आये हैं। मन्त्री जी के आते ही निरीक्षण कार्य आरम्भ कर दिया। इस बीच में ऊप्य अधिकारी भी बुला लिये गये। मैं कचहरी में था, मेरे पास भी सूचना गई। मैं तीन बजे के लगभग समाज मन्दिर में पहुँचा तो कार्य समाप्त होने वाला था। निवृत्त होकर मेरी ओर देखा, मैंने पूछा कि सब विभाग देख लिये या कोई शेष है तो भुसकराकर कहा कि जो अधिकारी यहा उपस्थित है,

उनको और उनके कार्य को देख लिया। केवल प्रधान की परीक्षा नहीं ली। मैं उनको उठाकर बात करते हुये अपने निवास स्थान पर ले गया और अपने पुत्र से कहा कि कुछ जलपान का प्रबन्ध करो। शास्त्री जी ने तुरन्त रोक दिया और कहा कि मैं बार-बार नहीं खाया हूँ। अपनी आदत नहीं बिगाडना। ग्रामों में भी जाना पड़ता है, वहा जलपान क्या मिलेगा। मैंने निवेदन किया कि शास्त्री जी ग्रामों में ऐसी वस्तु मिलती है, जो शहर में उपलब्ध नहीं। कुछ आग्रह के पश्चात् कहा कि अच्छा बेल का शरबत पिलाओ और केवल बेल का शरबत लिया। इस बीच में मेरे पुत्र के लिये पूछा क्या वह आपका पुत्र है और बतलाने पर उससे सध्या के मन्त्र सुनने आरम्भ कर दिये और मेरी परीक्षा नहीं हुई। स्टेसन पर कहने लगे कि आज ही नजीबाबाद समाज को देखना है।

उसके पश्चात् वार्षिक उत्सव पर आये और तीनों दिन मेरे गृह पर भोजन करने की कृपा की।

हैदराबाद सत्याग्रह में जाने से पहिले भी आये? और चन्दा करके ले गये। उस दफा उनका व्याख्यान शिव मन्दिर के मैदान में कराया गया, वहाँ दान के लिये अपील पर काफी धन मिला।

हैदराबाद जेल से वापस आकर भी नगीना गये और वहा के हालात सुनाते हुये बताया कि मेरा नाम पुलिश की रिपोर्ट में राजगुरु घुन्नेर शास्त्री लिखा था-जेल वालों ने पूछा आपका नाम राजगुरु पिता का नाम घुन्नेर जाति शास्त्री। दक्षिण में रिवाज इसी प्रकार लिखने का है जैसे महारत्ना जी मोहनचन्द करमचन्द गाधी थे। जेल वालों को बतलाया कि वास्तविकता क्या है, दूसरी बाड जेल के भोजन की बतलाई कि मक्की की कच्ची रोटी जब नहीं खाई गई तो टीन के सायवान पर फेंक दी ताकि कोई परन्द ले जावे, किन्तु वही कच्ची रोटी धाम को देखा तो भली प्रकाश पक गई थी, वह कहने लगे कि बडी स्वादिष्ट हो गई थी। स्वामी ध्रुवानन्द आ० समाज और वैदिक धर्म के प्रचार में ही मरते दम तक लगे रहे।



सभा के आगामी वृहद- धिवेशन के लिये निमन्त्रण-पत्र भेजिये

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का वार्षिक साधारण अधिवेशन (वृहद-धिवेशन) कर्ना पर हो, यह विषय सभा के विचाराधीन है। अतः प्रदेशीय समस्त आर्यसमाजो को सूचित किया जाता है कि जो आर्यसमाज अपने नगर, में सभा के वृहदधिवेशन को आमन्त्रित करना स्वीकार करे वह अपने-अपने स्थानीय आर्यसमाज की अन्तरग में इस विषय को प्रस्तुत कर आर्यसमाज की अन्तरग के प्रस्ताव के साथ निमन्त्रण-पत्र १५ जनवरी १९६६ तक सभा कार्यालय में भेजने की कृपा करें।

आगरा जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा की स्थापना

आगरा जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा की स्थापना का उद्घाटन ५ दिसम्बर को आर्य प्रतिनिधि सभा उ प्र के प्रधान श्री मदनमोहन जी वर्मा द्वारा संपन्न किया गया। आगरा आर्यसमाज का मुख्य केन्द्र है। अभी तक जिला सभा का बहा अभाव था इस अभाव की पूर्ति के लिए सयोजक श्री रोशनलाल जी प्रिंसिपल अन्तरग सहस्य जा० प्र० सभा उ० प्र० का प्रयत्न विशेष रूप से सराहनीय है।

—आर्य समाज देवबन्ध का वार्षिक उत्सव सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। जिस में आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान् श्री आचार्य विद्वन्महा जी व्यास, प० मन्कलाल जी वैदिक मिशनरी तथा माता प्रमावती जी के प्रवचनों का विशेष प्रभाव रहा।

नवनीपचेराकों में श्री बीमप्रकाशजी

रेडियो कलाकार ने साप्ताहिक विषयों तथा स्वामी जी के जीवन सम्बन्धित मन्त्रों से जनता को मन्त्र मुग्ध किया। राष्ट्रीय रक्षा सम्मेलन में आर्यसमाज

की ओर से राष्ट्ररक्षा कोष के लिए ५११) ६० की घोषणा की गई, जो श्री लाल-बहादुर जी शास्त्री प्रधान मन्त्री भारत सरकार को प्रेषित की गई है। —मन्त्री

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१) **ऋग्वेदसुबोध भाष्य**—मधु शर्मा, मेधातिथी, सुन शेष कन्ध) पराधीतम, हिरण्य गर्भ, नारायण, वृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध भाष्य मूल्य १९) डाक-व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशष्ट ऋषि)—सुबोध भाष्य । म० ७) डाक व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥, अष्टाध्यायी म० २, अध्याय १६, मूल्य ॥) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध सा—(सम्पूर्ण २० काण्ड) मूल्य ५०) डाक व्यय ६)

उपनिषद् भाष्य—(ईश्वर १), केन ॥), कठ १॥) प्रथम १॥) मुद्रक १॥) माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥)। सबका डाक व्यय २)।

श्रीमद्भगवद्गीता पुरुषार्थ बोधिनी टीका—मूल्य १२॥) डाक-व्यय २)

चाणक्य—सूत्राणि

पृष्ठ-संख्या ६९०

मूल्य १२) डाक-व्यय २)

आचार्य चाणक्य के ३७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण, भाषाान्तरकार तथा व्याख्याकार स्व० श्री रामा बतार जी विद्याभारकर, रतनगढ़ जि० बिजौरी। भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है, यह सब जानते हैं। व्याख्याकार श्री हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र जब स्वतन्त्र है। इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सम्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन पाठन भारत भर में और घर-घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए इसको आज ही मंगाइये।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल, किल्ला पारडी, जिला सूरत

परोपकार

नियमानुसार 'गीता' व रामायण मुफ्त

जाति अन्वेषण प्रथम भाग । ३२१
हिन्दू जातियों का 'विश्व कोष' सशोधित एवं परिष्कृत संस्करण ४७० पृष्ठ मू० ६) सजिलव (७) डा० २) क्षत्रिय वंश प्रबोध प्रथम भाग ३७१ पृष्ठ । ११०० क्षत्रिय वंशों की सूची मुक्त क्षत्रिय जाति का प्रसिद्ध ग्रन्थ ६) स० ७।) डा० २) शीबुस्लिम जाति निर्णय ५२० पृष्ठ ६) स० ७।) डा० २) लूणिया जाति निर्णय २०० पृष्ठ ४।) स० ५।) डा० १।) ।
पता-वर्ण व्यवस्था मण्डल (A)

कुलेरा (जयपुर)

यू० पी० गवर्नमेन्ट की विधान सभा के प्रेमीडेन्ट द्वारा प्रशंसित तुलसी ब्रह्मी चाय

स्वास्थ्य, बल और स्मरण शक्ति की वृद्धि करती है। निबंलता, खांसी और झुकाम का नाश करती है। मूल्य ४० रुप का बक्क ३७ पैसे। बी० पी० खच्च ३ बक्क तक १) २५ पैसे। व्यापारी लोग एजेन्ती के नियम माँगें। साहित्य प्रेमी ५ सज्जनों के नाम पते लिखें। सुन्दर उपन्यास मुफ्त हैं। पता-

प. रामचन्द्र वैद्य शास्त्री
सुभाषचंक्र औषधालय नं० ५
अलीगढ़ सिटी उ० प्र०

शोक समाचार-

—बलिया आर्य समाज के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रामधारी भ्रमा का लखनऊ मेडिकल कालेज में गुर्बे के आपरेशन के बाद निधन हो गया। अफके शव को बलिया लाकर वैदिक रीति से अन्त्येष्टि की गई। आप आर्य उपप्रतिनिधि सभा बलिया के प्रधान रह चुके थे और इस क्षेत्र

में उन्होंने आर्यसमाज व देश की विशेष सेवा की। बलिया की आर्य जनता ने उनके प्रति शोक श्रद्धाजलिया अर्पित की।

—कायमगज आर्यसमाज ने आ० स० खालबारा के प्रधान श्री उबालासहू के असामयिक निधन पर शोक प्रस्ताव पारित किया। उनका अन्त्येष्टि

शीत ऋतु का अनुपम उपहार—

ऋषियों की बुद्धि का अपूर्व चमत्कार

अमृत भल्लातकी रसायन



इसके अमृत तुल्य चमत्कार को देखकर ही जनता ने इसकी मुक्तकठ से प्रशंसा की है। यह रसायन इस ऋतु की अनुपम देन है। प्रयोगशाला में इसका निर्माण शास्त्रीय विधि से होता है।

गुण—अशक्ति, हृष्टियों व जोड़ों के दर्द, वायु के कारण शरीर में दर्द, रक्त विकार, श्वासीर, स्त्रियों को कमजोर करने वाली समस्त बीमारियों प्रवर प्रसूतिका आवि, धातु का पतलापन एवं सभी तरह के वीर्य विकार पर अपना जादू का-सा असर करती है।

स्वस्थ पुरुष भी इसके सेवन से बल, वीर्य ओज और आनन्द को प्राप्त करते हैं। एक बार सेवन करने वाला व्यक्ति इसे भूल नहीं सकता। अनुपम सुगन्ध एवं स्वाद से मनुष्य दिन भर अपने में नवीनता स्फूर्ति एवं आनन्द का अनुभव करता है।

निर्माण—शिलाजीत, मकरध्वज, बग, लोह आवि के योग से इस पीष्टिक पाक को तय्यार किया गया है, जो प्रात काल नास्ते के समय सेवन किया जाता है।

४० दिन के सेवन योग्य औषधि का मूल्य १६) ४०

२० दिन के खाने योग्य औषधि का मूल्य ९) ४०

पता—गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला
वृन्दावन (मथुरा)

संस्कार वैदिक रीति के सम्पन्न किया गया। इस क्षेत्र में समाज सुधार सम्बन्धी सेवाओं के लिए सर्वव्यवस्था की गई है। अन्तिम समय में आप अपने बेटों श्री रघुवीरसिंह ब्लाक प्रमुख जीवरा को आवेश दे गये हैं कि आर्य समाज खलबारा का मकान निर्माण करवा दें।

—बाबूपुरवा कानपुर आर्यसमाज के प्रधान श्री शंकरदास के पिता श्री रामशरण दास एडवोकेट देहरादून के आकस्मिक निधन पर आर्यसमाज की ओर से शोक प्रस्ताव पारित किया गया और विवर्गित आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना की गई।

आ०स० रम्पुरा का बाधिकोरसब

सम्मेलन श्री सचिवालय में आयें कर्षण कार्यकर्ता मन्त्री जिला कार्य उप प्रतिनिधि सभा फर्रुखाबाद के समर्थी श्री प्यारेलाल निवासी बतारपुर की आकस्मिक मृत्यु पर महान् दुःख प्रकट करता है और प्रभु से प्रार्थना करता है कि मृतात्मा की सद्गति और शोकाकुल परिवार को वेंचें प्रदान करें।

आवश्यकता

१७ वर्षीया स्वस्थ आठवें तक शिक्षित गृह कार्य में रुचि और मुशील कन्या के लिए योग्य वर की आवश्यकता है लड़की सोमवती क्षत्री कुल की है। क्षत्री मात्र से व्याहृ हो सकेगा। दहेज के इच्छुक पत्र व्यवहार न करें। पत्र व्यवहार के साथ फोटो आवश्यक है।

पता—गोबर्द्धनसिंह वै० शास्त्री
शा० पा० आ० बरवन
जि० हरदोई (उ० प्र०)

आर्य वर अथवा कन्या की आवश्यकता

“सुन्दर मुक्षिति कन्या आयु २१ वर्ष शिक्षा इण्टर अथवा लडका आयु २६ वर्ष शिक्षा मेट्रिक के लिये सुयोग्य वर अथवा कन्या की आवश्यकता है। दोनों ही सरकारी सर्विस में हैं अथवा घर का मकान व जमीन भी है। विवाह अन्तर-जातीय वैदिक रीति से होगा। पूर्ण विवरण सहित शीघ्र लिखें।”

बाषस न० ८ वर्मा मारफत

मैनेजर आर्यमित्र मीराबाई मार्ग लखनऊ

स्वाध्याय के लिए अनुपम साहित्य अर्द्ध मूल्य में

१—ऋग्वेद रहस्य	मूल्य ५)
ले० श्री अलनूराय जी शास्त्री एम एल सी	अर्द्ध मूल्य २।।)
२—अभिनिन्दन ग्रन्थ	मूल्य १०)
श्री गंगाप्रसाद जा उपाध्याय	अर्द्ध मूल्य ५)
व श्री गंगाप्रसाद जी चौक जज	
३—यजुर्वेद भाष्य द्वितीय खण्ड	मूल्य २।।) कमी १२।।) प्रतिशत
४—पिप्लु संहिता	मूल्य १९ पैसा अर्द्ध मू० १० पैसा
५—ब्रह्मदेव रहस्य	मूल्य १९ पैसा
ले० प० प्रियव्रत जी	अर्द्ध मूल्य १०)
६—मन की लहर	मूल्य १।।)
ले० स्व० देशभक्त क्रान्तिकारी रामप्रसाद बिस्मिल	अर्द्ध मूल्य ३७ पैसा
निम्न पुस्तकों पर १२।।) प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।	
७—श्रीमद्भयानन्द प्रकाश ले० श्री स्वामी सरवानन्द जी सरस्वती	मू० २।)
८—दर्शनानन्द ग्रन्थ महर्षि प्रथम भाग	मू० १।।)
९—सध्या क्यो और कैसे ? ले० श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय	मू० २)
१०—इस्लाम का दीपक	” ५)
११—स्वर्ग में सबजेक्ट कमेटी ले० सम्पादकाचार्य श्री प० शंकरदास जी	” १)
१२—स्वर्ग में महासभा	” ३० पै०
१३—कठी जनेक का विवाह	” २५ पै०
१४—आर्य प्रतिनिधि सभा का इतिहास	” २।।)
ले० श्री शिवदयालु जी	
१५—महान् दयानन्द ले० श्री शिवदयालु जी	” ५० पै०
१६—धरती माता की महिमा	” ३७ पै०
१७—वेद सुधा ले० प० घासीराम जी	” २५ पै०
१८—ज्योतिषचन्द्रिका ले० प० गंगाप्रसाद जी चौक जज	” २५ पै०
१९—ईशोपनिषद अग्नेजी श्री नारायण स्वामी जी	” २५ पै०

पता—घामीराम प्रकाशन विभाग

आ० प्र० सभा उ० प्र०

५, मीराबाई मार्ग लखनऊ



ज
य
ज
वा
न!
ज
य
कि
सा
न!

मीमा पर हमारे जवान
दुश्मनों के दाँत खट्टे कर रहे हैं ।
खेतों में हमारे किसान
को भी अपने जौहर दिखाने हैं ।

- अधिक अन्न उपजाने के लिए -
- ★ उन्नत बीज और अच्छी खाद व उर्वरक का प्रयोग कीजिए ।
- ★ पिचाई साधनों का सदुपयोग कीजिये ।
- ★ कीटाणु नाशक दवाओं का इस्तेमाल कर अपनी फसल को कीड़े सकोड़ो से बचाइये ।
- ★ भ्रष्ट का एक दाना भी बरबाद न कीजिए ।

स्वाध्यायो के लिये अधिक समय तक विदेशों पर निर्भर रहना अपमानजनक है ।

अधिक से अधिक अन्न उपजा कर
देश को आत्मनिर्भर बनाइये ।

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

भारत-पाक युद्ध के चित्र परदे पर

यदि आप अपने उत्सव व प्रचार के लिए वर्तमान भारत-पाक युद्ध के वृश्य, अमरीकन पेटन टैंक, सेवरजेट की घड़िया उड़ाने वाले भारतीय वीरों के कारनामे, अयूब और भुट्टो की सुरक्षा परिषद में हाहाकार, श्री लाल-बहादुर शास्त्री और श्री चहलान के पाकिस्तान को मुह्तोड उत्तर आदि परदे पर रंगीन चित्रों द्वारा सैनिक लेग्टर्न से देखना चाहें और देश प्रेम के गीत साथ साथ सुनना चाहें, तो निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करें ।

प० नन्दलाल वैदिक मिदनरी

W. D. ८७ वाली मुहल्ला आलम्बर नगर (पंजाब)

वर की आवश्यकता

एक सुन्दर, सुशिक्षित (डबल एम० ए०), गृह काय म दक्ष, सुशील हिन्दू कन्या जिसकी आयु लगभग ३१ वर्ष है, के लिये एक उच्च शिक्षाप्राप्त सुन्दर वर की आवश्यकता है, जिसकी आयु ३८ वर्ष से अधिक न हो । डाक्टर इन्जीनियर, गज-टेड आफिसर इत्यादि को तरजीह दी जायगी । जात-पात का कोई प्रश्न नहीं । पता-न० ५ द्वारा आर्यमित्र, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ

धर्मवीर ग्रन्थमाला के साहित्य सुमनों की धूम

धर्मवीर ग्रन्थमाला के साहित्य सुमनों पर विश्वविख्यात वैदिक विद्वानों की शुभ-सम्मतियाँ—

चारो वेदों के सत्वर वेदपाठी श्री पूज्य पं० बीरसेन जी वेदधर्मी लिखते हैं—

श्री वेद पथिक पं० धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी ने काव्य मे वेद की शिक्षाओं को सभिन्न रूप मे जिस प्रकार गणित किया है, उससे सामान्य जनता मे वेद शास्त्रों के प्रति रुचि जागृत होती है। श्री धर्मवीर जी झंडाधारी की लेखनी अब जिस प्रकार से चल रही है उससे आशा है, भविष्य मे वे इस क्षेत्र मे भी बहुत आगे बढ़ जावेंगे।

श्रीमान् मेहरचन्द्र जी महाजन रिटायर्ड चीफ जज सुप्रीम कोर्ट प्रधान टकारा ट्रस्ट बिल्ली लिखते हैं—

वेद पथिक श्री पं० धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी द्वारा लिखित १११ अमृतमय उपदेश रत्नों को मैंने देखा है। यह उपदेश-रत्न मानव मात्र के लिये अमृत तुल्य है। इस पुस्तक का प्रचार प्रत्येक शिक्षण संस्थाओं के लिए अमृत का और विद्यार्थी जीवन के निर्माण का कार्य करेंगे।

विश्व धर्म सम्मेलन बिल्ली के अध्यक्ष श्री पूज्य संत कृपालसिंह जी महाराज लिखते हैं—

वेद पथिक श्री पं० धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी व्याख्यान-भूषण द्वारा लिखित वेद सुधा सार की कविता को सुनने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ। लेखक का प्रयास सराहनीय है परमात्मा सफलता दे। विश्व का मानव समाज वेद भक्त बने।

श्री पूज्य पं० कृष्णचन्द्र जी विद्यालकार शक्तिनगर बिल्ली लिखते हैं--

मैंने श्री वेद पथिक पं० धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी से वेद सुधा सार के कुछ पद्य सुने। इनसे झंडाधारी जी की वेदों मे प्रगाढ़ श्रद्धा का परिचय मिलता है, एक प्रकार से इन पद्यों मे वेदों के सौंको विषयों की गणना कर दी गई है। इन्हें पढ़कर सामान्य जनता मे वेदों के प्रति रुचि बढ़ सकती है।

धर्मवीर ग्रन्थमाला के वेद सुधा सार पर निम्न सज्जनों की ओर से निम्न प्रकार पारितोषिक भेंट किया गया है उन्हें धन्यवाद है।

५१) श्री मेहरचन्द्र जी महाजन रिटायर्ड चीफ जज सुप्रीम कोर्ट प्रधान टकारा ट्रस्ट ब्रफेन्स कालोनी दिल्ली।

१०१) श्री सोमनाथ जी मरवा एडवोकेट सुप्रीम कोर्ट सन्नी मण्डी दिल्ली।

१११) श्री महाशय चुन्नीलाल जी रूपक स्टोर करीलबाग दिल्ली।

पुस्तकों का आर्डर इस पते पर भेजें।

वेदपथिक धर्मवीर आर्य झंडाधारी व्याख्यान भूषण

अध्यक्ष धर्मवीर ग्रन्थमाला प्रकाशन विभाग

सरायखेला नई दिल्ली ५



निर्वाचन समाचार—

—पूना चिकित्सी आर्यसमाज

प्रधान श्री कृपासकर, उपप्रधान—श्री मधुरावास तथा श्री किशोरीलाल, मन्त्री श्री के०पी०, उपमन्त्री—श्री बलबीरसिंह कोवाच्यल—श्री सुप्रीलाल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री निरजननाथ, निरीक्षक—श्री जय-गोपाल ।

—सहारनपुर 'बनकपुर आर्य' कुमार समाज प्रधान—श्री श्रीराम, उपप्रधान—श्री बर्षसिंह, मन्त्री—श्री चण्डपाल, उपमन्त्री श्री चम्पालाल, कोवाच्यक्ष—श्री जय-प्रकाश स०को०ज० श्री अशोककुमार, निरीक्षक—श्री बर्षबीर ।

—पटना जिला आर्य समाज

प्रधान—श्री राजकुमार आर्य पटना उपप्रधान—श्री काकाशरण पटना, श्री इयानलाल दामापुर, श्री बसन्तकुमार बाँकीपुर, मन्त्री—श्री बसन्तकुमार मिठापुर, स० मन्त्री श्री बनारसीसिंह जयकपुर, श्री रामपाल इयापुर तथा श्री रामबली प्रसाद दामापुर, कोवाच्यक्ष गणप्रसाद

जाकपुर, निरीक्षक—रामकुमार कुशुहा । १४ अन्तरग सवस्य ।

—मलाही (बम्पारन) आर्यस०

प्रधान—श्री मधुराप्रसाद, उपप्रधान—श्री श्यामनन्दप्रसाद, मन्त्री—श्री बंजनाथ प्रसाद, उपमन्त्री—श्री बलदेवप्रसाद श्री ए. उममन्त्री—श्री मिश्राप्रसाद 'विद्या-प्रसाद' ।

आवश्यकता

राजस्वान् प्रान्त में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्वान् को उच्छकोटि के विद्वान् वक्ता उपदेशको एव प्रचारको कौ शीघ्र आवश्यकता है । प्रत्याधी महानुभाव अपने आवेदन पत्र, योग्यता, अनुभव एव पूर्ण विवरण सहित सभा कार्यालय में भेजने का कष्ट करें ।

—मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्वान् दयानन्द आश्रम केसरगज अजमेर

आवश्यकता

२० वर्षीया मैट्रिक अग्रवाल कन्या के लिए आर्यसमाजी विचार वाला अधिकतम २४ वर्षीय प्रेजुपेट सजातीय बर चाहिए । गरीब घराने को प्राथमिकता दी जायगी । पता—न० ६ द्वारा आर्यमित्र कार्यालय लखनऊ

वेदों में प्राकृतिक चिकित्सा का स्रोत

धर्म व विज्ञान का सम्बन्ध

यतोऽभ्युदय निःश्रेय स सिद्धि स धर्मः कणाद मुनि

जिससे प्रत्येक वस्तु का यथार्थ ज्ञान हो और मुक्ति ये दोनों जिससे प्राप्त हों, उसे धर्म कहते हैं । अर्थात् वेदों के सृष्टि विज्ञान व आयुर्वेद के शरीर विज्ञान समन्वय से दोनों की प्राप्ति होती है । जो कि महा-भारत के पद्यवात् विषय को महर्षि दयानन्द सरस्वती की वेद है । यही विज्ञान महात्मा गांधी की निसर्गोपचार योजना की पूर्ति का साधन है जो जनता को चिकित्सा में आत्म निर्भर बनाने का एक उपाय है हमने ४० वर्ष के अनुभव से प्राकृतिक चिकित्सा के पूर्ण साहित्य को तीन पुस्तकों में प्रकाशित किया है, जिनकी पृष्ठ संख्या ५५० है । प्रमाण के लिये चारो वेदों के ५० मन्त्र भावांश सहित अंकित है ।

मूल्य से डाक व्यय पृथक है ।

- (१) जीवन सदेश (प्राण चिकित्सा) जिसमें चिकित्सा विधि विधान सहित है मूल्य ३.००
- (२) पंच महाभूत विज्ञान) जिसमें सृष्टि व शरीर की रचना है । मूल्य १ २०

(३) शुक्र (वीर्य) का लय सब रोगों का मूल कारण मूल्य ० ८० नोट—सस्था के उद्देश्य, तीनों पुस्तकों का सार व समालोचनाएं "आरोग्य स्तम्भ" १८ पृष्ठ की पुस्तक में छपी हैं । जो पत्र जाने पर शुक्र पोस्ट से मुफ्त भेजी जाती है ।

पता—भरतसिंह वैद्य जीवन प्राकृतिक चिकित्सालय

ग्राम गालिबपुर, पो० सास, जि० मुजफ्फरनगर पता दूसरा—डा० रामचन्द्रसिंह ७ ३४१ सरोजनी नगर, नई देहली



उत्सवों एवं कथाओं के लिए—
 झूलिये नहीं, झूलिये नहीं
 ओजस्वी वक्ता, पिडाल को
 गुंजाने वाले प्रचारक
 एवं

प्रभावपूर्ण प्रवचनों के लिए
 सुयोग्य स्वामी

महोपदेशक

आचार्य विद्वत्कणु जी शास्त्री
 श्री बलबीर सिंह जी शास्त्री
 श्री श्यामसुन्दर जी शास्त्री
 श्री सरयभिन जी शास्त्री
 श्री केशवदेव जी शास्त्री
 श्री रामनारायण जी बिष्णोयी
 श्री विद्वत्बोधन जी वेदालकार

प्रचारक

श्री रामस्वरूप जी आय मुस्ताफिर
 श्री बर्मराजसिंह जी
 श्री गजराजसिंह जी
 श्री धर्मदत्त जी आनन्द
 श्री लोचनचन्द्र जी
 श्री वेदपालसिंह जी
 श्री जयपालसिंह जी
 श्री प्रकाशबीर जी धर्म

स्वामी

श्री स्वामी योगानन्दजी सरस्वती हायरत
 ,, प्रजवानन्द जी , जयानिवा
 ,, श्यामन्ध जी ,, गोरखपुर
 ,, सुखानन्द जी ,, बिजनौर
 ,, विशुद्धामन्ध जी ,, जसियानी
 ,, वेदानन्द जी सन्यासी कानपुर
 सिधे पत्र धववहार कीजिये ।

महिला सम्मेलन में, माताओं
 एवं बहिनों के उपदेशार्थ
 आमन्त्रित कीजिये
 ओजस्वी तथा सुयोग्य महिला वक्ता
 लखनऊ से श्रीमती डा० प्रकाशवती
 जी को इनके अतिरिक्त

माता विद्योतमा यती जी, उवालापुर
 , प्रियम्बादेवी जी हरदोई
 , हेमलता देवी जी अलीगढ़
 ,, सरा जी जी एटा
 ,, प्रेम सुलता यती जी उवालापुर
 सुखदादेवी जी देहरादून
 —सचिबवानन्द शास्त्री
 स० अविच्छाता उपवेश विभाग

शुद्धता, अपचन तथा थकावट

गुरुकुलकांगड़ी
चाय

आपके स्वास्थ्यकी
 रक्षा करती है।

ए.एस.

गुरुकुलकांगड़ी फार्मसी-हरिद्वार

लखनऊ के सोल एजेंट—एस०एस० मेहता एण्ड कम्पनी श्रीराम रोड लखनऊ

विश्व की समस्त आर्य समाजों के अधिकारियों से—

आवश्यक निवेदन

विश्व के समस्त प्रमुख राष्ट्रों में वैदिक धर्म ध्वजा फहराने के लिये, विश्व-शांति का पावन सदेश लेकर वेद सदेश को राष्ट्र नायकों को देने के लिये जन-मन में वैदिक सत्कृति का प्रसार करने के लिये अमेरिका, इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रान्स रूस आदि राष्ट्रों में प्रचरार्थ में अपने जाने का प्रोग्राम निर्धारित कर चुका है। लगभग २५ हजार रुपये का व्यय होगा।

समस्त आर्य भाई-बहनों से सविनय सानुरोध साग्रह निवेदन है कि धर्मवीर ग्रन्थमाला के साहित्य सुमनों को सारी सत्का से मगाकर वैदिक सभ्य मानवजाओं का ध्यापक प्रचार करने में सहायक बनें।

पुस्तक मगाकर हमारी सहायना करें जिससे हम विदेशों में भी जाकर वैदिक धर्म का माद बना सकें।

यदि विश्व की समस्त आर्य समाज (१०) की पुस्तकों भी मगायें तो मेरा शुभ सफल विदेशों में वैदिक धर्म के प्रचार का सुगमता से बिना किसी पर बोझ डाले ही पूर्ण हो सकता है।

आशा है विश्व की आर्य समाजें अपनी आर्य समाजों के लिये दस-दस रुपये की पुस्तकों अविलम्ब मंगाकर हमारी सहायता अवश्य करेंगी।

इसी शिवरात्रि के पड़चात इंग्लैंड की यात्रा पर मैं दिल्ली से प्रस्थान करूँगा।

समस्त राष्ट्रों के राष्ट्रनायकों को महर्षि दयानन्द का पावन सदेश सत्यार्थ प्रकाश, धर्मवीर ग्रन्थमाला के साहित्य सुमनों को भेंट करूँगा।

अध्यात्म उन्नति पर मोक्ष और जीवन पर, वैदिक जीवन पर धर्म और जीवन पर योग और आत्म-वृत्ति पर, जीवन की अटिल समस्याओं के समाधान पर, पूर्ण जन्मों की अगम्य विद्याओं की खोज पर, कर्म योग पर, विश्व के मानव समाज को भारतीय सत्कृति की देन पर मग पर विजय प्राप्त करने के सुगम साधन पर, यज्ञ द्वारा आत्म उन्नति और भौतिक उन्नति पर, वैदिक युग के निर्माता आदि विषयों पर धाराप्रवाह माधन देने का अपना कार्य-कम होगा। आर्य जीवन की सलक पर वेद सुधासार पर जीवन दर्शन पर कवितायें सुनाई जायेंगी।

निम्न पुस्तकों आज ही मगायें—

वेद और जीवन ५० पैसे, वेद सदेश ५० पैसे, विश्व प्रेम का अमृत कलश ५० पैसे, पूर्ण जन्मों की अगम्य विद्याओं की खोज १ २५ पैसे, अमृतमय उपदेश ५० पैसे, वेद सुधासार १ २५ पैसे।

आवश्यक नोट—

धर्मवीर ग्रन्थमाला के समस्त साहित्य सुमनों की उपयोगिता पर भारत के समस्त वैदिक विश्व विख्यात विद्वानों की शुभ सम्मतिया प्राप्त हो चुकी हैं।

इन सभी पुस्तकों पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

**पता—वेद पथिक धर्मवीर आर्य झंडाधारी व्याख्यान भूषण
अध्यक्ष धर्मवीर ग्रन्थमाला प्रकाशन विभाग, सराय-बहेला, नई दिल्ली-५**

९ जनवरी १९६५

'आर्यमित्र' स्वामी श्रीवानन्द अहू

पंजीकरण सं० एल० ६०
Regd No L 60

संख्या [redacted] में

22 JAN 1966
[Handwritten signature]

देश के सामने प्रमुख प्रश्न ?

सुरक्षा और खाद्य

इन दोनों समस्याओं को शीघ्र से शीघ्र हल करके
राष्ट्र को शक्तिशाली और आत्म निर्भर बनाना है ।

जवान

आक्रमणकारियों के मद-मर्दन के लिए कटबद्ध हैं ।

किसान

धरती माता की सेवा करें और अधिक से अधिक अन्न उपजायें ।

अपने जबानों और किसानों का होसला बढ़ाने के लिए

शासन की तेन-मन-धन से मद्द कीजिए

विज्ञापन-७ सूचना विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित ।

वेदावृत

स्वराज्य



आ यद् गामीय
चक्षसा मित्रं न्य
च सूरयः ।

व्यखिष्टं बहुवाय्मे
यत्तेमहि स्वराज्ये ॥

[प्रथमं ५। १६। १]

मातार्थ—स्वराज्य में
सब में पारस्परिक श्रुति
हो। जोय बहुचित दुष्टि
वाले न हों, वरन विशाल
दुष्टि वाले हों। स्वराज्य
किसी एक के वरन से
रहित नहीं हो सकत, वरन
उसकी सिद्धि के
लिये सब को प्रयत्न
करना पड़ता है।



इस का मूल्य २५ पैसे

साप्ताहिक

आर्य मित्र

संस्कृत
सामयिक



स्वराज्य-अंक



१९६८

वर्ष

अद्वैतनिक सम्पादक—

—श्रीकृष्णविरय 'वसन्त'

अंक

२८

परमेश्वर की अमृत वाणी

★

स्वर्गज्य पुण्य लोक बने, पाप लोक नहीं

ज्ञान शक्ति विद्वान् नायक साथ-साथ मिलकर कार्य करें। भौतिक व आध्यात्मिक उन्नति हो—
जनाब का नाम हो

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह ।

तँल्लोकं पुण्यं प्रज्ञेयं यत्र देवा सहाम्निना ॥

यत्रेन्द्रश्च वायुश्च सम्यञ्चौ चरतः सह ।

तँल्लोकं पुण्यं प्रज्ञेयं यत्र सेविनं विद्यते ॥

[ऋ० अध्याय २० (मन्त्र) २३-२६]

- [१] (यत्र ब्रह्म. क्षत्रं च) जहाँ ज्ञान एवं शक्ति (सम्यञ्चौ) एकीकृत होकर (सह चरतः) सह वसन करते हैं ।
- [२] (यत्र देवा. सह अग्निना) जहाँ विद्वान् अन्ननायक के साथ सहयोग करते हैं ।
- [३] (यत्र इन्द्र च वायुः च) जहाँ इन्द्र और वायु (आत्म विकास और भौतिक उन्नति) परावर-बराबर सह वसन करते हैं ।
- [४] (यत्र सेवि. न विद्यते) जहाँ अनाब विद्यमान नहीं होते ।
- [५] (तँ ल्लोकं) (पुण्य लोक) पुण्य लोक (प्रज्ञेयं) जानें ।

स्वर्गात्म्य को सुरात्म्य बनाने वाले परमेश्वर की इस वाणी को आत्मसात करें। ज्ञान व शक्ति का समन्वय करें ।

भौतिक उन्नति के साथ आध्यात्मिक उन्नति करें। ब्रह्म और मेता वचन परस्पर सहयोग करें। राष्ट्र के अनाबों को दूर करें और उले जगृहस्तामो बनायें ।

स्वाधीनता विकसित पर हमें स्वर्गात्म्य की अलक्ष्यता के लिये यह द्रुव वैदिक त्रय सेवा चाहिए ।

पुस्तक ५
गुरुकुल काँगड़ी

★ ओ३म् ★

साप्ताहिक आर्य समाज स्वराज्य अंक

संस्करण—प्रथम भाग २७ शक १८९०, माघपद कृ० १० वि० अ० २०२५, दिनांक १० अगस्त १९६८ ई०

राष्ट्रीय वैदिक प्रार्थना

★

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चो जायतम् आ र व्टे राजन्य.
सूर इषव्यो ऽतिव्याधी महुरयो ज.प तां दोग्धी येतुर्वोड नडवा-
नशु सप्ति. पुरन्धर्योवा जिणू रयेठ' सभेगे युवास्य यत्त-
मानस्य बीरो जायताम् निक मे निकामे न. पजं यो वर्षंतु फल-
वत्यो न. ओषधय पच्यंताम् योगक्षेमो न करपताम ।

(पञ्च० २२ । २२)

पद्यार्थं

ब्रह्मन् सुराष्ट्रं मे ह्ये, द्विज ब्रह्म तेजपारी ।

समी महारथी हो, अरिबल विनासकारी ॥

होवें हुषारु गोवें पशु अरब आशुवाही ,

आपार राष्ट्र की हो नारी सुभय सदा ही ॥

बलवान सन्म येषा, यजमान पुत्र ह्येव ।

इच्छानुसार धर्म, परम्य ताप ध्येव ॥

फल-फूल से लयी हो, औषध अमोघ सारी ।

हो योग क्षेमकारी, स्वार्थं नता हमारी ॥

★

★

★

★

सम्पादकीय

बयें राष्ट्र जागृत्याम पुरोहितः



११ वर्ष पूर्व अंग्रेजों की शासता के पाश को काट कर भारत ने पुन स्वधीनता प्राप्त की थी। भारत के विभाजन की पीड़ा को स्वराज्य मिलने के आह्वाण ने एक प्रकार से बसा दिया था। 'स्वराज्य आवा' 'स्वराज्य आवा' का सर्वत्र उदघोष था। अंग्रेजों की पराधीनता कलने जाने से पराजित, बीन और हीन मनोबल की समाप्ति हो गई थी। राम राज्य का एक आदर्श हमारे सम्मुख था। वह राम राज्य जो वैदिक आदर्शों व मान्यताओं पर अवस्थित था। महा कवि वाल्मीकि और मोक्षामी तुलसीदास द्वारा रचित रामायण में जिस राम राज्य की कल्पना दिखाई थी उसे प्रत्यक्ष देखने का सारा राष्ट्र लासालिन था। पराधीन सपने सुख नहीं बाली कहावत के स्थान पर स्वधीनता के सुख जागृति में देखने की अवश्य लासला उचित हो उठी थी।

अतीत के वैदिक राष्ट्रों की एक विश्वस्मृति उस समय मानस पत्र पर उभर आई थी, जब महाराजा जयचमपति ने अपने राज्य में हो रहे बरवान यज्ञ में उपस्थित पाँच क्षत्रियों की शक्तियों का समाधान करते हुये कहा था—

न मे स्तेनो जनपदे न कवर्थो न मद्यरः ।

नानाहिताग्निर्ना विद्वान् न स्वैरी स्वैरिणो

कुतः ॥

अर्थात् मेरे राष्ट्र में कोई भी चोर नहीं कोई भी कजूस नहीं। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो शराब पाने हो। ऐसा कोई भी नहीं जो वैदिक धर्म न करता हो। कोई धूर्त, अनपढ़ या अविद्वान नहीं है। यहाँ कोई अविचारारी या अविचारिणी नहीं है।

ऐसी घोषणा करने का साहस आज विश्व का कौन राष्ट्र नहीं कर सकता। यह घोषणा तो उस राष्ट्र की है जो अस्वाम्यत्व के मार्ग पर बसा था और जिनके जायज व्यक्तियों ने वेद पर आधारित थी।

वेद के पठन पाठन में आर्यों के जगत् में उदभूत उत्पन्न की थी। उन्होंने चक्रवर्ती राज्य स्थापित किया। मर्दाश पुश्केश्वर राम भी एक चक्रवर्ती राजा था। उसका राज्य कौशा था, तनिक गोस्वामी तुलसीदास भी के शब्दों में देखें—

राम राज सन्तोष सुख,

धर बन सफल सुपास ।

तब सुरनर सुर धेनु महि,

अभियन्त भोग बिलास ।

स्पष्ट है कि राम राज्य का आधार वह पावन चरित्र था जिसका निर्माण वैदिक मान्यताओं के द्वारा किया गया था। आर्यों ने जब जब चक्रवर्ती राज्य स्थापित किए उनके मूल में जगत् की कल्याण मानना थी। आज जब - व चरित्र बल लेकर - ठे, उन्हीं चक्रवर्ती राज्य स्थापित किये, किन्तु वेद विद्या के रूप होते ही अथवा वेदानुकूल आचरण न होने पर आज अथवा स्वधीनता तक लो बँट। वह सब इसलिये हुआ कि आर्यों ने वेद को उस से अपनी को विस्तृत कर दिया जिसमें कहा गया था—

“या प्रगतम पथो बय मा यज्ञादिन्नु

सोमिनः ।

मान्तः स्युर्नो अरातवः ॥”

(अ० १३-१ ५९)

अर्थात् हम ऐश्वर्य सम्पन्न होकर सम्पूर्ण से प्रथम न करें। हम यज्ञ से विमुक्त न हों तथा अराजकताएँ हमारे बीच से न उठें।

ऐश्वर्य सम्पन्न होकर जब आर्थिक स्वतन्त्रता और बिलासी हो गये तो सन्मार्ग से उनका प्रथम हो गया। पुरा सुन्दरी और आशुरी माया ने उनकी स्वधीनता लक्ष



दफ्तरी हिन्दी

[लेखक - श्रीमन्मोक्षचन्द्र गुप्त, सगठन मन्त्री,
केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद]

सुदूरियों व हिन्दी कामकाज की भाषा रही है। पुराने जमाने में देशी रियासतों का सरकारी कामकाज हिन्दी में होता रहा है। आज भी जो उत्तरप्रदेश मध्य प्रदेश, राजस्थान बिहार हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और दिल्ली आदि राज्यों की प्रमुख भाषा है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार की राजभाषा हिन्दी घोषित की जा चुकी है। इसके कारण सरकारी दफ्तरों में बड़ी मात्रा में हिन्दी का प्रयोग होना गया है। परन्तु यह स्थिति रूप से कहा जा सकता है कि सरकारी दफ्तरों में इस्तेमाल की जाने वाली हिन्दी साहित्यिक हिन्दी से भिन्न है और रहेगी। वास्तविक भाषा दफ्तरों की भाषा ही नहीं रहती है। इनकी आवश्यकता भी नहीं है। दफ्तरों में कामकाज करने वाले कर्मचारी किसी मामले के विषय में जो कुछ सोचते हैं, उसे उसी प्रकार अच्छे ढंग से दफ्तर की फाइल पर लिख देना होता है। इसलिए यह आवश्यक नहीं कि उक्त दफ्तर में काम करने वाले कर्मचारियों को लिखते समय बड़े बड़े हिन्दी के साहित्यिक शब्दों के इस्तेमाल करने की आवश्यकता हो। उसको तो केवल दफ्तरी हिन्दी का प्रयोग करना है। लिखते समय यदि किसी अंग्रेजी शब्द का हिन्दी पर्याय सम्बन्धित कर्मचारी को नहीं मालूम तो उस शब्द को ही बेचनागरी में लिखा जा सकता है। और यदि आवश्यक समझा जाए तो अंग्रेजी शब्द को अंग्रेजी में भी लिखा जा सकता है। यह भी आवश्यक नहीं कि किसी शब्द का उल्लेख स्वयं ही लिखा जाए। उस शब्द का जनसाधारण में प्रचलित रूप भी प्रयोग में लाया जा सकता है। प्रथम तो केवल नव को प्रकट करने का है, सीधी और समझ में आने वाली भाषा में, न कि पाण्डित्य के प्रदर्शन का।

बहुत से लोगों को मालूम होगा कि जब अंग्रेजों ने

सभा मन्त्री-

श्री पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री भ्रमण पुरोगमतया धर्म-संग्रह

श्री पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री विभिन्न स्थानों का भ्रमण कर आयसम जों में गये और समाजों की सति-विधियों को जाना। ही ऋष के सिद्ध-में गति के उदाहरणों को किया प्रथम करने समय समाज को कई स्थानों में बन मो दिया गया। मेरठ आदि स्थानों से भी बन का आशय स मिला।

- १-लखीमपुर अयसम ज २००)
- २-अरेली २२१)
- ३-हरदोई गोनी आ स १०१)
- ४- १०१)

१०२३) योग

—सच्चिदानन्द शास्त्री
सभा मन्त्री

दफ्तरी में अंग्रेजी का प्रयोग प्रथम किया तो अंग्रेजी किस ढंग की लिखी जानी थी। उस पुराने जमाने में यदि अंग्रेजी के रूप को पुराने काइलों पर देखा जाए तो बहुत से लोग आवश्यकतानुसार होंगे। लोगों के अंग्रेजी कम जानने के कारण यहाँ अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग अंग्रेजी के साथ साथ किया जाता था। यहाँ तक कि देशी शब्दों को ही अंग्रेजी लिखाकर अंग्रेजी की शिष्टाचारों में परिवर्तित कर दिया जाता था परन्तु अंग्रेजी के सामने तो अंग्रेजी के प्रयोग को बढ़ाने का प्रयत्न था। उन लोगों ने अंग्रेजी के उस विकृत रूप से किसी को न तो परेसाम किया न स्वयं बिनित्तन हुए बहिन कर्मकारियों को बराबर प्रोत्साहन दिया जाता था। धीरे धीरे अंग्रेजी का रूप निश्चरता गया और आज हम भारतीय कार्यालयों में अंग्रेजी का जो रूप देख रहे हैं, उसके प्रतीत होता है कि अंग्रेजी का वह रूप केवल अंग्रेजों के प्रयत्नों के कारण ही आया है। हिन्दी की स्थिति इससे भिन्न ही होगी। इसका कारण यह है कि



हिन्दी इस देश की भाषा है। हिन्दी हममें से अधिक शक्ति हमारी माँ के घेठ से प्राप्त हुई है और अपनी माँ की प्रतीत होती है। हमलिये अपने तीखे और पढ़ने में जो कठिनाई होने है वह हिन्दी में नहीं होती। अधिकांश भारतीय अंग्रेजी में लिखने से पहले अपनी मतुम भाषा में सोचते हैं, और फिर उसका अंग्रेजी में रूपान्तर करते हैं। बिनाकी मातृ-भाषा हिन्दी है, वे यदि इन प्रक्रिया को छोड़ दें, और फाइलो पर टिप्पणी आदि संघे हिन्दी में लिखें तो काम काज में विशेष कठिनाई नहीं होगी और भाषा भी सरल, स्वाभाविक तथा प्रवाहमयी होगी। कुछ समय परबन्ध काम करने वाले लोगों को हिन्दी में अंग्रेजी की अपेक्षा काम करना सरल प्रतीत होगा। कहागया है—करत करत अग्र्यास के उद्यत होत सुमान।

यदि हम हिन्दी में काम करने से कतराते रहे तो हिन्दी में काम करना कभी नहीं सीख सकेंगे। तैरना नखने के लिये पानी में जाना ही पड़ेगा। यदि हम चाहते हैं कि हिन्दी देश की राजभाषा बने तो इसमें काम करने से कतराने की आवश्यकता नहीं है। नहो यह कहने से काम चलेगा कि हिन्दी में शाय नहीं हैं। शब्दों की कमी और अग्य कठिनाईयाँ हिन्दी में काम करना शुरु करते ही धीरे धीरे अपने-अपने रास्ते में हटती जायेंगी। काम करते करते ऐसे शब्द जो इस समय बड़े अजीब से लगते होंगे, हमारे जीवन में घुलमिल जायेंगे और अपने आप उनका अजनबीजन समाप्त हो जायगा। केवल हिन्दी में काम करने की बात सोचने की जरूरत है और उसके अनुसार आरम्भ कर देने की।



वेद प्रचार सप्ताह की दक्षिणा दें

मानवता के प्रतीक वैदिक धर्म का दिव्य नाभ गुञ्जानेवासे विगत ७० वर्षों से
उत्तर प्रदेश का राजधानी लखनऊ से प्रकाशित

आर्यमित्र

के
आज ही ग्राहक
बनकर

क्या आपने इस स्वाध्याय अंक को पढ़ा है ? क्या इससे 'पाप-विमोक्षण' की
आपको कोई प्रेरणा मिली है ?

आर्यमित्र की परिवर्तित नीति को लेकर विभिन्न स्तरों में प्रकाशित आध्यात्मिक एवं सामाजिक लेखों को क्या आपने साप्ताहिक अङ्कों में देखा है ? कहानी-कुञ्ज, आर्य्य कुमार सध, बाल-विनोद, महिला-मण्डल वनिता-विशेक, शिक्षा-जगत वेद-व्याख्या विचार विमर्श, अमृत-बर्षा, परमेश्वर की अमृत चाणी, आध्यात्म सुधा, वैदिक पहलू-लगा, धार्मिक समग्र्यायें, शिक्षा जगत आदि अनेक स्तरों में सप्ताहकीय टिप्पणियाँ सहित प्रकाशित सामग्री क्या आपको दृष्टिकर लगी है ?

यदि हाँ ! तो आज ही इस हिन्दी साप्ताहिक पत्र के ग्राहक बनिये एवं बनाइये। धार्मिक मूल्य वेधत वत रपट है। जिनमें इस स्वाध्याय अङ्क अंसे ४ विशेषाङ्क भी सम्मिलित हैं।

प्रिय पाठको! वेद-प्रचार सप्ताह की यही दक्षिणा है। इसे आज ही वें ताफिक आर्थ्य मित्र की छपाई कारागृह व पठनीय सामग्रीको अत्यधिक उत्तम बनाया जा सके। प्रत्येक शिक्षण संस्था, आर्य्य समाज व आर्य्य परिवार में आर्य्यमित्र पहुंचे, वेद प्रचार सप्ताह पर आप इस दक्षिणा को देवें और अर्घ्यों से विलावें।

—चन्द्रवत् तिथारी

अधिष्ठाता

वैदिक महापुरुष— श्रीकृष्ण

संस्कृत भाषा में प्राचीन आर्यग्रन्थों में अति शब्द विस्तार प्रयोग वैदिक साहित्य में स्थान स्थान पर अर्द्धत परमात्मा के लिए हुआ है। विद्वान् ऋषियों मुनियों आप्त पुरुषों और महात्माओं के लिये भी प्रयुक्त हुआ है। यह बिचार ऐसा प्रचलित है कि मानों प्रत्येक भाषा और प्रत्येक देशवासी इसी रंग में रंगा है। उत्कृत भाषा में देव शब्द और देवता ईश्वर शेषक हैं। परन्तु महान्

पुरुषों के लिये भी ये शब्द प्रयोग में लाये जाते हैं। आर्य भाषा में गार् का अर्थ चरनेश्वर है। परन्तु उसी गार् का बहुवचन गाडस देवताओं के लिये आता है। इस्लाम मत बनानेवाले हुजरत मुहम्मद को नूरे इसाही कहते हैं। उधर ईसाई हुजरत मसीह को ख्रिस्त का वेडा कहते हैं।

बौद्ध मतावलम्बी महात्मा बुद्ध को लार्ड कहकर पुकारते हैं। इसी प्रकार आर्य लोग आप्त पुरुषों में श्रीराम और श्रीकृष्ण को अवतार कहते हैं। आर्यों में आप्त पुरुषों ऋषि मुनियों और विद्वानों के आदर और पूजन का व्यवहार वैदिक काल से चलता आता है। देवों के स्थान स्थान पर ब्रह्मिन्ना और आप्त पुरुषों का साकार तथा उनकी पूजा को एक प्रधान कर्त्तव्य कहा गया है। और प्रत्येक वस्तु उत्सवों पर इतका करना आवश्यक समझा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थ उपनिषद् तथा अन्य आर्य ग्रंथों में इस विषय की पूरी पूरी विवेचना की गई है। पर किसी वैदिक ग्रन्थ में किसी महात्मा के आप्त पुरुष को परमात्मा का पद नहीं दिया गया है। आर्यवर्ष में सबसे प्रथम बौद्ध धर्म की शिला से लोचो को परमात्मा के होने न होने में सहती सका हुई। और इस धर्म के रहने जाने परमात्मा की उन्नतता के लिए

[योगीश्वर श्रीकृष्ण के प्रति महर्षि स्वामी ब्रह्मसंहार ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लिखा है—“देवो ! श्रीकृष्ण का इ तहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका पुण, कम स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सबूत है। जिनमें कोई अधर्म का आवरण श्रीकृष्णजी ने जन्म ले करण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा।” जिस वैदिक महापुरुष श्रीकृष्ण को महर्षि ब्रह्मसंहार ने अपनी ऐसी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की हो, उनके विषय में मानवत वाले भले ही अनुचित समझने शेष लगावें, परन्तु वैदिक विद्वान् सर्वेश सत्य ज्ञानता ही अस्तुत्त करते हैं। कृष्ण जन्माष्टमी पर्व पर पाठकों के पत्र-प्रवर्तनार्थ यह लेख इसी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जा रहा है।
—सम्पादक]



कर मानव पूजन में श्रेष्ठकारणमय गर्त में फँस गये। उपासना की यह विधि जन क्षाधारण में ऐसी प्रचलित हुई कि वैदिक धर्म के उपदेश देने वालों ने भी बौद्धों की पद्धति का अनुसरण किया। ब्राह्मणों ने बुद्ध के स्थान पर भी रामचन्द्र और श्रीकृष्ण की तीर्थ मानकर उनको अवतारों

★ आचार्य श्री प० सत्यमित्र शास्त्री

की पदवी से विभूषित किया। सन् सन्: इस भाष में इतना प्रबल रूप धारण कर लिया कि कुछ समय के पश्चात् पौराणिक धर्मों में इसकी ही प्रधान चर्चा शेष पड़ने लगी। और चारों ओर अवतार ही अवतार प्रकट होने लगे। कर्षियों के प्रति ज्ञेय के उन्नत मानसिक विचारों की चञ्चलता और विश्वास की निर्बलता ने जो जगत्वा और अज्ञान श्री कृष्ण नानुसार के साव किया है

उसका उदाहरण किसी दूसरी भाषा में वृद्धिगोचर नहीं होता है। यद्यपि मोरेशमी तुलसीदास ने 'मक्ति की वरा-काष्ठा और ग्रंथ के तरंग में श्री राम वर भी चार किये हैं परन्तु तो भी मक्ति का सारा ओर ओर उनकी विलक्षण कविता का अद्भूत भाव श्री रामचन्द्र को उस श्रेणी तक नहीं पहुँचा सका जहाँ तक पौराणिक साहित्य में श्री कृष्ण की भी पहुँचाया है। इसका कारण यही ज्ञात होता है कि श्री राम को श्री कृष्ण के तुल्य उरवेष्टा की उपाधि नहीं दी गई। श्री राम को उनकी बिवाहा कंकेयी ने अर्पित ईर्ष्या और द्वेष से बनवास दिया था। इसलिये कवियों ने भी विलुप्त मक्ति और आतृ-स्नेह का मुकुट उनके शिर पर रख दिया। परन्तु यह मुकुट भी उस मनुष्य को अधिक शोभा देता है, जो प्रत्येक दृष्टि से धार्मिक जीवन का आदर्श होता है। अर्थात् जिसके शरीर पर शेष वस्त्र भी ऐसा उपयुक्त होता है। जिससे मुकुट का सौन्दर्य सम्पूर्ण प्रकार से प्रकाशित हो। श्री राम का जीवन यद्यपि एक आदर्श स्वरूप है, परन्तु इनके ओर श्री कृष्ण के धार्मिक जीवन में बहुत अन्तर है। जिन प्रकार श्री कृष्ण स्वयं प्रेम स्नेह और धीररज में अदृश भागे जाते हैं, उसी प्रकार सत्य धर्मोपदेशक भी थे। उनका जन्म ऐसे काल में हुआ था, जबकि एक ओर वैदिक धर्म का बड़ा विघ्न वैराग्य और दूसरी ओर वैदिक धर्म के अन्त में धरकर लाया हुआ एक ओर बड़ा जातः था। धर्म का यथोचित स्वन से अभिप्रेत हो चुका था। कभी मिथ्या धर्म और कभी शुद्ध नास्तिकवाद की किलारुकी का पलडा भी हो जाता था।

इन दोनों का एक स्थान पर न्यय भी बसा ने रहना असम्भव था। चूंकि इनको ऐसे समय में धर्मोपदेश करना पड़ा था। इसलिये इनका जीवन धर्मोपदेशक का एक उत्कृष्टतम आदर्श है, और इसलिये हम देखते हैं कि हिन्दुओं के सम्प्रदायों में सम्भवतः एक भी ऐसा पुत्र न होगा। जिस पर श्री कृष्ण के उद्देश का कुछ न कुछ प्रभाव पड़ा हो। सब ही श्रीकृष्ण का नाम एक स्वर से उच्चारण करते हैं, और उनके उद्देशों को प्रमत्त मानते हैं। यद्यपि यह कथन अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि भारत का धार्मिक मेघ मन्थन इस समय भी वैदिक महापुरुष योगिन्द्र के उद्देशों से प्रकाशमय वृद्धिगोचर हो रहा है।

श्री कृष्ण भी ने स्वयं कभी अवतार होने का दावा ऐसा नहीं किया है। भगवद्गीता के अतिरिक्त महाभारत के ओर किसी भाग में ऐसे दावे का प्रमाण नहीं मिलेगा है। भगवद्गीता श्री कृष्ण जी की रचना नहीं है। अतः गीता का प्रमाण इस विषय को पूर्ण रूप से पुष्ट नहीं कर सकता है। परन्तु यदि आप ध्यान कर कि गीता के बचाने वाले ने कभी ऐसी पुक्ति बांधी जिससे यह परिणाम निकले कि कृष्ण महाराज अपने आपको अवतार समझते थे। तो तो उसका उत्तर यह है कि अपने कथन को विधिमाननीय और आम जनिक बन ने के लिये उसने ऐसा किया। गीता का यह भाग जिसमें श्रीकृष्ण जी अपने को परमात्मा या परमात्मा का अवतार मानकर उपदेश करते हैं। वह प्रकट करता है कि गीता स्वयं एक प्राचीन पुस्तक नहीं है। बल्कि वैदिक साहित्य में जिसमें ब्राह्मण उपनिषद् और सूत्रादि निहित हैं। उस प्रकार के उदाहरण नहीं हैं। जिसमें उद्देश करने वालों को ऐसा पद दिया गया हो। जहाँ तक मैंने ज्ञानवीन किया है, अब निधियों में एक ऋषि के बचनों में इस प्रकार बचन पाया जाता है। वह भी ऐसा स्पष्ट बहुतायत से नहीं जैसा कि भगवद्गीता में। गीता का एक प्रकट करता है कि मिश्रित सत्य के पडियों की रचना से यह पुस्तक रचित नहीं है। इतने भी प्रमाण हैं।

अवतारान्तरि मा भूदा मानुषो तनुमाभितम मे अपमान करते हैं। जो परमात्मा को मनुष्य शरीर धारी कहते हैं।

अतः श्रीकृष्ण जी वैदिक महापुरुष थे। श्री ध्यास के शब्दों में उनकी जितनी शिक्षा थी। सम्पूर्ण वैदिकता से ओन्मोत थी। योगिराज के जीवन का बीमल बर्णन श्रीमद्भागवतकार बोधदेव ध्यास ने अनंगल लिखा। जो दुराकार से युक्त है। जैसे देवे देवो ब्रह्म सुवर्णीनः। प्रअभूवीयिका कन्या योनिमाच्छद्य पाणिना। अर्थात्माओं के साथ श्रीकृष्ण ने रमण किया। गोवत्कन्यावै अपने योनि मार्ग को हस्त से ढककर चली गई। इसी प्रकार राक्षसी का बर्णन कृष्णानुराधा के साथ समापन तथा श्री राधा का वास्तव्युक्त प्रेम। यदि इनका असकारिक बर्णन किया जावे तो श्रीकृष्ण जी स्वतः कुछ न रहकर ऐतिहासिकता से परे होकर एक अलंकारिक पुत्र ही जायेंगे। अतः महर्षि ध्यासवर्णन भी हमके ध्यान में

(शेष पृष्ठ १४ पर)

लोग तो जैसे शिशुवती काट ही रहे हैं, काट ही रहे हैं। कम से कम बच्चे ही ऊँचे पर्वों पर उड़ कर चुकी हैं। माता पिता की आरपीयता और उमड़ता वास्तव्य स्वभावामुक्त एक उचित ही है। परन्तु अब जरा विचार पूर्वक सोचें कि क्या केवल आंधी की तरह अंधे की बोलने, डेर हूँ करने, बाय बाय, बंबू कहने या अरनी किसी प्रेमिका से 'आई लव यू ! डालिंग' कह देने मात्र से ही क्या किसी को उच्च पथ के लिये उपयुक्त माना जा सकता है। कदापि भारतीय संस्कृति के अनुसार भारत में वेद की उच्चतम शिक्षा कान्धेड शिक्षा नहीं मानी जा सकती।

आज देश में उद्योग विकास प्रधान योजनाओं के बावजूद भी इन्जीनियरों की बढ़ती बेकारी इस ओर खुला संकेत है। लेकिन इन सब बातों की ओर विचार करने का साव्य किरी की अवकाश ही नहीं है। सब के सब अलग-अलग अपने अपने घोटों पर सवार है। नूनरी और बेकारा बच्चा फौजान, मोटर कार, चपरासी के घिरे घिचारे के बच्चों के बीच हर समय उनकी सम्बन्धी-घोड़ी बातें, 'एक्सकरोन हुर, हिम स्टे आदि की चाचाय सुनते-सुनते गरीबी की भावना से दबता चला जाता है। गरीबी से जीवन टक्कर लेते हुए माता पिता के लिए यह स्वाभाविक ही है। लेकिन आज क बग़र बुद्धि नकलची लोग बच्चों का इन स्कूलों में भेजकर साव्य संवेन के लिए कल्पना लोक में बिचरते लगते हैं। लेकिन अब उन्हें ठोकर लगती है वे उड़ते उड़ते ऐसे गिरते हैं कि सर्व-सर्व के लिये उनकी दरवनाय घूमिल हो जानी है।

* * *

आइये अब हम उनका अपने एक ऐसे मित्र क बात से बतते हैं जो कि अनेकों आत्मिक भावनाओं से भारतीय हैं। लेकिन पारशात्य वेद भूषा और अनेकों पारशात्य विचारों में उसे गुलामी की जखीरी में जकड़ लिया है। उनकी वेद भूषा आप देखते बही यही चुस्त तन वनाक पंठ और उजाड़ जती कमोत्र साव्य जैसी पोषाक पारशात्य वेदों की अन्तका लड़कियाँ भी नहीं पहनती होंगी। मैं अपने मित्रव को कई भारतीय संगीत कार्य-कर्मों में ले गया। लेकिन वही उनकी आत्मा न ठहरो,

और स्वयं बहिर्गमन करने के साथ-साथ मुझे भी बाहरों कीच ले गये, और फिर एक दिन वे अन्धे-संगीत कार्य-कर्म में भाग लेने के लिये मुझे बाध्य करने आ पहुँचे, मेरी आत्मा ने मुझे बर्हा जाने के लिये साथ न दिया। और मुझे यह आभास हुआ कि आज भारत के बच्चे बच्चे में पारशात्य कला संस्कृति और गुलामी की जड़ें अत्यन्त गहरी हो चुकी हैं। उन्होंने भारतीय संगीत पर दिव्यनी करते हुए कई बार मुझसे कहा, तानसेन, गिराँजुसरो आदि के संगीत में अपने आपको बाँध देना पक्का पना होगा।

एक बार उन्होंने पारशात्य संगीत की प्रशंसा करते हुए मुझे बताया कि गिटार की धुनों और 'डम' की घोट में कुछ ऐसा जादू-सा है। क पर अपने जान बिरकने लगने हैं। डास लोहे बिना भी कोई किसी का साथ दे दे सकता है। उन्हें कई बार उत्सव, बरतों, पाटियों में भी जाने का अवसर प्राप्त हुआ, जहाँ से लौट कर उन्होंने मुझे बडे हँसमुख वेहरे से हस्तते हुए अपनी प्रशंसा सुनाई कि मैं बहा ऐसा हिबस्ट किया कि सब व्यक्ति मेरे हिबस्ट का बेलकर सबहोम से हँ गये, और मेरे ऊपर संकडों दयों भोद्धावर कर देंगे। उन्हें मुझे यह ब सुनने में हार्बिक प्रसन्नता ही रही था। और मैं आज की इस गुलामियत पर मन ही मन यड़ा जा रहा था। आज जानपुर या किसी भी सहर में किसी उत्सव, बरत या जलूम में पड़े लिये व्यक्ति भी बंड की धुन सुन कर बोध सड़क पर उड़ल कूब करते 'राक एन रास' हिबस्ट और इनी प्रकार के अनेकों नृत्य बिना किसी हिबक के नाचते चलते हैं। जिसके नामे पशाव का भंगड़ा भी सरमाता है। मैंने दो बार साधियों कई पाटियों आदि में देला, बाकायदा मञ्च बना कर बंड अथवा रिफार्डिग करके लड़के लड़कियों द्वारा 'राक एन रास' बोल बेल किया जाता है। जिनकी बेल-धुवा भी आप मन ही समझिये। अब मञ्च पर इस प्रकार का मन नाच हुनारा पारिजिक पतन नहीं तो और क्या है। कहां हमारी प्राचीन संस्कृति में लड़कियाँ घर से निकलने में अरमाती थीं, जोर कहां आज खुली सवाधों में मञ्च पर नग्न नृत्य करती हैं।

मेरा मस्तिष्क काम नहीं करता है, हृदय रो उठता है, और भारत धूमि की इस दयनीय बसा को लोच कर विचार करता है, कि जाने क्यों वर्षा की प्युहार, ठण्डी मस्त हवाओं से ढरवतर कर देने वाली मेघ महारों अणु-अणु को बिरका देने वाला बसन्त, करेबना में खोड करने वाली बंती, कल्पना को साकार करने वाली मारतीय कला, हमारी अनूय्य भिभि, बीबा, सितार करकक जैसे उच्च मृत्य को झोडकर हृय पाश्चायता के मने में स्वर्ण छोड मुलम्मा चड्ढे पीतल हीरा छोड मूठी चमक वाले पत्थर के पीछे बीबाने हो रहे हैं ।

अब हम आप को आधुनिक बेश-भूषा के मरुच की ओर ले चलते हैं । जहां अनेकों परिवारों में बेश-भूषा, चण्डी और बीबी में, स्वडं और बाबहेयर से समिटती बनी आ रही है । चिपके कुरते और बल को रमार देने वाले अत्य चरत बस्त्र आज हमारी भारतीय बेशियों को अत्यधिक प्रिय हो रहे हैं । मने ही बिदेशों मे भारतीय साडियां ब स्लाउज लोक प्रिय हो रहे हो । देना आभास होता है, कि फिल्मों में बेश भूषा देख कर नकल करना आधुनिकता की कसौटी है । मांथी की तरह अंग्रेजी बालना और नग्न बेश-भूषा ही शायद आधुनिकता है ।

* * *

अब हम आपका ध्यान जीवन के एक पहलू को ओर ले चलते हैं । बच्चे की बर्ष गांठ है । भूम मान है, लेकिन आश्चर्य आधुनिक डग के गुंथारे, झण्डियां लडकी है, बन्धनवार केले के बले आरु वन आदि नहीं हैं । आग आगनुक अतिथियों में ले जितो ने कहा— माई कुञ्ज गाना बजाना हो जाने । एक साथ कई माथाओं माई— 'अभी गया रखा है, इन प्राचीन गंधक गानों में' फिर गाने तो रेडियो पर भी सुने जा सकते हैं । 'बच्चों से केक पर सगी मोमबतियां बच्चे से कुसवाई जाती है' लोग मोम बतियों का प्रयोग भी आधुनिकता का प्रतीक मानते हैं । तत्परचात् सभी उपस्थित लोग गाना आरम्भ करते हैं, 'हेरी बर्ष डे डू यू' वेचारा बच्चा प्रतिबिन हिन्दी बर्षवा अय्य मातु माता मोलने, सुनने से इसका अर्थ ही नहीं समझता और मातु भाया में आधुनिक अतिथियों की मरुक कटती है । लोग नेकों पर बरफदेस पाईं जाने

के लिये मित्र की मांति दूट पडते हैं । फिर गिलासों बोलकों के दोर एभी पुणव काँ मबहोस करने लगते हैं । फिर ओठो का 'एक-एक राल' या दिवस्व हुमा काकी रत हो गई, बाय बाय, टा टा, बंभयू करते हुए सोग बिबा हुये । बच्चे के मन और मस्तिष्क पर डैडी मम्मी की प्रतिबिन की इस आधुनिक लीला की एक तहू और बड़ गई, और बहु सो जाता है । यह है कानपुर नगर के एक प्रतिष्ठित एक भारतीय परिवार की झांकी । आज बेश में ऐसे परिवारों की सख्या उपलभ्य साधनों और आय के अनुसार बाडू की मांति बड़ रही है ।

इसी प्रकार की एक घटना और है और इस प्रकार की अनेकों घटनाएं हूमें पत्र पत्रिकाओं में पढ़ने को मिलती हैं । एक वा विश्वविद्यालय का एक विद्यार्थी प्रवेक का मम्मी चुना गया । उस छात्र के प्रोफेटरों बाबायों को हादिक प्रसप्रता स्वामाधिक ही थी । सभी व्यक्ति रेलवे स्टेशन प्लेड फार्म पर एकत्रित हुये स्वागत करने हेतु सभी आचार्य और मित्र अपनी अपनी बेशभूषा में बच्चु थे । गाडी की बोगी सावने आकर ठहरी । सभी ने अपने-अपने डग से बधाइयां दीं । किनी ने कहा, 'यू हैव मेन्टेड व रसोरियस ट्रेडीमान आफ योर अल्मा मेंटर' दूसरे ने ने कहा—'माई एम प्राडड आफ यू' । आदि कहकर सबने हाय मिलाया । इन्ही सबके बीच एक पूर्ण भारतीय बेश-भूषा वाली आचार्य ने—ओयेम् शरव शतम् मग्ग के साथ जैसे ही आशीर्वाद देना आरम्भ किया चारों ओर ओर की हँसी पूज उठी इस समय लगभग सभी के चेहरे पर कुदिल मुस्कान थी । जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि वह कंडा पूर्ण गवार है जिसने न कोई सामाजिक सिष्टता का मान है न कोई तय ब आचार्य जी का पहला अवराय भारतीय बेश-भूषा पोती कुर्ता दोपे पहनकर जाना था और कथित वचार नाबा का प्रयोग यह उनका हीनता का कार्व और घोर अवराय था । वह जिसको अपने आप मनः चलुओं से देख रहे हैं वह भी प्रभाव काशी जैसेनगरों में घटित हुई । लेकिन ही उस समय उपस्थित व्यक्तियों के सिर शर्म से झुक गये । अब सिध्य ने इनसे हाथ मिलाये की उपेक्षा कर उनके चरक स्परी कर जिये । ईशवर ही जाने बहु बेश-भूषा का प्रभाव था अचन्य व्यक्तिय का या जग्न में जिये गये देव आशी-



बाँव का ।

* * *

अब आइये हम आपको ऐसे दशम की ओर ले चलते हैं, जिसके कारण आज हम गरीब से गरीब तर ओर होन से होन तर होते जा रहे हैं जिसके कारण ही परिवार की आबिक सब बिल्कुल खोखली हो गयी हैं। वो डाईं सौ रुपये मासिक पाने वाले परिवार के लिए अपनी बेटी की शादी करना परिवार के ढेर से पार बर्षकर नहुं समुब में डकेल देने के लयान है। आज की इस गदंन तोड महगाईं मे जब खान-पाना दूधर है, तो सडकी की शादी के लिए आठ-दम हजारा दया एकत्रित करना पूरे परिवार क अदितय के माब खिलवाड करना है। बेचारे क साधारण सरकारी कर्मचारी ने कारखाने की सडकारो समिति से जैसे-तैसे कज लेकर अपनी लडकी को शादी का प्रबन्ध किया। बिबाह के ऐन मोके पर हो घर आये अतिथियों ने कहुना प्रारम्भ पर दिया मरु व को सब प्रबन्ध सुन्वर है लेकिन दोडे से लरु के पीछे जान कट आयोगी लयत और जधीर १२ गगिन-यो क सं न ले दया हम लाने की नाक ऊँचो हो। दर पर दयान रोज भोज छोडे अती है लेकिन मरु व को जो दयया मिला थ पूणनया समाप्त = चूा व अ दृष अतिथियों मे से एक ने बडे एडवान मन्द महान से हज के ख मे रुपये दानवये। ममान, कुर्मी, मेज काकरी आदि म २०० रुपये कर्ब हो गये। परिवार प-कुव मरु के पश्चात् ५० रुपये के अलवा सुंद-ीर दय ज के ५०० रुपये आर बड गडे इन पर कुल १६०० रु० कर्ब खडू गदा। जाये अतिथि लः पीकर खल दिये, खर खतो परिवार की अ धुनकता की नाक तो कटने से बच गयी। यह हाल तो भारतीय प्रणाली मे हो गया है। यह हे कज लेना पडे, मूलों मरना पडे लेकिन आधुनिकता की नाक ऊँचो रहे। आज के प्रत्येक आधुनिक परिवार का पहला और सतत् प्रयत्न सही होगा।

* * *

अब सीधिये बीते हुये अर्धजो शासन का ओर चलिये जिससे भी कुछ भारतीय अर्धजों को प्रसन्न करने और उनकी मकल करने के लिये संबंध सांसाधित और

[पृष्ठ १० का शेष]

सत्य विवेचन अपने शब्दों में किया। देशी श्रीकृष्ण जी का इतिहास महानारत मे अरुणसुप है। उनका पुत्र, कर्म, स्वभाव और चरित्र आदत्त पुत्रवों के सदृश है। जिसमें कोई अघर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पयन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा। इस माभावत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। दूष, दूरी मयजन भाविकी खोरी और कुब्जा शांती से समागम परस्त्रियो से रास मण्डल क्रीडा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण जी मे लगाये हैं। इसको पड़-पड़ा, पुन-पुना अन्य मत वाले श्रीकृष्ण जी को बहुत-सी निन्दा करते हैं। जो यह माभावत न होता तो श्रीकृष्णजी सदृश महारामों की मूर्ती निन्दा क्योंकर होती। श्रीकृष्ण जी को महात्मा बंधु श्याम ने अपने शब्दों मे कहा—

यत्र योगेश्वरः कृष्ण यत्र पादौ धनुर्धरं

सत्र शो विजयो भूतिश्रुत्वा नीतमर्तममम् ॥

अर्थात् योगिराज श्रीकृष्ण और उस बंदिक महापुरुष के पद पर चलन वाले धनुर्धर अर्जुन होंगे। वहाँ तीन बोजे लयति शो विजय भूति शिखय प्राप्त होगी। आज इन देश का एग ही बंदिक महापुरुष के शिक्षा सवाचार नीति की आवश्यकता है।

उक्त प्रश्नशील रहते थे। हम अपनी जमडी का रग बराने से त असमर्थ हैं और फिर यह काय हमारी शक्त से परे भी है। लेकिन आज हम अपने जो जान से जावा रहन-सहन, आचार-विचार, वेस-भूया आदि सभी में पारश्चात्य देशों को भी पीछे छोड़ने में सतत् प्रयत्नशील हैं। आज अपना राष्ट्र अपनी मति अपनी कला, संस्कृति और भाषा हमे दबती नहीं। यदि हम इसी प्रकार की गुलामियत में जकड़े पारश्चात्य सभ्यता की उन्नति करने में लगे रहें तो वह दिन दूर नहीं जब हम हीनता कपी सागर की कगार पर लड़े होंगे और इस कगार पर आने वाली हीनता कपी सागर की उबार भाँटा कपी दासता की जजोर हमे कभी भी जकड़कर दासता के अथाह सागर में दुधो बेगी जहाँ से हम फिर निकलने में भी असमर्थ होंगे।



सत्यराध

(रथिपति बनो, रथीज्ञ नहीं)

★ श्री इन्द्रदेवा जी मन्त्री, अ० मा० आयसमा



वय स्याम पतयो रथीणाम् ।

हम सब समग्र रथि के पति बनें। कोई व्यक्ति रथि से होना नहीं चाहता। जितने हम रमण करते हैं, उन सभ साधनों का रथि कहते हैं। रथि पर अधिकार केवल कुछ व्यक्तियों का नहीं होना चाहिये। यदि गिने घुने कुछ व्यक्तियों का ही अधिकार रथि पर हो गया तो उस रथि की रक्षा नहीं हो सकती है और हम सब रथिपति बनने से बञ्चित हो जावें, क्योंकि रथिपति रथि को रक्षा करने वाले को कहते हैं और गिने घुने रथि के स्वामी कुछ व्यक्तियों को रथीज्ञ कहते हैं, वे रथि के ईश अर्थात् सर्वोपकारी मानिक बन जाते हैं। एक व्यक्ति के पास अमितसम्पत्ति हो जाने से वह उसकी देखभाल भी नहीं कर सकता है। उदाहरण के लिए नौकरों को नियुक्त करता है। नौकर उस रथि को अचना व समझने के कारण उसकी सुरक्षा में बलि नहीं लेते हैं। इस प्रकार एक और रईस वर्ग बन जाता है, दूसरी ओर धनिक वर्ग। रथीज्ञ वर्ग कुछ कर्तावर्ता नहीं, धनिक वर्ग परिश्रम करते-करते मर जाते हैं और उन्हें कुछ धन नहीं मिलता है।

धर्मियों की दुर्बला

वेचारे किसान को देखिये। रात और दिन चाहे जाड़ा हो चाहे गर्मी, चाहे वर्षा। भयकर लीत, सू और पथभोर वर्षा में प्रकृति से उबरकर लेता है, तब कमी धन बाबि कामगरी को उत्पन्न कर पाता है। कहीं धन में अल्प संयार हुआ कि सरकारी तथा नगर सरकारी लोग

[स्वधीनता के परभाव राष्ट्र-निर्माण की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक है। वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है, इसमें सर्व प्रकार के वादों और विचारों से परे हैं। वेदों में किसी विशेष मत और सम्प्रदाय का पोषण नहीं है। वेद एते सर्वज्ञ हिताय का पोषक है। मानव धर्म का प्रतिपादन करने वाला वैदिक धर्म विधमताओं का विष दूर करना है, और सत्यता के अग्र से मधुर जीवन का सिखन करता है।

‘सत्यराध में जिस वैदिक सत्य की आराधना की गई है, वह कौन राष्ट्र निर्माण में सहायक होगी, यह इन लेख में पढ़िए।
—सत्यावक]

उसके इस अन्न को लगान, तकाली, श्रण, और मग्ने भावों में लूट लेते हैं और वह मिट्टी का माधव, बैसा का बैसा हो रत्न शान्त और बाने-बाने को तरसता रहता है। आज भी गाँव में ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्हें एक बार भी मरपेट भोजन नहीं मिलता है जैसे तंसे जीवन को व्यतीत कर रहे हैं। इनकी धनी हुई आँखें फिर के छूट गाल, और

राष्ट्र निर्माण

चर शूरियों इस बात के प्रमाण हैं, बिचड़े लपेटे रहते हैं। जाड़ों में इन पर जंसी गुजरती है बंडा पर-मात्मा ही जानता है, अग त प ताय कर रात काटते हैं। इनके रहने का यह बसा है कि जिस श्रौंगडी में स्वय रहते हैं, इसी में पशुओं को, उपलों को, भूमा को, और उसी में अतिधियो को भी मजबूरी से टहराते हैं।

वही वसा मजबूरी की है, वेचारे किसान मजबूर को धनिक हैं, उनकी बीन वसा अब अतिम दवस्था को पहुंच चुकी है। धनिक सारे संवार को भोजन देकर स्वय भूखा मर रहा है। सबको कयबा देकर स्वय नंगा धूप रहा हैं। यह संवार के रथीज्ञों को सुखी बनाता है पर स्वय खुशी ख बन बिता रहा है और आत्मा की टकटकी लगाये बंडा है इन रथीज्ञों की ओर कि वे इन पर दवा-

मुद्रित डालें। अब समय आ गया है कि अविचरार्थ हम एबीसी की रिचिफि को बरखें।

मित्रो! बेर मे आदेश दिया है कि 'सत्यराज' अर्थात् सच्चा जन जो वाश्य है उसको प्राप्त करो, यदि सत्यराज को प्राप्त न किया तो सत्य से हट जाने पर आप अवराज के नायी बन जायेंगे।

सत्यराज क्या है ?

माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः। वैश्वः भूमि मेरी माता है और मैं पृथिवी का पुत्र हूँ। 'माग यति इति माता' जो माग में जाती है अर्थात् अत्येक के नाम को बराबर करती है। माता पर सब पुत्रों का समान अधिकार होता है। माग में जाति, जातु, और लोग सम्मिलित माने जाते हैं, भूमि नहीं। भूमि तो सबके नाम में समान है। इस भूमि से जो जितना भोग प्राप्त कर ले यह उसके कर्मों पर निर्भर है। 'अवसित बर्या साभूमि' हम जिसमें होते हैं इतनीसे वह भूमि है। पुनाति पवित्रं करोति इति पुत्र' जो अष्ट कर्मों में पवित्र करता है, उसे पुत्र कहते हैं, 'पूवते विस्तीर्णं अवति इति पृथिवी' पुत्रों से माता विस्तीर्ण होती है, अतः वह पृथिवी कहलाती है भूमि माता के सब पुत्र होने के नाते वस्तुवा कुटुम्ब है। कुटुम्ब मे कोई भी नया सुखा क्यों रहे? ऐसी व्यवस्था करनी पड़ेगी। इसलिये आवश्यकता है कि अत्येक राष्ट्र कुटुम्ब प्रणाली को बालू करे। कुटुम्ब प्रणाली नाम से आरम्भ होती है, अत्येक प्राण को एक कुटुम्ब का रूप दिया जाये, और सबको प्राकृतिक रूप से नाम की सकल भूमि का उर्गें स्थापित कर अवनी-अवनी जीवन यात्रा के लिये कृषि और उद्योग की व्यवस्था करके 'प्रथम विनिमय' लागू कर दिया जाये, जिससे कि सब लोग अन्न उत्पन्न कर सकें। अन्न ही सत्यराज है।

इस समय भारत का कृषि क्षेत्र कम ५५ करोड़ एकड़ है। अन्न संख्या बढ़ते-बढ़ते यदि ५५ करोड़ हो जाये सब एक अत्येक के नाम में एक एकड़ भूमि जाती है। यदि किसी प्राण की जनसंख्या ५०० है और उसका कृषि क्षेत्र कम भी ५०० एकड़ है तो अत्येक के नाम में एक एकड़ भूमि जायेगी। इनमें १०० व्यक्तियों के कुछ ऐसे परिवार हैं जो कृषि न करके अन्धकार, अंधिक, वैश्व,

पुहार, बड़ई, मोची, नाई इत्यादि हैं, और वे लोग अन्ध्यापन आदि कार्य करते हैं, परन्तु वे भी एक-एक एकड़ भूमि के अधिकारी हैं। अन्ध्यापन आदि कार्य करते हुये इन्हें एक-एक एकड़ भूमि की उच्च मिलेयी और उनकी १०० एकड़ भूमि से ४०० व्यक्तियों में बराबर बराबर विभक्त हो जायेगी। इस प्रकार इनको अपने नाम से चौथाई एकड़ भूमि अधिक मिल जायेगी। बेरादेशानुसार उच्च का सोलहवाँ भाग सरकार को देने के परभाव उस चौथाई एकड़ की उच्च अत्येक व्यक्ति अन्ध्यापक आदि के निमित्त दे देगा। अन्ध्यापक आदि अपना कर्म ब्यर्थ करते रहेंगे, और कृषक अपना कार्य। परस्पर सहयोग से कार्य सुचारु रूप से चलता रहेगा। सब भूमि के अधिकारी बन जायेंगे, कोई भूमिहीन नहीं रहेगा। इस प्रकार सब लोग अन्न उत्पादन में लग जायेंगे। इसलिए भूमि हीनों! पुत्रारे चैतन्य होने का समय आ गया है। मोक्षार्थकार से निकल कर सत्यराज को प्राप्त करो।

कुलों से मोक्ष प्राप्त करने का सुन्दर अवसर

मत्तमान द्वारा जहाँ शासन बदलते हैं, शासन बदलने के लिये यही सुन्दर अवसर है, कि आप उन लोगों को अपना मत प्रदान कीजिये जो 'सत्यराज' के पक्षपाती हों, और आप सब रायपति बन सकें। इस समय सत्तार सत्यराज को छोड़कर अवराज में कडा गया है। इस अवराज से मुक्ति प्राप्त करो।

अपराध क्या है ?

किसी भी प्रकार के सिक्के की कल्पना करना और प्रचलन ही अपराध है। सिक्का सारे पावों की जड़ है। पैसे के बल पर जो भी करना चाहो कर लीजिए। इस युग में ईश्वर से भी अष्ट वस्तु पैसा है, इसलिये मनुष्य उसी के उभेय कुन में लगे रहते हैं। जो अधिक पैसा इकट्ठे कर लेता है, वह पैसे के बल पर क्या-क्या उत्पादाए नहीं करता है। पैसे पावों ने ही साहू बसाये, और जिनियों से पाखाना भी बडवाना शुरू करा दिया। इससे बड़ा अपराध क्या होगा? पैसा बीच का बल है, जो निरुत्तरे बर्ण को उत्पन्न करता है। यह निरुत्तरे बर्ण पैसे के बल पर जिनियों की कमाई को लूटता रहता है।

आर्थिक संघर्ष में सिक्का तो जन्म पडा, बल को



हेतान के रूप में धारण करने का विधान नहीं है। वातु तो केवल रोग निवारण तथा उप करणों में प्रयुक्त की जाती थी। आसूयच भी वातु के नहीं बनते थे, बल्कि फूलों के बनाये जाते थे। सोमस्र सम्कारों में कर्णवेध में वातु की सलाका और वेदारम्भ में वातु की मेखला धारण करने का भी विधान नहीं है, आसूयच तो केवल गावें पहनते थी। कुण्डल और अगूठी आसूयच नहीं हैं, ये तो गोल छले हैं, जो रोग निवारण के लिये पहने जाते हैं।

मोक्ष की ओर चलो

धर्म की चार भुजायें हैं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। धर्म आचार की भुजा है, अर्थ वाहिनी भुजा और बाईं भुजा काम है। इस धर्म की शीर्ष भुजा मोक्ष है। धर्म के द्वारा हम अर्थ का उवाञ्जन और काम का सेवन इस प्रकार करते कि हम बसने फँस न जायें। बलिष्ठ भुक्ति प्राप्त करें इसी की मोक्ष कहते हैं। अपराध बन्धन का हेतु है, और सत्यराज मोक्ष की ओर ले जाता है। सत्यराज के मार्ग से न हम उनमें फँसते हैं, और न हम किसी को फँसते हैं। सब स्वाभाविक ही बन जाते हैं। सत्यराज ही सच्ची कांति है।

अस्पृश्यता निवारण

भूमि पर समान स्वामित्व प्राप्त हो जाने पर सहर के लोग स्वयमेव प्रान्तों में जाकर बसने लगेंगे और थोड़े ही काल में बड़े बड़े सहर प्रान्तों का रूप धारण कर लेंगे। प्रान्तों में भङ्गी मेहतरों की आवश्यकता नहीं। टट्टी कमाने के लिये बड़े-बड़े सहरों में भङ्गी मेहतरों की आवश्यकता है। जब बड़े बड़े सहर चलीं रहेंगे तो भङ्गी मेहतरों की क्या आवश्यकता रहेगी? अस्पृश्यता या सबसे निकटतम वर्ग भङ्गी मेहतर ही है, उसके समाप्त होने से अस्पृश्यता का दुर्ग इह जायेगा।

जन संख्या वृद्धि

ग्राम की कुल भूमि का मालिक ग्राम होता। ऐसी अवस्था में किसी परिवार में लगतान होने पर उसका प्रभाव कुल गांव पर पड़ेगा। अतः लगतान उत्पन्न होने के लिये ग्राम नियम बनायेगा कि बिना मन्त्रिवाचन संस्कार के कोई भी लगतान उत्पन्न नहीं कर सकेगा। लगतान उत्पन्न

उत्पन्न करेगा तो वह लगतान ऐसे ही अवैध मानी जायेगी वैसे कि कुमारी अववा विधवा के लगतान अवैध मानी जाती है। अतः अवैध होने के नाते कुमारी और विधवायें लगतान उत्पन्न नहीं करती हैं। इसी प्रकार बिना मन्त्रिवाचन संस्कार के कोई लगतान उत्पन्न नहीं कर सकेगा और मन्त्रिवाचन संस्कार के लिए मग (स्वयं निरोग शरीर) अर्वा (राज्य विद्यमानकुल) सविता (माता-पिता, पुत्र) पुरनिच (ग्राम निवासी) तथा देव (उपस्थित विद्वान् जन) की स्वीकृति लेनी आवश्यक है। इन प्रकार बहसचर्य साधन से लगति निरोध होकर जन संख्या वृद्धि रुक जायेगी, और अनैतिक लगति निरोध की आवश्यकता न पड़ेगी।

परिवार नियोजन

कुल ग्राम इस बात का विचार करेगा कि प्रत्येक परिवार सुखी जीवन व्यतीत करे। उनकी शिक्षा और विवाह का उत्तरदायित्व ग्राम के ऊपर रहेगा। इस संदर्भा में व्यवस्था से बड़ेज के पृथा बन्ध हो जायेगी और याव बँल देकर विवाह सम्पन्न हो जाया करेगा।

यज्ञ प्रचार

यज्ञ के दो भाग हैं १ हवन २ सहयोज। हवन बिना घी के नहीं हो सकता है और सहयोज बिना अन्न के। सत्यराज से सभी अन्न के उत्पादन में लय जायेंगे। जिसके पान अधिक अन्न उत्पन्न हो जायेगा वह अपने गाय जावि पशुओं को और मनुष्यों को खिलायेगा। गाय अन्न साकर खून दूध देंगी। इनका दूध होगा कि पी नहीं सकेंगे तो उस दूध से घी तैयार होगा। घी के द्वारा हवन करेंगे और स्वयं खायेंगे। स्वयं खाने से हृष्ट पुष्ट बनेंगे और हवन करने से बाभुमण्डल शुद्ध होकर शरीर निरोग बनेगा। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ जातका का बाध होगा। इस प्रकार सत्यराज के द्वारा धर-धर यज्ञों का प्रचार बढ़ेगा।

अभियोग निवृत्ति

सत्यराज में अन्न गत स्वामित्व का नाश हो जाने से अभियोग निवृत्त हो जायेंगे और तहसील कचहरी में चौक कम हो जायेगी। निष्ठला वर्ग स्वयमेव शासक हो

★ वनिता विवेक ★ श्रीमती आनन्दीदेवी

बिरगोई

**आधार राष्ट्र की हों-
नारी सुमन सदा ही ।**

नारी जाति सौर्य की उपासक होती है। यह मनुष्य का स्वभाव है कि सब बड़के प्रति आकर्षित हों। नारी अपने को जाति जाति के साधनों तथा आभूषणों से सुसज्जित करने में संलग्न रहती है। क्या वह सच्चा भूषण खोज पाई। क्या कुत्रिम भूषणों से उसकी सुन्दरता बढ़ी। माता सीमा और श्रोणी बनों में रहती हुई जिन आभूषणों से सुसज्जित रहती थीं। जो उनके शील सौंदर्य के सामने छतार मत मस्तक है। वह कौन-सा भूषण था।

यह सच्चा भूषण शील-बधा-दान-तत्त्व-सास्त्र थे। जिनको जीवन में धारण करने से ही भारत की नारी जाति का गौरव था। नारी के सच्चे भूषण के प्रति क्या ही सुन्दर कक्षा है—

हस्तस्य दान भूषणं—सर्वं कण्ठस्य भूषण ।

ओजस्य भूषणं सास्त्रं—भूषणं कि प्रयोजनम् ॥

दान

दान यह नारी जाति का स्वामाविक गुण है। जो अपने परिवार और पूर्वजों को तथा यज्ञोपवीतों को तथा अपने सेवक तथा सेविकाओं को अर्थात् पूर्वज देती है—

मत परिवर्तन

'आयकल बहुवा ऊच-नीच, छुआ छूत अथवा दरिद्रता में पित्तकर विषस होकर अथवा लोभ बस मत परिवर्तन किया जाता है। सत्यराज के जाने पर ऊँच नीच, छुआ-छूत तथा दरिद्रता के विट जाने से इस प्रकार का मत परिवर्तन बन्ध हो जावेगा। सब सत्य-पार्थ की ओर अग्रसर हूँगे। ५

[श्रीमतीमा नारियां जब सच्चे आभूषणों से अलङ्कृत होती हैं, जब वे देवानुसार हृदय सज्जाओ, सहचारिणी जाया, सुमंगली बधु, सदाचारिणी नार्थी, देवपत्नी और सकुमला राका कर्मों में प्रकट होती हैं, तभी तेजस्वी सन्तानों के माध्यम से राष्ट्रों को गौरवान्वित करती हैं। फौज की कील दासो और बासना की पुतली बनने नहीं बरन् युद्ध और पवित्र जननी बनने में उनके जीवन की साविकता है। मार्गो मंत्रेये, शकुन्तला, श्रीराधा, कुमित्रा मद्योबा और जोजाबाई ही राष्ट्र को शीघ्रनदान दे सकनी हैं—सम्पादक]

दान तीन प्रकार है, एक ऐहिक दूसरा अध्यात्मिक तीसरा अन्न का दान है। (जीवन दान)

पहिला दान

जो अपने बच्चों को शिक्षा का दान देती है और उनकी अलि आध्यात्म के प्रति खोले देती है—हमारे शास्त्रों में माता को प्रथम गुरु कहा है—जसे मातृशान् पितृशान्-मावापत् । माता प्रथम गुरु है, सन्तान को बनाने वाली माता जोजाबाई थीं। माहात्मा गाँधी जी को धर्म और सत्य के प्रेरणा देने वाली उनकी माता ही थीं।

दूसरा दान

आध्यात्मिक दान जो अपने पूर्वजों को जिनकी अलि तथा अन्ध इन्द्रियाँ अब अर्धघयम आवि करने में असमर्थ हो गई हैं, उन्हें सत्य शास्त्रों का पशुकर सुन ना जँडा रामायण में राम ने सीता को दान करते समय कहा है।

अब-जब मात वरहि सुख मोरी,

अन्न बिकल होय मति मोरी ।

सब-सब तुम कहि कथा पुरानी

सुन्दरी सपनाओ सुहु बाणी ॥

—सत्यकीर्तन



उद्बोधन !

आर्यभट्ट और अब उठो सिंह की तरह भाँक और झोलो काग ।
 स्वतन्त्रता की बलि देवी पर तन-भन बन कर दो बलिदान ॥
 भारत में अधियों की गणम सुनि पर धामा ब्रह्मान ।
 वैदिक सत्य ज्ञान से 'छाजूराम' मिटा दो मान निशान ॥
 कण्ठ में है देश, चीन और पाक चुनौती देते आज ।
 कपटो, धूर्त, स्वार्थी अपनी पशुता से आते नहीं बाज ।
 रण की ज्वाला तुल्य रहो है अजर चाहते अपना राज ।
 होकर 'शान्त' न बैठो आगे करे खचन आर्यसमाज ॥

नीर तो बही जो निज देश की सेवा के लिये,
 धर्म हेतु मरे भीत से न घबरावे है ।
 अत्याचार और अत्याय के दमन के लिये,
 जं वन में आगे को जो कदम बढ़ावे है ॥
 वीन दुःखियों को न सत्-वं ब्यहू ओ यक्ष-
 दुँव अँ निरोध को समाज से मिटावे है ॥
 कत्रे 'छाजूराम' धन्य वीर है वही जो निज,
 शत्रु से डरे न पीठ रण से बिलावे है ॥

वीर कौन?

—छाजूराम 'शान्त'
 रंजनाबा

यह बड़ा उच्च तथा सार्विक दान है ।
तीसरा दान अन्नदान

नारी को अन्नपूर्णा कहल जाता है, पृथ्व का कार्य अन्न का संप्रह करना है । अन्न का वितरण करना नारी का कार्य है । यदि नारी के हृदय अन्न दान देने में समर्थ हैं तो उसके पुत्र परिवार के सदस्य से एक-तथा अनिधि सर्वदा सत्पुत्र रहते हैं । जो नारी भद्रा और बक्ति से अन्न का दान विदम्रता और मधुरता से देती है, तो सबका मन प्रसन्न होता है । यदि बही अन्न अनावर बह तिरस्कार से दिया जाता है तो लेने वाला बुझी होता है । देने का भी डर है । कहावत है रोटी खाइए या रोटी ठूँस लो) कितनी विनिम्रता ही गई । अन्नदान या वीर दान है । यह नारी के हृदय का सच्चा भूषण है । सत्य बह शील नारी के कण्ठ का भूषण है । सत्य तथा भीठी बाणी से घर स्वर्ग हो जाता है । भीठी बाणी यह भूषण है जो सबको बस में कर लेती है । कवि ने कहा है—

तुलसी भीठे बचन से तुल्य उपर्ये बहु जोर ।
 बशी करण एक मन्त्र है, तब दे बचन कठोर ॥

कहते हैं सत्य कहुवा होता है । बही बात सरलता मम्रता से कहने में बड़े-बड़े अपराध भी क्षमा हो जाते हैं । यही सत्य कठोर शब्दों में कहने का परिणाम स्वकृप उदाहरण—महा भारत का पुत्र शीपवी के बचनों से हुआ ।

ऐसी बाणी बोलिए मन का आपा बाय ।
 औरन को शीतल करे जाणुं शीतल होय ॥

धोत्रस्य

जो स्वयं मधुर शब्द बोलते तो मधुर शब्द सुनोने तथा दूसरा सत्य में आकर मनीषियों द्वारा सत्य वेद बाणी का भ्रमण करना बेदों का बढ़ना-पड़ना सुनना-सुनाना । यह कानों का सच्चा भूषण है । यदि वह सब आभूषण जीवन में छतार लिये हैं तो सोने बाँधी के भूषणों की क्या आवश्यकता है ।



मूल न जाना आर्यसमाज

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ।

इत करके कर्त्तव्य क्षेत्र में करो पूर्ण जगहित के काज ॥

अभी हमारे प्रिय भारत से नहीं अविद्या जाने-पाई ।

कटना, फूट, कलह बिल्लुत है हैं दुरमन भाई के भाई ।

मानवता बन्धुत्व भाव फिर से सबको लिखला दे आज

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ?

अभी यहाँ शोषण जारी है यीन दुखी दुख मे हैं विस रहे

शाम, कृष्ण, राधा के बंशज हैं ईसाई यवन हो रहे ।

दुख हरके दुखियों का, पुष्टि अभियान बढ़ा दे आज

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ॥

भौतिकता के साथ मधे कंशन की नित बढ़ती होती है ।

अपनी भाषा धम और सस्कृति अब कबो विलसती है ।

सवाचार अपनता भाव सस्कृति से फिर अपना दे आज ।

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ॥

नारी जाति के मुधार हित श्रद्धि ने अनुपम कार्य किया था ।

दियः उच्च आसन नारी को सबशिक्षा का विधान किया था ।

पढ़ करके अग्रजो टर टर बन जाली हैं सेखी आज ।

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ॥

दोग अज्ञा के कारण मानव मन मे भूट हो रहा ।

अष्टाधारी पोषों मे है ठगने का व्यवहार हो रहा ।

दे करके सत ज्ञान पपी को पान के दुर्गं डहा दे आज ।

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ॥

वेद पठन-पाठन नहीं होना जो श्रद्धि का उद्देश्य एक था ।

वेद ज्ञान भू पर बिल्लुत हो यह उनका अपमान एक था ।

ओऽस ध्वजा ले करके जग मे बंडिक नाव बजा दे आज ।

वयानन्द के सन्देशों को मूल न जाना आर्यसमाज ॥

—सत्यनारायण द्विवेदी

सोमयिक समस्याएँ

विद्रोही नागाओं को

प्रो० आनन्दप्रकाश एम० फार्म०
उपमन्त्री-आर्थ प्रतिनिधि समा, उत्तरप्रदेश

[स्वाधीन भारत में नागाप्रदेश की ज्वलन्त समस्या को शांतिपूर्वक सुलझाने की पूर्ण चेष्टा की गई है, पर अभी तक इसमें कोई न्यायोचित सफलता नहीं मिल पाई है। कुछ दिन पूर्व भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था कि जब इस समस्या का निराकरण बुद्धतापूर्वक किया जाएगा। हम उनको इस बीरतापुत्र बोधना का स्वागत करते हैं। -सम्पादक]

नागा लैंड में युद्ध विराम समझौते की अवधि असन्तोषजनक परिस्थितियों के बावजूद लगातार बढ़ते रहने का दुष्परिणाम अब उग्र रूप से सामने आने लगा है। पिछले विनो कोहिया के निरुद्ध हुई मुठभेड़ में विद्रोही नागाओं के पाम से पकड़े गये कागजातों से प्रकट होता है, इन लोगों में साम्यवादी चीन की सहायता से नागालैण्ड की कानूनी सरकार को उखाड़ने की गहरी साजिश कर रही है। वैसे तो एक लम्बे अरसे से विद्रोही नागाओं द्वारा युद्ध विराम समझौते का उलघन किया जा रहा था। यह शिकायत भी पुरानी है, कि वे प्रशिक्षण और सशस्त्र लेने पाकिस्तान और चीन जाते हैं। समय समय पर इस प्रकार के बलों के जाने तथा लौटने के समाचार भी प्रकाशित होते रहे हैं। सबसे भी इस प्रश्न पर अनेक बार विचार किया जा चुका है, परन्तु इन विषयों में कोई प्रभावशाली पग अभी तक नहीं उठाया गया है। वर्मा के जिस रास्ते से होकर विद्रोही नागा चीन तथा पाकिस्तान जाया करते हैं, उसे बन्द कराने के सम्बन्ध में भी सबसे से बहुत बार विचार करने के उपरान्त ही, वर्मा सरकार से बात चीत की गई, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अधिक सफिक्यता अब तक नहीं बरती गई।

प्राप्त करके लौटे नागाओं में अपना शिबिर लगा रखा था। जवानर नुरसा सेना के गस्तीबल की उस पर नजर पड़ी, और उन्होंने एक नागा को पकड़ा तो उसे पास से चीनी हथियार बरामद हुए। तुरन्त गश्त रल न शिबिरों को घेर लिया। दोनों ओर से गोलियाँ चलीं। कितने नागा मारे गये यह तो पता नहीं चला, पर तु २४ विद्रोही पकड़ गये।

प्राप्त सूत्रों के अनुसार यह स्पष्ट हो गया है, कि चीन से छापामार युद्ध में प्रशिक्षण पाये विद्रोही नागा नागालैण्ड के कई पुष्ट स्थानों पर अपने समर्थकों को इस प्रकार के युद्ध सञ्चालन का प्रशिक्षण दे रहे हैं, ऐ- पशिक्षण में चीन से मिले हथियारों और बाल्वेखों की शिक्षा भी जाती है। मुठभेड़ में प्राप्त सामग्री में कुछ ऐसी चीनी पुस्तकें भी सम्मिलित हैं, जिनमें छापामार सर ई की मुख्य विशेषताओं का जेंसे सञ्चू का सामना करन और उसे हराके के बावपेक्ष, लड़ाई के दौरान सिगमल देने का विस्तृत वर्णन किया गया है। विद्रोही नागाओं ने इन शीव वेधों का मुठभेड़ में लुलकर प्रयोग किया था। इन पुस्तकों में विद्रोह के राजनीतिक पक्षों पर भी निर्देश दिये गये हैं। जेंसे एक निर्देश में कहा गया है कि "जब तुम्हारा सञ्च तुम्हारी कितो नीति की प्रशंसा करे तो छोड़ दो। यदि वह उसकी बुराई करे तो उसे पूरी तरह आगे बढ़ाओ।" कई छोटे-छोटे पुटके भी मिले हैं, जिनमें सेना की माओ की प्रस्ताव में लिखी गयी कदिताओं के

घटनाक्रम के सम्बन्ध में बताया जाता है कि कोहिमा से केवल ६ मील दूर ६००० फुट की ऊँचाई पर अनाच्छादित पर्वत शिखर पर चीन से संघ्य प्रशिक्षण



संघर्ष हैं। इन कविताओं का चीनी भाषा से अथवा चीन भाषाओं को कई बोलियों में अनुबाध करके छापा गया है। उसके साथ ही जो कागजात मिले हैं, उनसे इस बात का सबूत मिलता है, कि चीनी कम्युनिस्टों से और उत्तरी चीन के विद्रोहियों से इन नागाओं का अनिष्ट सम्बन्ध है। इसके अलावा इनके पास से भारी मात्रा में गोला बारूक व आग्नेयास्त्र व गोला, बारूक, मरओस्तेयिंग के और चीनी प्रतिनिधियों के फोटो, चीनी पुस्तिकाएँ तथा चीनी निरीक्षण वाली उष्ण वन्य वहाँवाँ आदि भी मिली हैं। इससे पता चलता है, कि यह प्रयत्न कितना गहरा है।

भारत सरकार समझौते के लिये त्रिसना आगे बढ़ सकती थी यह बड़ चुकी है। भारत सच के अग्रर रहने पर वह उन्हें स्वायत्त शासन के अधिक तम अधिकार देने को तैयार हो गई है। परन्तु उच्चर इरादा यह है कि वे सर्वथा स्वतन्त्र एवं प्रभुसत्ता सम्पन्न नागालैण्ड की माग से पीछे नहीं हट रहे हैं। युद्ध विराम की अवधि बार-बार बढ़ाई जा रही है, परन्तु उनकी ओर से अभी तक ऐसा कोई संकेत नहीं मिला है, कि वे

उस माग से कुछ कम मानने को तैयार हैं। इतना ही नहीं वे इस बीच में सामोश भी नहीं बैठे हैं, वे ऐसी कार्यवाहियाँ कर रहे हैं, जो ना केवल युद्धविराम के विपरीत हैं अपितु जिन से भारत की सुरक्षा और अखण्डता को भारी क्षति पहुँचा हो सकता है। ऐसी स्थिति में यह सचमुच विचारणीय है, कि क्या युद्ध विराम अवधि को बढ़ाने की संकल्पना की, जिसका अर्थ एक केवल नाकायुद्ध कायदा उठाया जाता

रहा है। परन्तु इसके बावजूब भी भारत सरकार ने एक मास के लिये अग्रि का बढ़ाया जाना स्वीकार किया है।

विद्रोही न गा अपनी ओर से यह शिकायत कर रहे हैं, कि सुरक्षा सेना ने युद्ध विराम क शर्तों का उल्लंघन किया है। परन्तु चीन और पाकिस्तान में जाकर छापा मार युद्ध का प्रसिद्ध प्राप्त करना और वहाँ से भारी मात्रा में हथियार लेकर आना तो युद्ध विराम की कोई शर्त नहीं बन सकती। इत प्रकार क काम तो कोई भी सरकार बर्दाश्त नहीं कर सकती। अपने विद्रोही कार्यों को जारी रखने के लिये अब तक वे युद्ध-विगम की आड़ लेते रहे, यही बहुत है। अब आगे यह स्थिति नहीं चलनी चाहिये। जब विदेशी हथियार बरामद हो गये और विदेशों से साठ-पाठ साबिन हो गईं तब सुरक्षा सेना द्वारा एक पञ्जीय युद्ध विराम के पालन का कोई अर्थ नहीं रह जाना। अब सुरक्षा देना को विद्रोहियों को दण्ड देने के लिये पूरी तरह समझ हो जाना चाहिए।

x

धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय वैदिक सिद्धांत परिषद् (रजि०) की
सिद्धांत प्रवेश, वि० विशारद, सि० भूषण, सिद्धान्तालंकार,
सि० शास्त्री, तथा सिद्धान्ताचार्य

परीक्षायें आनामो विसम्बर-जनवरी में समस्त भारत तथा विदेशों में होंगी। सर्व प्रथम, द्वितीय, तृतीय आने वालों को छात्रवृत्ति दी जाती है। उत्तीर्ण होने पर छात्र व तिरगा उपाधि पत्र दिया जाता है। तथा अमर पत्र सत्यार्थप्रकाश की सत्यार्थ सुधाकर, सत्यार्थमार्त्तण्ड उपाधियों का द्वारा निःशुल्क प्राप्त करें। निम्ने ज्ञानकारी के लिए १५ पैके की टिकट भेजकर नियमावली मगाइये।

आदित्य ब्रह्मचारी

आचार्य मित्रसेन

यशःपाल शास्त्री

एन० ए०, सिद्धान्तालंकार

प्रधान

परीक्षा मन्त्री

भारतवर्षीय वैदिक सिद्धान्त परिषद्

सेवा सदन, कटरा, अलीगढ़ (उ० प्र०)



निष्प्रभ प्रांगण



सृष्टि के निष्प्रभ प्रांगण को ज्योतिर्मय करना है तुमको ।
 आर्य जाति के बीर सपूतो ! जन-विवाह हरना है तुमको ॥

रुठ चुका आह्लाद-विनीद-प्रमोद-सधेरा,
 मानव-मन पर छाया दुल्ल का गहन अधेरा,
 सार्ता निशाहरण को कब होगा रबि-धेरा ?

छोड़ तिनिरमय मीठ निलय, नव-रश्मि-जाल बुनना है तुमको ।
 सृष्टि के निष्प्रभ प्रांगण को ज्योतिर्मय बनना है तुमको ॥

क्यों मानव-मानस में हाहाकार मन्था है,
 निज-विनाश के लिये मनुज क्यों स्वयं तुला है,
 विमुक्त वेद-विद्या से होकर किधर चला है ?

बीष-शिलावत्, ज्ञान प्रकाश जुटाने को चलना है तुमको ।
 सृष्टि के निष्प्रभ प्रांगण को ज्योतिर्मय करना है तुमको ॥

पग पग पर बाधा रोकैगी चरण तुम्हारे,
 झसावात छलेंगे बनकर सुखद किनारे,
 ज्योति-पुञ्ज बन बहकाएंगे मम के तारे ।

किन्तु कपट-छल के मादत से कभी नहीं डरना है तुमको ।
 सृष्टि के निष्प्रभ प्रांगण को ज्योतिर्मय करना है तुमको ॥

आर्य-जाति की आशाएँ तुम पर निर्भर हैं,
 वेद-शास्त्र की गाथाएँ तुम पर निर्भर हैं,
 स्नेह-अपुष्टित कलिकाएँ तुम पर निर्भर हैं ।

विरव सुबिकसित शान्ति बूर्ण हो जिससे बह करना है तुमको ।
 सृष्टि के निष्प्रभ प्रांगण को ज्योतिर्मय करना है तुमको ॥

—हरिवंश जनेजा



कहानी-कुञ्ज



पाप कभी छिपता नहीं

—वान० रमादेवी, लल्लूमपुर खीरी

[लेखिका के अनुसार यह कहानी एक सत्य घटनापर आधारित है—केवल पात्र कल्पित हैं]

एक होस्टल में कुछ विद्यार्थी एकर विद्याभ्ययन कर रहे थे। एक शाम को आपस में होठ पट्टी कि सबसे अधिक निबर कौन है। एक बरौय लखका शिवस्वरूप बोला मैं किसी से नहीं डरता। अन्य लड़कों ने कहा अच्छा हम लोग जा-वा करके १०० रुपये की घंटी रख देते हैं, जो लड़का रात भर एक मुर्बा के पास बन्द कमरे में बैठ रहा, प्रातः १०० से ले। शिवस्वरूप ने कक्षा में बैठना पर मुर्बा माका हो तुमन्थ न आती हो। कुछ लड़के हमसान गये वहाँ एक मुर्बा आया गाड़ा गया लखके छिप गये, अब गाड़ने वाले बने गये तब खोरकर होस्टल लाया गया। शिवस्वरूप ने कहा इसे नहूलाओ। लड़कों का खेल सँकड़ों घड़े पानी डाल दिया गया और एक कमरे में सब रख दिया गया एक कोने में १०० की घंटी रख दी गई और शिवस्वरूप पास बैठ गया लड़कों ने कमरे का द्वार बन्द कर लिया पर बत्ती जलने दी। थोड़ी सी बिलम्ब होने के बाद क्या देलना है कि सब हिनने झुलने लगा और लालें खोन दीं। अब शिव स्वरूप व सबका विदवाया खोको बर्बादा हुन नहीं बैठेंगे। इतने में सब उठकर बैठ गया अब तो शिवस्वरूप ब्रेतहासा बिलसाया खोको सब डठकर बैठ गया मेरा हाटें फेल हो रहा है, तब लड़कों ने खोला सब शव पैदा जालें काढ़-पाड़ देल रहा था, लड़के डरे बरबादा बन्द करके पुलिस को ले आये, सब हवाल बताया बानेदार ने आगे बड़ कर पूछा तुम कौन हो। जिसे घनी तक शक कहा था वह बोली मैं कहीं नु अताग कि एक होस्टल में। बानेदार तुम्हारा क्या नाम है, उसने कहा शीला—मैं बी० ए० को छात्रा हू एक दिन मेरी चाची ने कहा था तुम बोक्रे बिन की हो मैं सप्तमी सावी आदि के कारण कह रही होंगी, तभी खाना खाया मुझे कै हुई। सर बर्ब हुना मैं तो बई अब यहाँ मेरी जालें खुली बानेदार के पूछने पर चाचा का तथा मोहल्ले का नाम बताया एक कांस्टेबिल बतये मुहल्ले में चाचा के घर गया पूछा क्या मुहल्ले यहाँ कोई सर गया था खोर-खोर से भाड़ मार-मार कर रौने की आबाज आई, चाचा ने कहा मेरी सतीची परतीं हैने से मर गई—बापव आकर बानेदार को बताया गया। कलस्वरूप एक रिक्शा मगाकर कफन में घची बर्बाई गो था बंडालकर चाचा के घर मय पुलिस के पक्षी, बरोगा ने कहा यही तुम्हारी शीला है? शीला चाचा-चाची के हथकड़ी डाल दी गई, शीला के बयान हुये इसी प्रकार मेरे माता-पिता हैने से मरे। वास्तविक बात यह थी कि शीला अपने मां बाप की इकलौती बेटी थी जन बहुत था मोटर बगले आदि-आदि। चाचा गरीब था इतका बड़ा लड़का अस्पताल में नोकर था हुला-हुला जहर साकर इस परिवार को ठाक किया पर वह न जाना कि पाप कभी छिपता नहीं। चाचा के छोटे-छोटे बच्चे किसी रिश्तेदार के यहाँ नेब बिये गये। चाची सब जेल की हुवा कामे लने। शीला ने कहा मैं इसी लड़के से सावी लखकी खो मेरे सब के पास बैठा था। पाप का चक्र गरीब लड़का ममपति हो था शीला बची अर्धों का मास हुना।



बादलों में इन्जेक्शन द्वारा वर्षा **विज्ञान वार्ता**

अब प्यासी धरती के ऊपर के बादल बिना वर्षा किये नदी पुनर्र सक्तता। एक हलवा विमान बादलों के नीचे चक्कर काटता है। बिजली की चिंगारी के साथ कुछ राबेट ऊपर उड़लते हैं, और बादलों के ऊपर एक विशेष रासायनिक पदार्थ छिड़क दिया जाता है, जो गर्म हवा की धाराओं से ऊपर उठने लगता है। इस पदार्थ के प्रभाव से बादल जल छोड़ने के लिये विवश हो जाते हैं। इस रसायनिक पदार्थ को सेकोसोबाकिया के वैज्ञानिक पायरोटेविनकल मिश्रण कहते हैं।

बादलों की ऊपरी सतहों पर और ५ डिग्री के तापमान पर भी पानी की बूँदें जमती नहीं हैं। लेकिन धीरे धीरे जाते के आयोडायड के कणों को बर्फ के चरे के साथ टकराकर पानी की बूँदों को तुरन्त जमाया जा सकता है। जब उन जमे हुये जल कणों का घनत्व, बादलों को बहा लिये जाने वाली गर्म हवाओं के घनत्व से अधिक भारी हो जाता है तो ये जल-कण नीचे गिर पड़ते हैं। नीचे हला की गर्म हवा से गुजरते हुये ये कण फिर पानी की बूँदें बन कर बरस पड़ते हैं।

इन्जेक्शन

सेकोसोबाक विज्ञान अकादमी के बागु मण्डलीय भौतिक विज्ञान संस्थान के प्रयोगों से नये सेकोसोबिया पायरोटेविनकल मिश्रण की प्रभावशीलता सिद्ध हुई है। अगर वर्षा करना है तो 'इन्जेक्शन बादलों की सही टैक्नीक' पर धिया जाना चाहिए। चूक बादलों की स्थिति टर अक्ष बदलती रहती है, इसलिये उनके बारे में वैज्ञानिक राडार द्वारा जानकारी हासिल करते हैं।

बादलों को निशाना बनाकर इन तरह पानी बरसाना कोई संस्था तरीका नहीं है, फिर भी यह लाभदायक है, क्योंकि इससे करोड़ों रुपये की रकम के बराबर सूर्यमान शानी लाभमय प्राकृतिक रूप में प्राप्त किया जा सकता है। ५ ग्राम चीनी देने वाले चुकण्डर को उगाने के लिये ४५ लिटर पानी और ६ किलो आनाज उगाने के लिये ६०० लिटर पानी आवश्यक होता है। एक आदमी औसतान ३ लिटर पानी प्रतिदिन पीता है और प्लांट्स आदि

कामों के लिये ४ या ३ हेटोलिटर पानी रोज स्तेमाक किया जाता है।

बैसे सेक स्लोबाकिया ऐसे क्षेत्र में है जहाँ बारिश की कमी नहीं है, लेकिन यह वर्षा सब जगह एक-सी नहीं होती है। उदाहरण के लिये उत्तरी पश्चिमी बाहेमिया के और पर्वतों की तलहटी में लोनी और जांतेच जिलों में पानी कम बरसता है, यद्यपि धरती बड़ी उपजाऊ है। इसलिये यहाँ कृत्रिम रूप से वर्षा कराना बड़ा महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।

ओलो से विरह

इस तरह वर्षा कराने से कुछ और भी प्रकार के लाभ हैं। उदाहरण के लिये उत्तरी बाहेमिया के क्षेत्र में बड़े विकसित रसायनिक उद्योग हैं कोयला खानें हैं, और बिजली के कारखाने हैं, मगर यहाँ पर साल भर आकाश बादलों में छिपा रहता है। घने कुहरे के कारण दुर्घटनाएँ होती हैं, मजदूर काम पर डेर से पहुँचते हैं, और खुली खानों में काम असम्भव हो जाता है। कुहरे के कारण उद्योगों का बिजला धुआ भी नीचे बागुमण्डल में ही घूमडना रह जाता है। इस क्षेत्र में कृत्रिम वर्षा करा देने से कुहरा छंट जाता है, और हवा धुँवें और धूल से मुक्त हो जाती है।

रुस विज्ञान संस्थान के २० वैज्ञानिकों की एक टीम ने डा० य मेक पोवर्नोविक के नेतृत्व में कुछ प्रयोग करके यह भी सिद्ध किया है, कि कृत्रिम वर्षा के साधनों को ओले गि ने से रोकने के लिये भी इस्तेमाल किया जा सकता है। जिन बादलों में ओले होने की सम्भावना हो वैज्ञानिक इसका पता लगा लेते हैं—जैसे इन्जेक्शन देने से, पानी ओले बनने के पहले ही गिर पड़ता है।

अभी हाल तक लोग वर्षा के लिये यज्ञ और हुक्म करते थे नृत्य और गीत समारोह आयोजित करते थे, या मोमबत्तियाँ तथा घंटियाँ लेकर जलूस निकालते थे। किन्तु अब लोग वैज्ञानिक रूप से भी स्वयं तै कर सकते हैं कि कृत्रिम वर्षा करनी बरसता है। इस क्षेत्र में भी वैज्ञानिक अन्तरराष्ट्रीय सहयोग कर रहे हैं, और हीज की मदद मिल रही है।

टिकटिकी पर चलने वाला

युवक मास्को को पंवल

रगाना

विश्व-विजय

बेलग्रेड—युगोस्लाविया के पश्चिमी

सीमा प्रान्त का एक युवक जो अपना

है, पंवल क्ल की यात्रा के लिये रवाना हो गया है।

वह है २८ वर्षीय स्वेट जार जुरोवच। वह टिकटिकी के सहारे चलता है। यह ८ नवम्बर तक यहाँ पहुँच जाने की आशा करता है।

उस दिन रुस के लाल चौक में कभी सेना की बड़ी परेड होगी। वह उसको बेलने के लिये लालायित है।

स्वीडन में संसार की सबसे छोटी बंदरी का निर्माण

स्टकहोम—स्वीडन की एक कम्पनी ने यद्यत्ता है कि उसके अनुसन्धानकर्ताओं ने एक ऐसी बंदरी तैयार की है जो संसार में सबसे छोटी है।

यह पारे से बनाई गई है। इसका प्रयोग चिकित्सा के यंत्रों तथा बिजली की घड़ियों आदि में किया जायगा।

फूलों के कारण उतरावन में वृद्धि

डार्मस्टेड—सामान्यतः हर व्यक्ति अपना एक निहाई जीवन अपने रोजगार के स्थान पर बिताना है। मनोवैज्ञानिकों का हमेशा यह मत रहा है कि कर्मचारियों को अपनी कम या कारखाने में प्रसन्न रहना अ बश्यक है और इसके लिए उपयुक्त वेतन ही नहीं बल्कि वातावरण भी अच्छा होना चाहिये।

इसी वृद्धि से कार्यालय में काफी रोशनी, मैत्रीपूर्ण व्यवहार तथा अन्य सुविधाओं की ओर काकी ध्यान दिया जाने लगा है।

एक मनोवैज्ञानिक का कहना है कि कार्य में उत्साह बढ़ाने के लिये फूलों का होना भी आवश्यक है। फूलों से नीरस वातावरण में उत्सुकता आ जाती है और इसका अन्तर उन्मत्त पर पड़ता है। उदाहरणार्थ पवित्री कर्मियों की जिन कर्मों में फूलों का उपयोग होता है वहाँ कर्मचारी अत्यन्त कर्मशील रहते हैं और इस कारण कम छुट्टियाँ लेते हैं। पश्चिम जर्मनी में लगभग २० प्रतिशत कर्मों में फूलों का उबारना से उपयोग होता है।

महारानी एलिजबेथ के बाल झपने सवारे दो जर्मन नाइयों का दावा

म्युनिख—यहाँ के दो नाइयों और बवेरिया के नाई सय में एक विचित्र मुकदमा शुरू होने की आशा है।

ओडिन प्ल टर्ज म्युनिख का प्रसिद्ध व्यावसायिक केन्द्र है। यहाँ दो नाइयों ने एक बड़ी इकाय खोली है। उनका दावा है कि सन १९६० में जब ब्रिटन की महारानी एलिजबेथ द्वितीय यहाँ आई थी त उनक बल सवारे की जिम्मेदारी उन्हीं की ली गई थी।

अन्य नाइयों ने इस दावे को अन्त्य कहा है और जर्मनी के विदेश मन्त्रालय से दावाओं की है कि वह पता लगाये कि सत्य क्या है।

जमन विदेश मन्त्रालय ने जानकारी प्राप्त करने के लिये महारानी एलिजबेथ के महल बकिंगहम पेंसम को पत्र लिखा है।

पता चलता है कि महारानी एलिजबेथ जब विदेश जाती हैं तो अपना वाय सवारे बाबों को साथ ले जाती हैं। इनविधे यह मन्सूख नहीं है कि म्युनिख में उनको स्थानीय नाइयों से सह यता लेनी पड़ी हो।

किन्तु उक्त बाबों नाई अब भी यह कह रहे हैं कि इन को एक पुलस की गाड़ी में बैठाकर महारानी एलिजबेथ के निवास स्थान पर ले जाय गया था वहाँ उन्हीं इनके बाल सवारे की किया सम्पादित की थी।

अगूठे का कमाल

ओसली के एक प्रसन्न कर्मचारी घर से बाहर जब कभी किसी प्रेक्षका से प्रेम में मिलते होते, घर पर उनकी पत्नी के घर का अगूठा फडकने लगता था। इनके घर पर आने पर जब पत्नी इनकी प्रेमलोला का उद्घाटन करती तो यह सङ्घम अने और अपनी कल्पनाओं को स्वीकार कर लेते।

जब पतिदेव सीधे गस्ते न लगे तो पत्नी ने स्वाभाविक रूप से इनको तसक देने की आज्ञा कर दी। अगूठे की फडकन की गति से यह सिद्ध हो गया कि वास्तव में पत्नी का शव दफन है।



तेजोऽसि तेजो

मयि धेहि

बाल-विनोद

प्रकाश की सभी पसन्द करते हैं। अथवा कियकी माता है। बच्चे अंधेरे से भागते हैं। प्रकाश में बंधे खूब खेलते हैं। प्रकाश में न केवल प्राणी ही पनपते हैं बल्कि पौधे और फल-फूल भी फूलते फलते हैं। परमात्मा हमें सर्वत्र प्रकाश में रखे, अन्धकार से बचावे। मनुष्य के चेहरे पर जो प्रकाश धीकता है, उसकी हम तेज कहते हैं। जिस बच्चे, लड़की के चेहरे पर तेज होता है उसी को लोग सुन्दर कहते हैं। तेज, बिना स्वास्थ्य की प्राप्त नहीं हो सकता। स्वास्थ्य, बिना शारीरिक बन के नहीं मिल सकता, इसलिये शारीरिक बल द्वारा स्वास्थ्य द्वारा तेज प्राप्त करो। तुम्हारे मुँहके तेज से मरगुदर बिछाई दें। ईश्वर से प्रायना करो कि हे परमात्मन आप तेज स्वस्व हो हम बालकों को तेज प्रदान करो।

परगुदर परमात्मा तेज उनको देने हैं, जो स्वास्थ्य के नियमों का पालन करते हैं। स्वास्थ्य के नियम यह हैं—

[१] प्रात उठना, उठकर शौचादि से निपट कर बायु—तेज बन करना, अथवा खूबी हवा में शिर्य प्रति व्य.पान करना।

[२] शरीर को खूब मल कर रमान करना और उसको अच्छी तरह पोंछ कर सफ सुन्दर बस्त्र धारण करना।

भले कुर्बाने रहने वाले बालक प्रायः बीमार रहते हैं उनके चेहरे पर तेज नहीं आता।

[३] भूख लगने पर जाना और प्यास लगने पर मल पीना। अक्षरत से अधिक खाने-पीने वाले बालक स्वास्थ्य को बँटते हैं।

[४] सर्वथा किसी न किसी अच्छे कार्य में लगे रहना, बेकार न बँटना, क्योंकि बेकार रहने से भी चेहरे का तेज छूटता है।

सब ईश्वर से प्रायना करो "मयि धेहि कृपा कृपाम" मुझ में खूब तेज धारण कराओ।

अनमोल-रत्न

१—आचार्य बहू है जो अपने आचार से हमें सब्बारी बनावे। —गान्धी

२—हमारी इच्छायें जितनी ही कम हों, उतने ही हम कम देवताओं के समान हैं। —सुकरात

३—कोष भूखंडा तो शुद्ध होता है और पश्चाताप पर क्षम होता है। —पंचागोरस

४—एक अच्छी माता १०० शिक्षकों के समान है। —जार्ज हरवट

५—सच्चा मित्र वह है जो तुम्हारे दोषों को बाहना की तरह बरहिये। जो तुम्हारे अन्तर्गुणों को पुन बतवावे वह शूनामी है। —गणाली

६—मेहनत वह तुम्हारी धामी है जो खूब किरमत के फाटक को खोल देती है : —बाणधय

--संकलन कर्ता सुभाषचन्द्र बाणधय

अनमोल मोती

—शरीर बल से साफ होता है, मन सत्य से, बुद्धि ज्ञान से, तथा आत्मा धर्म से साफ होती है।

—"मनु महाराज"

—यदि तुम किसी का परित्र देखना चाहते हो तो उसके महान कार्यों को मत देखो उसके जीवन के साधारण कार्यों का सूक्ष्म निरीक्षण करो।

—भी नरविन्द

—उबलते हुये पानी में जिस प्रकार हम अपना प्रतिबिम्ब नहीं देख सकते उसी प्रकार कोष में हम अपनी मलाई नहीं देख सकते।

—महात्मा गांधी



“वाचं वदत भद्रया”

शुद्धि देव के पुत्रीत आवेस 'वाच वदत भद्रया' का वासन किया जाय तो प्रायः पारस्परिक बलह मतभेद तथा झगड़े समाप्त हो जाय। वापी सबसे बड़ा भूषण है। मनुहरि जी महाराज अपने नीतिशक्तक थे लिखते हैं—बाधभूषण भूषणन।

परमपिता परमात्मा ने त्रिह्ला को कोमल (बिना हड्डी के) इसलिए ही बनाया है। कमनुष्य इसके द्वारा मीठी तथा कल्याणकारक वाणी बोल। मीठी वाणी बोलकर संसार को बंध में दिया जा सकता है। महात्मा तुलसीदास जी का बचन है—

तुलसी मीठे बोल ते सुख उपजत बहुओर
“बशीकरण यह दम्य है, तजदे बचन कठोर”

जब स्वामी राध अमरीका के हवाई अड्डे पर उतरे तो वहाँ वे देखते हैं कि यात्रियों की कारों की लम्बी लाइन लगी लड़ी है। यात्री अपनी २ गाड़ी में सवार होकर घन बिये। विशेष मे लखे हूबके बबके यह सब दृश्य देखकर वे विजित थे। सहला एक बार के मालिक ने उनसे पूछा, “महाराज ! जो व्यक्ति आपके साथ यात्रा कर रहे थे, वे सब गाड़ी में बैठकर चले गए। आपही अकेले यहाँ रह गये। क्या आपका यहाँ कोई जानकार नहीं ? या आपको सेने वाला ही नहीं पहुँचा ? स्वामी राम न मुश्किलत हुए परतुलर दिया कि आप मेरे जानकार हैं, और आपही मुझे लाने आये हो। बस इतना कहना था कि वही व्यक्ति स्वामी राम का अपना ही बन गया। उसने स्वामी राम को उनके अनोख स्थान पर भी पहुँचा दिया। दोपल और कब्बे का रस दकसा ही है, परंतु ०.पी का भेद होने के कारण ही साग कोमल का पसब करते हैं और कब्बे का नापसब। कोमल किसी को घन नहीं बेती और कब्बा

—बुणा रक्षमो को सम्पत्ति है, अथा मनुष्यत्व का चिह्न है। प्रेम वेदताओ का स्वभाव है।

—मनुहरि

—सकलन कर्ता कु.० अरणा त्रिपाठी

मिसी का घन खीनता नहीं। केवल मीठे बचन बोलकर ही सबको बंध में कर लेती हैं—

‘कागा किसका घन लेता है,
कोयल किसको घन बेती है।
केवल मीठे बचन बोलकर,
बस मे सबको कर लेती है।’

द्रोपदी का कठोर अधन महाभारत के युद्ध का कारण बना। उरुका दुर्योधन को दह कहना—अर्धों के लम्बे ही पंथा होते हैं’ महायुद्ध का कारण बन गया। इस युद्ध ने ऐसा सबका दिया कि भारतवर्ष अब तक अपनी पूर्ण बशा में नहीं आया। यह है कठोर व नी बोलने का प्रभाव।

नीति की अज्ञा है कि “प्रिय ब्रयाल”— प्रिय बाणी बोलो। ऐसी बाणी बोलनी चाहिए जिसमें अपने को भी तथा दूसरों को भी शीतलता मिले। सन्त कवीरदास जी का कथन है—

ऐसी बाणी बोलिगे, मन का आवा लोय।
ओरन को शीतल करे आपहु शीतल होय ॥
सत्य जो प्रियन लगे उसको भी नहीं बोलना चाहिये। काबों का काना कहना कटु सत्य है। किसी ने कहा है—

काने को काना कहूँ, काना गुस्ते होय।
धीरे-धीरे छिपे साईं कैंते बी हे लोय ? ॥
गीता मे यामेश्वर कृष्ण जी ने कहा है—

अनुभवेकर वायव सत्य प्रिय हितम्—अर्थात् बाणी अनुभवेकारी, सत्य, प्रिय और हितकारक बोलनी चाहिए।

शुद्धिदेव देव ब्रह्मानन्द ने ‘अमीचन्द’ को अपनी भद्र [कल्याणकारण] बाणी से एक बार ही तो कहा था, “अमीचन्द जी ! हे तो हीरे परतु कुीचड़ में फले हुये हो।” बस इतना कहते मात्र से उस अमीचन्द का सारा जीवन पकटा ला गया। वह अपने दुर्घर्षनों को छोड़ने लगा और सद्गुणों की ग्रहण करने लगा। आगे चलकर वह मक्त, अमीचन्द बन गया। यह है वाच वदत भद्रया” का प्रभाव जिसने एक दुर्घर्षनी व्यक्ति का भी जीवन पलट दिया।

—अनूपसिंह, मुजफ्फरनगर

अमदान तिविर

“जिला आर्य वीर दल मोरजापुर” की ओर से २९ सितम्बर रविवार को प्रातः ८ बजे से शिवशक्ति धाम में १ दिन का ‘अमदान तिविर’ लगाया जायगा। जिसमें ‘आर्य धर्मशाला’ की शिस्तान्वास पडेगी, तथा अमदान का विशेष काय होगा। अतः मोरजापुर जिले के सभी आर्य समाज व आर्य वीर दल के मन्त्रियों से निवेदन है कि अपने यहाँ से १० आर्य वीर भेजें जो अमदान प्रतियोगिता में भाग ले सकें। उनके भोजन की व्यवस्था निःशुल्क होगी। विद्युत् ‘मेला प्रचार तिविर’ का सम्मान पत्र भी दिया जावेगा।

—वेबनसिंह, स० सचालक

अन्तरङ्ग की सूचना

जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा मोरजापुर के अन्तर्गत वीर वंठक दि० १८ अगस्त, रविवार, समय १ बजे दिन स्थान अर्थात् समाज मन्दिर मोरजापुर में होगी जिसमें अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों पर विचार किया जावेगा। सम्बन्धित महानुभावों से अनुरोध है कि वे इसे नोट कर समय से पधारने की कृपा करें।

—वेबनसिंह

मन्त्री, जिला आर्य सभा मोरजापुर

अखिल भारतीय आर्ययुवक परिषद् १८ अगस्त को बुधवार में उत्तर प्रदेशीय युवक सम्मेलन का आयोजन कर रही है। भाग लेने के इच्छुक निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें।

महासचिव अखिल भारतीय आर्य युवक परिषद् पोहारा मदन, स्वामी विवेकानन्द मार्ग सास्ताकुज बम्बई-५४ आर्य युवक परिषद् ने निश्चय किया है कि वेब सप्ताह में से सार्वप्रकाश की कथा, भाषण तथा स्वाध्याय कराने के लिये आपसे प्रार्थना की जाये। जिससे ८ सितम्बर ६८ को होने वाली परिषद् की सार्वप्रकाश की परीक्षाओं से सभी लोग लाभ उठा सकें।

अन्य सम्पर्क बढ़ाने के लिये परिषद् ने निश्चय किया है कि प्रविष्टि में मासिक वंठके नगर के समाज मन्त्रियों



में ही की जायें। वंठके के लिये स्थानादि देने तथा कर्मठ साधियों सहित भाग लेने की सभी से आशा की जाती है। वंठकों का किसी पर किसी प्रकार का भार नहीं पड़ेगा।

परिषद् की सवस्यता का वार्षिक शुल्क १) २० मात्र है, सभी क्षेत्रों के सभी उत्साही सज्जन सहज सहाय बन, युवकपेढीगी कार्यों में भाग ले सकते हैं।

‘आगामी वेब सप्ताह के उपलक्ष्य में रविवार ८ सितम्बर १९६८ को महाविद्यालय सरस्वती मन्त्रालय के अन्दर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की परीक्षाओं का आयोजन आर्य युवक परिषद् के तत्वावधान में सारे देश में किया जा रहा है। परीक्षाओं की पाठविधि, नियमावली आदि बत-पत्र तथा अन्य जानकारी परीक्षा कार्यालय आर्यसभा वरियामज दिल्ली-६ से प्राप्त की जा सकती है।’

—चमनलाल परीक्ष मन्त्री

आर्य कुमार गुडकुल इन्द्रपुरी

सावरे जिला इन्डोर से स्थानात्परीत होकर उपरोक्त गुडकुल १० जुलाई १९६८ ई० प्रातः ११ को नवीन छात्रों के वेबार्म्पन सस्कार के साथ आरम्भ हो गया।

समस्त पत्र व्यवहार, सचालक आर्य कुमार गुडकुल इन्द्रपुरी, सरनेश्वर (मन्त्री) पो० सिरौल्या जिला साजापुर म० प्र० के नाम किया जाय।

सूचना

१७ जून १९६८ को आर्य कुमार सभा, आर्य नगर भूक बरेली का वार्षिक उत्सव समारोह पुष्क यम्पल हुआ, पत्र सत्र १९६८ के लिए सर्वसम्मति से कार्यकारिणी का चयन भी किया गया।

सांख्यिक दान

आर्यसमाज काठि [पुराबाबा] ने श्री लास चन्द्र-लाल जी तथा उनके सुपुत्र श्री रामेश्वर ब्रह्म जी अप-वाल पूर्व निवासी काठि वर्तमान निवासी मण्डी बनौरा में जो आर्य समाज काठि को अपना मकान सांख्यिक दान दिया है। उसके लिये हासिक धन्यवाद देती है। और परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि आपकी इस दान-शीलता एवं धार्मिक भावना का सर्वधन कर आपकी यशगौरव प्रदान करे।

—सुरेशचन्द्र आर्य

मन्त्री, आर्यसमाज काठि (पुराबाबा)

सूचना

नगर आर्यसमाज लखनऊ में वि० ८-८ ६२ से १५-८ ६८ तक सायंकाल ८ बजे से ९। बजे तक 'बेवों मे गाय के महत्त्व' पर कथा होगी तथा यह भी बताया जायगा कि बेवों मे कहीं भी गोमांस नक्षण का नक्षण नहीं है।

—नन्दी नगर आर्य समाज लखनऊ

कार्यालय आर्यप्रतिनिधि समाज उ० प्र० मे

शोक पत्र

"शतायु श्रीगड रामेश्वर सातबलेकर वैदिक साहित्य के स्तम्भ के निधन पर जो क सच्चा प्रस्ताव करती है कि उनकी दिवंगत आत्मा को तुल्य शान्ति प्राप्त हो। श्री ५० सातबलेकर १०१ वर्ष पूर्ण करके पारश्री स्वान में कुछ समय से रोग प्रस्त थे।

हम भोग उनके दुःख मृत्यु से अत्यन्त दुःख हैं उनकी वैदिक नेदायें आय जगत् की चतुष्टय देन है। जिससे कि आर्य जगत् बराबर बल, शीघ्र तथा शक्ति पाता रहा।

उनकी दुःख मृत्यु पर २-८-६८ को कार्यालय बन्ध कर दिया गया।

—शिबप्रसाद निरीक्षक, समाज

आर्यसमाज गोला

स्वामीय आर्य समाजों की समाज कर्मठ आर्यसमाजी कुमाल पनाब सेवी श्री कुम्हबिहारीलाल जी राठी ससब सवस्य के निधन पर हासिक शोक प्रकट करती है, तथा परमात्मा से प्रार्थना करती है, कि दिवंगत के शोक सतत परिवार को यह दुःख सहन करने की क्षिति प्रदान करें।

—आर्यसमाज राँची ने ७ जून ६८ को अपने साप्ताहिक अधिवेशन में बिहार आर्य प्रतिनिधि समाज पटना के माध्यम से श्री ५० ब्रह्मनारायण जी शर्मा के अक्षामयिक एवं आकस्मिक निधन पर गहरा शोक प्रकट किया।

—आर्यसमाज समस्तीपुर (बिहार) ने आर्य प्रतिनिधि समाज पटना के महात्मनी ५० ब्रह्मनारायण शर्मा जी के आकस्मिक निधन पर शान्ति और सद्गति के लिये प्रभु से प्रार्थना की।

—आर्य समाज सबर (मेरठ) का यह साप्ताहिक अधिवेशन (७-७-६८) आर्यसमाज के बयोबुद्ध सवर्य आर्य कन्या इन्टर कालिज के प्रधान श्री रामजीलाल के निधन पर हासिक दुःख प्रकट करता है। आप आर्यसमाज के मूल सेवक थे। आपने बीघंकाळ तक कन्या विद्यालय की प्रबन्धक व प्रधान के रूप में बड़ी तामयता से सेवा की। आपके निधन से आर्य समाज का एक बयोबुद्ध कार्यकर्ता ह्रास से विछुड़ गया है।

आर्य समाज के सवर्य एवं उनकी आत्मा की शान्ति के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं, और २ के परिवार के प्रति हासिक सवेदना प्रकट करते हैं।

प्रस्तावक—श्री ५० सत्यतल शास्त्री, उपाध्याय पुष्कल महाविद्यालय उखालापुर

समर्थक—श्री ५० शिवबयालु जी

आर्य समाज सबर (मेरठ) का यह साप्ताहिक अधिवेशन (७-७-६८) माननीय ५० हरिसकर जी बंध, शास्त्री के निधन पर हासिक दुःख प्रकट करता है। आप पुष्कल महाविद्यालय उखालापुर की बीघंकाळ तक प्रधान आदि के रूप में सेवा करते रहे। आप के निधन से मेरठ में अपने मायुर्बन्ध के मूर्धन्य चिकित्सक को सदा के लिये खो दिया है। परिश्रम जो आदर्श तपोभूति थे और आप पुष्कल महाविद्यालय उखालापुर में जाकर साधना किया करते थे।

हम सब उपस्थित व्यक्ति उनकी आत्मा की शान्ति के लिये प्रभु से कामना करते हैं, और उनके परिजनों के प्रति हासिक सद्गामुक्ति प्रकट करते हैं।

—मनीमा आर्यसमाज स्व० बाबू पुरलीधर जी बकील मनीमा जो समाज के बड़े पुराने समासब तथा प्रेमी थे

[लेख पृष्ठ ३२ पर]



सूचना

आर्य ऋषि-प्रतिनिधि समा मुराबाबाद ने मास मकर, १८ में कई वर्षों से सञ्चित सस्ती बाबि कोरस्य योजना के अन्तर्गत समाजों के उत्सव कराने का निश्चय किया है। कार्यालय की ओर से समाजों की पत्र लिखि निश्चय विषयक भेजे जा चुके हैं,

इस योजना के अन्तर्गत उप समा उपदेशकों प्रचारकों का वय्य भार बहन करेगी तथा अन्य पत्रकार, छात्ररस्यो कर, भोजन निवास इत्यादि का समस्त व्यय भार तथा नोय समाज की वहन करना होता।

इस योजना के अन्तर्गत सम्बन्धित समाज की उप-समा को (१५०) २० की घनराशि भेंट की होगी।

—उमरावसिंह रमा

**समस्त नेत्र रोगों की
अचूक औषधि**

नेत्र के समस्त रोगों, जैसे मोतियाबिन्द की प्रथम अवस्था, मण्ड इण्टि, फूला, कुकरे तथा पानी का बहना आदि की अचूक औषधि-एक हिमालय के तपस्वी सन्मार्ग से प्राप्त हुई है। उसका विधि पूर्वक निर्माण किया है। इस औषधि से लगाने, खाने से सूखी से समस्त नेत्र रोग नष्ट हो जाते हैं। नेत्रों की ज्येति नष्ट जाती है। फिर नेत्र-ज्योति आद्यु भर स्वरि रती है। जीवन मय चरमे की आवश्यकता नहीं रहती।

यदि १५ वर्षमा लगाने हैं तो कम से कम ४० दिन तक, और यदि मोतियाबिन्द आरम्भ हुआ है तो कम से कम ८० दिन तक इन औषधि के खाने-लगाने से सूखने से अबभून लाम प्राप्त होता है। स्वस्थ नेत्रों के निरत्य प्रति लगाने सूखने से किसी प्रकार का नेत्र रोग उत्पन्न ही नहीं होता।

इस सम्बन्ध में स्वयं मिलें अथवा पत्र-व्यवहार करें। उत्तर के लिये १५ पैसे के टिकट भेजें।

४० दिन के प्रयोग का मूल्य सागत मात्र-लगाने की ५) २० प्रति शीशी, सू घने की ५) २० प्रति शीशी। खाने की साधारण औषधि ६०) २० तथा शीघ्र ब विशेष गुण के लिये विशेष स्वर्ण, मोती, केसरारि से युक्त का मूल्य २००) २० है। एकबार अवश्य परीक्षा कीजिये। वेद सत्ताप के उपसल में औषधि के प्रचार तथा विरवास के लिये प्रथम कोर्क २५) २० में डाक वय्य सहित बिया जायगा। यह सुविधा बीषावली तक रहेगी।

सूचना:—इसके अतिरिक्त हमारे यहां दमा, अर्श (बबासोर), सफेद कुण्ड, प्रमेह, प्रवर, नपु तकता तथा पबरी बाबि रोगों की भी चिकित्सा सावधानी से की जाती है।

मिलने का समय — प्रात ७ बजे से १२ तक

—वेद वेवेन्द्र आर्य

भार० एम० पी० (उ० प्र०)

वेवेन्द्र रसायन शाला, बवानन्द नगर, गान्धियाबाद।

सांस्कृतिक गोष्ठी

अखिल भारतीय आर्य युवक परिषद् सागर राजा द्वारा १४ जुलाई को आर्य समाज मंदिर में 'भारतीय संस्कृति में शिक्षा का स्थान'

विषय पर श्री कृष्णव्रत बजपेयी अध्यक्ष इन्डियान पुरातत्व विभाग सागर विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। शिक्षा उच्चाटन डा० लक्ष्मण-नारायण दुवे ने किया। इन अवसर पर परिषद के महासचिव रामनारायण ने शिक्षा संस्कृति के लिये परिषद के द्वारा किये जा रहे कार्यो का पत्रिचय किया। इसने डा० बलमन्न तिवारी एव सूर्य प्रकाश मिश्र आदि विद्वान प्रोफेसरो के व्याख्यान हुए।

परिषद् का चुनाव

अखिल भारतीय आर्य युवक परिषद् सागर राजा का चुनाव भी सम्पन्न हुआ। जिसमें निम्न पदाधिकारी चुने गये।

अध्यक्ष—यु. विठ्ठिरपाल, कार्यवाहक डा० लक्ष्मणनारायण दुवे, उपाध्यक्ष—डा० बलमन्न तिवारी विहारोलाल कुञ्ज-विहारोलाल दुवे एव सूर्यप्रकाश मिश्र। महासचिव विष्णुकुमार आर्य उप सचिव श्यामसुन्दर दुवे, सन्तोष मुल्ल, राम-कुमार। कोषाध्यक्ष गोविन्दप्रसाद मुन, रिश। संरक्षक रमेशकुमार सोनी चुने गये।

जनकी मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करता है और ईश्वर से प्रार्थना करता है, कि परिवार को इन महान् दुःख को सहन शक्ति प्रदान करे।
—कु दलाल भाय

उत्तर प्रदेश प्रान्तीय आर्य महा सम्मेलन

का विशाल आयोजन

प्रांत के सभी आर्य अणु एवं बहनों की सेवा में। मन्त्र निवेदन है कि आर्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश के ब्राह्मणानुसार प्रान्तीय आर्य महा सम्मेलन जिला समा मेरठ द्वारा १ नवम्बर से ४ नवम्बर तक गंगा स्नान के विशाल मेले में (गङ्ग पुष्केसर) की ५० प्रकाशवीर जी शास्त्री प्रधान आर्य प्रतिनिधि समा की अध्यक्षता में नवाया जाएगा। जिसमें प्रांत के आर्य अणु तथा बहने एक मन्त्र पर बैठकर सोचेंगे कि देश में अराष्ट्रीय भावना जो देश तो विघटन की ओर ले जा रही है उसको आर्य-समाज ऋषि दयानन्द के विध्य सम्मेश द्वारा ही रोक सकता है, यह विचार आर्यसमाज के प्रभावशाली प्रचार

प्रसार एव त्थान द्वारा ही जन-जन में जावना उत्पन्न कर सकेगा। ऐसा हमारा विश्वास है। इन्हीं भावना से हम पान्त के अन्त और अणुजा से अग्रह पूर्वक प्रार्थना करते हैं कि इस सम्मेलन को सफल बनाने हेतु उन विनो में अधिक से अधिक सवधा में पधार कर अपनी पधार भावना का परिचय दें।

—मनमोप्रसाद मन्धी जिला समा

आसाम के लिए सुयोग्य प्रचारकों की आवश्यकता

सांख्यिक आर्य प्रतिनिधि समा को आसाम के लिये ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता है जो प्रचार कार्य, संस्कार आदि कार्यों में निपुण होने के साथ साथ प्रयत्न की योग्यता भी रखता हो। मिशनरी भाव में काम करने वाले हिन्दू अप्रेमी ने निष्णात स्वल्प एव कार्य कुशल सञ्जन ही पत्र-अभ्यन्तार करें। सुयोग्यव्यक्तियों को समा अच्छी बजिया देगी।
—ओम्प्रकाश त्यागी सचिवक

वेद प्रचार सप्ताह के पुनीत पर्व पर प्रसारित

की ५० नवाप्रसाव उपस्थाय की अमूल्य रचना—ऋषि के सिद्धांतों परआधारित

* धर्म-तर्क की कसौटी पर *

धर्म के सम्बन्ध में अनन्ता के भिन्न-भिन्न विचार हैं—सतार में हुआयें धर्म हैं ? फिर कितनों उचित माना जाय ? लेखक ने चिट्ठा पूर्ण धर्म की विवेचना इस पुस्तक में की है और यह बिलखाया है कि सच्चा धर्म वही है जो तर्क की कसौटी पर चिन्ता जा सके। इन पुस्तक के अध्ययन से आप को यह ज्ञान हो जाया कि धर्म के सिद्धांत और तर्क में क्या अन्तर है, और वैदिक धर्म ही क्यों विश्व का सर्व श्रेष्ठ धर्म समझा जा सकता है।

पृ० १५०

समस्त आर्य सस्थाएँ अधिकारिक मगारर जन समुदाय में प्रसार करें।

१ प्रति का मूल्य २) ५० डाक कर्ष सहित

१० प्रतिवों का मूल्य १३) ७५ "

२५ " का " ३०) "

५० " का " ५९) "

१०० " का " १००) "

नोट—रूपया मनीआर्डर से आना चाहिए।

पता—वैदिक प्रकाशन मन्दिर

१३ सखतराय रोड, इलाहाबाद—३

मुक्त मुपत मुपत

सफेद दाग

हमारी सुपर्णिका बूटी से ५ दिनों में दाग का रंग बदलने लगता है। एक बार परीक्षा करके अवश्य देखें कि दबा कितनी तेज है। प्रचार हेतु एक फायल दबा मुपत ही जा रही है। रोम विचारण लिख कर कृपा शीघ्र मर्वा लें।

डारिका जीवधालय

पो. कतरी सराय (मया) न. १५

अमृत वर्षा

महर्षि दयानन्द ने कहा था--

स्वराज्य महिमा

दुर्दिन जब जाता है, तब देशवासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे परन्तु जो कष्टकारी राज्य होता है, वह सबोंपर उलम होता है। मत मतान्तर के आच्छहरहित, अपने और पराये का बल-बाल युद्ध, प्रजा पर पिता माता के समान डूपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य जो पूर्ण सुखदायक नहीं है।

भारत के हास का हेतु

ऐसे विरोधनि बेत को भारत के युद्ध ने ऐसा बरका दिया कि अब तक जी यह अपनी पूर्व दशा में नहीं आया, क्योंकि जब नाई को नाई मारने लगे तो नास होने में क्या शक्य है ? 'विनाश काले विपरीत बुद्धिः' जब नास होने का समय निकट आता है, तब उल्टी बुद्धि हो कर उल्टे काम करते हैं। कोई उनकी सुवा समझाये तो उल्टा मानें और उल्टा समझाये उसको सुची मानें।

आर्य मित्र



मित्रस्याऽहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।

सप्तम-रविवार माघ ६ शक १८६०, माघ शु० ६ वि० सं० २०२५, विनाङ्क २६ जनवरी १९६६

प्रार्थना के स्वर-

रक्षा करो ! रक्षा करो !! रक्षा करो !!!

(१) पाहि नो अग्ने रक्षस पाहि धूर्त धूर्त रराष्ण ।

पाहि रीषत उतवा जिवासतो बृहद्मानो यविष्ठय ॥

[ऋ० १-३६ १५]

(२) मा न जसो अरह्यो धूर्ति प्रणड मय्यंस्य ।

रक्षाणो ब्रह्मणस्पते ॥

[यजु० ३ ३०]

(३) त्व नो अग्ने महोभि पाहि विश्वस्या अरारते ।

उन द्विषो मय्यंस्य ॥

[साम य्० १ १६]

(४) रक्षा मा किनो अघशस ईशत मानो दु शस ईशत ।

मा नो अद्य गवास्तेनो

॥

[अथर्व० १२-४७६]

मावापं-[१] हे महाने जप्तिन, महाबलिन, ज्ञान स्वल्प प्रप्तो ! हमें रक्षो से बचाओ । धूर्तों और कृपणों से बचाओ । पीड़ा देने वाले और मारने की इच्छा रखने वालों से बचाओ ।

[२] हे सर्वत्र, सर्वोपरि, सर्व रक्षक, सर्व नियन्ता वरमात्मन् ! आप ही हमारी रक्षा करने वाले हैं । आप हमारी रक्षा इस प्रकार करें कि धूर्त मनुष्यों की धूर्तता नष्ट हो जाये और हृष आधों की कीर्ति बनी रहे, ताकि जनाथों में शान्त बन जायें ।

[३] श्रेष्ठ, विश्व परमेश्वर ! तु जपनी सकल महानताओं के माध्यम से हमें ऐसी विश्व श्रेष्ठतायें प्रदान कर कि मनुष्य के समस्त दुःख भाव मिट जायें । मानव की सब अज्ञानतायें समाप्त हो जायें और बरती बर का मनुष्य श्रेष्ठ दुरित हृषय से मुक्त बन जाये । हे सर्व ज्ञानिन तू हमारी इस भाँति सर्वत्र रक्षा करता रहे ।

[४] हे सर्व रक्षा कारी प्रप्तो ! हमारी इस भाँति रक्षा करो कि कोई पापी हमारा शासक न बने, न कोई दुराचारी हम पर शासन कर सके । हमारी बलि शीलता को अवच्छेद करने वाला और बहरिषों पर भेदिये के समान हिंसा और

ग
ण
तं
त्र
अङ्क

सम्पादक

श्रेमचन्द्र शर्मा



परमेश्वर की अमृत वाणी—

राजा को प्रजा चुने और राजा राज्य कार्य संकालन के लिए दो सभाओं का निर्माण करे।

राजा का निर्वाचन

त्वां विशो बृजतां राज्या प त्वामिमाः प्रविशः पञ्च देवीः ।
वचमंन् राष्ट्रस्य ककुवि अयस्व ततो न उग्रो विमजा वसुनि ॥

[अ० १.४१२]

भावार्थ—(विश) प्रजाएं (त्वां राज्याव) तुझको राज्य के लिये (बृजताम्) चुने (इमा पञ्च देवी) ये पाँच दिव्य युक्तों से युक्त (प्रविश) प्रविष्टाएं (त्वाम्) तुझको (राष्ट्रस्य) राष्ट्र के (वचमंन्) मन्त्रियुक्त (ककुवि) षोडश्वान में (अयस्व) आश्रय करें (उग्र) तेजस्वी होकर (तन न) वहाँ से हमें (वसुनि) देशवर्ष दें।

राज्य कार्यों के लिए सभाओं का निर्माण—

समा च मा समितिरवावतां प्रजापते दुहितरी संविदाने ।
येन संगच्छा उप मा स शिखाचकार वदानि पितरः सगतेषु ॥

[अ० ७.१२१]

भावार्थ—(प्रजापते) प्रजापालक (दुहितरी) कन्या के मनन (मित्राणे) एक दूसरे के अनुकूल कार्य करने वाली (समा) समा (च) और (समिति) समिति (मा + प्रवताम्) मेरी रक्षा करें। (येन सङ्गच्छे) जिसके साथ मैं मिलूँ (स मा उप शिखात्) वह मुझे सिखा देवे। (पितर) हे ज्ञानियों! रक्षो! (सङ्गतेषु) सम्मेलनों में (वार) सुम्बर (वदानि) बोलो।

परमेश्वर ने अपनी पुत्री के बचपनी में मनुष्यों को स्पष्ट जाबत दिया है, कि राजा प्रजा राष्ट्रपति व्यवस्थापकवर्ती राजा चुनने का अधिकार प्रजा जनो का है। राष्ट्र अथवा विश्व वायक वह ही जो अनासक्त निरालस सति स्तिर, तेजस्वी वाचि दिव्य युक्तों से युक्त हो, क्योंकि ऐसा षोडश पुरव ही राज्य में सुख-समृद्धि को प्रदान कर सकता है।

परमात्मा ने ऐसे दिव्य राष्ट्रपति को भी राज्य संचालन का एकाधिकार नहीं दिया। उनको भी दो सभाओं और समितियों से राज्य शासन को चलाना है जिसको बलवान युग में राज्य समा और लोकतन्त्र के नाम से हम जानते हैं कि ये दोनों सभाएं जन कल्याण के लिये परस्पर मिल जुलकर काम करें और राज्य की रक्षा करें।

कौन कहता है कि वेद में सुम्बर मन्त्रमयी व्यवस्था का विधान नहीं है।

—'वसन्त'

★ ओ३म् ★

साप्ताहिक आर्यामित्र गणतन्त्र अंक

वर्ष	संस्करण—रविवार माघ ६ तक १८९०	माघ सु० ९ वि० सं० २०२५	अङ्क
७१	२६ जनवरी १९६९ ई०	दयानंदाश्रम १४४ मुष्ट सतत १९६०	४

सभा प्रधान श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री का बरेली में मह्य अभिनन्दन एकम् (१७८०) की थैली में

आय समाज बिहारीपुर बरेली के नियंत्रण पर आय प्रतिनिधि समा संसद की अंतरङ्ग समा का अधिवेशन रविवार १२ १ ६९ ई० को बरेली नगर में अनुसूचित समासंग के साथ सम्पन्न हुआ। श्री विष्णुमाधव जी वसंत मुखय उय मन्त्री का माल्य सहित ११ जनवरी ६९ को बरेली पधारे। आयसे स्वागतार्थ गेष्टेशन पर कय कर्ता पठते हुये थे। मन्त्री जी के न पठे उक्त क काण उपके द्वारा ही अन्तरङ्ग की कायदाही मचायित हुई



सभा प्रधान श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री १२ १ ६९ को प्रातःकाल ही बरेली पधारे। बिहारीपुर आयसमाज के साप्ताहिक अधिवेशन में उनका आध्यात्मिक प्रवचन हुआ। श्री चन्द्रनारायण जी एम्बोकेट प्रमुख सयोजक द्वारा सभा प्रधान को एक च दी का मध्य में जिस पर प्रधान मह्य अङ्कित था भेंट किया गया।

माधवीय श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री ससद् सदस्य मारदण्य स्वामी जी का तथा दूसरा श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री का) प्रदान किए गये।

सायकाल एक बहुत स वजनिक समा में सभा प्रधानजी का मह्य अभिनन्दन करते हुए उन्हें (१७८०) रुपये की थैली भेंट की गई। जिसका विस्तृत विवरण इस अङ्क में पृष्ठ ३१-३२ पर देखें।

अन्तरङ्ग सदस्यों के विकास व जीवन की व्यवस्था अति सुन्दर थी। समस्त अन्तरग सदस्यों को भी सत्रमुक्त की अर्थ प्रधान बिहारीपुर आर्यसमाज तथा पं० बिहारीलाल जी शास्त्री के सुपुत्र श्री अरविन्दलालजी द्वारा सुन्दर, दे, डायरिया, कैलण्डर और ससतरिया भेंट की गई।

सम्पादकीय अर्चन्तु स्वराज्यम्

★

वेर स्वराज्य का समर्थक है। ऋग्वेद में एक पुरा
सूक्त स्वराज्य की महिमा का बखान करता है,
विद्यते प्रत्येक मन्त्र के अन्त में 'वाय पूति 'अर्चन्तु स्व-
राज्यम्' यह शब्द की नहीं है। बारम्बार इन शब्दों को
बुहराणा इस बात पर बल देना है, कि स्वराज्य परम
अर्थनीय है। प्रत्येक राष्ट्र को स्वतन्त्र है, उसे स्वराज्य
का अर्थन करना चाहिये। 'पराधीन सपने सुख माहीं'
पराधीनता एक अनिष्टाव है। परतन्त्र राष्ट्र तेज हीन
और जीवन हीन होते हैं। महर्षि स्वामी दयानन्द
सरस्वती ने इसी विषये अपने अमर ग्रन्थ 'संघर्ष-प्रकाश' में
लिखा है कि विदेशी राष्ट्र चाहे कितना ही अच्छा क्यों
न हो और स्वदेशी राष्ट्र चाहे कितना ही बुरा क्यों न
हो, फिर भी स्वदेशी राष्ट्र अच्छा है।

स्वराज्य की प्राप्ति के परचात् प्रमुख आवश्यकता
होती है, उसके रक्षण की, ताकि वह पुन परतन्त्र न हो
जाय। अर्चन् वेद की एक ऋचा के अनुसार 'अवज-
घर्षमं स बभूव सह तत् स्वराज्यमिदं यस्मान्नायव-
रक्षति सूतम्'

अर्थात् (यत्) जो (सम्भव) समाज या जन समूह
(प्रथमं बभूव) प्रथम खेती का होता है, अर्थात् सब भूमि
खेद होता है, वही राष्ट्र की रक्षा कर सकता है यस्मात्
अन्यत्परमं भूते मान्ति जिससे बढ़कर राष्ट्र के विषये कोई
विभूति नहीं है।

वेद जहाँ स्वराज्य का पोषक है, वहाँ स्वराज्य में
गणतन्त्र पद्धति का भी समर्थन करता है। गणतन्त्र पर
आधारित राज्य की सुरक्षा का उत्तरदायित्व जन ना-
यकों पर होता है। जन नायक जनता द्वारा निर्वाचित
होते हैं, अतएव मूल रूप में यदि जन निर्वाचन नहीं होता
है तो जन नायक कमी भी ठीक प्रकार से निर्वाचित नहीं
हो सकते और जब तक जन नायकों का समूह ही ठीक
न हो स्वराज्य कैसे सुशास्य होता और जब तक स्वराज्य

न हो, उसकी सुरक्षा कैसे हो सकती है। वेद अथ
विद्याओं का पुस्तक है, वेद परमेश्वर की सत्य वाणी है
अतः स्पष्ट शब्दों में कहता है कि प्रथम खेती का अथ
समूह ही राष्ट्र की रक्षा करता है, क्योंकि राष्ट्र से बढ़-
कर उस के विषये कोई अन्य विभूति नहीं है।

१५ अगस्त ४७ को भारत अंग्रेजों की बालसा के
पास से मुक्त हुआ। स्वाधीनता के संग्राम में रत रहते
हुये पुनीत २६ जनवरी को मर्धाया पुषपोत्तमराम के
सुपुत्र सव के नाम पर निमित्त साहौर नगरी के पास
बहने वाली नदी राजी के पारम तट पर नवतन्त्र का
पुनीत व्रत लिया गया था, जिसे स्वाधीनता के उपरान्त
२६ जनवरी को ही स्वाधीन राष्ट्र द्वारा स्वीकार किया
गया और १९५२ से लेकर अब तक जनता के प्रतिनिधियों
द्वारा भारत का शासन चलाया जाता है, किन्तु सनस्त
राष्ट्रवासी इस बात को माली-नाति अनुभव करते हैं
कि स्वाधीनता के परचात् राष्ट्र की क्या उन्नति अथवा
अवनति हुई है और जिनके हाथ में जनता शासन सौंपती
है, वे जनता की इच्छानों के अनुकूल कहाँ तक
उतरते हैं।

एक बात बिस्कुल स्पष्ट है कि जब तक जन नायक
में निष्कृष्ट स्वार्थ का बाहृष्ण है और परमार्थ की पुनीत
भावना का अभाव है, वह जन नायक राष्ट्र को केवल
नोष सतोंद सकता है और किस जन नायक को परमार्थ
की लगन होती है, वह अपना सर्वस्व अर्पित करता है।
हमारे ये जन नायक कैसे हों। वेद हमारा मार्ग दर्शन
करते हुये कहता है—

'स पुषन् विबुवा मय यो अमृषसायुतासति ।
यं एवेदमिति ब्रवतु ॥ (ऋ० १:५:४:१)

अर्थात् जो सरलता पूर्वक अनुशासन करता है और
जो ऐसा ही बोलता है। जानने वाले, देखे जाता विद्वान्
के द्वारा ही हम सम्मन्य होते हैं। ऐसा जन नायक ही
पुषन होता है। वह ही सम्मन् रूप से सयान साव के
सबका पोषक करता है।



कितने स्पष्ट शब्दों में वेद ने जननायक के विषय में महत्त्वपूर्ण ज्ञान दिया है। जननायक में सर्व प्रथम पोषण का सामर्थ्य होना चाहिए। जो किसी का पोषण करता है, वह पुत्रा है। जिस प्रकार परमेश्वर सृष्टि का पिता और पालक है, जिस प्रकार तोर मण्डल का पोषक सूर्य पुत्रा है, वैसे ही नायक को अपने जन का पुत्रा होना है। राष्ट्र-नायक है तो राष्ट्र का सेना नायक है तो सेना का उसे पुत्रा होना है।

यह जन नायक वेदानुसार पुत्रा की प्रावनाओं से ओत-ओत, रहने, इसलिए वेद ने कहा है कि उसे विदुषा होना चाहिए। जननायक यदि अज्ञानी होगा तो रक्षण और पोषण ठीक प्रकार से नहीं कर सकेगा। परमात्मा की प्राणन सृष्टि में मानव भाग का ही नहीं बरन् प्राणिमात्र में जो आत्मा का रहान करना, अर्थात् जिस में समस्त की प्रावना है, ऐसा समझती ही वास्तविक जन-नायक है क्योंकि वह मगवान् के विधान को समझ कर तदनुसार स्वयम् आचरण करता है। वह जिस समाज का प्रतिनिधित्व करता है, उसे भी वदति के सिद्धर पर ले जाता है। वह धर्म के बाधों-विबाधों से स्वयम् भी बधता है और विनाशकारी विघटनकारी सधधों से अपने समाज और राष्ट्र को भी बधाता है। ऐसा पोषण विद्वान् ही कर सकता है। अज्ञानी जन नायक तो माई मतोबाधा, जातिबाध और सम्प्रदायबाध के सङ्कुचित क्षेत्र में ही नाना प्रकार के सधधों को कड़ा करता है, और पोषण को बधित और अक्षान्त करता है।

जन नायक का जीवन कंसा हो तो वेद का मन्त्र कहता है, सरल क्योंकि सरलता साधुता का लक्षण है और साधुता के ३ आधार हैं, मित्रता, मृदुता और साति जिसके सर्वथा विपरीत असाधुता अमृता, कदुता और उत्तेजना पर आधारित रहती है। सरल जीवन मयी ही सरलता पूर्वक अनुशासन करता है, क्योंकि वह भीतर बाह्य एक रूप होता है। ज्ञानी यदि कुटिल है, तो उसका अनुशासन भी कुटिलता युक्त होगा। कुटिल साधन में

रक्षण नहीं प्रयत्न होता है। सरल विद्वान् महत्वाकांक्षी होता है, क्योंकि उसका मस्तिष्क कल्याण का क्षिप्त करता है। उसके मन में तिव सकल्प होते हैं, आत्मा की सद्बुद्धि होती है, ऐसे ही सरल मिष्कण्ड ज्ञानी पुत्रा के विषय में वेद ने कहा है, 'त वृक्षता स जगामा स वेद स चिन्मिन्' (ऋ० ११४५.१) अर्थात् उससे पुत्रो, वह वृक्षता हुआ है वह ज्ञानता है, वह ज्ञानवान् है।

यह ज्ञानी पुत्रा है जो सरलता पूर्वक आदेश देता है, जो प्रथम् स्वयम् अनुशासन में रहता है, और दूसरों को उत्प्रेरणात् आदेश देता है। आचरणपूर्वक आदेश का ही पालन होता है। वेदानुसार 'स्वेन क्नुना स बधेत' (ऋ० १०.३१.२) पहले क्नु करना पड़ता है तब बोलना अमीष्ट होता है।

महत्वाकांक्षी ज्ञानी पुत्रा में एक विलस्यता सरल अनुशास्ता के अतिरिक्त यह होनी चाहिए कि वह बुद्ध निश्चयी होना चाहिए। केवल प्राणन कला में ही वह प्रयोग न हो, किन्तु जो बोले, उसे करके दिखाये। जो जन नायक उहे कुछ और करे कुछ जन पर जनता की आस्था अधिक दिन तक नहीं बनी रह सकती। जहाँ अधिश्वास हो, वहाँ शान्ति कंसे स्थिर रह सकती है। जन-नायक न तो बहु वाक्यायी होना चाहिए और न ही नितास्त चुपथी साधने वाला हो। वह मित साधन करने वाला हो। मये तुले शब्दों में मन्थय को स्पष्ट करे। न प्राण-लूती करे और न लुनामव और नहीं अपने निश्चय आरम्भार बदले। जो स्वयम् स्थिर नहीं है, वह दूसरे को कंसे स्थिर रख सकता है।

मजतन्त्र के प्राणन विबल पर हमने अपने पाठकों के सम्मुख एक वैकिक दृष्टिपोषण, उपस्थित, किया है। हमारी यह हार्थिक कामना है, कि हमारा राष्ट्र फूले और फले और यदि हमने स्वराष्ट्र से वास्तविक स्नेह है तो उस के प्रतीक स्थापन की अङ्गीकार करे। यदि हम में जन नायक होने के गुण विद्यमान नहीं है तो हम स्वतः पीछे



वेद-विवेचन चिरजीवी गणतन्त्र हमारा हो !

वेद मे राज्य शासन के अनेक प्रकार बतलाये गये हैं। एक प्रश्न हुनारे सम्मुख उपस्थित होता है कि जब प्रबन्ध के पश्चात् नई अर्थव्युत्पत्ति सृष्टि की उत्पत्ति होती है, तब कौन राजा होता है, कौन से राज्य होते हैं, उनके अधिपति कौन होते हैं, राज्यों का नामकरण किस प्रकार होता है। वे विषय मुख्य आश्रमायें जो ऋग्वेद गी तक मौज सेवन के उपरान्त पुन धरती पर अवतरित होती हैं, और परमेश्वर जिन्हें अपने अमर ज्ञान वेद से मुलकृत करता है, ऐसी वेदज आश्रमायें इस धरती पर कौसे राज्य कार्य चलाती हैं ? सत्य ज्ञान सागर वेद मे राज्य प्रबन्ध की अनेक सहस्रियाँ हैं जिनमे एक ऐसी भी है, जिसे विराट शासन की सत्ता भी गई है।

यह विराट शासन क्या है ?

विराट वा इवमप आसीत् तस्या जाताया सवम विवेद । इयमेवैव सविष्यतीति ॥ [अथर्व ८.१०.१]

हृद आये और वा ; अतः को सम्मुख रहते हुए उन जन मायकों को नेतृत्व रूप जिनमे वेदानुसार उपयुक्त गुण हों। यदि हम ऐसा ऋग्वेद तो निरस-वेद हमारा गणतन्त्र आदर्श रूप लेगा, और हम स्वराज्य को सुराज्य मे परिणत कर सकेंगे। यदि हृद स्वराज्य से प्रेम है, और हम उसका अन्धन करना चाहते हैं तो कदापि न भूलें कि—

‘राष्ट्र प्रेम का मूल्य प्राण है,
वेदों कौन चूकाता है ।
सुमनों की संख्या को सँकर,
कड़क पथ पर जाता है ॥’

★ श्री ठाकुरमाविरय जी ‘शास-त’ सभा मुखय उपमन्त्री

यद्यपि राज्य शासन की कोई ऐसी भी व्यवस्था हो सकती है जिसे संराज्य शासन भी कहा जा सके तो वेदानुसार यह भी एक व्यवस्था है जो धरती की उत्पत्ति के प्रारम्भ में रहती है। केवल इस बात को आश्रमानुसृत करते हैं कि धरती परमपिता परमेश्वर की है। वही इसका वास्तविक स्वामी है। केवल मनुष्य को ही नहीं अन्य जेतनों के उपयोग के लिये भी यह धरती है। इसी लिए जो धरती का वास्तविक राजा है, उसको ही सूप मान कर क्या राज्य बिहोन व्यवस्था से हमारा काम नहीं चल सकता। सब लोग परस्पर मिल जुल कर रहें। अपनी आवश्यकता से धरती को न घेरें, अपनी आवश्यकता से अधिक पदार्थों को एकत्र न करें। स्वयम् जिन्हें और दूसरों को लोभे दें। अहिंसा, शान्ति मानव अपने सामर्थ्य बल का प्रयोग करे और सम नियम से जीवन को समन्वित करे और परमारता की धरती को परम स्वामी के राज्य में ही चलने दे तो जीवन आनन्द मुक्त बन जाये। अतएव वि+राट अथवा वि+राज व्यवस्था भी शासन की एक अनुपम व्यवस्था है जिसको यहाँ वेद में भी गई है। वहाँ पर यह कहना प्रसन्न के अनुकूल होगा कि आज भी विरय की अनेक अक्षय्य कही जाने वाली जातियों में किसी न किसी रूप मे यह विराट व्यवस्था सब भी लागू है। उनका कोई नेता नहीं होता है। जब कोई लक्ष्य होता है तो सब लोग एक हो जाते हैं और जो परस्पर निर्भय होता है, उसको सब सहजतापूर्वक

मान बैठे हैं। सत्य युग कहे जाने वाले काल में अनेक बुध्दागत ऐसे ब्राह्मण हैं, जिनमें कोई राजा नहीं होता। सब लोग समानुसार व्यवहार करते हैं, और परस्पर को ही राजा मान कर अपना काम चलाते रहे।

किंतु मनुष्य के स्वभाव में स्वायत्तता का जो एक रूप अतिरिक्त है। मनुष्य के भीतर जो एक भाग का एक प्रबल है, जिसके अन्तर्गत काम काय लोभ मोह अहंकार आदि अपन लेल क्लेशते रहते हैं और लोग कभी जन्तु के बंधों में परिवर्तन होता रहता है, वेद में उस सत्य का सम्बन्ध रखते हुए इस मन्त्र में कहा था कि ऐसे परिस्थितियों में सब नहीं रह सकते। चराज् शासन में कोई सम्बन्ध नहीं होता। सब अनन्त मिलकर परमात्मा के नाम पर अपने-अपने क्षेत्र में पुत्रक पुत्रक शासन करते हैं। सब लोगों को सब मिल कर बंटना और एक सा नियम देना जब सम्भव नहीं होता तो छोटी-छोटी सामंतियों और समाजों बन जाते हैं—'सा उदकामत सा समाया स्वकामत' (अ० ८ १०.८) समाज जनशाक्त को प्रतीक बना। 'सा उदकामत सा समितो-यकामत' समितियों में जन शक्ति उत्क्रान्त हुई सा उदकामत सा आमन्त्रण-यकामत जन शक्ति जब और अधिक उत्क्रान्त हुई तो शाक्त का आमन्त्रण मन्त्रिमण्डल में परिणत हो गया। अतएव फलसं बिकास के आधार पर यह मानना पड़ता कि राजबिरहित व्यवस्था से ही जन समितियों बनीं जिन्होंने कालान्तर बहुत रूप धारण किया और लोक राज्य की स्थापना हुई जिसमें अधिकार का केन्द्रीयकरण करने के निमित्त एक अध्यक्ष द्वारा प्रिते राजा की सत्ता दी गई। जन राज्य वेद का ही वन है—

'इम देवा असपान सुबर्ध्वं महते सत्राय । महते जन राज्याय । राज्य को शत्रु रहित रखने के लिए प्राक्रम का प्रादुर्भाव करने के लिये जन राज्यों की स्थापना हुई धरती पर विभिन्न राज्यों में होने वाले परस्पर संघर्षों को शांत करने तथा जीवन को सुखप्रद बनाने के निमित्त एक चक्रवर्ती राज्य के निर्माण को महत्ता को कालान्तर देवानुसार स्वीकार किया गया ।

चक्रवर्ती राज्य अर्थात् समस्त पृथिवी का एक शासक

परमात्मा की धरती जब विभिन्न अंशानुसार नाना प्रकार के राज्यों में बंट गई और विभिन्न जन जातियों के आधीन राज्य व्यवस्था होने लगी तो उन छोटे-छोटे राज्यों के केन्द्रिकरण के निमित्त देवानुसार एक बृहत् साम्राज्य की स्थापना की गई—

साम्राज्य भोज्य स्वाराज्य वैराज्य ।
पारमेष्ठ्य राज्य महाराज्यमाधिपत्यय ।
सम तपयामो स्वयत् साव भौम ।
सायानुष्य भान्तावापरावात ।
पुत्रव्यय-सुभुज ध्यानताया एकराट् इति ।

समुद्र पयन्त पृथिवी का एक राज्य जिसमें अनेक छोटे-छोटे राज्य हो पर उन सब का एक विधान हो और समस्त पू पर एक ही प्रमुख मूर्ति हो जिसका नियन्त्रण प्रजा द्वारा हो—

सर्वास्वा राजन् प्रावशो ह्यप्यून सद्यो नमस्यो नवेह
स्वी विद्यो बृणन्तो राज्याय स्वामिनाः प्रवश, पञ्च
देवो । (अथर्व० ३ । ४१२)

अर्थात् सब प्रजा राज्य शासन के लिये एक राजा को स्वीकार करे और ५ प्रकार के प्रजाजन अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद उसका आज्ञान करे और यह सबके सम्मान का पात्र हो ।

प्रजा द्वारा चुना हुआ नरेश कालान्तर पुराहितों द्वारा मनोनीत होने लगा और कालान्तर राजगद्दी की परम्परा पड़ गई। अब युग में पुन गणतन्त्र व्यवस्था को अपनाया है, किंतु उस सम्बन्ध में वैदिक दृष्टिकोण क्या है, इसका विवरण वेद मन्त्रों में इस प्रकार दिया गया है—

वैदिक गणतन्त्र

समाज मा समितिरबाधतां प्रजापते कुं हितरो सविदाने ।
येना सवच्छा उपमा स तिलापचाप बवामि वितरः



विद्य ते सन्ने नाम नरिष्ठः नाम वा अति ।
 ये ते के च सना सवस्ते मे सन्तु सवावतः ॥
 एवामह सनाभोवानी बर्षो विज्ञानमा बदे ॥
 अस्या. सर्वस्या स सवो वाभिन्न मग्नि कृष्ण ॥
 यद्बो मन पराणत यद् बद्धमिह केह वा ।
 तद् ब आ बतवापति मयि को रमता मन. ॥

[अवर्ष० ७ १२।१४]

अवर्ष केर के इन मन्त्रों में शासन व्यवस्था को निर्मातृ समाजों और समितियों को बर्षों को गई है । आज यदि विश्व के प्रजासत्तवीय विधान बनाने वाले राष्ट्र इन मन्त्रों के अनुकूप बर्ष तो समस्त शासन निर्वाह कृकर प्रजासत्तव को सुख, और शांत कर दे । इन मन्त्रों में जो पुनीत प्रेरणाएँ दी गई हैं वे सर्वत्र में इस प्रकार है-

- [१] समाजों और समितियों शासक को मानव को कर्मायें होती है । किसी भी प्रकार को अक्षयता न हो । शांति पुन वातावरण हो । अष्ट ज्ञानी उसके सवस्य हो ।
- [२] समाजों और समितिया न रष्टि हों अवति अष्ट जन प्रतिनिधियों से निमित्त हों । सवस्य सवावत अवति एक दूवरे को समस्तने वाले हों ।

[१] समितियों और समाजों में समाधीन होकर सवस्य बंटें, ज्ञान बर्षाएँ हों जो जनता को कर्षव्य पव में जाकड़ कर सकें ।

[४] समितियों और समाजों के सवस्य पण जब विचार विमर्श करे अथवा बर्षा कही भी हों उनका समस्त विश्वास और कार्य कलाप जनता के हित के लिए हो ।

येर ज्ञान का अवाहू तिम्रु है । उसमें मानव कोवन को सत्य, सिध और सुखर बनाने के लिये सद्गुणों विद्य प्रेरणायें हैं । यत्तम्र के पुनीत विवस पर केवल बाह्य आडम्बरों में ही रत न रह कर यदि हम यत्तम्र के वास्तविक महस्य को समस्त कर उसे अङ्गीकार करें तो हमारा यत्तम्र न केवल खरजीवी होना बरन् हमारे लिए सुख शांति और मानव को वृष्टि करने वाला होना ।

आवश्यक सूचना

उत्तर प्रदेशीय समस्त जार्स समाजों को सूचित किया जाता है कि सना के उपदेशक श्री विरवर्षम वैशालकर ने सना की सेवाओं से श्याव पत्र दे दिया है, अतः समाजें उन्हें किसी प्रकार का धन न दें ।

—बिष्णुमाधिय बसन्त सवा उपमग्नी



हमारे पाठक क्या कहते हैं?

श्रीमान् माननीय बसन्त श्री,

सावर अधिवादन ।

आपकी अध्यक्षता से 'आर्यमित्र' की विमोचिन उन्नति को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई । ईश्वर कृपा करें आपकी देखरेख में यह दिनदुनी रात कोगुनी वृद्धि को प्राप्त हो, यही हमारी मयल कामना है । आपको बहुत-बहुत बर्षाई हो ।

—भोम्बती पमारीखेड़ा लसक



*
व
यं
रा
ष्ट्रे
जा
गृ
या
म
*

आगत युग आया जन जगजा,
 क्यों ? सोता करके प्रभाव ।
 गई सवा से भ्रम नींद जो रही सभी जन जन घट छाया ।
 वे अपने सरकनें सुखद बहु, अविद्या तम से रहे भूलाय ।
 सहते हुये विषम दुःख आये, अब तो हो गये मध्य मोर ।
 बैद्यार्थीय हुआ देश में, देख रहा फिर किसकी ओर ।
 ब्रमा गये महर्षि ब्रह्मानन्द, कर सत्यार्थ वैदिक नाद ।
 आगत युग आया जन, जगजा, क्यों ? सोता करके प्रभाव ।
 देव पुकार रहे जो मानव । 'अब' अब राठ्ठे आगूयाव ।
 गौरव बढ़ेगा तभी तुम्हारा, सीमित होंगे आर्थ तुनाम ।
 हुआ सबेरा रहा सुटेरा, कब तक इन्हें रहेगा देख ।
 पहरी बन तू भीर देश का, सुरमन करे उलझन रेल ।
 अगा गये वे एक सभ्यासी, आती न क्या ? उनकी याद ।
 आगत युग आया जन जगजा, सोता क्यों ? करके प्रभाव ।
 सकीर्णता से बँध गये क्यों ? क्या ? तुझको न करना काम ।
 मरा रक्त है बीर भूमिका आर्यबल देश का नाम ।
 सबस साथ ईश्वर का ले के, बढ़ो बल्लो कर्त्तव्य जान ।
 ओम् स्वज फहरावो घर-घर, रक्त वेदों का निज अभिमान ।
 प्रसासन था जब पोषों का, असह्य सह रहे अबसाव ।
 आगत युग आया जन जगजा, क्यों ? सोता करके प्रभाव ।
 देव प्रचार रहा विरम में, विस्मित रह गये वह लोग ।
 नास्तिक था वह आस्तिकता को, मान रहे ईश्वर का योग ।
 अनिच्छता का भाव मन्व तज, उरकूठता को ले कर चाल ।
 सीमित होगा आगत जीवन, सहज हूँगा दुःख विशाल ।
 मिथ्यावादी, विशद देश मे, लगे कर्मने को है बरबाद ।
 आगत युग आया जन जगजा, क्यों ? सोता करके प्रभाव ।
 मार बसोम देश का ऊपर, आर्य सहन करें हैं आज ।
 विद्वत् भाव बढ़े जन-जनका, रहे मिलाते आर्य समाज ।
 जन आगत का है युग आया क्यों ? सोते जन पाँच पत्तार ।
 आर्य जीवन बनें तुम्हारा, समल सबैल बल्लो "घनसार" ।
 चाहे जो कल्याण देश का, छोड़ बल्ले सब मिथ्याबाद ।
 आगत युग आया जन जगजा, क्यों ? सोता करके प्रभाव ।
 -कवि कस्तूरचन्द्र "घनसार"
 षष्ठावधक, आर्य समाज, पोवाड़ सहर



बीसवें गणतन्त्र दिवस पर

उत्तर प्रदेश की उपलब्धियां

कृषि-उत्पादन में आशातीत वृद्धि

★ १९६८-६९ में १७६ लाख टन खाद्यान्न की उपज

नये उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहन

★ विक्री-कर से तीन बर्ष के लिये छूट

★ औद्योगिक उपकरण, मशीनें, कच्चा माल और भवन-निर्माण सामग्री चु गी से मुक्त

★ रियायती बरों पर बिजली

★ विक्रमित औद्योगिक स्थान एवं कारखानों के लिए स्थल

अगले पांच वर्षों में--

कृषि में ५ प्रतिशत और उद्योगों में ८ से १० प्रतिशत

वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य

प्रदेश के सर्वतोमुखी विकास के लिए

सबका सहयोग अपेक्षित है



श्रीमदिक

गणतन्त्र दिवस पर-

रामश्याम राष्ट्र भाषा

हिन्दी के प्रसार का व्रत लें

★ आचार्य श्री रामवीर शर्मा एम. ए. (असीगढ़)



अंग्रेजों ने शासन वर लगभग २५० वर्ष तक राज्य किया था, और अंग्रेजी भाषा को अपनी शासकीय भाषा बनाया तथा बाद में इसे ही शिक्षा का माध्यम बना दिया। जिसका उद्देश्य लाखों मैकोले के अनुसार यह था कि भारत में ऐसे काले अंग्रेज पैदा किये जाए जो आकार प्रकार में तो भारतीय प्रतीत होने हों, पर आचार्य व व्यवहार में अंग्रेज हों। इसी सिद्धान्त को लेकर मैकोले ने अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया और समस्त भारतीय भाषाओं को अंग्रेजी का दास बना दिया। लाखों मैकोले का यह विचार स्वप्न पूर्ण हो गया। आज हम भारतवर्षी बाहर और भीतर दोनों ओर से अंग्रेजियत से भरे हुए हैं। हमारी बेश-भूषा हमारा क्षामवान सभी कुछ अंग्रेजियत से मुक्त हैं। हम चाहते हुए भी अंग्रेजियत से मुक्त नहीं हो रहे हैं।

बेश को स्वतन्त्र करने के लिये देशवासियों ने अनेक प्रकार के कष्ट लहे, लहलौं पोली के शिकार बने, और मातृभूमि की बलिबेदी पर अपने प्राण निछावर कर दिए, उसी त्याग एव बलिदान के फलस्वरूप १५ अगस्त ४७ को देश को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, और राष्ट्र के कर्णधारों ने अपना एक सविधान निर्माण किया। जिसके अन्तर्गत भारत की एकता एव अखण्डता के लिये हिन्दी को राष्ट्र भाषा घोषित किया गया।

साथ ही गैर हिन्दी और भाषा लोगों की सुख-सुविधा को ध्यान में रखकर सविधान द्वारा १५ वर्ष की अवधि निश्चित की गई जिसमें वे हिन्दी सीख लें। राष्ट्र भाषा हिन्दी भाषा बन जाये। और देश में एकता को स्थापना हो, पर भारत सरकार के शीघ्रिय से इस हिन्दी भाषा के अस्थापन के लिए तबिक भी प्रयत्न नहीं किया गया।

इसके विपरीत राजस्थान व मध्यप्रदेश जैवि राज्यों में जहाँ कार्य हिन्दी में होता था, वहाँ भी अंग्रेजी में होने लगा। वहाँ भी अंग्रेजी भाषा ने अपना पूर्ण अधिकार जमा लिया।

इस अंग्रेजी भाषाई शासन से मुक्ति प्राप्त करने के लिए जनता की बार बार मांग पर न तो भारत सरकार ने ही इस ओर ध्यान दिया और न देश के नेताओं ने ही प्रयत्न किया। परिणाम स्वरूप देश के कई राज्यों में कांग्रेसी शासन का अन्त हो गया और वहाँ अंग्रेजी का स्थान हिन्दी अथवा प्रांतीय भाषाओं में प्राप्त कर लिए और वहाँ की सरकार का सम्पूर्ण काम वहाँ राजभाषा में चल रहे हैं।

वास्तव में देश की समृद्धि अपनी भाषा द्वारा ही हो सकती है, हम पराए जन से बनी नहीं बन सकते। बनी बनने के लिये तो हुये प्रयत्न करके ही जन पैदा करना होता। हिन्दी साहित्य के युग प्रबलक उच्चकोटि के लेखक एव नाटककार भी भारतेशु बाबू हरिचन्द्र की ने



बया ही सुन्दर भाव व्यक्त किया है ।

निज भासा उन्नति नहीं मर यद्यपि नी मर !
बिज निज भावा ज्ञान के मिटेन हिय की सुख ॥

अपनी भाषा के द्वारा जितनी सरलता से किसी विषय को हृद्यंगम किज जा सकता है उसनी सरलता से किवेनी भाषा द्वारा नहीं । देश की अवसति अथवा उन्नति अपनी भाषा द्वारा ही हो सकती है किनी देश के उत्थान एवं पतन का इतिहास यदि जानना हो तो वह इस देश की भाषा द्वारा ही ज्ञात किया जा सकता है । हिन्दी भाषा के परम विद्वान् निबन्धकार श्री आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने भी हिन्दी भाषा की सेवा करने का समर्पण किया है ।

हिन्दी भाषा भारत की जनप्रिय, सरल एवं सुबोध भाषा है । इसके बोलने वालों की संख्या सर्वाधिक है । साथ ही हिन्दी भाषा विश्व की ममस्त भाषाओं में सर्वथं स्थान रखती है । यही समस्त भाषा को एकमा की लड़ी में खोड सकती है । आज ही नहीं हजारों वर्ष से यही जनता की भाषा रही है । लीपटाटन करने वाले पात्री रामेश्वर जाकर इसी भाषा के द्वारा ही अपने आराध्य देव को प्रसन्न करते हैं । वसिष्ठ उसर का 'मेर भाव वहां भिट जाता है । पुकारो एव मत्त नोर्मो ही एक रूपरे की बात को समझ लेते हैं । हिन्दी देश की एक सम्पर्क भाषा है । पर केन्द्रीय सरकार ने त्रि.भी को विकसित करने की लिये कोई योजना नहीं बनाई है । त्रयें अपनी राष्ट्र भाषा का सम्मान करना चाहिए । महात्मा गांधी जी ने कहा है : 'राष्ट्रिय व्यवहार में हिन्दी को काम से लाना देश की शीघ्र उन्नति के लिये आवश्यक है । साथ ही उन्होंने कहा कि यदि स्वभाषा के स्थान पर मुझे स्व-सम्पत्ता प्राप्त हो तो ऐसी अचूरी स्वतन्त्रता को नहीं चाहता क्योंकि 'स्वभाषा के बिना स्वराज्य अचूरा है ।'

इसीलिये तो उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम का सारा कार्य क्रम हिन्दी भाषा के माध्यम से किया तथा सन् १९२५ अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस के अधिवेशन में हिन्दी भाषा के द्वारा कार्य करने का प्रस्ताव रखा । देश के अन्य सभी

प्रतिष्ठित नेताओं ने तथा हिन्दी भाषा का ही समर्थन किया है । और उसी की देश की एकमा और सम्बन्धना का प्रतीक माना है । कुछ विद्वान् एवं महापुरुषों की सम्मेलियां निम्नलिखित हैं ।

★ हिन्दी के द्वारा सारे भारत की एक मुत्र में विरोधा जा सकता है ।
—मर्णिस प्रधानमन्त्र

★ हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाना नहीं बर मो है ही ।

के० एम० सुग्री

★ देश के सबसे बड़े मू भाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्र भाषा बन सकती है ।

—सुभाषचन्द्र बोस

★ मैं दुनियाँ की सभी भाषाओं की इज्जत करता हू, पर मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो, यत्र मैं नहीं लग सकता ।
—आचार्य विनोबा भावे

यहाँ तक नहीं भारत के उप प्रधान मन्त्री माननीय सुरार जी बेमॉई ने केन्द्रीय त्रि.भी विधेयालय द्वारा आयोजित त्रिभुवीय मोठे में प्राचण करते हुये अक्टूबर सन ६७ में बिली ने कहा था—

“हिन्दी भारत की राष्ट्र भाषा होकर रहेगी, चाहे आज उसका कितना ही विरोध क्यों न हो रहा हो ।” इसी प्रकार उपररष्ट्रपति श्री बी० बी० गिर ने ६ नवम्बर ६७ को इलाहाबाद विश्व विद्यालय शिक्षक संघ की सभा में भाषण करते हुये कहा था—

हिन्दी भाषा भारत की राष्ट्र भाषा है । और वह भारत के विभिन्न भाषियों में बातचीत को साधयम बना कर रहेगी ।

भारत के माननीय राष्ट्रपति एवं प्रधान मन्त्री ने कई बार अपने भाषणों में हिन्दी को ही भारत की एक और अलखता बनाने वाली सम्पर्क भाषा बताया है । फिर भी आज हम देखते हैं कि व्यवहार में हिन्दी भाषा का प्रयोग न के बराबर ही रहा है । और प्रतिशत अपेक्षी भाषा भाषियों को प्रोत्साहित किया जा रहा है । इस अपेक्षी भाषा को भारतवासियों पर लावने के लिये चालि-चालि के प्रयत्न किये जा रहे हैं । एतदर्थ सरकार ने वध-

म्बर ६७ में ससन् में राज भाषा सशोधन विधेयक रक्षा विवक्षा मन्त्रालय को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में विरोध हुआ, फिर जनमत आखर न करने वाली इस लोकतन्त्रीय कांग्रेसी सरकार ने उसको प्रेरित कर दिया। प्रतियोगी परीक्षाओं में हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य कर दिया। किसी प्रादेशीय भाषा को सीखने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

वास्तव में हमारे सभी नेतागण सभी बातें अंग्रेजी के माध्यम से सोचते हैं, न कि भारतीयता के माध्यम से। वे जब किसी बात को कहते हैं। तो पहले उसे अंग्रेजी में सोच लेते हैं, और बाद में किसी अन्य भाषा में कहते हैं। आज झगड़ा हिन्दी अथवा अन्य किसी प्रांतीय भाषा के बोध में नहीं है। अपितु यह झगड़ा केवल हिन्दी और अंग्रेजी में है। इस अंग्रेजी के कारण ही भारत की अन्य प्रादेशीय भाषाओं विकसित नहीं हो पायीं। यदि भारतीयों पर से अंग्रेजी का बोझ घटा दिया जावे तो प्रादेशिक भाषाओं का स्वयं विकास होने लगेगा। भारत सरकार ने जिन भाषा सूत्र इसलिए लागू किया है, कि अंग्रेजी भाषा भारत में बनी रहे। यदि उनके स्वान पर द्विभाषा सूत्र लागू किया जाये तो अधिक लाभ हो सकता है। (१) छात्रों को अधिक भाषाओं नहीं सीखनी पड़ेंगी। (२) प्रांतीय भाषाओं का विकास होगा, साथ ही आर्थिक हानि भी नहीं उठानी पड़ेगी।

भारत में हिन्दी का विरोध अवास्तविक है। केवल नेताओं की बाल है। इस प्रकार अन्धोलनों से वे स्थानीय जनता का विश्वास प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। बाह्य वे आन्धोलन वेत की एकता के लिए बालक ही सिद्ध नहीं हैं। दक्षिण भारत में हिन्दी का विरोध तनिक भी नहीं है। यह बात कांग्रेस के अध्यक्ष भी निजलिखण्य के भाषण से स्पष्ट हो जाती है। जो उन्होंने सितम्बर ६७ में "रविशंकर शुक्ल के हिन्दी भवन" का उद्घाटन करते हुए झुपाल में किया था।

इसी अवसर पर आयोजित विचार गोष्ठी में भाषण देते हुए, तेलुगु भाषी हिन्दी सेवक भी बाल शीर रेड्डी

ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "दक्षिणवासी हिन्दी सीखते हैं। इसीलिये उत्तर वाले भी अनिवार्यत एक दक्षिण भाषा सीखें इस तर्क का कोई औचित्य नहीं है। हमें कोई सीखे बाकी नहीं करनी है। राष्ट्र-भाषा हमें अपनी सुविधा के लिए सीखनी है, और राष्ट्र की एकता व युद्धता के लिए सीखनी है। उत्तर वालों पर कोई अहसास करने के लिये नहीं।"

इसी प्रकार प्राय दक्षिण भारतवासी विद्वान् पुरुष दक्षिण एव उत्तर के बोध की सार्ई को पाटना चाहते हैं। वे राष्ट्र की एकता एव सम्पन्नता के एक राष्ट्र भाषा को पसन्द करते हैं और वह केवल हिन्दी ही हो सकती है। एक भाषा विधेयक का विरोध करते हुये बम्बई विश्व विद्यालय में राजनीति विभाग के रीडर डा० उषा मेहता ने सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए कहा था.—

स्वाधीनता के १५ वर्षों के बाद भी हम अपने राष्ट्र का काय अपनी राष्ट्र भाषा में नहीं कर सके जिससे हम अपने राष्ट्रिय काय कर सकें, बल्कि बर असल बात यह है कि हम अपनी भाषा में काम करना नहीं चाहते। दुनिया में अगर कोई राष्ट्र है जहाँ उधकी स्वभाषा में कार्य न होता हो, तो ऐसे सिर्फ दो ही राष्ट्र हैं एक भारत और दूसरा अफ्रीका।

इसी प्रकार आंध्र वासी मोट्टरि सत्यनारायण, मैसूर निवासी श्री नागधा आबि अनेक विद्वान् हैं जो देश की समृद्धि के लिए अहनिस प्रयत्नशील हैं और ये सभी ब्रह्मर एव दक्षिण का भेद भाव दूर करने में सदा ससन्न रहते हैं।

हमें हिन्दी को राष्ट्र भाषा पद पर प्रतिष्ठित कराने के लिये उसी प्रकार महान् स्थाय एव बलिदानों की आवश्यकता है। जिस प्रकार अंग्रेजों की देश से निकालने एव स्वतन्त्रता प्राप्त करने में भारतवासियों ने अनेक कष्ट सहे तथा मातृभूमि बेबी पर बलिदान हुए। महारत्ना जी ने एक अवसर पर भाषण देते हुये सख ही कहा था "जिस प्रकार हमारी आजादी को छीनने वाली अंग्रेजी को सिपारसी हुक्मत को हमने सफलता पूर्वक विषाख

विद्या इसी तरह हमारी संस्कृति को रक्षाने वाली अंग्रेजी भाषा को बाहर कर देना चाहिये।' इसी प्रकार टण्डन जी ने भी हिन्दी भाषा को विकसित करने एवं अंग्रेजी को अपवर्धन करने के लिये निम्न विचार किये हैं।

'हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने में बितनी बेरो की जायेगी। अतनी अङ्गुलन उसके सामने आती रहेगी जो उसके व राष्ट्र के मबिध्य के लिये बहुत ही घातक होना तथा तब तक अंग्रेजी आन्क गहरा जङ्ग बना लगी जो भारत की स्वतन्त्र एवं अङ्गुलता क लिये फिर से खड्ड बन जायेगी।

इसी प्रकार सीमाय से कुछ राज्य की तबब सर-कार ने हिन्दी को अनन्य राज्य की शासकीय भाषा घोषित किया है। आर जन्होन अपना समस्त राजकाय हिन्दी में करने का निश्चय कर लिया है। उत्तर प्रदेश राजस्थान बिहारी की सरकार न ता २६ जनवरी ६५ से अपना समस्त काय हिन्दी में हा करने की घोषणा मा कर बा तथा सभी सम्बद्ध विभागों को हिन्दी में ही काम करने के आदेश दे दिये है। साथ ही इस अंग्रेजी को मुक्त करने क लिये शिक्षा का माध्यम भी हिन्दी ही कर दिया है। तथा बच्चों की सुविधा के लिये हाईस्कूल तथा इण्टर की कक्षाओं में अंग्रेजी को बंकरिपक विषय बना दिया है। इसके अतिरिक्त प्राय सभी विरब विद्यालय को छोडकर वे भी ० ए० बी० ए० सी से अनिबाध अंग्रेजी को भी समाप्त कर दिया है।

इसी प्रकार जिस भाषा में देश पर १०० वर्ष तक शासक किया बा, वह अपने जीवन की अग्रिम बङ्गियां गिन रही हैं। जनता में प्रसन्नता की लहर है। वह इस अंग्रेजी से बहुत दुखी हो चुकी है। क्योंकि अब तक शासक अधिकारी अनेक प्रकार से जनता को सताते थे। उस भाषा में काम करते थे जो उसकी नहीं थी। अब अब से अधिकारियों को अपनी भाषा में काम करते पावेंगे तो फूल नहीं समावेंगे।

उत्तर प्रदेश के समान अन्य हिन्दी भाषी राज्यों की हिन्दी भाषा में ही काम करने की एक निश्चित अवधि घोषित कर देनी चाहिए, जिससे उसके प्रचार में बिलम्ब न हो और कर्मचारी पहले ही हिन्दी में काम करने के लिए योग्य बना ल, साथ ही केन्द्रीय सरकार की भी हिन्दी भाषी प्रदेशों में काम करने वाले कर्मचारियों को अधिक अधिक हिन्दी भाषा में काम करने का आदेश देना चाहिये ताकि हिन्दी राष्ट्र भाषा के पद पर बसा शीघ्र समासीन हो सके। महर्षि दयानन्द स्वस्वती तिलक एवं बापू का स्वप्न साकार हो जायगा। तमस्त भारत में हिन्दी राष्ट्र भाषा या अन्तर्जातीय भाषा के पद की सुशोभित करेगी उनकी तथा अन्य भाषाएँ भी अपने-अपने राज्यों से फलीभूत होंगी उनकी प्रगति में कोई बाधा उपस्थित न होगी इस प्रकार देश अंग्रेजी की दाहता के सदृश इस अंग्रेजी को दाहता से भी मुक्त होकर सुख एवं समृद्धि की चरम सीमा पर आङ्क हो जायेगा।

निःशुल्क

अमर ग्रन्थ सत्याग्रं प्रकाश की

सत्यार्थ सुधाकर, सत्यार्थ मार्तण्ड

उपाधियां डाक द्वारा प्राप्त करें। १५ पैसे की डिस्ट नेत्रकर नियमावली मगाइये।

—परीक्षा मन्त्री

भारतवर्षीय वैदिक सिद्धान्त परिषद्

सेवा सदन, कटरा, जलौगढ़ (उ०प्र०)

आर्यमित्र

में

विज्ञापन वेकर लाभ

उठाइये !

भारत के वीर

ओ ! वीर देश पर मर मिटने वाले !
 जीवन का पंगाम तुम्हों ने अबतरित किया था
 मानवता के चेहरे पर मुकुलित भावों से
 जलियाँ वाला बाग तुम्हों ने जमर किया था ।
 मेरे मावों में प्रसन्नता का प्यार नहीं
 आसू कण झरते रहते पर विधाम नहीं
 वो धोख निकलती है कसती कराहती सी—
 दुःख के विस्तार भाव हूँ पर वो प्यार नहीं ।
 जाना है शत्रुराज किन्तु घेरे से जाना
 शोक स्थान को नीव बनो मानवता का पहना जाना
 वो भारतवासी वीर बने मस्ताने
 भारत के कण-कण के वे चुने गये बीजाने ।
 भारत की वीर धरोह जननी मा से तुम
 उत्थान किया बलिबैबो प्राणों की उसने
 सुखदेष, देशर, भगतिह ह्रमर हुये
 भारत का कण कण बोल उठा दुःख से—
 प्राणो का दान दिया भारतवासी ने
 प्राणों को नीव नहीं मांगी थी
 प्राणो का तुकान उठा माँ के हृदय से
 प्राणों का प्रण खिल उठता तन-मन से ।

★ जयप्रकाश पांडेय, हरदुअ गज (अलीगढ़)

★
 आर्यावत्त असण्ड है, सण्ड सण्ड मत करना,
 बन शूर वीर अति रक्षा की माव भरमा ।
 आर्यावत्त के आर्यों हम सब माई माई,
 राग, कृष्ण, बयानन्द की भूमि पर बयो हो चढ़ाई ।
 अभाब रोग अशिक्षा हो नष्ट, स्वाथ का लय हो,
 परम पुण्य भूमि पर वैदिक सूर्य का उदय हो ।
 वेद ईश्वरीय ज्ञान है, वेदों का उच्चारण करना,
 हो वेदों का प्रचार नित्य सभ्या हवन यज्ञादि करना ।
 सब सत्रुओं के सकट से, आर्य जन निर्भय हो,
 हो आर्यावत्त शान्तिमय, मातृ भूमि की जय हो ॥

★ विद्यानन्द आर्य बक्सर (शाहाबाद)



आ
र्या
व
र्त





जीवन-ज्योति

वह आर्य जिसने
स्वातन्त्र्य युद्ध में
अपने जीवन को
अर्पित कर दिया

भारत की आजादी के दिशे कर सन् ५७ के समीप से महर्षि दयानन्द की प्रेरणा रही है, यह अतविषय सत्य है, सर्व प्रथम स्थापित समाजें प्रायः कीर्ती छावनीयों के नगरों में थी। महर्षि दयानन्द ने राजे राजाओं से आजादी की ज्योति जलाई थी। वही भावना सरदार पटेल के एकीकरण करते समय काम आई।

अतीत में कुछ आर्य ऐसे भी हुये हैं जिनका इस युद्ध में होय हुआ किन्तु हम क्राउन उन्हें भूल गये, उनकी स्मृति सजग करने के लिये ही यह ऐतिहासिक तथ्य प्रकाश में लाने के लिए इस लेखमाला की प्रथम किस्त पाठकों को प्रस्तुत कर रही है।

मैनपुरी उत्तरप्रदेश का पावन स्थल सच्चे आर्यों की जन्म एवं श्रेष्ठी स्थली होने के साथ साथ स्वातन्त्र्य सघर्ष की प्रबुद्ध स्थली होने से ऐतिहासिक भी बन गया है, यही स्थल हमारे चरित्र नायक श्री पं० गेंदालाल जी बोसित का काम क्षेत्र है।

पण्डित जी आंगरे के समीप बटेस्वर ग्राम में जन्मे। आर्यसमाज द्वारा पण्डित हुए। आपने आरम्भिक शिक्षा समाप्त कर औरंगाबाद के डी०ए०सी० स्कूल में अध्यापन कार्य प्रारम्भ कर जीवन क्षेत्र में पदापन किया हो या कि आर्यसमाज के विचारधारा के कारण मुक्ति की उमंगें हिलोरे सेने लगीं। सोने पर सुहागे का का कार्य या प्रमुक्त भावनाओं को समीकृत आगत किया तिलक महाराज ने।

स्वामी दयानन्द के विचार उन्हें आजादी के लिए प्रेरित कर रहे थे। अपने राजनैतिक गुण पुण्य तिलक महाराज द्वारा प्रोत्साहित करने पर अध्यापन छोड़कर कर्म क्षेत्र में अन्तर्गत हो अपने विचारों के प्रसार हेतु

पं० गेंदालाल जी

दीक्षित

★ लेखिका श्रीमती माया शर्मा

द्वारा डा० ओम्प्रकाश शर्मा नरसेना

‘शिवाजी समिति’ की स्थापना की, जिसके माध्यम शक्ति सचय के साथ गुरिल्ला युद्ध लड़ने के विचार को पूर्ण रूप देना चाहते थे, किन्तु बुनियाद यह पूरा न हो सकने पर भी हिंस्र नहीं हारी, अपितु ‘मातृ देवी’ बल संगठित किया इसी बल ने काकोरी सचय के प्रधान राम-प्रसाद बिस्मिल आदि आर्यों का सृजन किया था।

आजादी का सचय बालू रजने के लिये मातृदेवी बल की धन का अभाव सबैव रहा, श्रेष्ठ कार्य के लिये भी हमारे मामाशाहू कञ्चल बन गये थे, आतङ्क से भयभीत अन्धरा देश प्रेम के अभाव में घनाभाव निरन्तर बढ़ रहा था, इधर डाकू साधारण जनता को सबैव न्यग्रस्त कर रहे थे, मातृदेवी के एक सजजन ने डाकुओं में देश प्रेम का मन्त्र फूँडकर देश के लिये धन सघर्ष करना आरम्भ कर दिया। अष्ट्रे लक्ष्य प्राप्ति के लिये उर्ध्वी के साधन को अपनाते से कागितकारियों के प्रति वो मत भले ही हों किन्तु परिस्थिति की विषमता और डाकुओं का राष्ट्र प्रेम भी...

बम्बल बाटी के इस बल में ८० कार्यकर्ता थे जिनमें हिंमूतिवृद्ध के रूप में लक्ष्यभंग भोपल रहा था। आजादी के दीवारों में सबैव ही ऐसे लक्ष्यभंग रहते रहे हैं, लक्ष्यवा



आन्वही काफ़ी समय पूर्व ही मिल गई होती। इसी अय-
 चरु के पचिम के निकट एक पहाड़ पर जोखन में अपने
 बल को खिच दे दिया। यद्योग्य पण्डित जी के प्रथम
 प्राप्त किया। प्राप्त होने पर जीव एंडेने लगी। पण्डित जी
 ने सजी को तलक किया जोखन निकला दिया गया। विच
 है, ऐसा सजी को पता लगने पर विशुद्ध विद्यासधामी
 काया किन्तु पण्डित जी की गोली से बड़ी सर गटा। गोली
 की आवाज से पूर्व नियोजित पुष्पिल के बल कार्यों ओर से
 छेप लिया, कई मरे पर पण्डित जी पकड़े गये। पण्डितजी
 गिरपतार कर खालियार में रहने लगे। पण्डित जी की
 गिरपतारी को सुन उनके शिष्य किमिल जी उन्हें छुड़ाने
 के लिये खालियार गये पर उनकी ओज्जा भी एक बल
 बिच के कारण समकम हो गई। किमिल जी को छिप गये
 किन्तु मानुवेटी बल मैनपुरी में गिरपतार हो गया। इसी
 बल के एक मुखबिर सोमरेख के समयत मेव खोस देने के
 के कारण पण्डित जी को खालियार से मैनपुरी भागा
 गया।

खालियार की जलवायु की प्रतिकूलता और बारा
 बार की घातनाओं ने उनके शरीर को जरजरित कर
 दिया। इस पर भी कबल कदम पर अयचरुओं की दवा ने
 उन्हें हतोत्साहित नहीं किया, मैनपुरी स्टेशन से जेल तक
 पहुंचने में वे कई स्थान पर बैठे थे।

आजादी के बीचामों को मौत कभी आतंकित न कर
 सकी, इतिहास की कई घटनाएँ साक्षी हैं। साबरकर जी
 का सशस्त्र में जहाज से कूटना शिवा भी का जेल से
 भागना उनकी प्रेरणा का स्रोत रहा है। पण्डित जी ने
 भी जेल में अभिनय किया और मुखबिर बनने की घोषणा
 कर बी.सभी को आश्चर्य हुआ और पण्डित जी पुचक रले
 गये। इस झकेला होना था कि पण्डित जी जेल से कूदकर
 भाग गये।

शरीर के निरिक्रम होने पर भी पण्डित जी बराबर
 कायं करने लगे इसी बीच राजघरणा के शिकार बन
 गये। अठिच कष्ट होने पर वे घर छोड़े किन्तु स्वच्छनों ने
 उन्हें घर नहीं उकने दिया और अन्त में वे दिन्नी जा गये।
 वहीं सेवा करने उनकी परनी जा गई। किन्तु परनी की
 अचक सेवा पर भी बहा बराबर विगडगी गई। मुखी
 जाने लगी अन्त जानकर पण्डित जी ने अपनी परनी से
 कहा-मैं डार्य हूँ, ईश्वर विद्यामी भी सेवा सेवा में मेरा
 यह हाथ है, मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया है, यदि
 तुम भी सेवा सेवा करो तो मेरी आत्मा को शान्ति मिलेगी।
 तुम अपने को सौभाग्यवती समझो जो मैं शत्रुओं के हाथ
 न पड़कर देश प्रेम में शान्ति से जा रहा हूँ। अर्थात्-
 चांगियों से बचना न ले सका, यही कष्ट है प्रभु से प्रार्थना
 है कि फिर भारत में नया शरीर प्राप्य कर देश के काम
 आऊँ तुम विगता न करो। देश में विद्याओं अनाथों का
 रक्षक सर्वशक्तिमान ईश्वर तुम्हारी भी रक्षा करेगा। मेरे
 शिष्य तुम्हें माता के रूप में पूजेंगे।

आज से अठ्ठातीस वर्ष पूर्व २१ दिसम्बर १९२० को
 पण्डित जी प्रातः सरकारी अस्पताल में प्रविष्ट हुये और
 उसी दिन उसी स्थान पर दोपहर में बंद पर एक साबा-
 रिश लाश पड़ी थी, जिसका न कोई रीने वाला था न
 बढाने वाला।

सचमुच प० जी ने त्याग एव तपस्या में अपने को
 होम दिया। देश के लिये वे-क-ने और देश के लिये
 इतने कष्ट सहन कर मरे, पर आज उनकी स्मृति भी
 नहीं।

देश के लिये अपने को होमने वाले बीजित जी
 हमारे प्रेरक रहें, यही राष्ट्र जावण के लिये आवश्यक
 है।



भारत साहित्य-सौरभ अंब

भारत बीरो जग जाओ, जब माँ ने तुम्हें पुकारा है ।
यह धरा है प्यासी लूनों से जब दूरमन ने ललकारा है ।
बिम्बा हैं राधा, शिवा नहीं जननी जब तुम्हें जगाती है ।
हो जाओ तैयार सपुनो वसुधा आवाज लगाती है ॥

हे आर्य देव के अनुयायी तुमको जोहर बिल्लवाना है ।
यह राम कृष्ण की अम्मसूयि, करिवल को मार मगाना है ॥
बचने बचने नर नारी को, अपना उद्देश्य मिगाना है ।
तिल मात्र सूयि के बचने में, लूनों की नबी बहाना है ॥

तिलक भगत मुकदेव जात्रि ने जाया की लाज बचाया है ।
प्राचीं की ममता रथाय विद्या भारन आजाव कराया है ॥
धोषित सिंघत है यह वसुधा जिसमें तू ओषध पाया है ।
कटि कसो अरो हुकार सभी, दुरमन उस पर चढ़ जाया है ॥

बीरागनाओं जोहर जत धारो रानी लक्ष्मीबाई सा रथाय बिसा डालो ।
भारत माता की रक्षा में अपना मस्तक सिद्धर लुटा डालो ॥
है बडी परीक्षा की माई, रण कौशल अपना बिल्लानो ।
प्यासी को तेय पुरानी है, जरि जू से प्यास बुसा डालो ॥

बापू जी की सिसाओं से जग को मज पाठ पढा डालो ।
हर वाली साल अबाहर है तन, मन, धन सभी लुटा डालो ॥
जन लालबहादुर सा रथागी, सत्य का झण्डा लहरा डालो ।
जो आज उठाये जननी पर, मिट्टी से उसे मिसा डालो ॥

हे दुरमन जीनी वाक लड़ा भारत की खान मिटाने को ।
जो प्राचीं से प्यारा दोस्त रहा, वह बंडा हूमें बसाने को ॥
कलंब्य तुम्हारा है, बीरो बंसे को तैसा बन जाने का ।
जो धरे जगाड़ी कदम तेरे वच उसका अष्ट बवाने का ॥

★ रामबशन मिश्र उजरा लहरा काशी

मां
ने
तु
म्हें
पु
का
रा
है

★





जननी जन्म भूमि स्वर्ग से महान् है

पूरी दुर्गों से यही हमारी बनी हुई परिपाटी है ।
भूम विद्या है मगर नहीं की कमी देश की माटी है ॥

भारत वीरों की जन्मभूमि है । यहाँ का एक एक रत्न का कण कण वीरों के रक्त से पवित्र बन चुका है । उन्होंने देश वर्म कात्ति के लिए अपना कर्तव्य समझा है । हमारी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि उन वीरवीर वरों को जिन्होंने मरमुर्खों की व्यवसाया से रक्तबन्धी का शृङ्गार किया । मौजधर्मों तिलक करो ! उस माटी की चरण धूलि से तुम्हारा भी धोवन चम्य हो उठेगा ।

एक युवा सतयुग में भी यहाँ उत्पन्न हुआ था मरत । जिसने चढ़ते पुरख से लेकर हमने पवित्रत तक, सिद्धर हिवालय से लेकर अक्षर हिन्द महासागर तक, अटक से अटक एव कश्मीर से लेकर कम्पा कुमारी तक समुद्र ही भारत पर विजय पताका लहराई थी । जिसकी विजय स्मृति को श्रुति-मुनियों की पावन भूमि आर्यावर्त ने अपने नाम में ही धारण कर लिया । इतिहास साक्षी है यहाँ पर कमी भी बलिदानियों की कमी नहीं रही । राम बधिषी, हनुमन्, अग्निमय्यु, मत्स्य प्रह्लाद एव हरिरत्न बनें वीर वीरों एक बर्षवीरों की व्यवसाया में नये-नये धीमन् रत्न पूर्वते आये हैं । इती कारण अरुणियों साल पुत्राय रहने के बाद आज भी भारत पूर्ववत् वीरवर्धित है, उन वीरवर बहादुरों के कारण जिन्होंने भारत माँ के सत्कार के लिये दूल को तो पुच्छ वस्तु समझकर अपनी जान को भी भारत माँ के चरणों पर चढ़ा दिया ।

जैन नहीं जानता उस राजपूती ज्ञान महाराजा प्रताप को जिसने देश की आकाश को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए अपना सर्वस्व श्योलावर कर बन सब और बर-बर अटकना स्वीकार किया मयत् पराधीनता स्वीकार न की

★ श्री कुरालदेव शास्त्री, 'विद्याभास्कर'

स्वर्ग शय्या को श्याम कर कांटों की लेख पर सोया मगर लुका नहीं । किसी ने ठीक ही कहा है—

अक्षर के चरणों पर जब सर धर बैठे थे सभी बिलेर ।
एक तेरा ही तिर ऊँचा था जो । हृदयी माटी के क्षेत्र ॥

जब हम आगे चल कर इतिहास के स्वर्णिय पृष्ठ पलटते हैं तो हमारी आँसों के सामने माँ जीजाबाई की शीर्षमय गाथा नाचने लग जाती है जब कि वह सिंहदुर्ग दुर्ग पर मुगलों का शय्या लहराते हुये देखकर बेटा शिवा की पीठ चपचपाती हुई कहती है कि—“बेटा ! जिस समय के लिये मैंने तुझे पैदा किया था, वह समय आ गया है, जो देख किते पर मुगलों का शय्या लहरा रहा है, जा मेरी बूब की लाज रक्षना और अगवापवक लहराकर ही आया । शिवा ने “तवास्तु” कहकर किते पर हिन्दुत्व का प्रतीक नगवापवक बड़ी शान के साथ लहरा दिया ।

सारे प्रमथल की विजय कामना से चला हुआ सप्राट् लिकखर बरती की माँग को तैवार कर लीये हुये सेतों को हरे-भरे करने वाले कर्मठ छिवाण द्वारा शय्य सुरमित केसर तथा हरी-मरी तुमहरी सेती को मूढ़ने की इच्छा से भारत आया, और जब उसने श्रुति-मुनियों की पुण्य स्वस्ती पर कुट्टिद शायी तो पुट्टी भर भारतीय वीर-वीरों ने उसके माकों चने चबा दिये ।”



“सुप्रसिद्ध बीर अश्वतराय की पत्नी सारण्या से कौन अपरिचित है ? कितने को सम्झों ने घेर लिया था । सारण्या उसी अवस्था में अपने पति को बोली में डालकर बीर स्वयं घोड़े पर चढ़ कर उसके साथ चली । लेकिन सम्झों से जी जान से लड़ रहे थे, पर तब सेना अधिक होने के कारण हार खाते थे । सम्झु निरुदतन जाता जा रहा था । अब अश्वतराय को इस तथ्य का पता चला तो उसने अपनी साथ प्रिया पत्नी से प्रार्थना की कि वह उसके सीने में आना भौंस दे । यह स्वयं सर्वथा असत्य है, परन्तु सम्झों के द्वारा भरना नहीं चाहना । सारण्या के लिये यह अति परीक्षा थी । सम्झु को मारना सुगम था परन्तु प्रिय ही नहीं अियनम को मारना आरम्भघात से जी दुष्टकर है । परन्तु उसने बन्दी किया जो कि एक बीर नारी और जान की प्यारी को करना चाहिये था । उसने उस घेन के सरोवर हृदय पर प्रिलमें उमने अनेक बार स्नान किया था तबबार भौंक बी और सम्झु सेना से लड़ती हुई परलोक तिवार गई ।

‘बचचा-बचचा जानता है मुझे मर लेकिनों को साथ लेकर अनेकों के छत्रे छुडाने वाली, यौरवर्ण युवती, सुन्दर अकृति वाली विशाल मुलोकनों वाली, लाल रङ्ग की साड़ी के साथ आम्भनों से लड़ी, पीठ पर स्व-पुत्र शबोदर को बाँधे हुई, मुँह में लगाम तथा दोनों हाथों में अमकती तलवार से सम्झों को छिद्र निम्न करने वाली महारानी लक्ष्मीबाई को जितने देस के लिये सर्वस्व सम-पित कर अतिसम सति तब अपने खून की अतिसम बूँब को भी बहाया, जिसके लिये घर-घर में प्राञ्ज भी प्रसिद्ध है—

‘बसक उठी सन् सलाखन में वह तलवार पुरानी थी । खूब लड़ी मर्यानी वह तो शहीदी वाली रानी थी ।

कौन नहीं जानता ? अतिसम रजादू बहादुर साहू अरुणर को, जिते जेल के सीखकों में बंध कर किसी बाबाज अंग्रेज ने यह फवती कती थी कि—

दमदम में दम नहीं है खैर मर्तु जान की । बस अरुणर ठण्डी हुई तलवार हिम्बुस्तान की ॥

इस सबती का प्रत्युत्तर देते हुए यह पायल तैर कारागार की भूखण्डों से बहाकू बडा और भारतीय रक्त का परिचय देते हुये सनकार बोला—

‘ओ पायल अंग्रेज क्या कहा ? क्या हिम्बुस्तान (आर्वाचल) की तलवार ठण्डी पड़ गई है ? सुन बीर अण्डी तरह काम खोलकर सुन—

गाबियों में दूर रहेगी अब तलक ईमान की । कसरे अश्वन तक बलैगी तेव हिम्बुस्तान की ॥

वैद्यमत्ति की माननाओं को खूद कट कर मरने वाले स्वतन्त्रता के युवारी महानि बगाम्ब की महाराज नंगा के किनारे बँठे हुये थे, इनी समय एक नई अपने बन्धे की लाल को गंगा में बहाकर उसके ऊपर का कपड़ा उतार उसे बोने लगी । स्वामी जी के गर्लों से यह कथन दूरव देखकर आंशु झलझला आये और उम्होंने सोचा कि—इस प्यासी कहीं का अधिकार कितने खीना है ? कितने खीना है इनका हक ? और प्रात में के इस निर्णय पर पढ़ते कि—अपना लहू और पत्नीना देकर जीवी और तूफान सहकर सेठों की नांग खवारने वाले ऐसे लालों भारतीय इम्सानों का लहू प्रथम खूपके खूपके मरिदा की तरह पी जाते हैं । और तक्ष्य तक्ष्य कर भीत के घाट पशुचा देते हैं । स्वामी जी की आँसों से इस प्रकार के और अधिक दुरय न देखे गये । और उम्होंने बर्न संस्कृति अश्वता ब देस की रजा के लिये अनेकों बार विच के प्यासे पायकर आबाबी के लिये आबाबक उठाई और कहा—‘कोई कितना ही करे जो स्वदेशी राख होता है वो खर्बोवर होता है । उनके उबरेलीं से प्रभावित हो या यूँ कहिये कनके कर कमलों द्वारा तस्थावित भावसमाज के सन्दर्भ में आंकर एक दो बा संकभों नहीं अपितु सहस्रों तन्धुबकों में भारत ना की अय तथा ‘कन्दे मातरम्’ के साथ हृदये-हृदये मृत्यु का आभिज्ञान किया ।

हमको यह घड़ी याद है जिस दिन अलिया वाले बाव में हुवारो भारतीय सुपुत्रों व बीराङ्गनाओं ने स्वा-धीनता के नांग के कलसकथ्य अपना खून बहाया था । जिसका बरसा लेने के लिये बीर उचमसिहू ने प्रतिज्ञा की थी कि—‘अब तक मैं दुरय पिता तथा २० हुवार पाय-

तीय इस्लामों व मी बहिनों का निरवराध खून करने वाले नृपण अत्याचारी डायर को न मार लूँगा तब तक सुख भोग से व बंदूपा ।' इस प्रकार उस बीर ने लग्नन जाकर एवं डायर को विस्तीर का विस्ताना बनाकर अपना सिर सुयन भारत मा के विषय चरनों पर बढ़ाते हुए दुनिया को यह विला दिया कि—'भारतीय बीर जान दे सकता है, पर प्रण को नहीं खूल सकता ।'

कीन नहीं जानता ? उस बीरवर कर्तारसिंह को बिलने अस्तिम समय में मी मुश्कराते हुये म्यायावीस के सामने यह कहा था—

करता बूँ बपावत को अमर फांसी का डर होता ।
बढ़ाता अंत माता को अमर एक बीर सिर होता ॥

इस प्रकार न जाने कितने सुभाव, अमरसिंह आजाद, कोलर खादि बीर शहीद काल के गाल मे समा चुके हैं, परन्तु वे समय के गर्भ में बिलीन होकर भी अमर हैं तथा बिल्ला बिल्ला कर कह रहे हैं—

हम साये हैं तुफान से किरित निकाल के ।
इस देश को रक्षना मेरे बचनों सभाल के ॥

बीरों की सतत साधना की चर्चा विस्तार पुंभक आर्यसंवाज व नौअवान माइयों को सचेत करने के लिये की है । बिमने बचानों है, हृदय है, तड़प है वे सोचें । आज जब हृदय समाचार पत्र पढ़ते हैं ता उसके पहिले पन्ने पर ही अमर, आम्बोलन, सत्याग्रह छुरे बाबी इन्हीं का बर्नन हमारे आँखों के सामने नाचने लग जाता है । आज देश में खानि का ठो नाम ही नहीं । अ्यि पुनियों की इस चरती पर बड़े-बड़े मग्निवों से लेकर अधिकारियों तक रिश्तत खाने का बर्नन बन गया है । राम कृष्ण और सिधा की वाकन मूमि में प्रतिबिम्ब हुआरों नहीं लाखों निरवराध बीरों का सिर बड़ से अलव कर दिया जाता है । आज देश में जो कासे बाजार नग्न नृत्य कर रहे हैं, जम्हें ही उचित स्वान प्राप्ति हो रहा है । पाकिस्तान और चीन का सिरदब अब नो कायम है । सिधा में फौडी विशेष बिकार नहीं । राबनीसिक धादियों में 'आजाराण और क्या राम' का बिकाम हो चुका है ।

सिधा क्षेत्र राजनीतिक अड्डे बन गये हैं । ईसाईयों और मुसलमानों द्वारा हिन्दू धर्म का विनाश किया जा रहा है । अड्डेधर्म के स्वान पर 'लूण लवालों' का प्रचार हो रहा है । हृदय और धी के देश में शराब और माँस का प्रचार बढ़ रहा है । हमारे देश के नवयुवकों को सारे बिम नर गम्भी-गम्भी बाब-बिबाब के फिल्में से फुरसत भी नहीं मिल पाती । अयेबों के अमबचित पिट्टू जब भी धूपके-धूपके मरिचा की तरह मजहूरों व कितानों का लहू पी जाते हैं । आज पारसमि तथा सोने की चिड़िया के नाम से पुकारे जाये वाले भारत देश मे लाखों लकड़ू साधुओं के देश में फिरते हैं । स्वार्थी लोग नूचे करिस्तों का अधिकार खीमकर अबाब बवा धिने हैं । सरकार शस्त्र बल व कूट नीति से इस्लामों के सिर पर ताण्डव नृत्य कर रही है । अत मेरे बह्नापुर जवानो ! भारत मा के सपुतो ! वयानन्द के संमिको ! कुम्भकर्णो निद्रा को छोड़कर जागो और कुछ कसं ध्व धर्म करने के लिये उठ जाइ हो ! क्योंकि—

“यह हाल रहा तो दुनिया मे,
भारत की कहानी क्या होगी ?

बिध देश का बचपन भूला हो,
उस देश की जवानो क्या होगी ?

ऐ ! मेरे दोस्तो ! इसी समय प्रण करलो कि सस्कृति अन्नभवा व देश की रसा बिलोआन से करदे । युवकों ! मैं तुमसे कुछ विशेष कहना चाहता हू, क्योंकि तुम्हीं बाबी भारत के निमतिता हो, तुम ऐसे प्रकार पुकुर हो जिससे तुम समस्त मू मण्डल को आओकित कर सकते हो । अब जब तुमने बिकरास कराल मूति धारण कर ताण्डव नृत्य किया तो कितने ही साझाभ्य धूल में मिल गये । तुम्हारी सहायता से ही सज्राटों का तिहासनों पर तिलक हुआ, और तुम्हारे सकेत मात्र से ही सज्राट सिधासनों को छोड़ गये । नौअवानों, जागो ! और भारत माता को स्वर्णसज्जार पहनाओ ! मी आज पुकार पुकार कर कह रही है—वेदा ! सिधा तु कहां है ? क्या मेरी कोक धूरबीरों से बासी हो चुकी है । यदि मेरी पुकार [सिध पुक २५ पर]

‘वसन्त’



ऋतुराज सन्त कुर जाना ..
 यद्यपि है अधिकार तुम्हारा
 कप सुनहरा सबसे प्यारा
 यह तो मैंने जाना ..
 भ्रष्ट सृष्टि का निश्चित कम है
 ‘निर्यासिध’ निहित ‘बिधम’ है
 दोष अभी समझाना ..
 पीत ‘पीतम’ का है सासन,
 मेघ वर्जन मग में भाव्य
 बर्षा का बना बहाना ..
 परिवार नियोजन इत बलि भारी,
 फंसी बहुत पलू बीमारी
 टोका तुम्हें सवाना ..
 निराश्रित सब सध्यासिध है,
 यमासन तब असासिध है
 व्यवधान अभी बनवाना ..
 पचाफागत कोई सब सवाग्य है,
 साग्न प्राप्त कोई साफाग्य है
 बिना मोर बंराबा ..
 कीम ताऊ पान सतीबा,
 निकड रक्षा है निकड सतीबा
 द्वारों से सब जाना ..
 तुम्हें प्यार है हरियाली से,
 इन्हें रक्त रजित सती से
 अपकी प्यास बुसाना
 बलि कोमल हैं अङ्ग तुम्हारे,
 कष्टकमय मग किन्तु हमारे
 मोतत ही फड बाबा ..

रिरवत रवकी निर्य नाचती,
 बरष बिधान के मुष्ट बांचती
 भरता मोर सवाना ..
 बड़े वेव की जाने आँधी,
 लग्ना में हूँ इग्नरा पाँधी
 होया कहां ठिकाना ..
 बुझा चमन में कठ रहा है,
 मासियों से लुड रहा है
 तुलन बहुत बचाना ..
 कोपल की कह गई बूक है,
 हिय में जठती गई हूक है
 बेत बना बीराना ..
 नूतन मुकलित कलिकाओं पर,
 उपवन की सब आसाओं पर
 मजुओं सा मडराना ..
 सूट रहे हैं बाब अपने,
 टूट रहे ‘मोहन’ के सपने
 बिल देखो बीबाबा ..
 मोतत भारी मरी प्राप्त है,
 बनी बिधम सफाम्लि है
 फंसे सम्भव साब सवाना ..
 वसुधा बंरिक ऋचा कहेगी
 मजल स्नेह की बार बहेगी
 बने ‘मवन’ मस्ताना ..

★ मदनमोहन एडवोकेट मोंड (शांसी)

कहानी-कुञ्ज धरती

पावन मां है

★ श्री नूरमोहम्मद खान

आज "हीरामन" बहुत खुश था। उसकी जब से आज, उसके गाढ़े पसीने की कमाई थी। हड़्डी तोड़ भंग करने के बाद तो उसे आज खुशी का रिय देखने को मिला था। क्या बरसी ? क्या सर्दी ?? क्या बरसात ??? इन तीनों मोसमों का उसने डटकर सामना किया। कमी हार न मानो। उस कठोर परिश्रम का ही तो यह प्रतिफल था कि आज उसके हाथों में पुरे पत्रहूँ ही पपये थे। ठीक ही तो है, काठनाइयों से घबराते थासा मानव, मानव नहीं है, बल्कि मानवता के बोले में सीपता का आमा पहिने पीबड़ है। इसीलिद् हीरामन ने, हर सखट का डटकर सामना किया था। आज उसका रोम रोम प्रसन्नता की लहरों में डूबा हुआ था। उसने सोचा, आज क्वा की मनोकामना पूरी हो जायेगी। उसकी बरसो की साय आज बजिल पर पहुच कर अपनी विजय की विजय पठाका फहरायेगी। इतना सोचते ही वह प्रसन्नता से लिल गया।

क्वा के कहने पर ही, हीरामन ने अपने ५ बीघा खेत में भूँवफलो बोई थी। भयवान् की लीसा भा अप रम्बार है, बारिस के प्रारम्भ में पानी कम था, लेकिन जम्भ में इतना मिरा कि भूँवफलो खूब जमी और पूरी १२ बिबटल निकली। भूँवफलो मण्डो में बेब, मोटो की सापरबाही से जब से रख हीरामन प्रसन्नता का बंधुषो पर कवम रखता हुआ, अपनी बेलगाडी में सवार, घर की ओर भा रहा था।

सहर की पक्की सड़क को बार कर उसकी गाड़ी अब गाँव की कच्ची गडार में जा रही थी। सामने दो रास्ते के मिलन पर, एक कोने में गाँव की पहिधान के लिद् लकरी लकी थी। उस पर लिखा था—“क्वासेंकी लीम किकोमीटर”। ग्राम का पहिधा अजर क्वा पड़ते ही कचे अपनी पत्नी क्वा की याद हो आई। पढ़ा लिखा

तो वह था नहीं। बंसे ही रात को ग्राम के शिक्षक के पास वह बारह कड़ो पड़ गया था। उसी का यह आलम था कि वह एक तो क्वासेंकी ग्राम से परिचित था। नूबरै उसकी पत्नी का नाम भी क्वा था। क्वा की याद आते ही तरह तरह के बोले विचार उसके मस्तिष्क में संसाब से उठने लगे। वह उनमें बहने लगा। क्वा को जब वह प्याहू कर सामा था, तो उसे बेल आयाक रह गया था वह। क्वा का बंसा नाम था बंसा ही क्वा था उसका। उसने अपनी पत्नी को कहा था, “भयवान् का बिया मेरे पास सब कुछ है। कुछ है तो इस बात का कि मैं अकेला हूँ। सायब तुम्हें भी अकेलापन जकरेगा। इसलिये यदि घर में बंठो अकेली तुम उकता जाओ, तो तुम्बर प्रकृति की गाव मे, धरती मां के प्राणभ में आ जाया करना। सब क्वा। तुम सामने होगी, तो मैं दूने उरसाहू से काम करूँगा और साथ ही तुम्हारा मन का बहलाव भी ही जाया करेगा।”

सहमी-सो लाज की गठरी क्वा ने चेहरा ऊपर उठाया। पति को देखा—हूँट पुष्ट गठीला बदन। उसने धीरे से कहा, भय्य है वह किसान रबी, जिसके र्वाभो के पास धरती बंसी पावन मां हो। मां के होते जला मुझे अकेलापन कंसे महसूस हो सकता है।”

“सब क्वा।”

“हाँ।” और क्वा ने मुस्कराकर सिर झुका लिया।

“तो क्या तुम मेरे साथ खेतों में काम करोगी ?



भीषण मरनी को कि शरीर को जलाकर स्याहू कर देती है, हाइड्रॉ जेने बाबा आइया जिसका कि ठंडा समीर हृदयों में बँट जाता है। आँधी तुफान की डोली में सवार आने वाली बारिश के चपेटों को क्या तुम सहन कर सकती? नहीं क्या नहीं! तुम खेतों में काम नहीं करोगी!" हीरामन माबाबेल में बहता कहुता गया।

"कमाल करते हैं आप जी! हमारे किस्मत में यह सब कहीं? और फिर मैं तो चरती मा की सेवा कर्कशी, जो कि बचने से हूँ मैं मन चाह्य देवी। फिर जला आप मुझे माँ की सेवा से क्यों वंचित रखना चाहते हैं?"

"अच्छा छोड़ो नो इन बातों को। एक बात बताओ मुन्हें कौन-सा पहना पम्बर है।" हीरामन ने बात बचलते हुए पूछा।

सुनकर क्या चौंकी सज्जवा गई। उसने सोचा कौन-सी बात में यह गहने की बात आ गई। उसने तिरछे बिलबन से पति की ओर देखा, फिर धीरे-धीरे सरमाते हुये बोली, "मेरी तो बस झूमरवार जेला और सिर पर ओर पहनने की बच्छा है और यही मेरी पहन है।"

"बस! इसनो ही बात! मैं जकर तुम्हारी यह बच्छा पुरी कर्केगा!"

"सच!"

क्या ने नो तो उसके साथ कड़ी मेहनत की थी। सुबह की पहली किरण फूटते ही वह आम जाती और साथ तक काय करती। बोका, बरतन, गोबर, निवाई, कुवाई सभी तो वह करती थी। बेचारी। तनिक नो आराम न करती। इन्होंने सब बिचारों में पीते लगाता, सच्चा होते होते हीरामन अपने घर आ गया। गाड़ी को बड़े में खड़ी कर, बँडों को कोमे में गड़े एक झूटे से बाँध, वह प्रसन्न मुद्रा में घर के अन्दर गया। घर ने उसकी पत्नी क्या खाना बना रही थी। पति को आते देखा वह, मुस्कराकर बोली "आ गये आप।" "हाँ क्या" आश में बहुत सारे चपये लाया है। मूँवकली अच्छे माच बिकी है। पूरे पम्बर ही चपये आये हैं।" इसना कहु उसने बोटी की गड़ी पत्नी के सम्मुख रख दी।

"सच! तब तो मैं झूमरवार जेला, और सिर का ओर बल ही बाजार जाकर खरीद जाती हू। बहुत दिनों की कठिन तपस्या के बाद माच यह दिन देखने की निजा और ही आप अपने लिए कपड़े लाये या नहीं?"

"तु मेरी पिक न कर क्या! मैं तो बंटा हू, ठीक हू। अच्छा सा खाना रख, बड़ी शुभ लगी है।" इसना कहु कर हीरामन हाथ धो, पालथी मार कर बँठ गया। क्या ने एक वाली में बस और उली में दो जुवार को रोटी रख दीं। अभी वह कठिनता से एक ही रोटी खा पाया था कि बाहर दरवाजे पर किल्ली ने बसक दी!

"कौन है माई?" उसने खाना खाते खाते ही पूछा।

"मैं हू सेठ बनबारीलाल। दरवाजा खोलो।" बाहर से आवाज आई। हीरामन हड़बड़ा कर खड़ा हो गया। "सेठ बनबारीलाल!" अचानक उसके मुँह से शब्द बिकार पड़े।

दरवाजा खुलते ही सेठ जी ने बोझना चुक किया, "हीरामन। हमने सुना, आज तेरी पुँवकली अच्छे माच बिकी है। ला, बिकाल, हमारे वंते?"

"यहलें आप बँडिये तो सही सेठ जी, फिर हिंसाच-किताब की बातचीत होगी।" हीरामन ने शिष्टतापूर्वक कारवाई बिसाते हुए कहा।

"जरे माई, हम बँडने नहीं, हिंसाच चुकना करने आये हैं। ला, बिकाल तेरह लो चपये मय भ्याच के।"

"तेरह लो?" हीरामन का मुँह आश्चर्य से फटा का फटा रह गया, "मैं तो सेठ जी आप से सिर्फ पाँच लो लाया था।" "तो मैं क्या करूँ। भ्याच पर भ्याच और उस पर भ्याच। बड़ा भाया मुझे अकल बताने वाला। अपना नाम क्या बिस लेता है, अपने आपको लाठ साहब समझता है। अच्छा तुना तेरे आप ने क्याबा नहीं क्याया, यही तो तु हमारे इन बड़ी-खातों को नो बकल बसका देता। बड़ी देना हो तो सीधे क्यों नहीं कहुता।"

हीरामन अचानक रह गया। कड़ी-कड़ी आँखों से लेंड



की के चेहरे को देखने लगा। "हेरहु ली"। उसने सोचा, क्या का क्या होगा ? उसकी इच्छा हर बार अचूरी रह जाती है। क्या इस बार भी अचूरी ही रहेगी ? क्या उसकी किस्मत में झूमरवार जेला और सिर का मोर ही ही नहीं ? नहीं ? इस बार वह उसे निराश नहीं होने देगा ? इतना सोच उसने दृढ़ता से कहा, "सेठ जी, जम्हालू फलल जामे वर में आपकी पाई पाई जवा कर रूँगा। इस बार आप मुझे जमा करें !"

'क्या कहा ? जमा करें ? सेठ बनबारीलाल ने जमा करना नहीं सीखा है, हीरामन ! तू किस आचार पर कहता है कि जम्हालू फलल जामे वर रूँगा। भगवान न करे। यदि फलल चौपट हो गई तो ? सेठजी ने भींचित शीकर कहा।

"मैं अपने कुए से सिचाई खडंगा ! मेरे हीरा मोती ईल चाहे जितना पानी चरस से भींच सकते हैं। आप इसकी बिगता न करें।" हीरामन ने मछला से उत्तर दिया। "हीरा मोती ! सुनीमजी खोल लो हीरा मोती को। तेरहु ली दे जाना और बेल ले जाना।" सेठजी को पूर्ण आशे में देख, सुनीमजी ने अपनी ऐनक सम्भाजी, बस्ते बयल में दबाये और बेलो की मोर बड़ चला।

"ठहरो !" हड़बड़ा कर सुनीमजी ने पीछे घूमकर देखा, "वह लो आपके रुपये। पूरे तेरहु ली हैं।" क्या वे बाहर आकर मोट की गड़ी सेठ जी के सम्मुख रख दी।

"क्या ! तू यह क्या कर रही है। तेरी बरसों की लीच !" हीरामन ने कहा। झूमरवार जेला, मेरे काम की बीमा बढ़ावों के मोर सिर का मोर सिर की इच्छत ! किन्तु इससे भी बढ़कर मुझे आपकी इच्छत प्यारी है। आप ही मेरे सरताब हैं। सरताब के होते किसी भीच की आशयकता नहीं होती। वे दो इन्हें खंये। अपनी किस्मत में यह सब कहा ? मैं कभी आपसे मैं भींच नहीं मानूँगी। आपके सम्मान में ही मेरा सम्भाव है। मैं तो आपकी परछाई हूँ। बूल कट जाने, लो परछाई भी कट जाती है। थड़े उलका दुर्भाग्य है। जामत हूँ इस लीचे को, जिसके पहियने से काम फटे" इतना कह कर जाबोल हो गई।

सेठ जी रुपये ले करने घर चलते बने।

हीरामन ने क्या के चेहरे को देखा, उसकी आँसों से सागर उमड़ने को उतावला हो रहा था। फिर भी आँसों पर एक अजीब मुस्कान थी, जो सायब किसी बिचय की बुद्धि को बजा रही थी।

दूर मन्दिर के घण्टे शाल स्वनि के साथ बचने लगे थे। कबाचित भगवान की आरती हो रही थी।

"क्या ! यह भगवान भी कितना निष्ठुर है। नेह-मस करें हथ और सेठ बने थे महाबल ! हीरामन ने शून्य में देखते हुए कहा।

"ऐसा न कहो ! भगवान् के घर बेर है अघेर नहीं है। वह जो कुछ करता है जच्छा ही करता है। बसो अब जाना बालो।" इतना कह करुपा ने आँसों में जाये आँसुओं को आँचल के छोर से पोंछ लिया।

घण्टे की आवाज पुनः खोर से जाने लगी। फिर निरन्तर शाल स्वनि के साथ दूर अतिज में बिलीन होती सुनाई पड़ने लगी।

हीरामन कुछ बेर शून्य में देखता रहा, फिर वर बाबा ब-व कर रुपा के साथ अन्दर चला गया। ●

भारत सरकार से रजिस्टर्ड सफेद दाग

की वजा मूल्य ७), विवरअनुपल मगावों
दमा श्वास पर अनुमायिक बडा
है। मूल्य ७) रुपये
नकालों से साबधान रहें।

एक्जिमा (इसक, सर्जरी, चम्बल
की वजा) वजा का

मूल्य ७) रुपये डाक लार्ब २) व०

पना-आयुर्वेद भवन (आर्य)

मु० पो० मयकलपीर

जिला-अकोला (महाराष्ट्र)

स्वतन्त्रता का मूल्य

सुनो माइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ।

इसके कारण कितने बीरों ने अपनी बरबादी की ॥

ये वह आजादी है जिसके हित जो लक्ष्मी बाई की ।

समरगिन में लड़ते लड़ते जिसने गोली खाई थी ।

तात्या टोपे, मङ्गल पांडे ने भी प्राण नवाया था ।

साकी है इतिहास उम्होंने जो जोहर विलसाया था ।

किन्तु वहाँ कुछ कारण थे जिससे असफलता पाई थी ।

सुनो माइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥१

किन्तु सभी से ही भारत को स्वतन्त्रता का चेत हुआ ।

साच साच ही बयानम्ब स्वामी का भी सकेल हुआ ।

सुभाष, नेहरू, पटेल, गाँधी जैसे वंश लाल हुये ।

जिनके द्वारा स्वतन्त्रता के कालिद त्याग बिसाल हुये ॥

ज्ञान न किसको त्याग तपस्या सुभाष, नेहरू गाँधी की ।

सुनो माइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥२

इसीलिए आजाब चन्द्रसेखर गोली से छूने हैं ।

नवतसिंह भी इसीलिये फाँसी पर झूला झूके हैं ।

जीवन भर बाबू सुभाष विस्तरा बंध कर घमे हैं ।

अमरगिन अमर शहीदों ने फाँसी के तबते चूमे हैं ॥

अमर रहेगी इतिहासों में कथन कहानी फाँसी की ।

सुनो माइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥३

कितने जाल मरे कितनी माताओं की गोबी लूटी ।

कितनी प्राण प्यारियों की निज प्यारों से संगति छूटी ।

इसीलिये कितनी विधवाओं का सोभाग्य सुहाय नहीं ।

हाहाकारों से कितनी बर जली कई दिन ज्ञान नहीं ॥

ऐसे जाल मरे जिनकी ही पाई केवल साधी थी ।

सुनो माइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥ ४

छोड़ विदे कितनों ने पलंगे गद्दे बाहर बिछे हुए ।

बध-ब्रधन छोड़े कितनों ने रंग-बिरंगे बने मये ।

★

कितनों ने परिवार तक बिना अब कितनों ने नौकरियाँ ।

तेलों में सर गये खवाखव पहन हाथ में हथकड़ियाँ ॥

★

इसीमिये ही तो नेहक भी ने न दूसरी मावी की ।

सुनो भाइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥५

सोचो कितने कष्ट उठाकर यह आजादी पाई है ।

★

कितनों ने इसकी बेबी पर अपनी अँट चढ़ाई है ।

★

कितनों ने अपने सोनित से इसका राज्यमिचेक किया ।

बिखलाया खोरख तपस्या त्याग एक से एक किया ॥

साबरकर ने सही इधी हिल बिपया काले पाने की ।

सुनो भाइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥६

●

ऐसी स्वतन्त्रता को पाकर इसकी रक्षा करना है ।

★

रहना होगा 'प्रेम' मेल से नहीं परस्पर लड़ना है ।

नहीं, नहीं तो हूर निकट ही थे बिन फिर आ सकते हैं ।

फिर बिदेस के बादल आकर भारत में छा सकते हैं ।

कीन करेगा त्याग तपस्या फिर सुभाव या गाँधी जी ।

सुनो भाइयो क्या कीमत है भारत की आजादी की ॥७

★

★

★ प्रेमनारायण 'प्रेम' गङ्गा जमुनी (बहराइच)

[पृष्ठ १९ का लेख]

सुब रहे हो तो उठ जाइ हो, और अपना जमकीला तक भड़कीला मासा लेकर रावन की लज्जा को भस्मीभूत कर दो । इसमें कुछ भी सम्बेह नहीं, कि हमारी विजय पताका छतार के सचोँख सिंहर पर लहरायेगी । हिमा-लख और बिम्बाखक की गुफाओं में आज भूबकर बँठ जाये धावे महारमाओ । अट्टेय सप्यासियों आप बाहर आइये और मिटते हुये धर्म की रक्षा कीजिये । प्यार के भीतों की जनकार सुनाने वाले कबियों । अपनी लेखनी को हिन्दुओं में स्वधर्माभिमान जगाने के लिये समर्पित कर दो । राष्ट्र के करोड़पति महाबनों । आप बिवास मजाना छोड़िये और हिन्दू-धर्म के प्रचारार्थ मुक्त हस्त ले

वन प्रदान कीजिये । यह भारत माँ की आबाज है, यह एक बुकी मासा की पुकार है, यह हिन्दू धर्म व भारत की जिन परीक्षा का काल है । आज हमारा धर्म अतरे में है, बाय का कले आम हो रहा है, माँ नेटियों का भील अतरे में है । नोजबानों ! करबट बदलो ! आयों ! एक हो जाओ । नेताओ मिल जाओ ! "सबे सक्ति कलौपुते" अब हम इच्छे होकर एक साथ कबल बढ़ायेंगे या एक साथ मिलकर काम करेंगे, तनी हमारी बगिया में बस्तानी स्वर में कीयस जी गुनगुनाकर कहेगी—

"सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्ताँ हमारा ।"

और सारा सारा फिर से एक स्वर में कहेगा डि—

"यही कूड़ भारत एक है हमारा" ★

सुभाव और सम्मतियाँ अन्न संकट दूर करने का सरल उपाय

तम्बाकू की खेती बन्द हो

काछ समस्या को हल करने के लिये भारत सरकार अपने वृद्धिकोष में परिवर्तन करे। सरकार अपनी नीति डब से निर्धारित करे, ऐसा कबम उठाये कि तम्बाकू की खेती बन्द कराकर अनाज पैदा किया जाय, जिससे जो अन्न की हाव-हाय सची हुई है वह बन्द हो जाये और सरकार जो लाखों करोड़ों रुपये का अन्न विदेशों से खरीवाती है, वह भी बरेशानी से बचे और देश का पैसा भी देश में रहे। जिससे अन्न और चाहे की कमी नहीं रहेगी और सब मनुष्य या जानवर अपना जीवन सुखमय बितायेंगे। करोड़ों रुपयों की विदेश से अन्न खराने में हाति हो रही है। तम्बाकू पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिये जिससे इस धन की बचन हो सके, यदि कानून द्वारा तम्बाकू की खेती पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय तो लाखों एकड़ भूमि में जहा आज तम्बाकू खेती वाली कहीं और हातिकारक चीज बोई जाती है। वेह जो चना, मक्का, बाजरा आदि बोया जाय जिससे देश की अन्न की समस्या बहुत कुछ हल हो सकेगी।

सिगरेट बीडी का प्रचार रोकना जाय तम्बाकू की खेती बन्द हो, तम्बाकू से बच्चों, बूढ़ों अवालों की बीडी सिगरेट पीने की जो बुरी आदत पड गई है जो मनुष्य के लिये बड़ी हातिकारक चीज है, वह छूट जाय।

आज देश में बीडी और सिगरेट का प्रचार बहुत बढ रहा है जिससे नवयुवकों का स्वास्थ्य गिरता है और लर्बा बढता है, लाखों रुपयों की हाति होती है। और बीडी के प्रचारकों का जगह जगह पर लाडकपै करों द्वारा नाच-गाकर प्रचार करने पर प्रतिबन्ध लगाया जाय ताकि लडके उसके बुरे परिणामों से बच सकें।

—रामचन्द्र आर्य सिद्धान्त रत्न

कोषाध्यक्ष आर्यसमाज कायमगज, फर्रुखाबाद (उत्तरप्रदेश)

बृहदधिवेशन के लिए निमन्त्रण-पत्र मेजिए

बिहित हो कि प्रवेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के आवासी बृहदधिवेशन के स्थान व तिथि नियत करने का विषय समा की आवासी अन्तरङ्ग में बिचारस्थीन है।

अत प्रवेशीय आर्य समाजों से निवेदन है कि जो आर्य समाज अपने यहाँ बृहदधिवेशन को आयोजित करना चाहें, वे, स्थानीय आर्यसमाज की अन्तरङ्ग समा से स्वीकृति लेकर समा कार्यालय में निमन्त्रण पत्र अन्तरङ्ग सभा के निरन्धय सहित भेजने की कृपा करें।

—प्रेमचंद्र शर्मा, सभामंत्री

आर्यजगत्

बरेली नगर में-
आर्यप्रतिनिधि समा
उत्तरप्रदेश की अन्तरंग
सभा का अधिवेशन

माननीय श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री सभा प्रधान को (१७८०) रु० भेंट तथा अभूतपूर्व स्वागत



आर्य समाज बिहारीपुर बरेली के निमन्त्रण पर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की अन्तरङ्ग सभा का अधिवेशन १२ जनवरी १९६९ को बरेली नगर में अभूत पूर्व समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री बिष्णुभाविः श्री डॉ. बसन्त मुख्य उपमन्त्री कार्यालय के साथ ११ जनवरी को बरेली पधारे। आपके स्वागतार्थ स्टेशन पर कायकर्त्ता पहुंचे हुए थे। इस सारे आयोजन की रूपरेखा श्री बा. चन्द्र-नारायण जी बकील ने बनाई थी। आर्यसमाज बिहारीपुर के प्रधान श्री मन्मथजी आर्य ने जो एक परिवार परम्परागत आर्य हैं और नगर के बनी मानी व्यक्ति हैं, कुछ हुल्ल से सारे स्वागत पर अपने पाश से लगनग एक हजार रुपया व्यय कर दिया। जो भी अन्तरङ्ग सबस्य बरेली पधारे उमका कहना यह था कि बालीस वर्ग के अन्धर ऐसा स्वागत समारोह हमने अन्तरङ्ग सबस्यो का अभ्यस नहीं देखा।

आर्य समाज का जो हाल अन्तरङ्ग सभा के अधिवेशन के लिये सन्नाह या बा बहु सारे नये सामान से कोंच मस-नूच, लैंकनों आदि से देखा प्रतीत होता था, जैसे साही बरनार ही। यह सारा सामान इसी काम के लिए खरीदा गया था। श्री मन्मथजी की यह हुच्य तरङ्ग की कि

जितना धन मेरा ध्यय हो जावे, पर काम सब साम-वार हो।

(सभा प्रधान का स्वागत)

सभा प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री बम्बोली की ओर से आने वाली ट्रेन पर १० बजे बरेली पहुंचने वाले थे। इसीलिए श्री मन्मथजी ने सारे नगर में समाचार फंला दिया, और फूलों में लकी एक कार सभा प्रधान के स्वागतार्थ बरेली बरकशन की ओर बली और नगर का सब थोठ बंध स्टेशन पर पहुंचा और सब आर्य समाजों के व्यक्ति स्टेशन पहुंचे। पर यह मानकर और निराशा हुई, कि श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री एक दिन पूब राति को ३ बजे ही बरेली पहुंच गये हैं इसलिये सब लोग जो स्टेशन पर गये बंध और बाबाओं के झालो छड़ रह गये। श्री प० प्रकाशवीर जी ने अपने पहले पहुंचने पर स्पष्टी करण को प्रस्तुत करते हुये कहा कि आश्चर्योचय आय माइयो मे साथ कहता हू कि प्रुत जैसे छोटी आयु वाले का स्वागत नहीं करना चाहिए। यह स्वागत समारोह मनुष्य को बियाड़ सकता है, और मेरा आरम्भिक कोषन है, अत मेरे स्वागत प्रबन्ध में जो आय को कष्ट और निराशा हुई, उसकी मैं क्षमा मांगता हूँ। सभा प्रधान के इस स्पष्टी करण पर आर्यसमाज बिहारी-पुर बरेली के प्रधान स्वागतारक्षक श्री मन्मथजी आर्य आर्य माइयो के झालों में प्रियाधु थे, और निराशा के स्थान पर सब आर्य माइयो के झालों में सभा प्रधान की प० प्रकाशवीर जी के प्रति बलि डेन आश्चर और औरथ आश्चर्ये तथा।



(सभा प्रधान जी का आध्यात्मिक प्रवचन)

श्री प० प्रकाशवीर जी ने आते ही प्रातः १० बजे साप्ताहिक अधिवेशन की बेसी वर बँट कर जो आध्यात्मिक प्रवचन किया उससे सारी जनता पर यह प्रभाव पड़ा कि राज सभा और राजमञ्च से अद्वितीय राजनीतिक समस्याओं पर बोलकर अहाँ पाश्चिमायेंट को चकित हमारे प्रधान कर सकते हैं, वहाँ हमारे सभा प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी साहसे अद्वितीय आध्यात्मिक प्रवचन जो कर सकते हैं ।

इस अवसर पर आर्य समाज बिहारपुर बरेली के मन्त्री श्री अलकौलाल जी आर्य ने जो यज्ञ रचना की व्यवस्था की थी वह भी अपूर्व थी । आर्य के सहयोगी उपमन्त्री श्री ओम्प्रकाश जी आर्य थे, और ब्रह्मा के ब्राह्मण पर श्री आचार्य विश्वम्भवा जी सार्वभौमिक सभा निर्धारित पद्धति से यज्ञ करा रहे थे, और चारों बेशों के मन्त्रों का पुष्क पुष्क स्वर ने उच्चारण किया रहे थे ।

अन्तरङ्ग सबन्धों के स्थागत और मोजन की व्यवस्था

११ ता० से अन्तरङ्ग सबन्ध आने प्रारम्भ हो गये । श्री मन्त्रगुप्त जी ने इस प्रकार की व्यवस्था की कि प्रत्येक समय सब पदार्थ सबके लिए पयेष्ट विद्ये जावें । सबके ऊपर की व्यवस्था श्री डा० रघुमन्थकृष्ण जी सत्यवत के स्पेष्ट हुज्र श्री बा सत्यम्भवा जी के निर्देश से श्री सुधार महाविद्यालय में हुई, जहाँ उनक कर्मचारी भी उपस्थित रहे ।

जो व्यवस्था की होइल वालों ने तरल मध्य प्रातराज की व्यवस्था की और मध्याह्न मोजन श्री बा० चन्द्रनारायण जी को कोठी पर ऐसा हुआ कि स्तुति समस्त अन्तरङ्ग सबन्ध करते थे । इसीसे और सुम्बर मोजन और किसानों का प्रकार व्यवस्था सब ही उवाहरण के योग्य थी ।

अन्तरङ्ग सबन्धों को भेंट

सर्व ५ बजे श्री मन्त्रगुप्त जी की कोठी पर जो पदार्थ अन्तरङ्ग सबन्धों को किसानों के किसानों की

ही निरासी थी । सब अन्तरङ्ग सबन्धों और बरेली नगर के आर्य भाइयों तथा सम्जागत मागरियों का यह सम्मिलित सहभोज था, जिसमें लैंकडों श्वेतिक सेस्तास सहभोज वर एल पदार्थों का कर रहे थे । भोजनोपरास्त श्री मन्त्रगुप्त जी ने सब अन्तरङ्ग सबन्धों को एक सुम्बर ट्रे जो लवणय बस दपडे मूल्य की भी मय सभा कार्यालय के कार्यकर्ताओं को भेंट की और एक सुम्बर कलाई की तस्तरी प० बिहारौलाल जी के सुपुत्र श्री अरविन्दलाल जी एम० ए० की ओर से भेंट में सब अन्तरङ्ग सबन्धों और सभा कार्यालय के लोगों को भी गई ।

सभा प्रधान की भेंट और अभिनन्दन पत्र

बा० चन्द्रनारायण जी ने यह अनुभव किया कि सभा कार्यालय नारायण स्वामी भवन लखनऊ में महारवा नारायण स्वामी जी का कोई चित्र नहीं है, और सभा प्रधान का बंध पहले चाँची का होता था, अब कपड़े का लगाया जाता है ।, जत. तीन चीजें तयार कराई गई । १-चाँची का मध्य बड़ा बंध, २-महारवा नारायण स्वामी जी का बड़ा सुम्बर रवीन चित्र और ३-श्री प० प्रकाशवीर जी साहसे का सुम्बर रवीन चित्र । बरेली आर्यसमाज के प्रधान श्री मन्त्रगुप्त जी आर्य ने तीनों चीजें शिल्प के निर्माण पर ३५५५ आठ ७० १५५५ १५५५ रुपये, सभा प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी साहसे को जूते अविशेषक में सब पर भेंट किए, और चाँची का बंध सभा प्रधान के लगाया और बहुत कमकी एक सुम्बर हार गले में पहनाया । उस समय प० प्रकाशवीर जी की सोना देखने योग्य ही थी । चारों ओर से आवाज बधता ने की कि इसको पहने ही सभा प्रधान बँडे रहें, पर श्री प० प्रकाशवीर जी ने बबड़ा कर उसको उतार कर रख दिया और कहा मुझ पर क्या करो ।

श्री मन्त्रगुप्त जी ने सभा प्रधान को कुछ धन अर्पण किया, लखनऊ आर्य भाइयों ने नगर के आर्यसमाजों ने और श्री लखन तथा सत्समाजों के अधिकारियों ने भेंट की जो १७५०० प० हो गया । जिसका विवरण जगल में दिया है । वह भी श्री सुम्बर आज रेलक के बने में सभा प्रधान को भेंट को और साथ ही एक अभिनन्दन पत्र



पुस्तकाकार रूप की प्रकाशनीयता की कार्यक्षमता विहारोपुर बरेली के मन्त्री जी ने पढ़ा और मंत्र किया, जिस अभिमान्य पत्र में महर्षि के बरेली में आने और सेंट लसोनारायण जी की कोठी पर ठहरने और श्रद्धेशाही माध्यमिका को बरेली में रचना समाप्त करने का संकेत था। साथ ही इस अभिमान्य पत्र में महात्मा नारायणस्वामी जी, स्वामी चट्टानन्द जी आदि का इतिहास बरेली नगर में बताते हुए बरेली के उन महान् व्यक्तियों का वर्णन किया कि किस प्रकार डा० चन्द्रनारायण जी के पुत्र पिता स्व० डा० प्रमनारायण जी रहस्य ने अपनी भूमि और सम्पत्ति बेकर इस नगर में लक्ष्माजी का सुनवात किया और स्व० श्री डा० श्यामस्वरूप जी सत्यमत में सत्यमम चाओस स्वभावों का विस्तार इस नगर में किया, जिसने अनेक इन्टर कालिख सङ्केत-सङ्कियों के इस नगर में हैं यह सारा श्रेय श्री डा० श्यामस्वरूप जी को है कि उनके पुत्र ने बरेली नगर श्रेय में एक प्रांतीय समा के रूप में रखा है। इस अभिमान्य पत्र में यह भी बताया गया है कि वत्तमानकाल में श्री बाबंभगत के नीम विसामह प० विहारो-लाल जी सास्त्री काव्यतीर्थ सास्त्रार्थ महारथी तथा श्री आचार्य विश्वम्भवाः जी व्यास एम० ए० वेदाचार्य जी प्रथम उदा-हरण इस बात के हैं कि सरकार ने जिन्हें बनारस संस्कृत यूनिवर्सिटी की ऐश्वरी क्यूटिव कौंसिल का मेम्बर चुना अभी तक आर्य विद्वानों में से सरकार ने किसी को नहीं चुना था। कीर्ती छात्रिणी देवी जी द्वारा प्रतिहास साहित्या-चार्य एम० ए० आदि अनेक विद्वान् इत

गुरुकुल वृन्दावन का महोत्सव

१४, १५, १६ फरवरी को होगा

समस्त आर्यजनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का ६२ वां वार्षिक महोत्सव तिथरात्रि के अवसर पर बिनोब १४, १५, १६ फरवरी ६९ को मनाया जा रहा है। इस अवसर पर संस्कृत सम्मेलन, प्राय सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा-सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन आदि आदि सम्मेलन सम्पन्न होंगे। १६ फरवरी ६९ को रविवार के दिन नववनातकों का समावर्त्तन समारंभ तथा बोधोन्मत्त समारोह भी होगा। बोधोन्मत्त भाषण के लिये भारत सरकार के उपप्रधान मन्त्री माननीय श्री मुन्दाजी जी वेलाई से प्रार्थना की गई है। उनके नवारने की पूर्ण सम्भावना है शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिये भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री माननीय डा० श्री त्रिगुण्डेन जी की स्वीकृति प्राप्त हो गई है। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता के लिये मन्त्रीय श्री इन्द्रकुमार जी मुन्दाजी सभार मन्त्री भारत सरकार के जाने की सम्भावना है। इसके आतिथिक वेत के अग्रगण्य माध्य मेला तथा आर्य सत्याधी विद्वान् स्वाध्याय तथा महोपदेशक भी पचार रहे हैं।

इसी अवसर पर मन्त्रीय सास्त्री का प्रवेश होगा। श्री महानुभाव अपने बालकों को प्रविष्ट कराना चाहें तो गुरुकुल सावीर्य से प्रवेश नियम प कार्य मगालें। श्री उज्ज्वल पुस्तक आदि की इच्छान ज्ञाना चाहें तो गुरुकुल कार्यालय को सूचित कर दें।

आशा है कि आर्यजनता संप्रतिवत होकर भाषायानों तथा उपदेशों से लाभान्वित हो सकेगी।

—नरदेव स्नातक एम० पी०
पुष्पाभिष्ठाता
गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन (मथुरा)



नगरी में आज भी विद्यमान हैं।

सभा प्रधान की स्मृति में साक्षिण साहब की कबिता बड़ी काव्य पुर्ण थी।

इस अमिनगहन पत्र के बाद जनता की करतलध्वनि और जय के नारों के मध्य सभा प्रधान भी प० प्रकाशवीर की शास्त्री नायक प्रारम्भ करने उठे। सब को मग्यबाद देने हुए अरेली नगर की प्रससा करके समा प्रधान को प० प्रकाशवीर जो शास्त्री ने इस बात को साक्षिण्यमान जनता के समझ रखा कि बरखी नगर ने एक और अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया है कि जो काशी के बिद्वान् लिपिकों को संस्कृत पढ़ाने के विद्यार्थी थे, वेद पढ़ाने की तो कथा ही क्या, वहाँ भी आचार्य विरबधवा जी की धम परमी धीमती देवी शास्त्री ने उन्ही काशी के पण्डितों से सतार ने प्रधानवार सेवाधाय की उपाधि ग्रहण की और सब प्रथम रहकर इनपवक राज्यासल के हाथों से ग्रहण किया और कसी नरेश और श्रीआविश्य नायका जावि का आशीर्वाद प्राप्त किया। ये धीमती देवी जो को पुण्य हार भेंट करते हुए बधाई देता है। समा प्रधान के ऐसा कहने पर प० बिहारीलाल जो शास्त्री ने जो उनके पिता जो क साक्षियों ने ले हैं, धीमती देवी जो के मले मे माला हक्य ही डालकर आशीर्वाद दिया।

समा प्रधान ने आने नायक को प्रस्तुत रखते हुए कहा कि राजनैतिक सचवायें बहु शक्ति नहीं रखती जो शक्ति सही के अनुयायी रखते हैं। भावने उन देशों का वर्णन किया जहाँ आर्य समाज ने मुसलमानों को सुख करके

स्वर्गीय पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय की स्मृति विरस्तायी हेतु ट्रेक्ट विभाग का नाम

गंगाप्रसाद उपाध्याय ट्रेक्ट विभाग

आर्यसमाज चौक इलाहाबाद हो गया

इस अवसर पर उनकी लिखित पुस्तकें तथा हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी ट्रेक्ट सन्ने बागों पर बिक रहे हैं—पुस्तकों का नाम भीमता प्रवीर, वेद व मानव कल्याण, उपदेश सत्यक, इस्लाम के दौरक (हिन्दी), इस्लाम और आर्यसमाज हिन्दी व उर्दू कर्मकम सिद्धांत (हिन्दी व उर्दू), आस्तिकवाद, जीवार्थमा, अर्द्धतवाद, जीवबचक, धर्म लक्ष की कसौटी पर। क्या वैदिक-काल में गोर्वात खाया जाता था (ट्रेक्ट मूल्य २० पंसा) सध्या क्या क्यों कंने? अंग्रेजी, Light of Truth, Reason & Religion, I & my God worship, Vedic Culture Philosophy of Dayanand christianity in India and origin scop of mission of Arya Samaj.

१००) रुपये कीमत पर २० प्रतिहत कमीशन
२००) " " पर २५ प्रतिहत कमीशन

★आर्यसमाजों को कुछ ट्रेक्ट आधे दाम पर बिये जावेंगे।

★विद्यार्थी तथा अध्यापक वर्ग को विशेष छूट

बुजमोहनलाल प्रबन्धक

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय ट्रेक्ट विभाग
आर्यसमाज चौक इलाहाबाद

सफेद बाल से निराश क्यों ?

सतत परिश्रम और खोज के बाद सुसम्पित आधुनिक "चे हारक" केस तेल हरी जड़ी बूटियों से बनाया गया है। यह बालों को सखेद होने से रोकता है और सखेद बालों को काले बालों में बदलने में मदद करता है। हमारों प्रससा पत्र मिल चुके हैं। यदि आप बालों को काला रेशवा चाहते हैं तो एक बार अवश्य परीक्षा करें। मूल्य ९.२० एकत्र तीव्र खीची २५०।

नोट—यह विभाग की तरफ से बना रकता है।

पता:—समाज कल्याण-५५

प० कसरी सराय (मया)



समझाया कि तुम्हारे पिता को कब्रों में नके हूँ उनको हड्डियों को निकालो और बड़ाबल बिक्रमको तब ये स्वर्ग में जा सकोगे। यह बताकर आर्यों ने कबरस्तान तक जग्गी के हाथों से उलझवा दिये। आपने 'मारिसल' का भी वर्णन किया जो कार्यसमाप्त के प्रमाण से आज हिन्दू स्टेड के रूप में है। समा प्रधान ने लिसकों के शक्तिपूर्व माण्डोलन और सकलता पर उन्हें बचाई ही और छात्र वर्ग को अनुशासन में रहने का सन्देश दिया कि यदि यह प्रथा डालोगे तो चन्द्र ही बिनो में तुम अन्धायक ऋषि बनोगे और इसी अनुशासन हीनता को भुगतोगे। आपने परिवार नियोजन के भी विषय कहा कि इससे हिन्दू किसी समय अल्पमत में इस देश में हो जायेगा। हिन्दू कोड बिल और परिवार नियोजन से दुबोनों हिन्दू जाति के लिए घातक हैं। हजारों की संख्या में बरेली नागरिक समा प्रधान के भावक को मग्न मुग्न होकर सुन रहे थे। भावक के परचात् समा प्रधान वेहली बले गये।

समा प्रधान को विये घन का विवरण

- १७०) स्वयं की बंसी समा प्रधान को को अंत की गई। उसका पृथक-पृथक विवरण इस प्रकार है।
- १०१) कार्य सभी समा प्रधान विहारीपुर बरेली
- १०१) आ०स० कार्यनगर सूक्ष्म बरेली
- ११) निवा 'उपसभा' बरेली
- ११) कार्यसमाप्त कंस बरेली
- १२१) श्री डा० लनेवा की बरसं इस्तर
- १) काश्चित् समाप्रधान बरेली की ओर से

ऋषि बोध पर्व पर सदैव की भांति

श्राय्यमित्र

का

जागृति विशेषाङ्क

रविवार १६-२-६६ को प्रकाशित होगा।

इस विशेषांक की विशेषताएँ

★ चाराप्रवाह वेद कथा, वेद मन्त्रो पर आधारित प्रकृति बोध, आत्म बोध तथा ऋह्य बोध कराने वाली विशेष रचनाएँ आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध विद्वानो की लेखनियो से—
विशेषांक का मूल्य ?

★ विशेषाङ्क से लाभ उठाने के लिए पत्र विक्रेता तथा अन्य विशेषांक प्रेमी अपनी प्रतियाँ शीघ्र ही सुरक्षित कराएँ।

★ विद्वान् लेखकों से प्रार्थना है कि वे अपनी रचनाएं शीघ्र भेजने की कृपा करें।
—सम्पावक

निराश रोगियों के लिए स्वर्ण अवसर

सफेद दाग का मुफ्त इलाज

हमारी "दाग सफा दूनी" से सत प्रतिशत रोगी सफेद दाग से बर्गा हो रहे हैं। यह इतनी तेज है कि इसके कुछ दिनों के सेवन से दाग का रंग बदल जाता है, और शीघ्र ही हमेशा के लिये मिट जाता है। प्रचारार्थ एक फायल दवा मुफ्त ही जायेगी। रोग विवरण लिखकर दवा शीघ्र मगा लें।
पता—जी लक्ष्मण कार्बन्सी नं० ४, पो० कतरी सराय (गया)



१५१) कार्य पुत्री कन्या इन्टर कालिक
बिस्फी की ओर से प्रिन्सिपल द्वारा
जुन ६०६) इस प्रकार प्राप्त हुआ और

११७४) कार्यसमाप्त बिहारपुर
बरेली: की व्यवस्था है, हुआ, जिसका
पुनर्विचारण इस प्रकार है।

१०१) श्री मन्मथजी जी आर्य

१०१) श्री राधेश्याम जी शंकर

१०१) श्री सेवाराज जी

१०१) श्री लक्ष्मण प्रसाद जी

५१) श्री जगदीशप्रसाद जी

तोपकाने वाले

५१) श्री नानकचन्द्र जी चण्डी वाले

५१) श्री काशीनाथ जी सेठ

५१) श्री प्रेमनाथ जी कपड़े वाले

५१) श्री पं राधेश्याम जी के पौत्र
श्री बिरबनाथ जी

५१) श्री त्रिलोचनसिंह जी

७१०) योग

५६४) कार्यसमाप्त बिहारपुर में और
संप्रह किया

१७७०) कुल उस समय समाप्त
की की भेंट किया गया।

श्री मन्मथजी जी आर्य ने इस सारे
कार्योत्थान पर एक सहस्र रुपये तो अपने
पास से व्यय कर दिया। यह अन्तरङ्ग
समा का अविद्येय प्रयुक्तरीय या
अन्य नगर भी इस पथ पर चलें तो
कार्य प्रतिनिधि समा उत्तर प्रदेश भारत
के सबसे बड़े संगत की सत्सहायो समा
बन जाये।



दयानन्द-सप्ताह

श्रद्धि बोध-पत्र १५ फरवरी को मनायें

उत्तर प्रदेशीय सबसे कार्यसमाप्त एवं कार्य रूप प्रतिनिधि समाजों की
विधित हो कि इस वर्ष महा शिवरात्रि वर्ष १५ फरवरी १९६९ को पढ़ रहा
है। अतः समा ने निरवय किया है कि "दयानन्द सप्ताह" दिनांक ९ फरवरी
के १५ फरवरी १९६९ तक उत्तर प्रदेश में उत्साहपूर्वक नून-दान के साथ
प्रवाया जाए। सप्ताह का कार्यक्रम श्री आर्यनाथ के मागामी अर्थों में उच्चा-
तित किया जायेगा। अतः कार्य समाजों को चाहिए कि इस सप्ताह का कार्य
अन्य विदेश उरलास के साथ मनाये का पुरोचन बनाने की कृपा करें।

—प्रेमचन्द्र शर्मा, समा मन्त्री

हिमालय के हेर
आँवलो से निर्मित,
विटामिन 'सी' तथा
लोह से भरपूर



गुरुकुल
काँगड़ी
का

व्यवन प्राश



शक्ति संचय के
लिए आज से
ही सेवन करें

गुरुकुल काँगड़ी फार्मसी, हरिद्वार.

अमृत वर्षा

महर्षि दयानन्द ने कहा था-

राज सभासद् और मन्त्री

कैसे होने चाहिए ?

★

राज्यकाल स्वयंसेवक में उत्पन्न हुए, वेद-विद्याशास्त्रों के ज्ञानने वाले शूरवीर, जिनका लक्ष्य अर्थात् विचार निष्कल न हो और कुलीन, अच्छे प्रकार सुपरीक्षित सात व आठ उलम धार्मिक चतुर "सचिवायन" अर्थात् मन्त्री करे ॥ १ ॥ क्योंकि विशेष सहाय के बिना जो सुगम कार्य है, वह जो एक के करने में कठिन हो जाता है, जब ऐसा है तो महान् राज्य कार्य एक से कैसे हो सकते हैं ? इसलिये एक को राजा और एक की बुद्धि पर राज्य के कार्य का निभार रखना बहुत ही बुरा काम है ॥ २ ॥ इससे समापत्ति को उचित है कि नियम-प्रति इन राज्यकार्य में कुशल विद्वान् मन्त्रियों के साथ सामान्य करते किसी से (सचिव) निवृत्ता किसी से (विपरीत) विरोध (स्वयं) स्थिति समय को देखके चुपचाप रहना अतः राज्य की रक्षा करके बँटे रहना (समुदयम्) जब अपना उदय अर्थात् बुद्धि हो तब बुद्ध शत्रु पर चढ़ाई करना (गुप्तम्) सूत्र राजतेना कोय अर्थात् रक्षा (सम्भवजामनानि) जो-जो देश प्राप्त हों उस-उस में शांति स्थापन उपद्रव रहित करना इन छः गुणों का विचार नियम-प्रति किया करें ॥ ३ ॥ विचार से करना कि इन समासों का पृथक् पृथक् प्रवृत्त-प्रवृत्त विचार और अन्विष्टाय को सुनकर बहुपमानुसार कार्यों में जो कार्य अपना और अन्य का हितकारक हो, वह करने लगना ॥ ४ ॥ अथ को परिभाषना बुद्धिमान्, निश्चित बुद्धि, यद्योको के सपह करने में अति चतुर सुपरीक्षित मन्त्री करे ॥ ५ ॥ जितने मनुष्यों से राज्य कार्य सिद्ध हो सके उतने वासस्व रहित बलवान् और बड़े बड़े चतुर प्रधान पुरुषों को अधिकारी अर्थात् मोकर करे ॥ ६ ॥ इनके आधीन शूरवीर, बलवान्, कुलीन, पवित्र मूर्खों को बड़े-बड़े कर्मों में और जोक करने वालों को भीतर के कर्मों में नियुक्त करे ॥ ७ ॥ जो प्रसन्नित कुल में उत्पन्न चतुर, पवित्र, हावभाव जो (वेध्या से भीतर हृदय और अविष्यत् में होने वाली बात को जानने द्वारा सब शास्त्रों में विस्तारव चतुर है, उस दूत को भी रखे ॥ ८ ॥ वह ऐसा हो कि राज काल में अत्यन्त उत्साह प्रीतिपुत्र निष्कपटी, परिभाषना, चतुर बहुत समय की बात को भी न सूझने वाला, देश और कान्तामुक्त वर्तमान का कर्ता, सुन्दर कपयुक्त, निर्भय और बड़ा बलता हो वही राजा का दूत होने में प्रसन्न है ॥ ९ ॥

अ प्रथम ज क संस्थापक—

महर्षि दयानन्द सरस्वती



जो न हटा मुखफर बड़ा जीवन भर आग,
जिम्का माहस हेर विघ्न भय सकट भाग ।
सबल सत्य की हार, अनून की जीत न होगी
ऐसे प्रबल विचार सहित बिचारा जो योगी ।
इस दयानन्द ऋषि राज का प्रकृत पाठ जनता पढ़
प्रम'शकर आयसमाज का बरिदक बल गौरव बढ ।

श्री गणेशाय नमः

वार्षिक मूल्य १०) विशेष में १ पौण्ड]

[इस प्रति का मूल्य ५० पैसे

वर्ष]

पब्लिशर—रविशार प्वा० बंशाख ६ भाग १८६४, जेड्डेड कू० १० नं० २०३०, अक]

७४

दि० २७ मई १९२३ ई० वयानन्दाब्द १५६ म म १६७२६४६०७४

२० २१

सामूहिक पूजा विधान

ओ३म् । सहस्रं साकमर्चत परिष्टोभत विशन्ति ।

शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ऋ० १।८०।६

(सहस्रम्) हजारों (साकम) इकट्ठे, एक साथ (अर्चत) पूजा करो, विशन्ति) बीसवें एकत्र होकर (परि स्तोभत) चारों ओर स्तुतिगान करो। और (ब्रह्मोद्यतम्) ब्रह्मवर्चायुक्त (स्वराज्यम्) स्वराज्य का (अनु+अर्चन्) योग्य सत्कार करते हुए (शता) सैकड़ों। इन्द्राय) ऐश्वर्य के लिए (एनम्) इनको (अनोनवु) प्रणाम करने हैं।

पूजा दो प्रकार की होती है—एक वैयक्तिक, दूसरी सामूहिक—वैयक्तिक पूजा एकगत स्थान में होती है। सब चिन्तायें हटाकर प्रातः सायं भगवान की आराधना करना, उसके आगे निष्कण्ठ भाव से अपनी दुर्बलतायें, खूटियाँ कहना, उससे उनके अशाकरण के लिये बल मांगना, प्राणायाम, धारणा, ध्यान समाधि का अनुष्ठान, ईश्वरप्रणिधान आदि सब वैयक्तिक पूजाएँ हैं। वैयक्तिक पूजा से पूजा करने वाले व्यक्ति का सत्कार होता है, उसके मन और आत्मा का परिष्कार होता है। इस प्रकार से सस्कृत तथा परिष्कृत मनुष्य समाज-सेवा के लिये तय्यार होता है।

द्वितीय प्रकार व्यक्ति के सत्कार तथा परिष्कार के लिये वैयक्तिक पूजा—स्तुति प्रार्थना उपासना अर्चना की आवश्यकता है, वैसे ही समाज के उद्धार के लिये, समाज के सुधार के लिये सामूहिक प्रार्थना पूजा अनिवार्य है। सामूहिक पूजा से समूह में बल आता है। सादे स्थापना का मन एक करने का, विचार आचार एक करने का यह सर्वोत्कृष्ट साधन है।

जैसे एक व्यक्ति-आस्तिक ध्यायुक्त व्यक्ति-पूजा के समय साफ सुथरे उज्ज्वल वस्त्र पहनता है, उसी भाँति सामूहिक पूजा के समय सबके वस्त्र उजले हों, साफ सुथरे और धूले हों। सबके मन में उमंग हो। सब एक स्वर होकर जब संसार में आन्दोलन उठाते हैं, तो कुठार-कठोर सरकार भी मान जाती है। यदि हजारों एक मन से, एक स्वर से कल्याणकालय के आगे अपना मनोभाव रखेंगे, तो वह अवश्य उसे पूरा करेगा। उसका तो स्वभाव ही है, अपने भक्तों की कर्मनीय कामनाओं को सतत पूरा करना। अतः वह स्वयं आवेश करता है—

सहस्रं साकमर्चत—हजारों मिलकर पूजा करो।

इससे स्वराज्य—ब्रह्मोद्यत स्वराज्य—का सत्कार होगा।

सम्पादकीय

आर्य समाज स्थापना शताब्दी मेरठ—

आर्यसमाजोद्भव

मूर्धाव वयानन्द ने विश्व के अज्ञान तमस को नष्ट कर ज्ञान सूर्य का प्रकाश करने के लिये अठान्धे वर्ष पूर्व आर्य समाज की स्थापना की थी।

आर्य समाज—सूर्य ने विश्वगयन में सध्याप्त धुन्ध, अन्धड और तूफानों को अपने प्रखर प्रभाव से नष्ट कर सत्तर मे ज्ञान-ज्योति का प्रकाश फैलाया।

पोपलीला, पाखण्ड, ऊँच नीच, अन्धविश्वास, रुढ़िवाद, शूद्र वर्ग का बलन, स्त्री समाज का उत्पीडन, विदेशी धर्मों का कुप्रचार आदि ऐसे कार्य थे, जिनके निराकरण के लिये आर्यसमाज ने भोषण-सघर्ष किया बलिदान दिये, आर्यजनो ने अपने व्यक्तितगत जीवन को आर्य समाज के लिये उत्सर्ग कर दिया। देश में विचार-स्वातन्त्र्य विचार-मन्यन, स्वाधीनता, सस्कृति आदि की उदात्त भावनायें हिलोरें मारने लगीं और स्वाधीनता की प्रबल आकांक्षा के फलस्वरूप इण्डियन नेशनल कांग्रेस की आर्य समाज के बस वर्ष बाव स्थापना हुई।

आर्य समाज की स्थापना के द्वाद्वे वर्ष के पश्चात् हमे सिंहावलोकन करना है कि आर्य समाज कहीं से चला था और आज कहा पहुच चुका है। आर्यसमाज संगठन के सबसे बड़े केंद्र उत्तर प्रदेश के आर्य ग्रन्थुओं को इस बात का सौभाग्य और गौरव प्राप्त है कि उन्होंने आर्यसमाज स्थापना शताब्दी की भूमिका के रूप में मेरठ में शताब्दी समारोह का आयोजन किया है। इस आयोजन ने एक बार फिर सत्तर का ध्यान आर्य समाज की

अगला अंक बन्द रहेगा !

इस विशेषांक के पश्चात् ३ जून का अंक आर्यमित्र शताब्दी समारोह के कारण बन्द रहेगा। अब १० जून का अंक पाठकों की सेवा में पहुचवेगा। एजेण्ट और पाठक नोट कर लें। —अधिष्ठाता

और आकृष्ट कर दिया है।

देश मे और समस्त विश्व मे आज एक भोषण सकट उत्पन्न है जिसे नैतिकता का सकट कहा जा सकता है।

आर्य समाज को इस बात का गर्व है कि उस का आधार और व्यवहार नैतिकता पर आश्रित है। और सत्तर के इस सकट को आर्य समाज के धैर्यिक सवेश द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है।

अमेरिका के एन्ड्रु जॉन्सन ने आर्य समाज को अज्ञान अन्याय-अभाव के नाश की व्यापक मट्टी बताया था, और आज उनका कथन सत्य हो रहा है। आर्य समाज के विश्वश्रष्टापी स्वरूप को समझने के लिए आवश्यक है कि उसके नियम 'सत्तर का उपकार करना इस समाज का मध्य उद्देश्य है' को समझना चाहिये। जब तक सत्तर की समस्यायें रहेगी, आर्य समाज की आवश्यकता रहेगी। इस सत्य को आज सबसे अधिक गम्भीर-तापूर्वक स्वीकर किया जाना चाहिये।

आर्य समाज के पूर्व और साथ की सस्यायें आज लुप्त हो चुकी हैं, पर आर्यसमाज का प्रचार प्रसार बढ़ रहा है। इस वृद्धि को स्थाई रूप देने और आर्य समाज के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देने के लिए मेरठ में शताब्दी समारोह हमे नवीन प्रेरणा दे रहा है। आशा है आर्यजगत् मेरठ शताब्दी की प्रेरणओं को हृदयगम कर आर्य समाजोदय के लिये दृढ़ सकल्प लेगा। *

—स्नातक

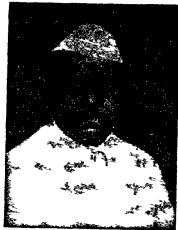
मेरठ शताब्दी समारोह के लिए देश के विशिष्ट पुरुषों के सन्देश व शुभ-कामनायें

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का संदेश



“उत्तर प्रदेशीय आर्य समाज शताब्दी के लिए मेरी शुभकामनाएं स्वीकार करें।

—इन्दिरा गांधी



की स्थापना कर लोगों को अपने विचारों पर आचरण करने के लिए प्रेरित किया। यह खुशी की बात है कि इस सस्था के कार्यकर्ताओं ने महिला-शिक्षा, अछूतोंद्वारा जेमे कार्यक्रम हाथ में लेकर स्वामी जी के कार्यों को पूर्ण करने का भर-सक प्रयत्न किया।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अधश्चढा में विश्वास रखने वाला और इसी कारण बुराइयों को भी रुढ़ि मानने वाला एक बड़ा वर्ग समाज के पुनरुत्थान के लिए रोड़ा था। इसको दृष्टि में रखकर स्वामी जी ने तथा आर्य समाज ने वेदों और धार्मिक ग्रन्थों का सही अर्थ जनता को सम-ज्ञाने का जो कार्य किया वह नि सन्देह प्रशस्तनीय रहा है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि शताब्दी समारोह के अवसर पर हिन्दी, अंग्रेजी और कुछ प्रमुख भाषाओं में वेदों का अनुवाद कराने का सकल्प किया गया है। मेरी शुभकामनाएं

—यशवन्तराव चव्हाण

[२]

वित्त मन्त्री, भारत
नई दिल्ली

दिनांक ५ मई, १९७३

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश द्वारा आर्य समाज शताब्दी महोत्सव २५ मई से मनाया जा रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। धर्म के नाम पर समाज में शताब्दियों से चली आ रही अन्यायी कुप्रथाएँ नष्ट कर समाज के पुनरुत्थान के लिए कार्यरत सस्था की शताब्दी एक विशेष महत्त्व रखती है। स्वामी बयानन्द सरस्वती जैसे निर्भीक सपत्नी ने इन बुराइयों को दूर करने के लिए अपना जीवन अर्पित किया था और आर्य समाज

[३]

राज भवन, बगलौर
२८ अप्रैल १९७३

प्रिय प्रकाशवीर जी,

आपका ता० १५ अप्रैल का पत्र मुझे प्राप्त हुआ। मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि आर्य समाज शताब्दी समारोह बड़े उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। भारत की जनता में सांस्कृतिक और सामाजिक चेतन्य पैदा करने में आर्य समाज का बहुत बड़ा हाथ रहा है, इस बात से कोई भी व्यक्ति अपरिचित नहीं है। बहुत से क्रान्तिकारी कार्यक्रम जो स्वामी ब्यानन्द जी ने अपने जीवन काल में हाथ में लिये, उनसे सामाजिक रुढ़ियों को तोड़ने में बहुत बड़ा बल मिला है। मेरा स्वयं का जीवन आर्य समाज से बहुत कुछ सम्बद्ध रहा है, इसलिए मुझे और भी ज्यादा उत्साह होता है कि शताब्दी समारोह उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। मैं इस समारोह की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूँ। आपका—

मोहनलाल सुखाडिया

[४]

राज भवन, लखनऊ
अप्रैल ३०, १९७३

मुझे यह जानकर हर्ष है कि आर्य प्रतिनिधि समा ने प्रान्त में तीन वर्ष तक आर्य समाज शताब्दी समारोह सम्पन्न कराने का निश्चय किया है, जिसका प्रथम समारोह आगामी २५ मई को मेरठ में माननीय राष्ट्रपति जी, श्री बी० बी० गिरि ने उद्घाटन करना स्वीकार कर लिया है।

आर्य समाज ने अनेक सामाजिक कुरीतियों और समय के प्रतिकूल परम्पराओं को हटाने की दिशा में प्रशसनीय कार्य किया है तथा मैं शताब्दी समारोह की सफलता हेतु अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

—अकबर अली खाँ

[५]

राजमवन, भोपाल-३
४ मई १९७३

हार्दिक प्रसन्नता की बात है कि आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश द्वारा आर्य समाज शताब्दी समारोह का आयोजन किया जा रहा है।

राष्ट्रीय पुनर्जागरण आन्दोलन को विशा प्रदान करने में आर्य समाज ने अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। वैदिक साहित्य के प्रचार के साथ ही देश में प्रचलित धार्मिक धर्मियाँ और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जनमत जाग्रत करने में, आर्य समाज ने प्रशसनीय सफलता अर्जित की थी।

आशा है शताब्दी समारोह का आयोजन हमारी प्राचीन सस्कृति के श्रेष्ठ आदर्शों और सिद्धान्तों को चरितार्थ करने के लिए नई प्रणाली और उत्साह का सृजन करेगा।

मैं समारोह की सफलता की कामना करता हूँ।

—सत्यनारायण सिंह
राज्यपाल, उच्च प्रदेश

[६]

मूल्य मन्त्री, भोपाल।

मुझे यह जानकर हर्ष है कि आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश ने तीन वर्ष तक अपने प्रान्त में आर्य समाज शताब्दी समारोह मनाने का निश्चय किया है और प्रथम समारोह दिनांक २५ से २८ मई तक मेरठ नगर में होने जा रहा है।

समाज सुधार तथा शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज की सेवाएँ बहुमूल्य रही हैं। प्रचलित वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध इसने प्रारम्भ से ही बड़ा संघर्ष किया है, और समाज के सदस्यों से उपेक्षित व शोषित एक बहुत बड़े वर्ग के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मैं समारोह की सफलता की कामना करता हूँ।

—प्रकाशचन्द सेठी

आर्य समाज धार्मिक तथा राजनैतिक क्रान्ति की तैयारिया करे

आज से ६७वें वर्ष पूर्व स्वामी ब्यागम्ब सरस्वती ने बेश मे धार्मिक पाखण्ड दम्प और गृहदम की रेतोमी वीवारो को सत्य की ठोकर मार कर हिला विघा था। एक समाचार पत्र ने स्वामी ब्यागम्ब का बडा ही आत्षक बिज प्रकाशित किया था। उसमे पाखण्ड को शेर के रूप में दिखाया गया और सामने लगेट बन्द ब्यागम्ब हाथ मे एक छोटा-सा डण्डा लेकर शेर पर झपट रहे हैं।

इस बिज को देख सासामन्ब किसोर मेहूरा ने, एक बन्विता का बन्व लिखा—“उधर था शेर पाखण्डो इधर डण्डा सचाई का, न छाया था ऋषि ने खोफ झूठी जन हसाई का।”

महर्षि ने वेद को आधार मानकर भारतीय एव विदेशी विद्वानों की छम मूलक धारणाओ पर तर्क प्रमाण एव बुद्धि गम्य आक्रमण करके धार्मिक जगत् मे एक जबरदस्त क्रान्ति का सूत्रपात किया—और प्राचीन वैदिक मर्यादा की स्थापना करके आर्य बिचार धारा के प्रचार और प्रसार के लिए आर्य समाज की स्थापना करके भावो पोढ़ी के लिये १० नियमों को आधार बनाकर देशवासियों को आध्यात्मिक आधिभौतिक एव आधिदैविक सुख और शान्ति की प्राप्ति के लिये माग बंशन किया।

आर्य समाज ने अनेक कार्यक्रमों को अपनाकर देशवासियों की भारी सेवा की है, किन्तु आज धार्मिक एव राजनैतिक पाखण्डो जन सामान्य को छोडा बेकर अपना उल्लू सीधा करने की नई-नई योजनाएँ बना रहे है, ऐसी अबस्था मे आर्य समाज को जागरूक प्रहरी की तरह अपने आपसी भेद भाव मूलाकर एक मञ्च पर सगठित होकर इन सभी पाखण्डों का निराकरण करने की तैयारी करे

—रामगोपाल शालवाले

मुस यह जगनकर बडो प्रसन्नता हुई कि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश आर्य समाज शताब्दी महोत्सव के उपलक्ष में सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर मेरठ मे आर्य महा सम्मेलन का आयोजन कर रही है। सौ वर्ष की इस सुवीर्ध अवधि में आर्य समाज ने स्वदेश और स्वधर्म के लिए जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया, उसके मूल्यांकन का समय आ गया है। आर्य समाज के कार्य की प्रगति देने में उत्तर प्रदेश सभा से ही अग्रगण्य रहा है। आशा है कि महा सम्मेलन भविष्य में भी अधिक स्फूर्ति और उत्साह के साथ हमे वैदिक धर्म और आर्य सस्कृति की सेवा करने की प्रेरणा देता रहेगा। मैं महा सम्मेलन की सफलता की कामना करता हूँ। —श्रीकरण शारदा, मन्त्री

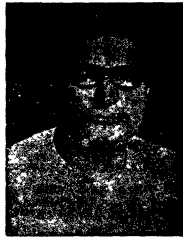


आर्यसमाज की स्थापना शताब्दी के उपलक्ष में भावी कार्यक्रम पर कुछ सुझाव

[श्री प० शिवकुमार जी शास्त्री सतत् सबस्य लोक-समा]

गत एक शताब्दी में आर्य समाज ने अपने युगान्तरकारी विचारों से सामान्यतया समस्त भारत के बुद्धिजीवी वर्ग में, और विशेषकर उत्तर भारत में एक वैचारिक और सामाजिक क्रान्ति को जन्म दिया है। यद्यपि धार्मिक क्षेत्र की रुढ़िगत बुराईयों और गुरुद्वेष, नये-नये रूप धारण कर के जनता को अपनी जकड़ में लेने के लिए इस समय भी सचेष्ट हैं। इस समय भी कुछ तथाकथित बाल-योगेश्वर को दिव्यपरिचय जैसी ब्रूकान, आनन्द माग और ब्रह्माकुमारी जैसा कदाचारपूर्ण पन्थ भारत में बिखराने हैं। इस समय भी कहीं-कहीं नरबलि जैसे जघन्य काण्ड होते दिखाई दे जाते हैं। फिर भी यदि सारी परिस्थिति का पूरा विश्लेषण आप करें, तो बहुत बड़ी जागृति साम्प्रदायिक सत्तार में आई है। अपनी इस स्थापना की पुष्टि में दिल्ली में भारत भर के सनातनो विद्वानों द्वारा जनुबेद पारायण यज्ञ का सम्पन्न होना और सनातनियों के मूर्धन्य सन्यासी श्री गणेश्वरानन्द जी द्वारा श्रीमती इन्दिरा गांधी से वेद की स्थापना करवाना जैसी अनेक घटनाओं का उल्लेख किया जा सकता है।

वैसे जनता में अज्ञान और निहितस्वायंजन्य बुराईयों के उन्मूलन के लिए निरन्तर उसी प्रकार प्रयास जारी रहना चाहिए, जैसे किसान अपनी फसल से विजातीय द्रव्य घास कूड़े की सफाई के प्रयास करता है। यदि किसान एक बार सफाई करके निश्चिन्त हो जाये तो यह उसकी भूल है। कुछ समय के बाद ही उस भूमि में घास कूड़ा



श्री प० शिवकुमार जी शास्त्री

फिर पैदा हो जाता है। उन्नी प्रकार मन्त्रिचारों के प्रचार की प्रक्रिया भी सतत चलती रहनी चाहिए, अन्यथा वे ही बुराईयाँ फिर जड़ जमाने लगेंगी। शास्त्रकार ने बहुत ही पते की बात कही है। उपदेशोपदेशदृष्टवात् सत् सिद्धिरितरधान्ध परम्परा (सांख्यदर्शन)। अर्थात् समाज को बुराई से बचाने के लिए सद् विचारों का प्रचार जारी रहना चाहिए। इस प्रचार में गिथिलता आते ही अन्ध परम्परा प्रचलित हो जायगी। इस समय भी बुराई का उभरती बीछती है, उसका कारण भी यही है कि अच्छे विचारों के प्रचारक नहीं मिलते। बुराई का प्रचार सब ओर है और उसकी तुलना में अच्छाई के प्रचारक बहुत कम हैं। परिणाम यह होता है कि अच्छे विचार सब जाते हैं, और वे अक्षय में नहीं आ पाते। इसलिए वेद तो

‘विश्वे देवास्तो अधिबोधता नः ।’ प्रत्येक विचारशील व्यक्ति को अलछाई के प्रचारक बनने की बात कर्ता है ।

किन्तु इसके साथ ही हमें यह बात माननी चाहिए कि आर्य समाज के प्रचार में भी इस समय एक प्रकार की अड़ता आ गई है । विद्वान् सहाचारी और निष्ठावान् नये प्रचारक आर्य समाज को उपलब्ध नहीं हो रहे । धर्मप्रचार की धुन को लेकर जीवन समर्पण करने वालों का सर्वथा अभाव होता जा रहा है । इस स्थिति के कई एक कारण हो सकते हैं । यथा—(१) देश का वातावरण राजनीति प्रधान और भोगाभिमुख हो गया । (२) धर्म प्रचारकों की जो प्रतिष्ठा और पूजा होनी चाहिए । वह महात्मा भृगोराम और महात्मा हसराम के बाद आर्य समाजियों में नहीं रही । कुछ अपवादों को छोड़कर उन्हें भी एक वैतनिक कर्मचारी मात्र समझा गया, और उसी स्तर पर उनके साथ व्यवहार किया गया । (३) एक धर्म प्रचारक और सामाजिक कार्यकर्ता का स्तर भी पैसे से आंका जाने लगा । शादी विवाह और दूसरे अवसरों पर लोग उनसे भी धनियों के समान प्रदर्शन और लेन देन की अपेक्षा करने लगे । मेरे विचार में ये मुख्य कारण हैं । जिनसे यह स्रोत सूख गया । अब तक ये बातें नहीं थीं—आर्य समाज का प्रचारक हथेली पर सर रखकर प्रचार कार्य करता रहता था । न उसे अपनी सुख-सुविधा का ध्यान था, न अपने बाल बच्चों के आराम का ? गृहस्थ उपदेशकों की उस समय की चर्चा को देखकर एक आर्य समाज के प्रचारक ने लिखा था कि ‘पति के रहते हुए विधवा कोई देखनी हो तो उपदेशक की स्त्री को देख लो । और माता-पिता के होते हुए अनाथ देखने हों तो उपदेशक के बालकों को देखो ।’ किन्तु उस समय प्रचार की धुन में और नये-नये ओश में यह गाड़ी चलती

चली गई ।

आधी शताब्दी के बाद प्रचारकों के मन में क्षोभ उत्पन्न हुआ । उनको यह बात चुभने लगी कि हम न तो अपने परिवार के साथ न्याय करते हैं, और न हमारे लिए आर्य समाज के नेता और अधिकारियों के मन में ही आबरू है—धीरे-धीरे इस घुटन का प्रभाव हुआ, और प्रचार के क्षेत्र में मिशनरियों की कमी होने लगी, और अब ऐसा प्रतीत होता है कि आगामी कुछ ही वर्षों में उपदेशकों का वह क्रम समाप्त हो जायगा । कुछ आर्य समाज के अधिकारी इसकी पूर्ति के लिए उपदेशक विद्यालय खोलने की बात कहते हैं । कुछ स्थानों पर उपदेशक विद्यालय खोलकर देख भी लिये गये, उनमें कोई छात्र प्रविष्ट होने ही नहीं आया । इसके अतिरिक्त हमारे सामने सबसे प्रभावशाली पुराने संस्थान दयानन्द उपदेशक विद्यालय और ब्राह्म महाविद्यालय के उदाहरण हैं । आर्य समाज के प्रचारक तैयार करने के लिए इस संस्थाओं को खोला गया था । किन्तु परिणाम लगभग शून्य कार्यक्षेत्र में अबतक हुए उनके स्नातक अनुपात में २ प्रतिशत भी नहीं है ।

इस स्थिति में आर्य समाज के सामने एक महान् और गम्भीर प्रश्न है । ऋषि दयानन्द ने अपने गुरुतर वायित्व का उत्तराधिकारी एक किसी शिष्य को न बनाकर एक समाज और एक संगठन को बनाया था । ऋषि को अपने उत्तराधिकारी से क्या आशा थी, यह सत्यार्थ प्रकाश के ऋषि के निम्न शब्दों से आंकी जा सकती है, जिसमें ऋषि देशवासियों को आह्वान करते हुए कहा था कि ‘देश को कुछ बनाना है तो आर्य समाज के साथ मिलकर काम करो ।’ (सं. प्र० ११ मनु०)

देश की वर्तमान स्थिति को देखकर आर्य समाज निम्न प्रकार से अपने भावी कार्यक्षेत्र का

विभाजन कर सकता है।

यद्यपि धर्म के नाम पर हुई बुराइयों की कटुता इस समय भी शिक्षित क्षेत्र में अतिशयता से व्याप्त है फिर भी यदि यहुराई से विचार करेंगे तो मनुष्य की हृद्य गुहा में उसके मूल सत्कार अब भी सुरक्षित है। अब भी प्रगति के नाम पर सरपट दौड़ने वाले और बिज-रात भ्रम-मत्तान्तरों के स्थान पर धर्म के नाम से उसकी आलोचना करने वाले नेता अपने लोक परलोक के सुधार के लिए अबसर पाते ही कुछ तथाकथित धार्मिक काम कर ही लेते हैं। फिर भी वह समय दूर नहीं है—जब इंग्लैंड और अमेरिका के लोगों की तरह लोग भोगों से विरक्त होकर धर्म की ओर आकृष्ट होंगे। ऐसे व्यक्तियों को उस समय ठीक मार्ग पर डालने की योग्यता आर्य समाज के अतिरिक्त और किसी में नहीं है। ऐसे व्यक्तियों को धर्म का वह परिष्कृत रूप प्राप्त् होगा जो बुद्धि और हृद्य दोषों को तुष्ट कर सके। ऋषि कणाद के शब्दों में—यतोऽभ्युद्ययनि श्रेयस् सिद्धि सधर्म 'अर्थात् बुद्धि पूर्वक उन कामों का चुनाव करो, जिससे इस लोक में ऊँची से ऊँची स्थिति प्राप्त कर सको। किन्तु इन कामों का धरातल इतना सार्विक और यथमय हो कि इनका परि-णाम निःश्रेयस् अपवर्ग का साधक हो। यदि जिज्ञासुओं को धर्म का यह स्वरूप नहीं मिलेगा तो फिर क्रिया और प्रतिक्रिया चलती रहेगी।

धर्म के इस स्वरूप के प्रचार के लिए जैसा कि ऊपर कहा गया है अब, आर्यसमाज को प्रचार नहीं मिलेगा। किन्तु इस क्षति को आर्यसमाज (कार्यनिवृत्त) रिटायर्ड कुछ जोड़त वाले व्यक्तियों को उचित दीक्षा देकर पूरा कर सकता है। इसके लिये उसे अपनी शक्ति पुनस्त लगा देनी चाहिए। आर्य समाज के शिक्षापालकों में और विशेष कर

युवकुलों में इन धानप्रश्नों को टूट करना चाहिए। सामान्य सिद्धान्त ज्ञान से लेकर उच्चकोटि के वास्तविक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। जिसमें अपनी उच्च और क्षमता के अनुसार प्रशिक्षार्थी लाभ उठा सके। प्रचार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य बहुत अच्छा बन्ता हो—अपितु बात नीत के माध्यम से विचार विनिमय पूर्वक किया हुआ प्रचार कहीं अधिक प्रभावशाली और फलदायक होता है। प्रचार का सर्वोत्तम प्रकार शुद्ध व्यवहार पूर्वक सद्विचारों का प्रकाशन है और उसमें ये धानप्रश्न अवश्य सफल हो सकते हैं।

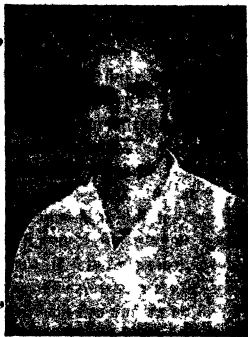
आर्यसमाज के वर्तमान विद्वानों में कुछ बौद्धिक साहित्य के मर्मज्ञ हैं। कुछ दशनों में निष्णात हैं, और कुछ एक शास्त्रार्थ के क्षेत्र में अनुभवी हैं। इन सभी विद्वानों का विषयवार कार्य विस्तृत करके काम करना चाहिए। व्यवस्था पूर्वक इन विद्वानों के एक एक क्षम का उपयोग होना चाहिए। कुछ समय के लिए इन कार्य को सबसे पहले नम्बर पर रखना होगा। क्योंकि हमारे विद्वानों में से अधिकांश 'पके पात' हैं—बया पता कब वायु का झोका आये और कब टहनी से झड़ पड़े। और जीवित भी रहे तो फिर कार्य क्षमता भी रहेगी? यह सविश्व है।

इनके अतिरिक्त एक तीसरा प्रयोग भी आर्य समाज को करना चाहिए। वह है बयानन्द सेवा धर्मों की स्थापना करके अस्तित्वालों के द्वारा जनता की सेवा। निश्चित ही यह एक महान् कार्य है और इससे आर्य समाज का ठोस प्रचार भी होगा और उसके गौरव की बुद्धि होगी। इस माध्यम से आर्य समाज जनता का ध्यानमात्र बननेगा। मुझे विश्वास है कि आर्यसमाज के सुधी विचारक इन बातों पर मनन करेंगे, और इनकी क्रियाविधित के लिये सक्रिय सहयोग देंगे। **

आर्यसमाज पिछले सौ वर्ष में इतिहास के मुख्य मोड़ों पर

[श्री प० प्रकाशवीर जो शास्त्री प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश]

आर्य समाज की स्थापना १८७५ में हुई। यह समय वह था, जब अंग्रेजी राज के विषट्ट भारत में एक सशस्त्र क्रान्ति होकर चुकी थी। १८५७ की उस क्रान्ति को प्रारम्भ में तो अंग्रेज केवल सैनिक विद्रोह ही समझते रहे। कलकत्ते के पास बेंगलूर में और दिल्ली के पास मेरठ में देश की अजादी के लिए भारतीय सैनिकों ने जो हथियार उठाये उसे अंग्रेज अन्त तक गबर ही कहते रहे। पर यह ही वह समय था जब झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, तारया टोपे, नाना फडनवीस, बामुदेव बलवन्त फडके, और कुवर्सिंह जैसे वीरों ने अंग्रेजों को भारत से बाहर निकालने के लिये देश में कई जगह क्रान्ति का शखनाब किया था। कुछ इतिहास वेनाओं का तो कहना यह है—वेशी रियासतों में भी यदि उम समय इनका साथ दे दिया जाता या फिर अंग्रेजों का साथ ही केवल न दिया होता तो भी भारत २० वर्ष पहले स्वतन्त्र हो जाता। लेकिन उम अधूरी क्रान्ति में भी इतना तो बरकर किया, देश में स्वाधीनता के लिए एक नई जागृति पैदा हो गई। उसके कुछ वर्षों बाद ही कांग्रेस का जन्म हुआ। पर कांग्रेस के जन्म से भी वस वर्ष पहले आर्य समाज की बुनियाद पक्क बूकी थी। कांग्रेस के जन्म से स्वराज्य का जो शब्द १९०६ में सबसे पहले सुनाई पड़ा स्वाधीन दायानन्द ने १८७५ में ही सत्याग्रह प्रकाश और दूसरे छत्र छत्रों में



श्री प० प्रकाशवीर जो शास्त्री

उसकी व्यापक रूपरेखा दे दी थी। स्वराज्य की व्याख्या करते हुए स्वामी जी ने यह भी लिखा—स्वराज्य यदि सुराज्य न हुआ तो वह प्रजा की सुखी नहीं रह सकेगा।

भारतीय राजनीति में आर्य समाज और उसके नेताओं का योगदान अपना विशेष ही स्थान रखता है। गरम बल हो चाहे गरम बल दोनों और ही आर्य समाजी कार्यकर्ता अच्छी सख्या में



दिखाई देते थे। चौबीस वर्ष की उमरती जबानी में जिस व्यक्ति (स्वामी इयानन्द) ने १८५७ के अत्याचार अपनी आँखों से देखे हों उसके द्वारा स्थापित संगठन में अंग्रेजी राज की उखाड़ फेंकने की तड़प न हो यह जला कंठे संभव था। सशस्त्र क्रांतिकारियों की तो एक पूरी पीढ़ी ही आर्य समाज से नहीं। कांग्रेस के मन्त्र पर एक ओर जहाँ स्वामी अह्दानन्द, लाला लाजपतराय, चौधरी रामधनदास, जाई परमानन्द और लाला देवबन्धु मुप्ता आदि आर्य समाज की नेता दिखाई देते थे, क्रांतिकारियों में इयान की कृष्णा बर्मा, लाला हरबयाल, मदनलाल हींगरा से लेकर सरकार भगतसिंह और रामप्रसाद बिस्मिल आदि काकोरी केस के कई प्रमुख सहोदों का प्रेरणास्रोत भी आर्य समाज था। रामप्रसाद बिस्मिल ने तो अपनी आत्मकथा में लिखा है—साहजहापुर आर्य समाज में जब एक सम्पात्ती के माध्यम में मैंने यह सुना—जाई परमानन्द को फाँसी दी जायगी, तो मेरा खून खौल उठा। उसी समय मैंने यह निश्चय कर लिया जब तक उनके बचले में दस अंग्रेजों को अपने हाथ से नहीं उड़ाऊँगा, तब तक खून से नहीं बँटूँगा। उसके बाद ही फिर मैंने बंगलों में रह कर रिवास्वर चलाने की ट्रेनिंग ली। हिंसा और अहिंसा दोनों ही मार्गों से देश को आजाद कराने वाले ऐसे देशभक्तों के लिए उन दिनों आर्य समाज मन्दिर और आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं अज्ञातबास का केन्द्र बनी हुई थीं। सरकार भयत-सिंह कलकत्ता की कार्नेवालिस स्ट्रीट आर्य समाज में महीनों तक अपना अज्ञातबास व्यतीत करते रहे। लाला लाजपतराय की गिरफ्तारी के बाद अंग्रेजों ने आर्य समाज के साप्ताहिक सरासों में अपने गुप्तचर भेजने प्रारम्भ कर दिये। डी० ए०

बी० कालेब लाहौर के रजिस्ट्रारों की बहुत बारीकी से छानबीन कराई गई। उत्तर प्रदेश के मधुबनी साई मेस्टन ने तो गुप्तकुल काँगड़ी की जमीन खुदबाकर इसलिये बेबी—कहीं इसके नीचे सहजानों में बम तो नहीं बनाये जा रहे हैं। कांग्रेस के मन्त्र से जो बात नहीं कही जा सकती थी, वह आर्य समाज के मन्त्र से धर्म प्रचार के बहाने आसानी से कही जा सकती थी।

साई मैकाले ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा द्वारा काले अंग्रेज तैयार करने की एक व्यापक योजना बनाई थी। उस योजना को भी आर्य समाज ने ही उन दिनों चुनौती दी। शिक्षा तो उन दिनों लगभग न के बराबर हो थी। जो कुछ थोड़ी बहुत थी भी उसका उद्देश्य सरकारी दफ्तरों के सायक बनकं तैयार करना था। मैकाले इसी को धोड़ा और आगे बढ़ाना चाहता था। उसने अपने एक सचिवजी को भेजे पत्र में लिखा—मैं अंग्रेजी के माध्यम से भारत में ऐसी शिक्षा पद्धति प्रारम्भ करने लगा हूँ, जिससे ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें और भी अधिक गहरी बनी जायगी। रंग रूप में तो जरूर यह लोग भारतीय होंगे, लेकिन हृदय और मस्तिष्क से अंग्रेज होंगे। पर उस बेचारे को यह क्या पता था—भारत में एक ऐसे संगठन का उदय हो चुका है, जो तेरे स्वप्न भंग भी कर सकता है। आर्य समाज ने उन्हीं दिनों इयानन्द एंग्लो बेबिक कालेब और मुसकुलों की नींव डाली। धर्म शिक्षा को छोड़ कर हम डी ए. बी. कालेजों की पाठविधि बूते कालेजों बँधी ही थी। पर उनकी पृष्ठभूमि में भारतीयता कूट-कूटकर बरी हुई थी। उच्च आधुनिक व्यवस्था पर आधारित मुसकुलों की पाठविधि, उपाधि आदि सब कुछ अरनी थी। सरकार से एक भी पैसा लिये बिना

यह राष्ट्रीय संस्वायें बलाई गईं। बी० ए० बी० कालेजों में अंग्रेजी पर अधिक बल दिया गया, और पुस्तकालों में संस्कृत पर। दोनों पद्धतियों से चलने वाली इन शिक्षण संस्थाओं में माध्यम हिन्दी को ही रखा गया। हिन्दी उन दिनों देश को एकता के सूत्र में बांधने का माध्यम ही केवल नहीं थी, अपितु राष्ट्रीयता की सन्देश बाहिका भी बन गई थी। अकबरजी राजगोपालाचार्य ने तो दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना के समय समबतः इसीलिए गांधी जी से कहा भी-यों न हिन्दी का नाम बदलकर स्वराज्य भाषा रख दिया जाय। प्रारम्भ में कांग्रेस के मन्त्र पर भी बरसों तक अंग्रेजी छाई रही। स्वामी भद्रानन्द जब अमृतसर कांग्रेस के स्वागतार्थ्य बनने, और अपना स्वागत भाषण उन्हीं हिन्दी में पढ़ा तो सब दंग रह गये। हिन्दी में भी इतना जानदार भाषण हो सकता है, यह कल्पना ही कितो को नही थी। क्योंकि उससे पहले तो इस राष्ट्रीय मन्त्र पर भी हिन्दी को अछूत ही समझा जाता था।

भारत में और बाहर भी कुछ लोग ऐसे हैं, जिन्होंने निकट से आर्य समाज को नहीं देखा वह अब तक इसे पन्थ या सम्प्रदाय ही समझते हैं। जैसे भारतवर्ष पन्थों और सम्प्रदायों के लिए है, बड़ी उपजाऊ धूमि। हो-चार चले-चली मूडकर अपने चमत्कारों को बलाली प्रारम्भ करवा दीजिये बस फिर पौधारे हैं। न जाय कर का झण्ट न बिकी कर का लफड़ा। धर्म की आड़ में जो चाहे करो, कोई पूछने वाला नहीं। मामूली लोगों ने भी जब अपने नामों पर मत और सम्प्रदाय चला दिये, तो स्वामी दयानन्द जैसे तेजस्वी और विद्वान् साधु के लिए तो यह आर्य ह्राथ का खेल था। वह भी एक दयानन्द पन्थ आसामी से चला सकते थे।

पर स्वामी जी तो पन्थ के नामों से चल नहीं पहली बुझाओं को ही बन्द कराने आये थे। वह भला कोई नया पन्थ कैसे चड़ा कर सकते थे। वास्तविकता यह है-आर्य समाज न कोई धर्म है और न पन्थ। वह तो धर्म की आड़ में जो बुरा-इयाँ देस में पनप रही थीं, उनको मिटा कर धर्म का सीधा और सच्चा स्वरूप बताने वाला एक प्रगतिशील सगठन है। यह भी ठीक और वह भी ठीक की राजनीति आर्य समाज से कौनों दूर रही है।

जन्म से अस्त-वात, बाल विवाह, वृद्ध विवाह, छुआछूत और महिलाओं को शिक्षा से बचित रखना आदि बहुत सी ऐसी बुराइयाँ उन विनों थीं, जो समाज को घुन की तरह छाये जा रही थीं। विधवाओं का पुनर्विवाह और अन्तर्जातीय विवाह की आवाज जब आर्य समाज ने उठाई तो सबसे पहले हिन्दुओं ने ही उसका विरोध प्रारम्भ किया। और तो और जिनके उद्धार के लिए आर्य समाज उन बड़ी जातियों का कोप भाजन बना, उन नाई, घोबी, कहार और दूसरे पिछड़े वर्ग ने भी उनके घरों में काम करने से इन्कार कर दिया। पर धीरे-धीरे समय ने करबट बबली और उन्हें समझ आती गई। लेकिन जगत् से जब किसी तरह छुटकारा मिला, तो मुस्ला-मौलवी और पादरियों ने आ घेरा।

अब तो लगता है, आर्य समाज केवल हिन्दुओं के सुधार के लिये ही बना है, पर स्वामी दयानन्द की इच्छा थी-भारत में रहने वाला हिन्दू मूल-मान, ईसाई चाहे जो हो उनमें जो सामाजिक या धार्मिक बुराइयाँ प्रवेश कर गई हैं, उन्हें दूर किया जाय। स्वामी जी ने अपने जीवनकाल में इसीलिए दो बार सर्व धर्म सम्मेलन भी बुलाये। एक



सम्मेलन में तो जो शाहजहाँपुर जिले के चाँदापुर मेले में हुआ, सर सैयद अहमद खान और पादरी विलियम भी सम्मिलित हुए थे। धर्म के कौन से सिद्धान्त सही हैं, इसकी युक्ति और तर्क की कसौटी पर कसने के लिये सार्वजनिक सभाओं में शास्त्रार्थों का प्रारम्भ भी आर्य समाज ने किया। उन दिनों शास्त्रार्थों की बाढ़-सी आ गई थी। कहीं पौराणिकों से कहीं मुसलमानों से और कहीं ईसाइयों से शास्त्रार्थ हो रहे हैं। कोई बड़ा उग्रमथ आर्य समाज का उन दिनों ऐसा नहीं होता था, जहाँ शास्त्रार्थ न हों। धर्मवीर पंडित लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द, पंडित गणपति शर्मा, पंडित धर्मभिक्षु, पंडित रामचन्द्र बेहलवी, देवेन्द्र माधव शास्त्री आदि अनेकों उच्चकोटि के विद्वान् और सत्यासो वेष में चारों ओर घूम-घूम कर शास्त्रार्थ का चलञ्ज सा बंटे फिरते थे। उग्र मुसलमानों में मौलवी सनउल्लाह ईसाइयों में पादरी अबुल हक और सनातन धर्मा विद्वानों में पण्डित अखिलानन्द आदि शास्त्रार्थों के लिए तैयार रहते थे। पंडित लेखराम, महाशय राजपाल, स्वामी भद्रानन्द आदि कई आर्य समाज के नेताओं का तो बलिवान भी इसी चक्कर में हुआ। छोट बड़ सब मिलकर छियासी आर्य समाज के नेता उन दिनों मारे गये। इन शास्त्रार्थों से देश भर में जहाँ आर्य समाज का जाल-सा फैलता चला गया, वहाँ अग्रविश्वसियों और कुरीतियों की जड़ें हिलने में भी बड़ी मदद मिली। सर्वथा तो वह बुराई अभी तक भी नहीं गई। पर जिन बुराइयों को मलाई नमक कर समाज छिपटा हुआ था, उनसे उसकी आस्था खरक हट गई।

ब्रिटिश सरकार तो आर्य समाजियों की देश-भक्ति, साहस और निष्ठा से भली भाँति परिचित ही थी। उसे पता था इन्हें छेड़ने का परिणाम

महंगा बँडेगा। इसीलिए वह चुप थी। पर कुछ देशी रियासतों ने अपने मजहबी अनुन में आकर आर्य समाज से दो तीन जगह छेड़छाड़ की। बस फिर क्या था—शहद की मक्खियों के छत्ते में हाथ लगने की बेर थी। चारों ओर से सब टूट पड़े। पटियाला, लोहारू हैदराबाद की रियासतें उन्हीं में से थीं। पटियाला में सत्यार्थ प्रकाश पर लग प्रतिबन्ध को हटाने के लिये उन दिनों एक सत्याग्रह भी हुआ। पर कुछ ही दिनों में वहाँ के राजा को भ्रष्टार्थ आ गई और उसने अपना आदेश वागिस से लिया। लोहारू के नवाब की ओर कुछ न सूझा तो आर्य समाज के जलूस पर ही पाबन्दी लगा दी। भला आर्य समाजो हमें क्या मानने वाले थे। उन्होंने खूब धूमधाम से अपना जलूस निकाला। परिणाम में गोलियों भी चर्नों और इण्डे भी पड़े पर अपना अधिकार लेकर वह रहे। १९३६ में हुआ हैदराबाद का सत्याग्रह तो भारत ही नहीं विश्वेशों में भी चर्चा का विषय बन गया था। लगातार ही मन्त्रीने तक देश भर से स्पेशल ट्रेनों में सरकार सत्याग्रही जाते रहे। निजाम हैदराबाद जो भी नई जेल बनवाता उससे अगले दिन फिर दुगुने सत्याग्रही पहुँच जाते। अन्त में थक कर अपने खुनी जेलों काटदार तार लगाकर बनवाईं। धार्मिक स्वतन्त्रता पर पाबन्दी लगाकर दूसरा औरंगजेब बनने का जो स्वप्न वह ले रहा था उसकी वह हैकड़ी धरी की धरी रह गई। आर्य समाज के इस सत्याग्रह को देखकर गांधी जी ने कहा था—नितना मयम, अनुशासन और जनता के एक एक पैसे का सही हिमाव इस सत्याग्रह में मैंने देखा, उतना दूसरे किसी भी सत्याग्रह में मैंने देखने को नहीं मिला। पीछे हैदराबाद में तीन दिन में ही पुलिस कार्यवाही की सकलता पर सरदार पटेल ने भी कहा था—यदि

आर्य समाज ने पहले से वहाँ भूमि तैयार न की होती तो हमे इतनी जल्दी सफलता मिलनी कठिन थी ।

इस समय भारत से बाहर भी १६ देशों में आर्य समाज की शाखाएँ हैं । फीजी, मारीशस, ट्रिनीडाड और ब्रिटिश गायना की तो सरकारों में भी आर्य समाज के कई कार्यकर्ता प्रमुख पदों पर हैं । मारीशस के प्रधानमन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम मारीशस आर्य प्रतिनिधि सभा के वर्षों तक प्रमुख अधिकारी रहे हैं । जिन-जिन देशों में आर्य समाज की शाखाएँ हैं, वहाँ हिन्दी और वैदिक सस्कृति दोनों का अच्छा प्रचलन मिलेगा । भारत की ही तरह हिन्दी माध्यम के ३०० ए० बी० स्कूल और कालेज भी यहाँ हैं । फीजी और मारीशस में तो हिन्दी के समाचार पत्र भी निकलते हैं ।

अब आर्य समाज जब अपने जीवन के तीसरे वर्ष पूर्ण करने जा रहा है । ऐसे में उसे सफलताओं के साथ अपनी असफलताओं और उसके कारणों पर भी निगाह मारना जरूरी है । स्वस्थ सगठनों का यह चिह्न है जो वह अपने मूल से हटे बिना समय के साथ अपनी रीति-नीति में आवश्यक परिवर्तन करते रहते हैं । ऐसे परिवर्तनों से उन सगठनों की नींव और मजबूत ही होती है । पर जो लकीर के फकीर होते हैं वह मक्खी पर मक्खी मारने में ही बहादुरी समझते हैं । धीरे धीरे उनका वह रुढ़िवाद उन्हें भी ले बँठता है और उनकी विचारधाराओं को भी समाप्त कर देता है । गांधी की अद्य लगाने वाले जैसे आज गांधी से दूर होते जा रहे हैं, वह ही बात कहीं स्वामी ब्रह्मानन्द के भक्तों पर भी लागू न हो । इस विश्वास में भी आत्म निरीक्षण की जरूरत

है । हिन्दू समाज की बुराई दूर करते-करते कहीं ऐसा तो नहीं हो गया जो उलटते वह बुराई उनमें ही प्रवेश करने लगी हो ?

हैदराबाद राज्य में आर्य समाज का कभी इतना कठोर अनुशासन था कि यदि किसी आर्य समाजी ने अपनी जाति में भूल में भी विवाह कर लिया तो वह आर्य समाज से निकाल दिया जाता था । अन्तर्जातीय विवाहों में उच्च वर्ण के लोग छोटे परिवारों को लडकी ले तो लेते हैं उन्हें बेते नहीं । पर यहाँ का आर्य सामाजिक वातावरण इसका भी अपवाद था । कई ऐसे व्यक्तियों से भी वहाँ मेरा परिचय हुआ जो प्रचलित जात-पात के आधार पर हरिजन ही केवल नहीं उनमें भी बहुत छोटे समुदायों में से आये थे । पर आर्य समाज में आकर और पढ़ लिख कर वह पंडित ही केवल नहीं कहलाये अपितु अच्छे से अच्छे घरों में धार्मिक संस्कार कराने वह जाते थे । अब तो मुझे पता नहीं वहाँ उतनी कट्टरता अभी है या नहीं । क्योंकि वर्तमान राजनीति से भी आर्य समाज के इन सुधारवादी कार्यक्रमों को बड़ा धक्का पहुँचा है । उत्तर भारत में भी एक बार उसी तरह की लहर चली थी । पर कुछ तो इस राजनीति ने और कुछ परम्परावादी हिन्दुओं के सम्पर्क में वह समाप्त कर दी । कहीं-कहीं आर्य समाज में ऐसे पदाधिकारियों को देखकर जो अपनी जात विचार-धरियों के भी नेता बने हुये हैं, और आर्य समाज की भी कुसियाँ घेरते हुए हैं, इस प्रगतिशील सगठन पर तरस आता है । जब तक सत्ता से इन बुरा-इयों से सघर्ष नहीं किया जायगा तब तक आर्य समाज की तसवीर निखर नहीं सकेगी । आज जब दुनिया छोटे-छोटे दायरों से निकल कर शाश्वत सत्य की खोज में निकली है तब आर्य

समाज जाता जगठम भी छो जायगा तो कौन मांग बर्षान करेगा ।

हमारा सामाजिक ढांचा धीरे-धीरे आज पहले से भी अधिक कमजोर हो रहा है । जात-पात, दहेज और सदियों के चक्कर में ३०-३० और ३५-३५ साल की कन्यायें घरों में बकारी बंठी हैं । मां-बाप बिना दहेज के उनके हाथ पीले नहीं कर सकते । कुछ तो बेचारी आत्महत्या करके इस निर्दय समाज की बेदी पर बलि भी हो गई । पर हिन्दू समाज है जो टल से मस होने को तैयार नहीं । आर्य समाज के लिये यह खुली चुनौती है । उधर हिन्दू समाज का एक बहुत बड़ा बग स्वाधीनता के २५ वर्ष बाद भी हरिजन, अछूत और दलित बाम के तिरस्कृत हो रहा है । ईसाई पचारक जब पिछड़े बर्गों की कन्याओं को पढा लिखा कर और ढग से कपडे पहनना सिखा कर उन्हें डेली-फोन आपरेटर, अस्पतालों में नर्स अथवा विमान परिचारिकायें बनाकर भेजते हैं, तब तो बडे-बडे परिवारो के युवक भी उमरै बात करै को उत्सुक रहते हैं । यग मैन क्रिश्चियन एसोसिएशन (बाई एम सी ए) के होस्टलों में कुछ नौजवान तो ठहरते ही इसलिये हैं । पर उनकी आलोचना करने वाले इस विशा में कोई पग बर्षों नहीं उठाते । उन्हें कौन-सा साप सूँघ गया है ? अब पाषणों और प्रस्तावों के बिन लब गये । अब तो रचनात्मक कार्यों का मूल्यांकन समाज में होगा ।

धर्म के क्षेत्र में भी पुराने रिवाज अब अधिक लम्बे नहीं चलेंगे । समय के साथ उनकी विशा भी बदलनी होगी । अग्रविश्वासों का लाभ उठा कर देश से भगवानों और अवतारों की बाढ़ आ रही है । कुछ दूसरे देशो के धार्मिक सगठन जो धार्मिक तान और सिद्धान्तों से भारत से टक्कर

नहीं ले सके वह भी इन कलियुगी अवतारों और भगवानों की कमर पर हाथ रखकर उन्हें बढ़ावा दे रहे हैं । क्यू सोचते हैं भारत से संज्ञातिक टक्कर तो विज्ञान के युग मे लेना कठिन है । इनके अपने घर मे नई नई शाखायें खडी कर इनके स्वरूप को ही बर्षों ना विकृत किया जाय । जिससे हमारी नई पीढ़ी उधर न भाने । आर्य समाज जैसे सच्ची और क्रांतिकारी सगठन के सामने यह सब चुनौतियाँ मुह फाडे खडी हैं, जिनका उसे उत्तर देना है ।

आज भारत और भारत से बाहर नई पीढ़ी को एक विशा की खोज है । उसे धर्म के उस स्वरूप की तलाश है, जो युगधर्म बन सके । आर्य समाज चाहे तो इस बीडे को उठा सकता है । एक क्रांतिकारी साधु द्वारा स्थापित मिशन में वह सामर्थ्य भी है । सो बर्ष की आयु किसी प्रगतिशील सगठन के जीवन से कम नहीं होती । अपनी अताब्दी के अबसर पर नया मोड लेने और देश को नया मोड देने के लिए कमर कस कर नये कार्यक्रमो के साथ आगे आने जाने की तैयारी करना चाहिए । देक ने पहले भी जब आर्य समाज को हाथो हाथ उठाया वह इसलिये क्योंकि उस समय वह समय की आवाज बन गया था । आज भी यदि वह समय की आवाज बनेगा तो फिर वसी तरह पूजा जायगा ।

२५ से २८ मई तक क्रांति की बगरी मेरठ मे आर्य समाज के वार्षिक समारोह का पहला अधिवेशन सुप्रसिद्ध वैदिक बिद्वान डाक्टर स्वामी सत्यप्रकाश जी की अध्यक्षता में होने जा रहा है । भारत के राष्ट्रपति इसका उद्घाटन कर रहे हैं । जाशा करनी चाहिए इसमें आर्य समाज नई करबट लेगा ।

उत्तर प्रदेश में आर्य समाज की गौरवशाली परम्परा

[श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा, राज्य स्वास्थ्य मन्त्री, उ० प्र० मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश]

आर्यसमाज मानवता के उच्चतम आदर्शों का प्रचारक, प्रसारक और सजग प्रहरी है। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने जो कुछ भी कहा, लिखा और किया उसका केन्द्र बिन्दु कोई एक देश, जाति या एक वर्ग न था, अपितु उनके सम्देश का केन्द्र बिन्दु समस्त मानव जाति थी। अपने इस मन्तव्य का उन्होंने आर्यसमाज के नियम में स्पष्ट करते हुए लिखा—'ससार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।' इस प्रकार महर्षि दयानन्द मानवतावाद से भी आगे ससार के प्राणिमात्र के उपकार की भावना से ओतप्रोत थे।

उत्तर प्रदेश में महर्षि

उत्तरप्रदेश को इस बात का गौरव प्राप्त है कि आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द को शिक्षा एवं बीआरएनजी मयूरा में है। महर्षि ने पाखण्ड जन्मलन आन्दोलन को हृदय से ही जन्म दिया, धर्म के नाम पर मूर्ति-पूजा द्वारा सम्पन्न होने वाले अनाचार, कदाचार और झूठाचार का भण्डा फोड़ने के लिए पाखण्डियों के दुःख दुर्ग वाराणसी में ही महर्षि ने प्रतिनीय शास्त्राध्य किया और वेदों में मूर्तिपूजा नहीं है, इस सच्चाई पर पड़ी हुई राख को हटाकर पुनः प्रकाशित प्रचारित्र और प्रसारित किया। इनके अतिरिक्त अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की रचना भी महर्षि के उत्तरप्रदेश में ही की। आज भी महर्षि के इस



श्री प० प्रेमचन्द्र जी शर्मा

ग्रन्थ के हस्तलेख मुरावाबाव में उरलख्य हैं। इसी प्रकार महर्षि ने अपने वेद भाष्य का प्रकाशन भी काशी और प्रयाग से आरम्भ किया। इन सब प्रमुख कार्यों के अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के अधिकांश बगचे और कस्बों में महर्षि स्वयं पहुँचे, उपदेश दिये, वैदिक धर्म की विशेषताओं को समझाया और आर्यसमाजों की स्थापनायें की। उत्तर प्रदेश के ७ प्रमुख शहरों में महर्षि ने स्वयं आर्यसमाजों की स्थापनायें की।

- १-२६ अप्रैल सन् १८७६ ई० दहरादून
- २-२० जूलाई सन् १८७६ ई० मुरावाबाव
- ३-१५ अप्रैल सन् १८८० काशी
- ४-६ मई सन् १८८० ई० जखनड



- ५-१६ मई सन् १८८० ई० फर्रुखाबाद
 ६-२६ दिसम्बर सन् १८८० ई० आगरा
 ७-सहारनपुर का आर्यसमाज भी श्री स्वामी
 जी द्वारा स्थापित किया गया ।

उत्तर प्रदेश पर महर्षि मिशन की पूर्ति का वायित्व

इस प्रकार जहाँ उत्तरप्रदेश को महर्षि मिशन का प्रचार क्षेत्र बनने का गौरव प्राप्त हुआ, वहीं उत्तरप्रदेश पर यह वायित्व भी आ पड़ा कि वह महर्षि के विश्व सन्देश प्रचार-प्रसार के लिए आधार स्थल बने और आर्य समाज के कार्य को गतिशील बनाये ।

महर्षि दयानन्द के आकस्मिक निधन से आर्य जनता पर जो गम्भीर वायित्व आ पड़ा था, उत्तर प्रदेश के तत्कालीन कर्मठ एव बिचारशील नेताओं ने उसकी पूर्ति के लिए बड़ी तत्परता और सजगता के साथ आर्यसमाज का पथ-प्रदर्शन किया । महर्षि दयानन्द ने अपनी सम्पत्ति की स्वामिनो जिस परोपकारिणी सभा का निर्माण किया था, उसमें उत्तरप्रदेश के राजा रायकृष्णशास जी मुरादाबाद और १००० श्री रामसरनदास मेरठ भी सम्मानित सब्ध थे । महर्षि की मृत्यु के पश्चात् २८ दिसम्बर १८८३ को परोपकारिणी सभा ने एक प्रस्ताव द्वारा आर्यसमाजों के एक केन्द्रीय सगठन की योजना बनायी थी ।

आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना

बाद में इस प्रस्ताव की भावना को क्रियात्मक रूप देने के लिए मेरठ, बम्बई और लाहौर में आन्दोलन आरम्भ हुआ । १८८४ में मेरठ के आर्य समाचार पत्र में इस सगठन की चर्चा की

गई थी, और बाद में ४, ५ अक्टूबर ८६ के दिन लाहौर की बैठक में मेरठ से कुछ बरसों प्रतिनिधि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना के समय पहुंचे थे । वहाँ से लौटकर २८, २९ दि० ८६ को आर्य समाज मेरठ के उत्सव पर प्रदेश के ४८ आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने तत्कालीन पश्चिमोत्तर प्रदेश व अवध के क्षेत्र के लिए प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना की । इस प्रकार वर्तमान उत्तर प्रदेश में आर्य समाज के सगठन को दृढ़ बनाने का कार्य आरम्भ हुआ । मेरठ नगर को इस सगठन का जन्म देने का गौरव प्राप्त रहा है, वास्तव में प्रान्तीय सगठन का जन्म देने विकसित एव परिष्कृत रूप देने में मेरठ नगर और जनपद का ऐतिहासिक योगदान रहा है । सभा की ५० वर्षीय स्वर्ण जयन्ती इसी नगर में १९३७ में समारोह पूर्वक मनाई गई । १९५१ में सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन इसी नगर में सम्पन्न हुआ और १९७३ में आर्य समाज स्थापना शताब्दी के प्रसंग में ६८ वीं समारोह स्थापना शताब्दी की भूमिका के रूप में मेरठ में ही सम्पन्न हो रहा है । इस प्रकार उत्तर प्रदेश की आर्य जनता ने महर्षि के मिशन की पूर्ति का जो द्रत लिया था उसकी ओर हम मेरठ से यात्रा आरम्भ कर आज पुनः मेरठ पहुंच रहे हैं ।

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की स्थापना १८८६ के जिस कठिन सघर्षमय काल में हुई थी, उसकी कल्पना आज के आर्य बन्धु सहज में नहीं कर सकते, परन्तु आर्य समाज के इतिहास और विकास का अध्ययन करने वाले व्यक्ति मनी-पाति समझ सकते हैं कि इस समय क्या-क्या कठिनाइयाँ थीं या हो सकती थीं ।

न कोई धन सम्पत्ति थी न केन्द्र न कार्या

लय, केवल एक मिशनरी भावना थी और थी महर्षि दयानन्द के प्रति सच्ची श्रद्धा भक्ति। अपने इसी सबल को लेकर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने जो यात्रा आरम्भ की थी उसका तिहा-वलीकन करने पर हम गर्व अनुभव करते हैं कि आज हम और आप सब पूर्वजों की गौरवपूर्ण परम्पराओं और उनके तप त्याग से प्रज्जित सभा की मौलिक एवं यशस्वी धरोहर के उत्तरा-धिकारी हैं।

महर्षि दयानन्द ने उत्तर प्रदेश के ७ स्थानों पर आर्य समाजों की स्थापनाओं की थीं परन्तु उनके प्रचार में प्रभावित व्यक्तियों ने विभिन्न स्थानों पर आर्य समाजों की स्थापनाएँ कर दी थीं, इस प्रकार जहाँ महर्षि की मृत्यु के समय उत्तर प्रदेश में आर्य समाजें स्थापित थीं, वहाँ आर्य प्रतिनिधि सभा के सगठन का निर्माण होने समय तक १५० आर्यसमाजें स्थापित हो चुकी थीं। प्रतिनिधि सभा की स्थापना के पश्चात् आर्य समाजों की स्थापना एवं प्रचार का कार्य व्यापक रूप से आगे बढ़ा। साधनों की न्यूनता होते हुए भी आर्य पुरुषों की लगन और उत्साह से ही प्रतिनिधि सभा का सगठन मन्दिर धीरे-धीरे खड़ा होने लगा।

इस प्रकार १८८६ में लेकर आज १९७२ में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश में १४०५ आर्य समाजों का (जिला सभाओं सहित) सगठन है। इस प्रकार अपने ८६ वर्षीय इतिहास में सभा ने इतनी बड़ी महत्वा में आर्य समाजों की स्थापना कर आर्य समाज सगठन का नेतृत्व और पथ प्रदर्शन किया है। किसी भी प्रान्तीय सगठन के अन्तर्गत इतनी बड़ी संख्या में मिशनरी ईकाइयों का अस्तित्व एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। समस्त आर्य जगत् की आर्य समाजों का चतुर्थांश केवल

उत्तर प्रदेश में ही विद्यमान है। उत्तर प्रदेश की अधिकांश आर्य समाजों के निर्माता स्वयं हैं और सत्संग तथा अन्य कार्यक्रम विधिगत सम्पन्न होते हैं। इन सभी आर्य समाज भवनों की सम्पत्ति सभा के नाम रजिस्टर्ड है। इस प्रकार एक विशाल सम्पत्ति का प्रबन्ध और उसकी सुरक्षा का वायित्व सभा को पूर्ण करना पड़ता है।

आर्य समाज के मिशन का पूर्णतः कलिय

व्यापक कार्यक्रम

आर्य समाज की सगठनात्मक स्थानाय एवं जनपदीय इकाइयों की स्थापना के अतिरिक्त भी प्रतिनिधि सभा ने अपने ८६ वर्षीय जीवन में वैदिक धर्म प्रचार के अपने उद्देश्य की प्रति के लिए योजनाबद्ध कार्य किया है। सभा के सामा-जिक कार्यों का सूची अंकित करना इतिहास का कार्य है, पर सभा द्वारा प्रारम्भ किए गये ऐसे कार्यों की चर्चा करना यहाँ अनुपयुक्त न होगा जो आज भी प्रदेश के जन जागरण और राष्ट्र के नव निर्माण में उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं और जिनका प्रभाव भारतीय स्वाधानता आन्दोलन का सफल बनाने और नवीन भारत का नव-निर्माण करने में महत्त्वपूर्ण है।

आर्य समाज का आन्दोलन एकांगी नहीं है अपितु उसके कार्य का प्रभाव समाज के सर्वांगीण विकास के रूप में परलक्षित होता है। हम सभा द्वारा संचालित कार्यक्रमों की (१) शैक्षिक (२) सामाजिक (३) धार्मिक सभी भेदा से अत्यन्त एवं प्रभावशाली कार्य करना हुआ पाते हैं।

शिक्षा प्रसार का अभूतपूर्व कार्य

महर्षि दयानन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में कुछ मौलिक सिद्धांतों का प्रचार किया था। महर्षि का



दृष्टि मे मानव जीवन के लिये शिक्षा अनिवार्य है, और शिक्षा की व्यवस्था करना समाज और शासन का कर्तव्य है। अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश मे महर्षि ने शिक्षा की विस्तृत रूप रेखा प्रस्तुत की है, परन्तु सर्वप्रथम इस बात पर बल दिया है कि ५ वर्ष की अवस्था के बाद गरीब अमीर किसी का भी बालक हो इसकी अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था राज्य की करनी चाहिए। महर्षि के समय देश में जो शिक्षा प्रचलित थी, उससे वे सन्तुष्ट न थे और इसलिए उन्होंने अपनी पाठशाला स्थापित कर शिक्षा क्षेत्र मे क्रान्तिकारी कदम उठाया था। उनके निर्वेशानुसार आर्य समाजो ने शिक्षा सस्थाओ की स्थापना आरम्भ कर दी और शर्न शर्न स्थापित आर्य शिक्षा सस्थाओ का आज उत्तर प्रदेश मे जाल बिछ गया है। भारत की स्वतन्त्रता से पूर्व उत्तर प्रदेश मे आर्य शिक्षा सस्थाओ की सख्या सबसे अधिक था और आज भी शासन द्वारा संचालित शिक्षा सस्थाओ के बाद आर्य समाज की शिक्षा-सस्थाओ की सख्या ही सर्वाधिक है। इन शिक्षा सस्थाओ मे प्रारम्भिक शिक्षा के देने वाले दयानन्द बाल विद्या मन्दिरों के अलावा जूनियर, हाईस्कूल इन्टर, डिग्री एवं स्नातकोत्तर कक्षाओ तक की सब मिलाकर आर्य समाज की ४०० शिक्षा सस्थाये उत्तर प्रदेश के शिक्षा जगत् मे कार्य कर रही हैं। इन शिक्षा-सस्थाओ का करोडो रुपयो का वार्षिक बजट आर्य समाज द्वारा होने वाली रथाई सेवा का परिचायक है। इन शिक्षा सस्थाओ की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि इनमे धार्मिक नैतिक जीवन के सिद्धान्तों की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती है, जिससे शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी का जीवन समाजोपयोगी और

सफल बन सके। आर्य समाज सर्वेध नैतिक शिक्षा पर बल देता रहा है और उसकी यह मान्यता है कि वेदो की शिक्षा सेंकुलर है तथा समाज के लिए आवश्यक है। स्वाधीनता के २५ वर्ष बाद भी भारत सरकार एवं राज्य सरकारें इस मन्त्रवाई को हृदयगम करने मे असमर्थ रही हैं और यही कारण है कि शिक्षा जगत और राष्ट्रीय जीवन मे व्यापक अमनोप, अनैतिकता और भ्रष्टाचार बढ रहा है। जब शिक्षा मे ही ये दोष हैं तब राष्ट्र के नागरिको मे इन दुर्गुणो का होना स्वाभाविक है। शिक्षा के क्षेत्र मे आर्य समाज के नैतिक दृष्टिकोण को जब तक सरकार स्वीकार नहीं करेगी शिक्षा के मानवतावादी आदर्शों की पूर्ति असम्भव ही बनी रहेगी। इस दिशा मे आर्य समाज एक प्रकाश स्तम्भ का कार्य कर रहा है।

स्त्री शिक्षा पर विशेष बल

शिक्षा जगत् मे व्यापक कार्य करते समय आर्य समाज ने एक ओर यह महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया है, जिसे शायद आज महत्त्वपूर्ण न समझा जाय, परन्तु वास्तव मे यह बहुत ही उल्लेखनीय कार्य है। महर्षि दयानन्द ने जिस आदर्श समाज की कल्पना की थी उनमे स्त्रियो की शिक्षा पर विशेष बल दिया गया था। महर्षि मानते थे कि समाज के आधारभूत गृहस्थ आश्रम के सचालक स्त्री-पुरुष दोनो शिक्षित होने चाहिये, माता का शिक्षित होना उनको दृष्टियो मे और भी अधिक आवश्यक था क्योंकि माता निर्माता भवति माता ही मन्तान का वास्तविक निर्माण करती है।

महर्षि के समय मे समाज मे स्त्रियों की जो दुर्वशा थी उससे उनका हृदय अत्यधिक व्यथित था वे भारत मे 'यद्य नार्यस्तु पृज्यन्ते रमन्ते तव

देवता का गौरव देखना चाहते थे, परन्तु इसके विपरीत समाज स्त्री जाति का शोषण करने में ही जुटा हुआ था। स्त्री की सामाजिक दुर्दशा का एकमात्र कारण स्त्री वर्ग की अशिक्षा ही था। महर्षि ने समानता के आधार पर स्त्री वर्ग के लिए शिक्षा के अधिकार की घोषणा की। आर्यसमाज ने स्त्री-शिक्षा को अपने कार्यक्रम का विशेष अंग बनाया। यही कारण है कि आर्यसमाज की शिक्षा मस्थाओं में ७५ प्रतिशत स्त्री शिक्षा मस्थाएँ हैं। उत्तरप्रदेश में साक्षरता का प्रतिशत अभी भी अन्य राज्यों में कम है। स्त्रियों का और भी कम, परन्तु आर्यसमाज के स्थायी प्रयत्नों से स्त्री-शिक्षा का प्रतिशत बढ़ने में विशेष सहायता मिल रही है।

हरिजन शिक्षा के लिए पाठशालायें

धार्मिक रूढ़िवाद के नाम पर हरिजन वर्ग की शिक्षा समस्या भी एक कठिन कार्य था, पर मानवतावादी आर्य कार्यकर्ताओं ने हरिजन क्षेत्रों में पाठशालायें स्थापित कर उन्हें भी सरस्वती के बरदान में मग्न किया। इसी के फलस्वरूप इन वर्गों से आर्य समाज की अनेक विद्वान् सर्वदेशक प्रचारक भी मिले। आज तो हरिजन की शिक्षा समस्या को सामन ने राष्ट्रीय समस्या मान रखा है, और उस वर्ग की शिक्षा के लिये सर्वसम्पन्न सुविधायें जूटायी जा रही हैं। आर्य समाज ने इस दिशा में सर्व प्रथम कार्य आरम्भ किया, यह आर्यजनों के लिए गर्व की बात है।

प्रौढ शिक्षा के लिये रात्रि पाठशालायें—

निरक्षरता के विरुद्ध आर्य समाज का कार्य स्त्री समाज और हरिजन वर्ग तक ही सीमित नहीं रहा, अपितु प्रौढ शिक्षा की दिशा में भी कार्य

आरम्भ किया गया। नगरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रौढ शिक्षा मस्थाओं की स्थापनायें की गयीं, और प्रत्येक कार्य ने निरक्षरों को साक्षर बनाने का सफल कर लिया। आर्य समाज के इस साक्षरता आन्दोलन का भी व्यापक सामाजिक एवं राष्ट्रीय प्रभाव हुआ। प्रत्येक प्रौढ साक्षर बनने ही आर्य विचारों को व्यावहारिक रूप देने लगा, और ग्रामों में फैली रूढ़ियाँ टूटने और चटकने लगीं।

संस्कृत शिक्षा का प्रचार—

शिक्षा का माध्यम मात्र भाषा ज्ञान चाहिए हिन्दी का प्रचार तो किया ही गया, साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज ने संस्कृत शिक्षा पर भी विशेष ध्यान दिया। महर्षि की दृष्टि में प्रत्येक आर्य को संस्कृत का ज्ञान होना चाहिए। क्योंकि सर्वसम्पन्न वैदिक वाङ्मय संस्कृत भाषा में है और संस्कृत को ज्ञात व प्रचारित रखना आर्य समाज का कर्तव्य है। इस लिये संस्कृत ज्ञान के लिए विशेष आन्दोलन किया गया। आज भी संस्कृत शिक्षा के प्रचार प्रसार और अनुसन्धान में आर्य समाज की शिक्षा मस्थाएँ अग्रणी हैं और सारा संस्कृत समाज आर्य समाज का मेलाप ही स्वीकार करता है।

गुरुकुल आन्दोलन—

आर्य समाज के शिक्षा आन्दोलन का एक ही गुरुकुल आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ। महर्षि ने गुरुद्वारजानन्द क चरणों में बैठकर शिक्षा प्राप्त की थी, उस समय तक की अर्वागच्छ भारतीय शिक्षा पद्धति के आधार पर महर्षि ने गुरुकुल पद्धति पर बल दिया। महर्षि अनुभव करते थे कि गुरु शिष्य सम्बन्धों के आदर्श विकास में ही आदर्श मानव का निर्माण सम्भव है। महर्षि के दिशा-निर्देश की पूर्ति के लिये आर्य समाज के आरम्भिक

युग में गुरुकुल आन्दोलन की सफलता के लिये गये।

उत्तर प्रदेश को इस बात का गौरव प्राप्त है कि आर्य प्रनिधि सभा उत्तर प्रदेश द्वारा स्थापित और संचालित गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन (मथुरा) के अतिरिक्त गुरुकुल विश्वविद्यालय काशी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, कन्या गुरुकुल महाविद्यालय बेहराइन, कन्या गुरुकुल महाविद्यालय सासनी (हाथरस) जैसे स्नातकोत्तर शिक्षा स्तर के गुरुकुल भी उत्तर प्रदेश में ही खलमान हैं, और प्रान्त में आर्य समाज के कार्य को आगे बढ़ाने में सहयोग दे रहे हैं। इन बड़ गुरुकुलों के अतिरिक्त स्वतन्त्र शिक्षा-संस्थाओं के रूप में साधुआश्रम हरदुआगञ्ज, एटा, सिकन्दराबाद, बदायूँ, सिरमागञ्ज, सिराथू, गगोरी, कनखल आदि अनेक स्थानों पर गुरुकुल प्रणाली पर शिक्षा-संस्थाएँ कार्य कर रही हैं। इस प्रकार गुरुकुल आन्दोलन शिक्षा क्षेत्रों में व्यापक संदेश प्रसार और पराक्षणात्मक कार्य कर रहे हैं। भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जब गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी बोक्षान्त भ्रमण देने गयीं तब उन्होंने गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की प्रशंसा की और उमें राष्ट्र तथा मानवता के लिये उपयोग बनाना। उनका भ्रमण एक औपचारिकता मात्र न रह कर भारत की शिक्षा-नीति का पथ-प्रदर्शक सिद्ध होगा, ऐसी हमें आशा करनी चाहिए। साथ ही राष्ट्रीय शिक्षा के लिये गुरुकुल आन्दोलन को बलशान्ती बनाना चाहिए।

समाज का पथ-प्रदर्शक आर्य समाज—

आर्य समाज को एक समाज-सुधारक संस्था के रूप में समीने स्वीकार किया है, क्योंकि आर्य समाज के नाम के साथ समाज शब्द जुड़ा हुआ

है, और उसके विशेषण स्वरूप आर्य शब्द है। आर्य समाज एक आवर्शवादी मानव समाज रचना का संकल्प है, जिसकी पूर्ति के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का अतीत प्रयत्नशील रहा है, और आज भी उसके कर्मठ कार्यकर्ता, अधिकांश, उपदेशक सामाजिक रूढ़ियों के उन्मूलन और नवीन संरचना के लिये सतत प्रयत्नशील हैं।

महिला जागृति के लिये आन्दोलन—

महर्षि के युग में नारी जाति के प्रति नो अमानवीय दृष्टि कोण समाज में स्थापित था, उससे उनके हृदय पर गहरी चोट पड़ो थी। महर्षि भाग्य का मार्ग, मन्वानसा, मेलो, मीना सावित्री जैसी महिनाओं पर नव अनुभव करते थे पर समाज ने स्त्रियों को परो की जड़ों समझ रबखा था, और उनके जीवन में खिलवाड हो रहा था। महर्षि ने सर्वप्रथम स्त्री-शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया, और आर्य समाज न उन दिशा में अग्रतंत्र कार्य किया, जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। स्त्री शिक्षा के साथ-साथ स्त्री सुधार आन्दोलन आवश्यक था। स्त्रियों के प्रति होने वाले सामाजिक अत्याचार उमके जन्म-काल में ही आरम्भ हो जाते थे, जो मृत्यु के बाद ही समाप्त होने व। आर्य समाज ने समाज को जागृत किया, और नारी जाति का सम्मान करने की शिक्षा दी।

(१) परिवार में कन्या का जन्म होने पर कोई हर्ष न होना था। (२) अनेक परिवारों में कन्या का जन्म होते ही उमका गला घोट दिया जाता था। (३) बाल विवाह की दूषित प्रथा के अन्तर्गत बाल्यावस्था में ही विवाह कर दिया जाता था। यही नही जन्म से पूर्व ही विवाह सम्बन्ध

तय कर दिये जाते थे। (४) बान्धावस्था में ही वृद्धो के माथ कन्याओ का विवाह कर दिया जाता था। (५) धन सम्पत्ति के लोभ में आकर पिता अपनी कन्याओ का विवाह ऐसे व्यक्तियों से कर देते थे, जिनकी पत्नी जीवित होनी थीं इस प्रकार बहु पत्नी प्रथा का जोर था। (६) पर्वी प्रथा के कारण स्त्राभाविक स्वतन्त्रता समाप्त थी। (७) दहेज प्रथा के रूप में कन्याओ का जीवन दुभर हो रहा था। (८) वि-प्रवाओ की स्थिति अत्यधिक शोचनीय थी, उनके भरण पोषण का कोई दायित्व नहीं लेना चाहता था, २-२-४ वर्ष की लाछों कन्यायो विधवा बन चुकी थीं, समाज की उपेक्षिता बनकर ये ही वेश्यालयो में जा रहीं थीं। (९) शादी विवाहो में स्त्रीनृत्यो को प्रमुखता देकर बिलासिता का प्रदर्शन किया जाना था। (१०) जाति प्रथा के नाम पर अनमेल और जबरदस्ती विवाह किये जाते थे।

आर्य समाज ने अपने प्रबल प्रचार तन्त्र द्वारा समाज में उपर्युक्त सभी अत्याचारो के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन किया। भारत के संविधान में जो समानता के अधिकार स्वो-जाति का प्राप्त हुए हैं, उनको पृष्ठभूमि में आर्य समाज के प्रचार का दीर्घ कालीन इतिहास अंकित है। उत्तर प्रदेश आर्य प्रांतिनाथ सभा के प्रचार और समाज कल्याण एवं महिला-सुधार विभाग आदि के एतिहासिक योगदान को आधुनिक नारी जागरण के मंदम में कभी नहीं भुलाया जा सकता। सभा में आदेशानुसार हजारो उपदेशको, विद्वानो, प्रचारको भक्तनीकी एवं महिला कार्यकर्ताओ ने स्त्री सुधार के लिए जो समर्पण किया उस सर्वेव स्मरण किया जायगा।

अछूतोद्धार एवं अस्पृश्यता निवारण

समाज के पीडित गोपित अछूत वर्ग के उद्धार

की विधा में भी आर्यसमाज का योगदान कम महत्त्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता।

महर्षि के समय में शूद्र वर्ग की जो दुवृशा थी उसे अमानवीय एवं असामाजिक माना जाता था इस असामाजिक अत्याचार के विरुद्ध उन्होंने वर्ण-व्यवस्था के प्रचलित जन्मना वर्ण व्यवस्था के स्वरूप पर कठोर आघात किया। महर्षि ने बताया 'जन्मना जायते शूद्र मस्काराव द्विज उच्यते'। प्रत्येक व्यक्ति जन्म से शूद्र होता है, मस्कारो के निर्माण में ही उसे द्विजत्व की प्राप्ति होती है। महर्षि की इस घोषणा ने जन्मना वर्ण व्यवस्था के बन्धनो को काटना आरम्भ कर दिया और आज भारतीय संविधान में अस्पृश्यता अपराध घोषित है। इस स्थिति को उत्पन्न करने में उत्तरप्रदेश के आर्य जनो, सभा के कमंगोल नेताओ का विशेष योग रहा है। हरिजनो की शिक्षा-व्यवस्था के लिए पाठशालाओ खोले जाने की चर्चा की जा चुकी है। हरिजनो के साथ समानता का व्यवहार दर्शाने के लिए हरिजन बस्तियो में पज हवन आदि कार्यक्रमो और प्रीति भोजो की व्यवस्था का आरम्भ आर्यसमाज के लगनशील कार्यकर्ताओ ने ही किया था। हरिजनो की समानता के व्यवहार की अनुमति के लिए समाज के अधिकारी पदो पर सबसे पहले आर्यसमाज न ही बिठाया था। छुआ छूत के भूत की भंगने में आर्यसमाज की समानता आज के समाजवादी भी नहीं कर सकते। आर्य समाज ने हरिजनो की समानता का अधिकार दिलाने के लिए व्यापक आन्दोलन किया। उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र में आर्यसमाज ने इस मानवतावादी आन्दोलन को मफल बनान में भारत केसरी लाना लाजपतराय जी ने भी योगदान किया। उन्होंने अलमोडा, रानोखेत नैनीताल गढ़वाल आदि क्षेत्रो में शिल्पकार वर्गओ की



(जिसे उस क्षेत्र के सबण शूद्र मानते हैं) यज्ञी पशुत पहनाकर आर्य की सजा से विभूषित किया। उत्तरप्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र में हरिजनों को अपन गादा विवाहों में डोला पालकी का प्रयोग करने को सांख्यिक अनुमति न थी, इस दिशा में आर्यों प्रतिनिधि समा के अधिकारियों ने व्यापक आन्दोलन किया और हरिजनों को यह अधिकार दिलवाया। इस सबका व्यापक प्रभाव पडा, कानून भी समाजना का अधिकार दिलाता है, पर अभी समाज का अंशतः म छुआछुन दबी पडी है उसे नर भगना है। आर्यसमाज के कार्यकर्ता इस दिशा में प्रयत्नशील है।

सामाजिक अभिशाप का मूर्च्छ

हमा मानि पबनीय क्षेत्र में नायक ज्ञानि की कथाया न विवाह न होने और उन्हे विलासा अत्रिय राजाआ की खेल बनाकर भेज देने का ज्ञानित पथा के विरुद्ध आन्दोलन करने का शय १०७ आर्यप्रतिनिधि समा को है। समा के प्रयत्नों में यह प्रथा समाप्त हो चुकी है और नायक कथाय प्रब शिक्षा प्राप्त करती और सम्मानित परिवारों में विवाहित हो रही है। समा नायक धावक ज्ञानिकाआ की शिक्षा के लिये छात्र धर्तिया का प्रब ध करती है, इस प्रकार हम समा जाजिक प्रथा के विरुद्ध आर्य समाज का काय मदेक न-नछनाय रहेगा।

शामिक ज्ञानि और पाखण्ड-खण्डन

आय समाज का एक धार्मिक आन्दोलन का म्म सजा दी जाती है। मर्होष दयानन्द मानव जोषन का धम से जोतप्रोत देखना चाहते थे, परन्तु उनका इस दिखाने और पाखण्ड का धम न था, उहाने वर की शिक्षाओं को जीवन का

आधार माना था परन्तु वेद के नाम पर जो धर्म प्रथिों आरम्भ हुआ था वह उनके समय में केवल दैर्घ्य और पोष लीला मात्र रह गया था। धर्म के नोर्म पर मूर्तिपूजा वापसार्ग तथा ऐसे ही फेले हुए पैखण्डवाद ने उनके हृदय और मस्तिष्क में व्यापक हलचल पैदा कर दी। सच्चे ईश्वर की धोज में जिस महामानव न अपने बंधनशास्त्री गृह का परिन्वयण कर दिया उस धम का सही रूप म्मकेसो नहीं लेखा। सब्ब ईश्वर के नामपर ठगी-सक पोषलीला म्मवाग्न थी। मर्होष ने अपने गुरु विरचनन्द जी में शिक्षा केन समय म्मत्त्व लिया था कि य अपना जावन वव प्रचार में सम्पिन करेगा।

इस म्मत्त्व की गान म्महोष ने अपने जोषन का अंशतः रन की वद मा म्मोवन करे डा म्मर्षि की जमम्मि बनन का उत्तर प्रदेश की विषय गौरव प्राप्त है। उन प्रदेश का याग सभी प्रसिद्ध म्मर्षि व नोर्था में म्ममा जो पन्थ और वैदिक धम का नाड म्मजाया। मर्होष के नाड म्म यागवत् उन्हे लग पाखण्डा पिपने लग आर स्वाया उन्पन होने लग। उत्तर प्रदेश में जा अमक खानों पर मर्होष का जहर बिधा गया उन पर म्मप कके गय तलवार के धार किये गय पर उन सब पर उम महामानव ने विनय प्राप्त का।

मर्होष ने जिस वैदिक धम के प्रचार के लिये उहर पिपा गालियाँ छापी लाखा की सम्पति को टुकराया उसा मिशन की पूर्ति के लिये आय प्रतिनिधि समा की स्थापना का क्यो थी। अपन द्दुर्घोष कायकाल म्म समा के द्दुर्घ प्रचार विभाग ने अधम का दुगम दुर्गो का भवन किया है। आर्य समाजिक शास्त्राय दुग के अधिकाश शास्त्राय उत्तर प्रदेश में ही सम्पन्न हुए, जिसम प्रदेश की



जनता वैदिक सिद्धान्तों को अधिक अच्छी प्रकार समझ सकी। सभा के उपदेश और प्रचार विभाग की निरन्तर सेवाओं का ही परिणाम है कि आज उत्तर प्रदेश की जनता पाखण्डियों और पौरुष इम के विरुद्ध मजबूत और सतक है। मुरावनगर (मेरठ) में बालयोगी हंस के विरुद्ध व्यापक प्रचार कार्य इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस पाखण्ड-खण्डन कार्य में न केवल आर्य समाज की ही कार्यकर्ता अग्रणी रहे अपितु हिन्दू समाज के सभी प्रमुख धार्मिक गुरु तक कि राजवांतिज भी आगे आये और पाखण्ड का मरदाना दे कर रहे हैं।

रेबी जेजनाया के नाम पर पशु-बलि, सर्पिण्ड-वर्षण यज्ञों नर्तकी नर बलि तक को घटनाएँ मन-मनस पर घटित होती हैं। उरोनिषिधों के विध्वा राशिफल और षड् योग आदि के चक्कर में फस कर आज भी अनेकों नर-नारी अपनी मधुमत्ताएं कर रहे हैं। कर्मवाद में विश्वास न कर भाग्यवाद की विद्वहना में जीवन नष्ट कर रहे हैं। हनुमान और देमाइयन का धार्मिक आश्रितों में भी जनता की प्रमित किथा है पर वेद की कमाटी पर आर्य समाज ने उनमें जो लोहा लिया है। इस प्रकार हम में फंदकार अपना धर्म छोड़ने वालों को आर्य समाज ने शुद्ध आन्दोलन द्वारा निकार अपने में लिया और एक नयी चेतना को जन्म दिया है।

आज भी आर्य समाज के उपदेशक प्रचारक, विद्वान् और साहित्यकार वैदिक धर्म का सही और अच्छा स्वरूप बताने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं। अनेक आर्य समाज आर्य आर्य मस्था अपने वार्षिक उत्सवों का आयोजन कर पाखण्ड खण्डन के महाभियान में मगाने हैं। महर्षि ने हरद्वार कुम्भ में जो पाखण्ड खण्डनी पत्रिका

गाड़ी थी सभा ने उसकी स्मृति में १९२८ में शताब्दी समारोह मनाने का महर्षि के अग्र कार्य को पूरा करने का सूक्ष्म साहसाध्य था और आज अपनी सम्पूर्ण शक्ति से साथ सभा पाखण्ड खण्डन में जुटी हुई है।

आर्य समाज पाखण्ड खण्डन के महाभियान के साथ-साथ धर्म के वैदिक स्वरूप का पत्राचार करने में भी अग्रणी शक्ति बना रहा है। आर्य समाज के साप्ताहिक सप्तमी के कार्यक्रम में हमें धार्मिक जीवन की प्राप्ति मिलना है। इस कार्यक्रम को और अधिक जागृत, आकर्षक एवं व्यापक रूप दिया जाना चाहिये।

आर्य प्रतिनिधि सभा की नवान योजनाएँ

उत्तर प्रदेश में आर्य समाज के प्रचार प्रसार को गतिशील बनाने के लिये सभा की अपनी कुछ योजनाएँ हैं, जिन पर ध्यान हमारा ध्यान इन्द्रित है।

विरजानन्द वादक अनुसन्धान केन्द्र मथुरा

महर्षि उपासक शिक्षा शताब्दी समारोह के अवसर पर भारत के आदि राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी के कर कसली में पुर विरजानन्द स्मारक मथुरा में वादक अनुसन्धान केन्द्र की आधार शिला रखी गया था। सभा के प्रयत्न से स्मारक का अद्यतन बनकर तैयार हो चुका है। गी. प्र. ही वैदिक साहित्य का एकल कर सही अनुसन्धान का कार्य सभा आरम्भ करने की योजना किया-बन करेगी। इस अनुसन्धान का उद्देश्य मानव मानस तक वैदिक ज्ञान मूल्य का संश्लेषण पहुंचाना होगा जिससे मानव अपने अन्तर्मन को प्रकाशित कर सके।

आर्य समाज हरद्वार (पाखण्ड खण्डन महा-केन्द्र के रूप में

महर्षि ने हरद्वार में पाखण्ड खण्डनी पत्रिका

गाडकर पाखण्ड उन्मूलन का सकल्प लिया था आर्य प्रतिनिधि सभा ने हरद्वार में आर्य समाज का विशाल भवन गंगा के किनारे बनाना आरम्भ कर दिया है। निर्माण कार्य जारी है, आशा है आगामी कुम्भ तक यह सम्पन्न होजायगा। हरद्वार आर्य समाज का उपयोग पाखण्ड-खण्डन के महा-केन्द्र के रूप में किया जायगा।

नवीन सभा-भवन निर्माण, लखनऊ

आर्य समाज के प्रदेशीय सगठन को केन्द्रित एवं सगठित रखने के लिये सभा का नवीन सभा भवन तैयार हो रहा है, इसमें सभी के आर्थिक योगदान की आवश्यकता है। आशा है नवीन भवन की योजनापूर्ण होने पर सभा प्रचार और निर्माण कार्य में और अधिक सक्षमता से कार्य कर सकेगी। नवीन सभा भवन निर्माण से सभा की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ हो सकेगी।

आर्य शिक्षा सस्था विधेयक

उत्तर प्रदेश में आर्य शिक्षा सस्थाओं के लिये प्रशस्य विद्यार्थी सभा का सगठन बना हुआ है। इस सगठन को और भी अधिक सुदृढ़ कर आर्य शिक्षा सस्थाओं के लिये आर्य-शिक्षा सस्था एक एकट बनवाने के प्रयास किये जा रहे हैं, जिससे सस्थाओं का आदर्श संचालन हो सके तथा उनके आदर्श की पूर्ति हो सके।

सभा के प्रमुख विभाग

सभा के पास अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिये केन्द्रीय कार्यालय के अन्तगत उपदेश विभाग, वेद प्रचार विभाग समाज कल्याण विभाग, साप्ताहिक आर्यमित्र (७५ वर्ष से निरन्तर प्रकाशित) भगवानदीन आर्य भास्कर प्रंस, घासीराम प्रकाशन विभाग, मुस्कूल विश्वविद्यालय चन्दावन, आर्य वानप्रस्थाधम ज्वालापुर, नारायण

स्वामी आश्रम रामगढ़, शुद्धि विभाग गोकुल्यादि रक्षिणी, सभा-विभाग, अनाथालय, विधवाश्रम सस्थाये जातिभेद उन्मूलन विभाग, महिला मण्डल विभाग, आर्यबीर दल विभाग, पुस्तकालय विभाग, मद्य-निषेध विभाग, श्रृष्टाचार निरोध विभाग नैतिक उत्थान विभाग आदि अनेक उपयोगी विभाग बने हुए हैं जो सभा के स्वरूप का स्पष्ट करते हैं और जन संपर्क कर जनता-जनार्दन तक वैदिक धर्म का संदेश पहुंचाते हैं।

आर्य समाज की आवश्यकता

प्राय मित्र कहा करते हैं कि जब आयसमाज की अधिकांश बातों को समाज ने, शासन ने स्वीकार कर लिया है तब अब आर्यसमाज की क्या आवश्यकता है / मुझ अपने मित्रों में यही कहना है कि राज्य आते जाने रहेंगे, सरकारें बनती बदलती रहेंगी, परन्तु आयसमाज का मसरोपकार का कार्य कभी समाप्त न हागा, क्योंकि पुराने आर नये ससार में, धर्म और पाखण्ड में सदैव संघर्ष रहगा और आयसमाज अपने सन्तुलित जीवनदर्शन में दोनों प्रकार के व्यक्तियों और वर्गों को प्रभावित करता रहेगा। आर्यसमाज कोई सम्प्रदाय मजहब या एक विशेष धर्म नहीं है उसका आधार आस्तिकता और सिद्धान्त वेदान्तकूल है। वेदों को महत्ता को आज मसार स्वीकार करने लगा है और आय समाज के लिए वह दिन सर्वाधिक गौरव का दिन होगा जब मसार एक धर्म वैदिक धर्म को ही अपना धर्म मानेगा। यद्यपि आयसमाज एक विश्व व्यापी आन्दोलन है फिर भी इसकी प्रत्येक स्थान में अपनी उपयोगिता है, इस दृष्टि में उत्तर प्रदेश में आर्य प्रतिनिधि सभा का यह सतत प्रयास रहा है और रहेगा कि इस क्षेत्र की जनता आयसमाज के विचारों से परिचित रहे परिचित ही क्यों उन

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का सबसे विशाल और भव्य स्वरूप

[आचार्य विश्वभद्रा: जी व्यास एम० ए० वेराचार्य]

इस समय सत्तार में जितनी सभायें हैं, उनमें आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का सर्व प्रथम स्थान है। आज हम आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश द्वारा सञ्चालित आर्य सभाज स्थापना शताब्दी महासम्मेलन के अवसर पर आर्यजगत् को उसका विगर्शन कराते हैं।

१-आ. प्र नि सभा उत्तर प्रदेश की सभा ही ऐसी है जिसके साथ लगभग १॥ हजार आर्य समाज हैं। आर्य समाजों की इतनी सख्या किसी प्रान्तीय सभा की नहीं है। बिहार बंगाल आदि की सभायें भी सौ दो सौ आर्य समाजों की प्रतिनिधि सभायें हैं।

२-आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का अपना बिगाल भवन है, जिसका वर्णन आगे किया जावेगा। अधिकतर प्रान्तीय सभायें आर्य समाज मन्दिरों के एक दो कमरों में सीमित हैं, उनका अपना कोई प्रान्तीय सभा का भवन नहीं। जैसे आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, आ. प्र नि सभा हैवराबाद तथा जम्मू काश्मीर आदि।

३-आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का अपना प्रेस है। किसी भी प्रान्तीय सभा यहाँ तक कि सांख्यिक सभा का भी अपना कोई प्रेस नहीं है। सांख्यिक प्रेस बिस्ली तो एक लिमिटेड कम्पनी का प्रेस है।

४-आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र आर्यमित्र आर्य जगत् का सबसे पुराना



आचार्य विश्वभद्रा जी व्यास

और सबस अधिक देश-देशान्तर में जाने वाला पत्र है। यहाँ एक पत्र है जिसका सम्बन्ध सब प्रान्तों और सब देशों से है। प्राय अधिकतर प्रान्तीय सभाओं के अपने पत्र नहीं हैं, जैसे बिहार बंगाल, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, इत्यादि सभाओं के अपने कोई पत्र नहीं हैं, ये सभायें अपने सभा चार दूसरे पत्रों में प्रकाशित कराते हैं। आ प्रतिनिधि सभा राजस्थान का मुखपत्र 'आ मातंग' है, पर वह राजस्थान में ही सीमित और प्राकृत सख्या भी साधारण है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुखपत्र आर्य मर्वाहा ने प०

जगदेवसिंह जी सिद्धाश्री के सम्पादकत्व में बहुत और आशातीत उन्नति की है। पर चाहे सांबन्ध-सिक पत्र हो या अन्य आर्यमित्र के बराबर विस्तृत होत्र किसी आर्यपत्र का नहीं है।

५-आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में १५ कर्मचारी कार्य करते हैं और कार्यालय नियमित रूप से १० बजे से ५ बजे तक चलता है। इस समय के अतिरिक्त भी सभा कार्यालय में सभा के कार्यालयाध्यक्ष प्रावि तथा सम्पादक मण्डल तथा कोई न कोई अधिकारी वर्ग भी रहते हैं। जैसे बिहार जगल आवि सभाओं के कार्यालयों में एक दो घण्टे को कार्यकर्ता आते हैं और शेष समय में ताला पड़ा रहता है। हमारे यहाँ प्रति-क्षण सब मिलते हैं।

६-हमारी सभा से सम्बद्ध इन्टर और डिप्री कालिजों की सख्य लगभग ढाई सौ है, तथा लडकों का गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन भी सभा के अधीन है और लडकियों का भी विशाल गु-कुल कन्या गुरुकुल सासनी है। जहाँ कई सौ कन्याये बनारस की परीक्षाओं देकर शास्त्री और आचार्य बनते हैं।

७-सभा कार्यालय की बहुत बड़ी और मध्य यजमाला है, जो किसी प्रांतीय सभा के कार्यालय में आपको देखने को नहीं मिलेगी, कई सौ व्यक्ति बैठकर जहाँ यज्ञ कर सकते हैं।

८-सभा का भवन बिल्सूत भूमि में बिधान सभा के पास है, जो पांच एकड़ भूमि पन्द्रह हजार गज से भी अधिक सभा भवन की भूमि का विस्तार है जो किसी भी प्रांतीय सभा या सांबन्ध-सिक सभा के लिए प्राप्त नहीं है।

सभा-भवन पहले ही विशाल था, जिसमें कार्यालय प्रेस आवि तथा कार्यालय के लोगों के निवास स्थानों के अतिरिक्त भी अनेक किरायेदार

बसे हैं, जिनसे सभा की आर्थिक स्थिति पहले ही बढ़ थी। साथ ही सभा के वर्तमान अधिकारियों भी १० प्रकाशवीर जी शास्त्री प्रधान तथा १० प्रेमचन्द्र शर्मा मन्त्री आवि के अथक परिश्रम से अब सभा भवन की नई इमारत कई लाख रुपयों की बनकर तैयार हो रही है। यह बिल्डिंग तीन मजिल की बन रही है, पहली मजिल बनकर किराये पर दे दी गई है, जिसका किराया पुराने सभा-भवन के अतिरिक्त पांच हजार रुपया मासिक है, एक गवर्नमेंट का आफिस इसमें है। दूसरी मजिल भी तैयार होने वाली है जिससे भी इतना किराया सभा को प्राप्त होगा, और तीसरी मजिल के बनने पर वहाँ सभा का कार्यालय रहेगा, और पुराना सभा कार्यालय जो अब है, वह आर्य विद्वानों और उपदेशकों का निवास स्थान बनेगा।

१०-आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का पुस्तकालय भी अति विशाल है, जहाँ अच्छे से अच्छे अनुसन्धान विभाग चल सकते हैं।

११-सभा की अपनी मर्यादा लखनऊ में ही सीमित नहीं है, प्रत्युत नारायणस्वामी भाषम तथा दानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर आवि संकड़ों बिल्डिंग सभा की ही है।

१२-उत्तर प्रदेश के आर्य समाजों के सब ही विशाल भवन सभा के नाम रजिस्टर्ड हैं, और एक अनुशासन में बंधे हैं।

आर्य जगत् के जिन लोगों ने आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का भवन कार्यालय आवि नहीं देखा है, हम उन्हें निमन्त्रित करते हैं कि वे एक बार आकर सभा का विशाल भवन मध्य यज्ञ शाला तथा कार्यालय आवि देखने की कृपा करें।

आर्य जगत् का कर्तव्य है कि सर्वशिरोमणि इस प्रांतीय सभा को देखें, और इसके गौरव की रक्षा में सहयोग प्रदान करें। * * *



स्वामी दयानन्द सरस्वती व्यक्तित्व एवं कृतित्व

श्री उमेशचन्द्र शुक्ल, एम० ए० (हिन्दी) एम० ए० (राजनीति) हिन्दी विभागाध्यक्ष,
रस्तोगी महाविद्यालय, लखनऊ ।

संक्षिप्त जीवन परिचय

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म सन् १८-२४ में गुजरात में मोरबी राज्य में टकारा नामक स्थान में हुआ था। इनका नाम पहले मूलशकर था। इनके पिता का नाम अम्बाशकर था, और वे जर्मोदार थे। वे शिव भक्त थे। स्वामी दयानन्द की पारिवारिक पृष्ठभूमि धार्मिक थी। १४ वर्ष की आयु में पिता के आवेश पर शिवरात्रि का व्रत रखा, किन्तु रात्रि में जब सभी लोग सो गये तो दयानन्द ने शिवपिण्डी पर चूहों को चढ़ते और उछलते देखा। इस पर दयानन्द के विरवासों की नींव हिल गई। छोटी बहन की मृत्यु के कारण उन्हें सभार की असारता और अणभुगुरता का सहज बोध हुआ। ३६ वर्ष की आयु में मथुरा के अग्ने सन्यासी गुरु विरजानन्द से बीसा ग्रहण की। पाँच वर्ष की अवस्था से ही आपने संस्कृत भाषा का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था।

स्वामी दयानन्द सरस्वती की मृत्युविष खिलाने के कारण ३० अक्टूबर, १८८३ को हुई थी। जोधपुर के महाराजा वैश्या-वृत्ति में लीम थे। स्वामी जी ने वैश्या-गमन के विद्वद् जब महाराजा डाँटा टकारा तो वे बड़े लज्जित हुये। वैश्या ने खोजकर स्वामी जी को विश्व विलवा दिया। इस विषय में अप्रामाणिक एवं अर्सेदिग्ध चौखन मासपी ही उपलब्ध है।

१९ वीं शदी के भारतीय धार्मिक पुनर्जागरण आन्दोलन के काल में स्वामी दयानन्द सरस्वती एकगम्भीर विचारक एवं श्रेष्ठ समाज सुधारक के रूप में हमारे सामने आते हैं जिन्होंने आर्य संस्कृति को नवीन स्वरूप देकर उसका पुनरुद्धार किया। वैदिक धर्म की नहीं व्याख्या के कारण उनका आधुनिक भारत के सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। भारत के धार्मिक पुनर्जागरण काल में चार प्रमुख आन्दोलन हुए थे, जिनमें ब्रह्म समाज रामकृष्ण मिशन, पियेसोफिकल सोसाइटी और आर्य समाज प्रमुख थे। ब्रह्म समाज कोई विशिष्ट राजनीतिक एवं सामाजिक आगरण का प्रबल आन्दोलन नहीं था। यह आन्दोलन व्यक्ति-धामी था, अतएव हजारों हिन्दू इसे सम्बेह की दृष्टि से देखते थे। स्वामी दयानन्द, रामकृष्ण परमहंस, विधेकानन्द एवं रामतीर्थ ने तो हिन्दुओं की गहरी धार्मिक भावनाओं को स्पर्श किया था, इसी-कारण वे लोकप्रिय हो सके। ब्रह्म समाज का प्रभाव कुछ शिक्षित लोगों तक ही सीमित रहा, और उसमें जन-सम्पर्क का अभाव था, किन्तु आर्य समाज एक विशुद्ध हिन्दू आन्दोलन था।

स्वामी दयानन्द ने सर्वप्रथम बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी। इस समाज की स्थापना अक्टूबर १८७५ में की गई थी। पहिले आर्य समाज के २२ नियम थे, बाद में संश्लिप्त करके उनको

१० कर दिया गया था। वैदिक धर्म के पुनरुत्थान एवं समाज सुधार का अमूल्यपूर्ण कार्य स्वामी ने किया है। उन्नीसवीं शताब्दी में भारत के धार्मिक और सामाजिक सुधारकों में राजाराम मोहनराय, रबीन्द्रनाथ ठाकुर, केसवचन्द्र सैन, बिद्यासागर, परमहंस रामकृष्ण, विवेकानन्द आदि भारतीय थे, जिन्होंने देश की महत्ता एवं प्राच्य विचारों को सार्वभौमिकता का ज्ञान कराया था। स्वामी दयानन्द उस पंक्ति में प्रथम थे। क्योंकि उनका दर्शन वेदों पर आधारित था। वैदिक धास्वा का उद्धार उनका मुख्य उद्देश्य था। सन १८७५ में स्वामी जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ में 'अपने देश में अपना राज्य' का नारा लगाया था। स्वामी जी ने कहा विदेशी शासन कितना ही अच्छा क्यों न हो अपने शासन से अच्छा नहीं होता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्वयं सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखा है, 'मेरा उद्देश्य इस ग्रन्थ के निर्माण का सत्य का प्रकाश करना है। जो सत्य है, उसको सत्य और ओ मिथ्या है, उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना है।

इस अमर कृति के माध्यम से दयानन्द ने धर्म सम्बन्धी शाश्वत मान्यताओं को प्रति स्थापना की थी। इसके अतिरिक्त वेद-माध्यम दयानन्द की भारतीय वाङ्मय की अपूर्व देन है।

क्षीमती प्लेबाट्स्को ने स्वामी दयानन्द को अद्भुतशक्ति अर्पित करते हुए कहा था कि 'यह पुरातन निश्चित-सा है कि संकराचार्य के द्वारा भारत में स्वामी दयानन्द से बढ़कर संस्कृत का विद्वाण, उद्भूत ब्रह्म और बुराईयों से लड़ने वाला दूसरा कोई व्यक्ति नहीं था।' मिलेज ऐनीबीसेन्ट के अनुसार 'स्वामी दयानन्द पहले महान् व्यक्ति थे, जिन्होंने कहा था कि भारत भारतीयों के लिये

है।' कर्मस जोसफाट ने लिखा है कि दयानन्द ने अपने अनुयायियों पर बड़ा भारी राष्ट्रीय प्रभाव डाला था। रोमाराला ने स्वामी जी की गीता के एक प्रमुख भाग के रूप में तथा इलियट के रूप में देखा था।

स्वामी दयानन्द जी एक महान् ऋषि थे। वे संस्कृत के प्रकांड विद्वान्, उद्भूत ब्रह्म एवं ओजस्वी योगी थे। उन्हें कांच पीसकर पिला दिया गया था, फिर भी योग-साधना में वे कई महीनों तक जीवित रहे, किन्तु ३० अक्टूबर, १८८३ को उनका पार्थिव शरीर इस संसार में न रहा। पं० शिवनारायणवर ने स्वामी जी को अद्भुतशक्ति अर्पित करते हुए लिखा है, 'स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भरे हुए हिन्दू धर्म को 'वेद की राष्ट्रियता' पर साकर पुनः सजीव कर दिया है। उन्नीसवीं शताब्दी में स्वामी जी ने ही सर्वाधिक रूप से जनता के हृदय में राष्ट्रियता की भावना भरी। एक तरह से स्वामी समाज बड़ा समाज से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह बड़ा समाज से कहीं अधिक राष्ट्रिय है, क्योंकि इसका प्रभाव उस वर्ग पर भी पड़ा जो अंग्रेजी से अनभिज्ञ था। स्वामी दयानन्द अपने पुत्र के लक्ष्य बड़े हिन्दू हैं, क्योंकि पारश्चात्य शिक्षा से उन्होंने कुछ भी नहीं लिया। यदि पञ्जाब, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में अंग्रेजी न जानने वाले विधवा-विवाह तथा जाति-प्रथा का विरोध करते हैं, तो इन सब पर स्वामी जी का ही प्रभाव पड़ा है।'

ईश्वर सम्बन्धी अवधारणा

स्वामी दयानन्द ईश्वर की सच्चिदानन्दपुत्र लक्षण मानते हैं, जिसके गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं। ईश्वर सर्वशक्ति, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा अनन्त और सर्वशक्तिमान है। स्वामी दयानन्द



वे चारों वेदों की स्वतः प्रमाण मानते थे। संसार में अनादि पदार्थ तीन हैं, एक ईश्वर, बीच और प्रकृति अर्थात् जगत् का कारण, इन्हीं को वे नित्य भी कहते हैं, जो नित्य पदार्थ हैं, उनके गुण, कर्म स्वभाव भी नित्य ही हैं। मुक्ति के साधनों की खोज करते हुए स्वामी जी ने ईश्वरोपासना, योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य, ज्ञान विद्वानों का सरसंग, सत्यविद्या और सुविचार माना है।

धर्म सम्बन्धी विचार

धर्म दयानन्द के अनुसार ईश्वरीय आज्ञापालन है। धर्म का एकमात्र स्रोत वेद है, अतः धर्म वेदोक्त है। धर्म सम्बन्धी सिद्धांत जिकाल में शारवत हैं, और इनमें परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं रहती है। सत्य धर्म का आधार है, और मानव कल्याण और प्रगति का एकमात्र कारण है। धर्म में आडम्बर एवं हिंसा के लिये कोई स्थान नहीं है। धर्म के स्वरूप को समझने के लिये वेदाध्ययन ही मूलाधार है। ऋषिकृत वेदों के मन्त्रों की व्याख्या इस विचार में निहित है कि वेद धार्मिक, नैतिक और वैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन करते हैं, वेद पूर्ण ईश्वर प्रेरित ज्ञान है। वेदों में ऐकेश्वरवाद का वर्णन मिलता है। दयानन्द ने बहुदेववाद के स्थान पर एकेश्वरवाद का समर्थन किया है।

स्वामी दयानन्द जी 'बर्णाधर्म' गुण कर्मों की योग्यता से मानते थे। स्वामी दयानन्द जी 'प्रजा' के सम्बन्ध में कहते हैं कि प्रजा के अनाद्य आरो-
ग्य ज्ञान-पान आदि से सम्पन्न रहने पर राजा की बड़ी उन्नति होती है। प्रजा को अपने सन्तान के सदृश सुख देवे और प्रजा अपने पिता सदृश राजा और राजपुरुषों को जाने। स्वामी जी भारत को आर्यावर्त मानते हैं, वे लिखते हैं कि 'आर्यावर्त,

वेद इस भूमि का नाम इसलिये है कि इसमें आदि सृष्टि से आर्य लोग निवास करते हैं, परन्तु इसकी अवधि उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पश्चिम में अटक और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी है। इन चारों के बीच में जितना देश है, उसको आर्यावर्त कहते हैं, और जो इनमें सबा रहते हैं, उनको भी आर्य कहते हैं। 'सत्यवाचं प्रकाश के 'छठे समुत्सास' के राज-धर्म का वर्णन है।

स्वामी जी वेदों की अपौरुषेयता में विश्वास करते थे। उन्होंने वेदों का हिन्दी भाषा में रूपा-
न्तर करना शुरू किया ताकि जनता इस वैदिक धर्म को सरलता से समझ सकें। वैदिक वाङ्मय के प्रचार में उन्होंने अपना सारा समय लगा दिया था। भारतीय जीवन को संवारने के लिये वेद संहिताओं के व्यापक ज्ञान के पुनरुद्धार पर बल दिया था। 'आर्य सस्कृति के पुनरुत्थान के लिए दयानन्द ने वेदों की महती आवश्यकता प्रतिपा-
दित की। वेदों की आधारशिला पर ही उदीय-
मान भारतीय राष्ट्र को वे स्थापित करना चाहते थे।'

आर्य समाज के नियम

स्वामी दयानन्द की सबसे बड़ी देन 'आर्य समाज' है। वे वेदों के प्रचार की ओर बढ़ते हुए उसे ब्रह्मवाक्य मानते थे। वे भारतीयों से पारश्चात्य सभ्यता में न रंगने को कहकर 'वेदों की ओर लौटो' बाला मारा लगाते थे। वेदों पर सबका अधिकार हो सकता है, और उसे सब लोग पढ़ सकते हैं। इन्हीं में 'आर्य समाज' की स्थापना कर स्वामी जी ने देश में धार्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण का कार्य प्रारम्भ किया। आर्यसमाज की सबसे ज्यादा शाखायें पंजाब के नगरों में थीं, और पंजाब में ही सबसे ज्यादा प्रचार हुआ। हम

के यहाँ सक्षेप में आर्य समाज के बल नियम लिख देते हैं—(१) आर्य समाजियों का सिद्धान्त है कि ब्रह्मज्ञान से अन्य ज्ञान की प्राप्ति सम्भव है। ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है, वही सर्वज्ञ है।

(१) आर्य समाजो इस बात पर बल देते हैं कि सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या में आने जाते हैं, उन सबका आवि मूल परमेश्वर है।

(२) ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, ब्यालु अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, 'अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अमय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करने योग्य है।

(३) वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आयो का परम धर्म है।

(४) सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वथा उद्यत रहना चाहिए।

(५) सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिए।

(६) सत्कार का उपकार करना इन समाज का मुख्य उद्देश्य है—अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

(७) सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।

(८) अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

(९) प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना चाहिए।

(१०) सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र हैं। आर्य समाज का धर्म वैदिक धर्म है। आर्यसमाज

कर्म सिद्धान्त एवं पुनर्जन्म में विश्वास करता है। आर्य समाज की ओर से शिक्षा-प्रसार के लिए साहौर में बयानन्द ऐम्बे वैदिक कालेज (१८८६) और मुम्बई कागड़ी (१९०२) की स्थापना की गई थी। आर्यसमाज धाद-पर्व का विरोधी है। लाला लाजपतराय के नेतृत्व में अछूतोंद्वारा का काम देश में आगे बढ़ाया गया। अछूतपन हिन्दू-समाज का एक अभिशाप है। स्वामी जी गोसम्ब-जुन एवं गौरक्षा के पक्षपाती थे। भाषणे 'गोकव-बानिधि' नाम की एक छोटी-सी पुस्तक लिखी थी। गो-हत्या के प्रश्न को लेकर आर्यसमाज ने ब्रिटिश शासन में संघर्ष किया।

आर्यसमाज के सामाजिक सुधार कार्यक्रम

(१) मूर्ति-पूजा का विरोध करना और निराकार ब्रह्मोपासना का उपदेश देना, वेदों में मूर्ति-पूजा का वर्णन नहीं मिलता है। वेद का ब्रह्म तो सत् चित्, और ज्ञानन्व स्वरूप है। स्वामी जी ने मूर्ति-पूजा का तोष खण्डन किया, और वैदिक साहित्य के पठन-पाठन का प्रचार किया।

(२) जाति-पाति के भेद भाव को बहू सिटाना चाहते थे और स्वामी जी जन्मना नहीं, कर्मभा जातिभाव का बन्धन मानते थे। कर्म से मनुष्य नीच और ऊँच होता है। अस्पृश्यता को स्वामी जी ने वेद विरुद्ध बताया था।

(३) स्त्री-शिक्षा पर बल देना आर्य समाज का मुख्य कार्य है। स्त्रियों को अनिर्धार्य निःशुल्क शिक्षा दी जाय तो क्यावा अच्छा है : नारी के गौरव में मातृत्व का विकास छिपा है।

(४) विधवा-विवाह करना।

(५) भारतीय धार्मिक में वेदों का पठन-पाठन, शाकाहारी भोजन। स्वामी जी एक महान् सामाजिक सुधारक थे और सामाजिक अस्पृश्यता के उद्घोषक थे।

आर्यसमाज की हरकत में ही देश व जाति की बरकत है

[श्री ५० नरेन्द्र जी हैबराबाद]

भारत देश की राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, सभ्यता तथा ज्ञान पान व रहन सहन स्वच्छी परिस्थितियाँ प्रत्येक रूप में धीरे-धीरे बिगड़ती जा रही थीं। धर्म में उद्देश्यों का नियंत्रण मानव-जीवन से समाप्त-सा होता दिखाई दे रहा था। स्वार्थ बढ़कर अपनी चरमसीमा पर पहुँच चुका था, परिणाम यह हुआ कि भारत का वह महान् और स्वर्णयुग जिसके उद्देश्यों की मान्यता करने में ही सत्तार के विद्वान् और मनीषी अपने मान और सम्मान का अन्वय करते थे, वह समाप्त हो गया। भारतीय जातियाँ असीम विनाश व पारस्परिक गुप्त मनमुटाव और ऐक्यहीनता का शिकार हो चुकी थीं। बेद भगवान् के मन्त्रों की पूजा, के आबश, निर्धन, विवश, धनहीन और असमर्थ साधारण जनता के मन से सीहार्ब पूर्ण रूप से मिट चुकी थी। जिसके कारण भारतीय सीमा से दूर बसने वाली जातियाँ खँबर की घाटी से निकल कर भारतीय मैदानों में पहुँची—जैसे कि मुहम्मद बिन कासिम से लेकर बहादुरशाह अफर दिल्ली के अन्तिम बादशाह तक निरन्तर इस्लामी साम्राज्य का युग बना रहा। इतनी सम्भी अबधि के साम्राज्य-युग में मुसलमानों ने न केवल अपने साम्राज्य का सिक्का जमाया बल्कि इस्लामी अधिकारों के अन्तर्गत मूर्ति पूजकों को काफिर बताकर मल्ट-मल्ट किया, और इसका वह उचाहरण प्रस्तुत



श्री ५० नरेन्द्र जी

किया कि खोज करने पर भा इस्लामी युग के आरम्भ से अन्त तक के इतिहास में नहीं मिल सकता।

ऐसे अनिश्चित और भयानक युग में जो जातियाँ इस्लामी तूफान में लोहा लेती रहीं, उनके साहस, और धीरता और धैर्य तथा उनके महान त्याग की कहानियों से भारत के इतिहास का प्रत्येक पृष्ठ चमकता हुआ दृष्टिगोचर होगा। और उनके बलिदान पर सत्तार की जातियों को आज भी ईर्ष्या है। छत्रपति शिवाजी, महाराजा प्रताप, मुंद् गोविन्दसिंह, बन्दा बिराजी के असाधारण व्यक्तित्व

ने इस्लामी आक्रमणों से हिन्दू जाति और सस्कृति को सुरक्षित रखने और आक्रमकारियों का मुह तोड़ उत्तर देने की बहु शक्ति उत्पन्न की कि जिससे टाड जैसे अप्रेज को इन जाति के मार्ग प्रदर्शक शक्तिशाली, साहसी और वीरों का लोहा मानना पड़ा। देश और जाति जीवन कारण की खोजातानी में फली हुई थी। इन प्राणों की आहुति देने वालों और दुःखित हृदय ने उस समय की दूषित वायु की विशा ही बबल दी। किन्तु फिर भी वे स्वयं राष्ट्रों और खोजातानी से सघर्ष करते हुए जाति के जीवन को सुरक्षित करते रहे। परन्तु यह अत्यन्त माहस का विषय है कि इनकी बोरता के समक्ष आकाश भी कांप कर रह जाता था, और शत्रुओं के पावाण हृदय प्रकाशित होकर निरुत्साहित हो जाते थे।

हिन्दू जाति को कुछ सुख-सुविधा मिली थी कि एक दूसरे साम्राज्य युग का उदय हुआ, और उसने रही-सही कसर भी निकाल ली, और अपने साम्राज्य की नींव सगोत्रों के ऊपर रख दी। अप्रेजों को भारत से बाहर निकालकर रखने वालों ने अपने जीवन का बहुमूल्य समय जबानी युवापन भारतमाता के घरों में भेंट कर दिया। इन युवाओं के बलिदानों के बहते रक्त में अप्रेजों का साम्राज्य-द्वब गया। अप्रेज साम्राज्य के युग में दो शक्तियां काम कर रही थीं, पहली शक्ती केवल धार्मिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक व आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने में सलग्न था, दूसरी शक्ति केवल राजनैतिक मन्तव्य की दृति में लगी हुई थी। पहली शक्ति का नाम महर्षि दयानन्द था, तो दूसरी शक्ति का नाम महात्मा गांधी था, महात्मा गांधी ने जो मार्ग अपनाया वह बहुत सीमा तक भारतीय जनता को अभिहित कर रहा

थ्योंकि इतिहास मुसलमानों की शतानां करतूतों से भरा होने पर भी हिन्दू-मुस्लिम एकता का नारा देकर गांधी जी ने हिन्दुओं के घाव पर नमक छिड़कने का काम किया। लेकिन महर्षि दयानन्द ने जाति को सभी निबंलताओं से विमुक्त करके सामाजिक मान्यताओं तथा न्याय की नींव पर एकता का नारा लगाने की घोषणा की और कहा कि एकता उत्पन्न की जाती है, खरीदी नहीं जाती क्योंकि खरीदनेलिक स्वतन्त्रता के मन्तव्य की दृति ने मुसलमानों को उनकी मुह मांगी सुबिधाएं देकर एकता खरीदना चाहते थे, मगर वह ५० (पचास) करोड रुपया पाकिस्तान को दिलवाकर भी मुसलमानों की सहृदयता प्राप्त करने में बहुत बुरी तरह असफल रहे, और साथ में जीवन में भी उनको सफलता प्राप्त न हो सकी। महर्षि दयानन्द ने कहा, या कि एकता समान शक्ति धारियों के बीच वस्तु है। पहले भारतीय जाति में जो सामाजिक अभाव है, उसको दूर किया जाए, और जाति में आपसी भावात्मक एकता को सबल बनाया जाए तब ही मानवीय अतृत्व, समानता, मेल-जोल, न्याय और सनेह के वह महान् विचार जो बश-रग और भौगोलिक सीमा से ऊपर रह सकते हैं, और तब ही एकता का बड़ाए जाने पर मायोदय की खोज में सफलता मिलनी समभव है। परन्तु दयानन्द की इस बात को किसी ने नहीं मुना धोर न स्वीकार ही किया। उसका राजनैतिक परिणाम १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत के विभाजन के रूप में प्रकट हुआ। सहस्रों वर्षों का भारत जाबाहुर लाख की राजनैतिक शक्ति अतृरता और शासन करने की अवीप्सित लिप्ता में जिन्हा जैसे देश द्रोही शत्रु के साथ भारत के विभाजन के उद्देश्य को स्वीकार कर लिया, जिसका कारण महर्षि अर्गिन



बाबु, राम, कृष्ण, कबीर, नानक, शिवाजी, प्रताप, पाणिनी और महर्षि दयानन्द की यह पावन जन्म भूमि अपवित्र पाकिस्तानियों की सौंप दी गई।

१९४७ की स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत अपने प्राचीन आदर्श पर स्थित रहकर नए आदर्शों के सम्मिश्रण के साथ भारत का भविष्य उज्ज्वल करेगा ऐसा साधारण जनता का विचार होने लगा था। परन्तु खेद है कि सबके हृदय की आशाओं पर निराशा का तुषारापात हो गया और भारत की अपनी सभ्यता, शिक्षा, भाषा और संस्कृति तथा व्यक्तित्व के सारे उच्च आदर्श धरे के धरे बह गए। भारत एक नवीन मार्ग अपना कर कम्युनिज्म का आंचल धामकर रूस की गोद में बैठता चला जा रहा है। स्वतन्त्रता के २५ वर्षों में एक आदर्श पुरुष के प्रयत्नों से प्राप्त की गई स्वतन्त्रता की जो दुर्गति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होती जा रही है उसको देखकर प्रत्येक बुद्धि जीवी और विचारवान् भारतीय किकर्त्तव्य विमूढ़ है। भारत की वर्तमान दशा को देखकर आर्यसमाज आँखें बन्द किये बैठा रहे यह आज की स्थिति में किसी प्रकार भी सम्भव नहीं, क्योंकि सम्पूर्ण ज्ञान की मष्ट-भ्रष्टता के पश्चात् अपने कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिए मैदान में आ खड़ा होना कोई सार्थकता नहीं रखता। इसलिए आर्यसमाज को अपने स्थापना शताब्दी से पूर्व सम्पूर्ण भारत और विदेश में वैदिक धर्म के प्रचार के एक बिस्तृत कार्यक्रम प्रयोग में लाने के लिए सब समाजों और आर्य प्रतिनिधि सभा को तीन मास पूर्व भेज दिया है। यह कार्यक्रम स्वयं अपने में निश्चित अस्तित्व रखता है। सार्ववैशिक सभा को विशेष ध्यान इस बात पर देना होगा कि आर्य प्रतिनिधि सभाये इस कार्यक्रम को कहीं तक प्रयोगात्मक रूप से

रही है और यदि नहीं तो उसका कारण क्या है ? इस तथ्य की खोज करने और इनको आवेश देने की प्रत्येक मास व्यवस्था बनाये रखनी होगी। तब ही सन् १९७५ तक आर्य समाजों और हिन्दुओं के जीवन में एक नए प्राण और एक नया मोड़-उत्पन्न करके सफलता प्राप्त की जा सकती है। तब ही वैदिक धर्म भारतीय सभ्यता, शिक्षा, भाषा और संस्कृति व व्यक्तित्व में एक आन्दोलन-नात्मक परिवर्तन उत्पन्न किया जाकर भारत भारत बनाए रखने में आर्य समाज ऐतिहासिक रोल अभिनीत कर सकेगा।

मैं आर्य समाज और आर्य प्रतिनिधि सभाओं से विनम्र शब्दों में अनुरोध करता हूँ कि शताब्दी से पूर्व गति में आ जायें और अपने-अपने प्रान्त में फिर से आर्य समाज के स्वर्णयुग के स्वप्न को साकार कर दें जिसको एक समय कभी सत्तार ने देखा था और जिसको देखकर अमेरिका के योगी डेविड आण्ड्रोजेवशन ने कहा था कि 'भारत में एक आग जलती दिखाई दे रही है जो भारत से फलकर हिमालय पर्वत की उच्च शिखा को छूती हुई योरुप व अमेरिका और अफ्रीका के अन्दर की बुराइयों को जलाती हुई अन्धकार को प्रकाश में परिवर्तित कर देगी उस आग का नाम 'स्वामी दयानन्द' प्रवर्तक आर्य समाज है।'

इसी प्रकार भारत के वायसराय लार्ड माथे ब्रक ने भी कहा था कि—

'विश्वोद्दी सन्यासी दयानन्द से अंग्रेजी राज्य को चौकड़ा रहना चाहिए। यह साम्राज्य के लिए एक अत्यन्त भयकर तत्त्व है।

इन विचारों के प्रकाश से यह बात स्पष्ट प्रकट हो जाती है कि आर्य समाज और महर्षि दयानन्द को सत्साह किस पवित्रता की दृष्टि से

बेखता आया है और आज आर्य समाज अपने कार्यों से साधारण जनता में जो प्रभाव उत्पन्न कर रहा है, वे किसी रूप में भी हमारे लिए सम्पूर्ण रूप से लज्जा का परिणाम नहीं तो गौरव का द्योतक भी नहीं है। वर्तमान ब्रह्मा को प्रारम्भ से लेकर अन्त तक परिवर्तित और परिवर्धित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। उदाहरणतः—

(१) समाज के चर्चों की नीति नीति में परिवर्तन लाना।

(२) आध्यात्म प्रचार की ओर अधिक ध्यान देना जिससे अन्ध विश्वास समाप्त हो सके।

(३) शिक्षा सम्स्थाओं को धार्मिक चर्च (आर्य समाज) से अलग रखकर इसका एक फेडरेशन बना दिया जाये जो शिक्षा सस्थाओं अर्थात् जो गुरुकुल और कालिजों पर निरीक्षण कर सके।

(४) समाज के विस्तृत कार्यक्रम की रचनात्मक रूप देने के लिए सांबादेशिक सभा को वैधानिक रूप में संगठन को दृढ़ रखने के लिए अधिक

से अधिक शक्ति प्रयोग में लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

(५) अनुशासन (डिस्प्लिन) व व्यवस्था का पालन न करने वालों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए।

(६) साधारणतया प्रत्येक आर्य को वैदिक सिद्धान्तों पर आचरण करने प्रयोगात्मक रूप से कार्य करने व कर्मों पर ध्यान देना चाहिए।

उपरोक्त पक्तियों पर आर्य समाजों और मार्ग देशिक सभा को अनिवार्य रूप से ध्यान देना होगा और पारस्परिक भेद-भाव को सदैव के लिये नष्ट करके प्रत्येक आर्य सही अर्थों में वैदिक धर्म का अनुयायी बनकर दूसरों को आर्य बनाने में दिन-रात एक कर दे। स्मरण रहे कि आर्यसमाज मिशनरी जब हुरकत में आयेगी तब ही देश व जाति में बरकत की रोगनी फेंलेगी। इसलिए तो किसी ने कहा है कि "हुरकत में बरकत है।"

संभलना पड़ेगा

[श्री-प्रकाशचन्द्र कविरत्न अजमेर]

उठो आर्यवीरो ! ये सुस्ती है कंसो,
समलने के दिन हैं, समलना पड़ेगा।

लगी वीह उन्नति की जग-क्षेत्र में है,
तुम्हें सबसे आगे निकलना पड़ेगा।

अखिल लोक उप कारिणी वेदवाणी,
विमल सभ्यता प्रिय मुराज्यादि के हित।

अधकती वृत्ताशन में अलना पड़ेगा,
तुम्हें घोर विष भी निगलना पड़ेगा।

ध्यानन्द ऋषिराज के सार्व भौमिक,
सदोदेश्य की हो नहीं पूर्ति जिनसे।
उन्हीं सस्थाओं व वल बिनियों की,
विकट बलवन्तो में निकलना पड़ेगा।

मृतक राष्ट्र की जेतना दी तुम्होंने,
महीं तुच्छ तुम है महाशक्ति तुम में।

अजो ! कान्ति के शान्ति के अंध झूतो,
तुम्हें अपिणी बन के चलना पड़ेगा।

प्रबल युक्ति में शक्ति में है बचाना,
सकल राष्ट्र की आक्रमण कारियों से।

कृतघ्नी कुटिल सपं घर में घुसे जो,
प्रथम मुख उन्हीं का कुचलना पड़ेगा। **

आर्यसमाज में उत्तरप्रदेश की विभूतियां

[श्री ब्रह्मनारायण जो सक्सेना एम. ए. एल. एल. बी. एडवोकेट, बरेली] .

यह गौरव मेरठ को ही प्राप्त है कि यहाँ सन् १८७८ में महर्षि ने अपने करकमलों से आर्य समाज की स्थापना की, यहाँ आर्य प्रतिनिधि सभा का जन्म हुआ। सभा की रजत और स्वर्ण जयन्ती भी इसी नगर में धूमधाम से मनाई गईं। यह सत्य है कि महर्षि ने अपने करकमलों से सन् १८७५ में बम्बई काकड बाड़ी आर्य समाज की स्थापना की, अतः १९७५ में उक्त आर्य समाज वहाँ अपनी शताब्दी मनावेगा। आर्य समाज की शताब्दी मनाने का अधिकार केवल आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को ही है। वेद-प्रचार का अगुरु ऋषि ब्रह्मयानन्द के मस्तिष्क में मुनि बिरजानन्द ने इसी प्रदेश में वपन किया। आर्य समाज की रूप-रेखा नियम उद्देश्य सब यहीं निमित्त हुये। महर्षि के पूर्वज भी इसी प्रदेश के थे, अन आर्य समाज की स्थापना शताब्दी मनाने का अधिकार यदि किसी सभा को है तो वह उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा को ही है। आर्य समाज स्थापना शताब्दी मनाने का प्रस्ताव हमारी सभा के प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री ने आज से ८ वर्ष पूर्व आर्य समाज मानुषा में ध्यक्त किया था। मेरठ में शताब्दी समारोह दो वर्ष पूर्व मनाने का निश्चय सार्व-देशिक सभा के निश्चय का कार्यान्वित करना है। पार्षदों के हमारी शिरोमणि सभा है, उसी का निश्चय था कि बम्बई में शताब्दी समारोह मनाने में पूर्व प्रदेशीय सभायें अपने-अपने प्रदेशों में समा-रोह मनावें। मेरठ सम्मेलन उसी निश्चय का

अनुसरण मात्र है।

महर्षि ने सायण महीधर अष्टक के गन्दे अश्लील और बेतुके वेद भाष्यो से ऊबकर— जिन्होंने वेदों का महत्त्व घटा दिया जिनके कारण पाश्चात्य विद्वानों ने हमें जगली और अमध्य कहा—एक नवीन दृष्टि-कोण, नवीन विचारधारा, नवीन भावार्थ जनता के समक्ष रखा। यो तो उन्होंने चारों वेदों के मन्त्रों के वेदता, छन्द, ऋषि और विषय की सूची तैयार कर ही थी, परन्तु भाष्य केवल वे सम्पूर्ण यजुर्वेद और ऋग्वेद के ७वें मण्डल के ६१ सूक्त के दूसरे मन्त्र तक का ही कर पाये। उन्हें सम्पूर्ण वेदों का भाष्य न कर सकने का (मृत्यु के कारण) कलक रह गया। यही बात मार्मिक ढंग से उन्होंने अपने विषदाता से कही—“मृत्यु मरने का दुख नहीं है। दुख है तो यह है कि मैं वेद भाष्य जैसा जन उपयोगी कार्य पूरा नहीं कर पाया।

आर्य विद्वानों के कलेजे में आग-सी लग गई। वे ऋषि के भाष्य की पूर्ति करना चाहते थे। मेरठ के प० तुलसीराम स्वामी ने जो वैदिक वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान और कर्मठ नेता थे—मामवेद पर सुन्दर वैदिक भाष्य की रचना की। वेद भाष्य के अतिरिक्त आपने ५० ग्रन्थ लिखे। मनुस्मृति का भी आपने संशोधित संस्करण प्रकाशित किया। गुरुकुल विश्वविद्यालय के अध्यक्ष पदसँक थे। सन् १९०९ से १९१३ तक आप आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे।

अथर्ववेद के भाष्य के लिए महर्षि के भक्त

शिष्य प० क्षेमकरण दास त्रिवेदी इस कार्य के लिए अप्रसर हुए और उन्होंने इसका भाष्य किया। महर्षि ने आपको सस्कृत पढ़ाई और अपने कर-कमलों से यज्ञोपवीत दिया। वे सौम्य प्रकृति के जीव थे। वेदों में लौका विद्या पुस्तक की रचना तथा गोपथ ब्राह्मण का भी आपने भाष्य किया। वेद भाष्य काल में प्रायः रात-रातभर ध्यानावस्थित रहते और सोचते जब कोई उलझन सुलझ जाती तो प्रफुल्लित हो जाते। ६० वर्ष की अवस्था में भाष्य करने का साहस उन जैसा ही गम्भीर और दृढ़ निश्चय कर सकता था।

ऋग्वेद का भाष्य महामहोपाध्याय आर्य मुनि जी ने तथा प० शिवशंकर काव्यतीर्थ ने किया, किन्तु पूरा वे भी नहीं कर सके।

वेद के प्रति महर्षि भक्तों में ही नहीं उनके अनुयायियों में भी आस्था कायम हुई। सगर-तरीन मुरादाबाद के मिठ शिवचन्द्र और उनका भाई ने वेद भाष्यायें एक लाख रुपये देने का सकल्प किया। पन्द्रह हजार रुपये उन्होंने समा को दिए। सर्वश्री गणपत्याद उपाध्याय, रामवल्लभ शुक्ल, प प्रियरत्न व प द्विजेन्द्र नाथ ने यज्ञवेद पर भाष्य किया। आर्य जनता ने उनका समुचित स्वागत नहीं किया। स्वयं दानदाता भी उस में सन्तुष्ट नहीं हुए भय का कार्य बन हो गया।

प० श्री जयदेव विद्यालकार ने चारों वेदों पर भाष्य किया, जिसे अनन्तर के अय माहृत्य मण्डल ने प्रकाशित किया। केवल भाष्य ही नहीं। नई पीढ़ी ने वेदाध्ययन में भी रुचि ली। सभा के उपप्रधान आचार्य विश्वभवाः ध्यास एम० ए० तथा उनके पत्नी श्रीमती देवी एम० ए० ने सस्कृत विश्वविद्यालय धाराणसी से वेदाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। आर्य समाज के आविर्भूत युग में शास्त्रार्थ की धूम थी। प्रतिदिन

कहीं न कहीं ईसाइयों, मुसलमानों, पौराणिकों व जैनियों से अल्लाहा जमता। प्राम-प्राम गली-कूचों में शास्त्रार्थ होते थे। आर्य समाज के नेता व विद्वान् ही नहीं चणरासी भी शास्त्रार्थ कर लेता था। महर्षि ने स्वयं बड़े बड़े शास्त्रार्थ किए। उनका ईसाइयों से सबसे बड़ा शास्त्रार्थ रेफ्रेण्ड डा० टी० जे स्काट डाक्टर लाथ त्रिविजिटी से बरेली में, मुसलमानों के मौलवी अब्दुलकासिम से तथा पौराणिकों से १८६६ में धाराणसी में हुआ। इस शास्त्रार्थ में महर्षि की विद्वत्ता की सारे देश में घाक जमा दी और पौराणिक पण्डितों की कमर तोड़ दी। १९६६ में उसी शास्त्रार्थ की स्मृति में काशी में शास्त्रार्थ शताब्दी मनाई गई।

शास्त्रार्थ श्रेष्ठ में भीष्म पितामह थे—दर्शन केसरी स्वामी ब्रह्मानन्द जी। आपका जन्म तो पंजाब में हुआ, परन्तु कर्मश्रेष्ठ उत्तर प्रदेश था। आपसे तक तोर के आगे बड़े-बड़े वागीश शास्त्र डाल देते थे। शास्त्रार्थ के अतिरिक्त आपने कई ग्रन्थ लिखे। कई निशुल्क गुरुकुल स्थापित किए जिनमें गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर तथा गुरुकुल सूर्यकुण्ड बढायूं हैं। १९१३ में आर्य समाज हाथरस में आपका स्वर्गवाम हुआ। “महर्षि की बसोयत पूरी करना”—अन्तिम बसोयत की। पंडित रामचन्द्र बेहलवी भी शास्त्रार्थ श्रेष्ठ के अर्जुन थे। आप भी हापुड़ उत्तर प्रदेश के बामो थे। ईसाई पादरों और मुसलमान मौलवी आपके नाम से धरते थे।

गुरुकुल सिकन्दराबाद के स्थापक पंडित मुरारीलाल भी चतुर्भुंजी प्रतिभा के स्वामी थे। ईसाइयों, मुसलमानों, पौराणिकों से डटकर मुकाबिला करते थे।

आगरा में प० भोजवल्लभ मुसाफिर विद्यालय की स्थापना की। उसमें शास्त्रार्थ उपदेशक व

प्रचारक तैयार किये जाते थे। अमर स्वामी जी (ठा० अमर सिंह) कुँ० सुखलाल इसी विद्यालय की विभूति हैं। शास्त्रार्थ महारथ प० बिहारोलाल शास्त्री काव्य तीर्थ भी यहाँ अध्यापन कार्य करते थे। सुखलाल जी को अटक से कटक और धौनगर से हैदराबाद तक प्रचार की छूम थी। संकड़ो लोग आपके प्रवचनों से जबानी से ही आर्य समाज के बीबाने और उद्यानन्द के मस्ताने बने। प० वशी धर पाठक और प० शिवशर्मा ने बहू रंग चढ़ाया कि आज तक नहीं हटा। प्रचारार्थ जहाँ जाते हैं रंग जमा देते हैं। मृदुल स्वभाव सिद्धान्त दृढ़ता गहरे स्वाध्याय के कारण सर्वत्र सर्वप्रिय हैं। चाँवपुर में ईसाइयों को वह मुह तोड़ जबाब दिये कि भागते ही बनों। मुसलमानों ने कन्धों पर उठा लिया और आमा मसजिद में ले जाकर व्याहयान कराया। पुरी के वर्तमान शकराचार्य को (जो उम ममय चन्द्रशेखर शास्त्री थे।) कचोरा त्रि० इटावे में बहू रंगडा दिए कि अब नक याद है। बरेली के मुश्क आर्य में उक्त शकराचार्य को शास्त्रार्थ के लिये आमन्त्रित किया यह भी लिखा कि आपके पूर्व परिचित प० बिहारी लाल में शास्त्रार्थ करना होगा उत्तर में आब ब्राय शाय लिखकर भेज दिया। श्री माधवाचयं को तो कई बार चित्त किया है।

आय समाज के क्षेत्र में पुरुषों ही ने नहीं स्त्रियों ने भी उल्लेखनीय कार्य किया है।

बरेली निवासी लाहौर के प्रसिद्ध बॅरिस्टर राय रोशनलाल की भतीजी श्रीमती लक्ष्मीदेवी ने आरम्भ में बरेली को कर्मभूमि बनाया। १९३२ में आपने मुश्कल सासनी (हाथरस) को अपने हाथ में लिया। अपने कार्य कौशल से जगल में मगन कर दिया। सासनी का कन्या मुश्कल आज

प्रथम श्रेणी की संस्था है। आपने अपनी बसक पुत्री अक्षयकुमारी का विवाह माति पति तोडकर श्री महेश्वरप्रताप शास्त्री एम० ए० एम बी एन से किया। अक्षय जी आजकल कन्या मुश्कल हाथरस का सचानन बड़ी तत्परता वक्षता और कुशलता से कर रही हैं। श्री महेश्वर प्रताप शास्त्री आगरा के लोकप्रिय सामाजिक कार्यकर्ता ठा० माधोसिंह जी के पुत्र हैं। आप डी० ए० बी० कालेज वेहरा-दून, लखनऊ, बँकिंग कालेज बडौत के प्रधानाचार्य रहे हैं। मुश्कल कागडो बिष्पविद्यालय के आय कुलपति भी रहे हैं।

आय समाज की शिक्षा-मस्थाओं में अनेक महिलायें कार्य कर रही हैं। परन्तु आर्य जगत् में प्रचार काय में रत बों ही हैं। श्रीमती माधुश्री देवी एम० ए० साहित्याचार्या बरेली। समा के उपप्रधान आचार्य विशुद्धानन्द मिश्र एम० ए० शास्त्री व्याकरण के विद्वान् हैं, आबकी पत्नी श्रीमती निर्मलादेवी एम० ए० आचार्या भी विद्वधो हैं।

डा० प्रसादेवी पी० एच० डी० डा० पुष्पा पी० एच० डी० दोनों ने व्याकरण जैसे गम्भीर और कठिन विषय में पी० एच० डी० किया है। धारणसी में वेदाध्यायन का कार्य कर रही हैं।

विद्वान्

उत्तर प्रदेश में आर्य-जगत् को अनेक विद्वान् दिए। डा० मंगलदेव शास्त्री डी फिल, डाक्टर मुशीराम एम० ए० पी० एच० डी०, डी-सिद्, डा० धर्मेश नाथ लर्क शिरोमणि एम० ए० डी-सिद्, प० देवदत्त शर्मोपाध्याय, आचार्य हरिदत्त शर्मा शास्त्री एम० ए० पी० एच० डी०, प० गंगा प्रसाद उपाध्याय एम० ए०, रायबहादुर प० गंगा-प्रसाद एम० ए० पीक जज, प० रामदत्त शु-ल आदि।

संन्यासी

यों तो संन्यासी को परम्परा मूनिवर बिरजानन्द से आरम्भ होती है। महावि स्वयं उसी परम्परा से आते हैं। इन ऋषि कीटि के संन्यासियों के अतिरिक्त सर्वप्रथम बीतराग निस्पृह स्वामी सर्वशानन्द जी का नाम आता है।

स्वामी जी मधुर भाषी, सरल चमूरी विचारक और भाषण कर्ता थे। आपने हरदुआगत जिला अलीगढ़ में कानो नदी के तट पर गववा नन्द साधु आश्रम की स्थापना की। स्वामी ध्रुवा-नन्द, प० शंकरदान जी इसी आश्रम की देन हैं। संन्यासियों में स्वामी अनेकानन्द सरस्वती, श्री ब्रह्मानन्द जी दण्डी जिन्होंने एग्रा में आर्य गुरुकुल की स्थापना की है और अमृत पूर्व विशाल यज्ञशाला निर्माण करा रहे हैं। स्वामी परमानन्द जिन्होंने आगरा बुन्देलखण्ड आदि में अयक प्रचार किया, हमारे ही प्रवेश के रत्न थे।

सेठ, उपाध्याय, गुकल और तिवारी युग-समा के निर्माताओं में महात्मा नारायण स्वामी जी का प्रमुख हाथ था। परन्तु सेठ-उपाध्याय शुक्ल-तिवारी युग भी गौरवपूर्ण रहा। सेठ मदन मोहन, गंगा प्रसाद उपाध्याय, गंगा प्रसाद जज, रामवत शुक्ल व रामबिहारी तिवारी समा के स्तम्भ थे। इन्हीं के नाम से मन्त्रालयों की शुद्धि हुई, नायकजाति के सुधार का कार्य हुआ। आर्यनगर सेटिलमेंट की स्थापना हुई, मयूरा में दयानन्द जन्म शताब्दी मनाई गई, मना के लिये स्थायी कार्यालय ५ मोरा बाई मार्ग लखनऊ पर खरीदा गया, जिसका नाम 'नारायण स्वामी भवन' रखा गया।

राय साहब मदन मोहन सेठ बुन्देलखण्ड के निवासी थे। एम० ए० एल० एल० बी० करने के पश्चात् आपने विकास की, मुक्ति हुए, और जिला न्यायाधीश के पद से अवकाश ग्रहण किया।

कई बार समा के प्रधान रहे। आर्यसमाज धार्मिक संस्था है, राजनैतिक नहीं। इस पर आपने लार्ड मार्ले सेक्रेट्री आफ स्टेट फार इण्डिया के नाम बहुस्वपूर्ण पत्र लिखे। इस प्रकार आर्य समाज की वृद्धि सरकार के कोप से रखा की।

प० गंगा प्रसाद उपाध्याय एम० ए० कुशल अध्यापक ही नहीं—विचारक सुधारक और लेखक थे। आपने जितने ग्रन्थ लिखे, उतने भाव्य ही किसी अन्य ग्रन्थकार ने लिखे हों। अपेक्षी हिन्दी ही में नहीं उर्दू में भी आपने अनेक ग्रन्थ लिखे। ऋषि के प्रति आपका अनुराग प्रशंसनीय है, आपने सत्यायं प्रकाश का तमिल मलयालम में अनुवाद कराया, बीती भाषा में भी सत्यायं प्रकाश का अनुवाद कराया। आपकी इच्छा थी कि ससार की सब भाषाओं में सत्यायं प्रकाश का अनुवाद हो।

आप लेखकों से अपेक्षी, उपदेशकों के उपदेशक, विचारकों को प्रेरक सज्जन थे। आर्य प्रतिनिधि समा के आप प्रधान रहे, सार्वदेशिक समा के भी आप मन्त्री रहे। उत्तर प्रदेश समा के स्थायी कार्यालय के लिए जो भवन कय किया गया, उसका मूल्य आपने प्रान्त घर से धूम-धूमकर धन एकत्रित करके समा की ऋण मुक्त कर दिया।

श्री राम बिहारी तिवारी नख शिक्ष से आर्य समाजी थे। आर्य समाज गणेशगढ़ के आप सर्व-कर्ता थे। आप नगरपालिका के सदस्य और कौंसिल के भी सदस्य भी रहे। लखनऊ का डी-ए-बी कालेज आपके परिश्रम का फल है। आर्य नगर सेटिलमेंट के भी आप अधिष्ठाता रहे। समा के दृढ़ स्तम्भ रहे। कट्टर धार्मिक समाजी थे। ईसाई मुसलमान उनके नाम से धरते थे।

श्री रामवत शुक्ल आश्रम ब्रह्मचारी रहे। आप विकास करते थे, और समा के सच्चे समर्थक। वेदज्ञाता और व्याख्याता थे। कई वर्ष समा के मन्त्री और कई बार उपमन्त्री रहे।



महात्मा नारायणस्वामी

आप स्वामी सत्यजी चरित्रवान् व्यक्ति थे। बस वर्ष गुरुकुल बंगलावन के आचार्य और मुख्याधिष्ठाता रहे। आप सार्वदेशिक सभा के भी प्रधान रहे। रामगढ़ में अपना आश्रम बनाया। विरक्त धानप्रस्थ आश्रम उबालापुर क भी आप सस्थापक थे। द्वितीय आर्य महा सम्मेलन बरेली के आप सभापति रहे। हैबराबाद सत्याग्रह के आप प्रथम डिक्टेटर थे। सत्याग्रह - प्रकाश पर जब प्रतिबन्ध लगा तो आपने कराची में जाकर प्रतिबन्ध तोड़ा।

स्वामी ध्रुवानन्द

आप पूज्यपाद स्वामी सर्वदानन्द के शिष्य थे। सारा जीवन आर्य समाज के प्रचार में लगाया। थाईलैंड और मोंगोलिया में भी बहिष्कृत धर्म का प्रचार किया। शाहपुत्रा के महाराज कुमार सुबर्शन बेब के आप गुरु थे। उत्तर प्रदेशीय सभा व सार्वदेशिक के भी आप प्रधान रहे।

शिक्षा

इस क्षेत्र में डा० कालका प्रसाद डी लिट आगरा विश्वविद्यालय, डा० बाबूराम डी लिट सागर विश्वविद्यालय, डा० चंरेन्द्र वर्मा डी लिट जयपुर विश्वविद्यालय के उपकुल पति रहे। डा० नगन्ड ड० विजयेन्द्र शिक्षा - जगत् क जाज्वल्यमान मन्त्र है।

उत्तर प्रदेश विद्यान सभा के प्रधान श्री मदन मोहन वर्मा भी सभा के प्रधान रहे। आप मृदुभाषी मिलनसार वेद ऋषिभक्त थे। आप अ.य. समाज के कार्य के लिये सदा तत्पर रहते थे।

श्री प० प्रकाशवीर शास्त्री

आप सभा के कई बार प्रधान रहे। कई बार ससद् सदस्य रहे। आपने हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन में विशेष कार्य किया।

नवीन सभा भवन के निर्माण के लिए आप प्रचुर धनराशि एकत्रित करके लाये हैं। मेरठ शताब्दी सम्मेलन के आप प्राण हैं। आर्यभगत के गौरवशाली ओषधियों और प्रभावशाली बक्ता हैं।

श्री प० प्रेमचन्द्र शर्मा

आप ऋषि के अनन्य भक्त और आर्यसमाज के कर्मठ नेता हैं। कई बार सभा के मन्त्री रहे हैं, अब भी राज्य स्वास्थ्य मन्त्री होतेहुए भी सभा का काम प्रतिदिन बड़ी तत्परता से करते हैं। नवीन सभा-भवन निर्माण के लिए नगर-नगर जाकर आपने धन-संग्रह किया है। आप आर्य समाज के अज्ञात शत्रु हैं।

सार्वदेशिक सभा

सन १९०६ में आगरा नगर में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना हुई थी। उत्तरप्रदेश की सभा का हममें सबसे बड़ा योगदान था। सार्वदेशिक के सर्वप्रथम प्रधान भी उत्तरप्रदेश के ही थे।

उत्तरप्रदेश के महात्मा नारायण स्वामी, राय साहब मदनमोहन सेठ रि० अज, रायवहापुर प० गंगाप्रसाद रि० चौफ़ जज बा० पूर्णचन्द्र जो एरबो-केट आगरा, स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती, स्वामी अश्वेदानन्द सरस्वती वे महानुभाव थे जिन्होंने सार्वदेशिक सभा के प्रधान पद को मुमोक्षित किया।

डा० हनुमन्तिह, प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय, बा० कान्हीराम आर्य तथा वल्लभान मन्त्री श्री ओम्प्रकाशजी त्यागी ससद्-सदस्य भी हमारे प्रदेश की ही देन हैं।

आर्यमित्र

'आर्यमित्र' आरम्भ में उर्दू लिपि में मुहंरि नाम से मु० नारायणप्रसाद (महात्मा नारायण स्वामी) ने आरम्भ किया, एक वर्ष पश्चात् हिन्दी लिपि में प्रकाशित होना आरम्भ हुआ

सर्वश्री वृद्धसत्सम्पादकाचार्य, पं० सकृदीधर वाज-
पेयी, श्री धर्मेश्वरनाथ तर्क शिरोमणि, पं० हरिशंकर
सर्मा कविरत्न, श्री प्रो० बाबूराम जी, पं०
धर्मपाल बिद्यालंकार और वर्तमान सम्पादक
स्नातक उमेशचन्द्र ने आर्यमित्र को आगे बढ़ाया
और आर्यमित्र के कारण स्वयं आगे बढ़े ।

कवि गायक नाटककार

आर्य समाज को गर्व है कि उसमें श्री नाथू
राम शंकर शर्मा 'शंकर' जैसे महाकवि का जन्म
हुआ । आप हरदुआगंज, अलीगढ़ के निवासी, ऋषि
के अनन्य भक्त ब्रजभाषा और छड़ी बोली के
उच्चकोटि के कवि थे । मिथ बन्धुओं ने भी
आपको हिन्दी के महान् कवियों में गणना की है ।
पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी के आप धन्नास्पद थे ।

पद्मश्री डा० हरिशंकर शर्मा कविरत्न डी०
लिट् आप योग्य पिता शंकर जी के योग्य पुत्र, कवि
और साहित्यकार थे । भारत सरकार ने आपको
"पद्मश्री" की उपाधि से विभूषित किया था ।
आगरा विश्वविद्यालय ने आपको डाक्टर आव लिट्टेचर
की आदरी उपाधि से सम्मानित किया । आप
'आर्यमित्र' के प्राण थे । समा के प्रधान भी रहे ।

यों तो आर्य समाज तथा से नाटकों का
विरोधी रहा है । परन्तु नाटक भी बैबिक कला
है, इसके द्वारा भी प्रचार कार्य हो सकता है ।
इसका प्रयोग बरेली के श्री चन्द्रनारायण एडवोकेट
ने किया । आपने महर्षि के जीवन पर 'गुरुवास'
और 'कर्मवास' नाटक लिखे । उनका प्रदर्शन भी
सफल हुआ ।

राजस्थान के राज्यपाल का सन्देश

राज भवन, जयपुर

२७ अप्रैल १९७३

मझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उत्तर
प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने प्रान्त में तं न
वर्ष तक आर्य समाज शताब्दी समारोह मनाने का
निर्णय लिया है । और पहला समारोह आगामी
२५ से २८ मई तक मेरठ में आयोजित हो रहा
है ।

आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने
सभी मतों तथा सम्प्रदायों में व्याप्त बुराइयों के
विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा और बुद्धि, तर्क तथा ध्यव
हार के आधार पर जन-साधारण को धर्म के मूल
तत्त्वों को समझाया । धार्मिक ग्रन्थों की महो
व्याख्या कर सामाजिक कुरीतियों तथा रुढ़ियों के
अंधकार में भटकती जनता को एक नया आलोक
प्रदान किया । देश के सांस्कृतिक तथा सामाजिक
उत्थान के इतिहास में स्वामी जी का नाम चिर-
स्मरणीय रहेगा ।

भारत के इस महान् सपूत को श्रद्धांजलि
अर्पित करते हुए समारोह की सफलता के लिए मैं
अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ ।

—जोगेश्वर सिंह

राज्यपाल, राजस्थान

निर्वाचन

आर्य समाज कौटुंबियागंज, (अलीगढ़)

प्रधान—श्री मिवनन्दन गुप्त

उपप्रधान—श्री रामप्रकाश जी

„ शंकरलाल जी

मन्त्री—श्री रामअक्षयारी जी

उपमन्त्री—श्री रघुवरदयाल जी

कोषाध्यक्ष—श्री ओ३मप्रकाश वर्मा

आर्य समाज

[श्री स्व० डा० हरिशंकर शर्मा डी-लिट्]

हे आर्यसमाज ज्योति का दाता तू है,
सारी उन्नति का ज्ञान-प्रवाता तू है ।
तूने ही फिर से सोता बेश अगाया,
जान अनता को कल्याण-मार्ग दिखलाया ।

ऋषि बयानम्ब से प्राण-प्रतिष्ठा पाई,
तुझ को सत्यार्थ प्रकाश मिला सुखदाई ।
तूने ही स्वावलम्ब की विधि बतलाई,
सब ध्रान्त भावनाओं से मुक्ति दिलाई ।

विद्यवा, जनाथ, अस्पृश्यों का उद्धारक,
सद्धर्म-प्रवर्तक समता-भोत प्रसारक ।
महिलाओं को सम्मान दिलाने वाला,
'मानवता' का पीयूष पिलाने वाला ।

सबशिक्षा का आदर्श महत्त्व दिखाया,
वैदिक संस्कृति का सौरभ सुखद उड़ाया ।
हो गया प्रभावित सारा देश हमारा,
भारत के बाहर भी बिबेक बिस्तारा ।

गोकुल पर कषणामृत बरसाने वाला,
पाषण्ड-बाध पर बख्तर गिराने वाला ।
पादकता का दुर्वर्ण बढाने वाला,
आमिष-भक्षण को पाप बताने वाला ।

तुझको ना बिदेशी शासन कभी मुहावा,
सर्वदा स्वदेशी सत्ता का गुण गाया ।
सबसे पहले 'स्वराज्य सम्मेल' सुनाया,
निज भाषा, धूषा, बेश, देश, जपनाया ।

'बापु' के तप से देश स्वतन्त्र बनाया,
फिर से स्वराज्य का सुन्दर सूर्य उगाया ।



पं० हरिशंकर शर्मा

वह पराधीनता पाश कट गया सारा,
जब तो अपने पर है अधिकार हमारा ।

हे आज हमारा राज्य, हमारा बल है,
यह बल नित बढ़ता रहे, सुदृढ़ सबल है ।
आत्मा, मन और शरीर बलिष्ठ बना दे,
'मानवता' का सच्चा आदर्श दिखा दे ।

वैदिकता की जगती गज ज्योति जगा दे,
भारत धू पर पहला-सा ही पुग जा दे ।
सब बने धीर, धर्मज्ञ, वाप का जय हो,
सर्वत्र अहिंसा, सर्व धर्म की जय हो ।

आर्य-जगत्

हों आर्यं जगत् मे वेद-विधान ।

बनें आर्यं सब एक जाति हो, भेद छान्ति हों दूर ।
सत्य व्यवहार, वेद-पथ गाभी, कर्म-कनिष्ठ तज दूर ॥
रहें समाहर - मान - प्रतिष्ठा, एक - एक के साथ ।
सुख सम्पन्न हों घर-घर मानव, कला सभी हों हाथ ॥

वेद-का हो कल अविरल गान ।

हों आर्य-जगत् में वेद-विधान ॥ १ ॥

बस्तु, दम्भी, गुह्यम-पाखण्ड, तस्कर हठे लवार ।
धर्म-धारणा, मर्यादा सब, वैदिक बडे विचार ॥
नीति-रीति सद्कर्म वेदयुत, धर-धर हवन सुगन्ध ।
वायु-गगन-अन्तरिक्ष सुखद हों, बुधितन हों दुर्गन्ध ॥

धरें रस - रस सुखद वितान ।

हों आर्य-जगत् मे वेद - विधान ॥ २ ॥

अन्न-भण्डार भरे रहें घर-घर, भोगें सुख के भोग ।
रहें निरोग-अयोग न हो नर, सब के साथ सुयोग ॥
आर्यं जगत् के रखवारे हों, भारत माँ के लाल ।
धीर-धीर रज-बंका योधा, हों बल तेज विशाल ॥

वेश का रखने हित अभिमान ।

हों आर्यं जगत् में वेद-विधान ॥ ३ ॥

रहें परस्पर प्रेम अखण्डित, द्वेष भावना त्याग ।
यज्ञ कर्म, करे मिल सब ही, भर-भर उर अनुराग ॥
वेद-मन्त्र धर - धर में गुञ्जे, वेद पढ़ें नर - नार ।
जाति - पाति 'घनसार' न व्यापे, मानव एक निहार ॥

शुद्धि का समस्त सत्य प्रमान ।

हों आर्यं जगत् में वेद - विधान ॥ ४ ॥

-कवि कस्तूरचन्द 'घनसार' कवि कुटीर पीपाङ्क अहूर

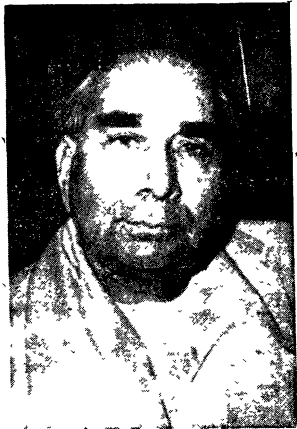
भारत गौरव-ऋषि भक्त आर्य-रत्न



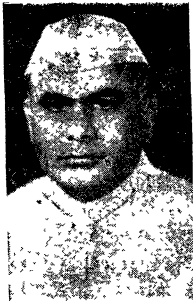
महामहिम श्री वेङ्कट वाराह गिरि भारत राष्ट्रपति



लोकप्रिय रक्षामन्त्री
श्री जगजीवनराम जी



श्री कमलापति जी जिपाठी मुख्य मन्त्री उत्तरप्रदेश



श्री श्री० शेरसिंह जी
ह्रदि राज्यमन्त्री भारत सरकार



श्री श्री० चरनसिंह जी वृत्तपूर्व मुख्यमन्त्री

हमारे स्वर्गीय वेद भाष्यकार



महामहोपाध्याय स्व० आशुमनि
ऋ० ७ म० ६१ सूक्त २ मन्त्र से आगे
ऋग्वेद के भाष्यकार



प० शिवशंकर काव्यतीर्थ
ऋ० ७ म० ६१ सूक्त २ मन्त्र से आगे
ऋग्वेद के भाष्यकार



श्री प० तुलसीराम जी मेरठ सामवेद के भाष्यकार

* * * * *



श्री क्षेमकरण दास जी त्रिवेदी अथर्ववेद के भाष्यकार



श्री स्वा. सखंदानन्दजी

शास्त्रार्थ महारथी



स्व० सुरारीलाल शर्मा, गुणकुल सिकन्दराबाद

आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान्



स्व० प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०

बम्बई में सरदार भगतसिंह की
माता का स्वागत

केन्द्रीय आय परिषद बम्बई की ओर से २६

अप्रैल को प्राप्त गुणकुल में सरदार भगतसिंह की
माता का भव्य स्वागत किया गया।

शहीद भगतसिंह की माता विद्यावती ने कहा कि
आय समान से भगतसिंह के परिवार का गहरा सम्बन्ध
रहा है पंजाब की माता जी ने कहा—हमारी आजादी का
स्वप्न अभी पूर्ण साकार नहीं हुआ जब तक कि गरीब
जनता की जरूरतें पूरी न हो सकेंगी।

श्री भगतसिंह की बहन भीमती अमर कौर ने कहा मेरी माता जी को देश के लोगों का

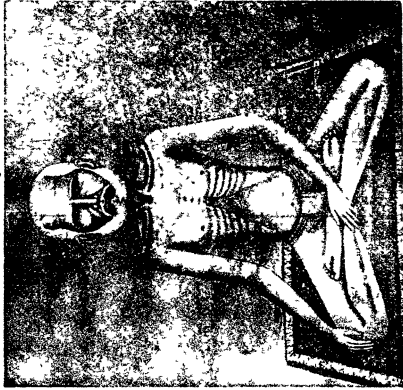
अपार प्यार मिल रहा है। उसी के आधार पर वे जीवित हैं। वे भारत के नवयुवकों को भगत
जैसा ही अपना बेटा समझती हैं।

श्रीमती सुमित्रा अमीन ने कहा कि देश की माताएं पंजाब माता की इसलिए कृतज्ञ हैं कि उनके सपूत की बलि के कारण भारत की माताओं की स्वतन्त्र देश में बच्चों को जन्म देने का सुख बरस प्राप्त हुआ।

रेल सेवा आयोग के अध्यक्ष श्री नरदेव स्नातक ने शहीद भगतसिंह की जीवनी पर प्रकाश डाला।

—आचार्य विजयकुमार त्यागी
संयोजक

आर्यसमाज के दो महान् तपस्वी



गुरुवर विरजानन्द की दण्डी



ब्रह्मसमा नागयकण्ठवासी जी

आर्यमित्र का (ऋषयंक)

विषय-सूची

क्रम सं०	विषय	लेखक	पृ० सं०
१-	वेद सुधा		१
२-	सम्पादकीय	श्री स्नातक	२३
३-	दयानन्द स्वामी ज्योति भुवने पास्कर ऋषि	" डा० कपिल देव जी	४
४-	श्रीपावली का पर्व क्या है	" अमर स्वामी जी सरस्वती	५-७
५-	दीवाली की अभावस्था और ऋषि निर्वाण	" स्वामी ब्रह्म मुनि जी	८
६-	विषय दिवाली	" कस्तूर चन्व 'घनसार'	९
७-	श्रीपावाली	" डा० मंशीराम 'सोम'	१०-११
८-	भारत के आर्यों की उत्पत्ति	" डा० सूर्य देव जी एम० ए०	१२
९-	शताब्दी सन्देश	" राधा रणञ्जयसिंह जी	१३
१०-	आर्यों से	" 'प्रभाव' शास्त्री एम० ए०	१४
११-	भारत एक राष्ट्र है : इस मन्त्र का मन्त्रवाता महर्षि दयानन्द सरस्वती	" अखनोन्त्र कुमार विशालकार	१५-१६
१२-	स्वामी जी की विशेषता	" पं. बिहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ	१७-१९
१३-	मृत्युञ्जयी दयानन्द	" प्राचार्य भारत भूषण त्यागी	२०-२१
१४-	आर्य समाज (कविता)	" परसराम	२२-२४
१५-	युग-पुरुष दयानन्द	" पं० शिववयासु जी	२५-२६
१६-	श्रीप-निर्वाण (कविता)	" कृष्णलाल जी कुसुमाकर	२७-२८
१७-	वैदिक पञ्चशीख	" डा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट	२९-३०
१८-	महर्षि दयानन्द स्मरण (कविता)	" आचार्य धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड	३१
१९-	श्रीपावली-पर्व (कविता)	" विद्यानिधि शास्त्री	३२
२०-	ब्रह्मिनीय महा पुरुष महर्षि दयानन्द	" भक्तुराम जी अग्रोका बाले	३५-३४
२१-	आओ अन्तः श्रीप जलाशे	" वेदानन्द देव वागीश	३५-३६
२२-	श्रीपावली और दयानन्द	" प० यज्ञप्रिय जी	३७-४०
२३-	सत्त्व शास्त्र और वैदिक संस्कृति	" डा० हरिदत्त जी शास्त्री	४१-४३
२४-	आर्य समाज का अन्तर्राष्ट्रिय संगठन	" मोहनलाल जी मोहित	४४
२५-	विषय-ज्योति	" दयानन्द बल पाण्डेय	४५

* ओ३म् *

साप्ताहिक आर्यामित्र ऋष्यंक

सम्पादक—उमेशचन्द्र स्नातक, रामचरण विद्यार्थी

वर्ष] लखनऊ रविवार कार्तिक ६ शक १८६५, कार्तिक शु० २ सं० २०३०, [अंक
७५] वि०२८ अक्टूबर ७३ ई०वयानन्वाब्द १४६,सु०सं० १६७२६४६०७४ [४०-४१

सत्यार्थ प्रकाश में विनियुक्त—

वेद-वाणी

इन्द्रं मित्रं बरुणमग्निमाहुरयो विव्यःस सुपर्णो गुरुत्मान् ।
एकं सत्प्रिया बहुधा वदन्त्यग्नि यमं मातरिश्वानमाहुः ॥

—ऋ० म० १ सू० १६४ । म० ४६

इन्द्रं मित्रं बरुण—परमेश्वर्यं मित्रं अ०ऽऽ
अग्निं आहुः—स्वप्रकाश प्रभु को कहते हैं
अथः विव्यः स—इसके बाद प्रकाशमय बहु
सुपर्णं गुरुत्मान्—उत्तम कर्म व महान् स्वरूप

एक सत् प्रिया—एक सत्ता जिसे बुद्धिमान्
बहुधा वदन्ति—अनेक नामों से बखानते हैं ।
अग्नि यम—ज्ञानस्वरूप सर्वज्ञ सर्व नियन्ता
मातरिश्वान आहुः—बापु के समान बलवान्
कहते हैं ।

भाषार्थ—वेद माता ने इस मन्त्र में अत्यन्त स्पष्ट घोषणा की है कि वह ईश्वर एक है, बुद्धिमान् उसे अनेक नामों से पुकारते हैं । इसका क्या कारण है ? एक सत्तावान् ईश्वर के सहस्रों गुण, कर्म और स्वभाव हैं । उसके जितने ये गुण कर्म स्वभाव होंगे, उतने ही नामों द्वारा उसको प्रकट किया जायगा । सत्यार्थप्रकाश के प्रथम सम्स्नास में विशद रूप से समझाया गया है कि उस एक ईश्वर को ही प्रकृत के अनुसार सूर्य, चन्द्र, कुबेर, पृथिवी, आकाश जल, अन्न, मगल, शुक्र, राहु आदि क्यों कहा गया है ।

सारांश—वेद एकेश्वरवाद का प्रतिपादन करता है ।



सम्पादकीय महर्षि का संदेश

महर्षि दयानन्द की पवित्र स्मृति में सारे आर्यजगत् में दयानन्द-सप्ताह मनाया जा रहा है। दीपमालिका के बिबस को महर्षि का पार्थिव जीवन त्याग एक अभूतपूर्व घटना कहना कोई अन्ध-धृष्ट या पाण्डित्य की भावना नहीं है। हमारी दृष्टि में इस घटना का महत्त्व इसलिये है कि उस दिन महर्षि की आस्तिकता ने एक नास्तिक को आस्तिक बना दिया। मानों अज्ञान अभावस्था के अन्धकार को महर्षि के जीवन-दीप ने ज्योतिरित कर दिया। इस ज्योति का प्रभाव आज तक हमारे हृदयों को आलोकित कर रहा है। न केवल महर्षि के अनुयायी ही उससे प्रभावित हैं, अपितु समस्त बुद्धिवादी वर्ग महर्षि की मान्यताओं को महत्त्व दे रहा है।

आज विश्व-विज्ञान आध्यात्मिकता के छूट में से गुजर रहा है। विज्ञान के चमत्कारों ने मानव मस्तिष्क को हिंसा, घृणा और अहंकार से ओत-प्रोत कर दिया है, और शान्ति का नाम छेने वाले राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक अस्त्र शस्त्रों के बल पर मानव जाति पर अपना प्रभुत्व कायम रखना चाहते हैं, परन्तु विश्व का मनीषी वर्ग अनुभव करता है कि विज्ञान का अप्रतिबन्धित स्वरूप भस्मासुर के रूप में बढ़ रहा है, अणु, परमाणु शक्ति का उपयोग दानवों की भाँति विध्वंस के लिये किया जा रहा है। इस विध्वंस और विनाश से मानवता की रक्षा के लिये विज्ञान पर आध्यात्मिकता का नियन्त्रण आवश्यक है।

वैदिक वर्शन उपयुक्त विचार का समर्थक है। धर्म की परिभाषा में कहा गया है—

‘यतोऽभ्युदय नि.भ्येतसिद्धिः स धर्मः ॥

धर्म वही है, जिससे इस लोक में अभ्युदय (उन्नति) और पारलौकिकसफलता प्राप्त हो सके।

धर्म के इस समन्वयवादी स्वरूप का समर्थन ही महर्षि की देन है। उनके युग में धर्म के नाम पर पाण्डित्य का वही और उससे भी अधिक घृणित स्वरूप व्याप्त था, जैसा लूथर के युग में योरोप में। योरोप में दीप घन लेकर स्वर्ग लोक में स्वान निर्धारित कर देते थे, भारत में श्री दान वसिष्ठा से वेतरणी पार होने की मिथ्या विश्मन्ना प्रचलित थी।

जीवनकाल में मिथ्या, अधर्म, अत्याचार और पाण्डित्य का व्यवहार करना और मरने के नाम पर दान पुण्य का ढोंग ऐसी बातें थीं, जिनकी महर्षि ने डट कर पोष छोली और सत्तार के सम्मुख वैदिक जित्त्ववाद की पुनः स्थापना की।

शकराचार्य के नाम पर अद्वैत की जिस शार्शनिकता का प्रचार किया जाता है, महर्षि ने इसके खण्डन और जित्त्ववाद के मण्डन द्वारा वैदिक वर्शन के वास्तविक स्वरूप को समझाने का सफल प्रयत्न किया।

वैदिक जित्त्ववाद के प्रचार प्रसार स्वरूप भारत में कर्मवाद की प्रेरणा मिली, और महर्षि के अनुयायी भारत की पराधीनता को भाग्य की विश्मन्ना न मानते हुए कर्मफल के रूप में स्वीकार करते हुए स्वाधीनता के संघर्ष में जुट पड़े। भारतीय स्वाधीनता सपना का इतिहास महर्षि भक्तों के समर्पित जीवन बलिदानों से भरा पड़ा है। न केवल भारत की आजादी में ही महर्षि के अनुयायी सलग्न रहे, अपितु भारत से बाहर भी भारत वसियों की रक्षा और उन्नति में भी आर्य-वीरों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, और आगे बढ़कर वैदिक मिशनरियों के रूप में सर्वभू

बरोधया प्रपाद, महता जेमिन, गगा प्रसाव उपा-
ध्याय, स्वामी स्वतःप्रतानन्व, स्वामी ध्रुवानन्व,
स्वामी अनेवानन्व, आनन्व निम्नु महाराज आवि
अनेकों बिद्वानों ने भारत से बाहर वैदिक माद
बत्राया और आज भी सर्वश्री महात्मा आनन्व
स्वामी, स्वामी अखिलानन्व, स्वामी सत्य प्रकाश
अरनी मिशनरी यात्राओं में विश्व मे वेव का
सन्देश सुना रहे हैं। मारीशस में आर्यजनों का
सम्मेलन महर्षि के सन्देश को अफ्रीका और उसके
समीपस्थ क्षेत्रोंमे फैलाने का नवीनतम प्रयास है।

इन सब प्रयासों के साथ-साथ महर्षि का
स्मरण करते हुए आज आर्य जगत् को अपना
ऐतिहासिक सिंहावलोकन करना चाहिये। समय
हमसे हमारी एकता का सबूत मांग रहा है? क्या
हम हृदय पर हाथ रखकर सोचेंगे कि हमारे
सगठन की शक्ति क्यों क्षीण होरही है। क्या इसके
लिये हमारे व्यक्तिगत स्वार्थ ईर्ष्या द्वेष, दम्भ
उत्तरदायी नहीं है, क्या हम अपने व्यक्तित्व को
इनसे पृथक् करने का सफलप लेंगे।

१९७५ में आर्य समाज की स्थापना शताब्दी
दूर नहीं है, बडा सम्बा रास्ता हम तय कर चुके हैं
पर किनारे पर पहुचने से पहले ही हमारी किरती
लडखडा रही है। हर्षे एकता के नाम पर सम
कुछ समर्पित कर सत्तार के सामने आवशं उपस्थित
करना होगा। महर्षि के निर्बाण विषय पर हम
सबके लिये यही सन्देश है।

इस प्रश्न के उत्तर में ही 'कृष्णन्तो विश्व-
मार्थम्' का भविष्य निहित है, और आर्य समाज
का प्राची स्वरूप भी।

—स्नातक

कानपुर में आर्य समाज स्थापना शताब्दी
आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की ओर से
मेरठ के बाब अब आगामी १७ से २० फरवरी

७४ तक कानपुर में आर्य समाज स्थापना-शताब्दी
समारोह मनाना निश्चित हुआ है।

मेरठ मे शताब्दी समारोह की सफलता आर्य
समाज के इतिहास मे स्थायी महत्त्व रखती है।
अब कानपुर में मेरठ मे उठाया हुआ पग और भी
आगे बढ़ाना है, वृद्धता के साथ स्थापित करना है।

कानपुर के स्थान का चुनाव सभा ने इस
दृष्टि से किया है कि यह नगर प्रदेश के पूर्वी
क्षेत्र में है, और प्रदेश का औद्योगिक केन्द्र है।
आर्य समाज के शिक्षा कार्य का कानपुर केन्द्र
रहा है। डी० ए० वी० शिक्षा संस्थाओं ने इस
क्षेत्र में जो व्यापक शैक्षिक योगदान दिया है,
उसके महत्त्व को सभी स्वीकार करते हैं। डी०
ए० वी० कालेज कानपुर के प्रि० दीवानचन्द्र
आगरा विश्वविद्यालय के प्रथम उपकुलपति रहे,
श्री कालका प्रसाद जी ने भी इस पद को सुशोभित
किया। श्री ब्रजेन्द्र स्वरूप जी, बीरेन्द्र स्वरूप जी
देवेन्द्र स्वरूप जी जैसे व्यक्तियों का कानपुर शैक्षिक
क्षेत्र मे योगदान सर्वे स्मरणीय रहेगा। कानपुर
में शताब्दी समारोह के सयोजक पद पर सभा ने
श्री प० विद्याधर जी जैसे कर्मठ और प्रभावशाली
आर्य नेता को नियुक्त किया है। सयोजक का कार्य
भार सम्हालते ही आपने अपने साथी श्री विजय
पाल शास्त्री जी के सहयोग से स्वागत समिति का
गठन आरम्भ कर दिया है। शीघ्र ही स्वागत-
समिति कार्य आरम्भ कर रही है। पोस्टर छाप
कर भेजे जा रहे हैं, धन-संप्रह का कार्य भी यत्न
प्राप्त कर रहा है।

सभा प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री
शताब्दी समारोह की सफलता के लिये सूकानी
बीरा आरम्भ करने वाले हैं। सभा पन्नी श्री प०
प्रेमचन्द्र जी ने शताब्दी कार्यक्रम के लिये योजना



दयानन्दः स्वामी जयति भुवने भास्कररुचिः

[डा० कपिलदेव जी, अध्यक्ष सस्कृत विभाग, गवर्नमेण्ट कालेज, ज्ञानपुर (वाराणसी)]

(१)

गुणानामाधारो विवितभ्रूतिशास्त्रार्थनिचय,
समुद्धर्ता भर्ता पतितजनचिस्तातिहरण ।
अयध्नात्समोत्सर्गं परहितरत स्वार्चविरतो,
दयानन्द स्वामी जयति भुवने भास्कररुचिः ।

(२)

'वयाया आनन्दो' विलसति गुणानां समुचय,
'ऋषि' वैदार्थानां गहनमननाभाप्तशुभघो ।
श्रुतीनां राट्ठान्तान् विशदयति वेदार्थं विप्रतो,
सरस्कृत्या ज्योतो जयति यतिवर्धो गुणनिधि ।

(३)

अनाथानानाथ. शरणमवलानांगुणिगुरु,
विनेता भीतानां सुपथमपनेता च सुधियाम् ।
शरण्यो दीनानां गुणगणबरेभ्य श्रुतिमति,
दयानन्दो योगी जयति भुवने भास्कररुचिः ।

(४)

प्रणेता भाष्याणां श्रुतिगवित-तत्त्वार्थ-निलयो,
यति सत्यार्थं य. प्रकटयति 'सत्यार्थ'-सुकृती ।
श्रुतीनां तत्त्वार्थं विशदयति 'ऋग्भाष्य'-विद्वतो,
दयानन्दो वाग्मो जयति भुवने भास्कररुचिः ।

(५)

ऋषीणां प्रत्यां य. सरणिमनुसृत्याशु विवधे,
श्रुतीनां शिक्षार्थं गुरुकुलतति ज्ञानरुचिराम् ।
विरुद्ध वेदानां तद्विद्विद्मि हेम सुपथगं-
दयानन्दो दान्तो जगति भुवने भास्कररुचिः ।

(६)

समुद्धर्ता भर्ता सकलगुणराशिर्मुमुक्षुहृद्,
नवीष्णो वेदानां जनहित कृत-स्वार्थ-विरह ।
अविद्याया घटान्त व्यगमयविहाट्ट्यात्मबुद्ध्या,
मूनीश्वो व्यारेजे सकल मुख सौभाग्य-सरणि ।

(७)

समाज स्वार्थिणां प्रतिनगरप्रस्थापयविह,
समन्मूल्याऽऽमूल श्रुतिविषयपाण्डु निधयम् ।
सबादशं प्राच्य मुवि विनिबधे शान्ति-सुखद,
दयानन्दो धीरो जयति भुवने भास्कररुचिः ।

(८)

गवां रक्षा कार्या पदमनुविश्रय च सुधिया,
गुणा प्राह्या हेया. सतनमशिवा दोषनिकरा ।
सदाऽऽर्याणां भाषा प्रचरतु भवे प्रथमगुणधा,
य एव व्याचक्ष्यो जयति स यतिभस्करनिभ ।

(९)

जने ह्यस्पृश्यत्व नहि श्रुतिमल नापि हितकृद्,
वित्रातेर्भतिश्च बहुविधाविभागो नहि हित ।
विदेशीय राज्य नहि मतिमता मान गुण-व,
मनोज स्वातन्त्र्य य निज बलि कृतेनापि सुखदम् ।

(१०)

सुशिक्षा नारीणां विषयजनशुद्धि प्रचलयन्,
पदाक्रान्त-ज्राण विवधदनिश जीवन-पणे ।
'सम लोक चायं कुत' इति लोकानुपविशन्,
विद्ययातो जीवत्यपर इव वन्द्यो यतिवर् ।

प्रसारित कर कार्य आरम्भ कर दिया है। हमे अपने नेताओं को इस महान् कार्य में पूण सहयोग देना चाहिये। आशा है, कानपुर का शताब्दी समारोह आर्य समाज की महत्ता को स्थापित करने में स्मरणीय महत्त्व प्राप्त करेगा। -स्नातक

अवकाश-सूचना

श्रीवाली के अवकाश के कारण 'आर्यमित्र' का ४ नवम्बर का अंक बन्द रहेगा। अब अगला अंक ११ नवम्बर को प्रकाशित होगा।

-प्रेमचन्द्र शर्मा मन्त्री सहा



दीपावली का पर्व क्या है ?

[श्री अमरस्वामी परित्राजक, गाजियाबाद]

इस पर्व के विषय में यह एक नारी भ्रम फंसा कि श्रीराम जी लका विजय के पश्चात् जब अयोध्या में वापिस आये तब अयोध्या में लाखों करोड़ों दीपक जलाकर प्रसन्नता प्रकट की गई। तभी से दीप मात्ता या दीपावली का पर्व चला आ रहा है।

आश्विन मास शुक्ल पक्ष की दशमी पर जिनका नाम 'विजयादशमी' है, राम लीला नाटक किये जाते हैं और दशमी को उस नाटक की समाप्ति रावण मरण का दृश्य दिखाकर की जाती है। इसी से करोड़ों अनपढ़ों में यह भ्रम बढ-मूल हो गया कि—इस दशमी को रावण मारा गया तो श्रीराम जी इसके पीछे अयोध्या को आये होंग चलते चलते इतने बिन माग में लग ही गये होंगे कार्तिक की अमावस्या तक अयोध्या पहुँचे होंगे, तभी दीपक जलाकर उनका स्वागत किया गया होगा।

वास्तविकता को तो इतिहास पढ़ने वाले जानते हैं, अन्य करोड़ों मनुष्य हैं जो सर्वे चक्षुषा पश्यन्ति न सर्वे मनसा विदुः' न विजयदशमी का रावण की पराजय रावण बध या राम की विजय से कुछ भी सम्बन्ध है न कार्तिक की अमावस्या का श्रीराम के अयोध्या प्रत्यागमन से।

रावण चंड कुष्ण पक्ष की चतुर्विंशती को मारा गया (बैद्य मेरी लिखी पुस्तक रावण बध) अमावस्या को उसका बाहू सस्कार हुआ और चंड शुक्ल पक्ष की पंचमी को श्रीराम जी लका से



श्री अमरस्वामी जी परित्राजक

लौटकर प्रयाग में भरद्वाज ऋषि के आश्रम पर पहुँचे। वृष्टी को अयोध्या पहुँच गये।

प्रश्न बही रहा कि—दीपावली क्या है ?

परम्पराओं के देखने से पता चलता है कि—आश्विन मास की पूर्णमासी ब्राह्मणों के विशेष वेदाध्ययन का शुभारम्भ का पर्व है, मनुस्मृति और गृह्यसूत्रों में इसका नाम उपाकर्म बताया

गया है। विजयवशमी क्षत्रियो राजाओं का एक शक्ति प्रदर्शन और विजय यात्रा का पर्व है।

बाली को मार कर और सुग्रीव को राज्य देकर धीराम जी ने ध्रावण मास के भारम्भ मे कहा था कि—

पूर्वोय वाषिकोमास, ध्रावण सलिलागम ।
नापमुद्योग समय, प्रविशत्स्व पुरीं शुभाम् ॥

यह वर्षा का प्रधान मास सलिलागम ध्रावण मास है, यह कहीं आक्रमण आवि उद्योग का समय नहीं है। इस समय तुम अपने शुभनगर मे रहो, हम वर्षा भर गिरि गुहा मे रहेंगे।

जब वर्षा के छार मास बीतने लगे तब आश्विन मास के अन्त समय मे धीराम जी ने लक्ष्मण जी को कहा—

अन्योन्य बद्धवराणा, जिगीषणां नृपात्मज ।
उद्योगसमय सौम्य पाषिबानामुपस्थित ॥
इय सा प्रथमा यात्रा पाषिबानां नृपात्मज ।

हे राजपुत्र ! परस्पर बंध बाधे हुये विजय की इच्छा वाले राजाओं का यह उद्योग समय आ गया है।

हे राजपुत्र ! राजाओं की यह पहिली यात्रा का समय है। जो सेनाओं और युद्ध के उपकरणों का प्रदर्शन अब २६ जनवरी को होता है, वह विजयवशमी को होता था। और हमारे राठ्ठ मे इसी दिन को होना चाहिये, २६ जनवरी को नहीं।

बीपावली वंश्यों का महापर्व है। इसका नाम लक्ष्मी पूजन भी है। यह लक्ष्मी प्राप्त करने के लिये कृषि और वाणिज्य के उद्योग का पवित्र पर्व है। कहा भी गया है—व्यापारे बसते लक्ष्मी-
व्यापार में लक्ष्मी बसती है। 'उद्योगिन सिंहपुरुष-
मुपैति लक्ष्मी।' उद्योगशील सिंह पुरुष को लक्ष्मी प्राप्त होती है।

मनुस्मृति मे वैश्य के गुण कर्म इस प्रकार कहे हैं—

पशूना रक्षण वानमिज्याध्ययन मेवच ।
वाणिकपच कुसीद च वैश्यस्य कृषिमेवच ।०मनु
कृषिगौरक्ष्यवाणिज्य, वैश्य कर्म स्वभावम् ।

गीता १८ ४४

१-पशुओं का रक्षण, २-वान, ३-यज्ञ, ४-
वेदाध्ययन, ५-व्यापार, ६-सूद लेना और ७-
खेती, ये सात गुण कर्म स्वभाव वैश्य के हैं।

व्यापार मे वर्ष भर मे क्या कामाया इसके निरीक्षण की समाप्ति कार्तिक की अमावस्या को करके कार्तिक शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा अर्थात् बीपावली के दूसरे दिन गीओ, बेलो, बछड़ों और बछियों की विशेष गणना निरीक्षण तथा गोपालों को इनाम आवि देने का कार्य करना।

बीपावली नवसंस्थेष्टि यज्ञ है।

पूर्णमासी और अमावस्या दोनों वैदिक पर्व हैं, और कार्तिक की अमावस्या नवसंस्थेष्टि पर्व भी है। अर्थात् वर्षा से जो अन्न उत्पन्न होते हैं, मकई, बाजरा, उवार, उडव-मूग और चावल आदि उन नवीन अन्नो से यज्ञ करना पश्चात् उनको खाना, यज्ञ किये बिना उनका उपयोग न करना। उन अन्नो से यज्ञ कर लिया तो उन बचे हुए अन्नो का नाम यज्ञ शेष हो गया।

गीता मे कहा है—

यज्ञशिष्टामृत भुञ्जी यान्ति ब्रह्मसनात्मनम् ।

गीता ४-३१

यज्ञ शेष अमृत को खाने वाले लोग ब्रह्म को प्राप्त करते हैं।

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वं किल्बिषः ।

भुञ्जन्ते ते त्वघ पापा ये पचन्त्यात्म कारणात् ॥

गीता २-१३

यज्ञ शेष के जो खाने वाले हैं, सर्व पापों से छूट जाते हैं अर्थात् वह किसी भी पाप कर्म को नहीं करते हैं। जो लोग अपने ही लिये अन्न पकाते और आप ही खा जाते हैं वे महापापी लोग पाप ही का फल भोगते हैं।

इष्टान्भोगान्हि वो देवा वास्यन्ते यज्ञ भाविता ।
तैर्वंत्ता न प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव स ॥
गीता ३-१२

यज्ञ द्वारा भावित किये गये देव जलबाहु सूर्यं आवि इष्ट भोगो को देते हैं और वेंगे उनके निमित्त उन ही उनके विषे अन्नादि से यज्ञ न करके जो उन अन्नो को खाते हैं वह चोर हैं-

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु व ।
परस्पर भावयन्त श्रेय परमवाप्स्यथ ॥

गीता ३-११

इस यज्ञ द्वारा देवों की उन्नति करो और वे देव लोग तुम्हारी उन्नति करें इस प्रकार परस्पर उन्नति करते हुए परम कल्याण को प्राप्त करोगे। अतः नवसस्येष्टि होनी चाहिये।

नवसस्येष्टि का महत्त्व गृह्य सूत्रों में भी बहुत है। अतः क्रांतिकी अमावस्या नवसस्येष्टि का पवित्र पर्व है। यह सभी व्यापारियों और सभी किसानों का पवित्र पर्व है, लाखों छोटे बड़े व्यापारी हैं और करोड़ों किसान हैं, इनके अतिरिक्त जो अग्र्य लोग हैं उनका भी मरण पोषण इन्हीं दोनों के द्वारा होता है, अतः यह पर्व मनुष्य मात्र का पर्व है।

व्यापार भी अत्यावश्यक कार्य है जो जो भी वस्तु जहाँ जहाँ उत्पन्न होती है, अन्न, फल, मेवा, रई, ऊन, रेशम, वस्त्र, सोना, चान्दी, लोहा आदि, धातु हीरा-मोती, पन्ना आदि-आदि सभी पदार्थों को उत्पत्ति स्थान से आवश्यकता के क्षेत्र

में पहुँचाना व्यापारियों का ही काम है। यदि व्यापारी लोग इन वस्तुओं को आवश्यकता के स्थानों तक न पहुँचाएँ तो उत्पादकों का परिश्रम व्यर्थ जाय और उनके अभाव वाले स्थानों के लोग अत्यन्त दुःखी होकर नष्ट हो जायें।

अतः व्यापारी वर्ग का होना अत्यन्त आवश्यक है। खेती बाड़ी भी अत्यावश्यक कार्य है किसानों द्वारा सर्व प्रकार के अन्नो, फलों, दालों, शाक्यों आदि का उत्पादन होता है जिनसे न केवल मनुष्यों का ही पालन होता है किन्तु सभी पशु पक्षी क्रमि कीटादि प्राणी माण्ड का उन ही से पालन पोषण होता है।

‘अन्नं साम्राज्यानामधिपति’। अन्न साम्राज्यों का अधिपति है और अन्न वं प्राणिना प्राणः’ अन्न ही प्राणियों का प्राण वा जीवन का सहारा है। अन्नादि के उत्पादकों और वितरकों तथा उपभोक्ताओं सभी का यह महत्त्व पूर्ण पर्व है। अमावस्या दीपावली तक व्यापारियों का आय-व्यय का लेखा जोखा हो गया, गोधन पूजा क्रांतिक शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से पशुओं की गिनती, निरीक्षण आदि आरम्भ हो गया।

इस ऋतु का प्रधान अन्न चावल है, उसकी खीलें बनाकर बाँटी जाती हैं और खाई जाती हैं इस ऋतु का ही गन्ना है, जिसका गुठ शक्कर चीनी, बूरा, बत्तासा आदि बनता है। दोनों को मिलाकर अर्थात् खील बत्तासा बाँटा और खाया जाता है। इन्हीं के द्वारा आहुतियाँ भी दी जानी चाहिये। तथा अमावस्या के घोर अन्धकार में दीपमाला करके प्रसन्नता का प्रकाश होना चाहिये। ये ही इस पर्व की महत्ताएँ हैं।

दिवाली की अमावस्या और ऋषि का निर्वाण

[श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परित्राबक]

बर्षा ऋतु के परचात् वीवासी की अमावस्या प्रथम अमावस्या है। इस रात्रि में गगन मण्डल में कोई चारिदल चार्वल बादल नहीं है, सब बल दलित हो गये आकाश मण्डल निर्बल निर्मल है तारों भरी रात है। सर्वत्र ऋतु तारे नक्षत्र सितारों समचमाते जगमगाते शिलमिलाने हैं, दिवाली क्या है विवि-जालि (दिवाली) आकाश में नक्षत्र ध्वनि का पर्व है, यह मनुष्य के नास्तिक की कला है, जो सहस्र बीप जलाकर के गगन मण्डल के पर्व को भू-मण्डल का पर्व बना दिया।

यह अमावस्या है, जड जगत् की भी और चेतन जगत् की भी, जड जगत् का चाँद रवि की शरण में चला गया, चेतन जगत् का चाँद-मानव जगत् का चाँद आर्य जगत् का चाँद (दयानन्द) परमात्म रवि की गोद में जा छिपा। ध्राज उस महान् बीप का निर्वाण है और वह महत्त्व पूर्ण है, जैसे कोई साधारण बीप होता है वह किसी घर में या गुहा में जलकर निर्वाण को प्राप्त हो जाता है। विशेष महत्त्वपूर्ण बीप वह होता है समा में प्रकाश प्रदान कर जिसका निर्वाण होता है महान् बीप रूप दयानन्द का मानव समाज में प्रकाश का सञ्चार करके निर्वाण हुआ।

यह अमावस्या उनके अमर होये या मृत्यु-अन्ध बनने का दिवस है। घर में रहते हुए बहन और लका की मृत्यु की देखा उस समय मृत्यु से बचने की प्रबल भावना उत्पन्न हुई—

‘अन्त समय को देख दयानन्द घर से बन को जाता।
निश्चय बपना किया जगत् में किसका किससे जाता।’

मृत्यु से बचने का औषध उसे वेद से मिला, ‘ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युनपाध्मत’ (अथर्व० ११-५ १८) ऋषि ने उस ब्रह्मचर्य रसायन को पूर्णरूप से पान किया। वह मृत्युञ्जय बना जिसने अन्त समय में ईश्वर को साक्षात् समझते हुये कहा था, ईश्वर क्या तेरी यही इच्छा है। तबमूब तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। इतना कहकर स्वस को लम्बा करके छोड़ दिया और सबा के लिये छोड़ दिया—

‘हम हस हस उड़ा एक ही उड़ान में।
परब्रह्म में केवल मैं श्योम समान में।’

दयानन्द सर्वतोमुखी आचार्य महारमा या महापुरुष था, अन्य आचार्य महारमा महापुरुष आये, वह किसी एक विद्या को विद्याकर या किसी एक मार्ग को सुझाकर बले गये। पर दयानन्द से कोई विद्या ऐसी नहीं छूटी जिसे उसने विद्याई न हो और कोई मार्ग ऐसा नहीं छूटा जिसे उसने सुझाया न हो। क्या चारित्रिक क्षेत्र क्या धार्मिक क्षेत्र क्या सामाजिक क्षेत्र क्या राष्ट्रिय (राज-नैतिक) क्षेत्र।

चारित्रिक क्षेत्र में उन्होंने ब्रह्मचर्य को महत्त्व दिया है, वे सब से ऊँचा चरित्र है, धार्मिक क्षेत्र में अनेक ईश्वरवाद तथा ईश्वर के स्थान पर किसी मनुष्य या जड़ बस्तु को मानना अर्ध-



बिक ठहराया और प्रत्येक भ्रान्तियों को मिटाया, सामाजिक क्षेत्र में सब पुरुषों तथा स्त्रियों को विद्याध्ययन का अधिकार दिया और परस्पर के भेद भाव को मिटाया, राष्ट्रीय (राजनीतिक) क्षेत्र में भारतीयों के अन्तर सर्वप्रथम भारत की स्वतन्त्रता की भावना को भरा तथा उत्कृष्ट राजनीति को बताया, 'एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये किन्तु जो सब में सर्वोत्तम गुण, कर्म, स्वभाव से युक्त श्रेष्ठ पुरुष को राज्य सभा का पति मानकर सब प्रकार को उन्नति करे, राजा जो समापति तद्घीन समापत्तौ राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजनियमों के अधीन रहे। न केवल भारत भर के लिये ही ये अपितु सारे सत्सार के लिये थे। सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका से लिखा है यद्यपि मैं आर्यावर्तन देश में उत्पन्न हुआ हूँ परन्तु सब देश वाले मनुष्यों की उन्नति में समान बतता हूँ, आय समाज का एक नियम उन्होंने बनाया कि 'सत्सार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है स्वामी जो क्षमाशील भी अनुपम थे, अपने घातकों को क्षमा करते रहे जीवन काल में भी क्षमा करते रहे और मरकर भी क्षमाशील रहे। उनके बधक को फाँसी का तल्ला नहीं चूमना पड़ा। इस युग में ऐसे ऊँचे चरित्रवान्, बलवान्, आत्मशक्तिमान् विद्वान् सर्वविषयों में प्रखर बुद्धिमान् सत्सार भर के हितैषी महामानव का भारत में उत्पन्न होना भारत के महान् गर्व गौरव का विषय है उनका मान और श्रोगान करके भारत और भारतीयों का शिर ऊँचा हो सकता है। बड़े बुद्ध का बात है शासन ने और भारतीयों ने उसको ठीक रूप से नहीं समझा और उसका इतना नहीं बोले। * *

दिव्य-दिवाली

बही है दिवाली श्रद्धि देव ने बनाये दीप,
 बही है दिवाली दिव्य रूप को बिछाया था !
 बही है दिवाली दिन यामिनी सन्धी के बीच,
 बही है दिवाली श्रद्धि धाम को सिधायी था !
 बही है दिवाली निज रूप को दिखाने आई,
 बही है दिवाली आज श्रद्धि रूप पाया था !
 बही है दिवाली श्रद्धि राज के सेवा में रही,
 ओम् ओम् ध्वन साध-सत्ता में समाया था ! !
 प्रकाश को पाके श्रद्धि प्रकाश बताया निज,
 प्रकाश में रहे फिर प्रकाश में गये थे !
 आये जब महा अन्धकार तम यामिनी का,
 देख देख पापाचारी, बुखी नोग भये थे ! !
 चारों ओर गुरुदम पाण्डव पुत्रारी गोप,
 उठी मे प्रकाश किया, श्रद्धि काम नभै ये !
 दीवाली आई थी कई बार भी गई थी धा के,
 किन्तु 'घनसार' ऐसा प्रकाश न लाये थे ! !
 दिवाली बही है जिस विल में प्रकाश हुआ,
 दिवाली बही है जिन-घम भग नाश हो ! !
 दिवाली बही है नित्य-वैदिक सुकर्म करे,
 दिवाली बही है ज्ञान के वक बिलास हो ! !
 दिवाली बही है नित्य गुरुकुल पढ़े बट्ट,
 दिवाली बही है वेद-विद्या का विकास हो !
 दिवाली बही है 'घनसार' सुखी दीन रहे,
 दिवाली बही है-वेद ज्ञान का प्रकाश हो ! !
 दीपक लगाये कई बिबल्ही सजाये कई,
 दीपमाल लगाकर, तम, को हटाये हैं !
 घर में सुद्वार पर बैठक कमरों पर,
 अराम भवन पर रोझनी सजाये है ! !
 हाट, और हवेली पर, सबल के कीने-कीने,
 शिग-मिग ज्योति कर-आतन्व सजाये हैं !
 सब ही प्रकाश क्षण मात्रिक रहाये 'घनसार',
 तो प्रकाश एक वैदिक ऋषि रहे हैं ! !
 -द्वि कस्तूरचन्द 'घनसार' पोपाड़ साहू (शाब०)

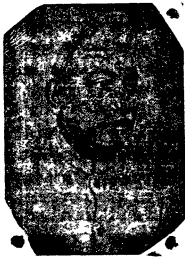


दीपावली



] श्री डा० मुंशीराम जी 'सोम, कानपुर]

प्रायों के समाज में वर्ण व्यवस्था के सम्बन्धित चार पर्व हैं—आवणी, बसहारा, दीपावली और होखी। आवणी में सभी वर्ण ज्ञानमय होने का प्रयत्न करते हैं। विप्र रूप ऋषि मुनि वर्षा काल में मगरों और प्राची में आ जाते थे। आस्थान मण्डपों में ज्ञान चर्चा छिड़ती थी। वेदों की कथा



श्री डा० मुंशीराम जी 'सोम'

होती थी। बाब में उर्वनिषद्, रामायण भी पढ़े जाने लगे। अभिप्राय एक ही रहता था—समय जनता ऐसे ज्ञान को पाकर लाभान्वित हो जो उसे कर्मठ बनाता हुआ, परम ज्ञान रूप प्रभु की ओर ले चले। ब्राह्मण वर्ण विशेष रूप से वैदिक स्वाध्याय में निरत होता था। उपाकर्म का अर्थ ही है—स्वाध्याय का प्रारम्भ। बसहारे के पर्व पर क्षात्र

भाव की प्रधानता रहती थी। अस्त्र शस्त्र परि-
माजित किए जाते थे। वीर भाव को जागृत करके
के लिये ऐसे खेल कूद होते थे, जिनमें दो बल
परस्पर सघर्ष रत हों, और विजय प्राप्त करने के
लिए प्रतिस्पर्धीशील हो। इसका परिणाम होता
था कि बाह्य आक्रमण जैसी बिपत्तियों के आ जाने
पर सभी वर्ण सैनिक बन कर देश की रक्षा के
लिए सज्ज हो जाते थे। आत्ह छण्ड में रूपन
वारी, धनुआ तेली, लाला तमोली, चौडा ब्राह्मण
ताल, सेयव मुसलमान आदि सभी मिलकर युद्ध
में भाग लेते हैं। रामचरित मानस में तो गुह निषाद
भा भारत की सेना को देखकर भी भाव में मस्त
हो जाते हैं। भरत से मोर्चा लेने के लिए वे
तरकश बाँधकर धनुष चढ़ा लेते हैं। उन्होंने
कवच पहन लिया है। तिर पर लोहे काटीप है।
परगु भाले, बछीं हाथ में ले लिए हैं। खोडा
चलाने में दक्ष निषाद ऐसी छलांगें भरते हैं, मानों
घरती छोड़कर आकाश में कूद रहे हों और
विदिनी को रुद्धमुण्ड मय बना देने के लिए उद्यत
हों। जूसाऊ डोल भी बजते हैं।

दीपावली व्यापारी वर्ग का विशेष पर्व है।
लक्ष्मी की पूजा का अर्थ ही है, धन की वृद्धि
करना। इस पर्व पर समाज के सभी अंग लक्ष्मी
पूजन करते हैं। धन की आवश्यकता सभी को
पडती है। किसान का घर भी इन दिनों उबार,
बाभरा, चावल आदि अन्नों से भर जाता है।



समाज का कोई भी घटक धनधान्य से ही नहीं रहे, ऐसी योजना इस पक्ष पर की जाती थी। नई फसल का अन्न केवल किसान के घर में ही नहीं रहता था, उसका उपयुक्त भाग सभी वर्णों के पास पहुँच जाता था। ऐसी सुन्दर सामाजिक पद्धति बनी हुई थी कि कोई भी वर्ण, कोई भी व्यक्ति भूखा नहीं रहता था, और विवाह भावि के अवसर पर तो सभी वर्ण एक दूसरे की सहायता करने में जुट जाते थे। खेव है कि आर्यों के समाज की यह व्यवहार-प्रणाली आज ह्लासोन्मुख है और पश्चिमी प्रणाली ने हमें चुनाव का चस्का चखा कर पद प्रभुता का ऐसा पाठ पढ़ाया है कि हमारा भ्रातृभाव समाप्त हो रहा है, और पारस्परिक सघन ने एक को दूसरे से भिडाकर जान का गाहक तक बना दिया है। पूँजी सिमित कर कुछ चण्डाल चौकड़ी तक सीमित हो गई है और सामान्य जनना परेशान है।

होली का पर्व शूद्रों का पर्व कहलाता है। इस पर्व पर सभी वर्ण अपनी अपनी विशेष महत्ता को छोड़कर एक हो जाते हैं। अबीर और गुलाल की धूम मच जाती है। सभी एक दूसरे को छतों से जगाते हैं, और घर घर जाकर आनन्द-प्रसन्न से ओत-प्रोत हो जाते हैं। होली का पर्व होलों से सम्बन्ध रखता है, और होलिका नामक राक्षसी से भी। इनमें एक ओर होले भूने जाते हैं, तो दूसरी ओर होलिका भी जलाई जाती है। हमें अपने अन्दर छिपी अनार्य, वस्यु एव राक्षसी वृत्ति को जला देना चाहिए और होले रूपी सद् वृत्ति पका कर आमन्व मग्न होना चाहिए। समाज के प्रत्येक सदस्य को आर्य बनना है, अनार्य नहीं, पुण्य आत्मा बनना है, पापात्मा नहीं। वस्युता एवं दुरित का दमन और भद्रता एवं भव्यता का

अभिव्यक्त हो समाज को ऊँचा उठा सकेगा। हमारे पर्वों का यहाँ एक मात्र उद्देश्य है—उच्छान्ते ते पुण्य तव यानम्—पुण्य तू ऊँचा उठने के लिये आया है, नाचे गिरने के लिए नहीं।

वीपावली का पर्व देश की धन धान्य से सम्पन्न बना देने के लिए श्यापारी बर्ष का आह्वान करता है। हमारी कृषि, हमारा उद्योग, हमारा व्यवसाय इस सोने की बिडिया के स्वर्ण को नष्ट न होने दें, उसकी निरन्तर वृद्धि करें, और आवश्यकता के अनुसार अपने सभी अङ्गों तक पहुँचा दें। द्यूत या जुआ हम खेलें, पर वह सभी को धामान् बनावे, बरिद्र नहीं। हमारी तुला साम्य सदेश रखती हो, घटतोला पन नहीं। सबके साथ यथावत् व्यवहार हो, भाई भतीजे बाद का पक्ष पत नहीं। भेंहगाई और भ्रष्टाचार, असत व्यवहार तथा तोड़ फोड़ अनार्यों की चाल है, आर्यों की नहीं। आर्य न तो किसी का दास बनता है, और न किसी को दास बनाता है। वह अपने को और विश्व भर को आर्य बनाने के आदर्श से अनुप्राणित रहता है। उसका धर्म, उसका कर्तव्य अबानी, अनार्यों का पराभव तथा आर्यत्व का सघन है। मानवता का विकास, सुख एवं शान्ति का उल्लास आर्य जीवन का स्त्रिय है। आर्य समाज के सदस्य पर्वों के इस महत्त्व को समझें और अपने को सच्चे अर्थों में आर्य बनावें *

आर्य समाज सुन्दरी (बरेली)

प्रधान—श्री भजन लाल

उपप्र०—, प्रेमपाल

मन्त्री—, भूवेच जी

उपम०—, श्रीप्रकाश जी

कोषा०—, रामप्ररोक्षे लाल



भारत के आर्यों की उत्पत्ति

[लेखक—श्री डा० सूर्यदेव जो सिद्धान्त वाचस्पति, एम०ए० डी-लिट् अजमेर]

मानव-इतिहास में दो प्रश्न सदा से समस्या-पूर्ण एवं महत्त्वपूर्ण रहे हैं, एक मानव की प्रथम बार उत्पत्ति कहाँ पर हुई ? और दूसरा मानव की उत्पत्ति कब हुई ? इन दोनों प्रश्नों पर बड़े-बड़े मनोवी विद्वानों, प्रागैतिहासिक काल के अनेक अनुसन्धान कर्त्ताओं ने अतोव परिश्रम के साथ खोजबीन की है, परन्तु वे किसी एक परिणाम पर नहीं पहुँचे हैं। प्रारम्भ से उनमें मतभेद रहा है और शायद आगे भी रहेगा। अभी मैं इन प्रश्नों की ऊँहापोह नहीं कर रहा हूँ। अभी तो मेरे सामने अन्य दो प्रश्न उभर कर आ रहे हैं—

(१) भारत में जो आर्य लोग हैं—वे कहाँ बाहर से आकर यहाँ आबाव हुए या यहीं उनकी आदि उत्पत्ति हुई ?

(२) क्या दक्षिण भारत के निवासी द्रविड लोग उत्तर के आर्यों से मिले हैं या वे भी आर्य ही हैं ?

इसमें से प्रथम प्रश्न के उत्तर में प्रो० मैक्स-मूलर ने लिखा कि आर्य लोग मध्य एशिया (अथवा काकेशिया) से चलकर भारत में उत्तर पश्चिम से प्रविष्ट हुए। प्रो० किंटरनिन्ड ने तथा अन्य कई विद्वानों ने ईरान की ओर से अथवा भूमध्य सागर से भारत में उनका आना माना है। लोडमान्ग तिलक ने आर्यों की उत्पत्ति एवं उनका भारत-प्रवेश, उत्तरी द्रुव प्रदेश से माना है। उर्वू के प्रसिद्ध कवि डा० इडबाल ने भी लिखा है—

ऐ भावे रोदे गगा, वह दिन है याव तुझको ?
उतरा तेरे किनारे, जब कारवाँ हमारा ।
सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्ताँ हमारा ॥

परन्तु इन सबके विपरीत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने आर्यों की आदि उत्पत्ति तिब्बत



श्री डा० सूर्यदेव जो डी-लिट्

के पठार पर अथवा हिमालय पर्वत पर तथा भारत में ही मानी है, और इस प्रकार ब्रिटिश राज्य के उस षड्यन्त्र का भङ्गाफोड़ किया जो आर्यों को बाहर से आया हुआ बतलाते हैं और दक्षिण भारत की द्रविड जाति को आर्यों से पृथक् भारत की आदि निवासिनी जाति मानते हैं। स्वामी जी के इस मन्तव्य के समर्थन में अनेक पुरा-तत्त्व-विशारदों के मत उद्धृत किये जा सकते हैं जैसे—



'शताब्दी-सन्देश'

(अ) आर्यों की ईरानी शाखा के विशेषज्ञ श्री खुरशेव जी फस्तम जी ने अपनी पुस्तक 'मानव का मूल जन्म स्थान' में हिमालय की शाखा हिन्दूकुश की, जो ३७° से ४०° उत्तरी अक्षांश तक फैला हुआ है, आर्यों का आदिम स्थान सिद्ध किया है।

(ब) पूना के प्रसिद्ध विद्वान् नामा पावगी ने अपनी पुस्तक 'आर्यावर्षातीत आर्यों की जन्मभूमि' में लिखा है—'हिमालय ही हमारा और हमारे वैषताओं का उत्पत्ति स्थान है' (पृष्ठ २७२)।

(स) श्री अविनाशचन्द्र दास ने 'ऋग्वेदिक इण्डिया' पुस्तक के ३७६ पृष्ठ पर लिखा है—'वैदिक ऋषियों ने उत्तरी के मक्षत्रों को हिमालय (जहाँ उनका जन्म स्थान था) के ऊँचे पर्वतों पर से ही देखा था।'

(द) बंगाल के प्रसिद्ध विद्वान् श्री उमेशचन्द्र दत्त ने अपनी पुस्तक 'माबवेर आदि जन्म भूमि के पृष्ठ १२४ पर लिखा है, 'भारत में बसे हुए हमे (आर्यों की लाखों वर्षों से कम समय नहीं हुआ हिमालय ही हमारा मूल स्थान है।')

(य) महाभारत में भी लिखा है—
हिमालयानिधानोऽप्युपस्थातो लोकेषु पावनः।
तत्र सर्वाः समुत्पन्नाः ॥

(र) बाण्डु पुराण में भी लिखा है कि मानव की आदि सृष्टि हिमालय में मानसरोवर के पास हुई।

(स) ब्रह्म प्लावन के समय नूह ने अपनी नाव हिमालय पर ही बाँधी थी, जैसा कि कहा गया है—

आयेगी गताव्यो अब शेष नहीं बचें द्वय।

इसी बीच क्या-क्या हमें कर दिखाना है।

तोचें यह आय जन मिलजुन कायें करें,

हों मतभेद तो तो उन्हें भूल जाना है।

समाज स्थापना के मनुद्देश्यों को पूर्ण करें,

इसमें 'रणञ्जय' आलस्य नहीं लाना है।

भीष्म प्रतिज्ञा कर ऋषिबन्धु के भक्तों को,

वैदिक सिद्धान्त विश्व भर में फैलाना है।

—राजा रणञ्जयसिंह

पूव प्रधान आ. प्र सभा

अमेठी (मुलतानपुर)

बन्धे कलौष जिसके, पर्वत जहाँ के सीमा।

नूहे नवी का आकर, ठहरा जहाँ सफोना ॥

इसी बलप्लावन दृश्य का वर्णन महाभारत में भी है—

'हिमवत शृणो नाव, बध्नीत मनुनाम्बिरम्।'

आज ऋषि वयानन्द के मन्तव्य को सिद्ध करने के लिये और बोलियों प्रमाण बिये जा सकते हैं। इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि आदिम आर्यों (मानवों) की आदि सृष्टि हिमालय अथवा भारत में ही हुई थी। धन्य है ऋषि वयानन्द को जिन्होंने सत्सार के मानव-समाज के इतिहास में हमारा (भारतीय आर्यों का) भस्तर ऊँचा किया है।

यह हिमाचल ही हमारा, मानवों का मान है।

आर्य आदिम जाति का, सर्वोच्च जन्म स्थान है ॥

—'सूर्य'

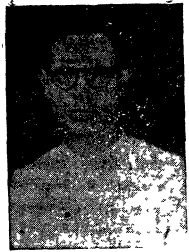


आर्यों से !

[कविबर 'प्रणव' शास्त्री एम० ए० आर्यनगर, फीरोजाबाद]

प्रिय, दिवाली यों मनाओ !

ऋषि वयानन्द देव का सन्देश घर-घर में सुनाओ ॥१
 आज जन मन गगन लता पर है खिर्बा का सत्य का डेरा,
 भुजग झट्टाचार ने है राष्ट्र को बहू ओर घेरा ।
 पूर्ण भूतल पर डटा है धन भमा का ही अँधेरा ।
 ज्ञान की लेकर मशालें निबिडतम को तुम भगाओ ॥२
 ऋषि वयानन्द देव के बलिदान को जो शपथ सोई,
 शत सहोबो के अमर अरमसको जो शपथ सोई ।



'प्रणव' शास्त्री एम० ए०



'स्वस्ति पन्थामनुचरेम' गान की जो शपथ सोई ।

कवि जगता है उसे, लो भेदभावो को भलाओ । ३

क्या न अब भी जान पाये दीप सारे सो गये हैं,
 राम के, गोपाल के अभिमान सारे खो गये हैं ।

बिषय में कुछ बँध ही हों बीब बिष के जो गये हैं ।

क्यों न बनकर शिब गरल को कण्ठ में कर पान जाओ ॥४

क्या वयानन्द देव का था धर्म जगती को जगाना,
 लेखरामी रक्त का भी क्या बहाना ही बहाना ।

व्यथ भट्टानन्द के क्या गोलियों का पार जाना ।

एकता के सूत्र में जो मुमन से सब गुथ न जाओ ॥५

हो न तारों का सुसगम बीज क्या कल गान गाती ?

धर्म की माला न जोहो पारती है कौन खाती ?

बिन बलों के मिलन से क्या भीत छाया रङ्ग खाती ?

प्रम सज्जा शालिनी से जीवनी के रथ सजाओ ॥६

चाहते हो जो घरा में शुभ शताब्दी का मनाना ।

सत्य अर्थ प्रकाश पर जो चाहते हो रँग चढ़ाना ॥

चाहते हों वैदिकों का कारवाँ आगे बढ़ाना ।

तो 'प्रणव' कविता स्वरों को मन सबन में गुन पुनाओ ॥७





भारत एक राष्ट्र है : इस मन्त्र का मन्त्र दाता महर्षि दयानन्द सरस्वती

[श्री अश्वनीन्द्रकुमार जो बिद्यालकार इतिहास सचन एम १८ कनाट मकस, नई दिल्ली-१]

बिवाली की सध्या और टिमटिमाते वीए उस महान् भारतीय का स्मरण कराने हैं, जो नख से शिक्षा तक भारतीय था। इसके अतिरिक्त वह और कुछ न था। १९वीं सदी में ही नहीं बल्कि चाणक्य चन्द्रगुप्त के बाद से भारतीय इतिहास में उसके समान उम कोटि का कोई महान भारतीय नहीं हुआ। भारत का ब्रिटिश अनुयायी बग राजा राममोहन राय को आधुनिक भारत का जन्मदाता मानता है, और तो और आय समाज का इतिहास के लेखक श्री इन्द्रबिद्यावाचस्पति तक ने अपने ब्रिटिश भारत के इतिहास में राजा राममोहन राय को आधुनिक भारत का जन्मदाता कहा है।

किन्तु राजा राममोहन राय का भारत उपनिषदों से परे नहीं जाता, इससे पहले के भारत का वह प्राचीनतम भारत को भारत नहीं मानता। एक जर्मन विद्वान् श्लेगेल के एक सूक्त का अनुबाव कर रहा था। वह राजा राममोहन राय का मित्र था। उसके घर ठहरा हुआ था। जर्मन मित्र को वेद का अनुबाव करते देखकर राजा राममोहन राय ने उसके कागज पत्र उठाकर फेंक दिए। कहा कि यह इसमें क्या अपना समय बरबाद करते हो। वेद भारत की आत्मा है, प्राण है। उसको परिचया करने की सलाह देने वाला व्यक्ति क्या सचचा भारतीय कहाने का अधिकारी कहला सकता है? यही कारण है कि राजा राममोहन

राय ने अंग्रेजी की प्रभता को सहर्ष स्वीकार किया। अंग्रेजी की प्रभता १९७३ तक कायम है। क्योंकि राजा राममोहन राय ने ब्रिटिश प्रभुता और अंग्रेजी की सत्ता को अरेष्य माना अथवा माना भारत की प्रभुता का अह्य समाज के सस्थापक को कोई गर्व न था।

राजा राममोहन राय यदि सचचा भारतीय होता तो १९७३ तक अंग्रेजी की प्रभुता भारत में कायम न रहती। वह सचचा बड़ भारतीय होता तो याद रखता।

इव नमः ऋषिभ्यः पूज्यैभ्य पुष्यैभ्य. पवि-
कृष्यैः ॥ (ऋ० १०। १४। १५) (अथव १८.
२। २)

नम ऋषिभ्यो मन्त्र कृष्यो मन्त्र पतिभ्य. ।
नमो वो अस्तु देवेभ्यः ॥ (ए० आ० १। १। १)

स्पष्ट है, राजा राममोहन राय को एक भारतीय होने का कोई अभिमान न था वह आत्म हीनता की छाप से ग्रसित था। इसका परिणाम भारत भोग रहा है। एक फॉक पर्यटक ने भारतीय विमान बनाने के कारखाने को देखने के बाद लिखा है, भारत के विमान निर्माता नये-नये डिजाइन (अकल्पना) बनाने में असमर्थ है। इसके वास्ते परिचित है। भारत का मुरझा मग्नी मिग २५ का डिजाइन पाने के लिए मास्को गया। क्योंकि भारत का वर्तमान शासक और राजनीतिक



पाटियाँ भारत को एक वेश और एक राष्ट्र नहीं मानतीं। अतः वेद को भारत राष्ट्र की अनमोल महाविधि मानने और इसकी रक्षा का प्रयत्न ही नहीं उठता। इस वास्ते शासन भटक रहा है।

वैदिक अन्तरिक्ष उडान के अनुसार युद्ध का विमान ऐसा होना चाहिए कि उसको दुश्मन का विमान न देख सके। अपना विमान शत्रु के विमान में होती बातचीत को सुन सके। परन्तु अपने अन्तरिक्ष यान में होती बातचीत को शत्रु न सुन सके।

अपने अन्तरिक्ष यान से बनाया गया निशाना अचूक होना चाहिए। रिपु का विमान नष्ट होते हुए विछाई देना चाहिए।

प्रेजीडेंट निक्सन ने 'पेंटागन' को अपने सन्देश में कहा है पुरानी लडाइयों का इतिहास पढ़कर शस्त्रास्त्र मत तैयार करो, प्रत्युत भावी लडाइयों के स्वरूप का विचार कर नवीन शस्त्रास्त्र तैयार करो। भारत का सुरक्षा मंत्रालय पर पुरानी लौक पीट रहा है, नकल कर रहा है। क्योंकि उसने भारतीय ज्ञान भण्डार वेद को कूड़े में फेंक रखा है। यह है, राजा राममोहन राय का निमित्त परमुखापेक्षो भारत।

ऋषि वयानम्ह को इस अनिष्टकारी विनाश की कल्पना थी। यही कारण है कि प्रार्थना समाज, चियोसोफिस्ट ब्रह्म समाज, ऋषि वयानम्ह के साथ मिलकर समाज-मुधार का भी कार्य न कर सके। एक महाराष्ट्रीय विद्वान् का कहना है कि इनमें एकता न होने का कारण ऋषि वयानम्ह की विजयीष्णु भावना थी। भारत से विजयीष्णु की भावना का लोप हो गया। इस सत्य की गोस्वामी तुलसीदास ने बड़ी तीव्र अनुभूति के साथ अनुभव किया, और लिखा था, अतः उन्हींसे लिखा

'ओर हीन मैं मही जाना,'

कोऊ मृप होय हर्षे का हानि,
चेरो छोड़ होऊ न रानी।'

ये बक्तियाँ मार्मिक है। इस अवस्था का इस घनघोर निराशा और हताशा का अन्त एकमात्र वेद से ही हो सकता है। क्योंकि वैदिक ऋषि कहता है।

गिरयस्ते पवंता हिमवन्तो अरण्य ते पृथिवि स्योन मस्तु। बभू कृष्णा रोहिणी विश्व कपां भ्रूषा भूमि पृथिवीमि-द्रगुप्ताम्। अजीन्तो अहतो अक्षतो अध्यक्षो पृथिवी मह्य।

(अथर्व १२-१ ११)

अग्नेयी की प्रमत्ता को खुगो खुगा स्वोकार करने वाले 'ब्रजितो अहो अना' अण्डा पृथिवीमहम' की कल्पना तक नहीं कर सकते। ऐसा बनने की बात हो दूरा रही।

यही कारण है, भारत के एक स्वर्ण प्रदान मन्त्री ने भारत विभाजन ही नहीं, विभक्त कश्मीर स्वोकार करने के साथ साथ अबसाईं विन समेत १२,००० बग मील भूमि का भाग चीन को सौपने की तैयार हो गए।

जिला भूमि रक्षमा पामु सा भूमि सधृता धृता तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरनमः ॥

(अथर्व १२-१-२६)

वेद भारत भूमि के प्रति भक्ति, श्रद्धा और विश्वास पैदा करता है, और उसके वास्ते बली देने की प्रेरणा करता है। आधुनिक भारत का यथार्थ मन्त्र वाता ऋषि वयानम्ह है। यही कारण है, उसका स्थापित किया, आर्य समाज भारत से बाहर कहीं-कहीं गया, वहाँ उसके साथ वेद गया, और हिन्दी गई। स्वामी विवेकानन्द का स्थापित

(शेष पृष्ठ ४६ पर)

स्वामी जी की विशेषता

[श्री प० बिहारीलाल जो शास्त्री काव्यतीर्थ, बरेली]

हिमालय के आँगन में जिसे,
 प्रथम किरणों का वे उपहार ।
 उषा ने हँस अभिनन्दन किया,
 और पहनाया हीरक हार ।
 जगे हम लगे जगाने लोक,
 लोक में फँस फिर आलोक ।
 ध्योम तम तोम हुआ तब नाश,
 सकल समृति हो उठी अशोक ।
 कहीं से हम आये थे नहीं,
 यहीं पर रहते सदा सहर्ष ।
 हमारो जन्म भूमि है यही,
 हमारा प्यारा भारतवर्ष ।

भारतवर्ष केवल भोग भूमि ही नहीं मोक्ष भूमि भी है, यह हो जिनका विश्वास उससे बढ़कर राष्ट्रवादी, देशभक्त और कौन हो सकता है । हिन्दु, वैष्णव, जैन, बौद्ध, सिख आर्य समाजी, सनातन धर्मों, कबीरपंथी, राधास्वामी कुछ भी हो उसके लिये हिमालय से कन्याकुमारी तक अफगानिस्तान से सुन्दर बन तक सम्पूर्ण भूमि आर्य भूमि है । इसका कण कण धरों के बलिदानों से पवित्र हुआ है । इसकी धर्मों विशाएँ सतियों की चिताओं के धूम से पवित्र हो चुकी हैं । यहाँ वेदों के सत्वर पाठों से अश्वमेधादि बड़े यज्ञों से आर्य ऋषियों ने विशाओं को सुरमित और पावन बनाया । बौद्ध, जैन, सिख आदि सबके तीर्थ कर और गुहों ने अपनी तपस्या से इस देश के एक एक रत्नकण को पवित्र किया ।

हमारे लिये भारत माता का एक-एक रत्न-कण परम पावन है । यहाँ की मरिताओं के बल की एक-एक बूँद तीर्थ है । यहाँ पवंत आबरणीय हैं, बन भावना को जगाने वाले हैं । अतः हम गद्गद



श्री प० बिहारीलाल जो शास्त्री

होकर गाते हैं—वन्देमातरम् अतः इस राष्ट्र का ऊर्ध्वारंग हिन्दू है । बिना हिन्दू के हिन्दुस्तान कहीं और बिना 'मा के भारत कैमा और मा-प्रतिष्ठा का क्षेत्र भी हिन्दू ही है । आज तक हिन्दू के अतिरिक्त किसी भी भारतीय ने नौ बिल प्राइव प्राप्त नहीं किया । ऐसे हिन्दू राष्ट्र की संकलर इज्ज की शरारत पीकर जो उपेक्षा करता है वह भारत का अहित करता है मा-प्रतिष्ठा का



मान करता है। वस १९वीं शती में बितने भा सुधारक हुये, नेता हुये, साधु महात्मा हुये उनसे और स्वामी जी से यही अन्तर था कि स्वामी जी ने बेहोश रोग शय्या पर पड़े हिन्दू राष्ट्र को जीवित कर दिया। हिन्दुओं को एक नयी चेतना का दृष्टिकोण दिया। नया मार्ग दिखाया— क्या माग ? तुम शुद्ध कर अन्यो को अपने मे मिलाओ और अपने मे से किसी को बाहर न जाने दो। आर्यों ने यही किया। जो लोग हिन्दू-धर्म को कच्चा घागा बताते थे, अब उन्हीं ने देखा कि फोलाबी जजीर हो गया है। हिन्दू वंश न हिन्दू इतिहास हिन्दू महापुरुष नये रूप मे ही बोलने लगे। आत्महीनता के स्थान मे हिन्दू का आत्माभिमान जाग्रत हुआ।

आज कुछ लोग स्वामी इयानन्द के महत्त्व को पीछे धकेलना चाह रहे हैं। वे आगे लाना चाहते हैं पूज्य स्वामी बिवेकानन्द जी को। स्वामी बिवेकानन्द जी ने भी हिन्दू वंश न का गौरव बढ़ाने के लिये महत्त्वपूर्ण काम किया है, विदेशों मे उनके भाषणों से हिन्दू धर्म का महत्त्व स्थापित हुआ है परन्तु स्वामी जी को उनसे क्या तुलना ?

जब अंग्रेजों ने उत्तर प्रदेश की राजधानी अखनऊ बनाई और लखनऊ के विकास मे लगे थे इलाहाबाद के एक उर्दू कवि ने लिखा था—

बढ़ा रहे हैं बहुत लखनऊ की शान मगर,
वह गोमती को तो गंगा बना नहीं सकते।

राजा राम मोहन राय, स्वा० श्री बिवेकानन्द जी एक-एक बात को लेकर चले। एक ने उपनिषद् पकड़े दूसरे ने वेदान्त। पर ऋषि इया-

नन्द ५वीं की लेकर छड़े हुये। ब्रह्मा से लेकर जैमिनि ऋषि पर्यन्त समग्र धर्म ग्रन्थ और पूरा आय इतिहास है ऋषि के विचारों का आधार अस्तुतः सच्चे सनातन धर्म को सामने रखकर धर्म प्रचार करने वाले इस युग में केवल ऋषि इयानन्द हैं।

सब धर्म एक से हैं, यह गांधीवादी विचार धारा भी हिन्दू राष्ट्र के लिये बड़ी घातक सिद्ध हुई है। हिन्दू तो इससे हो गया डीला पर अन्य मतों पर महात्मा गांधी का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, वे ज्यों के त्यों कट्टर बने रहे। अभी पिछले वर्ष एक सर्वोच्च नेता ने हिन्दू मुस्लिम एकता को धुन में हिन्दुओं को सुअर और भौ का मांस खिलाया। इस पामर पशु से पूछा जाये कि ईसाई तो सब प्रकार का मांस खाते हैं फिर उनसे मुसलमानों की एकता क्यों न हुई। अनेकता विद्वेष खान पान का नहीं विचारो का है।

ऋषि के चेलो ने विचारों का ही सघर्ष छेडा। खण्डन-मण्डन की लहर का प्रभाव मुसलमान जैसे कट्टर मत पर भी पडा। मुसलमानों ने हुबोसो का विरोध प्रारम्भ किया "हुकबातुल मुस्लिमीन किताब लिखी शाहजादा सुलतान अहमद ने। वेदों की ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार किया मिर्जा गुलाम अहमद ने। सृष्टि की आदि में केवल आबम हुआ ही नहीं किन्तु बहुत से नर-नारी पैदा हुये यह मानने लगे मुसलमान। इस सत्तार से भी पहले सत्तार हो चुके हैं यह कहने लगे मोलाने।

बास्तव मे दो प्रकार के नेता और उपदेशक होते हैं एक वे जो अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं जैसे बामू केशवचन्द्र सेन के व्याख्यानों की

इंग्लैंड में बड़ी प्रशंसा हुई, क्योंकि उनके व्याख्यान ईसाई मत और ईसू के समर्थक थे। स्वामी विवेकानन्द जी के व्याख्यानो की अमरिका में धूम मच गयी। धीरे-धीरे उनकी प्रशंसा करने में मग्न थे पर उसी समय में कनाडा में, अफ्रीका में सहस्रों हिन्दू ईसाई बन रहे थे, बंगाल में सहस्रों हिन्दू मुसलमानों से उत्पीड़ित होकर मुसलमान बन रहे थे और धीरे-धीरे होने वाली इस सख्याबृद्धि का परिणाम है—पाकिस्तान या बंगला देश।

दूसरे नेता वे होते हैं जो अपनी प्रशंसा वा निन्दा की विन्ता न करके अपने देश, राष्ट्र और धर्म का गौरव स्थापित करना चाहते हैं जैसे ऋषि वयानन्द सत्य के कहने में किसी की परवाह नहीं करते। जिस समय हिन्दू ईसाई बन रहे थे और स्वा० विवेकानन्द जी अमरिका में व्याख्यान झाड़ रहे थे उस समय ऋषि वयानन्द के मिशनरी कनाडा और अफ्रीका में जाकर हिन्दुओं को ईसाई बनने से रोक रहे थे और जो हो गये थे, उनकी शुद्धियाँ कर रहे थे, वे थे पूज्यवाद श्री स्वामी शंकरानन्द जी। मैंने उनके दर्शन किये थे। सस्कृत और इंग्लिश में धारा प्रवाह भाषण करते थे। अवार प्रेम और उरताह या इन्हे अपने धर्म प्रचार का।

ऋषि वयानन्द द्वारा सुसाये गये शुद्धि-करण का मूल्यांकन इससे हो सकता है कि महात्मा गांधी जी का कुपुत्र हीरालाल मुसलमान हो गया, नाम रक्खा गया अब्दुल्ला। उस समय मुसलमानों की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। इस्लामी अखबार बड़े-बड़े अक्षरों के शीर्षक देकर हीरालाल का प्रचार करते थे। कानपुर में एक लाल की उपस्थिति में भाषण हुआ अब्दुल्ला का और अध्यक्ष थे इस जत्ते के शीकत अली (महात्मा गांधी के दाहिने हाथ) पर किसी के

ध्यान में आया कि अब्दुल्ला को बदला जाये। महात्मा गांधी के चेले श्री विनोबा जी अपनी कुटी में बँठे वही गहव खाते रहे। सच वाले भी परेत करते रहे। पर आर्य समाजी तो निश्चिन्त नहीं बँठ सकता था। आखिर बम्बई समाज के प्रधान प० विजयशंकर जी ने अब्दुल्ला को फिर हीरालाल बनाकर माता कस्तूरबा की छाती की ठडा कर दिया। माता के आँसुओं का प्रवाह बन्द कर दिया, किसने एक आर्य समाजी ने।

यदि अब्दुल्ला को शुद्ध न किया होता तो आज उसका मज़ार बना होता। हर साल उष होते और ये अन्धविश्वासी हिन्दू भी सहस्रों की सख्या में जाकर अब्दुल्ला की कब्र को पूजते रहते। हरदिल अजीजी बनावट विख्याता इससे दूर रहकर आर्यों ने ठोस काम किया है।

राष्ट्र को जीवन देने और दृढ़ बनाने का काम भाय समाजी ही जानता है। यह ऋषि वयानन्द का ही प्रताप है कि मुसलमान शासकों से छण्डित किया और ईसाइयों द्वारा ढाया जाता हुआ आर्य सस्कृति का भवन बच गया। आष साहित्य की रक्षा हुई। सकुलर इजम धम निरपेक्षता का गीत गाने वाले मूख हिन्दू समझ लें कि इस राष्ट्र को जीवन और संरक्षण देने वाला केवल हिन्दू धर्म है, सस्कृत साहित्य है। इसकी उपेक्षा करके राष्ट्र को निर्बल मत बनाओ। ऋषि वयानन्द के दृष्टिकोण को अपनाओ तो समाजवाद भी सफल होगा। हमारा तो दूषा निबध ही पूरा समाजवाद है। "प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सतुष्ट न होना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।"



मृत्युंजयी दयानन्द

ले०-श्री प्राचार्य भारत भूषण त्यागी उपप्रधान आर्य समाज नयाबाजार

महर्षि दयानन्द मृत्युंजयी थे, क्योंकि उन्होंने राष्ट्र के शरीर से कुरीति रूपी विष को निकालने के लिए रात दिन एक कर दिया। उन्होंने अविद्या के अहं से प्रसन्न देश का सर्वोत्तम निदान किया। वह निदान क्या था—वेदामृत का प्रयोग। उन्होंने पाखण्ड के विषघर पर नियंत्रण किया। स्वार्थी लोगों ने उनको कई बार विष दिया, परन्तु वे, बोलकठ शिव की तरह उसकी मारक शक्ति को पार भ्रूकराते रहे। उनके यश रूपी शरीर को न तो बुझाया जा सकता है, और न मृत्यु ही उनका बाल बाँका कर सकती है।

उन्होंने जोधपुर के राजवंश में व्याप्त जिला-सिक्ता पर सीधी चोट की। अगर शासक ही दिन रात सुरा, सुन्दरी और स्वर्ण में आसक्त रहेंगे, तो प्रजा के चरित्र की क्या दशा होगी! राजस्थान के बीरता के सरोवर पर कामुकता की बाईं छाई हुई थी। महर्षि दयानन्द जी ने देख लिया कि नहीं-ज्ञान वेश्या में आसक्त इस वातावरण को बदलना होगा। उनकी गम्भीर गिरा गगनागन में प्रतिबन्धित हो उठी।

‘केहरी की कन्दरा में कुतिया का क्या काम !’

महर्षिओं जन्म देने के लिए बीरमालाओं की आवश्यकता है। फिर क्या था, इस रंजी के आस-पास षडयन्त्र ने जन्म लिया। वासना के द्विपक्ष पशु एकत्रित हो गए। दूध में कालकूट विष

मिलकर महात्मा को डे दिया गया। उस विष ने अपना घातक प्रभाव दिखाया। धृतिशील दयानन्द ने हँसते हँसते इस परिस्थिति को भी सह लिया। उन्होंने विषदाता को भय मुक्त ही नहीं किया, वरन् धन भी दिया, जिसके खचकर ने पड़कर उसने यह दानवीय कार्य किया था। कितने महान् थे वे! क्षमा में धरती माता के समान। स्वार्थी इन्सान ने नीचता की हृद कर दी, और महर्षि ने मानवता की ऊँचाई के सर्वोच्च शिखर पर अपनी यश ध्वजा फहरा दी।

सागर की भाँति गम्भीर बने हुए उन्होंने भीष्म पितामह की शर शय्या वाली घटना की पुनरावृत्ति सी कर दी। विष विदग्ध भौतिक शरीर से वे आत्मा की विषयता का पावन सन्देश सुनाते रहे। वे काल को पराजित क ने बाले महामानव थे, क्योंकि मौत से सघर्ष करते हुए वे मलिनता का निराकरण करते रहे।

अपनी किशोर अवस्था में बहिन और चाचा की मृत्यु की विभीषिका में उन्होंने मौत पर विजय पाने का व्रत लिया था। उन्होंने राष्ट्र के मृतवत् शरीर में साधना सञ्जीवनी का प्रयोग किया। उन्होंने शूद्रों को तथा स्त्रियों को वेदमाता के सन्देश ग्रहण करने का अधिकारी बताया। वेदों की अर्थ गरिमा को उन्होंने जन सुलभ किया। वर्णाश्रम व्यवस्था के पुनरुद्धार का अनुपम सिद्धान्त दिया।

ईश्वर के सच्चे स्वरूप का निर्भीकता से



प्रतिपादन किया। इन सारे कार्यों से पापी पाषण्डी धामबल हिल गया।

डॉक्टर लक्ष्मणदास की बिकिस्ता एवं सेवा भाव से प्रभावित हो उन्होंने इस सच्चे इन्सान को एक दुशासा तथा कुछ रुपये देने चाहे परन्तु वह तो मानवता से चार चाँद लगाने वाला निकाला। कहने लगा, अगर मेरे पास धन होता तो इस अनुपम वेह को बचाने के लिए आपके एक-एक रोम पर लाखों रुपये लुटा देता। महर्षि जी ने भाव बिभोर अध्रूपुरित नेत्रों से कहा।

‘आर्यावर्त का सच्चा आर्य ऐसा ही होता है।’

आधि ध्याधि से मोर्चा लेते हुए भी वेद ध्यानन्द आर्यत्व का प्रचार एवं प्रसार कर रहे थे, अतएव वे मृत्यु जयी थे।

३० अक्टूबर १८८३ मंगलवार दिवाली का त्यौहार। महर्षि जी ने वेद के मंत्रों का पाठ

किया। संस्कृत में ईश्वरोपासना की। हिन्दी में परम तिन परमात्मा का गुण कीर्तन किया। गायत्री मन्त्र का पाठ किया। कुछ बेर समाधिस्थ रहकर नेत्र खोल दिए और बोले, ‘हे वयामय ! हे सर्वशक्तिमान् ! तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो, हे सच्चिदानन्द ! हे करुणावृत धारिणे ! तूने अच्छी लीला की’ ‘बे जगदम्बा से ऐमे बाने कर रहे थे, जैसे कोई बच्चा अपनी माँ से बातें करता है। इस घटना से प्रतिभा शाली गुरुदत्त में परिवर्तन आ गया। जाते-जाते भी वे आत्मा की उदात्त गरिमा से नास्तिक बना गए अतएव वे मृत्युजयी थे। कविचर शंकर के शब्दों से—

‘आनन्द सुधासार बयाकर पिला गया,
भारत को वयानन्द बुझारा जिला गया।
शंकर बिया वसाय बिवाली को वेह का,
कैवल्य के विशाल बदन मे बिला गया।

आर्यसमाज पानीपत का वार्षिकोत्सव

“आर्यसमाज बडा बाजार पानीपत का वार्षिकोत्सव २, ३, ४ अक्टूबर १९७३ को सम्पन्न होने जा रहा है। इस अवसर पर भारत के अनेक विद्य सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पधार रहे हैं। सर्वो ५० प्रकाशचौर जी शास्त्री प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश, पं० शिवकुमार जी शास्त्री ससय सवरध, पं० रघुबीरसिंह जी शास्त्री कुलपति गुडकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार, पं० रामबयालु जी शास्त्री तर्क शिरोमणि अलोगढ़, प्रो० रत्नसिंह जी एम०ए० पाजियाबाद, पं० हरपाल जी वेदवाचस्पति आदि। उत्सव से पूर्व ता० २६ अक्टूबर से भी पं० रामबयालु जी शास्त्री द्वारा वेद कथा होगी।

—ठाकुरदास आर्य प्रचार मन्त्री

आर्यसमाज

(१)

बड़ मूरत गढ़ लगा हुआ था पूजा में मानव अबसन्न ।
पतनोन्मुखी ध्यान धारक था जप नभ भी था तमसाछन्न ॥

तभी सच्चिदानन्द रूप उस निराकार शिव का अधिकार ।
अजर अजन्मा अनुपम त्यागी सर्वेश्वर या सर्वाधार ॥
तन आत्मन जन-जन की उन्नति को किसने थी वी आवाज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !

(२)

अन्ध भक्ति गुरुद्वम आलस में था प्रभाव तन्द्रालस वीन ।
जब मानव जप में खप खोया भूल-भूलेंध्या भटका हीन ॥
बाबा वाक्य प्रमाण अकल का नहीं देखल था मजहब में ।
कोई राम रटे था तुक सा कोई खोया था रब में ॥
वुरित छोडकर भद्र प्राप्ति में किसने किया वेद का राज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !

(३)

धेष्ठ सरल सम्पकं गिरा थी अखिल विश्व में जो कि प्रसिद्ध ।
मृत संस्कृत की वेद गिरा सब भाषा जननी करके सिद्ध ॥
उस अमृत का वर्धन वृत्त ले उस गंगा का करके ज्ञान ।
कौन भगीरथ-सा धरत था जो सी उठी गिरा श्रियमाण ॥
किसने धूषित कर भाषा को पहिनाया था सिर पर ताब ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !

(४)

ईश जीव आत्मन परमात्मन में थी कभी नहीं दूरी ।
अब भी है ना और न होगी पर अन्नों की मजदूरी ॥
ध्रम में भटके विभु को बरये गोलोकों काबा काशी ।
प्राप्त पास को दूर देखते थी जल में मछली प्यासी ॥
हुटा आवरण भूल सरल पथ किसने उसे बताया भाव ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !



(५)

सुप्त वेद उच्चारित होते थे बस जब सस्कारों में ।
भीत गड़रियों के कहलाते ये विद्या आगारों में ॥

सत्य नित्य विद्या का पुस्तक पठन और पाठन कर ध्यान ।
सस्सर्गों में सांध्य भजन में करके साम ऋचा का गान ॥

वेद मार्ग पर चलने का श्रम कौन कर रहा जग के काज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !

(६)

पाप पकिला जनम घृणास्पद सती व्रती पन हूी नारी ।
जो जाती थी गिनी सस्पदा ओ ताड़न की अधिकारी ॥

नारी का नीलाम कि उसका था जीवन पर्व की कंब ।
समता के कन्या गुरुकुल में पढ़ने पाई वह भी वेद ॥

किसने उसको नर सम माना वे वंदुष्य पुष्ट सम आज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज ॥

(७)

धर्माचरण कर्म का धारण करना है सब भाति विकास ।
मन बच कर्म धर्म के पालन में ही करता मोक्ष निवास ॥

कर्म काण्ड के भाण्ड फोड़कर वे प्रकाण्ड मेघा का दान ।
सत्यासत्य सूप फटकारा किसने किया सत्य सघान ॥

किसने धर्म धड़ों को फोड़ा किसने जोड़ा आर्यसमाज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !!

(८)

सब धर्मों में निज ईश्वर की रूपाकृति रख मनहारी ।
वाहन आयुध साज सजाये क्या ही सुन्दर बलिहारी ॥

भक्तों की रक्षा को भगवन् गुरुईसिंह खड़ जाता था ।

गधे ऊँट भैंसे खूहे तक को नर शीश झुकाता था ॥

भेंट बली परसाव मिटाकर किसने भेटा रिरवत राज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज !





(६)



मन में बिसने गढ़ रक्खी है ईश्वर की मूरत नगरी ।
बिन सोचे बिन समझे जानें करते पूजा तजारी ॥

जीवन भर घनचक्र से उस मूरत में बिभू को खोजे ।
बत रक्खे उपवास करेंगे या फिर रक्खेंगे रोजे ॥

काफिर काबिल कतल भाव का किसने मेटा घुबित समाज ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज ॥

(१०)

द्वेष परस्पर भी अनेकता मिटा कहा सब एक बनो ।
किसने सहा प्रभु कथनामय अगलाता बस नेक बनो ॥

सराधार का सबविचार रख किसने अबला और अनाथ ।
परित्याग को आश्रम खोले विद्यालय दे किया सनाथ ॥

किसने अज्ञ उदधितारण को गुरुकुल के फिर रचे बहाब ?
प्रश्न कई पर सबका उत्तर एक मिलेगा आर्यसमाज ॥

(११)

अगर आर्य हो तो फिर अपना बायबेय औदार्य बिद्या ।
कृष्णन्तो का घोष करो फिर वेद बिहित सन्मार्ग सिद्या ॥

बेदोचचार सांध्यबदन कर सन्मति श्रुतिबन्ध होना है ।
यह जागृति की बेला इसमें अब न किसी को सोना है ॥

जो सोये हैं उन्हें बनाओ जगपूत को गतिशील करो ।
गतिशीलों को बागडोर हो अब इसमें ना ठीस करो ॥

—परसराम कुशामन खिठी (राबस्थान)



उत्सव

आर्यसमाज मैनपुरी

आर्यसमाज मैनपुरी का ६२ वाँ वार्षिकोत्सव
१३ से १५ नवम्बर तक मनाया जायगा । बड़े-
बड़े विद्वान् पधार रहे हैं ।

—सुरेशचन्द्र एड रोकेट य



आर्यसमाज देवबन्द

आर्यसमाज देवबन्द का वार्षिकोत्सव १६ से
१८ नवम्बर तक होगा । १२ नवम्बर से सामवेद
पारायण यज्ञ होगा ।



युग-पुरुष दयानन्द

(ले०-श्री प० शिवदयानु अध्यक्ष आद्य व. प्रस्थापन ज्वालानुर)

महर्षि रामजी दयानन्द ने विश्व में दयानन्द जाति व वर्ण भेदों से ऊपर उठकर सम्प्रदायवाद की पाटीयों का विभेदन कर मकीण राष्ट्रीयता की आड़ों को पाट कर विश्व धर्म का, मानववाद का एवं विश्वचन्द्रम का सार को मन्त्रा दिया।



श्री प० शिवदयानु जी

है। दयानन्द निश्चय युग पुरुष एवं युग दृष्टा था, और था, सर्व तो मूखी क्रान्ति का अग्रदूत।

दयानन्द ने सनातन वा युग धर्मों का स्पष्ट विश्लेषण किया है, जबकि नाना मत सम्प्रदायों के प्रवर्तकों और उनके अनुयायियों ने युगधर्मों को सनातनधर्म मानकर मतवादिता, मतान्धता और रुढ़िवादिता को सार में पनपाया है। और नाना

ग्रन्थों ऊँच नाच काल गौर आदि भेदा को जन्म दिया है।

दयानन्द-त्रयी अर्थात् श्रुवेदादि भाष्य भूमिका, सत्याय प्रकाश व अस्कार विधि की लिखने समय तथा वेदों का भाष्य करते समय दयानन्द ने अपने इन महान् लक्ष्य को सदा सामने रखा है।

दयानन्द के भाषणों और प्रवचनों में भी यह लक्ष्य स्पष्ट दृष्ट है। गीतम, कपिल, कणाद, व्यासादि के वाशनिह-भूदो पारस्कर, आश्विन, गोभिलादि के कल्प सूत्रों, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि क श्लोकों तथा कठ, मुण्डक, माण्डूक्य, छान्दोग्य बृहदारण्यकादि उपनिषदों के उद्धरणों को प्रस्तुत करते हुए अपने महान् लक्ष्य के अनुकूल ही अथवाद को केवल ग्रहण किया है, उससे भिन्न को नहीं। वेदमन्त्रों का विवेचन करते समय जहाँ अष्टाध्यायी, महाभाष्य, शतपथ निरुक्त बृहदेवता आदि को ऋषि ने आधार माना है, वहाँ यौगिक माधना द्वारा विकसित अतद्दृष्टि एवं दिव्य ऊँहा का भी उमने सहारा पकड़ा है।

उपर्युक्त आद्य प्रमाणों के विपिन में तथा उण्डन-मण्डन के श्रुतवाचकों से विज्ञ पाठकों एवं स्वाध्यायशाली मानवों को ऊपर उठने के लिये दयानन्द ने अपने ग्रन्थों की भूमिकाओं में और विशेष कर सत्याय-प्रकाश की भूमिका में तथा स्वमन्त्रणा मन्त्रव्य प्रकाश में अपना असीष्ट स्पष्ट कर दिया है। वेद मन्त्रों का निवेचन करते समय



श्रीमद्वाचस्पत्य के बृहद्देवता की मान्यताओं का ऋषि ने सर्वथा समर्थन नहीं किया है, यथा सन्ध्या में अथर्ववेद के मनसा परिक्रमा सूक्त का निर्वचन करते समय बृहद्देवता के २४ देवताओं की मान्यता न देकर केवल एक देवता परमात्मा का ही सारे सूक्त में प्रतिपादन किया है। यजु० १९ ३७ व १९ ४६ के देवता बृहद्देवता के अनुसार सरस्वती और धी क्रमशः संहिता में अंकित हैं, जबकि ऋषि वितर देवता मानकर भाष्य भूमिका में इन मन्त्रों की व्याख्या की है।

ऋषिवर के ग्रन्थों का अध्ययन भी इन्हीं उदात्त भावनाओं को हृदयगम करके करना चाहिए। स्वामी जी ने अपने लेखकों के उस प्रभाव व अज्ञता को जो आज दिन भी क्रिमो मात्रा में सशोधन के उपरान्त भी लक्षित है, अपनी भूमिका में सकेत किया है।

यह घोषणा करना कि ऋषि के ग्रन्थों में जो कुछ भी छपा है, वह अक्षर बक्षर सत्य है, मतान्धता और अन्धविश्वासों को पनपाना है, और उस द्यु-पुरुष को एक नूतन सम्प्रदाय का प्रबलक प्रतिपादित करना है। साथ ही विश्व-धर्म के प्रचारक भाय समाज को एक सकुचित सम्प्रदाय में परिवर्तित कर देना है। ऐसा कहने वाले अपने को ऋषि वा अनन्य भक्त सिद्ध करना चाहते हैं, किन्तु वास्तव में वह ऋषि की स्पष्ट घोषणा के विपरीत आचरण कर अन्ध भ्रष्टा को जन्म देने वाले मात्र हैं। आज आवश्यकता इस बात की है, ऋषि के ग्रन्थों की मान्यता एवं बुद्धिभाव के विषय प्रकाश में ब्याख्या को बाध। विज्ञान, इतिहास, भूगोल आदि से सम्बन्धित स्थलों पर गहन अध्ययन व मनन के उपरान्त आवश्यक टिप्पणियाँ ही बाँधें।

महर्षि के प्रति—

शूल गण के दाँते रहे,

फूल उन पर बिठाते रहे—

एक रेखा न तम की रहे

उद्योति जग को लुटाते रहे।

हर गली जगमगाती रहे

बाटिका लहलहाती रहे,

इसलिए धी गए तुम गरल—

हर कली मुँकराती रहे।

जिन्दगी भर बिया ही बिया,

अपनी छातिर न कुछ भी लिया,

मृत पड़ी जाति फिर जी उठ—

प्राण तक को ह्वन कर बिया।

—चन्द्रकाश

ऋषि के प्रति अन्य मतप्रवर्तकों की मान्ति अन्ध भ्रष्टा जागृत करने से ससार का लाभ होने वाला नहीं। ससार भी विभिन्न जातियों व वर्गों की उपेक्षा करके भाय समाज को हिन्दू सगत का एक सम्प्रदाय मात्र बना देना है, और ऋषि की भावनाओं के प्रति द्रोह करना है।

आर्यसमाज इस्माईलपुर

आर्य समाज इस्माईलपुर (बिबनौर) का वार्षिकोत्सव २ से ४ नवम्बर तक मनाया जायगा।

—पद्मी

दीप-निर्वाण

कैसा अफ्रामामा पर अनफ्र वज्रपात हुआ ?
देख देख उगमना विरक्ति-अनुरक्ति भरे-
अम्बर ने धाल मोतियों का विखराना छोड़-

-शांति ने छिपाया मख ।

रजनो ने फटिक शिला मो श्वेत साड़ी फाड़-
असित अमा सा पट अङ्ग पर चढ़ाया है ।
देखो नभ ओर !

कोई तारा टूटता है मानो अबला-विद्योगिनी का-
उर टूटता है तप्त ।

अज्ञर जीवन का हो रहा पतन है,
फुल्ल अम्भोज सा खिला न कहीं मन है ।
द्रुति द्रम अक से लताएँ धरणी गिरी,
मङ्गल नक्षत्र से अमङ्गल है झाँकता ।
करुणा का क्रोड छोड़पक्षी नीडसे उडा,
देखो हिमगिरि भी हृदय को घाम बँटा है ।

हिम का न खण्ड कोई शैल से सरकता,
मानों भव नश्वर का बंधन निरखता ।

वन का विहङ्ग वनचारी भी कुरङ्ग कहीं-
दशानो से तूण का न कोई घास लेता है ।

जीवन-प्रपात अचिराम जा रहा है कहीं-
मृदु लहरन्त-सिन्धु अवगाहने ।

लोचन बखेरते अजस्र मोतियों की माल-
जीवन प्रदायिनी प्रकृति बनी मोन है ।

देखो सुप्त शरणा पर अमन्द भावना लिए-
क्रान्ति क्रान्ति-शान्ति युक्त देव पडा कौन है ?

चिन्ता की न अकित ललाट कोई रेखा है,
प्रभु के बिचित्र विश्व को भी अबरखा है ।

-‘उरकट लालसा हृदय से प्रिय के लगू’



श्री कृष्णलाल जी कुसमाकर

भक्त-जन घेरे हैं मणक-मुख देखते ।
पावन पयोधि ने प्रशान्त देव दयानन्द-
पूर्ववत् आशा से । अमिट अभिलाषा से ।
मधुर उपदेशो से । अमर अवशेषो से ।

प्यारी आर्य-जाति की सुरक्षा का महान् मन्त्र-
आर्य पुरुषों के हृदयों में यही भरते-
-“विश्व नाशवान है, शरीर नाशवान है ।
स्वाभाविक घमं सुख दुख भोगना है सदा-
आत्मा अमर है, उसी का मृदु गान है ।

निष्काम भावना से कर्म करते चलो,
मिथ्या ममता को त्याग मोद भरते चलो ।
कुलित कामना के कीट हरते चलो,
बन्धन-छल द्वेष से सदैव डरते चलो ।

‘विश्व-बन्धुत्व’ का पुनीत उपदेश लिए-
मञ्जुल मनुष्यता की जाह्नवी बहावो फिर ।
लीलाधाम ‘राम कृष्ण’ बन्ध लेंगे बार-बार,
बबली निराशा को सदा को हट जाएगी ।”



-इन उपदेशों से हृदय का ताप हुरते ।

-शूल सभी शान्त थे, हृदय एक शूल था ।

'वेद का प्रचार हो, अविद्या आसुरी हटे,'

भाषनी से करते 'प्रणव' का पुनीत जाप-

भव-बन्धनों से मुक्त होते कट जाते पाप-

प्रभु के निलन की प्रतीक्षा थी महान् एक-

शय्या शायी साधु वयानन्द कहते हैं-

-'मक्त ! आज कृष्ण पक्ष है, अमा का तम-तोम है ।

जाने आज मख को छिपाता कंसे सोम है ?

-जब गृह-गृह में प्रसन्नता का पारावार,

उमड़ चला है ध्वंस कर, दुःख के कगार ।

लोक में आलोक भी विचित्र विखलाता है ।

-'दीपावली, कम्पित हो शोश घनती है खड़ी-

जल के जलाती है बियोगियों के चित्त को ?

दीप गिन्ना उलत स्व शीश को उठाके आज-

कुण्ठित हुई है मेदनी के पृष्ठ-भाग पर ?

लज्जित रमा है ?

तम तोम से अमा है ?

शून्य शक्ति से क्षमा है । (पृथिवी)

नम देखिए धमा है ।

यह 'कमला' प्रकाश में बताओ क्यों न आती है ?

क्योंकि-कूर दृष्टि से कलकित पुनीत भाल ।

-'राष्ट्र-निर्मायक को,

विश्व के विधायक को,

न्याय--नीति-नायक को,

विषय-गान-गायक को,

करके हरण ले गई है उस लोक को-

-जहाँ पर जाके फिर आना नहीं होता है ।

रि-तु प्रभु देख के प्रकृति का नवीन रङ्ग-

-अमर विचार उठे ।

-प्रेमी बलिहार उठे ।

नरवर स्वरूप का विविज-चित्र सामने ।

स्मित हास्य में, मधुर अघड़ों के पट-

खुल न सके, कह न सके ।

प्रोतम के गान थके ।

-करबट ली अंक में प्रसन्नता से बैठने ।

अणव-धानन्द के प्रणव में लखलीन थे ।

-'रक्षा प्रभु पूर्ण हो ।'

-प्रतिष्ठनि हृदय से उठी ।

रह गए प्रधाक अघनी के नर-नारी सब ।

मक्त गुरुवत्स भी चकित चित्त भौन थे

गूंगे गुड जंमा थे मधुर-मधु रक्षते-

धन्य-धन्य देव । ज्ञान दीपक जमा के चले ।

४ द ८ १

धृति, वसुधाम, अष्ट सिद्धियाँ दिग्ग पथ-

ले, चलो चढ़ाके रथ घोर विश्व में हुई ।

-'छोल बिए सु-वर कपाट स्वर्ग वास्तियों ने-

स्वागत को आ गए दधीचि, शिवि, हरिश्चन्द्र-

हृष की हिलोर में सुमन बरसाते हुए-

शून्य नम-लोक ने निराला गुरु पा लिया ।

'धन्य धन्य भग्य हैं, विजेता मिला नता है ।

स्वर्ग की सभा का अधिराज है, प्रणेता है ।

चारों ओर छा गई प्रतिष्ठनि यही पुनीत-

'-तेरा युग-युग में अमर वर गावें गीत-

शोक ! आर्य जाति तूने विष को पिलाया जिसे-

अमृत पिला के 'निर्घाण नोड' को चला ।

लज्जित भी लज्जा है अनूठा सस्कृत्य देख-

घातक को ! पातक को ! !

राष्ट्र के विधातक को-

-जिसने भ्रियमाण किया-

उसका परिव्राण किया ।

व्याध था, महविष था प्रतीषा, देव विद्य था ।

फलवान्-आम् सा उदार शौर्य-सन्त था ।

विश्व की महत्ता का विमोहक महन्त था ।

भारतीय-घाटका का विमल वसन्त था ।

-विश्वनाथ 'कुमुमाकर'

वैदिक पंच शील

(ले०-श्री पूर्णचन्द्र एडवोकेट पूर्ब प्रध। रशिक सभा)

वैदिक मर्यादा और सम्भ्रता के आधार पर हम निम्नलिखित पाँच बातों को धार्मिक जीवन के आधार भूत मिट्टान्त कह सकते हैं, या उनको वैदिक पंचशील कह सकते हैं। पाँच आवश्यक अंग निम्न प्रकार हैं—

१—प्रवृत्ता, प्रतिज्ञा, पुरुषार्थ पवित्रता, प्रचार सबसे आवश्यक बात विचारणीय यह है कि सारे विश्व का संचालन ईश्वर के अधीन है। मनुष्य जीवन को सफलता के लिये ईश्वर की प्रार्थना सबसे अधिक आवश्यक अंग है सब कार्य और सब कर्तव्य ईश्वर की प्रार्थना से प्रारम्भ होने चाहिये। प्रार्थना में ईश्वर के गुणों को ध्यान में लाना है। उन गुणों को अपने जीवन का आधार बनाना ही सच्ची प्रतिज्ञा है प्रतिज्ञा का सम्बन्ध मानसिक दृष्टि से बुद्धि के प्रयोग से सम्बन्धित है। प्रार्थना के आधार पर बुद्धि को पवित्र बनाना सच्ची प्रतिज्ञा है। प्रतिज्ञा का सम्बन्ध शुद्ध ज्ञान से है। शुद्ध ज्ञान के माध्यम कर्म को मर्यादा भी अनिवार्य है और इस दृष्टि से प्रतिज्ञा के साथ पुरुषार्थ का सम्बन्ध होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रतिज्ञा और पुरुषार्थ अर्थात् ज्ञान और कर्म जीवन को पूर्ण बनाते हैं और ये बात भी ध्यान में रखनी है कि ज्ञान और कर्म के पूरा रूप से सम्बन्ध के लिये पवित्रता अनिवार्य है। पवित्रता से अन्वय प्रारम्भ शुरू कर्म व चरित्र गठन से है। प्रार्थना, प्रतिज्ञा, पुरुषार्थ और पवित्रता चारों मिलकर व्यक्ति का पूरा रूप से धार्मिक बनाते हैं। और जब व्यक्ति पूरा रूप से धार्मिक



श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट

बन जाता है, तो उसका कर्तव्य ही जाता है कि वो दूसरों को सुधारने और लाभ पहुँचाने के लिये सद्गुणों का प्रचार करे। गम्भीरता से विचार करने पर ऊपर लिखी चारों बातें प्रचार की सफलता के लिये अति आवश्यक हैं, परन्तु चिन्ता इस बात की है कि प्रचार की ओर जितना ध्यान होना चाहिये, उतना नहीं होता। और इससे भी अधिक चिन्ता की बात यह है कि जो वंश नक या अवैतनिक रूप से आय समाज के प्रचार में सलग्न हैं, वो प्रचार के लिये योग्य बनने की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। प्रचारको में पब प्राप्त और प्रवृत्ता की अभिलाषा नहीं होना चाहिए। भूविषय के लक्षण विषय के उपलक्ष से हमें इस वैदिक पंचशील की ओर अवश्य ध्यान देना

महर्षि दयानन्द स्मरण



दयानन्द ऋषिबर के गुणगान, हम सब माने पाते हैं ।
पर अन्त न पाते खरणों में, उनके सीस नमाते हैं ॥

सत्यव्रत-धर वे वीर शिरोमणि, निष्पयता के अनुपम रूप ।
स्मरण कर उनके दिव्य गुणों को, जीवन धन्य बनाते हैं ॥

पर उपहार परायण निशिदिन, बेबेश्वर के सच्चे भक्त ।
ऋषि का जीवन यज्ञ रूप था, हम उसको अपनाते हैं ॥

छाए पत्थर ईंटें छाईं, पिये जहर के प्याले ।
पर महि सत्यमार्ग जन छोडा, उनको विल में धपाते हैं ॥

सब से प्रेम करो न किसी को, घुणा दृष्टि से देखो ।
यह निखलाते यतिबर के हम, शुद्ध मार्ग पर जाते हैं ॥

वेव सत्य विद्या के पुस्तक, उनका प्रचार करके ।
सत्यमार्ग के दर्शक ऋषिबर, को हम सीस झुकाते हैं ॥

वीपावली के दिन पूर्ण रूप से, था जिसने बलिदान किया ।
उस यतिबर पर हम अब अपने, अट्टा कुमुद चढ़ाते हैं ॥

तेरी इच्छा पूरी होवे, तू ने अच्छी लीला की ।
कह जिसने समाप्त की लीला, वे ही देव कहाते हैं ॥

आओ उनके अनुयायी हम, सारे सच्चे आर्य बनें ।
पावन जीवन हो हम सबका, यह व्रत लेकर जाते हैं ॥

—धर्मदेव (वि० मा०)



चाहिये । महर्षि दयानन्द सबसे अधिक व्यक्ति के निर्माण पर बल देते थे । आर्य समाज के इस नियमों में पहले पाँच नियम वेव और ईश्वर के आधार पर व्यक्तियों को पूर्ण रूप से धार्मिक बनाने के लिये हैं । नियम सदबा ६, ७, ८ और ९ समाज निर्माण के लिये हैं, जो व्यक्ति श्रेष्ठ, सज्जन, ईश्वर पुत्र होंगे, वही आर्य समाज जायेंगे, और उनका समुदाय आर्य समाज होगा, और जब

व्यक्ति और समाज दोनों का निर्माण पूर्ण रूप से हो जायेगा, तो आर्य समाज का काम पूरा हो सकेगा, और उसको पूर्ण रूप से सफल कहा जा सकेगा । आर्य समाज से सम्बन्धित उसकी और आर्कषित हो जाने की ओर ऊपर लिखे पत्राचार पर ध्यान देकर जीवन को पूर्ण रूप से परिवर्तन बनाना चाहिये ।

महा-अयाण

(ले०-अं. प० बीरसेन वेदश्रमी, वेद सदन, महा-अयाण, इन्वॉर १, म० प्र०)

उस दिवाली के अवसर पर देव दयानन्द के मुखमण्डल पर से एक प्रपूर्व ज्योति चारों ओर आलोकित हो रही थी। संकड़ों दीपों की ज्योति से जो तेज एव सौन्दर्य विकसित नहीं हो सकता था, वह आज उनकी दिव्य देह से छलक रहा था। कुछ ही क्षणों में अजमेर नगर में यह ममा-चार सबद व्याप्त हो गया। जनता महर्षि के दिव्य दशनों को प्राप्त करने के लिये उमड़ पड़ी।

महर्षि के कमरे में एक दिव्य गद्य वह रही थी—एक दिव्य तेज प्रसारित हो रहा था, और एक दिव्य ध्वनि—प्रोक्ष्म तरत्समन्वी धावति धारा सुतस्यन्धस। तरत्समन्वी धावति। इस साम मन्त्र की गति कर रही थी। महर्षि मौन थे। परन्तु उनके चित्त में इस मन्त्र को अव्यक्त ध्वनि वहाँ के वातावरण के समष्टि चित्त में गति कर रही थी। वहाँ का वातावरण शान्त था स्तब्ध था।

मन्त्र का दिव्य माध्व दशकों को प्रभावित कर रहा था। अनायास ही भक्तगणों के हृदय में-तरत्समन्वी धावति—के भाव प्रस्फुटित होने लगे। आज देव दयानन्द पक्ति में निमग्न हैं, वेह के दुःखों को सर्वथा भुलाकर ससार सागर से तरकर प्रभु की ओर ही अतिवेग से, अबाध गति से बढ़े चले जा रहे हैं। आज उनकी यह भुक्ति की ही ओर आरोहण है।

भक्त गण देव दयानन्द की दशा को देखकर चकित हो रहे थे, और उनसे कुछ बातलाप करने

के लिए प्रघोर भी हो रहे थे। कुछ पत्नी सेवा एव भेद अपण करने को उत्सुक थे। महर्षि के ओठों पर कुछ शुक्ता अनुभव कर किसी ने साहसकर पूछा—हे भगवन् ! जल लाऊँ ? 'हा ! प्यास ! प्यास ! ! प्यास ! ! !' भक्त दौड़-पानी लाए—गिलास और लोटों में जल प्रस्तुत किया। देव दयानन्द न उन सबकी ओर देखा। परन्तु किसी का जल ग्रहण नहीं किया।

भगवान् दयानन्द बोले—आज इस जल की प्यास नहीं है। आत्मा की प्यास तो इससे नहीं बुझेगी—और कहने लगे—अप्रा मध्ये तास्थवांस तृष्णा विवञ्जरिताम्। मृडा मुक्षत्र मृश्य। मैं प्रभु-भक्ति रूपी जलो के मध्य में खड़ा हूँ—प्रभु की स्तुति एव उपासना में निमग्न हूँ; परन्तु अभी तृप्ति नहीं हो रही है। मैं तो उसी भक्ति की प्यास से व्याकुल हूँ। आज की प्यास शांत नहीं हो रही है। वह तो बढ़ती ही जा रही है; आज तो उसी प्रभु के पूर्ण मिलन से ही तृप्ति होगी—अन्यथा नहीं।

चित्तानुर भक्त, वैद्य और डाक्टरों की झुलाने लगे। ऋषि ने कहा—मेरा वैद्य मेरे पास है। मेरा डाक्टर मुझ में विद्यमान है। आज तो उस अविनाशी ईश्वर के हाथ में मैंने अपनी नाडी दे दी है। वह तो काया-कल्प करने की सामर्थ्य रखता है। यह वेह तो मरकर है; विषजन्य रोगों में इसे असमर्थ बना दिया है। सामर्थ्यवान् प्रभु ने इस देह को अथ त्यागने की सामर्थ्य—उर्बाधकमिच-

बन्धनात्-प्रदान की है । आर्य समाज रूपी उर्वाकवशागुण- (दस नियमों वाला) मधुर फल आज सर्वत्र देश में अपनी विश्व मधुर गन्ध प्रसारित कर रहा है । आज उसकी मनोहारी गन्ध से सब उमकी ओर आकृष्ट हो रहे हैं । उसको मैं आप सबको प्रदान कर चका हूँ । यही मेरे ज्ञोत्रन का फल-परिणाम है । अब प्रभु से प्रार्थना कर रहा हूँ-मृत्योर्मुञ्जीय-मा अमृतात्मृत्यु माध्यम मे इन भव-बन्धनों से मुक्त होकर अमृतमय प्रभु को प्राप्त कर उसमें पृथक न होऊँ । हे प्रभु ! इणन् इषाण-मेरी कामना तेरी कामना हो जाये । ऐसा मोवकर देव दयानन्द पुन परमात्मा में समाहित नित्त हो गये, और मन्त्र द्वारा प्रभु से कहने लगे । ओ३३ घटने स्यामह त्व, त्व वा का स्या महम । स्पुष्टे सत्या इहाशिवा । अर्थात् हे प्रकाशस्वरूप, ज्योतिर्मय परमात्मन ! मेरी कामना आपकी कामना हो जावे या आपकी कामना मेरी हो जावे तो आपकी कृपा से आपके सब आशीर्वाद सफल, सत्य हो जावेंगे । मैंने अपने वेव सम्बन्धी कार्य एवं कामनाओं को पूर्ण करने के लिए आपकी अर्पित कर दी है । अब यह देह भी आपके समर्पित है । आपकी इच्छा पूरा हो-यह शब्द कहकर वेव दयानन्द शान्त हो गए-परम शान्त हो गए ।

बाणी प्राण मे, प्राण मन मे, मन चित्त मे, चित्त तेज में क्रमशः विलीन होते गए, और वेव दयानन्द का सूक्ष्म शरीर स्थूल देह को त्याग कर उत्तरोत्तर ज्योतियों को प्राप्त कर हम से सदा के लिए अदृश्य हो गया । सबके नेत्रों में अश्रुधाराएं प्रवाहित होने लगीं।

दीपावली पर्व

[गीतिका छन्द]

आगई सोभाग्यवाली यह दिवाली आ गई ।
प्रेम की प्याली निरा-नी शानवाली आ गई ॥१

पुण्य कारिक की अमावस्या सदा स्मरणोग है ।
आज जो काली निशा मे अगमपाहट ला गई ॥२

युक्त ही है सबथा, फला अघेरा दूर हो ।
बोपकी की ज्योति इससे सब दिलो को भागई ॥३

भय लक्ष्मी आ रही है आज ही सबके यहां ।
बोन बिन की भावना भी देख लो सरसा गई ॥४

बैठ रहे मिठान्न, खालें, खेल कूद हो रही ।
हास बा उल्लास शुभ अभिलाष भाशा छा गई ॥५

प्रेम से सयुक्त हो छापी रहे हैं सब जने ।
वंश्य जन की श्री विभूति थोठ शोभा पा गई ॥६

छूत या अश्लील बातें प्रार्थ तो करते नहीं ।
वेव का सिद्धान्त मानो रात यह समझा गई ॥७

बह दया आनन्द नामो आज योगी धन्य है ।
हृथ से विषयान कर जिसकी अमर छवि छागई ॥८

तुच्छ दीपों से भला काली कराली यह निशा ।
बया मिटेगी, इसलिये उबाजा घघकली आ गई ॥९

देश अथवा धर्म पर बलि हेतु जल जाआ खड ।
कह रही यह दीपमाला, बया समझ में आगई ॥१०

-विद्यानिधि शास्त्री, आचार्य गुरुकुल
भंडवाल, रोहतक

अद्वितीय महापुरुष महर्षि दयानन्द

[श्री भक्ताराम जी (अफ्रीका वाले) विली]

पाखण्डानां विनाशाय वेदानां रक्षणाय च ।
धर्मं सशोधनार्थाय दयानन्दस्य जीवनम् ॥

नि सन्नेह महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज का प्राबुर्भाव कवि के उद्युक्त शब्दों में वर्णित परिस्थितियों के कारण हुआ । महर्षि के आभिर्भाव से पूर्व देश, जाति और धर्म की ओ-नी चीन हीन और मलीन दशा थी उससे कोई व्याक्त भूतमिन्न नहीं । उस शोचनीय अवस्था को देख-कर ही विक्रमी सन्वत् १९२४ के कुम्भ के मेले के अवसर पर एक कुटी बनाकर उसके ऊपर 'एक पताका महर्षि ने लगा दी थी जिस पर लिखा था, 'पाखण्ड खण्डनी पताका ।' जिस पुनीत उद्देश्य 'सत्य धर्म प्रचार' से उस महामेले पर पधारे थे वह वैदिक धर्म की घोषणा द्वारा पूर्ण हुआ । वहाँ उनके अनेक व्याख्यान हुए । उन्होंने बहुत शास्त्रार्थ किये और प्रतिरक्षियों पर विजय प्राप्त की ।

कुम्भ पर महर्षि को भारत का एक लघुचित्र दिखाने को मिला । जिस से प्रभावित होकर उन्होंने केवल एक लगेट रखने का प्रसन्न लिया और ईश्वर चिन्तन से शक्ति बढ़ाने के हेतु घोर तपस्या करने लगे । यहाँ तक कि बोलना चालना भी बन्द कर बैठे और अपनी कुटी में समय बिताने लगे, परन्तु सन्ध के पुत्रारो और धर्म प्रचारक वेद दयानन्द को शोचनीय शोचनीय मन व्रन त्यागते ही बना । तत्पश्चात् उस महान् व्रणे ने जो सत्तार का काण्ड-कल्प कर दिया यह विश्वविदित है ।

परम हृदय परिवाहकाचार्य व स्वामी दया-

नन्द जी सरस्वती महाराज को उस चित्रलिखित पुरुष से उपमा भी जा सकती है जिसे किसी ओर से देखा जाये वह हमारी ओर ही देख रहा होगा । वह सशंतीमुखी थे । पाखण्ड विनाशक, वेदोद्धारक, धर्मसशोधक, वैदिक सभ्यता तथा वैदिक सस्कृति प्रचारक, आर्य भाषा प्रसारक, कुरीति निवारक, अनाथ रक्षक, विधवा सहायक, भोपालक, अछूतो-द्धारक, नारी सुवशा प्रवर्तक, समाज सुधारक, स्वराज्य के सर्वप्रथम आन्दोलन आदि कौन से रूप की झलक उनके जीवन में नहीं मिलती । योग शास्त्र के समाधिपाद सूक्त २१ 'तीव्र समे-याना मासन्न' के अनुसार पूर्व जन्म के उत्कट-सस्कारों के कारण ही वह अद्वितीय प्रतिभाशाली योगी ईश्वर विश्वास पर अद्भुत कार्य द्वारा सत्तार को आश्चर्य चकित कर गये । अकेले थे पर करोड़ों से अधिक काम कर गये ।

आखिरकार काम कर निकला,
न चाहे पास पंसा था ।
उत्ते 'दीनत' की परबाह क्या,
प्रभु जिसका सहेला था ।

अपने आचार्य के कित-कित उपकार का वर्णन करूँ तो भी कुछ एक या उल्लेख नीचे किया जाता है-

(१) लोग वेद के नाम तक से अपरिचित थे । मेरे स्वर्गीय पिता बताते थे कि उनके गुहजी कहा करते 'स्वा० दयानन्द अमृतसर में व्याख्याय देते समय वेद मन्त्रों का उच्चारण करते थे तो बड़े बड़े पण्डित बोल उठते कि साधु स्वयं मन्त्र बनाकर वेद का नाम ले रहा है । एक बार ब्रह्म-



समाज के एक नेता से महर्षि ने वेद मांगे तो उन्होंने उपनिषद् प्रस्तुत किये। ऋषि ने अमंती से वेद मगाकर यजुर्वेद का भाष्य सम्पूर्ण और ऋग्वेद का आधे से कुछ अधिक किया।

(२) भारतवासी अंग्रेजी साहित्य पर मोहित थे परन्तु ऋषि ने कहा वेदों की ओर लौटो और संस्कृत साहित्य का अध्यापन कर वेद तक पहुँचने का यत्न करो।

(३) ऋषि सन्तान वैदिक संस्कृत और वैदिक सभ्यता की तिलांजलि देकर (माई डियर वाइफ) लिखने में गोरख और 'मेरी प्यारी धर्म पत्नी' में मान हानि समझती थी। हम अंग्रेजी बोलते, लिखते पढ़ते, खाते पीने और पहिने थे। विदेशी भाषाओं के पढ़ने में हमें जो आनन्द आता था वह आय भाषा में नहीं। ऋषि ने हमें आर्य मर्यादाओं का पालन करना सिखाया। गुजराती होते हुए उन्होंने अपने सब ग्रन्थ आर्य (राष्ट्र) भाषा में लिखकर हमारे सम्मुख भारतीय भाषा को अपनाने का उदाहरण रखा।

(४) नारी की डोल, गवार और पशु की कोटि में माना जाता और पाव की जूती के सदृश समझा जाता था। यहाँ तक कि स्वा० शंकराचार्य कृत 'प्रश्नोत्तरी' में नारी को नरक का द्वार, मविरा के समान मोहने वाली, त्याज्य, बन्धन, अमृत के समान बिबित होने वाला विष और अविश्वनीय कहा गया है। एक स्थान पर 'त्याज्य सुत्र किम्?' के उत्तर में लिखा है, स्त्रियमेव। 'स्त्री शूद्रो नाधीयताम्' कपोल कल्पित भृति का प्रमाण देकर देवियों को विद्याधिकार से वञ्चित रखा जाता था। मातृशक्ति का ऐसा घोर अपमान महर्षि के लिए असह्य था अतः क्यावतार क्यानन्द का हृदय द्रवीभूत हुआ और उन्होंने नारी पूजा के पक्ष में मनुस्मृति का प्रसिद्ध श्लोक—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः,
यद्गैता तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राकला. क्रिया।

बना कर नारियों का खोया हुआ मान प्राप्त कराया। यजुर्वेद के २६वें अध्याय के दूसरे मन्त्र 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान् विन्दते पतिम्' और 'इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्' श्रुत सूत्रादि से स्त्रियों के वेदाधिकार की पुष्टि की।

(५) बाल विवाह के दुष्परिणाम स्वस्थ लाखों विधवाएँ विद्यमान थीं। महर्षि बाल विवाह का खण्डन कर और पुनर्विवाह की रीति चला कर विधवाओं के दुःख मिटा गये।

(६) निरक्षर भट्टाचार्य, उर्दू के काइन्ने विवाह संस्कार कराने वाले, 'हा' निम्नजन्म का पाठ करने वाले और भिन्ती बावर्ची घर का काम करने वाले अजन्मना ब्राह्मण होने का दम धर रहे थे। महर्षि ने उन्हें जन्माभिमान त्याग कर गुण कर्मों की योग्यता प्राप्त करने के लिए कहा।

अपने पथ पदार्शक के अगणित उपकारों के सम्मन्ध में उर्दू के कवि के निम्नलिखित शब्दों में कहना पर्याप्त है—

गिने जायें मूमकिन है सहरा के जवें,
समूद्र के कतरे फलक के सितारे।
स्वामी क्यानन्द मगर तेरे उपकार,

न गिनती में जाये कभी हम से तारे।

धन्य क्यानन्द ! आपके ऋण से उऋण होने का यही एक ढग है कि हम ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मृत्ति पर्यन्त ऋषियों के आपके द्वारा बताये गये वैदिक सिद्धान्तों का पालन करें अन्यथा आपके गुण गाते रहना और काम विपरीत करना हमें सदा ऋणी बनाये रखेगा।

आओ आर्य भाइयों ! ऋषि निर्वाण के माँगलिक प्रमग पर हम स्वयं आर्य बनकर सत्सार की आर्य बनाने का त्रत धारण करें और

आओ ! अन्तः दीप जलावें

[श्री वेदानन्द जी वेदवागीश, गुरुकुल सञ्चर, रोहतक]

‘दीपावली’ वर्ष की प्रतीक्षा के पश्चात् नई उमरे लेकर पुन सजधज के साथ बाह्य कान्ति छिटकाते हुए आ गई है। जहाँ भारत का प्रत्येक घर साफ सुथरा कूड़े कचरे से शून्य नयी आभा बिखा रहा है, नये नये परिधान में आबाल बृद्ध उज्ज्वल, मनोरम आकषण लिये हुए हैं, ज्वार-बाजरा, मक्का, धान का आगमन है, वहाँ इय प्रसन्नता में बीवो की आलोकित मालाओ से गाव-गाँव, नगर-नगर, घर घर का कोना कोना जग मगा उठा है। कहीं भी तो वरिद्र नारायण के वा अन्धकार के दर्शन नहीं हैं। सभी लोग आज धनी हैं, सभी प्रसन्न हैं, सभी आनन्द मना रहे हैं। आओ ! आज के दिन भीतर के दीप भी जला लें। आज से अच्छा दिन इस काम के लिए और कौन-सा होगा। जब कि सर्वत्र प्रसन्नता ही प्रसन्नता छाई हुई है। भगवान् कृष्ण कहते हैं—

प्रसादे सर्वदुःखाना हानिरस्योपवायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥

जब प्रसन्नता होती है, तो दुःख नहीं रहता। ऐसी वशा में प्रसन्नमन वाले की बुद्धि सब ओर से खिब कर केन्द्रित रहती है। तो आज सबकी बुद्धि में निर्मलता है। राजोगुण और तमोगुण से

जो कहते हैं यह करके बिखा दें जिससे मेरे कुन्दन जैसे स्वामी का नाम उज्ज्वल हो। व्रतपति परमात्मा हम आर्य समाजियों को इस व्रत के पालन करने की सामर्थ्य दें।

शून्य होकर सत्त्वगुण विराजमान है। वस आज के दिन इस सत्त्वगुणी बुद्धि में भीतरी दीप बहुत अच्छे जलेंगे। जहाँ हमारा सब कुछ आज बाहर से प्रकाशमान है, वहाँ भीतरी अन्त करण इन्द्रियों भी प्रकाशित हो उठेंगी।

निकाल दो—भीतर के राग द्वेषों को बाहर। फेर दो—मन की कालिमा को दूर। काट दो—मोह के बन्धन आज। छोड़ दो—जाति-पाँति को अब। बहा लो—प्रेम की गंगा भीतर। ले लो—वेद की वाणी अन्तर। बन जाओ सब के राजा आज।

सचमुच भीतर के दीप जलाने के लिए ही हम महर्षि को स्मृति पटल पर ला रहे हैं। हमारे स्वामी ने हमें भीतर से जगमगा देने के लिए ही इस सत्तार से जन्म धारण किया था और बाहर से जगमगाती दीवाली के दिन भीतर भी प्रकाशमान हो जाने के लिए ठीक इसी समय ही महा-प्रयाण किया था। अभाग हैं वे जो इस बात को नहीं समझ पाये और बाहर दीपक जलाकर भीतर अधेरा किये रहे। आधा अधेरा, आधा उजाला। बात न बनेगी पूरी लाला। बाहर का उजाला कल न रहेगा, भीतर का उजाला सदा रहेगा। इसलिए भीतर दीप जलाओ और पूरी दिवाली मनाओ।

बाहर के दिये जलाना हम नहीं सिखाते, उसे सब जानते हैं। वे सब के घरों में भगवान् की दया से जलते रहें। भीतर के दिये जलाना

सिखाते हैं, जो सीख लेंगे, सदा आनन्द में रहेंगे। सुनो-हृदय को स्वच्छ कर दो। राग द्वेष, ईर्ष्या क्रोध, लोभ लालच को छोड़ दो। प्रेम का प्रसार कर दो। घ्रातृ-भाव बढ़ाओ। परस्पर के लड़ाई-झगड़े शान्त करो। स्वयं जीओ और दूसरो को जीने दो। आपत्ति में दूसरे की सहायता करो। ईश्वर को कभी न बिसराओ। प्रतिदिन प्रातः सायं उससे अपने कारो-बार को सफलता के लिए प्रार्थना करो। उसके गुणगान करो। दोनों समय सन्ध्या-हवन अवश्य करो, धनधोषन नहीं होगा। सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय नियमित क्रमशः करो, जिसमें सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, आर्याभिविनय, आर्योद्देश्य रत्नमाला, व्यवहार-मानु, सत्कार-विधि, ऋग्वेद, यजुर्वेद आदि प्रमुख हैं। हो सके तो उपनिषद् और दर्शन ग्रन्थों को भी देख जाओ और इनमें बताई एक एक बात का पालन करो। दूसरों को भी ऐसा ही करने के लिये कहो। आपके भीतरी आलोक से दूसरों

का अधेरा दूर हो जायेगा। व्यक्ति का निर्माण होकर सत्ता का उत्थान होगा। आपकी यश-पताका विविधगन्त में फहरायेगी। आओ। भीतर के दीप जलावें। भीतर के दीप जलावें !! भीतर के !!!

आर्यसमाज लश्कर का उत्सव

आर्यसमाज लश्कर का ७२ वा वार्षिकोत्सव २६ से २६ अक्टूबर तक मनाया जा रहा है।
-मन्त्री

आर्यसमाज देहरादून का उत्सव

आर्यसमाज देहरादून का ६४ वा वार्षिक उत्सव २६ से २८ अक्टूबर तक समारोह से मनाया जा रहा है।
-मन्त्री

सफेद दाग ! सफेद दाग !!

सफेद दाग

सोमराजी बवा ने श्वेत दाग के रोगियों को पूर्ण लाभ पहुंचा कर सत्कार में ख्याति प्राप्त की है। एक बंकेट मुफ्त मगाकर पूर्ण लाभ प्राप्त करें। सिर्फ नौ दिन में लाभ होगा।

प्रेम ट्रेडिंग क० (एस. एन. ए.)
पो० कतरी सराय (गया)

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

सफेद दाग

भारत प्रसिद्ध आयुर्वेदिक बवा 'शिवदत्त मोहन' से तीन दिनों में दागों का रंग बदलने लगता है। अवश्य परीक्षा करें, रोग विवरण लिखकर एक फायल बवा मुफ्त प्राप्त करें। १५५ ए०

इन्दिरा आयुर्वेद भवन (आ)
पो० कतरी सराय (गया)

दीपावली और दयानन्द

[श्री प० यज्ञप्रिय की समस्तापुर]

महर्षि दयानन्द सरस्वती जिनकी पुण्य तिथि दीपावली के दिन देश और विदेश में मनाई जायगी, आज हमारे ही लिए नहीं, बल्कि सारे विश्व के लिए अनुकरणीय बन गया है। सारा आस्तिक जगत् महर्षि के इस निर्वाण विषय पर उनके द्वारा निर्देशित वेद मार्ग पर कर्त्तव्याकृद् होकर विश्व में मानवता एव सांख्यीय वैदिक सस्कृति सभ्यता एव शिक्षा के प्रसार व प्रचार की प्रतिज्ञा धारण कर अपनी अपनी भद्रा के सुमन भेंट करेंगे। आइए, हम और आप भी अपनी-अपनी भद्रा के कुछ फून महर्षि के चरणों में अर्पित करें।

महर्षि का निर्वाण सम्पूर्ण विश्व के अन-जन के लिए आज जागृति का संदेश लेकर आया है। ३० अक्तूबर सन् १८८३ ई० कार्तिक बवी अमावस १८५० विक्रमी मंगलवार के दिन, जब सारा देश दीपावली के दीप शिखा से आलोकित हो रहा था, तब ० दयानन्द सरस्वती ने भी एक अपूर्व अमर ज्योति बलाकर विश्व के लिए दीपावली का एक पावन संदेश हमारे लिए छोड़ गये। उनकी प्रखलित की हुई दीप शिखा (आयं समाज) अभी तक अपना प्रकाश बराबर फला रही है।

'आनन्द-मुद्यासार-व्याकरण' चला गया, भारत को दयानन्द बुधारा जिला गया। 'शकर' बिया बुधाय दीवाली की वेह का, केशव के विशाल-बदन में बिला गया। धन्य है महर्षि दयानन्द सरस्वती जिनकी

मृत्यु का अन्तिम क्षण भी ध्ययं नहीं गया, बल्कि परोपकार में ही लगा। अपने समय के महान् वैज्ञानिक गुरुवत्त विद्यार्थी जिनके लेख नास्तिकवाद पर बुनियां के तमाम अक्षबारों में तहलका मचा रहे थे, महर्षि दयानन्द सरस्वती की मृत्यु के अन्तिम दृश्य को देखकर कट्टर आस्तिक बन गये, और ऋषि के भक्त बनकर सम्पूर्ण जीवन उन्होंने वेद प्रचार के लिए अर्पित कर दिया।

मृत्यु के पूर्व महर्षि ने प्रथम सस्कृत और हिन्दी में परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना की, फिर गायत्री मन्त्र का जाप करते-करते समाधिस्थ हो गये। षोड़ी बेर के लिए आंखें खोलीं, और बोले—हे सर्वशक्तिमान परमेश्वर! तेरी यही इच्छा है। तेरी वही इच्छा है। अहा! तने अच्छी लीला की! परमात्म देव। तेरी इच्छा पूर्ण हो। और 'ओ३म्' का उच्चारण करते हुए श्वास को बाहर निकालकर जीवन लीला समाप्त कर दी। वैदिक परम्परा में ऐसे महान् व्यक्तियों की मृत्यु पर शोक ममाने की परिपाटी नहीं है। महर्षि तो परम पद-मोक्ष को प्राप्त हुए, और हमारे लिए एक आदर्श छोड़ गये। महर्षि की इस पुण्य तिथि पर हमें उनका गुणगान करना चाहिए, और उनके बताये पथ पर चलकर अपना जीवन धन्य करण चाहिए।

स्वा० दयानन्द का चक्रेत्व अपने आप में जितना महान् था, संभवतः बुनिया आज तक उसको भूल गई होती यदि स्वामी जी अपने अमर



ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश', 'स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश', श्रुत्वेवादि-भाष्य भूमिका न लिख गये होते। स्वामी जी का कर्तृत्व वहाँ हमारे लिए प्रकाश स्तम्भ हैं, वहाँ उनका पावन व्यक्तित्व भी हमारे जीवन विकास के लिए भावशः स्वरूप हैं। न जाने यह कौसी परम्परा चल पड़ी है कि अब कोई महान् व्यक्ति इस सत्सार क्षेत्र में आकर कोई महान् कार्य कर जाता है, तो बाव में उनके शिष्य ही उनके बताये मार्ग को भूलकर नाना प्रकार के अपने अपने मन्तव्यों को मिलाकर उस महान् व्यक्ति के मूल उपदेश को समाप्त कर देते हैं, और यही कारण है कि कालान्तर में लोगों की आस्था उस व्यक्ति से परे हो जाती है। परन्तु स्वा० दयानन्द का सिद्धान्त अजर और अमर रहेगा, उसमें किसी प्रकार का मिलावट समझ नहीं। इसका एकमात्र कारण स्वामी जी का स्वलिखित सत्यार्थ प्रकाश आदि है। यदि आज स्वामी जी यही लिख गये होते कि वह क्या मानते हैं, और क्या नहीं मानते हैं, तो उनके भी शिष्य आज उनके सिद्धान्तों की भानुमति का पिटारा बनाकर छोड़ बिये होते।

अद्भूत दूरदर्शितापूर्ण नेत्र से स्वा० दयानन्द सरस्वती ने इन सारी स्थितियों का अवलोकन किया था।

सैकड़ों वर्ष की वासता की वेड़ी में बँधड़ा हुआ, भारत अपनी प्राचीन वैदिक सस्कृति को भूल चुका था। नाना प्रकार के कुपन्थ, अंध विश्वास, व अंध परम्पराओं में अपने को जकड़ कर यह आर्य जाति मृत-प्राय हो चुकी थी। सस्कृत जो सत्सार की समस्त भाषाओं की जननी है, एक मृत भाषा मानी जाने लगी। सस्कृत प्यारण को तो ऐसा दुःकृत बना दिया गया था कि

यदि कोई इच्छुक व्यक्ति संस्कृत का ज्ञान तो उसे लघु कोषों, सिद्धान्त कोषों, मनोरमा की व्याख्या, शब्देन्द्र शेखर आदि के पढ़ने में ही अपनी सारी श्रुति लगा देनी पड़ती थी, उसे और कुछ पढ़ने का अवसर ही नहीं मिलता था। ऐसे समय में स्वा० दयानन्द भटकते भटकते बड़ा स्वामी प्रज्ञाचक्षु गुप्त विरजानन्द की कुटिया के द्वार पर मथुरा पहुँचे। गुप्त जी का आदेश हुआ कि जो कुछ तुमने अनाव प्रन्थों का अध्ययन किया है, उन्हें यमुना में प्रवाहित कर दो और श्रुतिकृत ग्रन्थ पढ़ो। दयानन्द जी ने वंसा हाँ किया, और गुप्त चरणों में बँठकर अठ्ठाध्यायी महाभाष्य एव अन्य आर्य ग्रन्थों का अध्ययन किया, और फिर गुप्त आज्ञा से मुद्रित वैदिक ज्ञान के प्रसार व प्रचार के लिए निकल पड़े। प्रारम्भ में स्वामी जी सर्वत्र सस्कृत में ही भाषण आदि करते थे, परन्तु जनता में कहीं कहीं उनका हिन्दी अनुवाद गड़बड़ किया जाने लगा, तो उन्होंने हिन्दी भाषा सीखी और फिर हिन्दी में भाषण करना शुरू कर दिया। सस्कृत की महत्ता पर उनके भाषण सुनकर तथा वेद की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डालते हुए देखकर पश्चिमी विद्वान् चकाचौंध में पड़ गये, और जो लोग वेद की कमी गहरियों के गीत कहते थे, अब वेदों की ओर लौटो कहने लगे। जादू वह जो सिर पर बोले। श्रुति क्रान्तिवर्षीं ये। उन्होंने अपने ज्ञान चक्षु से देखा कि सम्पूर्ण वेद की अखरता के लिए यह आवश्यक है कि एक राष्ट्र भाषा हो, और यही कारण है कि उन्होंने तब से अबसे सब लेखन तथा व्याख्यान हिन्दी में करना प्रारम्भ कर दिये। अपना अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी में लिखा। श्रुति दयानन्द एक सजाज सुधारक के साथ साथ महान् क्रान्तिकारी साधु भी थे। उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा



कि—'जब अभागेयय क्षे आयों के आलस्य प्रमाव परस्पर के बिरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही कहनी है, किन्तु आर्यावत में भी आर्यों का अखण्ड स्वतन्त्र स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है, तो भी विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है। बुद्धि जव आता है, तब देशवासियों को अनेक प्रकार के दुख भोगने पड़ने हैं। कोई कितना भी करे, परन्तु जो स्व-देशी राज्य होता है, वह सर्वप्रिय उत्तम होता है। मत-मनान्तरो के आग्रह रहित अपने पराये के पक्षपात से शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।' इस प्रकार अनेक घटनाएँ मिलती हैं, जिनसे पता चलता है कि महर्षि ने ही स्वाधीनता सधाम का सर्वप्रथम मन्त्र स्वातन्त्र सेनानियों से फूका था। श्रीमती एनी-बेसेन्ट ने कहा था कि भारतवासियों को मानसिक दासता से मुक्त कराने वाला प्रथम व्यक्ति महर्षि स्वा० बयानन्द जी ही थे। भारतीय लोक सभा के भूतपुत्र अध्यक्ष और बिहार के राज्यपाल पद को सुशोभित करने वाले माननीय श्री मनन्त्र शयनम् आयोगार जी ने भी कहा था कि यदि गांधी जी देश के राष्ट्र पिता हैं, तो जगत् गुरु राष्ट्रोद्धारक महर्षि बयानन्द सरस्वती जी महाराज राष्ट्र के पितामह हैं।

महर्षि बयानन्द की आन्तरिक अभिजाया थी कि ऋषिर्षों को पवित्र भूमि भारत शीघ्र ही स्वतन्त्र हो, और विदेशियों के जगल से पूण मुक्त हो और यह अपनी पुरानी संस्कृति के अनुसार पुनः एक महान् शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में विकसित हो। इसके लिए उन्होंने सर्वे धार्मिक विषयता तथा आतीय भेद भय को बड़ से उखाड़

फेंकने का सतत् प्रयत्न किया तथा राष्ट्रीय एकता का पुन प्रस्थापित करने के लिए उन्होंने राष्ट्र और समाज समाज सम्बन्धी बुराईयों, पाखण्डों को उखाड़ फेंके का प्रथम निश्चय किया। इतिहास साक्षी है कि इसमें अर्हें सफलता मिली।

क्रान्तिकारी योगी बयानन्द की इन्हीं क्रान्तिकारी भावनाओं के कारण ही भारत का तत्कालीन वायसराय नाथंभूक ने देखा कि भारत की प्रमुक्त जनता में यह लगेट बन्द सन्यासी जान फूंक रहा है, तो उसने लदन इन्डिया आफिस को भारत का समाचार भेजते हुए लिखा था कि 'इस विद्रोही फकीर पर सतकतापूण वृष्ट सरकार को रखनी चाहिए।'

क्रान्तिकारियों के पिता कहे जाने वाले श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा स्वा० बयानन्द के ही शिष्य बन कर और उनसे प्रेरणा लेकर-इगलेण्ड गये थे।

उनके बाव तो क्रान्तिकारी स्वातन्त्र्य सेनानियों की बाढ़-सी आ गई। और आश्चर्य यह जानकर होता है कि सबके सब स्वा० बयानन्द के शिष्य निकले। लाला लाजपतराय, स्वा० भट्टानन्द, महात्मा हसराम, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, भवम सिंह घोगरा, स्वातन्त्र्य वीर साबरकर, भाई परमानन्द, अर्जुन सिंह, स्वाधी स्वतन्त्रतानन्द जी आदि-आदि। यह तो स्वामी बयानन्द जी महाराज का एक रूप है, परन्तु इन सबसे ऊपर उसका एक और रूप स्वामी जी का था जो सारे सत्तार के कल्याण के लिए था, सर्व-भौम था। सन्यासी सत्तार मात्र के लिए होता है और यह हम स्वा० बयानन्द के जीवन में प्रत्येक स्थान पर देखते हैं। उन्होंने वैदिक धर्म प्रचारक संस्था आर्य समाज की जब स्थापना की तो उसके नियमों में एक नियम यह भी लिखा कि 'सत्तार का



उपकार करना' इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। शिक्षा को क्षेत्र में भी स्वामी जी ने भारत के साथ-साथ विश्व को एक नई विश्वास दी। प्राचीन पद्धति गुप्तकुल प्रणाली पर उन्होंने विशेष बल दिया। आज जो शिक्षण संस्थाओं में चरित्र-हीनता एवं प्रनुसाशन भग की घटनाएँ आये दिन देखने को मिलती है, यह सब गुरुकुल पद्धति की शिक्षा से समूल नष्ट किया जा सकता है। स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में भी स्वामी के मन्तव्यानुसार देश में पुखी पाठशालाओं का जाल-सा बिछ गया।

कई कुरीतियों से स्वामी जी ने जमकर संघर्ष लिया। जैसे-बाल विवाह, बे मेल विवाह, मूर्तिपूजा, अनेक ढोंग पाखण्ड आदि-आदि। विधवा-विधवा की व्यवस्था बेकर इस देश का बहुत बड़ा उपकार उन्होंने किया। स्वामी वयान्द जी के जीवन की कुछ झाकियाँ-

(१) अनूप शहर में ऋषि को पान में विष डे दिया गया, परन्तु महर्षि ने योग क्रिया द्वारा विष को प्रभाव मुन्य कर दिया। इस पर उनके भक्त तहसीलदार ने अपराधी को पकड़ कर ऋषि के सामने लाये और वण्ड देने की इच्छा प्रकट की। महर्षि का उत्तर था-"मैं दुनिया को कंद कराने नहीं आया, वरन् कंद से छुड़ाने आया हूँ।"

(२) एक दिन ऋषि ने एक नाई भक्त के यहाँ प्रम पूर्वक भोजन लिया। इस पर कट्टर पथी एक ब्राह्मण ने कहा कि-महाराज आपने नाई की रोटी खा ली है? स्वामी जी का उत्तर था-"नाई की नहीं गेहूँ की रोटी खाई है।"

(३) एक दिन एक भक्त जो दुनिया था ऋषि से पूछा-मुझ जैसे अज्ञानी के कल्याण का भी कोई-उपाय है, महर्षि ने आदेश दिया-
-ओ३म् का जापकरो, व्यवहार शुद्ध रखो, इसी से तुम्हारा कल्याण होगा।'

(४) बरेली में व्याख्यान देते हुए महर्षि ने कहा-"लोग कहते हैं, सत्य को प्रकट न करो, कलक्टर का होगा, कमिश्नर अपसन्न होगा, जरे, चक्रवर्ती राजा हो क्यों न हों हम तो सत्य ही कहेंगे।"

(५) एक बार जोधपुर नरेश को बेरया के सग बंखकर स्वामी जी ने फटकारा-"तित्तु कभी कुतियों के पीछे नहीं बौड़ा करते।" फिर कई दिन तक राजद्रम पर व्याख्यान होते रहे। इस पर नन्हों जान बेरया ने ऋषि को पडयन्त्र करके काँच मिला विष दूध में बिलबा दिया जिससे ऋषि का असमय में ही वेहावसान हो गया।

स्वामी वयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्त का जो रूप ससार के सामने रखा उस पर ससार आज भी नतमस्तक है। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि उनके धार्मिक सिद्धान्त वे ही हैं जिनको ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त सारे ऋषि मुनि मानते चले आये हैं। 'वेद' के अनर्गल भाष्य पर जहाँ हम कलकित हुए, स्वा० वयानन्द के वेद भाष्य ने हमें पुनः प्रतिष्ठा के पथ पर प्रस्थापित किया। सायण, महिषर, रावण, उष्वट जैसे आचार्यों के वेद भाष्य को देखकर वेद पर आस्था क्या होगी वहाँ तो लज्जा को भी फरशा लगे, ऐसा अनर्गल प्रसाव किया गया है। नमूना के लिए ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पढ़ें।

वेदोद्धारक स्वा० वयानन्द के ऋषि के मन्त्र-मुच हम सभी लवे पडे हैं। आइए, ऋषि ऋण से मुक्त होने के लिये वेद प्रचार में हम भी प्रथमी विद्या बुद्धि और शक्ति का अधिकार लगायें, तभी हमारा आपका सबका कल्याण हो सकता है। प० आर्षमुनि के शब्दों में-

'दिन रात जगाये रहे हमको,

दुःख नाश करना पिता जो हमारे।

शाक यही हमको अब है,

जब बाँध खुली तब आप सिधारे ॥'

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपुं शुभम्,
प्रवन्ति संपदं देवीमग्निं जातस्य भारत ।

इन गुणों को मन में बार बार स्थान देने का यत्न करो। सारांश यह कि 'भारतीय संस्कृति' पलायनवाद को नहीं सिखाती, बल्कि वैदिक ज्ञान के प्रसार के लिए राज्यों का खण्डन भी बतलाती है, केवल अहिंसा या शान्ति का ही सिद्धि प्राप्त करना मुनियों का काम है, संस्कृति के पुकारियों का नहीं। महाकवि भारवि

ने ठीक ही कहा है कि—'शमेन सिद्धिं मुनयो-
नभूयुः।' इस संस्कृति के प्रचार के लिए वाग्-
युद्ध करना पड़े या वैह युद्ध करना पड़े तो उससे
पीछे हटकर कर्म नहीं बनना चाहिए। अतएव
'आयंत्व' की स्थापना के लिए या संस्कृति के
प्रचार के लिए जो लोग हान बया दमन शून्य
राजस प्रवृत्ति के लिए वेद का घोष है कि—'अप-
चनन्तोऽराजन्' राज्यों को विध्वंस करते ही
'कृष्वन्तो विश्वमार्यम्' यह लक्ष्य पूरा किया जा
सकता है, अन्यथा नहीं। ----

उत्कृष्ट आर्य हवन सामग्री

आयुर्वेदिक बबोन ताजा बड़ों वृष्टियों से निर्मित यज्ञ से समस्त घर को सुवासित करने वाली
मधुबं सुगन्धि युक्त, कीटनाशक और स्वास्थ्य बर्द्धक उत्कृष्ट रोग नाशक पौष्टिक हवन सामग्री से ही
प्रति दिन हवन करें।

- न० (१) स्पेशल पेढायुक्त हवन सामग्री का भाव ५) किलो ।
न० (२) उत्कृष्ट सुगन्धित स्वास्थ्य बर्द्धक, रोग नाशक, सामग्री का भाव ३) किलो ।
न० (३) आर्य हवन सामग्री का भाव २) ५० पैसे किलो है ।

आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० बीरसेन जी वेदधर्मी लिखते हैं ।

मुझे यज्ञ युद्ध एव सस्वर वेदपाठ शिखर तथा वैदिक प्रवचनावि कार्यों के लिए कुछ मास
बेहूनी में निवास करना पड़ा। इस मध्य मे प्रतिदिन विविध स्थानों पर होने वाले यज्ञों में भी भाग
लेने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इस कारण अनेक प्रकार की हवन सामग्री का अनुभव भी प्राप्त हुआ।
इसके आधार पर मुझे यह लिखते हुये प्रसन्नता है कि यज्ञों में प्रयुक्त की गई उन हवन सामग्रियों में
से वेद पबिक श्री धर्मवीर जी सण्ड्याधारी द्वारा निर्मित हवन सामग्री को ही सर्वश्रेष्ठ सुगन्धित मुद्रता
एव उत्तमता से तबीन इन्धो से विनिर्मित होने से उपयोगी एव प्राण्य अनुभव किया। यज्ञ प्रेमी समस्त
जनता उस हवन सामग्री का उपयोग निःशुकोच कर जयत् को साथ पढ़ुंवाते हुये यज्ञ एव पुण्य की
भागी बने।

आज ही आर्डर भेजें।

पूजा-वेद पबिक धर्मवीर आर्य सण्ड्याधारी

अध्यक्ष-आर्य हवन सामग्री निर्माण शाला

अज्ञाता ठाकुरदास, सराय इन्धोवा, नई दिल्ली-५

आर्यसमाज का अन्तर्राष्ट्रीय संगठन

[श्री मोहनलाल जी मोहित प्रधान ^{18 फरवरी 1930} आर्य समाज मोरिशस, ५ पोर्टसुई]

वि० सवत् २०३० के दोप मोहत्सव पर आर्य समाज का अन्तर्राष्ट्रीय संगठन को शक्तिशाली बनाने की योजना को सक्रिय रूप देने का प्रत्येक आर्य व्रत ले। श्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि समाज नई दिल्ली और उसके सम्बन्धित प्रतिनिधि समाजों, और आर्य परोपकारिणी समाज अजमेर इन समाजों के तपोधन मनीषी आर्य सैग्यासी और नेताओं से विनम्र निवेदन है कि बृहत्तर भारत का निर्माण की योजना में ध्यान रहे। अभी से ऐसा सबल प्रयत्न किया जाय, जिससे आगामी २०३१ का वि० दोपोत्सव तक आर्य समाजों का अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की नींव सुदृढ़ बन जाय।

ध्यान रहे। पिछले एक शती में आर्य समाज का क्रांतिकारी आंदोलन ने मत पथों के गड़ को निर्मूल बना दिया है। मूढ़ मान्यताओं का नशा नहीं रहो। शिक्षा का विस्तार और विज्ञान युग ने मानवोप मस्तिष्क को विवेक पूर्वक हिताहित सोचने के लिए विवश कर दिया है। लौकिक सुख सृष्टि और आध्यात्मिक शान्ति की दृष्टि में जन मत बढ़ी छान बीम के लोचपय उठाना सोचने लगे हैं। अन्धविश्वासो मत पथ को कटका कोर्ण मार्ग की अपेक्षा वैदिक धर्म का पथ स्वभावतः लोक प्रिय है, केवल हार्थिक प्रोत्साहन एवं सस्नेह निर्देश की आवश्यकता है। अत आर्य समाज की गिरोमिणी संस्था के प्रबन्ध से धुने गिने आर्य विद्वानों को वेद प्रचार और आर्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठन को सुदृढ़ बनाने के लिए

विदेशों में मेजने का पूरा प्रयत्न किया जाय। अन्तर्राष्ट्रीय भारत तथा बाहर के प्रदेशों में बसे भारतीयों के सहयोग से धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रूप में बृहत्तर भारत का निर्माण हो सकता है। मोरिशस, फिजी, सुरिनाम, गायना, त्रिनिदाद, केनिया, युगाण्डा और दक्षिण अफ्रिका, इरवन् आदि प्रदेशों में जो आर्य प्रतिनिधि समाज हैं। उन सबका सार्वदेशिक संगठन सुदृढ़ किया जाय।

१-उपदेशक महा विद्यालय-इस महा विद्यालय में कम से कम विश्व की १० प्रमुख भाषाओं में वैदिक सिद्धान्त का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले महोपदेशकों में जो विशेष सुवक्ष और बहुभाषी सुवक्ष है। उन्हें विदेशों में प्रचारक नियुक्त किया जाय।

२-अनुसन्धान विभाग-इस विभाग में समस्त प्राचीन और अर्वाचीन वैदिक तथा लौकिक साहित्य का विपुल संग्रह उपलब्ध हो, और यहाँ से विद्वान् विशेषतः वेदों पर अनुसन्धान करके संसार हिताय ज्ञान विज्ञान को विश्व की प्रमुख भाषाओं में प्रकाशित करें।

३-प्रकाशन विभाग-एक विशाल प्रकाशन विभाग हो, जहाँ से वैदिक और लौकिक साहित्य को संसार की प्रमुख भाषाओं में सुदृढ़ प्रकाशन प्रचुर मात्रा में हो, और वैदिक धर्म प्रचार सम्बन्धी साहित्य को संगत मूल्य पर ही बेचने का प्रयास किया जाय। उपरोक्त तीनों विभाग के कार्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के वृद्धि कोण से सुसम्पन्न

भारत एक राष्ट्र है : इस मन्त्र का मन्त्र
दाता महर्षि दयानन्द सरस्वती
(शेष पृष्ठ १६ का शेष)

'रामकृष्ण परमहंस जहाँ गया, वहाँ भारत नहीं गया। अंग्रेजी को प्रभुता को उसने बूढ़ किया, और ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार किया। पोर्टे लुइस (मारीशस) में हुए आर्य सम्मेलन में ही यह कहने का साहस किया कि सयुक्त राष्ट्र (यू० एम० ए०) की पाबली भाषा हिन्दी मानी जाये, स्वीकार की जाये। यह है, ऋषि दयानन्द की महिमा और गौरव। भारत की किसी सस्था ने किसी राजनीतिक पार्टी ने जिस हिन्दी को विश्व भाषाओं में स्थान देने की मांग करने की कल्पना तक नहीं की, वह विचार ऋषि दयानन्द के स्थापित आर्य समाज में साहस के साथ प्रकट किया। भारत की शासक पार्टों में भारत का विभाजन ही स्वीकार नहीं किया, बल्लि नागरी लिपि से नागरी अक्षरों का ही बहिष्कार कर दिया, और इस गलती का सशोधन करने तक की आवश्यकता नहीं समझी, यही नहीं वर्तमान प्रधान मन्त्री ने अंग्रेजी को प्रभुता को 'याबच्छन्द् दिवा करो' कायम रहने की गारण्टी दे दी है। पट्टा लिख दिया है। यही कारण है, रामेश्वरम पुल बनाने की परियोजना केन्द्रीय है, परन्तु इसकी नींव में जो शिला रखी गई है, जिसका शिला न्याय विभक्त भारत के प्रधानमन्त्री ने किया है, उस पर उत्कीर्ण सन्धर्ष तमिल और अंग्रेजी में है, सस्कृत और हिन्दी में नहीं। इससे पहले नागार्जुन सागर बाँध की नींव के पत्थर में हिन्दी को स्थान दिया गया है। यदि भारत और उसके स्थापित आर्य समाज उसके निर्बंध पथ वैदिक मार्ग पर वृद्धता से चकता तो वह प्रचार के लिए

बिबेशी अभारतीय भाषा उर्दू का पृच्छ-अपकडता न वह भारत भूमि के प्रति भक्ति है अंग्रेज अर्थ प्रेम को स्थान देता। इस वास्ते बहु खंभरथाटी से लेकर रावी तट तक का भाग खाली कर प्राण बचाकर भाग निकला। फलतः ऋषि दयानन्द की महिमा से स्तुति से भारत का आकाश नहीं गुआ।

जब भारतीय तलवार की नोक हिन्दुकुश पर्वत पर जाकर टिकी थी, तब पुराणों ने लिखा था, और गाया था—

मागध अश्वारोही बीरों के घोड़ों की टाप से
भारत का आकाश अर्हनिश गुंजता रहता है।

भारत भूमि और भारत का आकाश उसी शक्ति का, समान का, समूह समुदाय का अयगान करता है, जो भारत भूमि की विजय पताका विगन्त में फहराता है। यदि ऋषि की महिमा को नहीं पहचाना गया, तो उसके लिए मार्क-सप्ताख स्वतः जिम्मेवार है। क्योंकि वह महात्मा गाँधी और उनके शक्तों व अनुयायियों के समान अमर ऋषि के इस अमर सन्देश को भूला रहा।

यावती छाया पृथिवी याबच्छ सप्त सिन्धुको
वितस्त्रिरे। तावन्तमिन्द्र तेप्रहृमूर्जा प्रहृमाम्यक्षितं
मयिगूहृणाम्यक्षितम्। (यजु०-३५-२६) इसकी
विस्मृति के कारण पिछले २७ सालों में कितना
अनर्थ हुआ, और कितना बिनाश हुआ, और अनो
बहु जारी है, उसके लिए हजारों सिन्धुय क्या कोई
और जिम्मेवारी है। ऋषि का दिया, अमनीस
अजम निधि वेद को यदि हमने भुला दिया, तो
महर्षि को इसके वास्ते उत्तरदायी नहीं बताया जा
सकता। उसके आचार्य गुण 'मानव' यान्त्रों का
कर्तव्य है कि वह ऋषि ऋष्यभ्यां जनेत उदीरते।

ऋषि ऋष उतारने का एक ही मार्ग है कि हम भारत भूमि के प्रति इस देश के सामान्य जन में भक्ति और श्रद्धा उत्पन्न करें, और भारत को एक करनी और बनाने को सर्वोपरि स्थान दें। क्योंकि भारत का अस्तित्व कायम किए गए, वगैरे वेब भी स्तिरस्कृत विराद्वत और उपेक्षित रहेगा। मनु के शब्दों में यह देश नास्तिक रहेगा—

‘नास्तिको वेब निम्बक ।’

वेब की पूजा, वेब¹¹को उपासना, वेब का अध्ययन अध्यापन उस समय तक अहिनेष भारत भूमि में न होगा, जब तक भारत भूमि के प्रति भक्ति उत्पन्न न होगी, और हम भारत माँ के आह्वान का उस ऋषि बाणी को स्मरण न करेंगे—

उप सर्वं भातर भूमिनेतामुदध्यचस पृथिवीं सुसेवान् । ऊर्जाम्बा युवति रंजिषावत एवात्पापानु निःश्रंते कप स्वात् । (ऋ० १०।१८।१०)

भारत की प्रगति का मार्ग बन्द है। राष्ट्रीय जाय शून्य प्रतिशत हर साल बढ़ रही है। क्योंकि भारत का सालक ऋषियों की इस बाणी का आबर नहीं करता—

उच्छ्वभमाना पृथिवि मा नि बाधय सुपायना- स्मै मब सुपवचना । माता पुत्र यथा सिबाग्नेन भूव ऊर्ध्वि । (ऋ० १०।१८।११) जिस हालैंड को १६२८ और १६३३-३६ में हाकी के जादूगर और व्यामबध कपबन्ध ने ४ से अधिक गोलों से हराया था, उसी हालैंड के उसका पुत्र अशोक कुमार हार गया, और स्वर्ण कप खो बैठ। पुत्र विता से अधिक पराक्रमी और वशस्वी क्यों नहीं निकला ? क्योंकि उसने गाब का छीना पान नहीं किया। नाब का भी आयु बढ़ाता है, बस कीर्य

बढ़ाता है। परन्तु इस देश की सरकार इसकं नेताओं ने मुर्गों खाने स्थापित किये हैं, भौशाल्यें स्थापित नहीं की। इस बशा में भारत भक्ति और गी सेवा को भुलाकर विजय पाने की आशा करना गुस्स के फूल के समान है। भारत में विजय थी नहीं आई, क्योंकि भारत ने ऋषि की इस बात का निरावर किया।

उच्छ्वभ माना पृथिवी मुतिष्ठतु सहस्रमित उपहिधयन्ताम । ते गुहासो घृतश्चतुतो भवन्तु बिश्वा हास्मे शरणाः सन्धन्न । ऋ० १०-१८-१२

दिवाली की सध्या और टिमटिमाते दीपक पुन ऋषि बयानम्ब के इस अमर सन्देश को सुना रहे हैं। क्या हम इसको ध्यान से सुनेंगे ? इस महान् भारतीय को शतश शतश प्रणाम है।

आर्यसमाज आगरा नगर का उत्सव

आर्यसमाज आगरा नगर का ३६ वर्षे वार्षिक उत्सव ८ से ११ नवम्बर तक मनाया जा रहा है। ८ नवम्बर को शोभा-यात्रा निकलेगी। —मन्त्री

आकृष्टकला

एक सुयोग्य तथा अनुभवो अध्यापक जो प्राथमिक विद्यालय तक सब विषय पढ़ा सके तथा आर्यसमाज का पुरोहित कार्य करा सके। वैदिक सिद्धान्तों की पूर्ण जानकारी हो। न्यूनतम स्वीकार्य वेतन भी लियें। प्राथनापत्र योग्यता सहित १०-११-७६ तक आने चाहिये।

डा० आर्षकुमार प्रबन्धक

आर्य प्राथमिक विद्यालय बिलासपुर

बि० रामपुर, उ० प्र०

दो विचारधाराओं के आर्य नेता—



शमसराहीव की स्वामी अज्ञानत्व की महाराज



श्री महाराजा हरराज की